THIS BOOK WAS PUB द्वारा बनाया गया

एस.एल. भैरप्पा

पर्व

युद्ध, शांति, प्रेम, मृत्यु, ईश्वर और मनुष्य की कहानी



के.राघवेंद्र राव द्वारा अनुवादित

कवर डिज़ाइन CADZBUDDY ने किया है

THIS EPUB IS CREATED BY VIBHATSU

S.L. Bhyrappa

PARVA

A TALE OF WAR, PEACE, LOVE, DEATH, GOD, AND MAN



COVER DESIGNED BY CADZBUDDY

Translated By

K.Raghavendra Rao

Table of Contents

शीर्षक पेज
कॉपीराइट
सामग्री
प्रस्तावना
स्वीकृतियाँ
अनुवादक का नोट
समर्पण
भाग एक
अध्याय 1
अध्याय दो
अध्याय 3
अध्याय 4
अध्याय 5
अध्याय 6
अध्याय 7
अध्याय 8
भाग दो
अध्याय 9
अध्याय 10
भाग तीन
अध्याय 11
अध्याय 12
अध्याय 13
अध्याय 14
अध्याय 15
अध्याय 16

भाग चार
अध्याय 17
अध्याय 18
अध्याय 19
अध्याय 20
अध्याय 21
भाग पाँच
अध्याय 22
अध्याय 23
अध्याय 24
भाग छह
अध्याय 25
अध्याय 26
अध्याय 27
अध्याय 28
अध्याय 29
अध्याय 30
अध्याय 31
अध्याय 32
अध्याय 33
अध्याय 34
अध्याय 35
भाग सात
अध्याय 36
अध्याय 37
अध्याय 38
भाग आठ
अध्याय 38
भाग नौ
अध्याय 40

अध्याय 41
अध्याय 42
अध्याय 43
भाग दस
अध्याय 44
अध्याय 45
भाग ग्यारह
अध्याय 46
अध्याय 47
अध्याय 48
अध्याय 49
भाग बारह
अध्याय 50
अध्याय 51
अध्याय 52
अध्याय 53
अध्याय 54
अध्याय 55
भाग तेरह
अध्याय 56
अध्याय 57
अध्याय 58
अध्याय 59
अध्याय 60
अध्याय 61
अध्याय 62
अध्याय 63
अध्याय 64
अध्याय 65
अध्याय 66

अध्याय 67
अध्याय 68
अध्याय 69
अध्याय 70
अध्याय 71
अध्याय 72
अध्याय 73
अध्याय 74
अध्याय 75
अध्याय 76
अध्याय 77
अध्याय 78
अध्याय 79
अध्याय 80
अध्याय 81
अध्याय 82
अध्याय 83
अध्याय 84
अध्याय 85
भाग चौदह
अध्याय 86
रानी माया का सपना
पीछे का कवर

एक आधुनिक कन्नड़ क्लासिक

पर्व

युद्ध, शांति, प्रेम, मृत्यु, ईश्वर और मनुष्य की एक कहानी

डॉ. एस.एल. भैराप्पा द्वारा लिखित और के. राघवेंद्र राव द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित।



यह ePUB
विभत्सु द्वारा संकलित और पुस्तक प्रेमियों को भेंट किया गया है।

Sahitya Akademi
रवीन्द्र भवन, 35, फ़िरोज़शाह रोड, नई दिल्ली 110 001। 700 053।
ISBN: 9789390310074
यह ईपीयूबी विभात्सु द्वारा, 2024.
कवर इमेज को कैडज़बडी द्वारा पुनः डिज़ाइन किया गया है।
© कन्नड़ मूल: एस.बी. सरस्वती © अंग्रेजी अनुवाद: साहित्य अकादमी, प्रथम प्रकाशन 1994
साहित्य अकादमी, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित, और श्री मारुति लेजर प्रिंटर्स, मद्रास द्वारा लेजर टाइपसेटिंग।
विनायका ऑफसेट प्रिंटर्स, बैंगलोर में मुद्रित।

सामग्री

ढकना
शीर्षक पेज
कॉपीराइट
प्रस्तावना
स्वीकृतियाँ
अनुवादक का नोट
समर्पण
भाग एक

अध्याय 1
अध्याय दो
अध्याय 3
अध्याय 4
अध्याय 5
अध्याय 6
अध्याय 7
अध्याय 8
भाग दो
अध्याय 9
अध्याय 10
भाग तीन
अध्याय 11
अध्याय 12
अध्याय 13
अध्याय 14
अध्याय 15
अध्याय 16
भाग चार
अध्याय 17
अध्याय 18
अध्याय 19
अध्याय 20
अध्याय 21
भाग पाँच
अध्याय 22
अध्याय 23
अध्याय 24
भाग छह
अध्याय 25

अध्याय 26
अध्याय 27
अध्याय 28
अध्याय 29
अध्याय 30
अध्याय 31
अध्याय 32
अध्याय 33
अध्याय 34
अध्याय 35
भाग सात
अध्याय 36
अध्याय 37
अध्याय 38
भाग आठ
अध्याय 38
भाग नौ
अध्याय 40
अध्याय 41
अध्याय 42
अध्याय 43
भाग दस
अध्याय 44
अध्याय 45
भाग ग्यारह
अध्याय 46
अध्याय 47
अध्याय 48
अध्याय 49
भाग बारह

अध्याय 50
अध्याय 51
अध्याय 52
अध्याय 53
अध्याय 54
अध्याय 55

भाग तेरह

अध्याय 56
अध्याय 57
अध्याय 58
अध्याय 59
अध्याय 60
अध्याय 61
अध्याय 62
अध्याय 63
अध्याय 64
अध्याय 65
अध्याय 66
अध्याय 67
अध्याय 68
अध्याय 69
अध्याय 70
अध्याय 71
अध्याय 72
अध्याय 73
अध्याय 74
अध्याय 75
अध्याय 76
अध्याय 77
अध्याय 78

अध्याय 79
अध्याय 80
अध्याय 81
अध्याय 82
अध्याय 83
अध्याय 84
अध्याय 85
भाग चौदह
अध्याय 86
रानी माया का सपना
पीछे का कवर

प्रस्तावना

(मूल कन्नड़ संस्करण के लिए लिखा गया)

महाभारत की घटनाओं की ऐतिहासिक सत्यता के बारे में मेरा चिंतन लगभग बीस वर्ष पूर्व शुरू हुआ और 1966 में चीकर्नागलूर में डॉ. नारायणप्पा के साथ हुई चर्चा के दौरान इसे एक अंतरिम रूप मिला। उन्होंने इससे पहले भी कई बार मुझे महाभारत पर आधारित उपन्यास लिखने के लिए प्रेरित करने का प्रयास किया था। अगले वर्ष, जब मैं हिमालयी क्षेत्र के गढ़वाल इलाके में घूम रहा था, तब मुझे एक छोटे से गाँव में कुछ समय बिताने का अवसर मिला जहाँ बहुपति प्रथा प्रचलित थी। स्थानीय लोगों का मानना था कि यह प्रथा द्रौपदी के समय से चली आ रही है। यह प्रथा दो तालुकों के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रमुख थी। बाद में मैंने बद्री और जोशीस्मठ के बीच हरे-भरे इलाके में बसे पांडुकेश्वर का दौरा किया, जहाँ मैंने स्थानीय रीति-रिवाजों और इतिहास के बारे में विस्तार से जाना। तभी मैंने महाभारत के कुछ पात्रों की धुंधली सी कल्पना करना शुरू किया। 1971 से मैं महाकाव्य की ऐतिहासिकता से संबंधित गहन शोध में संलग्न रहा। मूल व्यास संस्करण का गहन अध्ययन करने

के बाद, मैंने वैदिक संस्कृति के अंतिम चरण के आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक जीवन का गहन अध्ययन किया। पाँच वर्षों के अध्ययन के बाद, 1974 में मैंने हिमालय क्षेत्र के उन हिस्सों का दौरा किया और कुछ समय के लिए वहाँ रहा जो महाभारत से संबंधित थे। इसके बाद 1975 में, मैंने द्वारका, अरावली पर्वतमाला, विराटनगर, मथुरा, दिल्ली, कुरुक्षेत्र, हस्तिनावती, बरनावा, चक्रनगर, राजगीर और महाकाव्य से जुड़े अन्य स्थानों का दौरा किया और उनका अध्ययन किया। लेकिन इस अध्ययन यात्रा और शोध से पहले, मैंने आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर लिया था, जिसके लिए मैं भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की मैसूर इकाई में कार्यरत डॉ. रमेश का आभारी हूँ। श्रीमती लीला, जो संयोगवश महान शिक्षक और विद्वान ए.आर. कृष्णशास्त्री की पोती थीं और मैसूर विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में कार्यरत थीं, ने प्रासंगिक पुस्तकों और दस्तावेजों के साथ मेरी उदारतापूर्वक सहायता की। मेरे पूरे शोध कार्य के दौरान, श्री एन. बालासुब्रमण्य; गहन चर्चाओं के माध्यम से इस विषय पर मेरे विचारों को स्पष्ट करने में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। एक समय पा.वेम. आचार्य ने भी इसमें मेरी सहायता की। डॉ. जे.जे. ठाकर, आचार्य देवेंद्रजी शर्मा और डॉ. एच.ए. फड़के जैसे विशेषज्ञों ने मुझे क्रमशः द्वारका, विराटनगर और कुरुक्षेत्र से संबंधित ऐतिहासिक आंकड़े उपलब्ध कराए। दिल्ली में भारतीय विज्ञान इतिहास परिषद के मुख्य संपादक डॉ. बी.वी. सुब्बारायप्पा ने मुझे बहुत उपयोगी सामग्री उपलब्ध कराई।

मैंने इस उपन्यास को 12 अक्टूबर 1975 से 27 दिसंबर 1976 के बीच, यानी एक वर्ष और दो माह की अवधि में पूरा किया। इसके कुछ प्रारंभिक अंश मैसूर के रामकृष्ण आश्रम के वेदांत कॉलेज के एक कमरे में लिखे गए थे। बाद में एम.एस.के. प्रभु, प्रभुशंकर और एन. बालासुब्रमण्य ने पांडुलिपि पढ़ी। इन मित्रों ने मुझे अपने काम का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने में सहायता की। जब मैं उपन्यास के लिए उपयुक्त शीर्षक चुनने के लिए संघर्ष कर रहा था, तब हा.मा. नायक ने मुझे 'पर्व' शीर्षक चुनने में मदद की। उन्होंने मुद्रण लेआउट का भी ध्यान रखा। मैं इन सभी मित्रों का दिल से आभारी हूँ।

तैयारी और लेखन दोनों चरणों के दौरान, कई शुभचिंतकों ने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मेरी सहायता की। इस संदर्भ में, मैं अपने एक लंबे लेख का उल्लेख करना चाहूंगा, जिसमें मेरे प्रारंभिक शोध और विभिन्न चरणों में मुझे प्रभावित करने वाले विचारों के साथ-साथ कृति के वास्तविक लेखन का विस्तृत विवरण दिया गया है।

चूंकि उस लेख को यहां पाठकों पर थोपना अनुचित होगा, और यह 50 से 60 पृष्ठों का लंबा लेख है, इसलिए मैं इसे "मैं क्यों लिखता हूँ?" शीर्षक के तहत अलग से प्रकाशित करके संतुष्ट होऊंगा। हालांकि, मुझे लगता है कि यहां उस लेख में चर्चा किए गए कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करना उचित होगा।

मुझे यह स्वीकार करना होगा कि मेरे पास डॉ. ठाकर द्वारा वर्णित द्वारका के अस्तित्व की पुष्टि या खंडन करने के लिए पर्याप्त प्रमाण नहीं हैं। इसके अलावा, यह मेरे लिए रुचि का विषय भी नहीं है। लोथल, हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के संबंध में मैंने जो विद्वतापूर्ण सामग्री पढ़ी और समझी है, उसके आधार पर मुझे लगता है कि कृष्ण द्वारा वर्णित द्वारका कम से कम संभव है। इस क्षेत्र की यात्रा करने और तट पर स्थित प्रकाशस्तंभ के टावर से दृश्य देखने के बाद, मैं यह कहने को तैयार हूं कि मैं स्वयं को 1975 के बंधनों से मुक्त होकर यादवों के युग में वापस चला गया। द्वारका नगर, जैसा कि उस समय रहा होगा, समुद्र, उसके निवासियों का जीवन और उसका भौतिक वातावरण, मेरे व्यक्तिगत अनुभव का हिस्सा बन गया। अपने समय की घटनाओं से निपटते समय, एक लेखक को तथ्यात्मक विवरणों से कोई समस्या नहीं होती। वे पहले से ही मौजूद होते हैं, उसके अवचेतन में। उसे केवल अपने तात्कालिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उन्हें याद करने की आवश्यकता होती है। लेकिन ऐतिहासिक विवरणों को व्यक्तिपरक रूप से इतना तात्कालिक और आंतरिक होने का दर्जा प्राप्त नहीं होता है। वे वस्तुनिष्ठ विद्वतापूर्ण आंकड़ों के रूप में बने रहते हैं। किसी भी तरह के अंतर्ग्रहण का विरोध करते हुए। लेकिन द्वारका मेरे आंतरिक अनुभव का हिस्सा बन चुकी थी... मुझे ऐसा लग रहा था मानो मैं सचमुच द्वारका में हूँ, और उसकी गलियों और रास्तों को अच्छी तरह जानती हूँ। मुझे पूरा भरोसा था कि मैं बिना किसी कठिनाई और कुशलता से उन रास्तों पर चल सकती हूँ।

जयपुर जिले के विराट नगर नामक स्थान के पास, जहाँ कुरुक्षेत्र के एक छोटे से राज्य गोग्रहना को लेकर युद्ध हुआ था, वहाँ भीम की गुफा नाम की एक गुफा है... नवविवाहित जोड़ों के लिए आज भी गुफा में जाकर भीम की पूजा करना एक स्थानीय रिवाज है। जिस समय मैं वहाँ गया था, एक नवविवाहित जोड़ा भी वहाँ आया हुआ था। मैंने नए दूल्हे से इस पूजा का उद्देश्य पूछा। उसने तुरंत जवाब दिया: 'यदि कोई मेरी पत्नी पर बुरी नजर डालेगा, तो भगवान भीम मुझे उसे मार डालने की शक्ति प्रदान करेंगे'... इन क्षेत्रों में, महाभारत की लिखित कहानी लोगों

के जीवन-प्रथाओं के साथ खूबसूरती से घुलमिल जाती है। यद्यपि कीचक की मृत्यु की घटना सत्य न हो, फिर भी यह लोगों की आस्था में गहराई से समा गई है। यह आस्था सत्य है। तो फिर एक कल्पनाशील लेखक को किस प्रकार के सत्य की खोज करनी चाहिए? क्या हम सभी सहज रूप से यह महसूस नहीं करते कि हमें किसी ऐसे व्यक्ति को नष्ट कर देना चाहिए जो अपनी पत्नी की पवित्रता या मर्यादितता का उल्लंघन करता है? क्या पश्चिमी पुरुष भी ऐसा ही व्यवहार नहीं करते? यह शाश्वत, सार्वभौमिक पुरुष प्रवृत्ति या पुरुषवादी अभिमान, जो पुरुष वर्चस्व की ओर ले जाता है, क्या यह एक साहित्यिक सत्य नहीं हो सकता?

अक्षोहिनी शब्द का वास्तविक अर्थ क्या है? इस प्रश्न का सटीक उत्तर हमें कहीं नहीं मिलता... इसलिए, एक अनिर्णायक विषय पर व्यर्थ की बहस में न पड़ते हुए, मैंने युद्धक्षेत्र के आकार को देखकर महाभारत युद्ध में शामिल सेनाओं के आकार का अनुमान लगाया। यह स्पष्ट रूप से आर्यों के लिए अब तक अज्ञात आकार था... आर्यावर्त के सभी शासकों ने इस युद्ध में क्यों भाग लिया? पारंपरिक महाभारत इसे धर्मयुद्ध, धर्म का युद्ध कहता है। फिर भी, धर्मी पांडवों को अधर्मी पांडवों की तुलना में बहुत कम शासकों का समर्थन प्राप्त था। अधिकांश शासक युद्ध को अपना विषय न मानते हुए इससे अलग रह सकते थे। लेकिन आर्य राजा जुआ, युद्ध और व्यभिचार के आदी थे। इसीलिए वे स्वयंवर में भाग लेने के लिए दौड़े। वे इसी प्रकार के स्वभाव के थे। इस प्रकार के विचार मेरे मन में तब आए जब मैं डॉ. फडके के साथ कुरुक्षेत्र की सड़कों पर रिक्शा में यात्रा कर रहा था। तभी मैंने मन में यह बात बिठा ली कि यह युद्ध आर्य जाति के स्वभाव के साथ-साथ उनकी जीवनशैली से प्रभावित लोगों के स्वभाव को भी दर्शाता है... जिस दिन मैंने यह उपन्यास लिखना शुरू किया, 12 अक्टूबर 1975 को, मैं मुश्किल से एक पृष्ठ ही पूरा कर पाया। दूसरा दिन थोड़ा बेहतर रहा और मैंने तीन पृष्ठ लिखे। लगभग दस पृष्ठों के बाद ही मैं लेखन की लय में आया, मेरी गति तेज हुई और मैं पूरी तरह से उसमें लीन हो गया। साहित्यिक रचना करते समय, प्रत्यक्ष अनुभव और अप्रत्यक्ष अनुभव के बीच अंतर करना एक गलती है। आखिरकार, मैं जो कुछ भी लिखता हूँ, वह मेरे द्वारा प्रत्यक्ष रूप से अनुभव किया जाता है। हो सकता है कि कोई विवरण, कोई शब्द, मुझे प्रत्यक्ष रूप से अनुभव न हुआ हो। लेकिन मूल सामग्री केवल गहन व्यक्तिपरक दबाव के परिणामस्वरूप ही उभरती है। जहाँ तक इस सामग्री का संबंध है, इस समय और उस समय, व्यक्तिपरक समय और वस्तुनिष्ठ समय के

बीच कोई ऐतिहासिक अलगाव नहीं है... मैं हमेशा इस बात से अवगत था कि मैं मूल महाभारत के पात्रों की हूबहू नकल नहीं दे रहा हूँ, बल्कि केवल मानवीय स्वभाव और मानवीय संबंधों के विभिन्न पहलुओं और रूपों को प्रस्तुत कर रहा हूँ। जब भी मैंने कोई नया पात्र गढ़ा या एक नई परिस्थिति, मैं इस नवीनता के आयाम को देख सकता था...

"मेरे भीतर पल रहा उपन्यास अंततः समय-समय पर कल्पना की गई किसी भी रचना से भिन्न रूप में सामने आया। यह बात इसके स्वरूप और अर्थ दोनों पर लागू होती है... 'पर्व' लिखने के अनुभव ने मुझे चीजों के प्रति एक नई समझ, हर चीज के बारे में एक नई अनुभूति, मानो एक नया जन्म दिया। अभ्यास और आदतें हमारे अधिकांश विश्वासों का आधार होती हैं। जब हम मृत्यु के अंतिम बिंदु के परिप्रेक्ष्य से जीवन को देखने के लिए इन्हें त्याग देते हैं, तो हम मानवीय क्षमताओं और वास्तविकताओं के प्रति एक नई जागरूकता प्राप्त करते हैं, और एक नया दृष्टिकोण, एक नया ज्ञान प्राप्त करते हैं... अब मेरी उम्र कितनी है? मुझे अभी कितने साल और जीने हैं? क्या इस धरती पर बचे हुए वर्षों से मैं कोई अर्थ निकाल सकता हूँ? ये प्रश्न और उन पर चिंतन इस उपन्यास के संगीत में तीन स्वरों की गूंज की तरह रहे हैं, और ये मेरे मन और हृदय की गहराई में गूंजते रहे हैं।"

— एस.एल. भैरप्पा
1007, उदयरावी रोड,
कुवेम्पुनगर,
मैसूर - 570023.

—•✳•—

स्वीकृतियाँ

मैं प्रोफेसर के. राघवेंद्र राव का आभारी हूं जिन्होंने पर्व जैसी कृति का अंग्रेजी में अनुवाद करने का चुनौतीपूर्ण कार्य सफलतापूर्वक पूरा किया है, जिसे साहित्य

अकादमी की आधुनिक भारतीय भाषाओं के क्लासिक्स का अंग्रेजी में अनुवाद करने की योजना के तहत प्रकाशित किया जा रहा है।

मैं डॉ. प्रधान गुरुदत्ता, रीडर, कन्नड़ अध्ययन संस्थान, मानसगंगोत्री, मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर-6, और प्रो. एन. बालासुब्रमण्य, अंग्रेजी के सेवानिवृत्त प्रोफेसर, मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर का आभारी हूं, जिन्होंने अंतिम प्रूफ पढ़ने के अलावा संपादकीय संशोधन भी किए हैं।

— एस.एल. भैराप्पा

—•✳•—

अनुवादक का नोट

मुझे यह स्वीकार करना होगा कि तमाम चुनौतियों और खतरों के बावजूद, मुझे इस अनुवाद पर काम करने में आनंद आया। मैंने मूल पाठ के प्रति पूर्ण निष्ठा बनाए रखने का प्रयास किया है, लगभग शब्दशः अनुवाद किया है, लेकिन इसके मूल भाव और उत्साह को खोए बिना। शायद विरोधाभासी रूप से, या शायद नहीं, मैंने एक ऐसा कार्य तैयार करने का प्रयास किया है जो अपने आप में एक अंग्रेजी उपन्यास की तरह पढ़ा जा सके। मुझे उम्मीद है कि मैंने कुछ हद तक असंभव को संभव कर दिखाया है, शाब्दिक अनुवाद और रचनात्मक कृति तैयार करने के परस्पर विरोधी लक्ष्यों को एक साथ लाने में सफल रहा हूँ। मैं अपनी पत्नी प्रभा के प्रति अपनी कृतज्ञता को शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता, जिन्होंने न केवल महीनों तक मेरे कठिन परिश्रम के दौरान मुझे शारीरिक रूप से सहारा दिया, बल्कि कन्नड़ भाषा और साहित्य में अपनी विशेषज्ञता और ज्ञान से हर कदम पर मेरी मदद की। वास्तव में, यह कहना उचित होगा कि उन्होंने सह-अनुवादक से कहीं अधिक भूमिका निभाई है। मैं मूल कन्नड़ उपन्यास के लेखक डॉ. एस.एल. भैराप्पा का भी आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे इस कार्य के लिए एक उपयुक्त विकल्प समझा और एक

संवाददाता के रूप में मेरी चुप्पी और अनिश्चितताओं को सहन किया। मैं केवल यही आशा कर सकता हूँ कि उसे अपने इस निर्णय पर कभी पछतावा न हो।

मैं डॉ. एच.एम. नायक का विशेष रूप से आभारी हूं, जिन्होंने उस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जिसके माध्यम से मैं इस उपन्यास का अनुवादक बन गया।

मैं इस उद्यम के सबसे कठिन क्षणों के दौरान मेरे अच्छे मित्रों, डॉ. एस.के. देसाई, डॉ. जी.एस. अमूर, डॉ. शंकर मोक्षर पटरनेकर, प्रोफेसर के.जे. शाह, श्री चन्नवीरा कनवी और मेरे नवनिर्मित दामाद, श्री जी.आर. हुइलगोल द्वारा दिए गए प्रोत्साहन को रिकॉर्ड पर दर्ज करना चाहता हूं।

मैं डॉ. जी.एस. अमूर का विशेष रूप से आभारी हूँ जिन्होंने कृपा करके पूरे पाठ की गहन जाँच की और इसे कई त्रुटियों और खामियों से बचाया। यदि इनमें से कुछ त्रुटियाँ रह जाती हैं, तो इसके लिए मैं पूरी तरह से जिम्मेदार हूँ।

मेरे बच्चों, भीमू, गोपी, मधु और वैजू ने अनुकरणीय पुत्रवत स्नेह दिखाया और उन महीनों के दौरान जब मैं इस कार्य से जूझ रहा था, उन्होंने मेरे समय, ऊर्जा या स्नेह की कोई मांग किए बिना मुझे काम जारी रखने दिया।

अंत में, लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण बात यह है कि मैं अपने अच्छे मित्र और पूर्व सहकर्मी, मंगलौर विश्वविद्यालय के अंग्रेजी और कन्नड़ के प्रतिष्ठित विद्वान डॉ. सी.एन. रामचंद्रन को धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिन्होंने कई प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष तरीकों से मेरी संवेदनशीलता और साहित्यिक क्षमता को आकार दिया है।

— के. राघवेंद्र राव

—•✳•—

गौराम्मा को,
मेरी माँ, नहीं,
मेरी रचनात्मकता का मूल स्रोत, जो रागी अनाज पीसते समय,
मेरे लिए जैमिनी और कुमारव्यास भरत के पद गाए;
रागी की रोटी खिलाते हुए उन्होंने मुझे उनका अर्थ समझाया;
जो अपने दुर्लभ अवकाश के क्षणों के दौरान, स्वयं कविताएँ लिखती थीं, मुझे पढ़कर सुनाती थीं और मेरे साथ साझा करती थीं;

जिन्होंने मेरे द्वारा सुझाए गए सुधारों की सराहना की, और मेरा मार्गदर्शन किया;
और जिसने मुझे ग्यारह साल की उम्र में छोड़ दिया, ताकि मैं एक स्मृति के रूप में जीवित रह सकूं।

भाग एक



अध्याय 1

चंद्रभागा और इरावती नदियों के बीच स्थित क्षेत्र को मद्रा लोगों की भूमि कहा जाता था। शल्य इस क्षेत्र का शासक था, जो अब एक वृद्ध व्यक्ति है।

अपनी पोती को पास बुलाते हुए उन्होंने पूछा, "क्या तुम अंदाज़ा लगा सकती हो कि अब मेरी उम्र कितनी है?"

बीस साल की हो चुकी उस लड़की ने जवाब दिया, "दादाजी, आपसे बड़ा कोई नहीं है।"

बूढ़े आदमी ने कहा, "फिर भी जब मैं चलता हूँ, तो मेरी पीठ नहीं झुकती, मेरी कमर नहीं लटकती। मैं अब भी सीधा और अकड़ा हुआ चल सकता हूँ। क्या आप जानते हैं इसका कारण क्या है?"

लड़की ने गर्व से मुस्कुराते हुए कहा, "क्योंकि तुम बहुत मजबूत, बहुत टिकाऊ और लंबे समय तक टिकने वाली हो।"

हंसते हुए, उनकी अब कम होती दाढ़ी हिल रही थी, और उन्होंने कहा, "नहीं, ऐसा इसलिए है क्योंकि हम पुराने जमाने के लोग हैं, प्राचीन काल से संबंध रखते हैं।"

लड़की ने कहा, "जब भी तुम पुराने दिनों की बात करते हो, तो 'हम' और 'हमें' का इस्तेमाल करते हो। बताओ तुम कितने लोग हो?"

बूढ़े व्यक्ति ने उत्तर दिया, "लोगों की सटीक गिनती कैसे की जा सकती है? मोटे तौर पर मेरी उम्र के सभी लोग।"

लड़की ने कहा, "लेकिन आप जानते हैं कि हमारे महल में आपकी उम्र का कोई नहीं है।"

उन्होंने कहा, "वे अन्य महलों में भी हैं, और महलों के बाहर आम लोग भी हैं। वे सभी कठोर और मेहनती हैं, सभी पुराने जमाने के लोग हैं।"

उसने कहा, "लेकिन मुझे बताओ कि ऐसा क्यों है?"

बूढ़े व्यक्ति ने समझाया, "देखो, यह सब उनकी जीवनशैली और तौर-तरीकों के कारण है। वे उस तरह से नहीं रहते थे जिस तरह से तुम, नई पीढ़ी, रहते हो।

देखो, तुम सब इस भूमि और हमारे कबीले के पुराने रास्तों को छोड़ने के लिए उत्सुक हो। तुम सब पराये तौर-तरीकों की नकल करने के लिए इतने तैयार हो।"

जब वह बोल ही रहा था कि लड़की ने बीच में ही टोकते हुए कहा, "दादाजी, लगता है आप भूल गए हैं कि हमने यह समझौता किया था कि हम इस मुद्दे का कभी जिक्र नहीं करेंगे, और आपने इसे समझौते के तुरंत बाद ही भुला दिया!"

बूढ़ा आदमी बुदबुदाया, "हाँ, हाँ, मैं तुमसे इन मामलों पर क्यों बात करूँ जो तुम्हारे बस में नहीं हैं। अपने पिता को जुए से लौटने दो। मैं उनसे इस बारे में बात करूँगा। लेकिन भगवान जाने वो कब लौटेंगे। नहीं, नहीं। मैंने सौ बार कह दिया है। मैं उन्हें अभी बता दूँगा कि उनकी पीठ पीटने के बाद उनकी नसें अकड़ जाएँगी।"

और जो व्यक्ति कुछ क्षण पहले ठहाके लगाकर अपनी दाढ़ी हिला रहा था, अब गंभीर हो गया और बोला, "देखो, अब तक तो तुम्हारी शादी हो जानी चाहिए थी और तुम एक या दो बेटों की माँ बन चुकी होती। अपने पिता की इच्छा का पालन करते हुए तुम अब तक कुंवारी ही हो। इसमें क्या समझदारी है?"

हिरण्यवती भली-भांति जानती थी कि यदि उसने इस मुद्दे पर अपने पिता का विरोध किया, तो बूढ़ा क्रोधित हो उठेगा। यह भी संभव था कि वह हाथ उठाकर उसे पीट दे। और उसके हाथ भी बलवान, मोटे और बड़े थे। फिर भी उसे अपने पिता के विचार अधिक अनुकूल लगे। वह इस बात से चकित थी कि बूढ़े को यह भ्रम था कि उसके पिता जुआ खेलने गए हैं, जबकि वह सच्चाई जानती थी। माँ ने पिछली रात उसके कान में सच्चाई फुसफुसाई थी। खैर, उसे आशा थी कि उसकी यात्रा का उद्देश्य पूरा होगा। उस शाम अग्नि देवता को दो और अनुष्ठानिक आहुति दी जानी थी।

बूढ़े व्यक्ति ने धीमी, लगभग खुद से ही बात करते हुए कहा, "तांबा, पीतल, वस्त्र और आभूषणों से भरी बीस-बीस गाड़ियाँ हमारे पास आ सकती थीं। तुम कितनी सुंदर हो, मेरी बच्ची।"

इससे लड़की का गुस्सा और बढ़ गया।

उसने मन ही मन सोचा, "हाँ, मैं बिल्कुल सही हूँ। हमारे देश की लड़कियाँ सुंदरता के लिए मशहूर हैं। उनके चेहरे पूर्णिमा के अगले दिन के चाँद की तरह गोल और चमकदार होते हैं।"

उसे याद आया कि उसने पॉलिश की हुई धातु की सतह पर अपना चेहरा देखा था। फिर भी, क्या दुल्हन के मूल्य के लिए लड़कियों को बेचना सही था? इस प्रथा के कारण हमें दूसरे लोग, कुरु, पंचाल, सुरसेना, चेदि, काशी और विराट, वास्तव में उत्तर-पूर्व के सभी लोग नीची नज़र से देखते हैं। हाँ, पिताजी सही कह रहे हैं। पूर्वी और दक्षिणी लोग इसे अलग और बेहतर तरीके से करते हैं। वे स्वयंवर जैसे विवाह का आयोजन करते हैं जिसमें लड़की के परिवार वाले विजेता को उपहारों से भरी बैलगाड़ियों के साथ लड़की का हाथ देते हैं। इसका अर्थ होता है पति के घर में आत्मसम्मान का स्थान, अपने कबीले के लिए गौरव। या फिर एक सुंदर, उच्च कुल का क्षत्रिय राजकुमार एक शानदार रथ में आता है, उससे प्रेम करता है और फिर रथ के पहियों की सरसराहट, उड़ती धूल के बीच उसके साथ भाग जाता है, एक सफल पलायन, पीछा करने वाले पिता और दादा को वीरतापूर्वक परास्त करना। क्या दादा में भागते हुए जोड़े का पीछा करने की हिम्मत है? वह सीधा चलता है, पीठ सीधी और कमर सीधी।

अपनी तल्लीनता से बाहर आते हुए, उसने अचानक बूढ़े व्यक्ति से पूछा, "दादाजी, आपकी उम्र कितनी है?"

बूढ़े आदमी ने कहा, "तुम तो बड़े चतुर हो, मुझे मुख्य मुद्दे से भटका रहे हो। बार-बार वही सवाल क्यों पूछ रहे हो?"

"नहीं, मैं इसलिए पूछ रहा हूँ क्योंकि आपने मुझे कभी अपनी सही उम्र नहीं बताई।"

बूढ़े व्यक्ति ने कहा, "ठीक है, आज तुम्हें यह मिल जाएगा। आज मेरी उम्र चौरासी वर्ष है।"

"लेकिन बीते हुए वर्षों की गिनती कैसे रखते हैं?" उसने पूछा।

बूढ़े ने कहा, "कैसे? अच्छा, मुझे देखने दो...", अपनी नज़रें छत में लगी लकड़ी की कड़ियों पर उठाते हुए, "- मुझे देखने दो, मैं भीष्म से छत्तीस साल छोटा हूँ। मुझे पता चला है कि वे अब एक सौ बीस साल के हैं। इसका मतलब है, मैं... अच्छा, तुम खुद ही अपनी उंगलियों पर गिन लो।"

अपनी लंबी, पतली, लाल उंगलियों को रेखाओं से सजी हथेली पर रखकर लड़की गिनती करने लगी। लेकिन इससे पहले कि वह किसी नतीजे पर पहुँच पाती, एक और शंका उसके मन में उठ खड़ी हुई, "आपको कैसे पता कि भीष्म एक सौ बीस वर्ष के हैं?" लेकिन अपने दादाजी का नाराज़ और गुस्से वाला चेहरा

देखकर उसने बचाव करते हुए कहा, "देखिए, मैंने यह सवाल इसलिए पूछा है क्योंकि आप जिस भीष्म की बात कर रहे हैं, वह कभी हमारे शहर, हमारे देश में नहीं आए। आप भी कभी उनकी भूमि पर नहीं गए।"

इन शब्दों ने बूढ़े व्यक्ति को गहरी गंभीरता में डुबो दिया। बूढ़े व्यक्ति की झुर्रियों से उनकी इस मनोदशा को भांपते हुए, लड़की ने इस मामले को आगे न बढ़ाने को ही उचित समझा। तब तक उसने गिनती कर ली थी और पाया कि एक सौ बीस में से छत्तीस घटाने पर चौरासी आता है। उसने सोचा, "हमारे दादाजी कितने बूढ़े हैं!" लेकिन भीष्म तो उनसे छत्तीस साल बड़े थे। उसने खुद से पूछा, "भीष्म दादाजी से कितने बड़े और कद में होंगे?" अचानक उसकी स्मृति में कुछ कौंधा और उसने पूछा, "कृपा करके दादाजी, क्रोधित न हों। मुझे पता है कि भीष्म अपने भाई के लिए हमारी दादी का हाथ मांगने हमारे महल आए थे। बेशक, मैं तब पैदा नहीं हुई थी। लेकिन क्या पिताजी उस समय पैदा हो चुके थे?"

दादाजी ने आगे कुछ नहीं कहा, पर लड़की को समझ नहीं आया कि क्यों। वे उठे, दरवाजा खोला और बाहर चले गए। गर्मी से बगीचों के पेड़ झुलस गए थे। शकाला नगर, और वास्तव में पूरा मद्रा, कभी पानी की कमी से ग्रस्त नहीं था। फिर भी इस भीषण गर्मी में पेड़ों की प्यास बुझाने के लिए पर्याप्त पानी कैसे हो सकता है? बगीचों के बाहर के पेड़ भी पूरी तरह सूख चुके थे। बारिश आने में और कितने महीने लगेंगे? हालांकि सूरज डूब चुका था, छोटी चट्टानें और पत्थर की पटियाएं गर्म थीं। उन्होंने महसूस किया कि राजा होने के नाते उन्हें नंगी जमीन पर नहीं बैठना चाहिए। उनका सेवक सूखी हाथी घास से बुनी हुई गद्दी लेकर उनके पीछे गया। गद्दी बिछाने के बाद, बूढ़े राजा शल्य ने सेवक को जाने का आदेश दिया। फिर वे चुपचाप अकेले बैठ गए, उस सन्नाटे में जहां कीड़े-मकोड़े और पक्षी भी खामोश थे। उनकी गर्दन, माथा और छाती पसीने से तरबतर थे। उन्होंने सोचा कि बारिश इसी महीने आ जानी चाहिए। वह धीमी लेकिन लयबद्ध स्वर में वर्षा के देवता पर्जन्य को संबोधित एक वैदिक भजन गुनगुना रहा था:

महान व्यक्ति विश्व का व्यक्ति होता है।

स्यांदंतं कुल्यविषितं पुरसता

Ghrtena dyāvāpṛthivi vyundhi

Suprapānam bhavantyaghnyabyah

कृपया हमें घने और उफनते बादल भेजें, नदियाँ पूर्व की ओर बाढ़ की तरह बहें, इस दुनिया को और स्वर्ग को भी शुद्ध जल से भिगो दें, सभी पशुओं को भरपेट पीने के लिए स्वच्छ जल मिले।

जब बारिश धरती पर मूसलाधार बरसाती, तो पहले कंधे, बाहें, सिर और पीठ भीग जाते, जिससे गर्मी से होने वाले घाव भर जाते और मन को शांति मिलती। भीष्म द्वारा अपनी बहन को ले जाए जाने के बाद कई वर्ष बीत चुके थे। वे अपने रिश्तेदारों से मिलने दोबारा नहीं आए थे। शल्य ने सोचा कि उस वर्ष वे एक बार रिश्तेदारी का बंधन दिखाने आए थे। उन्होंने अपना सैन्य शिविर शहर की सीमा के बाहर छोड़कर शहर में प्रवेश किया, महल में आए और बड़े घमंड से विचित्रवीर्य के पुत्र के लिए वर माँगे, मानो उन पर कोई एहसान कर रहे हों।

उन्होंने भीष्म से पूछा, "...भीष्म, मैं अपनी बहन को कुरु परिवार को अर्पित करना एक बड़ा सौभाग्य और सम्मान मानता हूँ। लेकिन मुझे यह सूचना मिली है कि आपके भाई पांडु का विवाह पहले ही राजा सूर की पुत्री और कुंतिभोज की दत्तक पुत्री से हो चुका है। जब तक एक वरिष्ठ पत्नी मौजूद है, मेरी बहन को भला क्या सुख मिल सकता है?"

भीष्म ने अपने शरीर के समान ही गहरी, शक्तिशाली और विशाल आवाज में उत्तर दिया, "वह स्त्री जो विवाह के तीन वर्ष बाद भी एक बार भी गर्भवती नहीं हुई, पत्नियों में श्रेष्ठ कैसे हो सकती है? मुझे बताइए, मद्रा राजा। क्या आप नहीं जानते कि शुद्ध आर्य परिवार में पत्नी का स्थान उसके द्वारा जन्म दिए गए बच्चों, विशेषकर पुत्रों से निर्धारित होता है? आपके देश की स्त्रियाँ अपनी इतनी उपजाऊ कोख के लिए प्रसिद्ध हैं कि निःसंदेह कम से कम दस पुत्रों को जन्म दे सकती हैं। सौंदर्य में तो वे अतुलनीय हैं।" इन शब्दों ने उनके अहंकार को और बढ़ा दिया। परन्तु उनकी सुंदरता भी उनकी स्मृति से धुंधली पड़ चुकी थी और वर्ष बीत चुके थे। फिर भी वह सुंदर थीं, और निःसंदेह, प्रत्येक मद्रा स्त्री सुंदर होती है।

शल्य ने अपने ऊपर पहने सूती वस्त्र से पसीना पोंछा। उसने भीष्म से पूछा, "हे भीष्म, क्या आप इन मामलों में हमारी परंपरा से अवगत हैं?"

भीष्म ने उत्तर दिया, "जी हाँ। मुझे पता है कि जब आप हमारे कुरु देश से पश्चिम की ओर जाते हैं, तो वहाँ दुल्हनें बिना वधू मूल्य के नहीं दी जातीं। आप वधू मूल्य का सही आकलन करवाना चाहते हैं, है ना? मैंने बीस बैलगाड़ियाँ सामान और

उपहार तैयार रखे हैं। तांबे के बर्तन, सूती, रेशमी और ऊनी वस्त्र, सोने के सिक्कों से भरी एक थाली, और मैं आपको बता दूं कि कुरु के सिक्के शुद्धतम सोने से बने होते हैं, न कि पश्चिम में आपके द्वारा बनाए जाने वाले सिक्कों से।"

कुरु वंश के पास कितनी संपत्ति थी! उनकी राजधानी हस्तिनावती विश्व की सबसे धनी नगरी के रूप में प्रसिद्ध थी। जी हाँ, एक धनी कुल से वैवाहिक संबंध स्थापित हुआ। लेकिन उसके बाद भीष्म ने उनसे मिलने की जहमत तक नहीं उठाई! उन्होंने शल्य को कभी अपने बराबर नहीं माना। वे एक कन्या के साथ चले गए। उसके बाद उनकी बहन क्रोध में आकर अपने मायके नहीं लौटीं, यहाँ तक कि बुलाए जाने पर भी नहीं। उन्हें इस बात का बहुत दुख था कि उनका विवाह एक नपुंसक पति से हुआ था। ऐसी कौन सी मद्रास स्त्री होगी जो वीर्य से रहित पति से विवाह करे तो क्रोधित नहीं होगी? वीर्य वर्षा की तरह बरसना चाहिए, प्यास बुझाना चाहिए, मन को शांति देनी चाहिए।

उसी क्षण, पानी से भरे बड़े-बड़े मिट्टी के घड़े लिए मनमोहक लड़कियों का एक समूह पास आया। उन्होंने बगीचे की ज़मीन पर भरपूर पानी छिड़का। पानी छिड़कते ही सूखी ज़मीन ने सारा पानी सोख लिया। लड़कियों को बार-बार पानी लाकर सूखी ज़मीन पर छिड़कना पड़ा।

बूढ़े राजा ने चिल्लाकर कहा, "हे सेवकों, लगातार पानी डालते रहो।"

गिरोह के सरगना ने कहा, "इससे कीचड़ बन जाएगा।"

राजा ने उससे कहा, "रहने दो। धरती को भीगने दो।"

जैसे ही उन्होंने आदेश दिया, लड़कियाँ जोश से पानी छिड़कने लगीं, और पानी को अपने दाहिने हाथों से घड़ों के मुँह पर रखकर छानने लगीं। हवा पानी से ठंडी और सुहावनी हो गई। लड़कियों के जाते ही राजा का मन कुरु वंश की समृद्धि की कल्पना करने लगा। कितने हाथी! कितनी गायें! कितने रथ और घोड़े! कितने बर्तन! उनके पास मिट्टी के बर्तन नहीं थे, सब तांबे के थे। और अनगिनत पीढ़ियों से संचित सोना, जिसमें (यहाँ उन्होंने उंगलियों पर गिना) ऋष्टिसेना, प्रताप, दिलीप, भीमसेन, ऋक्ष, देववती, अक्रोधना जैसे व्यक्तित्वों का प्रभुत्व था, और वे इस नाम पर आकर रुक गए, आगे नहीं बढ़ पाए। एक विशाल चट्टान ने उनकी स्मृति को अवरुद्ध कर दिया था और उसके पीछे कई पीढ़ियाँ छिपी हुई थीं। उन्होंने उस निम्न जाति के दूत का नाम याद करने की कोशिश की, जिसने आकर उन्हें हस्तिनावती के संस्थापक के बारे में बताया था, जिनका नाम हस्तिना था, और जिनके बारे में

माना जाता था कि वे भीष्म से चालीस पीढ़ियाँ पहले के थे। उस शहर में इन वर्षों में कितना अपार धन-संपत्ति जमा हो गई होगी! उसने कामना की कि काश उन्हें भी कोई उपयुक्त प्रतीक चिन्ह मिल जाए जिससे वे मद्रा वंश की महिमा का गुणगान कर सकें। जैसे-जैसे धरती को भिगोने वाला पानी हवा को ठंडा करता गया, शरीर को भेदने वाले कीड़े गायब होने लगे।

साल्या जम्हाई लेते हुए, अपनी बाहों को फैलाते हुए, अपने शरीर को तरोताज़ा कर रहा था, तभी उसकी पोती आकर बोली, "दादाजी, पिताजी अभी-अभी लौटे हैं।" दादाजी ने उससे कहा कि उन्हें वहाँ भेज दे।

कुछ ही देर में उनका पुत्र रुकमरथ उनके पास आ गया। पचास वर्ष की आयु से काफी छोटा दिखने वाला पुत्र, अपने वस्त्र को ठीक करते हुए, अपने पिता के सामने खड़ा हुआ, आदरपूर्वक प्रणाम किया और प्रणाम करते हुए भूमि को छुआ। पिता द्वारा उसके सिर को सूंघने के बाद, वह वृद्ध व्यक्ति से दो कदम दूर बैठ गया।

पिता ने कहा, "रुकमरथा, क्या तुम दो सप्ताह से दूर नहीं हो?"

पुत्र ने कहा, "जी पिताजी।"

पिताजी, "आपने जुए में कितना पैसा गंवाया? आपने कौन-कौन सी चीजें जुए में हारीं?"

बेटे ने कहा, "नहीं, श्रीमान। मैं हारने वाला जुआरी नहीं हूँ। मैंने ज़्यादा कुछ जीता भी नहीं, यह तो निश्चित है। लेकिन मेरी यात्रा किसी और उद्देश्य से थी, और जुआ तो महज़ एक बहाना था, पिताजी।"

पिताजी ने पूछा, "अच्छा, तुम राज्य के किस काम के लिए गए थे?"

बेटे ने कहा, "आपको इस बात पर गुस्सा नहीं होना चाहिए कि मैं जो करना चाहता हूं उसमें हमारी जनजातीय रीति-रिवाजों और परंपराओं को छोड़ना शामिल होगा।"

पिताजी, "मेरा अनुमान है कि यह आपकी बेटी के लिए स्वयंवर विधि से विवाह की व्यवस्था करने के बारे में है। है ना?"

पुत्र ने कहा, "पिताजी, आप सर्वज्ञानी प्रतीत होते हैं।"

पिताजी, "ठीक है। अब हम और भी धनी हो गए हैं। जैसा चाहो वैसा करो, स्वयंवर का आयोजन करो और फिर शादी के उपहार भेजो। देखो, यह सब जल्दी करना होगा। लड़की परिपक्व होने के बाद पचास बार माहवारी कर चुकी है। अगर

गर्भ में उर्वरता के रस को वीर्य के साथ मिलने का मौका न मिले, तो इसमें लगने वाला समय पाप माना जाएगा। क्या तुम्हें एहसास है कि उसकी पचास माहवारी को व्यर्थ करने के पाप के लिए, तुम, मैं और तुम्हारे दादाजी नरक में जा सकते हैं?"

पुत्र ने कहा, "पिताजी, आपकी बात सही है। लेकिन स्वयंवर के लिए बहुत धन की आवश्यकता होती है। इसमें कई देशों के राजकुमारों को आमंत्रित करना पड़ता है—केवल राजकुमार ही नहीं, बल्कि राजाओं को भी। फिर उनके आतिथ्य, उपहार, विवाह उपहार आदि का खर्च भी होता है। इसमें असीमित संसाधनों का व्यय होगा। मुझे व्यवस्था करने में पंद्रह दिन लग गए। आप जानते हैं कि हम कुरु, पांचाल या काशी और मगध के राजा नहीं हैं कि हमारे खजाने से इतनी आसानी से धन निकाल सकें।"

पिता ने कहा, "देखो, क्या तुम्हें समझ नहीं आ रहा? अगर हमारे पास उनकी तरह धन-दौलत और संसाधन नहीं हैं, तो हम उनकी प्रथा क्यों अपनाएँ? चलो हम अपनी प्रथा, यानी दहेज की प्रथा, का पालन करें। इससे धन आएगा, जाएगा नहीं। इससे लड़की की प्रजनन क्षमता भी व्यर्थ नहीं जाएगी। नाजायज गर्भधारण रोकने के लिए तुम्हें लड़की को भयानक यातनाएँ देनी पड़ती थीं। क्या तुम्हें यह सब कितना निरर्थक और मूर्खतापूर्ण लगता है?"

पुत्र चुप रहा। पिता ने स्वाभाविक रूप से समझ लिया कि पुत्र के पास कोई उत्तर नहीं है, और इस चुप्पी से उत्साहित होकर उन्होंने आगे कहा, "हमारे लिए सर्वोच्च नैतिक नियम यह है कि स्त्री के प्रजनन काल को व्यर्थ करना सबसे बड़ा पाप है। मैं इस नियम का पालन करना अपना कर्तव्य समझता हूँ, इसके किसी भी उल्लंघन को बर्दाश्त नहीं करता।"

पुत्र बोला, "देखिए, पिताजी। आपने मद्रा देश से बाहर की दुनिया नहीं देखी है। हमारी मद्रा महिलाओं की सुंदरता और शारीरिक आकर्षण की ख्याति दूर-दूर तक फैली हुई है। लेकिन लोग हमारी महिलाओं को प्राप्त यौन स्वतंत्रता को भी नापसंद करते हैं। अगर आप पूर्वी देशों में लोगों को बताएँगे कि आप मद्रा से हैं, तो वे आपसे मद्रा ले जाने का आग्रह करेंगे और कहेंगे कि वहाँ उन्हें स्वर्ग का अनुभव होगा। मुझे लगता है कि हमें इस तरह की संदिग्ध प्रतिष्ठा का खंडन करने का प्रयास करना चाहिए।"

पिता ने ऊँची आवाज़ में कहा, "ये हमारे देश के रीति-रिवाज और परंपराएँ हैं। हमें इन्हें अनुचित बताकर निंदा करने का कोई अधिकार नहीं है।"

फिर भी, बूढ़े आदमी की आवाज़ में कोई वास्तविक क्रोध नहीं था। बेटे ने जवाब देना ज़रूरी नहीं समझा। उसे एहसास हो गया था कि पिछले दो वर्षों में उसके पिता का विरोध कमज़ोर पड़ गया था। अब बूढ़े आदमी की बस यही इच्छा थी कि जल्द से जल्द शादी हो जाए, चाहे किसी भी तरह की हो, यहाँ तक कि स्वयंवर भी। जब भी उसकी बेटी को माहवारी आती, उसके पिता उसे एक जन्म का नरक मानते। इससे उन्हें पीड़ा होती, क्रोध भी आता। कभी-कभी तो उन्हें डर भी लगता था। बेशक, मन ही मन वह, बेटा भी, डरा हुआ था। लेकिन अगर डर के मारे वह स्वयंवर के बजाय दहेज प्रथा अपनाता, और बिना किसी धूमधाम और समारोह के अपनी बेटी को उसके पति के घर भेज देता, तो इससे उनके कुल की प्रतिष्ठा और रुतबा कैसे बढ़ सकता था?

पिताजी ने कहा, "ठीक है। तो तुम जुआ खेलने जाने के बहाने स्वयंवर का आयोजन करने गए थे। मुझे बताओ तुमने क्या-क्या किया।"

बेटे, "मुझे यह स्वीकार करना होगा कि फिलहाल हम स्वयंवर आयोजित करने की स्थिति में नहीं हैं।"

पिता ने कहा, "लो, यही तो बात है। क्या मैंने तुमसे नहीं कहा था कि कुल की परंपराओं को तोड़ने की कोई भी कोशिश सैकड़ों बाधाओं को आमंत्रित करेगी!" उनकी आवाज़ अब थोड़ी ऊंची हो गई थी। अब उनकी आवाज़ में क्रोध की तीखी धार भी आ गई थी।

पुत्र ने शांत भाव से, स्थिर स्वर में कहा, "रथों, घोड़ों और पचास धनुर्धारियों के साथ मैं त्रिगर्त देश गया था। वहाँ के राजा सुशर्मा मेरे पुराने मित्र हैं। उन्होंने कहा, स्वयंवर ठीक है, लेकिन अगर हमारे पश्चिमी राजा और राजकुमार इसमें शामिल हों तो बेहतर होगा। अन्यथा, प्रतिष्ठा के लिहाज से इसका कोई महत्व नहीं होगा। कुरु, पांचाल, काशी, मगध और चेधि के प्रतिनिधि एक तरफ से, और फिर दूसरी तरफ से विदर्भ और द्वारका के राजकुमार (जो अब यादवों के अधीन हैं), और वास्तव में, सभी दिशाओं से प्रतिनिधि - इंद्र, अग्नि, यम और वायव्य - को भाग लेना चाहिए। कुरु और पांचाल के ब्राह्मण और धार्मिक अनुष्ठानों के विशेषज्ञ भी आएं। तब स्वयंवर महान और गौरवशाली होगा। आप कृपया तैयारियां शुरू कर दें। मैं अतिथियों के भव्य आतिथ्य के लिए आवश्यक सामग्री भेजूंगा। हालांकि, अभी पूर्वी देशों से कोई भी आने की स्थिति में नहीं है।"

बूढ़े शासक ने पूछा, "अरे, आखिर हुआ क्या है?"

पुत्र ने कहा, "तुम्हें पता है धृतराष्ट्र और पांडु की संतानों के बीच हस्तिनावती का पुराना झगड़ा। पांडु की संतानों ने बारह वर्ष वनवास और एक वर्ष छुपकर जीवन व्यतीत किया है... देखो, दोनों युद्ध में उलझे हुए हैं, और..."

वह बीच रास्ते में ही रुक गया, तभी उस बूढ़े व्यक्ति ने उसे टोकते हुए पूछा, "वैसे उन्होंने अपना गुप्तवास वाला साल कहाँ बिताया?"

पुत्र ने कहा, "पास ही विराटा शहर में।"

पिताजी, "तुम्हें पता है कि चोर अपने आप को सामने के दरवाजे के पीछे छिपाता है, यह कहावत बिल्कुल सच है!"

पुत्र ने बताया, "दुर्योधन ने सोचा कि वे ऐसा किसी दूर स्थान पर करेंगे। यह सोचकर कि वे अपने ससुर द्रुपद के राज्य में या अपने मित्र कृष्ण के दूर स्थित द्वारका में छुपकर रहेंगे, उसने इन स्थानों पर जासूस भेजे। उसने उन्हें ढूंढने के लिए हिमालय की ओर भी आदमी भेजे। अब उन्होंने निर्धारित तेरह वर्ष का वनवास पूरा कर लिया है और वे अपना राज्य वापस मांग रहे हैं। जब उन्होंने इसके लिए दूत भेजा, तो दुर्योधन ने स्पष्ट उत्तर दिया कि वह इसे वापस नहीं करेगा!"

"एक बार जब उन्हें जमीन और औरतों का स्वाद मिल जाता है, तो कोई भी उनसे अलग होने को तैयार नहीं होगा," बूढ़े आदमी ने बिना दांतों वाली हंसी के साथ कहा।

पुत्र ने कहा, "यह केवल अधिकार के अधिकार का प्रश्न नहीं था। नहीं, दुर्योधन ने अपने इनकार का आधार कहीं अधिक मौलिक बताया। उसका तर्क था कि केवल वह, उसके तेरह भाई और एक बहन ही धृतराष्ट्र की संतान के रूप में सच्चे कुरु वंश में जन्मे थे। उसका दावा था कि पाँचों पांडव वास्तव में कुरु वंश से नहीं जन्मे थे। उसने कहा कि पांडु की पत्नियों ने राहगीरों से गर्भधारण करके संतानें पैदा की थीं। इसलिए, उन्हें कौरव कहलाने का कोई अधिकार नहीं था। उसका यह भी मानना था कि उन्हें खांडवप्रस्थ क्षेत्र देना ही पहली गलती थी, लेकिन वह जुए में इसे जीतकर इस गलती को सुधार सकता था। उसने अपने बड़ों से तर्क किया कि उन्हें इस अधिकार का फिर से हनन नहीं करना चाहिए!"

पिता क्रोधित और शायद कुछ हद तक समझ पाते हुए बोले, "दुर्योधन ने क्या कहा?"

पुत्र ने दावा किया, "उसने कहा कि वे पाँचों अपने पिता की संतान नहीं थे, और उनकी माताओं ने बिल्कुल अजनबी पुरुषों के साथ यौन संबंध बनाकर उन्हें गर्भ

धारण किया और जन्म दिया। इस प्रकार वे विशुद्ध रूप से कौरव नहीं थे और कौरव राज्य में उनका कोई आधिकारिक दर्जा नहीं था!"

बूढ़े आदमी का दिमाग कुछ देर के लिए सुन्न पड़ गया। अंदर अंधेरी रात की नीरस गूंज सुनाई दे रही थी। बाहर हल्की चांदनी थी। आज कौन सा दिन है?, उसने खुद से पूछा। शुक्ल पक्ष का पांचवा दिन। धीरे-धीरे अंधेरे में ढलते हुए, अपना चेहरा हल्के से पोंछते हुए उसने कहा, "क्या बकवास है! उन्होंने किसी भी आम आदमी या और किसी भी आम आदमी के साथ नाजायज संबंध बनाकर संतान उत्पन्न नहीं की। उन्होंने स्वीकृत नियोग सिद्धांत के अनुसार संतान उत्पन्न की। स्वयं पांडु ने अपनी पत्नियों को वंश को आगे बढ़ाने के लिए नियोग का अभ्यास करने का आदेश दिया था। उन्होंने स्थापित नैतिक संहिता के अनुसार सब कुछ पूर्णतः किया। दुर्योधन धोखेबाज है। जमीन छोड़ने को तैयार न होकर वह ऐसे अनैतिक बहाने बना रहा है। हमारी सेना भेजो। चलो पांडवों की सहायता के लिए जल्दी चलें, दुष्ट दुर्योधन को मार डालें और सर्वोच्च नैतिक नियम, धर्म के राज्य को पुनः स्थापित करें।"

बेटे ने कहा, "देखिए पिताजी। आजकल आप बेवजह चिल्लाते और चीखते रहते हैं। आप ऐसा क्यों करते हैं?"

पिता ने कहा, "जब धर्म को अधर्म और अधर्म को धर्म कहा जाए तो क्रोधित होने के अलावा और क्या किया जा सकता है? हे भगवान, आप तो बिल्कुल शांत हैं। क्या आप दुर्योधन की बातों से सहमत हैं?"

बेटे ने कहा, "यह सच है कि उसने अपनी ज़मीन वापस न करने के लिए ये तर्क दिए। फिर भी मुझे आश्चर्य होता है कि क्या वंश की संतान से जन्म लेने और अन्य संतानों से जन्म लेने में कोई अंतर नहीं होगा, भले ही पति की सहमति और जानकारी हो।"

पिता ने कहा, "सर्वोच्च नैतिक नियम, धर्म की दृष्टि में कोई भेद नहीं है, बिलकुल भी नहीं। तुम्हें धर्म के प्रति समर्पित रहना चाहिए।"

पुत्र के पास इस प्रश्न का तत्काल कोई उत्तर नहीं था। वृद्ध पुरुष के होंठ क्रोध से कांप रहे थे। अपने सामने बैठे पुत्र को दुर्योधन समझकर, वृद्ध पुरुष ने उसे पीटने के लिए अपने हाथ आधे उठा लिए, लेकिन अपनी गलती का एहसास होते ही उसने तुरंत हाथ पीछे खींच लिए। जब ठंडी हवा चली तो उसे अपनी गर्दन, छाती और पीठ पर जमा पसीने का एहसास हुआ। जब वह उसे कपड़े से ज़ोर से पोंछ रहा

था, तभी अचानक उसे एक विचार आया, "यदि ऐसा है, तो दुर्योधन के पिता धृतराष्ट्र और पांडवों के पिता पांडु, दोनों का जन्म नियोग साधना से हुआ था। वह भी पिता की मृत्यु के बाद और उनकी अनुमति के बिना। उनकी पत्नियों को केवल अपने पति के नाम पर ही पराया बीज प्राप्त हुआ। तो क्या हम यह नहीं कह सकते कि दुर्योधन भी कुरु वंश से संबंधित नहीं है?"

बेटे ने पूछा, "क्या कोई केवल आस्था और प्रतिबद्धता के माध्यम से किसी का बेटा बन सकता है?"

उनके शब्द सन्नाटे में टकराकर बिखर गए। एक का प्रश्न दूसरे की समझ से परे था। नतीजा यह हुआ कि किसी के पास दूसरे के प्रश्न का उत्तर नहीं था। दोनों कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे। वे महल में जलते हुए तेल के दीपक को देख सकते थे। इसी बीच रुक्मरथ ने लगातार तीन बार जम्हाई ली। पिता ने कहा, "यात्रा के बाद तुम बहुत थक गए हो। अब तुम जाकर आराम कर सकते हो।" पुत्र उठा, पिता के महल से गुजरा और अपने महल पहुँच गया। दूध में पका हुआ चावल खाने के बाद, वह खुले आँगन में ठंडी ज़मीन पर रखे लकड़ी के तख्ते पर घास की चटाई पर बिछे सूती गद्दे पर सोने चला गया। बूढ़ा राजा अपने सूती गद्दे पर सोया। वह विधुर था। हालाँकि उसकी सेवा में सुंदर दासियाँ थीं, लेकिन उसने कई वर्षों से उन्हें अपने बिस्तर पर बुलाना बंद कर दिया था। वह उन्हें छूता भी नहीं था। जब वह ऊँचे और विशाल आकाश की ओर मुँह करके लेटा था, जो चमकीले टिमटिमाते तारों से भरा था, तो उसे भीष्म की याद आई। पूर्वी, पश्चिमी, दक्षिणी और उत्तरी क्षेत्रों में निवास करने वाले सभी क्षत्रिय समुदायों में भीष्म को नैतिक और धार्मिक नियमों का सबसे अधिक ज्ञान प्राप्त था। स्वयं भीष्म ने ही अपने मृत भाई की पत्नियों के लिए नियोग मातृत्व की व्यवस्था की थी और वंश को आगे बढ़ाने में सहायता की थी। उन्होंने बिना किसी संकोच के पांडु के बच्चों को अपने पोते-पोतियों के रूप में स्वीकार किया था। अब इस लालची और स्वार्थी दुर्योधन ने झूठे धर्म का सहारा लिया है। मूर्ख! मूर्ख! आकाश में चमकते तारों की उपस्थिति में, उसने नैतिक और धार्मिक नियमों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की गहराई को महसूस किया। जैसे ही वह एक तरफ मुड़ा, पुत्र के प्रति अचानक क्रोध उमड़ आया। "ये नौजवान क्या कर रहे हैं? वधू का मूल्य शर्मनाक है, कन्या का विवाहपूर्व गर्भाधान अनैतिक है, नियोग का अभ्यास नाजायज है! तो क्या इसका मतलब यह है कि हमारे पूर्वजों के तरीके गलत हैं? मूर्ख! मूर्ख! अब उसे स्वयंवर आयोजित करने से

क्या रोक रहा है? पांडवों और धृतराष्ट्र के पुत्रों के बीच वहाँ चल रहा युद्ध हमारे यहाँ स्वयंवर स्थगित करने का कारण कैसे हो सकता है? चलो, मैं सुबह उससे बात कर लेता हूँ।" फिर बूढ़ा सो गया। राजा शल्य के साथ हमेशा ऐसा ही होता था। नींद उनके लिए कभी कोई समस्या नहीं रही थी। लेकिन अब बुढ़ापे के कारण, वे आधी रात को अचानक जाग जाते थे, लेकिन थोड़ी देर बाद गहरी नींद में सो जाते थे। जागने के उस थोड़े समय में, वे ऊपर आकाश और तारों को देखते हुए धीरे-धीरे नींद में डूबने का आनंद लेते थे, विशाल नीले आकाश में उनकी स्थिति और स्थान का पता लगाने की कोशिश करते थे। केवल सर्दियों के दौरान ही जब उसे घर के अंदर सोने के लिए मजबूर होना पड़ता था, तब नींद में वापस लौटना समस्याग्रस्त हो जाता था और जागना एक भारी बोझ बन जाता था जो उसे समय में पीछे खींचता था।

पोती हिरण्यवती छत पर नींद से वंचित लेटी हुई थी, अपने शरीर को बहने वाली ठंडी हवा के हवाले कर रही थी। उसे याद आया कि त्रिगर्त से लौटकर उसके पिता ने उसकी माँ से क्या कहा था — "कुरुओं ने युद्ध की तैयारी कर ली थी। यह कोई साधारण युद्ध नहीं था। यह ऐसा युद्ध था जिसमें पूर्वी और पश्चिमी राज्यों के शासक शामिल हो रहे थे। रथों, घोड़ों और पैदल सैनिकों से लैस अनगिनत लोग पहले ही युद्ध के मैदान की ओर चल पड़े थे। ऐसे उथल-पुथल भरे माहौल में, स्वयंवर में भाग लेने का समय या इच्छा किसके पास होगी? इसका मतलब यह था कि पूर्वी और पश्चिमी राज्यों से कोई भी वर उपलब्ध नहीं होगा, केवल पंचाल, केकेय और गांधार राज्यों से ही वर आएंगे। पिता को लगा कि इन परिस्थितियों में स्वयंवर को कोई विशेष महत्व या गरिमा प्राप्त नहीं होगी। माँ दुखी और निराश थीं। लेकिन क्या वह मेरी तरह दुखी हैं? इस भीषण गर्मी में भी वह अंदर पिता के साथ सो रही हैं! यहाँ मुझे बूढ़ी नौकरानियों ने कैदी की तरह पहरा दे रखा है। आकाश में तारे टिमटिमा रहे हैं। स्वयंवर का अर्थ रोमांच होता। मांसपेशियों से भरा एक शक्तिशाली युवक मुझे धूल में लिपटे घोड़े पर बिठाकर अपने साथ ले जाता, मुझे कसकर पकड़े हुए। सीना! ओह, कितना आनंद है! विशाल स्वयंवर पंडाल, विभिन्न देशों के ताजपोशों से भरा हुआ, और मेरे लिए चुनने के लिए सब कुछ, बिल्कुल स्वतंत्र! हाँ, पिताजी सही कह रहे हैं। फिर भी कितने लंबे वर्षों का इंतज़ार! फिर वह करवट बदलकर सोने की कोशिश करने लगी। नहीं, नींद आने से इनकार कर रही थी। हाँ, दादाजी की बातें सही थीं। पिताजी कैसे कह सकते हैं कि वे नैतिकता

और धर्म के मामलों में दादाजी से बेहतर जानते हैं? शादी से पहले बच्चे पैदा करना गलत क्यों है? क्या किसी पुरुष को पत्नी के साथ एक ही बार में बच्चे होने से लाभ नहीं होगा? सभी नौकरानियाँ यही राय रखती हैं। लेकिन पिताजी इस बात पर अड़े हैं कि उनके महल में इस प्रथा पर प्रतिबंध होना चाहिए। और उन्होंने मेरे ऊपर ये पहरेदार लगा रखे हैं। फिर वह करवट बदली। अचानक वह उठ बैठी। सीढ़ियों पर पहरा दे रही बूढ़ी नौकरानी डर के मारे उसकी ओर दौड़ी। लड़की ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "डरो मत। मैं किसी आदमी के साथ भागने के लिए नहीं उठी हूँ। मुझे पानी चाहिए।" नौकरानी द्वारा मिट्टी के घड़े में ठंडा किया गया पानी उसने झटपट पी लिया। पानी पीते ही शरीर की गर्मी पल भर में गायब हो गई और वह पसीने से तरबतर हो गई। बेचैनी में ही वह सो गई।

नौकरानी ने बर्तन उसके पास रख दिया और लड़की के चेहरे पर धीरे से हाथ फेरते हुए कहा, "तुम्हें नींद नहीं आ रही है, है ना? तुम्हारी उम्र में तो मैं पहले ही दो बच्चों को जन्म दे चुकी थी।"

हिरण्यवती ने कोई उत्तर नहीं दिया, बल्कि धीरे-धीरे अपनी आँखें बंद कर लीं।

नौकर ने आगे कहा, "यदि कोई स्त्री दर्द से कराहते हुए सो न पाए, तो देवता भी बलि को अस्वीकार कर देंगे। जब शासक स्वयं नैतिक नियमों का उल्लंघन करते हैं, तो वर्षा और फसल कैसे हो सकती है? गायों के थन दूध से कैसे भर सकते हैं? स्त्रियाँ गर्भ धारण कैसे कर सकती हैं, लोग कैसे वंशागत हो सकते हैं, एक से दस, दस सौ और एक लाख कैसे हो सकते हैं? घोड़े भी..."

किसी के सीढ़ी चढ़ने की आवाज़ से उनकी झिझक दूर हो गई। भारी कदमों की आवाज़ से दोनों को पता चल गया कि हिरण्यवती की माता आ रही हैं। वह निगरानी में मदद करने के लिए अपनी बेटी के पास आ रही थीं। नौकर उठा और वापस सीढ़ियों पर जाकर पहले की तरह बैठ गया। रानी अपनी बेटी के बगल में गद्दे पर सो गईं और बोलीं, "अंदर कितनी उमस और घुटन है।" थोड़ी ही देर में उन्हें खर्राटे आने लगे। लेकिन बेटी अपने बिस्तर पर करवटें बदलती रही, उसे कोई राहत नहीं मिली!

—•✳•—

अध्याय 2

शल्य का दूसरा विश्राम सत्र बहुत छोटा होता था। वे आमतौर पर भोर होते ही उठ जाते थे। उठते ही वे शकाला नगर के पूर्वी भाग की ओर चल पड़ते थे। चार अंगरक्षक हमेशा उनके साथ रहते थे। सुबह के अनुष्ठान पूरे करने के बाद वे नगर की सीमा के पार स्थित नदी में स्नान करते, स्वच्छ वस्त्र धारण करते और महल लौट आते। फिर उनका दिन हमेशा पुरोहित होमादत्त की देखरेख में पूर्ण श्रद्धा से संपन्न अग्नि यज्ञ से शुरू होता था। शल्य स्वयं अनुष्ठान के नियमों, विधियों और प्रक्रियाओं से भलीभांति परिचित थे। फिर भी वे ब्राह्मण होने के नाते पुरोहित के अधिकार को स्वीकार करते और उनके निर्देशों का पालन करते थे। वे और यह ब्राह्मण घनिष्ठ मित्र थे।

कई बार शामें ऐसी होती थीं जब वे दोनों घोड़ों पर सवार होकर लंबी और दूर की यात्रा करते थे। उस खास दिन, अनुष्ठान के बाद, तीनों पीढ़ियाँ - स्वयं, पुत्र, बहू और पोतियाँ - एक साथ भोजन करने बैठे। बुढ़ापे के साथ, साल्या को सक्तू बहुत पसंद आने लगा, जो खट्टे दूध (या दही) में भिगोए हुए मक्के के आटे से बनी एक गोली होती है, जिस पर शहद लगाया जाता है। वह इसे सबसे पहले खाना चाहता था, न केवल इसके स्वाद के कारण, बल्कि उससे भी अधिक इसकी आसानी से पच जाने की क्षमता के कारण। ऐसा नहीं था कि बूढ़ा व्यक्ति अन्य चीजें नहीं खाता था।

जब वे खाना खा रहे थे, तब बेटे ने कहा, "पिताजी, किसी भी देश में इतना स्वादिष्ट करम्भा नहीं बनता जितना हम मद्रा में बनाते हैं।"

पुजारी ने कहा, "लेकिन मैंने यह भी सुना है कि कहीं भी गायें हमारे यहाँ की गायों की तरह इतना गाढ़ा और वसायुक्त दूध नहीं देतीं।"

बेटे ने कहा, "बेशक, यही बहाना हमेशा दिया जाता है! लेकिन अच्छी गुणवत्ता वाले जंगली गेहूं के बिना बढ़िया करम्भा कैसे बन सकता है? यहाँ उगाए जाने वाले गेहूं का अपना एक अलग ही स्वाद होता है। वैसे, इसे पकाया कैसे जाता है?"

खाना परोसने वाले रसोइए ने समझाया, "पहले गेहूँ को घी में भूनना चाहिए, फिर उसे पीसकर आटा बनाना चाहिए। आटे को दोबारा घी में पकाना चाहिए। कहने में

तो यह आसान लगता है, लेकिन करने में मुश्किल। सबसे कठिन काम आटे को सही गाढ़ापन देना है।"

शल्य ने पूछा, "क्या हमारा करम्भा हस्तिनापुरा में बनने वाले करम्भा से बेहतर है?"

पुत्र ने कहा, "पिताजी, आप हर अवसर पर हस्तिनावती से तुलना करना चाहते हैं। आपके अनुसार, उनका करम्भ सर्वश्रेष्ठ है, उनका परिवार सर्वश्रेष्ठ है, उनका यज्ञ-पात्र सर्वश्रेष्ठ है। इतना ही नहीं, उनका ऐश्वर्य सबसे अधिक है, उनका राज्य सबसे सुशासित है। बेशक, उन सबमें महानतम तो उनके पुराने साथी भीष्म हैं! आखिर आपके विचार हमेशा इन्हीं बातों पर क्यों टिके रहते हैं?"

पिता ने कहा, "देखो पुत्र, जब मैं सच बोलता हूँ तो तुम क्रोधित क्यों हो जाते हो? हमारे आर्यों के पूरे देश में यह सर्वमान्य है कि कुरुपंचल सबसे श्रेष्ठ लोग हैं, हम सबके लिए आदर्श हैं। ठीक है, होमादत्त, तुम पवित्र ज्ञान और सही परंपराओं में सबसे अधिक पारंगत किसे मानते हो?"

यज्ञ अनुष्ठान में अर्पित चावल की रोटी चबाते हुए पुजारी होमा ने उसे जल्दी से निगल लिया, जिससे बोलने के लिए उनकी जीभ और जबड़े खाली हो गए। फिर उन्होंने कहा, "कुरुपंचल ब्राह्मण दावा करते हैं कि वे वैदिक ज्ञान, अनुष्ठानिक तकनीकों और भाषा की शुद्धता में सर्वश्रेष्ठ हैं।"

रुक्मरथ ने इस मौके का फायदा उठाते हुए कहा, "वे यही दावा करते हैं, है ना?"

लेकिन पुजारी ने जवाब दिया, "नहीं, नहीं। यह सिर्फ़ उनका दावा नहीं है। वास्तव में, इन देशों में इन क्षेत्रों के कई अनुभवी विशेषज्ञ हैं। वहाँ के राजा भी उतने ही कुशल हैं। वे स्वयं ही सभी यज्ञ-विधानों का संचालन कर सकते हैं। वे वैदिक विद्वानों का संरक्षण भी करते हैं। उदाहरण के लिए, पांडु के पुत्र धर्मराज को ही ले लीजिए। उन्होंने अपेक्षाकृत कम उम्र में, मात्र सैंतीस या अड़तीस वर्ष की आयु में राजसूय यज्ञ किया था। अन्य राजा उस आयु में यज्ञ करने के बारे में क्यों नहीं सोचते? इसीलिए सभी विद्वान वहाँ एकत्रित होते हैं। जब उन्हें वह स्थान अनुकूल लगता है, तो वे वहीं बस जाते हैं। भीष्म स्वयं एक प्रखर वैदिक विद्वान हैं। आप जानते हैं, कृष्णद्वैपायन ने कुरु वंश की निरंतरता के लिए अपना वीर्य दान किया था। हाल ही में वे भी वहीं बस गए हैं। क्या आपको लगता है कि द्रोण, अश्वत्थामा और कृपा साधारण विद्वान हैं? पंचाल के राजा भी वैसे ही हैं। यदि आप इन विषयों

के बारे में और अधिक जानना चाहते हैं, तो मैं उनकी महानता के बारे में पूरे दिन बात कर सकता हूँ।" फिर उन्होंने बलि का घी दूध और दही में मिलाकर पिया और कृतज्ञता का स्वर निकाला।

पिता ने आगे कहा, "केवल इस पीढ़ी के पुरुष ही नहीं। कुरुपंचल वंश के अनगिनत पूर्वज राजाओं ने अत्यंत प्रतिष्ठित यज्ञ अनुष्ठान सफलतापूर्वक संपन्न किए थे। ऐसे एक अनुष्ठान को करना भी आसान नहीं है! एक अनुष्ठान करने के लिए भी धन के देवता कुबेर की संपूर्ण संपत्ति की आवश्यकता होती है!"

रुक्मरथ चुप रहे। वे पूरी तरह से व्याकुल थे। बेशक, उन्हें पूरा विश्वास था कि न तो उनके पिता और न ही होमदत्त उन्हें अपमानित करना चाहते थे। इसीलिए वे शांत और ध्यानपूर्वक चर्चा में बैठे रहे। फिर होरीता ने आगे कहा, "यह अनुष्ठान प्रतिदिन और अधिक कठिन होता जा रहा है। अब जब लोग मंत्र की शक्ति को जान चुके हैं, तो अधिक पुरोहितों की आवश्यकता है। पहले एक ही पर्याप्त था। अब एक ब्रह्मा के पद पर, दूसरा अनुष्ठान करने के लिए, तीसरा मंत्रोच्चार करने के लिए और चौथा अध्वर्यु या मुख्य अनुष्ठानकर्ता के रूप में आवश्यक है। कुल मिलाकर, अब चार व्यक्तियों की आवश्यकता है। हाल ही में पांडवों के वनवास जाने के बाद, दुर्योधन ने एक भव्य अनुष्ठान किया, जिसमें चारों पदों के लिए चार-चार व्यक्तियों को नियुक्त किया गया, इस प्रकार अनुष्ठानकर्ताओं की संख्या सोलह हो गई! इसके अलावा, इन अनुष्ठान विशेषज्ञों के शिष्य भी थे। संक्षेप में, साधारण लोगों के लिए अनुष्ठान करना अब संभव नहीं है।"

रुक्मरथ का ध्यान अंतर्मन की ओर गया। वह जानता था कि किसी भी धार्मिक आयोजन में भारी खर्च होता है, फिर भी उसे यह नहीं पता था कि इतना अधिक खर्च आएगा। उसने मन ही मन स्वयंवर के संभावित खर्चों का हिसाब लगाया। इतने सारे राजकुमार और शासक अपने दल-बल के साथ आएंगे। उन सभी के रहने-खाने और देखभाल का इंतजाम करना होगा। फिर उनके घोड़ों को अनाज और घास खिलानी होगी। स्वयंवर हॉल के निर्माण का खर्च भी होगा। फिर ढेरों उपहार देने होंगे। वह सोचने लगा कि क्या वह यह सब कर पाएगा! लेकिन उन राज्यों के शासक यह सब कैसे संभालते थे? उसे अब भी याद आ रहा था कि धर्मराज ने 37 या 38 वर्ष की आयु में राजसूय अनुष्ठान किया था। लगभग 15 वर्ष पहले, उसकी अपनी मौसी का पुत्र नकुल, रथों, घुड़सवारों और सैनिकों के साथ एक सफेद घोड़े पर सवार होकर आया था। तब पिता ने अपनी बहन के पुत्र नकुल के प्रति अपना

स्नेह ऊनी कंबल, अनाज, दस रथ और बीस घोड़े भेंट करके दिखाया था। नकुला ने अपने पिता को प्रणाम करते समय पूर्ण आदर और भय का भाव दिखाया। कुछ स्थानों पर उसे युद्ध लड़ने और उनमें विजय प्राप्त करने का अवसर मिला। साथ ही, उसके दो बड़े भाई और एक छोटा भाई भी अन्य दिशाओं में इसी प्रकार विजय और युद्ध की यात्राओं पर गए थे।

अचानक उसने मुंह खोलकर कहा, "आखिरकार, दूसरे स्थानों से लूटी गई संपत्ति ही अनुष्ठानिक प्रदर्शन के लिए संसाधन उपलब्ध कराती है। क्या ऐसा नहीं है?"

पिता ने बिना दांत दिखाए मुस्कुराते हुए कहा, "बेटा, लूटपाट करने के लिए भी शक्ति और क्षमता की आवश्यकता होती है। क्या तुम्हें लगता है कि तुम यह कर सकते हो?"

बेटे के पास कोई जवाब नहीं था। वह चुपचाप विशेष रूप से पकाए गए गोमांस को चबा रहा था, शायद इसलिए कि वह लंबे समय बाद लौटा था! उसने होमादत्ता के सवाल का जवाब नहीं दिया, "क्या आपको नहीं लगता कि गोमांस से पहले मटन बेस्वाद होता है?" कुछ देर तक कोई नहीं बोला और सन्नाटा छा गया। बूढ़ा राजा दूध और शहद से बना एक पेय जोर-जोर से पीने लगा।

रात के खाने के बाद शल्य अपने बिस्तर पर लेट गए। नौकरों ने सुगंधित लामंचा की जड़ों से ढके गद्दों पर पानी छिड़ककर कमरे को ठंडा कर दिया था, जिससे दीवारें, दरवाजे और खिड़कियां भी ढक गई थीं। इस समय एक-दो घंटे की नींद लेकर वे रातों की नींद की कमी को पूरा करते थे। रुक्मरथ अपने कमरे में सोने चले गए। लेकिन उन्हें नींद नहीं आ रही थी। वे सोचते रहे, "क्या मैं स्वयंवर समारोह आयोजित कर पाऊंगा? या पिता की सलाह मानकर पारंपरिक दहेज प्रथा को अपनाकर किसी तरह इस बेटी को त्याग देना चाहिए? नहीं, यह ठीक नहीं होगा। हमें स्वयं दूल्हा चुनना चाहिए, और इसका मतलब है स्वयंवर।" उन्हें यह याद करके खुशी हुई कि त्रिगर्त के लोगों ने समर्थन का वादा किया था। लेकिन अगर कुरुओं के बीच युद्ध के कारण अधिकांश शासक भाग नहीं ले पाए, तो क्या होगा? क्या यह असफल नहीं होगा? जैसे ही चिंता से उसकी आंखें फड़कने लगीं, उसकी पत्नी पास आई और बोली, "हिरण्यवती को मासिक धर्म हो रहा है, और अभी थोड़ी देर पहले ही स्राव शुरू हुआ है।"

रुक्मरथ एक बार फिर गहरी चिंता में डूब गए। उन्हें ऐसा लगा मानो उनका पूरा मन पाप के भूरे-लाल रंग से रंग गया हो, और इसे सहन न कर पाने के कारण

उन्होंने अपनी आँखें बंद कर लीं। मूल्यों के पैमाने पर वे भली-भांति जानते थे कि यदि किसी स्त्री के प्रजनन काल के प्रत्येक समय को गर्भाधान न होने दिया जाए, तो यह उपजाऊ खेत को बंजर छोड़ने के समान पाप है। यही उनके पिता की निरंतर सलाह थी। इतना ही नहीं, यह केवल उनके पिता की ही सलाह नहीं थी। स्वयं आर्य नैतिक संहिता भी यही कहती थी। यह हिरण्यवती का इक्यावनवाँ मासिक धर्म चक्र था जो अब तक नहीं बीता था। उन्होंने मन ही मन कहा, "पहले मैंने दहेज प्रथा से बचने के लिए उसका विवाह टाल दिया। फिर स्वयंवर की व्यवस्था करने के प्रयास में बारह मासिक धर्म चक्र व्यर्थ हो गए। अब इस कुरु युद्ध ने मेरी पुत्री के गर्भ को बंजर, बिना बीज के रह जाने का खतरा पैदा कर दिया है।" धीरे-धीरे उनकी आँखें नींद में डूब गईं। बंद, सोई हुई आँखों के अंधेरे में, पाप का भूरा-लाल रंग और भी भयावह प्रतीत हुआ। उन्हें उन शिक्षकों की पत्नियों की कहानियां याद आईं, जो मासिक धर्म के बाद अपने पतियों की अनुपस्थिति में उनके शिष्यों के साथ शारीरिक संबंध बनाती थीं: "क्या उन्हें नैतिक नियम का ज्ञान नहीं था? क्या उन्होंने पतिभक्ति (पति-पूजा) के नियम का उल्लंघन किया, इस नियम की अवहेलना करते हुए कि पति ही उनका भगवान है? हे भगवान, मेरे ही घर में यह कैसा पाप हो रहा है?", उन्होंने मन ही मन बुदबुदाया। तभी पास बैठी उनकी पत्नी ने धीरे से पूछा, "क्या आप अभी तक सोए नहीं हैं?"

उसने धीरे-धीरे पलकें खोलते हुए कहा, "नहीं...."

पत्नी ने कहा, "शादी के बिना बेटा या बेटी हो तो भला इसमें क्या बुराई है?"

उसने "हाँ" कहते हुए सहमति जताई। क्योंकि उसे यकीन था कि अगर वह जवाब माँगती रहती, तो उसके पास और भी सवाल होते। वह जानता था कि वह वही सवाल दोहराएगी, इसलिए उसने आँखें बंद करना ही बेहतर समझा। लेकिन कुछ देर बाद वह फिर बोली, "तुम्हें पता है कि हमारी शादी से पहले मेरा एक बेटा हुआ था, जो मेरे मायके में पैदा हुआ था। तुमने ज़िद की थी कि वह बच्चा मेरे साथ जाए, जबकि तुम्हें सिर्फ़ मैं ही मिली थी। अगर मुझे याद है, तो तुमने कहा था, 'अगर वह लड़की मेरी है, तो उसके गर्भ में पलने वाला बच्चा भी मेरा है।' तुमने कहा था कि यह तुम्हारा हक़ है। जब मैंने कहा कि मेरे पिता उस बच्चे से बहुत लगाव रखते हैं और मैं तुम्हें ऐसे दस बच्चे दे दूँगी, तो तुम अपना दावा छोड़ने को राज़ी हो गए। क्यों? अब क्या हुआ है? तुम इतने बदल क्यों गए हो?"

“खैर,” उसने सोचा, “मेरे साथ क्या हो गया है?” उसने अपनी आँखें खोलीं। एक तरफ मुड़कर उसने अपनी पत्नी के चेहरे को देखा। हाल ही में, शादी के इतने सालों बाद, इतने सारे बच्चों के बाद, उस नाजायज बच्चे के लिए वह मन ही मन उसे कोसने लगा था! वह जानता था कि इसमें उसकी कोई गलती नहीं थी, फिर भी वह ऐसा महसूस करने से खुद को रोक नहीं पा रहा था, हालाँकि पहले वह उससे प्यार करता था और उस बच्चे को चाहता था जिसका वह पिता नहीं था। हालाँकि उसने यह बात उसे खुलकर नहीं बताई थी। अब वह उससे पूछ रही थी कि उसके साथ क्या हुआ है, उसकी आँखों में जिज्ञासा थी। अपनी बेटी के हित में नहीं, बल्कि उस पाप से बचने के लिए जो परिवार पर लगेगा अगर उसकी कोई बेटी बिना संतान के एक भी माहवारी बर्बाद कर दे। उसने उसके सवाल का जवाब नहीं दिया। लेकिन वह उसके चेहरे को देखता रहा। वह भी बदले में उसे घूर रही थी।

फिर वह अचानक उठ खड़ा हुआ और शब्दों की बौछार करते हुए बोला, "देखो, कुरु, पांचाल, काशी और अन्य पूर्वी देशों में, और विराट, मत्स्य, छेदी और अन्य दक्षिणी देशों में, विवाह के बाहर पैदा हुए बच्चों की निंदा की जाती है। कुछ तो उन्हें पाप में जन्मा मानते हैं। आम लोगों के विचारों को छोड़ दें तो, राजपरिवारों में इसे शर्म की बात समझा जाता है। तुम्हें याद होगा, मैं पंद्रह साल पहले अपनी मौसी के पुत्रों, पांडवों द्वारा आयोजित राजसूय में शामिल होने गया था। तब मैंने उनके रीति-रिवाजों और नैतिकता के बारे में पूछताछ की थी। मैंने अपने दरबार में आने वाले ब्राह्मणों से भी सुना है। वे हमें, जो अभी भी पुराने नैतिक नियमों का पालन करते हैं, हीन समझते हैं और हमें तिरस्कार भरी नजरों से देखते हैं। अगर मेरे अपने घर में, मेरी अपनी बेटी के साथ कुछ ऐसा हो जाए जिसे वे अस्वीकार करते हैं, तो मैं आर्यों की भूमि में सम्मान और गरिमा के साथ कैसे रह सकता हूँ?"

वह जानती थी कि आर्य शासकों के समुदाय में ब्रह्मवर्त क्षेत्र के लोग धन और प्रतिष्ठा में उनसे हीन थे। वह भी उनके बराबर न सही, लेकिन उनके करीब पहुँचने के विचार से विमुख नहीं थी। फिर भी, उसने स्वयं से पूछा, "हमें अपने स्थापित नैतिक नियमों में अनावश्यक रूप से छेड़छाड़ क्यों करनी चाहिए? क्या पूर्वजों के नियमों और रीति-रिवाजों का उपहास और खंडन करके, और मनमानी करके कोई श्रेष्ठ बन जाता है? क्या हमें दूसरों की नकल करनी चाहिए?" लेकिन वह जानती थी कि उसके पति ने अधिक देशों का भ्रमण किया था और इन मामलों में अधिक ज्ञानी थे। फिर भी, आर्य भूमि के तौर-तरीकों का अंधाधुंध अनुसरण करने के उनके

रवैये और व्यवहार को वह स्वीकार नहीं करती थी। उन्होंने कहा, "देखो, कुरुवंश के इस भीष्म के बारे में, जिनके बारे में पिताजी हमेशा बात करते रहते हैं, ऐसा माना जाता है कि उन्होंने भी विवाह से बाहर जन्मे बच्चों को स्वीकार किया था। कृष्ण द्वैपायन, जिन्हें आर्य और ब्रह्मलोक में वैदिक विद्या का विशेषज्ञ माना जाता है, धृतराष्ट्र और पांडु दोनों के पिता माने जाते हैं। बस यही बात है। कुरु परिवार में भी ऐसी घटनाएं हुई हैं।"

उन्होंने कहा, "हां, लेकिन यह बहुत पहले हुआ था। अब वे सभी अपने तौर-तरीकों में पूरी तरह बदल चुके हैं। हाल ही में, वे लगभग हर चीज में बदल गए हैं।"

वह आगे नहीं बढ़ी। बेशक, सैद्धांतिक रूप से वह इस बात से सहमत थी कि किसी भी बोली लगाने वाले को लड़की बेचने की प्रथा को त्यागकर वैवाहिक जीवन को अपनाना बेहतर होगा, जिसमें लड़की क्षत्रिय पुरुषों के समूह में से अपनी पसंद का दूल्हा चुन सके। यह विचार उसके पति का था। यहाँ तक कि विवाहविहीन संतानोत्पत्ति के विचार भी उन्हीं के थे। शायद इसीलिए यह विचार सही था; फिर भी उसे लगा कि प्रजनन क्षमता के नुकसान के मामले में उसका पति पूरी तरह सही नहीं था। पाप को कम करने के तरीकों के बारे में सोचते-सोचते दोपहर की गर्मी से उसकी आँखें भारी होने लगीं। वह उठी और भीतरी आँगन में चली गई। वहाँ उसकी माहवारी से पीड़ित बेटी, कमरबंद के बिना, साड़ी कंधों और छाती पर लिपटी हुई, स्तब्ध बैठी थी।

—•✳•—

अध्याय 3

अगले दिन, राजा शल्य से मिलने एक दूत आया। वह पाँच घुड़सवारों के साथ आया था। यह स्पष्ट था कि वह किसी राजसी अधिकारी का ब्राह्मण दूत था। राजा ने

दरबार में ही उसका औपचारिक स्वागत किया। उसके साथ उसका सबसे बड़ा पुत्र रुक्मरथ और उसके भाई वज्र और अजय भी थे। पुरोहित होमदत्त भी उपस्थित थे। ब्राह्मण ने दूत के रूप में राजा को प्रणाम किया, लेकिन राजा ने भी ब्राह्मण होने के नाते उसे प्रणाम किया। शहद का अर्पण ग्रहण करने के बाद वह अपने आसन पर बैठा। फिर उसने अपना परिचय दिया और अपनी यात्रा का उद्देश्य बताया। उसने कहा कि विराट देश में अपने गुप्त वनवास की समाप्ति के बाद, पांडवों में तीसरे अर्जुन के पुत्र ने विराट के राजा की सबसे छोटी पुत्री से विवाह किया था। वे विराट देश के उत्तर में स्थित उपप्लव्य नगर में डेरा डाले हुए थे और अपना कार्य शुरू कर चुके थे। दुर्योधन ने उन्हें उनका राज्य लौटाने से स्पष्ट इनकार कर दिया था। दूत ने उन्हें बताया कि इसमें निहित नैतिक नियमों के उल्लंघन के बारे में विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने उन्हें बताया कि पांडव शल्य की बहन के पुत्र थे। दरअसल, वे शल्य से सहायता मांगने स्वयं आने की योजना बना रहे थे, लेकिन युद्ध की तैयारियों की व्यस्तता के कारण वे नहीं आ सके। उन्हें यह भी विश्वास था कि उनके मामा उनसे केवल औपचारिक भेंट की अपेक्षा नहीं करेंगे। इसीलिए उन्होंने शल्य को दूत बनाकर भेजा था। पांडवों की ओर से उन्होंने शल्य से न केवल पैदल सैनिकों, घुड़सवारों, रथों, सारथियों और हाथियों को भेजने की विनती की, बल्कि युद्धक्षेत्र की कमान संभालने और पांडवों को विजय दिलाने में सहायता करने का भी अनुरोध किया।

होमादत्त ने पूछा, "बताइए, ब्राह्मण, आप कहाँ से आए हैं?"

संदेशवाहक, "कैम्पिल्या।"

यह द्रुपद के दक्षिणी पांचाल का नगर था। शल्य और उनके पुत्रों ने तुरंत समझ लिया कि वह पांडवों के ससुराल से हैं। आगंतुक की गरिमामय भाषा, आत्मसम्मान को खोए बिना विनम्रता का प्रदर्शन और शिष्टाचार से प्रभावित होकर होमदत्त कुरुपंचल राज्य के गौरवशाली गुणों - उनकी उच्च भाषा और महान संस्कृति - के प्रति गहरी प्रशंसा में लीन हो गए।

रुक्मरथ ने पूछा, "तुम्हारे पक्ष में कौन-कौन से शासक हैं?" पुजारी ने उत्तर दिया, "पांडवों के ससुराल वाले पंचाल और मत्स्य हैं। यादव हमारे साथ हैं। पाँचों केकेय, चित्रायुध, चेकी थाना, सत्यधृति, व्याग्रदत्त, चंद्रसेन, महान योद्धा काशी राजा, उनके मामा और उनके बच्चे, यानी तुम लोग... क्या तुम्हें और स्पष्टीकरण की आवश्यकता है? संपूर्ण आर्यावर्त और ब्रह्मवर्त पांडवों के पक्ष में हैं। केवल पांडवों के

पक्ष में ही नहीं, बल्कि धर्म के पक्ष में। राजसूय कर्मों से अर्जित पुण्य के पक्ष में। वैदिक ज्ञान में पारंगत और धर्म प्रेमी सभी पांडवों का समर्थन करते हैं। क्या मुझे यह बताने की आवश्यकता है कि कौन-कौन सूक्ष्मताओं और बारीकियों को समझने में सक्षम हैं, यहाँ तक कि हस्तिनावती, आचार्य द्रोण, आचार्य कृपा और स्वयं भीष्म भी पांडवों को सदा आशीर्वाद देते रहे हैं?"

शल्य इन शब्दों से प्रसन्न हो गया। होमदत्त ने उसके बोलने के अंदाज की प्रशंसा की। रुक्मरथ ने भी इसकी सराहना की। लेकिन कुछ क्षण बाद उसने पूछा, "तो क्या इसका यह अर्थ है कि आपके द्वारा अभी बताए गए लोगों को छोड़कर बाकी सभी धृतराष्ट्र का साथ देते हैं? उनके समर्थकों में वे पाँच त्रिगर्थ बंधुओं को भी शामिल किया जाएगा जो विराट नगर पर मवेशी लूटने के अभियान के दौरान दुर्योधन का साथ दे रहे थे, बृहदबल, कोशल का राजा, दुर्योधन का मामा शकुनि, गांधार क्षेत्र के सभी शासक, राजा पौरव, जलसंध, बाहलिका के शासक, अलंबुष, प्राग्ज्योतिषपुरा का भगदत्त, अचला, वृषक - केवल ये ही नहीं, बल्कि हस्तिनावती आचार्य द्रोण और कृपा भी, जो पांडवों से प्रेम करते होंगे, लेकिन युद्ध में दुर्योधन का साथ देंगे क्योंकि वे अपने स्वामी के विरुद्ध नहीं जा सकते। कर्ण एक महायोद्धा है। उसका पुत्र वृषसेन भी किसी से कम योद्धा नहीं है।"

इससे पांडवों का दूत निराश हो गया, उसका चेहरा उतर गया। लेकिन उसने तुरंत संभलकर कहा, "महाराज, यह सच है कि आपने जिन लोगों का अभी जिक्र किया है, वे अभी तक पांडवों से नहीं जुड़े हैं। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि वे स्पष्ट रूप से दुर्योधन की ओर झुके हुए हैं। दुर्योधन के दास कर्ण को छोड़कर, बाकी सभी पांडवों से जुड़ेंगे। क्या मछली पानी में कूदती है या रेत में? क्या आर्य धर्म का पालन करते हैं या अधर्म का? महाराज शल्य, यद्यपि मैं पेशे से ब्राह्मण हूँ, फिर भी आप ज्ञान में मुझसे श्रेष्ठ हैं। कृपया मुझे आर्यों के धर्म के बारे में ज्ञान दें।"

शल्य को खांसी आने लगी। रुक्मरथ कुछ कहने ही वाले थे कि रुक गए। शल्य ने कहा, "यदि दुर्योधन पांडवों को उनका राज्य वापस नहीं लौटाता, तो शल्य की भुजाएँ, गदाएँ, रथ, घुड़सवार सेना, हाथी-सैनिक और पैदल सेना, सब मिलकर दुर्योधन पर टूट पड़ेंगे! मुझे और कुछ नहीं कहना है।"

दूत ने उत्तर दिया, "आपके भतीजे सौभाग्यशाली और धन्य हैं। धर्म के पक्ष में युद्ध का रुख मोड़ने के लिए आपके आशीर्वाद के अलावा और कुछ भी आवश्यक नहीं है।"

रुक्मरथ ने जवाब में कुछ कहने की कोशिश की। राजा शल्य ने अपना दाहिना हाथ ऊपर उठाकर उन्हें रोक दिया और बात पक्की करते हुए कहा, "मैंने अपना वचन दे दिया है।" कुछ देर रुककर उन्होंने आगे कहा, "पुजारी, जाओ और मेरे भतीजों को बता दो। मैं और मेरे पुत्र, अपनी सेना के साथ, उनके बताए दिन और स्थान पर यहाँ से निकल पड़ेंगे।"

ब्राह्मण ने यहीं पर बातचीत समाप्त कर दी। उन्होंने पनेफवा के मामा के परिवार का हालचाल पूछा। उन्होंने कहा, "लगता है आप अपनी पोती का विवाह करने की योजना बना रहे हैं। पांडवों के पाँच वीर योद्धा पुत्र हैं। यदि आपकी पोती उनमें से सबसे बड़े पुत्र से विवाह करके उन्हें पुष्पमाला पहनाए, तो उन्हें स्वयं को बहुत भाग्यशाली समझना चाहिए। मैंने स्वयं उन्हें वेद और धनुर्विद्या सिखाई है। वैसे भी हम सब आपकी पोती के स्वयंवर में उपस्थित रहेंगे।" इन शब्दों से रुक्मरथ का हृदय भी कुछ हद तक प्रसन्न हुआ। चूंकि पुजारी को मद्रास के अन्य दरबारों में दूत के रूप में जाना था, इसलिए वे अगले ही दिन सुबह तड़के अपने दल के साथ रवाना हो गए।

—•⁕•—

अध्याय 4

पांचाल के पुजारी शल्य को पांडवों के साथ सेना में शामिल होने के लिए मनाने में सफल रहे, और युद्ध निश्चित प्रतीत होने लगा। हालांकि, इसके शुरू होने का सही समय अनिश्चित था। एक और बात स्पष्ट थी— यह एक भीषण युद्ध होने वाला था। दोनों पक्ष आर्यों के सभी शासकों को दूत भेजकर युद्ध में समर्थन जुटाने और विनती करने में व्यस्त थे। सेना, गोला-बारूद और अन्य संसाधन जुटाने थे, और वह भी बरसात के मौसम के शुरू होने से पहले। दो-तीन हफ्तों में बारिश शुरू होने

की उम्मीद थी। एक बार बारिश शुरू होते ही, नदियाँ और तालाब उफान पर आ जाते, पहाड़ों से निकलने वाली नदियाँ और मैदानों को चीरती हुई नदियाँ उफान पर आ जातीं। पानी अपनी सीमाएँ पार करते हुए गांवों और कस्बों की ओर बढ़ता और उन्हें द्वीप बना देता। आर्य लोग अधिकतर नदियों के किनारे बसे हुए थे, और इसका मतलब था कि बरसात के मौसम में आवागमन संभव नहीं था। ऐसी मिट्टी में, जिस पर पैदल चलना भी संभव नहीं था, रथों के पहिए ज़रूर फंस जाते। हाथी भी इस मिट्टी पर फिसल जाते। फिर सेनाओं के डेरा डालने के लिए सूखी ज़मीन और शिविरों में खाना पकाने के लिए सूखी लकड़ी कहाँ से मिलती? इसलिए, यह मानना तर्कसंगत था कि यदि युद्ध होना ही था, तो वह वर्षा ऋतु के बाद ही होना था। भाद्रपद और अश्वयुज के महीनों के बाद। तब तक तो केवल युद्ध की तैयारी ही हो सकती थी। वह भी एक जोखिम भरा कार्य था, क्योंकि संदेशवाहकों को घोड़ों पर सवार होकर जाना पड़ता था, कच्ची नावों में यात्रा करनी पड़ती थी, या तैरना पड़ता था, और यहाँ तक कि भंवरों में फंसने का भी खतरा रहता था।

शल्य ने अपनी सेना को हर परिस्थिति के लिए तैयार रहने का आदेश दिया। बढ़ई रथों के पहियों पर जोर से प्रहार करके उनकी मजबूती परखने लगे। उन्होंने रथों के कमजोर और टूटे-फूटे हिस्सों को हटाकर उनकी जगह नए हिस्से लगाए। उन्होंने नई रस्सियाँ बुनीं। लोहारों ने बाणों के लिए नए धातु के सिरे तैयार किए। मोचियों ने चमड़े के कमीज और ढालें तैयार कीं। हाथी-सेवकों ने अपने हाथियों को ढोल और शंख की आवाज़ों का आदी बनाना शुरू किया। मद्रा युद्ध कला में विशेष रूप से प्रसिद्ध नहीं था। हाल के वर्षों में उसे किसी गंभीर युद्ध का अनुभव नहीं था। इसलिए सेना को विशेष प्रशिक्षण देना आवश्यक था। अस्सी वर्ष से अधिक आयु के शल्य ने स्वयं सभी तैयारियों का जिम्मा उठाया। वे बार-बार अपने मन में कहते थे, "युद्ध के बिना क्षत्रिय योद्धा बिना काम के जंग लगे धातु के समान हैं।" वे दिन में दो बार स्वयं रथों की लगाम संभालते और उन्हें चलाते। उन्होंने अपने कौशल का अथक अभ्यास करके घुड़सवारी के रहस्यों के उस्ताद के रूप में अपनी पुरानी प्रतिष्ठा को फिर से चमकाना शुरू किया। युद्ध की आहट से सैनिक उसमें भाग लेने के लिए उत्साहित हो गए। ग्रीष्म ऋतु होने के कारण वे कृषि कार्यों से मुक्त थे। यहाँ तक कि पेशेवर कृषक वैश्य भी तीरंदाजी के प्रशिक्षण में तल्लीन हो गए।

पांचाल के पुजारी ने रुक्मरथ का भी दिल जीत लिया था। उन्होंने रुक्मरथ के मन में स्वयंवर का विचार प्रबल कर दिया और यह आश्वासन दिया कि पांचाल और

पांडव दोनों ही इसमें भाग लेंगे। उन्होंने रुक्मरथ से यह भी कहा कि पांडवों के सबसे बड़े पुत्र, जिन्हें उन्होंने स्वयं वेद और युद्ध कला सिखाई थी, यदि उनकी पुत्री स्वयंवर में उन्हें पुष्पमाला पहनाए तो वे सौभाग्यशाली होंगे। अब रुक्मरथ ने पांडवों को अपना पूरा समर्थन दे दिया था। आख़िरकार, पांडवों ने राजस्तल्य यज्ञ करके आर्यों की भूमि में विश्व प्रसिद्धि प्राप्त की थी। भला इससे अधिक सौभाग्यशाली कौन हो सकता है कि उनका सबसे बड़ा पुत्र उनकी पुत्री को अपनी रानी बनाए? उन्होंने यह सब अपनी पत्नी को बताया। वह सहमत हो गईं और इस संभावना से प्रसन्नता और गर्व से भर उठीं। उसने बेटी से कहा, "यह तुम्हारे दादा की बहन का पोता है। स्वयंवर में इसे माला पहनाओ। तब तुम्हें बाद में राजसूय और अश्वमेध जैसे महान अनुष्ठानों में भाग लेने और अपनी कलाई पर एक अनुष्ठानिक पट्टी पहनने का सौभाग्य प्राप्त होगा।"

बेटी ने पूछा, "क्या लड़का सुंदर और बलवान है? क्या आपने उसे देखा है, पिताजी?"

पिताजी, "क्या पांडवों की संतान सुंदर और बलवान के अलावा कुछ और हो सकती है?"

उसका चेहरा खिल उठा।

रुक्मरथ ने न केवल अपने छोटे भाइयों, वज्र और अजय, बल्कि अपने पुत्रों को भी कठोर युद्धकला का प्रशिक्षण दिया। जैसा अनुमान था, आकाश में काले बादल छा गए और शरीर से पसीना बहने लगा। यह पसीना दम घोंटने वाली गर्मी के कारण था। एक रात जब लोग गर्मी से बचने के लिए छतों, उद्यानों और खुले आंगनों में सोने के लिए भागे थे, तभी बूंदा-बांदी शुरू हो गई।

वे सभी उठ बैठे और मंत्रोच्चार करने लगे:

आप ही वह हैं जो हैं

आप ब्रह्मांड के देवता हैं।

वह अपनी इच्छा अनुसार रूप धारण करता है; एक बार वह दूध देने वाली गाय का रूप धारण करता है। और फिर एक ऐसी गाय का जो कभी बछड़ा नहीं देती।

कुछ ही देर में हल्की-हल्की बूँदें मूसलाधार बारिश में बदल गईं। सब लोग दौड़कर उस उद्यान में पहुँचे जहाँ बूढ़ा राजा सो रहा था। कुलपुजारी होमादत्त भी अपनी पत्नी के साथ वहाँ आ गया। रुक्मरथ, वज्र और अजय भी अपने-अपने परिवारों के साथ आए। होमादत्त की ऊँची आवाज़ में गाते हुए सबने वर्षा के देवता इंद्र की स्तुति की। उनकी स्तुति बारिश की गूँज को चीरते हुए बादलों तक पहुँच गई।

अपनी स्तुति और प्रार्थना समाप्त करने के बाद, वे सभी - बूढ़े, जवान, पुरुष और स्त्री - ने अपने बाहरी वस्त्र उतार दिए और पहली बारिश की ठंडक में अपने कंधे, पीठ और छाती को खुला छोड़ दिया, जिन पर गर्मी से घाव हो गए थे। फिर वे बारिश में नाचते हुए, अलग-अलग लय में वर्षा देवता के पवित्र मंत्र का जाप करने लगे।

Idam vacah Parjanyaya svaraje

Hrdo astvantaram tajja jo sat

मयो भुवः वृस्तयः सु त्वस्मे

supippala o sadhirdeva gopah

> **पर्जन्य की स्तुति हो, जो स्वयं प्रकाशमान हैं। यह स्तुति उनके हृदय तक पहुंचे; वे इसे अपने भीतर गहराई से ग्रहण करें; उनकी कृपा से आनंदमय वर्षा हो और उनकी देखभाल से उत्पन्न जड़ी-बूटियां भरपूर फल दें।**

न तो बारिश रुकी और न ही वे घर के अंदर गए। स्वयं बूढ़े राजा साल्या, जिनके सिर से पैर तक बारिश का पानी टपक रहा था, जोर-जोर से गा रहे थे और जोश से नाच रहे थे।

पहली बारिश के बाद, सभी वैश्य अपने कृषि कार्यों में लौट आए। लेकिन राजपरिवार के सदस्यों ने युद्ध कला का प्रशिक्षण जारी रखा। एक सप्ताह से अधिक समय तक, दिन में तीन या चार बार बारिश हुई। जैसे-जैसे गर्म धरती पानी सोखती गई, ऊष्मा उत्सर्जित करती गई, और अगली बारिश उसे ठंडा करती गई, और धरती बार-बार अपनी प्यास बुझाती रही, मिट्टी बुवाई के लिए तैयार हो गई।

वैश्यों में अपार खुशी थी, लेकिन इसका परिणाम यह हुआ कि लोगों का युद्ध के प्रति उत्साह कम हो गया।

जब बारिश रुकी और गर्मी का पसीना और उमस शुरू हुई, तो त्रिगर्त के पाँच शासकों में से एक, सुशर्मा, सकल नगर में आए। राजा शल्य को आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए उन्होंने शहद और अन्य आतिथ्य सत्कार की वस्तुएँ ग्रहण कीं। वे उनके पुत्र रुक्मरथ के मित्र थे और उनकी आयु भी उन्हीं के समान थी। उन्होंने सेवकों को घोड़ों और अपने दल के भोजन की व्यवस्था करने का आदेश दिया और अपने पुत्र के मित्र से कहा, "रुक्मरथ अभी प्रशिक्षण शिविर में हैं। मैं उन्हें बुलवाता हूँ। उनके आने तक आप विश्राम करें।"

रुक्मरथ के निवास से सटे अतिथिगृह में सुशर्मा ने स्नान किया। जब वह आराम कर रहे थे, तभी रुक्मरथ उनसे मिलने आए। दोनों मित्रों ने एक-दूसरे को गले लगाया। उन्होंने वहीं भोजन किया और साथ में खाया। रुक्मरथ ने क्षमा मांगते हुए कहा, "आपके आने तक भोजन पक चुका था। लेकिन वे आपके सम्मान में एक बैल की बलि दे रहे हैं। कृपया यह न सोचें कि हम आपको आपके पद के अनुरूप सम्मान नहीं देना चाहते थे।" जब सुशर्मा मटन का टुकड़ा चबा रहे थे, तभी रुक्मरथ ने पूछा, "आप यहाँ कहाँ से आए हैं?"

सुशर्मा ने कहा, "मेरे अपने शहर से।"

रुक्मरथ ने कहा, "नहीं। यह सच नहीं है। यदि आप अपने नगर से आ रहे होते, तो आपको चंद्रभागा नदी की दिशा से यहाँ पहुँचना चाहिए था। लेकिन आप शतद्रु की दिशा से आए हैं।"

सुशर्मा ने कहा, "ओह, मैं समझ गया। मुझे आपकी जासूसी प्रणाली की दक्षता की प्रशंसा करनी चाहिए।"

रुक्मरथा, "अच्छा, क्या तुम हस्तिनावती गए थे?"

सुशर्मा ने कहा, "आपसे कुछ भी छिपाना नामुमकिन है। दोस्तों से कुछ भी छिपाया नहीं जा सकता। चलिए पहले खाना खत्म कर लेते हैं।"

यह समझते हुए कि यह विषय उनकी सेवा कर रही सुंदर युवा सेविकाओं के लिए उपयुक्त नहीं था, उन्होंने विषय बदलकर त्रिगार्ता में हो रही बारिश के बारे में पूछा। उन्होंने अपने मित्र से वहाँ की बारिश के बारे में जानकारी ली। भोजन के बाद, उन्होंने अपने मित्र को शाम के मनोरंजन के लिए उनकी सेवा कर रही सुंदर युवा सेविकाओं में से किसी एक को पेश किया।

सुशर्मा ने कहा, "खैर, इसे रात तक टाल सकते हैं। चलिए अब कुछ गंभीर मुद्दों पर बात करते हैं।"

सभी नौकरानियों को विदा करने के बाद, रुकमारथा अपने मित्र को लकड़ी के चबूतरे पर बिछे मुलायम और चौड़े पलंग पर ले गया। वहाँ आरामदायक तकिए और जुआ खेलने के लिए पासे रखे थे।

सुशर्मा ने कहा, "अगर हम खेल शुरू कर दें, तो मैं वह बात भूल जाऊँगा जिसके लिए मैं असल में आया हूँ, खासकर तुम्हारे साथ खेलते हुए!" फिर वह पलंग पर बैठ गया और अपना दाहिना हाथ तकिये पर फैला लिया। आराम से बैठकर उसने बात शुरू की, "देखो, हम अच्छे दोस्त हैं। अब तक हमारे बीच कोई गंभीर मतभेद या झगड़ा नहीं हुआ है। हम कभी ऐसी बातें सोच भी नहीं सकते थे। खेल, शिकार, जुआ और औरतें, कुछ भी हमारी दोस्ती में दरार नहीं ला सका। लेकिन अब लगता है किस्मत ने ही तय कर रखा है कि हम एक-दूसरे के खिलाफ खड़े हो जाएँ! हालांकि, मुझे यकीन है कि तुम मानोगे कि इंसान को किस्मत के आगे झुकने से पहले अपनी पूरी कोशिश करनी चाहिए। या नहीं?"

रुक्मरथ कुछ देर चुप रहे। धीरे-धीरे उन्हें अपने मित्र के शब्दों का पूरा अर्थ समझ में आया। फिर आठ-दस बार गहरी साँस लेते हुए उन्होंने बताया, "पांडवों की ओर से एक पंचाल पुरोहित हमारे पास आए थे।"

सुशर्मा ने कहा, "जी हां, मुझे पता है। दुर्योधन को पांडवों की गतिविधियों की पूरी जानकारी है। वह इस बात पर नजर रखता है कि वे किसे और कहां दूत बनाकर भेजते हैं।"

रुक्मरथ ने कहा, "मेरे पिता उनसे विशेष रूप से आकर्षित हैं क्योंकि वे उनकी बहन के बच्चे हैं। पुजारी ने पिता से अपनी पोती के स्वयंवर का आयोजन करने का अनुरोध किया और पांडवों की भागीदारी का वादा किया। उन्होंने सुझाव दिया कि मेरी बेटी को पांडवों में से सबसे बड़े पुत्र को अपना पति चुनना चाहिए, यहाँ तक कि चापलूसी करते हुए यह भी कहा कि दूल्हा ऐसी दुल्हन पाकर भाग्यशाली होगा! तुरंत ही पिता ने उन्हें अपना पूरा समर्थन देने का वादा किया - अपने पुत्रों और अपनी सेनाओं के साथ। उन्होंने मुझे इस मामले में कुछ भी कहने का मौका नहीं दिया। आप तो जानते ही हैं कि वे कैसे हैं।"

कुछ देर तक दोनों के बीच सन्नाटा छाया रहा। फिर सुशर्मा ने चुप्पी तोड़ी और कहा, "तो क्या आप यह सुझाव दे रहे हैं कि हमें आपस में लड़ना चाहिए? क्या यह सही होगा?"

रुकमरथा, "नहीं, नहीं। बिलकुल नहीं। इसे हर कीमत पर टाला जाना चाहिए। मेरे पास एक उपाय है। पिताजी अड़े हुए हैं और वे अपने रुख से कभी पीछे नहीं हटेंगे। ठीक है, मैं उनकी इस ज़िद को मान लेता हूँ, लगभग नब्बे साल के बूढ़े आदमी की। उन्हें एक छोटी सी सेना के साथ जाने दो। मैं सैन्य हस्तक्षेप से बचने के लिए कोई बहाना बना लूँगा। मैं अपने छोटे भाइयों की भी यही मदद करूँगा। तुम भी अपने वादे से बच निकलो। हम किसी और के झगड़े के लिए अपनी जान क्यों जोखिम में डालें?"

सुशर्मा ने कहा, "परन्तु यदि मैं पांडवों के विरुद्ध युद्ध में भाग न लूँ, तो मैं अपने क्षत्रिय सिद्धांतों का उल्लंघन करूँगा। तुम जानते हो। मैं ही विराट नगर के उत्तर में विराट के मवेशी चुराने गया था। परन्तु वहाँ दुष्ट पांडव उपस्थित थे। यदि वे वहाँ न होते, तो मैं सारे मवेशी ले जा सकता था। मुझे मवेशियों के नुकसान का कोई दुःख नहीं है। परन्तु उन्होंने मुझे अपमानित किया, मुझे पराजित किया। यदि मुझे उनकी उपस्थिति की पूर्व सूचना होती, तो मैं और बड़ी सेना लेकर जाता और उनका मुकाबला करता। जो अपने अपमान का बदला नहीं ले सकता, वह अपने आप को सच्चा क्षत्रिय कैसे मान सकता है?"

फिर कुछ देर के लिए सन्नाटा छा गया। तब रुक्मरथ ने पूछा, "बेशक, पांडवों से घृणा करने का आपके पास स्पष्ट कारण है। मुझे उनसे घृणा करने का क्या अधिकार है? ध्यान रहे, वह भी तब जब मेरे पिता उन्हें अपनी बहन के बच्चों के रूप में इतना करीबी रिश्तेदार बताते हैं?"

सुशर्मा, "अच्छा, इससे बेहतर कारण और क्या हो सकता है कि तुम्हारा करीबी दोस्त उनसे नफरत करता है?"

इससे रुक्मरथ दुविधा में पड़ गया। खुलेआम असहमति व्यक्त करना तो दूर, वह मन ही मन उसे व्यक्त भी नहीं कर पा रहा था। वे दोनों एक ही उम्र के थे, बराबरी के थे। इसके अलावा, उसका मित्र आर्य जगत में सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक रीति-रिवाजों के अनुसार अपनी प्रतिष्ठा और रुतबा बढ़ाने की महत्वाकांक्षा से प्रेरित था। साथ ही, उसने अपनी पुत्री के स्वयंवर में समर्थन का आश्वासन भी दिया था। भला ऐसे मित्र का शत्रु उसका शत्रु क्यों न हो? अचानक उसके मन में अपने पिता के प्रति तीव्र क्रोध उमड़ पड़ा। राजा के रूप में शासन का दायित्व सौंपने के बाद इतने गंभीर मामले में हस्तक्षेप करने पर वह अपने पिता से बहुत आहत था। लेकिन उसमें अपने पिता के विरुद्ध खड़े होने का साहस नहीं

था। इन विचारों में खोए हुए सुशर्मा बोले, “तुम्हें आश्चर्य हो सकता है कि हम, मद्रा और त्रिगर्त, दूसरों के मामलों में क्यों उलझें और उनसे अलग क्यों रहें। लेकिन अफवाहें हैं कि केकय पांडवों से मिल रहे हैं। गांधार दुर्योधन के साथ मजबूती से खड़े हैं। ऐसा लगता है कि यह एक ऐसा संघर्ष है जिसमें पूरा आर्य भूभाग समा जाएगा, और सभी को किसी न किसी पक्ष का साथ देना पड़ेगा। ऐसे युद्ध में, अगर हम किसी का पक्ष लेने से इनकार कर दें, तो क्या दूसरे हमें कायर नहीं कहेंगे? जब वहाँ भयंकर युद्ध चल रहा हो, तो क्षत्रिय रक्त वाला कोई व्यक्ति कैसे स्त्रियों, सोम के पान और जुए में लिप्त होकर दूर रह सकता है...?”

रुक्मरथ ने बीच में ही टोकते हुए कहा, "आपके अनुसार इस युद्ध में कौन विजयी होने की प्रबल संभावना रखता है?"

सुशर्मा ने कहा, "निस्संदेह, दुर्योधन ही जीतेगा।" फिर उन्होंने कुछ देर रुककर, ताकि बात समझ में आ जाए, धीरे-धीरे कहा, "आप जानना चाहते हैं कि क्यों और कैसे? पहला कारण - पांडव तेरह वर्षों के लंबे वनवास और परदेसियों में रहने के बाद बुरी तरह थक चुके हैं, पूरी तरह से कमजोर हो चुके हैं। दूसरा, दुर्योधन सत्ता में होने और राजकोष पर अपना अधिकार होने के कारण बड़ी संख्या में शासकों को अपनी ओर आकर्षित करेगा। वह सेना पर जितना चाहे उतना पैसा खर्च कर सकता है। हो सकता है लोग पांडवों को वर्षों तक वनवास में सौहार्दपूर्ण संबंध रखने, पवित्र स्थानों की यात्रा करने और असमान दाढ़ी बढ़ाने के लिए प्रतीकात्मक रूप से प्रणाम करें। लेकिन उन्हें भौतिक संसाधनों से कौन सहायता देगा? मुझे यकीन है, कोई नहीं।"

रुक्मरथ ने जोर देते हुए कहा, "लेकिन क्या पांडव ही वे शक्तिशाली शासक नहीं थे जिन्होंने महान राजसूय अनुष्ठान को सफलतापूर्वक संपन्न किया था?"

सुशर्मा कहते हैं, "परन्तु राजनीतिक शक्ति बीते गौरव की यादों पर टिकी नहीं होती। मायने रखता है संसाधनों पर वर्तमान नियंत्रण, वर्तमान सत्ता। पिछले तेरह वर्षों में दुर्योधन ने व्यवस्थित रूप से अपनी सत्ता इतनी सुदृढ़ कर ली है कि राजनीतिक दृष्टि से पांडवों का नाम लगभग मिटा ही दिया है। यहाँ तक कि इंद्रप्रस्थ क्षेत्र में भी, जिसे उन्होंने स्वयं बनाया था, उन्हें भुला दिया गया है! पंचाल के प्रति दिखावटी कर्तव्यवश, कुछ लोग इधर-उधर उनका साथ दे सकते हैं। इससे अधिक कुछ नहीं। हारने वाले बैल की पूंछ क्यों पकड़नी चाहिए? यदि तुम इतनी मूर्खता

करोगे, तो विजयी, शक्ति से परिपूर्ण बैल तुम पर झपटेगा और तुम्हें मार डालेगा। क्या तुम नहीं समझते? तुम्हारा पिता मूर्ख है, और वह बुढ़ापे से ग्रसित है।"

वे शाम तक बातें करते रहे। फिर ज़ोरदार बारिश होने लगी। वे घर के अंदर ही रहे। तब रुक्मरथ ने अपने भाइयों को बैठक के लिए बुलाया। सुशर्मा ने उन्हें कौरवों का समर्थन करने के लिए मनाने की कोशिश की। रात के खाने के लिए गोमांस की दावत तैयार हो रही थी। दावत के बाद, विशेष रूप से बनाए गए पलंग पर बैठे हुए, सुशर्मा ने रुक्मरथ से कहा, "तुमने कहा था कि पांचाल के उस चतुर पुजारी ने तुम्हें अपनी बेटी का विवाह पांडवों के सबसे बड़े पुत्र से करने की सलाह दी थी। तुम जानते हो कि तुम्हारी बेटी के पाँच पति होंगे! यह क्या है, सभ्य आर्यों का नियम या बर्बर पहाड़ी जनजातियों का नियम? तुम आर्य समाज से बहिष्कृत हो जाओगे।"

रुकमारथा, "तुम्हारा क्या मतलब है?"

सुशर्मा ने कहा, "क्या पांचों पांडवों ने द्रौपदी से विवाह नहीं किया था? उन्हें यह नहीं पता होगा कि किस बच्चे का पिता कौन है। यहां तक कि द्रौपदी को भी नहीं पता होगा। उन्हें बस इतना पता है कि सबसे बड़े बेटे का नाम क्या है। मान लीजिए कि वे कहें कि हमारी प्रथा है कि हम एक ही पत्नी साझा करते हैं, और आपकी बेटी से यही मांगें। तब आपकी बेटी क्या कर सकती है? और आप भी इसके बारे में क्या कर सकते हैं?"

रुक्मरथ को इस स्थिति का यह पहलू समझ में नहीं आया था। अब जब उसे इस वास्तविकता का सामना करना पड़ा, तो वह पूरी तरह से भ्रमित हो गया। अब उसे यकीन हो गया था कि उसके पिता बुढ़ापे की कमजोरी के कारण ऐसा कर रहे हैं। मित्र को जवाब देने में असमर्थ, वह चुप हो गया। अपनी तीसरी जम्हाई के अंत में, सुशर्मा ने स्वयं चुप्पी तोड़ी, "बेशक, मैं भी तुम्हारी तरह ही चिंतित हूँ कि तुम्हारी बेटी एक विशाल राज्य की रानी बने। मैं दुर्योधन के सबसे बड़े बेटे को स्वयंवर में जाने के लिए मना लूँगा। पहले युद्ध समाप्त हो जाए।"

रुक्मरथा उठ खड़ा हुआ। अपने मित्र को सोने का सुझाव देकर वह कमरे से बाहर आया। सबसे पहले उसने दस दासियों का एक समूह देखा, जिनके शरीर चंदन से लिपटे हुए थे और बालों में रंग-बिरंगे फूल लगे हुए थे। वे सभी बहुत युवा थीं। समूह के बीच में खड़ी दासी चावल से बनी शराब से भरा एक पात्र लिए हुए थी। वह आतिथ्य सत्कार की इस प्रथा को भूल गया था। वह अपने मित्र के पास वापस गया और बोला, "उठो और देखो। दस लड़कियाँ तुम्हारा मनोरंजन करने के

लिए हैं। तुम जितनी चाहो उतनी या जिसे चाहो उसे चुन सकते हो। लेकिन सावधान रहना। हमारी मद्रास की लड़कियाँ बहुत कठोर होती हैं और किसी भी पुरुष की शक्ति छीन सकती हैं! आख़िरकार, अब तुम पचास साल के हो गए हो, है ना?"

सहेलियाँ साथ बैठकर लड़कियों द्वारा लाए गए पेय पी रही थीं। थोड़ी देर बाद रुकमरथ अपने निवास के लिए रवाना हो गए। एक सुंदर लड़की ने उनका हाथ थाम लिया और उन्हें सहारा देते हुए रानी के पलंग तक ले गई। फिर वह अपने स्थान पर लौट गई।

बाहर मूसलाधार बारिश हो रही थी। रानी, जो अब नशे में चूर थी, नींद से बेहाल थी। उसे इस बात का भी एहसास नहीं था कि उसका पति उसके बगल में सो रहा है। रुक्मरथ को शराब के नशे में नींद नहीं आ रही थी। उसका मन अभी भी सुशर्मा से हुई बातचीत में उलझा हुआ था। वह मन ही मन सोच रहा था, "द्रौपदी की भी यही हालत थी। बेशक अर्जुन ने स्वयंवर में उसे जीत लिया था। बाद में बड़े भाई धर्मराज ने द्रौपदी के पिता द्रुपद को फटकार लगाते हुए कहा, 'लड़की को जीतने के बाद, हमें उसे अपनी मर्जी से बांटने का पूरा अधिकार है। अब हमारे निजी मामले में दखल देने का आपको क्या हक है?' क्या हमारी हिरण्यवती का भी यही हाल होगा?" वह डर से कांप उठा। उसे लगा कि आर्यों के नैतिक नियमों का उल्लंघन करने वाले पांडवों को अब कोई सहारा या मदद नहीं मिलेगी। उसने पांडवों का साथ देने के अपने पिता से किए वादे से मुकरने का फैसला कर लिया। वह अपने मित्र सुशर्मा का आभारी था। वह बिस्तर पर बेचैनी से करवटें बदल रहा था, लेकिन नींद उसका साथ नहीं दे रही थी। पिताजी मूर्ख थे। उन्हें अक्ल सिखानी ही पड़ेगी। तभी उन्हें अचानक किसी से बात करने की तीव्र इच्छा हुई। उन्होंने गहरी साँसें ले रही अपनी पत्नी के कंधे हिलाए। वह बस हल्की सी आवाज़ निकालकर फिर गहरी साँसें लेने लगीं। चार-पाँच बार करवट बदलने के बाद वह उठीं। फिर उन्होंने उन्हें अपनी नई सोच समझाई और अंत में कहा, "देखो, हमने इस मामले पर ठीक से विचार नहीं किया था। अगर हमने हिरण्यवती का विवाह किसी पांडव से कर दिया होता, तो यही होता। कितनी बड़ी विपत्ति!"

वह फिर से ऊंघने लगी। उसने कहा, "देखो, मैं बहुत गंभीर विषयों पर बात कर रहा था और तुम सो रही हो। बोलो।" वह चुप रही। उसने उसके कंधे हिलाकर उसे जगाया, वही बात दोहराई और उसे बोलने पर मजबूर कर दिया।

उसने बुदबुदाते हुए कहा, "अगर उसमें पाँच पुरुषों का सामना करने की शक्ति है, तो उसे पांडव से शादी करने दो।" उसने पूछा, "क्या कहा?" तब तक वह सो चुकी थी।

—•✳•—

अध्याय 5

अगले ही दिन सुशर्मा मद्रा की राजधानी से रवाना हो गए। रुक्मरथ अपने दल के साथ अपने मित्र को विदाई देने के लिए नदी तक गए। तुरंत बाद वे अपने पिता के महल की ओर चल पड़े। शल्य उद्यान में थे, ढलती शाम की रोशनी में उनके चांदी जैसे सफेद बाल चमक रहे थे, और वे संपिगे फूल की नई खिलती कली को देख रहे थे। उन्होंने अपने पुत्र से पूछा, "क्या तुमने विदाई की व्यवस्था कर दी है?" जाने से पहले सुशर्मा ने आदरपूर्वक वृद्ध से विदा ली थी। रुक्मरथ सीधे मुद्दे पर आए। उन्होंने वृद्ध से पूछा कि क्या उनकी हिरण्यवती का भाग्य द्रौपदी जैसा ही नहीं होगा, यानी पांच पतियों का बोझ उठाना? उन्होंने पिता से पूछा कि क्या यह आर्यों के धर्म का उल्लंघन नहीं है?

वृद्ध राजा को भी यह अनुचित लगा। वे यह भी जानते थे कि यह नया विचार उनके पुत्र के मन में त्रिगर्त के उस राजकुमार ने डाला था। वे जानते थे कि दोनों युवा मित्र अतीत की हर बात को गलत ठहराकर नई प्रथाएँ स्थापित करने का प्रयास कर रहे थे। उन्होंने पुत्र से वही कहा जो उनके मन में उस क्षण आया, "यदि यह आर्य संहिता का उल्लंघन होता, तो क्या भीष्म इसे स्वीकार करते? आर्यों के नैतिक और धार्मिक नियमों को भीष्म से बेहतर कौन जानता है?"

फिलहाल, इससे पुत्र चुप हो गया। उसके मन में कुछ विचार आए और उसने सोचा, "हाँ, भीष्म और द्रोण ने इसे स्वीकार कर लिया है। इतना ही नहीं, सभी आर्य

शासक, राजकुमार और पुरोहित भी पांडवों द्वारा आयोजित राजसूय विवाह में उपस्थित थे। नहीं, अगर उन्हें यह पसंद नहीं है, तो उन्हें अपनी पुत्री पांडवों को अर्पित करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन वे यह कैसे कह सकते हैं कि वे गलत थे?" पिता ने उससे पूछा, "क्या तुम्हारे अच्छे मित्र ने तुम्हें ये व्यर्थ की बातें सिखाई हैं?" रुक्मरथ अपने मित्र पर लगाए गए आरोप से क्रोधित तो था, लेकिन सवाल यह था कि सही क्या था? जब सभी कुरुपंचलों ने सर्वसम्मति से इस स्थिति को स्वीकार कर लिया था, तो केवल उसके मित्र ने ही अपनी कुतर्कता से संदेह और आपत्ति उठाई थी। वह एक और प्रश्न से भी परेशान था, "क्या आर्यों में इस प्रकार के विवाह का कोई और उदाहरण है?" जब उसने यह प्रश्न अपने पिता से पूछा, तो उनके पास कोई तैयार उत्तर नहीं था। चूंकि वे आगे बात करने के इच्छुक नहीं थे, इसलिए रुक्मरथ अपने निवास स्थान के लिए रवाना हो गए। नींद में डूबी उसकी पत्नी ने कुछ अस्पष्ट बातें बुदबुदाई थीं। अब वह इस मामले पर उससे विस्तार से चर्चा करना चाहता था।

शल्य आर्य रीति-रिवाजों और नियमों से भलीभांति परिचित थे। उन्हें भी पांडवों के विवाह के अलावा किसी अन्य उदाहरण की जानकारी नहीं थी, जिसमें दो भाइयों का विवाह एक ही पत्नी से हुआ हो। लेकिन यदि यह अनैतिक या अधार्मिक होता, तो भीष्म और अन्य लोग इसे कैसे स्वीकार करते? आर्यों की भूमि के सभी हिस्सों से राजकुमार, राजा, विद्वान और पुरोहित पांडवों के राजसूय विवाह में कैसे शामिल हो सकते थे? इसलिए, वे पांडवों के विवाह की धार्मिक और नैतिक उपयुक्तता के बारे में अनिश्चित थे। उन्होंने स्वयं को यह कहकर सांत्वना दी, "तो क्या हुआ?" फिर, अपने अंगरक्षकों के साथ, वे उस प्रांगण में गए जहाँ शस्त्रों का अभ्यास चल रहा था। वर्षा ऋतु के प्रारंभ होने से युद्ध प्रशिक्षण का उत्साह कम हो गया था। शल्य स्वयं काफी समय से प्रशिक्षण शिविर में नहीं गए थे। उन्होंने देखा कि रथ के पहिए कीचड़ में फंस गए थे। घोड़े सामान्य गति से नहीं दौड़ रहे थे। कुल मिलाकर, लगभग पचास क्षत्रिय युवक वहाँ धनुर्विद्या का अभ्यास कर रहे थे। उनमें से लगभग बीस भाला-निहार का अभ्यास कर रहे थे। जैसे ही उन्होंने बूढ़े राजा को देखा, वे आपस में बातचीत करना बंद करके अभ्यास में और भी अधिक एकाग्रता दिखाने लगे। उनके पसीने से तर शरीर ऐसे चमक रहे थे मानो उन पर तेल लगाया गया हो। यह प्रशिक्षण सलका की देखरेख में चल रहा था, जो साल्या की एक दासी से उत्पन्न संतान थी।

वह साल्या के पास गया और पूछा, "पिताजी, हम वास्तव में युद्ध में कब जा रहे हैं?"

साल्या ने कहा, "मुझे अभी पता नहीं है, बच्ची। वे हमें सही समय पर जानकारी भेज देंगे। मुझे पूरा विश्वास है।"

सलाका ने कहा, "मैंने यह सवाल इसलिए पूछा क्योंकि इन युवाओं में भ्रम की स्थिति है। वे पूछ रहे हैं कि युद्ध होगा भी या नहीं, या फिर कब होगा। वे शिकायत करते हैं कि बार-बार निरर्थक युद्धाभ्यास करते-करते वे बेहद ऊब गए हैं।"

साल्या, "क्या तुम नहीं जानते कि युद्ध हो या न हो, यह प्रथा जारी रहनी चाहिए?"

सलाका ने कहा, "लेकिन उनका सवाल यह है कि इतनी ज्यादा प्रैक्टिस क्यों होनी चाहिए।"

राजा ने कोई उत्तर नहीं दिया। वैसे भी, बरसात का मौसम समाप्त होने तक युद्ध संभव नहीं था। वे यह बात भली-भांति जानते थे। चुपचाप वह स्वयं अपने रथ पर सवार होकर मैदान में तेज़ी से आगे बढ़ा। फिर अचानक रुककर पीछे मुड़ा। घोड़े नए थे और ज़मीन कीचड़ से भरी थी। फिर भी वह जानवरों को संभाल सकता था। उसने स्पष्ट गर्व के साथ मन ही मन कहा, "आखिरकार, मैं शल्य हूँ।" उसने रथ को एक तरफ झुका दिया। ऐसा करते हुए उन्होंने मन ही मन कहा, "बहनें एक ही पति से शादी करती हैं, यह तो हम जानते हैं, लेकिन भाइयों के एक ही पत्नी से शादी करने के बारे में हमने कभी नहीं सुना।" कुछ देर तक वे रथ में चुपचाप बैठे रहे। शाम हो चुकी थी और बारिश के संकेत दिखाई दे रहे थे। वे महल की ओर वापस चल दिए। यज्ञ की अग्नि में घी डाले जाने की गंध से उनकी नाक भर आई। उन्होंने स्नान किया और फिर अनुष्ठान में शामिल हो गए। अनुष्ठान के बाद उन्होंने पुजारी से अपनी समस्या बताई, "क्या कोई प्रथा धार्मिक और नैतिक रूप से वैध हो जाएगी यदि पांचाल और हस्तिनावती के सभी वैदिक विद्वान उसे स्वीकार कर लें?"

उत्तर मिलने के बाद राजा को आगे पूछताछ करने की कोई आवश्यकता नहीं लगी।

—•⁕•—

अध्याय 6

पिता और पुत्र के बीच तीखी बहस हुई। पिता का मुख्य तर्क यह था कि भीष्म और अन्य लोगों ने इस प्रथा को स्वीकार किया था। लेकिन पुत्र ने यह कहकर खंडन किया कि दुर्योधन और हस्तिनावती के अन्य लोग, त्रिगर्त और दुर्योधन का समर्थन करने वाले सभी राजा इस विवाह के कारण पांडवों का उपहास कर रहे थे। उसने कहा कि वनों में रहने वाली कुछ आदिम जनजातियों में ही भाई-भाई विवाह करते हैं। उसने दावा किया कि पांडवों ने अपने प्रारंभिक वर्ष वन में और आदिवासियों के साथ बिताए थे, जिससे आर्यों के नैतिक मूल्यों का उल्लंघन हुआ था। उसने स्पष्ट रूप से कहा कि पांडवों को अपनी पुत्री देने का तो प्रश्न ही नहीं उठता, और इसलिए दुर्योधन जैसे धनी और शक्तिशाली शासक की शत्रुता मोल लेने की कीमत पर युद्ध में उनका समर्थन करने का प्रश्न ही नहीं उठता। वर्षा ऋतु समाप्त होने के बाद, जब संचार संभव हुआ, तो रुक्मराथ के जासूसों ने खबर दी कि युद्ध होना निश्चित है। ऐसी खबरें थीं कि भीष्म और द्रोण दुर्योधन का साथ देंगे, और आर्यों के अधिकांश शासक भी यही कर रहे थे। इसका एक उल्लेखनीय अपवाद यादव वंश के कृष्ण थे। लेकिन कृष्ण के बड़े भाई बलराम भी द्वारका से दुर्योधन का समर्थन करने के लिए जा रहे थे। पुत्र ने शल्य से पूछा, "पिताजी, आप दिन में दस बार दोहराते हैं कि भीष्म से बढ़कर धर्म का ज्ञान किसी को नहीं है। यदि वे दुर्योधन का साथ देते हैं, तो स्पष्ट है कि धर्म किसके पक्ष में है। क्या आपको समझ नहीं आ रहा?"

पिताजी ने कहा, "लेकिन हमने पांडवों को पहले ही वचन दे दिया है।"

पुत्र समझ गया कि उसके पिता वास्तव में दुविधा में हैं। वज्र और अजय ने एक समझौता किया। उन्होंने कहा, "पांडवों ने जुआ खेलते समय हमसे सलाह नहीं ली। अब वे हमसे सलाह लिए बिना ही युद्ध की घोषणा कर रहे हैं। हमें किसी भी पक्ष का समर्थन नहीं करना चाहिए। हमें तटस्थ रहना चाहिए।" उस समय रुक्मरथ को यही सबसे समझदारी भरा निर्णय लगा। शल्य भी सहमत हो गए और सभी संबंधित पक्षों के मन से एक बड़ा बोझ उतर गया।

रुक्मरथ ने हर गाँव को संदेश भेजा कि पुरुषों को तीरंदाजी के प्रशिक्षण और अभ्यास के लिए इकट्ठा होने की आवश्यकता नहीं है। इससे लोग राहत और प्रसन्नता से भर गए। उस मौसम में उन्हें अच्छी फसल की उम्मीद थी। वे खरपतवार हटाने, बाड़ लगाने और पशुओं की देखभाल जैसे कृषि कार्यों में तल्लीन हो गए। रुक्मरथ ने स्वयं अपना काफी समय प्रशासनिक कार्यों में लगाया। वज्र और अजय, जिन्हें पहले सेना को प्रशिक्षित करने का कार्य सौंपा गया था, अब राहत महसूस कर रहे थे। वे अब चावल से बनी शराब का आनंद ले सकते थे। उनके पास सुंदर दासियाँ थीं, जो उन्हें खुश करने में माहिर थीं। लेकिन कुछ ही दिनों में उनका आनंद फीका पड़ गया। शयनकक्ष के सुखों की तुलना में, उन्हें धनुष की डोरी की कंपन सुनना, रथ से तीर चलाना और हाथियों पर सवार होकर जंगलों में जंगली जानवरों का शिकार करना कहीं अधिक आनंददायक लगा। एक दिन दोनों भाइयों ने सैन्य प्रशिक्षण पर लौटने का फैसला किया और अपने रथ निकाल लिए। लेकिन जब वे प्रशिक्षण शिविर पहुँचे, तो उन्होंने उसे पूरी तरह से वीरान पाया। क्षत्रिय भी नहीं मिले। क्रोधित होकर उन्होंने सैनिकों को बुलाया। सैनिकों ने हाथ जोड़कर विनम्रतापूर्वक विनती की, "यदि युद्ध नहीं होने वाला है, तो चाहे कितना भी लंबा प्रशिक्षण और अभ्यास क्यों न हो, व्यर्थ होगा। हम शिकार या अन्य गतिविधियों में अपना समय बेहतर ढंग से व्यतीत कर सकते हैं।"

भाइयों को यह स्थिति तर्कसंगत लगी। हाथियों को इकट्ठा करके और धनुष, बाण, भाले, तलवारें और जाल लेकर वे जंगलों में घुस गए। वर्षा ऋणी जंगलों में हरी-भरी वनस्पति उग आई थी। उन्हें हिरण, खरगोश और अन्य मांस देने वाले जानवर भी दिखाई दिए। उन्होंने दो चीते और एक बाघ का भी शिकार किया। सभी को रोमांच का अनुभव हुआ। अगले दिन वे दूसरे जंगल में गए, और इसी तरह अगले दिन भी, जब तक कि उन्होंने मद्रा के सभी जंगलों को खंगाल नहीं लिया। अब कम से कम एक महीने तक शिकार करने के लिए कुछ नहीं था। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें। सैनिक ताड़ी पीने और स्त्रियों के पास लौट गए। वज्र और अजय भी। एक बार फिर वे संतुष्टि और ऊब की अवस्था में पहुँच गए। जल्द ही उन्हें एहसास हुआ कि गंभीर काम से राहत के लिए स्त्रियाँ ठीक हैं, लेकिन अगर स्त्रियाँ ही मुख्य विषय बन जाएँ तो यह ऊब बन जाती है। भला इसके अलावा और क्या विकल्प था? शिकार पर लौटना। वे जानते थे कि जानवर दूसरे जंगलों में भाग गए हैं, और उन्हें निराश होकर लौटना होगा।

अजय ने वज्र से कहा, "भाई, कितना अच्छा होता अगर हम भी युद्ध से राहत पाने के लिए कृषि में लग पाते।"

वज्र ने कहा, "लेकिन अगर हम कृषि करने लगें, तो हम खुद को योद्धा कैसे कह सकते हैं? हमारी दिनचर्या तय है - युद्ध प्रशिक्षण, युद्ध करना और शारीरिक सुख।"

अजया ने कहा, "अगर युद्ध चल रहा है तो ठीक है। अगर नहीं, तो हम हताशा और सरासर ऊब के मारे अपनी त्वचा को खुजलाने को मजबूर हो जाते हैं।"

वज्र कहते हैं, "इसलिए, एकमात्र उपाय युद्ध करना ही है। यदि ऐसा नहीं हुआ, तो हम कष्ट भोगेंगे। एक और बात है। यदि बार-बार युद्ध नहीं हुए, तो राजा के पास हमें भोजन कराने और दावत देने का कोई कारण नहीं होगा। क्या वह ऐसा करेगा? वह हमें नीचा दिखा सकता है और हमें कृषि की ओर धकेल सकता है। लेकिन यदि हम धरती को हाथ लगाएंगे, तो न केवल हम स्वयं को अपमानित करेंगे, बल्कि संपूर्ण क्षत्रिय समुदाय कलंकित होगा।"

अजय चुप हो गया। वह अपने भाई के विचारों से पूरी तरह सहमत था। गंभीर मौन में, दोनों भाई इस गतिरोध को तोड़ने के तरीकों पर गहराई से विचार करने लगे। मानो उसे कोई नया रास्ता मिल गया हो, वज्र ने धीमी आवाज़ में कहा, “सीमित मात्रा में हम स्त्रियों को परास्त कर सकते हैं, लेकिन अधिकता में वे हम पर हावी हो सकती हैं। एक वीर के लिए, स्त्रियों के सामने बेबस होकर अपमानित होने से बेहतर है कि वह युद्ध में लड़ते हुए मर जाए!”

अजय ने अपनी गर्दन को थोड़ा झुकाते हुए कहा, "सैनिक भी यही कह रहे हैं।"

रुक्मरथ को ऐसी कोई चिंता नहीं थी। शासन करने में ही वे पूरी तरह व्यस्त रहते थे। जब कोई काम नहीं होता था, तो वे शिकार पर निकल जाते थे। या फिर वे किसी पड़ोसी शासक के साथ जुए का खेल खेलते थे। उनका मन स्त्रियों की ओर बहुत कम ही जाता था। इसके अलावा, उनकी आयु लगभग पचास वर्ष थी। पिता और पुत्रों द्वारा सर्वसम्मति से तटस्थ रहने का निर्णय लेने के बावजूद, रुक्मरथ पूरी तरह से तटस्थ नहीं थे। शासक होने के नाते, उन्हें विभिन्न देशों के बारे में गुप्त जानकारी एकत्र करना आवश्यक लगता था। एक के बाद एक जासूस समाचार लाते रहे। उनमें से कुछ जो ग्रीष्म ऋतु में चले गए थे, वे वर्षा ऋतु में बाहर ही रहे। अब वे एक-एक करके लौट रहे थे। कुछ हस्तिनावती से आए थे। कुछ उपप्लव्य से लौटे थे, जहाँ पांडव युद्ध की तैयारियों में जुटे थे। कुछ दूर काशी से लौट रहे थे। उनके द्वारा लाई गई खबर यह थी कि कुछ देश एक पक्ष में थे और अन्य दूसरे पक्ष

में, लेकिन किसी ने भी तटस्थता का दावा नहीं किया। सूचना यह थी कि कई गैर-आर्य समूह युद्ध में शामिल होने की तैयारी कर रहे थे, जिनमें किरात, राक्षस और नाग शामिल थे। भीम ने पहले बका और हिडिम्बा जैसे राक्षसों का वध किया था, और ऋक्षक इस सब का बदला लेने के लिए पांडवों पर घात लगाए बैठे थे। उन्होंने दुर्योधन को अपना समर्थन दिया था। धृतराष्ट्र द्वारा दिए गए खांडवप्रस्थ में बसने के बाद, पांडवों ने नागों के जंगलों को उजाड़कर खेती के लिए साफ कर दिया था, जिसके कारण नाग जनजाति उनसे शत्रुता करने लगी थी। क्रोधित होकर अर्जुन ने ग्रीष्म ऋतु में भी जंगल में आग लगा दी थी। कई नाग मारे गए और कुछ भाग गए। इसका लाभ उठाकर दुर्योधन ने इन नागों के साथ-साथ त्रिगर्त में रहने वाले नागों को भी पांडवों से बदला लेने के लिए कहा था। उन सभी ने अपनी-अपनी विशेष सेना संगठित की और दुर्योधन की सहायता के लिए निकल पड़े। कहा जाता है कि हिडिम्बा की बहन ने भीम से घटोत्कच नामक पुत्र को जन्म दिया था। पांडवों ने स्वयं भीम को उनका समर्थन प्राप्त करने के लिए भेजा था। भीम के साथ हिडिम्बा का केवल एक वर्ष का निवास था, फिर भी भीम के प्रति उसका प्रेम कम नहीं हुआ था। अपने राक्षस अनुयायियों को एकत्रित करके घटोत्कच पांडवों से मिल गया था। पांडवों की रणनीति दुर्योधन के अन्य राक्षस समर्थकों के विरुद्ध घटोत्कच को खड़ा करना था।

जैसे-जैसे जानकारी मिलती गई, रुक्मरथ के मन में आने वाले भयंकर युद्ध की तस्वीर और भी बड़ी और जटिल होती गई। उन्हें अपनी कल्पना का प्रयोग करके इन जानकारियों को आपस में जोड़ना पड़ा। एक बात स्पष्ट थी। यह अब तक के सभी युद्धों में सबसे बड़ा युद्ध होने वाला था। कितने सैनिक! कितने रथ! कितने घोड़े! क्या कुशलता! क्या रणनीतिक संरचनाएँ! पास ही में एक भीषण युद्ध लड़ा जा रहा था, एक ऐसा युद्ध जिसमें लगभग पूरा आर्य जगत और कई गैर-आर्य भी शामिल थे। वह सलाखों के पीछे छिपकर कैसे तटस्थ रह सकते थे? मान लीजिए, बुढ़ापे में जब वे अपने परपोतों को इस भीषण युद्ध की कहानी सुनाएँ और वे उनसे पूछें कि उन्होंने इसमें भाग क्यों नहीं लिया, तो वे क्या उत्तर देंगे? लेकिन उन्होंने अपने पिता को वचन दिया था कि वे इसमें भाग नहीं लेंगे। युद्धक्षेत्र केवल दर्शक बनने की जगह नहीं थी। ऐसे विचारों से उनका उत्साह कम हो गया।

एक दिन जब वे प्रशासनिक कार्यों में पूरी तरह से मग्न थे, तभी बढ़ईयों के मुखिया नंदका उनके पास आए और बोले, "युद्ध के लिए रथों को और भी मज़बूती

से तैयार करना होगा। हमें दो सौ नए रथ बनाने होंगे। रसद और अन्य सामान ढोने के लिए लगभग पाँच सौ साधारण गाड़ियाँ बनानी होंगी। मैंने इन कार्यों को करने के लिए हर गाँव से बढ़ईयों को बुलाया था। मंत्री जी ने मुझे बताया कि अब युद्ध का कोई सवाल ही नहीं है, इसलिए इस सारी तैयारी का कोई मतलब नहीं है। बढ़ई अब शिकायत कर रहे हैं कि वे पूरे एक साल का स्थानीय काम छोड़कर यहाँ आए हैं। वे मांग कर रहे हैं कि काम हो या न हो, उनकी मजदूरी दी जानी चाहिए।"

रुक्मरथा ने सोचा कि उन्हें मजदूरी देने से इनकार करने का कोई सवाल ही नहीं उठता। मजदूरी देने के बाद, अगर वे अभी वाहन बनवाते, तो वे बिना इस्तेमाल किए ही जंग खा सकते थे। अगर उन्हें राशन और प्रति व्यक्ति दो कंबल मजदूरी के रूप में दिए जाते, तो किसानों पर नए खर्च की भरपाई के लिए अतिरिक्त कर लगाया जाता। उन्होंने बढ़ई प्रमुख से कहा कि वे अगले दिन फैसला सुनाएंगे। उसी दोपहर, लोहार भी इसी समस्या के साथ आया। धातु के तीर के सिरे, तलवारें आदि बनाने का काम पहले ही शुरू हो चुका था। वह जानना चाहता था कि इन हथियारों की कितनी मांग है, और क्या उसे अतिरिक्त लोहारों की मदद लेनी चाहिए। रुक्मरथा ने उसे भी बताया कि अगले दिन फैसला सुनाया जाएगा।

—•✳•—

अध्याय 7

धरती ने सुनहरी फसल दी थी। धान के पौधों में फूल खिल चुके थे। अन्य खाद्य पौधों में भी फूल आ चुके थे। कोमल अनाज की सुगंध से तृप्ति की गहरी सांसें थम जाती थीं। सूरज की तेज गर्मी अनाज को शक्ति प्रदान कर रही थी। चार अंगरक्षकों के साथ राजा साल्या घोड़े पर सवार होकर शहर से बाहर निकले। वे एक खेत में घास पर बैठकर अपने अंगों को फैलाते हुए अपने बचपन और उन हरी-भरी चीजों

की सुगंध में खो गए, जिन्हें वे बचपन में बहुत प्यार करते थे। मानो उस सुगंध के लिए तरस रहे हों, वे उस सुगंधित हवा में सांस लेते रहे। उन्होंने सोचा, "कितने साल ऐसे ही बीत गए!" यहाँ एक तरह का आकर्षण था, और एक तरह का विकर्षण भी। इस हरी सुगंध का आनंद लेते हुए, उन्हें लगा कि जितना संभव हो उतना जीना सार्थक है। लेकिन अब तक बीते वर्षों की यादें अनदेखे और आने वाले वर्षों की लालसा के आगे दब गईं। हरे-भरे, खिलते खेतों की सुगंध ने उन्हें स्थिर, शांत जल के दृश्यों की याद दिला दी। क्यों? वे नहीं जानते थे। हाँ, उन्हें यह मानना ही पड़ा कि जीवन का उत्साह मिट चुका था। सब कुछ एक उद्देश्यहीन, ठहरा हुआ, गतिहीन जल जैसा लग रहा था—महल, स्वादिष्ट और लज़ीज़ भोजन, चौबीसों घंटे उनकी सेवा में तत्पर रहने वाली नौकरानियाँ, बच्चे और पोते-पोतियाँ। हाँ, सब कुछ ठहरा हुआ जल की तरह स्थिर और निर्जीव था। उन्हें और कितने साल जीने को बचे थे? उन्होंने सोचा। भीष्म की आयु एक सौ बीस वर्ष बताई जाती थी। शायद वे भी इतने साल जी सकते थे। लेकिन भीष्म तो जीवन भर अविवाहित रहे। अविवाहित व्यक्ति का जीवनकाल क्या होता है? ऐसा लगता था कि भीष्म लंबे समय तक जीवित रहने के लिए अविवाहित नहीं रहे थे। हाँ, वे भी इतने साल जी सकते थे। लेकिन इन वर्षों में उन्हें क्या करना था? अब प्रशासन की ज़िम्मेदारी में शामिल होने की कोई आवश्यकता नहीं थी। इच्छा भी समाप्त हो चुकी थी। शराब का नशा भी अब उतना आकर्षक नहीं रहा था। जहाँ तक स्त्रियों की बात है, उन्हें आकर्षित करने और उनसे आकर्षित होने के लिए आवश्यक बुनियादी तत्व तो बहुत पहले ही गायब हो चुके थे। कुछ समय पहले ही युद्ध के प्रति थोड़ा उत्साह जागा था। अब तटस्थ रहने के निर्णय के साथ वह उत्साह भी समाप्त हो गया था। सूरज की तेज गर्मी से अनाज की कलियाँ फूटने के लिए तैयार थीं। उनकी सुगंध उनकी सक्रिय नाक में भर रही थी। इस विडंबना को वह भली-भांति समझ रहे थे। आखिर वे एक योद्धा थे, एक क्षत्रिय थे, और तलवार, रथ और धनुष के बजाय उगते हुए अनाज की सुगंध से उनका क्या लेना-देना था? इस विचार ने उन्हें और अधिक आराम करने के लिए प्रेरित किया, और वे घास पर लेट गए, उनका चेहरा तेज धूप की ओर था। वे सोचने लगे - भीष्म दुर्योधन की सेना के सेनापति कहे जाते थे। वे वीरों में वीर थे, अतुलनीय। उनका सीना कितना चौड़ा था! मैं अपनी इस उम्र में युद्ध का नेतृत्व कैसे कर सकता था? भीष्म वन में तपस्या का जीवन चुन सकते थे, लेकिन उन्होंने ऐसा क्यों नहीं किया? उनका परिवार तपस्या और आध्यात्मिक

उपलब्धियों के लिए समान रूप से प्रसिद्ध था। शल्य ने अपनी आँखें बंद कर लीं, और उन्हें दुनिया काली-लाल होती हुई दिखाई दी। जब उसने पलकें थोड़ी सी खोलीं, तो सात रंगों की इंद्रधनुषी किरणें युद्ध में तीरों की तरह उस पर पड़ीं। वह अचानक उठ खड़ा हुआ और सड़क के किनारे इंतज़ार कर रहे घोड़े के पास पहुँचा। इंतज़ार कर रहे अंगरक्षकों ने घोड़े को पकड़ लिया ताकि वह उस पर सवार हो सके। बूढ़ा राजा तेज़ी से शहर से निकल पड़ा। उसका सफ़ेद घोड़ा अंगरक्षकों के घोड़ों को काफ़ी पीछे छोड़ गया, क्योंकि उसने बिना डगमगाए, बिना किसी ज़ाहिर प्रयास के, लगाम को मज़बूती से थामे हुए, उत्कृष्ट घुड़सवारी का प्रदर्शन किया। पीछे-पीछे चल रहे अंगरक्षक धूल के ऊपर से ही देख पा रहे थे, घोड़े को नहीं। सवारी ने राजा को ऊर्जा दी और उसमें कुछ उत्साह भर दिया। जैसे-जैसे वह तेज़ दौड़ा, घोड़ा और सवार दोनों पसीने से भीग गए। उसकी ऊब आखिरकार गायब हो गई थी।

—•✳•—

अध्याय 8

इस बीच रुक्मरथ सोच रहे थे कि क्या जुआ खेलने से उनकी ऊब दूर हो जाएगी। केवल अपने भाइयों वज्र और अजय के साथ खेलना उन्हें पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर रहा था। चाहे वे अपने ही भाइयों से जीतें या हारें, इसमें कोई रोमांच नहीं था। अपने जंगलों में शिकार करना भी अब उन्हें उत्साहित नहीं करता था। वे पिछले दस वर्षों से शासन का कार्यभार संभाल रहे थे, और उससे पहले वे अपने पिता के शिष्य और सहायक के रूप में काम कर रहे थे। वह काम भी अब उन्हें रोमांचित नहीं करता था। पड़ोसी राजाओं और राजकुमारों के साथ जुआ खेलना रोमांचक होता। जैसे ही पासा रुकता, हर कोई अपनी किस्मत जानने के लिए सांस रोक लेता।

लेकिन, उनमें से कोई भी जुआ खेलने के लिए खाली नहीं था। सभी युद्ध की तैयारियों में व्यस्त थे। वे सभी आने वाले युद्ध के अलावा किसी और बात की चर्चा नहीं कर रहे थे। अब उनमें से किसी को भी जुआ खेलने में जरा भी दिलचस्पी नहीं थी। सभी शासक और राजकुमार एक-दूसरे से मित्र या शत्रु के रूप में व्यवहार करते थे, यह इस बात पर निर्भर करता था कि वे पांडवों का समर्थन करते हैं या दुर्योधन का। रुक्मरथ को यह अहसास हो गया था कि एक क्षत्रिय मित्र या शत्रु होने के भाग्य से बच नहीं सकता।

कुछ समय के लिए तो वह सुशर्मा का शत्रु बनने से बच गया था। लेकिन वह जानता था कि दोनों के बीच पहले जैसी गहरी और गर्मजोशी भरी दोस्ती अब नहीं रही थी। हताशा में उसने पांडवों का पक्ष लेने के विचार पर भी गौर किया।

एक दिन सुबह महाराजा दुर्योधन के सगे भाई दुस्साना आए। मद्रास की राजधानी के द्वार पर रुककर उन्होंने एक विशेष दूत के माध्यम से अपने आगमन की सूचना दी। रुक्मरथ ने अपने भाई वज्र को रथ में सवार होकर आने वाले अतिथि का विधिपूर्वक स्वागत करने के लिए भेजा। दुस्साना आए और शल्य के चरण स्पर्श करते हुए उन्हें चाचा कहा। बूढ़े व्यक्ति का आशीर्वाद लेने के बाद, यह कहते हुए कि उनके पास समय कम है, उन्होंने अपना पक्ष रखा, "मामा जी, यह सच है कि पांडव आपके मामा के बेटे हैं। लेकिन हम भी तो हैं। बताइए, पांडव परिवार में विवाह करने के बाद आपकी बहन को क्या सुख मिला? उनकी मृत्यु में हमारा कोई हाथ नहीं था। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि उनके वनवास के लिए हम जिम्मेदार नहीं थे। बेशक, अगर आप अपने भतीजों को उनका राज्य वापस दिलाना चाहते हैं तो यह बिल्कुल अलग बात है। अगर हम उन्हें राज्य लौटा भी दें तो भी वे घोड़े धोने के काम से नहीं बच पाएंगे! जब छोटी पत्नी के बच्चों का भाग्य घोड़े का गोबर साफ करना ही रहा है, तो आप पांडवों की सहायता क्यों करेंगे? मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अगर हम युद्ध जीतते हैं, तो हम वह राज्य आपकी बहन के दोनों पुत्रों को अवश्य देंगे। आप इस बात पर मेरा विश्वास दुर्योधन के स्वयं के वचन के समान ही पक्का मानिए। हमारा झगड़ा पहले तीन से है। शांतिप्रिय और अच्छे व्यवहार वाले छोटे दो पुत्रों, आपकी बहन के बच्चों से हमारी कोई दुश्मनी नहीं है।"

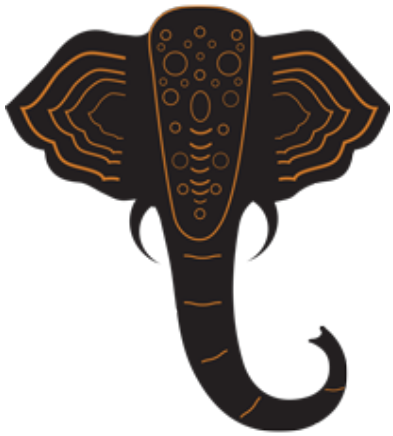
राजा शल्य की पाँचों पांडवों के प्रति पूर्ण मित्रता अब टूट चुकी थी। दुस्साना ने रुक्मरथ से कहा, "युद्ध का मतलब धन है। सैनिकों को वस्त्र, भोजन, हथियार और

अन्य सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए। अन्यथा वे अपने प्राणों का बलिदान करने के लिए क्यों तत्पर होंगे? मैं अपने साथ एक हजार कंबल, एक हजार चादरें और सोने के सिक्कों से भरा एक घड़ा लाया हूँ। यह आपके सैनिकों के लिए पुरस्कार नहीं है, बल्कि परिवार के एक वरिष्ठ सदस्य, हमारे मामा शल्य को भेंट है। जिस क्षण आप युद्ध में शामिल होने के लिए प्रस्थान करेंगे, उस क्षण से लेकर युद्ध के बाद अपने देश लौटने तक, आपकी सेना को आश्रय, उत्तम भोजन और हाथियों और घोड़ों के लिए चारा उपलब्ध कराना हमारी एकमात्र जिम्मेदारी होगी। कृपया हमें अपनी सेना के लिए आवश्यक दूध, घी, आटा और चावल की अनुमानित मात्रा बताएँ। हम आपको आपके अनुमान से दुगुनी मात्रा प्रदान करेंगे। मैं आपको याद दिला दूं कि हस्तिनावती के रसोइयों के हाथ उनके राजाओं के हाथों के समान उदार हैं।"

शल्य मौन, आत्ममग्न रहा। लेकिन दुस्साना ने रुक्मरथ के चेहरे को देखकर ही उनके मन की बात जान ली। उन्होंने स्वयं कहा, "एक और बात। यह मत सोचो कि यह युद्ध अपरिहार्य है। पांडवों ने कृष्ण की सलाह पर हमें धमकी दी थी। वे दावा करते रहे कि उन्हें यह और वह समर्थन प्राप्त है। हमने चुनौती स्वीकार की और उन्हें बताया कि हमारे पास भी बहुत सारे समर्थक हैं। मुझे विश्वास है कि वे अपने समर्थकों के साथ एकत्रित होंगे। हम और हमारे मित्र भी एक स्थान पर एकत्रित होकर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करेंगे। तब मुझे पूरा विश्वास है कि वे समझ जाएंगे और शांतिपूर्ण समझौते के लिए सहमत हो जाएंगे। सिंहासन पर हमारा अधिकार उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि धर्म, नैतिक नियम की विजय। यदि सर्वोच्च नैतिक नियम, धर्म पराजित हो जाता है, तो वह जनता के वास्तविक कल्याण को कैसे बढ़ावा दे सकता है? दुर्योधन अपने राज्य पर अपनी प्रजा के कल्याण के लिए शासन करता है। यदि आपको कोई संदेह है, तो आप हस्तिनावती जाकर स्वयं देख सकते हैं कि यह सत्य है या नहीं।"

—•✳•—

भाग दो



अध्याय 9

शहर के पूर्व में, नदी के किनारे, विदुर का घर था। उसका मुख्य द्वार उगते सूरज की ओर था, और उसके सामने पत्थर और गारे से बना एक विशाल आंगन फैला हुआ था। तीस कदम नीचे महान गंगा नदी बहती थी। कुंती को बहते पानी के किनारे बैठने की आदत थी। चाहे पानी के प्रति प्रेम के कारण हो या फिर ऊब दूर करने के लिए, वह दोपहर की धूप में एक पेड़ की छाया में बैठी थी। उसके दोनों पैर पानी में थे जहाँ मछलियाँ खेल रही थीं। मछलियाँ उसके साफ पैरों को कुतर रही थीं। जब मछलियाँ हिलती-डुलती नहीं थीं और पानी दर्पण की तरह स्थिर रहता था, तो वह अपनी छवि को स्पष्ट रूप से देख पाती थी। यह एक लंबे और चौड़े शरीर की छवि थी। झुर्रियों से भरा चेहरा। सफेद बाल। वह बार-बार उसे देखते-देखते थक गई थी। उसने मन ही मन कहा— "कृष्ण युद्ध रोकने और शांति स्थापित

करने गए हैं। कभी-कभी मुझे आश्चर्य होता है कि वे इस असंभव मिशन पर क्यों गए हैं। भगवान ही जाने शांति वार्ता में आखिर क्या-क्या बातें हुई होंगी।" विदुर के आने से उसकी सोच में खलल पड़ा। वह कृष्ण के शांति अभियान में उनके साथ गए थे। कुंती ने उनकी ओर देखा। वह पास आए और यह सुनिश्चित किया कि आसपास कोई नहीं है और वे दोनों अकेले हैं। फिर वे बैठ गए, दरबारी वस्त्र उतार दिए और खुली हवा में अपनी छाती और कंधों को ठंडक दी।

उसने पूछा, "कृष्ण कहाँ हैं?"

विदुर ने कहा, "दुर्योधन ने कृष्ण को रस्सियों से बांधकर कैद करने का प्रयास किया। उसने कृष्ण पर आरोप लगाया कि वे अपने नगर में अपने समर्थकों को उससे वफ़ादारी छोड़ने के लिए मनाने की कोशिश कर रहे हैं। कृष्ण के अंगरक्षक सतर्क थे और उन्होंने इस चाल का अनुमान लगा लिया था, इसलिए वे भाग निकले। मैंने कृष्ण से कहा कि अब उनके लिए यहाँ रहना सुरक्षित नहीं है। वे तुरंत चले गए। मुझे लगता है कि उन्होंने आपको कुछ करने को कहा है। खैर, उन्होंने जल्दबाजी में आपको वह बात याद दिलाने को कहा जो उन्होंने कल रात आपको बताई थी।"

"हां," उसने कहा और स्तब्ध विदुरा से पूछा, "वहां वास्तव में क्या हुआ था?"

विदुर ने कहा, "दुर्योधन ने स्वयं कृष्ण को बांधने का प्रयास किया। इसके अलावा और क्या कहा जा सकता है?"

कुंती ने कहा, "उन्हें पहले से ही पता था कि परिणाम क्या होगा। फिर उन्होंने शांति का दूत क्यों भेजा? क्या यह एक भ्रम नहीं था?"

विदुर ने कहा, "दुर्योधन ने एक और चौंकाने वाली बात कही। भीष्म यह सुनकर स्तब्ध रह गए। लेकिन मुझे ऐसा लगा कि धृतराष्ट्र स्वयं मन ही मन प्रसन्न थे, यद्यपि उन्होंने इसे प्रकट नहीं किया। उन्होंने घोषणा की कि पांडवों में से कोई भी अपने पिता की संतान नहीं है। उन्होंने कहा कि वे उन्हें पांडव भी नहीं कहेंगे। उन्होंने बड़ों से कहा कि उन्होंने अन्यायपूर्वक उन्हें हिस्सा देने के लिए मजबूर किया था, और उन्होंने जुए के खेल में वह हिस्सा वापस जीतकर न्याय स्थापित किया है। उन्होंने जोर देकर कहा कि उनका कोई दावा नहीं है क्योंकि वे वास्तव में वंश से संबंधित नहीं हैं।"

कुंती ने पूछा, "उन्होंने यह तो नहीं कहा कि कुंती एक वेश्या थी?"

विदुरा ने कहा, "नहीं, उनका यह मतलब नहीं था। उनका तर्क केवल इतना था कि नियोग से जन्मे बच्चे वैध नहीं होते। उन्होंने ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जो हमारी प्राचीन परंपरा की जड़ों पर ही प्रहार करते हैं। मैं देख सकता था कि इस रुख को अपनाने में उन्हें उनके भाइयों, कर्ण और शकुनि का समर्थन प्राप्त था।"

कुंती ने कहा, "हाँ, यह सब तो राज्य से अलग होने से बचने के लिए ही किया गया था..."

विदुर ने कहा, "हां, हां, वे सभी अधर्म के शब्द थे..."

कुंती कुछ नहीं बोलीं। उनकी निगाहें पानी पर टिकी थीं, जिसने उनके पैरों को ढक रखा था। वह चुपचाप अपनी परछाईं, अपने लंबे और चौड़े शरीर को देखती रहीं। इसीलिए उनका नाम पृथा रखा गया था, जिसका अर्थ है विशाल। अब उनके बाल सफेद हो चुके थे और चेहरा झुर्रियों से भरा था। विदुर ने धीमी आवाज़ में कहा, "दुखी मत होइए। मैंने आपको वही बताया है जो उन्होंने वास्तव में कहा था।" उन्होंने आगे कहा, "आज उन्होंने पूरे समय 'कुंती के पुत्र' शब्द का प्रयोग किया, एक बार भी पांडवों का ज़िक्र नहीं किया।" कुंती मन ही मन सोचने लगीं - "हाँ, इस सफेद बालों वाली, झुर्रियों से भरे चेहरे वाली स्त्री के पुत्र, नहीं, वे कौरव वंश के नहीं हैं। ये बच्चे उनकी शक्ति को नहीं जानते।" उथल-पुथल भरे पानी में उनकी छवि धुंधली हो गई, क्योंकि नीचे मछलियाँ खेल रही थीं। कितनी मछलियाँ थीं? एक, दो, नहीं, चार।

सिर उठाकर उसने धीरे से कहा, "विदुरा, जाओ और खाना खा लो। बहुत देर हो चुकी है।" सूर्य आकाश के शिखर से नीचे आ रहा था और पश्चिम दिशा के पेड़ों की पत्तियों से छनकर उसकी रोशनी आ रही थी। विदुरा ने कहा, "तुम भी उठो और मेरे साथ आओ।"

विदुर की पत्नी परसावी उनका इंतज़ार कर रही थीं। विदुर के बच्चे, पोते-पोतियाँ और परपोते-परपोतियाँ अपना भोजन कर चुके थे। रसोइए ने तीनों को खाना परोसा। चावल नरम और फूले हुए थे, जिन्हें बिना दांत वाले भी आसानी से खा सकते थे। गाढ़ा दलिया आसानी से निगल लिया जा सकता था। भोजन के बाद कुंती सोई नहीं। वह सीढ़ियाँ उतरकर नदी किनारे पहुँचीं। वह एक पत्थर की पटिया पर बैठ गईं। उन्हें दुर्योधन के शब्द याद आए, "कुंती के पुत्र।" उन्हें क्रोध आया, नहीं, उन्हें बस अपना क्रोध याद आया। उन्होंने पूछा, वे उस बहू की संतान कैसे हो सकते हैं जिसने उन्हें जन्म दिया, उस पुरुष की संतान कैसे हो सकते हैं जिसने

उन्हें गर्भवती किया? दुर्योधन के पिता अंधे थे। विवाह से पहले, उस अंधे व्यक्ति को स्त्री का ज्ञान ही नहीं था। पत्नी के गर्भवती होने के बाद, वह दासियों के साथ भोग-विलास करने लगा। वरना दुर्योधन भी गांधारी का ही पुत्र होता। क्या उसके पिता अंबिका के पुत्र नहीं थे? उन्हें क्रोध का उबाल आया। लेकिन उसने खुद को संयमित रखा, क्योंकि वह कुरु वंश के पूर्वजों को श्राप देने से हिचकिचा रही थी, जिनसे बहू होने के नाते उसका संबंध था। ऐसा करना प्राचीन नैतिक संहिता का उल्लंघन होता। वंश को आगे बढ़ाने के लिए, वे बहुओं को ऐसे चुनते थे जैसे मेले से खरीदी गई युवा गायें या भैंसें हों। जिस प्रकार उन्होंने मेरी सास का इस्तेमाल मेरे पति और इस व्यक्ति, दुर्योधन के पिता, को जन्म देने के लिए किया, उसी प्रकार उन्होंने मुझे मेरे इन बच्चों को जन्म देने के लिए इस्तेमाल किया। अब उनमें यह कहने की हिम्मत भी थी कि वे पांडव नहीं थे! और वह अंधा बूढ़ा उस पर लगाए गए आरोप पर मन ही मन खुश हो रहा था! उसे उनके चेहरों पर थूकने का मन कर रहा था। पवित्र भिक्षुओं ने ही उसके सबसे बड़े पुत्र का नाम धर्म रखा था। उसने अनैतिक, दुष्ट दुर्योधन को शीघ्र मृत्यु का श्राप दिया, क्योंकि उसने हिमालय में बदरिका आश्रम की तलहटी में तपस्या करने वाले ऋषियों की बुद्धिमत्ता पर सवाल उठाने का साहस किया था। उसने मन ही मन कहा, "मेरा सबसे बड़ा पुत्र कभी भी धर्म, नैतिक नियम के मार्ग से नहीं भटका।" उसके अन्य पुत्रों का भी यही हाल था। इसलिए उसने यह सोचकर खुद को दिलासा दिया कि अंत में धर्म की ही जीत होगी। उसका व्याकुल मन कुछ शांत हुआ। वह पत्थर की पटिया पर ऊंघने लगी। उसे अचानक याद आया कि पिछले साढ़े तेरह वर्षों से यही पटिया उसका बिस्तर रही है। फिर वह नींद में डूब गई और यादों में खो गई। इस कुरु परिवार के इतिहास में किन-किन नामों का बोलबाला था! दुष्यंत, भरत, हस्तिना, अजमिला, महाभौम, दिलीप, सौ पीढ़ियों तक! अब भीष्म। क्या पांडु भी उनसे कम यशस्वी थे? उसकी स्मृति और कल्पना में वह दृश्य अतीत के एक दूर के दिन में विलीन हो गया, उसके अतीत में। पिता ने उससे कहा, "पुत्री, पृथा, वह वहाँ गंभीर कमल मुद्रा में बैठे हैं, युवा जिनके चेहरे पर दाढ़ी और मूंछें उग रही हैं, उनका रंग गोरा और चमकीला है। उन्होंने इतनी कम उम्र में ही आसपास के राज्यों को जीत लिया है, वे सबसे वीर हैं, जाओ और उनके गले में अपनी माला डाल दो।" माँ ने पिता का समर्थन करते हुए कहा, "उसका भाई अंधा है। इसलिए वही सिंहासन पर बैठेगा। तुम्हें उस शासक की रानी होने का सौभाग्य प्राप्त होगा जो राजसूय या अश्वमेध

संस्कार करेगा। तुम उसकी मुख्य रानी, उसकी पहली पत्नी बनोगी।" उसकी सहेली ने भी उसे उसी दिशा में प्रेरित करते हुए कहा, "प्रिता, उसका शरीर तुम्हारी कद-काठी से मेल खाता है। पुरुष को भूखे शेर की तरह होना चाहिए, जो किसी स्त्री के शरीर पर झपटने और उसे कुचलने के लिए तैयार हो। मुझे तुम्हारे जैसा शरीर किसी और में नहीं दिखता। ओह, वह - पहली ही रात में तुम्हारा सारा रस निचोड़ लेगा।" यह कहते हुए उसने शरारती अंदाज़ में अपनी बाईं आँख मारी। अपने बारे में क्या? उसने मन ही मन कहा, "क्या गठीला शरीर है! और इतना जवान! मुझे बताया गया है कि वह मेरी ही उम्र का है, अठारह या उन्नीस साल का।" उसे वह दृश्य याद आ गया। जैसे ही वह सभा में घूमी, सबकी निगाहें उसे निहार रही थीं, हर तरह के चेहरों पर निगाहें गड़ाए खड़ी थीं - टेढ़ी-मेढ़ी दाढ़ी वाले चेहरे, घनी और भरी हुई दाढ़ी वाले चेहरे, सफेद धारियों वाली दाढ़ी वाले चेहरे, नीली दाढ़ी वाले चेहरे, चमकीली भूरी-लाल दाढ़ी वाले चेहरे। क्या ही थे वे शासक! कितने सारे और कितने अलग-अलग! जैसे-जैसे वह एक-एक करके उनके पास से गुज़री, वह अपने दोस्तों के आकलन से सहमत होती गई। हाँ, वह सही थी। पांडु का शरीर शेर जैसा था, तनाव में झुका हुआ और झपटने के लिए तैयार। भारी बलि के धनुष पर बार-बार झुकने से उसकी मांसपेशियां उभर रही थीं। भारी धनुषों के साथ लगातार अभ्यास ने उसकी भुजाओं को मजबूत और मांसल बना दिया था। उसने आगे कुछ नहीं सोचा। उसने मन बना लिया था। वह अपने आप से, अपने अतीत से बोली, "मेरी बड़ी भुजाएँ लगभग अपने आप आगे बढ़ गईं। गर्व से उसने मेरी आँखों में आँखें डालकर देखा, अपना चेहरा ऊपर उठाया, लेकिन अपना सिर नीचे कर लिया ताकि मैं उसके गले में विजय की माला पहना सकूँ।" उसने उसे जीत लिया था, पृथा। अब उसने खुद से पूछा, "कोई दूसरा राजकुमार या राजा खड़ा होकर उसे चुनौती क्यों नहीं दे पाया? क्यों नहीं?"

उसकी शादी में क्या शान-शौकत, क्या वैभव और धन-संपन्नता का प्रदर्शन था! उसके पिता ने दिल खोलकर खर्च किया क्योंकि वे इस बात से बेहद प्रसन्न थे कि उनकी बेटी प्रतिष्ठित कुरु परिवार की पहली रानी बनने जा रही थी। वह अपने पिता की लाडली थी। आखिरकार, उसे गोद लिया गया था क्योंकि उसके परिवार में कोई बेटी नहीं थी और उसे सबसे ज्यादा चाहा जाता था। कुरु महल को सजाने के लिए कितने ही बैलगाड़ी भरकर कीमती उपहार भेजे गए थे! उसने याद करते हुए कहा, "पिताजी ने मेरे साथ दस सुंदर नौकरानियों को इस सिंह पुरुष के लिए भेजा था।

मुझे पहली ही रात यह आभास हो गया था, पर मैं पूरी तरह समझ नहीं पाई थी। उसकी ताकतवर छाती और भुजाओं ने मुझे कुचल दिया। वह पसीने से तर बालों से भरी एक अधेड़ उम्र की छाती थी। वह किसी साधु-संतों के कोमल, लचीले शरीर जैसी नहीं थी। उसने बड़बड़ाते हुए कहा था, 'कुंती, तुम्हारा चेहरा कितना प्यारा है। तुम्हारी भौहें कितनी मोहक हैं। तुम्हारी बड़ी छाती कितनी सुंदर है।' ये सब शब्द थे, केवल उस बात की भरपाई के लिए जो न हो सकी और न हुई। हाँ, जो उसकी सहेली ने इशारा किया था और जो मैं दिल से चाहती थी, वह नहीं हुआ। जल्द ही वह एक हारे हुए बैल की तरह सो गया। उसने कहा कि वह लंबी यात्रा से थक गया है, उसे नींद आ रही है। फिर उसने सोच में डूबा हुआ चेहरा मुझसे दूर कर लिया और धराशायी हो गया। मैं सच्चाई को समझ नहीं पाई। मुझे राहत मिली कि वह पल, जब एक कुंवारी लड़की को शर्म महसूस होती है, टल गया। वह सो गया। या क्या वह सोया था? शायद उसने बस अपनी आँखें चौड़ी कर ली थीं। जाग रही थी। मैं कैसे सो सकती थी? मैं इच्छा, शर्म और आशा से भरी हुई थी, एक प्रमुख रानी बनने की आशा से।

"सुबह जब मेरी सहेली ने मुझसे रात के वाकये के बारे में तीखे लहजे में पूछा, तो मैंने सच क्यों नहीं बताया? उसने मुझसे पूछा, क्या उसने ये किया, वो किया, तुमने बदले में क्या किया? मैं सिर झुकाकर हां-हां कहती रही। क्या ये इसलिए नहीं था कि मैं खुद हालात को समझ नहीं पा रही थी? सहेली ने हाथ से धक्का देते हुए पूछा, 'बताओ, तुम सच क्यों नहीं बता रही हो? क्या तुम अपने पति की इज्जत बचाना चाहती हो?' मैंने उसे यादों के टुकड़ों को जोड़कर एक मनगढ़ंत कहानी सुनाई।" कुंती ने याद करते हुए कहा, "सच है, किस्मत ने मेरे साथ धोखा किया था, लेकिन मैंने भी सच को छुपाकर खुद को धोखा दिया था। एक बार शुरू हुई ये झूठी और मनगढ़ंत कहानी दूसरों तक पहुंचती गई, और उसमें और भी झूठ जुड़ते गए। एक बार नहीं, कितनी बार? अगर मैंने अपनी सहेली को सच बता दिया होता, तो शायद वो मां को बता देती, और मां उसे पिता तक पहुंचा देती। पांडु की इज्जत पर खुलेआम दाग लग जाता और शायद मेरी दोबारा शादी हो जाती।" उसने याद करते हुए कहा, "बाहरी रूप से देखने में वह पुरुष कितना अद्भुत था!"

"भीष्म बहुत जल्दी में थे। जब बहू उनके घर में आने के बाद पहली बार मासिक धर्म से गुज़री, तो यह खबर सुनकर वे बहुत दुखी हुए, उन्हें ऐसा दुख हुआ कि कुरु बीज अंकुरित नहीं होगा। जब उन्हें दूसरे मासिक धर्म के बारे में पता चला, तो वे

गुस्से से भड़क उठे। जब तीसरा मासिक धर्म शुरू हुआ, तो उन्होंने सारा दोष बहू पर मढ़ दिया, यह कहते हुए कि उनके बेटे ने उपजाऊ खेत में बीज नहीं बोया था।" कुंती ने अब खुद से पूछा, "इन सब के बावजूद, मैं क्यों चुप रही? अपनी सबसे करीबी सहेली से भी सच छुपाते हुए, मैं अपने पति की यौन शक्ति को बढ़ा-चढ़ाकर बताती थी। मेरे साथ उपहार के रूप में आई सभी नौकरानियों ने मुझे बताया कि उन्होंने उनकी आकर्षक बाहों को एक बार भी नहीं छुआ। विडंबना यह थी कि इसे उनके पक्ष में ही समझा गया, क्योंकि उन्होंने कहा कि उनके पास अपनी पत्नी के कामुक शरीर के अलावा किसी और के लिए समय ही नहीं था। कम से कम मेरी सहेली की तो यही समझ थी।"

विदुर, "निश्चित ही, धृतराष्ट्र स्वयं को धोखा दे रहे हैं।"

अचानक कुंती अपने ख्यालों से जाग उठीं और बाहर की दुनिया को देखने लगीं। विदुर उनके पास आकर बैठ गए। वह भी बैठ गईं। उन्होंने कुंती से कहा, "अगर तुम्हें थकान महसूस हो रही है तो जाकर सो जाओ।" कुंती ने जवाब दिया, "नहीं, मैं तो बस लेटी हुई थी।"

विदुर ने कहा, "ऐसा प्रतीत होता है कि वह इस विचार से स्वयं को सांत्वना दे रहा था कि पांचों पांडव उसके कुल के नहीं थे, बल्कि केवल कुंती और माद्री की संतान थे, और इस वजह से वह यह नहीं देख पाया कि वह स्वयं केवल अम्बे का पुत्र है।"

वह झुकी, पानी निकाला और पी लिया। फिर बोली, "मुझे भीम से कहना चाहिए कि वह उसकी उन आँखों में दो बाण मारे ताकि कम से कम वे खुल जाएँ।"

विदुरा ने आगे कहा, "अंततः यही होगा।" इसी समय एक नौकर सीढ़ियों से नीचे उतरते हुए आया। उसने बताया कि दादाजी ने उसे बुलवाया है। विदुरा उसके साथ सीढ़ियों से ऊपर चढ़ गया।

कुंती ने पसीने से तर अपना चेहरा मुट्ठी भर पानी से धोया और फिर अपनी सफेद साड़ी के किनारे से चेहरा पोंछा। उसने मन ही मन कहा, "सच जानते हुए भी धृतराष्ट्र खुद को धोखा दे रहा है।" उसे याद आया कि वह भी जीवन भर आत्म-धोखे की शिकार रही है। उसने पूछा, "मुझे जीवन में क्रूर अत्याचार और घोर दुख के सिवा क्या मिला? मैं कब खुश थी? जब अधिकांश पत्नियाँ विवाह के शुरुआती वर्षों में अपने पतियों का आनंद लेती थीं, तब मेरी किस्मत में पति की क्रूरता सहना लिखा था। कम से कम वह मुझे अकेला तो छोड़ सकता था। नहीं। वह मुझ पर टूट

पड़ता, अपनी मर्दानगी दिखाने की कोशिश करता। वह मेरे शरीर को गालियाँ देता, कहता, कुंती यह करो, वह करो, इस तरह हिलो, उस तरह हिलो, इस तरह झुको और उस तरह झुको। ऐसे अप्राकृतिक अभ्यासों के अंत में, वह थकावट से हाँफने लगता, जैसे कोई बैल जो संभोग करने में असमर्थ हो। अपनी नपुंसकता के प्रदर्शन से अपमानित होकर, वह मुझसे नाराज़ होने, मुझे गाली देने और मुझ पर हमला करने के लिए कोई बहाना बनाता, चिल्लाता कि मैं उसकी पत्नी बनने के लायक नहीं हूँ।" बीते वर्षों को याद करते हुए वह अब खुद से पूछ रही थी, 'मैं क्या करती? उसकी हरकतों से मेरी कामुकता उत्तेजित तो होती थी, पर उसकी इच्छा अधूरी ही रह जाती थी। क्या मैं निराश शरीर की पीड़ा सहती रहती, या उसके निराधार आरोपों की आग में राख हो जाती? मुझे रात के आने का डर सताता था, उस रात का जब मेरे शरीर और आत्मा पर बेरहमी से अत्याचार होता। मैं दबे स्वर में यही कामना करती कि यह नपुंसक कहीं और सो जाए। इस समय भी, मैंने अपनी सहेली को सच क्यों नहीं बताया?'

"एक दिन मैंने विद्रोह कर दिया और उनसे कहा, 'आर्यों के महान पुत्र, आप बार-बार यही कहते रहते हैं कि मैं आपके योग्य पत्नी नहीं हूँ। आपको क्या लगता है कि किसी और स्त्री में आपको ऐसा क्या मिलेगा जो मुझमें नहीं है? यदि आपमें किसी स्त्री को संतुष्ट करने की शक्ति होती, तो मैं आपके योग्य होती।"

इससे वह बेहद क्रोधित हो गया। उसने बिना किसी संकोच के मेरे गाल पर ज़ोरदार थप्पड़ मारा और चिल्लाते हुए कहा, 'क्या तुम्हारे मुँह से ये शब्द निकलते हैं कि मुझ पर कोई अधिकार नहीं है? मैंने महल की किसी भी नौकरानी को नहीं छोड़ा है। अब एक साल से मैं ब्रह्मचर्य का व्रत ले रहा हूँ। अगर तुम्हें दिलचस्पी है, तो मैं तुम्हें बता सकता हूँ कि कम से कम सौ नौकरानियाँ मेरी सहचर थीं।'

उसे याद था। वह उस पूरी रात रोई थी। नहीं, इसलिए नहीं कि उसने सौ और लड़कियों के साथ संबंध बनाए थे। नहीं, इसलिए कि वह झूठे दावे करके डींगें मारता था और उसे पीटता था। उस दिन से उसका गुस्सा बेकाबू हो गया। हर दिन वह उसके साथ सोता और फिर बिना किसी कारण या वजह के उसे गालियां देता। वह उसके दत्तक पिता भोज और उसके असली पिता सुरसेना को भी बहुत बुरी तरह से गालियां देता था। उसने मन ही मन कहा, "भगवान का शुक्र है, अभी मैं उसके अत्याचारों से मुक्त हूँ।" धीरे-धीरे उसका मन शांत हुआ और उसने उससे ज़रूरी जानकारी लेने की कोशिश की। उसने मुंह खोला, लेकिन सिर्फ़ डींगें मारने

के लिए। वह समझ गई। पंद्रह साल की उम्र में उसने नौकरानियों को बहलाने की कोशिश की थी। एक के बाद एक, उन्होंने राजकुमार का प्यार जीतने के लिए उस पर अपनी सारी कामुकता का इस्तेमाल किया। उन्होंने उसकी यौन शक्ति को बढ़ा-चढ़ाकर बताया और फिर उससे कड़ी मेहनत करवाई। वह थक गया था और तीन साल में उसकी सारी यौन शक्ति खत्म हो गई। जल्द ही वह पूरी तरह से नपुंसक हो गया। खैर, अंत में उसने अपनी सहेली से कहा, "मैं इस वीर्यविहीन पुरुष का क्या करूँ?" लेकिन तब तक वह अपने पति के घर में दो साल बिता चुकी थी।

दोस्त ने कहा था, "महारानी, सुना है राजकुमार हमारे देश की दासियों को अलग-अलग जगहों पर बुलाता है। उनके सामने भी वह अपनी नपुंसकता दिखाता है। वे भी उसी तरह तिरस्कार का भाव रखती हैं जैसे किसी ऐसे शत्रु के लिए रखती हैं जो बिना कोई लड़ाई लड़े सिर्फ़ धमकियाँ देता है। मुझे तो लगा था कि कम से कम महारानी के साथ तो असली लड़ाई होती होगी।"

उसने जवाब दिया, "प्रिय मित्र, इतने दिनों तक मैं तुम्हें झूठ, सरासर झूठ, आत्म-धोखे पर आधारित झूठ बोलती रही।" फिर दुःख से व्याकुल होकर उसने अपने मित्र को गले लगा लिया।

दोस्त, "तुमने खुद को धोखा क्यों दिया? तुमने मुझे सच पहले क्यों नहीं बताया?"

कुंती ने कहा, "खैर, मुझे नहीं पता। शायद मुझे अपने पति को काल्पनिक यौन शक्ति प्रदान करने से किसी प्रकार का विकृत आनंद मिलता था। इसके अलावा, वह प्रसिद्ध कुरु वंश के शासक थे।"

दोस्त ने जवाब दिया, "देखो, ये कुरु शासक सब एक जैसे हैं। सब नपुंसक पुरुष। इस मामले में उनकी शक्ति का कोई अस्तित्व नहीं। कुरु वंश के वंशजों की पत्नियाँ बनने से कहीं बेहतर है कि वे यौन संयम का व्रत रखने वाले तपस्वियों की पत्नियाँ बनें। क्या तुम बिस्तर में उनकी प्रतिष्ठा जानती हो?"

कुंती ने "हाँ" नहीं कहा था। अब उसे वे शब्द सत्य के रूप में याद आ रहे थे। बेशक, वह जानती थी। बूढ़ी कुंती के विचारों का सिलसिला अचानक रुक गया। उसका ध्यान बहते पानी में प्रतिबिंबित छवि पर केंद्रित हो गया। अतीत की ये सारी बातें फिर से जीवित हो उठी थीं। 'ऐसा पहली बार नहीं हो रहा था। फिर भी, ये बातें इतनी स्पष्टता और इतने विस्तृत रूप से उसकी स्मृति में कभी नहीं लौटी थीं, जितनी अब लौटी थीं। ये सब अब क्यों लौट रही हैं?' उसने पूछा। ऐसा लग रहा था

मानो अतीत किसी अदृश्य श्रोता को स्वयं को सुना रहा हो, जो कह रहा हो, हाँ, हाँ। लेकिन वास्तव में यह सब सुनने वाला कौन था? उसकी घनिष्ठ मित्र की मृत्यु के बाद, कोई भी ऐसा नहीं बचा था जो इतना करीबी हो सके। आखिरकार, कुंती ने सोचा, जीवन में केवल एक ही सच्ची मित्रता हो सकती है। जिस बातचीत को वह याद कर रही थी, उसके बाद वह मित्र केवल तीन साल ही जीवित रही। वह कुंती के साथ हिमालय गई थी, लेकिन उस क्षेत्र की भीषण ठंड ने उसे मार डाला था। अब उसके पास कौन था जिसके कानों में वह इतनी गोपनीय बातें कह सके? जब द्रौपदी बहू बनकर आई, तो कुंती शुरुआती वर्षों में, कम से कम सीमित हद तक, उसे अपनी विश्वासपात्र मान सकती थी। लेकिन द्रौपदी भी विपत्तियों की शिकार थी। बारह वर्ष वनवास। एक वर्ष तक एक अजनबी के घर में दासता। फिर भी, कुंती ने चिंतन करते हुए कहा, "यह मेरे प्रकार का दुख और दुर्भाग्य नहीं था। उसके एक नहीं, बल्कि पाँच पति थे, और उनमें से प्रत्येक के पास एक नहीं, बल्कि चार पत्नियों को संतुष्ट करने की शक्ति थी। एक स्त्री वास्तव में केवल एक ऐसे पति की कामना करती है जो उसकी शारीरिक देह-संतान को तृप्त कर सके। यदि ऐसा पति मिल जाए, तो एक स्त्री अन्य मामलों में सबसे बुरी स्थिति भी सह लेगी।"

उसे उस समय फैली एक और अफवाह याद आई। बूढ़े ससुर भीष्म, एक सेना और बीस बैलगाड़ियों भर वस्त्र, बर्तन, कंबल और आभूषणों के उपहार लेकर मद्रा क्षेत्र की यात्रा पर निकले थे। इस यात्रा का कारण क्या था? कुंतीभोज की पुत्री वंश को आगे बढ़ाने वाले पुत्र पैदा करने में असफल रही थी, इसलिए वह अपने पुत्र के लिए ऐसी पत्नी की तलाश में थे जिसकी प्रजनन क्षमता उनके पुत्र की क्षमता के बराबर हो। कुंती को याद आया, "मैं हंसना चाहती थी, लेकिन सच कहूं तो डर भी रही थी।" वह जानती थी कि किसी भी स्त्री से संतान उत्पन्न करना उनकी क्षमता से परे था। लेकिन अगर नई पत्नी चालाकी से उनका दिल जीत लेती, तो उसके लिए विपत्ति आ जाती, उसका जीवन नरक से भी बदतर हो जाता। उसकी सहेली ने भी उसकी बात का समर्थन किया था। क्षत्रिय जितनी चाहे उतनी पत्नियां और रखैलें रख सकता था। भला उसे कौन मना कर सकता था? हाल ही में उसने उससे मिलना भी बंद कर दिया था, उसकी संगति से बचता आ रहा था। उसे याद आया, "मैं खुद उसके पास जाकर पूछने गई थी, आप ऐसा क्यों कर रहे हैं?"

उसके पति ने कहा, "चाचा जी घर के मुखिया हैं। मैं उन्हें अपनी मनमर्जी करने से कैसे रोक सकता हूँ?"

कुंती ने कहा, "तुम बस उनसे कह दो कि नई पत्नी लाने की कोई जरूरत नहीं है, इसमें मेरी कोई गलती नहीं है।"

पति ने कहा, "तो क्या आप यह कहना चाह रहे हैं कि गलती मेरी है? मैंने सौ रखैलें हासिल की थीं।" उसने अपनी पुतलियाँ फैला लीं।

वह चुपचाप और तिरस्कारपूर्ण भाव से अपने कमरे में लौट आई थी।

भीष्म ने माद्री को नई बहू बनाकर कुरु वंश को आगे बढ़ाने की योजना बनाई थी। वह मुझसे दुबली-पतली और दो साल छोटी थी। उसका शरीर मेरे जैसा सुडौल नहीं था। उसका रूप-रंग बहुत आकर्षक था। वह कोमल और छोटी कद-काठी की थी। उसकी आँखें तीक्ष्ण थीं। महल में सभी उसकी सुंदरता की बहुत प्रशंसा करते थे। मैं विवाह की रस्म पूरी होने तक ही वहाँ रही, फिर अपने महल लौट गई। मैं मुख्य रानी थी और वह मुझसे कमतर थी। मुझे लगता था कि पहले मुझसे मिलना उसका कर्तव्य है, अन्यथा वह मुझसे दूर रह सकती थी। वह भी मेरे पास नहीं आया। वह उसके लिए बने नए छोटे महल में रहता था। विवाह के एक महीने बाद माद्री को माहवारी शुरू हुई, जिससे मुझे राहत मिली। मैं तो नियमित रूप से माहवारी कर रही थी, जैसे चंद्रमा नियमित रूप से चलता है। माहवारी के बाद स्नान करने के बाद वह मेरे महल आई। वह बोलने में बहुत चतुर थी। उसने मुझे 'बड़ी बहन' कहकर पुकारा। उसने कहा, 'बहन, तुम्हारे माता-पिता ने उपहारों से लदे हुए सामान भेजे हैं। आपकी शादी में रथों की कतार लगी है। आपका चयन स्वयंवर समारोह में हुआ था। मैं आपके बराबर नहीं हूँ। मेरे लोगों में, दहेज देने और लड़की खरीदने की प्रथा है। शादी दुल्हन के घर पर नहीं होती। वहाँ यही रिवाज है। अब मैं आपकी दया पर हूँ। कृपया मुझ पर दया कीजिए और मेरी रक्षा कीजिए। मैंने मन ही मन कहा, 'दया का सवाल ही कहाँ उठता है?' मैं खुद को रोक नहीं पाई और उससे पूछा, 'क्या सच में आपको मासिक धर्म हुआ था?'

माद्री ने कहा, 'मैं और क्या कर सकती थी? ठीक वैसे ही जैसे तुम्हें मासिक धर्म होता है,' उसने स्पष्ट रूप से मेरी ओर देखते हुए कहा।

"मैंने देखा कि उसने एक महीने के भीतर ही स्थिति को समझ लिया था और मेरी तरह खुद को धोखा नहीं दिया था।"

इससे हमारी दोस्ती का माहौल साफ हो गया और सारी दुश्मनी मिट गई। ईर्ष्या की कोई गुंजाइश नहीं थी। उसने मुझे अपने बारे में सब कुछ बताया—उसका शहर, उसका राज्य, उसका जन्म और उसका पालन-पोषण। उसने मेरे माता-पिता

के बारे में भी पूछा। उसने कहा, 'बहन, हमें अक्सर मिलना और बातें करनी चाहिए। वरना हमें सहारा कहां से मिलेगा?' इसके एक दिन बाद, वह मेरे महल में आया। वह जीत की मुस्कान लिए हुए आया था। मैंने उससे पूछा, 'इतने दिनों बाद, क्या तुम्हें आखिरकार कुंती याद आ गई?' उसने मेरा मजाक उड़ाते हुए कहा, 'वह तुमसे कहीं ज्यादा स्त्री है। मैं सोच भी नहीं सकता कि तुम स्त्री कैसे पैदा हो सकती हो।'

मैं अपने जवाब के लिए तैयार थी। मैंने कहा, 'मुझे लगता है कि उसे भी मासिक धर्म हुआ है।' मुझे आश्चर्य हुआ, क्या वह भी, मुझ पर आरोप लगाने की अपनी बेचैनी में, आत्म-धोखे का शिकार था? तब तक मुझे उस पर थोड़ी दया आ रही थी। अब मेरे मन में केवल घृणा थी। उसे देखते ही मुझे घिन आ रही थी। उसका कंधा धनुष की डोरी से बने कटों के निशानों से भरा हुआ था। पूरी मांसपेशियों पर वे निशान काले धब्बों की तरह गुंथे हुए थे। वह मांसपेशियों से फूला हुआ कंधा था। मैंने उसकी आँखों में देखा। तब तक मुझे एहसास नहीं हुआ था कि मेरी आँखों में इतनी शक्ति है। उस दिन मुझे पता चला कि एक सच्चा व्यक्ति केवल घूरने की शक्ति से एक झूठे को अपना असली रूप दिखाने पर मजबूर कर सकता है। उसकी आँखें ईर्ष्या से भरी हुई थीं। फिर ईर्ष्या क्रोध में बदल गई, एक पराजित व्यक्ति का अपने विजेता के प्रति स्वाभाविक क्रोध। मैंने अपनी नज़रें एक पल के लिए भी नहीं हटाईं। फिर उसकी आँखों की शक्ति कम हो गई और वे कांपने लगीं। मैंने शब्दों से उसका लगातार पीछा किया, 'नहीं, उसे नहीं। भले ही तुम चार और पत्नियाँ ले लीं, तो तुम मासिक धर्म के रक्तस्राव को रोक नहीं पाओगे। जब भी वह रक्तस्राव ज़मीन पर गिरेगा, तुम्हारे जन्मों के पाप बढ़ते जाएँगे। और बड़ी पत्नी से सच छिपाना और झूठ बोलना उससे भी बड़ा पाप है।' बस इतना ही काफी था। उनकी नज़रें झुक गईं। मानो वे धरती के नीचे कोई छिपने की जगह खोज रही हों। उनका चेहरा पसीने से तर हो गया, माथे पर छोटी-छोटी बूँदें दिखाई देने लगीं। पसीने से भीगा पतला ऊपरी वस्त्र गर्दन से चिपक गया, लेकिन मैं पसीना पोंछने के लिए नहीं उठी। मैं उनके सामने बिना हिले-डुले बैठी रही, मेरी रीढ़ की हड्डी तन गई थी। उनके पास कहने के लिए और कुछ नहीं था। पूरा कमरा जम गया, स्थिर, निर्जीव। खिड़कियों से आती सूरज की गर्मी, कमरे में फैली खुशबू, जिस मुलायम सोफे पर हम दोनों बैठे थे, सब कुछ ठोस धातु जैसा हो गया। फिर वे खड़े हो गए। भारी कदमों से वे बाहर चले गए, मुझे खुशी का एहसास हुआ, जीत का एहसास।

अगले दिन दोपहर को खबर आई। उसी सुबह पांडु रथों, सेना और घुड़सवारों के साथ विश्व विजय अभियान पर निकल पड़े थे। लोगों ने बताया कि वे आसपास के राज्यों को जीतने, वनवासियों को भगाने, कुरुओं के क्षेत्र का विस्तार करने और स्वर्ग में कुरु पूर्वजों को प्रसन्न करने के लिए एक वीर क्षत्रिय योद्धा के सच्चे स्वरूप में निकले हैं। नगरवासी अत्यंत प्रसन्न थे। उन्होंने सोचा कि उनके नगर का यश और गौरव बढ़ेगा। उनकी भूमि की सीमाएँ विस्तृत होंगी। भीष्म ने बार-बार उनके सिर पर हाथ फेरा, उन्हें बार-बार गले लगाया और भरपूर आशीर्वाद दिया। मंत्री, वंश की महिमा का बखान करने वाले सेवक, दूत, सभी उनके चारों ओर जमा हो गए थे। पुरोहित मंत्रों का जाप कर रहे थे, उनकी आवाज आकाश तक पहुँच रही थी, राजा के पराक्रम और यश में वृद्धि के लिए प्रार्थना कर रहे थे। कुछ लोगों ने शिकायत की कि राजकुमार की रानियाँ विदाई समारोह में शामिल नहीं हुईं। कुछ लोगों ने इसका कारण यह बताया कि युवा पत्नियाँ उनसे विदा होने को तैयार नहीं थीं। अन्य लोगों ने आरोप लगाया कि... रानियों को, विशेषकर मुझे, कुंती को, गैर-क्षत्रिय शैली में व्यवहार करने के लिए फटकार लगाई गई।

"यह अभियान छह चंद्र महीनों तक चला। एक वन हमारे नियंत्रण में आ गया और उसके निवासी डरकर भाग गए। एक पड़ोसी राजा ने हार मान ली और नदी के हमारे किनारे के क्षेत्र पर अपना अधिकार छोड़ दिया। उसने भेंट के रूप में जो रथ, घोड़े और आभूषण भेंट किए थे, वे हस्तिनावती पहुँच गए। नगरवासियों ने उनका स्वागत किया। एक अन्य स्थान पर एक पहाड़ी जनजाति पराजित हुई और उसने विजेता को भेंट के रूप में सौ कंबल भेजे। कुरु वंश का नाम और यश आर्यों में दूर-दूर तक फैल चुका था। लेकिन राजा पांडु अभी भी अपने विजय अभियान पर निकले हुए थे। इस दौरान उन्होंने एक बार भी नगर का दौरा नहीं किया। आख़िरकार, वे घोड़े पर आधे दिन की यात्रा से ज़्यादा दूर नहीं थे। फिर भी वे कभी नहीं आए। दस सुंदर सेविकाएँ उनके रथ के पीछे-पीछे चलती थीं। पराजित शासक विजयी पांडु को तीन-चार स्त्रियाँ भेंट करके उनके महिला दल को बढ़ा रहे थे। पूछा गया, 'राजकुमार को अपनी पत्नियों की क्या ज़रूरत है, जब उनके पास इतनी स्त्री-मंडली है?' मेरे एक मित्र ने मुझे बताया कि निवासी उनके बारे में कितने गर्व से बात करते थे। उसे यह खबर महल की नौकरानियों से मिली। उत्तर दिशा में, हिमालय में गंगाद्वार के पार, उसने एक गंधर्व को परास्त किया था और उससे विजय भेंट के रूप में पाँच सुंदर स्त्रियाँ प्राप्त की थीं, जो गायन, नृत्य और शरीर-

सज्जा में निपुण थीं। उसने लाल ऊन से बने दस कालीन भी भेजे थे, जिन पर सुंदर कढ़ाई की गई थी।

"मैड्री मुझसे हर दिन मिलने आती थी। हमारी बातचीत का मुख्य विषय हमारी साझा बदकिस्मती होती थी। वह ज़्यादातर बातें करती थी और मैं आमतौर पर सिर्फ़ सुनता रहता था। जब उसने सुना कि राजकुमार ने पराजितों द्वारा विजयी को भेंट के रूप में पाँच पहाड़ी सुंदरियों को जीत लिया है, तो वह डर गई। मैंने उसे दिलासा देते हुए कहा, 'तुम क्यों डर रही हो? उसके लिए सबसे सुंदर लड़की का भी क्या उपयोग है?'"

माद्री, 'नहीं, मेरा मतलब यह था। ये गंधर्व कन्याएं यौन कला के बड़े-बड़े रहस्य जानती हैं। उनकी यह प्रतिष्ठा है कि वे सबसे अनिच्छुक पुरुष को भी तीर चलाने के लिए तैयार एक तल्लीन धनुष में बदल देती हैं!'

कुंती ने कहा, 'मान लीजिए धनुष में शक्ति नहीं है। तो उसे ट्यून करने से क्या लाभ होगा?'

माद्री ने कहा, 'बहन, तुम्हें नहीं पता। हमारे क्षेत्र में वे किसी भी धनुष को ठीक कर सकते हैं।'

कुंती ने पूछा, 'तो फिर तुमने इतने दिनों तक इसे खुद ही क्यों नहीं ट्यून किया?'

माद्री ने कहा, 'मैंने अपनी जानकारी के अनुसार यथासंभव प्रयास किया। इससे राजा प्रसन्न और उत्साहित तो होते थे, लेकिन इसका कोई परिणाम नहीं निकला।'

कुंती ने उत्सुकता से पूछा, 'आपने क्या किया?'

"माद्री, शरमाते हुए और हिचकिचाते हुए, पांडु के पुरुषत्व पर काम करने के अपने तरीकों का वर्णन करने लगी। ये ऐसे तरीके और तकनीकें थीं जिनकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी, जानना तो दूर की बात है। जब मैंने ये बातें अपनी सहेली को बताईं, तो वह भी आश्चर्यचकित रह गई।"

कुंती, माद्री, तुम्हें ये सब कैसे पता चला?

माद्री ने कहा, 'हमारे देश में, बुजुर्ग महिलाएं छोटों को इन कलाओं और कौशलों की शिक्षा देती हैं। क्या आपके मायके में किसी ने आपको इन चीजों के बारे में नहीं सिखाया?' उन्होंने यह बात बहुत स्वाभाविक ढंग से कही।

तब मैं अपनी अज्ञानता के लिए खुद को बार-बार कोसने लगी। मुझे माद्री से ईर्ष्या भी होने लगी। मान लो, एक दिन वह अपने पति की नपुंसकता ठीक करने में सफल हो गई और उसे इसका लाभ मिला। अगर उसने पहले ही उसे एक पुत्र को

जन्म दे दिया, तो रानी के रूप में मेरा पद समाप्त हो जाएगा। चतुराई से मैंने उससे यह रहस्य उगलवा लिया। उसने मुझे वह सब कुछ बता दिया जो वह जानती थी। इस तरह गुरु-शिष्य के रूप में हमारा नया रिश्ता शुरू हुआ। हम घोर एकांत में मिलते थे। एक गुरु के रूप में वह मुझे तकनीक और तरकीबें बतातीं और मैं अपनी कल्पना का उपयोग करके सीखती। नपुंसक पति से विवाहित कौन सी स्त्री घुटन महसूस नहीं करेगी? माद्री द्वारा दिए गए ज्ञान को आत्मसात करने के बाद, मैं स्वयं हर समय कामुक रूप से उत्तेजित रहने लगी। जल्द ही मैं राजकुमार की छवि को लगभग भूल गई और उस पवित्र भिक्षु को याद करने लगी जिसने विवाह से पहले मेरी कामुक इच्छा को जगाया और संतुष्ट किया था, और कल्पना में, उस पर माद्री की विधियों का प्रयोग करने लगी। मेरी दिली इच्छा थी कि कम से कम वह फिर से मेरे रास्ते में आ जाए। यह इच्छा मुझे जला रही थी।

छह महीने बाद राजकुमार अपने अभियान से लौटे। पूरा शहर उत्सव के रंग में रंगा हुआ था। घरों के अग्रभाग लाल मिट्टी की धारियों से ढके हुए थे, धूल से बचने के लिए सड़कों पर पानी डाला गया था, और हर जगह दरवाजे और फाटक हरे पत्तों से सजे हुए थे। हाथी और घोड़े भी खूबसूरती से सजाए गए थे। बूढ़े भीष्म स्वयं अपने पुत्र का भव्य स्वागत करने के लिए शहर के मुख्य द्वार पर गए। अनिच्छा से ही सही, मैं भी उत्सवों में शामिल हो गया। मैं बालकनी पर खड़ा होकर सारी कार्यवाही देखने लगा। माद्री भी वहीं खड़ी थी। सबसे पहले युद्ध के उपहारों से लदी गाड़ियों का जुलूस निकला, और युद्ध में जीती गई सुंदर युवतियों को सजे हुए रथों में प्रदर्शित किया गया। अंत में राजकुमार आए। वे दुबले-पतले लग रहे थे। उनके चेहरे पर चिंता की झलक थी।

"अपनी विजयी वापसी के दो दिन बाद वह मेरे महल में आया। उससे पहले का पूरा दिन मैं सपनों में डूबी रही। एक ऐसे डॉक्टर के सपने जो नई दवाओं और तकनीकों का इस्तेमाल करने के लिए तैयार था। वह मेरे पास आया और मेरे सामने बैठ गया। उसका चेहरा अभिमानी था, और झूठ का वह जाल जिसे मैंने पहले नष्ट कर दिया था, मानो फिर से उग आया था। मुझे घृणा महसूस हुई। मेरी आँखों में देखने में असमर्थ, उसकी आँखें इधर-उधर भटक रही थीं। मैं चुपचाप बैठी रही। अंत में उसने कहा, 'कुंती, मुझे अभियान पर निकले छह महीने हो गए हैं।'"

मुझे और भी घृणा महसूस हुई। मैंने एक शब्द भी नहीं कहा। फिर उसने कहा, 'क्या तुमने सुना, कुंती, मैंने कहा था छह महीने - छह महीने की विजय।'

“खैर, मुझे छह बार मासिक धर्म हुआ।” ये शब्द अपने आप मेरे मुंह से निकल गए।

गर्दन घुमाकर उसने मेरी ओर देखा। दाहिना हाथ उठाकर उसने मेरे गाल पर ज़ोरदार थप्पड़ मारा, जिससे थप्पड़ की गर्मी से मेरा गाल सूज गया। उसकी उंगलियाँ मज़बूत और सुगठित क्षत्रिय थीं। मैं चुप रहा। मैं रोया नहीं। मैंने गुस्से में एक शब्द भी नहीं कहा। मेरी आँखों में एक भी आँसू नहीं था।

कुंती अतीत से जाग उठी, उसने पानी में अपनी छवि देखी। साठ साल बीत चुके थे। भला कोई सब कुछ कैसे याद रख सकता है? वह आत्मचिंतन में डूब गई — "हाँ, मुझे इतना तो साफ़-साफ़ याद है। मैंने उसकी क्रोधित निगाहों का सामना स्थिर और एकाग्रता भरी निगाहों से किया। यह उसके क्रोध की आग में घी डालने जैसा था। उसकी उस नज़र से धुआँ निकलने लगा। फिर वह भड़क उठी, जलने लगी। फिर वह राख में तब्दील हो गई। राख ज़मीन पर गिरने लगी। उसके माथे पर पसीने की बूँदें थीं। उसकी गर्दन के चारों ओर पसीना था, उसे भिगो रहा था। मुझे शर्म महसूस हुई। 'हे भगवान, आपको गर्मी लग रही है,' मैंने कहा और अपनी साड़ी से उसकी गर्दन, छाती और पीठ पर लगे पसीने को धीरे से पोंछा। वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। 'कुंती' कहते हुए उसने मेरा हाथ थाम लिया। वह मेरे करीब आया, अपना चेहरा मेरी छाती से सटा लिया और बच्चे की तरह रोने लगा। उसके मुँह से एक भी शब्द नहीं निकला। मुझे खुद पर गुस्सा आया। मैंने उसे कसकर पकड़ लिया। मेरा शरीर उसके बराबर बड़ा था, मेरी चौड़ी छाती, ऊँचे कंधे, विशाल शरीर। मैं उसके योद्धा जैसे शरीर को पूरी तरह से थाम सकती थी, माद्री को नहीं, जो दुबली-पतली थी। शायद कोई और नहीं।" उस महिला का शरीर मेरे जैसा था। उसे प्यार से गले लगाते हुए मैंने उसे गर्माहट दी। मुझे भी गर्माहट महसूस हुई। उसका सिर अपने भरे-पूरे स्तनों के बीच दबाते हुए, मैंने बिना कुछ कहे आह भरी और सिसकियाँ लीं। उसकी आँखों से गर्म आँसू बहने लगे। मैं भी रोने लगी। उसका गोल, बालों से ढका सिर, छाती और कंधे अभियान में मिले ज़ख्मों से भरे हुए थे। तीरों से लगे ज़ख्म सूख चुके थे। हालाँकि, सभी नहीं, कुछ अभी भी रिस रहे थे।

शाम तक वह मेरे साथ रहा, एक शब्द भी नहीं बोला। एक महीने तक वह वापस नहीं लौटा। मैंने उसे बुलवाया, पर कोई फायदा नहीं हुआ। मुझे पता चला कि वह माद्री से भी मिलने नहीं गया था। अभियान से लौटने के बाद वह एक बार भी उसके

पास नहीं गया था। मुझे बताया गया कि वह गंगा नदी के उस पार एक झोपड़ी में अकेला रह रहा है। कुंती ने अपना सिर उठाया और नदी के उस पार देखा। हाँ, इतने वर्षों बाद भी वह उस जगह को पहचान सकती थी, लेकिन नदी अब चौड़ी होकर उस जगह को अपने अंदर समा चुकी थी। 'विजयी राजकुमार ने अपनी दो पत्नियों और कई रखेलों को छोड़कर एक झोपड़ी में अकेले रहने का फैसला किया था। वहाँ वह पुरोहितों की संगति में वेदों के अध्ययन में लीन रहता था। लेकिन यहाँ महल में मेरे मासिक धर्म नियमित रूप से चल रहे थे। तब मुझे उसके लिए न तो क्रोध था और न ही घृणा। अब वह मुझे धोखा नहीं दे रहा था। वह खुद को भी धोखा नहीं दे रहा था। मुझे आश्चर्य होता था कि क्या मैं सचमुच उसकी पत्नी बन गई थी। उसने अचानक झोपड़ी में रहने का फैसला क्यों किया?' आखिर उसने अचानक ही विजय यात्रा, विश्व विजय अभियान पर निकलने का फैसला क्यों किया? अब वह एक अलग तरह के अभियान पर क्यों निकला था, अपनी आत्मा को जीतने के लिए? ये क्षत्रिय हर जगह एक जैसे ही होते हैं। हमेशा अतिभोग में लिप्त, हमेशा दिशाहीन, हमेशा आत्ममुग्ध।

"अचानक एक दिन वह अकेले ही मेरे पास आया। सूरज ढल रहा था। मेरे मासिक धर्म दो-तीन दिन पहले ही समाप्त हुए थे। वह अंदर आया। पास आकर बैठ गया। फिर उसने मेरा बड़ा हाथ अपने हाथ में ले लिया। अब उसके चेहरे पर अहंकार का कोई निशान नहीं था, और झूठ का घिनौना जाल भी गायब हो गया था। न ही मेरी आँखों से नज़रें मिलाने की कोई कोशिश थी। उसने सीधे मेरी ओर देखा, मेरी आँखों में स्थिर और शांत भाव से देखते हुए दृढ़ और निर्णायक स्वर में कहा, 'कुंती, मुझे राज्य नहीं चाहिए। मुझे राजा की उपाधि नहीं चाहिए। मैंने अपने शेष दिन हिमालय में तपस्या करते हुए बिताने का निश्चय किया है। मैं बहुत बूढ़ा नहीं हूँ, केवल चौबीस वर्ष का हूँ। तुम्हारी ही उम्र का। मुझे किसी तरह यह पूर्वाभास हो रहा है कि मैं ज्यादा दिन जीवित नहीं रहूँगा। मैं संसार त्यागने के अपने इस नए निर्णय को पूरा करने के लिए तुम्हारी अनुमति चाहता हूँ, क्योंकि विवाहित पुरुष के लिए पत्नी की सहमति के बिना ऐसा करना कानून के विरुद्ध है, धर्म के विरुद्ध है।'"

"मेरा पूरा शरीर - उसकी चौड़ाई, उसकी ऊंचाई और उसका आकार - मानो ढह गया और धरती में समा गया। मुझे बहुत बुरा लगा कि मैंने अपने पति के आत्मविश्वास और आत्मसम्मान को इस हद तक चकनाचूर कर दिया था। हां, हां,

मैंने उनके दोनों हाथ अपने हाथों में लिए और विनम्रता से कहा, 'अब अपनी इस पत्नी को क्षमा कर दीजिए।'"

उन्होंने आत्म-आलोचनात्मक और आत्म-जागरूक भाव से कहा, 'नहीं, आपने कोई गलती नहीं की है। मैंने इस पूरे मामले पर इसके सभी पहलुओं से गहनता से विचार किया है।'

मैंने जवाब दिया, 'मान लीजिए कि आप प्रायश्चित का विचार छोड़ देते हैं। फिर क्या होगा?'

उसने पूछा, 'मैं यहाँ रहकर क्या कर सकता हूँ, जब मैं गर्भाधान नहीं कर सकता और हर महीने तुम्हें मासिक धर्म होता है, और वह भी बिना किसी रुकावट के?'

मैं क्या कह सकता था? लेकिन पाप करने का डर मुझे भी सता रहा था। मैं चुप रहा।

उन्होंने कहा, 'स्वयंवर में आपका विवाह हुआ था, आप ही वह थीं जो स्वीकृत और स्वीकृति प्राप्त करके आई थीं। धार्मिक दृष्टि से पहली पत्नी ही वास्तविक पत्नी होती है। इसके अलावा आप हमारे लिए ढेर सारे उपहार भी लाई थीं। आपकी अनुमति अत्यंत महत्वपूर्ण है।'

"मुझे खुशी हुई।" यह खुशी माद्री के प्रति ईर्ष्या से उपजी थी।

"राजकुमार ने अगले दिन मुझसे मिलने का वादा किया और चले गए। वे सीधे नदी पार करके झोपड़ी की ओर चले गए, यही नदी।"

मैं उसके लिए तीव्र इच्छा से अभिभूत थी, और उसके बिना जीना मेरे लिए असंभव लग रहा था। हमारे बीच छल और आत्म-धोखे की दीवार टूटने के एक महीने बाद भी यह असंभव सा लग रहा था। अब उससे अलग होना मेरे लिए असंभव था, क्योंकि हम अंततः एक हो गए थे, एक-दूसरे को अपने सच्चे स्वरूप में पा लिया था। क्यों न मैं पति के साथ उसके तपस्या के जीवन में चलूँ? मैं यहाँ वैसे भी क्या कर सकती थी? क्या मासिक धर्म को सहन करने के पाप का कुछ अंश मुझ पर भी नहीं लग जाएगा? उसने कठोर तपस्या के द्वारा उस पाप को धोने का निश्चय कर लिया था। मैं यहाँ क्या कर सकती थी, हर महीने अपने मासिक धर्म के रक्त को बिना रुके, बिना निषेचित हुए बहते हुए देखकर? शायद, मैं भी कुछ तपस्या कर सकती थी, हालाँकि मुझे इसके बारे में बहुत कम जानकारी थी। एक बात निश्चित थी - पाप का भय मुझे जकड़ चुका था। अपने मायके लौटने या उसके बिना यहाँ रहने के बजाय, उसके साथ उसकी तपस्या में जाने का विचार मुझे बहुत

आकर्षक लग रहा था। अगले दिन जब वह मुझसे मिलने आया, तो मैंने उससे यह बात कही। उसने कहा, 'देखो, कुंती, तुम एक 'राजकुमारी', और फिर उसने तपस्या के जीवन में निहित खतरों और कठिनाइयों का वर्णन करके मुझे डराने की कोशिश की। मुझे लगा कि ये वही सामान्य बातें हैं जो पति अपनी पत्नियों से कहते हैं। मेरे दृढ़ निर्णय से उसे संतुष्टि मिली, यह उसके चेहरे पर स्पष्ट दिखाई दे रहा था। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि मुझे उसके साथ जाने से रोकने का उसका प्रयास महज़ औपचारिकता थी या वह सोच रहा था कि अगर वह तुरंत मान गया तो इससे उसके पुरुष गौरव को ठेस पहुंचेगी। इस विचार ने मुझे क्रोधित कर दिया।

"मैड्री ने भी ऐसा ही किया। मैंने उसे समझाने की कोशिश की, और कहा, 'तुम एक कोमल युवती हो। संन्यासी का जीवन तुम्हारे लिए नहीं है।'

उसका जवाब था, 'मैं यहाँ रहकर क्या करूँ? मैं यहाँ अकेले कैसे रहूँगी?', 'देखो बहन, तुम जो इतने सारे उपहार लाई थी, जा रही हो। अगर मैं, जिसे दहेज देकर खरीदा गया था, पीछे रह जाऊँ तो लोग क्या कहेंगे?' उसने मुझसे बेबाकी से पूछा। मुझे उस पर दया आई और मैंने उसे गले लगा लिया, मेरा दाहिना हाथ उसके चारों ओर लिपट गया। उसका सिर झुका हुआ था, वह रो रही थी। उसका शरीर दुबला-पतला और कोमल था। उसका चेहरा इतना कोमल था कि हार भी जीत जैसी लगती थी। उसकी पलकों के बीच की झुर्रियों में भरा काला रंग, जो बूंदों की तरह चमक रहा था, उसे और भी मनमोहक बना रहा था। मैंने उसे फिर से गले लगाया, जिससे मुझे गर्माहट मिली। उसने विनती की, 'बहन, राजकुमार पूरी तरह से तुम्हारे वश में है। लगता है वह तुम्हारी अनुमति के बिना कुछ नहीं करेगा। कृपया उससे कहो कि वह मुझे भी ले जाए। बल्कि तुम मुझे अपने साथ ले जाओ।'

मैंने पूछा, 'आपको यह कैसे पता चला?'

माद्री, 'क्या मैं इतनी अंधी हूँ कि इसे देख नहीं सकती?'

पांडु के तपस्या के लिए जाने पर सबसे अधिक दुखी भीष्म थे। यह स्वाभाविक था। एक शासक जो अभी-अभी विजय के सफल अभियान से लौटा था और जो राज्य का विस्तार करके कुरु वंश का नाम और ऊँचा कर सकता था, वह अपने बूढ़े मामा पर शासन का भार छोड़कर जा रहा था। लेकिन बूढ़ा भीष्म बेबस था। पुत्र अपने निर्णय पर अडिग था। दोनों के बीच बहस हुई। पुत्र ने कहा, "मैं हमेशा के लिए नहीं जा रहा हूँ। यहाँ बहुत से अनुभवी ऋषि और औषधीय जड़ी-बूटियाँ हैं। यहाँ चिकित्सा के विशेषज्ञ भी हैं, जो रोगों के उपचार के महान रहस्य जानते हैं। मैं

पुत्रों का पिता बनकर लौटूँगा। तब तक कृपया शासन का भार आप ही संभालिए।" भीष्म को पुत्र का निर्णय स्वीकार करना पड़ा। मुझे याद है कि उसी समय राजा पांडु के अंधे भाई दुर्योधन के पिता धृतराष्ट्र अपने छोटे भाई के पास आए और आँखों में आँसू भरते हुए बोले, "अगर आप इस तरह चले गए तो राज्य का क्या होगा? मेरा क्या होगा?" कुरु वंश की सारी जिम्मेदारी अब आप पर है। चूंकि आपने जाने का निश्चय कर लिया है, इसलिए मैं आपको नहीं रोकूंगा। लेकिन मैं आपसे जल्द लौटने की विनती करता हूं।' मेरा मानना है कि बड़ा भाई मुझसे सिर्फ दस या पंद्रह दिन बड़ा था।

"दादी और सास से मेरा बहुत कम संपर्क था। दादी सत्यवती एक अलग-थलग घर में अकेली रहती थीं और किसी से नहीं मिलती थीं। उन्हें और उनकी ध्यान साधना को ही महत्व था। यह कहना भी मुश्किल था कि वह ध्यान साधना थी या तपस्या। मेरा मानना है कि वह मूल रूप से एक मछुआरे परिवार से थीं। अब वह क्षत्रिय से भी अधिक क्षत्रिय जैसी व्यवहार करती थीं, अपना सारा ध्यान आध्यात्मिक और परागत मामलों पर केंद्रित रखती थीं। मेरी सास, अंबालीके, और धृतराष्ट्र की माता, अंबिके, भी इसी तरह का जीवन जीती थीं; उन्होंने अपनी सास के पदचिन्हों पर चलना शुरू किया। वे उनके करीब रहती थीं, उनकी सेवा करती थीं। उन्होंने घरेलू कामों से पूरी तरह दूरी बना ली थी। वे अपनी बहुओं से बहुत कम या न के बराबर बात करती थीं। उन्होंने पूर्ण एकांत जीवन व्यतीत किया। पुत्र के तपस्या के लिए जाने का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, उन्हें व्यक्तिगत रूप से कोई दुख नहीं हुआ। उनका एकमात्र अफसोस यह था कि राज्य राजाविहीन हो गया था। इसके अलावा, पत्नियां भी जा चुकी थीं। फिर भी उन्हें कुछ हद तक तसल्ली थी कि वैद्य उनकी मदद के लिए आए थे।" और जहां भी वे अपने बेटे की मदद करने जाएंगे, वहां उन्हें औषधीय जड़ी-बूटियां मिलेंगी।

जब हम जाने के लिए तैयार हुए, तो पूरा शहर शोक में डूबा हुआ था। एक युवा, मात्र चौबीस वर्ष का राजकुमार, एक विजेता, जिसने शहर का नाम और गौरव बढ़ाया था, जा रहा था। शहरवासियों को अपने राजकुमार की वीरता और विजय पर गर्व था। उन्हें यह भय सता रहा था कि कहीं कोई बाहरी आक्रमणकारी उनके शहर पर हमला करके उनके गौरव को नष्ट न कर दे। वे सभी राजकुमार और उनकी पत्नियों के पीछे-पीछे नदी के किनारे तक गए और उनसे विनती की कि वे जल्द लौटकर विश्व विजय के एक बड़े अभियान में शामिल हों। उन्होंने तब तक

विदाई का इंतज़ार किया जब तक कि तीनों नदी के दूसरे किनारे पर नहीं पहुँच गए।

"हिमालय की हमारी यात्रा के दौरान ही मुझे और पांडु को वैवाहिक बंधन का सच्चा अनुभव हुआ। हमने मान लिया था कि यह वह अवस्था है जिसमें पति-पत्नी यौन संबंध त्याग देते हैं और मिलकर आध्यात्मिक और परागत पुण्य प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। हम घास से बुने और लकड़ी के तख्तों पर करीने से बिछाए गद्दे पर साथ सोते थे। आने वाले जीवन, परलोक का सपना हमारे सामने उभर आया। लेकिन माद्री एक अलग झोपड़ी में एक अलग गद्दे पर अकेली सोती थी। यद्यपि हम दोनों पति से शारीरिक संतुष्टि से वंचित थीं, कम से कम मुझे, स्वयंवर में विजयी और मुख्य रानी होने के नाते, उनकी शारीरिक निकटता का सुख प्राप्त था। मैं व्यावहारिक रूप से पति की यौन नपुंसकता को भूल चुकी थी। भला कोई उस पति के प्रति इस कमी को कैसे दोषी ठहरा सकता है जिसने मेरे लिए सब कुछ इस तरह समर्पित कर दिया जैसे वह एक बच्चा हो? हाँ, यही कमी थी जिसने हमें इस दुर्दशा में धकेल दिया था। मैं यहाँ पूर्णतः स्वामी थी, एकमात्र स्वामिनी। माद्री ने इसे पहचान लिया था। उसने कभी अवज्ञा का एक शब्द भी नहीं कहा, कभी मेरे निर्देशों का उल्लंघन नहीं किया। मैंने भी नहीं किया।" उस पर किसी भी प्रकार का खुला और प्रत्यक्ष अधिकार नहीं जताना चाहिए। एक तरह से, यह काफी सुखमय जीवन था। समय-समय पर भीष्म चावल, गेहूं, गुड़, तिलहन, घी, कंबल, साड़ियाँ और धोती जैसी खाद्य सामग्री से लदे गधे भेजा करते थे। वे खाना पकाने और परोसने के लिए महल में सामान्यतः कार्यरत नौकरों की तुलना में कम नौकर भेजते थे, और अनुष्ठानिक अग्नि को प्रज्वलित रखने के लिए एक कुशल पुजारी को भी भेजते थे।

हस्तिनावती राजधानी से गंगाद्वार लगभग चार दिन की यात्रा पर था। मैं अपने पति के साथ कदम से कदम मिलाकर चलती रही, कभी नहीं थकी; लेकिन माद्री थक गई थी। मैंने उससे कहा कि उसे घोड़े पर सवार हो जाना चाहिए। उसे बुरा और शर्मिंदा महसूस हुआ होगा कि जब हम दोनों चल रहे थे तो वह घोड़े पर सवार थी। पांडु ने कहा, 'कुंती के सुझाव के अनुसार करो।' न केवल पैरों की लंबाई और गति एक समान होनी चाहिए, बल्कि चलने का तरीका भी। मेरा शरीर मेरे पति के समान था। चलते हुए मेरा हाथ पकड़कर राजकुमार ने कहा, 'कुंती, आर्यों में अपने वतन की पत्नियाँ लाने का रिवाज है। मैं अब से तुम्हें तुम्हारे मायके के नाम, पृथा से पुकारूँगा। तुम्हारे शरीर की बनावट देखकर मुझे गर्व होता है।' मैं शर्म से लाल हो

गई। मैं झुककर चलने लगी। गंगाद्वार पहुँचने से बहुत पहले ही हमें विशाल पर्वतों की नीली रूपरेखा दिखाई देने लगी थी। यह एक अद्भुत दृश्य था, जिसने मुझे अवाक कर दिया। यह केवल हरे-भरे जंगल नहीं थे, जिनकी मुझे अपने देश और अपने देश दोनों में आदत थी। मेरे पति का, जिसने उन पहाड़ों को महसूस कराया। वह नीला रंग आसमान के नीले रंग से मिलता-जुलता था, ऊँचाई तक उठकर उसमें विलीन हो जाता था। मैंने पूछा, 'क्या बस यही है?'

उन्होंने कहा, "जी हां, यह तो शुरुआत है। हमें इसे पार करना होगा और फिर कुछ और पर्वत श्रृंखलाओं को पार करना होगा। पहाड़ों में पंद्रह दिनों तक चढ़ाई और उतराई करने के बाद, हम देवों की भूमि के आरंभिक बिंदु पर पहुंच जाएंगे।"

मेरा उत्साह बढ़ गया, एक नई दुनिया में प्रवेश करने और जीने का उत्साह। मैं खुशी से चिल्लाने को मजबूर थी। बचपन की यादों और पति के घर के सारे बोझ से पूरी तरह मुक्ति का उत्साह। एक नई शुरुआत का उत्साह। मुझे लगा कि यही असली खुशी का साम्राज्य है। क्यों? मैं समझा नहीं सकती थी। वह सहेली जो कभी-कभार मेरे पास आती थी, कहती थी, 'प्रिता, क्या तुम्हें पता है तुम्हारे चेहरे पर कैसी खुशी झलक रही है?' मुझे उसके कहने की ज़रूरत नहीं थी। मैंने इसे महसूस किया जब मैंने चारों ओर के नीले आसमान को देखा, जो ऊपर-नीचे चढ़ता हुआ, पहाड़ी इलाके में घूमता हुआ आगे बढ़ रहा था। मुझे ऐसा लगा कि मैं अपने सहारे वाली छड़ी से आसमान को चीर दूं ताकि वह मुझ पर और अधिक आनंद बरसाए। मन की यह अवस्था दो-तीन दिन तक बनी रही। फिर मन सुस्त पड़ गया। उत्साह कम हो गया। बांस की छड़ी के सहारे उठाया गया हर कदम दिल का बोझ बढ़ाता जा रहा था। यह निश्चित रूप से शरीर की थकावट नहीं थी। मैं समझ नहीं पा रही थी कि ऐसा क्यों हो रहा है। पहाड़ों का यही नियम है। कारण यह है कि एक पल में वे आपके आनंद के सागर को भर देते हैं, और अगले ही पल आपको दुःख के सागर में डुबो देते हैं। क्यों और क्या? यह कोई निश्चित रूप से नहीं जानता।

"अगर मुझे ठीक से याद है, तो हम तेरह या चौदह दिन बाद अपने गंतव्य पर पहुँचे। सेवकों के अग्रिम दल ने पहले ही एक आश्रम बना लिया था। यह एक ऐसी जगह पर था जिसके दक्षिण में एक पर्वत और उत्तर में उससे भी ऊँचा पर्वत था। उनके बीच लहरदार, हरा-भरा पहाड़ी इलाका था। ऊबड़-खाबड़ भूभाग के बीच हमारे निवास के लिए समतल भूमि का एक छोटा सा हिस्सा साफ किया गया था।

चारों ओर इलायची के पौधे थे, फूलों की तीव्र सुगंध थी। चारों ओर दावना के सुगंधित पत्ते घनी तरह से फैले हुए थे, जो देखने वाले की यादों को ताजा करके उसे मदहोश कर देते थे। उनकी सुगंध पहाड़ों की गहराई में समाई हुई थी। फूलों की कितनी समृद्ध विविधता है!" राजा पांडु ने घोषणा की, "यहीं पर हमें रहना है।"

मैंने कहा, 'महाराजा जी, यह जगह इतनी खूबसूरत है कि देखकर आनंद से पागल हो जाते हैं। रास्ते भर फूल और दावना के पौधे खिले हुए थे। शहर से उन्नीस दिन की यात्रा के बाद, पसीने से तरबतर, हाथ-पैरों और मांसपेशियों में असहनीय दर्द और सांस फूलने के बावजूद, आपने इस जगह को क्यों चुना?'

उन्होंने कहा, 'प्रिथा, तुम खुद ही इस रहस्य को सुलझाओ', और वे सचमुच बहुत थके हुए थे। उनके पैर की छड़ी पर भारी सहारा लेते हुए ये शब्द बड़ी मुश्किल से निकले।

मैंने बहुत सोचा। लेकिन, मैं सच्चाई का पता नहीं लगा सका। अंत में मैंने कहा, 'तुम ही बताओ।' हमारे पास एक विशाल झोपड़ी थी, जिसकी छत ढलान वाली थी जिससे बारिश का पानी बिना रिसने के बह जाता था: अंदर की दीवारें सूखी घास से ढकी थीं जो सर्दियों की ठंड को रोकती थीं। उसके पीछे एक और झोपड़ी थी, जो थोड़ी छोटी थी। उसके बगल में एक पूजा कक्ष था और एक सरसरी नज़र से ही यह स्पष्ट हो जाता था। पास ही रसोईघर था। फिर नौकरों की झोपड़ी थी। ठीक पीछे घोड़ों का अस्तबल था। सभी संरचनाएं एक ही तल पर नहीं बनी थीं। वे ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर बिखरी हुई थीं। उनके बीच पत्थर की सीढ़ियाँ थीं।

उन्होंने मुझे याद दिलाया, 'आपने मेरे सवाल का जवाब नहीं दिया।'

मैंने पूछा, 'यह क्या था?'

उसने कहा, 'मैंने आपसे यह पता लगाने के लिए कहा था कि मैंने इस विशेष स्थान को क्यों चुना।'

मैंने कहा, 'बेशक, मैं खुद से पूछा गया सवाल भूल गया था। यह जगह ऐसी ही है, जो इंसान को भूलने पर मजबूर कर देती है। हाँ, आपने इसे क्यों चुना?'

उन्होंने अपनी उठी हुई छड़ी से इशारा करते हुए कहा, "वह पर्वत देखो। वहीं से देवताओं का क्षेत्र शुरू होता है। इसके ऊपर और उससे आगे उनका पूरा इलाका है।"

मैंने उसे बीच में रोकते हुए पूछा, 'इसका क्या मतलब है?'

उन्होंने कहा, "कुरु, यादव, मद्रास, हम अलग-अलग लोगों को पहचानने के लिए ऐसे नामों का इस्तेमाल करते हैं। इसी तरह, वहाँ देव कहलाने वाले लोग रहते हैं, और उनका इलाका उस पर्वत से शुरू होता है। कहा जाता है कि वे आर्यों के मूल पूर्वज थे। उनके राजा को आज भी इंद्र कहा जाता है। उनके पुरोहित को बृहस्पति कहा जाता है। उनके नाम वही हैं जो हम अपने धार्मिक अनुष्ठानों में इस्तेमाल करते हैं, जैसे अग्नि, वायु आदि। उनका राज्य आज भी उसी तरह संगठित है। आर्यों की धरती पर रहने वाले लोग औषधीय जड़ी-बूटियों और कौशलों में उतने पारंगत नहीं हैं। वे अमृत का रहस्य जानते हैं, अमरता का अमृत। वे ऐसी जड़ी-बूटियों के बारे में जानते हैं जो कायाकल्प कर सकती हैं और खोई हुई जवानी को वापस ला सकती हैं। ये सब चीजें आपको वहीं मिलेंगी। लेकिन वे चावल, गेहूँ और हमारे यहाँ उगने वाले दूसरे अनाज नहीं उगाते। ये उनके लिए दुर्लभ हैं। इन अनाजों को देखकर उनके मुँह में पानी आ जाता है। अगर आप उन्हें कुछ अनाज उनकी औषधीय जड़ी-बूटियों के बदले दे दें, तो शायद मेरी बीमारी ठीक हो जाए और मैं संतान उत्पन्न कर सकूँ..." उनकी आवाज धीमी हो गई।

मैं स्तब्ध रह गई, मानो मेरे पैरों तले ज़मीन खिसक गई हो। जब उसने प्रायश्चित करने की बात कही, तो मुझे कुछ मानसिक संतुष्टि मिली। मेरे लिए, जिसने पति, वैवाहिक जीवन और संतान त्याग दी थी, और जिसका जीवन में केवल एक ही लक्ष्य था - मासिक धर्म के प्रवाह को व्यर्थ करने के पाप का प्रायश्चित करना, केवल एक ही सर्वोपरि उद्देश्य था - प्रायश्चित। वास्तव में, यह विचार तो उसने स्वयं ही मेरे मन में डाला था। अब वह मेरे मन को भूली हुई इच्छाओं की ओर मोड़ रहा था। मैं इसके लिए तैयार नहीं थी। मैंने कहा, 'नहीं, नहीं, नहीं, हम ऐसी बातों को त्याग देंगे।'

उन्होंने पूछा, "क्यों, क्या तुम माँ बनने के लिए उत्सुक नहीं हो?"

मैं सीधे-सीधे कहता हूँ, 'नहीं'।

उन्होंने पूछा, 'क्या कुरु वंश को आगे नहीं बढ़ना चाहिए? तुम, इस परिवार में बहू बनकर, ऐसी बातें कैसे कह सकती हो?' मैं और खुलकर कैसे बोलती और उन्हें अपनी बात समझाती? हमें यही रास्ता चुनना था, इस उम्मीद के साथ कि शायद कुछ पहाड़ी लोग कारगर औषधीय जड़ी-बूटियाँ दे देंगे। अगर हम वहीं लौट जाते जहाँ से हमने छोड़ा था, तो वही पीड़ा, चिंता और निराशा फिर से दोहराई जाती। उनके प्रति मेरा तिरस्कार क्रोध में बदल गया और मैंने पूछा, 'एक बार फिर

यह क्रूरता क्यों?' लेकिन अगर मैं उन्हें ये सब सीधे-सीधे बता देती, तो उन्हें दुख होता। मुझे यकीन था कि कुरु वंश को आगे बढ़ाने का बोझ उठाने वाला यह व्यक्ति इतना रोएगा कि उसके आँसू मेरी छाती तक भीग जाएँगे। मुझे खुद को इच्छाहीन बनाना होगा। मैंने फैसला किया कि मुझे उनकी उम्मीद की कली नहीं तोड़नी चाहिए। फैसला करना आसान था, लेकिन कुरु परिवार में बहू बनकर कोई इच्छाहीनता के बिना कैसे जी सकता है? वे पाँचों कुरु वंश के नहीं हैं, मैं उन्हें पांडव नहीं मानता और उन्हें केवल कुंती की संतान कहूँगा/ दुर्योधन ने यही कहा था। उसे क्या पता था? मैंने अपने मन को कुचल दिया, अपनी इच्छाओं को दबा दिया और पांडु की आशा को टूटने नहीं दिया, मैंने कुरु परिवार की बहू के रूप में अपना कर्तव्य निभाया! अपने होंठ भींचते हुए, कुंती ने परछाई में खुद को देखा। मैं इतने दिनों से इस परिवार की बहू बनकर जी रही हूँ। बहू की संतानें पुत्र की संतानें क्यों नहीं हो सकतीं? अधर्म बातों से तो जीत सकता है, लेकिन युद्ध नहीं जीत सकता। उसने मन ही मन कहा, "कुंती पराजित नहीं होगी।" पानी में नीचे परछाई में उसकी आँखें निर्मल और स्थिर थीं, और वे गहरी एकाग्रता से उसे देख रही थीं। सूर्य की किरणें पेड़ों की शाखाओं से छनकर पानी में उसकी परछाई पर पड़ रही थीं, उसे बिखेर रही थीं। सिर उठाकर, उसने पीछे मुड़कर देखा। सूर्य दोपहर के समय अपने चरम से नीचे आ चुका था। जब सूरज डूबकर अगले दिन फिर से उगने वाला था, तब कृष्ण ने उससे कहा कि वह जाए और देर न करे। वह सूर्योदय से बहुत पहले अकेले ही आ जाएँगे। यहीं बहते पानी में, थोड़ा आगे, वह स्नान करेंगे, हाथ जोड़कर उगते सूरज को प्रणाम करेंगे और फिर आँखें बंद करके ध्यान करेंगे। उन्होंने कहा, 'अकेले जाओ। मैंने उसे सब कुछ समझा दिया है। तुम बस उसके पास खड़ी रहो। उससे कहो, 'बाल कर्ण, पांडव तुम्हारे अपने भाई हैं, यह कभी मत भूलना। बस इतना ही, मुझे और कुछ नहीं चाहिए।' उसने धीरे से अपनी गर्दन घुमाई। प्रतिमा पानी में ही रही। लेकिन उसके पैर, जांघें, पेट और छाती काँप रहे थे। "कुरुओं की बहू का यह पुत्र कौरव क्यों नहीं बना?" उसने खुद से पूछा। उसे कहीं से एक आवाज़ सुनाई दी, "कुंती, तुम्हें अपने पुत्र के सामने हार माननी होगी।" प्रतिमा तेज़ी से काँपने लगी। उसने अपनी आँखें बंद कर लीं और कुछ आत्म-नियंत्रण पाया। उसने सोचा, "अगर कुरु वंश की वरिष्ठ बहू का पहला पुत्र कौरव होता, तो कुंती इस दुर्दशा में न होती। हाँ, पहाड़ों का यही स्वभाव था, वे बिना कारण पुराने दुखों को फिर से जगा देते थे। पहले तो मुझे समझ नहीं आया

कि क्यों और कैसे। बाद में दुख स्पष्ट और तीखे होकर सामने आए, मानो तैर रहे हों। देवलोक की शुरुआत का प्रतीक ऊँचे पर्वत को निहारते हुए, नहाते हुए छोटी नदी के बहते पानी में उतरते हुए, फूलों की माला पिरोते हुए, वह स्मृति मुझे सताती रही। वही स्मृति जो अंकुरित हुई, परिपक्व हुई और मेरे होश में आने से पहले ही छुप गई! अब मैं जागरूकता और समझ से परिपूर्ण हूँ! लेकिन कोई अंकुरण नहीं है। दरिद्रता सहने के लिए सभी इच्छाओं का नाश करना पड़ता है। मेरा हृदय अब मुझसे कह रहा था - खट्टे क्षत्रिय से बेहतर है परिपक्व ऋषि बनना। उस व्यक्ति की स्मृति को कैसे मिटाया जा सकता है जिसने सबसे पहले रहस्य को उजागर किया? वह भी तब जब ऐसे जीवनसाथी के साथ रहना पड़े जिसमें रहस्य को भेदने की शक्ति ही न हो? रहस्य को समझने के लिए उसका अनुभव करना आवश्यक था। बिना अनुभव किए समझना, एक नपुंसक पुरुष के घमंड के समान था। बचपन से ही, मैं अपने शरीर के इस परम रहस्य को लेकर उत्सुकता से भरा हुआ था। मुझे परेशान करने वाले प्रश्न थे, जीवन की उत्पत्ति कैसे होती है? वह जीवित गुड़िया कहाँ से आती है, जो रोती है, हँसती है, अपने अंगों को हिलाती है, वीर्यपात करती है? बहुत छोटी उम्र में ही मैंने अपनी माँ से पूछा था। वह बस मुस्कुराई थीं। जब मैंने अपने पिता से पूछा, तो उनकी नज़र पास खड़ी नौकरानी की ओर चली गई। मैंने कभी किसी और से नहीं पूछा। अपने दत्तक पिता के घर में प्रवेश करने के बाद भी मैं लगातार बातें करता रहता था। जब भी मुझे किसी घर में किसी बच्चे के जन्म की खबर मिलती, मैं उत्साह से वहाँ पहुँच जाता, यह जानने के लिए कि आखिर होता क्या है। जन्म क्या होता है? जन्म से पहले बच्चा कहाँ होता है, वह कहाँ से आता है? वह स्त्री के गर्भ से कैसे निकलता है? धीरे-धीरे मुझे उत्तर समझ में आने लगे, लेकिन मैं उन पर विश्वास नहीं कर पाया। सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न था कि उसे स्त्री के गर्भ में कौन डालता है? मुझे दूसरों से ऐसे प्रश्न पूछने में शर्म आती थी, लेकिन इससे मेरी जिज्ञासा कम नहीं हुई। जब महान ऋषि दुर्वासा मेरे दत्तक पिता से मिलने आए, तो मेरे पिता इस बात से प्रसन्न हुए कि उनकी देखभाल के लिए एक पुत्री मौजूद है। ऋषि ने पूछा, 'महाराज, इसकी आयु कितनी है?' पिता ने कहा, 'पंद्रह'। ऋषि ने टिप्पणी की, 'वाह! आप कितने भाग्यशाली हैं। यह वीरों की माता बनेगी।' पिता प्रसन्न हुए। मैं अत्यंत प्रसन्न थी! मैं माँ बनने के विचार से ही खुश थी, वीर पुत्रों की माँ, ऐसे पुत्र जो मेरे गर्भ से जन्म लेंगे, अपने अंगों को हिलाते-डुलाते हुए। पिता ने आज्ञा दी, 'पुत्री, जब कोई महान ऋषि आता है, तो घर की पुत्री का

कर्तव्य होता है कि वह उनके सुख-सुविधाओं और आवश्यकताओं का ध्यान रखे। यह सुनिश्चित करना कि उन्हें किसी भी बात की कमी न हो।' वे थोड़े चिड़चिड़े स्वभाव के थे, लेकिन अन्यथा, एक अच्छे ऋषि थे। मैंने सोचा, मान लीजिए कि वे अपने बाल संवार लें और मुकुट पहन लें, तो वे कितने सुंदर दिखेंगे! मैंने उनकी पूरी निष्ठा से सेवा की, और हमारा रिश्ता अधिक मैत्रीपूर्ण, अधिक अनौपचारिक हो गया। मैं उनसे अपने पुराने प्रश्न पूछने के लिए उत्सुक थी। एक दिन मैंने उनसे पूछा, 'ऋषि, मुझे बताइए कि बच्चा कैसे पैदा होता है?' उन्होंने मेरी ओर ऐसे देखा मानो उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि मैंने उनसे यह सवाल पूछा है। वे चुप रहे। लेकिन मैं वहीं खड़ा रहा, इंतज़ार करता रहा। उन्होंने मुझसे पूछा, 'तुम इसका जवाब क्यों जानना चाहते हो?'

मैंने कहा, 'आपने कहा था कि मैं महान नायकों की माता बनूंगी। अब मैं जानना चाहती हूं कि मैं खुद एक महान नायक कैसे बन सकती हूं।'

उन्होंने कहा, 'जब होना होगा तब होगा। अभी चिंता क्यों करें?'

मैंने कुछ नहीं कहा, बस वहीं खड़ी रही, मानो जवाब की प्रतीक्षा कर रही हो। उसने पूछा, 'क्या तुम्हें बच्चा इतना चाहिए?'

मैं हां'।

उन्होंने और कुछ नहीं कहा— लेकिन मैं वहीं जड़वत खड़ी रह गई। कुंती ने आह भरते हुए याद किया। वह कांपती हुई छवि स्थिर खड़ी थी। फिर भी वह बहुत सूक्ष्मता से, थोड़ा-थोड़ा हिल रही थी, उसे घूर रही थी। उसका प्रश्न सीधा-सादा था, उसमें कोई गहरी भावना नहीं थी। ऋषि ने कहा, 'इधर आओ।' उन्होंने मुझे पास बैठने को कहा। मैं चुपचाप, बिना किसी सवाल के उनके पास चली गई। उनकी नंगी छाती घने बालों से भरी थी। चेहरा पतली दाढ़ी में सिमटता जा रहा था। अपना दाहिना हाथ बढ़ाकर उन्होंने मेरा दाहिना हाथ पकड़ लिया। उन्होंने कहा, 'इधर आओ। और पास आओ, और पास आओ।' जब मैं उनके बहुत करीब बैठी, तो उन्होंने पूछा, 'तुम्हें संतान की तीव्र इच्छा है, है ना?' उन्होंने मेरे चेहरे की ओर देखा। फिर उन्होंने मुझे अपने शरीर से लगा लिया, कसकर गले लगा लिया। मुझे क्या हुआ? कोई उत्तेजना तो बिल्कुल नहीं। केवल शर्म, और शर्म से परे एक जिज्ञासा। हाँ, एक तरह का आनंद। उन्होंने प्यार से फुसफुसाते हुए कहा, 'प्रिथा, प्रिथा।' फिर उन्होंने मेरे चेहरे की ओर देखा और धीरे से मुस्कुराए।

अगले दिन, उन्होंने खुद मुझे अपने पास बुलाया। मुझे इस सब की ज़्यादा समझ नहीं थी। फिर भी मैं उस अनुभव के लिए तरस रही थी। पिछली पूरी रात मुझे ज़रा भी नींद नहीं आई थी। उन्होंने मुझे चूमा और कहा, 'प्रिथा, प्रिथा।' उनकी दाढ़ी मुलायम थी। अगले दिन, उसके अगले दिन और कई दिनों तक यही सिलसिला चलता रहा। यह हर दिन होता था। मुझे पता था कि वह मुझे पास बुलाएंगे, और मैं उम्मीद में उनके करीब बैठ जाती थी। मैं अपने मासिक धर्म के दिनों का हिसाब रख रही थी। मासिक धर्म शुरू होने से एक-दो दिन पहले, मैं उनके सामने बैठी थी। लेकिन अचानक मुझे उल्टी आने लगी और मैं वापस आई। उन्होंने मुझे अपने बहुत करीब बैठने को कहा। फिर वह मुस्कुराए, धीरे से मेरे सिर पर हाथ फेरा और बोले, 'अब तुम्हारा अपना बच्चा होगा।'

मैंने पूछा, 'कैसे?'

उन्होंने उत्तर दिया, "धीरे-धीरे तुम्हें पता चल जाएगा। सब समय आने पर ही होगा।" जब पिता अग्नि अनुष्ठान में भाग लेने आए, तो ऋषि ने स्वयं पिता को सूचित किया, "कुंती भोज, तुम्हें एक पोता होगा। विवाहविहीन।" पहले तो पिता के चेहरे पर खुशी के भाव आए। फिर जल्द ही उदासी छा गई। दो दिन बाद महान ऋषि का देहांत हो गया। जाने से पहले उन्होंने मुझे आशीर्वाद देते हुए कहा, "प्रिता, मुझे पखवाड़े भर पहले ही चले जाना चाहिए था। लेकिन मैंने सोचा कि तुम्हारी तीव्र इच्छा पूरी करने के बाद ही जाना चाहिए। यदि तुम पुत्र को जन्म दोगी, तो वह एक प्रसिद्ध योद्धा होगा। यदि तुम पुत्री को जन्म दोगी, तो वह तुम्हारे समान सुंदर होगी।" पिता की उपस्थिति में यह कहकर, उन्होंने अपने पद के अनुरूप सभी राजसी शिष्टाचार ग्रहण करने के बाद देहांत स्वीकार कर लिया।

मेरी जिज्ञासा अभी भी मुझे सता रही थी। मैंने माँ की एक सहेली से, जब वह अकेली थीं, इस बारे में पूछा। उन्होंने मुझे पूरी बात समझाई। मुझसे और ऋषि के बीच जो कुछ हुआ था, वह विस्तार से सुनने के बाद, उन्होंने कहा कि जो रस उन्होंने मेरे भीतर डाला था, उससे एक बच्चा पैदा होगा। वह नौ महीनों में बड़ा होगा, मेरे भीतर से एक शिशु के रूप में बाहर आएगा, जिसकी आँखें, नाक और बाकी सब कुछ होगा। वह उसी मार्ग से बाहर आएगा जिससे ऋषि ने अपना वीर्य डाला था। मुझे इस बात की सच्चाई का पता चल रहा था। लेकिन यह सब कैसे हुआ, यह अभी भी एक रहस्य बना हुआ था। मुझे एक तरह का उत्साह महसूस हो रहा था। इधर-उधर दौड़ने, पेड़ पर चढ़ने और उसकी शाखाओं से झूलने, और पेड़

की शाखा से लटके रस्सी के झूले से खेलने की एक अजीब सी तीव्र इच्छा। मैं यह सब अपने दोस्तों और खेल-साथियों के साथ करती थी। इस बीच मुझे उल्टी और बेचैनी के दौरे पड़ते थे। मैं दिनों का हिसाब रखती थी। एक महीना। दो, तीन, चार। मुझे एहसास हुआ कि मेरी माँ की सहेली ने सच कहा था। मैं हर दिन अपने पेट में कुछ बड़ा होता हुआ महसूस कर रही थी। मैं आश्चर्यचकित और प्रसन्न थी। एक दिन माँ की उपस्थिति में पिताजी ने मुझसे कहा, 'प्रिता, बच्ची, अब महल के भीतरी हिस्से से बाहर मत निकलना। तुम जल्द ही अविवाहित माँ बन जाओगी। अगर हमने इसे छुपाया नहीं, तो हमारे राजपरिवार का सारा सम्मान कलंकित हो जाएगा।'

मैंने पूछा, 'ऐसा क्यों? क्यों?'

'हमारी इज्जत क्यों गँवाई जाए? क्यों?' पानी में बनी आकृति ने भी गहरी आह भरी। पहाड़ों का यही स्वभाव है—वे पुराने दुखों को फिर से ज़िंदा कर देते हैं, पुराने ज़ख्मों को कुरेद देते हैं। यादें हमें सताने लगती हैं। उन्होंने सब कुछ बड़ी चतुराई से, अपनी संतुष्टि के लिए कर रखा था। मुझसे कहा गया, 'बच्ची, दुखी मत हो। ऋषि-मुनि अपने विचारों और रीति-रिवाजों में पुराने ख्यालों के हैं, हमारे इलाके के क्षत्रिय इन मामलों में कहीं अधिक उन्नत हैं। क्षत्रियों के लिए किसी लड़की का बिना शादी के बच्चे को जन्म देना कलंक माना जाता है। वे ऐसी लड़की से शादी करने से भी इनकार कर देते हैं। हम चाहते हैं कि तुम्हारी शादी हमारे बराबर दर्जे के किसी योग्य राजकुमार से हो।' इन शब्दों से उन्होंने मुझे सांत्वना दी, मुझे शांत किया। मुझे अपने बच्चे से बिछड़ने के लिए तैयार किया जा रहा था। जब बच्चा पैदा हुआ तो वह रोया। एक जीता-जागता बच्चा, जिसकी आँखें, कान, मुँह, नाक और हाथ-पैर थे। उसने अपने हाथ-पैर हिलाए। मेरी जिज्ञासा शांत हो गई। उन्होंने मेरा वह अनमोल तोहफा छीन लिया। मेरा बच्चा! राधा, जो मेरी माँ की वफादार सहेली थी, जिसने मुझे जन्म का रहस्य समझाया था, उसे बच्चे के माता-पिता का नाम बताए बिना ही बच्चा सौंप दिया गया। उसे बच्चे को अपने पति के घर ले जाने के लिए कहा गया। खैर, मेरा गर्भ तो खाली हो चुका था। चलो, कल मुझे इस बच्चे के पास जाना है और उससे एक वरदान माँगना है।" छवि एक बार फिर काँपने लगी।

"जब पहाड़ मेरी यादों को ताजा कर रहे थे, तभी देवलोक से दो चिकित्सक आए। उनका शरीर बिल्कुल एक जैसा था। हाव-भाव और चेहरे के भाव भी। वे जुड़वां लगते थे। वे सूती कपड़े नहीं पहनते थे, केवल भेड़ की ऊन या बकरी की

खाल के कपड़े पहनते थे। वे हमेशा साथ-साथ चलते थे। अगर किसी मरीज को हाथ-पैरों में दर्द होता या हड्डियां अपनी जगह से हट जातीं, तो वे मिलकर काम करते। एक मरीज को पकड़ता, दूसरा पट्टियां बांधता। वे जड़ी-बूटियां भी साथ-साथ लाते थे। एक जड़ी-बूटियों को पीसता, दूसरा उन्हें निचोड़ता। उन्हें चावल और गेहूं बहुत पसंद थे। पांडु उन्हें भरपूर मात्रा में चावल और गेहूं देते थे। उन्होंने राजा का इलाज शुरू किया। उन्होंने राजा की शक्ति को बहाल करने के लिए दवा देनी शुरू की। वे मुझे समय-समय पर आश्वासन देते कि मैं एक बच्चे को जन्म दूंगी, एक हष्ट-पुष्ट बच्चे को। वे मेरे पेट को छूकर हंसते थे। देवलोक के लोग पुरुष और स्त्री के बीच के संबंधों में कोई संकोच नहीं करते थे। राजा ने पूरी श्रद्धा से दवा ली। मेरी श्रद्धा भी बहाल हो गई। अब सपने पनपने लगे। मैं पहले की तरह अपने गर्भ में एक बच्चे को पालने की इच्छा करने लगी, और चित्र बनाने की लालसा करने लगी।" पहाड़ों की ताज़ी हवा मेरे फेफड़ों में भर गई। पृथा को हमेशा से बच्चों का बहुत शौक रहा है—कितने? दस, पंद्रह, बीस। देवलोक से बहती सुंदर नदी, दावण के पत्तों, इलायची और तरह-तरह के फूलों की खुशबू से भरी पहाड़ी हवा, और देव चिकित्सकों की मशहूर दवाइयों के साथ, क्या पांडु अपनी खोई हुई शक्ति वापस नहीं पा लेंगे और पृथा ऐसे बच्चों को जन्म नहीं देंगी जो अपने अंगों से नाच सकें, चीख-चिल्ला सकें? ठंडी जलवायु मुझे रास आ रही थी। लेकिन मेरे साथी को यह बिल्कुल पसंद नहीं थी।

उन्हें खांसी आने लगी और सांस लेने में तकलीफ होने लगी। मेरे बार-बार कहने के बावजूद उन्होंने घर लौटने से इनकार कर दिया। देव चिकित्सकों की दवाइयों से भी कोई फायदा नहीं हुआ और उनका निधन हो गया। जब मैं उनके निधन पर शोक मना रहा था, तभी हस्तिनावती से खबर आई। सौ गधों पर राशन लादकर आया दूत राजा पांडु का हमेशा से विश्वासपात्र रहा था। इस बार वह स्वयं खबर देने आया था। हम लगभग एक वर्ष से राज्य से दूर थे। भीष्म ने छह महीने से अधिक समय से हमारे राज्य लौटने की सारी उम्मीद छोड़ दी थी। कुरु वंश के हित और हस्तिनावती के कल्याण के लिए दृढ़ संकल्पित होकर उन्होंने अंधे धृतराष्ट्र का विवाह करवा दिया था।

राजा पांडु ने पूछा, 'यह लड़की कहाँ से आई है?'

दूत ने कहा, 'गांधार देश से। हमारे देश का कौन सा राजपरिवार एक निकम्मे, अंधे को दुल्हन देगा? गांधार में तो दुल्हनें वधू मूल्य पर बेची जाती हैं। याद है कैसे

मद्रा देश से तुम्हारे लिए दुल्हन लाई गई थी? ठीक उसी तरह। वे रथों और घोड़ों के साथ गए, सेना और धन से लदे रथों के साथ, और किसी तरह दुल्हन का इंतजाम हो गया! इंतजाम हो गया!'

पांडु ने पूछा, 'क्या यह सच है कि गांधार की महिलाएं हमारी आर्य महिलाओं की तरह अपने पतियों के अधीन नहीं होतीं?' मैं उनके साथ था और मेरे अलावा कोई और नहीं था।

दूत ने उत्तर दिया, "ऐसा कहते तो हैं। लेकिन वह किसी भी आर्य पत्नी से कहीं अधिक अपने पति की उपासक प्रतीत होती है। जैसे ही उसे अपने पति के अंधेपन का पता चला, उसने संसार को देखने से इनकार कर दिया और अपनी आँखों पर कपड़े की पट्टी बाँध ली। वह अपने भाई के साथ रथ में गई। विवाह के समय अनुष्ठानिक मंच पर भी वह आँखों पर पट्टी बाँधे खड़ी रही। उसने सात कदम चलने और फिर शुभ नक्षत्र अरुंधति को देखने की रस्म एक अंधी स्त्री की तरह निभाई। पति जन्म से अंधा था, लेकिन उसने संसार से मुँह मोड़ने की प्रतिज्ञा क्यों की? हस्तिनावती के नागरिक उसे पति की महान भक्त बताकर उसकी प्रशंसा करते हैं और श्रद्धापूर्वक उसके चरणों में गिर पड़ते हैं।"

पांडु ने कहा, 'बड़ा भाई सबसे भाग्यशाली है।'

"मेरी भी यही भावना थी। शारीरिक बनावट में दोनों भाई लगभग एक जैसे थे। लेकिन एक दृष्टिहीन व्यक्ति क्या हासिल कर सकता है? यदि कोई बाण से लक्ष्य को भेद नहीं सकता, तो वह स्वयं को क्षत्रिय कैसे कह सकता है? अब उसकी एक पत्नी थी, जो पूरी तरह से समर्पित थी।"

तो, हस्तिनावती के लोगों की नज़र में गांधारी ने कुंती से भी ऊँचा दर्जा हासिल कर लिया था। मुझे कभी भी एक समर्पित पत्नी होने का गौरव प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला। सिवाय इसके कि मैं अपने पति के साथ उनकी तपस्या यात्रा पर पूरी तरह से चली गई थी। मुझे उससे थोड़ी ईर्ष्या होने लगी, ईर्ष्या कि वह पति की इतनी बड़ी उपासक बनकर घूम सकती थी, अपने पति को जिस चीज़ से वंचित रखा गया था, उसे खुद को नकारने के लिए खुद को अंधा बना सकती थी। हाँ। मुझे ईर्ष्या हुई। भला क्यों न हो?

मानो गोपनीय रूप से, दूत ने अपनी आवाज़ धीमी करते हुए कहा, "भीष्म ने सिंहासन स्वीकार नहीं किया। और आप यहाँ आ गए। उन्हें किसी ऐसे व्यक्ति को

नियुक्त करना ही था जो औपचारिक रूप से प्रशासन को अधिकार दे सके। इसलिए भीष्म ने धृतराष्ट्र को सिंहासन पर बिठाया है।"

पांडु आश्चर्यचकित होकर बोले, 'क्या? एक दृष्टिहीन व्यक्ति...?' दूत ने उत्तर दिया, 'यह असाधारण परिस्थिति के लिए निर्धारित धर्म के अनुसार था। आख़िरकार, शासन तो भीष्म ही करेंगे।'

मैंने इन सब बातों की ज़्यादा चिंता नहीं की। राजकुमार धृतराष्ट्र के पास, अगर वे चाहते तो, महल में चुनने के लिए बहुत सारी नौकरानियाँ थीं। मुझे पक्का पता नहीं था कि वे उनकी सेवाएँ ले रहे थे या नहीं। अब उनका विवाह हो चुका था। एक बार फिर, मेरा मन सपनों और यादों में खो गया। इसी बीच सर्दी आ गई। और कैसी ठंड? हस्तिनावती या भोज नगर में कोई भी ऐसी ठंड की कल्पना भी नहीं कर सकता। यह ऐसी ठंड थी जो आकाश से सफेद बर्फ के टुकड़ों की तरह गिर रही थी। ऐसी ठंड जिसने पहाड़ों को सफेद चादर से ढक दिया था। दक्षिण का पर्वत और उत्तर का देव पर्वत, सब सफेद बर्फ में दब गए थे। यहाँ तक कि हमारी झोपड़ियों के आसपास की वनस्पति भी सफेद बर्फ की पतली परत से ढक गई थी। हाँ, यह बहुत ही भयानक ठंड थी, फिर भी अपने तरीके से आनंददायक थी। वहाँ के सफेद पहाड़ों को देखकर मैं रोमांचित हो गई। मुझे ऐसा लगा जैसे मैं खुशी से चिल्ला रही हूँ। कई देववासी अपने बकरियों, घोड़ों और सामान से लदे हुए नीचे आए। माना जाता था कि वहाँ की ठंड इतनी भीषण थी कि सामान्य जीवन जीना संभव नहीं था। मैदानी इलाका अपेक्षाकृत गर्म माना जाता था। ऐसा लगता था कि हर सर्दी में उनमें से कुछ लोग इसी रास्ते से यहाँ आ जाते थे। बाकी लोग दूसरे रास्तों से मैदानों में उतरते थे। जो लोग हमारे यहाँ आते थे, वे जल्द ही हमसे लगभग तीन घंटे की पैदल दूरी पर अपने घर बना लेते थे। हमारे दोनों डॉक्टर भी इसी समूह में आए थे। हम उन्हें शिकार के लिए जानवरों की तलाश में या खाने योग्य जड़ों और फलों को इकट्ठा करने के लिए हमारी झोपड़ियों के पास आते-जाते देखते थे। कभी-कभी जब हम उन्हें आटे से बने गरमा गरम पैनकेक देते थे, तो वे कितना आनंदित होते थे! हमारी भाषाएँ थोड़ी अलग थीं। उनकी भाषा हमारे लिए पूरी तरह से समझ से बाहर नहीं थी। वे अपनी ध्वनियों को इतनी ऊँची आवाज़ में बोलते थे कि वे आकाश तक पहुँच जाती थीं। यह वेदों में वर्णित भाषा के समान थी। आखिरकार, वे देव समुदाय के थे। उन्हें बत्तीस कुलों में विभाजित माना जाता था। उनकी सामूहिक विवाह की एक प्रणाली थी जिसके अनुसार एक कुल (गण)

की सभी महिलाओं को उस कुल के सभी पुरुषों की पत्नियाँ माना जाता था, और सभी पुरुषों को उस कुल की सभी महिलाओं का पति माना जाता था। एक कुल की कोई भी महिला उसी कुल के किसी भी पुरुष के साथ संबंध बना सकती थी। पुरुषों और महिलाओं के बीच समान दर्जा और अधिकार। एक गोत्र में जन्मे बच्चे पूरे गोत्र के बच्चे माने जाते थे। गोत्र में हर स्त्री हर पुरुष की पत्नी होती थी, और हर पुरुष हर स्त्री का पति होता था। उनके यहाँ यौन मामलों में कोई प्रतिबंधात्मक नियम नहीं थे, और न ही ऐसे मामलों में कोई शर्म महसूस होती थी। इस मामले में किसी प्रकार का भेदभाव वर्जित था, और यदि कोई भेदभाव करता था, तो गोत्र का मुखिया उसे दंडित करता था। माद्री ने कहा, 'कुछ मायनों में, उनकी व्यवस्था हमारी व्यवस्था से बेहतर है। आपका क्या विचार है?' उसने आगे कहा, 'देखो, उनमें हर स्त्री अपनी पीठ पर बच्चे का बोझ लिए घूमती है। उनके यहाँ बांझ औरतें नहीं होतीं, जैसा कि हमारे यहाँ होती हैं।' मैं उससे सहमत थी। वे सूती वस्त्र नहीं पहनते थे। पुरुष और स्त्रियाँ दोनों मोटे ऊनी वस्त्र पहनते थे और पहाड़ी जनजातियों जैसे दिखते थे। एक बार जब वे अपने वस्त्र उतार देते थे, तो उनका आकर्षक और भव्य शरीर! उनकी त्वचा बर्फ जैसी सफेद थी, आर्यों की तरह भूरी-सफेद नहीं। उन्हें आर्यों का मूल पूर्वज माना जाता था, हमसे नस्लीय रूप से अधिक शुद्ध माना जाता था। उनके रीति-रिवाज और प्रथाएँ हमारी परंपराओं की उत्पत्ति थीं। मैदानों में रहने वाले आर्यों के रीति-रिवाजों के बारे में हमें शायद ही कोई जानकारी थी, और जो लोग उनके बारे में थोड़ा-बहुत जानते भी थे, वे उन्हें नीच और भ्रष्ट समझकर उनका तिरस्कार करते थे। उस जगह पर जहाँ हमारा दूसरों से बहुत कम संपर्क था, मुझे देव आगंतुकों को लंबे समय तक बातचीत के लिए रोककर रखना हमेशा अच्छा लगता था। माद्री भी उनसे मिलने और बात करने के लिए उत्सुक रहती थी। दरअसल, वे हमसे मिलने के लिए इतने बेताब थे क्योंकि उन्हें हमारे चावल और गेहूँ के व्यंजन बहुत पसंद थे। उनकी ज़मीन पर ये अनाज नहीं उगते थे।

दूत के जाने के बाद, पांडु मुझसे कम बोलने लगा। वह अपना अधिकांश समय लेटे-लेटे, गहरी सोच में डूबे हुए बिताता था। इतनी ठंड थी कि पानी भी बर्फ में जम जाता था। रातें तो और भी ठंडी होती थीं, और पांडु मेरी बाहों में गर्माहट ढूंढता था। बिल्कुल एक बच्चे की तरह जो अपनी माँ के शरीर से लिपटकर गर्माहट पाता है। शुरू में वह बहुत बोलता था, लेकिन बाद में वह ज्यादातर चुप रहने लगा। दिन के

समय, मैं पहाड़ के अलग-अलग हिस्सों की खोज करता था, और माद्री भी मेरे साथ इसमें शामिल हो जाती थी। हम देवलोक के लोगों से बहुत खुश थे और उनसे लंबी बातचीत करते थे। ज्यादातर हम उनके रीति-रिवाजों, खान-पान की आदतों और विचारों के बारे में बात करते थे। वे भी हमारे विचारों में रुचि रखते थे। कभी-कभी हमारे मैदान की सीमा के भीतर ही हमें एक घंटे से भी कम दूरी पर एक गाँव मिल जाता था। वह गाँव पहाड़ से होकर गुजरने वाले रास्ते के किनारे बनी पाँच-छह झोपड़ियों का एक समूह मात्र था। नीचे एक नदी बहती थी जो... हम बांस के पुल से होकर वहाँ पहुँच सकते थे। हम वहाँ की महिलाओं से बातें करते थे। कभी-कभी उनकी पत्नियाँ भी हमारी संगति की तलाश में आती थीं। वे महिलाएँ भी हमारे अनाज के पकवानों के लिए उत्सुक रहती थीं। उन्हें चखने के बाद वे अपनी जीभ चटकाती थीं। उनकी एक और प्रथा थी। एक परिवार में भाई सामूहिक रूप से विवाह करते थे। यदि चार भाई होते, तो वे एक, दो, तीन या पाँच पत्नियाँ रखते, जो उन सभी के लिए समान होतीं। पत्नियाँ सभी भाइयों की पत्नियों के रूप में सामूहिक रूप से कार्य करती थीं। चाहे कोई भी पत्नी बच्चे को जन्म दे, उसका नाम सबसे बड़े भाई के नाम पर रखा जाता था। माद्री ने इस पर टिप्पणी की, 'क्या यह एक तरह से अच्छा नहीं है?' मैंने खुलकर 'हाँ' नहीं कहा। यदि हम किसी से पूछते, 'आपकी कितनी पत्नियाँ हैं?' तो वह चार उंगलियाँ उठाकर चार की ओर इशारा करता। यदि हम किसी महिला से उसके पतियों के बारे में पूछते, तो वह कहती, छह। इसका मतलब है कि छह भाइयों ने चार पत्नियों से विवाह किया था। तब मैं और माद्री एक-दूसरे को देखते। फिर माद्री कहती, 'बहन, चलो अपने आश्रम वापस चलते हैं।'

"सर्दी ढलने वाली थी। हमारे मैदान की बर्फ पिघलकर पानी की धाराओं में बदल चुकी थी। पहाड़ अब भी बर्फ से ढका हुआ, एकदम सफेद दिखाई दे रहा था। नहीं, पहाड़ की सतह पर भी पिघली हुई बर्फ की कुछ धारियाँ पानी में बहती हुई दिख रही थीं। वे सफेद सतह पर काली पट्टियों जैसी लग रही थीं। एक रात पांडु ने मेरा हाथ हिलाकर मुझे जगाया और कहा, 'कुंती, मुझे यहाँ आना ही नहीं चाहिए था।'"

मैंने पूछा, 'क्यों? क्या इसलिए कि दवाओं से अभी तक कोई असर नहीं हुआ है?'

पांडु ने कहा, "सिर्फ़ इतना ही नहीं। मेरे चले जाने के कारण चाचा जी ने धृतराष्ट्र का विवाह करवा दिया। उनकी पत्नी गर्भवती हो सकती हैं, शायद पहले से ही

गर्भवती हों। खैर, अब तो वे सिंहासन पर हैं। और फिर कुरु राज्य उनके पुत्रों के हाथों में चला जाएगा। मैं सिंहासन पर बैठने वाला और विजय अभियान को सफलतापूर्वक अंजाम देने वाला पहला व्यक्ति था, लेकिन मुझे शायद इस पर्वतीय भूमि में सड़ना पड़ेगा!”

"यह बात मेरे मन में कभी नहीं आई थी। डर ने मुझे जकड़ लिया। हस्तिनावती से नियमित रूप से रसद मिलने के कारण हमारा जीवन यहाँ सुखमय था। मान लीजिए कल यह आपूर्ति बंद हो जाए! तब क्या होगा? हमें नीचे के देवों या पहाड़ी जनजातियों की तरह जीवन यापन करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा, जड़ और फल खाकर, ऊन के लिए भेड़-बकरियाँ काटकर और खुद बुने हुए ऊन से बने कपड़े पहनकर। मैंने राजा को गहरी साँस लेते सुना। मैंने कहा, 'चलो यहाँ से निकलकर अपने राज्य वापस चलते हैं।'"

मेरी बांह दबाते हुए उसने जवाब दिया, 'हां, मैंने इस बारे में सोचा है। हम यहां प्रायश्चित करने आए हैं। उस प्रायश्चित का फल क्या होना चाहिए? बिना कुछ हासिल किए हम वापस नहीं जा सकते और अपना चेहरा नहीं दिखा सकते। लोग हम पर हंसेंगे। हम चाचा का सामना कैसे करेंगे? अगर हमारा कम से कम एक बच्चा होता, तो बात अलग होती।'

मैंने पूछा, 'क्या दवाओं से कोई नतीजा नहीं निकला?'

उन्होंने मुझसे पूछा, ‘क्या कोई और रास्ता नहीं है?’ फिर वे चुप हो गए। मैंने खुद से पूछा, और रास्ता क्या है? मुझे तुरंत याद आ गया कि पहाड़ों ने मुझे क्या याद दिलाया था। मेरे साथी की मृत्यु के बाद मेरे इस रहस्य के बारे में किसी को पता नहीं था। कई बार मेरा मन हुआ कि मैं अपने पति को अपने अतीत के बारे में सब कुछ बता दूं। फिर भी मैंने इसे गुप्त रखा था। अब मैंने सोचा कि मुझे उन्हें बता देना चाहिए, शायद यही सही समय था, ‘आपको पता नहीं है, लेकिन हमारा एक बेटा है। वह अब नौ या दस साल का होगा,’ मैंने अचानक कह दिया।

पांडु ने पूछा, 'ऐसा कैसे?'

मैंने कहा, ‘अवैध संतान’। फिर मैं चुप हो गई।

राजा भी चुप हो गए। मुझे समझ नहीं आया कि यह क्रोध के कारण था या तिरस्कार के कारण। खैर, रहस्य उजागर करने के बाद मेरा मन हल्का हो गया। थोड़ी देर बाद राजा बोले, "यह सब कैसे हुआ? लड़का अब कहाँ है?"

मैंने उसे सब कुछ बताया। मैंने उसे अपने माता-पिता की उस योजना के बारे में बताया कि वे बच्चे को हमेशा के लिए मेरे जीवन से दूर रखना चाहते हैं। मैंने आगे कहा, "मुझे नहीं पता कि वह अब कहाँ है। मुझे नहीं पता कि वह नीच जाति की औरत उसे कहाँ ले गई। अगर हम मेरे पिता के घर जाएँ, तो मुझे यकीन है कि वह बच्चे को हमारे लिए ढूँढ़ लेंगे।" जैसे-जैसे मैं बोलती गई, मेरा उत्साह बढ़ता गया। मैं अपने बेटे को पाने की खुशी के लिए, हम दोनों के उसे पालने-पोसने की खुशी के लिए कितनी तरस रही थी! इस विचार से मेरा शरीर रोमांचित हो गया। राजा चुप रहा। बाहर, पहाड़ों की हवा सीटी बजा रही थी। वह हवा जो पहाड़ों के बीच और मैदानों के ऊपर बहती है। थोड़ी देर बाद, वह मेरे पास आया और मुझे 'कुंती' कहकर पुकारा। फिर उसने अपना दाहिना हाथ मेरे वस्त्रों के बीच से निकालकर मेरे पेट को छुआ। अपने दाहिने हाथ की हथेली को मेरे कपड़ों के ऊपर से कई बार दबाते हुए उसने कहा, "तुम्हारा पेट सबसे उपजाऊ है, पुरुष बीज ग्रहण करने और प्रजनन करने के लिए हमेशा तैयार। काश मेरे पास अपने बीज बोने की शक्ति होती।" फिर उसने अचानक मुझे पकड़ लिया, गले लगा लिया, उसका चेहरा मेरे स्तनों के बीच छिपा हुआ था, और वह... गहरी साँस लेते हुए, मैंने गर्माहट को अंदर लिया। मेरे मन में मैं अपने उस खोए हुए बच्चे का चित्र बनाने की कोशिश कर रही थी। मेरे हाथों ने राजा के सिर को कसकर पकड़ रखा था। मैदानों से हवा लगातार बह रही थी। क्या वह आगे से पीछे की ओर बह रही थी या इसके विपरीत? यह समझना मुश्किल था। बाद में, हस्तिनावती लौटने पर मुझे पता चला कि मेरी दादी सत्यवती का भी एक नाजायज बेटा था। अब उस बेटे की वैदिक विद्या में महान विद्वान के रूप में ख्याति थी। इसी नाजायज बेटे ने मेरी दोनों सासों के साथ नियोग संबंध से मेरे पति पांडु और उनके भाई धृतराष्ट्र को जन्म दिया था। जब सत्यवती का यह नाजायज बेटा हस्तिनावती आता है, तो पूरा शहर उसके चरणों में गिर पड़ता है। तो फिर मेरे पिता ने मेरे बेटे को गुमनाम क्यों रखा? उन्होंने मुझे भी घर के अंदर क्यों छिपाकर रखा? लगता है सत्यवती एक मछुआरा है। मछुआरों में लड़के-लड़कियों का विवाह कराने पर कोई रोक नहीं होती, चाहे वे पुरुष हों या महिला। वैधता। वास्तव में, विवाहहीन बच्चे वाली लड़की को बच्चे सहित स्वीकार कर लिया गया था। तो फिर हमें ऐसी प्रथाओं को शर्म का विषय क्यों बनाना चाहिए? हवा की आवाज़ थम गई। विशाल पर्वत वहाँ वास्तविक और शांत खड़े थे। चाँदनी थी या बादलों से ढका आकाश, यह कहना मुश्किल है।

हस्तिनावती में अनुपस्थित शर्म की भावना कुंती भोज में हमारे लोगों को क्यों परेशान करे?

मैंने उनसे पूछा, 'महाराज, आपने मुझे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार किया है। तो क्या मेरा बेटा आपका बेटा नहीं बन जाता?'

उन्होंने कहा, "मैं अतीत में प्रचलित नियमों को जानता हूँ। लेकिन अब अगर हम उस लड़के को ढूंढकर हस्तिनावती ले जाएं, तो लोग उसे स्वीकार नहीं करेंगे। क्या आपको नहीं लगता कि यह स्वीकृति हमारी शादी के समय ही मिल जानी चाहिए थी?"

फिर मेरा मन अपनी शादी की रस्मों में खो गया। मैंने सोचा: कितना अच्छा होता अगर मेरा बेटा मेरी कमर पर बैठा होता या मेरे पास खड़ा होता, जब मैं अपने दूल्हे को माला पहना रही होती, ताकि वह माँ और बच्चे दोनों को औपचारिक रूप से अपना मान लेता! मुझे याद आया कि मेरे पिता ने तब मेरी माँ से क्या कहा था। उन्होंने कहा था, 'आजकल नौजवान ऐसी लड़कियों से शादी नहीं करना चाहते। वरना हमें इसे छुपाने की क्या ज़रूरत थी? क्या मुझे नहीं पता कि मेरी बेटी अपने बच्चे से वंचित होने के दर्द से तड़प रही है?' मैंने सोचा, ये कैसी उलझन है, कैसा फँसाव है! मुझे सब कुछ छोड़कर भाग जाने का मन कर रहा था। लेकिन फिर कहाँ जाऊँ? अपने बेबस पति के सिर को कसकर अपने शरीर से लगाकर मैं बेबस होकर सो गई।

राजा ने बार-बार धीरे से अपना हाथ मेरे पेट पर फेरा, शायद प्रशंसा के भाव से। मुझे लगा जैसे वह कुछ कहना चाह रहे हों। मुझे आधा-अधूरा ही पता था कि वह क्या कहेंगे। मैंने उन्हें जोश से गले लगाया, चूमा और उनके कान में फुसफुसाया, "कृपा करके बताइए, महाराज, बताइए।"

उन्होंने कहा, 'यदि धृतराष्ट्र पहले संतान उत्पन्न करता है, तो हम बर्बाद हो जाएंगे।'

मैंने कहा, 'मुझे बताइए, मुझे क्या करना चाहिए। आप जो कहेंगे मैं वही करूंगा।'

उसने कहा, 'तुम्हारा गर्भ कभी सूखेगा नहीं और उसमें बोया गया कोई भी बीज व्यर्थ नहीं जाएगा। अच्छा, मुझे एक बच्चा दे दो। जल्दी। समझी?'

"मैं इस मामले में नैतिक और धार्मिक नियमों को भलीभांति जानती थी। किसी व्यक्ति का अपना पुजारी शुक्राणु दाता बनने का हकदार होता है। लेकिन

हस्तिनावती से हमारे पुजारी, जो पहले हमारे साथ आए थे, पहाड़ों की कड़ाके की ठंड सहन न कर पाने के कारण वापस शहर लौट गए थे। राजा ने स्वयं अनुष्ठानों का जिम्मा संभाला। पुजारी शीत ऋतु के अंत और सुहावने मौसम की शुरुआत के बाद ही लौटेंगे। लेकिन अब इंतजार करना संभव नहीं था। जितनी जल्दी हो, उतना अच्छा। बाद में मुझे सच्चाई समझ में आई कि राजा ने हर बात की बारीकी से योजना बनाई थी।"

उन्होंने देवलोक के ब्राह्मण प्रमुख को बुलवाया। प्राचीन और पारंपरिक धर्म में पूर्णतः पारंगत, तथा लोगों के व्यवहार का न्याय करने और दंड देने में सक्षम वह व्यक्ति आया। उसे देखते ही मुझे ऋषि दुर्वासा याद आ गए। वैसी ही दाढ़ी, वैसा ही चेहरा। लेकिन उन्होंने ऊन का मोटा वस्त्र पहना हुआ था। उनका शरीर उसमें लिपटा हुआ था। अधेड़ उम्र के। उनकी आवाज़ सीधी और इतनी बुलंद थी कि आकाश को भेद सकती थी। उन्होंने हमारे द्वारा दिए गए भोजन की बहुत प्रशंसा की। मैं वासना की आग में जल रही थी। मैं बेताब थी। पहले दुर्वासा के साथ मैं केवल मासूम जिज्ञासा से प्रेरित थी। अब मुझे पता था कि मैं क्या चाहती हूँ। लक्ष्य, इच्छा, जुनून। अचानक शरीर की तड़प और ज्ञान के उन दिनों की यादें मेरे मन में उमड़ आईं। हालांकि, मेरे पति के अनुरोध पर आए यम ने कोई उत्साह या उत्सुकता नहीं दिखाई। वे सदा संतुष्ट रहने वाले व्यक्ति थे। वे मेरे प्रति उदासीन प्रतीत हुए, मानो मैं कोई नई स्त्री हूँ। कौन जाने उन्होंने अपने कुल की कितनी स्त्रियों के साथ भोग-विलास किया होगा!

उन्होंने पूछा, 'राजा, आप नियोग के बारे में बात कर रहे हैं। आपके पास इसके समर्थन में क्या धार्मिक और नैतिक प्रमाण हैं?'

पांडु कहते हैं, 'यदि पति शारीरिक रूप से नपुंसक हो या निःसंतान मर जाए, तो उसकी वंश परंपरा को आगे बढ़ाने के लिए यह अनुष्ठान पत्नी पर किया जा सकता है...'

वह ठहाका लगाकर हँसा, उसकी हँसी इतनी तेज़ थी कि आकाश में गूँज उठी। फिर उसने कहा, 'हे भगवान, यह तो बहुत हास्यास्पद है। तुमने मूल धर्म को पूरी तरह से विकृत कर दिया है, पता नहीं कहाँ ले गए! अगर कुल में एक आदमी मर जाता है, तो क्या सौ और नहीं हैं? हमारे पास यह नियोग प्रणाली नहीं है, और हमें इसकी आवश्यकता भी नहीं है। मुझे धर्म का ज्ञान है। इसीलिए मुझे धर्म की देखरेख और उसे बनाए रखने का कार्य और ज़िम्मेदारी सौंपी गई है।'

पांडु ने कहा, 'धर्मराज, आप जानते हैं कि मूल धर्म स्थानीय रूप धारण कर सकता है, जिसे देशाचार कहते हैं। यह धर्म का एक अन्य रूप है। हमारी प्रथा भिन्न है, और यह उसी प्रकार है जैसा मैंने सुझाया है। एक राजा की केवल एक ही मुख्य रानी हो सकती है, भले ही उसकी अन्य पत्नियाँ हों। एक स्त्री का केवल एक ही पति हो सकता है, और वह एक से अधिक पति नहीं रख सकती। इसलिए मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप हमारे धर्म के अनुसार नियोग का पालन करें।'

धर्मराज ने कहा, "ठीक है। चूंकि हमारे यहां ऐसी कोई प्रथा नहीं है, इसलिए हमारे कानून में इसका स्पष्ट रूप से निषेध नहीं है। हमारा कानून एक बात को लेकर बिल्कुल स्पष्ट है। यह पत्नी को पुरुष की अनन्य संपत्ति और अधिकार के रूप में मानने की प्रथा को पूरी तरह से प्रतिबंधित करता है। चूंकि मैं उससे विवाह नहीं करने जा रहा हूं, इसलिए मैं आपके द्वारा कही गई बात को बिना हमारे धर्म का उल्लंघन किए कर सकता हूं।"

पांडु ने मुझसे वादा करवाया कि मैं उस देव से प्रेम नहीं करूंगी जो मेरे गर्भ में अपना वीर्य बोने वाला था। जब वह शारीरिक रूप से मेरे निकट हो, तो मेरा मन पूरी तरह से मेरे पति पर केंद्रित होना चाहिए। मुझे संतान की इच्छा को छोड़कर सभी इच्छाओं का त्याग करना था। मुझे गर्भ धारण करने के तुरंत बाद उसे माता-पिता के रूप में स्वीकार करने का निश्चय करना था। मुझसे अपेक्षा की जाती थी कि जैसे ही यह हो, मैं उसकी संगति से दूर रहूँ...

"मैंने ऐसा करने की शपथ ली थी। उस परछाई ने, दुबले-पतले चेहरे और सफेद बालों में बड़ी-बड़ी आँखों के साथ, उसे बताया - मैंने निडर होकर माँगी गई प्रतिज्ञा निभाई। प्रतिज्ञा का वह हिस्सा कि मासिक धर्म बंद होते ही मैं शारीरिक रूप से उससे दूर हो जाऊँगी, पूरा हो गया। मुझे पांडु के साथ अन्याय करने का कोई आशय नहीं था। लेकिन पूरी प्रतिज्ञा में असंभव बात समाहित थी। अब तक जिन महिलाओं का नियोग संस्कार हुआ था, उनमें से किस महिला ने नियोग संस्कार करने वाले पुरुष को माता-पिता के समान माना था - मेरी सास, अंबालीके और अंबिके सहित? क्या कृष्ण द्वैपायन, जिन्होंने मेरी सासों का नियोग संस्कार किया था, उन्हें पुत्री मानते थे? क्या नियोग संस्कार ऐसी भावनाओं और मनोभावों के साथ किया जा सकता है?" पानी में परछाई के चेहरे की झुर्रियाँ सिकुड़ गईं और चेहरे की आँखें आधी बंद हो गईं। जिस दिन से नियोग संस्कार शुरू हुआ, राजा पांडु माद्री के साथ पीछे वाली कुटिया में रहने लगे। देव धर्माधिकारी ने मेरी कुटिया में

पांडु का स्थान ले लिया। मैंने उनकी सुख-सुविधाओं और जरूरतों का ध्यान रखना शुरू कर दिया। मैं उन्हें गर्म पानी से नहलाती, फिर उनके शरीर को सुखाकर वस्त्र पहनाती। मैं उनके लिए शानदार भोजन बनाती और अपने हाथों से उन्हें खिलाती। मैं उनके चावल में इतना घी डालती कि वह पूजा की अग्नि में डाले गए घी से भी अधिक होता। राजकुमारी के रूप में जन्मी होने के कारण, मुझे सेवा करने से अधिक सेवा लेने की आदत थी। सिवाय ऋषि दुर्वासा के। वैवाहिक जीवन के आरंभिक दिनों में मैंने पांडु की सेवा करने का विचार किया था। परन्तु वे इसके योग्य नहीं थे। उनके प्रति मेरे मन में केवल सहानुभूति, करुणा और दया ही थी। परन्तु पांडु ने कभी मेरे मन में उनके चरणों की मालिश करने की इच्छा नहीं जगाई। परन्तु देव नियोगी के साथ, मुझे उनकी सेवा करने, उनके प्रति समर्पित होने का आभास हुआ। यह सहज रूप से हुआ। न तो उन्होंने इसकी इच्छा की और न ही इसके लिए कहा।

एक दिन स्वयं देव ने कहा, 'कुंती, तुम्हारे लोक में क्या सभी पत्नियाँ अपने पतियों की सेवा उसी प्रकार करती हैं जैसे तुम मेरी करती हो?'

मैंने पलटवार करते हुए पूछा, 'आपकी दुनिया के बारे में क्या?'

उसने कहा, 'तुम ये सब इसलिए करती हो क्योंकि तुम्हारा लगाव सिर्फ एक पति से है, क्या ये सच नहीं है? हमारी दुनिया में कोई नहीं जानता कि रात ढलने पर कौन सा पति या पत्नी बिस्तर पर तुम्हारा इंतज़ार करेगा। हमारी औरतें मर्दों से ही सुख चाहती हैं। वे तुम्हारे जैसे मर्दों की सेवा नहीं करतीं।' उसने सिर्फ ये शब्द ही नहीं कहे, बल्कि उसका प्यार और भी गहरा हो गया, जब उसने स्वीकार किया, 'तुम्हारे साथ बिताया हुआ समय मेरे जीवन का सबसे सौभाग्यशाली समय है!'

"हाँ, मैं गर्भवती हो गई थी, और उल्टी शुरू हो गई। मैं बहुत खुश हो गई। पहली बार उल्टी एक सुबह हुई। मैं ठंड में बाहर गई। पहाड़ों की चोटियाँ चाँद से भी ज़्यादा चमक रही थीं। वह एक शांत, सौम्य प्रकाश था। मैं उन्हें देखती रही, पूरी तरह से मग्न। फिर से यादें लौट आईं। तब मुझे समझ नहीं आया था। अब समझ आ गया है। बिल्कुल। मैं काफी देर तक वैसे ही खड़ी रही। फिर मैं अंदर गई। दरवाजा बंद करके मैं बिस्तर पर, उनके शरीर के पास लौट आई, उन्होंने मुझे कसकर गले लगाया और कहा, 'तुमने उल्टी की। हाँ, गर्भ धारण हो गया है।'"

मैंने उसके कान में फुसफुसाते हुए कहा, 'कृपया इसे सबके सामने मत कहो। अगर एक बार भी इसका पता चल गया, तो राजा तुम्हें वापस बुला लेंगे।' उसने

आह भरी और फिर हताशा से मुझे गले लगा लिया।

"उल्टी सहन करना आसान नहीं होता, खासकर गर्भावस्था के कारण होने वाली उल्टी। माद्री को चीजों का बेहतर ज्ञान था। वह पीछे वाली कुटिया में रहती थी। वह चौकस रहती थी, मानो उसका पूरा शरीर आंखें, कान और नाक बन गया हो। वह ईर्ष्या से रहित कैसे हो सकती थी? मैं पूरी कोशिश करती कि यह रहस्य उजागर न हो, खासकर उल्टी के माध्यम से। अगर मैं एक दिन के लिए भी उनसे यह रहस्य छुपा पाती, तो इसका मतलब होता कि मैं अपने सौभाग्य और सुख की अवधि बढ़ा रही हूँ। दोपहर के खाली समय में, पांडु मुझसे उत्सुकता से पूछते, 'कुंती, क्या तुम्हारे गर्भधारण के कोई संकेत या लक्षण हैं?' मेरा हमेशा का जवाब होता, 'अभी समय है।' लेकिन मैं सच्चाई के इस पल को कब तक टाल सकती थी? एक सुबह उल्टी बहुत तेज हो गई, उसे रोकने के मेरे सारे प्रयास विफल हो गए। उसकी आवाज न केवल माद्री की कुटिया तक बल्कि पूरे आश्रम में गूंज उठी, मानो पहाड़ों में गूंज रही हो। माद्री मेरी ओर दौड़ी और बोली, 'बहन, हम अपना राज्य नहीं खोएंगे।' मेरे पेट में असहनीय पीड़ा के कारण मैं निश्चित नहीं हो पा रही थी कि क्या उसकी आवाज मेरी ओर आ रही है। मेरा हृदय जो कुछ हुआ था उससे परम आनंद से भर गया था, या फिर देव पुरोहित के साथ अपने सुख को तुरंत समाप्त करने की ईर्ष्या से। सबसे पहले यह खबर राजा को उसी ने दी। वह मेरी ओर दौड़ते हुए आए। उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा। फिर वे धर्माधिकारी के पास गए और उनका हाथ भी पकड़ लिया। उसी दिन उन्होंने देव पुरोहित के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए एक भव्य भोज के लिए एक शानदार बैल की बलि दी। भोज समाप्त होते-होते शाम हो चुकी थी। अतिथि के जाने का समय नहीं था। इसलिए यह तय किया गया कि वे उस रात यहीं रुकें और सुबह चले जाएँ। लेकिन पुरोहित को उनके लिए बनी कुटिया में सोने के लिए कहा गया। राजा मेरे पास आए और मुझे प्रेम और स्नेह से सहलाने लगे, मानो मेरे गर्भ में उनके वंश का अंकुर फूट पड़ा हो और उसे नया जीवन मिल गया हो। मेरे दर्द, दुःख और यहाँ तक कि तिरस्कार की भावना को कौन समझ सकता था? अगली सुबह, अतिथि के जाने से पहले, मैंने उनके चरणों में गिरकर और उन्हें दबाकर प्रणाम किया। राजा ने उनसे विनती की, 'धर्माधिकारी, कृपया, अपनी बेटी को आशीर्वाद दें।

"सपना खत्म हो गया था। लेकिन एक नया सपना आकार लेने लगा। एक ऐसे जीव का सपना जो अपने हाथ-पैर फड़फड़ाता और आसमान तक ऊंची आवाज में

पुकारता कि उसे गोद में उठा लिया जाए। पेड़, घास के मैदान, पहाड़ियाँ और पर्वत, सब मानो अपने अंग फड़फड़ा रहे थे और वीर्यपात कर रहे थे। सपने में तीव्र पीड़ा के क्षण आते रहे। फिर सारी बर्फ पिघलकर पानी में बदल गई और पर्वत का शरीर वनस्पतियों से चमकीला हरा हो गया। मौसम सुहावना था, ठंड का नामोनिशान नहीं था। हस्तिनावती से रसद से लदे गधों की एक कतार आई। इस बार भी वही संदेशवाहक सामान लेकर आया। वह खबर लाया कि हमारे पुजारी बीमार हैं और वे हमारे पास, इस ठंडी जगह पर वापस नहीं लौटेंगे। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि उसने हमें बताया कि गांधारी अभी तक गर्भवती नहीं हुई हैं। महल की नौकरानियाँ फुसफुसा रही थीं कि गांधारी और उनके भाई उन्हें गर्भवती देखने के लिए उत्सुक थे। कहा जाता था कि उनके गृहनगर के रीति-रिवाज हमारे से बहुत अलग थे। एक महिला के बच्चों को उसके भाई की देखरेख में। इसलिए उसका भाई शकुनी वहाँ रहने आया था। आख़िरकार, वह एक गरीब, पहाड़ी जनजाति से था। उसने यहाँ आने का चुनाव ज़रूर किया होगा, क्योंकि उसे हमारे सुख-सुविधाएँ पसंद थीं। दूत का यही अनुमान था। सर्दियों के अंत में, देवों ने अपने तंबू और सामान समेटे और अपने पहाड़ी क्षेत्र में लौट गए। हम आश्रमवासी बिल्कुल अकेले रह गए, सिवाय आस-पास के कुछ गाँवों के लोगों के। एक बार फिर फूल खिल उठे। पेड़ों और पौधों की जड़ों के पास पानी टपकता और बहता रहा। चारों ओर हल्की और सुखद हरी हरियाली छाई हुई थी। यह एक सुहावनी गर्मी थी, न ज़्यादा ठंडी न ज़्यादा गर्म। फिर आया तूफ़ानी और मूसलाधार बारिश का मौसम। पहाड़ों का तेज़ बहता पानी। बारिश के बाद, सर्दियाँ लौट आईं, जैसे ही गहरा हरा रंग और हल्की हवाएँ गायब हो गईं। उसी समय बच्चे का जन्म हुआ। वह चाहा हुआ लड़का था। बर्फ़ की तरह शांत चेहरे वाला, सफ़ेद त्वचा वाला, और जैसे ही उसने धरती को छुआ, वह रोने लगा। मैं उसे देखने के लिए तरस रहा था। हालाँकि मदद के लिए माद्री और नौकर मौजूद थे। मेरे प्रसवोत्तर देखभाल की ज़िम्मेदारी स्वयं पांडु ने ली। मुझे ठंड से बचाने के लिए उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि कुटिया में रखी आग बुझे नहीं। यदि बच्चा जागकर रोने लगता, तो वे ही उसे प्यार से सहलाकर अपने पास सुला देते थे। मंत्रों का उच्चारण करने वाला पुजारी वहाँ नहीं था, इसलिए राजा को स्वयं शिशु जन्म की रस्म अदा करनी पड़ी। शिशु के नामकरण को लेकर काफी वाद-विवाद हुआ। पांडु ने कुरु वंश के सबसे प्रतिष्ठित पूर्वजों को याद किया। अंततः शिशु का नाम धर्म रखने का निर्णय लिया

गया। यह नाम न केवल इसलिए चुना गया क्योंकि शिशु का जन्म धर्माधिकारी की कृपा से हुआ था, बल्कि इसलिए भी क्योंकि इस शिशु ने राजा पांडु को पिता का दर्जा दिलाया था, और यह प्राचीन धर्म, नैतिक नियम के अनुसार जन्मा शिशु था। राजा ने स्वयं इस नाम के चुनाव के ये सभी कारण बताए। संयोगवश, बदरिका आश्रम जाते समय हमारे साथ ठहरे ऋषियों ने भी इस नाम को स्वीकृति दी।

पूरी सर्दी मैं प्रसव के बाद गर्म रही। बच्चा मेरा दूध पीता रहा, यहाँ तक कि उसका मुँह दूध से भर गया। एक दिन राजा ने अपनी गोद में कंबल में लिपटे बच्चे को सहलाते हुए कहा, "कुंती, यह बच्चा शुभ प्रतीत होता है। इसका स्वभाव शांत है। यह कभी रोता नहीं।"

'हां। शिशुओं को थोड़ा शरारती होना चाहिए, अपने अंगों को हिलाना-डुलाना चाहिए और चिल्लाना चाहिए। तभी वे प्यारे लगते हैं।'

"पर यह बच्चा बहुत गंभीर और शांत है। इसका शरीर भी दुबला-पतला है। वीर्य की अपर्याप्तता ही इस बात का कारण है कि आप जैसी उदार और सुडौल स्त्री से इस कद-काठी का बच्चा क्यों पैदा हुआ है। आख़िरकार, धर्माधिकारी तो केवल नैतिक और धार्मिक मामलों में ही पारंगत होते हैं। वे योद्धा नहीं होते।" मैं चुप रहा। लेकिन मुझे यह जानने की उत्सुकता थी कि उनके मन में क्या चल रहा है। उन्होंने स्वयं ही स्पष्ट कर दिया, "टूक, एक क्षत्रिय वीर, योद्धा पुत्र को जन्म देकर प्रसिद्धि प्राप्त करता है। मुझे लगता है कि यह बच्चा सांसारिक कार्यों के लिए बना है। मैं तभी संतुष्ट होऊंगा जब आप मुझे एक योद्धा के बीज से एक योद्धा पुत्र प्रदान कर सकें।"

"यह जवाब अप्रत्याशित था। मुझे खुशी हुई कि राजा ने स्वयं मुझे दूसरा अवसर दिया। बिना अनुरोध के यह अवसर मिलना और भी अच्छा था। शायद उन्हें यह नहीं पता था कि यह कुंती दस नहीं, बल्कि बीस संतानों की माँ बनने की प्रबल इच्छा रखती है। मैंने धर्म को अपनी बाहों में लिया और उन्हें चूमा। 'राजा, क्षत्रिय की आवश्यकताओं को आपसे बेहतर कौन जानता है? आपकी प्रधान रानी के रूप में उन्हें पूरा करना मेरा कर्तव्य होगा। मुझे आदेश दीजिए। संकोच न कीजिए और न ही संकोच कीजिए।' मैंने कहा।"

इस बातचीत के दो सप्ताह बाद, देवलोक से दो चिकित्सक हमारे पास आए। दोनों ने राजा पांडु की जांच की। उन्होंने पांडु को अपने साथ लाई नई जड़ी-बूटियाँ

और जड़ें दीं और कहा, 'ये आपको शक्ति और सामर्थ्य प्रदान करेंगी। एक वर्ष में आप संतान उत्पन्न करने की अपनी क्षमता पुनः प्राप्त कर लेंगे।'

"राजा प्रसन्न हुए। उन्होंने सोचा कि इन दोनों चिकित्सकों पर पांडु का विश्वास और भरोसा दिनों, महीनों और वर्षों तक बना रहेगा। उन्होंने चिकित्सकों से अपनी रुचि के विषय पर बात की, 'यह सच है कि मेरा सबसे बड़ा पुत्र आपके धर्माधिकारी से पैदा हुआ है। लेकिन वह उतना बलवान और शक्तिशाली नहीं है जितना मैं चाहता था। मुझे एक ऐसा शक्तिशाली व्यक्ति चाहिए जो एक पराक्रमी योद्धा पुत्र को जन्म दे। क्या ऐसा कोई है?'"

कुछ सोचने के बाद उन्होंने कहा, 'हाँ, ऐसा एक व्यक्ति है। हमारी सेना का मुख्य सेनापति। हम अपनी सेना को मरुत समूह कहते हैं। हम देवलोक के सबसे शक्तिशाली व्यक्ति को अपना चोर सेनापति बनाते हैं।'

पांडु ने पूछा, 'क्या वह मेरी विनती मानेंगे?'

डॉक्टरों ने कहा, 'शायद वह मान जाए, अगर हम उससे अनुरोध करें। लेकिन तभी जब देवभूमि शत्रुओं से मुक्त हो। अन्यथा वह व्यस्त रहेगा। अगर आप उसे उसके पास भेज सकें, तो शायद इससे उसके कर्तव्यों में कोई बाधा न आए।'

राजा ने एक पल रुककर सोचा और फिर कहा, 'नहीं, उसे नहीं भेजा जा सकता। आपको यह सुनिश्चित करना होगा कि वह स्वयं इस उद्देश्य से यहाँ आए। मैं उसे उसकी इच्छानुसार किसी भी प्रकार का इनाम देने के लिए तैयार हूँ!'

डॉक्टरों ने कहा, 'ठीक है, तो अब आप हमारे साथ चलिए। हम उनसे इस मामले पर चर्चा कर सकते हैं।'

दो सेवकों को साथ लेकर राजा चिकित्सकों के साथ उत्तरी पर्वत पर चढ़ गए। उन्हें नीचे आने में पंद्रह दिन लगे। तब माद्री ने मुझे उन देवों के समूह के बारे में बताया जो उस सर्दी में डेरा डालने आए थे। उन्होंने बताया कि उनका भी सामूहिक विवाह हुआ था, सभी पुरुषों ने सभी महिलाओं से विवाह किया था। पंद्रहवें दिन राजा लाठी के सहारे वापस लौटे। उन्होंने वह कार्य पूरा कर लिया था जिसके लिए वे यात्रा पर गए थे। सेनापति ने सात दिन बाद नीचे आने का वादा किया था। उन्होंने मुझसे कहा, 'कुंती, वह कितना शक्तिशाली व्यक्ति है! मैंने पूरे आर्य भूभाग में उसके जैसा कोई नहीं देखा। वह इतना लंबा है कि मुझे सीधा खड़ा होकर अपनी भुजाएँ उसकी गर्दन तक उठानी पड़ीं। केवल लंबाई ही नहीं। उसका शरीर भी

सुगठित है, चौड़े कंधे और बड़े पैर हैं। तुम्हारे लिए ऐसे शक्तिशाली योद्धा के गर्भ को धारण करना मुश्किल हो सकता है।'

मैंने सोचा, 'क्या मुझे कुरु वंश के नायकों की माता नहीं बनना चाहिए?'

राजा प्रसन्न हुए। उन्होंने ऐसी मुस्कान दी जिससे यात्रा की थकान गायब हो गई। मैंने धीरे से उनकी पीठ सहलाई और उनसे पूछा, 'आप इतने थके हुए क्यों हैं?' अपना सिर मेरी गोद में रखकर वे सो गए। मैंने उन्हें गले लगाया और उनकी पीठ सहलाई। एक बच्चे की तरह उन्होंने अपने पैर सिकोड़ लिए, अपना चेहरा मेरी जांघों में छिपा लिया और अपनी आँखें बंद कर लीं। हर पल वे आह भरते रहे। मैंने उन्हें दुलारते हुए पूछा, 'यह थकान क्यों?'

पांडु ने कहा, "वह देवलोक हमारी पहुँच से परे है, हमारी सहनशीलता से बाहर है। ज़रा उस विशाल पर्वत को देखो जो हमें घूर रहा है। उस पर चढ़ने से ही हमारी साँसें फूल जाती हैं। उस पर्वत पर चलना तो दूर, ठहरना भी मुश्किल है, साँस फूलने लगती है। अक्सर चढ़ने में असमर्थ होने पर मैं बस लेट जाता, अपने पैरों को आराम देता। शायद अगर ये चिकित्सक मेरे साथ न होते तो मैं गिरकर मर ही जाता! उन्होंने पास पड़ी एक जड़ी बूटी उठाई, उसका रस निकाला और मुझे पिलाया। थोड़ी देर आराम करने के बाद हम धीरे-धीरे आगे बढ़े। न केवल मेरे लिए, बल्कि मेरे साथ मौजूद उन दो सेवकों के लिए भी यही हाल था। वे भी थक चुके थे। क्या आप जानते हैं कि वहाँ कैसा होता है? गर्मियों में भी वह बर्फ से ढका हुआ दिखता है, जैसे यहाँ सर्दियों में। वहाँ बस पहाड़ ही पहाड़ हैं - पहाड़ और बस पहाड़! चकाचौंध कर देने वाली सफेद चोटियाँ! ठंड असहनीय है। हम चलते रहे, चलते रहे, चलते रहे। केवल ये देवलोक ही उस पर्वतीय जगत में रास्ता जानते हैं, उन्हें पता होता है कि किस रास्ते जाना है, कौन सा मोड़ लेना है।" उन्होंने मुझे भरोसा दिलाया कि कोई भी उनकी भूमि पर आक्रमण करके इन दुर्गम पहाड़ों में उन्हें जीत नहीं सकता। मुझे इस बात पर यकीन हो गया। मुझ जैसे बहादुर योद्धा को भी इन ऊँचाइयों पर चढ़ते समय साँस फूलने लगती है। फिर तो उन्हें जीतने का सवाल ही कहाँ उठता है? दरअसल, उनके कस्बे पहुँचने के बाद मैं लगातार तीन दिन तक सोता रहा, आराम करता रहा। फिर भी मेरा दिल तेजी से धड़कता रहा। मुझे वहाँ और रुकने का मन हुआ, लेकिन मैंने सेना प्रमुख मारुता से बातचीत पूरी करने के बाद वापस आने का फैसला किया। अब नीचे उतरना भी उतना ही

थका देने वाला रहा है। दिल की धड़कन तेज ही रही। डॉक्टरों ने मुझे पूरी तरह आराम करने की सलाह दी है।

मैंने उनकी बात मान ली। मेरा बालक धर्म एक तरफ सो रहा था, और दूसरी तरफ पांडु लेटा हुआ था। मैंने उसे गले लगाया और उसकी सेवा करते हुए उसके शरीर, हाथों और पैरों की मालिश की। राजा कराहते हुए बोला, 'कुंती, राजकुमारी, तुमने पहले कभी मेरी इस तरह सेवा नहीं की!' मैंने उसे आश्वासन दिया कि अब से मैं उसकी सेवा करूंगी। वह बच्चे की तरह नहीं, बल्कि बीमार व्यक्ति की तरह सो रहा था। हाँ, मुझे उस पर दया आई, यहाँ तक कि स्नेह भी हुआ। मैं उसकी सेवा करने, उसकी देखभाल करने की इच्छा से भर गई थी। उस रात वह गहरी नींद सोया, सिवाय कुछ मौकों के जब उसने कराहते हुए कहा, 'कुंती'। उसे थकान और कमजोरी से उबरने में लगभग पाँच-छह दिन लगे। उसका चेहरा पहले से ज्यादा खिलखिला उठा। लेकिन ऊँचाई पर चढ़ते समय उसकी साँसें अभी भी फूलती थीं। लेकिन उस ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर ऊपर-नीचे चढ़ना कैसे बच सकता था? इसलिए उसे ज़्यादातर समय घर के अंदर ही रहना पड़ता था।

सातवें दिन, ठीक ढलते सूरज के समय, देवों के सेनापति आए। उनके साथ दस अंगरक्षक थे। जब मैंने उन्हें देखा, तो मुझे आश्चर्य हुआ कि उन्हें अंगरक्षकों की आवश्यकता ही क्यों है! वे इतने लंबे थे कि मुझ जैसी लंबी स्त्री को भी उन्हें देखने के लिए अपना सिर उठाना पड़ा। पांडु द्वारा वर्णित अनुसार, उनका शरीर विशाल और मजबूत था, कंधे ऊँचे और चौड़े थे। चेहरे पर कोई भावहीनता नहीं थी। फिर भी वे क्रूर नहीं थे। वे काफी शांत प्रतीत होते थे! मैं उनके सामने खड़ी थी। उन्होंने मेरी ओर देखते हुए पूछा, 'क्या यह आपकी पत्नी हैं?' मैंने उनकी तीव्र आँखों में वासना का अनुभव किया। उनकी आवाज पहाड़ों की घाटियों में बहने वाली हवाओं की तरह तेज थी। राजा ने उनका स्वागत किया। उनके स्नान के लिए गर्म पानी तैयार किया गया। राजा ने अतिथि के सम्मान में रात्रिभोज के लिए एक भेड़ की बलि देने का आदेश दिया। उन्होंने अतिथि से देवलोक में उन सभी लोगों के कुशल-मंगल के बारे में पूछा जिनसे वे मिले थे। एक मेज़बान होने के नाते, मैंने उनकी सुख-सुविधाओं का ध्यान रखने में अग्रणी भूमिका निभाई। माद्री अपनी कुटिया से बाहर नहीं निकली। राजा बच्चे को उसकी देखरेख में रखने के लिए उसके पास गया।

उस रात भोजन के बाद, राजा ने मुझसे वही प्रतिज्ञा ली - 'मैं इस पुरुष से प्रेम नहीं करूंगी, यहाँ तक कि उसकी बाहों में रहते हुए भी मैं केवल अपने पति के बारे में सोचूंगी। मैं उससे एक बच्चे के अलावा कुछ नहीं चाहूंगी, और जैसे ही मैं गर्भ धारण कर लूंगी, मैं उसे माता-पिता के रूप में मानूंगी...'

मरुता के शरीर की भव्यता मेरी कल्पना से परे थी। यहाँ तक कि जब मैंने उन्हें दोनों बाहों से गले लगाया, तब भी मैं अपनी दाहिनी उंगली को अपनी बाईं उंगली से उनकी पीठ के पीछे नहीं फंसा पाई! वे पत्थर की तरह ठोस और कठोर थे। मुझे संदेह हुआ कि क्या मैं उनके लिए उपयुक्त हूँ। उस समय तक मुझे पृथा होने पर गर्व था, एक विशाल शरीर वाली स्त्री होने पर। अब वह गर्व पिघल गया और गायब हो गया। उन्होंने मुझसे पूछा, 'तुम्हारा नाम क्या है?' मैंने तुतलाते हुए कहा, 'पृथा'। उन्होंने उत्तर दिया, 'ओह, मैं समझ गया! क्योंकि तुम्हारा शरीर विशाल है? क्या तुम अपनी दुनिया में इसी को विशाल शरीर कहती हो?' मैंने उत्तर दिया, 'आपके अनुपात के आसपास भी नहीं।'

उन्होंने पूछा, 'क्या आपने कभी हमारी महिलाओं को देखा है?'

'सर्दियों में आपके लोगों का एक समूह यहाँ आया था। मैंने उन्हें तब देखा था।'

उन्होंने कहा, "नहीं, हमारे पास भी तुम्हारे जितनी बड़ी स्त्रियाँ नहीं हैं। हाँ, पृथा तुम्हारे लिए ठीक है।" फिर जैसे-जैसे मेरे लिए उनका प्रेम गहराता गया, उनकी शक्ति और भी अधिक प्रकट हुई। मेरे मन में राजा पांडु के प्रति कृतज्ञता का भाव जागा। और क्या उत्तम चुनाव था! मैं उनके द्वारा कुचले जाने, उनके द्वारा दबाए जाने, उनकी हड्डियों को चूर-चूर किए जाने, वासना में पूरी तरह से विलीन होने के लिए तरस रही थी। मुझे ऐसा लग रहा था कि मैं स्वयं को पूरी तरह से उनके शरीर के हवाले कर दूँ, उनकी पूर्ण दासी बनकर उनकी दया पर गिड़गिड़ाऊँ। अगले दिन मैंने गर्म पानी का एक बड़ा पात्र मंगवाया। मैंने स्वयं उन्हें स्नान कराया, अत्यंत स्नेह से उनके शरीर की मालिश की।

मैंने उसकी चौड़ी पीठ पर जमे सूखे पसीने को साफ करने के लिए उसे एक नुकीले पत्थर से रगड़ा। फिर धीरे-धीरे उसे बिस्तर तक ले जाकर लिटाया। मैंने उसका खाना पकाया और उसे खुद खिलाया। खाने के बाद उसके हाथ धोने की भी मेरी बहुत इच्छा हुई। लेकिन उसे नींद नहीं आ रही थी। सुबह के भोजन के बाद वह अपने अंगरक्षकों के साथ शिकार पर चला गया। मैंने उसे आँखों से ओझल होते देखा। क्या विशाल शरीर था! वह पहाड़ों की ऊँचाइयों को खरगोश की तरह फुर्ती

से पार कर रहा था! न थकना, न आराम करना! मैं स्तब्ध खड़ा उसे देवलोक के सामने वाले छोटे पहाड़ पर चढ़ते हुए देखता रहा, उसके कंधे पर धनुष और हाथ में तलवार थी। वह शाम को शिकार से विजयी होकर लौटा, उसके कंधे पर एक मरा हुआ बाघ था। उसके साथी शिकार किए गए जानवरों - एक जंगली बैल और चार हिरणों - के मांस के टुकड़े लेकर आए थे। उसने खुद बाघ की खाल उतारी और उसे सूखने के लिए टांग दिया। पांडु प्रसन्न हुआ। उसने शिकारी से कई सवाल पूछे: 'बाघ कहाँ था? उसने उसे कैसे मारा?' मैं उस समय व्यस्त था... रसोई में खाना पकाने की देखरेख करना।

"उस रात मुझे पूरा भरोसा था कि मैं उसे संभाल सकती हूँ। मुझे माद्री द्वारा सिखाई गई सारी कलाएँ याद आ गईं। मैंने बिस्तर पर उनका इस्तेमाल किया और उसे टक्कर दी। आधी रात को उसने कहा, 'प्रिथा, मुझे आज रात से पहले कभी नहीं पता था कि एक औरत की बाहों में इतना आनंद होता है। एक औरत को बिस्तर पर मर्द से जंग छेड़नी चाहिए। उस औरत से क्या संतुष्टि मिल सकती है जो एक बच्चे की तरह सुरक्षा के लिए मर्द की बाहों में छुपी हो।"

मुझे उनके शब्दों का अर्थ तुरंत समझ नहीं आया। धीरे-धीरे मुझे उनका अर्थ समझ में आया। मेरी आँखों में आँसू भर आए। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि मैं उन्हें अपने सीने से लगा लूँ, उनका सिर अपनी जांघों पर रख दूँ या उनके अंगों की मालिश करूँ। बिस्तर पर उनके द्वारा मेरे बारे में कही गई बात सीधी-सादी थी, 'देवलोक की कोई भी स्त्री तुम्हारी दासी बनने के योग्य भी नहीं है।' मैं और क्या चाहती? उनकी कृतज्ञतापूर्ण प्रशंसा ने मुझे अपनी शक्ति और सामर्थ्य का एहसास कराया। तब मुझे पूरी तरह समझ आया कि वे क्या कह रहे थे। मुझमें एक वीर, एक शक्तिशाली शिकारी, जो एक मरे हुए बाघ को घर लाता था, को शांत करने और उसे अपनी बाहों में सुरक्षित महसूस कराने की शक्ति थी। मेरी बाहें? मेरे स्तन? मेरा शरीर? एक साधारण पुरुष शायद इनकी उपस्थिति को वास्तविक महसूस करता। इस असाधारण पुरुष के लिए, जिसे मैं सिर उठाए बिना देख भी नहीं सकती थी, ये सब वास्तविक नहीं थे। हाँ, मैंने अपनी शक्ति को समझ लिया था। उस पूरी रात मैं उस अहसास की खुशी में डूबी सोई।

अगली सुबह मैंने उन्हें फिर से गर्म पानी से अच्छी तरह नहलाया। मैंने उनकी बड़ी सावधानी से देखभाल की। स्नेहपूर्वक उनकी सेवा की। उस दिन उन्होंने शिकार के बारे में नहीं सोचा, घर पर ही रहना पसंद किया। इसके बजाय उन्होंने

मुझे अपने सामने बैठाया, मेरे हाथ पकड़े और मेरे चेहरे को गहराई से देखा। मैं शर्म से लाल हो गई और अपना सिर नीचे झुका लिया। फिर उन्होंने अपनी चौड़ी हथेलियों से मेरा चेहरा ऊपर उठाया और कहा, 'प्रिता, मेरे साथ हमारे देवलोक चलो। तुम जानती हो कि हम कुल के मुखियाओं को निजी पत्नियाँ रखने की अनुमति देते हैं, केवल उनके आनंद के लिए। चलो और मेरी पत्नी बनो।' जवाब में मैंने उनके चेहरे को देखा। वे विनम्र और सौम्य लग रहे थे। उनकी आँखों ने मुझमें मुझसे कहीं अधिक संतुष्टि देखी, जितनी संतुष्टि मुझे उनमें नहीं थी।

मैंने कहा, 'हमारी और आपकी विवाह पद्धतियाँ अलग-अलग हैं।' उन्होंने तुरंत कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ देर बाद, मुझे ठीक से नहीं पता कि उन्हें स्थिति समझ में कैसे आई, लेकिन उन्होंने कहा, 'यदि आप चाहें तो मैं कुल की अन्य महिलाओं से संबंध नहीं रखूँगा। मैं केवल आपसे ही संबंध रखूँगा, सिर्फ आपसे। मैं शपथ लेता हूँ।' फिर उन्होंने मेरा हाथ पकड़ लिया। मैंने बस अपना सिर झुका लिया। उन्होंने आगे कहा, 'मैं यह साबित करना चाहता हूँ कि मैं अभी से कहीं अधिक महान योद्धा हूँ। मैं यह आपकी सुरक्षा में कर सकता हूँ।' फिर उन्होंने कहा, 'अभी बहुत समय है। इस बारे में सोचिए।' मैंने कोई जवाब नहीं दिया। सन्नाटा छा गया। शायद उन्हें वहाँ रुकना शर्मनाक लगा, और अपना धनुष और तलवार लेकर वे बाहर चले गए। उनके अंगरक्षक एक शानदार भोजन के बाद सो रहे थे, और उन्होंने उन्हें नहीं जगाया। मैं उपलब्धि की भावना से अभिभूत थी। स्वयंवर में, सैकड़ों राजा और राजकुमार मुझे जीतने के लिए एकत्रित हुए थे। वहाँ भी मुझे आत्म-महत्व का बोध था। अब मैं इसे देख सकती थी। चूंकि यह ऐसा अवसर था जब सभी शासक एकत्रित हुए थे, कुछ योग्य और कुछ अयोग्य, इसलिए स्वाभाविक रूप से जुआ और मौज-मस्ती खूब हुई। उनमें से कोई भी केवल मुझसे विवाह करने की इच्छा से प्रेरित नहीं था। अब यह योद्धाओं का महापुरुष, जिसके सामने वे कुछ भी नहीं थे, इतने आदर से मेरा हाथ मांग रहा था। वह अपने कुल की सभी स्त्रियों का त्याग करने का वादा करने को भी तैयार था। हमारे आर्य देश में कौन सा क्षत्रिय अपनी पत्नी के अलावा किसी अन्य स्त्री से यौन संबंध नहीं रखता? ऐसे विचारों ने मुझे अत्यंत संतुष्टि का अनुभव कराया। मैंने मन ही मन कहा: 'प्रिता, तुम भाग्यशाली हो।' मुझे उसके साथ जाने और उसके साथ रहने का प्रबल प्रलोभन हुआ, जिसमें अपने जैसे दस संतानों को जन्म देने की शक्ति थी, और जिन्हें मैं अपने गर्भ में धारण करती। मुझे पांडु से कहने का मन हुआ, 'राजा पांडु, मैं जा रही हूँ। मैं

आपको यह संतान दे दूंगी जिसे मैंने आपके लिए जन्म दिया है।' अगर तुम्हारी इसमें रुचि नहीं है, तो तुम नियोग के द्वारा माद्री से बच्चे प्राप्त कर सकती हो।' अगर मैं 'हाँ' कह देती, तो वह मुझे अपने कंधों पर उठाकर, देवलोक को छुपाने वाले पहाड़ों को बाघ की तरह पार कर जाता! मैं कुटिया में बिल्कुल अकेली थी। सोच-विचार का बोझ सहन न कर पाने के कारण मैं बाहर गई। मैंने देखा कि माद्री नीचे धारा के पास खड़ी थी, और उसका बच्चा, धर्म, जो हमेशा शांत और कभी न रोने वाला था, उसकी कमर पर बैठा था। बच्चा धर्म माद्री के शरीर और कद-काठी के अनुकूल था, लेकिन मेरे विशाल शरीर के लिए बहुत छोटा था। मैं धारा तक पहुँचने के लिए नीचे उतरी। बच्चे ने इशारे से कहा कि वह चाहता है कि मैं उसे गोद में उठा लूँ। मैंने बच्चे को गोद में उठा लिया। माद्री, जाहिर तौर पर मरुत का जिक्र करते हुए बोली, 'क्या उसका शरीर इतना बड़ा नहीं है कि वह तुम्हें कुचल दे?' उसने मेरे चेहरे की ओर देखा और मुस्कुराई। मैं अपने आप में नहीं थी।

उस रात भी, उसने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "तुमने क्या फैसला किया? सुनो यहाँ। अगर तुम मना भी कर दो, तो भी मेरे पास तुम्हें जबरदस्ती अपने कंधे पर उठाकर ले जाने की शक्ति है। वह बीमार राजा पांडु मेरे सामने टिक नहीं पाएगा। क्या तुम्हें लगता है कि तुम्हारे सेवक मुझे रोक पाएंगे? यह भी याद रखो कि मेरे साथ दस अंगरक्षक हैं। लेकिन मैं जानता हूँ कि तुम्हें इस तरह ले जाना असंभव है। तुम्हारे शरीर को छूने और उसे जानने के बाद, मुझे यकीन है कि जो भी स्त्रियाँ इस तरह उठाई जा सकती हैं, वे मेरी नज़रों में तुच्छ हैं।"

मेरी बोलने की शक्ति गायब हो गई। वह बार-बार मुझे बोलने के लिए कहता रहा। वह थके-हारे व्यक्ति की तरह आहें भरता रहा। मानो हम दोनों की ओर से कह रहा हो, उसने कहा, 'अभी तुम्हारे पास सोचने और निर्णय लेने के लिए कई दिन बाकी हैं।' हम दोनों चुपचाप और शांत सो गए। झोपड़ी के बाहर पहाड़ी हवा सीटी बजा रही थी। दूर कहीं से कभी-कभी भालू की आवाज शांति भंग कर रही थी। जब तक मुझे नींद आई, झोपड़ी में सुबह की रोशनी आ चुकी थी। वह भी बिस्तर पर करवटें बदल रहा था।

"जब मैं सुबह उठी तो वह वहाँ नहीं था। धनुष और तलवार भी नहीं थे। मैं उठी और स्नान किया। मैंने देखा कि उसके अंगरक्षक झोपड़ी के पीछे एक पत्थर की पटिया पर खड़े थे और उंगलियों से किसी चीज़ की ओर इशारा कर रहे थे। उनमें से एक मज़ाक में अपने धनुष से तीर चला रहा था। मैं स्तब्ध रह गई और मेरा

दिमाग सुन्न हो गया। मैं पीछे वाली झोपड़ी में नहीं गई और न ही धर्म को अपनी बाहों में उठाया। मैंने माद्री से बात नहीं की। मैं बस अपनी झोपड़ी में लौट आई और बैठ गई। मैं उसी मुलायम, घास से बुने गद्दे पर बैठी, जो एक मोटे, गर्म कंबल से ढका हुआ था। थोड़ी देर बाद राजा पांडु आए। उनका चेहरा थका हुआ लग रहा था। वे मेरे पास ही बैठे, लेकिन ज़मीन पर नीचे, जैसे कोई आम आदमी सिंहासन के पास खड़ा हो! मैंने उनके चेहरे को खाली नज़रों से देखा। ऐसा लग रहा था कि उन्हें अपनी बात कहने में बहुत मुश्किल हो रही है, वे शब्द ढूंढने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। हिचकिचाहट और मेहनत से उन्होंने कहा, 'कुंती, मैंने सुना है कि वह कल सुबह और रात तुमसे क्या पूछ रहा था। उसकी आवाज़ बहुत तेज़ थी। मैं दीवार के पीछे से सुन रहा था।'"

"मैं डरी नहीं। डर, उलझन और क्रोध से कहीं गहरी कोई चीज़ मेरे मन को खा रही थी। मेरे कान केवल उसके शब्दों को सुन रहे थे, लेकिन मेरा मन कहीं और था, कुछ हलचल मचा रहा था, मुझे नहीं पता क्या, मेरी चेतना से भी गहरा। अवाक, समझ से परे, मैंने उसके चेहरे को देखा। उसने मेरा हाथ पकड़ लिया। मैंने पाया कि उसका हाथ कमजोर था। उसने भावुकता से भरी आवाज़ में कहा, 'अपना वादा याद रखो। यह केवल वंश के लिए वीर पुत्र पैदा करने के उद्देश्य से है और मेरे आदेश के अधीन है।' आगे कुछ न बोल पाने के कारण, उसने मेरा हाथ और कसकर पकड़ लिया। चुपचाप मैंने मन ही मन कहा, 'केवल कुरु वंश को योद्धा पुत्र देने के लिए और उसके आदेश के अधीन'... विचार उमड़ रहे थे लेकिन गला भर आया। ये लोग मेरे वंश के लिए मेरे अपने सुख के बलिदान को कैसे जान और समझ सकते हैं! अगर कोई दूसरा पति होता जो पत्नी के वादे को बहाना बनाकर अपनी पत्नी के पूरे सुख का बलिदान करने को तैयार होता, तो वह समझ जाता। ऐसा माना जाता है कि दुर्योधन ने धर्म की एक नई व्याख्या दी, यह कहते हुए कि पांडवों ने वे महज़ कुंती के पुत्र थे। क्रोध से मेरा दाँतहीन मुँह कसकर बंद हो गया। मैंने स्वयं से पूछा, 'धर्म क्या है?' मैंने मन ही मन कहा, 'कुंती ने धर्म को जिस तरह समझा, उसमें वह कभी असफल नहीं हुई।' मैंने स्मृति में उलझे अतीत की परतों को अलग करना शुरू किया। शाम ढल रही थी। मेरी कमर में शुरू हुआ दर्द कम होने लगा। वीर योद्धाओं में सबसे वीर, जिसने अकेले ही बाघ से युद्ध किया था, ने पांडु से भी अधिक रुंधी हुई आवाज़ में मेरा हाथ माँगा, और यह रुंधना पांडु की तरह बेबसी के कारण नहीं था।

हर रात वह आँसू भरी आँखों से मुझसे विनती करता। मेरी चौड़ी छाती से लगकर, वह दुख में गर्म आँसू बहाता! मैंने भी उसके सीने पर आँसू बहाए थे। फिर भी, गर्भ धारण करने के बाद, मैंने स्वेच्छा से पांडु को सूचित किया, बेचारे मरुत को सांत्वना दी, उनसे अंतिम विरह स्वीकार करने की विनती की, और यद्यपि वह आठ दिन और रुके रहे, मैंने उनका बिस्तर त्याग दिया! कुंती, क्या धर्म के प्रति कोई प्रतिबद्धता नहीं थी? मेरे मन ने मेरी स्मृति की व्याख्या की। भीम कितना अद्भुत पुत्र सिद्ध हुआ! मरुत ने कहा था, 'प्रित, तुम अपने शुभ स्वभाव और मैं अपनी शारीरिक और कामुक शक्ति के साथ - क्या तुम जानती हो कि हम मिलकर कितना अद्भुत पुत्र उत्पन्न करेंगे? यदि हम देवलोक जाते, तो मुझे यकीन है कि वे उसे स्वतः ही सेनापति चुन लेते।' मेरा पुत्र कितना वीर योद्धा है। वनवास के लिए प्रस्थान करने से पहले, मैंने द्रौपदी से कहा था, 'भीम के भोजन में कभी कंजूसी मत करना। यदि उसकी शक्ति कम हो गई, तो हम सब नष्ट हो जाएँगे।' लेकिन किस प्रकार का... उन बारह वर्षों के कष्टों के दौरान, जब उन्हें जड़-जड़ी-बूटियाँ, फल और शिकार किए गए जानवरों का भुना हुआ मांस खाकर गुजारा करना पड़ा, तब द्रौपदी ने उसे कितना भोजन दिया होगा! कृष्ण ने मुझे बताया कि विराट नगर में रसोइया के रूप में काम करते हुए भीम को अच्छा पोषण मिला! वह सचमुच एक बच्चा है, बच्चों में भी बच्चा। उसे अपनी कमर पर बिठाकर दस कदम भी चलने पर माद्री थक जाती थी। पिता पांडु की हालत तो और भी खराब हो जाती, वे हाँफने लगते। क्षमाशील प्रेम और स्नेह में भीम सबसे श्रेष्ठ है। उसका प्रेम अटूट और असीम है, जैसा कि उसके पिता मरुत में भी था। भीम अब तिरपन या चौवन वर्ष का होगा। तेरह वर्षों के वनवास ने उसकी कमर थोड़ी झुका दी थी, लेकिन फिर भी जन्म के समय का शरीर इतना दुबला कैसे हो सकता है? वह इतना लंबा था कि एक औसत व्यक्ति केवल अपना हाथ पूरी तरह उठाकर ही उसकी ऊँचाई के बराबर हो सकता था! द्रौपदी की ऊँचाई तो उसके कंधे तक भी नहीं पहुँचती थी। फिर भी वह उसका पूर्ण दास है। ऐसी बहू को बारह वर्ष वनवास और एक वर्ष दासता में बिताना पड़ा। दो पुत्रों के जन्म के बाद, बड़े पुत्र ने जो शांति की साक्षात मूर्ति थे, और दूसरे जो किसी में भी साहस और आत्मविश्वास भर देते थे, राजा हस्तिनावती वापस जाने के लिए क्यों राजी नहीं हुए? लेकिन वे देव चिकित्सकों के औषधीय कौशल से ठीक होने के विचार से ग्रस्त थे! उन्हें उनकी उपचार शक्ति पर अंधविश्वास था, अपनी यौन शक्ति को पुनः प्राप्त करने की संभावना पर अटूट

विश्वास था। या क्या यह केवल अपने ही बीज से संतान उत्पन्न करने की इच्छा थी? यदि उन्होंने अपने ही बीज से संतान उत्पन्न की होती, तो वे नियोग से उत्पन्न बच्चों को नीचा समझते। मैं उनसे न केवल उनका हाथ पकड़कर, बल्कि उनकी नाक खींचकर भी धर्म का पालन करने की मांग करता! वह इच्छा अवश्य ही बनी रही होगी। अन्यथा उन्होंने रुकने का विकल्प क्यों चुना? वे देव चिकित्सकों को अनाज से लादकर उनका पक्ष लेते रहे। मुझे आश्चर्य हुआ कि उन्होंने रुकने का विकल्प क्यों चुना। देवलोक की यात्रा के कारण उन्हें जो सांस लेने में तकलीफ हुई थी, वह देव चिकित्सकों द्वारा पूरी तरह से ठीक नहीं हो सकी। वे पहाड़ों पर चढ़ने की शक्ति कभी प्राप्त नहीं कर पाए। यदि उन्होंने तब सिंहासन पर बैठने के लिए लौटने का निर्णय लिया होता, तो... हालात कुछ और होते। ये सारी मुसीबतें टल जातीं, और हम इस हालत में न पड़ते", कुंती पानी को घूरते हुए सोच रही थी। पानी बहते रहने पर भी छवि वैसी ही बनी रही! वह हैरान थी, ये कैसे मुमकिन था? कुछ पल के लिए उसका मन इसी उलझन में खो गया। "लेकिन पहाड़ों में बहता पानी शांति कैसे दे सकता है? एक साल के भीम को गोद में उठाना कितना मुश्किल था, और वो अभी चलना भी नहीं सीखा था। ये बच्चा, जिसने अभी बोलना भी नहीं सीखा था, पास के झरने में नहाकर कितना खुश था। उसे न ठंड से डर लगता था, न गर्मी से। हाँ, लगभग इसी समय इंद्र आए थे। हाँ, ठीक उसी समय आए थे।" वह यादों के धागों को सुलझाने लगी। "हाँ, वह उसी समय आया था। कितना सुंदर! लंबी और नुकीली नाक, पतली भौहें, बर्फ़ जैसी सफ़ेद त्वचा, लगभग मेरी ही ऊँचाई का, और मोर के पंखों की कढ़ाई वाला ऊनी वस्त्र। वह वहाँ आया जहाँ बच्चे को नहलाया जा रहा था, और खड़ा हो गया। थोड़ी दूरी पर उसके नौकर झुककर अभिवादन कर रहे थे। ऐसा लग रहा था जैसे वे मुझे ले जाने आए हों! लेकिन उसका चेहरा सौम्य और शांत था।"

उसने पूछा, 'तुम प्रीथा हो, है ना?' उसका लहजा आत्मीय था।

अपनी भीगी हुई साड़ी को ठीक करते हुए मैंने पूछा, 'आप कौन हैं?'

उन्होंने कहा, 'ओह, यह तो हमारे मरुत का बच्चा ही होगा। चेहरा देखते ही पहचान जाओगे, बच्चे में देवत्व के लक्षण हैं।'

तब मुझे समझ आया कि वह देव समुदाय से है। मुझे धर्माधिकारी और मरुत द्वारा देवलोक के सबसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों के वस्त्रों और आभूषणों के बारे में दी

गई जानकारी याद आ गई। फिर भी, मैंने पूछा, 'आपने अभी तक मुझे यह नहीं बताया कि आप कौन हैं।'

मैं इंद्र हूं।

'मतलब...'

देखो, तुम जानते हो, लेकिन मुझसे जानना चाहते हो। मैं देवलोक का राजा इंद्र हूँ। मुझे पाँच साल पहले इस पद के लिए चुना गया था।

मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहूँ, मैंने कहा, 'क्या ऐसा है?' मुझे शर्म आ रही थी। मैंने अपना सिर झुका लिया। लेकिन मुझे शर्मिंदगी महसूस हो रही थी। फिर मैंने अपना सिर उठाया। मुझे उसके नौकर नज़र नहीं आए। वह मेरे करीब आया। अपना हाथ थामे हुए उसने बच्चे को माँगा। भीम को अजनबियों के सामने कभी रोते हुए नहीं देखा गया था। यह एक नया चेहरा था, और उसके ऊपर मोर के पंखों से बुना हुआ चमकीला वस्त्र था - हरा और नीला। बच्चा उसके पास गया और उसे गले लगा लिया। उसने उसे प्यार से गले लगाया और खूब चूमा। दूर पृष्ठभूमि में, पानी धीरे-धीरे बह रहा था। बच्चे को अपनी गोद में बिठाकर उसने मुझसे कहा, 'थोड़ी देर बैठो, मैं तुमसे बात करना चाहता हूँ।'

शर्मिंदगी से अभिभूत होकर मैंने फुसफुसाते हुए कहा, 'तुम्हारे और मेरे बीच किस तरह की बातचीत हो सकती है?'

इससे उन्हें गुस्सा नहीं आया। बल्कि वे कोमल मुस्कान के साथ बच्चे को और अधिक चूमते हुए बोले, 'प्रिता, हमारे देश में बत्तीस कुल हैं। प्रत्येक कुल में सभी स्त्रियाँ सभी पुरुषों की पत्नियाँ हैं और सभी पुरुष सभी स्त्रियों के पति हैं। यह बात तुम अब तक जान चुकी होगी। लेकिन एक कुल के पुरुष को दूसरे कुल की स्त्री को स्पर्श करने की सख्त मनाही है। केवल उनके राजा इंद्र को ही किसी भी कुल की किसी भी स्त्री के साथ संबंध बनाने की अनुमति है। एक स्त्री के लिए यह सबसे बड़ा सम्मान है कि इंद्र उसके पास आए।'

लेकिन मैं तो आपके देश का निवासी नहीं हूँ।

लेकिन आप हमारी भूमि के लिए पूरी तरह से अजनबी भी नहीं हैं। हमारे सेनापति मारुत ने मुझे आश्वासन दिया था कि कोई भी वीर योद्धा आपकी कृपा और अनुग्रह प्राप्त किए बिना सुख-शांति का अर्थ नहीं समझ सकता। मेरा मानना है कि आपने उन्हें अपनी पत्नी बनाने का प्रस्ताव ठुकरा दिया था। वे आपकी दुविधा को समझते थे। केवल कुलों के मुखियाओं और इंद्र को ही अपने लिए निजी पत्नियां

रखने का विशेषाधिकार प्राप्त है। मैं पहले से ही विवाहित हूं। मुझे दूसरी पत्नी से विवाह करने की अनुमति नहीं है। फिर भी मैं आपसे एक कृपा मांगने आया हूं। आपको देखने के बाद, मैं उनके शब्दों को बेहतर ढंग से समझ सकता हूं। अब मुझे विश्वास है कि वे बिल्कुल सत्य हैं।

"उनके शब्द, इतने सीधे और स्पष्ट रूप से बोले गए, कि मेरी सांस ही रुक गई! लाख कोशिश करने के बावजूद, मैं अपना सिर सीधा नहीं रख पा रही थी। बच्चा उनकी गोद में बैठा वीर्यपात कर रहा था। मुझे ऐसा लगा जैसे, अनपेक्षित रूप से, मैं उनके शब्दों और नज़रों में इस कदर फँस गई हूँ जैसे कोई मक्खी मधुमक्खी के छत्ते में फँस जाती है।"

उसने धीरे से उत्तर दिया, “मैं अपने साथ बीस बहादुर और कुशल तीरंदाज लाया हूँ, ताकि ज़रूरत पड़ने पर उनका इस्तेमाल कर सकूँ। तुम्हें ले जाना कोई समस्या नहीं है। लेकिन तुम्हें देखने के बाद मुझे समझ आ गया कि मरुत्था ने ऐसा करना नामुमकिन क्यों कहा था!”

"मुझे वहाँ चुपचाप बैठे रहना शर्मनाक लग रहा था। मुझे ऐसा लग रहा था कि वह मेरे चेहरे को देखकर ही मेरे मन की बातें और विचार समझ सकता है। मैंने झूठ न बोलने का निश्चय कर लिया था। लेकिन उसके चेहरे को देखते हुए मुझे बोलना मुश्किल लग रहा था। उससे नज़रें हटाकर गिरते पानी की ओर देखते हुए मैंने कहा, 'हमारे यहाँ एक विवाहित महिला अपने पति के अलावा किसी और पुरुष से संबंध नहीं रख सकती। यह वर्जित है।'"

'जी हां, यही नियम हमारे संसार में भी लागू होता है। आपने धर्माधिकारी और सेनापति का अपने शरीर में स्वागत अपनी नियोग पद्धति के अनुसार किया था, है ना? तो मुझे भी उसी प्रकार ग्रहण कीजिए, ताकि मैं नियोग का पालन कर सकूं।'

“अगर कोई विधवा है, तो स्थिति अलग होती है। जब पति जीवित होता है, तो केवल वही नियोग की अनुमति दे सकता है, और इसके लिए सही व्यक्ति का चुनाव वही कर सकता है। इसके अलावा, हमारे पहले से ही दो बच्चे हैं। अगर हम अब नियोग की बात करें, तो यह घोर दुराचार से कम नहीं होगा।” “तब तक मैं उसे देखकर बोल सकती थी, उससे आसानी से बातचीत कर सकती थी। मैं हताश और विलीन आँखों से उसके चेहरे को देखती रही। आखिरकार, वह एक शासक था, और उसे कोई रास्ता निकालना मुश्किल नहीं लगा। यह उसके चेहरे पर स्पष्ट था।”

"अच्छा, इसका मतलब है कि आप मान गईं। मैं आभारी हूँ। अब आप घर जाइए। मैं थोड़ी देर बाद लौटकर आपके पति से बात करूँगा। मुझे पूरा यकीन है कि वह मान जाएँगे। उन्हें मानना ही पड़ेगा। एक पत्नी होने के नाते आपने एक और नियोगा संतान के लिए अपनी इच्छा ज़ाहिर की है। उन्हें इसके लिए मना लीजिए। क्या आप मनाएँगी नहीं?" वह उठे और मेरा हाथ पकड़ लिया, मानो मुझसे कोई वादा लेने की कोशिश कर रहे हों।

शर्म से मेरा सिर झुक गया। उसने बच्चे को मेरी बांह में धकेल दिया। मैं जल्दी से बहते पानी के किनारे पर चढ़ गया और अपनी कुटिया में लौट आया। झरना पीछे छूट गया था। मैं पूरी तरह से मानसिक उलझन में था, कई भावनाएँ एक-दूसरे से टकरा रही थीं—चिंता, खुशी, मन का हल्कापन और भारीपन। राजा पलंग पर लेटे हुए धर्म के साथ खेल रहे थे। मेरी गोद में भीम रोने लगा क्योंकि हम अचानक खुली धूप से कुटिया के धुंधलेपन में आ गए थे। मैंने उसे उसके पिता के पास लिटा दिया और गीले कपड़े बदलने और अपना सिर सुखाने के लिए धूप में बाहर चला गया। मैं अपने मन से इंद्र के रूप को नहीं निकाल पा रहा था, वह मेरी चेतना में गहराई तक उतर गया था। उसकी आँखें कैसी थीं! नीली आँखें इतनी तीक्ष्ण थीं कि पूरी पर्वत श्रृंखला को अपनी दृष्टि में समा सकती थीं। लंबी, नुकीली नाक, उसकी ठोड़ी और उसका पूरा चेहरा। थोड़ी देर बाद पाँच धनुर्धर आए और कहा कि वे राजा पांडु से मिलना चाहते हैं। उनके आने की आवाज सुनकर राजा कुटिया से बाहर आए। उन्होंने उन्हें बताया कि देवलोक के स्वामी और राजा इंद्र उनसे मिलने नीचे आए थे और झरने के पास उनका इंतजार कर रहे थे। राजा भावविभोर हो गए। उन्होंने उनसे कहा, "मैं स्वयं उनका स्वागत करना चाहता था। लेकिन अगर मैं उनसे मिलने नीचे उतरूंगा, तो वापस चढ़ना मेरे लिए बहुत कठिन होगा। मैं बहुत थक जाऊंगा। इसलिए कृपया उनसे कहें कि वे हमारी कुटिया में आकर हमें अनुग्रहित करें।"

इंद्र राजसी ठाठ-बाठ से योद्धाओं से घिरे हुए पहुंचे। राजा ने मुझे अतिथि के सम्मान में दही, घी, शहद और चीनी से बने व्यंजन बनाने का आदेश दिया। पांडु ने अतिथि को दर्भ घास से बुनी चटाई पर बैठाया और विधिपूर्वक उनका स्वागत किया। वे उनसे देवलोक में पहले ही मिल चुके थे और उनसे कुछ जान-पहचान रखते थे। उन्होंने एक-दूसरे को शुभकामनाएं दीं और एक-दूसरे के कुशल मंगल की खबर साझा की। अंगरक्षक पर्वत की ढलान पर विश्राम कर रहे थे। मैं अपने

दोनों पुत्रों के साथ कुटिया के बाहर बैठा इंद्र के वाक्पटुता को ध्यानपूर्वक सुन रहा था।

पांडु ने कहा, 'इंद्र, आपका मेरे पास आना मेरा सौभाग्य है। यदि आप हस्तिनावती होते, तो मैं आपका शाही सम्मानपूर्वक स्वागत करता। कृपया मेरी कुटिया की दरिद्रता को हृदय की दरिद्रता न समझें। आपके इस पवित्र आगमन का क्या कारण है?'

इंद्र ने कहा, 'मुझे पता चला है कि तुम्हारे भाई धृतराष्ट्र का एक पुत्र हुआ है, जिसकी उम्र तुम्हारे दूसरे पुत्र के बराबर है।'

पांडु, 'हां। मुझे खबर मिल गई है।'

इंद्र ने कहा, 'इसका मतलब यह है कि तुम्हारे पुत्र और उसके पुत्र राज्य के लिए आपस में लड़ेंगे ही।'

पांडु ने कहा, 'हां। ऐसा ही दिखता है।'

इंद्र ने कहा, "देखो, तुम्हारा भाई जो इतने दिनों से वहीं घोड़े पर सवार है, उसने राजकोष के खजाने का इस्तेमाल जनता और सेना को रिश्वत देने और उनका समर्थन हासिल करने के लिए किया है। अगर कल युद्ध छिड़ जाए, तो तुम्हारे बेटों का साथ कौन देगा?"

राजा ने एक शब्द भी नहीं कहा। मैं उनके चेहरे पर छाई गहरी चिंता की कल्पना कर सकता था।

इंद्र ने कहा, "देवों की कृपा से तुम्हें अपने दो पुत्र प्राप्त हुए। अब हमारे लोग तुम्हें एक और वीर पुत्र देना चाहते हैं। मुझे इसी उद्देश्य से भेजा गया है। तुम्हारी ओर से मरुत ने मुझसे जाने का अनुरोध किया है।"

पांडु ने कहा, 'देवताओं के स्वामी, निःसंतान व्यक्ति नियोग का सहारा लेकर एक या अधिक से अधिक दो पुत्र प्राप्त कर सकता है। मेरे पास पहले से ही दो पुत्र हैं।'

इंद्र ने कहा, "आपका बड़ा बेटा योद्धा नहीं बन पाएगा। और आपके पास अब एक ही बेटा बचा है।" फिर इंद्र कुछ देर रुके। थोड़ी देर बाद उन्होंने आगे कहा, "इंद्र को सभी कुलों की सभी पत्नियों पर अधिकार है। इसके अलावा, मेरे पास हमारी नर्तकियां हैं। आपने उन्हें स्वयं देखा है। मेरा पहला कर्तव्य उनकी सेवा करना है। मैं स्त्रियों से ऊब चुका हूं और उनमें मेरी कोई रुचि नहीं है। लेकिन हमारी प्रजा ने आपके राज्य का कार्यभार संभालने में आपकी सहायता करने पर जोर दिया ताकि आपके और उनके बीच मित्रता के बंधन मजबूत हो सकें। उन्होंने

मुझसे विनती की कि मैं आपको एक और योद्धा पुत्र प्राप्त करने में सहायता करूं। बेशक, यदि आपकी इसमें रुचि नहीं है, तो मैं चला जाऊंगा।"

पांडु कुछ देर चुप रहे। फिर उन्होंने कहा, 'हे देवों के स्वामी और राजा, मैं देवजनों का आभारी हूँ। मैं आपके प्रजाजनों की इच्छा को अस्वीकार नहीं कर सकता। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप नियोग का पालन अवश्य करें।'

इंद्र ने कहा, 'ऐसा ही हो!' कुछ देर बाद पांडु ने प्रार्थना की, 'इंद्र, मेरी दो पत्नियाँ हैं। बड़ी पत्नी के पुत्र हैं। छोटी पत्नी को अनदेखा नहीं किया जा सकता। लेकिन बड़ी पत्नी की सहमति के बिना छोटी पत्नी पर नियोग नहीं किया जा सकता। मैं बड़ी पत्नी से इसके लिए विनती करूँगा। आपको छोटी पत्नी को संतान का आशीर्वाद देना होगा।'

इंद्र ने उत्तर दिया, 'मैं यहाँ केवल आपको एक उपहार देने आया हूँ। इससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप इसे किस पत्नी के माध्यम से प्राप्त करना चाहते हैं। लेकिन मैं यह बताना चाहूँगा कि आपकी बड़ी पत्नी ने धर्माधिकारी और मरुत के मामलों में देव संतान उत्पन्न करने की अपनी क्षमता पहले ही सिद्ध कर दी है। क्या आपको नहीं लगता कि इंद्र का वीर्य सिद्ध क्षमता वाली कोख को निषेचित कर देगा? खैर, यह आपके हित में है। इस पर विचार करें और फिर निर्णय लें।'

अतिथि को विश्राम करने का अनुरोध करके राजा कुटिया से चले गए। तब तक मैं कुटिया से कुछ दूर जा चुकी थी। फिर वे मुझे एक पेड़ के पास ले गए और मुझसे एक बार फिर नियोग के लिए सहमति देने की विनती की। इंद्र ने अपना भोज किया। पहले की तरह, राजा ने मुझसे वही पुराना वादा लिया कि मैं उस पुरुष से प्रेम नहीं करूंगी; कि गर्भधारण के तुरंत बाद मैं उसे माता-पिता के समान मानूंगी...

यह इंद्र न केवल बेहद सुंदर थे, बल्कि अत्यंत चतुर भी थे। शारीरिक शक्ति से कहीं अधिक, वे कलाओं में निपुण थे। रात में उन्होंने मुझे न केवल अंधकार में मन और शरीर के मिलन का अनुभव कराया, बल्कि दीपक की रोशनी में आनंद लेने योग्य कलाएँ भी सिखाईं। मैं जानती थी कि उनके शब्दों, चेहरे के भावों, शैली, क्रिया और कौशल में, मारुत के समान पूर्ण समर्पण और तल्लीनता का कोई स्थान नहीं था। पूर्ण, लगभग अचेतन मिलन के स्थान पर, उन्होंने मुझे मानसिक दूरी से, मानो बाहर से, एक पुरुष और एक स्त्री के बीच यौन अनुभव के दौरान उपलब्ध असीम कौशल और रचनात्मकता का आनंद लेने की संभावना सिखाई। कई बार मैं

उन्हें एक साधारण व्यभिचारी समझकर क्रोधित हो जाती थी। लेकिन उस सुंदर पुरुष की व्यभिचारिता मुझे पर्वतों की चोटियों से भी ऊपर, आकाश में ले जाती थी। देवों के इस स्वामी ने दिन और रात में कोई भेद नहीं किया - सब एक समान था। वे मुझे एक वृक्ष से बनी मादक शराब पीने के लिए मजबूर करते थे, जो उनके अंगरक्षक उपलब्ध कराते थे। वह स्वयं अपने लोक नृत्य की शैली में नाचता और मुझे भी नाचने के लिए प्रेरित करता। वह चापलूसी से मुझे अपने वश में कर लेता, कहता, 'प्रिय, मैं तुम्हारा दास हूँ।' कभी-कभी वह मुझे जबरदस्ती पहाड़ियों की ढलानों पर घुमाने के लिए ले जाता।

"कौन गिन सकता है कि वह हमारे साथ कितने दिन रहा? मैं तो बिल्कुल नहीं। बेशक, पांडु और माद्री ने तो हिसाब रखा होगा! जब पर्वतीय घाटियाँ सूख गई थीं, वे दिन मेरे लिए रस से भरे हुए थे, मेरा शरीर फूल की तरह हल्का था। उसने फिर कभी मुझसे पत्नी बनने के लिए नहीं कहा। उसने मुझे कभी भावनात्मक दुविधाओं में नहीं डाला। उसने मुझे अपने साथ चलने के लिए कहकर किसी नैतिक दुविधा में नहीं डाला। उसने मुझे इतना खुश किया कि मैंने अपनी गर्भावस्था के बारे में राजा को बताने में देरी करना ज़रूरी नहीं समझा ताकि हमारी आपसी खुशी बनी रहे। नहीं, जैसे ही पांडु ने अपने नियोग काल की सीमा का उल्लेख किया, उसने तुरंत सब कुछ समाप्त कर दिया और प्रसन्नतापूर्वक सबसे विदा ले ली। उसके चेहरे पर पूर्ण संतोष था, जब उसने पांडु से कहा, 'राजा पांडु, इंद्र का पुत्र तुम्हारा पुत्र होगा। याद रखना, इस समय इंद्र कोई भी हो, पूरी देव सेना तुम्हारे पक्ष में लड़ने के लिए तैयार रहेगी।' फिर उसने पांडु को मित्रतापूर्ण ढंग से गले लगाया और चला गया।"

"मेरे पुत्र, जो मेरे और इंद्र के मिलन से उत्पन्न हुए थे, उनका रूप-रंग बिल्कुल इंद्र जैसा था। तीखी आँखें। नीली आँखें। नुकीली नाक, ठोड़ी और चेहरा। स्वभाव भी बिल्कुल वैसा ही था—पूरी तरह से सतर्कता, तीक्ष्णता, कर्मठता, सौहार्द और सुख-प्रेम। कुंती के गर्भ ने कभी बीज को धोखा नहीं दिया, कभी बोए गए बीज के विरुद्ध गर्भ धारण नहीं किया। जैसे ही बच्चा पैदा हुआ, मुझे तुरंत पता चल गया। वह इंद्र के पुत्र के अलावा और कोई नहीं हो सकता था। उसकी नीली आँखें ही उसके पिता की पहचान बताने के लिए काफी थीं। भला कौन उस बच्चे को अपनी गोद में नहीं लेना चाहेगा? उस समय तक माद्री की ईर्ष्या काफी बढ़ चुकी थी। वह उसे पाने, गले लगाने, चूमने और दुलारने के लिए बेताब थी, मानो वह उसकी अपनी संतान हो। बेशक, उसकी ईर्ष्या स्वाभाविक और समझ में आने वाली थी।

इन दिनों मैंने उसके मन को समझने की कोई गंभीर कोशिश नहीं की थी। धर्म का जन्म पांडु की इच्छा से हुआ था, और मरुत को उनके अनुरोध पर आमंत्रित किया गया था। यहाँ तक कि इंद्र भी केवल मुझे ही चाहते थे, और किसी को नहीं। तो फिर मैं कैसे हो सकती हूँ?" क्या दोष? सच है, मैंने तीन बार इस अनुभव का आनंद लिया था। तीनों बार मैं गर्भधारण के आवेश से भर उठी। इस बीच, माद्री, जो आम तौर पर दुबली-पतली थी, और भी पतली होती जा रही थी। एक दिन मैंने उसे राजा से पूछते हुए सुना, 'राजा, अब हमारे तीन बेटे हैं। बड़ी बहन ने तीनों को जन्म देने में बहुत संघर्ष किया है। आपसे शादी करके, अगर मुझे भी ऐसा ही संघर्ष सहने को मिले तो मैं संतुष्ट हो जाऊंगी। इन दिनों मेरा मासिक धर्म व्यर्थ ही बीत रहा है। कम से कम एक बार तो...'

मुझे उस पर सचमुच दया आई। राजा ने मुझसे इस बारे में पूछा, क्योंकि मैं गृहस्थी की मुखिया थी। मैंने बस इतना कहा, 'हाँ', लेकिन यह जल्द ही हो जाए। फिर सवाल यह था कि उसे मातृत्व प्रदान करने के लिए किसे चुना जाए? उस समय तक, राजा का उन दो देव चिकित्सकों से गहरा लगाव हो चुका था। मेरा मानना है कि राजा में पौरुष शक्ति के पुनः उत्पन्न होने के लक्षण दिखाई देने लगे थे। यह उनके लिए चिकित्सकों को महान व्यक्ति मानने के लिए पर्याप्त था। जब वे अगली बार हमसे मिलने आए, तो उन्होंने उनमें से एक से नियोग में सहायता करने का अनुरोध किया। उसने उत्तर दिया, 'राजा, हम जुड़वाँ हैं। हम अकेले चिकित्सा नहीं करते। चूंकि आप मुझसे चिकित्सक की भूमिका में आपकी सहायता करने का अनुरोध कर रहे हैं, इसलिए हम दोनों एक साथ अपना उपहार भी अर्पित करेंगे।'

राजा ने मुझसे सलाह ली। मुझे यह ख्याल भी नहीं आया कि यह गलत होगा। देव कुलों में सभी पुरुष भाईचारे से भाग लेते हैं। मैं जानती थी कि हमारी घाटी के देव गांवों में भाई एक ही पत्नी से विवाह करते थे। वैसे भी, ये चिकित्सक जुड़वां थे। माद्री मुस्कुराई। पांडु की ओर से मैंने उससे वही प्रतिज्ञा करवा ली। माद्री, जो इन दिनों मुरझाई हुई थी, अब गीली, पोषित और खिल उठी। उसका चेहरा नई जिंदगी और कोमलता से चमकने लगा। एक बेहद आकर्षक स्त्री, जिसे मैं दिल से गले लगाना और चूमना चाहती थी। उस समय धर्म छह साल का, भीम चार साल का और अर्जुन दो साल का था। माद्री का पेट उसके आकार के अनुपात से कहीं ज्यादा फूलने लगा। मुझे बच्चों से बहुत प्यार था, और मुझे और बच्चे पैदा करने में कोई आपत्ति नहीं थी। बड़े बच्चे नहीं, बल्कि ताजा, मांस और हड्डियों के खिलौने,

जीवित खिलौने! मैं माद्री के गर्भ में पल रहे बच्चे के आने का बेसब्री से इंतजार कर रही थी। प्रसव की जिम्मेदारी मेरी थी। मैं बहुत खुश थी। उसने जुड़वां बेटों को जन्म दिया। उन्होंने राजा के वंश को पांच दिशाओं में विभाजित कर दिया।

माद्री ने स्वीकार किया, 'बहन, मुझे निराशा हुई है कि ये बेटे हैं। मैं एक बेटी के लिए तरस रही थी।'

क्या दो पुरुषों के गर्भाधान से उसके जुड़वां बच्चे हुए? मुझे ऐसा नहीं लगता। ऐसा हो ही नहीं सकता। पास के देव गांवों में, अनेक पतियों से जुड़वां बच्चे नहीं होते थे। देव स्त्रियों में भी, अनेक पतियों और अनेक पत्नियों के बावजूद, एक ही संतान होती थी। जुड़वां बच्चे दुर्लभ थे। माद्री के जुड़वां बच्चों को जन्म देने से मुझे ईर्ष्या होने लगी। मैं भविष्य की संभावनाओं को लेकर सतर्क हो गई। उसे एक ही बार में दो पुत्र हुए। क्या उसका गर्भ मेरे गर्भ से अधिक विशाल था? क्या उसकी कोख मेरे गर्भ से अधिक उपजाऊ थी? मान लीजिए उसे दूसरा मौका मिले और वह एक और जोड़ी बच्चे पैदा करे। मेरे तीन बनाम उसके चार। मैं पीछे रह जाऊंगी। अगर वह दूसरी बार एक भी बच्चा पैदा करे, तो उसके तीन बच्चे होंगे। और मेरे बराबर। इसलिए मैंने राजा से कहा, 'भीम के जन्म के बाद मैं वास्तव में नियोग में रुचि नहीं रखती थी। आपने मुझे तीसरी बार देव लोगों के साथ मित्रता के बंधन को मजबूत करने के लिए मजबूर किया। इसी तरह मैंने इंद्र के बच्चे को जन्म दिया। अब माद्री के भी दो बच्चे हैं। आपको उसे और बच्चे पैदा करने की अनुमति नहीं देनी चाहिए, भले ही वह खुलकर इसके लिए कहे।' यह धर्म का घोर उल्लंघन होगा। बेशक, अगर आपकी पौरुष शक्ति पुनः प्राप्त हो जाती है, तो यह एक अलग बात है। उस स्थिति में, हम दोनों भाग्यशाली होंगे कि हमारे मासिक धर्म व्यर्थ न जाएं।

"राजा ने न केवल इस तर्क से सहमति जताई, बल्कि इसकी सराहना भी की।"

—•✳•—

अध्याय 10

"हम हस्तिनावती से नौ साल दूर रहे थे। राज्य की राजधानी में, गांधारी ने अंधे धृतराष्ट्र से एक के बाद एक संतानें जन्म दीं। अब मुझे एहसास हुआ कि इंद्र के तर्क मुझे फंसाने की कोई चाल नहीं थे। मुझे यह पक्का यकीन होता जा रहा था कि हमारे बच्चे यहाँ और गांधारी के बच्चे वहाँ बड़े होकर अंततः राज्य के लिए युद्ध छेड़ेंगे। मान लीजिए कि हम इस समय भी लौट जाते? बेशक, यही सबसे बुद्धिमानी भरा कदम होता। मैंने राजा से लौटने का आग्रह किया। उन्होंने मेरी बात नहीं सुनी। उन्होंने कहा कि दवा से कुछ सुधार हुआ है। उन्होंने पूछा, पूरी तरह ठीक हुए बिना अब क्यों जा रहे हैं? एक दिन मैंने उन्हें बताया कि हमारे पाँच पुत्र हैं। उन्होंने उत्तर दिया, 'हाँ, पाँच हैं। पाँच और होने में क्या हानि है?' हालाँकि उन्होंने यह कहा नहीं, लेकिन मुझे आभास हुआ कि उनके द्वारा बताए गए आने वाले बच्चे उनके अपने होंगे, नियोग से नहीं। मुझे बहस जारी रखकर उन्हें दुख पहुँचाना ठीक नहीं लगा। आखिरकार, मैंने और माद्री ने नियोग के माध्यम से ही सही, आनंद तो लिया ही था। कौन जानता है कि उन्होंने कितनी पीड़ाएँ झेली होंगी।" मानसिक रूप से तो वह बहुत परेशान रहा होगा! मैंने भी प्रार्थना की कि उसकी प्रजनन क्षमता पुनः प्राप्त हो जाए। लेकिन वास्तव में, उसकी शक्ति क्षीण होती जा रही थी। उस पर्वतीय क्षेत्र में ज़मीन ऊबड़-खाबड़ थी, कहीं भी समतल ज़मीन नहीं थी। उस ज़मीन पर चलने पर पांडु थक जाता था और उसकी साँस फूलने लगती थी।

अब मेरे पाँच पुत्र थे। माद्री के पुत्र, नकुल और सहदेव, मुझसे बहुत स्नेह करते थे और अक्सर मेरी गोद में ही सोते थे। मेरी जांघें ही उन्हें सोते समय गर्माहट देती थीं। वे अपने पिता की तरह सुंदर थे, लेकिन कद-काठी में थोड़े छोटे और नाज़ुक थे। शांत स्वभाव के बच्चे, धर्म की तरह, भीम की तरह नहीं, जो उग्र और शोर मचाने वाला था। वे भीम की तरह पैर नहीं मारते थे। ऐसा नहीं था कि वे निष्क्रिय थे। उनके चेहरे पर हमेशा एक प्यारी सी मुस्कान रहती थी। अपने अंगों को हिलाते समय वे इस बात का ध्यान रखते थे कि उनके हाथों और पैरों की हरकत से मुझे, उनकी बड़ी माँ को, कोई तकलीफ न हो।

"जैसे-जैसे साल बीतते गए, नौकरों की संख्या कम होती गई। कुछ लोग इस जगह की ठंड और ऊब सहन न कर पाने के कारण चले गए। हाल ही में, भोजन और भोजन की आपूर्ति अपर्याप्त हो गई थी, मात्रा कम हो गई थी। लगभग अनजाने में ही बच्चों के पालन-पोषण की ज़िम्मेदारी मुझ पर आ पड़ी। माद्री ने अपना सारा समय बीमार पति की देखभाल में लगा दिया। अगर मैं राजा की देखभाल करती तो उन्हें कुछ बेचैनी महसूस होती। उनके चेहरे पर आशा, इच्छा, बेबसी झलक रही थी और उनका शरीर तैंतीस-तैंतीस वर्ष की आयु में ही मोटा हो गया था। छियालीस-सैंतालीस वर्ष बीत चुके थे, फिर भी उनका चेहरा मुझे पानी में साफ दिखाई दे रहा था। उन्होंने स्वयं को मृत्यु का दंड दे दिया था। लेकिन बच्चों के पालन-पोषण की ज़िम्मेदारी में डूबी यह कुंती उस समय इसे देख नहीं पाई।" उनके विचार पीछे से आती कदमों की आहट से बाधित हुए। उन्होंने पीछे मुड़कर देखा। विदुर सीढ़ियों से उतरते हुए उनकी ओर आ रहे थे। उन्होंने उनसे पूछा, "क्या तुम इतनी देर से यहीं बैठी हो?" उन्होंने सिर हिलाकर इशारा किया। उसके करीब आकर और उसके पास बैठते हुए, विदुरा ने फिर पूछा, "तुम क्या सोच रही हो?"

कुंती ने कहा, "उन्होंने कहा कि वे पांडव नहीं हैं। वे ऐसा कैसे कह सकते हैं?"

विदुरा ने कहा, "महज सोचने से यह समस्या हल नहीं होगी।"

उसे भी ऐसा ही महसूस हुआ। उसने पूछा, "भीष्म ने आपको बुलवाया था। उन्हें क्या कहना था?"

विदुर ने कहा, "वह भी बहुत दुखी और चिंतित था। उसे डर था कि अगर प्राचीन धर्म का उल्लंघन हुआ तो संसार का अस्तित्व ही नहीं रहेगा। लेकिन केवल चिंता और भय ही था, कोई समाधान नहीं। मैंने कहा, 'चलो, तुम, कृपा और द्रोण गुरु और मैं, दुर्योधन के पास चलते हैं और उसे धर्म का उपदेश देते हैं। उससे कहो कि यदि तुम पांडवों को पांडव न समझकर ऐसे शब्द कहोगे, तो हम सब इस नगर को छोड़कर पांडवों से मिल जाएंगे।'

कुंती ने पूछा, "उन्होंने क्या कहा?"

विदुर ने कहा, "मुझे तो ऐसा ही लगा कि वे हस्तिनावती से प्रेम करते हैं।"

कुंती, "बताओ, बताओ, उन्होंने क्या कहा?"

विदुर ने कहा, "मैंने उनसे प्राचीन धर्म के लिए कितनी भी दृढ़ता से विनती की हो, दुर्योधन और उसके साथियों के प्रति उनका प्रेम अत्यंत प्रबल है। मैं इस रहस्य

को सुलझाने का प्रयास कर रहा हूँ। क्या इसका कारण यह है कि वे धृतराष्ट्र के पुत्र थे? बेशक, यह मेरा अपना अनुमान है।"

कुंती के समर्थन का कम से कम एक आधार तो ढहता हुआ प्रतीत हुआ। वह यह निर्धारित नहीं कर पा रही थी कि इन वृद्धजनों के मन में वास्तव में क्या चल रहा है। उसने कभी उनसे सीधे तौर पर सामना नहीं किया था। हस्तिनावती में अपने जीवन के आरंभ से ही, वे उसके मन में श्रद्धा और भय दोनों का भाव रखते थे। परन्तु वह इस बात से विचलित थी कि उनकी ख्याति प्राचीन धर्म के प्रति पूर्णतः समर्पित होने की थी। अब वह स्वयं की स्थिति को लेकर अनिश्चित थी।

विदुर ने कुंती से कहा, "देखो, एक और बात है। तुम्हें याद होगा कि तुम्हारे पुत्रों ने कृष्ण से तुम्हें अपने पास ले जाने का अनुरोध किया था। लेकिन दुर्योधन द्वारा बंदी बनाए जाने के प्रयास से बचने के लिए कृष्ण को भागना पड़ा। कृष्ण ने मुझे संदेश भेजा है कि तुम्हें एक अलग रथ में तुम्हारे पुत्रों के पास भेजा जाए। उनका दूत अभी-अभी मुझे यह संदेश लाया है।"

तेरह वर्ष बीतने के चार महीने बीत चुके थे। वह द्रौपदी और पुत्रों को देखने के लिए व्याकुल थी। उसे लग रहा था कि उसे कृष्ण के साथ जाना चाहिए था। विदुर ने कहा, "सूर्य डूबने वाला है। चलो, चलते हैं।" उठते ही कुंती ने कहा, "आप जाइए। मैं थोड़ी देर बाद आती हूँ।" गंगा में हाथ-पैर धोने के बाद, वह धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़कर चले गए। वह जानती थी कि भीष्म के मन में दुर्योधन और उसके साथियों के लिए एक विशेष स्नेह था। लेकिन सवाल यह था: क्या यह इसलिए था क्योंकि वे धृतराष्ट्र के अपने पुत्र थे, उन्हीं से उत्पन्न हुए थे? यह विचार उसके मन में घर कर गया। लेकिन वह इस पर विश्वास नहीं कर पा रही थी। लेकिन विदुर बिना सोचे-समझे कभी कुछ नहीं कहते थे। उसने कुछ देर सोचा। फिर पश्चिम में सूर्य और वेफर में उसकी छवि मंद प्रकाश में धुंधली होती चली गई। फिर भी, अगर वह ध्यान से देखती, तो छवि स्पष्ट और तेज दिखाई देती। वह इक्यासी वर्ष की हो रही थी और उसकी दृष्टि कमजोर हो रही थी। उसे लगा कि वह अब और कुछ नहीं देख पाएगी। वह पैंतीस वर्ष की आयु में विधवा हो गई थी। उस पर पाँच बेटों की जिम्मेदारी आ पड़ी थी। माद्री की मृत्यु पहले ही हो गई थी, शायद इसलिए कि वह उन चीज़ों को न देखे जो अब घटित हो रही थीं। मैंने सोचा: 'क्या उसे मुझसे ज़्यादा समझ थी?' मेरा गुस्सा उस पर और अपने पति पर उमड़ पड़ा। वह अकेली हमारे पति की देखभाल कर रही थी, जिनका स्वास्थ्य तेज़ी से बिगड़ रहा था। जब मैं

उनकी सेवा करने जाती, तो वे बेचैन हो जाते। क्यों? यह बाद में स्पष्ट हुआ। मैं घर की मुखिया थी, घर की बागडोर मेरे हाथ में थी। शायद वे मुझसे वैसे ही डरते थे जैसे कोई बच्चा अपनी डरावनी माँ से डरता है। तब मुझे यह पता नहीं था। यह एक दोपहर का समय था, इससे पहले कि मुझे पता चले कि वे मेरी देखभाल का स्वागत क्यों नहीं कर रहे थे। यह वह समय था जब सर्दी धीरे-धीरे खत्म हो रही थी। हाँ, सर्दी जा रही थी। मैंने माद्री को मेरी ओर दौड़ते हुए देखा, वह रोते हुए कह रही थी, 'बहन, बहन।' मेरी पहली प्रतिक्रिया यह थी कि वह शायद किसी बच्चे के डूबने या जंगली जानवर द्वारा हमला किए जाने से परेशान होगी। मैंने झोपड़ी में इसके संकेत खोजने के लिए चारों ओर देखा। मैंने नकुल और सहदेव को खेलते देखा। अर्जुन एक पेड़ पर लगे फल पर तीर चला रहे थे। धर्म और भीम नदी के पास वाले गाँव गए थे। मुझे पता था क्योंकि उन्होंने मुझे बताया था। समझ न पाने और चिंतित होकर मैंने उससे पूछा, 'क्या हुआ? क्या?' बार-बार 'राजा' कहते हुए, सिसकते हुए उसने अपना चेहरा मेरे सीने से लगा लिया। जैसे ही मैं उससे पूछ रही थी, मुझे सच्चाई का आभास हो गया। मेरा हाथ पकड़कर वह आगे दौड़ पड़ी। पहाड़ियों की ढलानें अभी भी बर्फ से ढकी थीं। धारा का पानी गाढ़े दही की तरह बह रहा था। कटे हुए रास्ते पर, मैं उसके पीछे-पीछे घुमावदार मोड़ों से गुज़री। थोड़ी देर बाद मैंने राजा पांडु को धूप में जलते हुए एक बड़े पत्थर की छाया में देखा। मैंने उन्हें चेहरा ऊपर की ओर करके लेटे हुए, मृत, बिल्कुल मृत देखा। चेहरे पर अभी भी उस असहनीय दर्द के निशान थे जिसने उसे मरोड़ दिया था और विकृत कर दिया था। जब मैंने उससे पूछा कि यह कैसे हुआ, तो उसने कहा, 'सांस फूल गई थी'। फिर मैंने उससे पूछा कि वह उन्हें इतनी दूर क्यों ले आई, वह बेकाबू होकर सिसकने लगी। वह इतनी ज़ोर से चीखी कि दोनों ओर के पहाड़ों तक उसकी आवाज़ पहुँच गई। जो रोना मैं रोना चाहती थी, वह नहीं निकला, अटक गया। मेरा गला सूख गया। मैंने राजा के पूरे शरीर को छुआ - छाती, हाथ, सिर से पैर तक। मैंने पाया कि उन्होंने अंतर्वस्त्र पहने हुए थे। ऐसा लग रहा था जैसे वे नहाने के लिए तैयार हुए हों। फिर मैं माद्री की ओर मुड़ी। मैं पल भर में समझ गई। मैंने कहा, 'अरे दुष्ट, तूने पति की हत्या की। तूने ही उसे मारा। क्या तूने उसे मारने के लिए इतनी दूर तक पैदल चलकर लाई?' मैंने उसके गाल पर ज़ोर से थप्पड़ मारा। लेकिन मुझे अपने इस कृत्य का ज़रा भी होश नहीं था। राजा की मृत्यु का वाकया पृष्ठभूमि में चला गया जब मैंने माद्री को बेहोश होते देखा। मैं अपने कंबल से उसके

शरीर, चेहरे, हथेलियों और पैरों को मलने में व्यस्त हो गई ताकि उसे होश आ सके। राजा के शव और माद्री को उस हालत में छोड़कर नौकरों को बुलाने के लिए बाहर जाने का कोई सवाल ही नहीं था। अगर मैं उन्हें छोड़ देती, तो पूरी संभावना थी कि भीषण ठंड से बचने के लिए पहाड़ से उतरते भेड़िये उन्हें खा जाते। उस समय मुझे बस इतना ही सूझा कि माद्री के शरीर को मलकर उसमें गर्माहट पैदा करूँ और राजा के जमे हुए शरीर को पूरी तरह से ढक दूँ। वह अभी भी जीवित थी। उसके होंठ हिल रहे थे। वह सपने में जैसी कोई बात बुदबुदा रही थी। मैंने उसका सिर उठाया और अपनी गोद में रख लिया। जैसे उसे दूध पिला रही हो, मैंने उसे गले लगाया और उसे प्यार से सहलाया। मैंने उसके कान में फुसफुसाया, 'माद्री, माद्री, कृपया, क्या हुआ! इसे भूल जाओ। सुनो, छोटे बच्चे झोपड़ी के बाहर खेल रहे हैं। मैंने नौकरों को कुछ नहीं बताया है।' मुझे और कुछ समझ नहीं आ रहा था कि क्या करूं।

काफी देर बाद उसे होश आया। उसने अपनी आँखें खोलीं। मेरे बार-बार मना करने के बावजूद वह उठ खड़ी हुई। उसने झुका हुआ सिर नहीं उठाया। मैंने उससे कहा, 'मैं नौकरों को बुलाता हूँ। राजा का ध्यान रखना,' और जल्दी से वहाँ से चला गया। एक नौकर को बच्चों का ध्यान रखने का निर्देश देकर, मैं दो नौकरों के साथ उस स्थान पर लौटा जहाँ पांडु मृत पड़े थे। जब तक मैं वहाँ पहुँचा, मेरी साँसें तेज़ हो गईं। माद्री मृत राजा का सिर अपनी गोद में लिए बैठी थी। उसका पूरा चेहरा गीला था, हालाँकि उसकी आँखें खाली लग रही थीं। नौकरों ने पूछा, 'क्या हुआ?' माद्री ने उन्हें इशारा किया कि वे न पूछें।

"आगे क्या? ज़ाहिर है, अंतिम संस्कार। लेकिन उस समय किसी को भी ऐसा करने का ख्याल नहीं आया। माद्री मानो किसी दूसरी दुनिया में थी। मुझे इस बात से डर लग रहा था कि अगर हमने शव का दाह संस्कार कर दिया, तो कुछ भी नहीं बचेगा, बस खालीपन ही रह जाएगा। मैं वहीं बैठा रहा। नौकर खड़े होकर इंतज़ार करते रहे। पता नहीं कितनी देर बाद, मैंने कहा, 'तुममें से कोई जल्दी से तालाब के पास वाले गाँव में जाओ और धर्म और भीम को ले आओ।' छोटा नौकर तुरंत चला गया।"

बड़े नौकर ने सलाह दी, 'माँ, इस तरह चुपचाप बैठे रहने का क्या फायदा? हमें अगले कदम के बारे में सोचना चाहिए। शव जम रहा है। सर्दी का मौसम भी है।' मैं बस माद्री के चेहरे को देखती रही। वह एक मूर्ति की तरह स्थिर थी, उसके

आसपास जो कुछ हो रहा था, उसका उस पर कोई असर नहीं पड़ रहा था। मैं भी चुपचाप बैठी रही। थोड़ी देर में छोटा नौकर धर्म और भीम के साथ लौटा। वे सचमुच दौड़ रहे थे। धर्म ने मुझसे पूछा, 'माँ, पिताजी को क्या हुआ?' आठ साल के भीम ने माद्री के कंधे हिलाते हुए पूछा, 'माँ, पिताजी के निधन की खबर है। मृत्यु का क्या अर्थ होता है?' तब तक तालाब के पास वाले गाँव से लगभग आठ-दस लोग आ गए, सभी पुरुष और सभी दौड़ते हुए। उनकी पत्नियाँ, बच्चे और बूढ़े लोग उनके पीछे-पीछे आए। वे सभी राजा के शव के चारों ओर जमा हो गए। माद्री ने राजा का सिर धीरे से उठाया और उसे ज़मीन पर रख दिया। तब तक गर्दन इतनी अकड़ चुकी थी कि उसे हिलाना मुश्किल था। माद्री दृढ़ निश्चय के साथ मेरे पास आई और मेरा हाथ पकड़कर बोली, 'तुम आगे का काम जारी रखो। मैं तुम्हें गले लगा लूँगी।' 'लाश को जला दो और चले जाओ।'

मैं स्तब्ध रह गई, उसकी बात समझ ही नहीं पा रही थी। जब मैंने उससे पूछा कि आखिर बात क्या है, तो उसने बस अपने फैसले की पुष्टि की। मैंने उसे शांत करने की कोशिश की, 'क्या तुम इसलिए गुस्सा और परेशान हो क्योंकि मैंने तुम्हें थप्पड़ मारा? जो हुआ सो हुआ। अगर तुम ऐसा करती रहोगी, तो बच्चों का क्या होगा? अब मुझे अपना समर्थन दो, क्या तुम नहीं दे सकती?'

माद्री ने अपना निर्णय नहीं बदला। नौकरों, ग्रामीणों और यहाँ तक कि धर्म और भीम ने भी उसे गले लगाकर उससे विनती की कि वह अपना इरादा छोड़ दे। मैंने भी नकुल और सहदेव को अपनी गोद में बिठाकर अत्यंत विनम्रता से उससे विनती की, लेकिन वह जरा भी नहीं झुकी। मैंने अंतिम संस्कार को कुछ देर के लिए टाल दिया, उम्मीद थी, पर व्यर्थ। ग्रामीण शव को झोपड़ी में ले गए जहाँ उसे एक कंबल पर आराम से लिटा दिया गया। मैंने कहा कि अंतिम संस्कार अगले दिन किया जाएगा। वह शव के पीछे बैठी थी। जैसे ही यह खबर फैली, गाँव से और भी लोग आ गए। उन्होंने भी उससे विनती की। वह अपने निर्णय से नहीं डिगी। उसने झोपड़ी का दरवाजा बंद कर दिया ताकि कोई अंदर न आ सके। हम दोनों ने, मैं और वह, शव के साथ रात बिताई, एक छोटी सी जलती हुई बाती हमारे साथ थी।

वह आधी रात तक चुप रही, लेकिन अचानक फूट-फूटकर रोने लगी, 'देखो, मैं निश्चित रूप से मर रही हूँ। इसमें कोई शक मत करो। इससे पहले मैं तुमसे सब कुछ कबूल करना चाहती हूँ। वैसे भी तुम मेरे बच्चों की माँ बन चुकी हो। मुझे पता

है कि तुम्हें मुझसे बहुत ईर्ष्या है, मेरे बच्चों से नहीं। क्या तुम सचमुच मेरे बच्चे पैदा नहीं करना चाहती थी?'

मैं चुप रहा। मैं उसके चेहरे को घूरता रहा। मेरे जवाब का इंतज़ार किए बिना, उसने आगे कहा, "राजा की प्रजनन क्षमता लगभग पाँच-छह महीने पहले पूरी तरह से ठीक हो गई थी। लेकिन वह तुमसे डरता था। क्यों? मुझे नहीं पता। मैं भी तुमसे डरती हूँ। सैर पर जाने के बहाने वह मुझे तुमसे बहुत दूर ले जाता था। जहाँ तक मेरी बात है, मैं इसके लिए बुरी तरह तड़पती थी। क्या तुम उस देह-के-लिए-देह की भूख की तीव्रता की कल्पना कर सकते हो? इससे बड़ा क्रूर दंड और कोई नहीं है। वह बूढ़ा भीष्म, अपने सैन्य कौशल और धन से मेरे माता-पिता को लुभाकर, मुझे इस अतृप्त भूख में धकेलकर विवाह कक्ष में ले गया और बाहर से दरवाजा बंद कर दिया। मुझे यकीन है कि वह बूढ़ा मरने के बाद सबसे भयानक नरक में जाएगा, कभी स्वर्ग नहीं जाएगा। मरने से पहले मैं उसे क्यों श्राप दूँ? मैं क्या कह रही थी?" वह रुक गई, मानो कुछ याद करने की कोशिश कर रही हो। लेकिन फिर बोली, "हाँ, मैंने कहा था कि मैं भी तुमसे डरती थी। हाँ, राजा।" मैं तुम्हारे शरीर पर सवार होना चाहता था, उसका आनंद लेना चाहता था। लेकिन तुम तक पहुँचने की हिम्मत नहीं थी। एक दिन उसने मुझसे कहा, 'कुंती एक बेहद खूबसूरत स्त्री है। उसे देखते ही मैं उसका गुलाम बन जाता हूँ, बिल्कुल पराजित। मैं उसके शरीर पर सवार होने के काबिल नहीं हूँ। तुम ही मेरे लिए उपयुक्त हो।' ये शब्द तुम्हारे लिए मेरी ईर्ष्या को खत्म करने के लिए काफी थे। हाँ, उसके शब्दों ने मेरी ईर्ष्या को बुझा दिया। क्या तुम सुन रहे हो?' वह फिर रुकी, मेरे चेहरे को घूरकर देखा। मैं चुपचाप बैठा उसकी बातें सुन रहा था। फिर उसने आगे कहा, 'मैंने कहा, भूख। इन पाँच-छह महीनों से मैं राजा को सैर पर ले जा रही हूँ। हाँ, चट्टानों और पेड़ों की छाँव में। वह मुझे उत्तेजित कर देता था, मुझे पागल कर देता था। फिर भी उसमें पूरी शक्ति नहीं होती थी। वह बहुत जल्दी और आसानी से थक जाता था। फिर पराजित होकर सो जाता था। मैं उससे विनती करती, 'राजा, इतनी जल्दी क्यों? दवाइयों को अपना पूरा असर दिखाने दो। वीर्य को पर्याप्त मात्रा में स्रावित होने दो।' नहीं, वह मेरी एक भी बात नहीं मानता था। आधा संतुष्ट होकर मैं तीव्र पीड़ा में कराह उठती। तुम्हें पता है वो क्यों धैर्यहीन था? उसे अपना बच्चा पैदा करने की बहुत जल्दी थी। उसे अपना बच्चा पैदा करने, उसे गले लगाने, दुलारने, चूमने और आनंद लेने की एक जानलेवा इच्छा सता रही थी। मैं भी अपने गर्भ में

बच्चा बोने के लिए लालची थी। मैं तुमसे ईर्ष्या करती थी।' इस क्षण मुझे तीव्र पीड़ा हुई। मैं बेहोश हो गई। मैंने अपना सिर अपने सामने पड़े शव पर रख दिया। वह बर्फ की तरह ठंडा और अकड़ा हुआ था। पूरे पर्वत श्रृंखला की सन्नाटे भरी खामोशी ने मेरी नसों को जमा दिया। थोड़ी देर बाद, मैं बेहोशी से उबर गई। उठी और वहीं बैठ गई। हर समय माद्री मुझे देख रही थी। उसने आगे कहा, 'तुम्हें पता है आज दोपहर क्या हुआ? मैं बहुत उत्तेजित थी, मेरा शरीर आग की तरह जल रहा था। वो ज्यादा देर तक टिक नहीं सका, जल्दी थक गया, पूरी तरह हार गया। उसने पहले मुझे बहुत उत्तेजित किया था। अब वो मुझे संतुष्ट नहीं कर सका। यह मेरे लिए बहुत क्रूर था! मैंने उसे ज़ोर से गले लगाया, उसे कसकर पकड़ लिया, ताकि वो मैं बच नहीं पाई। मैं उसे उकसाती रही, 'आओ महाराज, मुझे और चाहिए, यह काफी नहीं है। क्या यही तुम्हारी क्षमता है?' मैंने उसके कंधे दबाए। कुंती, क्या तुम्हें याद है मैंने हस्तिनावती में तुम्हें बताया था कि हमारी मद्रास स्त्रियाँ पीढ़ी दर पीढ़ी बिस्तर पर कौन-कौन से हुनर सिखाती हैं? खैर, मैंने उन सभी हुनर को उस पर आजमाया। उसे आग लगा दी। शुरू में उसे भी यह अपने ऊपर क्रूर लगा। लेकिन धीरे-धीरे वह उत्तेजित हो गया और कहने लगा, 'माद्री, माद्री, तुम्हारे कारण मेरी शक्ति फूट पड़ी है, विस्फोट हो गया है। मैंने पहले कभी ऐसी शक्ति का अनुभव नहीं किया था।' वह मुझ पर ज़ोर-शोर से काम करने लगा। मैं इस ज्ञान में खो गई थी कि वह अंततः एक पूर्ण रूप से सक्षम पुरुष बन गया है, उसकी बीमारी ठीक हो गई है और शक्ति पूरी तरह से बहाल हो गई है। मैं आनंदित थी। उसके चेहरे पर क्या आनंद था, उसके चेहरे पर उत्तेजना की क्या ज्वाला थी, वह खुशी से पागल हो गया था। मैं अंततः खुशी के पहले कदम तक पहुँच गई थी। लेकिन अचानक मैंने देखा कि उसका चेहरा विकृत, बदसूरत हो गया। वह असहनीय दर्द से जकड़ा हुआ था। फिर वह उसका सिर मेरे माथे से टिका हुआ था। उसकी आवाज़ अस्पष्ट हो गई और शब्द आपस में उलझ गए। फिर, फिर, उसकी धड़कन रुक गई, एकदम स्थिर। लेकिन मुझे यह समझने में कुछ समय लगा कि क्या हुआ था।

अचानक मेरे मन में उसके लिए दया के सिवा कुछ नहीं था। वह मेरी अपनी बेटी जैसी लग रही थी, एक अभागी बेटी। शव के चारों ओर घूमकर मैं उसके पास गया, उसके बगल में बैठ गया। दोनों हाथों से मैंने उसे कसकर गले लगा लिया। वह शांत थी, मानो मेरे आलिंगन से बेपरवाह हो, यहाँ तक कि विरोध भी कर रही हो। वह

सामने पड़े शव की तरह गतिहीन और निर्जीव बैठी थी। मेरी आँखों में पानी आ गया। उसकी आँखें बर्फ की तरह जम गईं। मैंने उसे काफी देर तक गले लगाए रखा। वह मेरी बाहों में एक निर्जीव, गतिहीन लकड़ी के लट्ठे की तरह पड़ी थी। मैंने उससे फिर से अपना इरादा बदलने की विनती की, 'देखो, तुम अपने पति की चिता पर मर सकती हो। लेकिन तुमने खुद कहा है कि राजा की शक्ति लगभग पाँच-छह महीने पहले जागृत हुई थी। इन दिनों में, मान लो कि तुम संयोग से गर्भवती हो गई हो या शायद आज ही गर्भ में बीज आ गया हो। अगर तुम मर जाती हो, तो तुम भ्रूण की हत्या की दोषी होगी। यह एक गंभीर पाप है। सुबह हम अंतिम संस्कार करेंगे।'

"माद्री ने तुरंत जवाब नहीं दिया। मुझे उम्मीद जगी। लेकिन कुछ देर बाद उसने कहा, 'तुम्हें याद है, नकुल और सहदेव के जन्म के बाद से मुझे मासिक धर्म नहीं हुआ है। मुझे समझ नहीं आ रहा कि मैं गर्भवती हुई हूँ या नहीं। चाहे कुछ भी हो जाए, मैंने मरने का निश्चय कर लिया है।"

मान लीजिए कि आप गर्भवती हो गई हैं।

माद्री ने कहा, 'गर्भवती हो भी गई हूँ तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। आप हमारे मामा विचित्रवीर्य की कहानी तो जानते ही हैं, जो बूढ़े और बीमार शांतनु के पुत्र थे। खैर, मैं किसी बीमार व्यक्ति के बच्चे को जन्म नहीं देना चाहती, और ऐसे बच्चे को जन्म नहीं देना चाहती जो शारीरिक रूप से विकलांग या कायर निकले। मेरे लिए इतना ही काफी है कि नकुल और सहदेव स्वस्थ और तंदुरुस्त हैं।'

मैंने कुछ नहीं कहा। मुझे अपने मन में पूरा यकीन था कि वह अपने फैसले से पीछे नहीं हटेगी। उसने फिर कहा, "कृपया इस तरह से बात न करें जिससे मेरी लालसाएं फिर से जाग उठें। आप मुझसे पूछ सकते हैं कि इस तरह मरकर मुझे क्या हासिल होगा। मुझे बताएं, अब जीने का क्या मतलब है? इतने वर्षों तक मैं विधवा की तरह रही, अपनी सभी इच्छाओं को दबाकर। भविष्य भी ऐसा ही होगा। हमें हस्तिनावती लौटना ही होगा, है ना? वे मुझे दिन-रात मेरे पति की हत्या का आरोप लगाकर मुझे जीते जी मौत के मुंह में धकेल देंगे।"

"हाँ, माद्री चली गई, इस दुनिया से चली गई। शीतकाल के लिए आए देवों के एक कुल ने यह खबर सुनी और वहाँ इकट्ठा हो गए। स्थानीय तालाबों के पास के गाँवों से लोग आए। एक बड़ी भीड़ जमा हो गई। रोते-बिलखते बच्चों को नौकरों के साथ पीछे छोड़ दिया गया। माद्री चिता पर चढ़ गई। वह शव को गले लगाकर लेट

गई। मैंने आखिरी बार बेताब होकर पुकारा, 'माद्री, माद्री, कृपया उठो और मेरे पास आओ।' मैंने फिर से पुकारा, लेकिन जो हुआ वह यह था कि माद्री जिंदा जल रही थी, नरक भोग रही थी। वह कराह रही थी। वह चीख रही थी। लेकिन वह इससे बाहर नहीं निकल पाई। वह चली गई, मुझे जीवन की सारी उलझनें छोड़कर।"

"हाँ, उसके जाने के बाद सारी चिंताएँ और परेशानियाँ मुझ पर आ गईं। मैं हस्तिनावती लौट आई, चाहे इन बोझों को सहते हुए या इन्हें पैदा करते हुए। राजा की मृत्यु की खबर सुनकर सभी देववंशी नीचे आ गए। धर्माधिकारी, मरुत्थ, इंद्र और चिकित्सक जुड़वाँ भाई, सभी आ गए। चारों ने विनती की, 'प्रिंत, तुम वापस क्यों जाना चाहती हो? ये हमारे बच्चे हैं और तुम हमारी पत्नी। हमारे साथ, देववंशी बन जाओ। ये बच्चे देववंशी संतान बनेंगे।' मरुत्थ ने भीम को गले लगा लिया। इंद्र भी अर्जुन पर मोहित थे। इन चिकित्सक जुड़वाँ भाइयों को नकुल और सहदेव से गहरा स्नेह था। मैंने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया, अपने पैंतीस वर्षों के अनुभव को भूलकर, देवलोक में विधवापन के बिना रहने के सुख को त्याग दिया; लेकिन हस्तिनावती के विधवापन को स्वीकार करते हुए, स्वयं को बलिदान कर दिया। मैं बच्चों के साथ नीचे आई, पहाड़ों और पहाड़ियों से उतरती हुई, जबकि सेवक बारी-बारी से नकुल और सहदेव को उठाकर ले जा रहे थे। मैं नीचे आई।" हस्तिनावती में सड़ने के लिए। भीष्म ने तब अपने पाँचों पोते-पोतियों को गले लगाया। अब वे उनके साथ भेदभाव कैसे कर सकते थे? कुंती ने आह भरी। चारों ओर अंधेरा छाया हुआ था, और केवल नदी के पानी की आवाज़ सुनाई दे रही थी। नदी की आवाज़ सुनाई दे रही थी, लेकिन वह दिखाई नहीं दे रही थी। वह आँखें खोलकर बैठी रही। कुछ देर बाद, विदुर ने ऊपर से आवाज़ दी। वह उठी और धीरे-धीरे चूने और गारे से बनी सीढ़ियों पर चढ़ी। ऊपर के घर से अनुष्ठान की अग्नि और घी की सुगंध आ रही थी।

वह विदुर के साथ भोजन करने बैठी। भोजन में दूध में पका हुआ नरम चावल था। उसने लकड़ी के बर्तन से उसे पी लिया। उसके साथ विदुर और उनकी बीमार पत्नी भी भोजन कर रहे थे। उनके बच्चे और पोते-पोतियाँ बगीचे में या छत पर थे। कुंती को याद आया। उसे अगले दिन सुबह जल्दी उठना था। सूर्योदय से पहले जब कर्ण नदी पर उतरेंगे, तो उसे उनसे मिलना था। वह उदास थी। ऐसा लग रहा था जैसे किसी ने उसे चुभो दिया हो। भोजन के बाद, वह बाहर चूने के ओखली से बनी

सीढ़ी पर बैठ गई। थोड़ी देर बाद विदुर भी उसके पास आ गए। कुछ देर तक वे चुपचाप बैठे रहे। शुरू से ही ऐसा ही होता आया था। उन दोनों का एकमात्र साथी मौन था, बिना शब्दों का मौन। काफी देर बाद, विदुर ने कहा, "कुंती, क्या तुम सोना नहीं चाहती?"

कुंती ने कहा, "मैं सो जाऊंगी। लेकिन एक बात है। उस समय भीष्म ने ही कहा था कि कोई झगड़ा नहीं होना चाहिए और मेरे पुत्रों को खांडवप्रस्थ दिला दिया था। मूल राजधानी हस्तिनावती दुर्योधन के पास ही रही। अब, कृपया मेरे पुत्रों को संदेश भेजें कि कुंती हस्तिनावती लौट आई हैं। वह वहां से नहीं हटेंगी। उन्हें लड़ना होगा और हस्तिनावती जीतनी होगी। और राज्याभिषेक हस्तिनावती में ही होना चाहिए।"

विदुरा अचंभित रह गया। उसने कहा, "यह तुम क्या कह रहे हो?"

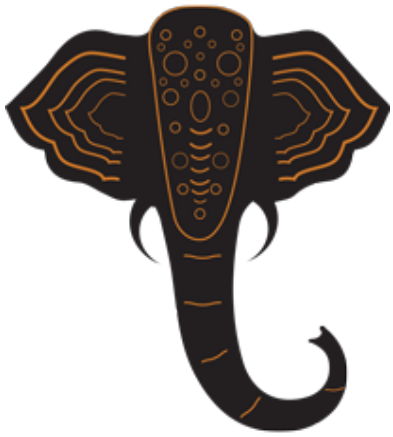
कुंती ने कहा, "मेरे पति का राज्याभिषेक उस अंधे से पहले हुआ था, है ना? क्या धर्म दुर्योधन से दो वर्ष बड़े नहीं हैं? मूल राजधानी में केवल मेरे पुत्रों का ही शासन होना चाहिए। मैं जो कह रही हूँ, वह धर्म के वचन हैं। उनके पास एक दूत भेजो जो इस संदेश को समझ सके और उन्हें स्पष्ट शब्दों में बता दे। मेरे पुत्र धर्म के शत्रुओं को परास्त करने के बाद अपनी विजयी सेना के साथ मुझसे मिलने यहाँ आएँ। तब तक मैं यहाँ से नहीं जाऊँगी।"

विदुरा, "मान लीजिए संयोगवश कोई शांति संधि हो जाती है?"

Kunti, "Then let Duryodhana go to Indraprastha."

—•⁕•—

भाग तीन



अध्याय 11

कृष्ण भी उपप्लव्य नगर में डेरा डाले हुए थे। यह पांडवों के युद्ध प्रयासों का केंद्र था। यह कोई छोटा नगर नहीं था, पर बहुत बड़ा भी नहीं था। वास्तव में, यह विराट राज्य की राजधानी विराट नगर के आधे से भी कम था। विराट के राजा ने इसे विवाह के माध्यम से प्राप्त अपने नववंशी लोगों के लिए छोड़ दिया था, ताकि वे आगामी युद्ध की योजना बनाने और तैयारी करने के लिए जगह पा सकें। उन्होंने इतने मकान खाली करवा लिए थे कि न केवल पांडव, बल्कि युद्ध में शामिल होने के लिए आमंत्रित राजा भी ठहर सकें।

दोपहर की चिलचिलाती गर्मी सहन न कर पाने के कारण भीम ठंडी चटाई पर सो गए। खिड़कियाँ लामंच की जड़ों से बुने हुए लटकते कालीनों से ढकी हुई थीं। नौकर हवा को ठंडा करने के लिए लगातार उन पर पानी डाल रहे थे। भीम वास्तव में आधी नींद में थे। उन्होंने कम खाने का निश्चय किया था, लेकिन करम्भा और मटन जैसे स्वादिष्ट व्यंजन सामने होने पर भला अधिक खाने के प्रलोभन का विरोध कैसे किया जा सकता था? हमेशा की तरह, उस दिन भी भीम का पेट भरा हुआ था। ऊपर से, यह उमस भी असहनीय थी। यह कष्ट कुछ देर और रहेगा, फिर

सूरज डूब जाएगा और ठंडी हवा चलेगी। गर्मी कम हो जाएगी। उन्होंने मन ही मन सोचा, 'बाहर पेड़ के नीचे रहना लामंच की ठंडी चटाई के नीचे बैठने से बेहतर है।' इन्हीं विचारों के साथ वे एक करवट बदल रहे थे कि तभी एक नौकर अंदर आया और बोला, "राजा यादव कृष्ण आ गए हैं।"

भीम उठ बैठा। हालाँकि उसके बैठने के लिए रेशमी कपड़े से ढकी लकड़ी की चौकी उसके सामने रखी गई थी, कृष्ण ने भीम के बगल में नंगे मोर्टार के फर्श पर बैठना पसंद किया, शायद इसलिए कि वह ठंडा लग रहा था। भीम अच्छी तरह जानता था कि कृष्ण वहाँ क्यों आए थे। इस ज्ञान ने उसके भीतर की मानसिक उथल-पुथल को फिर से जगा दिया, जो पहले थोड़ी शांत हो गई थी। अपना ऊपरी वस्त्र उतारकर, गर्दन और छाती से पसीना पोंछते हुए कृष्ण ने कहा, "आखिरकार, मत्स्य देश की गायें उत्तम नस्ल की होती हैं। उनके दूध की गाढ़ापन केवल हमारी मथुरा की गायों के दूध में ही पाया जाता है। इसीलिए करम्भा खाने से कभी थकान नहीं होती। क्या यह सच नहीं है?"

भीम ने कुछ नहीं कहा। कृष्ण ने उसके चेहरे को देखकर उसके अंतर्मन को भांप लिया। उन्होंने भीम से वही प्रश्न दोहराया, "क्या यह सच नहीं है?"

भीमा, "मुझे तुम्हारी मथुरा वाली गाय के दूध के स्वाद का कोई अंदाजा नहीं है। लेकिन मैं तुम्हें यकीन दिला सकता हूँ कि इन विराट गायों का दूध लाजवाब होता है। अगर ये गायें पहाड़ी ढलानों पर हरी-भरी घास चरें, तो वे भरपूर दूध देती हैं। लेकिन पहाड़ियों पर चढ़ने-उतरने से पशु थक जाते हैं और दूध की मात्रा कम हो जाती है। शायद शरीर का पानी पसीने के रूप में निकल जाता है, जिससे दूध की मात्रा कम हो जाती है।"

कृष्ण ने कहा, "शाबाश भीम! गायों के बारे में जितना ज्ञान तुम्हें है, उतना तो मुझे नहीं है।" कृष्ण भीम के करीब गए और प्रशंसापूर्वक उनके कंधे पर हाथ फेरा।

भीम ने कहा, "कृष्ण, जैसा कि आप कहते हैं, मैं गाय का दूध, दही, घी आदि खाने में आपसे कहीं अधिक कुशल हूँ। मुझे नहीं लगता कि आप मेरी प्रशंसा बिना किसी भावना के कर रहे हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि आप यहाँ केवल प्रशंसा करने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य से आए हैं। मुझे संदेह है कि आप मुझे दोपहर की नींद त्यागने और फिर आपके साथ चलने के लिए मनाने आए हैं, और आपकी प्रशंसा का यही उद्देश्य है। देखिए, मेरे जैसे भारी शरीर वाले लोगों को बहुत पसीना आता है। एक तरह से आप जैसे लोग बेहतर स्थिति में हैं।" लामंका की जड़ों से बने

पंखे से चार बार तेजी से हवा करते हुए उन्होंने कहा, "सवारी के घोड़े भी नहीं थकते।"

कृष्ण ने कहा, "तुम तो सिर्फ खुद को ठंडा करने के लिए पंखा चला रहे हो! कृपया ध्यान रखो कि थोड़ी हवा मेरी तरफ भी बहे।" फिर उन्होंने अपना सीना भीम के पंखे की तरफ कर दिया। राहत महसूस करते हुए उन्होंने कहा, "तुमने कहा था कि तुम मेरे साथ वहाँ चलोगे। तो ये 'वहाँ' कहाँ है? मुझे खुलकर बताओ। आखिर वो तुम्हारी पहली पत्नी है। उसी ने तुम्हारा कोमल हृदय जीता है। तुम उसका नाम लेने में भी शर्माते हो। भीतर से प्रेम से भरे हुए, फिर भी मासूम होने का नाटक क्यों कर रहे हो?"

इससे भीम क्रोधित हो गए। वे इतने गुस्से में थे कि अगर कृष्ण के अलावा कोई और होता तो वे उन्हें दो बार पीट देते। खुद को संभालते हुए उन्होंने कहा, "मैं तिरपन या चौवन वर्ष का हूँ, और अगर माताजी यहाँ होतीं तो वे मुझे ज़्यादा सटीक उम्र बतातीं। इसके अलावा, बारह वर्षों के वनवास और एक वर्ष के गुप्तवास के कारण मुझे यौन संयम बरतना पड़ा है। अब मेरे भीतर स्त्रियों और प्रेम के लिए कोई स्थान नहीं है।"

कृष्ण ने कहा, "बेशक, मैं जानता हूँ कि तुम कभी दूसरी स्त्रियों की इच्छा नहीं करते। लेकिन मैं जिसकी बात कर रहा हूँ, वह तुम्हारी पत्नी है, जिससे तुमने पूरे दिल से प्रेम किया और विवाह किया। तो फिर वह कैसे मायने रखती है?"

भीमा, "नहीं, मैं यह नहीं कह रहा हूँ। यह सच है कि यह भीमा पचास वर्ष से अधिक आयु का है और बारह वर्षों तक वन में भूखा रहा है, लेकिन उसकी भुजाओं की शक्ति कम नहीं हुई है। वह पृथा का पुत्र है; एक देव सेनापति से जन्मा है, और वह किसी भी शत्रु सेना को परास्त कर सकता है। जब वह यहाँ है, तो तुम्हें भीख माँगने की क्या ज़रूरत है? भीमा और भीख माँगना एक साथ नहीं चल सकते। मैं भीख माँगने नहीं जाऊँगा। कृपया किसी और विषय पर बात करें।"

कृष्ण ने कहा, "युद्ध के लिए गठबंधन आमंत्रित करना भीख माँगना कैसे हो सकता है? हमने कई राजाओं को ऐसे दूत भेजे हैं। दुर्योधन भी उन्हें भेजता रहा है। क्या इन सबको भीख माँगना कहा जा सकता है? इसके अलावा, जब दूसरे मित्र शासक भी हमारा साथ दे रहे हैं, तो क्या आपके सृजित पुत्र, एक शक्तिशाली पुत्र, हमारी सहायता के लिए नहीं आना चाहिए? लेकिन जब तक उसे स्थिति का पता

नहीं चलेगा, वह कैसे आ सकता है? यह आपका कर्तव्य है कि आप जाकर उसे सूचित करें। और हाँ, आपको अपनी पत्नी से मिलने का भी मौका मिल जाएगा।"

कृष्ण ने गंभीर लेकिन आत्मीय स्वर में बात की। भीम का चेहरा, जो आमतौर पर लाल रहता था, और भी लाल हो गया। स्तब्ध होकर वह पंखे को घूरने लगा। दीवार के किनारे पर, एक बड़ी गर्मी की मक्खी बार-बार दीवार से टकराकर उड़ रही थी। कुछ देर बाद कृष्ण ने आगे कहा, "विवाह के बाद तुम उनसे मिलने एक बार भी नहीं गए। तुमने बच्चे को प्यार से पाला-पोसा नहीं। तुमने अपनी पत्नी की ओर कभी देखा तक नहीं। इसलिए यह स्वाभाविक है कि तुम पूछो: 'मैं इतनी बेशर्मी से जाकर उनसे अपने राक्षस सेना में शामिल होने का अनुरोध कैसे कर सकता हूँ?' सबसे पहले तो तुम्हें यह जानना चाहिए कि हर कोई उस जाति-समुदाय के नियमों और कायदों से बंधा होता है जिससे वह संबंध रखता है। क्या ऐसे समुदाय नहीं हैं जिनमें पिता पर बच्चों के पालन-पोषण का कोई दायित्व नहीं होता, यह पूरी तरह से माता का कर्तव्य होता है? ऐसे समुदायों में कोई भी पिता से यह नहीं पूछता कि उसने बच्चे के पालन-पोषण की उपेक्षा क्यों की। यह भी संभव है कि वह इस बात की शिकायत न करे कि तुम उसके पास कभी वापस नहीं लौटे। वैसे भी, तुम्हारा सारा समय वनवास और दासता में ही बीता। उसे लाने का सवाल ही कहाँ उठता है? अगर तुम समझाओगे, तो क्या वह नहीं समझेगी? मैं तुम्हारी झिझक समझ सकता हूँ।"

कृष्ण ने यहीं पर अपनी बात रोक दी। भीम तुरंत जवाब देने में सक्षम था। "बेशक, आप तो सबका मन पढ़ सकते हैं। आप तो बड़े चतुर हैं!" क्रोध न केवल आवाज़ में, बल्कि चेहरे, आँखों और नाक में भी झलक रहा था। दाहिना हाथ, जो पंखा पकड़े हुए था, अचानक तेज़ी से चलने लगा। हवा में हुई हलचल से ग्रीष्म ऋतु की मक्खी की गति का ताल बिगड़ गया। कृष्ण कुछ देर और चुप रहे। फिर उन्होंने बहुत धीमी आवाज़ में कहा, "शैतान की शक्ति केवल एक हाथ से युद्ध में ही काम आती है। तुम्हें याद रखना चाहिए कि दुर्योधन जरासंध की तरह मूर्ख नहीं है। मान लो कि तुम उसे अकेले युद्ध के लिए चुनौती दो और कहो कि इस युद्ध से तय होगा कि राज्य किसे मिलेगा, तो दुर्योधन इतना मूर्ख नहीं होगा कि चुनौती स्वीकार कर ले। इंद्रप्रस्थ में तुमने जो धन जमा किया था, वह भी अब उसके खजाने का हिस्सा है। इसका मतलब है कि उसके पास और भी राजा, बड़ी सेना, और भी रथ, और भी घोड़े और हाथी होंगे। इन सबके सामने अकेले तुम्हारी शैतान की शक्ति क्या

काम आएगी? तुम्हें अपने पक्ष में सैनिकों को शामिल करने में संकोच नहीं करना चाहिए, चाहे वे कहीं से भी आए हों। एक और बात तुम्हें याद रखनी चाहिए।" उसी क्षण भीम का दाहिना हाथ पंखा करना बंद कर दिया और उसकी आँखें, जो अब तक ज़मीन की ओर झुकी हुई थीं, अब कृष्ण की आँखों में देखने के लिए उठ उठीं। कृष्ण ने लगातार बोलते हुए कहा, "याद रखो कि दुर्योधन राक्षसों से गठबंधन करने के लिए दूत भेज रहा है, उन्हीं राक्षसों के समूह से जिनका तुमने वध किया था - हिडिम्बा, बका, किम्मीरा और अन्य। क्या तुम्हें नहीं लगता कि वे इन राक्षसों की मृत्यु का बदला लेने के अवसर की प्रतीक्षा कर रहे हैं? युद्ध में राक्षसों की अपनी एक अलग शैली होती है। तुम भी यह जानते हो। वे रात के अंधेरे में आक्रमण करते हैं और लड़ते रहते हैं। इसके अलावा, क्या हमारे आर्य लोग अपने प्राणों की परवाह किए बिना शत्रु को पराजित करने में उनकी वीरता का मुकाबला कर सकते हैं? यदि दुर्योधन के राक्षस समर्थकों का मुकाबला करने के लिए हमारे पास कम से कम कुछ राक्षस समर्थन न हो तो तुम अकेले क्या कर सकते हो?"

भीम की निगाहें कृष्ण की निगाहों से मिलीं, मानो वह उन्हें परखने की कोशिश कर रहा हो। गर्मी की मक्खी अब दीवार के पास नहीं थी। भीम ने गर्दन घुमाकर यह देखने की जहमत नहीं उठाई कि मक्खी किस दिशा में उड़ी है। बाहर, नौकर लामंच की चटाइयों पर पानी डालकर उन्हें भिगोने में व्यस्त थे। भीम मन ही मन सोच रहा था— "यह कोई बुरा शहर नहीं है, और गर्मी में भी यहाँ पानी की कोई कमी नहीं है।" कृष्ण ने उसकी सोच को रोकते हुए कहा, "बताओ। राक्षस नेता घटोत्कच से बात करने के लिए तुमसे बेहतर योग्य कौन है?"

दूर कहीं सन्नाटा खड़खड़ाहट की आवाज़ से टूट गया। यह वैसी ही आवाज़ थी जैसे हथौड़े से निहाई पर चोट करने से होती है। उस समय हवा चलने से पेड़-पौधे शोर मचा रहे थे, नहीं, मानो आंधी आ गई हो... धूल भरी आंधी उठी, हवा आसमान तक पहुँचकर चारों ओर फैली गर्मी को बरसा रही थी। लेकिन गीली लामंका चटाइयाँ धूल से अप्रभावित थीं। इसलिए पसीने से तर शरीर को धूल से कोई फर्क नहीं पड़ता था। भीम को याद आया - बारह साल जंगल में, नहीं पूरे बारह नहीं, बीच में हिमालय में चार साल, और वे आठ साल, आठ गर्मियाँ जब उन्हें धूल स्नान की नरक जैसी पीड़ा सहनी पड़ी, और फिर भी धूल भरी आंधी थमने के बाद किसी नदी या तालाब में स्वर्गिक स्नान का आनंद मिलता था। उठकर उन्होंने कहा, "कृष्ण, चलो बाहर चलते हैं। आंधी देखना कितना सुंदर है।" भीम

जाने के लिए खड़े हुए, और कृष्ण भी उनके पीछे-पीछे चले। हवा बहुत तेज़ गति से चल रही थी। आसपास के जंगलों के पेड़-पौधे हिल रहे थे, काँप रहे थे और थरथरा रहे थे। बाँस की शाखाएँ पूरी तरह से झुक गईं। सूखे बाँस के तने आपस में रगड़ खाकर जंगल में आग सी लगा रहे थे। तेज़ हवा से लपटें और फैल गईं। लेकिन आसमान पर धूल नहीं छाई थी। बल्कि उपप्लव्य नगर में ही धूल हर जगह फैली हुई थी, मानो बर्फ से ढकी हो। पत्ते और सूखी टहनियाँ हवा में उड़ रही थीं और गिर रही थीं। वे बिखरकर ज़मीन पर गिर जातीं। आँगन में बने चबूतरे पर खड़े कृष्ण और भीम यह दृश्य देख रहे थे। कृष्ण भीम के कंधों तक ही पहुँच पाते थे। कृष्ण भीम की ऊँचाई तक तभी पहुँच सकते थे जब वे अपना हाथ पूरी तरह ऊपर उठाते। भीम तूफ़ान को पूरी तरह से तल्लीन होकर देख रहे थे। कृष्ण भी धीरे-धीरे दृश्य में मग्न हो गए। यह दृश्य उनके मन में बचपन में मथुरा-बृंदावन में तूफ़ान देखने की यादें ताज़ा कर गया। तूफ़ान के दौरान भी खड़खड़ाहट की आवाज़ सुनाई दे रही थी। एक घंटे से भी कम समय में तूफ़ान थम गया और हवा शांत हो गई। उसके बाद एक हल्की और ठंडी हवा चलने लगी। अचानक भीम उत्साहित हो गए। तब तक कृष्ण अपने निवास स्थान पर लौट चुके थे। भीम अकेले ही शहर के पीछे स्थित तालाब की ओर चल पड़े। पेड़ों से घिरे और पत्थरों से बने उस तालाब में भीम कूद पड़े। वे कुछ देर तैरे, लेकिन तालाब इतना चौड़ा नहीं था। उन्हें लगा कि गंगा नदी तैरने के लिए सबसे अच्छी है। इससे उन्हें हस्तिनावती नदी की याद आ गई, जिसके किनारे सफेद सूतंगी झाड़ियों से घिरे हुए थे। उसका पानी गर्मियों में भी ठंडा रहता था। वह गंगाद्वार के बहुत करीब थी, जहाँ एक दिन की पैदल यात्रा में पहुँचा जा सकता था, और हिमालय में पिघलती बर्फ से पानी गंगाद्वार में आता था। यह एक ऐसा क्षेत्र था जहाँ गर्मियों में भी ठंडक नहीं गायब होती थी। लेकिन इंद्रप्रस्थ के पास यमुना नदी कैसी थी? पता नहीं कैसे, यमुना गंगा जैसा प्रेम जगाने में विफल रही। उन्हें लगा कि कोई भी जल उस तरह का भावनात्मक लगाव पैदा नहीं कर सकता जो उस जल से पैदा होता है जिसमें बचपन में खेला जाता था। क्या यह वही जगह नहीं थी जहाँ अंधे व्यक्ति के बेटे ने उसे जहर मिला हुआ मिठाई का गोला खिलाया था ताकि वह डूबकर मर जाए? लेकिन इसके लिए नदी को कैसे दोषी ठहराया जा सकता है? मन ही मन यह कहते हुए कि वह गंगा से अधिक प्रेम करता है, वह पीठ के बल लेट गया और अपने होठों से पानी को जेट की तरह थूकने लगा। इससे उसे अच्छा लगा। पानी से भरी उसकी आँखें स्पष्ट रूप से

फोकस नहीं कर पा रही थीं, मानो उन पर तेल लगा दिया गया हो। बचपन में उसे पानी में गोता लगाना और आगे-पीछे उछलना तैरने से ज्यादा अच्छा लगता था। तब उसके साथ तैरने वाले दूसरे लोग उसकी छलांगों से पैदा हुई छींटों में फंस जाते थे, पानी उनके मुंह में घुस जाता था और वे उसकी ताकत से बह जाते थे। यह देखकर उसे हंसी आती थी और फिर वह बाहर निकल आता था। लेकिन अब उसे बचपन के इन खेलों में कोई रुचि नहीं थी। वह शांत पानी में तैरने और स्थिर रहने से पूरी तरह संतुष्ट था। उसका सिर तालाब के किनारे से छू गया। उसके मन में तालाब के प्रति घृणा का भाव जागा और उसने उसे कोसते हुए कहा, "धिक्कार है, यह कितनी छोटी सी चीज है, इसमें सिर्फ स्नान कर सकते हैं, तैर नहीं सकते!" फिर वह बाहर आ गया। उसने किनारे पर खुद को सुखाया और अपने शरीर को हवा के लिए खुला छोड़ दिया। उसके बाद उसने अपने कपड़े पहने और घर की ओर चल पड़ा। अब उसे गर्मी कुछ हद तक सहन करने योग्य लग रही थी और शरीर हल्का महसूस हो रहा था। आसमान अब उतना गर्म नहीं था, क्योंकि सूरज डूबने का समय हो चुका था।

जैसे ही वह घर पहुंचा, एक नौकर ने संदेश दिया, "मुख्य रानी आ गई हैं, और ठंडी हवा में छत पर आपका इंतजार कर रही हैं।"

भीम सीधे सीढ़ियाँ चढ़कर छत पर पहुँच गया। उसने सोचा, "द्रौपदी सही समय पर आई है, और मैं उसके सामने अपने मन का बोझ हल्का कर सकता हूँ।" जैसे ही वह द्रौपदी के पास पहुँचा, उसके साथ मौजूद दोनों दासियाँ खड़ी हो गईं। फिर वे तुरंत सीढ़ियाँ उतरकर चली गईं। जोन्दु घास की नरम चटाई पर बैठी द्रौपदी खड़ी हुई, अपने पति के पास आई और उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। ऊपर आकाश तांबे के रंग का असीम विस्तार था। द्रौपदी का चेहरा, जो आम आर्यों के चेहरे से अपेक्षाकृत अधिक गहरा था, अब कुछ चिंता से और भी गहरा लग रहा था। उसके बालों में दिख रही सफेद लटें उसे परिपक्वता का आभास दे रही थीं। भीम ने उसके चेहरे को निहारा, जो उसकी छाती तक आता था, और कहा, "कृष्ण, मैंने तुम्हें इतने सफेद बालों के साथ कभी नहीं देखा था।"

कुछ चिड़चिड़ेपन और कुछ मज़ाकिया अंदाज़ में उसने जवाब दिया, "अच्छा, अब आप उन्हें देख ही रहे हैं। क्या मैं आपके लिए चमकदार काले बालों वाली एक युवा राजकुमारी को दुल्हन के रूप में लाऊं?"

भीमा बैठ गया और उसे भी अपने पास बिठा लिया। वह चुपचाप बैठी रही और भीमा आकाश की ओर देखने लगा। कुछ पल रुकने के बाद, वह अचानक बोल पड़ा, "मैं तैरने गया था। तुमने देखा ही होगा, वह छोटा सा तालाब। उसे देखकर मुझे हमारी नदी गंगा की याद आ गई। तब मैंने निश्चय किया कि अब से यह भीमा केवल गंगा में ही तैरेगा, यमुना में कभी नहीं।"

पांचाली चुप थी। जब भीम इस तरह के मूड में होता, तो उसे पांचाली ही बात करने के लिए सबसे उपयुक्त लगती थी। वह कभी भी अर्जुन से अपने दिल के राज़, अपने सपने साझा नहीं कर पाता था। इसका कारण यह था कि उनके सपने और दृष्टिकोण अलग-अलग थे। भाई धर्मराज उससे बड़े थे। शुरुआती दिनों में वह उससे घनिष्ठ संबंध रख सकता था, लेकिन बाद में इंद्रप्रस्थ में राज्याभिषेक के बाद धर्मराज में राजसी एकांत और कठोरता आ गई थी। लेकिन भीम ने अपना बचपना, शरारतों का शौक और साहस कभी नहीं खोया। सबसे बड़े भाई होने के नाते, राजसूय समारोह की सफलता के बाद, वह इतनी मूर्खता कर बैठा कि जुए के खेल में सब कुछ हार गया और अपनी पत्नी और भाइयों को वनवास भेज दिया। भीम इतना उग्र था कि वह धर्मराज के हाथों को आग में जला देना चाहता था। उसने इतना कुछ कहा था और अगर अर्जुन ने हस्तक्षेप न किया होता तो वह ऐसा कर भी देता। बारह वर्ष के वनवास के दौरान, बीच-बीच में धर्म के प्रति भीम का क्रोध भड़क उठता था। लेकिन पहले जब धर्म इंद्रप्रस्थ में शासन करते थे, तब दोनों भाइयों के बीच एक स्थिर संबंध था। लेकिन जब धर्म ने जुए में हार मान ली, तो भीम का उनके प्रति तिरस्कारपूर्ण रवैया हो गया, जिससे न केवल उनके संबंध टूट गए, बल्कि उनके बीच किसी भी प्रकार की मित्रता भी समाप्त हो गई। नकुल और सहदेव की बात करें तो, चाहे भीम उनसे कितना भी अनौपचारिक और मैत्रीपूर्ण व्यवहार करने की कोशिश करते, वे हमेशा उनके प्रति आदर और श्रद्धा का भाव रखते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि उनके पास अपने सपनों को साझा करने के लिए पांचाली के सिवा कोई नहीं था, उनके सिवा कोई नहीं था जिसके साथ वे सुकून पा सकें। बेशक, भीम को छोड़कर उनके पतियों में से कोई भी उन्हें कृष्ण कहकर नहीं पुकारता था, जो द्रौपदी का जन्म का नाम था।

भीमा, "क्या तुमने मेरी बात नहीं सुनी?"

द्रौपदी ने कहा, "क्या बड़े भाई का फैसला अंतिम नहीं होता? ऐसा लगता है कि राजा चाहते थे कि कृष्ण शांतिदूत बनकर जाएं।"

भीम ने कहा, "कृष्ण जा सकते हैं, लेकिन मुझे पूरा यकीन है कि उनकी बातचीत से शांति नहीं मिलेगी।"

द्रौपदी ने कहा, "मान लो बूढ़े लोग दुर्योधन को समझाने में कामयाब हो गए तो फिर क्या होगा?"

भीम ने कहा, "बुजुर्ग लोग दुर्योधन को सलाह देने की जहमत जरूर उठाएंगे। लेकिन उतना ही निश्चित है कि वह उनकी बात नहीं सुनेगा। उसके दुष्ट मन की चाल को मुझसे बेहतर कोई नहीं समझ सकता। क्या तुमने कभी दो हाथियों को युद्ध के लिए तैयार देखा है? खैर, वे दोनों विरोधी जानवर एक-दूसरे के मन को किसी तीसरे से कहीं बेहतर जानते हैं। दिक्कत सिर्फ इतनी है कि उसकी तुलना हाथी से नहीं की जा सकती। वह ज़्यादा से ज़्यादा कुत्ते जैसा है!"

द्रौपदी ने कहा, "यह मत भूलो कि हाथी से डरने वाला कुत्ता भी शांति के लिए राजी हो सकता है।"

भीम ने कहा, "कृष्ण, इधर देखो," मानो वह अपने दिल के राज़ उसे दिखाना चाहता हो, उसने इशारा किया और फिर बोला, "धर्मराज अभी भी राज्य के लिए ललचा रहे हैं। उनकी नज़र राजगद्दी पर है। इसी तरह अर्जुन भी इसके लिए उत्सुक हैं। शायद नकुल और सहदेव भी। जहाँ तक मेरी बात है, बारह साल जंगल में रहकर, जड़-जड़ी बूटियाँ, फल और शिकार किए हुए जानवर खाकर, और एक साल किसी अजनबी की रसोई में गुलामी करने के बाद, जीवन के सबसे अच्छे वर्षों में महल वापस जाने का क्या मतलब है? मेरे लिए तो जंगल हो या महल, कोई फर्क नहीं पड़ता! वास्तव में, मुझे तो जंगल के जीवन से बहुत प्यार हो गया है! मेरे जीवन का बस एक ही लक्ष्य है, एक ही जुनून है - दुर्योधन, दुस्साना, कर्ण और शकुनि, और कौरवों की पूरी जाति, और उनके पिता उस अंधे को भी इस धरती से मिटा देना। उन्होंने मुझे जीवित ही अपमानित किया, जुए की सभा में मुझे उकसाया, मेरी पत्नी का इस तरह अपमान किया जैसे वह... मैं एक सेवक था—हाँ, मैं केवल इन सबका बदला लेने के लिए ही जीवित हूँ। भले ही शांति समझौता हो जाए और हमें इंद्रप्रस्थ वापस मिल जाए, मैं ही सेनापति रहूँगा। शांति के बाद भी, मैं उन पर आक्रमण करूँगा और उन सबको मार डालूँगा। यही मेरी शांति होगी। मैंने ये बातें आज तक किसी से इतनी स्पष्ट और दृढ़ता से नहीं कही हैं जितनी अब तुमसे कह रहा हूँ। मुझे यकीन है दुर्योधन यह जानता है। वह इतना मूर्ख नहीं है कि इसे न समझे। क्या कुत्ते को चीजों को सूंघना नहीं आता?

द्रौपदी एकाग्रता से उसकी आँखों में देखने लगी। उसकी आँखें अब भी कमल की तरह खिली हुई थीं। भीम भी उसकी आँखों में देखता रहा। दोनों के बीच की खामोशी में उनके मन एक हो गए थे, और वे दोनों यह जानते थे। अचानक, उसकी आँखों में आँसू भर आए। भीम समझ गया कि अब वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगेगी। लेकिन उसने खुद को संभाला। और यह देखकर भीम को बहुत दुख हुआ। उसने कहा, "कृष्ण, अगर तुम रोओगी, तो मैं भी स्त्री की तरह रोऊँगा। लेकिन अगर तुम अपने भावों को रोकोगी और रोना बंद करोगी, तो मैं क्रोधित हो जाऊँगा। मेरे साथ तुम्हें अहंकार नहीं रखना चाहिए।"

अब वह खुद को संभाल नहीं पाई। उसके आंसू फूट-फूट कर बहने लगे। पास आकर उसने अपना सिर उसकी गोद में रख दिया और फूट-फूटकर रोने लगी। भीम ने उसे ऐसे गले लगाया जैसे वह कोई बच्ची हो। वह अस्पष्ट स्वर में बुदबुदाई, "अगर तुम्हारे साथ नहीं, तो और कहाँ रोऊँ?" अपनी बाहों से उसकी जांघों को थामते हुए उसने उसके चेहरे की ओर देखा और पाया कि उसकी आँखें आंसुओं से भरी हुई थीं। वह जानती थी कि उसकी आँखें आंसुओं से भरी होंगी। लेकिन उसने कहा, "भीम, इस तरह आंसू बहाना किसी पुरुष को शोभा नहीं देता। अगर गलती से भी एक आंसू गिर जाए, तो वह स्वयं गंगा के समान है। मैं जानती हूँ कि मेरे कारण तुम्हारी आँखों से कितने आंसू बहे हैं। किसी और की आँखों से एक बूँद भी नहीं गिरेगी।" यह कहते हुए उसने अपनी साड़ी के किनारे से उसकी आँखों के आंसू पोंछे। इससे उसे राहत मिली। वह चुपचाप खड़ा रहा। शाम रात में बदल चुकी थी और धूल भरी हवा में तारे मुश्किल से दिखाई दे रहे थे।

कृष्णा कुछ कहने के लिए बहुत संघर्ष कर रही थी। भीम को उसकी बात समझ नहीं आ रही थी। अँधेरे में उसका धुंधला चेहरा देखते हुए भीम की नज़र दुर्योधन के अंधे पिता की सफ़ेद दाढ़ी पर पड़ी, कम से कम तेरह साल पहले तो दाढ़ी ऐसी ही दिखती थी। लेकिन अब कैसी दिखती होगी? वह सोचने लगा।

द्रौपदी, "क्या यह सच है कि तुम वहाँ जा रहे हो?"

उसने पूछा, "कहाँ?"

उसने कहा, "राक्षस सेना से समर्थन मांगने के लिए।"

भीमा ने कहा, "यह कृष्ण का सुझाव था। मुझे लगा कि उन्होंने ऐसा करके सही किया।" उनका मन अभी भी उस सफेद दाढ़ी की स्पष्ट छवि तलाश रहा था जिसे उन्होंने साढ़े तेरह साल पहले आखिरी बार देखा था।

उसके हाथों को धीरे से सहलाते हुए उसने कहा, "क्या यह भीमा उस सेना की सहायता के बिना जीत नहीं सकता?"

भीम ने कहा, "हमारे शत्रु दुर्योधन ने अपने पीछे बड़ी संख्या में राक्षसों को इकट्ठा कर लिया है। अगर हमारे पास उसके बराबर की जवाबी सेना नहीं होगी तो हम बुरी तरह लाचार हो जाएंगे। इसलिए कृष्ण की सोच सही है। और मेरे पुत्र— उसे अपने पिता की सहायता के लिए आना चाहिए।"

द्रौपदी फिर चुप हो गई। कुछ देर बाद उसने पूछा, "क्या यह सच नहीं है?" उसका जवाब हां था। उसकी आवाज़ में उदासी झलक रही थी। उसके कंधे हिलाते हुए उसने पूछा, "यह दुःख क्यों?" उसकी हंसी के साथ उसने कहा, "नहीं, मुझे कोई दुःख नहीं है।" लेकिन भीम जानता था कि यह सच्ची प्रतिक्रिया नहीं थी। यह बनावटी थी। इसलिए उसने आगे कहा, "कृष्ण, बताओ तुम्हें क्या परेशान कर रहा है। जल्दी बताओ। नहीं तो मैं क्रोधित हो जाऊंगा। कृपया ऐसा न होने दो।" वह न केवल उसकी आवाज़ से, बल्कि उसके कंधों पर उसकी उंगलियों की पकड़ की जकड़न से भी उसके क्रोध को भांप सकती थी।

द्रौपदी ने कहा, "तुम जानती हो कि मैं तुम्हें ही अपना एकमात्र सहारा मानती हूँ। बस इतना ही काफी है कि तुम इस बात को हमेशा याद रखो।"

भीमा, "तुम्हारा यह कहने का क्या मतलब है?"

उसने कहा, "अगर आप इसे समझ नहीं सकते, तो इसे स्पष्ट रूप से बताया नहीं जा सकता। इसलिए कृपया इसकी मांग न करें। और मैं इसका जवाब देने में अपना गला सूखने नहीं देना चाहती।" इतना स्पष्ट बयान देकर वह बैठ गई।

भीमा गहरी सोच में डूब गया। उसे कोई हल नहीं सूझा। कुछ देर तक मन ही मन विचार करते हुए वह क्रोधित हो गया। उसने उससे पूछा, "देखो, यह युद्ध का समय है। मेरे पास किसी स्त्री की पहेलियों का उत्तर देने का समय नहीं है! जल्दी करो और समझाओ। ठीक है?" यह कहते हुए उसने उसके कंधों को कसकर दबाया।

उसके हाथों के ज़ोर से दबाने से उसके कंधे सख्त हो गए थे। तब तक उसने मन बना लिया था। इसलिए उसका जवाब तीखा और कठोर था, "हाँ, यह तुम्हें समझना होगा। मैं समझाने से इनकार करती हूँ। मुझे पता है कि जब तुम्हारा गुस्सा बढ़ेगा तो तुम आगे क्या कहोगे। अगर तुमने वही किया जो मुझे लगता है कि तुम करोगे, तो तुम्हारी प्रसिद्धि इस बात से नहीं होगी कि तुमने अपने दुश्मन की हड्डियाँ तोड़ीं,

बल्कि इस बात से होगी कि तुमने अपनी पत्नी की हड्डियाँ तोड़ीं! वह पहला काम नहीं कर सका, इसलिए उसने दूसरा काम किया! मैं तुम्हें चेतावनी दे रही हूँ।"

इससे उसका गुस्सा और बढ़ गया, क्योंकि वह शायद ही कभी सीधी बात करती थी। हमेशा पहेलियों में बोलती थी। हमेशा उसे परेशान करती थी। कैसी पत्नी थी ये? उसका मन कर रहा था कि उसे गालियां दे दे। लेकिन उसे पता था कि उसने उसकी संभावित, लेकिन अनसुनी गालियों का पहले से ही जवाब दे दिया था! वह असहाय महसूस कर रहा था, लेकिन यह सवाल कि क्या उस अंधे बूढ़े की सफेद दाढ़ी साढ़े तेरह साल बाद भी वैसी ही रहेगी या नहीं, अब भी उसे सता रहा था। उसे याद आया कि पहाड़ों से घर लौटने के बाद, "पिता और सौतेली माँ दोनों को खोने के बाद, और उनके शवों के दाह संस्कार को याद करके, हस्तिनावती पहुँचकर उसने उस अंधे को अपना पिता मानकर उसके पैर कसकर पकड़ लिए थे। अब वह दांत पीसते हुए मन ही मन बोला, "अंधे, अंधे, मैं महल के अंदर ही उसकी आंखें निकाल लूंगा क्योंकि वह युद्ध के मैदान में नहीं जाएगा।" तभी द्रौपदी खड़ी हो गई। उसने पूछा, "तुम क्यों उठीं?"

उसने कहा, "मुझे अपने कैंपिंग स्थल पर जाना है।"

उसने कहा, "यहीं रहो।"

उसने एक शब्द भी नहीं कहा। लेकिन उसने उसका हाथ पकड़कर उसे बिठा दिया। वह चुपचाप और आज्ञाकारी होकर बैठ गई।

"क्यों?"

"हमें उस मामले पर दोबारा चर्चा करने की जरूरत नहीं है, और तब से साढ़े तेरह साल बीत चुके हैं।" द्रौपदी ने पूछा।

उन्होंने कहा, "समय के नियमित बंटवारे की वह पुरानी योजना अब लागू नहीं होती।"

उन्होंने कहा, "हां, अब यह लागू नहीं है। अब हमें यह तय करना होगा कि मुझे कौन कब और कितने समय के लिए अपने पास रखेगा। मेरे मामले में अब ऐसा करने का कोई मतलब नहीं है क्योंकि मैं अब लगभग रजोनिवृत्ति के कगार पर हूं।"

उन्होंने कहा, "अच्छा, गुप्त रूप से दासता की अवधि समाप्त होने के बाद, आप धर्मराज के साथ रह रहे हैं। है ना?"

उसने कहा, "हाँ, एक तरह से कह सकते हैं। आप जानते हैं कि वह शुरू से ही इस मामले में उदासीन रहा है। फिर भी, नियमों का सख्ती से पालन करना चाहिए।

भीम को छह महीने के लिए इससे दूर रहने का आदेश दिया गया है, और कृष्ण को भी।" वह हँसी, लेकिन अफसोस के साथ। भीम नहीं हँसा। थोड़ी देर बाद उसने धीरे से उसके घने बालों पर हाथ फेरा। फिर उसने कहा, "अब तुम जा सकती हो। क्या नौकरानियाँ नीचे तुम्हारा इंतज़ार कर रही हैं?"

यह एक ऐसा कस्बा था जहाँ घर गोलाकार रूप में बने थे, इसलिए लुटेरों या दुश्मनों के लिए उनमें घुसना आसान नहीं था। फिर भी भीम उसे और उसके नौकरों को वहाँ तक ले गया जहाँ वह डेरा डाले हुए थी, जो उसके अपने शिविर से तीन घर दूर था।

—•⁕•—

अध्याय 12

वह अकेले यात्रा करने पर अड़ा हुआ था और अपने साथ केवल दो ऐसे व्यक्ति ले गया जो ताइन विद्या के विशेषज्ञ थे और लगभग बीस घुड़सवार। लेकिन धर्मराज, अर्जुन, कृष्ण और द्रौपदी, किसी ने भी इसका समर्थन नहीं किया। उपप्लव्य नगर मत्स्य देश के उत्तरी भाग में स्थित था। वहाँ से कुरु देश होते हुए हिडिम्बा देश की ओर जाया जा सकता था। दूसरा मार्ग पंचाल देश से होकर जाता था। कुरु देश के दक्षिणी भाग, वरणवथ से, हिडिम्बा देश तक पैदल एक रात और एक दिन की यात्रा में पहुँचा जा सकता था। भीम को घने जंगल से होकर जाने वाले मार्ग की धुंधली सी याद थी। वास्तव में, यह मानव यात्रियों द्वारा अक्सर इस्तेमाल किया जाने वाला मार्ग नहीं था। यह वह भूमि थी जहाँ पाँचों पांडवों ने अपनी माता के साथ अपने जीवन को बचाने के लिए भटका था। हिडिम्बा देश की सीमा को पड़ोसी राजाओं ने मान्यता नहीं दी थी। यह इतना घना जंगल था कि न तो कुरु और न ही आस-पास के क्षेत्र पर शासन करने वाले पांचाल इस पर पूरी तरह से कब्जा कर

पाए थे। जंगल बाघ और तेंदुआ जैसे जंगली जानवरों से भरा हुआ था, और कोई भी आर्य समूह वहां बसने में सफल नहीं हो पाया था। इसका स्पष्ट कारण यह था कि कृषि के लिए जंगल को साफ करना कठिन था। आर्य लोग बिना खेती किए जीवित नहीं रह सकते थे। केवल राक्षस ही वहां जीवित रह सकते थे और शिकार, कंद, जंगली फल और प्राकृतिक रूप से उगने वाले जंगली चावल खाकर अपना जीवन यापन करते थे। गैर-राक्षस न केवल वहां जीवित रहने में असमर्थ थे, बल्कि राक्षसों ने भी किसी गैर-राक्षस समूह को वहां रहने की अनुमति नहीं दी थी।

धर्मराज, अर्जुन और अन्य लोगों ने भीम को कुरुभूमि से होकर जाने वाले मार्ग से बचने की सख्त चेतावनी दी थी। वे जानते थे कि दुर्योधन भीम से विशेष रूप से सावधान था, क्योंकि वही उसका मुख्य निशाना था। यह सोचना न केवल स्वाभाविक था कि वह भीम को मरवा देगा, बल्कि वास्तव में पहले भी उसे मारने के प्रयास किए जा चुके थे। यदि भीम उसके क्षेत्र से होकर जाता, तो दुर्योधन उसे मारने का एक बेहतरीन अवसर समझ लेता। इसलिए, उन्होंने पंचाल से होकर जाने वाला अधिक परिचित मार्ग चुना। लेकिन भीम केवल एक ही मार्ग की ओर आकर्षित हुआ, वारणावथ से होकर जाने वाला मार्ग, जिसमें पूरी एक रात और पूरा एक दिन लगता था। यह मार्ग घने जंगल से होकर गुजरता था। अब उसके आगे और पीछे दस-दस घुड़सवार थे, सभी पूरी तरह से हथियारों से लैस उसकी सुरक्षा के लिए। फिर चावल और आटे की थैलियाँ और रास्ते में खाना पकाने के लिए घी से भरा एक बर्तन भी था। साथ ही उसके लिए अस्थायी विश्राम शिविर स्थापित करने का सामान भी था। कितने वर्ष पहले वह वहाँ गया था? भीम ने सोचा। और फिर उसे याद आया। एक वर्ष का गुप्त दासता और बारह वर्ष का वनवास, और उससे पहले के शासनकाल में एकाचक्र नगर में भिखारी बनकर रहना, ससुर द्रुपद के घर में छह महीने रहना, राक्षसी दुल्हन हिदिम्बे के साथ एक वर्ष बिताना, कुल कितने वर्ष हुए? सत्ताईस या अट्ठाईस? उनका हिसाब ठीक नहीं था। खैर, यह बहुत समय पहले की बात थी। वे सोचने लगे, कितना लंबा समय बीत गया, इस बीच कितनी घटनाएँ घटित हुईं! अब उनके आगे दस सशस्त्र अंगरक्षक और पीछे दस अंगरक्षक थे जो उन्हें दुर्योधन के भाड़े के हत्यारों से बचाते थे। फिर भी, दुर्योधन के भाड़े के हत्यारों से छिपने के लिए ही उन्हें जंगल में जाना पड़ता था, अपने कपड़े बदलने पड़ते थे, अपने नाम बदलने पड़ते थे। भीम ने काल्पनिक दुर्योधन को संबोधित करते हुए कहा, "दुर्योधन, मैं तब तक स्वयं को भीम नहीं कहूँगा जब तक

मैं तुम्हारा सिर न काट दूँ, तुम्हारे राजसी वस्त्र न उतार दूँ और तुम्हारा नाम मानव स्मृति से मिटा न दूँ!" फिर उनका ध्यान अपने नाम की ओर गया, उसकी अपार समृद्धि की ओर, एक अद्भुत नाम जो उनके माता-पिता ने उन्हें दिया था। नवजात भीम लंबाई और चौड़ाई दोनों में असामान्य रूप से बड़ा शिशु था। वह आसानी से अपनी माँ की कमर और बाहों को भर लेता था। यहाँ तक कि उनकी माँ, जो स्वयं एक भारी-भरकम महिला थीं, को भी उन्हें उठाने में कठिनाई होती थी और उनकी साँस फूलने लगती थी। फिर उनका ध्यान उस घोड़े पर गया जिस पर वे सवार थे। सभी घोड़े श्रेष्ठ विदेशी नस्ल के थे, सभी नर थे। फिर भी उनका घोड़ा भारी कदमों से धीरे-धीरे चल रहा था। लेकिन उस समय, वनवास के दौरान, कोई घोड़ा नहीं था। और, इससे भी महत्वपूर्ण बात, इस बात की कोई आशा नहीं थी कि कोई घोड़ा उस दिन जीवित रह पाएगा। घोर भय और अपनी जान बचाने के लिए, अर्जुन सबसे आगे थे, उन्होंने अपनी माता को एक कपड़े में लपेटकर पीठ पर उठाया हुआ था, फिर धर्म और अंत में जुड़वां भाई। उन सभी को घने पत्तों और झाड़ियों से होकर भागना पड़ा। वातावरण में मृत्यु का भय इतना व्याप्त था कि किसी पक्षी के पंख छूने या किसी जानवर की अचानक आवाज से भी वे बुरी तरह डर जाते थे, उनके मन में अपने हत्यारों के होने का भ्रम पैदा हो जाता था। भीम को याद आया कि कैसे उन्होंने स्वयं लकड़ी के घर में आग लगा दी थी, जिससे शत्रु उन्हें अचानक घेरकर जलाने की कोशिश को नाकाम कर दिया था। उन्होंने चुपके से सुरंग के रास्ते घर में घी समेत ज्वलनशील पदार्थ भर रखे थे। भीम को याद आया। घर पल भर में आग की लपटों में घिर गया, और भील जनजाति की उस बेचारी स्त्री और उसके पांचों बच्चों को भी अपनी आग में झुलसा दिया। वे कुछ ही मिनटों में राख हो गए होंगे। दुर्योधन इस बात से प्रसन्न था कि जले हुए शरीर कुंती और उसके पुत्रों के थे। सोमा रस, दूध और शहद के मिश्रण से मदहोश होकर वह खुशी से झूम रहा था और नाच रहा था। दो साल बाद जब उसे पता चला कि वे लोग जीवित हैं, और उससे भी बुरी बात यह कि वे स्वयंवर समारोह में द्रौपदी को छीन रहे हैं, तो उसका चेहरा देखने लायक था! अगर उन्होंने धर्मराज को उत्तराधिकारी घोषित कर प्रशासन का कार्यभार सौंप दिया होता, तो वह अपना काम इतनी कुशलता से करता कि सभी वृद्ध, युवा और समस्त जनमानस उसकी प्रशंसा करते। धर्मराज के साथ सब कुछ ठीक था, लेकिन जब उसे खेल के बारे में इतनी कम जानकारी थी, तो उसने पासा खेलने की मूर्खता क्यों की? एक उत्कृष्ट प्रशासक, एक बुद्धिमान

व्यक्ति, एक सहिष्णु और शांतिप्रिय स्वभाव का भीम। भीम ने सोचा कि सत्ता का घमंड और प्रतिष्ठित राजसूय अनुष्ठान की सफलता उसके सिर पर चढ़ गई होगी और उसके अहंकार को बढ़ा दिया होगा। इससे भी बुरी बात यह थी कि वह वृद्धों के प्रति कमजोर था, उनके सामने झुककर उन्हें प्रसन्न करने की आदत रखता था और उनकी बातों को परम ज्ञान मानता था। भीम ने मन ही मन कहा, "अब भी उसके पास यह है, और इसी वजह से उस अंधे ने हमें हरा दिया।" उस चालाक बूढ़े अंधे ने सही अनुमान लगाया था कि अगर धर्म की प्रसिद्धि बढ़ेगी तो लोग उसे सिंहासन पर बिठाना चाहेंगे। उसने और उसके बेटे ने मिलकर एक षड्यंत्र रचा। क्या मीठी-मीठी बातें थीं, मक्खन जैसी मीठी बातें और प्यार भरी आवाज़! उस धूर्त बूढ़े अंधे ने कहा था, "मेरे प्यारे बेटे, धर्म! प्रशासन चलाने में तुमने जो कर्तव्यनिष्ठा दिखाई है, उससे मैं अत्यंत प्रसन्न हूँ। लेकिन मुझे इस बात की चिंता भी है कि इतनी कम उम्र में तुम्हें इतना बड़ा बोझ उठाना पड़ रहा है!"

धर्मराज ने कहा, "हे पिता, यह आपका राज्य है। मैं प्रशासन के अपने कार्य को आपके चरणों में सेवा करने का एक तरीका मानता हूँ।"

धृतराष्ट्र, "बड़ों के प्रति आपकी श्रद्धा ही आपकी रक्षा करेगी। प्रशासनिक कार्यों से आप थक चुके हैं। आपको कुछ दिनों का विश्राम करना चाहिए। साथ ही, एक अत्यंत गंभीर मुद्दा है जिस पर आपको ध्यान देना चाहिए। क्या आपने हमारे नगरों में से एक, वारणावथा देखा है?"

धर्मा ने कहा, "नहीं, पिताजी।"

पिताजी, "यह जगह हमारे शत्रु, पंचालों के क्षेत्र से सटी हुई है। हमें जानकारी मिली है कि उस क्षेत्र के लोग पूरी तरह से हमारे प्रति वफादार नहीं हैं। क्या आप इस बात से सहमत नहीं हैं कि दो देशों के बीच फंसे लोगों की वफादारी अक्सर बंटी हुई होती है? अगर आप जैसे लोकप्रिय राजकुमार एक-दो साल के लिए वहां डेरा डालें, और बेहतर होगा कि उसे दूसरी राजधानी बनाकर न्यायपूर्ण और कुशल प्रशासन की प्रतिष्ठा स्थापित करें, तो हम जनता का पूरा समर्थन हासिल कर सकते हैं। इससे हमें पंचाल क्षेत्र के एक हिस्से पर आक्रमण करके उसे जीतने का अवसर भी मिलेगा। आपके पूज्य पिता ने हमारे क्षेत्र का विस्तार किया और अमर हो गए। क्या आपको उनके इस नेक काम को आगे नहीं बढ़ाना चाहिए? तुम चुप क्यों हो, पुत्र? मेरे सुझाव के बारे में तुम्हारा क्या विचार है?"

धर्मा ने कहा, "जी पिताजी, आपका सुझाव सही है।"

पिता ने कहा, "मैंने वहाँ एक बिल्कुल नया महल बनवाया है ताकि तुम, तुम्हारी माता और भाई आराम से रह सकें। क्या एक साधारण निवास कुरु राजकुमार के लिए पर्याप्त हो सकता है? बिलकुल नया महल। इसकी रंग-बिरंगी सजावट इंद्र की स्वर्गिक राजधानी अमरावती को भी मात देती है! हे धर्म, बालक, इधर आओ।" फिर उन्होंने धर्म को गले लगाया और अपनी दृष्टिहीन आँखों से आँसू बहाते हुए कहा, "परन्तु देवताओं ने मुझ पर बहुत निर्दयता दिखाई है, क्योंकि उन्होंने जन्म से पहले ही मेरी दृष्टि छीन ली थी, इसलिए मैं तुम सबको एक साथ आनंद से रहते हुए नहीं देख सकता! मैं तुम सबके साथ वहाँ जाकर सुगंधित फूलों और पशुओं की मनमोहक गंध का आनंद लेना चाहता हूँ। परन्तु हस्तिनावती से यह बुरी आसक्ति आड़े आती है! जन्म से ही मैं इस नगर की सीमाओं से बाहर नहीं निकला हूँ।"

धर्म भी उस अंधे व्यक्ति के इरादे से अनजान नहीं थे। लौटकर उन्होंने हमें बताया कि उनके चाचा नागरिकों के स्नेह और ध्यान से हमें अलग करने, हमारी लोकप्रियता की जड़ों को जड़ से उखाड़ने की योजना बना रहे थे। लेकिन क्या उस दुष्ट, अंधे और बूढ़े व्यक्ति के मन में यही था? भीम का मन गहरे इरादे को समझने लगा। उन्होंने ऐसा कई बार किया था, और उन्हें पूरा विश्वास था कि दुर्योधन ही इस पूरी साजिश का सूत्रधार था। फिर भी उन्हें यह भी विश्वास था कि दुर्योधन का पिता उससे भी अधिक दुष्ट, बेईमान और बुरा था। लेकिन बड़ों की पूजा करने की प्रवृत्ति के कारण धर्म और अर्जुन दोनों ही उनसे सहमत नहीं थे। जब लोगों के प्रति आदर बढ़ता है, तो उनके वास्तविक स्वरूप को देखने की क्षमता उसी अनुपात में कम हो जाती है। केवल कृष्ण ही इस बात से सहमत थे कि पिता पुत्र से अधिक दुष्ट था। कृष्ण अंधभक्ति से परे थे। अब भीम का मन कृष्ण की स्मृतियों से भर गया।

कृष्ण ने कहा था, "तुम ही मेरी एकमात्र शरण हो।" यह कहने से पहले वह रोई थी। बेशक, उसने यह बात अनगिनत बार कही थी, लेकिन इस बार वह कहने से पहले ही रोई थी, इस तरह रोई थी कि कृष्ण के हृदय की गहराई तक छू गई थी। लेकिन लगातार पूछे जाने पर भी उसने कभी यह नहीं बताया कि उसने ऐसा क्यों किया। कृष्ण मन ही मन सोचने लगे, "मैंने ऐसा क्या किया है जिससे वह गुमराह हो गई है?" उनका घोड़ा धीमा हो गया। आगे और पीछे के घोड़े भी थक चुके थे। उन्हें ठीक से पता नहीं था कि वे कितनी दूर आ चुके हैं। मत्स्य क्षेत्र पहाड़ी था, जली हुई राख के गोलों जैसी पहाड़ियों से भरा हुआ था। वहाँ गर्मी बहुत तेज़ थी। दल के आगे चल रहे घुड़सवार ने रुककर कहा, "महाराज, इस टीले को पार करने के

बाद एक तालाब है। उसका पानी ठंडा है, और वह छायादार पेड़ों से घिरा हुआ है। घोड़े थक गए हैं, इसलिए हमें थोड़ी देर आराम करने दीजिए। मौसम ठंडा होने के बाद हम निकल सकते हैं। मैं इस रास्ते को अच्छी तरह जानता हूँ। हम चांदनी रात में सुखद यात्रा कर सकते हैं।"

घोड़ों और आदमियों के भरपेट पानी पीने के बाद, उन्होंने खाना पकाना शुरू किया और एक अस्थायी चूल्हा बनाया। भीम एक पेड़ की छाँव में बैठ गया। ठंडी हवा बह रही थी, जिससे थके हुए अंगों को आराम मिल रहा था, जो लामंका की जड़ों से बुनी चटाइयों से ढके घर से कहीं अधिक आरामदायक था। थोड़ी देर बाद वह पीठ के बल लेट गया। गर्मी की तपती धूप में पेड़ों के पत्ते सूखकर मुरझा गए थे। उसका मन फिर से उस अंधे बूढ़े की ओर लौट आया, और उसने वही सवाल पूछा, "तेरह और आधे साल बाद उस बूढ़े का चेहरा कैसा दिखता होगा? क्या महल में शानदार दावतों के बाद वह फूला हुआ होगा? या भीम द्वारा अपने बेटे को मारने का समय आ जाने के डर से वह दुबला-पतला हो गया होगा? चाचा विदुर ने मुझे बाद में बताया कि उस बूढ़े का इरादा धर्म की लोकप्रियता को नष्ट करने से अधिक कुछ नहीं था। उन्हें जिंदा जलाने के लिए लाख का महल बनवाने की योजना पूरी तरह से बेटे की थी। लेकिन क्या चाचा की समझ गलत नहीं हो सकती? चाचा और वह अंधा एक-दूसरे के बहुत करीब थे। हाँ, कुछ मायनों में वे एक-दूसरे के प्रति शत्रुतापूर्ण भी थे। यह प्रेम और घृणा से बना एक विचित्र रिश्ता था। यह दूत मेरी माँ की नौकरानी का बेटा है। फिर भी वह इस बात से नाराज़ है कि मैं उसकी बात नहीं सुनता, बल्कि इसके विपरीत, मैं उसे सलाह देता हूँ। लेकिन हर कोई उसका सम्मान करता है, नौकर, ग्रामीण, दूत, किसान और व्यापारी। मुझे विश्वास है कि केवल वही उस बूढ़े को सांत्वना दे सकता है।" जब वह अंधा व्यक्ति मानसिक रूप से परेशान था, तब उसकी याद आई। बचपन से ही वह उस अंधे व्यक्ति की देखभाल करता आया था, कई तरह से उसकी मदद करता था, शौचालय जाने में, नहाने में, खाने में और आम तौर पर उसके हर काम में। सुबह चाचा उसे संदेशवाहक के रूप में उसकी नीची स्थिति का एहसास कराते थे, लेकिन अगले ही दिन वह उसे बुला लेता, माफी मांगता, बेबस होकर रोता और सिसकियाँ भरता। क्या तब उसके आँसू सच्चे थे या सिर्फ झूठे, जो ज़रूरत पड़ने पर निकल आते थे? यह चाचा भी बिल्कुल वैसा ही है। चाहे उसे पीटो, चाहे गाली दो, वह अपने मालिक को कुत्ते जैसी वफादारी से कभी नहीं छोड़ता। अजीब बात है, वह धृतराष्ट्र को पापी

कहता है और फिर भी पापी से दूर नहीं रहता! बेशक, वह खुद कोई पाप नहीं करता। कैसा अजीब लगाव है! जब तक उसके विचार इस बिंदु पर पहुँचे, तब तक वह पाँचवीं या छठी बार जम्हाई ले चुका था। उसने अपनी आँखें बंद कर लीं। हालाँकि पेड़ की छाया सुखद थी, फिर भी सूरज की किरणें पत्तियों के बीच से होकर उसकी आँखों में सुई की तरह चुभ रही थीं। वे पलकों पर असर डाल रही थीं, और फिर आँखों को गर्म कर रही थीं। पलकों के नीचे, जिससे वे लाल हो रही थीं। एक बार फिर सब कुछ जलने की याद, चारों ओर लपटें, घी, तेल और सूखी लकड़ियों से जलते हुए पूरे लकड़ी के घर को भस्म कर रही थीं। दर्द भरी चीख, और छह शरीर राख में बदल गए, साथ ही दुर्योधन द्वारा किराए पर लिए गए हत्यारे पुरोचना का शव भी। हाँ, वह मरने लायक था, ठीक है। लेकिन उस निर्दोष स्त्री और उसके पाँच बच्चों की मृत्यु में क्या न्याय था? भीम को याद आया, मैंने ही यह अनुमान लगाया था कि दुर्योधन, मृत शरीरों को कुंती और उसके पुत्रों के शव समझकर, उन्हें मारने का प्रयास नहीं करेगा। हाँ, यह हमारी जान बचाने के लिए था। फिर भीम को सूर्य की चुभन और भी तीव्र महसूस हुई। वह एक तरफ मुड़ा और अपनी आँखें बंद कर लीं। उसे अपराधबोध हुआ, उसने मन ही मन कहा, अपनी दयनीय जान बचाने के लिए हम किसी की भी बलि दे देते हैं! उसे जीवन से ही घृणा होने लगी। खैर, उसने सोचा कि जो हो गया सो हो गया, और बलिदान पहले ही हो चुका है। अब क्यों परेशान होना? उसने गहरी जम्हाई ली। नींद आ गई। और फिर एक बुरा सपना, एक ऐसा बुरा सपना जिसमें वह सिमट गया था। बीते हुए सारे अंधकार ने उसे घेर लिया, साढ़े तेरह साल, उससे पहले के दो साल, और उससे भी पहले के साल। मांसपेशियां और नसें अचानक ढीली पड़ गईं, और फिर दूर कहीं से घोड़े की हिनहिनाहट सुनाई दी, और फिर चार, छह और आठ घोड़ों की हिनहिनाहट। वह अचानक पसीने से तरबतर और खुद से घृणा करते हुए जाग उठा। फिर वह नदी के किनारे गया, और अपनी हथेलियों में पानी भरकर धीरे-धीरे और सावधानी से अपनी गर्दन, बांहें, बगलें, छाती, पीठ और जांघें धोईं। फिर जब उसने मुट्ठी भर पानी पिया तो उसे अपार राहत मिली। लेकिन थोड़ी देर बाद ही पसीने की बूँदें आने लगीं, और उसने उन्हें अपने ऊपरी वस्त्र से पोंछ लिया। पास ही छाया में बैठे हुए उसे फिर से कृष्ण की याद आई। उन्होंने कहा था, "तुम ही मेरी एकमात्र शरण हो, कृपया इसे याद रखना।" लेकिन उस स्थिति में उनका इससे क्या तात्पर्य हो सकता है? मैंने उनसे इसका अर्थ समझाने का आग्रह

किया। लेकिन कृष्ण पहेलियों में माहिर हैं। कभी सीधी बात नहीं करतीं। उनके अंतर्मन को कौन समझ सकता है? क्या वह इस मामले में अपवाद हैं या यह सभी स्त्रियों का सामान्य स्वभाव है? जब मैं सभी महिलाओं की बात करता हूँ, तो मेरा मतलब उन सभी से है जिन्हें मैं जानता हूँ—खासकर माँ से। लेकिन माँ कभी पहेलियों में बात नहीं करतीं। क्या वह पिता से पहेलियों में बात करती थीं? शायद। हमारे परिवार में और कौन सी महिलाएं हैं? हाँ, सुभद्रा हैं। वह अर्जुन की पत्नी हैं। अर्जुन उनसे अंतरंग बातचीत नहीं करते। एकमात्र महिला जिसे मैं वास्तव में जानता हूँ, वह कृष्ण हैं। वह मेरे लिए नारी की संपूर्ण अवधारणा हैं। वह एक पहेली हैं, यह महिला, जो मेरे लिए सभी स्त्री हैं। स्त्री, तेरा नाम पहेली है! पहेली, तेरा नाम स्त्री है! भीम अपने अतीत से, या यूँ कहें कि उसकी स्मृति से, तब जागे जब नौकरानी नीला ने झुककर बताया कि खाना तैयार है। पके हुए चावल, आटे और जीरे से बने पैनकेक, ज़्यादा पका हुआ मांस, और क्या? गोमांस, और क्या। भीम जानते थे कि वे सभी उनकी ज़रूरतों को जानते हैं। लेकिन वह यह भी जानते थे कि वे यह नहीं जानते कि कच्चा गोमांस भी उतना ही स्वादिष्ट होता है। उसने मन ही मन कहा, "अगर मैं कच्चा मांस खाऊंगा, तो लोग मुझे गैर-आर्य, राक्षस कह देंगे, मानो आर्यवाद का सार पके हुए भोजन में ही निहित हो!" तभी उसे अचानक अपनी राक्षस पत्नी हिदिम्बे की याद आ गई। वह कच्चा मांस बड़े चाव से खाती थी। भीमा को याद आया, "मैं उसे पके हुए खाने का लालच देता था, यह कहकर कि इसका अपना एक अलग स्वाद है। वह उसे पसंद करती थी। क्या सच में उसे पसंद आता था या सिर्फ पसंद करने का नाटक करके मुझे अच्छा लगता था? लेकिन हिदिम्बे मेरे साथ कभी नाटक नहीं कर सकती थी; यह उसके स्वभाव में नहीं था; वह बांस की तरह सीधी थी; बोलने और व्यवहार में बिल्कुल स्पष्ट। उसकी मांगें और इच्छाएं कभी पहेलियों में नहीं होती थीं। चाचा ने हमारे भागने का इंतज़ाम भूमिगत सुरंग से किया था और हमें निर्देश दिया था कि घने जंगल के बीचोंबीच सुरंग के अंत में हमारा इंतज़ार कर रहे एक नाविक की नाव में बैठकर नदी पार करें। नाविक ने हमें चेतावनी दी थी कि अगर हम जल्दी नदी पार नहीं करेंगे तो हमें मार दिया जाएगा। अगला पूरा दिन हमने एक ऐसे घने जंगल में बिताया जिसे हमने पहले कभी नहीं देखा था और न ही भविष्य में देखने की उम्मीद थी। माँ मेरी पीठ पर, अर्जुन आगे और बाकी सब पीछे। बातचीत करना मुश्किल था। खाने-पीने की इतनी कमी थी। हमें घूमना पड़ता था, लेकिन इस बात का ध्यान रखना पड़ता था

कि एक ही जगह पर बार-बार चक्कर न लगाएं, समय बर्बाद न करें।" हमने दिशाएँ ठीक कर लीं और दक्षिण की ओर, कुरु देश की सीमा बनाने वाली नदी की ओर चल पड़े। नदी के दक्षिण में वह जंगल, उसका क्या नाम था? हाँ, उसका नाम हिडिम्बावना था। असल में उसका नाम यह नहीं था, बस लोग उसे इसी नाम से पुकारते थे। उस जंगल में रात को सोने का जोखिम हम कैसे उठा सकते थे, जब हमारे शरीर पूरी तरह से सुस्त और नींद से व्याकुल थे? मैंने उनसे कहा, तुम सो जाओ, मैं पहरा देता हूँ। उन्होंने चट्टानों से बहते पानी से अपनी प्यास बुझाई और फिर लाशों की तरह गहरी नींद में सो गए, बस फर्क इतना था कि वे साँस ले रहे थे। उनके भूखे शरीर इतने कमजोर थे कि ज़ोर से खर्राटे भी नहीं ले पा रहे थे। लेकिन मैं चौकन्ना था, बाघों और तेंदुओं को देख रहा था। और फिर वह अचानक कहीं से प्रकट हो गई! उसकी अविश्वसनीय ऊँचाई, एक आर्य पुरुष से भी लंबी, मेरे कंधों तक पहुँचती हुई, गाय जैसी गठीली काया, किसी जानवर की खाल से ढकी उसकी कमर, क्या यह भ्रम था या वास्तविकता? हाँ, मुझे सब कुछ स्पष्ट रूप से याद है। फिर जैसे ही मैं भोर की ओर बढ़ा, वह गायब हो गई। फिर वह दोबारा प्रकट हुई, मेरे पास आई और बोली। उसकी राक्षस भाषा हमारी आर्य भाषा जैसी थी, हिमालय में रहने वाले देवों की भाषा से अधिक मिलती-जुलती थी। वही स्वर, वही ऊँची आवाज़। उसने ऊँची आवाज़ में पूछा, 'आप कौन हैं? आप हमारे जंगल में क्यों आए हैं?' मैंने उसे झूठा नाम और झूठी पहचान बताई। जैसे ही मैंने उससे पूछा कि वह कौन है और उस अँधेरी रात में यहाँ क्यों है, उसने तुरंत जवाब दिया, 'मेरा नाम सालकटंकति है। हम राक्षस हैं। मेरे बड़े भाई यहाँ राक्षस जनजाति के राजा हैं। रात में गश्त करते समय मेरी नज़र आपसे अचानक पड़ी। आपको देखते ही मुझे आपसे प्यार हो गया। मैं आपको पाने की इच्छा करने लगी। आप ज़मीन पर सो रहे उन लोगों जैसे नहीं हैं। आप राक्षसों की तरह सुंदर हैं। मेरे पति बन जाइए।' दो रात और एक दिन जंगल में घूमने के बाद मुझे बहुत नींद आ रही थी। लेकिन यह एक ऐसा अवसर था जिसने मेरी नींद को अपने आप भगा दिया। सुबह की हल्की रोशनी में, मैं उसका भव्य और सुंदर रूप, उसकी शानदार ऊँचाई, सब कुछ स्पष्ट रूप से देख पा रहा था, और मुझे यकीन था कि भगवान ने मेरे लिए इससे बेहतर जोड़ी नहीं बनाई होगी। वह अभी बहुत छोटी थी, और मेरी उम्र कितनी थी? पच्चीस? पहली बार मेरा दिल मानो टूट ही गया था जब उसने अपनी इच्छा ज़ाहिर की। लेकिन मैं सचमुच डरा हुआ था। अज्ञात के कारण डरा हुआ था।

मैंने उससे कहा, 'हे लड़की, तुम, यह जगह, तुम्हारा जंगल और तुम्हारे लोग, सब मेरे लिए अनजान हैं। मैं तुम पर कैसे भरोसा करूँ?'

उसने उत्तर दिया, "यदि मैं तुम्हें न चाहती, तो क्या मैं डालियों के बीच छिपकर तुम्हें निहारती रहती? मैं इच्छा की व्याकुलता सहन नहीं कर सकती। पास आओ। तुम्हारे लोग अभी काफी देर तक नहीं जागेंगे।" वह आगे बढ़ी और अपनी बाहें फैलाकर मुझे गले लगाने लगी। भला कौन सी आर्य स्त्री ऐसा करती, सीधे मेरे पास आती? वैसे भी, मैं किन आर्य स्त्रियों को जानता हूँ? द्रौपदी ने पहले ही दिन धर्म से विवाह किया और उनके साथ रात बिताई। अगले दिन उन्होंने विधिपूर्वक उसे मेरे बिस्तर पर आने दिया। इस पूरे समय मैं अपनी इच्छा की आग में जल रहा था। सालकटनकती के साथ एक वर्ष बिताने के बाद, एक वर्ष और तीन महीने तक स्त्री से विमुख रहना मेरे लिए स्त्री की तीव्र लालसा का समय था। द्रौपदी, कद और शरीर में मुझसे छोटी होते हुए भी, अत्यंत सुंदर और तीक्ष्ण चेहरे वाली थीं, जो स्वयंवर समारोह में एकत्रित किसी भी राजपरिवार के वंशज को आकर्षित कर सकती थीं। ऐसे मामलों में सालकटनकती के सीधे और खुले दृष्टिकोण का आदी होने के कारण, मैं उस पहली रात द्रौपदी के पास गया और उनसे भावुक होकर बातें कीं। मुझसे दूर हटते हुए, लेकिन मेरे हाथ की शक्ति का विरोध न कर पाने के कारण, वह रुक-रुक कर सिसकते हुए बोली, "तुम कितने असभ्य और कठोर हो। तुम्हारा यह अधीर स्वभाव आर्य के योग्य नहीं है।" खुद पर शर्मिंदा होकर, मैंने पूरी रात सिर झुकाए बैठी बिताई। वह हमेशा पहेलियों से भरी रहती थी। वह बस इतना कहती थी कि ऐसा नहीं होना चाहिए, लेकिन यह नहीं बताती थी कि ऐसा कैसे होना चाहिए! सिवाय एक बार के, जब मैंने उसे जंगल में बड़ी मुश्किल से खोज कर लाया हुआ सौगंधिका फूल भेंट किया था। तब उसने कहा था, "भीम, अगर पति उसकी हर बात को यंत्रवत माने तो स्त्री को क्या सुख मिल सकता है! देखो, आज मैंने तुमसे बस इतना कहा था कि सौगंधिका फूल में अच्छी खुशबू होती है, क्या तुमने उसे देखा है? बस इतना ही काफी था। तुमने उस आधे इशारे से ही मेरी इच्छा समझ ली, पूरे जंगल में अथक परिश्रम किया और उसे मेरे लिए ले आए।" काश, तुम मेरी अनकही या अधूरी इच्छाओं, विचारों और इरादों को भी उतनी ही आसानी से समझ पाते!' पहेलियों को समझने के लिए हमेशा चौकस दिमाग चाहिए। कल उसने कहा, 'तुम यह भी जानते हो कि तुम ही मेरी एकमात्र शरण हो। इसे हमेशा अपने मन में रखना।' इसका विशेष अर्थ क्या हो सकता है? वह कभी

नहीं समझाएगी। यह केवल पहेली का सवाल नहीं है। यह उससे कहीं अधिक आत्म-अभिमान का सवाल है, उस अभिमान से उपजा है कि अगर मैं समझना नहीं चाहूँगी तो वह भी समझाना नहीं चाहेगी! यही अभिमान था जिसने आँसू आने की मांग होने पर भी उन्हें रोक रखा था। एक दिन उसने कहा था, 'भीमा, तुम ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हो जिनके सामने मैं खुलकर रोती हूँ। अगर मैंने बाकी चारों में से किसी के भी सामने एक भी आँसू बहाया, तो मैं कसम खाती हूँ कि मैं राजा द्रुपद की सच्ची पुत्री नहीं हूँ!' उसने यह कब कहा था? मैंने अपनी स्मृति में खोजबीन की। मुझे तुरंत याद नहीं आया। खैर, इसमें कोई संदेह नहीं था कि कुछ समय पहले आँसुओं के माध्यम से हमारे मन एक हो गए थे।

—•✳•—

अध्याय 13

भोजन के बाद, नीला ने एक पेड़ की छाँव में भीम के लिए एक नरम गद्दा बिछाया। तकिया कई कपड़ों को एक साथ बांधकर बनाया गया था। भीम ने अपने पीछे बंधे बालों की गांठें खोलीं और अंगड़ाई ली। लेटते ही उन्हें नींद आ गई। नीला जानती थी कि दोपहर के भोजन के बाद लगभग आधे घंटे सोना भीम की रोज़ की आदत थी। नीला और भीम एक-दूसरे को लगभग एक साल से जानते थे। बारह वर्षों के वनवास के बाद, पाँचों भाई और द्रौपदी एक वर्ष के लिए छुपकर रहने के लिए विराट नगर गए थे। उस समय भीम ने राजकक्ष में सहायक के रूप में काम शुरू किया था। धर्मराज ने धर्म के एक दरबारी विशेषज्ञ का वेश धारण किया। नकुल दमाग्रंथि नाम से घोड़ों के रखवाले बन गए। सहदेव तांत्रिपाल बन गए। द्रौपदी रानी के वस्त्र और श्रृंगार का काम करने वाली सेविका बन गईं। उसी समय भीम और नीला के बीच मित्रता पनपी थी। राजा विराट की विशेष अंगरक्षक नीला, रसोई में

ही भोजन करती थी। भीम, जो अब वलाल के नाम से जाने जाते थे, इतने कुशल रसोइये साबित हुए कि उन्होंने न केवल राजपरिवार को, बल्कि वहाँ भोजन करने वाले सभी लोगों को प्रसन्न किया। भीम का भोजन परोसने का तरीका बेहद उदार था। इसी तरह भीम ने नीला का स्नेह और कृतज्ञता प्राप्त की। नीला ने भीम से दो-तीन बार पूछा था, 'कुक, तुम्हारा शरीर तो उत्तम है। मैंने सुना है कि तुम प्रतिदिन दो बार, सुबह और शाम को व्यायाम करते हो। तुम मेरी तरह सैनिक क्यों नहीं बन जाते?'

भीमा हंसते हुए बोला, "अगर तुम रसोइया हो, तो तुम जो चाहो, जितना चाहो, बना सकते हो और फिर खा सकते हो। अगर तुम सैनिक हो, तो तुम रसोइयों के सामने बस मुस्कुरा सकते हो। जैसे तुम अब मेरे सामने मुस्कुरा रहे हो!"

गुप्तवास की अवधि समाप्त होने के बाद, जब यह प्रकट हुआ कि वे प्रसिद्ध पांडव हैं, और वह कोई और नहीं बल्कि दरबारी पहलवान किचक का वध करने वाले विख्यात भीम हैं, तो नीला भीम के प्रति अपने पूर्व व्यवहार से शर्मिंदा होकर अलग-थलग खड़ा रहा। लेकिन भीम, जो नीला की वीरता, पराक्रम और स्वभाव से परिचित थे, ने उसे उपप्लव्य नगर में अपना कर्मचारी नियुक्त कर लिया था।

भीम दोपहर में ज्यादा देर नहीं सोया। वह सुबह जल्दी उठ गया। बाकी घुड़सवार पेड़ों की छांव में बेतरतीब ढंग से लेटे हुए थे। धूप में सफर करना नामुमकिन था। उनका इरादा था कि ज़्यादातर दूरी रात में ही तय कर ली जाए। इसीलिए वे बेफिक्र होकर सो रहे थे। भीम ने घोड़े को पानी में भिगोया हुआ गेहूं का पाउडर खिलाया, फिर पानी पिलाया और आखिर में घास खिलाई। इसके बाद नीला भीम के पास आया। भीम ने सोचा कि वह कुछ पूछने आया है, इसलिए उसने उसे बैठने का इशारा किया।

नीचे चटाई पर बैठी नीला ने पूछा, "राजा, मैंने सुना है कि आपने अनगिनत राक्षसों से युद्ध किया है और उन्हें मार गिराया है। अब हम उनकी सहायता लेने जा रहे हैं। उनकी युद्ध कला की विशेषता क्या है? क्या वे धनुष-बाण चलाने में हमसे अधिक कुशल हैं?"

भीमा, जो अभी-अभी जागा था, ने गहरी जम्हाई ली, जिससे उसकी घनी मूंछें गुंबद जैसी लग रही थीं। फिर बोला, "क्या विशेषता है? देखो, राक्षस वे लोग हैं जो हमेशा जंगल में, बाघ, जंगली भालू, तेंदुआ और हाथी जैसे जंगली जानवरों के बीच रहते हैं। उन्हें मारकर ही जीवित रहना पड़ता है। स्वाभाविक रूप से वे भय से

सबसे कम प्रेरित होते हैं। खासकर हमारी तुलना में। यह स्वाभाविक है कि कोई भी जल्द ही अपने चिर-शत्रु के कुछ गुण ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार राक्षसों ने जंगली जानवरों के गुण प्राप्त कर लिए हैं - क्रूरता, निर्भीकता और बेपरवाही। वे युद्ध में जंगली जानवरों की तरह शत्रु की ओर दौड़ सकते हैं। उनका शरीर इतना मजबूत होता है कि वे बारिश, सर्दी और गर्मी की कठोरता को सहन कर सकते हैं। वे किसी भी पेड़ पर चढ़ने और किसी भी ऊंचाई से कूदने में सक्षम होते हैं। वे पानी में तैर सकते हैं या पानी के नीचे चल सकते हैं। उनका पेट इतना मजबूत होता है कि वे कच्चा मांस भी पचा सकते हैं। तीरंदाजी में उनका कौशल अद्भुत है; वे जंगली जानवरों को देखे बिना भी निशाना साध सकते हैं। वे गंध से भी जानवरों की उपस्थिति का पता लगा सकते हैं।"

नीला, "लेकिन तुमने उनके खिलाफ किस तरह की लड़ाई लड़ी? क्या तीरों से या मुक्केबाजी से? क्या तुम उनसे पहली बार भिड़ते समय डरी नहीं थीं?"

भीमा ने फिर से एक छोटी सी जम्हाई लेते हुए कहा, "तुम्हारा मतलब?" उसने कुछ पलों के लिए अपनी आँखें बंद कर लीं, मानो अतीत को याद कर रहा हो और स्मृति से एक-एक करके बातें याद कर रहा हो, और बोला, "उस लड़ाई में क्या मज़ा है जो शरीर को रोमांचक पीड़ा न दे? क्या बछड़ों और हिरणों जैसे पालतू जानवरों का शिकार करना सचमुच मज़ेदार हो सकता है? मुझे गदा और अन्य सीधे हथियारों से हाथों से लड़ना बहुत पसंद है। आज भी मैं दूर से बाण चलाने की विधि को स्त्री-सुलभ मानता हूँ। हाथ से हाथ की कुश्ती में कौन मेरा मुकाबला कर सकता है? तब तक मेरी लड़ाई कीड़े-मकोड़ों को कुचलने से ज़्यादा गंभीर नहीं थी! हमारे रिश्तेदार दुश्मन दुर्योधन ने हमें एक चमकीले महल में फँसाकर ज़िंदा जलाने की योजना बनाई थी। हमने खुद ही उसमें आग लगा दी और एक सुरंग से भाग निकले। फिर हम छिप गए।"

नीला, "जी हां, मैंने यह सुना है। मैं राजा विराट के साथ थी जब धर्मराज ने उन्हें पूरी घटना सुनाई थी। मुझे पता चला कि बाद में जब आप जंगल में गए, जब बाकी लोग सो रहे थे और आप जाग रहे थे, तो राक्षसी स्त्री हिडिम्बादेवी आप पर मोहित हो गई। आपने उसके भाई को मार डाला। आप दोनों के बीच वह लड़ाई कैसी रही? चूंकि हम उस भूमि पर जा रहे हैं, इसलिए मैं आपसे यह जानना चाहती हूं कि राक्षसों के अचानक हमले का हम कैसे सामना कर सकते हैं।"

भीमा, हिदिम्बे के साथ प्रेम प्रसंग के बारे में नीला से बात करने को तैयार नहीं था। लेकिन इसका ज़िक्र किए बिना, अपने भाई के साथ हुए झगड़े की घटना को ठीक से बयान करना भी मुश्किल था। कुछ देर तक कहानी सुनाने के लिए शुरुआती बिंदु चुनने में संघर्ष करने के बाद, भीमा ने घटनाक्रम का वर्णन किया, "भोर हो रही थी। मुझे याद है, मेरी माँ और भाई एक साफ़-सुथरी और समतल चट्टान पर सो रहे थे। मैं उनके पास खड़ा होकर उनकी निगरानी कर रहा था। वह मेरे पास खड़ी थी। जंगल के किसी कोने से, किसी खुले स्थान से, उसका बड़ा भाई मेरी ओर झपटा। उसने छलांग नहीं लगाई, बल्कि बाघ जैसी फुर्ती दिखाई। मुझे लगता है कि वह लगभग तीस साल का रहा होगा, और मैं शायद चौबीस या पच्चीस साल का था। मुझे ठीक से याद नहीं है। उसका शरीर मुझसे छोटा था। उसकी हथेली बाघ की तरह चौड़ी और मज़बूत थी। शायद उन्हें हथेली कहने के बजाय पिंजरा कहना ज़्यादा सही होगा।"

नीला, "उनकी त्वचा का रंग क्या है?"

भीम ने कहा, "हमारे जैसे लाल। वे अपने शरीर को पूरी तरह से नहीं ढकते, बल्कि उसे कुछ हद तक हवा और धूप में खुला छोड़ देते हैं। इसलिए उनका रंग थोड़ा गहरा हो जाता है। एक ही छलांग में वह मेरे सामने खड़ा हो गया और दहाड़ते हुए बोला, 'किसकी अनुमति से तू हिडिम्बासुर के इलाके में घुस आया? मुझे बता, कुत्ते!' उसकी आवाज इतनी तेज थी कि आकाश में सूर्य के कान भी भेद सकती थी! मैं मानता हूँ कि मैं डर गया था। मैंने राक्षसों के बारे में सुना तो था, पर उन्हें कभी देखा नहीं था। तुरंत ही वह अपनी बहन की ओर मुड़ा। फिर उसने कहा, 'तूने कहा था कि तू सीमा पर घूमेगी, यहाँ हमारी जाति के बाहर के इस अजनबी से क्या कर रही है? मैंने तेरे प्रेम भरे शब्द सुन लिए हैं। खैर, मैं तुझसे बाद में निपटूँगा। यह मत भूल कि मैं न केवल तेरा भाई हूँ, बल्कि इस भूमि का राजा भी हूँ। ये लोग यहाँ बेफिक्र होकर सो रहे हैं जैसे कि यह उनका अपना घर हो। मैं इनके सिर फोड़ दूँगा।' फिर उसने तुरंत पास पड़ा पत्थर उठा लिया, और पांडव उसकी आवाज से जाग उठे।" शोर मच गया और वे डर से अपनी आँखें मटकाने लगे। जैसे ही राक्षस उनके सामने आया, मैंने बिना देर किए उसकी ओर दौड़कर उसे कसकर पकड़ लिया। वरना वह जो पत्थर उन पर फेंकने वाला था, उससे कम से कम दो लोगों की जान चली जाती। वह पत्थर उन्हें कुचल देता।

नीला, पूरी तरह से तल्लीन होकर बोली, "आगे क्या हुआ?"

भीमा, "जैसे ही मैंने उसे अपनी पकड़ में लिया, उसके हाथ से पत्थर फिसलकर मेरी पीठ पर आ गिरा। इससे मेरी पीठ पर थोड़ा सा घाव हो गया, लेकिन रीढ़ की हड्डी को कोई नुकसान नहीं हुआ। वह मेरी ही तरह ताकतवर था। उसने किसी तरह मेरी पकड़ से खुद को छुड़ा लिया। मैं लड़खड़ा गया, लेकिन सौभाग्य से वह मुंह के बल आसमान की ओर गिर पड़ा। मैं तुरंत उस पर गिर पड़ा। उसकी पीठ बुरी तरह घायल हो गई थी। सिर्फ मेरे घुटनों में थोड़ा दर्द था। वह जमीन पर दूसरी तरफ पलट गया और फिर दर्द से चीखने लगा। देखो, युद्ध में समय ही सब कुछ होता है। अगर किसी को पता हो कि क्या करना है और उसे जल्दी से कर ले, तो वह जीत हासिल कर सकता है। मुझे खुद पता नहीं था कि मैं उसे मारना चाहता था। अगर मुझे पता होता तो मैं बस उसकी गर्दन मरोड़ सकता था। मैं तो बस कुश्ती की एक चाल चल रहा था, विरोधी को पीठ के बल पटकना। वह आसानी से इस चाल का जवाब दे सकता था। यह सब कठोर चट्टानी सतह पर हुआ। कुश्ती के लिए वह एक खतरनाक इलाका था। मुझे पता था कि अगर मैं गिर गया तो..." अगर ऐसा हुआ तो मेरी हड्डियाँ चूर-चूर हो जाएँगी। मैं जानबूझकर चट्टान से दूर भागा और कुछ फीट दूर ज़मीन पर लेट गया। जैसे ही मैं ज़मीन पर खड़ा हुआ, वह मेरी तरफ झपटा।

नीला, "क्या इस समय भी तुम्हारे मन में उसे खत्म करने का ख्याल नहीं आया?"

भीमा, "नहीं, वो मेरी बेवकूफी थी। क्या तुम यकीन कर सकते हो कि उसके बाद मेरे साथ क्या हुआ? जब मेरे पैर उसके पैरों में उलझ गए या

जब मैंने एक चाल से उसके पत्थर जैसे मजबूत शरीर को गिरा दिया, तो मुझे सचमुच आनंद आया। हस्तिनावती में, जहाँ मैं व्यायामशाला में बॉडीबिल्डिंग का अभ्यास करता था, वहाँ मेरी ताकत और मेहनत का कोई मुकाबला नहीं था। लंबे समय तक, मैं एक हाथी को पागल कर देने के बाद उससे मुकाबला करता था! लड़ने की मेरी इतनी तीव्र इच्छा थी। हाथी की थूथन और टांगें इतनी मजबूत थीं कि मुझे आनंद मिलता था। उस मूर्ख जानवर के पास केवल एक ही चाल थी - अपनी थूथन को उठाना और मोड़ना। मैं जानता था कि यह खतरनाक है, फिर भी लड़ने की इतनी प्रबल इच्छा थी कि मुझे यह करना ही पड़ा। अब मेरे सामने यह साथी था जिससे मुझे लड़ना था। मुझे उसके साथ कुश्ती करने में सचमुच मजा आया। मैं खेल में पूरी तरह डूब गया, उसकी चालों को अंजाम देने का आनंद, छाती से छाती टकराना, जांघों और टांगों को उलझाना और मरोड़ना, और उसके शरीर को

निचोड़ना। एक महत्वपूर्ण बात याद रखें; ये राक्षस बहुत शक्तिशाली होते हैं। बेशक, मेरे जितने मजबूत नहीं। लेकिन निश्चित रूप से अन्य आर्य पहलवानों से कहीं अधिक शक्तिशाली। लेकिन उनकी युद्ध शैली भोली-भाली है, जिसमें वैज्ञानिक ज्ञान और तकनीकों का अभाव है— उन्हें ज़रा भी अंदाज़ा नहीं है कि शरीर के किस हिस्से को निष्क्रिय करने के लिए कौन सी तरकीबें अपनानी हैं, किस हिस्से को तुरंत जकड़ना है, कहाँ दबाव डालना है, किस संवेदनशील नस में सुई चुभोकर अस्थायी लकवा पैदा करना है। संक्षेप में, उनकी युद्ध शैली बाघ जैसी है। बस दुश्मन पर झपट पड़ो और उसकी गर्दन, मुँह या हाथ को ज़ोर से दबाकर या जांघों को कुचलकर उसे खत्म कर दो। तभी अर्जुन चिल्लाया, "बड़े भाई, आप अभी अपनी कुश्ती का हुनर दिखा रहे हैं, लेकिन वह आपको जान से मारने की योजना बना रहा है। एक पल भी बर्बाद मत करो। उस पर टूट पड़ो और उसे खत्म कर दो..." तभी तक सोए हुए साथी जाग उठे और हमारी ओर आ गए।

नीला, "क्या वे उस पर झपटे नहीं थे?"

भीम, "बस रुको। मैं तुम्हें बताता हूँ। मैं थकने लगा था। तुम्हें पता है, मैं दो रात और एक दिन सोया नहीं था। मैं लगभग दो दिन भूखा रहा था। मैं एक रात और एक दिन लगातार चलता रहा था। इसके अलावा, मैं अपनी माँ को पीठ पर लादकर चलता रहा था। मेरी साँस फूलने लगी थी। मुझे नींद भी आने लगी थी। अर्जुन और अन्य लोगों ने यह सब जान लिया था। लेकिन वे मेरे स्वभाव के एक विशिष्ट पहलू को भी जानते थे। क्या तुम चुपचाप सह लेते अगर कोई तुम्हारे राज्य पर आक्रमण करता? क्या तुम चुप रहते अगर कोई उस शिकार को मार डालता जिसका तुम लगन से पीछा कर रहे थे? इसी तरह, क्या तुम्हें गुस्सा नहीं आता अगर कोई उस दुश्मन को मार डालता जिसे तुम मारना चाहते हो? अर्जुन ने सुझाव दिया, 'बड़े भाई, कृपया एक तरफ हट जाइए। मैं एक तीर चलाकर उसे मार डालूँगा।' स्वाभाविक रूप से, मैंने प्रस्ताव ठुकरा दिया। गरजते हुए हिडिम्बा ने मुझे मारने के लिए मुझ पर हमला कर दिया। तुरंत मुझे पता चल गया कि मुझे क्या करना चाहिए। फिर भी मेरे मन में कुछ ऐसा था जो उस कदम को रोक रहा था। तब तक मैंने व्यवस्थित और भक्तिपूर्वक कुश्ती का अभ्यास किया था। मेरे पास बहुत अनुभव भी था। फिर भी सच्चाई यह थी कि मैंने ऐसे मुकाबलों में किसी को नहीं मारा था। एक तरह से दूर से तीर चलाकर किसी को मारना आसान है। तलवार उठाकर वार करना थोड़ा मुश्किल है। लेकिन क्या आपको नहीं लगता कि

किसी को मारने का सबसे मुश्किल तरीका आमने-सामने की लड़ाई में उसे जकड़ लेना है, खासकर तब जब आपने अभी तक किसी को नहीं मारा हो? इसी बीच उसने बरगद के पेड़ से एक डाल तोड़ ली। मैंने भी उससे एक डाल तोड़ ली। वह उस डाल से मुझे मारने के लिए आगे बढ़ा। मैंने तुरंत एक तरफ हटकर खुद को बचा लिया। उसका वार चूक गया और वह ज़मीन पर गिर पड़ा। मेरा वार उसके सिर पर लगा, उसके दिमाग को चकनाचूर कर दिया। खून बहने लगा। उसका सिर चूर-चूर हो गया था। चीखने के लिए मुंह आधा खुला रह गया और खामोश हो गया। वह गिर पड़ा और ज़मीन उसके खून से लाल हो गई।

नीला, "आगे क्या हुआ? क्या उसकी बहन चुप हो गई?"

भीम ने बताया, "वह अपने बड़े भाई का सिर अपनी गोद में रखकर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी, और उससे खून बह रहा था। उसके रोने से भयभीत होकर जंगल के पेड़ और लताएँ स्तब्ध रह गईं। दो राक्षस हमारी ओर दौड़े। उनकी आहट सुनते ही अर्जुन ने एक के बाद एक सात-आठ बाण चलाए। हिडिम्बा का मृत शरीर देखने से पहले ही वे चीखते हुए गिर पड़े। अपने भाई का सिर ज़मीन पर रखकर वह खून से लथपथ पैरों से गिरे हुए राक्षसों की ओर चली। वे दर्द से तड़प रहे थे, क्योंकि बाणों ने उन्हें घातक बिंदुओं पर भेद दिया था। उनमें से कोई भी जीवित नहीं बचा। वह भाग गई और छिप गई। हमने सोचा कि वह लड़ाई जारी रखने के लिए अपनी सेना इकट्ठा करने गई है। हमें यह तय करना था कि हम वहीं रुककर राक्षसों से लड़ें या वहाँ से भाग जाएँ। लेकिन कहाँ भागें? हम दिशा का सारा ज्ञान खो चुके थे, अपना रास्ता भटक गए थे। इसके अलावा, अगर हम वापस जाते, तो हमें दुर्योधन की चालों का सामना करना पड़ता। अगर हम आगे बढ़ते ही खतरा मंडरा रहा था। और मुझे असहनीय नींद आ रही थी। मैंने उनसे कहा, 'धर्म, अर्जुन, नकुल और सहदेव, आप लोग यहाँ स्थिति संभालिए। अगर मैं एक पल भी खड़ा रहा तो गिर पड़ूँगा, मेरा सिर चकरा रहा है।' फिर मैं जल्दी से उस पेड़ के पास गया जिसकी डालियाँ हमने तोड़ दी थीं, और उसकी जड़ों में सो गया। मुझे बस इतना याद है कि मैंने लगभग चार बार साँस ली।

नीला, "राक्षस मजबूत होकर नहीं लौटे"

भीमा ने कहा, "जब मैं जागा, तो रात हो चुकी थी। नहीं, असल में मैं जागा ही नहीं था। मुझे तब पता चला कि रात हो गई है जब माँ ने मेरे कंधे हिलाए। मेरे सामने हिडिम्बा की बहन खड़ी थी, जो मर चुकी थी। उसके चारों ओर सात-आठ

बूढ़े राक्षस थे। उनमें युद्ध का कोई निशान नहीं था। उन्होंने मुझसे विनती की, 'हमारी राजकुमारी का विवाह उस वीर से होगा जिसने हमारे राजा को मारा है। कृपया उससे विवाह कर लो और हमारे नए राजा बन जाओ।' माँ ने उनके इस विचार को स्वीकार कर लिया।"

नीला, "अब आगे क्या?"

भीमा, "आगे? और क्या? आप जानते हैं कि मैं उससे पहले से ही प्रेम करता था। और वह कैसा जुनून था!" अचानक वह रुका, और फिर बोला, "तुम एक योद्धा हो। ये बातें तुम्हारे काम की नहीं हैं। एक सैनिक को केवल युद्ध संबंधी बातों में रुचि होनी चाहिए। अन्य बातों में नहीं।" भीमा का ध्यान अंतर्मन की ओर गया। पुरानी यादें ज़ोर से लौट आईं। लेकिन तीस साल पहले जो कुछ हुआ था, उसे योद्धा नीला को बताने में वह झिझक रहा था। दरअसल, उसने कभी किसी अन्य पुरुष से स्त्रियों और कामुक प्रेम जैसे विषयों पर चर्चा नहीं की थी। इतनी उम्र के होने के बावजूद, भीमा इन मामलों में असामान्य रूप से शर्मीला था, और इन विषयों पर उसके शब्द कभी ज़बान से बाहर नहीं निकले! भीमा के शब्दों ने नीला को भी लज्जा और शर्मिंदगी से भर दिया। इसलिए नीला चुपचाप सिर झुकाए बैठा रहा। फिर वह उठा, अपना चेहरा आकाश की ओर उठाया और बोला, "देर हो रही है। चलो चलते हैं।" फिर उसने सो रहे लोगों को उंगलियों से छेड़ा और उन्हें जगाने के लिए चिल्लाया।

यात्रा फिर से शुरू हुई। सबसे आगे नीला अपने घोड़े पर सवार था, उसकी तलवार कमर पर लटकी थी और पीठ पर बाणों का जखीरा था। उसके पीछे अन्य सैनिक भी घोड़े पर सवार थे। बीच में भीम था। उसके पीछे दस सवार थे। सभी घोड़ों के दोनों ओर चावल, आटा और अन्य अनाज की बोरियाँ लदी थीं। कुछ घोड़ों पर खाना पकाने के बर्तन, कालीन और चादरें भी थीं। ढलता सूरज उनकी पीठ पर पड़ रहा था और दल पूर्व दिशा की ओर बढ़ रहा था। घोड़ों के चलने की आवाज और धूल उड़ रही थी। भीम मन ही मन सोच रहा था, "तीन-चार दिनों में हम हिडिम्बा के जंगल पहुँच जाएँगे - पत्नी सालकटंकति और पुत्र घटोत्कच से मिलेंगे।" भीम का मन उथल-पुथल में था, क्योंकि वह स्थिति का मानसिक रूप से विश्लेषण कर रहा था। इतने वर्षों से कोई संपर्क नहीं हुआ था। भीम को यह सोचकर आत्म-घृणा हो रही थी कि अब उसे कहना पड़ेगा, "मैं भीम हूँ, एक वर्ष के लिए तुम्हारा पति था, और उसे बताऊँ कि मैं उसका पिता हूँ!" वह सोच रहा था कि क्या बिना

देरी किए घर लौट जाना ही बेहतर होगा। लेकिन तब तक वे कृष्ण द्वारा दिए गए मिशन को पूरा करने में जुट चुके थे। भीम सोचने लगा, "अगर मैं उसे बताऊँ कि अगर हमारे पास राक्षसों की सेना नहीं हुई तो दुर्योधन की सेना अपने राक्षसों समेत हमें कुचल देगी, तो क्या वह मुझे गालियाँ देगी, या शायद मेरी पीठ पर चार-चार घूँट मारते हुए पूछेगी कि मैं इतने दिनों से उसे क्यों भूल गया था? लेकिन मुझे यकीन है कि वह मुझे ठुकराएगी नहीं, और उसका मेरे लिए कितना प्यार है!" भीम को लगा कि यह उस तरह का प्यार था जो सहज और पल भर में पैदा होता है। यह इतना शक्तिशाली और मौलिक प्यार था कि इसने उस बहन को भी प्रेरित कर दिया, जो अपने मृत भाई का सिर अपनी गोद में रखकर तब तक रोई थी जब तक जंगल के पेड़-पौधे मुरझा नहीं गए थे, फिर भी उसने अपने भाई के हत्यारे से उससे शादी करने की भीख माँगी थी! भीम ने सोचा, "हाँ, मैं सचमुच एक असभ्य व्यक्ति हूँ, लेकिन एक स्त्री का मन अथाह होता है, और शायद अगर माँ ने हस्तक्षेप न किया होता तो मैं उसका हाथ स्वीकार नहीं करता।" भीम ने अपने विचार जारी रखते हुए कहा, "माँ, धर्म, अर्जुन और अन्य लोगों ने मुझे जगाने से पहले ही इस मामले पर फैसला कर लिया था - वे व्यावहारिक थे। धर्म और अर्जुन को लगा कि कुछ दिनों तक राक्षसों के क्षेत्र में रहना ही सबसे सुरक्षित है, क्योंकि दुर्योधन के लोग वहाँ प्रवेश नहीं करेंगे - अन्यथा ये नरभक्षी हमारी खाल उतारकर हमें खा जाएँगे। उनका व्यावहारिक दृष्टिकोण स्वाभाविक और सही था - लेकिन माँ ने अलग ही बात कही थी, 'पुत्र, स्त्री के प्रेम को समझने के लिए मन का परिपक्व होना आवश्यक है। तुम अभी भी चंचल और बचकाने हो। प्रेम की वेदी पर स्वयं को अर्पित करने वाली स्त्री को अस्वीकार करना बड़ा पाप है। ऐसे मामलों में राक्षस, नाग, ऋषि, किरात, आर्य और देव जैसे संकीर्ण भेद अप्रासंगिक हैं। वह अविवाहित है। वह तुम्हें चाहती है, और तुम्हें उसकी इच्छा पूरी तरह से पूरी करनी चाहिए। उठो।' माँ के आदेश का उल्लंघन कैसे किया जा सकता है? - माँ ने सलाकटंकति के प्रेम को मुझसे पहले ही समझ लिया था। क्या प्रेम था! उसी रात वह हमें अपने साथ ले गईं। हम जंगल में थे और आधी रात तक चलते रहे—हमारे लिए विशेष रूप से मांस पकाया गया था, जो हमारी सारी भूख मिटाने के लिए पर्याप्त था—माँ के उससे विवाह के लिए राजी होने के बाद। वह दो शाखाओं के बीच एक पेड़ पर बने बाँस के आश्रय में चढ़ गई और सो गई। हमें भी ऐसे ही आश्रयों में रहना पड़ा। माँ को पेड़ पर चढ़ने से डर लगता था, लेकिन अगर वह नीचे सोती तो और भी बुरा

होता, बाघ या जंगली सूअर का शिकार बन जाती। अगले दिन, माँ के मार्गदर्शन में आर्य रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह के बाद, जल के किनारे, कुछ दूरी पर एक चट्टान पर, उसने मुझे भावुक प्रेम से भर दिया—उसने अपनी जीभ से मेरे शरीर और चेहरे को चाटा और अपने दाँतों से बार-बार काटा, कभी संतुष्ट नहीं हुई और उसका शरीर कितना शानदार था! जांघें इतनी सख्त कि उनसे कुश्ती करना आनंददायक था, मांसपेशियाँ मछली की तरह लहराती हुई, शानदार भुजाएँ, और सुगठित छाती, एक अथाह सुंदरता, और एक ऐसी शारीरिक शक्ति जो मुझे जबरदस्ती उठाकर अपनी पसंद की जगह पर प्रेम करने के लिए ले जा सकती थी, अगर मैं बिस्तर पर उससे दूर रहने की कोशिश करता। हठपूर्वक—एक ऐसी शारीरिक शक्ति जो क्रोधित होने पर मेरी पीठ पर कुछ प्रहार कर सकती थी, और अगले ही पल मुझे अपनी बाहों में कसकर जकड़ सकती थी—हर काम में साथी, शिकार में, तैरने में, पेड़ की चोटी पर बाँस के आश्रय में दौड़ने में, और हमारे पीछे आने वाले जंगली हाथियों से भागते समय—उसमें पति को बच्चे की तरह पालने की शक्ति थी—और उसके साथ प्रेम करना उतना ही आनंद देता था जितना कि समान शक्ति और कौशल वाले प्रतिद्वंद्वी से कुश्ती करना। लेकिन कृष्ण के साथ एक दिन भी ऐसा नहीं बीता, और वह एक कोमल, सौम्य प्राणी थी, एक फूल जिसे मुरझाने से बचाने के लिए अत्यंत सावधानी से थाम कर सूंघना चाहिए, उसका सारा कौशल और शक्ति शब्दों और उनकी पेचीदा दुनिया में, उसकी भौहों के झुकाव में, उसके आँसुओं की खामोशी में समाई हुई थी, उसने कभी सालकटंकटी की तरह मेरे शरीर पर आक्रमण नहीं किया, उसकी इच्छाओं और आशाओं को उसकी आँखों के बदलते प्रकाश में पढ़ना पड़ता था, अन्यथा पूरी तरह से समझ से परे हो जाता था, और मुझे बताया गया था कि यही एक आर्य पत्नी का आदर्श है! जब मैंने उससे पूछा कि उसने ऐसा क्यों नहीं किया अगर मैं सलाकटंकटी की तरह व्यवहार करता, तो वह अपना चेहरा बिगाड़ लेती, भौंहें चढ़ाकर कहती, "मैं उसकी मर्ज़ी नहीं मानूँगी!" ठीक है, लेकिन क्या मैंने उसकी इज़्ज़त और मर्यादा बचाने के लिए अपनी जान तक नहीं दे दी? जुए के खेल के बाद, जब दुस्साना ने उसकी साड़ी उतार दी, जब जयद्रथ उसे जंगल में ले जाना चाहता था, और जब किचक ने उस पर बुरी नज़र डाली—अगर सलाकटंकटी होती, तो वह दुस्साना की आँतें निकालकर उनकी माला बना देती, जयद्रथ का गला मरोड़कर पास के किसी पत्थर पर पटक देती, किचक के गुप्तांग निचोड़कर निकाल देती! लेकिन कृष्ण एक सच्ची

असहाय स्त्री हैं, एक सच्ची आर्य कन्या, फिर भी उनकी इच्छाओं का उल्लंघन करना असंभव था, और मुझे लगा कि मेरे पुरुषत्व का प्राथमिक उद्देश्य उनकी रक्षा करना, उनकी मर्यादा भंग करने वालों को दंडित करना और उनकी हर मांग को पूरा करना था। हालाँकि, सलाकटंकटी ने मुझसे कभी ऐसी कोई मांग नहीं की थी। अपनी मर्दानगी साबित करने के लिए, मुझे उन्हें पूरा करने का कोई अवसर नहीं मिला। अब मैं उसकी मदद लेने जा रहा हूँ..." भीमा को खुद पर शर्म आई और उसे लगा कि वह मिशन रद्द कर दे।

सूरज डूब चुका था और शाम हो चुकी थी। वे देख सकते थे कि जल्द ही पहाड़ी इलाका खत्म हो जाएगा और मैदानी ज़मीन शुरू हो जाएगी। नीला ने कहा, "बहुत जल्द मत्स्य देश खत्म हो जाएगा। थोड़ा आगे भोज देश होगा। आप जानते हैं कि वह यादवों की पूर्व भूमि, मथुरा देश है। हमें विश्राम करना चाहिए।" धीरे-धीरे अंधेरा छा रहा था। दूर एक छोटी पहाड़ी श्रृंखला दिखाई दे रही थी, और उसके अलावा बाकी सब समतल भूमि थी। नीला ने सुझाव दिया, "थोड़ी देर में चांदनी हो जाएगी। कुछ ही घंटों में हम पानी वाली जगह पर पहुँच जाएँगे। हम वहाँ रुकेंगे, भोजन करेंगे और फिर रात भर का सफर तय करेंगे।"

भीम को अब एहसास हो गया था कि वे इतनी दूर आ चुके हैं कि पीछे हटने का कोई सवाल ही नहीं उठता। वह मन ही मन सोचने लगा, "हम इतनी दूर आ गए हैं। अगर मैं अब वापस जाने का सुझाव दूं तो योद्धा क्या सोचेंगे? एक दिशा में आगे बढ़ने के बाद पीछे हटना ठीक नहीं है। यात्रा शुरू ही नहीं करनी चाहिए थी, लेकिन शुरू करने के बाद वापस लौटना भी ठीक नहीं है।" अचानक मुझे माँ की याद आ गई। इससे मेरा गुस्सा भड़क उठा। उसने ऐसा क्यों किया? उसी ने तो मुझे समझाया था कि सलाकटंकटी के प्रस्ताव को ठुकराना पाप है और फिर मेरी शादी उससे करवा दी; उसी ने मुझे सात-आठ महीने बाद जंगल छोड़कर किसी आर्य देश जाने के लिए भी उकसाया था; और बेचारी सलाकटंकटी ने माँ और हम चारों भाइयों को आराम से रखने के लिए कितनी मेहनत की! हमारे लिए उसने स्वादिष्ट पका हुआ मांस का इंतजाम किया, और अपने लोगों की परंपरा के विपरीत जाकर उसने जमीन पर झोपड़ियाँ भी बनवाईं, जिनके चारों ओर बाड़ लगी थी और रात में राक्षस उनकी अच्छी तरह से रखवाली करते थे। उसने हमें जड़, फल और कोंपलें नियमित रूप से उपलब्ध करवाईं, फिर भी माँ उस जगह को छोड़ने के लिए इतनी बेचैन थीं! मैंने खुद माँ को कहते सुना, 'भीम सलाकटंकटी के प्यार में बुरी तरह

फँस गया है और यहीं बसने को तैयार है। हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि वह सलाकटंकटी के बच्चे के जन्म के बाद ही यहाँ से जाने के लिए राजी हो।' यह कैसा प्यार हो सकता है? सलाकटंकटी तो इतनी फुर्तीली और तेज़, वह एक डाल से दूसरी डाल पर छलांग लगा सकती थी। लेकिन बाद में, जब उसका पेट फूल गया और बोझ बढ़ गया, तो उसे हमारी पेड़ की झोपड़ी पर चढ़ना मुश्किल लगने लगा, और शिकार के दौरान वह मेरे सहारे झुक जाती, दौड़ने में असमर्थ, साँस फूलती हुई, और यह देखकर मुझे बहुत दया आती थी। क्या इसे प्रेम कहा जा सकता है? इसी बीच, वह कितनी कोमल आवाज़ में मुझसे विनती करती, 'क्या तुम मुझे छोड़ना चाहते हो? तुम्हारी माँ ने मुझसे कहा है कि तुम्हारा यहाँ रहना संभव नहीं होगा। मुझे बताओ कि मैं क्या करूँ जिससे वह खुश हो जाए और यहाँ रुक जाए?' रात में, इस डर से कि मैं चुपके से निकल जाऊँगा, वह अपनी बाहों को मेरी बाहों में लपेट लेती, अपना भारी पेट एक तरफ टिका लेती। उसने कई बार इशारा किया कि मेरे दूसरे भाई अपनी पसंद की किसी भी राक्षसी कन्या से शादी कर सकते हैं; शुरू से ही, माँ को उससे कभी भी बिना शर्त प्यार नहीं था। अब मैं यह सब बेहतर ढंग से समझता हूँ। यह वही थी जिसने सुझाव दिया कि उसका नाम सालकटंकती से बदलकर एक आर्य पत्नी के लिए अधिक उपयुक्त नाम रखा जाए। इसलिए उसने उसका नाम कर्णपालिक रखा। और कितने उत्साह से। उसने नया नाम स्वीकार कर लिया! उसने इसे कम से कम दस बार मन ही मन दोहराया! उसने अपने सभी लोगों को केवल उसी नाम का प्रयोग करने का आदेश दिया! तब मुझे यह बात समझ में नहीं आई कि माँ ने उसका नाम कर्णपालिके, कमल की रक्षक, कमल की देखभाल करने वाली क्यों रखा - कर्णलमुखी, कमल के मुख वाली, और केवल कर्णपालिके ही क्यों नहीं? कर्णललोचने, कमल-आँखों वाली क्यों नहीं? भीम को उसका चेहरा, उसका रूप, उसकी सुंदरता, उसका भरा-पूरा शरीर, कमल के समान गोल चेहरा, गोरा रंग याद आया... माँ ने उसका नाम रखने में अन्याय किया, बल्कि छल किया; उसने नामकरण में भेदभाव और पक्षपात दिखाया। माँ चिंतित थी, 'यहाँ हमारा जीवन कितना भी सुरक्षित और निर्भय क्यों न हो, आर्यों का भोजन या वस्त्र नहीं मिलेंगे। अगर हम यहाँ और अधिक समय तक रहे तो हम राक्षसों से अलग नहीं रह जाएँगे।' और कर्णपालिके ने मुझसे रुकने की विनती की, 'कृपा करके हमें मत छोड़ो, चाहे तुम्हारी माँ और भाई कहीं भी चले जाएँ। संपूर्ण राक्षस जनजाति तुम्हें अपना राजा मानकर पूजती है।' और देखो वे तुम्हारे प्रति कितने

वफादार और आज्ञाकारी हैं। नहीं, सालकटंकति, यह नाम तुम्हें शोभा नहीं देता। जब माँ ने उसकी बातें सुनीं, तो वह क्रोधित हो उठी और चिल्लाई, "यह चुड़ैल मेरे बेटे को मुझसे और उसके भाइयों से अलग करने पर तुली हुई है। कुंती के साथ इस तरह की चालबाज़ी बर्दाश्त नहीं की जाएगी। चलो आज ही यहाँ से चलते हैं।" लेकिन अंततः बच्चे के जन्म के तीन महीने बाद तक रुकने का निर्णय लिया गया, एक पल भी बाद नहीं! पूरे एक महीने तक, बहू और सास मेरे लिए आँसू बहाने में एक-दूसरे से होड़ करती रहीं! मान लो उस समय मैं अड़ियल होता और माँ और चारों भाइयों को विदा करने के बाद यहीं रुकने पर अड़ा रहता?" भीम अतीत की यादों में डूबा हुआ था। इससे उसके मन को कुछ शांति मिली। अगर वह उस निर्णय पर अड़ा रहता, तो उसे अपनी पत्नी और पुत्र की सहायता के लिए गिड़गिड़ाना नहीं पड़ता, जिनसे वह वर्षों से नहीं मिला था। इस विचार से उसका मन हल्का हो गया।

तब तक अंधेरा चांदनी में बदल चुका था। घोड़ों के खुरों की आवाज़ बारिश जैसी थी। कमर तक ऊंची धूल उड़ रही थी। थोड़ी दूर पर कुत्ते भौंकने लगे। चार घुड़सवार सैनिक पास आकर रास्ता रोक दिया। उन्होंने पूछा, "तुम कौन हो? कहाँ जा रहे हो?" पूर्व योजना के अनुसार, नीला ने उत्तर दिया, "हम विराट राजा के लोग हैं। हम द्रुपद के दरबार से ब्राह्मणों को लाने जा रहे हैं, क्योंकि उनकी एक यज्ञ विधि के लिए आवश्यकता है।" संतुष्ट न होकर, अजनबियों ने पूछा, "इतने साधारण काम के लिए इतने सारे लोग क्यों?" नीला ने उत्तर दिया, "शाही शिष्टाचार।" इसके बाद कोई प्रश्न नहीं पूछा गया। नीला ने उनसे अगले उपलब्ध जल स्रोत के स्थान के बारे में जानकारी प्राप्त की।

तालाब पर पहुँचकर सबने अपने शरीर को धोया और ठंडा किया। उन्होंने सुहावनी चाँदनी में दोपहर के भोजन का बचा हुआ हिस्सा खाया और पानी पिया। फिर उन्होंने अपनी यात्रा फिर से शुरू की। पहले तो घोड़े सरपट दौड़े, लेकिन जल्द ही थककर धीमे हो गए। भोर होते-होते वे एक उपवन में पहुँचे, घोड़ों को पेड़ों से बाँध दिया और दो लोगों को उनकी रखवाली के लिए छोड़ दिया। बाकी लोग ज़मीन पर गद्दे की तरह बिछाई गई सूखी पत्तियों पर सो गए। वे दोपहर तक सोए, भोजन किया और फिर सो गए। शाम को यात्रा फिर से शुरू हुई। नीला ने उन्हें बताया था कि आधी रात तक वे पंचाल क्षेत्र में प्रवेश कर जाएँगे। भोजन के बाद, भीम लगभग दो घंटे की नींद से जागा। सूरज अभी भी चमक रहा था। उसने

अपने चिपचिपे शरीर को धोया, तभी नीला उठी और उसके पास आई। वह भीम से कुछ ही दूरी पर गद्दे पर बैठ गई। वह शांत और स्थिर थी।

भीमा, "क्या बात है, नीला?"

नीला ने कहा, "कुछ खास नहीं। बस शांति से आराम कर रही हूँ।"

भीमा, "मुझे यकीन है कि तुम चुप रहने वालों में से नहीं हो। खुलकर बताओ। तुम्हारे मन में क्या चल रहा है?"

नीला ने कहा, "महाराज, लोग कहते हैं कि आपने नंगे हाथों से एक राक्षस को मार डाला, जो प्रतिदिन एक गाड़ी भरकर भोजन खा जाता था, साथ ही गाड़ी खींचने वाले दो बैलों और एक वयस्क मनुष्य को भी मार डाला। कृपया मुझे बताइए कि आपने यह कैसे किया। मैं यह सीधे आपके मुंह से सुनना चाहती हूं।"

भीमा, "तुम्हें इसके बारे में किसने बताया?"

नीला, "हमारे कस्बे में यह घटना एक किंवदंती बन गई है, जहां हर कोई भीम नाम के एक पांडव की बात करता है। यह किंवदंती दो दशकों से अधिक समय से प्रचलित है। इसीलिए, जब लोगों को पता चला कि आप वही भीम हैं, तो वे श्रद्धापूर्वक आपके चारों ओर उमड़ पड़े। आज भी स्थानीय लोगों के लिए आप एक अलौकिक नायक हैं।"

भीम ने कहा, "हाँ, यह सच है कि प्रतिदिन एक गाड़ी भर भोजन, उसे खींचने वाले बैलों या भैंसों की जोड़ी और एक वयस्क मनुष्य को खा लिया जाता था। केवल राक्षसों द्वारा ही नहीं, बल्कि उनके पूरे परिवार और उनके अनुयायियों द्वारा। हाँ, यह सच है कि मैंने उनके नेता को सीधे मुक्केबाजी में मार डाला और उसके अनुयायियों को उस स्थान से भगा दिया।"

नीला, "यह घटना किस शहर में घटी? क्या वहां कोई राजा और सेना नहीं थी जो ऐसे आदमखोरों का सामना कर सके, उन्हें मार सके या उन्हें भगा सके?"

भीम ने कहा, "क्या सभी शासक सचमुच शक्तिशाली होते हैं? या शक्तिशाली ही हमेशा शासक बनते हैं? क्या आपको लगता है कि आपका राजा विराट शक्तिशाली है? क्या विराट के बहनोई किचक नाम के एक दुष्ट व्यक्ति का मैंने वध नहीं किया था? खैर, वहाँ भी एक दुष्ट व्यक्ति घूमता था।"

नीला, "वह कौन सा शहर था?"

भीमा ने कहा, "उस जगह को एकाचक्रनगर कहते थे। हिडिम्बा के वन क्षेत्र में एक वर्ष बिताने के बाद, हम दक्षिण की ओर बढ़े। वह कुरुभूमि से परे था। हमें

अभी भी दुर्योधन के भाड़े के हत्यारों का डर सता रहा था। हमें समझ नहीं आ रहा था कि आगे क्या करें। चार दिन और दक्षिण की ओर बढ़ने के बाद, हमारी मुलाकात ऋषि कृष्ण द्वैपायन से हुई। क्या आपने कभी यह नाम सुना है?"

नीला ने कहा, "हाँ, मैंने उन्हें देखा है। पंद्रह साल पहले जब वे हमारे राज्य में आए थे। ऐसा लगता है कि वेदों में उनकी जितनी महारत किसी और को नहीं है। पूरे शहर ने उनके चरणों में प्रणाम किया था।"

भीमा ने कहा, "हमने अपना परिचय उन्हें दिया। एक तरह से वे हमारे दादाजी हैं। देखिए, जब हमारे दादाजी निःसंतान मर गए, तो उन्होंने हमारी रानियों पर नियोग किया जिससे हमारे पिता और दुर्योधन के पिता का जन्म हुआ। इसलिए उनके मन में हमारे लिए पोते-पोतियों का प्रेम था। उन्होंने हमें पास के एकाचक्र नगर में जाकर रहने और ब्राह्मणों के वेश में भिक्षा मांगने की सलाह दी। उन्होंने हमसे कहा कि जब वे कुरुलोक में होंगे, तब हम लगभग आठ महीने तक ऐसा करें। इस बीच, उन्होंने वादा किया कि वे विदुर से परामर्श करके हमें आगे की योजना के बारे में बताएंगे। इस तरह हम उस नगर में गए। हम वहां एक ब्राह्मण के घर गए। उस परिवार ने पहले बेहतर दिन देखे थे, लेकिन जब हम उनसे मिले तो वे घोर गरीबी में थे। हमारी माता ने ब्राह्मण से हमें आश्रय देने का अनुरोध किया।"

उन्होंने हमें अपने घर के पिछले हिस्से में रहने की अनुमति दे दी। हम वहीं रहने लगे। हम पाँचों अलग-अलग गलियों में वैदिक ग्रंथों और मंत्रों का पाठ करते और भिक्षा मांगते थे। क्या आप इसकी अपमानता को समझते हैं? आप क्षत्रिय हैं, है ना?

नीला, "बिल्कुल, मैं हूँ, हाँ।"

भीमा ने कहा, "जब मैं भीख मांगने जाता था, तो वे हमें ताना मारते हुए कहते थे, 'देखो, तुम तो किसी पेशेवर पहलवान जैसे दिखते हो। अगर तुम्हें काट दिया जाए, तो तुम्हारे चार टुकड़े निकलेंगे जो चार आदमियों के बराबर होंगे। क्या तुम्हें भीख मांगने में शर्म नहीं आती?' मैं अक्सर उनका निशाना बनता था। मुझे बहुत गुस्सा आता था और मैं सोचता था कि जंगल में रहना ही मेरे लिए बेहतर था। वह बेहतर किस्मत थी।"

नीला, "तो फिर तुमने जंगल क्यों छोड़ा?"

भीमा ने कहा, "हमारी माँ ने हमें वहाँ से जल्दी निकलने के लिए कहा। उन्हें डर था कि अगर हम जंगल में ही रहे तो हम भी राक्षस बन जाएँगे और जंगली जानवरों के साथ कच्चा मांस खाकर गुज़ारा करेंगे। वैसे भी, मैं भीख माँगकर जीना नहीं

चाहता था, खासकर अपने भारी-भरकम शरीर के साथ! मैंने लगभग भीख माँगना छोड़ ही दिया था। बाकी लोग भीख माँगकर ज़्यादा बेहतर गुज़ारा कर रहे थे क्योंकि उनका रूप-रंग ज़्यादा उपयुक्त था। उनके द्वारा इकट्ठा किए गए भोजन का लगभग आधा हिस्सा मैं ही खा जाता था। मैं अपना सारा समय घर के एक कोने में कसरत करने में बिताता था।"

नीला, "अगर शरीर का व्यायाम न किया जाए तो उसमें दर्द होने लगता है, क्या यह सच नहीं है?"

भीम ने कहा, 'अगर कोई शरीर का व्यायाम नहीं करता, तो यह इस बात का संकेत है कि वह पहलवान नहीं है। ब्राह्मण परिवार के लोग मुझसे पूछते थे कि क्या मैं पहलवान हूँ, क्योंकि मैं देखने और व्यवहार में पहलवान जैसा लगता था। माँ ने हँसते हुए उनकी जिज्ञासा शांत कर दी और कहा कि मैंने बस थोड़ा सा शरीर विकसित किया है! अगर उन्होंने सच में कह दिया होता कि मैं पहलवान हूँ, तो यह बात फैल जाती, खासकर पड़ोसियों के बीच। हम पाँच भाई थे और हमारी माँ विधवा थीं, इससे हमारी पहचान आसानी से उजागर हो जाती और दुर्योधन के गुप्त एजेंट सही अनुमान लगाकर उसे सूचना दे देते। सौभाग्य से कोई हमारी पहचान नहीं जान पाया। शुरू में हम भीख माँगकर पर्याप्त भोजन प्राप्त कर लेते थे। लेकिन चूंकि हमें हर रोज सुबह-सुबह उन्हीं घरों में जाना पड़ता था, तो भला हम उतनी ही उदारता की उम्मीद कैसे कर सकते थे? एक थैली भर भोजन से घटकर तीन-चौथाई रह गया। फिर आधा। बाद में और भी कम। यहाँ तक कि धर्म, अर्जुन, नकुल और सहदेव भी परेशान हो गए और भीख माँगने के लिए जाने से मना कर दिया। फिर भी हमारे पास पेट भरने का कोई और तरीका नहीं था।' नहीं, हम शहर छोड़कर नहीं जा सकते थे क्योंकि हम महान ऋषि कृष्णद्वैपायन के आने का इंतज़ार कर रहे थे। हम सबके लिए वे दिन लगभग भुखमरी भरे थे। मेरी हालत तो और भी बदतर थी, लगभग पूरी तरह भुखमरी! कभी-कभी वे पास के कस्बों में भीख मांगने जाते थे। लेकिन आस-पास कोई बड़ा गाँव या कस्बा नहीं था। हमने सोचा कि हम तीन लोग किसी दूसरे कस्बे में जाकर और भी अनाज लाएँ और उसे एकाचक्र कस्बे में बचे दो लोगों को भेजें। माँ ने मना कर दिया। उन्होंने ज़िद की कि उनके पाँचों बच्चे साथ रहें। ऐसी स्थिति में हम क्या कर सकते थे? क्योंकि वह एक घनी आबादी वाला और बड़ा कस्बा था, हम चाहे कितनी भी दूर चले जाते, हमें

शिकार के लिए एक खरगोश भी नहीं मिलता था। खैर, वह हमारा सबसे बुरा समय था।

नीला ने कोई टिप्पणी नहीं की। उसने बस "हाँ" कहा। उसे समझ नहीं आ रहा था कि पांडव और क्या कर सकते थे। भीम ने आगे कहा, "हम रोज़ अपनी बदकिस्मती को कोसते थे। दुर्योधन को कोसते और आहें भरते थे। गीले कपड़े से पेट ढककर सोते थे। इसके अलावा हमारे पास करने को कुछ नहीं था। लेकिन इस समय तक हमें एक दिलचस्प जानकारी मिल चुकी थी। हमें पता चला कि एकाचक्र का शासक वेत्रकिगृह नामक नगर में रहता था और वह इन सभी लोगों पर शासन करता था। कहा जाता था कि वह बिल्कुल डरपोक था। ऐसा नहीं था कि उसके पास सेना या अन्य दल नहीं थे। उसके पास सब कुछ था। लेकिन अगर राजा में साहस ही न हो तो सेना का क्या फायदा? उसका पिता एक शक्तिशाली शासक था। वहाँ उत्तराधिकार सबसे बड़े पुत्र के माध्यम से होता था, और इसी तरह उस नीच कायर को राजा का ताज पहनाया गया। एक राजा का पुत्र अपने आप ही गुणों और योग्यताओं में राजा कैसे बन सकता है? एक आम आदमी में राजा बनने के गुण क्यों नहीं हो सकते? स्वाभाविक रूप से वहाँ सब कुछ वैसा ही हुआ जैसा एक डरपोक राजा के शासन में होना चाहिए। लगभग आठ मील दूर, यमुना नदी के किनारे, एक राक्षस ने अपने अनुयायियों के साथ अपना डेरा जमा लिया था। उन्होंने आक्रमण कर दिया..." वे जिस भी कस्बे में जाना चाहते थे, वहाँ घुस जाते और बेतरतीब ढंग से मनुष्यों को मार कर खा जाते। वे मवेशी, धन और अनाज लूट ले जाते। उन्होंने पूरे क्षेत्र में आतंक फैला रखा था। तब जनता राजा के पास गई और मदद की गुहार लगाई। राजा ने अपनी सेना के साथ राक्षसों का सामना करने का प्रयास किया। लेकिन राक्षस गरजते हुए उन पर टूट पड़े, जिससे राजा बुरी तरह डर गया। भय से उसका शरीर काँप उठा और उसने अपने अंगरक्षकों को गले लगा लिया। उसके सैनिक भय से स्तब्ध खड़े रह गए। इस स्थिति में राजा और उस राक्षस, जिसे बकासुर कहा जाता था, के बीच एक समझौता हुआ।

इस समझौते की शर्तों के अनुसार, राजा को प्रत्येक दोपहर बकासुर को स्वादिष्ट भोजन से भरी एक गाड़ी, उसे खींचने के लिए बैलों या भैंसों की एक जोड़ी और एक वयस्क व्यक्ति भेजना अनिवार्य था। बदले में, बकासुर को लोगों को लूटने और आतंकित करने से बचना था, और राज्य को बाहरी आक्रमणों से बचाना था। क्या अब आपको इस समझौते का महत्व समझ में आया?

नीला, "तो फिर बात क्या है?"

भीम ने कहा, "मूर्ख शासक को अपने राज्य की रक्षा करने के दायित्व से मुक्त कर दिया गया था, और वह राक्षसों से अपनी प्रजा की रक्षा करने के कर्तव्य से भी बच गया था। लेकिन उन राक्षसों की सहायता से वह अपने सिंहासन का आनंद ले रहा था। प्रतिदिन नगर के प्रत्येक परिवार को बारी-बारी से राक्षसों को भोजन कराना पड़ता था। खैर, जब कोई निकम्मा व्यक्ति सिंहासन पर बैठता है, तो वह स्वाभाविक रूप से एक-दूसरे के विरुद्ध शक्तियों का प्रयोग करके, अपनी सुरक्षा को बरकरार रखने के लिए छल-कपट करके अपना पद बनाए रखेगा। इस बीच, प्रजा अपने कर और अन्य शुल्क अदा करती रहेगी। जैसा कि मैंने कहा है, प्रत्येक नगर को बारी-बारी से एक मनुष्य की आपूर्ति करनी थी। एक दिन हमारे नगर की बारी आई। इसकी सूचना एक राज दूत ने दी। नगर में प्रवेश करते ही, सबसे पहला घर हमारे ब्राह्मण मेज़बान का निकला। इसका अर्थ था कि अगले दिन के भोजन की व्यवस्था करना उसका दायित्व था - एक गाड़ी भर भोजन, दो बैल और एक मनुष्य। वह बेचारा ब्राह्मण इतने कम समय में आवश्यक वस्तुएँ कैसे जुटा सकता था? यदि वह अपनी संपत्ति बेचकर या उधार लेकर भी व्यवस्था कर लेता, तो उसे मनुष्य कहाँ से मिलता?" परिवार में से बलिदान के लिए व्यक्ति का चुनाव कैसे किया जाए? धनी लोग बेशक धन खर्च करके 4 गरीब और जरूरतमंद लोगों को बलिदान के लिए नियुक्त कर सकते हैं। लेकिन ऐसे धनी परिवार कितने हो सकते हैं? पिछले दिन, शाही दूत ने हमारे मेज़बान को सूचित किया कि अगले दिन दोपहर को राक्षसों को भोजन कराने की उनकी बारी है। उनके परिवार में वे स्वयं, उनकी पत्नी, एक विवाह योग्य पुत्री और एक किशोर पुत्र थे। परिवार के एक सदस्य को खोने की आशंका से वे सभी ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे। असहाय पति ने पत्नी को दोषी ठहराया। पत्नी ने पति को दोषी ठहराया। दोनों बच्चों ने माता-पिता को गले लगाया। पति-पत्नी ने एक-दूसरे का हाथ पकड़ा। वे सब एक साथ रोए। पति ने कहा कि वह अगले दिन बैलगाड़ी लेकर जाएगा। क्या यह उचित नहीं था कि वह जाए? लेकिन पत्नी ने विरोध किया, 'नहीं, क्या आप जानते हैं कि आपके जाने का क्या परिणाम होगा? मैं विधवा हो जाऊंगी और कोई मेरी इज्जत नहीं करेगा।'

बदमाश इस शादी के लायक लड़की को अगवा कर लेंगे। राजा में ऐसे बदमाशों को सज़ा देने की हिम्मत नहीं है। इसलिए मुझे जाने दो। तुम यहीं रुककर बच्चों का ख्याल रखना।' लड़की ने फुसफुसाते हुए बचने का रास्ता बताया। उसने सुझाव

दिया, 'चलो हम चारों आज आधी रात को यहाँ से भागकर इस राज्य की सीमा पार कर लेते हैं।' पिता ने बताया कि उसी शाम से जासूस उनके घर पर नज़र रखेंगे। उन्होंने उन्हें याद दिलाया कि यह वही योजना थी जिसे उन्होंने चार साल पहले उन्हें अमल में लाने के लिए कहा था, और अब बहुत देर हो चुकी थी। उन्हें याद आया कि उनकी पत्नी ने इस विचार को बेकार बताकर खारिज कर दिया था और यहीं रहने का फैसला किया था। अब वे सभी पत्नी के पहले के फैसले पर पछता रहे थे। उन्हें कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था। वे फिर से एक साथ रोने लगे। जब यह सारी चर्चा हो रही थी, मैं घर के एक कमरे में सो रहा था। बाकी चारों भाई बाहर गए हुए थे। मुझे नहीं पता था कि परिवार इस तरह क्यों रो रहा था। उनकी बातें सुनकर माँ उनके पास गईं और सारी जानकारी ली। फिर वह उदास बैठी रहीं, समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें। फिर उन्होंने मुझे जगाया और सब कुछ बताया। उन्होंने कहा, "बेटा, इन्होंने हमें पूरे एक साल तक आश्रय दिया है। स्वयं गरीब होते हुए भी इन्होंने हमें भुखमरी से बचाया है। अब, क्या हमें इस अवसर का लाभ उठाकर इनका एहसान नहीं चुकाना चाहिए?" मैंने उनसे पूछा, "माँ, बताइए हमें क्या करना चाहिए?" उन्होंने उत्तर दिया, "मैं उनसे कहूँगी कि तुम गाड़ी के साथ जाओगे। बाद में तुम्हारे सभी भाई उस राक्षस और उसके सगे-संबंधियों को खत्म करने का कोई उपाय सोच लेंगे। इस तरह हम न केवल अपना एहसान चुकाएँगे बल्कि एक क्रूर दरिंदे और उसके अनुयायियों को मारने का पुण्य भी अर्जित करेंगे। देखो, मैं पूरे राक्षस समुदाय से घृणा करती हूँ, भले ही तुम उस राक्षस स्त्री, कर्णलपालीके, के प्रति आकर्षित हो। ये गैर-आर्यी जो कच्चा मांस खाते हैं, मानव मांस खाने से भी नहीं हिचकिचाएँगे।" बेशक, मुझे सालकटंकटी के अपमान से गुस्सा आया, लेकिन राक्षस को मारने के विचार से मैं रोमांचित हो गई। मैं उस राक्षस के बारे में कुछ जानती थी। मैंने अपने मेज़बान से इसके बारे में विस्तार से पूछा। ऐसा प्रतीत होता है कि वह राक्षस अपने लोगों के साथ यमुना नदी के किनारे कस्बे से लगभग आठ मील दूर एक गुफा में रहता था। उसके साथ केवल उसकी पत्नी और बच्चे ही थे। इन दिनों वह पके हुए चावल और अन्य स्वादिष्ट भोजन का आदी हो चुका था। कच्चे पशु और मानव मांस से उसे विविधता मिलती थी। उसके अन्य राक्षस साथी हर समय उसके साथ नहीं रहते थे। वे कई जंगलों में बिखरे हुए थे। उनके रिश्तेदार कुरुभूमि के जंगलों तक और पूर्व में मगध के जंगलों तक फैले हुए थे। जब कबीले के कई लोग मिलने आते थे, तो बैलगाड़ी के साथ चलने वाले मवेशियों को अक्सर

भोजन के लिए मार दिया जाता था। मनुष्य और बैलगाड़ी में लदे चावल अगले दिन दोपहर तक खत्म हो जाते थे। ये विवरण मेरे लिए स्थिति का एक चित्र बनाने के लिए पर्याप्त थे। विवरण मिलने के बाद मेरे चार भाई कमरे में मेरे साथ आ गए। हम छह, पाँच भाई और माँ, स्थिति से निपटने की योजना बनाने लगे। हमने खुद से पूछा, क्या राक्षस बकासुर को मारना संभव था? हाँ, यह निश्चित रूप से संभव था। मैंने किसी भी लंबी चर्चा की अनुमति नहीं दी। लेकिन एक सवाल यह भी था कि क्या उस राक्षस को मारना हमारी पांडव पहचान को उजागर करना नहीं होगा? धर्म ने हमें भरोसा दिलाया कि हम इस मुश्किल को पार कर लेंगे। हमने चर्चा रोक दी और अगले दिन काम शुरू करने का फैसला किया। हमने चावल और अन्य सामान से लदी गाड़ी अपने साथ ले जाने की योजना बनाई। जब माता ने हमारे मेज़बान को बताया कि उन्होंने अपने दूसरे बेटे को गाड़ी के साथ भेजने का फैसला किया है, तो उसने प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। उसे लगा कि हमारी योजना में शामिल होकर वह पाप करेगा, लेकिन माता ने आखिरकार उसे मना लिया। भला भला ऐसी योजना को कौन मना करेगा जो जान बचाए? उन्होंने उनसे आवश्यक अनाज और अन्य सामग्री जुटाने को कहा। उन्होंने अपनी सारी संपत्ति, जो कि बहुत कम थी, बेच दी और चावल, घी, तेल, गुड़ और गेहूँ खरीदा। मैं उस समय लगभग हमेशा भूखा रहता था, लेकिन उस दिन मेरा पेट भर गया। उस रात मैंने एक और शानदार भोजन किया। इससे मुझे कुछ ताकत मिली। बाकी लोगों ने भी खाना खाया।

नीला का चेहरा विजय की चमक से दमक उठा। उसने देखा कि कहानी का अगला भाग राक्षस से युद्ध होगा। वह कहानी के रोमांचक भाग को सुनने की उत्सुकता से उछल पड़ा। उसका आगे बढ़ना इसलिए भी था क्योंकि पहले वाली जगह पर सूरज की तेज धूप पड़ रही थी, जिससे वह बचना चाहता था।

भीम ने आगे कहा, "सोने से पहले हमने स्थिति का ध्यानपूर्वक जायजा लिया। हमने तय किया कि हम पाँचों को जाना चाहिए। मुझे निहत्थे हाथों से लड़ाई शुरू करनी थी। धर्म ने कहा कि बाकी लोग धनुष-बाण से मेरा साथ देंगे। जब से हमने भीख मांगना शुरू किया था, अर्जुन का धनुष से संपर्क टूट गया था। अगली सुबह उसने थोड़ा-बहुत तीरंदाजी का अभ्यास किया। नकुल और सहदेव ने भी ऐसा ही किया। लेकिन मेरी सोच बिल्कुल अलग थी। वह मेरा लक्ष्य था, और उसे मारने के लिए मुझे किसी और की मदद की ज़रूरत नहीं थी। चूंकि मैंने राक्षसों के बीच एक

साल बिताया था, इसलिए मुझे उनकी तकनीकों और स्वभाव का कुछ अंदाजा था। वे जंगली जानवरों की तरह बेपरवाह होकर एक साथ टूट पड़ते हैं। लेकिन उनमें से एक को मार दो, जानवर भाग जाते हैं। राक्षस नेता को मार दो, फिर बाकी सब भाग जाएंगे। उनमें रणनीति और युद्धनीति, युद्ध में समय और स्थान के समन्वय के बारे में सोचने की क्षमता नहीं होती। उनकी शैली शारीरिक बल से हावी होने की है, दूरदर्शिता और योजना की नहीं। अगर कोई उनकी शुरुआती ताकत से न हारे, तो वह बच जाएगा।" शांत और समझदारी से योजना बनाकर, राक्षसों की सेना को हराना कोई मुश्किल नहीं था। बाका इतने लंबे समय से बिना किसी विरोध के भोजन और अन्य सामान का भरपूर आनंद ले रहा था, इसलिए उसे अकेले ही इन्हें प्राप्त करने की आदत हो गई थी। इसके अलावा, मुझमें लड़ने की तीव्र इच्छा जाग उठी थी। बाकी चारों मेरी नज़र में आ गए। माँ ने उन चारों को धनुष-बाण लेकर उस स्थान के चारों ओर तैनात होने का आदेश दिया। मैंने इसका विरोध नहीं किया। फिर मैं सो गया। मेरा सपना बाका के साथ होने वाली आगामी लड़ाई के बारे में था।

यह पहली बार था जब कस्बे को राक्षसों को भोजन कराने के लिए कहा गया था। और तो और, मैं, एक विदेशी, एक कस्बेवासी की जान बचाने के लिए खुद को कुर्बान करने को तैयार था। पूरा कस्बा मेरी यात्रा देखने के लिए इकट्ठा हो गया था। बिलकुल निर्लज्ज लोग! अगर वहाँ जमा हुए लोगों में से आधे भी साहस और हिम्मत दिखाते, तो वे बाका पर टूट पड़ते, उसे मार डालते और फिर शासक को भी मारकर उसकी जगह किसी अधिक सक्षम शासक को बिठा देते। बैल भारी गाड़ी को धीरे-धीरे खींच रहे थे। उन्हें मेरा भार भी संभालना था। पूरी यात्रा के दौरान मैं कुछ न कुछ खाता रहा। मैंने जानबूझकर गाड़ी को सड़क पर रोककर गति धीमी कर दी। मेरा मकसद भोजन पहुँचाने में देरी करके बाका को क्रोधित करना था। मैं पेड़ से तोड़ी गई एक शाखा से उस पर हमला करने के लिए तैयार था। जैसे ही मैं वहाँ पहुँचा, बाका दहाड़ते हुए बोला कि देरी क्यों हो रही है। मैंने उसे उकसाते हुए कहा, 'ताकि तेरा बाप पूछे क्यों!' 'कौन मूर्ख है जो मुझसे बहस करने की हिम्मत करता है,' वह चिल्लाया और मुझ पर झपटा। वह अकेला था। दो साल पहले हिदिम्बा के साथ हुई मेरी पिछली लड़ाई और यह लड़ाई अलग थी। तब मैं नौसिखिया था, लेकिन अब मैं राक्षस शैली की युद्ध कला की कमजोरियों को भली-भांति जानता था। साथ ही, अब मैं वहाँ सिर्फ अपना कौशल दिखाने नहीं आया था।

मैंने शुरू से ही उसे जान से मारने की योजना बना रखी थी। मुझे पुरुषों को मारने का अनुभव था। क्रोधित जंगली जानवर सिर्फ अपने लक्ष्य पर झपटना जानता है, लेकिन उसमें दुश्मन के वार से बचने की बुद्धि और कौशल की कमी होती है। इसी तरह बाका मेरी ओर झपटा। मैं एक तरफ हट गया और उसकी कमजोर जगह पर शाखा से वार किया। वह हिल गया, और मैंने उसे संभलने का मौका नहीं दिया। मैंने उसे फिर से मारा, और इस तरह वह खत्म हो गया। मैंने कुछ देर अपनी अगली चाल के बारे में सोचा। इसी बीच उसकी चीखें सुनकर गुफा के अंदर मौजूद औरतें और बच्चे दौड़कर वहाँ आ गए। मैंने उसके शव को अपने कंधे पर लादा और उनकी ओर दौड़ा। डरकर वे गुफा में वापस भाग गए। मैं उनके पीछे भागा, और शव को गुफा के दरवाजे के पास फेंक दिया। फिर मैंने राक्षस भाषा में चिल्लाकर उनसे कहा, "अपने लोगों से कह दो कि अगर किसी राक्षस ने यहाँ आने की हिम्मत की, तो मैं उसे कुचल दूँगा।" मुझे उम्मीद थी कि ये औरतें मुझ पर हमला करेंगी। पता नहीं उन्होंने ऐसा क्यों नहीं किया। शायद सालों के आराम के बाद वे हमारी औरतों की तरह नरम पड़ गई थीं। शायद बकासुर शुद्ध राक्षस नहीं था। या शायद उनके घर के मुखिया की मृत्यु ने उन्हें डरा दिया था। जब मैं गाड़ी के पास लौटा, तो देखा कि बैल डर के मारे गाड़ी को पलट चुके थे। गर्दन में बंधी रस्सी को सहन न कर पाने के कारण वे बहुत मुश्किल से साँस ले रहे थे। चावल धूल में मिल गया था। फिर मैंने गाड़ी को सीधा किया और वापस शहर चला गया। मेरे भाई एक पेड़ के पीछे अंधेरा होने तक इंतजार करते रहे और फिर घर लौट आए। उस दिन से किसी भी राक्षस ने उस राज्य में कदम रखने की हिम्मत नहीं की। अगले दिन मैंने गुफा का निरीक्षण किया और उसे पूरी तरह से वीरान पाया। अब वहाँ केवल सूखी हड्डियाँ और मांस के टुकड़े ही बचे थे। वे सब भाग गए थे।

नीला, कुछ निराश होकर बोली, "बस इतना ही? और कोई जानकारी नहीं?"

भीमा ने कहा, "मैंने तुमसे कहा था ना कि लड़ाई एक मिनट में खत्म हो जाएगी।"

गर्मी की तपिश ने हवा में हर आवाज़ को शांत कर दिया था। पेड़ों के नीचे सो रहे लोगों के शरीर से पसीना टपक रहा था। सूरज की तेज़ धूप आँखों में पड़ते ही, कुछ लोगों को छायादार जगहों पर जाना ज़रूरी लगा। बस एक अकेले कौवे की कांव-कांव के अलावा, दुनिया मानो थम सी गई थी। एकदम सन्नाटा पसरा हुआ था।

कुछ देर बाद नीला ने पूछा, "क्या लोगों ने राक्षस का बहादुरी से वध करने वाले के रूप में आपका सम्मान नहीं किया? वे आपसे डरते होंगे।"

भीमा ने कहा, "बेशक, वे मुझसे इतने डरे हुए थे कि वे मुझसे दूर, पूरी सड़क पर खड़े रहे।"

नीला ने कहा, "खबर मिलने के बाद शासक भी जरूर डर गया होगा!"

भीमा, "हो सकता है।"

नीला, "तुम उस शासक को मारकर उस राज्य की गद्दी पर बैठ सकती थी। लोग तुम्हारा हर्षोल्लास से स्वागत करते।"

भीमा, "तुमने क्या कहा?!"

नीला, "मैंने कहा, उसे मारने के बाद... तो तुमने ऐसा क्यों नहीं किया?"

भीमा ने वही सवाल अपने मन में दोहराया, पर उसे कोई जवाब नहीं सूझा। उसने याद करने की कोशिश की कि क्या हुआ था। अब उसे लगा कि शायद वह ऐसा कर सकता था। हारा हुआ और उदास महसूस करते हुए वह चुपचाप बैठ गया। उसका दिमाग बिल्कुल खाली था, कोई विचार नहीं था। उसे पसीने की चिपचिपाहट महसूस हो रही थी। फिर वह तालाब की ओर चला। उसने नीला द्वारा लाया गया पानी लिया और गर्दन, सिर, चेहरे, पीठ, बांहों और भारी बगलों से पसीना धोया। इस दौरान नीला ने एक-एक करके सभी सोए हुए लोगों को जगाया। उन्होंने घोड़ों को जी भरकर पानी पिलाया और अच्छी तरह से धोने के बाद घोड़ों पर सवार हो गए।

—•✳•—

अध्याय 14

यात्रा फिर से शुरू हुई। हमेशा की तरह नीला सबसे आगे थी। भीम ने याद करते हुए कहा, "हम आसानी से वेत्रकिगृह के शासक बन सकते थे। जनता यही चाहती थी। शायद शासक भी डर के मारे हमारे सामने आत्मसमर्पण कर देता! हम दुर्योधन और उसकी चालों से बच जाते। लेकिन तब हमें यह ख्याल ही नहीं आया।" दोनों ओर ऊंचे पेड़ों के घने झुरमुट थे। बीच में ठंडी पगडंडी थी। बहुत सुकून देने वाली। शायद वे किसी कस्बे के पास थे। भीम अतीत में लौट गया, "लेकिन वास्तव में तब क्या हुआ था? हमारे आस-पास के लोगों ने माँ से पूछा कि मुझे ऐसी शक्ति कहाँ से मिली। उन्होंने बताया कि यह एक प्रकार का दैवीय वरदान है। उन्होंने गर्व से कहा कि मेरी शक्ति देवताओं के सेनापति से प्राप्त हुई है। उन्होंने उन्हें गर्व से समझाया कि ऐसी शक्ति साधारण और मानवीय नहीं हो सकती। मुझे भी गर्व महसूस हुआ। मैंने माँ को अपने कंधे पर उठाया, हिडिम्बा का वध किया, और अब बका को मार डाला, और बाद में कई औरों का नाश किया! हाँ, जरासंध, एक बूढ़ा योद्धा, और उसे मारना कोई बड़ी उपलब्धि नहीं थी। फिर पूर्व के सभी शासक, मुझसे डरकर, एक के बाद एक मुझे भेंट देने लगे। मैंने द्रौपदी को चुराने आए सैंधव को पकड़ा और उसका सिर मुंडवा दिया। मैंने किचक के मांस का चूर-चूर कर दिया। आर्यावर्त को अभी इस भीम की पूरी शक्तियों का एहसास होना बाकी है। यदि यह भीम दुर्योधन और उसके जैसे लोगों के मांस और हड्डियों का चूर-चूर नहीं करता है, तो यह उस भगवान पर कलंक होगा जिसने उसे जन्म दिया है। माँ को फिर से एहसास हो जाए कि यह भीम वह नहीं है जो जो उस बीज को कलंकित कर सकता है जिससे वह अंकुरित हुआ है। जब मैं बका की गुफा की ओर बैलगाड़ी चला रहा था, तभी पांचाल के राजा के दूतों ने द्रुपद की पुत्री के स्वयंवर की घोषणा की। उससे विवाह करने की शर्त कठिन थी - यह घोषणा की गई थी कि राजकुमारी का विवाह उस व्यक्ति से होगा जो खड़े व्यक्ति के बराबर ऊँचाई वाले विशाल, तांबे से बने धनुष को उठाकर बाण चला सके। जब तक मैं बका से युद्ध करके लौटा, तब तक माँ ने अपना निर्णय ले लिया था। उस रात, उन्होंने हम सब से फुसफुसाते हुए कहा, 'चलो हम सब द्रुपद के दरबार में चलते हैं। तुम लोग धनुष चलाना भूल गए हो। अब जमकर अभ्यास शुरू करो। अर्जुन, तुम्हें और भी अधिक लगन से अभ्यास करना चाहिए। पांचाल और कुरु वंश परंपरा से एक-दूसरे के शत्रु रहे हैं। यदि हम उनसे वैवाहिक संबंध स्थापित कर लेते हैं, तो यह उनकी सेना को जीतने के बराबर है। हमें दुर्योधन से डरने की आवश्यकता नहीं है। वे हमें धोखा

देने में कभी सफल नहीं हो सकते।' माँ का दिमाग बहुत तेज था। खैर, इससे मुझे याद आया। उन्हें देखे हुए अब साढ़े तेरह साल हो गए हैं। वे जंगल में वनवास सहन नहीं कर सकीं—धूप, बारिश, सर्दी, बेचैन भटकना और बार-बार भूख से मरना। फिर भी उन्होंने अपने ससुराल में पोते-पोतियों के साथ रहने से इनकार कर दिया। उन्होंने द्वारका जाने से भी मना कर दिया। उन्होंने कहा कि वे हस्तिनावती में ही रहेंगी और कोई भी उनकी सत्ता और पद को छीन नहीं सकता। शुरू से ही उनकी प्रबल इच्छा थी कि हम हस्तिनावती पर शासन करें। खैर, हम खांडवप्रस्थ गए और उसे इंद्रप्रस्थ में बदल दिया, राजसूय विधि अपनाई और हस्तिनावती की महिमा को भी फीका कर दिया। फिर भी, एक दिन उन्होंने मुझे सलाह दी, 'बेटा, आखिरकार यह जगह मूल रूप से हमारी नहीं थी, चाहे तुमने इसे कितना भी शानदार बना दिया हो। वास्तव में हस्तिनावती तुम्हारे हिस्से में आनी चाहिए थी। उस धूर्त अंधे ने अपनी चालाकी से तुम्हें एक बार फिर यहाँ से निर्वासित कर दिया। वे बुद्धिमान बूढ़े हमारे लिए बिल्कुल बेकार साबित हुए।' मैं उनके बिना साढ़े तेरह साल कैसे गुजारा? अब वे कैसी हैं? चाचा के दूत का वर्णन उनके प्रत्यक्ष दर्शन के बराबर नहीं हो सकता। वह कहते हैं कि उनके बाल कंघी किए हुए रुई जैसे सफेद और कम हो गए हैं। चेहरा पहले से कम चौड़ा है। उनकी कमर झुकी हुई है, मेरी माँ की कमर। हमारी माँ की कमर इतनी झुकी हुई क्यों है? अब उनकी उम्र कितनी होगी? भीम ने गणना की, लेकिन पूरी तरह सफल नहीं हो पाया। फिर उसने सोचा, वह वैसे भी अस्सी साल से अधिक की हैं। उनकी कमर झुकी हुई क्यों है? अगर मैं उनके साथ होता, तो मैं रोज़ गर्म पानी से धोने के बाद तेल से उनकी पीठ की मालिश करता। अब वनवास और गुप्तवास का समय समाप्त हो गया है।

जब हमने उन्हें अपने पोते अभिमन्यु के विवाह में आने का संदेश भेजा, तो उन्होंने यह कहते हुए आने से इनकार कर दिया, "मैं किसी के घर यूँ ही कैसे जा सकती हूँ, सिर्फ़ इसलिए कि आप चाहते हैं? मुझे तब बुलाइए जब आप अपना राज्य कमा लें।" खैर, धर्म तो डरपोक है। माँ की तरह नहीं, जो उससे कहीं ज़्यादा साहसी है। क्या कायर होने के कारण ही धर्म नैतिक शुद्धता और आत्म-धर्मी होने का मुखौटा पहनता है? क्या उसमें अपनी माँ का पुत्र कहलाने का साहस है? लोग मुझे बताते हैं कि मैं माँ की बाहों में समाया हुआ एक बड़ा बच्चा था। उस पहाड़ी इलाके में ऊपर-नीचे जाते समय माँ को मुझे गोद में लेकर चलने में साँस लेने में कठिनाई होती थी। मैं इतना भारी बच्चा था! फिर भी वह मुझे गोद में लेकर घूमती

रहती थी। क्या मैं सात साल का नहीं था जब पिताजी का निधन हुआ? मुझे उन दिनों की बहुत धुंधली यादें हैं। धर्म मुझे गोद में लेकर चलता था। मुझे गोद में लेकर चलने से उसकी साँस फूल जाती थी। इसलिए वह मेरा हाथ पकड़कर चलता था। पिताजी कैसे दिखते थे? मेरी यादें धुंधली हो गई हैं, दूसरी छवियों में घुलमिल गई हैं, कई साल पुरानी यादें, उस समय की जब मैं एक महज सात साल का लड़का। क्या वह अपने भाई धृतराष्ट्र जैसा था? अरे, अरे, पिता तो अंधे नहीं थे। वे, पिता और उनके भाई, बहनों से पैदा हुए थे। वे एक ही बीज से अंकुरित हुए थे, उस नियम का पालन करने वाले पिता के बीज से। लेकिन यह नियम कहाँ है कि एक ही बीज से एक जैसी संतान ही पैदा हो? सूरज पश्चिम में डूब रहा था, पेड़ों और पौधों के बीच से होकर, उनकी पीठ के पीछे। उनका ध्यान रास्ते पर गया। पांचाल नज़दीक आ रहा था। पांचाल विराट के मत्स्य देश से कहीं अधिक उपजाऊ भूमि थी। यह हर तरह से समृद्ध थी - पानी, वनस्पति, बारिश और फसलें। पश्चिम और दक्षिण में सड़कों का एक उत्कृष्ट जाल था। पूर्व और उत्तर में घने जंगल थे। आगे बर्फ से ढके पहाड़ थे। मान लीजिए पिता जीवित होते, तो क्या वे पांचाल की बेटी को दुल्हन के रूप में लेने की अनुमति देते? यह एक बहुत पुराना झगड़ा था जिसने परिवारों को बाँट दिया था। पिता एक महान योद्धा थे, जिन्होंने कुरु क्षेत्र की सीमाओं का विस्तार किया था। माताजी स्वयं कहती थीं—अगर पिताजी जीवित होते, तो उनके शक्तिशाली पुत्र उनके नाम पर राजसूय अनुष्ठान और विश्व विजय का अश्वमेध अनुष्ठान करते, जिससे वे आर्य और ब्रह्म क्षेत्रों में सबसे गौरवशाली शासक के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करते। उनकी इतनी कम उम्र में मृत्यु क्यों हुई? उनकी मृत्यु पैंतीस वर्ष की आयु में हुई, ठीक उसी उम्र में जिस उम्र में माताजी की मृत्यु हुई थी। फिर वे अपने पाँच छोटे बच्चों के साथ हस्तिनावती लौट आईं, नीले बादलों के नीचे हरी-भरी हरियाली से भरे पहाड़ी इलाकों को पार करते हुए। हमारी चाची का शरीर माताजी से दुबला-पतला था। उनकी आँखें हिरण की आँखों की तरह तेज थीं। हमें जल्दी से झोपड़ी में ले जाया गया, लेकिन हमें खबर मिली कि पिताजी के साथ ही उन्हें भी चिता में जलाकर राख कर दिया गया—कम से कम मुझे और धर्म को तो यही खबर मिली। नकुल और सहदेव इतने छोटे थे कि कुछ समझ नहीं पाए। यह वह उम्र थी जब यादें टिकती नहीं थीं। जब माताजी हमें लेकर वहां से निकलीं, तो देवलोक के सभी नेता और मुखिया उपस्थित थे—उन्होंने ही नियोग के माध्यम से हमें जन्म दिया था—धर्म के पिता धर्माधिकारी, मेरे पिता

मरुत्थ, अर्जुन के पिता इंद्र, जो उस देश के शासक थे, और नकुल और सहदेव के पिता, जो शरीर के रोगों के उत्कृष्ट चिकित्सक थे। ऐसा लगता था मानो वे चिकित्सा के क्षेत्र में अद्वितीय थे। उन्होंने कई वर्षों तक पिताजी का उपचार किया। फिर भी पिताजी जीवित क्यों नहीं रहे? माताजी सब कुछ जानती हैं, लेकिन वे हमसे कुछ भी नहीं कहतीं। फिर भी वह हमें बार-बार चेतावनी देती थी— "कभी भी इस वंश के आम सदस्यों की तरह मत बनना, कभी भी दासियों के पीछे मत भागना, कभी भी कामुकता में हद से ज्यादा लिप्त मत होना।" वह न केवल हमें चेतावनी देती थी, बल्कि इतनी कम उम्र में भी हमारी हर हरकत पर कड़ी नज़र रखती थी। क्या पिता की मृत्यु कामुकता में हद से ज्यादा लिप्त होने के कारण हुई थी? उस अंधे के सौ पुत्र हैं। उनमें से छियासी दासियों के गर्भ से पैदा हुए हैं। क्या वे सभी अपने पिता के ऋण को चुकाने के लिए मुझसे युद्ध में मिलेंगे? मैं उन्हें चींटियों की तरह कुचल दूँगा। वे भीम की शक्तियों के बारे में क्या सोचते हैं? वह मरुत्था का पुत्र है। देवताओं द्वारा अपनी सशस्त्र सेनाओं का नेतृत्व करने के लिए चुने गए योद्धा के वीर्य से जन्मा पुत्र! पांडु का पुत्र! क्या उसने आर्यों में एक दुर्जेय पहलवान के रूप में प्रसिद्ध किचक के मांस और हड्डियों को चूर-चूर नहीं कर दिया था? हाँ, मुझे पिता की स्मृति स्पष्ट और सुस्पष्ट है। एक ही झटके में वह मुझे उठाकर अपनी बाईं बांह पर बिठा लेते थे। उनका आलिंगन कितना मजबूत था! माँ ने मुझे प्रणाम करने को कहा। आदरपूर्वक उनका अभिवादन करते हुए। "हाँ, मरुत्थ का पुत्र यह भीम, उस अंधे के पूरे वंश का एक ही झटके में नाश कर देगा..." तभी भीम अतीत से वर्तमान में आ गए। सूर्यास्त के बाद काफी समय बीत चुका था। चारों ओर घोर अंधेरा था। चाँदनी कल की तुलना में देर से दिखाई देगी। आगे घोड़े, पीछे घोड़े। घोड़े बिना किसी सवार के दिशा या गति को नियंत्रित किए अपने आप सीधे चल रहे थे। जुलूस के आगे वाला सवार गति निर्धारित कर रहा था। बाकी उसका अनुसरण कर रहे थे। फिर भीम अतीत के चिंतन में लीन हो गया — "मेरी जांघें, नितंब और कमर बुरी तरह दुख रही हैं। साढ़े तेरह साल के अंतराल के बाद मैं घोड़े पर सवार हुआ था। जैसा नीला ने कहा था, मैं किसी राजसी रथ में हो सकता था। लेकिन राक्षसों के इस निर्जन वन में क्या रथ चल सकता है? बस एक दिन का सफर बचा था। धूल और शोर। बारीक पिसी धूल उड़कर बर्फ की तरह फैल गई — हाँ, बर्फ की तरह, वही बर्फ जो मुझे धुंधली सी याद है। बचपन में मैं एक चट्टान पर बैठकर उत्तर दिशा के पहाड़ों को देखता रहता था। उछलते पानी की

गड़गड़ाहट। नीला आवरण। वे पहाड़ जो पेड़ों, पौधों और चट्टानों से ठंडी धुंध उगलते थे, मानो अपने सगे-संबंधियों को बिखेर रहे हों! ऊपर आसमान में सफेद चोटियाँ, चकाचौंध भरी आँखों से मैदानों को देख रही थीं। जब मैंने ऊपर चढ़ने की कोशिश की, तो माँ मुझे रस्सी से बाँधकर मना कर देती थीं। ऊपर देववंश रहता था। उन्हें डर था कि अगर मैं अकेला गया, तो कहीं मैं उनके बीच खो न जाऊँ और उनका हिस्सा न बन जाऊँ। अगर मैं उनसे साथ चलने को कहता, तो वे मुझे रोक देतीं।" वह मुझसे बहुत उत्साहित और खुश होती थी। लेकिन पिताजी मना कर देते थे। उनमें चढ़ने की ताकत नहीं थी। सांस लेने में तकलीफ होने लगी थी। कहते हैं कि देवों की भूमि पूरी तरह सफेद है। यह याद मुझे पीड़ा देती है। मुझे वहां लौटना ही होगा। सफेद चोटियों, सफेद झीलों और तालाबों, सफेद लहरों से बने उस भूभाग पर चढ़ने के लिए वापस जाना ही होगा। वनवास के दौरान, हमने अपनी गर्मियां हिमालय की तलहटी में बिताईं। लेकिन वह गंधर्वों का देश था, देवों का देश नहीं। अर्जुन हम सब में सबसे भाग्यशाली है। वह देवों की भूमि में था, सफेद चोटियों, सफेद झीलों और तालाबों, और सफेद लहरों की भूमि में।

चांदनी ढलने के कुछ ही क्षण बाद, वे एक बड़ी नदी के पास पहुँचे। काफ़ी बड़ी नदी थी। नदी में उतरने से पहले रेत का एक लंबा मैदान था। चिपचिपे पसीने की बेचैनी अपने आप गायब हो गई। जैसे ही रेत उनके खुरों में भर गई, घोड़ों की गति धीमी हो गई। लेकिन आगे पानी को भांपते ही उन्होंने अपनी गति बढ़ा दी। हालांकि चांदनी थी, फिर भी सबसे आगे चल रहे सवार ने जलती हुई मशाल पकड़ी हुई थी। जब पानी कुछ सौ कदम आगे ही था, नीला घोड़े से उतर गया और दूसरों को भी ऐसा ही करने को कहा। उसने कहा, "गर्मी प्यासे बाघों और चीतों को आकर्षित करेगी। हाथी तो हमेशा यहीं रहते हैं। मशाल बुझाना मत। अगर किनारे पर सूखी लकड़ी और टहनियाँ मिलें, तो उनका ढेर बनाकर उसमें आग लगा देना।" सभी अपने घोड़ों से उतर गए। उनमें से लगभग पंद्रह ने लगाम दूसरों को सौंप दी और ईंधन की लकड़ी की तलाश में चले गए।

भीमा ने नीला से पूछा, जो अब उसके करीब आ गई थी, "क्या यह यमुना नदी नहीं है?"

नीला, "जी हां। मैं आपसे सलाह लेने आई हूं। कहते हैं कि गर्मी में यमुना में गंगा जितनी तेज़ धाराएं नहीं होतीं। मत्स्य देश की नदियों के बारे में मुझे ज्यादा जानकारी नहीं है। आप यमुना के किनारे रह चुकी हैं। आपको इसके स्वभाव और

व्यवहार का ज्ञान है। मैं यह जानकारी निर्णय लेने के लिए ले रही हूं। क्या आपको लगता है कि आज रात ही नदी पार करना संभव है? यह सिर्फ हमारे पार करने का सवाल नहीं है। सामान ढोने वाले घोड़ों को भी नदी पार करने में सक्षम होना चाहिए। यह ज़रूरी है कि अनाज, आटा और अन्य खाद्य पदार्थ गीले न हों। ऐसा भी हो सकता है कि बीच रास्ते में हमें अचानक गहराई मिल जाए। यह जगह वाकई गहरी दिखती है।"

लेकिन यह कितना गहरा है?

भीमा, "किसी को बांस की छड़ी लेकर भेजो ताकि वह गहराई नाप सके और उसकी जांच कर सके।"

नीला, "जी हाँ, मैं यह करवा दूँगी। एक और बात है। नदी पार करने के लगभग चार घंटे बाद हम पंचाल क्षेत्र में प्रवेश करेंगे। फिर हम गणना के अनुसार बाएँ मुड़ेंगे। बाएँ मुड़ते ही हम राक्षस क्षेत्र में पहुँच जाएँगे, जो हमारा गंतव्य है। आज रात हम पंचाल पहुँचेंगे और फिर आधी रात से सुबह तक सोएँगे। हमें पर्याप्त आराम मिल चुका होगा और जब हम उठेंगे तब तक सूरज आसमान में काफी ऊपर होगा। सूरज की रोशनी से कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि आखिर हमें जंगल से होकर गुजरना है। यह एक कठिन यात्रा होगी, जिसमें कोई स्पष्ट रूप से चिह्नित सड़कें या रास्ते नहीं हैं। इसलिए, अभी हम यहीं नदी किनारे सो जाते हैं। सुबह हम बहुत जल्दी निकल सकते हैं और राक्षस क्षेत्र की सीमा तक पहुँच सकते हैं। और वहाँ हम सही मार्ग का पता लगा लेंगे। परसों हम सुबह की ठंडक में उस क्षेत्र में प्रवेश करेंगे। वैसे भी आपको इलाके की कुछ जानकारी तो होगी ही - पेड़, पत्थर और नदियाँ, ये सब बातें।"

भीमा ने कहा, "खैर, यह बहुत पुराने अतीत की स्मृति है।"

नीला, "लेकिन मुझे बताया गया है कि राक्षस क्षेत्र में ज़रा भी बदलाव नहीं आया है। मान लीजिए कि यह आर्यों का क्षेत्र होता, तो खेती के लिए पेड़ों और वनस्पतियों को काटकर, नई मानव बस्तियों के निर्माण, पशु-शालाओं और सड़कों के निर्माण से यह भूमि पूरी तरह से बदल गई होती। क्या ऐसा नहीं है?"

भीमा को कुछ और याद आया। जी हाँ, पेड़ों-पौधों को काटने की, खेती के लिए जंगल साफ़ करने की, एक नई बस्ती बसाने की, एक ऐसी बस्ती जिसने मूल परिदृश्य को पूरी तरह से बदल दिया था। उसने नीला के सवाल का जवाब बस "हाँ" में दिया।

नीला ने कहा, "महाराजा जी, हम सोचते हैं कि हम बहुत सी बातें भूल चुके हैं। लेकिन जब हम उस जगह पर वापस जाते हैं, तो हर एक चीज़ एकदम साफ़-साफ़ याद आ जाती है। मुझे लगता था कि मैं अपनी नानी के कस्बे को पूरी तरह भूल चुकी हूँ, जिसे मैंने बचपन में देखा था। लेकिन नहीं, पिछले साल मैं बीस साल बाद वहाँ गई थी। सब कुछ मुझे एकदम साफ़-साफ़ याद आ गया, यहाँ तक कि वो छोटी-छोटी गलियाँ और झाड़ियाँ भी, जिनमें मैं पिल्लों का पीछा करती थी। हम छह बच्चे थे, और वो जगह भी जहाँ मेरे चाचा ने मुझे तैरना सिखाया था, मुझे ऐसे याद है जैसे वो घटना अभी-अभी, एक-दो दिन पहले ही घटी हो!"

"हां," भीमा ने कहा।

नीला, "अच्छा, आप क्या कार्रवाई करने की सलाह देंगे?"

'हां', भीमा ने फिर कहा।

नीला ने देखा कि राजा का ध्यान कहीं और लगा हुआ है। उसने दो तैराकों को पानी की गहराई नापने के लिए भेजा। इसी बीच सूखी लकड़ियाँ और टहनियाँ जमा की जा रही थीं। नीला ने मन ही मन तय किया कि वह सारी लकड़ियाँ एक साथ नहीं जलाएगा, और बाकी लोग भी उससे सहमत होते हुए बोले, "मौसम सुहाना है। चाँदनी है। इतने बड़े-बड़े पेड़ और इतनी बड़ी नदी। अगर हम चाहें तो क्या ये हमारे देश में मिल सकते हैं? चलो आज रात यहीं रुकते हैं और सुबह निकल जाते हैं।"

उन्होंने दोपहर में पका हुआ खाना खाया। नीला ने जंगली जानवर को डराने के लिए छोटी सी आग जलाने का फैसला किया और बारी-बारी से आदमियों को धनुष-बाण से उनकी रक्षा के लिए तैनात करने का भी निश्चय किया। नरम रेत पर उन्होंने चटाई बिछाई और उस पर मोटा कपड़ा डाला। भीम ने अपने पैर फैलाए। पास ही एक विशाल नदी बिना आवाज किए बह रही थी। गंगा को छोड़कर, यह अब तक की सबसे बड़ी नदी थी जो उसने देखी थी। उस दृश्य ने उन्हें स्मृतियों की एक और यात्रा पर ले गया - "इसी नदी के किनारे हमारा इंद्रप्रस्थ स्थित है। लेकिन यहाँ से कितनी दूर? हम कुरु देश को छुए बिना यहाँ पहुँच गए हैं, जिसका अर्थ है कि इंद्रप्रस्थ ऊपरी क्षेत्र में है, घोड़े पर लगभग दो दिन की यात्रा की दूरी पर। जब हम इंद्रप्रस्थ में रहते थे, तो हमने नदी के किनारे कितनी ही चांदनी रातें बिताईं? गर्मियों में चांदनी का मतलब होता था कि रात का अधिकांश समय रेत पर बिताना। कई दिनों तक कृष्ण हमारे साथ रेत पर रहते थे। उनका जन्म और पालन-पोषण

इसी नदी के किनारे हुआ था। यही कारण है कि उन्हें इससे इतना प्रेम था। जितना मुझे गंगा से है। कृष्ण ने कहा था, 'भीम, दुर्योधन और उसके लोग गंगा के किनारे पर डटे रहें। यह मत सोचो कि यमुना तुम्हारी गंगा से कम है। यदि तुम नदी के किनारे नीचे जाओगे, तो तुम्हें मेरा जन्मस्थान मथुरा मिलेगा। चलो इस खांडव वन को काटकर खेती के लिए साफ करें, मिट्टी को तैयार करें। चलो उस स्थान पर एक महान नगर का निर्माण करें जहाँ अभी एक छोटा सा गाँव है।'" आर्य जगत में इसका कोई सानी नहीं है। उसका उत्साह सच्चा है। नई रचना करने की उसकी बुद्धि और उमंग की कोई सीमा नहीं है। इसे देखकर कोई भी थक सकता है, इसमें इतना कुछ देखने को है। मेरा मानना है कि उसने द्वारका जैसा सुंदर शहर बनाया है। मैं वहाँ कभी नहीं गया, इस युद्ध के समाप्त होने के बाद अवश्य जाऊँगा। खांडव कोई साधारण जंगल नहीं है! यह हिडिंबरों से भी घना है - नहीं, यह घटिया नाम क्यों लें - सालकटंकटी का जंगल। नाग वहाँ निवास करते हैं। खांडवप्रस्थ उस जंगल के बीचोंबीच बसा एक गाँव है। वहाँ खूंखार जंगली जानवर रहते थे और वहाँ की जलवायु अत्यंत अस्वस्थ थी। राजा द्रुपद से विवाह के माध्यम से हमारा संबंध स्थापित होने के बाद, उस अंधे व्यक्ति ने, हमसे प्रेम का दिखावा करते हुए, चालाकी से उस वन गाँव को हम पर थोप दिया। उसने अपनी आँसूहीन आँखों को पोंछते हुए कहा, 'बाल, धर्म, जब मैंने सुना कि गर्मियों की आग में तुम्हारा घर जल गया, तो मैं बहुत दुखी हुआ। मेरा दिल भी जल उठा होता। आखिर, इंसान अपने बच्चों से ज़्यादा अपने छोटे भाई के बच्चों की भलाई की परवाह करता है। हमारे कुरु वंश की पुण्य परंपरा के कारण ही तुम खतरे से बच गए। कुछ दुष्ट और शरारती लोगों ने यह झूठी अफवाह फैलाई कि मेरे बेटे दुर्योधन ने तुम्हारा घर जलाया था। अब मुझे राहत मिली है कि वह तुम्हारी मौत के लिए ज़िम्मेदार होने के सार्वजनिक निंदा से बच गया। उसने अपनी आँखों से काल्पनिक आँसू पोंछे। शायद कुछ आँसू थे। शायद अगर कोई संसार से हमेशा के लिए बंद आँखों को जबरदस्ती खोले, तो उसे आँसू देखने का भ्रम हो सकता है! अंधे ने आगे कहा, 'सच है, दुर्योधन कुछ शरारतें करता है। आखिर वह अभी बहुत छोटा है। लेकिन कुरु वंश का कोई भी बच्चा इतना दुष्ट नहीं हो सकता कि अपने भाइयों को मरवा दे। जाने दो। मैंने फैसला किया है कि भविष्य में तुम और तुम्हारे भाई, एक तरफ, और दुर्योधन और उसके भाई, दूसरी तरफ, एक ही जगह पर नहीं रहेंगे। तुम्हें पता है, दक्षिण में हमारा अपना खांडवप्रस्थ है। यह प्राचीन काल में आयु, पुरुरवा और

नहुष जैसे शासकों की राजधानी हुआ करती थी, है ना? बहुत बाद में राजवास हस्तिनावती में स्थानांतरित हो गया। मुझे पता चला है कि अब, उपयोग न होने के कारण, वह स्थान बदहाल है, पेड़ों और जंगली पौधों से भरा हुआ है। तुम पाँचों वहाँ जाकर शान से शासन कर सकते हो। क्या कुरु वंश के दक्षिणी भाग को क्या आपका राज्य भी समृद्ध होगा? खांडवप्रस्थ क्षेत्र आपका है।'

"उन्होंने कितनी चतुराई और चालाकी से हमें जंगलों में पहुँचाया! अगर कृष्ण हमारे साथ न होते, तो वह स्थान वैभव और वैभव में हस्तिनावती से भी आगे न निकल पाता। कृष्ण का नए निर्माण का उत्साह कभी कम नहीं हुआ। उस अंधे बूढ़े ने हमें मीठे शब्दों में खांडव वन भेज दिया। ससुर द्रुपद ने ही हमें कीमती आभूषण, घोड़े, रथ, गायें, बैल, बर्तन, वस्त्र और कंबल भेजे थे। और कृष्ण ने द्वारका से कितना कुछ भेजा! ऐसा लगता है कि कृष्ण के लोग, यादव, समुद्र तट पर रहकर और विदेशों से लाभदायक व्यापार करके समृद्ध हो गए थे। द्वारका का धन हस्तिनावती से कहीं अधिक था। खैर, हम पाँच भाई, माता, कृष्ण और द्रौपदी, बड़े उत्साह से खांडवप्रस्थ के लिए रवाना हुए। जिस दिन हमने वहाँ कदम रखा, कृष्ण, मैं, अर्जुन, नकुल और सहदेव ने वन के हिस्से तय करने के लिए भूमि का सर्वेक्षण किया। खेती और रहने के लिए ज़मीन साफ़ करनी थी। हम घोड़ों पर सवार होकर गए। इतना काम सामने होने पर भला कोई कैसे खाली बैठ सकता था? गर्मी का मौसम था, और पेड़-पौधे सूखे और मुरझाए हुए थे। हमने एक तरफ़ आग लगाई, और आग तेज़ी से फैल गई, काला धुआँ उगलते हुए, पूरे इलाके को अपनी चपेट में ले लिया। जैसे-जैसे पीली लपटें भड़कती गईं, पक्षी, कीड़े-मकोड़े, साँप, बिच्छू, छिपकलियाँ और गिरगिट जलते गए, और बाघ और भालू जैसे बड़े जानवर भाग गए। मैंने ऐसी भयंकर आग पहले कभी नहीं देखी थी। जैसे ही गर्मी की हवा धूल उड़ाते हुए चली, आग भी उसके साथ दौड़ पड़ी। यही मेरी नज़र में युद्ध है। दुर्योधन, उसकी सेना, उसके घोड़े, रथ और हाथी गर्मी के सूखे जंगल की तरह खड़े होने चाहिए। जैसे ही अलग-अलग दिशाओं से जलते हुए तीर उन्हें भेदें, वे सब खांडव जंगल की तरह राख हो जाएँ। वे उस आदिवासी स्त्री और उसके पाँच बेटों के शवों की तरह काली राख बन जाएँ। केंद्र में दुर्योधन, दुस्शासन, कर्ण, शकुनि और उनके बाकी रिश्तेदार भी वहीं हैं। वह अंधा युद्धक्षेत्र में नहीं होगा, क्योंकि वह आ नहीं सकता। इस समय भीम को जम्हाई आने लगी। उसने अपने शरीर को आराम दिया। उसके कुछ साथी सो रहे थे, और बाकी नदी किनारे बैठे अपने पैर

पानी में डाले बातें कर रहे थे। चंद्रमा अपने प्रकाश से आकाश को जगमगा रहा था। अब उसे लगा कि उस रात वहाँ विश्राम करना बुद्धिमानी थी। उसने दूसरी बार जम्हाई ली, लेकिन उसे नींद नहीं आई। इंद्रप्रस्थ की यादें ही उसे सता रही थीं, उसे जगाए रख रही थीं। उस शहर के निर्माण में कितना श्रम और परिश्रम लगा था! क्या यह उन किसानों के लिए एक बड़ा काम नहीं था जो हस्तिनावती से हमारे साथ आए थे और जंगल काटकर, नई बस्ती बसाकर, उसे नाम देकर, उस भूमि को सोने में बदल दिया था? भीम ने सोचा, "हमें वह ज़मीन यूँ ही माँगने पर नहीं मिली। उस अंधे ने हमें दान में नहीं दी। हालाँकि आधिकारिक तौर पर वह कुरुओं की संपत्ति थी, लेकिन वास्तव में वह नाग जनजाति के कब्ज़े में थी। लगता है हमारे आने से वे भड़क उठे थे। अपने जंगल को आग की लपटों में देखकर वे कैसे चैन से बैठ सकते थे? वे जलते हुए जंगल से ज़हर बुझे तीरों के साथ बाहर निकल आए। अगर वे शरीर में घुस जाते, तो ज़हर अपना असर दिखाता, चाहे तीर शरीर से निकाल ही क्यों न लिए जाएँ। पूरी आबादी, पुरुष और महिलाएँ, अपने धनुष-बाण लेकर बाहर आ गई थी। हमारे पास उनका मुकाबला करने के लिए पर्याप्त सेना नहीं थी। हम पाँच थे, और कृष्ण भी। कुछ घोड़े, रथ और सैनिक, सब पंचालों से उधार लिए थे। कृष्ण की ओर से सहायता अभी तक हम तक नहीं पहुँची थी। हमारे पास कवच भी नहीं थे। क्या उस अंधे ने हमें जानबूझकर भेजा था, यह सोचकर कि नाग हम पर हमला करेंगे और हमें मार डालेंगे? कृष्ण के साहस और उच्च मनोबल का कोई मुकाबला नहीं। उन्होंने हमें अपने घोड़ों की दिशा बदलने का आदेश दिया।" 'तुरंत', उन्होंने कहा। हमने अपने कवच पहने, हथियारबंद आदिवासी समूह से बचते हुए जंगल के पीछे चले गए। फिर चारों ओर से, नहीं आठों ओर से, नहीं, हर तरफ से हमने जंगल में आग लगा दी। दिशाहीन हवा ने भयंकर लपटों को हर जगह फैला दिया। हो, हो, हो! वे किस तरफ से बच सकते थे? कुछ जो अपने लोगों को बचाने के लिए आग में कूद पड़े, वे खुद लपटों में फंस गए। कुछ जो भयंकर लपटों से बाहर निकलने की कोशिश कर रहे थे, उन्हें हमारे तीर मारने के लिए तैयार मिले। कितने मरे? कौन जानता है गिनती? कृष्ण का दिमाग अविश्वसनीय रूप से तेज और फुर्तीला है। अगर हम एक साथ चारों ओर आग लगाने में असफल हो जाते, तो हम निश्चित रूप से खत्म हो जाते। नाग हमें जिंदा नहीं छोड़ते। लपटों के अंदर कितने लोग थे, जो मधुमक्खियों की तरह हजारों की संख्या में बाहर निकलकर हम पर हमला कर सकते थे? और हम कितने थे? वे छह सौ या

शायद सात सौ थे। सभी पुरुष नहीं थे। उनमें से कुछ बच निकले। बेशक, ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि हमने नदी की तरफ आग नहीं लगाई थी। जो बच निकले, वे भाग गए। वे नदी पार करके उनकी जान बचाई। अब माना जाता है कि वे हर जगह घूम रहे हैं और पांडवों को नागों का सबसे बड़ा शत्रु बता रहे हैं। ऐसा लगता है कि दुर्योधन ने अन्य नाग जनजातियों के पास अपने दूत भेजे हैं, ताकि वह हमारे प्रति उनकी शत्रुता का फायदा उठा सके। दूतों का संदेश है, "मैं पांडवों के विरुद्ध युद्ध छेड़ रहा हूँ। आओ और मेरे दल में शामिल हो जाओ। अब तुम्हारे पास उनसे बदला लेने का बेहतरीन मौका है। मैं तुम्हें उनका सिर काटने और उनके सिर जमीन पर लुढ़कते देखने का अवसर दूँगा।" भीम ने मन ही मन सोचा, "अगर मैं तुम्हारा सिर न काटूँ, दुर्योधन, और तुम्हारे कटे हुए सिर को अपने बाएँ पैर से न लात मारूँ, तो मैं अपने नाम के अलावा और क्या नाम रखूँगा? दुर्योधन, तुम तो अब हमारे शत्रुओं को अपने पक्ष में इकट्ठा कर रहे हो। मैं और क्या नाम रखूँ? मैं कुछ कह नहीं सका। यही मेरा एकमात्र नाम था। यह जानबूझकर चुना गया नाम नहीं था। यह वह नाम था जो मेरे पिता पांडु के मुँह से निकला था, जैसे ही उन्होंने नवजात शिशु का आकार और लंबाई देखी थी।" भीम मन ही मन सोचने लगा कि कौन उसे अपना नाम बदलने के लिए मजबूर कर सकता है। उसे अपने शरीर को तरोताज़ा करने का मन हुआ। दोनों मुट्ठियाँ कसकर उसने अपनी कोहनियों को मोड़ने की कोशिश की। फिर उसका ध्यान अपनी दाहिनी भुजा पर गया। भीमा को लगा कि वह बूढ़ा हो रहा है। उसने पाया कि जो भुजा पहले पत्थर की तरह सख्त थी, जिसकी मांसपेशियाँ तनी हुई और मजबूत थीं, अब वह काफी ढीली और शिथिल लग रही थी।

भीम ने मन ही मन सोचा, "हाँ, बारह वर्षों के वनवास ने अपना असर दिखाया है। रोज़ाना शिकार और मांस की कोई गारंटी नहीं थी। ऊपर से, भाई धर्म के साथ वैदिक विषयों पर चर्चा करने आए ऋषियों को भोजन कराना पड़ता था। हमारे पास न दूध था, न दही, न घी। न भुने हुए अनाज, न गेहूं की रोटी, न पका हुआ चावल। भीम इतना कमज़ोर कैसे नहीं रह सकता? अगर द्रौपदी ने ध्यान न रखा होता, तो हालत और भी बदतर होती। माँ ने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, 'इसके पेट का अच्छे से ख्याल रखना। बाकी सब ठीक हो जाएगा।' अगर मैं विराट नगर में रसोइया न बना होता, तो भूख से मर जाता। धर्म युद्ध के बारे में सोचता भी नहीं। वह वापस वन में चला जाता। उसका भक्त भाई अर्जुन भी उसके पीछे चला जाता।

नकुल और सहदेव भी, वे भी यही करते। कृष्ण का क्या? कृष्ण, याद रखना, यह भीम मरा नहीं है। मेरी और तुम्हारी आकांक्षाएँ अलग नहीं हैं। तुम रानी बनने के लिए ललचाए नहीं हो। मैं जानता हूँ कि तुम अब सिर्फ मुझे देखने के लिए ही जीवित हो। मैं अपने बाएं पैर से दुर्योधन, उसके भाइयों कर्ण और शकुनि के कटे हुए सिरों को लात मारूंगा। यकीन मानो, मैं तुम्हें यह तमाशा दिखाए बिना नहीं मरूंगा। यहां तक कि अगर स्वयं मृत्यु के देवता यम भी आ जाएं, तो भी मैं तुम्हें अपने साथ नहीं ले जाने दूंगा।" फिर उनका शरीर शिथिल हो गया और वे सो गए। नदी किनारे बैठे लोग एक-एक करके उठे और सो गए। उनसे थोड़ी दूरी पर भीम को जोर से खर्राटे लेने की आवाज सुनाई दी। फिर टिड्डियों की भिनभिनाहट सुनाई दी। भीम ने मन ही मन कहा, "अब तो इंद्रप्रस्थ में कोई रहता हुआ नहीं दिखता, यह अब किसी राज्य की राजधानी नहीं रही। हमारे जाने के तुरंत बाद, हमारे साथ आए सभी वैदिक विद्वान, अभिनेता, संगीतकार, हाथी पालक और सैनिक, सब शहर छोड़कर चले गए। यह जगह फिर से एक गाँव बन गई है। जंगल ने शहर पर फिर से कब्ज़ा कर लिया है, और दुर्योधन इसे नागों को लौटा सकता है। अफसोस, यह कभी आर्य जगत का सबसे सुंदर शहर हुआ करता था, सभा भवन के चारों ओर सुंदर उद्यान हुआ करते थे। मयासुर खांडव वन से कहाँ जा रहा था? वह जिस भूमि पर जा रहा था, वह गांधार देश से परे होनी चाहिए थी। वह जरासंध द्वारा शासित गिरिव्रज के लिए आजीविका की तलाश में अपना वतन छोड़कर आया था। बेचारा, वह भयंकर आग में फंस गया। जब वह आग से भाग रहा था, कृष्ण उस पर बाण चलाने ही वाले थे। समय रहते यह देखकर कि मयासुर नाग जैसा नहीं दिखता, अर्जुन ने कृष्ण को बाण न चलाने के लिए मना लिया। वरना मयासुर निश्चित रूप से मर जाता। लेकिन उस प्रसिद्ध निर्माता ने और नगरों के डिज़ाइनर, सौभाग्य से, बच गए, ताकि वे हमें इंद्रप्रस्थ के भव्य और गौरवशाली नगर के निर्माण में सहायता कर सकें। वे अर्जुन के पास गए और उनसे पूछा, 'आपने मेरी जान बचाई है। आप कौन हैं?' अर्जुन ने उत्तर दिया, 'मैं इस देश के राजा का छोटा भाई हूँ। मेरा नाम अर्जुन है।' उन्होंने कहा, 'आपने मेरी जान बचाई है। बदले में आप मुझसे क्या चाहते हैं?' अर्जुन ने पूछा, 'लेकिन आप क्या कर सकते हैं? आप कौन हैं? आप यहाँ आए ही क्यों?' उन्होंने उत्तर दिया, 'एक वास्तुकार। एक निर्माता। मैं इस देश में मौजूद किसी भी इमारत से ज़्यादा सुंदर इमारतें बना सकता हूँ। मैं एक सुंदर नगर का डिज़ाइन बना सकता हूँ।' कृष्ण के तेज़ दिमाग ने इस

स्थिति का लाभ उठाया। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके द्वारका में नगरों की योजना और इमारतों का निर्माण देश के इस हिस्से से कहीं बेहतर है। कृष्ण ने उनसे कहा, 'देखो, वास्तुकार, हम यहाँ एक नया नगर बनाना चाहते हैं, नई इमारतें खड़ी करना चाहते हैं। हम आपको आपके द्वारा माँगे गए लोग और सामग्री प्रदान करेंगे। क्या आप अपनी सारी बुद्धि और विशेषज्ञता का उपयोग करके एक ऐसा नगर बना सकते हैं जिसका कोई सानी न हो?' माया हमारे साथ ही रुक गई। कृष्ण अपने द्वारका से कुछ और वास्तुकारों को ले आए। एक साल के भीतर निर्माण कार्य शुरू हो गया। यह संकरी गलियों वाला हस्तिनावती जैसा नहीं होना था। इसमें बहुमंजिला मकान होने थे, हर घर में एक स्नानघर और शहर के कुछ चुनिंदा स्थानों पर सार्वजनिक स्नानघर होने थे। स्नानघरों में तालाब होने थे, जो ईंट की दीवारों से घिरे हों और बाहरी घेरे में छायादार पेड़ लगे हों। इसमें एक उत्कृष्ट जल निकासी व्यवस्था होनी थी। यह हस्तिनावती जैसा नहीं होना था, जहाँ भारी बारिश होने पर पानी गलियों में भर जाता था, घरों को अलग-थलग कर देता था, मच्छर और मक्खियाँ पनपने लगती थीं और दुर्गंध फैलती थी। इंद्रप्रस्थ में चौड़ी सड़कों का क्या ही कोई उदाहरण था? यातायात के लिए पर्याप्त जगह होगी - वास्तव में, दोनों तरफ से दो बैलगाड़ियों के निकलने के लिए भी पर्याप्त जगह छोड़ी गई थी। शहर के सीधे, समतल तल के अंत में, जहाँ कोई उतार-चढ़ाव नहीं था, एक नए प्रकार का लोहारखाना था जहाँ धातुओं को पिघलाया जा सकता था। लोहारों के बारे में सोचते हुए भीम को उपप्लव्य नगर से प्रस्थान करने से पहले की शाम को लोहारों के हथौड़ों की खनखनाहट याद आ गई, जब वे गर्म धातु पर प्रहार कर रहे थे। जिस सुबह वे निकले, उन्होंने दो गाड़ियाँ देखीं, लेकिन उन्हें लोहारों की गाड़ियाँ नहीं पहचान पाए। भीम को नींद नहीं आ रही थी। उन्हें जीवन से भरे वे वर्ष याद आ रहे थे। बीच के दस वर्षों में तरह-तरह की घटनाएँ घटी थीं। नींद न आने के कारण वे उठ खड़े हुए। चारों ओर ठंडी चाँदनी थी, जो आँखों को सुकून दे रही थी। और सफेद रेत। उनका मन कर रहा था कि वे पानी के पास बैठ जाएँ। वे खड़े हो गए। बाकी सभी सवार सो रहे थे। निगरानी के लिए चुने गए दो लोग थोड़ी दूरी पर आग जला रहे थे। अकेले भीम धीरे-धीरे रेत पर कदम बढ़ाते हुए आगे बढ़े। पानी बहुत ठंडा लग रहा था। वे पानी से दूर बैठे, लेकिन इतना पास कि उनके पैर पानी में लटक रहे थे। पानी शांत और स्थिर था। उनका मन कर रहा था कि वे उसे पी लें। फिर उन्होंने कई मुट्ठी पानी लिया और पीकर एक लंबी आह भरी। शहर इसी

नदी के किनारे पर थोड़ा आगे स्थित था, जहाँ तक पहुँचने में एक-दो दिन का समय लगता था। फिर क्या हुआ? उसे धीरे-धीरे, टुकड़ों-टुकड़ों में सब कुछ याद आ गया। उसने घटनाओं को जोड़कर देखा। क्रमबद्ध तरीके से नहीं। नहीं, सामान गुच्छों में आया था। जंगल जलने के बाद, नागों को निकाल दिया गया, आग बेतहाशा फैल गई। क्या पंद्रह दिन बाद ही नौकर जंगल में घुस पाए और बचे हुए पेड़ों के ठूंठों को काट पाए? पेड़ों के सूखने के बाद, फिर से आग, फिर धुआं, राख और गर्मी। उस साल बारिश थोड़ी देर से हुई। अगर अच्छी बारिश भी होती, तो उसी साल उसके फल कैसे मिल पाते? अगर हमें पंचाला से आपूर्ति नहीं मिलती, तो हमें और हमारे साथी बसने वालों को भूखा मरना पड़ता। क्या अगले साल ही हम फसल काट पाए? और क्या शानदार फसल थी! यह इतनी उपजाऊ थी कि भारी पैदावार के कारण पौधे झुक गए! इस बेहतरीन फसल की खबर फैलते ही बसने वालों के रिश्तेदार दौड़ पड़े। इस प्रकार इंद्रप्रस्थ लोगों और जीवन से भरपूर एक शहर बन गया। बेशक, इसका नाम अभी तक इंद्रप्रस्थ नहीं रखा गया था। इसे पहले खंडवप्रस्थ के नाम से जाना जाता था। यह जीवन से गुलजार था। बढ़ई, पत्थर तराशने वाले, ईंट बनाने वाले, गारा बनाने वाले, कुम्हार, मूर्तिकार; भवन डिज़ाइनर, रथ बनाने वाले, पशुपालक और किसान। हर किसी के लिए पर्याप्त से अधिक काम था। कितने उत्साह और उमंग से वे अपने काम में जुट जाते थे! नई चीज़ें बनाने के उत्साह से भरा हुआ! पुराने शहरों की अपनी प्रतिष्ठा थी, लेकिन नए शहरों में सुविधाएँ थीं। उस समय हर कोई ऐसा ही महसूस करता था और यही कहता था। कितनी चौड़ी सड़कें, आरामदायक स्नानघर, साफ-सुथरे घर! माया वास्तुकार की स्पष्ट अनुमति और द्वारका के वास्तुकारों की देखरेख के बिना किसी भी इमारत का निर्माण वर्जित था। उनकी पूर्व स्वीकृति के बिना नींव खोदना या दीवारें खड़ी करना संभव नहीं था।

हर गली किसी शाही सड़क जैसी दिखती थी। जब नया शहर पूरी तरह से बन गया, और आखिरी इमारत, सभा भवन, बनकर तैयार हो गई, तो यह आम राय बन गई कि पुराने नाम, खांडवप्रस्थ, को त्याग दिया जाए और नए नाम, इंद्रप्रस्थ, को सभी ने उत्साहपूर्वक स्वीकार कर लिया। और कृष्ण के गर्भ से एक के बाद एक सभी पुरुष संतानें जन्म लेती रहीं। हर जन्म हम सभी को आनंदित कर देता था - माता, धर्म, मैं, अर्जुन, नकुल, सहदेव और स्वयं कृष्ण, जो बच्चों की जननी थीं। बच्चों के नाम प्रतिविंध्य, श्रुतसोमा श्रुतकीर्ति, शतानीका और श्रुतसेना रखे गए। माता

अपने पोते-पोतियों को दुलारने और चूमने से कभी नहीं थकती थीं। वह अपनी बहू की प्रशंसा करने से कभी नहीं थकती थीं, जिसने बार-बार बच्चे को जन्म दिया और अपने पाँचों पतियों के साथ अटूट उत्साह से सोई। कृष्ण का गर्भ पूरी तरह से उर्वरता से भरा था। विवाह के बाद कृष्ण का मासिक धर्म कभी व्यर्थ नहीं गया। प्रसव के बाद भी नहीं। गर्भधारण नियमित रूप से होते रहे, मासिक धर्म कभी व्यर्थ नहीं गया। बच्चे मुझसे कितना लगाव रखते थे, और उनका जीवन मेरे जीवन में कितना घुलमिल गया था! वे मेरी गोद में खेलने के लिए कैसे दौड़ पड़ते थे! वे मेरे ऊपर, मेरी पीठ पर, मेरे कंधों पर और मेरे सिर पर हर जगह लिपट जाते थे। वास्तव में, उनके मन में मैं ही एकमात्र पिता था। बाकी चार भी पिता थे, यह सच है, लेकिन उस अर्थ में नहीं जिस अर्थ में मैं था।" भीमा हँस पड़ा जब उसे याद आया कि कैसे वह अकेले ही पाँचों बच्चों को यमुना नदी तक ले जाता था और उन्हें रेतीले किनारे पर जमा पानी में फेंक देता था। हँसी इतनी ज़ोरदार थी कि उसके दर्द ने भीमा को वर्तमान में वापस ला दिया। चारों ओर सन्नाटा था। पक्षियों की कोई आवाज़ नहीं। कीड़ों की कोई भिनभिनाहट नहीं। उसने अपना सिर उठाकर आकाश की ओर देखा, और पाया कि चाँद पश्चिम की ओर बढ़ रहा है। आधी रात के काफी समय बीत चुका होगा। उसे याद आया कि नीला ने सुझाव दिया था कि उन्हें सुबह बहुत जल्दी यहाँ से निकल जाना चाहिए। अनिच्छा से उसने अपने पैर पानी से बाहर निकाले, और धीरे-धीरे वापस जाने लगा, उसके पैर रेत को कुचल रहे थे। फिर वह सो गया।

भीम चाहे सोने की कितनी भी कोशिश करे, उसका मन इंद्रप्रस्थ की यादों में उलझा हुआ था। यह पूरे आर्य राज्य का सबसे सुंदर नगर था। एक नया नगर। एक भव्य सभा भवन के साथ। क्या स्वयं माया ने उन्हें भेंट नहीं दी थी? उन्होंने खुलेआम कहा था कि कुशल वास्तुकारों की सेवाएँ प्राप्त करना संभव है, लेकिन उनके जैसा कोई राजा नहीं था जो ऐसे कलाकारों की सभी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। यह एक असाधारण नगर था। इसने धर्म की उस अपेक्षा को पूर्णतः पूरा किया कि इसके प्रसिद्ध सभा भवन में दूर-दूर से शासक, महान वस्तुओं और घटनाओं को देखने और उनकी प्रशंसा करने के लिए विचरण करने वाले पुरोहित और ब्राह्मण दर्शन करने आएँ। धर्म चाहता था कि वे पांडु के पुत्रों की गौरवशाली उपलब्धि के साक्षी बनें, जिन्हें दुर्योधन लगातार मारने की साजिश रच रहा था। पांडु के पुत्रों में सबसे बड़ा दुर्योधन सिंहासन पर था, लेकिन उत्साह ने उन सभी को घेर

लिया था। आम लोग चाहते थे कि उनका नगर हर जगह प्रसिद्ध हो जाए। लेकिन इसे सबसे अच्छे तरीके से कैसे किया जा सकता था? इसका उपाय राजसूय अनुष्ठान करना था। इसी उद्देश्य से कृष्ण को बुलाया गया था। उसके आने के बाद, पहला प्रहार जरासंध पर होना था, और वह भीम की ओर से था। इस समय भीम को दूसरी तरफ मुड़ने का मन हुआ। उसे जम्हाई आने लगी। जम्हाई के बाद नींद आ गई। ठंडी हवा चल रही थी। उसके कानों में आत्म-जागरूकता की खामोशी छाई हुई थी। धीरे-धीरे उसके कान, नाक, आंखें और त्वचा गहरी नींद में डूबते चले गए।

—•✳•—

अध्याय 15

अगली सुबह वे सब जल्दी उठ गए। हालाँकि किसी ने भीम को नहीं जगाया, वह स्वयं ही जाग गया। उन्होंने उस दिन लंबी यात्रा की योजना नहीं बनाई थी। उन्होंने जंगल की सीमा तक पहुँचने और फिर रात भर वहीं डेरा डालने का निर्णय लिया था। जंगल की यात्रा अगली सुबह ही शुरू होनी थी। नदी के उस पार का इलाका घने पेड़ों से भरा था। खेती योग्य भूमि बहुत कम थी। गाँव दूर-दूर तक फैले हुए थे। सुबह से ही जब उन्होंने यात्रा शुरू की थी, भीम का मन बच्चों के ख्यालों से भरा हुआ था। इंद्रप्रस्थ में वह रोज़ उनके साथ खेला करता था। सर्दियों में वह उन्हें रेतीले किनारे पर खेलने देता था और गर्मियों में उन्हें पानी में धकेल देता था। उसे याद था कि कैसे बच्चे उसे देखते ही खुशी से उसके शरीर पर चढ़ जाते थे और नाचने लगते थे। राजसूय के समय प्रतिविंध्य ने अभी-अभी नौ वर्ष पूरे किए थे। बाकी बच्चे क्रमशः आठ, सात, छह और पाँच वर्ष के थे। सबसे बड़ा बच्चा कभी भीम से दूर नहीं रहता था और उसे प्यार से 'पिताजी' कहकर पुकारता था। भीम

मन ही मन सोचने लगा, "जब धर्म ने जुए में राज्य हार दिया और जब कृष्ण ने बच्चों को अपने मायके भेजने का फैसला किया और उन्हें अपने साथ वनवास में नहीं ले जाने दिया, तब बच्चे मेरे पास आए, मुझे गले लगाया और रोते हुए बोले, 'पिताजी!' हमें तेरह साल तक उनसे अलग रहना था। राज्य हारने पर तो मैं नहीं रोया। लेकिन बच्चों को छोड़ना मेरे लिए असहनीय था। पास ही सिर झुकाए खड़े धर्म के प्रति मेरा क्रोध और भी तीव्र हो गया। लेकिन अब बच्चे बदल गए हैं। वे इतने अजीब क्यों हो गए हैं? वे लगभग चार महीने से उपप्लव्य में हैं। फिर भी उनमें पहले जैसी आत्मीयता नहीं दिखती। उनमें क्षत्रिय बच्चों में आम तौर पर पाई जाने वाली जीवन की उमंग की कमी दिखती है। वे इतने सुस्त और अस्वाभाविक रूप से शांत दिखते हैं। वे ऐसे क्यों हो गए हैं? जब मैंने प्रतिविंध्य को अपने पास खींचा और गले लगाया, तो उसने बस मुझे आदरपूर्वक प्रणाम किया। वह सिर झुकाए खड़ा रहा। बहुत आज्ञाकारी। उसके चेहरे पर कोई प्यारी सी मुस्कान नहीं खिली। चेहरा। वह चौबीस साल का एक युवक था। बाकी भी कुछ खास अच्छे नहीं थे। उन्हें क्या हो गया है? क्या दृष्टद्युम्न ने उनकी ठीक से देखभाल नहीं की? क्या उनकी पत्नी उदासीन थी? हालाँकि सुबह काफी ढल चुकी थी, सूरज की रोशनी नहीं आ रही थी, शायद घने पत्तों के कारण। उसका शरीर पसीने से तरबतर था। लेकिन ठंडी हवाओं के कारण उसे असहज महसूस नहीं हो रहा था। हालाँकि पेड़ कम थे, लेकिन वे विशाल थे। भीम ने नीला को किसी से कहते हुए सुना, "लगता है आगे एक गाँव है। हमें वहाँ पूछताछ करनी चाहिए।" भीम को लगा कि बढ़ते बच्चों को पिता से दूर नहीं रखना चाहिए; अन्यथा वे अजनबी बन जाएँगे। उसे लगा कि आखिरकार उसे उस समस्या का समाधान मिल गया है जो उसे परेशान कर रही थी, और उसका मन उसी में लगा रहा। उसका मन बार-बार यही दोहरा रहा था कि बच्चे अजनबी बन जाएँगे। वह मन ही मन सोचने लगा, "दृष्टद्युम्न निःसंदेह एक महान योद्धा है। फिर भी मुझे स्वयं बच्चों को धनुर्विद्या और युद्धकला सिखानी चाहिए थी। उन्हें अच्छे भोजन के बाद कठिन व्यायाम करके शरीर को तरोताज़ा करना सिखाना चाहिए था। ऐसे अभ्यासों में तलवारबाज़ी, गदा-युद्ध, भाला और कुल्हाड़ी का प्रयोग शामिल हो सकता था। लेकिन दुर्भाग्य से पाँचों बच्चों में से किसी का भी शरीर गदा-युद्ध सीखने के लिए उपयुक्त नहीं था। क्या उनके दादा के घर में बढ़ते बच्चों के लिए आवश्यक पौष्टिक भोजन की कमी थी?" भीम क्रोधित हो गया। उसने उन्हें घृणा से ऐसे लोगों के रूप में देखा जिन्हें खाना नहीं आता। उनकी

दिशा बाईं ओर बदल रही थी। दाईं ओर सूर्य अधिक तीव्र था क्योंकि परिदृश्य वृक्षों से रहित था। सफेद गायों का एक झुंड उनके पास से गुजरा। झुंड के साथ चल रहे कुत्ते उन पर भौंकने लगे। इतने सारे घोड़ों और सवारों को देखकर वे सभी अभिभूत हो गए और चले गए। गायें डरी नहीं थीं। ग्वालों ने उन्हें एक तरफ ले जाकर रास्ता दिखाया। नीला ने उन्हें राक्षस देश का मार्ग पूछने के लिए बुलाया। उन्हें पता चला कि जंगल की सीमा आगे वाले गाँव से लगभग बारह मील बाईं ओर होगी। ग्वालों ने और कोई जानकारी नहीं दी। ऐसा लगता था कि वे अपने मवेशियों को चराने के लिए उस तरफ कभी नहीं जाते थे। उन्होंने यह भी कहा कि जिस गाँव में वे पहुँचने वाले थे, वह आखिरी गाँव था। सवारों सहित घोड़ों का जुलूस फिर से चलने लगा। जैसे ही वे उस गाँव से थोड़ा आगे बढ़े, अचानक उनके मन में एक विचार आया। द्रुपद के घर में अच्छे और पौष्टिक भोजन की कोई कमी नहीं रही होगी। भीम को द्रौपदी से विवाह के बाद हुए भव्य भोज याद आए। उन्हें विशेष रूप से याद आया कि दृष्टद्युम्न उनकी भोजन ग्रहण करने की क्षमता की कितनी प्रशंसा करते थे। फिर भी, बच्चों का शरीर केवल धनुर्विद्या सीखने के लिए ही उपयुक्त था, कुश्ती और गदा-युद्ध जैसे सीधे शारीरिक युद्धों के लिए नहीं। वे भीम के योग्य नहीं थे। उन्होंने देखा कि वे कद-काठी में उनके समान नहीं थे। वास्तव में, वे मुश्किल से उनके कंधों तक ही पहुँचते थे। वे धर्म, अर्जुन, नकुल और सहदेव के समान थे। उसने मन ही मन कहा, "ये किस तरह के पहलवान बन सकते हैं!" यह विचार उसके मन में एकदम नया था। घोड़ों की चाल धीमी हो गई। उसका घोड़ा उसके भारी शरीर के भार से धीरे-धीरे चलने लगा।

वे दोपहर से पहले ही रुक गए। सुबह की परछाइयाँ अभी भी लंबी थीं। घने छायादार जंगल की अभी शुरुआत ही हुई थी। गर्मी बहुत कम थी। पेड़ इतने ऊँचे थे कि उनकी चोटी देखने के लिए गर्दन ऊपर उठानी पड़ती थी। उनकी घनी छाया में हरे-भरे पौधे, लताएँ और झाड़ियाँ उग रही थीं। वे मीलों तक फैली हरी छतों की तरह दिख रही थीं। दूर पेड़ों और लताओं के तनों के बीच से उन्हें चट्टानों की एक श्रृंखला दिखाई दी। भीम को अब याद आया कि ये चट्टानें राक्षसों की भूमि की सीमा थीं। क्या यह दक्षिण की ओर थी? हाँ, भीम ने सोचा। उसे अब याद आया। इसी रास्ते से वे जंगल छोड़कर बिना किसी उद्देश्य के आगे बढ़ने लगे थे। कृष्ण द्वैपायन की सलाह पर ही वे एकाचक्रपुरा नगर की यात्रा पर निकले थे। इस तरह याद आने पर, उसकी स्मृति फिर से जीवंत होने लगी, एक-एक करके ठोस विवरण याद आने

लगे - चट्टानें, नदियाँ, उतार-चढ़ाव, हाथियों के ठिकाने, पक्षियों के घोंसलों से भरे उपवन। जंगल वैसा ही था। ज़मीन जली नहीं थी और खेती योग्य नहीं बनी थी। इसका मतलब था कि रास्ता सही सलामत था और वे भटक नहीं सकते थे। खाना पकाने के लिए दो लोगों को चुना गया। बाकी लोगों ने ठंडे पानी में डुबकी लगाकर घोड़ों को तब तक रगड़ा जब तक वे चमकने न लगें। अचानक भीम उदास और चुप हो गया। पूरे दिन आराम करने का फैसला किया गया, आधे लोग बारी-बारी से पहरा देंगे और बाकी आधे सोएंगे। अगली सुबह उन्हें यात्रा फिर से शुरू करनी थी, भीम रास्ता दिखाएगा। उन्होंने अनुमान लगाया कि दोपहर तक वे अपने गंतव्य पर पहुँच जाएँगे। भीम ने सोचा, "अगर इस समय भी हम वापस लौट जाएँ तो?" यह सोचकर उसका मन हल्का हो गया। बेशक, वह जानता था कि इस समय वापस लौटने का कोई रास्ता नहीं था। उसे कृष्ण का वह ज्ञानवर्धक वचन याद आया कि चाहे किसी को व्यक्तिगत रूप से पसंद हो या न हो, अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने और अपने युद्ध जीतने के लिए उसे कुछ काम करने ही पड़ते हैं। वह अनिच्छुक था लेकिन धर्म और अर्जुन ने उसे इस मिशन को पूरा करने के लिए मजबूर किया था। अब वह खाली हाथ कैसे लौट सकता था? उसे खाना तैयार होने तक झपकी लेने का मन कर रहा था। वह सोचने लगा, सालकटंकति अब कैसी दिखती होगी? क्या वह लगभग उसी उम्र की नहीं थी? उसकी असली उम्र क्या थी? भीमा को एहसास हुआ कि उसने उससे कभी इस बारे में पूछा ही नहीं था। और न ही उसने खुद बताया था। भीम मन ही मन सोचने लगा, "वह मेरे लिए दीवानी थी। उसने गिड़गिड़ाकर मुझसे विनती की और रोई। हमें शरण चाहिए थी। मैं उसके साथ रहा। वह मेरे लिए बिल्कुल उपयुक्त स्त्री थी। आर्यों की भूमि में कद-काठी में उसके बराबर कोई स्त्री नहीं थी। यद्यपि वह मेरे गर्भ में पल रही थी और गर्भवती थी, लेकिन उसकी ऊँचाई के कारण यह दिखाई नहीं देता था। उसने अपने पेट में उस बड़े बच्चे को बड़ी सहजता से संभाला हुआ था। लेकिन जन्म के समय भी वह बच्चा इतना बड़ा था कि मेरी जांघ को ढक लेता था। आखिर वह भीम का बच्चा था। मुझे बताया गया था कि जन्म के समय मैं ऐसा दिखता था। वास्तव में, माँ ने कहा कि यह बच्चा तो मुझसे भी बड़ा था। मुझे माँ पर बहुत गुस्सा आया। उसने मुझे उस बड़े बच्चे और उसकी माँ से क्यों दूर कर दिया? क्या इसलिए कि उसे डर था कि अगर मैं वहाँ और रहता, तो मैं उस बच्चे से बहुत अधिक आसक्त हो जाता और हमेशा के लिए वहीं रहना पसंद करता? उसने उस बच्चे को ज़्यादा छुआ भी

नहीं। कभी चूमा नहीं, दुलारा नहीं। उसने मुझे रोती हुई माँ से दूर खींच लिया और फिर यह सुनिश्चित किया कि मैं उस भूमि से चला जाऊँ। उस समय वह दुष्ट प्रतीत होती थी।" नींद की गोद में आते ही उसकी आँखें धीरे-धीरे बंद हो गईं। उदासी का भाव हर पल बढ़ता जा रहा था। लेकिन जल्द ही नींद ने उसे अपने शिकंजे में ले लिया।

कुछ देर बाद नीला ने उन्हें जगाते हुए कहा, "महाराज, खाना तैयार है। जब तक आप खाना खत्म नहीं कर लेते, बाकी लोग नहीं खाएंगे। क्या आप उठकर स्नान नहीं करेंगे?"

भीमा झटके से उठा। वह धीरे-धीरे बहते पानी की ओर बढ़ा। पानी ठंडा और शरीर को सुकून देने वाला था। वह पानी में उतर गया और गर्दन तक डूब गया। वहाँ बैठे-बैठे उसे उस बच्चे की याद सताने लगी। उन्हें याद था कि वे उसे पानी में नहलाते थे, फिर जब वह बड़ा हो गया तो उसकी कमर में रस्सी बांधकर उसे तैरना सिखाते थे, बच्चे को अपनी पीठ पर बिठाकर नाचते थे, अपना आधा खाना उसे खिलाने के लिए बचाते थे, और... लेकिन यह बच्चा वह नहीं था - यह तो प्रतिविंध्य, श्रुतसेना, श्रुतकीर्ति, शतानीका थे और यह यमुना में था, और यह उसके रेतीले किनारे पर और उसके पानी में था जहाँ उन्होंने बच्चों को उछाला था जब वे खुशी से चिल्ला रहे थे, "पिताजी, कृपया मेरे साथ फिर से ऐसा कीजिए!" भीम का पेट चौड़ा था, और वह उसे शिकार किए गए जानवरों के मांस, पकी हुई जड़ों और फलों से भरपेट खिलाती थी, यह कहते हुए, "तुम्हारा पेट भेड़िये जैसा बड़ा है! तुम मेरे भेड़िये हो, मेरे अपने भेड़िये!" भीम ने सोचा, "उसने मेरे पेट को कैसे चूमा, उसे गले लगाया! उस बच्चे का पेट अब मेरे जितना बड़ा हो सकता है। उसने उसे उदारतापूर्वक खिलाया होगा।"

भीमा पानी में बिना हिले-डुले बैठा रहा, अपने शरीर को नहीं रगड़ रहा था। नीला उसके पास आई और उसे फिर से भोजन के लिए बुलाया। भीमा उठा और धूप में अपना शरीर सुखाया। “मैंने उसका पालन-पोषण नहीं किया, उसे बेटे की तरह बड़ा नहीं किया। मैंने उसके खून, मांसपेशियों और हड्डियों के विकास में मदद नहीं की। क्या वापस जाना बेहतर नहीं था बजाय इसके कि मैं उससे उस शरीर का बलिदान करने को कहूँ जिसे मैंने पोषण देने की परवाह नहीं की, अपने उद्देश्य के लिए, अपने लिए बलिदान करने को कहूँ?” यह विचार उसे भोजन करते समय परेशान कर रहा था। भोजन के बाद, सभी लोग आराम करने लगे और

झपकी लेने लगे, उनमें से दो को जागते रहने के लिए छोड़ दिया गया। वे ठंडी छाँव में सो गए। पल भर में वे गहरी नींद में सो गए। भीमा के लिए चटाई बिछाने और उसे चादर ओढ़ाने के बाद, नीला सो गई। हालाँकि वह सोने से लड़ रहा था, शरीर ठंडी छाँव के प्रलोभन का विरोध नहीं कर सका और सो गया। लेकिन भीमा सो नहीं सका। उसका मन उसे मिशन से दूर खींच रहा था, लेकिन उसे अपने अनुयायियों को मिशन पूरा किए बिना वापस लौटने के लिए कहना असंभव लग रहा था। कुछ समय बाद वह उठा और बैठ गया। फिर वह उठा और घनी झाड़ियों से ढकी ज़मीन पर उत्तर दिशा में फैले हुए उस बड़े पत्थर की ओर चल पड़ा। यह पत्थर राक्षसों की भूमि की दक्षिणी सीमा निर्धारित करता था। वह पत्थर पर चढ़ गया और चुपचाप बैठ गया, चारों ओर फैले परिदृश्य को निहारता रहा। जंगल के बारे में ठोस विवरण उसे याद आ गए। अब वह जानता था कि आकाश तक पहुँचने वाले उस ऊँचे वृक्ष के पार कंटीली झाड़ियों का एक छोटा सा जंगल था। उसके बाईं ओर मुड़कर और एक धारा पार करके, यदि कोई सीधा चलता रहे, तो वह उस जंगल तक पहुँच जाएगा जहाँ सालकटंकती निवास करती थी। उसने अनुमान लगाया कि यदि वे तुरंत चलना शुरू करें, तो वे रात तक पहुँच जाएँगे। एक बार फिर उसे अपनी माँ पर अंदर ही अंदर गुस्सा आया। तभी उसने दो राक्षसों को देखा। वे भीम के ही समान आयु के प्रतीत होते थे। उन्होंने भीम को देख लिया था। उन्होंने भीम पर ऐसे निगाहें गड़ा दीं जैसे बाघ किसी दुश्मन को घूरते हैं। उनके पास धनुष और बाण थे। भीम जानता था कि वे बिना किसी चेतावनी के अपने विषयुक्त बाण चला सकते हैं। अचानक राक्षसों की बोली याद आने पर उसने चिल्लाकर कहा, "तुम कौन हो? इधर आओ।" वे हिले तक नहीं।

भीमा ने कहा, "देखो, मैं तुममें से ही एक हूँ। क्या तुम सालकटंकति को जानते हो?" उनके चेहरे से डर थोड़ा कम हो गया। भीमा स्वयं नीचे उतरे और उनकी ओर बढ़े। वे स्थिर खड़े होकर उन्हें पास आते हुए देखते रहे, निहत्थे, बिना धनुष, बाण, गदा या टूटी हुई शाखा के, वे शांत दिख रहे थे। पास आकर भीमा ने उनसे पूछा, "तुम्हारा राजा कौन है?"

उन दोनों में से एक ने उत्तर दिया, "घटोत्कचा।"

"भीम, घटोत्कच की माँ सालकटंकटी कहाँ है?"

रक्सासा ने कहा, "ठीक वहीं, उसके बेटे के बगल वाले पेड़ पर।"

भीमा, "तुम अभी वहीं जाओ और उसे बता दो कि घटोत्कच के पिता भीमा आ गए हैं। उसे बताओ कि वह इस चट्टान के दूसरी ओर डेरा डाले हुए हैं और उससे मिलने आए हैं।"

उनमें से एक ने पहचान के संकेत देते हुए कहा, "ओह, हाँ! अब मैं आपको पहचान गया। क्या अब अट्ठाईस साल नहीं हो गए? हाँ, मैंने आपको तब देखा था। मैं ही वह व्यक्ति था जो आपको शिकार किए गए जानवरों का ताजा मांस रोज़ाना पहुँचाता था। क्या आपको मैं याद हूँ? मैं राका हूँ।"

भीमा को याद आ गया। उसकी याददाश्त फिर से जाग उठी। हाँ, यही वह आदमी था, लेकिन अब उसके आधे दांत गायब थे!

Bhima, "How is Salakatankati?"

राका ने कहा, "आपके जाने के बाद, उसने मांस, पेय, जड़ और फल सब त्याग दिए, और अपना आपा खो बैठी। अगर बच्चा न होता, तो शायद वह भूख से मर जाती! वह सिर्फ उस बच्चे के लिए जीती थी।" भीम का हृदय पीड़ा से भर उठा। उसे अपनी पत्नी पर, उसके प्रेम और निष्ठा पर गर्व था। उसे लगा कि उसका यहाँ आना व्यर्थ नहीं गया। राका ने आगे कहा, "दो-तीन साल तक उसने किसी भी पुरुष से दूरी बनाए रखी।" ये आखिरी शब्द सुनकर उसका गर्व अचानक चूर-चूर हो गया। वह सोचने लगा कि क्या इसका मतलब यह है कि उसने बाद में किसी पुरुष से संबंध बनाए होंगे, और वह कैसा पुरुष होगा। उसने आह भरी, 'कैसी स्त्री!' वह क्रोधित हो उठा, और उस नए पुरुष को पकड़कर गला घोंटने के लिए बेचैन हो गया। दांत पीसते हुए राका ने कहा, "आज भी वह तुम्हें याद करती है। आज भी वह रोती है कि तुमने अपनी माँ की सलाह मानकर उसे छोड़ दिया। इतने सालों से वह यही पूछती आ रही है, 'क्या वह एक बार भी वापस नहीं आ सकता?' फिर वह रोने लगती है। यह तुम्हारे जाने के चार-छह साल बाद की बात है। मैं उसे तुम्हारे आने की खबर दूंगा। मुझे यकीन है कि वह इतनी खुश होगी कि मुझे पायल भेंट करेगी।" वह अपने साथी के साथ एक ही सांस में रानी को खुशखबरी देने के लिए दौड़ पड़ा। वे उसी रास्ते पर चले जिसे भीम अब अपनी याद में फिर से बना रहा था। दोनों आसमान छूते गोनी वृक्षों के पास से गुजरते हुए ओझल हो गए।

भीम उस शिलाखंड के पास लौट आया और उस पर उकड़ू बैठ गया। उसका मन उन विचारों के भंवर में फंसा हुआ था जिन पर उसका कोई नियंत्रण नहीं था। अनेक प्रकार की भावनाएँ उस पर हावी हो गईं - क्रोध, पश्चाताप, अपमान, बेबसी।

शिलाखंड मनुष्य की ऊँचाई से चार गुना ऊँचा था। वह इतना विशाल था कि सूर्य चाहे जिस दिशा में भी झुके, उसकी एक हथेली भर धूप भी उस पार नहीं पहुँच पाती थी। भीम उस पर चेहरा ऊपर करके लेटा रहा। उसे इस बात का कोई डर नहीं था कि सोते समय कोई राक्षस पत्थर के डंडे से उसकी खोपड़ी तोड़ देगा। उसका क्रोध अपनी माँ के विरुद्ध तो बढ़ ही रहा था, साथ ही स्वयं के विरुद्ध भी।

उस रात कोई चैन से नहीं सो सका। जंगल में कहीं से हाथियों का झुंड चिंघाड़ रहा था। बीच-बीच में बाघों की दहाड़ सुनाई दे रही थी। लेकिन आधी रात तक भीम खुद गहरी नींद में सो रहे थे। थोड़ी देर बाद उनकी नींद खुल गई। उन्होंने चट्टान की दिशा से ढोल की आवाज़ सुनी। उस तेज़ आवाज़ से सब जाग गए। आवाज़ धीरे-धीरे करीब आती जा रही थी। जल्द ही उन्होंने मशालें लहराती देखीं। मशालधारी चट्टान पर चढ़ गए और ढोल बजाने वालों और धनुष-बाण, गदा, भाले और गुलेल जैसे हथियार लिए अन्य लोगों के साथ खड़े हो गए। यह दृश्य देखकर भीम के शिविर में दहशत फैल गई। डर से घोड़े बिना हिले-डुले हिनहिनाने लगे और वे चबाने और रगड़ने लगे। भीम ने उठते हुए उन्हें हिम्मत देने की कोशिश की। वह अकेले चट्टान की ओर चल पड़े, लेकिन आधे रास्ते में रुक गए। ढोल बजना बंद हो गया। भीम चिल्लाए, "मैं भीम हूँ। घटोत्कच के पिता। आप कौन हैं?"

भीमा के अंगरक्षक उन शब्दों को सुनकर चकित रह गए, जो उनकी अपनी भाषा जैसे लग रहे थे, लेकिन उनका उच्चारण कहीं अधिक ऊँची पिच में किया गया था। शब्दों के क्रम में भी कुछ अंतर था।

एक व्यक्ति चट्टान से नीचे उतरा, जिसके दोनों ओर मशाल लिए हुए लोग थे। भीम ने आती हुई आकृति पर अपनी निगाहें गड़ा दीं। वह बिल्कुल भीम की ही छवि थी, वही नया चेहरा लिए हुए भीम। शायद इस उम्र में वह पहले से लंबा और हृष्ट-पुष्ट रहा होगा, लेकिन चेहरे की बनावट स्पष्ट रूप से उसी की थी। ऐसा चेहरा मानो किसी भी पेड़ की डालियाँ तोड़कर किसी भी जंगली जानवर पर झपटने को तैयार हो। भीम ने फुसफुसाते हुए कहा, "तुम घटोत्कच होगे!" अजनबी पास आया और आदरपूर्वक अपना सिर भीम के घुटनों से छुआ। फिर चार और युवक चट्टान से नीचे उतरकर उनकी ओर बढ़े। उनके हाथों में मशालें थीं और वे पूर्ण विकसित, राक्षस स्वरूप के थे। फिर भी उनमें घटोत्कच का कद-काठी नहीं थी। उनमें पेड़ों को उखाड़ने की शक्ति और हाथियों जैसी ताकत नहीं थी। उन्होंने भी घटोत्कच की

ही तरह भीम के सामने सिर झुकाया। घटोत्कच ने उनका परिचय कराते हुए कहा, "ये सब मेरे भाई हैं।" फिर वे सब भीम के चारों ओर जमा हो गए।

घटोत्कच ने समझाया, "माता यहाँ आने के लिए निकली थीं। लेकिन हमने उनसे कहा कि हम आपको वहाँ ले जाएँगे। देखिए, अगर वह सीमा तक आने-जाने का सफर करेंगी तो उनके पैरों में दर्द होगा। उनकी शक्ति अब कम हो गई है।"

यह तय किया गया कि भीम तुरंत उनके साथ चलें। लेकिन उस देश के राजा घटोत्कच भीम के दल को ले जाने के लिए तैयार नहीं थे। उन्होंने कहा, "आप मेरे पिता हैं। मेरी माता के पहले पति। इसका अर्थ है कि आप हम सबके पिता हैं। लेकिन इन विदेशियों को हमारे देश में प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यह हमारी परंपरा के विरुद्ध है। इन्हें यहीं रहने दीजिए। हम अपने लगभग बीस सैनिकों को इनकी सुरक्षा के लिए यहाँ छोड़ रहे हैं। लेकिन ये बीस सैनिक हमारी तरफ चट्टान के उस पार तैनात रहेंगे। वे इस बात का ध्यान रखेंगे कि जंगली जानवरों या राक्षसों से आपके साथियों को कोई हानि न पहुँचे..."

नीला को स्थिति समझाने के बाद भीम राक्षस देश के लिए रवाना हो गए। जब वे पत्थरों को पार कर रहे थे, घटोत्कच भीम के सामने घुटनों के बल बैठ गया और बोला, "कृपया मेरे कंधे पर बैठ जाइए।" भीम असमंजस में पड़ गए। उन्होंने अपने पुत्र के कंधे पर बैठने से इनकार कर दिया। "देखो पुत्र," उन्होंने कहा। "मैंने हमेशा लोगों को अपने कंधे पर उठाया है, लेकिन मुझे कभी किसी के कंधे पर बैठने की आवश्यकता महसूस नहीं हुई। अभी भी मैं इतना कमजोर नहीं हूँ कि मुझे ऐसे सहारे की आवश्यकता हो।"

घटोत्कच आसानी से हार मानने वाला नहीं था। उसने उत्तर दिया, "माता ने आदेश दिया है। उन्होंने मुझे आदेश दिया है कि मैं अपने पिता को अपने कंधे पर उठाकर उनके पास ले जाऊं।" भीम नहीं बैठा, और घटोत्कच भी अपनी जगह से नहीं उठा। भीम के "नहीं" कहने पर भी घटोत्कच टस से मस नहीं हुआ। वह चुपचाप और स्थिर बैठा रहा, मानो कोई राजसी हाथी राजा को अपनी पीठ पर चढ़ाने के लिए घुटने टेक रहा हो। गतिरोध तब टूटा जब भीम उसकी गर्दन पर कमर झुकाकर बैठ गया और अपने दोनों पैर उसके कंधों से लटका दिए। घटोत्कच ने बड़ी सहजता से अपना भार उठाया और फिर सरपट दौड़ने लगा। उसकी चाल इतनी ऊर्जावान और गति इतनी तेज थी कि भीम मन ही मन सोचने लगा, "अरे वाह, कितनी तेज दौड़ रहा है! मुझे नहीं पता कि मेरी उम्र में मुझमें

इतनी शक्ति थी या नहीं! नहीं, नहीं, मुझमें तो थी ही नहीं!" घटोत्कच ने ऊंचाई का चतुराई से अनुमान लगाया और रास्ते में आने वाली शाखाओं को हटाता चला गया। उसके कंधे सख़्त लकड़ी की तरह सख्त लग रहे थे। उसकी छाती मांसल भुजाओं के अनुरूप चौड़ी थी और उसकी बाँहें लोहे की मुट्ठी जितनी मज़बूत थीं। यह सब देखकर भीम अत्यंत उत्साहित हो गया। वह गर्मी की लंबी यात्रा की थकान, आने वाले युद्ध और कई दिनों की सुस्ती को भूल गया—अपने पुत्र के बल को निहारते हुए वह सब कुछ भूल गया। घटोत्कच एक पल के लिए भी नहीं रुका, साँस लेने के लिए भी नहीं ठहरा। उसने अपने ऊपर उठाए हुए व्यक्ति का भार कम करने के लिए उसकी स्थिति भी नहीं बदली। उसी तेज़ गति से चलते रहने पर भीम के शरीर से पसीने की बूँदें टपकने लगीं। घटोत्कच के शरीर से भी चिपचिपा पसीना निकला। इस प्रकार उठाने वाले और उठाए जाने वाले का पसीना आपस में मिल गया। इस अनुभव ने भीम को शक्ति की एक नई धारा का अनुभव कराया, मानो वह तीस वर्ष का युवक हो! उसका सीना नई शक्ति से फूल गया।

भोर होने से पहले वे अपने निवास स्थान के उपवन में पहुँच गए। उनके आगमन की आहट उपवन में पहुँचते ही ढोल बजने लगे। लगभग आठ-दस लोग नाचने लगे। एक वृक्ष के नीचे आग जल रही थी। भीम ने अब उस वृक्ष को पहचान लिया, जिस पर वह और सालकटंकति एक वर्ष तक बाँस के घोंसले में पति-पत्नी के रूप में साथ रहे थे। तब से वृक्ष अधिक नहीं बढ़ा था, और वह पहले जैसा ही था। शीघ्र ही भीम ने सालकटंकति को देखा। वह बूढ़ी हो चुकी थीं और उनका शरीर ढीला पड़ गया था। हालाँकि वह काफी मजबूत थीं, लेकिन उनके चेहरे पर झुर्रियाँ थीं और बाल कम हो गए थे। फिर भी भीम ने उन्हें एक पल में पहचान लिया। घटोत्कच अपनी माता के सामने खड़ा था। गिरते ही उसने भीम को हाथी की तरह घुटनों के बल बिठा दिया और फिर उसके हाथों को घुटनों से छुड़ा लिया। उठने से पहले भीम ने झुककर अपनी नाक अपने पुत्र के सिर से लगाई और तीन गहरी साँसें लीं।

जब भीम उसके सामने खड़ा था, सालकटंकति ने उसकी भुजाओं को कसकर पकड़ लिया। भीम ने महसूस किया कि उनमें वही पुरानी शक्ति झलक रही है। फिर उसने दोनों हाथों से उसके शरीर, हाथों और चेहरे को धीरे से सहलाया। फिर अचानक वह एक कदम पीछे हटी और मुट्ठियों से उसकी पीठ पर लगभग आठ बार प्रहार किया। उसका चेहरा कठोर हो गया और उसकी आँखें लाल हो गईं।

बार-बार उसका नाम पुकारते हुए, उसने मुट्ठियाँ बंद कर लीं और भीम पर प्रहार करने लगी। वह चुपचाप सिर झुकाए खड़ा रहा। फिर उसने अपनी बंद मुट्ठियाँ खोलीं और उसकी पीठ और भुजाओं पर इतनी तेज़ी से प्रहार किए कि त्वचा पर लाल निशान पड़ गए। फिर भीम एक इंच भी नहीं हिला। अंततः उसने मारना बंद कर दिया और उसके सामने खड़ी हो गई। फिर उसने दोनों हाथों से उसका झुका हुआ चेहरा उठाया और उसकी आँखों में अपनी दृष्टि गड़ा दी। अचानक उसकी आँखें आँसुओं से भर गईं। वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी और बार-बार भीम का नाम पुकारने लगी। फिर उसने एक बार फिर उसकी दाहिनी भुजा पर ज़ोरदार प्रहार किया!

उसी समय एक युवती वृक्ष से नीचे उतरी। उसका शरीर राक्षसी स्त्री के पूर्ण विकसित शरीर जैसा था। उसका शरीर सामान्य राक्षसी स्त्री से भी बड़ा था। अन्य राक्षसी स्त्रियों की तरह, उसकी कमर पर पशु की खाल लिपटी हुई थी। उसके सुविकसित, उभरे हुए स्तन पूरी तरह से नग्न थे। उसका गला, भुजाएँ और पैर हाथीदांत के आभूषणों से सुशोभित थे। और उसके पास चमकते हुए पत्थरों के मनके थे। उसके गले में कल की माला अस्त-व्यस्त और खुरदरी लग रही थी। वृक्ष से उतरते समय, उसने अपने बाएँ हाथ में एक बालक को पकड़ रखा था। उसे देखते ही भीम समझ गया कि वह घटोत्कच की पत्नी होगी। और बालक, उसके पोते का पुत्र होगा। वह भीम के पास आई और बालक को उसके चरणों में रख दिया, और स्वयं झुक गई, उसका चेहरा भीम के घुटनों को छू रहा था। भीम ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है?"

"Karnakatankati "

भीमा ने बच्चे को गोद में उठा लिया, जो इतना बड़ा था कि उसके हाथ उसे मुश्किल से ही ढक पा रहे थे। उसका रंग लालिमा लिए था। शरीर अपने पिता जैसा था। वह मुश्किल से तीन-चार महीने का था। उसने बच्चे को सीने से लगा लिया और धीरे से उसकी पीठ पर हाथ फेरा। उसने पूछा, "इसका नाम क्या है?"

"बारबराका," माँ ने उत्तर दिया।

—•⁕•—

अध्याय 16

भीमा थका हुआ महसूस कर रहा था। वह स्नान करना चाहता था। उसे याद आया कि उपवन के सामने एक छोटा सा तालाब है। उसने कहा, "मैं स्नान करना चाहता हूँ।" सलाकटंकति उसके पीछे-पीछे चलते हुए बोली, "चलो, मैं तुम्हारे साथ चलती हूँ।" रास्ते में उसने कुछ नहीं कहा। दिन का उजाला था। घने पत्तों के नीचे समय का पता लगाना मुश्किल था। तालाब के पास लगभग तीस-चालीस राक्षस थे। वे वहाँ सुबह की स्नानागार करने गए थे। सलाकटंकति को देखकर वे तालाब से दूर हट गए। उसने एक नीम की टहनी तोड़ी और उसे दो भागों में बाँट दिया। उसने एक टुकड़ा भीमा को दिया और एक अपने पास रख लिया। दोनों नीम की टहनियों से अपने दाँत साफ करने लगे। भीमा को थोड़ी शर्मिंदगी महसूस हो रही थी।

दांत साफ करते हुए उसने पूछा, "तुम मेरे साथ आई हो। इस पर तुम्हारे पति क्या कहेंगे? क्या वह चुप रहेंगे?"

उसने पूछा, "मेरा दूसरा पति कौन हो सकता है?"

भीमा ने पूछा, "क्या इसका मतलब यह है कि तुमने दोबारा शादी नहीं की? लेकिन घटोत्कच ने मुझे चार युवकों को अपने भाई के रूप में दिखाया था।"

सालकटंकति ने तुरंत जवाब नहीं दिया। उसने नीम की टहनी फेंक दी, अपना मुँह और चेहरा धोया। फिर वह भीम के पास आई। उसके हाथ पकड़कर, उसकी आँखों में देखते हुए बोली, "हमारी प्रथा के अनुसार, यदि पति एक वर्ष के लिए भाग जाए, तो पत्नी पुनर्विवाह कर सकती है, क्योंकि ऐसे पति को मृत के समान माना जाता है। और क्या तुमने मुझसे वादा किया था कि तुम लौटोगे? फिर भी, मैंने चार साल तक तुम्हारा इंतज़ार किया। क्या राक्षस जाति यह बर्दाश्त कर सकती थी कि उनकी रानी के कई बच्चे न हों? फिर भी, मैंने कभी किसी और से विवाह नहीं किया। मैं बस एक पुरुष के साथ सहवास में रही, और उससे चार बच्चे हुए। बस इतना ही।"

भीम चुप था, उसका सिर झुका हुआ था। फिर उसने अपने हाथ उसके हाथों से छुड़ा लिए। थोड़ी देर बाद उसने नीम की टहनी फेंक दी और मुँह धोया। उसके बाद वह तैरने के लिए पानी में कूद गया। उसने उसकी तरफ देखा तक नहीं। वह

चुपचाप तैरता रहा, उसके हाथ-पैर पानी में डूबे हुए थे। वह आगे बढ़ा। पहली लहर जल्द ही शांत हो गई। फिर शांत पानी आया जिसमें वह अपने आप ही धीरे-धीरे तैरने लगा। तभी उसने सालकटंकटी की आवाज़ सुनी, "बस इधर मुड़ो।" वह भी उसकी तरफ तैर रही थी। भीम ने अपनी गति धीमी कर दी ताकि वह उसके साथ आ सके। उसके पास पहुँचकर उसने कहा, "तुमने लौटने का कोई वादा नहीं किया था। इसलिए तुम कह सकते हो कि मैंने वादा नहीं तोड़ा," और इस मुद्दे को चतुराई से टाल सकते हो। लगता है तुम पाँचों भाई जुए में हारने के बाद बारह साल जंगल में वनवास में रहे। अगर तुम्हें बारह साल जंगल में ही बिताने थे, तो हमारे जंगल में भी बिता सकते थे। क्या यह जंगल काफी नहीं है? तो फिर तुम यहाँ क्यों नहीं आए? क्या तुम्हारी माँ ने तुम्हें रोका? मैंने कभी तुम्हारी माँ की बात नहीं मानी, न ही कभी ऐसा कुछ किया जिससे उनका अपमान हो। तो फिर बताओ, उन्होंने मुझे क्यों नहीं अपनाया?"

भीमा भी सोचने लगा, "उन्होंने ऐसा क्यों नहीं किया?" उसके मन में यह सवाल खामोशी की गहराई से उठ रहा था, ऐसी खामोशी जैसे तालाब का पानी स्थिर हो। इस जंगल में लौटने का ख्याल उसके मन में कभी आया ही नहीं था। क्या यह कृष्ण की संगति के कारण था? नहीं, नहीं... यह सवाल कि ऐसा क्यों नहीं हुआ, उसके मन को कीड़े की तरह खा रहा था। उसे शर्म आ रही थी। वह कुछ नहीं बोली। भीमा बस बिना तैरे ही पानी में तैरने लगा। थोड़ी देर बाद उसने कहा, "तुम बहुत थके हुए लग रहे हो। कितनी दूर से आए हो? कितने दिन का सफर? तुम्हारे बिना सहारे के पैर तुम्हें पानी में तैरा नहीं पा रहे हैं। किनारे पर वापस तैरकर आओ। मैं तुम्हारा शरीर साफ कर दूंगी।" वह पास आई और उसे किनारे की ओर खींच ले गई। वह बिना सोचे-समझे उसके पीछे चल दिया। उसने उसे एक शिला पर बिठाया और इस काम के लिए खास तौर पर चुने गए एक छोटे पत्थर से उसका सीना, कंधे, बांहें और पीठ अच्छी तरह से रगड़ी। रगड़ने से निकली गंदगी को उसने पानी से धो दिया। फिर उसे खड़ा करके उसने उसकी जांघों, घुटनों और पैरों को अच्छी तरह से साफ किया। उसका शरीर इतना गंदा नहीं था। उसे रगड़ने की ज़रूरत नहीं थी। पानी में डुबोने के बाद बस सुखाना ही काफी था। वे दोनों वापस जंगल में चले गए। सूरज निकले हुए कुछ देर हो चुकी थी, जिसकी छाया तीन आदमियों की लंबाई जितनी थी और उसकी रोशनी डालियों के बीच से छनकर आ रही थी। धूप में सूखते हुए उसके शरीर में हल्की ठंड से कंपकंपी हो रही थी।

जिस पेड़ के सामने वे पहले बाँस के घर में रहते थे, उसके सामने खड़ी होकर उसने भीम से कहा, "चढ़ो।" भीम चढ़ गया। लेकिन उसे एहसास हुआ कि अब वह आसानी से पेड़ पर नहीं चढ़ सकता। हालांकि, सालकटंकति बिना किसी परेशानी के उसके पीछे-पीछे चढ़ गई। कुछ ऊँचाई पार करने के बाद, भीम ने घोंसले का दरवाजा खोला और अंदर चला गया। यह बाँस का एक बड़ा सा घोंसला था। उसमें घास से बना एक नरम गद्दा था, और अंदर की दीवार बुनी हुई टहनियों से बनी डिज़ाइनों से सजी थी। एक कोने में ढक्कन से ढका एक बड़ा बर्तन और दो अन्य बर्तन रखे थे। उसने देखा कि भीम की नज़र उन बर्तनों पर टिक गई थी। पास आकर और उसका पेट सहलाते हुए उसने कहा, "जंगली भैंस का पका हुआ मांस। उबली हुई जड़ें, जो बहू ने खास तुम्हारे लिए पकाई हैं। जब तुम यहाँ थे, तो क्या तुम्हें ताड़ी बहुत पसंद नहीं थी? इसीलिए घटोत्कच ने उसे उस पेड़ से तोड़ा है जो खास तौर पर उसके लिए चुना गया है। जब हम नहाने गए थे, तो बच्चों ने तुम्हारे आनंद के लिए ये सब तैयार किया है। तुम ही हो वो भेड़िये जैसे पेट वाले, है ना?" और पास आकर और उसका पेट सहलाते हुए उसने आगे कहा, "मेरे भेड़िये जैसे पेट वाले! घटोत्कच को तुम्हारी तरह ही बहुत भूख लगती है। बाकी बच्चे इस मामले में बेकार हैं।"

उसने पूछा, "बाकी लोग कहाँ हैं?"

उसने कहा, “वे अपने घोंसलों में चढ़ गए हैं और सो रहे हैं। उसे सीमा तक दौड़ना पड़ा और फिर तुम्हें वापस लाना पड़ा। कर्णकटंकति भी मेरे साथ जागती रही। उसे नींद नहीं रुकती। हम सब शाम को मिलेंगे। अभी तुम अपना भोजन करो।” फिर उसने ताड़ी की थाली में दो व्यंजन परोसे। उसने थाली को मुट्ठी भर भोजन से भर दिया। फिर उसने उसके पास ताड़ी से भरा एक लकड़ी का घड़ा रखा जो अभी खट्टा नहीं हुआ था। उसने उससे कहा, “मेरे साथ खाओ।” फिर उसने उसी थाली से भोजन किया और उससे पूछा, “तुम राक्षस जनजाति से इतनी नफरत क्यों करते हो?”

उसने पूछा, "तुम्हें यह किसने बताया?"

उसने कहा, "ऐसा लगता है कि यहाँ से जाने के बाद तुमने हमारे कबीले के एक सदस्य बाका को मार डाला। लगभग दस या तेरह साल बाद, तुमने बाका के भाई किर्मीरा को भी मार डाला। यह मानव मांस के प्रति किसी तरह की लालसा के कारण नहीं हो सकता, क्योंकि तुम इसे खाते नहीं हो।"

उसने कहा, "मानव मांस के अत्यधिक शौकीन बाका ने पूरे राज्य को भयानक संकट में डाल दिया था। हमें उसे मारना पड़ा ताकि हम उन लोगों का कर्ज चुका सकें जिन्होंने हमें भोजन दिया था। अपने भाई का बदला लेने के लिए किर्मीरा हर रात जंगल में हमें परेशान करता था। वह हमें जान से मारने की कोशिश कर रहा था। ऐसे व्यक्ति को मारे बिना हम कैसे जीवित रह सकते थे?"

उसने और कुछ नहीं कहा। उसने ज्यादा खाना नहीं खाया। लेकिन वह उसे बड़े-बड़े चम्मच भर-भरकर खाना खिलाती रही। अंत में उसने अपना मुंह खोला,

क्या तुम जानते हो कि अब क्या हुआ है? ऐसा लगता है कि तुम और तुम्हारे शत्रु मृत्यु के युद्ध में उलझे रहेंगे। वे जहाँ कहीं भी हों, सभी राक्षस तुम्हें मारने के लिए एकजुट होने की योजना बना रहे हैं। उनका क्रोध केवल तुम पर केंद्रित है। आख़िर तुम्हारे कबीले में तुम्हारे सिवा कौन है जो राक्षसों को चुनौती दे सके और उनका सामना कर सके? स्वाभाविक रूप से, तुम ही उनका एकमात्र निशाना हो। तुम्हारे भाई नहीं। विभिन्न वनों से राक्षस सरदार यहाँ एकत्रित हुए थे। उन्होंने हमसे कहा, 'तुम राक्षसों के सबसे बड़े समूहों में से एक हो। घटोत्कच में पूरी राक्षस आबादी का नेतृत्व करने की क्षमता है। तुम हमारे साथ जुड़ जाओ।' वे हम पर ज़ोर दे रहे थे कि हम तुम्हारे साथ युद्ध में शामिल हों। बेशक, मैं भी उत्साह से उनके साथ जुड़ने को तैयार थी। फिर मैंने उसे अपने घोंसले में बुलाया और उसे समझाया, 'वह तुम्हारा पिता है। यद्यपि तुम्हारे भाई किसी और से पैदा हुए हैं, वे भी उसके पुत्र हैं क्योंकि वह मेरा एकमात्र पति है।' उसने मुझसे पूछा कि अगर तुम सचमुच उसकी पिता हो तो तुमने उससे एक बार भी मिलने की परवाह क्यों नहीं की। मुझे बताओ, क्या उसका यह सवाल पूछना सही था? मुझे बताओ। अपने आप को।"

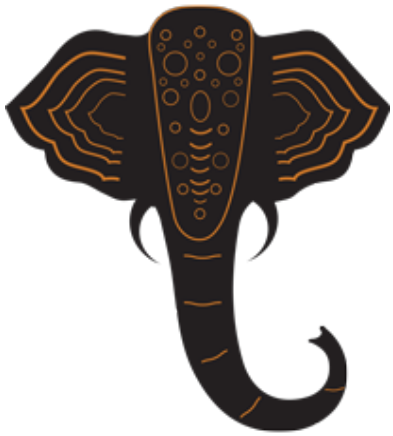
भीमा उसकी आँखों में सीधे नहीं देख पा रहा था। उसका खाना भी रुक गया। उसे लगा कि उसे इस मिशन पर नहीं आना चाहिए था। बेशक लौटने में बहुत खुशी थी। फिर भी, इस सवाल का क्या जवाब दे पाता जो किसी न किसी रूप में उसे परेशान कर रहा था? तभी उसे पेड़ से एक बच्चे के रोने की आवाज़ सुनाई दी। भीमा के कान उस आवाज़ पर पड़े। उसका मन भी उसी दिशा में मुड़ गया। यह देखकर उसने कहा, "तुम्हारा पोता। उसे अपनी माँ की ज़रूरत तभी होती है जब वह दूध पीना चाहता है। वरना वह मेरी जांघों और बाहों से खेलना चाहता है। अगर उसे ये नहीं मिलतीं, तो वह रोता है।" अब भीमा ने अपना चेहरा उठाकर उसकी ओर देखा। उसने सवालों की झड़ी लगा दी, "आपने खाना क्यों छोड़ दिया? क्या

आपका पेट इतने कम खाने से ही भर गया? अगर आप पका हुआ खाना छोड़ देते, तो क्या आपकी बहू मेरा मज़ाक नहीं उड़ाती? वह कहती, 'आपने अपने पति को बड़ा भेड़िया बताया था - आप उन्हें भेड़िया कहती थीं!' अपना हाथ मेरे चेहरे के पास लाकर वह मेरा मज़ाक उड़ाते हुए कहती, 'यह भीम का बड़ा पेट है, यह मशहूर पेट है!'"

भीमा ने खाना फिर से शुरू किया। उसने आगे कहा, "अब राक्षस दो गुटों में बँट गए हैं। उसी दिन उन्होंने घटोत्कच को धमकी देते हुए कहा, 'तुम हमारे शत्रु के पुत्र हो; हम सबसे पहले तुम्हें और तुम्हारी माता को मार डालेंगे।' लेकिन हमारे ही देश में हमें हराना इतना आसान नहीं है। उन्होंने कहा, 'तुम्हारा जन्म शायद किसी कारण से हुआ हो। लेकिन अपने लोगों के प्रति निष्ठा और वफादारी सर्वोपरि है, धर्म को सही ढंग से समझो।' उन्होंने उसे शब्दों के जाल में फंसा दिया था। उनके जाने के बाद वह मेरे पास आया और मुझसे पूछा, 'मुझे बताओ कि मुझे क्या करना चाहिए। अब मुझे नहीं पता कि मेरा धर्म क्या है। कृपया मुझे स्वयं बताओ...'" पास के पेड़ की चोटी पर बच्चे के ज़ोर-ज़ोर से रोने की आवाज़ से उसकी बात अधूरी रह गई। जिन उपवनों में पक्षियों के घोंसले थे, वहाँ उन्हें घोंसला बनाने की अनुमति नहीं थी, क्योंकि यह आशंका थी कि पक्षियों के अंडे साँपों को आकर्षित कर सकते हैं। सुबह की खामोशी में बच्चे की चीखें आसमान तक गूँज उठीं। उसके मुँह में ठूँसी पकी हुई जड़ें उसके गले में अटकती हुई प्रतीत हो रही थीं। वह बुदबुदाई, "अब तो वह रोना बंद ही नहीं कर रहा। मुझे उसे यहाँ लाना पड़ेगा।" वह दरवाजे से बाहर निकली और जल्दी से पेड़ से नीचे उतर गई।

—•✳•—

भाग चार



अध्याय 17

सुबह भीम के प्रस्थान से पहले, कृष्ण उन्हें विदाई देने उनके निवास पर गईं। यह यात्रा सात-आठ दिनों में पूरी होने वाली थी, फिर भी उनका मन इतना विचलित था मानो उन्हें वर्षों तक विरह का सामना करना पड़े! नहीं, वे रोई नहीं। उनके चेहरे पर भी इसका कोई आभास नहीं हुआ। वास्तव में, उन्होंने इस स्थिति में सामान्य से कहीं अधिक उत्साह दिखाया, यहाँ तक कि भीम का मज़ाक भी उड़ाया। वे उत्तर दिशा में जलमार्ग तक भीम के साथ गईं। धर्म, अर्जुन, नकुल, सहदेव और अपने पाँचों बच्चों की उपस्थिति में, उन्होंने कोमल मुस्कान के साथ कहा, "भीम, तुम यह तो नहीं भूलोगे कि तुम ही मेरे एकमात्र आश्रय और सहारा हो?" यह कहते समय उन्होंने भीम का हाथ अपने हाथ में थाम रखा था। दिखावटी प्रसन्नता के बावजूद, उनकी आवाज़ में उस गहरे दुख के अंश झलक रहे थे जिससे वह निकली थी।

अपने घुड़सवार साथियों के साथ उसके दृष्टि से ओझल हो जाने के बाद, वह अपनी दासियों और पाँच पुत्रों के साथ घर लौट आई। वनवास समाप्त होने पर गुप्त रूप से वापस बुलाए गए बच्चों को अलग निवास में नहीं रखा गया था। उसने उन्हें अपने ही घर में रहने दिया। साढ़े तेरह वर्षों के वियोग के बाद, उसने अपने हाथों से उन्हें भोजन कराया। उनके बीच बैठकर वह उनसे उनके मामा दृष्टद्युम्न और दादा द्रुपद के पराक्रम के बारे में पूछती थी। वह समय-समय पर उन्हें वनवास के अपने वर्षों की कहानी, झेली गई कठिनाइयों और सुख-सुविधाओं के बारे में भी सुनाती थी। पाँचों बच्चों में एकता की अद्भुत भावना थी। वे हमेशा साथ रहते थे, चाहे वे अपनी माँ के चारों ओर बैठे हों या तीरंदाजी का अभ्यास करने या अन्य किसी भी काम के लिए शहर से बाहर गए हों। वे एक विशिष्ट समूह की तरह व्यवहार करते थे। शायद इसलिए कि वे उस स्थान पर नए थे और स्थानीय लोगों में उनके कोई मित्र नहीं थे, या इसलिए कि वे अपने आसपास की घटनाओं को पूरी तरह से समझ नहीं पा रहे थे। पिता युद्ध की तैयारियों में तल्लीन थे। वे सैन्य गठबंधन की तलाश में, विदेशों में दूत भेजने, आपसी परामर्श करने और मित्र देशों और राज्यों से आ रहे युद्ध सामग्री और उपकरणों जैसी संसाधनों की समस्या से निपटने के लिए विदेशी यात्राओं में व्यस्त थे। उनके हमउम्र भाई अभिमन्यु ही उनमें से एकमात्र थे। बेशक, वे ठीक उनकी उम्र के नहीं थे, क्योंकि वे पाँचों में सबसे छोटे श्रुतसेना से तीन साल छोटे थे। अभिमन्यु और उनके बीच कोई घनिष्ठ संबंध नहीं था। वे साथ पले-बढ़े नहीं थे। अपने पिता के वनवास के बाद जब उन्हें अपने मामा के घर भेज दिया गया, तब सबसे बड़े भाई प्रतिविंध्य ग्यारह वर्ष के थे, सबसे छोटे श्रुतसेना छह वर्ष के थे। अभिमन्यु तीन वर्ष के थे। बचपन में अभिमन्यु अपने माता-पिता के साथ एक अलग घर में रहते थे। केवल प्रतिविंध्य और श्रुतसेना को ही अभिमन्यु याद थे। बाकी भाइयों को उनकी कोई याद नहीं थी। तीन साल के अभिमन्यु का अपने बड़े भाइयों से संबंध होना संभव नहीं था। इसलिए, यह आश्चर्य की बात नहीं थी कि उनके बीच घनिष्ठ संबंध नहीं बन पाए। वनवास के तुरंत बाद, सोलह वर्ष के अभिमन्यु का विवाह राजा विराट की पुत्री उत्तरा से हो गया, जो उनसे कम उम्र की थीं। दंपति उपप्लव्य नगरी में अपने घर में रहने लगे। उनके बगल में उनके माता-पिता, माता सुभद्रा और पिता अर्जुन रहते थे। अभिमन्यु धनुर्विद्या में अन्य पाँचों से श्रेष्ठ थे। उन्हें अपने पिता की कुशल उंगलियाँ और पैनी नज़र विरासत में मिली थी। उनके पिता आज भी समय-समय पर उनके धनुर्विद्या प्रशिक्षण में शामिल होते थे,

उन्हें धनुष को धारण करना, निशाना लगाना और विभिन्न प्रकार के बाणों को संभालना सिखाते थे। पास में खड़े अन्य पाँचों भी उनसे निर्देश प्राप्त करते थे। लेकिन अभिमन्यु के विपरीत, तकनीकी बिंदु समझ न आने पर वे आसानी से अपने पिता से संपर्क नहीं कर पाते थे। वे यह नहीं समझ पाते थे कि ऐसा क्यों हो रहा है। सबसे बड़े पुत्र प्रतिविंध्य अक्सर इस विषय पर विचार करते थे।

अपने हाथों से पाँचों बच्चों को भोजन कराते हुए कृष्ण ने सोचा, "सबसे बड़ा चौबीस वर्ष का है, दूसरा तेईस वर्ष का, और कम से कम अब तक तो उनकी शादी हो जानी चाहिए थी। उनकी पत्नियाँ तय हो जानी चाहिए थीं। लगता है निकट भविष्य में कोई स्वयंवर नहीं होने वाला। या फिर कौन सा राजा उन्हें दुल्हन देने को तैयार होगा, जब उनके माता-पिता, राज्य विहीन होकर वनवास में भटक रहे हैं? 'हे बालक, प्रतिविंध्य, तुम इतना कम क्यों खाते हो? क्या तुम्हारे पिता, भीम, बच्चों को इतना कम भोजन करते हुए सहन करेंगे? अगर वे तुम्हें ऐसा करते देखेंगे तो तुम्हें डांटेंगे।' कितने नाज़ुक हो गए हैं! भगवान जाने कब, अगर कभी, हम अपना राज्य वापस जीतेंगे और उनकी शादी करवाएँगे! यहाँ भी उनकी सेवा में इतनी सारी दासियाँ हैं। वे उनमें से किसी की ओर देखते तक नहीं हैं..." कृष्ण को इस अंतिम विचार से संतोष हुआ कि उनके पुत्र अन्य राजकुमारों के समान नहीं थे।

सबसे छोटा बेटा श्रुतसेना, जब वे पहली बार वहाँ पहुँचे तो अपनी माँ के पास आने में हिचकिचाया। वह उन्हें पहचान नहीं पाया। जब वह खुद उसके पास गई और उसे गले लगाने की कोशिश की, तो वह शरमाते हुए उनसे दूर हट गया। जब उसने तीसरी बार उससे पूछा कि क्या वह उसकी माँ नहीं है, तो उसने बस इतना कहा, "हाँ, मैं जानता हूँ।" उसने उससे पूछा, "तो फिर तुम मेरे पास क्यों नहीं आते?" उसके पास कोई जवाब नहीं था। वह बिना किसी कारण के गुस्सा हो जाता था। लेकिन अब वह अपनी माँ के सबसे करीब था। वह लगातार उनके आसपास रहता, "माँ, माँ" बुदबुदाता रहता। और वह उन्नीस साल का था! इस नासमझ के लिए कैसी पत्नी मिल सकती है! वह अभी भी एक बच्चे जैसा था। वह उन बातों को नहीं समझता था जो दूसरे समझ सकते थे। उसने सोचा, "आज कितनी गर्मी है! दिन की शुरुआत में ही। कड़ाही की तरह गर्म है। यह मत्स्य भूमि ऐसी ही है। बंजर पहाड़ियाँ, कोई जंगल नहीं, बहुत कम पानी, और भरपूर गर्मी। गर्मी आने पर पहाड़ों में भाग जाना चाहिए। कम से कम किसी पहाड़ की शरण तो ले लो।" उन्हें याद आया कि वे कम से कम चार ग्रीष्मकाल में हिमालय जा चुके थे। उन्होंने

"ज्योतिष्मती" कहकर पुकारा। नौकरानी उनका आदेश लेने आई। उसने कहा, "ज्योतिष्मती, लामंचा की चटाई भिगोकर बिछा दो। बहुत गर्मी हो रही है। पंखा ले आओ।" तीस वर्षीय ज्योतिष्मती ने दरवाजों और खिड़कियों पर पानी छिड़कने के बाद लामंचा की चटाइयों से उन्हें ढक दिया। हवा ठंडी हो गई और सबको लगा जैसे जीवन लौट आया हो। लेकिन ठंडा होने में कुछ मिनट लग गए। जंगल में स्थिति बेहतर थी। हालांकि, वहां गर्म हवाएं नहीं चल रही होंगी। कृष्ण ने अनुमान लगाया कि भीम तब तक लगभग सोलह मील की यात्रा कर चुके होंगे। लेकिन क्या कोई घोड़ा इतनी तेज दौड़ सकता है? उसे चाबुक मारकर दौड़ाया जा सकता है। शायद वह अपनी पहली पत्नी से मिलने की जल्दी में हैं... यह सोचकर उन्हें हंसी आ गई। अगर उन्होंने यह बात उनके सामने कही होती, तो वह गुस्से से आग बबूला हो जाते! उसने मन ही मन कहा - "उसे वापस आने दो। मैं यही बात बार-बार दोहराती रहूँगी जब तक कि वह क्रोध से पागल न हो जाए!" फिर वह चिल्लाई, "ज्योतिष्मती, बच्चे कहाँ हैं?"

ज्योतिषमती ने कहा, "क्या वे तीरंदाजी की कक्षा में नहीं गए? वे रथ से युद्ध कला सीख रहे हैं।"

कृष्ण ने कहा, "बाहर बहुत उमस है। सूरज बहुत तेज है।"

ज्योतिषमती ने कोई जवाब नहीं दिया। 'वह कुछ कह भी नहीं सकती थी, और युद्ध नजदीक आ रहा था। यह उनका अपना युद्ध था।' उसने मन ही मन कहा, "भगवान न करे कि हमारे बच्चे डर के मारे इससे पीछे हटें। शुक्र है, उनमें से कोई भी उस डरपोक उत्तरकुमार जैसा नहीं था! अगर किसी के ऐसे डरपोक बच्चे होते, तो वह गर्व से सिर ऊंचा नहीं कर पाता। श्रुतसेना बाकी मामलों में तो बच्चे जैसा है, लेकिन बाण चलाने में उसका निशाना अचूक है। उसकी भुजा में इतनी शक्ति है कि वह बाणों को इतनी तेज़ी से चला सकता है कि वे मुश्किल से दिखाई देते हैं! और मेरे बड़े भाई, क्या गजब का आदमी है! पंचाल एक वीर कुल से आते हैं। मेरा भाई राजा द्रुपद का पुत्र है। जब वह सिखाता है, तो न केवल निशाना लगाने का कौशल, बल्कि जोश और साहस भी विकसित होता है। इसके अलावा, उनके पिताओं में से कोई भी डरपोक नहीं है। यहां तक कि सबसे बड़े पिता, धर्म भी डरपोक नहीं हैं। अब तक शायद वे चार मील और चल चुके होंगे। क्या वे अपनी यात्रा में कृष्ण को याद करेंगे या कृष्ण दुर्भाग्यशाली होंगे? मुझे अब तक जीवन में क्या सुख मिला है? पूरी यात्रा निरंतर दुख से भरी रही है। हर तरफ़ रुकावटें, बस

दुख ही दुख। पांडवों की महिमा के चरम पर भी—इंद्रप्रस्थ की स्थापना के बाद उन्होंने जो राजसूय संस्कार किया था। इस कृष्ण के आंतरिक कष्ट को कौन समझ सकता है? सास भी नहीं। मैंने भीम को ही अपना एकमात्र सहारा और आशा माना था। क्या अब उस एकमात्र आशा के स्रोत को भी खोने का समय आ गया है?" उन्होंने भीम के साथ अपने छब्बीस साल के वैवाहिक जीवन को याद किया। "हाँ, केवल भीम ही मेरे भरोसे के लायक थे। गहरे प्रेम के योग्य। मेरा यह विश्वास कि उनके जैसा कोई और नहीं है, आज तक नहीं बदला है। खैर, यह देखना होगा कि क्या यह भविष्य में भी कायम रहेगा। अगर यह कायम नहीं रहा तो..." इस विचार मात्र से ही उनकी आँखों में आँसू आ गए। लेकिन कृष्ण खुलेआम रोने वाले नहीं थे। वह अपने विचारों में खो गईं, "अगर मुझे रोना भी पड़े, तो मैं कभी उनके सामने नहीं रोऊँगी। उन्होंने मुझसे कहा था कि मैं उन्हें अपना चेहरा न दिखाऊँ। खैर, वह सीख जाएँगे।" जैसे ही उन्होंने महसूस किया कि उनका हठ भीम से अधिक मजबूत है, उनका आत्मविश्वास और बढ़ गया। इसके साथ ही उमस भरी गर्मी को सहन करने की शक्ति भी आ गई।

लामंका की चटाइयों पर छिड़के गए पानी की ठंडक अब पूरे कमरे में फैल रही थी। कहा जाता है कि यह रिश्ता लगभग अट्ठाईस साल पहले शुरू हुआ था। वह भी एक आकस्मिक रिश्ता था। लगता है उसने पहल की और उससे मोहित हो गई। काश हमें भी प्यार करने की ऐसी आज़ादी होती! यह एक साल तक चला। पहली शादी अट्ठाईस साल पहले हुई थी। राजसूय जनजाति से संबंध थे। कोई महल नहीं था। एक साधारण घर भी नहीं। ज़मीन पर कोई झोपड़ी भी नहीं। पेड़ पर बाँस का घोंसला! यह जवानी का जुनून था। लेकिन मान लो कि कृष्ण के साथ छब्बीस साल के वैवाहिक जीवन में भुला दिया गया पुराना रिश्ता फिर से पनप जाए। नहीं, भीम मुझे छोड़ने के लिए बहुत भरोसेमंद इंसान है। अगर भीम की वफ़ादारी टूट जाए, तो दुनिया वीरान और सुनसान हो जाएगी। बादल नहीं बनेंगे और बारिश नहीं होगी। तभी बाहर से एक सुहावनी हवा चली, और लामंका की चटाइयों से गुज़रते हुए ठंडक महसूस हुई। हवा के झोंके से लोहारखाने में हथौड़े की आवाज़ सुनाई दी। इतनी गर्मी में भी लोहारखाने की भट्टी में काम चल रहा था। कितने लोग काम कर रहे थे? कम से कम दो, एक गर्म धातु को पकड़े हुए और दूसरा उसे पीटते हुए। दो गाड़ियाँ थीं। जब हम भीमा को विदा करने गए थे, तो वहाँ पास में एक औरत थी, जो उल्टी कर रही थी। "उसकी उम्र कितनी होगी?" उसने खुद से पूछा।

इससे कृष्णा को अपने गर्भावस्था और उल्टी के दिनों की याद आ गई। ऐसा लग रहा था जैसे उसे गर्भ धारण किए हुए सदियाँ बीत गई हों। पुरानी यादों में खोई हुई वह दीवार से टिक गई और उसकी ठंडक से उसे सुकून मिला। उसने सोचा, "अब तक वह कितना आगे बढ़ गया होगा?" बाहर सूरज बहुत तेज़ था। और अब उसके बाल कम हो रहे थे, जिससे उसका सिर धूप में खुला हुआ था। फिर भी उसने सिर पर कुछ भी पहनने से इनकार कर दिया था। वह अपने शरीर पर किसी भी तरह की पाबंदी के खिलाफ था। वह चाहता था कि उसका शरीर आज़ाद रहे। कृष्णा को लगा कि वह कोई संवेदनशील व्यक्ति नहीं था जिसे पता हो कि कब क्या कहना है और कब क्या नहीं कहना है। उसे याद आया कि धर्म के साथ रात बिताने और उससे विवाह करने के बाद, तकनीकी रूप से उसका विवाह भीम से हुआ था, और उसने अगली रात भीम के साथ बिताई थी। भीम धर्म से कितना अलग था। बिल्कुल निडर और अज्ञानता या भ्रम का कोई संकेत नहीं। वह सीधे काम पर लग गया, उसके शरीर को पकड़कर, उसे बच्चे की तरह जकड़ लिया, छत तक उछाला और अपनी बाहों में पकड़ लिया। यह इतना हिंसक था कि उसे अपनी जान का डर लग गया! उसने सोचा कि क्या वह उसे खिलौना समझ रहा है। जब वह डर से चीखी, तो उसने उसे पकड़कर पूछा, "क्या तुम डरी हुई हो? क्यों?"

उसने मुंह बनाते हुए कहा, "क्योंकि तुम ये सब करते हो!"

भीमा ने कहा, "अगर सलाकटंकटी के साथ ऐसा व्यवहार किया जाता तो वह खुशी से झूम उठती। वह इतनी खुश होती कि मुझसे ऐसा करने को कहती। अगर मैं उसे मारता तो मेरी मुट्ठियाँ वापस उछल जातीं, वह इतनी मजबूत थी!"

"यह सलाकटंकती कौन है?"

"मेरी पत्नी। पहली वाली। राक्षस जाति की थी।" फिर उसने उसे सब कुछ बताया और कहा, "क्या गजब की शक्ति और सामर्थ्य थी! हमारी कोई भी आर्य स्त्री उसकी बराबरी नहीं कर सकती। देखो मेरी मांसल भुजाएँ कितनी उभरी हुई हैं। उसकी भुजाएँ इतनी बड़ी और शक्तिशाली थीं। उसका आलिंगन इतना मजबूत होता था कि उससे निकलना नामुमकिन था। उसका शरीर इतना बड़ा था कि वह मुझ जैसे पति को भी अपने कंधों पर उठाकर चार मील तक आसानी से चल सकती थी! कद में वह मेरे कंधे तक आती थी। मतलब, एक औसत आर्य पुरुष जितनी लंबी। तुम्हारे जैसी नहीं।" कृष्ण ने मन ही मन सोचा, "बेवकूफ। वह कभी भी स्त्री की कोमल भावनाओं और मनोदशाओं को नहीं समझ सकता। वह कभी

भी सरल और प्रत्यक्ष भाव से ऊपर नहीं उठ सकता।" भीमा ने उसी लहजे में बोलना जारी रखा, "देखो, कृष्ण, यही तुम्हारा नाम है ना? अच्छा, मैं तुम्हें कृष्ण ही कहूँ, पंचाली या गिंचाली नहीं। बेशक, पत्नी को उसके पिता की भूमि के नाम से पुकारने में कुछ सार्थकता तो है। लेकिन मुझे कहीं न कहीं ऐसा लगता है कि यह नाम दूरी और अलगाव का भाव जगाता है। देखो, कृष्ण, सालकटंकटी मुझसे प्रेम करने लगी। पहले तो मैं भावनात्मक रूप से उसके प्रति कोई प्रतिक्रिया नहीं दे सका। माँ ने ही मुझे उसके साथ रहने के लिए मजबूर किया था। एक बार जब मैंने उसके सुंदर शरीर का स्वाद चखा, तो मैं उसका गुलाम बन गया, उसकी लालसा करने लगा। तुम्हारे साथ यह बिल्कुल अलग है। स्वयंवर हॉल में तुम्हें देखते ही मेरा दिल एक पल में पिघल गया। आज तक मैं समझ नहीं पाया कि ऐसा क्यों हुआ। क्या यह तुम्हारी सुंदरता थी? तुम्हारा रंग? जैसा कि तुम जानती हो, तुम्हारा रंग इतना गोरा नहीं है। फिर भी, तुमने मुझे पूरी तरह से मोहित कर लिया। क्यों? मैं कह नहीं सकता।"

शादी के शुरुआती दिनों में, वह अक्सर सलाकटंकति का नाम लेते थे, और अक्सर बिना किसी कारण के। अचानक ही वह उनके बारे में बातें करने लगते थे—उनके शरीर की बनावट, उनकी ताकत। जाहिर है, वह सोचती थीं कि भीम के भीतर का पहलवान एक स्त्री में शक्ति और ताकत ढूंढ रहा था। फिर भी, कृष्ण, वह उनकी ओर आकर्षित तो थे, पर बिना कुछ समझे। उसके अंतर्मन में विचार उमड़ने लगे, "वह तो एक बच्चा था, एक गंवार, जिसे स्त्री से बात करना नहीं आता था। उसका भाई अर्जुन, वह तो स्त्री से बात करने में माहिर है। स्त्री को वश में करने में उसका कौशल धनुर्विद्या में उसके कौशल के बराबर था! वही अचूक निशाना! वह इतना चतुर था कि उसके हर शब्द से स्त्री के दिल में एक और कदम गहराई तक उतर जाता था! उसके शब्दों के जादू से तुम उसकी ओर खिंची चली जाती थी। स्वयंवर में उसने आर्यावर्त में सबसे कुशल धनुर्धर साबित किया। और इस तरह उसने मुझे, अपनी दुल्हन को पा लिया। धातु के धनुष को मोड़ते समय भी उसकी पकड़ मजबूत थी। और वह कितना सुंदर था! नुकीली नाक, गालों पर गड्ढों वाले डिंपल, निर्मल नीली आँखें और साफ गोरा रंग। हाँ, उसकी उपस्थिति में मैं सचमुच कृष्ण, काले रंग वाले के समान दिखती थी। उसकी चाल दृढ़ और शांत थी। उसकी उंगलियाँ न केवल धनुर्विद्या में, बल्कि वाद्ययंत्रों को कुशलता से बजाने में भी निपुण थीं। जब उन सबने पिताजी पर हमला किया और उन्हें अपने गुरु के शुल्क

के रूप में बंधवाकर ले जाने की कोशिश की, तब मेरे पिताजी अर्जुन के आकर्षक व्यवहार ने मुझे मोह लिया था, जो कोमलता और दृढ़ता का अनूठा मिश्रण था। उनका शरीर पूर्ण रूप से सुगठित था, शरीर का हर अंग दूसरे अंग को संतुलित करके सामंजस्य स्थापित करता था। तीसरे दिन रात को जब वह मेरे लिए शयनकक्ष में आए, तो ऐसे व्यक्ति भी घबराए हुए थे, उनकी उंगलियां कांप रही थीं। उन्हें वह दृश्य आज भी स्पष्ट रूप से याद था। उन्होंने अपने कोमल, कांपते हाथों से उनका चेहरा धीरे से उठाया और कहा, "यह अर्जुन आपका दास बनने की भीख मांगने आया है। क्या आप इसे यह वरदान देंगी, राजकुमारी द्रौपदी?" इस शालीन व्यवहार में उनकी पहली हार के बाद, उन्हें बिस्तर पर भी हार का सामना करना पड़ा। उसने मन ही मन सोचा, "अर्जुन, तुमने मुझे अपने पहले ही प्रयास में पूरी तरह से जीत लिया। तुमने कृष्ण को पहली ही रात में यह एहसास दिला दिया कि उससे अधिक भाग्यशाली कोई नहीं है। तुम्हारे दिए आनंद के बल पर मैं बाकी चार पतियों को सहन कर सकी! और धैर्यपूर्वक धीरे-धीरे सहन किया! वे कितने शानदार दिन थे! वे दिन जब पाँचों पति मेरी संगति में रहने, मेरे साथ ठहरने, मेरे शरीर को सहलाने और मुझसे बातें करने के लिए उत्सुक थे। वे सभी नवविवाहित पति थे। वे सभी निर्दोष युवक थे। फिर वे पत्नी के शरीर के लिए भूखे हो गए। कितना अधीर! और एक के बाद एक मेरे बिस्तर पर आ गिरे। लेकिन हर रात एक। चार दिन का इंतजार उनके शरीर को मेरे शरीर के लिए लालची बना देता था, एक ही रात में चार रातों की भूख मिटाने की इच्छा से प्रज्वलित! बारी-बारी से पतियों के साथ बिस्तर पर रात के खेल मुझे इतना थका देते थे कि मैं अगली पूरी सुबह सोती रहती थी। भीम, जिसने मुझे सालकटंकति से भी कमजोर कहा था, उसमें समझ और विवेक की कमी थी। कोमल कृष्ण को इतनी शक्ति कहाँ से मिली कि..." चार पतियों के गुस्से को संभालना? खैर, यह बात मुझे भी हैरान करती थी। मुझे शक है कि सभी महिलाओं में इतनी ताकत होती है। इससे मुझे गर्व महसूस हुआ। मेरी सहेली कहा करती थी, 'मालकिन, आपकी ताकत बेमिसाल है।' सच कहूँ तो, हर रात मेरे दिल में अर्जुन के सिवा किसी और की चाह नहीं होती थी। बाकी चारों में मैं हर पल अर्जुन को ही खोजती रहती थी, उनके चेहरे, उनके हाव-भाव, उनकी हरकतें। चारों पांडव मुझ तक सिर्फ अर्जुन की चेतना के ज़रिए ही पहुँचते थे। मैं उन्हें आंशिक अर्जुन ही समझती थी! मैं हर पल को सिर्फ अर्जुन के लिए गिनती थी, मानो मेरे जीवन का परम लक्ष्य अपने शरीर को उनके शरीर में

विलीन करना हो। बाहर हवा मानो थम सी गई थी। लामंका की चटाई से ज़रा भी हवा अंदर नहीं आ रही थी। उसने पूछा कि क्या यह धातु की खनक है? नहीं, शायद कहीं और हवा सीटी बजा रही थी। आवाज़ साफ़ नहीं थी। अंदर गर्मी थी। और शरीर पर चिपचिपे पसीने की बेचैनी थी। कृष्ण ने पुकारा, "ज्योतिष्मती, मेरे लिए एक पंखा लाओ। नहीं, लामंच घास का पंखा नहीं। वह बहुत भारी है और उससे बहुत कम हवा चलती है। ताड़ के पत्तों का पंखा बेहतर है।" दासी पंखा ले आई और उसके पास बैठकर उसे हवा देने लगी। कृष्ण को बहुत राहत मिली। उसे अपने ऊपरी वस्त्र उतारने की इच्छा हुई, लेकिन उसने उसे बस थोड़ा ढीला किया। वह चाहती थी कि पंखा बिना रुके चलता रहे। ऐसा लग रहा था जैसे पूरा कमरा खाली हो गया हो। लेकिन जैसे ही दासी उसके पास बैठी, कृष्ण अपनी याददाश्त खो बैठीं। उन्हें अपने विचारों को फिर से जोड़ने में मुश्किल हो रही थी। वह क्या सोच रही थीं? "नहीं, वह नहीं। नहीं, वह भी नहीं।" उन्होंने दासी से कहा, "ज्योतिष्मती, मैं खुद ही हवा कर लूंगी। मुझे पंखा दे दो और जाओ।" ज्योतिषमती ने उत्तर दिया, "मैंने चटाइयों को अच्छी तरह से भिगो दिया है जिससे पानी टपक रहा है। अभी मेरे पास कोई और काम नहीं है। मुझे हवा करने दो।" कृष्ण ने कहा, "नहीं, नहीं। जैसा मैं कह रही हूँ वैसा करो। अभी चले जाओ। मुझे अकेला छोड़ दो।" उन्होंने नौकर से पंखा छीन लिया। नौकर घर के दूसरे हिस्से में चला गया। कमरा और भी सुनसान हो गया। सन्नाटा छा गया। निर्जन। कृष्ण की दोनों आँखें, जो बारी-बारी से सिकुड़ती और फैलती थीं, उस शांत कमरे को देखती रहीं। कृष्ण ने मन ही मन सोचा कि तब तक भीम कितने मील का सफर तय कर चुके होंगे। बाहर सूरज की तेज धूप पड़ रही थी। झुलसा देने वाली धूप। उन्होंने सोचा, क्या इस गर्मी में घोड़े भी उतनी ही तेज़ी से चल पाएँगे? मान लो कि दुष्ट दुर्योधन अपने हत्यारों के साथ उन पर हमला कर दे। लेकिन भीम के पास उनकी रक्षा के लिए बीस अंगरक्षक थे। वैसे भी, कोई समस्या नहीं थी। भीम को किसी अंगरक्षक की आवश्यकता नहीं थी। भीम को मारने वाला व्यक्ति अभी पैदा ही नहीं हुआ था। जब दुर्योधन का भीम के हाथों मरना तय था, तब हत्यारों का कोई फायदा नहीं था! उन्होंने तो इतने सारे राक्षसों का वध किया था। भीम ने जयद्रथ को कैद कर लिया था, किचक को आमने-सामने की लड़ाई में बुरी तरह हरा दिया था, पूर्व के सभी राजाओं को परास्त कर उनसे राजसूय कर वसूल लिया था। वह भीम थे, और उन्हें मारना असंभव था। फिर उसने मन ही मन कहा, "काल्पनिक खतरों से क्यों डरना?

अब तक तो भीम को कम से कम बीस मील का सफर तय कर लेना चाहिए था। यह तीन-चार दिन का सफर था। उसके बाद भीम कृष्ण को भूल सकते हैं, कृष्ण असहाय हो सकती हैं, किसी से सहारा नहीं ले सकतीं। उन्हें ऐसे किसी सहारे की जरूरत नहीं होगी। वह स्वतंत्र होंगी। शायद वह अपने बेटों का सहारा लेंगी।" उसने कड़वाहट से कहा, "उन्हें अपनी सालकटंकति के साथ यहीं रहने दो। उन्हें उसे वापस यहीं लाने दो..."

तभी बाहर से एक ठंडी हवा अंदर की ओर चलने लगी।

कमरे के अंदर ठंडक और सुकून का एहसास हो रहा था। उसे पंखे की ज़रूरत महसूस नहीं हो रही थी। उसने मन ही मन कहा, "मैं उसे छब्बीस साल से जानती हूँ। वह कृष्ण को कभी नहीं छोड़ेगा। मेरे बिना वह कैसे जी पाएगा?"

उसने अपने अंतर्मन के विचार का अनुसरण किया — "हाँ, कृष्ण के सहारे के बिना वह पाँच कैसे कर सकता है? भीम, क्या तुम एक स्त्री के मन को नहीं समझ सकते? क्या तुम इतने मूर्ख हो कि यह नहीं देख सकते कि जब कोई पति किसी दूसरी स्त्री के बारे में बात करता है तो उसे कितना दुख होता है? मैंने उससे यही पूछा था। उसकी प्रतिक्रिया? वह शर्मिंदा सा हो गया और उसने अपना सिर झुका लिया। लेकिन उसने पूछा, 'इससे तुम्हें दुख क्यों होना चाहिए?' लेकिन अंततः मेरे शब्दों ने उसे अपना पूरा अर्थ समझा दिया। जब उसे मेरे शब्दों का सार समझ आ गया, तो वह पूरी रात चुप रहा। उसने मेरे शरीर को छुआ तक नहीं। वह आखिरी दिन था। उसके बाद उसने कभी उसका ज़िक्र नहीं किया। सिर्फ़ उसका ही नहीं। मुझे आश्चर्य होता है कि क्या उसने कभी किसी दूसरी स्त्री के बारे में सोचा भी होगा। वह पूरी तरह से मुझसे जुड़ा हुआ था। जब मेरे पाँच पतियों के साथ सोने के नियम में बदलाव हुआ और हर पति बारी-बारी से मेरे साथ पूरे एक साल तक रहा, तो भीम लगातार चार साल तक मुझसे दूर रहकर दुखी हुआ! वह अकेलापन सहन नहीं कर सका। तब भी उसने कभी किसी दूसरी स्त्री के बारे में नहीं सोचा। उसने अपने लिए कोई अलग और अनन्य पत्नी नहीं चुनी। कितने युवा राजसूय भेंट के रूप में वह कितनी स्त्रीयाँ दासी बनाकर लाया था! उसने उनमें से किसी को भी स्पर्श नहीं किया। उसका मन एक ही स्त्री में लीन है, उसकी निष्ठा और भक्ति एक ही स्त्री पर केंद्रित है। कृष्ण के बिना वह जी ही नहीं सकता। एक स्त्री पुरुष की चतुराई के आगे पूर्ण समर्पण कर देती है। लेकिन भीम को इस बात का जरा भी आभास नहीं है कि वह अपनी चतुराई और संसाधनों से अन्य स्त्रियों को मोहित कर

रहा है। अब अर्जुन एक अलग ही प्रकार का पुरुष है। अर्जुन, तुम मुझे अपने प्रति आसक्त करने में सफल रहे, मेरी निष्ठा केवल तुम्हारे प्रति ही जीत ली, किसी और के प्रति नहीं। लेकिन चार वर्ष तक स्त्रीविहीन रहकर मेरा इंतजार न कर पाने के कारण, तुम न जाने कितनी स्त्रियों के पीछे पड़े रहे, उनके देह का आनंद लेते रहे। तुम इससे भी आगे बढ़ गए, और अपने लिए एक पत्नी ले आए। स्त्रियों का हृदय जीतना तुम्हारे लिए एक तकनीक, एक कौशल बन गया। तुम इस मामले में कभी वफादार नहीं रह सके। लेकिन यह कृष्ण पाँचों पांडवों को सहन करने के लिए प्रतिबद्ध हो गईं, उन्हें अपने हाथ की पाँचों उंगलियों की तरह एक साथ जोड़ लिया। खैर, मैं अब तक उनके प्रति अपनी भक्ति और प्रतिबद्धता से कभी विचलित नहीं हुई हूँ। लेकिन तुम, अर्जुन, तुमने मेरा सामना करने की शक्ति खो दी है। बिना किसी शर्म के। निःसंदेह, आप पूरे आर्यावर्त के सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर हैं। मेरा जीवन इस तरह टेढ़ा-मेढ़ा क्यों हो गया? मुझे कितनी खुशी हुई जब मेरे पिता ने आर्य भूमि के सबसे प्रसिद्ध धनुर्धर को मेरी दुल्हन बनाने का फैसला किया! क्या किसी क्षत्रिय दुल्हन को सबसे वीर योद्धा के अलावा कोई और जीत सकता है? आखिर, राजा द्रुपद की पुत्री को पाना आसान नहीं है! नहीं, केवल धनुर्विद्या में सर्वोच्च कौशल, ऐसा कौशल जो किसी को सबसे कठिन धनुष को झुकाने और सबसे सटीक तीर चलाने में सक्षम बनाता है, वही मुझे जीत सकता था। मेरे पिता एक क्षत्रिय हैं जो वीरता और पराक्रम की सराहना करते हैं और उनका सम्मान करते हैं। वे एक सच्चे क्षत्रिय हैं जो शत्रु की भी धनुर्विद्या को स्वीकार करने में संकोच नहीं करेंगे। एक क्षत्रिय का कर्तव्य है कि वह अपनी दुल्हन को जीते, न कि उसके लिए भीख मांगे। मेरे पिता के शब्दों से मेरे रोंगटे खड़े हो गए। मैं भी उन्हें मन ही मन दोहरा रही थी।

"हाँ, खेल समाप्त हो गया था। अर्जुन जीत गया। उसने धनुष झुकाया और दोनों लक्ष्यों पर बड़ी कुशलता से निशाना साधा। कृष्ण अपने पिता के वृक्ष से कटकर अर्जुन की टोकरी में गिर पड़ीं। आर्यावर्त के सभी राजा मुझे लेकर भागने के लिए दौड़ पड़े। आखिर कौन सा क्षत्रिय खेल में हारने के बाद मुस्कुराते हुए लौट सकता है? क्या यह उनके खून में है? वह भी एक आर्य क्षत्रिय के खून में? वे सब जुआरी हैं। अगर वे कोई खेल जीत जाते हैं, तो उन्हें लगता है जैसे उन्होंने आकाश जीत लिया हो। अगर वे हार जाते हैं, तो वे हिंसक, झगड़ालू भीड़ में बदल जाते हैं, अपना या दूसरों का खून बहाते हैं या दोनों! अगर पिता ने पहले से ही यह अनुमान

न लगाया होता और आने वाले झगड़े से निपटने के लिए अपनी सेना तैयार न रखी होती, तो अर्जुन और पांचों पांडवों द्वारा एकत्र किए गए इस फल को न जाने किसके दांतों से कुतरा गया होता!"

"हाँ, सब खत्म हो गया था। अर्जुन जीत गया। अपनी दुल्हन को घर ले आया। और क्या घर था! ऐसा घर जिसमें मैंने पहले कभी कदम नहीं रखा था। हमारे कस्बे के दक्षिणी हिस्से में एक कुम्हार के घर के पीछे एक जर्जर सी झोपड़ी थी! वह मिट्टी के बर्तनों और तरह-तरह के पात्रों से घिरी हुई थी, जो अभी-अभी चाक पर बने थे और धूप में सूखने के लिए रखे गए थे। फर्श नरम गीली मिट्टी से सना हुआ था। शुक्र है, झोपड़ी के अंदर ऐसी कोई मिट्टी नहीं थी। ऐसा लगता है कि वह झोपड़ी खास तौर पर उनके रहने के लिए बनाई गई थी। पांडव अपनी जीती हुई राजकुमारी को नंगे पैर लेकर गए, क्योंकि उनके पास रथ नहीं था। जब वह स्वयंवर के लिए विशेष रूप से पहने गए अपने चमकदार आभूषणों को पहनकर गली से गुजरी, तो क्या जुलूस देखने वालों की कमी थी? पुरुष और महिलाएं, बूढ़े और जवान, सभी अपनी-अपनी राजकुमारी के घरों से बाहर निकल आए या इस अनोखे दृश्य को देखने के लिए बालकनियों पर जमा हो गए। गली में, मेरे साथ काफिला था, और अर्जुन, बाकी चार पांडवों से घिरे हुए थे। इनके पीछे उमड़ती हुई भीड़ थी। वे मुझे झोपड़ी में ले गए।" कुम्हार के घर के पीछे। अर्जुन ने 'माँ' कहकर पुकारा। फिर वह मुझे अंदर ले गया। उसने गर्व से माँ से कहा, 'मैंने इसे जीता है और लाया हूँ।' उसने माँ से पूछा, 'तुम कहती थीं कि पूरी दुनिया में मेरे लिए कोई स्त्री उपयुक्त नहीं है। क्या यह सुंदर नहीं है?' उसकी माँ ने दोनों हाथों से मेरा चेहरा उठाया और देखा। उनके हाथ बड़े थे, शरीर मजबूत था, बाल चाँदी जैसे थे, चेहरा आत्मविश्वास से भरा था, सफेद वस्त्र, एक ऊपरी आवरण, गहनों का बिल्कुल अभाव - गरिमापूर्ण गरीबी की साक्षात तस्वीर। मेरे चेहरे, बाहों और पीठ पर धीरे से हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा, 'तुम सचमुच सुंदर हो। मेरा यह पुत्र खुद को बहुत सुंदर समझता है। तुम्हारी सुंदरता उसके घमंड को चूर-चूर कर देगी।' फिर उन्होंने मुझे बड़े प्यार से गले लगाया। खैर, मेरी सास बड़े दिल वाली हैं। आमतौर पर सासें सुंदर बहुओं से ईर्ष्या करती हैं। उस पल से लेकर आज तक, मेरी इस सास ने मुझे कभी भी अपनी प्रतिद्वंदी नहीं माना। वह मुझे अपनी स्नेहपूर्ण देखभाल से दुलारती हुई, कहती थीं, 'कृष्ण, मेरे कृष्ण, अच्छे वस्त्र पहनो, उत्तम आभूषण पहनो, अच्छा भोजन करो।' राजसूय अनुष्ठान के दौरान, जब मैं पूरी तरह

सज-धज कर उनके चरण स्पर्श करने और उनका आशीर्वाद प्राप्त करने गई, तो उन्होंने मुझे गले लगाया और आँखों में आँसू लिए कहा, 'मेरे प्यारे बच्चे, मेरे पुत्रों ने जो भी समृद्धि प्राप्त की है, वह तुम्हारे कारण है।' खैर, मैंने उन्हें साढ़े तेरह वर्षों से नहीं देखा है। अब उनकी क्या हालत होगी! कितनी कमजोर हो गई होंगी! अपने पुत्रों, बहुओं और नाती-पोतों से वंचित, अपने राज्य से वंचित! अर्जुन ने उनसे कहा था, 'राजा द्रुपद ने ऐसा धनुष स्थापित किया था जिसे आर्यावर्त का कोई क्षत्रिय झुका नहीं सकता था। लेकिन मैंने उसे झुका दिया। और इस कन्या को भी आपकी इच्छा के अनुसार झुका दिया। मैं उस राजा के उपहार लेकर आने और औपचारिक विवाह संपन्न कराने का इंतजार नहीं करना चाहता। आप हमें केवल इन सरल शब्दों में आशीर्वाद देती हैं, 'विवाह संपन्न हो गया'...'

अर्जुन से एक हाथ लंबे, विशालकाय भीम, जो उनके बगल में खड़े थे, ने बीच में दखल देते हुए कहा, "माँ, इस अर्जुन ने धनुष तो झुका दिया होगा। लेकिन ऐसे स्वयंवरों में, केवल प्रतियोगिता जीतना ही काफी नहीं होता। अगर लड़की विजेता के गले में विजय की माला पहना दे, तो भी बात खत्म नहीं हो जाती। क्या ऐसा करने पर भी आसपास के क्षत्रिय निष्क्रिय रहेंगे? वे बल और छल का प्रयोग करते हैं और प्रतियोगिता के विजेता पर टूट पड़ते हैं। खैर, आज भी यही हुआ। दुर्योधन और उसके साथी भी स्वयंवर में आए थे। जैसे ही उन्हें पता चला कि अर्जुन ने धनुष झुकाया है, वे सब लड़की का अपहरण करने और उसे अपने साथ ले जाने के लिए दौड़ पड़े। प्रतियोगिता जीतने के गौरव में डूबे अर्जुन को समझ ही नहीं आ रहा था कि उनके आसपास वास्तव में क्या हो रहा है। वे इस विचार में पूरी तरह डूबे हुए थे कि हजारों आँखें उन पर, नायक पर, विजेता पर, प्रशंसा और ईर्ष्या से टिकी हुई हैं। मैं अचानक आगे बढ़कर उनका हाथ पकड़ने के लिए कूद पड़ा।" मैंने उस लड़की को पकड़ा और उसे वापस खींच लिया। फिर मैं दुर्योधन पर टूट पड़ा। मैंने स्वयंवर पंडाल का एक खंभा उठाया और कर्ण और दुस्साना को बुरी तरह पीटा। मेरे द्वारा खंभा उखाड़ने के कारण स्वयंवर पंडाल गिर गया। इससे चारों ओर अफरा-तफरी मच गई। तब तक द्रुपद के सैनिक सतर्क हो चुके थे कि क्या हो रहा है। संक्षेप में, जो हुआ वह साधारण नहीं था, एक घटना नहीं बल्कि दो घटनाएँ थीं —एक, धनुर्विद्या प्रतियोगिता जीतना, और दूसरी, लड़की पर अधिकार प्राप्त करना। बेशक, अर्जुन एक कुशल धनुर्धर के रूप में चमके, लेकिन दूसरी घटना का केंद्र मैं ही था। ज़रा उसके बाएँ हाथ को देखिए, और उस पर मेरे उंगलियों के

निशान देखिए, जो तब बने थे जब मैंने उसे पकड़ा और अपने शत्रुओं से दूर खींचा था। देखिए, यह अभी भी ताज़ा और लाल है। इसलिए मैं उसे अपनी पत्नी होने का दावा करता हूँ।

शब्दों की इस बौछार के बाद, किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा। एकदम सन्नाटा छा गया। लेकिन केवल एक पल के लिए। फिर अर्जुन ने करारा जवाब दिया, 'वह तुम्हारी पत्नी बनेगी, तुम्हारी पत्नी? क्या यही बात है? द्रुपद ने घोषणा की थी कि उनकी पुत्री का विवाह उस योद्धा से होगा जो धनुष झुकाएगा। यही उनकी शर्त थी और मैंने उसे जीत लिया। बेशक, कुछ गुंडों ने हस्तक्षेप किया। शायद एक बड़े भाई के रूप में तुम छोटे भाई की संपत्ति की रक्षा के लिए दौड़े होते। लेकिन इस आधार पर अब अगर तुम दावा करते हो कि संपत्ति तुम्हारी है, तो तुम्हारी जीभ में कीड़े पड़ जाएं।'

भीमा ने, जो आसानी से हार मानने वालों में से नहीं थे, कहा, "क्या तुम्हें लगता है कि सही आचरण और नैतिक जीवन के सभी नियम केवल तुम्हारी ज़ुबान पर हैं? अगर मैंने दखल न दिया होता, तो वह संपत्ति अब तक कम से कम बारह मील दूर हस्तिनायती के रास्ते में होती। शायद तुम्हें खुशी होती अगर दुर्योधन उसे पा लेता। तुम उसे अपने भाई को देने को तैयार नहीं हो?" मैंने उसे देखने के लिए अपना सिर उठाया। तब भी मैं उसे पूरी तरह से नहीं देख पाया। कितनी ऊँचाई! शर्म के मारे मैं उसका चेहरा देखने से पीछे हट गया। साथ ही, भाइयों के बीच जो लड़ाई चल रही थी, उससे मैं थोड़ा डर भी गया था।

उत्तेजित होकर अर्जुन चिल्लाया, "अरे, तुम! ईर्ष्या और ऐसी बातों की बात मत करो। कुटिया से बाहर आओ। अपना धनुष और शस्त्र उठाओ। मैं भी वही करूंगा। देखते हैं। अगर मैं तुम्हें एक ही बाण से मार गिराऊं, तो वह मेरी होगी। अगर तुम मुझे मार गिराओ, तो उसे अपने लिए ले लो। अगर तुममें साहस है, तो इस चुनौती को स्वीकार करो।"

भीम ने उत्तर दिया, "अर्जुन, क्या अब तुम अपने बड़े भाई को चुनौती देने के लिए पर्याप्त पुरुष बन गए हो? तुमने कभी मुझे चुनौती देने और मेरा विरोध करने का साहस नहीं दिखाया। जिस युद्ध की तुम बात कर रहे हो वह द्वंद्वयुद्ध है। द्वंद्वयुद्ध में कोई भी धनुष-बाण का प्रयोग नहीं करता। यह हमेशा कुश्ती के रूप में होता है, शरीर-से-शरीर का मुकाबला। बाहर आओ। एक ही झटके में मैं तुम्हारी छाती की हड्डियाँ चूर-चूर कर दूँगा। जैसे खोखली लकड़ी को चूर-चूर कर चूर-चूर

कर चूर्ण-चूर कर चूर्ण-चूर कर चूर्ण-चूर्ण कर देते हैं?” इस पर सास ने हाथ उठाया और भीम की बांह और अर्जुन के कंधे पर एक-एक प्रहार किया। मैंने कभी किसी माँ को इतनी कम उम्र में इतने बलवान बच्चों को इतनी बुरी तरह पीटते नहीं देखा था। तब मैंने सोचा: “मान लो मेरी माँ जीवित होती, तो क्या वह द्दष्टद्युम्न को इतनी शारीरिक शक्ति से संभाल पाती?” बस, यही हुआ। उनके प्रहारों ने दोनों को डरपोक पिल्लों जैसा बना दिया। कुटिया में सन्नाटा छा गया। वह उन पर चिल्लाई, “धनुष-बाण का मुकाबला है क्या? कुश्ती है क्या? मेरे बच्चों, मेरे बच्चों।” जन्म से ही भाई, एक ही खून के रिश्ते वाले, एक लड़की के प्रति दीवानगी के कारण आपस में लड़ पड़े! धिक्कार है तुम पर। चुप रहो। मुझे सोचने दो और कोई रास्ता निकालने दो। धर्म, तुम कभी झूठ नहीं बोलते। मुझे बताओ वहाँ असल में क्या हुआ था?

तब तक मैं जान चुका था कि ये पांडव हैं। धर्म सबसे बड़े थे। उनका चेहरा शांत था। उनमें भीम का शरीर और अर्जुन की तीक्ष्णता नहीं थी। उनका शरीर सुगठित और विनम्र था। धर्म की भौहें भी धीरे-धीरे हिलती थीं। वे तब भी ठीक वैसे ही थे जैसे अब हैं। वे सिर झुकाए खड़े थे और उन्होंने अपना मुंह नहीं खोला। उनकी माता ने आदेश दिया, 'धर्म, सच बताओ।' तब मैंने अपनी झिझक छोड़कर उनके चेहरे की ओर देखा। उनका चेहरा असमंजस में था, पीड़ा से भरा हुआ। उन्होंने ऐसे कहा जैसे उनके गले में कुछ अटक गया हो, 'माता, सच कहूँ तो, धर्म का विवाह भीम या अर्जुन में से किसी से भी हो जाए तो यह नैतिक नियमों के विरुद्ध होगा। मुझे बताइए, क्या बड़े पुत्र का अविवाहित रहते हुए छोटे पुत्र का विवाह करना आर्यों का उचित आचरण है?'

"तेज बुद्धि वाले अर्जुन ने तुरंत प्रतिक्रिया देते हुए कहा, 'तो फिर क्या?'"

"धर्म ने फिर कुछ नहीं कहा। लेकिन वो लगातार मुझे चोरी-छिपे देखता रहा! वो मुझसे अपनी नज़रें नहीं हटा पा रहा था। फिर मुझे पसीना आने लगा। मुझे अब याद नहीं आ रहा कि किस वजह से ऐसा हुआ था - डर या घबराहट।" इस याद में खोते हुए कृष्णा ने पंखा चलाना बंद कर दिया। उसने छब्बीस साल पुरानी अपनी याद को वहीं, उसी पल में रोक दिया। उसे याद था कि दूसरों ने क्या कहा था, लेकिन उसे यह साफ नहीं था कि उसके अंदर क्या हुआ था। लेकिन उसे याद आया, "जिन दो पैरों पर मेरा शरीर टिका था, वे पसीने से भीगे हुए थे और ज़मीन से चिपक गए थे।" अब उसका मन फिर से अतीत की यात्रा पर निकल पड़ा...

"...अर्जुन ने धर्म से कहा, "बड़े भाई, इसका मतलब है कि आप भी उससे विवाह करने के इच्छुक हैं। अब तक तो मैं मानता था कि आप हमेशा न्यायप्रिय और निष्पक्ष रहे हैं, कभी भी धर्म के मार्ग से नहीं भटके, लेकिन अब? आप हमें यह सिखा रहे हैं कि छोटा भाई बड़े भाई से पहले विवाह नहीं कर सकता, इस तरह आप अपना अधिकार जता रहे हैं। आपने हिडिम्बा वन में ऐसा क्यों नहीं किया? तब आपने बड़े होने का दावा क्यों नहीं किया? क्या इसलिए कि आप इस बात से बहुत डरे हुए थे कि राक्षसी स्त्री आपको बालों से पकड़कर जमीन पर पटक देगी?" ये शब्द सुनकर धर्म ने अपना सिर और नीचे झुका लिया। उनका चेहरा रोने के बाद बच्चे की आँखों की तरह लाल हो रहा था। माँ ने भय और आश्चर्य से भरे स्वर में कहा, "धर्म, तुम वास्तव में क्या कह रहे हो?" वह थक गई और बैठ गई। उन्होंने मुझे भी अपने सामने बैठने को कहा। कुम्हार का दरवाजा खुला था। कुम्हार के घर के सामने का स्थान लोगों से भरा हुआ था, हमारे शहर के लोग।" उन्होंने अपने पुत्रों से कहा, 'भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव, तुम बाहर जाओ और देखो कि उस भीड़ में से कोई भी हमारी कुटिया के पास खड़े होने की हिम्मत न करे। अगर वे बात न मानें तो उन्हें बाण चलाने की धमकी दो। उनसे कहो कि यह राजकवि का आदेश है।' फिर वे सब चले गए। उनकी माँ ने मुझे अपने पास खींच लिया और बोलीं, 'बच्ची, तुम सिर्फ एक सुंदर लड़की नहीं हो। हालाँकि तुम्हारा रंग बहुत गोरा नहीं है, फिर भी तुम्हारे नैन-नक्श—तुम्हारा चेहरा, नाक, आँखें और कद-काठी—में एक अनूठा आकर्षण है। वरना मेरे पुत्र तुम्हारे लिए इस तरह क्यों लड़ रहे हैं? मैं तुम्हें तुम्हारे पिता को लौटा दूँगी। तुम्हें बहू बनाकर घर में कलह को न्योता देने का क्या फायदा?' एक बहू होने के नाते मैं आपको बता सकती हूँ कि इन शब्दों ने मुझे बहुत क्रोधित किया। मेरे दोस्तों और नौकरों ने मुझे मेरे आकर्षण के बारे में बताया था। पिता और भाई को इस पर गर्व था। मेरी सहेली ने कहा था कि स्वयंवर में उपस्थित हर राजकुमार या शासक मुझे घूर रहा था, पूरी तरह से मोहित। लेकिन यह कुंती मुझ पर एक अपराध का आरोप लगा रही थी। मैंने अपना चेहरा उठाकर उसकी ओर देखा। उसके चेहरे पर चिंता और बेबसी का मिलाजुला भाव था। फिर भी वह मेरी बहुत प्रशंसा कर रही थी। उसकी आँखें मुझे ऐसे निहार रही थीं मानो वह अपने बेटों से भी ज़्यादा मुझ पर मोहित हो! मानो वह मेरा हाथ विवाह के लिए थाम रही हो, उसने अपने दोनों हाथ फैलाए और मेरा हाथ थाम लिया। और उसके हाथ कितने बड़े थे! उसका स्पर्श कितना मज़बूत और गर्मजोशी भरा था! मैं

चुपचाप, सिर झुकाए बैठी थी। हमने भाइयों को भीड़ को भगाते और उन्हें आदेश देते सुना, 'तुम वहाँ, कोई यहाँ खड़ा न रहे। तुरंत अपने-अपने घर जाओ।' 'अगर तुम्हें अपनी राजकुमारी को देखना है, तो विवाह कक्ष में आओ। अभी के अभी घर जाओ।' 'देखो वहाँ, तुम्हारे राजा के सैनिक तुम्हें भगाने के लिए यहाँ आ रहे हैं।' जल्द ही पाँचों भाई एक-एक करके कुटिया में आ गए। फिर वे सब मेरे और अपनी माँ के चारों ओर बैठ गए। वे इस तरह बैठे थे मानो वे मुझ पर अपना अधिकार आसानी से छोड़ने को तैयार न हों! या शायद वे मेरा अपहरण करने की योजना बना रहे थे। भीम को छोड़कर, जो निहत्था था, बाकी सभी के पास धनुष और बाण थे। उसके चेहरे पर मानो भाव थे, मानो कह रहा हो, मुझे धनुष और बाण जैसी चीजों से क्या लेना-देना! माँ ने आदेश दिया, 'सहदेव, जाओ और दरवाजा बंद कर दो।' तभी मैंने सहदेव को दरवाजा बंद करने वाले के रूप में पहचाना, लेकिन मुझे उसे छुपकर देखना पड़ा। उसका शरीर कोमल और सुंदर था। वह मेरी ही उम्र का था या शायद मुझसे भी छोटा। उसमें मर्दाना ताकत और स्त्री जैसी कोमलता का अद्भुत मेल था। एक जवान लड़के का चेहरा जिस पर अभी मूंछें और दाढ़ी नहीं आई थीं। उसके जैसा ही एक और साथी था। उसी उम्र का। बिल्कुल उसी कद-काठी का। शाम हो चुकी थी। लेकिन उस बिना खिड़की वाली झोपड़ी में, जिसका एकमात्र दरवाजा बंद था, हमेशा रात ही रहती थी। मेरे अलावा, वे उस अंधेरे में मात्र आकृतियाँ थे। उन्हें केवल उनके आकार से ही पहचाना जा सकता था। उनकी माँ, जो मेरा हाथ पकड़े हुए थी, बोली, 'सहदेव, धर्म भी उसकी सुंदरता पर मोहित हो गया है।' इसलिए, उनसे न्यायपूर्ण शब्दों की अपेक्षा करना संभव नहीं है। आप हमें बताइए कि इस स्थिति में क्या करना उचित है, क्या न्यायसंगत है। लेकिन अंतिम निर्णय मेरा होगा। हम तीनों इस निर्णय से बंधे होंगे। यदि हम यह निर्णय लेते हैं कि वह हमारे कल्याण के लिए हानिकारक होगी, तो हम उसे उसके पिता की देखरेख में लौटा देंगे और आज रात ही इस शहर को छोड़ देंगे।

सहदेव कुछ नहीं बोले। सब लोग सांस रोककर बैठे रहे, मानो पानी के नीचे बैठे हों। केवल उनकी माँ ही साँस ले रही थीं। तभी, मेरा खून बेतहाशा दौड़ने लगा। उन्होंने अपने बेटों से पूछा, 'तुम चुप क्यों हो?' बाहर से सैनिकों के शब्द सुनाई दिए - 'अगर तुम यहाँ से नहीं गए तो मैं तुम्हें यहीं गिरफ्तार कर लूँगा।' तब माँ ने कहा, 'बेटा, सहदेव! तुम कभी झूठ नहीं बोलते। हमें बताओ कि क्या सही और न्यायसंगत है।' बेचारे सहदेव! उन्होंने खाँसा और फिर गला साफ किया। उनके गले

से मुश्किल से निकली आवाज़ में उन्होंने बुदबुदाया, 'माँ, कृपया इस अँधेरे में भी नकुल कहाँ देख रहे हैं, इस पर ध्यान दें।' तुरंत नकुल ने कहा, 'ठीक है, माँ, यह भी देखो कि सहदेव का दिल कहाँ जा रहा है, और स्थिति को समझो।'

"मेरा बेकाबू, दिशाहीन खून उसी क्षण रुक गया। उनकी माँ की साँस अँधेरे में गायब हो गई। अब बस अँधेरा ही था। धुंधली आकृतियाँ भी नहीं दिख रही थीं। उनकी माँ ने अपना हाथ मेरे हाथ से छुड़ा लिया। तब मुझे बिलकुल अकेलापन महसूस हुआ। मैंने असहनीय सन्नाटे को महसूस किया। एक ऐसा अकेलापन जिसमें साथ देने वाला कोई नहीं था! आकाश में बिना धागे के उड़ती पतंग का अकेलापन!"

कुछ देर बाद मां बोलीं, "कुम्हार की पत्नी ने मुझे थोड़ा सा टूटा हुआ गेहूं दिया है। मैंने उसे दूध और गुड़ के साथ पका लिया है। उठो, चलो साथ मिलकर खाते हैं।"

सहदेव उठे और तेल का दीपक जलाया। सबने सागौन के पत्तों से बनी थाली में भोजन किया। भोजन समाप्त होने के बाद माताजी ने कहा, "अब मैं और राजकुमारी भोजन करके अंदर सो जाएँगे। तुम पाँचों रात भर बाहर रहकर बाण-धनुष से हमारी रक्षा करना। मान लो दुर्योधन के लोग उसे यहाँ से अगवा करने आ जाएँ तो क्या करना? जब तक मैं उसके बारे में अंतिम निर्णय न ले लूँ, तब तक इस मामले से दूर रहना। उसके कारण ईर्ष्या, शत्रुता या द्वेष नहीं रखना। भीम और अर्जुन, तुम्हें विशेष चेतावनी दी जाती है।"

"दलिया के स्वाद की किसे परवाह थी? दरवाजा बंद करने के बाद, दीपक की मंद रोशनी में पांडवों की माता मेरे पास बैठ गईं। फिर उन्होंने मुझे अपनी दोनों भुजाओं से थामकर गले लगाया और कहा, 'बेटी, क्या तुमने अपने पड़ोसी कुरु देश के राजा पांडु के बच्चों के बारे में नहीं सुना? दुर्योधन ने हमारे लिए बनवाए गए अपने लाख के महल में हम सबको जलाने की कोशिश की थी। हम बच गए। देखो, मेरे केवल पुत्र हैं। कोई पुत्री नहीं। अब तुम मेरी पुत्री बनो।'"

"कितनी विशाल भुजाएँ! दुबली-पतली होते हुए भी, चौड़ी, भरी हुई और गर्म छाती। यह एक ऐसा आलिंगन था जिसने मेरे अकेलेपन को दूर कर दिया और आशा की भावना जगा दी। मुझे याद है कि मेरी माँ भी मरने से पहले मुझे ऐसे ही आलिंगन देती थीं। उनकी मृत्यु के बाद कृष्ण को ऐसा गर्म, आरामदायक आलिंगन कैसे मिल सकता था? पांडवों की उस माता ने मेरा दिल जीत लिया। अर्जुन ने धनुष

झुकाकर यांत्रिक मछली पर बाण चलाया था। भीम ने अपनी शारीरिक शक्ति से मुझ पर आक्रमण करने वालों को पराजित किया था। बाकी सभी ने भी मुझे दुर्योधन और उसके मित्रों द्वारा अपहरण करने की साजिशों से बचाने में अपना योगदान दिया था। लेकिन जिसने वास्तव में मेरा दिल जीता, वह पांडवों की वह माता थीं। उन्होंने मुझे अपनी गोद में सुलाया और धीरे से मेरे गालों पर हाथ फेरते हुए कुरु वंश की पूरी कहानी सुनाई। उन्होंने पांडवों पर हुए अन्याय का सजीव वर्णन किया। बेशक, मुझे इसके बारे में सब पता था। मेरे पिता मुझे कुरु वंश के बारे में पूरी जानकारी देते रहते थे। भीष्म के वंश के बारे में भी, जिन्होंने अहंकारी द्रोण को शरण दी थी और इस प्रकार मेरी जान की जिम्मेदारी साझा की थी।" पिता का अपमान। फिर भी पिता अर्जुन को बहुत पसंद करते थे। शायद अर्जुन की लगातार प्रशंसा करने से ही मेरे मन में उनके प्रति प्रेम विकसित हुआ!

"आधी रात के कुछ ही समय बाद, उसने मुझसे पूछा, 'बच्चे, क्या तुम जानते हो कि विवाहित जीवन जीने का क्या मतलब होता है?'"

"तब मुझे क्या पता था? तब मुझे बस उतना ही पता था जितना मेरी सहेली और विवाहित नौकरानियों ने मुझे दबे स्वर में बताया था। मैं उस थोड़ी सी जानकारी को बड़ी दिलचस्पी से अपनी कल्पनाओं से सजाती थी। मैं उसे कैसे बताती कि मैंने अपना ज्ञान इस तरह से प्राप्त किया है?"

उन्होंने समझाया, "वैवाहिक सुख देने और प्राप्त करने दोनों में, एक स्त्री के पास पुरुष की तुलना में पाँच गुना अधिक शक्ति और क्षमता होती है। बादल बारिश के बाद खाली हो जाते हैं। लेकिन क्या पृथ्वी एक ही बादल से संतुष्ट हो सकती है? पृथ्वी की सतह पर बारिश भले ही धारा, नदी या बाढ़ बन जाए, लेकिन भीतर और गहराई में पृथ्वी शायद गीली भी न हो! पृथ्वी किसी और आंतरिक ताप को शांत करने के लिए खुले मुँह से प्रतीक्षा कर रही होगी। हे बालक, अठारह या उन्नीस वर्ष के तुम लोगों के लिए ये शब्द समझना कठिन नहीं होगा। मेरे पाँचों पुत्रों से एक साथ विवाह करो। ये पाँचों ही महान प्रजनन शक्ति से संपन्न हैं। तुम्हें भरपूर सुख मिले। तुम्हें जो वैवाहिक सुख प्राप्त होगा, वह पूरे अय्यावर्त में अद्वितीय होगा। इसे मेरा आशीर्वाद मानो।"

"मैं घबराई हुई थी, कांप रही थी, मैंने जवाब दिया, 'मां, आप क्या कह रही हैं?' आज तक मैं यह नहीं समझ पाई हूं और न ही समझा पाई हूं कि मैं उस समय क्यों कांप रही थी।"

माँ ने कहा, 'क्या तुम डरे हुए हो? चिंता मत करो। मैं ध्यान रखूँगी कि मेरे सभी बेटे तुम्हारी बात मानें। और याद रखो, जो व्यवस्था मैं प्रस्तावित कर रही हूँ, वह अनसुनी या बेमिसाल नहीं है। हिमालयी क्षेत्र में, जहाँ हम पहले रहते थे, यह प्रथा प्रचलित है। विवाहित लड़की अपने पति के सभी भाइयों की पत्नी होती है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि ऊपरी हिमालयी क्षेत्र में देव नामक एक जाति रहती है, जो आर्य रीति-रिवाजों और परंपराओं का उद्गम स्थल है। वे भी इस प्रथा का पालन करते हैं।'

मैंने आगे कहा, 'हमारे राज्य में गैर-आर्यन समूहों में यह प्रथा प्रचलित है। ईंधन की लकड़ी, मांस, कंबल और ऐसी ही अन्य वस्तुएँ उपलब्ध कराने वाली जनजातियाँ इस प्रथा का पालन करती हैं। मैं अपनी कई दासियों को जानता हूँ जो ऐसे ही समूहों से संबंधित हैं। लेकिन हम आर्य हैं। और हम, पंचाल, आर्यावर्त के सबसे प्रसिद्ध वंशों में से एक हैं।'

उसने कहा, "मुझे लगता है तुम्हारे पिता इस व्यवस्था से सहमत हो जाएँगे। बेशक, राजा को आचरण और नैतिकता के बारे में प्रश्न पूछने ही चाहिए। मुझे विश्वास है कि धर्म उचित कारण बताकर तुम्हारे पिता को मना लेगा। वैसे भी, तुम जीत लिए गए हो, और जीती हुई वस्तु का उपयोग करने और उसका आनंद लेने का अधिकार सभी को है। हमें भी उसमें हिस्सा लेने का अधिकार है। तो फिर तुम व्यर्थ में विरोध क्यों कर रहे हो और अपने दुख को क्यों बढ़ा रहे हो? जब आनंद की बाढ़ आ रही हो, तो उसका विरोध करना और उससे मुँह मोड़ना बुद्धिमानी नहीं होगी। मैं अपने पाँचों पुत्रों को आदेश देती हूँ कि वे तुम्हारे किसी भी आदेश का उल्लंघन न करें, और तुम्हारे द्वारा उन पर लगाई गई किसी भी सीमा को पार न करें।"

अगले दिन, पिता ने उन पाँचों को अपने महल में आमंत्रित किया, उन्हें वस्त्रों और आभूषणों के उपहार देकर सम्मानित किया, उन्हें राजकुमारों के योग्य आसन दिए और फिर विवाह का विषय उठाया। ऐसा प्रतीत होता है कि धर्म ने सबसे पहले बात की और वही दोहराया जो उसने पहले कुटिया में कहा था। उसने कहा, 'पांचाल के पूज्य शासक, हम पाँचों मिलकर उस लड़की से विवाह करेंगे जिसे हमने कल जीता था। यदि आप सहमत हों, तो कृपया विवाह संपन्न कराएँ। यदि नहीं, तो हम अपनी क्षमता के अनुसार व्यवस्था स्वयं कर लेंगे। याद रखें, आपने अपनी पुत्री उस व्यक्ति को देने का वचन दिया था जिसने मछली के यंत्र से धनुष

तोड़ा था। अब आपकी पुत्री हमारी संपत्ति है, और किसी को भी इस मामले में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है।'

इस पर पिता ने कहा, 'लेकिन फिर जो आप प्रस्तावित कर रहे हैं, क्या वह गैर-आर्य प्रथा नहीं है?' धर्म ने इसका खंडन करते हुए कहा, 'यदि यह अनैतिक या धर्म के विरुद्ध होता, तो आप अपने राज्य में गैर-आर्यों को इसका पालन करने की अनुमति क्यों देते? और अब तक कितने आर्य शासकों ने गैर-आर्य स्त्रियों से विवाह करके संतानों का राज्याभिषेक नहीं किया है? जब स्थिति ऐसी है, तो उनकी इस विशेष प्रथा का पालन करने में क्या बुराई है?'

"धर्म ने हस्तिनावती पर युवराज के रूप में शासन किया था। वाद-विवाद में भला कौन उन्हें हरा सकता था? तब धर्म ने उत्तर दिया, 'हे महाराज, आप तो आख़िरकार मुझसे बड़े हैं। हमारी पूजा के योग्य हैं। हम आपकी पुत्री को यहाँ लाएँगे। आप स्वयं उसका विवाह हम पाँचों से करवा दें। क्या हम आपके आशीर्वाद के बिना रह सकते हैं? अब से आपका आशीर्वाद ही हमारा मुख्य रक्षक होगा।' फिर उन्होंने पिता को प्रणाम किया। अन्य लोगों ने भी उनका अनुसरण किया। पिता पराजित हुए। नहीं, पिता विजयी हुए। उन्हें मन ही मन अत्यंत प्रसन्नता हुई कि कुरु वंश की एक शाखा उनके आशीर्वाद के संरक्षण में आ गई है।"

"अगले दिन वह मुझे और कुंती को महल ले गए और कुंती के साथ एक राजमाता के योग्य सम्मान का व्यवहार किया। फिर उन्होंने मुझे एक तरफ ले जाकर पूछा, 'बच्ची, इस मामले में तुम्हारी क्या राय है?'"

मैंने कहा, 'इस मामले में आप मेरी राय क्यों जानना चाहते हैं? अगर मैं मना कर दूं, तो क्या इस स्थिति से बचा जा सकता है? उन्होंने निश्चित रूप से आपकी शर्तों के अनुसार मुझे जीत लिया है। जीतने के बाद, उन्हें मेरे साथ मनमानी करने का अधिकार मिल गया है। ऐसे में, क्या आप इस बात पर दृढ़ रह सकते हैं कि आप आर्य धर्म का उल्लंघन करते हुए मुझे किसी को नहीं सौंपेंगे?'

पिता ने कहा, "देखो, बड़े बेटे धर्म ने मुझे दुविधा में डाल दिया है। उसने मुझसे पूछा है कि अगर यह धर्म के विरुद्ध है, तो मैं अपने राज्य की तीन-चौथाई आबादी को इसकी अनुमति क्यों देता हूँ? मैंने कहा कि यह उनकी जनजातीय प्रथा है। फिर उसने पूछा, अगर मैं लोगों को जनजातीय प्रथा के नाम पर हर तरह के काम करने की अनुमति देता हूँ, तो क्या मैं शासक के रूप में उनके पापों में भागीदार नहीं हो जाऊँगा? उसने तर्क दिया कि मेरे जंगलों में रहने वाले राक्षस नरभक्षण को अपनी

जनजातीय प्रथा मानते हैं। लेकिन मैंने इसे वैध क्यों नहीं माना?" उन्होंने पूछा। "बेटा, कल से मैं धर्म की पेचीदगियों को लेकर बहुत परेशान हूँ। मेरे मन में यही है कि उनकी माता की सलाह मानना ही सही निर्णय है। अगर इस स्थिति में भी तुम उनकी बात नहीं मानोगे, तो मैं अपनी सेना को आदेश देकर उन्हें पंचाल से बाहर निकाल दूँगा।"

"पिताजी ने सारी ज़िम्मेदारी मेरे कंधों पर डाल दी थी, और इससे मैं उत्साह से भर उठी। पाँच पतियों पर शासन करने का उत्साह, ऐसे मर्दाना गुणों के साथ, उस आनंद की अपेक्षा से उत्पन्न हुआ जो अब तक किसी भी आर्य स्त्री को प्राप्त नहीं हुआ था। जो खुशी पहले अस्पष्ट थी, अब पाँच स्रोतों से पाँच रूपों में मुझ तक प्रवाहित होने वाले आनंद के रूप में स्पष्ट हो गई। बेशक, इस बात की भी संतुष्टि थी कि यह अंततः उनके पूर्वजों, देव जाति की मूल आर्य प्रथा की ओर वापसी थी। इसलिए मैंने पिताजी से कहा, 'पिताजी, आपकी इच्छा मेरी भी है। मुझे लगता है कि जिन लोगों ने मुझे जीता है, उनकी इच्छा का पालन करना मेरा धर्म है।'"

"चूंकि यह एक असामान्य स्थिति थी, इसलिए पिताजी स्वाभाविक रूप से पांच पतियों के साथ वैवाहिक जीवन के विवरण को स्पष्ट करने में रुचि रखते थे। मैं दरवाजे के पीछे खड़ी होकर सब कुछ सुन रही थी। पिताजी ने जोर देकर कहा कि यद्यपि यह प्रथा गैर-आर्यन मूल की है, फिर भी इसके विवरण आर्यन मानदंडों के अनुरूप होने चाहिए। हमारे कुल पुरोहित भी इन चर्चाओं में शामिल हो गए। उन्होंने विवाह की शर्तों को लिखित रूप में तय कर लिया था। पहला, धर्म, जो सबसे बड़े थे, शासक होंगे और मुझे उनकी मुख्य रानी के रूप में उन्हें सौंप दिया जाएगा। दूसरा, यद्यपि सबसे बड़े भाई का राज्याभिषेक हुआ, फिर भी अन्य भाइयों का भी इसमें हिस्सा होगा और मेरे साथ उनका भी सुख-साधन होगा। तीसरा, राज्य का चाहे जितना भी विस्तार और विकास हो, मेरे सभी बच्चों को धर्म की संतान कहा जाएगा। चौथा, बच्चे अन्य चारों को भी पिता कहेंगे। सभी बच्चों को सभी पिताओं के अंतिम संस्कार में भाग लेने का समान अधिकार होगा। पांचवां, यदि भविष्य में किसी स्वयंवर में पांचों भाइयों में से किसी को दुल्हन मिलती है, या यदि वे किसी युद्ध में किसी कन्या को जीतते हैं, तो ऐसी कन्याओं का विवाह भी उसी प्रकार होगा, नाममात्र के लिए सबसे बड़े भाई से, लेकिन उनका हिस्सा भी साझा होगा।" सभी के द्वारा। ऐसी अगली पत्नियों की वैवाहिक प्रक्रिया के नियमित विवरण सबसे बड़ी पत्नी, मुख्य रानी द्वारा निर्धारित किए जाएंगे। छठा... भला कौन इन

सभी विवरणों को याद रखना चाहेगा? उन्होंने आर्य नियमों, आर्य रीति-रिवाजों, आर्य धर्म की बातें कीं। सब खोखले शब्द। अर्जुन ने कितनी आसानी से इन्हें तोड़ दिया जब उसे लगा कि यह उसके लिए उपयुक्त है, और अपने लिए एक पत्नी से विवाह किया। मैं यहाँ जीवित हूँ। मुख्य रानी! उसके राज्य का प्रतीक! उसके जुए में दांव! अपमानों की शिकार, शिकार किए गए जानवरों के कच्चे मांस, जंगल की जड़ों और फलों पर जीने के लिए अभिशप्त, अजनबियों के घरों में गुलामी करने के लिए। निश्चित रूप से, यह वह सुख है जो अन्य आर्य महिलाओं को नहीं मिलता! किसी भी अन्य आर्य महिला के आनंद से पाँच गुना अधिक! भगवान जाने वे योद्धाओं के बीच प्रतिस्पर्धा पर आधारित ऐसे विवाह क्यों करते हैं! स्वयंवर की यह क्षत्रिय प्रणाली जिसमें सबसे शक्तिशाली व्यक्ति दुल्हन जीतता है, उसका अपनी इच्छा अनुसार उपयोग करता है, उसे अपनी इच्छा से और जिसके साथ चाहे साझा करता है, और यहाँ तक कि अगर चाहे तो उसे त्याग भी देता है! मुझे आश्चर्य है कि इस प्रणाली की शुरुआत किसने की!

ज्योतिषमती कृष्ण के पास गईं और बोलीं, "स्वामी जी, बच्चे आ गए हैं। पाँचों एक ही रथ में आए हैं। बाहर कितनी तेज धूप है!"

कुछ देर बाद घर के सामने शोर मच गया। बच्चे रथ से उतर गए। कृष्ण दौड़कर दरवाजे की ओर गए। बाहर सूरज बहुत तेज़ चमक रहा था। असहनीय गर्मी थी। बच्चों के चेहरे और शरीर पसीने से तरबतर थे। पसीने पर धूल की एक परत जम गई थी। वे सब अंदर गए और तुरंत नहाने लगे। इसी बीच नौकर-चाकर आम रसोई से गरमागरम व्यंजन लाकर अलग-अलग घरों में परोसने लगे। कृष्ण ने ज्योतिषमती द्वारा लाए गए भोजन से अपने बच्चों को खिलाया, और उनके मना करने के बावजूद उन्हें भोजन दिया। बाद में वे अपना भोजन समाप्त करने के लिए बैठ गए। पेट भरते ही बच्चे जम्हाई लेने लगे। बाहर तेज़ धूप थी। कमरे के बीच में, दीवारों पर गीली, ठंडी लमाका चटाइयों से ढके हुए, ज्योतिषमती ने बच्चों के लिए गद्दे बिछाए। पाँचों बच्चे एक कतार में सो गए। पाँचों सिर एक ही पंक्ति में। केवल पैरों की लंबाई अलग-अलग थी। प्रतिविंध्य विशेष रूप से लंबा नहीं था, लेकिन सबसे छोटा श्रुतसेन सबसे लंबा था। वह बातूनी था। कृष्ण सोच रहे थे कि लड़का किससे मिलता-जुलता है। खैर, वह निश्चित नहीं थीं। ज़ाहिर है, किसी का भी शरीर भीम जैसा नहीं था। वास्तव में, कोई भी बच्चा किसी भी पति जैसा नहीं दिखता था। उनके चेहरे-मोहरे इतने मिश्रित थे, मानो अलग-अलग पिताओं के गुण उनमें समा

गए हों। किसी का माथा नकुल जैसा था, लेकिन नाक अर्जुन, सहदेव या धर्म जैसी थी। इसलिए, कुछ भी निश्चित नहीं था। बस इतना ही कहा जा सकता था कि वे सब मिलकर पांडव वंश के थे। श्रुतसेन भी पांडव वंश का ही था। कृष्ण ने इस बारे में सोचना छोड़ दिया। प्रतिविंध्य असामान्य रूप से कम बोलने वाला था। वह ज्यादातर अपने आप में मग्न रहता था, गहरी सोच में डूबा रहता था। उस समय भी वह चुपचाप लेटा रहा, उसकी निगाहें छत पर टिकी थीं। लेकिन बाकी लोग पीछे से अचानक आए शत्रु से निपटने की रणनीति पर गरमागरम चर्चा में लगे हुए थे। वे विपरीत दिशाओं में एक साथ तीर चलाने के सर्वोत्तम तरीके पर बहस कर रहे थे। सबसे पहले श्रुतसेना को नींद आ गई, उसने बोलना बंद कर दिया और सो गया। श्रुतकीर्ति और सतनिक ने एक साथ जम्हाई ली और फिर एक तरफ सरक गए। सबसे बड़ा भाई चर्चा और बातचीत से अलग रहा था। अब तो उसे नींद भी नहीं आ रही थी। वह बस लेटा हुआ था, चेहरा ऊपर की ओर करके, ऊपर की कड़ियों को गिन रहा था। उसकी माता, कृष्णे, उसके सिर के पास बैठी थीं, उनके हाथ में पंखा था। उन्होंने पंखा चलाना शुरू किया ताकि पाँचों को गर्मी मिले। फिर उन्होंने प्रतिविंध्य से पूछा, "बच्चे, क्या तुम्हें नींद नहीं आ रही है?"

प्रतिविंध्या ने कहा, "मुझे यकीन नहीं है कि मुझे नींद आएगी।"

मां, "धूप में प्रशिक्षण के बाद क्या तुम्हें थकान महसूस नहीं होती?"

बेटे ने कहा, "नहीं, ऐसा नहीं है। मुझे उतनी थकान महसूस नहीं हो रही है।"

खैर, वह कम बोलने वाला लड़का था। और यह बहुत कम संभावना थी कि वह अपने मन की बात कहेगा। अब यहाँ आए हुए पाँच महीने बीत चुके थे, लेकिन वह अपनी माँ से सीमित हद तक ही अपने मन की बात कहने को तैयार था। लेकिन सिर्फ एक बार। वह भी तब जब वहाँ सिर्फ वे दोनों ही हों। और तब जब उसकी माँ चुप हो और वह उसकी ओर खिंचा चला जाए।

उसने पूछा, "दुश्मन सेना द्वारा पीछे से हमला किए जाने पर क्या करना है, यह आपको किसने सिखाया था?"

वह, "अभिमन्यु।"

उसने कहा, "बच्चे, वह अभी सोलह साल का हुआ है। तुम जल्द ही चौबीस साल के हो जाओगे। क्या तुम सब तीरंदाजी में इतने पिछड़े हो कि उससे सीखो? क्या तुम्हारे चाचा ने तुम्हें कुछ नहीं सिखाया?"

उन्होंने कहा, "हां, उन्होंने किया। और बहुत अच्छे से किया। लेकिन अब अभिमन्यु के पिता उन्हें प्रशिक्षण दे रहे हैं, और युद्ध रणनीति में अभिमन्यु के पिता से बेहतर कौन हो सकता है?"

ऊपर की किरणों को देखते हुए, उसने वे शब्द सहजता से कहे, मानो वे साधारण, रोजमर्रा के शब्द हों। लेकिन उन शब्दों ने उसकी माता कृष्ण के हृदय को अत्यंत पीड़ा पहुँचाई। उसने मन ही मन कहा, "अर्जुन अपने पुत्र को युद्ध कला सिखा रहा है। हाँ, उसे ऐसा करना चाहिए। लेकिन क्या ये पाँचों भी उसके पुत्र नहीं हैं? या वह उन्हें केवल अपने बड़े भाई धर्म के पुत्र ही मानता है?" अचानक ही, उसने अर्जुन को एक नए रूप में, एक नए स्वरूप में देखा। एक चतुर व्यक्ति, सुख-भोगी, योद्धा-वीर, सुंदर, अभिमानी, स्वार्थी। अभिमन्यु के विवाह का निर्धारण करते समय ही, ऐसे विचार उसके मन में धुंधले रूप से उभर रहे थे। अब वे खिल उठे और अचानक ही उसे अर्जुन के प्रति घोर घृणा का अनुभव हुआ! उसके मन में यह भावना प्रबल हो गई कि अर्जुन इतना गिर चुका है कि उसे उसके सामने खड़े होने पर भी उससे बात करने से इनकार कर देना चाहिए। पाँचों बच्चों को पंखा झुलाते हुए वह बिना हिले-डुले बैठी रही। केवल प्रतिविंध्य की पलकें हल्की सी फड़फड़ाईं, मानो वह किरणों को देख रहा हो। वह धीरे-धीरे इस निष्कर्ष पर पहुँच रही थी कि अर्जुन, वह नीच प्राणी, धर्म से भयभीत नहीं था, उसके पास आचरण का कोई नियम नहीं था। मुझे धर्म का बोझ उठाना चाहिए, उसी से कुचल जाना चाहिए। वह मुझे धर्म की आग में जलने देगा। बाकी लोग धर्म की परवाह नहीं करते थे, विशेषकर अर्जुन! उसे याद आया, "पांच अलग-अलग रातों में पांच पतियों के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित करने के बाद, छठी दोपहर को उनकी माता ने उसे अपने पास लिया और हाथ पकड़कर कहा, 'बेटी, अब तुमने स्वयं को पांचों को समान रूप से समर्पित कर दिया है। अब मैं तुम्हें एक ही परम धर्म का उपदेश दूंगी। तुम जानती हो कि आर्य स्त्री का एकमात्र धर्म अपने पति के कल्याण के लिए पूर्णतः समर्पित होना है। तुम्हारे पति एकजुट होकर ही अपने राज्य को पुनः प्राप्त कर सकते हैं। तभी वे अपनी रक्षा कर सकते हैं। यदि किसी भी कारण से उनकी एकता भंग हो गई, तो वे सब मिलकर एक ऐसी इमारत की तरह ढह जाएंगे जिसमें दरारें पड़ गई हों। उन्होंने कभी आपस में लड़ाई नहीं की, लेकिन अब तुम्हारे लिए लड़ने को तैयार हैं। अब, ईश्वर की कृपा से, वे फिर से एकजुट भाइयों की तरह हैं। यदि किसी को यह आभास हुआ कि तुम उनके प्रति पक्षपात कर रही हो, किसी

एक को दूसरों से अधिक प्रेम दिखा रही हो, तो इससे विघटन की प्रक्रिया शुरू हो जाएगी और अंततः सबका विनाश हो जाएगा। तुम्हें यह प्रतिज्ञा लेनी होगी कि तुम पांचों को समान रूप से, बिना किसी भेदभाव के, कर्म, वचन और मन से प्रेम करोगी।"

सास ने अपनी बहू को एक पत्नी के धर्म का उपदेश दिया ताकि उसके बेटों का कल्याण हो सके और उनमें एकता बनी रहे। कृष्ण अपने अतीत में लौट गईं। "इस धर्म का पालन करने के लिए मुझे कितना कष्ट सहना पड़ा। हाँ, कर्मों और शब्दों में, लेकिन मन में? मेरे पास उस धर्म का मन से पालन करने की शक्ति कहाँ थी? भला ऐसी शक्ति किसके पास होती है? सास मन के धर्म की शक्ति को, व्यक्ति के मन की शक्ति को कैसे जान सकती है? हाँ, मैंने उनमें से किसी से भी दूसरों की तुलना में अधिक प्रेमपूर्ण शब्द नहीं कहे। मैंने पाँचों से एक ही तरह से, एक ही प्रेमपूर्ण स्वर में बात की। मैंने उनमें से किसी को भी दूसरों से अधिक या कम महत्व नहीं दिया। मैंने स्वयं को सबसे बड़े, धर्म को, उसी तरह और उसी भक्ति के साथ समर्पित किया जैसे सबसे छोटे, सहदेव को। लेकिन मेरे मन की बात करें, मेरे भीतर के प्रेम की, जो शब्दों या कर्मों से व्यक्त नहीं हुआ, इस प्रेम को मैं अर्जुन के अलावा किसी और को कैसे दे सकती थी? बेशक, मन शब्दों में प्रकट हुआ। हाँ, अर्जुन ने, न केवल प्रेम-प्रसंग में बल्कि प्रेम-भाषण में भी अपनी निपुणता से, मेरे मन के आंतरिक सत्य को शब्दों में ढाल दिया। इस प्रकार, मैंने शुरुआत की... अर्जुन के पक्ष में भेदभाव करना, न केवल मन से बल्कि वचन से भी। जब मन और वचन एक हो जाते हैं, तो शरीर भी उनका अनुसरण कैसे नहीं करेगा? अर्जुन के हिस्से में आई वह रात मेरे लिए अलौकिक थी। केवल उनकी रात। फिर भी इस कृष्ण ने दूसरों को धोखा नहीं दिया। अर्जुन को जो अतिरिक्त संतुष्टि मिली, वह मेरे प्रयास से नहीं बल्कि उनकी कुशलता से थी। मैंने बाकी चार भाइयों के साथ बिताई चार रातों में भी उतना ही उत्साह, उतनी ही कुशलता और उतनी ही ऊर्जा लगाई। यह आसान नहीं था, लेकिन विवाह के छठे दिन से ही राजा द्रुपद की यह पुत्री इस कार्य में लगी रही और पाँचों के बीच समानता सुनिश्चित करने के लिए संघर्ष करती रही। हाँ, उसे पाँचों पांडवों को एकजुट रखने के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ा और उसने उस एकता को सर्वोपरि रखा। मेरे प्रयासों के बावजूद, यदि वह एकता टूट जाती है और उनके रास्ते अलग हो जाते हैं, तो मैं उस प्रयास की व्यर्थता पर शोक करने के अलावा और क्या कर सकती हूँ?... "कृष्ण ने उस भीषण गर्मी में भी, उस

हवा रहित गर्मी में भी, लोहार की खनक सुनी।" फिर वह अतीत में खो गई। उसकी उम्र कितनी थी? पच्चीस। बच्चों के जन्म का क्रम क्या था? पाँचों बच्चे एक के बाद एक मेरे गर्भ से निकले। प्रसव के बाद दो महीने के आराम के अंतराल के साथ। फिर काम पर वापसी, हर रात बारी-बारी से पाँचों पतियों को अपना शरीर सौंपना, जो मुझे खाने के लिए बाघों की तरह भूखे थे। एक के बाद एक गर्भधारण, मासिक धर्म रुकने का शायद ही कोई अंतराल। बच्चे, प्रसवोत्तर अवधि। और फिर वैवाहिक जीवन। सास तो बस आनंदित थी। क्योंकि एक के बाद एक, केवल बेटे ही थे। उसी समय, खांडववन कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित हो रहा था। खांडवप्रस्थ पूरे आर्यावर्त का सबसे सुंदर शहर बन रहा था। इसका नया नाम इंद्रप्रस्थ रखा गया। तब तक मैं अठारह साल की जीवन से भरपूर लड़की से एक थकी हुई चौबीस साल की लड़की, एक मुरझाई हुई गाय में बदल चुकी थी। पाँच हट्टे-कट्टे पुरुष पति के रूप में। बैलों की तरह फूले हुए। एक एक ही रात में चार रातों का भूखा रहना पड़ा। मैं ही थी जिसने उनकी भूख और उनके बच्चों को संभाला, पूरी तरह से थकी-हारी। मुझे एहसास हुआ कि सास ने झूठ बोला था जब उन्होंने दावा किया था कि प्रेम देने और लेने के मामले में एक अकेली स्त्री पाँच पुरुषों के बराबर होती है। एक स्त्री तो उस पुरुष के भी बराबर नहीं होती जिसे मासिक धर्म, गर्भधारण, प्रसव, प्रसवोत्तर अवधि और बच्चे को स्तनपान कराने जैसी कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ता - और पाँच पुरुषों के बराबर होने की बात! मुझे यकीन है कि सास ने मुझसे झूठ बोला था। उन्होंने एक भोली अठारह वर्षीय लड़की में उत्साह जगाने के लिए ऐसा किया था। वह सिर्फ एक ही बात को लेकर चिंतित थीं - अपने बेटों की एकता और भलाई। क्या उनका यह दावा कि एक स्त्री की क्षमता पाँच पुरुषों की इच्छा के बराबर होती है, एक ऐसी स्त्री का भ्रम था जिसने अपने जीवन का अधिकांश भाग वास्तविक वैवाहिक जीवन के बिना बिताया था? खैर, एक थकी-हारी गाय की तरह, एक गन्ने की तरह जिसका रस पूरी तरह से निचोड़ लिया गया हो, उस दिन मैंने खुद सास से इस बारे में कुछ कहने को कहा। तब उन्होंने मेरी दिनचर्या में बदलाव किया। अपने बेटों के साथ समय बिताने के लिए, उसने इसे अपने बेटों पर थोप दिया। अब बिस्तर पर पतियों का रोज़ाना बदलना बंद हो गया था। यह साल में एक बार बारी-बारी से होना था। इसका मतलब था मेरे लिए चार साल का इंतज़ार और उन दोनों के लिए चार साल का ब्रह्मचर्य। फिर मेरे साथ वैवाहिक जीवन का एक साल। तब शायद एक महिला और एक पुरुष का समीकरण बहाल हो पाता। हाँ,

इसने मेरे शरीर को आत्महत्या के आक्रमण से बचा लिया। मेरी जान बच गई। यह सख्ती से आदेश दिया गया था कि जब तक किसी की बारी न हो, कोई भी मेरे पास न आए। मुझे स्पष्टवादी और निष्पक्ष रहना था। फिर, उस बूढ़ी औरत ने मुझे समझाया, 'बेटी, इस नई व्यवस्था के तहत भी, तुम्हें उनके साथ बिल्कुल समान व्यवहार करना होगा, किसी को भी नाराज़ या असंतुष्ट होने का मौका नहीं देना होगा। तुम्हें इस पद को एक प्रतिज्ञा के रूप में स्वीकार करना होगा।'

नई दिनचर्या शरीर के लिए ज़्यादा आरामदायक थी। लेकिन क्या इसका मतलब मन पर पड़ने वाले अत्याचार से राहत मिलना था? मेरी सास यह कैसे समझ सकती थीं कि कृष्ण केवल शरीर ही नहीं, बल्कि मन भी हैं? सभी मनुष्य एक जैसे कैसे हो सकते हैं? नई व्यवस्था के तहत पहला पूरा साल धर्म के साथ बीता, जो राज्य का शासन कुशलता और निष्पक्षता से करते थे, फिर भी मेरे मन पर विजय प्राप्त नहीं कर सके। प्रेम-प्रसंग का नामोनिशान नहीं था। दिल को छूने वाला, उसे गहराई से प्रभावित करने वाला कोई कार्य या इशारा नहीं था। बस राजसी गरिमा और संयम का भाव था। जैसे-जैसे राज्य की कृषि और पशुपालन में वृद्धि हुई और नई राजधानी का निर्माण हुआ, उनका रुतबा और संयम बढ़ता गया। वे न केवल अपनी पत्नी से, बल्कि भाइयों, माता और वास्तव में, किसी से भी शिष्टाचार का प्रयोग नहीं करते थे। व्यवस्था यह थी कि मुझे पूरे साल एक ही भाई के साथ सोना था, लेकिन इस दौरान मैं दूसरों से बात कर सकती थी। साथ ही, मुझे उस व्यक्ति के घर में रहना पड़ता था जिसके साथ मुझे सोना था। बच्चों के होने से स्थिति कुछ हद तक सहनीय हो गई थी। मन। लेकिन मेरा मन और हृदय हर पल अर्जुन की ओर ही लगा रहता था। मैं चाहे जिस भी भाई के साथ होती, हमेशा खुद को अर्जुन की बाहों में पाती, उनके प्यार भरे शब्द मेरे कानों में गूंजते रहते। अब मुझे इस नई दिनचर्या से चिढ़ होने लगी थी। क्योंकि इसका मतलब था अर्जुन के प्रेम से दो साल दूर रहना। दो लंबे, अंतहीन साल उनकी देह की गर्माहट के बिना गुजारना। फिर उससे भी लंबा चार साल का अंतराल!

एक दिन अर्जुन उस महल में आए जहाँ मैं रहती थी। हमेशा की तरह धर्म सभा भवन में न्याय करने में व्यस्त थे, क्योंकि दोपहर से पहले का समय था। नौकर उठकर कमरे से बाहर चले गए और अपने साथ उन बच्चों को भी ले गए जो उस समय खेल रहे थे। अर्जुन मेरे सामने बैठ गए। मैं सिर झुकाए बैठी थी। हम दोनों में से किसी ने कुछ नहीं कहा। क्या सच में हमारे बीच शब्दों की कोई ज़रूरत थी?

हम बिना शब्दों के ही एक-दूसरे को समझ गए थे। थोड़ी देर बाद, उन्होंने 'पांचाली' कहकर चुप्पी तोड़ी। मैंने अपना सिर उठाया और उनके चेहरे की ओर देखा। मेरी साँसें तेज़ चल रही थीं और माथे पर पसीना आ रहा था। पास आकर उन्होंने मेरा चेहरा अपने हाथों में लिया। उन्होंने कहा, 'क्या तुमने मुझे नहीं सुना?' मैंने फिर से अपना सिर झुका लिया। तुरंत ही वे उठे और दरवाज़ा बंद कर दिया। फिर उन्होंने मुझे उठाया और पास के पलंग पर ले गए। मैंने कहा, 'नहीं', लेकिन मैंने उनका ज़ोरदार विरोध नहीं किया। इस बार न तो हमेशा की तरह प्रेम-प्रसंग था, न कोई कला, न कोई कविता, न कोई रोमांस, न ही मुझे सुंदर बताकर मेरी चापलूसी करने की कोशिश, न ही कृतज्ञता या संतुष्टि के आँसू। उसमें कोई शिष्टाचार नहीं था —नहीं, यह तो बस अधीर, अशिष्ट पशुवत संतुष्टि थी। जैसे ही यह सब खत्म हुआ, वह भाग गया। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे मेरा इस्तेमाल एक वेश्या की तरह किया गया हो, और मुझे अपने द्वारा बनाए गए नियम को तोड़ने का अपराधबोध हुआ।

"अपने सिंहासन से न्याय का कार्य पूरा करने के बाद धर्म दोपहर में आए। सबसे पहले उन्होंने मुझसे पूछा, 'क्या अर्जुन चले गए?' मैं डर गई। मुझे अपराधबोध हुआ। शुरू से ही मैं उन्हें पति से ज़्यादा न्यायाधीश समझती थी—ऐसा महसूस करना स्वाभाविक ही था। मैंने बस धीरे से 'हाँ' कह दिया। उन्होंने आगे कोई पूछताछ नहीं की। शायद उन्हें कमरे में हुई घटना की जानकारी नहीं थी। वैसे भी, उन्हें कौन बताता? मेरी कोई भी दासी मेरी जानकारी और सहमति के बिना एक शब्द भी नहीं बोलती। उनकी वफ़ादारी मेरे प्रति अटूट थी। फिर भी मैंने ऐसी व्यभिचारिता का शिकार न बनने का निश्चय किया था। कृष्ण प्रतिज्ञा तोड़ने वाले नहीं होते। अगर अर्जुन इसे दोहराने की कोशिश करते, तो मैं उन्हें समझा देती। उनसे ऐसा न करने की विनती करती। अगले दिन, अर्जुन फिर उसी समय वहाँ थे। नौकर, पहले की तरह, बच्चों के साथ चले गए। मैंने उन्हें अत्यंत विनम्र भाषा में वह सब कहा जो मैं कहना चाहती थी। मैंने मामले को यथासंभव कोमल शब्दों में रखा। वैसे भी, मैं भला भला कैसे अभद्र शब्दों का प्रयोग कर सकती थी?" उसकी ओर? उसने मेरी मिन्नतों को अनसुना कर दिया। उसे लगा कि मैं उसे ठुकरा रही हूँ। वह क्रोधित हो गया। उसने मेरे गाल पर थप्पड़ मारा। वह गुस्से में चला गया। तीन दिन बाद वह फिर आया। लेकिन इस बार मैंने उसकी विनती को नज़रअंदाज़ कर दिया था। इस बार उसने मुझे थप्पड़ नहीं मारा। उसने बस मुझे गालियाँ दीं और चला गया। एक हफ्ते के अंतराल के बाद वह फिर आया। इस बार उसने मुझे ताना

मारा, मेरे खिलाफ चुभने वाले शब्दों का इस्तेमाल किया। वह चिल्लाया, 'याद रखो। टूर्नामेंट में मैंने ही धनुष झुकाया था और तुम्हें जिताया था।'

मैंने उसे उत्तर दिया। मैंने कहा, 'देखो, अर्जुन, भाइयों से संबंधित मामले पर इस तरह बात करना उचित नहीं है। इस संदर्भ में ये शब्द उचित नहीं हैं। तुम्हें वह विशेषाधिकार अपने लिए नहीं लेना चाहिए जो तुम्हारे अन्य चार भाइयों को प्राप्त नहीं है। जब मैंने तुम्हारी माता से वादा किया था कि मैं तुम पाँचों भाइयों के बीच एकता बनाए रखूँगी, और एक पत्नी के रूप में मैं इसे वचन मानती हूँ, तो तुम यह घमंडी और स्वार्थी विचार कैसे पाल सकते हो कि तुमने ही मुझे जीता है, एक ऐसा विचार जो तुम्हारे भाईचारे की एकता को नष्ट कर देगा?' मैंने उससे बहुत ही कोमल शब्दों में बात की। हाँ, मुझे इस बात का पूरा यकीन है। मुझे आज भी स्पष्ट रूप से याद है कि मैंने बहुत ही कोमल शब्दों का प्रयोग किया था, और उससे विनती की थी, नहीं, बल्कि उससे गिड़गिड़ाया था। वह थोड़ी देर रुका। फिर उसने अपना सिर झुका लिया। जब मैं उससे बैठने का अनुरोध कर रही थी, तब भी वह चुपचाप चला गया। वह चला गया, कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

"वह चला गया और फिर कभी वापस नहीं आया। एक दिन, चार दिन, एक हफ़्ता, एक पखवाड़ा, एक महीना, वह शहर में भी नहीं मिला। राज्य में भी नहीं। उसके साथ उसके करीब पचास धनुर्धारी और उनके पचास घोड़े थे। यह आदमी कहाँ चला गया? सबसे बड़े ने मुझसे पूछा, 'पांचाली, वह तुमसे मिलने आया था। क्या उसने तुम्हें अपने गंतव्य के बारे में बताया?' सास ने भी मुझसे पूछा कि क्या मुझे उसके ठिकाने का पता है। मैंने ऐसा दिखाया जैसे मुझे कुछ पता ही नहीं। लेकिन मेरे अलावा सच कौन जानता था, कौन जानता था कि वास्तव में क्या हुआ था! 'अर्जुन, मैं जानती हूँ कि मेरे प्रति तुम्हारे गुस्से के कारण तुम गायब हो गए हो। ऐसा करने का तुम्हारा मकसद पांचाली के दिल को चोट पहुँचाना ही था। हाँ, तुमने अपना लक्ष्य हासिल कर लिया है। मुझे चोट पहुँची है, मैं बहुत दुखी हुई हूँ। कृपया वापस आ जाओ। जल्दी वापस आ जाओ। हम सास को बता देंगे और दिनचर्या बदलवा लेंगे। लेकिन इसे कैसे बदलें? अगर हम पुरानी दिनचर्या पर लौट गए, तो यह मुझे मार डालेगा। जबकि मैं शारीरिक पीड़ा सहन नहीं कर सकती।" हर रोज पति बदलने के तनाव से, वार्षिक पति परिवर्तन की व्यवस्था के लिए आवश्यक धैर्य मुझमें नहीं रह पाएगा। शायद हमें समझौता करके मासिक आधार पर पति बदलना चाहिए। हाँ, इससे मुझे मन की शांति मिलेगी। खैर, कृपया जल्दी लौट आइए। मैं

स्वयं सास से इस बारे में बात करूँगी। मैं मन ही मन इसके लिए कितनी प्रार्थना कर रही थी? क्या आपके अंतर्मन ने इसे नहीं सुना? क्या आपका हृदय बहरा हो गया है? अपने जीवन में पहली बार, बिल्कुल पहली बार, मैं पीड़ा से तड़प उठी, इच्छा की आग में जल उठी। खैर, आप तीन साल बाद लौटे, परदेस में भटकते हुए, दो नाग राजकुमारियों से विवाह करके, उन्हें अपने पुत्रों के साथ छोड़कर, अंत में द्वारका चले गए, कृष्ण की बहन से प्रेम कर बैठे और उन्हें केवल अपने लिए पत्नी बना लिया, दूसरों के साथ साझा नहीं किया।

"अर्जुन, तुम चतुर हो, सुंदर हो, तुम अपने मोहक शब्दों से स्त्रियों को मोहित कर सकते हो। अर्जुन, तुमने मुझे सम्मोहित कर लिया। फिर तुमने तीन और स्त्रियों को बहकाया और उनसे विवाह कर लिया। और उसके बाद क्या तुमने बिना विवाह किए भी स्त्रियों को सम्मोहित नहीं किया? अर्जुन, तुम्हारा अहंकार बहुत अधिक है। और तुम अपने अहंकार की वेदी पर स्त्रियों को पुरस्कार के रूप में जीतना चाहते हो। बेशक, केवल पांचाली ने ही तुम्हारे अहंकार की शोभा बनने से इनकार कर दिया। अर्जुन, तुम प्रतिज्ञा में असफल रहे। तुमने पांचाली को अपने बाएं पैर से लात मारी और उससे दूर रहे, केवल एक कारण से, कि उसने तुम्हारी अंध, पशुवत कामुक इच्छा को पूरा करने से इनकार कर दिया। लेकिन तुम, पूरे आर्यावर्त के सबसे वीर धनुर्धर, जो सुभद्रा को लाए, मुझसे सीधे और स्पष्ट रूप से आँखें मिलाने का साहस खो बैठे..." प्रतिवैंध्य नींद में एक तरफ मुड़ गए थे। उन्होंने अपनी पलकें बंद कर ली थीं। लेकिन वे सो नहीं रहे थे। क्या कोई केवल आँखें बंद करने और वास्तविक नींद में अंतर कर सकता है? वह मन ही मन उसके बारे में सोचने लगी, "उसकी बुद्धि बहुत तेज है। वह हर बात का मानसिक रूप से विश्लेषण और जाँच करता है। वह कहता है कि अगर वह ऐसा नहीं करेगा तो उसे नींद नहीं आएगी। मैं इन मामलों पर किससे चर्चा करूँ? बेटों से तो नहीं। और मेरी कोई बेटी भी नहीं है। मेरे पाँच ही बेटे हुए थे। वार्षिक चक्र शुरू होने के तुरंत बाद और बेटी के जन्म से पहले ही, मेरा गर्भाधान रुक गया। मैं किसे बताऊँ कि मैंने पांडव भाइयों की एकता बनाए रखने के लिए कितना संघर्ष किया, कितनी पीड़ाएँ झेलीं! सुभद्रा चतुर है। वह मेरी तरह माँ विहीन पुत्री नहीं है। विवाह के बाद उसे कुंती का सामना नहीं करना पड़ा, जो माँ बनकर अपने बच्चों की एकता की माँग कर रही थी। उसके मन में ऐसा कोई जाल नहीं था। न ही वह ऐसी पागल लड़की है जिसे यह भ्रम हो कि वह पाँच पतियों पर राज कर सकती है। हाँ, वह अर्जुन के सुंदर रूप और धूर्त

शब्दों के आगे झुक गई। फिर भी वह हमेशा ज़मीन पर डटी रही, उससे व्यवहार करते समय हर कदम पर अपने स्वार्थ का ध्यान रखती रही। ऐसा लगता है कि उसने ही चर्चा शुरू की, और कहा, 'कुरु योद्धा, विवाह में तुम्हारा हाथ थामना मैं अत्यंत पुण्य कार्य समझता हूँ। परन्तु ध्यान रखना, मैं केवल तुम्हारा हाथ थाम रहा हूँ।

अर्जुन, इसका क्या अर्थ है?

सुभद्रा ने कहा, "मुझे बताया गया है कि आप भाइयों में एक प्रथा है कि आप जिस भी स्त्री से विवाह करते हैं, वह केवल सबसे बड़े भाई के नाम पर ही होता है। और सभी भाई उस स्त्री को बराबर-बराबर बिस्तर पर साझा करते हैं। लेकिन मैं इस तरह पाँच पुरुषों को स्पर्श नहीं कर सकती। आर्य पत्नी के लिए केवल एक ही पति होता है।"

"वह अवश्य प्रसन्न हुआ होगा। भला क्यों न होता? उसने उत्तर दिया, 'हे यादव दुल्हन, मैं तुम्हारी इच्छा का सम्मान करूंगा और तुम्हारी शर्त स्वीकार करूंगा।'"

सुभद्रा ने कहा, "यह ज़रूरी नहीं कि आप इसे मानें या स्वीकार करें। अगर आपकी स्वीकृति के बावजूद, आपके घर में दुल्हन बनकर प्रवेश करने के बाद, आपके भाई मुझ पर आपकी प्रथा का पालन करने का दबाव डालें तो मैं क्या करूँ? ऐसा लगता है कि आपके बड़े भाई ने राजा द्रुपद से आपके परिवार की इस प्रथा को मानने का अनुरोध किया है।"

अर्जुन ने कहा, 'मुझे बताओ कि अब मुझे क्या करना चाहिए।'

उसने कहा, 'तुम्हारे सबसे बड़े भाई को यह आश्वासन देना चाहिए कि सबसे बड़े भाई और शासक होने के नाते, वह इस बात को स्वीकार करेंगे कि मैं केवल अर्जुन की पत्नी रहूँगी, केवल उन्हीं से विवाह करूँगी, और हमारे विवाह पर यह पारिवारिक रीति-रिवाज लागू नहीं होगा। अन्य सभी भाइयों को इस शर्त को खुले तौर पर और स्पष्ट रूप से स्वीकार करना चाहिए। और तुम्हारी माँ को भी इस शर्त का पालन करना चाहिए।'

'वह व्यक्ति, एक पल के लिए चुप हो गया, सिर झुकाए चुपचाप बैठा रहा। लेकिन उसने एक और शर्त जोड़ दी, जो यह थी कि यदि मैं तुमसे विवाह करती हूँ, तो तुम मेरे पति रहोगे, किसी और के नहीं। जब तक मैं जीवित रहूँ, तुम किसी और स्त्री को पत्नी के रूप में स्वीकार नहीं करोगे। तुम किसी भी स्वयंवर में भाग नहीं लोगे। किसी भी राजा से भेंट या उपहार के रूप में कोई स्त्री स्वीकार नहीं करोगे।'

और उसने कितनी अच्छी तरह से जोखिमों का ख्याल रखा और अर्जुन को अपने जाल में फंसा लिया! मुझे यकीन नहीं है कि उसने ये सारी सख्त शर्तें खुद सोची थीं या उसके भाई कृष्ण ने उसे सिखाया था, या उसकी सहेलियों और माँ ने सुझाव दिया था कि जब कोई पुरुष किसी लड़की का हाथ मांगने के लिए पूरी कोशिश कर रहा हो तो ये सावधानियां बरतना बुद्धिमानी है। संक्षेप में, वह एक चतुर लड़की है। मुझसे भी ज्यादा चतुर। वह प्यारी सी सुभद्रा, जो सिर्फ अपनी खुशी चाहती है, बहुत चतुर है। वह इतनी चतुर थी कि जब उसके पति के बड़े भाई ने जुए में अपना राज्य खो दिया, अपने भाइयों के साथ कंगाल हो गए और वनवास पर चले गए, तो सुभद्रा ने अपने तीन साल के बेटे के साथ अपने मायके जाने में जरा भी संकोच नहीं किया। मेरे जैसी नहीं, जो जंगल के कांटों और पत्थरों से अपने पैरों को चोट पहुँचाती है, जंगल के जंगली जानवरों से हमेशा डरी रहती है, और रात भर चींटियों, ततैयों और मच्छरों के डंक खाती रहती है, और बिना भोजन के रहती है। सुभद्रा बहुत चतुर है। तेरह वर्ष के वनवास के बाद जब वे लौटे, तो उन्होंने अपने सोलह वर्षीय पुत्र का विवाह राजा विराट की पुत्री से करवा दिया। और मेरा चौबीस वर्षीय पुत्र, मेरा सबसे बड़ा पुत्र, अभी भी अविवाहित है। ऐसा लगता है कि सुभद्रा के आने से पहले ही अर्जुन ने विराट से अपनी पुत्री उत्तरा का विवाह अपने पुत्र अभिमन्यु से करने का अनुरोध किया था। हे यादव कन्या, तुमने वह विजय प्राप्त की जहाँ मैं हार गई। अपने पति को अपनी छोटी सी मुट्ठी में कैद करने की तुम्हारी विजय महान और अविस्मरणीय है।

"हाँ, मैं दोहराती हूँ, सुभद्रा जीत गई। माता कुंती ने मुझे निराश किया। अर्जुन ने दूत के द्वारा संदेश भेजा कि यदि वे सुभद्रा को अपनी एकमात्र पत्नी के रूप में स्वीकार नहीं करते, तो वह इंद्रप्रस्थ नहीं लौटेगा, और तब वे पाँच नहीं, केवल चार पांडव भाई रह जाएँगे। खैर, कुंती का हृदय, जैसे ही उसने यह संदेश सुना, एक माँ का हृदय, पुत्र की ओर मुड़ गया। उसे डर था कि उसका पुत्र मर गया है, यहाँ तक कि दो वर्ष बाद जब अर्जुन के साथी घुड़सवार यह कहते हुए लौटे कि वह मनलूर से विदेश चला गया होगा। और भाई भी उतने ही दुखी थे। वे कह रहे थे, 'भगवान का शुक्र है, इतना ही काफी है कि वह लौट रहा है।' और वे उसकी शर्तों को कैसे अस्वीकार कर सकते थे? क्या सुभद्रा राजा द्रुपद की पुत्री के समान सुंदर थी, आर्यावर्त के पुरुषों के दिलों को झकझोर देने वाली सुंदरता? उनमें से किसी ने भी उसे नहीं देखा था। और तब तक यह कृष्ण आठ वर्षों से उनकी जवानी की भूख

का शिकार हो चुका था। मैं तब तक एक युवा दुल्हन नहीं रह चुकी थी। उन्होंने अर्जुन की शर्तें मान लीं। कुंती अधीर थी। अपने पुत्र की घर वापसी के लिए। आख़िरकार, सुभद्रा उन्हीं के क्षेत्र से थीं। सुभद्रा के आने से कुंती के जन्मस्थान से उनके संबंध और मज़बूत होंगे। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि वह अपने माता-पिता की भूमि से संबंध मज़बूत करने का यह अवसर नहीं छोड़ना चाहती थीं। इंद्रप्रस्थ की राजमाता के पद तक पहुँच चुकी कुंती उस बड़ी बहू के मन को कैसे समझ सकती थीं, जिसने उन लोगों से विवाह किया था जो भिखारियों की तरह कुम्हार के घर के पीछे रहते थे, जिसने पांडव भाइयों की एकता बनाए रखने का संकल्प लिया था, और जिसके पिता की शक्तिशाली सेना ने धृतराष्ट्र को इतना भयभीत कर दिया था कि उन्होंने पांडवों को बुलाकर उन्हें राज्य की पेशकश की थी? क्या उन्होंने मुझसे पूछा, 'अर्जुन के संदेश का मैं क्या उत्तर दूँ? क्या धर्मराज ने मुझसे पूछा? किसने पूछा?' "पांचाली का पंखा करता हाथ थम गया। पाँचों सोए हुए बच्चों के चेहरे, गर्दन और छाती से पसीना टपक रहा था। ज्योतिषमती ने लामंच की चटाइयों को भिगो दिया था और वे पानी से भीगी हुई थीं। लेकिन बाहर सूरज बहुत तेज़ था। कहीं न कहीं भट्टी जल रही होगी।

हथौड़े की आवाज़। क्या यह गर्मी केवल यहीं तक सीमित थी या इसकी आग कुरु भूमि तक फैल गई थी? यह जंगल की आग का समय था। गांवों में भूसे के ढेर और झोपड़ियों को निगल जाने वाली आग का समय, पूरे शहरों को आग में भस्म कर देने का समय। कितना अच्छा होता अगर यह खुशखबरी सुनने को मिलती कि चिंगारियों ने हस्तिनावती को आग में झुलसा दिया है, पूरे शहर को, महल को, उस अंधे बूढ़े आदमी और उसकी अंधी बूढ़ी पत्नी और उनके पूरे वंश को जलाकर राख कर दिया है! तब शायद यह भयंकर गर्मी शांत हो जाएगी। तब ईमंच की कोई ज़रूरत नहीं होगी, पंखों की कोई ज़रूरत नहीं होगी। इतनी ठंडक होगी कि पूरे ब्रह्मांड में पसीने की एक बूंद तक भी कोई जगह या कारण नहीं होगा," कृष्ण ने महसूस किया। लेकिन हाथ अपने आप ही पंखा चलाने लगा। पाँचों का विवाह सबके लिए आसान और सुगम हो गया था। जुए के प्रसंग के दौरान दुर्योधन ने आमंत्रित करते हुए कहा, 'आओ, इधर आओ, स्त्री, मेरी गोद में बैठो।' तब भीष्म ने फटकार लगाते हुए कहा, 'दुर्योधन, यदि तुम अपने भाई की पत्नी को इस प्रकार संबोधित करोगे, तो तुम आर्य नहीं हो।' मुझे ठीक से याद नहीं कि भीष्म थे या विदुर। तब दुर्योधन ने तुरंत उत्तर दिया, 'क्या मैं धर्म, भीम, अर्जुन और अन्य का

भाई नहीं हूँ? मैं तो बस अपने भाईचारे का अधिकार जता रहा हूँ, उनके साथ अपने भाईचारे को साकार कर रहा हूँ।' और दुस्शासन ने भी कहा, 'हम चौदह भाई हैं।' 'क्या राजा द्रुपद की इस पुत्री से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह चौदहों के साथ सोए, बारी-बारी से हर एक के साथ रात बिताए? उन्होंने मेरे साथ एक वेश्या जैसा व्यवहार किया, जैसे मैं सेना के साथ आई हूँ। लेकिन सुभद्रा के लिए किसी ने कभी ऐसे शब्द नहीं कहे।'

—•✳•—

अध्याय 18

प्रतिविंध्या पीठ के बल लेट गया। उसने अपनी आँखें खोलीं। फिर बंद कर लीं। थोड़ी देर बाद वह अचानक उठ बैठा और अपने पहने हुए कपड़ों से अपने चेहरे, गर्दन और छाती पर लगे पसीने को पोंछा। पंखा चला रही उसकी माँ ने कहा, "कितनी उमस है!" वह उसकी ओर मुड़ा, उसके हाथों से पंखा लेकर अपनी छाती और पेट पर सात-आठ बार हवा की। फिर उसने अपनी माँ को भी पंखा चलाया। "तुम मुझे इतनी देर से पंखा चला रही हो। आओ और यहाँ बैठो। मैं तुम्हारे और इन चारों के लिए हवा चला देता हूँ, जो अब सो रहे हैं।" माँ ने उससे पंखा लौटाते हुए कहा, "मुझे वापस दे दो। मैं एक लड़के को मुझे पंखा कैसे चलाने दे सकती हूँ?"

उसने उसे वापस नहीं दिया। वह लगातार तेज़ी से पंखा चलाता रहा ताकि उसकी माँ को भी ठंडी हवा का एहसास हो। उसे ठंडक महसूस हुई। ऐसा लगा मानो गर्मी अपने आप कम हो गई हो।

उसने सोचा कि जहाँ वह केवल हवा पैदा कर सकती है, वहीं उसका बेटा ठंडी हवा पैदा करता है। उसने मन ही मन कहा, "यह लड़का है, और इसका हाथ

धनुष-बाण पकड़ने के लिए उपयुक्त है। पंखा चलाना तो औरतों का काम है।" उसने सोचा कि उसके भाई के शारीरिक प्रशिक्षण के कारण उसके बेटे की भुजाएँ, कंधे और कमर मजबूत और सुविकसित हैं। तभी उसे अचानक याद आया कि लड़के का शरीर उसके मामा, उसके भाई जैसा है। उसने लेटे हुए बाकी चार बच्चों पर नज़र डाली। उसे उनसे बहुत जुड़ाव महसूस हुआ, जब उसने पाया कि उन पाँचों में उसकी तरफ से कोई न कोई विशेषता है, खासकर उसके भाई की - शायद चेहरा, आँखें या नाक! जैसे-जैसे उसने उन्हें और ध्यान से देखा, उसे लगा कि वे उसके पिता, उनके दादा से मिलते-जुलते हैं। उसे अपने पिता का वह स्नेह याद आया जो उन्होंने माँ के बिना पली-बढ़ी बच्ची होने के नाते उस पर पूरी तरह से बरसाया था, और यह उसे चालीस साल पीछे ले गया।

प्रतिविंध्या ने कहा, "चाचा ने एक संदेश भेजा है। चैत्रक नामक दूत आज सुबह आया था। वह चाचा के दरबार में बहुत प्रिय है।"

कृष्ण ने कहा, "अच्छा, क्या बात है? मुझे उम्मीद है कि आपके दादाजी का स्वास्थ्य ठीक होगा।"

पुत्र ने कहा, "हाँ, उनका स्वास्थ्य ठीक है। ऐसा लगता है कि दुर्योधन पुरोहितों और वैदिक विद्वानों को एक नए प्रचार अभियान के लिए भेज रहा है। इसका सार यह है: पंचाल सच्चे आर्य नहीं हैं। द्रुपद ने अपने राज्य में प्रचलित गैर-आर्य प्रथा, यानी दो भाइयों द्वारा एक ही पत्नी से विवाह करने की प्रथा को अपने घर में अपनाना शुरू कर दिया है। पांडव पर्वतीय क्षेत्र में पैदा हुए और पले-बढ़े। ससुर और दामाद ने मिलकर इस गैर-आर्य प्रथा को पूरे आर्य समुदाय पर थोपने का प्रयास किया है और इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए युद्ध छेड़ रखा है। वे लोगों से पूछ रहे हैं, 'आप किस पक्ष में हैं? आप किस प्रथा का पालन करेंगे? क्या हम आर्य हैं या गैर-आर्य?' ये प्रश्न पुरोहितों और वैदिक विद्वानों द्वारा पूछे जा रहे हैं।"

उन्हें इस बात पर हैरानी हुई कि उनका शांत स्वभाव वाला, कम बोलने वाला बेटा, एक साथ इतने सारे वाक्य बोल बैठा! उन्हें इस बात पर आश्चर्य नहीं हुआ कि दुर्योधन इस तरह का दुष्प्रचार कर रहा था। वैसे भी, यह युद्ध का समय था। इसमें शामिल पक्षों के लिए अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए झूठ बोलना स्वाभाविक था। और दुर्योधन झूठ बोलने के लिए कुख्यात था, और वह बिना एक बीज बोए झूठ की पूरी फसल उगा सकता था! उन्हें लगा कि एकमात्र उपाय पांडवों की ओर से जवाबी दुष्प्रचार करना है। लेकिन उन शब्दों ने उन्हें पूरी तरह से एक अलग

दिशा में मोड़ दिया। उनके बेटे ने आगे कहा, "वे कहते हैं कि यह युद्ध धर्म का युद्ध है। यदि आप हमारे साथ नहीं जातीं और इस युद्ध में हमारा समर्थन नहीं करतीं, तो धर्म का पतन हो जाएगा। पुरोहित धमकी देते हैं कि जो दुर्योधन का समर्थन नहीं करेंगे, उनके माता-पिता नरक में सड़ेंगे।"

"पुत्र, उन्हें धमकाने दो। मैं इस मामले में निहित सच्चे धर्म को जानता हूँ। यदि धर्म की विजय होगी, तो हमारी भी विजय होगी। परन्तु अधर्म की विजय न होने की क्या गारंटी है? रहने दो। मुझे बताओ कि तुम स्वयं क्या महसूस करते हो।"

"किस बारे मेँ?"

वह खुलकर यह नहीं कह पा रही थी कि असल मुद्दा क्या है। उसके भीतर कुछ ऐसा था जो उसे रोक रहा था। फिर भी वह अपने बेटे से इस बारे में बात करने की सोच रही थी। उसकी चिंता यह थी कि लड़का बहुत कम बोलता था। लेकिन अब वह कम से कम थोड़ा खुल कर बात करने लगा था। और जिस मुद्दे ने उसे परेशान कर रखा था, वह स्वाभाविक रूप से सामने आ गया था।

बात को सुलझाने के लिए दृढ़ संकल्पित होकर उसने कहा, "तुम्हारे दादा ने मेरी शादी पांच पतियों से करवाई थी।"

लड़का कुछ नहीं बोला। वह बस अपनी माँ और लेटे हुए चारों भाइयों को पंखा करता रहा। तभी ज्योतिषमती वहाँ आईं। वह मिट्टी के बर्तन में पानी लेकर आई थीं ताकि लामंच की चटाइयों को भिगो सकें। चटाइयों ने पानी कितनी जल्दी सोख लिया! उन्होंने एक पूरा बड़ा बर्तन पानी सोख लिया। उनके जाने के बाद भी बेटा चुपचाप पंखा करता रहा। कृष्ण ने मन ही मन सोचा, 'क्या जवाब देने में इतना समय लगता है? या उसके मन में कुछ भावनाएँ थीं जिन्हें वह व्यक्त नहीं कर पा रहा था?' उन्होंने सिर उठाकर सीधे उसकी ओर देखते हुए पूछा, "इस बारे में तुम क्या सोचते हो?"

अंत में उन्होंने कहा, "जब मैं कामपिल्य में था, तब मुझे यह अस्वाभाविक नहीं लगा, माँ। माँ, क्या आप जानती हैं कि चाचा के राज्य के कई नागरिक हमारी तरह हैं। गैर-आर्य लोग हमें बहुत स्नेह से देखते हैं। अब मुझे थोड़ा समझ में आ रहा है: स्वाभाविक रूप से लोग ऐसे शासक को पसंद करेंगे जो उनके रीति-रिवाजों को स्वीकार करता है और उनका पालन भी करता है। वहाँ, हमारे आर्य रिश्तेदारों ने भी कभी असहमति या तिरस्कार का एक शब्द भी नहीं कहा, यहाँ तक कि अप्रत्यक्ष रूप से भी नहीं। वैसे भी, यह राजमहल द्वारा पालन किया जाने वाला एक

रिवाज है। लेकिन इस शहर में हमारे आने के चार महीनों के भीतर ही, लोग हमें कुछ अजीब, बाकियों से अलग समझने लगे हैं। यहाँ के लोग हमें अन्य भाइयों और राजकुमारों जैसा नहीं समझते। एक दिन श्रुतसेन के रथ के एक पहिये का धुरा टूट गया। उसे ठीक करने आया बढ़ई उनसे पूछताछ कर रहा था। श्रुतसेन हमेशा बहुत बोलते हैं। बढ़ई को उनसे बात करना आसान लगा। उसने उनसे पूछा, 'राजकुमार, क्या आप पाँचों एक-दूसरे को पिता कहकर पुकारते हैं या केवल धर्मराज को ही पिता कहते हैं?' "पिताजी और बाकी को चाचा?" उन्होंने जवाब दिया कि हम पाँचों को पिताजी कहते थे। फिर बढ़ई ने पूछा, "क्या आपको स्वाभाविक रूप से ऐसा लगता है कि उन्हें पिताजी कहना चाहिए या...?" तुरंत ही उन्होंने देखा कि मैं पास ही हूँ और उन्होंने अपनी जीभ दबा ली, सिर झुकाया और लकड़ी को आकार देना शुरू कर दिया। "कैंपिल्या में कोई भी हमसे ऐसे सवाल नहीं पूछता था।"

उसे भी ऐसा ही महसूस हुआ। लेकिन किसी ने उससे इस तरह बात नहीं की थी। उसने सोचा, "जैसे ही पांडवों के रूप में हमारी असली पहचान उजागर हुई, विराट के लोग हमें भय और सम्मान की दृष्टि से देखने लगे। हमारी प्रतिष्ठा पहले से ही थी। हमने राजसूय क्रिया सफलतापूर्वक संपन्न की थी, हमारे सेनापति ने प्रसिद्ध पहलवान कीचक को मिठाई की लोई की तरह कुचल दिया था, और हाल ही में हमने अपने मवेशी चुराने आए कौरवों को खदेड़ दिया था। सुदेशे ने तुरंत हाथ जोड़कर मेरे सामने झुककर मुझसे क्षमा मांगी। भला नौकर जैसे तुच्छ लोग हमारे बारे में कैसे बुरा-भला कह सकते हैं? हाँ, बच्चे की बात सच थी। हमारे पांचाल में ऐसी प्रथा पूरी तरह से अनुचित नहीं मानी जाती। लेकिन पांचाल के उत्तर और पश्चिम में, अधिकांश लोग इस प्रथा से अनभिज्ञ हैं, और उन्होंने इसके बारे में कभी सुना भी नहीं है।"

"माँ, मैं पिछले कई दिनों से आपसे एक सवाल पूछना चाहता था। लेकिन मैं कभी पूछ नहीं पाया।"

"बेटा, मुझसे पूछने में क्या कठिनाई है?"

लेकिन उसने अपने शब्द निगल लिए। वह उसके करीब गई और धीरे से उसके सिर पर हाथ रखकर उससे पूछा, "तुम बहुत कम बोलते हो। क्या तुम्हें मेरे साथ भी इतना संकोच करना चाहिए? और तुम्हारे सिवा मेरे पास बात करने के लिए और कौन है?"

जब श्रुतसेना का हाथ बीच में आ गया तो उसने पंखा चलाना बंद कर दिया। जब श्रुतसेना ने हाथ फेरकर उसका सिर नीचे किया, तो उसकी दृष्टि उस तकिये पर सिमट गई जिस पर उसने अपना सिर रखा था, तकिये के पास का गद्दा, श्रुतसेना का सिर और माता के पैर। उसने कहा, "तुमने बहुत कष्ट सहे हैं। तुमने बारह वर्ष वन में बिताए हैं। बहुत से ऋषि-मुनि वनों में आते-जाते रहे होंगे। इसलिए मुझे पूरा विश्वास है कि तुम्हें उत्तर अवश्य ही ज्ञात होगा।"

"जो भी सवाल हो, मुझसे पूछो, बच्चे।"

"सच्चा आर्य धर्म क्या है?"

एक-दो मिनट के लिए पंखा चलाना बंद करते ही उनका शरीर पसीने से भीगने लगा। चारों बच्चे माथे और गर्दन से पसीने से तरबतर हो गए और बिस्तर पर ऐसे लोटने लगे मानो सांस ही न ले पा रहे हों। खासकर सतनिक और श्रुतसेना का चेहरा ऐसा उतर गया मानो उन्होंने कोई कड़वा नीम खा लिया हो! वे बारी-बारी से अपनी आँखें खोलती और बंद करती रहीं। उन्होंने प्रतिविंध्य से पंखा लिया और फिर ज़ोर-ज़ोर से पंखा चलाने लगीं ताकि हवा सभी बच्चों को छू सके। श्रुतकीर्ति ने धीरे-धीरे खर्राटे लेना बंद कर दिया और एक तरफ लुढ़क गए। फिर वे वापस लुढ़क गए, चेहरा ऊपर की ओर करके, और फिर से खर्राटे लेने लगे। उन्होंने खुद से पूछा, आर्य धर्म का क्या अर्थ है? उन्होंने इससे पहले कभी खुद से इतना सीधा सवाल नहीं पूछा था। लेकिन धर्म पर अंतहीन और निरर्थक चर्चा सुनते-सुनते उनके कान बहरे हो गए थे। धर्मराज तो धर्म के प्रति आसक्त थे, उनका दिन किसी न किसी रूप में धर्म के संदर्भ से ही शुरू होता था। जंगल में अक्सर मिलने वाले ऋषि-मुनि भी धर्म को लेकर बहुत चिंतित थे। भीम और अर्जुन भी कभी-कभार इस विषय पर चर्चा करने से परहेज नहीं करते थे। क्या उसने स्वयं भीष्म, द्रोण, कृपा और उस अंधे धर्मराज से यही प्रश्न नहीं पूछा था? यह आर्य धर्म आखिर है क्या? उसने देखा कि प्रतिविंध्य उसे उत्सुकता से देख रहे हैं। अचानक उसे जंगल में धर्मराज को चिढ़ाने और उनका मज़ाक उड़ाने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले कुछ शब्द याद आ गए। यह याद आते ही उसे हंसी आ गई। प्रतिविंध्य, जिसे उसकी हंसी का कारण समझ नहीं आया, वह भी हंसने लगा। तभी श्रुतकीर्ति और शतनिक जाग उठे। उन्होंने आंखें खोलीं और अचानक उठ खड़े हुए, उनकी हरकत से श्रुतसोमा और श्रुतसेना भी जाग गए।

श्रुतकीर्ति ने पूछा, "तुम क्यों हंस रहे हो?"

"तुम्हारे बड़े भाई जानना चाहते थे कि आर्यों का धर्म क्या है। मुझे लगा कि आर्यों का धर्म शिकार करना, शराब पीना, व्यभिचार करना और जुआ खेलना है। यह सोचकर मुझे हंसी आ गई!"

अभी-अभी जागे चारों लोग भी हँसी में शामिल हो गए। प्रतिविंध्या ने अपना मुँह आधा खोला लेकिन हँसी रोक ली। माँ बोलीं, "जंगल में रहने के लिए अभिशप्त लोगों को अपना भोजन प्राप्त करने के लिए शिकार करना पड़ता है। शिकार करना तब भी जायज़ है जब जंगली जानवरों की संख्या बढ़ जाती है, जीवन कठिन हो जाता है, और ज़मीन, पशुधन और घोड़े खो जाते हैं। लेकिन यह आर्यों का तरीका नहीं है। नहीं, सूर्योदय से पहले ही वे अपने हथियार—धनुष, बाण, भाले और जाल —इकट्ठा कर जंगल में शिकार करने के लिए दौड़ पड़ते हैं, ज़रूरत के तौर पर नहीं, बल्कि मनोरंजन के तौर पर। असभ्य जनजातियाँ भी ऐसा नहीं करतीं। जहाँ तक पीने की बात है, मुझे आपको बताने की ज़रूरत नहीं है। जंगलवासी सीधे पेड़ से पीते हैं, पेड़ के तने को छेदकर रस निकालते हैं, उसे अपने बाँस या लकड़ी के प्यालों में इकट्ठा करते हैं और पीते हैं। मैंने यह जंगल में देखा था। इसे पीने से नशा नहीं होता। यह आपको और अधिक ऊर्जावान बनाता है। आपका स्वास्थ्य सुधरता है। लेकिन इन आर्यों को देखो—ये लोग ये सब बलि अनुष्ठानों के बहाने करते हैं, वे इसे त्योहारों के अवसरों पर करते हैं, और बिना खूब शराब पिए कोई भी समारोह नहीं हो सकता। वे बिना शराब पिए युद्ध में भी नहीं जाते। और ऐसा कोई देवता नहीं है जो वे इसके आदी नहीं हैं। और उन्होंने चावल, गुड़ और सोमा लता से मादक पेय निकालने में कितनी चतुराई दिखाई है! उन्होंने नशा पैदा करने के लिए विभिन्न सामग्रियों के साथ प्रयोग किए हैं, और ऐसे पेय को देवताओं को प्रसन्न करने के अनुष्ठानों का एक अनिवार्य हिस्सा बना दिया है। और जहाँ तक उनकी महिलाओं की बात है - केवल बेटी का विवाह करना ही पर्याप्त नहीं है। उसके साथ कम से कम दस सुंदर युवतियों को सहेलियों के रूप में भेजना पड़ता है। यदि राजा का उच्च पद है, तो सौ युवतियाँ! सेवक जातियों की जनसंख्या बढ़ाने के लिए उनकी कोख में अनगिनत बच्चे जन्म लेते हैं...

इस पर प्रतिविंध्य ने हस्तक्षेप करते हुए पूछा, "ये आदतें और प्रथाएं तो केवल क्षत्रियों तक ही सीमित हैं। है ना?"

"खैर, वे आर्य धर्म के संरक्षक होने का दावा करते हैं, है ना? किस पुजारी में इतनी हिम्मत है कि वह उन्हें बता सके कि वे गलत कर रहे हैं?"

वह चुप हो गया, मानो उसने उसके शब्दों की सच्चाई स्वीकार कर ली हो। चेहरा गंभीर हो गया और उसकी निगाहें अंतर्मुखी हो गईं। कृष्ण ने आगे कहा, "मुझे आपको उनके जुए के जुनून के बारे में ज्यादा बताने की जरूरत नहीं है। दुर्योधन ने सही अनुमान लगाया कि हम, जो समृद्धि के चरम पर थे, जुए के अलावा किसी और तरीके से पराजित नहीं हो सकते। उसे लगा कि इसके अलावा कोई और रास्ता नहीं है। आखिर, वह जानता था कि युद्ध में हमें हराना असंभव था क्योंकि हमने जरासंध की कमर तोड़कर युद्ध में अपनी श्रेष्ठता साबित कर दी थी, जिसने कई राजाओं को कैद में रखा था, और हमने चारों दिशाओं में प्रतिरोधक शासकों को परास्त करने के बाद राजसूय अनुष्ठान सफलतापूर्वक संपन्न किए थे! भाइयों के बीच आंतरिक कलह भड़काने के उसके प्रयास विफल रहे। बस एक ही रास्ता बचा था, जुआ। आपके बड़े पिता, धर्म, जो विधि और नैतिकता में निपुण थे, जुए के प्रति अपने अड़ियल स्वभाव के लिए भी जाने जाते थे। सभी भाई विभिन्न प्रशासनिक कार्यों में लगे हुए थे। वे सिंहासन के सुख-सुविधाओं का आनंद ले रहे थे, लेकिन समय बिताने में उनकी रुचि थी। जुए से बेहतर तरीका और क्या हो सकता था? कुछ समय विद्वानों और विशेषज्ञों के साथ गहन चर्चाओं में व्यतीत होता था। वे दरबारियों के साथ जुए खेलते थे, जिनका मुख्य उद्देश्य राजा की चापलूसी करना था। आसमान छू रहा था। वह उनके साथ खेलता था और वे स्वाभाविक रूप से हारकर उसका एहसान मानते थे। भला उसकी दान-पुण्य का भला करने वाले उसे हराने की हिम्मत कैसे कर सकते थे? अगर वे ऐसा करते, तो क्या इससे स्वामी का क्रोध नहीं भड़कता? इसलिए, उसे यह भ्रम था कि पासे के खेल में उसकी हार असंभव है, क्योंकि वह एक के बाद एक, एक के बाद एक खेल जीतता जा रहा था। चतुर दुर्योधन धर्म की इस कमजोरी को जानता था और उसने धर्म को वहीं चोट पहुँचाने की रणनीति अपनाई जहाँ वह सबसे अधिक कमजोर था। उसने धर्म को पासे के खेल के लिए आमंत्रित किया। जो दिन-रात न्याय और नैतिकता के वचन बोलता है, उसने ऐसा निमंत्रण क्यों नहीं ठुकराया? क्या इसे स्वीकार करने के केवल दो ही कारण थे - जुए का लालच और अहंकार? ऐसा लगता है कि युद्ध या पासे के निमंत्रण को ठुकराना आर्य धर्म के विरुद्ध है। पासे के मंच पर, जब वह लगातार एक के बाद एक खेल हारने लगा, तो खेल देख रहे कौरव बुजुर्गों और कुछ आमंत्रित शासकों ने दुर्योधन से विनती की, 'उसे और खेल खेलने के लिए उकसाओ मत। उसे खेल जारी रखने की चुनौती मत दो।' फिर उन्होंने उसे खूब

गालियां दीं। लेकिन उन्होंने जुए को धर्म का उल्लंघन क्यों नहीं घोषित किया और उसे उठकर खेल छोड़ने का आदेश क्यों नहीं दिया? उसने अपना राज्य खो दिया, अपने भाइयों को खो दिया, खुद को खो दिया, फिर मुझे दांव पर लगाया और हार गया। मैं, जो उस समय मासिक धर्म से गुजर रही थी, मुझे जबरदस्ती खुले दरबार में ले जाया गया, मैं, जिसने सिर्फ एक साड़ी पहनी हुई थी! और उन्होंने मुझे कैसे धक्का दिया और मेरा शोषण किया, मुझे परेशान किया, यह कहते हुए, 'अब तुम हमारी दासी हो। हमारे पास आओ, हमारे साथ सो जाओ...' सभी महान गणमान्य व्यक्ति वहां चुपचाप बैठे रहे मानो वे ऐसे आचरण को धर्म द्वारा स्वीकृत मान रहे हों। किसी ने भी जो हो रहा था उसके खिलाफ एक शब्द भी नहीं बोला। किसी ने भी धर्मराज पर जुआ खेलने का आरोप नहीं लगाया... उस समय, उसकी आंखों से आंसू बहने लगे और उसकी आवाज गले में अटक गई। अपने भावों को नियंत्रित न कर पाने के कारण, वह जोर-जोर से रोने लगी और अपनी साड़ी के किनारे से अपने आंसू पोंछने लगी। स्वाभाविक रूप से बच्चे बहुत दुखी थे। सबसे छोटी श्रुतसेना की आंखों से भी आंसू टपकने लगे। उन्होंने आगे कहा, "केवल एक ही व्यक्ति वास्तव में जानता था कि धर्म क्या है। हमारे वनवास जाने के लगभग दो महीने बाद, कृष्ण द्वारका से दौड़ते हुए आए। उनके आते ही, आपको देखना चाहिए था कि उन्होंने धर्मराज को किस तरह झकझोर दिया। आर्य ज्ञान के भंडार और आदर्श आर्य शासक के रूप में खुद को अभिमानी समझने वाले सबसे बड़े पांडव का चेहरा शर्म से चूर-चूर हो गया। कृष्ण ने उन्हें सीधे-सीधे कहा, 'जुए या युद्ध के निमंत्रण को ठुकराना धर्म का उल्लंघन कैसे हो सकता है? क्या किसी हिरण के लिए कहीं अधिक शक्तिशाली बाघ के युद्ध के निमंत्रण को स्वीकार करना अनिवार्य है? हिरण भी रणनीति, कौशल और समय के बल पर बाघ को हरा सकता है। आप जानते हैं कि मैंने शक्तिशाली जरासंध का यथासंभव सामना किया। लेकिन जब उसने अपना धैर्य खो दिया और मुझे युद्ध के लिए चुनौती दी, तो मैंने अपनी सारी चतुराई का इस्तेमाल करके उस मुश्किल स्थिति से खुद को निकाला। ऐसा लगता है कि इस क्षेत्र के आर्यों ने मुझे कायर यादव और गैर-आर्य कहकर उपहास किया। लेकिन क्या मैंने सही समय का इंतजार नहीं किया और सही मौके पर जीत हासिल नहीं की? जरासंध को आपने हराया? खैर, युद्ध का मामला अलग है। युद्ध का प्रस्ताव ठुकराया जा सकता है, लेकिन अगर शत्रु आ पड़े तो युद्ध करना ही पड़ता है। लेकिन अगर जुआ खेलने का निमंत्रण ठुकरा दिया जाए, तो

फिर दूसरे पक्ष के आने का सवाल ही कहाँ उठता है? क्या हमें अपना जीवन और भाग्य पासे के अंधाधुंध खेल के भरोसे छोड़ देना चाहिए? जुए से ज्यादा घृणित और मूर्खतापूर्ण आदत कोई नहीं है। धर्मराज, क्या आप सोचते हैं कि धर्म केवल धर्म के नियमित ज्ञान को यंत्रवत दोहराना है, ऐसी दिनचर्या को रटना मात्र है? मुझे दुर्योधन द्वारा आपको जुए के खेल के लिए आमंत्रित करने और खेल खेलने के लिए हस्तिनावती जाने की खबर तुरंत मिल गई। मैं तुरंत समझ गया कि इससे घोर विपत्ति आ सकती है। यह समझने के लिए ज्यादा बुद्धि की आवश्यकता नहीं थी कि दुर्योधन, एक रिश्तेदार प्रतिद्वंद्वी होने के नाते, आपकी समृद्धि को सहन नहीं करेगा और निश्चित रूप से आपको नुकसान पहुँचाने की कोशिश करेगा। इसे समझने में ज्यादा समय भी नहीं लगना चाहिए था। लेकिन दुर्भाग्य से आपमें वह सीमित बुद्धि भी नहीं थी! मैंने जाने की योजना बनाई थी। तुरंत, लेकिन उस समय साल्व द्वारका पर आक्रमण करने की कोशिश कर रहा था। उसके पास एक विशाल सेना थी। लेकिन जब तक मैं अपने लोगों को इकट्ठा कर पाता, साल्व को हरा पाता और मार डालता, और यह सुनिश्चित कर पाता कि उसकी ओर से कोई और खतरा न आए, तब तक बहुत देर हो चुकी थी, और आप जुए के खेल में सब कुछ हार चुके थे। सुभद्रा अपने बच्चे के साथ द्वारका आई। मैं बिना देरी किए सीधे यहाँ आ गया। अगर मैं खेल के समय हस्तिनावती पहुँच जाता, तो मैं आपको और दुर्योधन को समझाता या कम से कम यह देखने की पूरी कोशिश करता कि जुआ खेलना धर्म का उल्लंघन है। अगर आपने मेरी सलाह नहीं मानी होती, तो मैं आपके और उसके हाथ काट देता। आप जानते हैं कि जुआरियों के लिए यही निर्धारित दंड है, पहले आपके और फिर दुर्योधन के..."

प्रतिविंध्या, "बड़े पिता ने क्या कहा?"

"वह क्या कह सकता था? उस कड़ाके की ठंड में, जिसमें हमारे पास खुद को ढकने के लिए कंबल तक नहीं थे, उस भयानक ठंड में, वह अचानक इतना पसीना बहाने लगा, जितना आप अभी बहा रहे हैं, और शर्मिंदा होकर बैठ गया। उसका सिर नीचे झुक गया।"

"माँ, आपने स्वयं क्यों नहीं कहा कि जुआ खेलना धर्म के विरुद्ध है?"

"तब मुझमें किसी व्यक्ति को यह बताने का साहस नहीं था कि वह गलत है। मैंने उससे जुआ खेलने न जाने की विनती की, उसे रोकने की कोशिश की, गिड़गिड़ाया और रोया। और जब तक कृष्ण ने बाद में धर्म के अर्थ को इतना स्पष्ट नहीं किया,

तब तक मैं उसे कैसे समझ पाता? अगर मुझे पहले पता होता, तो मैं अपने तर्कों की प्रबल शक्ति से धर्मराज को जाने से रोक देता। बेशक, यह निश्चित नहीं कहा जा सकता कि वह मान जाता या हठपूर्वक विरोध करता। बाद में ही मुझमें स्वयं सोचने की क्षमता विकसित हुई।"

श्रुतसेना ने बीच में ही टोकते हुए कहा, "तो फिर आपको यह साहस कब मिला?"

माँ, "क्या आपने 'साहस' कहा?" वह उत्तर खोजने के लिए अपनी स्मृति में गहराई से सोचने लगीं। वह उस समय को याद कर रही थीं जब विवाह के बाद से ही वह धर्मराज और कुंती को श्रद्धा से देखती आ रही थीं। ज्योतिषमती उनके पास आकर बोलीं, "क्या मैं चटाइयों को पानी से भिगोती रहूँ या आप खुले बगीचे में चलें? सूरज डूब चुका है। नौकरों ने ज़मीन गीली कर दी है और बगीचे में पौधों को पानी दे दिया है।" श्रुतसेना उठ खड़ी हुईं और बोलीं, "यहाँ बहुत उमस है। चलो बाहर चलते हैं।" कृष्ण का शरीर पसीने से तरबतर था। बाकी बच्चे अपनी माँ का उत्तर जानने के लिए बहुत उत्सुक थे। लेकिन वह स्वयं भी पूरी तरह से आश्वस्त नहीं थीं कि उन्हें स्वयं को अभिव्यक्त करने का साहस कब मिला। उन्होंने उस घटना को याद करने की कोशिश की, लेकिन उन्हें उत्तर नहीं मिला। वह खड़ी हो गईं। बाकी बच्चे भी खड़े हो गए। बच्चों को स्नान करने की इच्छा हुई। यह कहते हुए कि मिट्टी के बर्तनों में ठंडा पानी तैयार है, वह उन्हें स्नानघर ले गईं। उसने एक धारदार पत्थर से उनके शरीर, पीठ, बांहें और टांगों को तब तक रगड़ा जब तक पसीने के सारे निशान गायब नहीं हो गए। फिर उसने और पानी डाला, जिससे उनके शरीर ठंडे हो गए। बगीचा ठंडा था। बच्चे नहाने के बाद उसमें दाखिल हुए। तब तक उनकी मां की बात करने की इच्छा खत्म हो चुकी थी। साथ ही, उन्हें यह भी ठीक से याद नहीं था कि उन्होंने पहली बार यह साहस कब दिखाया था। वह घास पर बिछी ठंडी और मोटी चटाई पर पीठ के बल लेट गईं और शाम के आकाश को देखने लगीं। पांचों बच्चे उनके चारों ओर बैठ गए। वे नहाकर आए थे। प्रतिविंध्या पंखा लेकर बाहर आया था। हालांकि जमीन और पौधे ठंडे थे और पानी से भीगे हुए थे, फिर भी वह लेटी हुई मां को पंखा करता रहा। इससे उनकी आंखें बंद हो गईं और जल्द ही उन्हें नींद आ गई।

—•✳•—

अध्याय 19

कृष्णा को नींद नहीं आ रही थी क्योंकि वह अपने सबसे बड़े पति धर्म के साथ उनके निवास की छत पर लेटी हुई थीं। पूरी छत पर पानी छिड़का गया था ताकि ठंडक बनी रहे, और वे एक नरम गद्दे पर लेटे हुए थे। आँखों के सामने फैला आकाश अपनी पूरी नीलिमा में डूबा हुआ था, उसमें तारे शीतलता से चमक रहे थे। उनके बगल में उनके पति, पाँचों पतियों में सबसे बड़े, लेटे हुए थे। यह पता लगाना मुश्किल था कि वे सो रहे हैं या नहीं। वे चुपचाप लेटे हुए थे। वे शुरू से ही ऐसे थे, जिस दिन से कृष्णा ने पांडव परिवार में प्रवेश किया था। खासकर जुए में राज्य हारने के बाद, वे इतने लज्जित हो गए थे कि मुँह उठाकर बोलने की हिम्मत ही नहीं कर पाते थे। पहले तो वह उससे प्रभावित थी, लेकिन अब ऐसा लग रहा था कि वह उससे डरता है! गुप्तवास का साल खत्म होने के बाद से मैंने फिर से उसके साथ सोना शुरू कर दिया था। समझौते के अनुसार अब एक साल तक वह मुझे अपने पास रखेगा। खैर, मैं बस उसके साथ लेटी रहती हूँ। उसे शारीरिक अंतरंगता में कोई दिलचस्पी नहीं है। न ही मैं उसे सोने दूँगी और बस लेट जाऊँगी। सुबह मैं अपने बच्चों के साथ रहने के लिए एक अलग घर में चली जाऊँगी। मैं अब भी कई बातों को लेकर चिंतित हूँ। असल में धर्म क्या है? मुझे उसके सामने खड़े होने की हिम्मत कब मिली? मेरी याददाश्त कमजोर पड़ रही थी। क्या भीम अब यात्रा कर रहा होगा क्योंकि मौसम ठंडा है या वह डेरा डाले होगा? उसका शरीर धूप में लंबी घुड़सवारी से थक नहीं सकता, न ही ऋतुओं की कठोरता उसे हरा सकती है - न धूप, न बारिश, न सर्दी, न हवा।

उनका मन भी उतना ही अजेय है। वे एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं जिनका शरीर और मन दोनों पूर्णतः पुरुष हैं। शायद मुझे खुलेआम यह नहीं कहना चाहिए था कि वे ही

मेरा एकमात्र सहारा हैं! इसकी क्या आवश्यकता थी? हृदय की भाषा, जो एक-दूसरे को सहज रूप से समझती है, उसे शब्दों में क्यों व्यक्त किया जाए? कभी-कभी मैं ऐसे विचारों से विचलित हो जाती हूँ। लेकिन वे कभी भी बातों से विचलित नहीं होते। कीचक को मारने का निर्णय लेने के बाद, अगली सुबह इस इतराते हुए वीर ने भरपेट भोजन किया और दोपहर में गहरी नींद सोए! यही तो भीम हैं! वे कैसे सो सकते थे? कोई भी तो उस पत्थर से भी यही सवाल पूछ सकता है... "धर्मा उनके बगल में दूसरी तरफ लुढ़क गईं। वहाँ गर्मी थी और पास में एक पंखा था। उन्होंने उनसे पूछा, 'क्या मैं आपको पंखा कर दूँ?' उन्होंने हाँ नहीं कहा। लेकिन अपनी इच्छा से ही उन्होंने उन्हें पंखा करना शुरू कर दिया। उनकी नज़रें अब अतीत की ओर मुड़ गईं, एक ऐसा अतीत जो उनके लिए एक भयावह वर्तमान था... "दरबार खचाखच भरा हुआ था। आर्यावर्त में धर्म के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ माने जाने वाले भीष्म, मेरे पिता के युग के द्रोण, कृपा और कुछ अन्य शासक वहाँ बैठे थे। वे सब सिर झुकाए बैठे थे, या तो इसलिए कि वे धर्म का ज्ञान नहीं रखते थे या फिर इसलिए कि उनमें अपने मन की बात कहने का साहस नहीं था। जब पासा खेलने का बुलावा आया तो यह व्यक्ति बिना देर किए चला गया। उसने मुझे अपने साथ चलने को कहा। फिर उसके भाई भी उसके पीछे-पीछे चले गए। क्या वे यह घोषणा करने गए थे कि वे वीर हैं जिन्होंने अभी-अभी क्षत्रिय शासन का एक महान अनुष्ठान पूरा किया है? मैं राजसूय अनुष्ठान के दौरान विदेशी शासकों द्वारा उनके चरणों में अर्पित किए गए उपहारों और भेंटों से लदे हुए कीमती आभूषणों से सुशोभित होकर गया था। खैर, मैं चचेरे भाइयों की पत्नियों के सामने दिखावा करने के लिए उत्सुक था! उस समय हस्तिनावती की धन-संपत्ति सर्वविदित थी। क्या दुर्योधन और दुस्साना की पत्नियाँ राजसूय में आभूषणों से लदी हुई छोटे शासकों की पत्नियों के सामने दिखावा करने के इरादे से नहीं आई थीं? लेकिन जब मैं वहाँ पहुँची, तो पत्नियों ने धूमधाम से मेरा स्वागत किया। हस्तिनावती के लोग मुझे देखने के लिए उमड़ पड़े। क्या यह इसलिए था कि मैं राजसूय विधि से सफल हुए लोगों की पत्नी थी, या इसलिए कि मैं पाँच पतियों वाली एक विलक्षण स्त्री थी? बूढ़ी गांधारी ने मुझसे बहुत स्नेह से व्यवहार किया और मुझसे बहुत गर्मजोशी से बातें कीं। लगभग दस-ग्यारह साल पहले, उन्होंने मुझे खांडवप्रस्थ भेजते हुए कहा था, 'लड़की, तुम बहुत सुंदर बताई जाती हो। मेरे बेटों की बुरी नज़र है। कृपया अपने पतियों के साथ खांडवप्रस्थ चली जाओ।' अब ऐसी कोई बात नहीं थी। क्या उन्हें पहले से पता था

कि अगले चार-पाँच दिनों में इस पांचाली के गहने और वस्त्र जुए के ज़रिए उनके पास पहुँच जाएँगे? मुझे यकीन नहीं है कि बूढ़ी औरत को यह पता था या नहीं, लेकिन क्या बहुओं को इसकी जानकारी नहीं थी? क्या उन्होंने जानबूझकर मेरा स्वागत करने का दिखावा किया? या शायद उन्हें कैसे पता चलता कि बाहरी दुनिया में पुरुष क्या योजना बनाते और क्या करते हैं? नहीं, उन्हें नहीं पता था। मुझे पूरा यकीन है। वे पुरुष, ज़ाहिर है, प्रतिद्वंद्वी रिश्तेदार थे। मुझे लगता है कि वे, जो अब घर के सदस्य बन चुके थे और बाहरी थे, पारिवारिक कलह में उलझना नहीं चाहते थे। हस्तिनावती की शान-शौकत और धन-दौलत का हिस्सा बनना एक बात है, जो महिलाओं के लिए स्वाभाविक है। लेकिन अपने पुरुषों के छल-कपट में उनका साथ देना बिलकुल अलग बात है। मुझे याद है कि कैसे दुस्साना ने मुझे, जो एक ही गीले वस्त्र में लिपटी हुई थी और मासिक धर्म से गुज़र रही थी, पकड़ लिया और मुझे ज़बरदस्ती उस चबूतरे तक घसीटकर ले गया जहाँ जुआरी बैठे थे, तो वे सब डर से काँप रहे थे। आख़िर किस आर्य स्त्री में इतनी हिम्मत होती है कि वह अपने अनैतिक पति को गलत काम करने से रोक सके? लगता है वे सब अपनी सास गांधारी की ओर भागे। मुझे लगता है उन्होंने उनसे कहा होगा, 'आपका बेटा दुस्साना पांचाली के साथ घिनौना काम कर रहा है। इससे सब कुछ खत्म हो जाएगा। कृपया जाइए और इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, इसे रोकिए।'

दुस्साना की बातों से मैं बुरी तरह डर गई और कौरव पत्नियों की ओर दौड़ी। लेकिन वह मेरे पीछे आया, मेरी गुंथी हुई चोटी को पकड़ा, मेरी साड़ी का किनारा खींचकर बोला, 'अरे, क्या तुमने सिर्फ एक ही कपड़ा पहना है? ब्लाउज नहीं है। माहवारी वाली स्त्री। कोई बात नहीं, अगर तुम पूरी तरह नग्न भी हो। आखिर अब तुम एक सेविका हो।' उसने मुझे बोलने नहीं दिया, बल्कि मुझे कसकर पकड़ लिया, मेरे कंधों को थाम लिया और मुझे अजनबी पुरुषों से भरे एक हॉल में ले गया। लगता है उसने मुझे मेरे स्वयंवर के दौरान देखा था। शायद मेरे शरीर को छूने की इच्छा उसके मन में तभी जागी हो। शायद उसने अब उसे पूरा कर लिया! वहाँ सब लोग सिर झुकाकर चुपचाप बैठे थे। भीष्म, द्रोण और पाँचों पांडव। केवल तीन लोगों ने मज़ाक उड़ाने के लिए अपना सिर उठाया - दुर्योधन, कर्ण और शकुनि। और कर्ण ने तो विशेष रूप से दुस्साना को प्रोत्साहित करते हुए चिल्लाया, 'शाबाश, शाबाश दुस्साना' और ज़ोर-ज़ोर से हँसा। शकुनि भी हँसी में शामिल हो गया। हाँ, अब मुझे याद आया। हाँ, उसी क्षण, उसी पल, मैं इस्पात बन गई, पुरुषों

के विरुद्ध मेरा साहस उत्पन्न हुआ। जब तक किसी स्त्री को पुरुषों के शालीनता पर विश्वास रहता है, तब तक उसे उनके विरुद्ध शक्ति और साहस प्राप्त नहीं होगा। वे अनावश्यक प्रतीत होते हैं। वहाँ उपस्थित सभी पुरुषों में शालीनता का अभाव था। यहाँ तक कि बुनियादी धर्म का भी ज्ञान नहीं था। भीष्म, द्रोण और विदुर भी नहीं, उनमें से एक भी नहीं। जब मैं सीधे भीष्म के पास गई और उनसे पूछा, 'क्या धर्मराज का मुझे जुए में दांव पर लगाना धर्म है?' कुरुओं के उस दादा, समस्त जाति में सबसे प्राचीन, धर्म के सबसे बड़े विद्वान के रूप में विख्यात, उस सफेद दाढ़ी वाले चिरस्थायी कुंवारे, उस वृद्ध ने क्या कहा? यह: 'जो पुरुष स्वयं किसी की संपत्ति है, उसे जुए में कुछ भी दांव पर लगाने का अधिकार नहीं है। परन्तु एक पत्नी सदा अपने पति के नियंत्रण और अधिकार में रहती है। अतः धर्म बहुत ही नाजुक और संवेदनशील है। इसलिए मैं इस मामले में कुछ भी कहने से परहेज करता हूँ। यह ऋषि पापी शकुनि खेल के धर्म ने धर्मराज को जुए के प्रेम में मदहोश कर दिया... इस प्रकार वह शकुनि को बिना किसी रोक-टोक के गाली देने में ही संतुष्ट था। और उस बूढ़े व्यक्ति की धर्म की विशेषज्ञता बस इतनी ही थी!

भीम के हृदय और मन में वास्तविक धर्म का अंकुर फूट पड़ा। तब तक मुझे भीम के वास्तविक स्वरूप का कोई ज्ञान नहीं था। मैंने केवल उनमें दिखने वाले गुणों को ही देखा था—उनकी वीरता, उनकी अपार शारीरिक शक्ति, उनका उग्र स्वभाव और बच्चों के प्रति उनका सहज लगाव। परन्तु अजनबियों और सगे-संबंधियों से भरे उस सभागार में वे क्रोध से भरे बैठे थे। जैसे ही वृद्ध भीष्म ने धर्म को नाज़ुक और अस्पष्ट कहकर स्थिति को टालने का प्रयास किया, भीम अपने आप को रोक नहीं पाए और गरजते हुए बोले, 'हे धर्म, क्या तुम कुछ जानते हो? जुआघर में केवल वेश्याएँ ही मित्र बन सकती हैं। जुआ अधिकतर वेश्याओं के घर में ही खेला जाता है। जुए का आदी व्यक्ति तब तक जुआ खेलता है जब तक उसके कपड़े भी हार न जाएँ। परन्तु वह भी कभी अपनी वेश्या को जुए में दांव पर नहीं लगाएगा। यदि वह ऐसा करे, तो वह अपने जूते उठाकर उसे उसकी औकात दिखा देगी। जब ऐसा है, तो तुमने अपनी रानी और अपनी विवाहित पत्नी को दांव पर लगा दिया।' क्या तुम्हें पता है कि तुमने यहाँ जो रथ, घोड़े और रत्न खोए हैं, वे क्या हैं? ये सब मैंने राजसूय काल में पूर्वी देशों से जीते थे। इंद्रप्रस्थ हम सबकी सामूहिक मेहनत से बना है। लेकिन बड़े भाई के अधिकार का पालन करने के कर्तव्य का सम्मान करते हुए, इसे धर्म मानते हुए, मैं इनके बारे में और कुछ नहीं कहूँगा।

बेशक, जब तुमने अपनी पत्नी को वेश्या से भी नीचा समझा, उसे दांव पर लगाया, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि इन जाहिलों ने उसे नौकरानी कहा। मैं कहता हूँ कि पहला दंड तुम्हें दिया जाना चाहिए। सहदेव, उठो और आग लाओ। पहले मैं उसके दोनों हाथों, हथेलियों और उंगलियों को जलाकर राख कर दूँ। फिर हम बाकी मामलों पर ध्यान देंगे।

क्या सूक्ष्म वजनों से चीजों को सटीक रूप से तौलकर धर्म का पता लगाया जा सकता है? धर्म को मौके पर ही बलपूर्वक प्राप्त करना होगा। उसे दृढ़ता से आलिंगन में लेना होगा। चतुर अर्जुन धर्म को कैसे जान सकते हैं? उन्होंने तुरंत हस्तक्षेप किया, 'भीम, बड़े भाई का अपमान और अभिनंदन मत करो। युद्ध और जुए के निमंत्रण को अस्वीकार करना कायरता है। इनकार करना क्षत्रिय के योग्य नहीं है। बड़े भाई ने कोई गलती नहीं की है।' उन्होंने भीम के हाथ रोक दिए। लेकिन भीम ने यह सब क्यों स्वीकार किया? वह इस बिंदु पर क्यों रुक गए? क्या उनके शब्द क्षणिक क्रोध की मात्र अभिव्यक्ति थे? या धर्म के बारे में उनकी समझ स्पष्ट नहीं थी? स्पष्ट होने की क्या बात थी? उस व्यक्ति की बुद्धि का क्या उपयोग है जो किसी के द्वारा पत्नी को छूने मात्र से छेड़छाड़ करने पर धर्म की बारीकियों को तौलता है, बजाय इसके कि हमलावर पर झपटकर उसे मार डाले या उसके हाथों मारा जाए? कायर की तरह दुम दबाकर भागने से बेहतर है मारना या मरना।' अर्जुन भीम के मन को धर्म के धुंध में लपेटने में सफल रहे। अर्जुन ने अपने बड़े भाई के इस कृत्य को उचित ठहराया। अपने भाई के अपराधों को एक वफादार कुत्ते की तरह छिपाना। कर्ण ने कहा था, 'जो लोग अपना आत्मसम्मान और राज्य खोकर सेवक बन गए हैं, उन्हें राजाओं के वस्त्र और आभूषण पहनने का कोई अधिकार नहीं है। यदि उनसे नीचे के लोग ऊपर वालों के वस्त्र पहनें, तो क्या यह यहाँ एकत्रित राजाओं का अपमान नहीं होगा? उन्हें आदेश दें कि वे अपने राजसी रुतबे का प्रतीक मुकुट, अपने कंधे के बैज, अपने बाजूबंद और सोने का हार उतार दें। उन्हें साधारण वस्त्र पहनने दें।'

ये शब्द सुनते ही धर्मराज ने अपना मुकुट उतारकर पासे के पास रख दिया! अब उनके लिए हार उतारना आसान हो गया था क्योंकि मुकुट अब रुकावट नहीं था! आभूषण उतारने के बाद धर्मराज बहुत साधारण दिखने लगे। वे सचमुच एक सेवक बन गए थे। वे पहले की तरह शर्म से सिर झुकाए बैठे रहे। अर्जुन ने भी अपने बड़े भाई का अनुसरण किया। उनकी वीरता अपने भाई के प्रति वफादार कुत्ते की तरह

व्यवहार करने में थी। नकुल और सहदेव ने भी अपने राजसी वस्त्र और आभूषण उतार दिए। लेकिन जब भीम ने अपना मुकुट उतारना शुरू किया, तो मुझे ऐसा लगा जैसे कोई ज्वाला जल उठी हो। भीम में सच्ची बुद्धि का अभाव था। वे धर्म के अर्थ को गहराई से समझ सकते थे, लेकिन उसे आत्मसात करने की बुद्धि उनमें नहीं थी। अफसोस, कर्ण ने उनके राजसी वस्त्र और प्रतीकों को पूरी तरह उतारने का इंतजार नहीं किया। या क्या वह मेरी नग्न अवस्था में घुटनों और जांघों को देखने की अपनी गुप्त इच्छा पूरी करना चाहता था? दुस्साना ने मौका नहीं छोड़ा। वह मेरे पास आया और मेरी साड़ी का किनारा पकड़ लिया। वह उसे खींचने लगा। मुझे निर्वस्त्र करने के अलावा उसका और क्या इरादा हो सकता था? एक माहवारी वाली स्त्री। बिना किसी अंतर्वस्त्र के। उन्होंने पाँच भाइयों के लिए एक ही पत्नी की वैधता को स्वीकार नहीं किया था। कौरवों के मन में यह भावना थी कि पाँच पुरुषों द्वारा साझा की जाने वाली स्त्री को वेश्या, रखैल माना जाना चाहिए, और इसलिए कोई भी उस पर अधिकार जमा सकता है। भले ही सभाघर में भीड़ हो, फिर भी उसके भीतर अनायास ही साहस का संचार हो गया था। हाँ, मैं राजा द्रुपद की पुत्री हूँ। मैं प्रतिदिन बिना किसी चूक के अग्नि की पूजा करती थी। मैं एक राजा की पुत्री हूँ जो आज भी ऐसा करती है। समय आने पर क्या अग्निवंश की कोई सदस्य साहस खो सकती है?

अग्निं मन्ये पितरमग्निमापिम् |

अग्निं भ्रातरं सदामित सखद्यम् ||

आग पिता है, आग माता है; आग भाई है और आग मित्र है।

खैर, मैं लगभग भूल ही गया था। मैं लगातार अपने बाएं हाथ से हवा कर रहा था। मेरा हाथ दुख रहा था। मेरे बगल में यह धर्म नाम का व्यक्ति गहरी नींद में सो रहा है। वह सो रहा है। भला उसे नींद कैसे नहीं आ सकती? वह जिसने अपने प्रतिद्वंद्वी रिश्तेदारों को भरी सभा में अपनी पत्नी को छूने और उसके वस्त्र उतारने की अनुमति दी, जबकि वह सिर झुकाए बैठा था। क्या वह सोने के अलावा कुछ और कर सकता था?... "फिर उसने पंखा ज़मीन पर रख दिया। उसका बायाँ हाथ दुख रहा था। उसने दाहिने हाथ से ज़ोर से दबाकर दर्द कम करने की कोशिश की। ऊपर चाँदनी हल्की थी, लेकिन उसकी रोशनी में वह अतीत को साफ़-साफ़ देख

पा रही थी। उसे सब कुछ स्पष्ट रूप से याद था। अतीत की यादें कौंध गईं। उसने दुस्साना को जवाब दिया था, 'अरे कुतिया, मैं सिर्फ़ इस मूर्ख दरिंदे की पत्नी नहीं हूँ। मैं राजा द्रुपद की पुत्री भी हूँ। अग्नि उपासक द्रुपद की पुत्री। दृष्टद्युम्न की बहन। सावधान रहो, मेरे पिता और भाई सेना लेकर आएँगे और उन लोगों के महल को ध्वस्त कर देंगे जिन्होंने उनकी पुत्री को गुलाम बनाया है, और फिर उसके खंडहरों पर जंगल लगा देंगे।'

दुर्योधन ने उत्तर दिया, "क्या तुम्हें नहीं पता कि हमने तुम्हारे पिता को अपने गुरु के पलंग से बांध दिया था? ज्यादा बकवास मत करो। मैं तुम्हें दासी नहीं कहूंगा। मैं तुम्हें अपनी रानी कहूंगा। इधर आओ और मेरी गोद में बैठो।"

उसने पलटवार करते हुए कहा, 'उसे बांधने वाला तुम नहीं थे, चूहे। यह काम अर्जुन ने किया था, जो तुम्हारा वर्तमान शत्रु है। उस समय मेरा भाई अभी बच्चा ही था। अब मेरा भाई सेनापति है, युवराज है। यह बात अपने दिमाग में बिठा लो।'

हां, दुस्साना ने उत्तर दिया, "भाई, ये पांचाल लोग हमें बहुत समय से धमकियां दे रहे हैं। उन्होंने ऐसा करना तभी बंद किया जब हम स्वयं शक्तिशाली हो गए। अब वह अपने पिता के परिवार के माध्यम से फिर से कार्रवाई की धमकी देने की कोशिश कर रही है। उससे डरने की क्या जरूरत है?" कर्ण ने अपनी इच्छा व्यक्त की, जैसे गली का कुत्ता घर के कुत्ते से आग्रह करता है, "डरो मत। उसके शरीर से साड़ी उतार दो। मैं अंजाम भुगतने के लिए तैयार हूं।"

अगले शब्द याद करने में उसे कुछ समय लगा। उसने उत्तर दिया, ""यह मत सोचो कि मुझे केवल मेरे पिता और भाई का ही सहारा है। तुम नीचों, क्या तुम्हें याद है कि हमारे राजसूय में सबसे सम्मानित स्थान किसे दिया गया था, जिसने असहमति जताने पर शिशुपाल का गला काट डाला था? यह खबर जल्द ही उस तक भी पहुँच जाएगी। वह भी तुम्हारी देखभाल के लिए यहाँ जल्दी आएगा। अब मुझे पता चल गया है कि ये पाँचों पति नपुंसक हैं। लेकिन मैं तुम्हें याद दिला दूं कि मेरे पिता और भाई नपुंसक नहीं हैं। यादव वंश का कृष्ण भी मेरा बड़ा भाई है। वह तुम सभी के लिए एक साथ पति बनने के लिए पर्याप्त पुरुष है। वह द्वारका की पूरी सेना के साथ यहाँ आएगा। दक्षिण से पंचाल सेना आएगी। सावधान रहो, वे इस हस्तिनावती को उखाड़ देंगे, उसमें खुदाई करेंगे, गंगा को उसमें बहने देंगे और फिर उस पर बाग लगा देंगे!""

"तभी सचमुच सब लोग भयभीत हो गए। तभी दुर्योधन का चेहरा व्याकुल हो उठा। तभी भीम अचानक उठे और दहाड़े, 'अरे दुस्साना, तुमने मेरी पत्नी के शरीर को छुआ है। अगर मैं तुम्हें ज़मीन पर न गिराऊँ, तुम्हारा सीना न चीर दूँ और तुम्हारा खून न पी लूँ, तो कोई मुझे भीम न कहे। अगर मैं ऐसा न करूँ, तो मेरे पिता और दादा स्वर्ग न जाएँ।' भीम का मन कभी-कभी भ्रमित हो जाता है, लेकिन उनका साहस और हौसला कभी कम नहीं होता। पूरा हॉल काँप उठा। कैसी आवाज़ थी! वह हॉल से परे जाकर अंदर बैठी महिलाओं के कानों तक पहुँची, और दुस्साना की माँ भी डर के मारे हॉल की ओर दौड़ी। हालाँकि वह पूरी तरह अंधी नहीं थीं, लेकिन अपने पति के अंधे होने के कारण उन्होंने अपनी आँखों पर पट्टी बाँध रखी थी, और वह एक नौकर की मदद से वहाँ पहुँचीं। वह अपने अंधे पति का हाथ पकड़कर अंदर गईं। मानसिक रूप से सुन्न पड़े बूढ़े लोगों के सोए हुए सिर अचानक जाग उठे। तभी विदुर ने बोलना शुरू किया।" दुर्योधन को नैतिकता का उपदेश देते हुए। और कैसी नैतिकता! जुआ खेलना क्षत्रिय के लिए स्वाभाविक था; लेकिन अत्यधिक जुआ खेलना अनैतिक था। उन्होंने आगे कहा कि जुआ खेलने की लत धर्म के विरुद्ध है। खैर, यह कैसी नैतिकता थी? न इधर की न उधर की। इसमें कृष्ण की दृढ़ता और स्पष्टता का अभाव था। उसने मन ही मन कहा, "यह विदुर धर्म का महान विद्वान माना जाता था। क्या इन्हीं के माध्यम से इंद्रप्रस्थ को जुआ खेलने का निमंत्रण नहीं भेजा गया था? क्या धर्म के इस महान विद्वान को दुर्योधन और उसके वंश के असली इरादे नहीं पता थे? एक भला-भाला बूढ़ा आदमी, लेकिन हद से ज़्यादा अच्छाई, और सोच में स्पष्टता का पूर्ण अभाव..."

"हाँ, दुर्योधन डर गया था, यह सच है। लेकिन क्या इस वजह से वह अपने कदम पीछे हटाना उचित समझता? उसने कितनी चतुराई से मुझसे कहा, 'सुंदर, हमारा इरादा तुम्हें अपमानित करने का कभी नहीं था। लेकिन बताओ, क्या एक सेवक को सेवक की तरह दिखना और व्यवहार करना नहीं चाहिए? क्या तुम अपने महल में इसे बर्दाश्त करोगे अगर तुम्हारा सेवक अपने पैरों को पूरी तरह से ढक ले, जैसा कि तुम्हें एक स्वामिनी होने के नाते अधिकार है? धर्मराज ने अपने भाइयों को दांव पर लगाया और हार गया। तुम खुद बताओ कि क्या उसे तुम्हें दांव पर लगाने का अधिकार है या नहीं। अगर तुम हाँ कहती हो, तो तुम हमारी सेवक हो। ना कहो, तो तुम यहाँ से जाने के लिए स्वतंत्र हो। यह इतना ही सरल और स्पष्ट है। इसमें कोई दूसरा शब्द नहीं है। तुम जहाँ चाहो वहाँ जाने और जहाँ और जैसे चाहो रहने

के लिए स्वतंत्र हो। अब मैंने तुम्हारा भाग्य पूरी तरह तुम्हारे हाथों में सौंप दिया है। अब तुम फैसला करो।"

"उसके शब्दों का असली अर्थ क्या था? अगर मैं मान लूँ कि धर्म को भाइयों की बलि देने का अधिकार है, लेकिन मुझे नहीं, तो इसका मतलब है कि मैं पराया हूँ, है ना? फिर मेरे और धर्म के बीच क्या संबंध होगा? वह दुर्योधन बातों में बहुत चतुर था, शैतानी चालाकी से। और उस तनावपूर्ण स्थिति में, धर्म की पेचीदगियों को सुलझाने और उसके रहस्य को उजागर करने की तीक्ष्ण बुद्धि और धैर्य किसके पास होगा?"

"बेशक, मुझे उसकी चाल, उसके शब्दों के पीछे का इरादा समझने में देर नहीं लगी। खैर, अगर मैं कह दूं कि धर्म को मुझ पर दांव लगाने का कोई अधिकार नहीं है, तो मैं यह स्वीकार कर लूंगी कि वह मेरा पति नहीं था। एक बार जब मैं यह स्वीकार कर लूंगी, तो इसका मतलब होगा कि पांडवों और पांचालों के बीच कोई संबंध नहीं था। इसका स्वाभाविक अर्थ यह था कि पांडवों को पांचालों का समर्थन नहीं था। साथ ही, इसका उल्टा भी सच था, कि पांचालों को पांडवों का समर्थन नहीं था। तब वे आसानी से पांचालों पर आक्रमण कर उन्हें खत्म कर सकते थे! उन्होंने मुझे किस निराशाजनक जाल में धकेल दिया! इस बीच, दुस्साना ने मेरी साड़ी छोड़ दी थी, मेरे फैसले का इंतजार कर रहा था। उसने मुझे वहाँ स्वतंत्र रूप से खड़े रहने दिया था, जैसे कोई शिकारी जाल में फंसे हिरण को लेकर आश्वस्त होता है।"

धर्म के प्रति समर्पित होने का दिखावा करते हुए, उन्होंने वहाँ मौजूद पाँचों की ओर मुड़कर उन पर शब्दों की बौछार कर दी, "भीम, क्या धर्म की पेचीदगियों को सुलझाना संभव होगा, यदि तुम मूर्खतापूर्वक चिल्लाते रहो कि तुम्हारा शरीर लालच से फूलकर एक विशालकाय शरीर बन गया है? मैं वही दोहरा रहा हूँ जो मैंने द्रौपदी से पूछा था। मुझे अपना उत्तर दो। क्या तुम्हारे बड़े भाई को तुम्हें सूली पर चढ़ाने का अधिकार है या नहीं? यदि तुम हाँ कहते हो, तो तुम एक सेवक हो। और जैसा कि तुम्हें पता होना चाहिए, एक सेवक स्वामी की उपस्थिति में तुम्हारे जैसे चिल्ला नहीं सकता। लेकिन यदि तुम ना कहते हो, तो तुम इसी क्षण से स्वतंत्र हो। तब तुम्हें जहाँ चाहो वहाँ जाने की स्वतंत्रता है। तुम जानते हो कि वह इंद्रप्रस्थ है, जिसका नाम तुमने अहंकारवश लिया है, ठीक है, तुम वहाँ जा सकते हो। लेकिन

खांडवप्रस्थ मेरा है। क्योंकि उसके खो जाने का प्रश्न धर्म के किसी भी प्रश्न को नहीं उठाता।”

—•✳•—

अध्याय 20

भीम खुद को अनसुलझे दुविधाओं में फंसा हुआ पाकर असमंजस में पड़ गया। योद्धा की तरह अकड़ा हुआ खड़ा भीम अपना सिर नीचे झुका लिया। तभी दुर्योधन ने दूसरे भाई अर्जुन से बात की। उसने कहा, ‘अर्जुन, मैं तुमसे भी यही सवाल पूछूंगा। तुम्हारे पास भी अपने बड़े भाई के तुम्हें सूली पर चढ़ाने के अधिकार को अस्वीकार करने और जहां चाहो वहां जाने का विकल्प है। यही अवसर तुम्हारे छोटे भाइयों नकुल और सहदेव के लिए भी है। चूंकि धर्म ने खुद को सूली पर चढ़ा दिया है, इसलिए उसने यह विकल्प और अवसर खो दिया है। उसे हमारा सेवक माना जाता है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि मेरे राज्य में सेवकों की अच्छी देखभाल की जाती है, उन्हें कभी भी बुनियादी सुविधाओं - भोजन और वस्त्र - की कमी नहीं होती। हमने उनके साथ व्यवहार करते समय कभी भी करुणा का भाव नहीं छोड़ा है। हमने कभी भी किसी अक्षम सेवक को काम करने के लिए मजबूर नहीं किया है। हमने कभी भी उनके खाने, सोने और संभोग में दखल नहीं दिया है। मैं तुम्हें बताना चाहता हूं कि इस कुरु राज्य में कई सेवकों ने यहां से जाने का विकल्प दिए जाने के बावजूद यहीं रहना चुना है। वास्तव में, मेरे राज्य में दासता केवल एक औपचारिक बात है। प्रतीक। आपके आनंद पर कोई रोक नहीं है।'

"मुझे अर्जुन से जवाब देने की उम्मीद नहीं थी। नकुल और सहदेव के बारे में जितना कम कहा जाए उतना अच्छा है। तब दुर्योधन ने धर्म की ओर मुड़कर कहा, 'धर्म, तुम हार गए। यह स्वाभाविक है कि दरबार के वृद्ध लोग एक पूर्व राजा को

सेवक बनते, अपने पूर्व राजसी वस्त्रों और प्रतीकों को त्यागते और फिर सिर झुकाए बैठे देखकर करुणा से भर उठते हैं। लेकिन करुणा को धर्म से भ्रमित करने की गलती कभी मत करना। इसका यह अर्थ नहीं है कि धर्म तुम्हारे पक्ष में है। हमने जो किया वह सीधा जुआ था। यदि संयोगवश मैं हार जाता, तो धर्म तुम्हारे पक्ष में होता, क्योंकि इन वृद्धों की करुणा तुम्हारे पक्ष में झुकी हुई है। तुम्हें धर्म का आदर्श अनुयायी कहा जाता है; और ऐसा लगता है कि तुम हमेशा से ऐसे ही रहे हो। इसके अलावा, तुमने राजसूय विधि का पालन करके अपनी प्रसिद्धि को आसमान तक पहुँचा दिया है। लेकिन क्या तुमने वैदिक नियम नहीं सीखा कि अन्य जुआरी जुआरी की पत्नी के कपड़े और बाल खींचते हैं क्योंकि जुआरी दूसरों पर लालच भरी नजर से खेलता है?" लोगों का पैसा?

Anye jayam parimrsantyasya |

Yasydgrdhadvedane Vajyaksah ||

क्या हम दोनों ने साथ-साथ वेदों का अध्ययन नहीं किया था? क्या आप हस्तिनावती में जुए के खेल में बिना पैसे जीतने की इच्छा के बैठे थे? जुआरियों की यह पुरानी प्रथा है कि जो जुआरी अपने हारे हुए पैसे नहीं चुका पाता, उसकी पत्नी के कपड़े और बाल खींचते हैं। आप या आपके शुभचिंतक यह सोचकर बच न निकलें कि मेरे भाई दुस्साना ने यहाँ कोई बड़ा पाप किया है।

धर्म ने अपनी गर्दन जरा भी नहीं हिलाई। दुर्योधन लगातार बोलता रहा, "भीम, अर्जुन, माद्री के पुत्रों, जब कोई जुए में सब कुछ हार जाता है, तो उसके माता-पिता और भाई कहते हैं - हम इस आदमी को नहीं जानते। आप इसे बांधकर जहाँ चाहें ले जा सकते हैं। यह भी एक वैदिक नियम है।"

Pitamatabhratara enamahuh |

मुझे भूख लगी है, मुझे भूख लगी है ||

इसलिए, मैंने आपको जो अवसर दिया है, उस पर अच्छी तरह विचार करें और इस व्यक्ति को, जिसने अपने ही भाइयों को दांव पर लगाकर उन्हें गुलाम बना लिया है, अपने लिए अजनबी, तुच्छ व्यक्ति घोषित कर दें। तब धर्म के अनुसार आप निःसंकोच बच निकलेंगे। वैसे भी, आप वीर योद्धा हैं। आपके लिए एक नया राज्य जीतना मुश्किल नहीं होना चाहिए।

"भाई क्या कहते? भीम क्या कहते? और अर्जुन का मन कैसे काम करता? क्या चारों भाइयों के लिए मुक्त होना और फिर पांचाल सेना की मदद से इंद्रप्रस्थ को वापस जीतना संभव नहीं था? शायद वे दुर्योधन की उस चाल को नहीं समझ पाए जो उसने उन्हें मुक्ति देने में छिपा रखी थी। उसी समय, एक दासी का हाथ पकड़े हुए अंधे राजा तेज़ी से कदमों से हॉल में आए। वे सीधे मेरे पास आए। उनके पीछे गांधारी थीं। वे एक आदर्श पत्नी थीं जिन्होंने अपने पति के अंधे होने के कारण अपनी दृष्टि त्याग दी थी। उन्होंने अपनी दोनों आँखों पर पट्टी बाँधकर खुद को अंधा बना लिया था। इतने लंबे समय तक लगातार खड़े रहने के कारण मेरे पैरों में दर्द हो रहा था। तीन दिन के मासिक धर्म के कारण मुझे पहले से ही बदन दर्द हो रहा था। अगर मैं थोड़ी देर और खड़ी रहती, तो शायद खुले हॉल में ही मुझे मासिक धर्म का खून आ जाता। क्या यह मेरे पहले से हुए अपमान से कम होता? फिर भी, एक स्त्री का सम्मान भी होता है।"

"मेरा हाथ थामते हुए, उस बूढ़े व्यक्ति ने मुझसे पहले कभी न दिखाए गए स्नेह से कहा, 'बेटी, तुम एक महान महिला हो। अगर तुम्हारी आँखों से आँसू बहेंगे, तो इससे हमारे वंश का भला नहीं होगा। मुझसे पूछो कि तुम्हें क्या उपहार चाहिए, तुम्हारी क्या इच्छा है? मैं तुम्हारी हर इच्छा पूरी कर सकता हूँ। भले ही मेरा पुत्र दुर्योधन शासन कर रहा हो, लेकिन अंतिम संप्रभुता मेरे पास ही है!"

"अद्भुत आश्चर्य! इस नाटकीय बदलाव के लिए कौन जिम्मेदार था? लेकिन क्या मेरे पास इन सब बातों के बारे में सोचने का समय था?"

मैंने उत्तर दिया, 'आर्या, इस संसार में एक माँ को अपने बच्चों से बढ़कर और क्या प्रिय होता है? उन्हें अभी तक दांव पर नहीं लगाया गया है और वे खेल में हारे नहीं हैं। क्या यह सच नहीं है?'

न केवल धृतराष्ट्र बल्कि पूरा दरबार एकमत होकर बोला, 'हां, हां।'

मैंने कहा, 'इन निर्दोष बच्चों को दासों की संतान कहलाने का कलंक न लगने दें। कृपया उनके पाँचों पिताओं को उनके धनुष-बाण से मुक्त करा दें। जहाँ तक मेरी बात है, मैं यह स्वीकार नहीं करता कि मैं एक दास हूँ। मैं दुर्योधन और कर्ण द्वारा अपनाए गए विकृत न्याय के मार्ग का अनुसरण करते हुए यह नहीं कह रहा हूँ। मैं एक स्वतंत्र व्यक्ति हूँ, उनकी सोच से स्वतंत्र।'

उसने कहा, 'ठीक है। अपने पति द्वारा खोए गए राज्य और धन की वापसी की मांग करो।'

मैंने जवाब दिया, 'नहीं, मैं ऐसा नहीं करूंगा।'

अचंभित होकर उसने पूछा, 'क्यों नहीं?'

मैंने कहा, 'महाराज, मैं एक राजा की पुत्री हूँ। मात्र विवाह संपन्न हो जाने से यह नहीं हो जाता कि मेरे पिता ने मेरे प्रति अपनी सारी ज़िम्मेदारी त्याग दी है। और मेरे पति अपने शस्त्रों के साथ स्वतंत्र हो गए हैं। एक क्षत्रिय के लिए भीख मांगना उचित नहीं है।'

उन्होंने आगे कहा, "मेरी बहू, मेरी बात सुनो। मैं किसी भी हालत में अपने पुत्रों और पांडवों के बीच राज्य को लेकर युद्ध नहीं होने दूंगा। मैंने धर्मराज को जुए में हारी हुई सारी रकम लौटा दी है। तुम छहों तुरंत इंद्रप्रस्थ के लिए निकल पड़ो। एक पल भी देर मत करो। पांचाल राजकुमारी, आज तुम्हारा सबसे अधिक अपमान हुआ है। मैंने तुम्हें जो कुछ दिया है, उसके बदले में मैं तुमसे केवल एक ही बात चाहता हूँ, कृपया आज की घटनाओं को भूल जाओ और अपना धैर्य वापस पा लो।" तभी दुर्योधन ने बीच में दखल देते हुए कहा, "पिताजी।" बूढ़े ने उसके साथ सख्ती बरती और कहा, "अब न कोई पिता है, न कोई माता। चुप रहो और शांत रहो।" फिर भी मैंने दुर्योधन और कर्ण को दरबार के विदा होने पर अंतिम शब्द कहते हुए सुना, "वे एक स्त्री के कारण बच गए।"

कृष्ण का यह कहना बिल्कुल सच था कि जुए में जीतने वाला अपना समभाव खो देता है और जीतने वाला अपना विवेक खो देता है। दोनों ही स्थितियों में अंत में नुकसान ही होता है! जब हम रथ में बैठकर इंद्रप्रस्थ लौट रहे थे, तब धर्म सिर झुकाए बैठे थे। आधे रास्ते में पहुँचकर हमने डेरा डाला। धर्म अचानक नींद से जाग उठे और बोले, "मैं तुरंत लौटकर उसे फिर से जुए में चुनौती दूंगा और उसे हराऊंगा। मैं उससे हस्तिनावती दांव पर लगवाऊंगा और फिर उसे जीत लूंगा।" पास के तंबू में विश्राम कर रहे अर्जुन को भी धर्म का यह उन्माद लग गया। धर्म ने आगे कहा, "हम जिन्होंने राजसूय का सफलतापूर्वक संचालन किया है, क्या हमें जुए में हार का अपमान सहना चाहिए? अगर हम वापस जाकर अपनी हार का बदला नहीं लेंगे, तो हमारे मान-सम्मान और प्रतिष्ठा का क्या होगा, पांडु के महान पुत्रों के मान-सम्मान का क्या होगा? अब मुझे समझ आ गया है। उसने हमें धोखा देने के लिए कोई चाल चली थी, शायद पासे की बनावट में ही कुछ बदलाव किया था।" मैं उससे कहूँगा, 'ये पासे ठीक नहीं हैं। मैं अपने पासे लाया हूँ, और मैं तुम्हें इनसे खेलने की चुनौती देता हूँ।' यहाँ तक कि अर्जुन भी उसकी इस मूर्खतापूर्ण

बहादुरी में फँस गया! तब भीम कहाँ सो रहा था? तभी धृतराष्ट्र द्वारा भेजा गया दूत, जो उसे पासे के एक और खेल में आमंत्रित कर रहा था, आ गया, और तुरंत ही धर्म फिर से खेलने के लिए चला गया! अर्जुन उसके पीछे गया। रथ में मैं और भीम पीछे थे। भीम भी उस पागलपन में क्यों फँस गया? वह इस बात को लेकर काफी उलझन में था कि क्या खेलने के निमंत्रण को ठुकराना धर्म है या नहीं। लेकिन भीम को यह सही समझ नहीं थी कि एक आर्य का कर्तव्य यह नहीं है कि वह वीरता के साथ-साथ जुए में भी अपनी कुशलता दिखाए। मुझे भी यह तब तक नहीं पता था जब तक कृष्ण ने धैर्यपूर्वक और समझा-बुझाकर मुझे यह बात नहीं बताई। जुए के प्रति उसके इस जुनून के पीछे क्या कारण था? क्या यह मूर्खता थी कि वह भी इस खेल में पारंगत है? या फिर क्या वह इस कलंक को मिटाना चाहता था कि उसने एक स्त्री के माध्यम से अपनी स्वतंत्रता अर्जित की थी और अब वह खेल में अपने कौशल से इसे प्राप्त करना चाहता था? अब तक उसने यह बात किसी के सामने स्पष्ट नहीं की थी। वनवास के बारह वर्षों के दौरान भीम ने इस रहस्य को जानने के लिए कितनी लगन से प्रयास किया? यहाँ तक कि जब कृष्ण ने सीधे इसके बारे में पूछा, तब भी कोई उत्तर नहीं मिला। केवल मौन। एक नीरस मौन। ठीक वैसा ही मौन जैसा अब वह एक करवट सोते हुए दिखा रहा था। या क्या उसे यह बात पचाने में कठिनाई हो रही थी कि एक स्त्री की मध्यस्थता ही उसकी सहायता के लिए आई, जब वे एक खुली सभा में उस पर, उसके भाइयों और पत्नी पर हो रहे बढ़ते अपमान के सामने खड़े थे? यह सोचते हुए कि वह किस प्रकार का धर्म विशेषज्ञ है, उसने अपनी आँखें बंद कर लीं। जम्हाई ली। फिर एक बार फिर वह चिंतन में डूब गई: "मुझे अब सोना चाहिए। कितने दिनों से ये विचार मेरे मन में उमड़ रहे हैं? ये मेरे निरंतर साथी बन गए हैं। ये मेरे भीतर व्यर्थ ही उठते हैं; वे बेकार हैं... उसने फिर जम्हाई ली, अपनी आँखें कसकर बंद कर लीं और सोचने लगी, "जब हम जंगल में गए थे, उसके बाद कृष्ण हमसे मिलने आए थे, उन्होंने हमें वैदिक उपदेश दिया था - 'कभी भी जुए में पासा मत खेलो। खेती करो। खेती से अर्जित धन को महान समझो और सुखी रहो। इससे ही तुम्हारे पशु और तुम्हारी पत्नी आती हैं। यह मुझे ब्रह्मांड के स्वामी, सावित्री ने सिखाया है।'"

Aksairmadtuyah krsimit krsasva
vitte ramasva bahumanyamanah |

tatra gavah kitava tatra ja ya
tanme vicaste savitayamaryah||

"अगर कृष्ण उस सभा में मौजूद होते, तो वे दुर्योधन को मुंहतोड़ जवाब देते। यह धर्मराज, जो अपना दिन वैदिक विद्वानों के साथ चर्चा से शुरू करते थे, क्या उन्हें यह वैदिक नियम नहीं पता था? कृष्ण सही हैं। वे समय-समय पर धर्म का उपदेश नहीं देते। फिर भी, इनमें से कोई भी वेदों का उतना ज्ञान नहीं रखता जितना कृष्ण रखते हैं। कोई भी उनकी तरह वेदों की व्याख्या नहीं कर सकता। उनमें कृष्ण जैसी बुद्धि नहीं है। मुझे सुबह उनसे मिलना चाहिए। जुए के मंच की याद फिर से मुझे सताने लगी है। भीम और अर्जुन की तुलना। अर्जुन ने कहा था, 'मैं कर्ण और उसके अनुयायियों को मार डालूंगा जिन्होंने खुले दरबार में हमारा इतना अपमान किया है। अगर मैं उन्हें नहीं मारूंगा, तो स्थिर हिमालय पर्वत गतिमान हो जाएं। चंद्रमा अपनी शीतलता खो दे। सूर्य का प्रकाश गायब हो जाए। अगर दुर्योधन चौदहवें वर्ष में हमारा राज्य हमें वापस नहीं करता, तो मैं शपथ लेता हूं कि मैं यह वचन निभाऊंगा।'"

भीम ने कहा, 'अर्जुन, कुत्ते की तरह मत कसम खाओ जिसे बुरी तरह पीटा गया हो। शेर की तरह कसम खाओ कि चाहे वो राज्य लौटाए या न लौटाए, तुम उन्हें मार डालोगे। मैं कसम खाता हूँ कि मैं दुर्योधन की जांघ तोड़ दूँगा, दुस्साना की आँतें चीर दूँगा और उसका खून पी लूँगा। तुम्हारी कसम भी उतनी ही वीरतापूर्ण होनी चाहिए।'

अर्जुन ने कहा, 'लेकिन भीम, मान लो कि वे खेल की शर्तों का उल्लंघन नहीं करते...'

भीमा ने कहा, 'मैं कुत्ते जैसी मानसिकता वाले व्यक्ति से बहस करने से इनकार करता हूँ। मेरा वचन मेरा वचन है।'

सहदेव ने कहा, "हे शकुनि, तू, जो हमारी पत्नी द्रौपदी के अपमान का कारण है, यदि तू युद्ध में मुझसे मुकाबला करे, तो मैं तुझे जान से मार डालूँगा।" नकुल ने कहा, "यदि धर्मराज मुझे अनुमति दें, तो द्रौपदी को प्रसन्न करने के लिए मैं धृतराष्ट्र के पुत्रों के वध में भाग लूँगा।"

—•✳•—

अध्याय 21

"अर्जुन, तुम निःसंदेह एक कुशल धनुर्धर हो, शब्दों के कुशल प्रयोगक हो। पर कायर हो। मैं तुमसे तुम्हारे धनुर्धर कौशल के कारण प्रेम करती थी, जिसके बारे में पिताजी अक्सर बड़ी खूबसूरती से बात करते थे। फिर तुम्हारी वाक्पटुता ने मुझे सम्मोहित कर लिया। एक स्त्री तब तक नहीं जानती कि उसे किससे प्रेम करना चाहिए जब तक वह मानसिक रूप से परिपक्व नहीं हो जाती। वह अपने प्रिय व्यक्ति का तब तक आलोचनात्मक मूल्यांकन नहीं करती जब तक वह दुःख में डूबकर करुणा का भाव प्राप्त नहीं कर लेती। भीम, मैं शुरुआत में तुम्हारे सच्चे स्वरूप को पहचान नहीं पाई। मैं तुम्हारी केवल एक कर्तव्यनिष्ठ पत्नी थी। मैं कभी भी एक प्रेमी के गहरे प्रेम में नहीं डूबी और तुम्हारी ओर नहीं आकर्षित हुई। फिर मैं तुम्हें समझ नहीं पाई, तुम्हारे अपरिष्कृत, भोले स्वभाव और संवाद करने की तुम्हारी अक्षमता से विचलित हो गई। पर मैं उन दिनों को कैसे भूल सकती हूँ जब मेरा मन, हृदय और प्रेम उमड़कर तुम्हारी ओर बह रहा था? जब हस्तिनावती से तीन दिन और तीन रात कड़ाके की ठंड में चलने के बाद मेरे पैर फट गए थे, तब भी तुम्हारे पास मेरी देखभाल करने का समय और जागरूकता नहीं थी? मुझे कभी भी एक स्त्री की जटिल ज़रूरतों का कोई अंदाज़ा नहीं था। तुम अपने क्रोध में डूबे हुए थे। क्या यह वही समय नहीं था जब धर्म और अर्जुन जंगल में कहीं कुटिया बनाने के विचार पर चर्चा कर रहे थे, तभी राक्षस किर्मिरा ने हम पर हमला किया था? उसकी गरजती हुई आवाज़ के क्रोध और बल से मेरा सिर चकरा गया और मैं बेहोश होकर गिर पड़ा। जब मैंने आँखें खोलीं, तो सहदेव मुझे पंखा कर रहे थे। धर्म ने उनसे पूछा, 'तुम कौन हो?'

किर्मिरा, 'तुम सब कौन हो?'

धर्म ने कहा, 'हम पांडव हैं। मैं धर्मराज हूँ। मेरे बगल में बैठा भाई अभी पानी की तलाश में गया है। उसके बगल में अर्जुन है। ये दोनों सबसे छोटे हैं। दुर्योधन से जुए में हारने के बाद, हम बारह साल का वनवास बिताने के लिए यहाँ आए हैं।'

किर्मिरा, 'तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई मेरे जंगल में घुसने की? तुमने अपना नाम क्या बताया था, अपने भाई का नाम क्या बताया था?'

धर्म, 'मैं धर्म हूं, मेरा भाई भीम हूं, उसका भाई भीम...'

किर्मिरा ने कहा, 'बस करो। रुको। क्या यह वही भीम है जिसने मेरे बड़े भाई बकासुर को मारा है? अगर मैं तुम पाँचों को मार डालूँ, तो यह हमारी दावत होगी। मेरे बड़े भाई की आत्मा को शांति मिले।' उसने तुरंत पास पड़ा एक गोल पत्थर उठाया और उसकी इस फुर्ती ने धर्म को अवाक कर दिया। लेकिन अर्जुन ने अपना धनुष-बाण उठा लिया। पर एक दौड़ते हुए जंगली हाथी का बाण क्या कर सकता है? तभी एक पेड़ से एक विशाल शाखा के टूटने की आवाज़ आई। भीम, यह तो तुम ही थे, पूरी शक्ति से भरे हुए, तूफ़ान की तरह दौड़े और पत्थर फेंकने से पहले ही शाखा से उसे गिरा दिया। केवल शेर और बाघ ही तुम्हारे जैसी गति, हिंसा और क्रोध रख सकते हैं जो जीवन के हर खतरे को चुनौती देते हैं। युद्ध रणनीतिकारों और कुशल धनुर्धारियों में ये गुण कैसे हो सकते हैं? लेकिन उसने कितनी जल्दी तुम्हें बाघ की तरह जकड़ लिया! बिना आवाज़ किए तुमने अपने शत्रु की बगल पकड़ ली और उसकी भुजाएँ मोड़ दीं। उसकी दर्द भरी चीख सुनाई दी। फिर उसने खुद को छुड़ाया और गुस्से में हरकत करने लगा। लेकिन जैसे ही वह दोबारा तुम्हारी ओर दौड़ा, तुम अपनी चाल के लिए तैयार थे। तुमने अपने घुटने उसकी कमर पर दबाए, लेकिन वह तुम्हारे हाथ को दांतों से काट रहा था। मांस निकल आया और खून बहने लगा। लेकिन तुम, उस असहनीय दर्द की परवाह किए बिना, अपनी बाहों से उसका गला इतनी जोर से दबाया कि उसकी सांस रुक गई। मैंने पहले कभी इंसानों के बीच ऐसा जानलेवा संघर्ष नहीं देखा था, जो किसी खूंखार जानवर के बीच होने वाले संघर्ष जितना भयंकर था। बेशक, मैं जानता था कि तुम एक पहलवान हो। लेकिन मुझे यह नहीं पता था कि तुम एक बाघ हो। मैंने सुना था कि तुमने हिदिम्बा और बाका जैसे राक्षसों को मारा था। लेकिन मुझे राक्षसों और उनके स्वभाव के बारे में कोई प्रत्यक्ष जानकारी नहीं थी। तुमने उसकी सांस रोककर उसे पीठ के बल जमीन पर लिटा दिया था, फिर भी उसकी पसलियां क्यों तोड़ीं? उसकी हड्डियां चूर-चूर करने के बाद तुमने उसकी खाल क्यों फाड़ी? क्या

तुम्हें पता नहीं था कि वह मर चुका है? क्या तुम्हारे क्रोध से भरे कानों ने अर्जुन को यह कहते हुए नहीं सुना, 'भीम, रुक जाओ, वह मर गया है।' तुम्हें तो यह सब याद भी नहीं है! बाद में जब मैंने तुम्हारी याददाश्त जगाने की कोशिश की, तो तुम कुछ भी याद नहीं कर पाईं। मैं जानती हूँ तुमने ऐसा क्यों किया। तुमने उसका सीना चीर दिया था। उसी क्षण से, इस कृष्ण के हृदय में जो कुछ भी था, वह सब तुममें बहने लगा। जिस दिन से अर्जुन सुभद्रा को लेकर आया, मेरा हृदय खाली हो गया। यह एक निर्जन गुफा बन गया, जिसे कोई खरीदना या बेचना नहीं चाहता था! अर्जुन के मेरे हृदय से निकल जाने के बाद, मुझे यह भी नहीं पता था कि कोई और इसे धारण करेगा। द्रौपदी एक अभागी, बदनसीब स्त्री है। मैं, जो पति द्वारा ठुकराए जाने के दुर्भाग्य से पीड़ित थी, मृत्यु के भय से मर रही थी, यह जाने बिना कि तुम्हारे जैसा योग्य उत्तराधिकारी भी होगा।

मैं आपको यह सब कैसे बताऊँ? यह कृष्ण कर्तव्य, प्रतिज्ञा, धर्म और न जाने किन-किन बंधनों से बंधे हैं! मेरी सास, जो वन यात्रा की पूर्व संध्या पर मुझे शहर के बाहरी इलाके तक लेकर आई थीं, मुझे अकेले एक पेड़ के पीछे ले गईं, मुझे गले लगाकर रोते हुए बोलीं, 'बेटी, धर्म को मत त्यागना क्योंकि उसने जुआ खेलकर मूर्खता की। यह स्वाभाविक है कि अब तुम भीम की ओर अधिक आकर्षित हो। लेकिन पाँचों भाइयों के साथ समान व्यवहार करने की अपनी प्रतिज्ञा मत भूलना और पाँचों उंगलियों की एकता बनाए रखना।' हमारे पीछे आए विदुर ने भी चारों भाइयों से यही बात कही। उन्होंने कहा, 'तुममें से कोई भी धर्म के विरुद्ध एक भी कठोर शब्द न कहे। वह तुम पाँचों भाइयों की एकता का स्रोत है।'

जब मैंने अर्जुन को पूर्णतः अपने आप को समर्पित कर दिया, तो मैंने उन्हें खुलकर इसके बारे में नहीं बताया। लेकिन जब चार रातों के बाद मुझे उनके साथ रहने का मौका मिला, तो पूरी रात मेरा पूरा शरीर, मेरे हाथ, भुजाएँ, चेहरा और आँखें वो सब कह रही थीं जो मेरी ज़बान नहीं कह पा रही थी। लेकिन इस वनवास में, यौन संबंध से परहेज का बहुत सख्ती से पालन किया जाता था। यह मुझ पर, हम सब पर लागू होता था, और यह हमारे वनवास जीवन का अभिन्न अंग था। शायद दुर्योधन का इरादा मुझे यौन इच्छाओं की कमी से त्रस्त करना था! क्या यह उसकी साजिश थी कि इन तेरह वर्षों के वनवास में पांडव अपनी जवानी बर्बाद कर दें और मेरी माहवारी खत्म हो जाए, और इस तरह हम सब पूरी तरह से नपुंसक हो जाएँ! पाँच साल अतिभोग के। फिर हर साल प्रेमहीनता का दौर। मध्य आयु से

पहले के उस समय में जब यौन संबंध का पूर्ण और सर्वोत्तम आनंद लिया जा सकता है, वनवास के कारण हमें यौन इच्छाओं की कमी झेलनी पड़ी। तभी इस कृष्ण में सच्चा प्रेम पनपा। और मेरे पास उन्हें इसके बारे में बताने का कोई रास्ता नहीं था। वह एक नर हाथी हैं। प्रेम के भावों की सूक्ष्म बारीकियों के प्रति असंवेदनशील। कृष्ण कोई बंजर स्त्री नहीं हैं जो प्रेम के प्रवाह को सूखी मिट्टी से रोकती हैं! भीम, जिनकी सेवा राज्य में दासियाँ करती थीं, उस दिन से केवल मैं ही उनकी सेवा करने लगी। मेरे हाथों को सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि मैंने उन्हें तब भी भोजन कराया जब उन्होंने कहा कि उनका पेट भर गया है, उनके द्वारा शिकार किए गए जानवरों के मांस से, और उनके द्वारा हाथों से गहराई तक खोदकर इकट्ठा की गई जड़ों और फलों से, जिन्हें उन्होंने पकाकर इकट्ठा किया था। मैंने उनके सोते हुए सिर को आराम से अपनी गोद में रखा जब वे धूप में पेड़ की ठंडी छाया में लंबी साँसें ले रहे थे। इस प्रकार मेरी गोद तृप्त हो गई। यदि मैं कहती, 'भीम, मुझे यहाँ कहीं सौगंधिका फूल की सुगंध आ रही है, और यह बहुत प्यारी है', तो वे कहते, 'कृष्ण, लगता है तुम इसे अपने बालों में लगाने के लिए उत्सुक हो, तो रुको, मैं तुम्हारे लिए लाता हूँ।' फिर वे हवा का पीछा करते हुए, काँटेदार झाड़ियों और चट्टानों को पार करते हुए, रास्ते में साँपों और कीड़ों को सूंघते हुए दौड़ पड़ते और ढेर सारा लेकर लौट आते। फूल। हाँ, इन जटाओं को उन फूलों को धारण करने में गर्व महसूस हुआ जो वह इतनी कठिनाइयों के बाद मेरे लिए लाए थे। नहीं, मैं पूरी तरह सही नहीं थी। यह भीम प्रेम के संकेतों को समझने में सक्षम है। भीम के सिवा कौन मेरी अंतर्मन की इच्छाओं को समझ सकता था? भीम के सिवा कोई भी मेरी भावनाओं को नहीं समझ सकता था जब चलने से मेरे पैर दुखते थे, जब मैं काम से थक जाती थी, और जब मैं दुःख से व्याकुल हो जाती थी! वास्तव में, मैंने वनवास के बारह वर्षों के दौरान केवल उन्हीं के साथ अपना परिवार बसाया था। यह धर्म, जो मेरे सभी दुखों का मुख्य कारण था, अपनी मर्जी से मुझसे आमने-सामने बात करना बंद कर दिया। जब मैंने उसके आत्म-घृणा को शांत करने की कोशिश की, तब भी उसने किसी भी तरह के संवाद में शामिल होने से इनकार कर दिया। अर्जुन बहुत व्यावहारिक और नियमित ही रहा जब मैंने उसकी पोल खोल दी और उसे साफ-साफ कह दिया कि सुभद्रा को लाने के बाद उसका प्रेम प्रदर्शन केवल एक दिखावा था। नकुल और सहदेव को मेरे द्वारा सेवा किए जाने में शर्मिंदगी महसूस हुई। मैंने अपनी सारी सेवा और भक्ति भीम पर केंद्रित कर दी

थी। वास्तव में, मैं मैंने अपनी सास के आदेश का उल्लंघन किया। बाकी चारों आसानी से देख सकते थे कि पांचाली का प्रेम और ध्यान पाँचों में समान रूप से नहीं बँटा था। यदि इच्छा समान नहीं है, तो प्रेम समान कैसे हो सकता है? कौरव हमें राज्य लौटाएँ या न लौटाएँ, उनका नाश होना ही चाहिए, यह प्रतिज्ञा केवल भीम ने की थी। बाकी चारों में से और किसने इतनी दृढ़ प्रतिबद्धता दिखाई थी?

उसके पास वह दृढ़ निश्चय था। जब किसी अजनबी ने उसकी पत्नी के साथ दुर्व्यवहार किया, तो उसने बिना किसी संकोच या लाचारी के उसे जान से मारने का निश्चय कर लिया। उसने मन को संतुलन बनाने का साधन नहीं बनाया। यदि ऐसी स्थिति में क्रोध स्वाभाविक और सहज न हो, तो संबंधित व्यक्ति का प्रेम गहरा कैसे हो सकता है? भीम, जो अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करने पर भी क्रोधित नहीं होता था, अपनी पत्नी के प्रति मामूली से मामूली अपमान को भी सहन नहीं करता था। एक पति के अपनी पत्नी के प्रति प्रेम का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है? जयद्रथ द्वारा मुझे अगवा किए जाने या कीचक द्वारा मुझे बलपूर्वक अपने वश में करने के प्रयास पर भीम के भीतर जो सहज क्रोध उत्पन्न हुआ, वह अन्य पांडवों ने अनुभव नहीं किया। पुरुषोचित क्रोध ने उन्हें छुआ तक नहीं। उन्होंने अपमान को अपना नहीं माना और क्रोधित नहीं हुए। चालीस वर्ष का जयद्रथ एक-दो राजाओं के साथ किसी स्वयंवर में जा रहा था। वन की सीमा पर उनके साथ रथ और घोड़े थे। चौंतीस वर्ष की पत्नी होने के बावजूद, उसे सभी स्वयंवरों में भाग लेने का जुनून था! सुभद्रा ने अर्जुन पर स्वयंवरों में भाग लेने पर जो प्रतिबंध लगाया था, वह बिलकुल सही था। वैसे भी, विवाह के बाद स्वयंवर में भाग नहीं लेना चाहिए और पराजित राजा से स्त्री को उपहार के रूप में स्वीकार नहीं करना चाहिए। इन शर्तों को लागू करने में सुभद्रा का पूरा समर्थन था। ये शर्तें सभी आर्य शासकों पर लागू होनी चाहिए। जयद्रथ वहाँ भटककर तो नहीं आया था। उसने मेरी सुंदरता के बारे में सुना तो था, पर मुझे देखा नहीं था। घने जंगलों के ठीक आरंभ में, जहाँ रथों का जाना असंभव था, उसने अपना रथ रोक दिया और कुछ अंगरक्षकों के साथ हमारे पास आ गया। वैसे भी वह हमारा रिश्तेदार था। वह गांधारी की पुत्री दुस्सला का पति था। उसने सोचा होगा कि धर्म उसके आगमन को उनके कुशल मंगल का हालचाल पूछने का एक अच्छा संकेत समझेगा! क्या वह ऐसे व्यक्ति का आतिथ्य सत्कार नहीं करेगा? सबसे पहले, उसने अपने मित्र कोटिकास्य के माध्यम से अपने आगमन की सूचना भेजी थी और कहा था कि सभी पांडवों को अपने बहनोई का

स्वागत करना चाहिए। लेकिन वे सभी पाँचों शिकार पर गए हुए थे। जैसे ही उसे पता चला कि द्रौपदी कुटिया में अकेली है, वह तुरंत कुटिया में आ गया। शायद मुझे देखते ही वह अपना आपा खो बैठा। क्या चालीस साल का राजा पैंतालीस साल की स्त्री की सुंदरता का विरोध नहीं कर सकता था? क्या डेढ़ साल बाद कीचक ने मुझे तब भी अपने वश में नहीं किया था? यह विराट नगर में हुआ था। वह वासना से पागल हो गया था, मुझसे विनती की थी, और जब मना कर दिया गया, तो उसने मेरी लज्जा भंग करने का प्रयास किया। मुझे अपनी इस दयनीय सुंदरता पर कितना पछतावा हुआ! आज भी लोगों को यह विश्वास करना मुश्किल लगता है कि मेरा एक पच्चीस साल का बेटा है! वे कहते हैं कि मैं ज़्यादा से ज़्यादा तीस साल की हो सकती हूँ। वे भगवान की कसम खाते हैं! शायद कृष्ण के चेहरे और शरीर के लिए कोई ग्रहण नहीं है... या चंद्रमा, जो हर पखवाड़े घटता और अगले पखवाड़े बढ़ता है..." फिर उसने अपनी आँखें खोलीं और तारों के बीच से शाश्वत चंद्रमा को अपना गोल चेहरा दिखाते हुए देखा। धूल से ढके आकाश में भी उसकी सुंदरता बरकरार थी। और कल्पना की जा सकती है कि बारिश के बाद आकाश साफ होने पर वह कितना अधिक सुंदर होगा! जब वह पीठ के बल लेटी हुई ऊपर देख रही थी, तो ऐसा लग रहा था मानो वह उसकी ओर जा रही हो और वह उसकी ओर आ रहा हो। निर्लज्ज चंद्रमा उसकी सुंदरता को पी रहा था। फिर वह अतीत में लौट गई, "जयद्रथ मुझे निडरता से घूर रहा था। मैंने अपनी साड़ी ठीक की, झोपड़ी के अंदर गई और फिर बाहर आई। उसने मुझे पीछे से चौंका दिया, कामुक आनंद में मुझे कसकर पकड़ लिया। उसका शरीर उसकी लंबाई के अनुपात में नहीं था। उसकी हड्डियाँ कठोर और गांठदार थीं। मेरी चीखों को अनसुना करते हुए, उसने मुझे नीचे उतारा और फिर मेरे हाथ-पैर बांध दिए।" उसने मुझे अपनी पीठ पर उठा लिया। शायद वह उस कामुक रोमांच को खोना नहीं चाहता था जो मेरी पीठ उसके दुबले-पतले शरीर को दे रही थी... यह याद करके वह ज़ोर से हंस पड़ी। फिर दूसरी तरफ मुड़कर देखा कि क्या धर्म, जो हल्की नींद सोता है, ने उसकी हंसी सुनी। नहीं, वह गहरी नींद में सो रहा था, बिलकुल शांत।

"...चीखते-चीखते मेरी आवाज़ बैठ गई थी, मैं थक चुकी थी, लेकिन वह इतना कामुक था कि मानो मानसिक रूप से सुन्न पड़ गया हो। अगर उसने तुरंत मेरा मुंह बंद कर दिया होता तो मैं चीख भी नहीं पाती। अगर पुरोहित धौम्य नदी के किनारे घास न काट रहा होता तो उसे मेरी चीख सुनाई नहीं देती और वह पांडवों के

शिकार के लिए जाने की दिशा में मदद के लिए न दौड़ता। मान लीजिए कि उनके आने से पहले ही वह मुझे जंगल की सीमा पार ले जाकर अपने रथ में अंगरक्षकों के साथ अगवा कर लेता? उसका शरीर संभोग के मौसम में नर पशु की तरह कामुक था। शायद दुर्योधन और दुस्साना, जिन्होंने अपनी बहन का विवाह उससे किया था, मेरे शरीर का आनंद लेने की अपनी पुरानी इच्छा पूरी करने के लिए वहाँ पहुँच जाते! बेशक, कृष्ण एक अभागी हैं, लेकिन फिर भी उनकी हालत इतनी खराब नहीं हुई थी। आखिरी समय में भी कुछ अच्छा हुआ। हमेशा आखिरी समय में कोई न कोई सहारा मिल ही जाता है और इस बार भीम ने सहारा दिया।"

जब भीम उस व्यभिचारी को मार डालना चाहता था, तब धर्म ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "भीम, मुझे पता है कि तुम मेरी बात पर ध्यान नहीं दोगे। हाँ, मैं मानता हूँ कि वह एक ऐसा नीच आदमी है जो किसी और की औरत के पीछे भाग रहा है। लेकिन वह हमारी एक चचेरी बहन का पति भी है। उसे मारना न केवल पाप है, बल्कि इससे उसकी सास गांधारी, जो हमारी मौसी हैं, का दिल भी आहत होगा।"

'हे मेरे आदरणीय बड़े भाई, क्या हमारी माता कुंती का हृदय प्रज्वलित नहीं होगा यदि उनकी बहू की पवित्रता भंग हो जाए?'

"भीम, हम दोनों एक ही जीवन, एक ही जीवन शैली साझा करते हैं। भला मेरे भीतर जो है, वह तुम्हारे शब्दों में कैसे व्यक्त हो सकता है?" भीम उसे जान से मारने पर तुला हुआ था और उसने कहा, "देखो, उसे यहाँ जीवित लाने के प्रयास में मुझे इतने घाव लगे हैं। मैंने उसके पाँच अंगरक्षकों के हाथ तोड़ दिए और उन्हें मार डाला। बाकी भाग गए। मुझे ये घाव लगे हैं।" भीम, जो उसे मारना चाहता था, और धर्म और अर्जुन, जो उसे जीवित छोड़ना चाहते थे, के बीच संघर्ष चलता रहा। अंततः समझौता हुआ कि उसे छोड़ दिया जाए, लेकिन उसका सिर मुंडवा दिया जाए। भीम ने अर्जुन के पाँच सबसे तीखे बाणों से उसका सिर मुंडवा दिया, जिससे बालों की पाँच पट्टियाँ रह गईं। और यह धर्म अपने बहनोई जयद्रथ को दिए जाने वाले धर्म के उपदेशों में लगा रहा। उसने जयद्रथ के लाभ के लिए लगातार पुराणों का पाठ किया। अपना अपराध स्वीकार करने, उन्हें प्रणाम करने और इस प्रकार अपना जीवन बचाने के बाद, उसने अपना सिर एक कपड़े के नीचे छिपा लिया और अपने वाहन में बैठकर चला गया। रथ सीधे हस्तिनावती की ओर रवाना हुआ। उसने अपने बहनोई दुर्योधन को गले लगाया और शपथ ली कि वह पांडवों द्वारा किए गए अपमान का बदला लेगा। कहा जाता है कि उसी क्षण से जयद्रथ ने उत्तम

अश्वों का संग्रह और प्रशिक्षण शुरू किया, जो अब कौरवों को पांडवों के साथ युद्ध में उपलब्ध कराए गए थे। मेरा मानना है कि अब तक वे अश्व और उसकी सेना हस्तिनावती पहुँच चुके होंगे। माता गांधारी का हृदय आनंद से भर उठा होगा कि उनका दामाद उनके पुत्र के साथ मिल रहा है। दुस्सला ने अपने पति को चूम-मुकुटों से नहला दिया होगा क्योंकि वह उसके भाई के साथ मिल गया था। शायद भीम के कंधों, भुजाओं और माथे पर घावों के निशान अभी तक मिटे नहीं थे... "फिर कृष्ण दूसरी ओर मुड़े।

धूल से भरे आकाश में चाँद स्थिर खड़ा था। जैसे ही वह विचारों में डूबी, उसकी नींद उड़ गई। उसने सोचा, "अभी क्या समय हुआ है?" दिन उमस भरे थे और रातें नींदहीन थीं। रातें भी वैसी ही थीं जैसी अभी हैं। कल भीम के जाने के बाद से यादें उसे दिन-रात सता रही थीं। नहीं, यादें नहीं, बल्कि विचार। वह दूसरी तरफ मुड़ी। उसके बगल में सो रहे धर्म अचानक उठ बैठे, मानो उन्हें कोई बुरा सपना आया हो। उसने पूछा, "क्या बात है?" उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। वह तुरंत उठीं और गीली रेत पर रखे बर्तन से ठंडा पानी लाकर उसे ठंडा किया। उन्होंने बिना कुछ कहे पानी पी लिया, चेहरा धोया और फिर सो गए। खैर, गर्मियों में ऐसा ही होता है। जब शरीर का पानी पसीने के रूप में भाप बनकर निकल जाता है, तो सोने का तो सवाल ही नहीं उठता। उसने भी एक कप पानी पिया। वह बहुत ठंडा और सुकून देने वाला था। फिर वह सो गई। पानी पीने के बाद धर्म को नींद नहीं आई। उसे इस बात का पूरा यकीन था। उसे उससे बातचीत शुरू करने का मन हुआ। वह जानती थी कि उससे बातचीत करना लगभग असंभव था। उसका ध्यान अन्य, व्यापक मामलों की ओर चला गया। वह मन ही मन सोचने लगी, "धर्म मानता है कि शांति संभव है। अब भी उसे विश्वास है कि दुर्योधन हमें राज्य में हमारा हिस्सा लौटा देगा। अगर वह ऐसा नहीं भी करता है, तो हम एक दूत भेजकर कहेंगे कि हम पाँच गाँव स्वीकार कर लेंगे, भले ही हमें हमारा पूरा हिस्सा न मिले। उसका मानना है कि अगर हिस्सा वापस मिल जाए, तो युद्ध की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन इस तरह उस पर, उसके भाइयों और पत्नी पर हुए अपमान का बदला कैसे लिया जा सकता है? यहाँ तक कि हमारे क्षेत्र के नुकसान के मामले में भी, वह पूरा बदला लेने के लिए तैयार नहीं है। वह पाँच गाँवों से ही संतुष्ट है। ऐसे व्यक्ति का क्या किया जाए, जो कभी सीखेगा नहीं और कभी बदलेगा नहीं? निश्चित रूप से, वह जानता है कि मैं क्या सोच रही हूँ। और निश्चित रूप से, मैं भी जानती हूँ कि जब वह अपना

मुँह खोलेगा, तो उसके धर्मोपदेश की दुर्गंध निकलेगी। हमारी बातचीत उसके क्रोध, रोष और मेरी ओर से आँसुओं के साथ समाप्त होती है, केवल आँसुओं के साथ। मुझे विश्वास है कि इस जीवन में वह कभी बुद्धिमान नहीं बनेगा। सौभाग्य से हमारे लिए भीम ने उसकी जानकारी के बिना कीचक का अंत कर दिया। अगर किसी तरह, अगर उसे इस विचार के बारे में पता चल जाता, तो वह ज़रूर बाधा बनता। तब जीवित कीचक हमसे कहता, 'तुमने अपनी पत्नी को मेरे पास क्यों नहीं भेजा? इसलिए तुम मेरे शत्रु हो, और मैं तुम्हारे शत्रु का साथ दूंगा।' इस प्रकार दुर्योधन को हम पर युद्ध करने के लिए एक और शक्ति और समर्थन मिल जाता। अगर कामुकता भड़क उठी, तो अंततः वह शत्रुता और द्वेष की आग में भड़क उठेगी। कीचक कैसे रोया था, उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे, उसने कैसे भीख मांगी, गिड़गिड़ाया और प्रार्थना की थी, मेरे शरीर के लिए? लेकिन जब मैंने उसे मना कर दिया, तो उसने मुझे कैसे हिंसक रूप से लात मारी और मेरा शरीर जबरदस्ती छीनने की कोशिश की! और क्या इसमें मेरी कोई गलती है? मेरा शरीर बुढ़ापे को नहीं जानता था। वह मुझसे छोटा था। कहा जाता है कि वह सुदेशने का बड़ा चचेरा भाई था। वह उस समय लगभग चालीस या शायद पैंतालीस वर्ष का था। मेरे, मेरे शरीर और मेरी सुंदरता को देखकर किसी भी पुरुष का मन शांत नहीं रह सकता था। क्या कृष्ण को छोड़कर किसी पुरुष ने उनका विरोध किया है? दुर्योधन, दुस्साना, कर्ण, जयद्रथ। कीचक—आप उनके नाम ले लीजिए। लेकिन क्या एक बेहद खूबसूरत स्त्री को महल की दीवारों के भीतर छिपकर, गुमनाम और निर्जन होकर सड़ना चाहिए? जब स्त्री 'ना' कहती है, तो पुरुष क्यों नहीं रुक जाते? केवल कृष्ण ही अपने स्वामी हैं, पूर्ण आत्म-संयम रखते हैं। हाँ, मुझे पता है। मैं उनके सामने अनगिनत घंटे, अनगिनत दिन बैठकर बातें करती रही हूँ। उनका रूप, उनकी आँखें, उनका मन, उनकी वाणी, उनके शब्द, सब कुछ स्वाभाविक है। सब कुछ एकसमान सतह है, जिसमें कोई दरार नहीं है। ऐसा लगता है कि वे मेरे स्वयंवर में उपस्थित थे। लेकिन वे कभी धनुष उठाने के लिए नहीं उठे, हालाँकि वे अर्जुन के समान ही कुशल धनुर्धर हैं। मुझे यकीन है कि यह इतने प्रतिष्ठित व्यक्तियों की उपस्थिति में धनुष उठाने में किसी भी विफलता के अपमान का भय नहीं था। कुछ अवसरों पर, हार कोई अपमान नहीं होती। उन्होंने स्वयं कई बार उपदेश दिया है कि हार को शांति से स्वीकार करना चाहिए, बुद्धिमानी से आत्मसात करना चाहिए। वे उस स्वयंवर में एकमात्र क्षत्रिय थे जिन्होंने प्रतियोगिता

में अपना दावा पेश करने के लिए आगे नहीं आए। खैर, वे अब यहाँ हैं। और मैं उसे बुलवाकर बात करूँगी, कम से कम उससे बात करने से मुझे कुछ शांति तो मिलेगी..." वह दूसरी तरफ मुड़ गई। ...वही स्मृति बनी हुई है। तरह-तरह के लोगों के घरों में नौकरानी के रूप में मेरे दुख। कीचक की आकृति, मेरे शरीर के लिए पागल, मुझ पर ज़बरदस्ती करता हुआ। वे यादें बाढ़ की तरह हैं जो हर बाधा को तोड़कर अपने प्रवाह में बहा ले जाती हैं। वनवास, छुपकर गुलामी करने से बेहतर था। बेशक हमारे पास सभ्य जीवन नहीं था, शालीन कपड़े नहीं थे, बढ़िया खाना नहीं था, आलीशान घर नहीं था। लेकिन आज़ादी थी, भरपूर आज़ादी। उस व्यक्ति के लिए गुलामी से ज़्यादा क्रूर क्या हो सकता है जिसने कभी नौकरानी का जीवन न जिया हो? ऐसा नहीं था कि सुदेशने कोई खास क्रूर मालकिन थी। मालकिन की क्रूरता और दयालुता से ज़्यादा, नौकरानी होने का एहसास असहनीय था। उन लाखों लोगों का क्या हाल होगा जो गुलामी में पैदा होते हैं? राजा की सेवा करने वाली हर सुंदर सेविका को ऐसा लगता था मानो भाग्य ने उस पर अपनी नज़रें डाल दी हों, बस उसका स्वामी उसकी तरफ़ देख ले! उनके मन कैसे होते हैं? गुप्तवास में निर्वासन पाना वस्तुतः एक नए जन्म, एक नए जीवन के समान था। व्यक्ति को अपना पुराना जीवन, पुराना व्यवसाय, पुराने रिश्ते त्यागकर एक नया नाम धारण करना पड़ता था और जीवन की नई शुरुआत करनी पड़ती थी। रानी कृष्ण दासी बन गईं। भीम, जो हाथी को वश में करने और मारने की शक्ति रखते थे, क्षत्रिय भीम को रसोइया वलाल बनकर संतोष करना पड़ा। अर्जुन ने हिजड़े का वेश धारण किया और बृहन्नले बन गए, जो स्त्रियों और कन्याओं के नृत्य शिक्षक थे। नकुल विराट के अस्तबल में घोड़े की देखभाल करने वाले बन गए। सहदेव ग्वाले बन गए, जिनका नाम तांत्रिपाला था। अपने नए नामों में वे सभी सेवक थे। अंत में, दुर्योधन ने उन्हें दासता में धकेलने में अपनी इच्छा पूरी कर ली। इस प्रकार उसकी इच्छा अप्रत्यक्ष रूप से ही सही, पूरी हो गई। लेकिन इस धर्म ने कंक नाम से ब्राह्मण का वेश धारण किया और विराट के दरबार में धर्म के विशेषज्ञ के रूप में शामिल हुए, और हमेशा की तरह, बिना किसी को लाभ पहुंचाए अपना धार्मिक प्रवचन दिया। वह हमेशा विराट सबसे भाग्यशाली रहा है, हमेशा अपने धर्म संबंधी बकवास से बच निकलता था। विराट को जुए का भी बहुत शौक था। धर्म तो मानो इस खेल का दीवाना था। मुझे उम्मीद थी कि बारह साल के वनवास के दौरान वह इस खेल को भूल गया होगा। पर मैं कितनी गलत थी! शुरुआत में तो वह विराट के सहायक के

रूप में ही खेल में शामिल होता था। कुछ समय बाद वह उसके साथ खेलने लगा, और जल्द ही वे समय की परवाह किए बिना दिन-रात खेलते रहे। उसने विराट को भी जुए का आदी बना दिया। मुझे एहसास हुआ कि यह कहावत कितनी सच है कि जुआरी, शराबी और व्यभिचारी, चाहे वे किसी भी देश में जाएं, पल भर में अपने जैसे लोगों को पहचान लेते हैं। खैर, यह गुप्त वनवास का समय था, इसलिए मैं उससे बात नहीं कर सकी, क्योंकि इससे हमारी पहचान उजागर हो जाती। शायद उसे इस बात से प्रोत्साहन मिला होगा कि मैं उसे डांटूंगी नहीं। लेकिन वह विराट का ऋणी था। विराट चाहे कितना भी जीत जाए, वह उसकी अपनी जीत के बराबर ही था। और असली जीत तो तभी होती थी जब धर्म जीतता था! शायद इतनी कम रकम से ही उसे शायद यह जीत उस व्यक्ति के लिए सांत्वना का एक जरिया थी जिसने जुए में पूरा राज्य खो दिया था! भीम ने पहले ही घोषणा की थी - 'यदि हमारे वनवास के बाद और राज्य जीतने के बाद भी वह जुआ खेलेगा, तो मैं उसकी सारी उंगलियां काट दूंगा। तब वह शारीरिक रूप से विकृत होकर सिंहासन का अधिकार खो देगा। तब मैं प्रतिविंध्य को राजा बनाऊंगा।' शायद अंततः उसका यही हश्र होना तय है! यह धर्म सचमुच एक महान नैतिकवादी है, जिसने जुए में अपनी विपत्ति को भुलाकर एक वर्ष भोग-विलास में बिताया! यह उसी प्रकार का नैतिक उपदेश था जिसने मुझे कीचक द्वारा लात मारे जाने पर भी शांति की सलाह दी! और उसने कितनी ज़ोर से लात मारी! शायद कोई व्यक्ति इतना क्रोधित कभी नहीं होता जितना कि अपनी तीव्र यौन इच्छा को संतुष्ट न होने पर होता है!

"उन्होंने बड़ी आसानी से अपना पल्ला झाड़ लिया, मुझे सलाह देते हुए, 'सैरांध्री, धैर्य रखो। अब अपनी स्वामिनी के पास जाओ। जल्दबाजी मत करो।' यह सच है कि हमें आवेगपूर्ण क्रोध में आकर गुप्तवास की शर्त का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। फिर भी, क्या पत्नी की पवित्रता भंग होने पर ऐसा कहना और फिर जुआ खेलने के लिए निकल जाना उचित है? क्या भीम ने कीचक और उसके दस भाइयों को नहीं मारा था? भगवान ही जाने इस कृष्ण के सम्मान और पवित्रता का क्या हाल होता! भीम द्वारा उन लोगों को मारने के अगले दिन, सुदेशने और विराट भयभीत हो गए, और उन्होंने मुझसे विनती की, 'हे स्त्री, हम आपसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हैं और आपसे विनती करते हैं। कृपया हमारा घर छोड़ दें।' उन्होंने यह भी कहा, 'हम आपको आपकी इच्छा के विरुद्ध नहीं भगाएंगे। जब चाहें तब जाएं।'" लेकिन कृपया हमें यह आश्वासन दीजिए कि मुझे, मेरे पति और बच्चों को कोई

हानि नहीं होगी।' उसी समय, कितनी ही युवतियाँ हमारे पास आईं और कृतज्ञतापूर्वक हमें बधाई देते हुए बोलीं, 'ये दरिंदे हमें नरक बना रहे थे। आपके उस चमत्कारिक पति की कृपा से हम अपने दुखों से मुक्त हो गए हैं!' भीम, याद रखो, तुम्हारे पीछे ऐसे ही कृतज्ञ समर्थकों की शक्ति है। तुम बहुत मजबूत हो..."तभी उसे एक भिनभिनाहट सुनाई दी। यह ध्वनि मुर्गे की बांग से पहले आई, क्योंकि टिड्डे चारों ओर उड़ रहे थे। बहुत जल्द ही सुबह होने वाली थी और उजाला हो जाएगा। जल्द ही सूर्य निकल आया। ऐसे विचार करते हुए वह उठ बैठी। एक और प्याला पानी पिया। फिर वह सीढ़ियों से नीचे उतरी और उसने ज्योतिषमती को खुले में घास के गद्दे पर सोते हुए देखा। उसे जगाए बिना, वह स्नानघर गई, नीम की टहनी के सिरे को ब्रश बनाया और फिर अपने दांत साफ किए। फिर उसने मन ही मन कहा, "भीम, तुमने मेरे लिए हमेशा कष्ट सहा है। आपने मुझे जंगल में अपने कंधों पर उठाया था। आपने उन सभी का नाश किया जिन्होंने मुझे अपमानित किया था। कौरवों को मार गिराने के बाद, आप मेरे लिए सभी प्रतिशोधों को पूरा कर लेंगे। इसीलिए आप अब राक्षसों का समर्थन प्राप्त करने के मिशन पर हैं।" वह इस संभावना से थोड़ी चिंतित थी कि उसकी पहली पत्नी, राक्षसों की पत्नी, उसके साथ वापस आ सकती है। तभी अचानक उसे एक विचार आया। उसने मन ही मन सोचा, "जब अर्जुन मेरे पास कामुकता से भरे हुए आए थे, तो मैंने प्रतिज्ञा के कारण उन्हें सुख देने से इनकार कर दिया था। क्रोधित होकर वे चले गए और नाग और अप्सरा कन्याओं के साथ आनंद लिया, लेकिन अंत में सुभद्रा को चुना और उसके साथ लौट आए।" साढ़े तेरह वर्षों तक कामुकता से वंचित रहने के बाद, एक दिन जब भीम ने उसे रात में अपने घर बुलाया था, तो उसने प्रतिज्ञा के कारण इनकार कर दिया था। दुर्भाग्य से, अब धर्म की बारी थी, एक पेड़ जो पानी की कमी से सूखकर लकड़ी बन गया हो!

फिर भी प्रतिज्ञा और नियम का पालन करना आवश्यक था! भीम अवश्य क्रोधित हुए होंगे। शायद इसी कारण वे भीम के समान कद-काठी और शक्ति वाली शलाकटंकति को वापस लाने के लिए प्रेरित हुए होंगे! उन्हें इस बात से राहत मिली कि भीम अर्जुन नहीं थे। चेहरा धोने के बाद भी उन्हें थकान महसूस हो रही थी। इतनी थकान कि वे वहीं चटाई पर सो जाना चाहती थीं। एक गहरी जम्हाई लेते हुए वे अगले भवन की ओर बढ़ीं जहाँ बच्चे ठहरे हुए थे। बच्चे छत पर सो रहे थे, जहाँ मक्खियाँ भिनभिना रही थीं। फिर भी वे सीढ़ी चढ़ गईं। जैसे ही वे उस गद्दे के पास

लेटीं जिस पर बच्चे कतार में लेटे थे, उन्हें ठंडी हवा का स्पर्श महसूस हुआ। यद्यपि दिन का उजाला था, सूर्य उदय हो रहा था, फिर भी जिस नींद से उन्हें राहत मिली थी, वह उन पर हावी हो गई। नींद में डूबा मन स्वयं से बुदबुदा रहा था, 'भीम, मेरे भीम।' स्मृति धुंधली थी। उसने मन ही मन कहा, "उसे अपनी पहली पत्नी को लाने दो, या चाहे दस और पत्नियाँ ले आए। पर उसे उस आदमी की जांघ तोड़ देनी चाहिए और इस आदमी का सीना चीर देना चाहिए। अगर ऐसा हुआ, तो मुझे बच्चों के साथ फिर से जंगल जाने में कोई आपत्ति नहीं है।" तभी उसे लगा कि उसने अर्जुन की आवाज़ सुनी। कहाँ? गली में या इमारत के पास? उसे लगा कि उसने कहा, "तुमने क्या कहा?"

उसने किसी नौकर या सारथी को यह कहते सुना, 'वे आधी रात को गाड़ियों के साथ चले गए।'

आपने कहा था कि वह सहमत हो गया।

उन्होंने कहा कि वे तीर के सिरे तो नहीं बना सकते, लेकिन नट-बोल्ट और गाड़ी के लिए ज़रूरी सामान बना सकते हैं। जब मैंने उन पर चिल्लाकर कहा कि अगर वे ये सब बना सकते हैं, तो तीर के सिरे तो ज़रूर बना सकते हैं। तब वे विनम्रता से मान गए। लेकिन वे चले गए। मैं आपको बताने के लिए वापस आया हूँ।

क्या उनका पीछा करके उन्हें पकड़ना संभव नहीं होगा? वे बीस मील से ज़्यादा दूर नहीं गए होंगे।

'अर्जुन, ये लोग खानाबदोश हैं। शायद ये सचमुच ये काम करने में असमर्थ हैं। शायद उन्हें डर था कि हम उनसे बिना पैसे दिए काम छीन लेंगे। और क्या इस समय हमारे पास उन्हें ढूंढने और उनकी तलाश करने के लिए ज़रूरी घोड़े और आदमी हैं? हमें अभी भी कई देशों में दूत भेजने हैं।' ये सब नकुला की आवाज़ में लग रहा था।

फिर एकदम सन्नाटा छा गया। फिर जूतों की आहट सुनाई दी। द्रौपदी को लगा कि वे तालाब में नहाने जा रहे हैं। तब तक द्रौपदी को गहरी नींद आ चुकी थी। नींद में उसे धातु के ढलने की अस्पष्ट आवाजें सुनाई दीं। फिर वह एक तरफ करवट लेकर सो गई।

भाग पाँच



अध्याय 22

दुर्योधन के द्वारका जाकर यादव सेना का समर्थन प्राप्त करने की खबर पांडवों तक पहुँच गई। इससे उपप्लव्य में मौजूद कृष्ण, धर्म, अर्जुन और अन्य लोगों के लिए

समस्या खड़ी हो गई। कृष्ण अपनी स्वाभाविक सूझबूझ से समझ गए कि दुर्योधन केवल सेना का समर्थन प्राप्त करने में ही रुचि नहीं रखता था, बल्कि यादवों की एकता को भंग करके कम से कम कुछ नेताओं को अपनी ओर आकर्षित करना चाहता था। खबर सुबह आई। दोपहर तक उन्होंने इस पर विचार कर निर्णय ले लिया था। वनवास समाप्त होने के तुरंत बाद उनके भतीजे अभिमन्यु और विराट की पुत्री के विवाह का निर्णय होने के बाद कृष्ण को उपप्लव्य नगर आए चार महीने हो चुके थे। अब इन चार महीनों के बाद वे वहाँ रहने के बारे में दोबारा सोचने लगे थे। वे जानते थे कि उनके बड़े भाई बलराम उनसे ईर्ष्या करते हैं। बलराम अर्जुन के सुभद्रा के साथ भाग जाने की घटना को नहीं भूले थे। कृष्ण ने मन ही मन कहा, "बलराम तब तक प्रसन्न नहीं होंगे जब तक वे मेरे इरादे के विपरीत कार्य करके बड़े भाई के रूप में अपनी प्रतिष्ठा स्थापित नहीं कर लेते। इसलिए, अगर वे कौरवों का साथ दें, सिर्फ इसलिए कि मैं पांडवों का साथ दे रहा हूँ, तो इसमें ज़रा भी आश्चर्य की बात नहीं होगी।" कृष्ण को पूर्ण विश्वास था कि दुर्योधन इस स्थिति का लाभ उठाने की योजना बना रहा है, और उन्हें यह बात तुरंत समझ आ गई। कृष्ण ने धर्म और अर्जुन से कहा कि उन्हें शीघ्र द्वारका लौटना चाहिए और उन लोगों की वफादारी पांडवों की ओर वापस लानी चाहिए जिन्हें बलराम ने दुर्योधन के लिए पांडवों की ओर आकर्षित किया होगा। यह तय किया गया कि वे दिन की गर्मी कम होने के बाद शाम को प्रस्थान करेंगे। यात्रा के लिए कृष्ण के पास अपने रथ, धनुष, बाण, भाला और तलवार थे। वे जहाँ भी जाते और जितने समय के लिए भी रहते, उनके साथ हमेशा उनके अंगरक्षक रहते थे। रथों में यात्रा के लिए आवश्यक सामग्री लादने का आदेश दिया गया।

शहर के उत्तर में स्थित तालाब पर कृष्ण को विदाई देने के बाद, धर्म के मन में एक नया विचार आया। उन्होंने सोचा कि बलराम भले ही अपनी बहन सुभद्रा से अर्जुन से विवाह करने के तरीके को लेकर अभी भी नाराज़ हों, लेकिन अगर सुभद्रा उनके सामने आकर आंसू बहाए तो शायद उनका मन बदल जाए। इसके अलावा, यह घटना सत्रह साल पहले घटी थी, इसलिए शायद इसका कोई खास महत्व न हो। धर्म ने सोचा कि अगर सुभद्रा कृष्ण के साथ चली जाती तो अच्छा होता। तब तक रात हो चुकी थी। इस विचार को मन में लिए सोए हुए उन्होंने फैसला किया कि अब अर्जुन का सुभद्रा के साथ द्वारका जाना ही सबसे अच्छा होगा। वहां भीषण गर्मी थी। इससे घोड़े थक जाएंगे। रास्ता पथरीली पहाड़ियों के बीच से होकर

गुजरता था, जिनसे सूर्यास्त के बाद भी गर्मी निकलती थी। रास्ते में पानी आसानी से नहीं मिलता था। यात्रा में कम से कम बीस दिन लगते। फिर भी धर्म ने तय किया कि यह यात्रा करना अनिवार्य है। इस फैसले के साथ, वे आधी रात को उठे, छत से नीचे उतरे, नीचे सो रही सेविका को जगाया और उसे अर्जुन को लाने के लिए कहा। अर्जुन भीम के समान नहीं थे, वे किसी भी समय तुरंत जाग सकते थे। वे कितनी भी नींद कुर्बान करने को तैयार थे। सुभद्रा के साथ छत पर सो रहे अर्जुन धर्म के पास नीचे आए। धर्म और अर्जुन ने धर्म के निवास के पीछे बगीचे में विचार-विमर्श किया। यह तय हुआ कि अर्जुन अगली सुबह ही प्रस्थान करेंगे। अर्जुन उठे और कहा कि वे अपने अंगरक्षकों को यात्रा की सूचना तुरंत देंगे और रथों और घोड़ों को भी तैयार करेंगे।

जम्हाई लेते हुए धर्म ने कहा, "मैंने इन भूमियों को कभी नहीं देखा। ये बहुत दूर हैं, बहुत दूर। क्या आपने मुझे नहीं बताया था कि रास्ते में अभिराओं का देश है? और सुभद्रा भी आपके साथ होंगी। सावधान रहना। पर्याप्त संख्या में अंगरक्षक ले जाना। कम से कम पचास तो होने ही चाहिए।"

अर्जुन ने कहा, "जब विजय ही मेरी साथी है, तो कोई भी अभिर मुझे कैसे हानि पहुंचा सकता है? जो भी आर्य स्त्री पर दृष्टि डालेगा, मैं उसका जीवन नहीं बख्शूंगा।"

धर्म ने कहा, "यह तो स्वयंसिद्ध सत्य है। फिर भी अंगरक्षकों को रहने दीजिए। कृष्ण की यात्रा के लिए सारा आटा पैक कर दिया गया है। शायद आपकी यात्रा के लिए हमारे पास पर्याप्त आटा न हो। इसे पीसना पड़ेगा। अगर हम सुबह से तैयारी शुरू कर दें, तो आप अगली शाम तक यात्रा शुरू कर सकेंगे।"

अर्जुन उठते हुए बोला, "तुम वापस सो जाओ। मैं सब संभाल लूंगा।"

धर्मा वापस अपनी छत पर चढ़े, पानी पिया और फिर सो गए। उन्हें नहीं पता था कि द्रौपदी सो रही है या नहीं। वह करवट लेकर लेटी हुई थी। धर्मा को अचानक भीम की याद आई। क्या परसों ही भीम अपने मिशन पर नहीं गए थे? नहीं। उससे भी एक दिन पहले गए थे। कल तक उन्हें हिडिम्बा वन में होना चाहिए। धर्मा सोच रहे थे कि भीम के मिशन का क्या परिणाम होगा। फिर उन्होंने एक बार फिर जम्हाई ली और लेट गए।

—•✳•—

अध्याय 23

जब लालिमा लिए सूर्य की किरणें धूल में घुलमिलकर हवा को गर्म कर रही थीं, तब अर्जुन और सुभद्रा अपने रथ में सवार होकर शहर के पश्चिम में स्थित पहाड़ी के पार जा रहे थे। प्रत्येक रथ में एक सारथी और तीन पुरुष सवार थे। प्रत्येक रथ को दो घोड़ों द्वारा खींचा जा रहा था। केवल अर्जुन और उनकी पत्नी को ले जा रहे रथ को पाँच घोड़ों द्वारा खींचा जा रहा था, जो सभी एक ही ऊँचाई, आकार और विशेषताओं वाले और सफेद रंग के थे। रथों पर लामंका की चटाइयाँ बिछी थीं, जिन्हें चिलचिलाती धूप से बचाने के लिए समायोजित किया जा सकता था। पाँच सफेद घोड़ों वाले उनके रथ को आगे चल रहे छह रथों के पहियों से उड़ी धूल से होकर गुजरना पड़ा।

अब तक चुप रहे अर्जुन ने कहा, "कृष्ण की यात्रा हमसे निश्चित रूप से एक दिन आगे है। यदि हम तेज़ी से चलकर उनसे मिल लें, तो हम अपने तीन-चौथाई अंगरक्षकों को वापस भेज सकते हैं। और हमें अनेक स्थानों पर सैनिकों की आवश्यकता है। यह उचित नहीं है कि हम केवल अपने अभियान पर बारह रथ और इतने सारे सैनिक ले जाएं। इससे हमारे अन्य कार्यों में बाधा आ सकती है!"

उस समय सुभद्रा ने कहा, "द्वारका में यहाँ से ज़्यादा उमस होती है। पसीना तो खूब आता है, लेकिन गर्मी नहीं होती। शाम को, विशेषकर सूर्यास्त के बाद, समुद्र की ठंडी हवा चलती है, जिससे गर्मी कम हो जाती है। हमारे द्वारका में पंखे इस देश की तरह पैनकेक की तरह गर्म हवा नहीं फेंकते।"

वह दाईं ओर मुड़ा और सुभद्रा के चेहरे की ओर देखा। उसके कान, गर्दन और गाल पसीने से तर थे। उसने अचानक कहा, "वहाँ वैसी धूल नहीं है जैसी यहाँ है।" तब अर्जुन बाईं ओर मुड़ा। वह काँप उठा और सोचने लगा कि उसे जलती हुई

पहाड़ियों वाले इलाके से होकर लगातार बीस दिनों तक गुज़रना होगा! और फिर उसे वहाँ कम से कम दो-तीन दिन बिताने पड़ेंगे। थके हुए घोड़ों को आराम की ज़रूरत होगी। उसने मन ही मन कहा, "निस्संदेह सैनिक मेरे सामने खुलकर यह नहीं कहेंगे कि उनके शरीर में बहुत दर्द है। कुल मिलाकर डेढ़ महीना बर्बाद हो जाएगा..." सुभद्रा ने बीच में ही टोकते हुए कहा, "क्या सौभाग्य से द्वारका में पहली बारिश यहाँ से पहले नहीं होती?" वह बाईं ओर देखने लगा, इस चिंता में कि अगर बारिश जल्दी आ गई तो सड़क बह जाएगी और यात्रा का समय बढ़ जाएगा। अनुमानित डेढ़ महीने से भी ज़्यादा। अचानक उसे अतीत याद आ गया। सत्रह-अठारह साल पहले, तब तक बरसाती मौसम खत्म हो चुका था। वह इसी रास्ते से द्वारका से सुभद्रा के साथ इंद्रप्रस्थ पहुँचने के लिए इक्कीस दिनों में रवाना हुए थे। सड़क के दोनों ओर वही पर्वत श्रृंखलाएँ थीं। लेकिन उस समय चिलचिलाती गर्मी के बजाय, पहाड़ हरे-भरे पेड़ों, घास और फूलों से भरे हुए थे। पूरे रास्ते में कितना उत्साह था! और वह उनके दाहिनी ओर थी। वही सुगठित शरीर और जादुई चेहरा, जो अभी अठारह वर्ष की हुई थी। इंद्रप्रस्थ तक, उत्साह के अलावा कुछ नहीं था। अर्जुन भावुक हो गए, "जब तक मैं उसे अपने साथ नहीं लाया था, तब तक मुझे उसकी शक्ति का अंदाजा नहीं था। अठारह साल पलक झपकते ही बीत गए, मानो कोई सपना हो। वह मुझे विदाई देने के लिए दूसरों के साथ आई थी, और वहाँ सभी मौजूद थे - धर्म, नकुल, सहदेव, पाँचों बच्चे, अभिमन्यु और उत्तरा। द्रौपदी ने कहा था, 'जाओ और लौट आओ। तुम्हारा मिशन सफल हो। तुम्हारी यात्रा सुखद और आरामदायक हो। रास्ते में जंगली जानवर, डाकू, धूप और बारिश तुम्हें परेशान न करें।' बस इतना ही। आँखों में आँसू नहीं थे। चेहरे पर कोई चमक नहीं थी। यह उस तरह की उदासीनता थी जो केवल तब दिखाई देती है जब कोई दूर का रिश्तेदार विदा हो रहा हो।" तब अर्जुन और उनके साथी पहली पर्वत श्रृंखला पार कर चुके थे और अब दूसरी पर्वत श्रृंखला की शुरुआत में थे। उसके बाद एक और पर्वत श्रृंखला थी। चारों ओर बस बंजर, जलती हुई, ऊँची पहाड़ियाँ थीं। अगले दस से बारह दिनों तक उन्हें पहाड़ियों के इस सूखे, निर्जीव दृश्य की एकरसता सहनी पड़ेगी। अचानक उसकी नज़र रथ के निचले हिस्से में किसी चीज़ पर पड़ी। उसके चारों धनुष वहीं थे। वे बड़े, धातु के धनुष थे। वहाँ बहुत सारे बाण और भाले थे। इसके अलावा, छह रथ आगे और छह पीछे थे, प्रत्येक में चार सैनिक थे। वह सोचने लगा कि क्या यह सब सच में ज़रूरी था? क्या अर्जुन का यह धनुष ही

अभिरों, नागों या राक्षसों से निपटने के लिए पर्याप्त नहीं था? उसे लगा कि बाईं ओर पहाड़ी पर कोई भाग रहा है। उसने तुरंत अपना धनुष उठाया और भागते हुए रथ से उस जगह पर एक बाण चलाया। सुभद्रा ने पूछा, "क्या है?" अर्जुन ने पीछे मुड़कर देखा और बताया, "वहाँ एक खरगोश मारा गया है। सारथी, रथ रोको और उसे ले आओ। मेरा बाण भी वापस ले आओ।" पीछे के छह रथ एक-एक करके रुक गए। सारथी बताए गए दिशा में दौड़ा। अर्जुन के रथ के ठीक आगे वाले रथ से चार और सैनिक भी उसके साथ दौड़े। वह ठीक उसी जगह पर था जहाँ अर्जुन ने इशारा किया था। जी हाँ, खरगोश वहीं था, मौत की तड़प में छटपटा रहा था। तीर उसके पेट में धंस गया था। जब तक वे उसे टांगों से पकड़कर लाते, तब तक जानवर मर चुका था। सारथी अर्जुन के कौशल को देखकर चकित रह गया और उसने कहा, "महाराज, मैंने कभी किसी को इतने सटीक निशाने से तीर चलाते नहीं देखा। खरगोश स्वभाव से बहुत चंचल और डरपोक प्राणी होता है, और इतने सारे रथों के चलने के शोर से वह और भी घबरा गया होगा।"

अर्जुन ने अपने विशिष्ट अंदाज़ में अकड़कर जवाब दिया, "उसे देखते ही मैंने धनुष उठाया, पीछे मुड़ा और तीर चलाया। निशाना ठीक नहीं लगा था। तीर खरगोश को कहाँ लगा?"

सारथी ने कहा, "बिल्कुल पेट के नीचे। लेकिन क्या वह दौड़ नहीं रहा था?"

अर्जुन ने पूछा, "क्या तुम्हें लगता है कि खरगोश निशाना बनाकर बैठा रहेगा और भागेगा नहीं? और क्या तुम्हें लगता है कि विजया बैठे या सोते हुए जानवर पर तीर चलाएगी?"

आगे चल रहे रथ पर सवार व्यक्ति ने न केवल मृत खरगोश को रसोई के सामान में शामिल किया, बल्कि उसने जानवर की खाल उतारना भी शुरू कर दिया।

उसने बाण की नोक से खून पोंछा और उसे अर्जुन को लौटा दिया। फिर अर्जुन का सारथी अपने आसन पर बैठा और पाँचों घोड़ों को चलने का इशारा किया। जब रथ ने अच्छी गति पकड़ ली, तो सारथी ने अर्जुन से पूछा, "आपने विजया नाम के किसी व्यक्ति का जिक्र किया था। वह कौन है?"

अर्जुन ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह चुप रहे और अपनी हथेली से बाण पर लगे खून के धब्बे सावधानीपूर्वक पोंछते रहे। थोड़ी देर बाद, उन्होंने अचानक सारथी से पूछा, "आप किस समुदाय से हैं?"

उन्होंने उत्तर दिया, "रथ चालक समुदाय, सूत समुदाय। मैं शुद्ध सूत हूँ। मेरे दादाजी सूत थे। रथ चलाना हमारे समुदाय का पेशा है।"

अर्जुन, "क्या तुम्हारे मत्स्य देश के सूतों का केवल यही पेशा है?"

सारथी ने कहा, "मैं मूल रूप से मत्स्य देश का नहीं हूँ। मैं केकाया देश का हूँ।"

अर्जुन, "इसका मतलब है कि तुम रानी के साथ आए थे। या..."

सारथी ने कहा, "जी हां, मैं राजा कीचाका के साथ आया था..." फिर वह अचानक रुक गया, और आगे के शब्द कहने से खुद को रोक लिया।

अर्जुन को इसका कारण पता था। रथ का बायां पहिया एक उभरे हुए पत्थर से टकराया और रथ एक तरफ झुक गया। वह दाईं ओर डगमगा गया। सुभद्रा, अपने सुंदर चेहरे के साथ, स्थिति को समझ नहीं पाईं। अर्जुन ने अनुमान लगाया। उन्होंने सुभद्रा से कुछ नहीं कहा। ऐसा प्रतीत होता था कि केकय में सूत राजगद्दी पर भी विराजमान थे। सुदेशने उसी समुदाय की राजकुमारी थीं। वृद्ध वीरतांत को सूत राजकुमारी से बेहतर वधू और क्या मिल सकती थी? उन राज्यों के सभी राजा सूत थे, कोई भी शुद्ध क्षत्रिय नहीं था। यदि ऐसा है, तो क्या वे रथ-चालन का प्रशिक्षण ले रहे होंगे? अर्जुन ने पूछा, "क्या आपके राज्य के सूत केवल रथ-चालन का ही अभ्यास करते हैं और कुछ नहीं?"

सारथी ने कहा, "नहीं, महाराज। रथ बनाना, उसकी मरम्मत करना और युद्ध करना। वास्तव में, हमारे और क्षत्रिय में कोई भेद नहीं है। हमारे समुदाय में, हम सूत भी देश पर शासन करते हैं। यहाँ की तरह नहीं।"

अर्जुन ने कहा, "नहीं, मेरा यह प्रश्न नहीं था। हाँ, मैं मानता हूँ कि रथ निर्माण, रथ मरम्मत और युद्ध करना सूतों के सामान्य कार्य हैं। परन्तु राज्य पर शासन करना धर्म का उल्लंघन है। परन्तु सूत का एक अत्यंत महत्वपूर्ण कर्तव्य है: राजा की स्तुति में श्लोक रचना और गीत गाना, उनके पद, गौरव, वीरता का गुणगान करना और उनके नाम एवं यश का प्रचार करना। उन्हें यह सब याद करना होता है और फिर अगली पीढ़ी को भी सिखाना होता है। युवाओं को इसे याद करने का अभ्यास कराया जाता है।"

सारथी ने आदर और श्रद्धा से अर्जुन के चेहरे की ओर मुड़कर देखा। फिर वह घोड़ों की ओर मुड़ा। वे केकेय देश के थे और तेज़ी से सरपट दौड़ रहे थे। वे पहले ही इतनी धूल उड़ा रहे थे कि उनके अयाल धूल से लाल हो गए थे। उनके शरीर,

पीठ और पेट की सफेदी, जो यात्रा के आरंभ में धुलाई के कारण चमक रही थी, अब फीकी पड़ गई थी। सारथी ने सोचा कि पानी मिलते ही वह स्वयं उन्हें धो देगा।

अर्जुन ने कहा, "तुमने मुझसे पूछा कि विजय कौन था। तुम्हें अपने स्वामी की सभी उपाधियों और उन्हें प्राप्त करने के तरीके के बारे में पूरी जानकारी होनी चाहिए। रथ चलाना मात्र रथ चलाना नहीं है।"

हालांकि सूर्यास्त के काफी समय बाद अंधेरा हो चुका था, फिर भी गर्मी तेजी से फैलती जा रही थी। पहाड़ियों की आकृति धुंधली पड़ गई थी। अर्जुन ने सोचा कि पहाड़ और जंगल डाकुओं और अन्य अपराधियों के लिए बेहतरीन छिपने की जगह हैं, और फिर उसने अपनी आँखें सिकोड़कर दाईं ओर देखा। सुभद्रा वहाँ थी, रथ के डगमगाने से उसका शरीर काँप रहा था। उसका रंग गोरा था। लेकिन जंगल में भीषण ठंड, गर्मी और हवा का सामना करने के बावजूद भी वह अर्जुन जितना गोरा नहीं था। अर्जुन को याद आया कि उसका गोरापन हिमभूमि के शासक के गोरेपन जैसा था। अचानक उसके मन में एक विचार आया। न केवल उसे वह विचार सही लगा, बल्कि उसे यह भी महसूस हुआ कि यदि उसने उस विचार के अनुसार कार्य नहीं किया तो वह अपर्याप्त साबित होगा। उसके सामने, घुमावदार सड़क पर उसने रथों को साँप की तरह सरकते देखा। जब उसने पीछे मुड़कर देखा, तो पीछे के रथ साँप की पूंछ की तरह दिखाई दिए। केवल एक क्षण के लिए। फिर सड़क सीधी हो गई। उसे लगा कि यह ठीक नहीं है जब पांच ऊंचे, सफेद घोड़ों द्वारा खींचा जा रहा शाही रथ, छोटे रथों के पीछे चल रहा था, जिससे गतिमान सांप का आभास हो रहा था। पहले आया यह विचार और भी प्रबल हो गया।

अर्जुन ने पूछा, "सूत, तुमने मुझे अपना नाम नहीं बताया।"

सारथी, "मेरा नाम? तुष्टा।"

अर्जुन ने कहा, "मेरे बड़े भाई ने मुझे सोलह रथ और अड़तालीस आदमी लेने के लिए मजबूर किया। मैंने पहले इस बारे में सोचा भी नहीं था। जब अर्जुन मौजूद है तो अंगरक्षकों की क्या ज़रूरत है? अब एक काम करो। मुझे अपने रथ और दो और रथों से ज़्यादा कुछ नहीं चाहिए। यानी कुल आठ आदमी। और उनकी ज़रूरत खाना पकाने, तम्बू लगाने और ऐसे ही कामों के लिए है। हम आठ लोगों के लिए ज़रूरी राशन रखेंगे और बाकी - आदमी और सामान - वापस भेज देंगे। तुम उन्हें वापस जाने के लिए कह दो। शायद हमें दो अतिरिक्त घोड़े मिल जाएँ।"

सारथी, "लेकिन चारों ओर तरह-तरह के जंगली समूह घूम रहे हैं, और वे आर्य महिलाओं को अपना शिकार बनाने के लिए जाने को तैयार रहते हैं, और उन्हें पाने का कोई भी मौका नहीं छोड़ते।"

अर्जुन ने कहा, "जब तक विजया और उसके अतुलनीय धनुष-बाण मौजूद हैं, तब तक चिंता मत करो। रथ रोको और दूसरों को वापस लौटने के लिए कहो।"

सुभद्रा ने बीच में दखल देते हुए कहा, "नहीं, ऐसा मत करो। उन सबको हमारे साथ चलने दो।"

अर्जुन ने पूछा, "तुम क्यों डर रहे हो?"

सुभद्रा ने कहा, "यह सिर्फ डर का सवाल नहीं है। क्या दो रथों के साथ अपने मायके जाना हमारी राजसी प्रतिष्ठा को प्रतिबिंबित करेगा? मेरे पति, आप तो ऐसी बातों के बारे में सोचते ही नहीं हैं।"

अर्जुन ने दाईं ओर मुड़कर सुभद्रा को देखा। उनके बाल काले, चमकीले काले थे। उन्होंने सोचा कि उनकी उम्र कितनी होगी। पैंतीस? विवाह के समय वह अठारह वर्ष की थीं, जबकि अर्जुन स्वयं चौंतीस वर्ष के थे। सारथी समझ नहीं पा रहा था कि क्या किया जाए। संकेत समझकर घोड़े रुक गए। आगे चल रहे छह रथों के रुकने की आवाज़ सुनाई दी। आगे के रथ भी स्थिति को समझकर रुक गए। घोड़ों और रथों के रुकने की आवाज़ से हवा गूंज उठी। तुष्टा ने अर्जुन के चेहरे की ओर देखा। अर्जुन अपनी पत्नी से नाराज़ थे क्योंकि उन्होंने उनके निर्णय का विरोध किया था और अप्रत्यक्ष रूप से उनके साहस पर सवाल उठाया था। लेकिन वह उन्हें नाराज़ नहीं करना चाहते थे। उन्होंने सहमति जताते हुए कहा, "ठीक है। जैसा आप चाहें, वैसा ही होने दीजिए। सभी रथ हमारे साथ चलें।" सारथी के संकेत पर घोड़े चल पड़े। फिर आगे और पीछे के रथ भी उनके पीछे चलने लगे।

अर्जुन ने सारथी से कहा, "देखो। तुम्हें याद होगा कि कल द्वारका से हमारे रिश्तेदार अपने स्थान के लिए रवाना हो गए। वे हमसे एक दिन आगे हैं। यदि हम दो-तीन दिनों में उनसे मिल लें, तो हम उनके साथ यात्रा कर सकते हैं। आगे वाले सारथी से कहो कि वह रथ को तेज़ चलाए। वह मार्ग को अच्छी तरह जानता है, है ना?"

सारथी ने कहा, "अंधेरा हो चुका है। एक घंटे से भी कम समय में हम वृक्षस्थान पहुँच जाएँगे। यह हमारे मत्स्य देश का आखिरी नगर है। अगले आधे दिन तक हमें

केवल पहाड़, झाड़ीदार जंगल और चीते ही दिखाई देंगे। हम वृक्षस्थान में रात आराम कर सकते हैं। सुबह होने से पहले चाँदनी में हम आगे बढ़ सकते हैं।"

अर्जुन ने कहा, "हम उस कस्बे में थोड़ी देर रुकेंगे, अपना भोजन पूरा करेंगे और चमड़े के थैलों में पानी भर लेंगे। फिर हम पूरी रात यात्रा करेंगे। जब मैं तुम्हारे साथ हूँ तो डरने की कोई बात नहीं है। ज़रूरी यह है कि हमें रास्ता अच्छी तरह से पता होना चाहिए। आगे रथ में बैठे व्यक्ति से कहो कि वह मशाल जला दे।"

सुभद्रा कुछ कहने के लिए मुँह खोलने ही वाली थी कि उसकी आवाज़ शब्दों में ढलने से पहले ही अर्जुन उसकी ओर मुड़ा और बोला, "डरो मत। निश्चिंत होकर सो जाओ। इस रथ में काफ़ी जगह है। मैं दस दिन तक भी बिना पलक झपकाए जाग सकता हूँ।"

तुष्ट ने अपने ठीक आगे वाले रथ के सारथी को मशाल जलाने और जल्दी चलने का आदेश दिया। उसने यह संदेश अगले सारथी को दिया, और इसी तरह आगे बढ़ता गया। अर्जुन ने अपने सामने रखे धनुष को उठाया और उसे अपनी जांघ पर टिका लिया।

वे वृक्षस्थान पर रुके और भोजन किया। उन्होंने अपने घोड़ों को भूसा खिलाया और उन्हें जी भरकर पानी पिलाया। उन्होंने गेहूं का आटा तैयार किया और अगली सुबह उसे पैक किया, रथों से बंधी मशालों की स्थिति का निरीक्षण किया और पहियों में तेल डाला। इसके बाद वे अपनी यात्रा पर निकल पड़े। उस कस्बे के दो युवक घोड़ों पर सवार होकर उन्हें रास्ता दिखाने के लिए आगे चले गए। ग्राम प्रधान ने उन्हें रात में दल का नेतृत्व करने और सुबह गांव लौटने का आदेश दिया था। गांव से निकलते ही घना अंधेरा छा गया। पहाड़ लगभग आकारहीन दिखाई दे रहे थे। हालांकि आसमान धूल से ढका हुआ था, तारे चमक रहे थे। यात्रा का यह हिस्सा सुखद था। बहुत सारी झाड़ियाँ थीं, और कहीं-कहीं ऊँचे पेड़ थे। दिन के उजाले में यह क्षेत्र निश्चित रूप से हरा-भरा हो सकता था। लेकिन रात में चारों ओर छाए अंधेरे ने सभी रंगों को मिटा दिया था। रथों ने गति पकड़ी। हालांकि सड़क समतल नहीं थी, उस पर कोई पत्थर नहीं थे। पहियों के निशान दिखाने के लिए पर्याप्त नरम मिट्टी थी। सुभद्रा को नींद आने लगी और वह शरीर हिलाने लगी। फिर वह बाईं ओर झुकी और अर्जुन की दाहिनी जांघ से टिक गई। उसने अपना सिर दाहिनी जांघ पर रखा और टांगें अंदर की ओर मोड़ लीं। अर्जुन ने बाणों के भंडार के सामने की जगह साफ की और उसे सोने के लिए लिटा दिया। फिर उसने टांगें पूरी

तरह फैलाईं, आराम किया और गहरी नींद सो गई। रथ ऊबड़-खाबड़ सतह पर डगमगा रहा था, जिससे उसकी नींद में एक लय आ गई। अर्जुन एक विशाल धनुष को तीर चलाने की मुद्रा में पकड़े बैठा था। उसके बगल में उसके तेज बाणों का ढेर लगा था। लेकिन धनुष की डोरी कसी नहीं गई थी। उसने मन ही मन सोचा, पलक झपकाने जितना आसान काम के लिए धनुष को कसने की क्या ज़रूरत है? वैसे भी, हमले की उम्मीद कब थी? अगर कोई बाघ, चीता या भालू उन पर हमला करता, तो वे शिकार के लिए अच्छे शिकार साबित हो सकते थे। लेकिन इसकी संभावना भी कम थी क्योंकि रथों का शोर उन्हें डराकर भगा देता। अर्जुन को पता था कि कुशल धनुर्धर वही होता है जो न केवल लक्ष्य को देखकर, बल्कि उसकी ध्वनि सुनकर भी सटीक निशाना लगा सके। वह जानता था कि अधिकतर लोग सोचते हैं कि उसने केवल अपनी आँखों का उपयोग करके मछली के आकार के यंत्र पर निशाना साधा और पंचाली को जीत लिया। उन्हें यह नहीं पता था कि यह एक अधिक जटिल प्रक्रिया थी। नीचे पानी था जिसमें मछली के आकार की लकड़ी रखी थी। तीर को मछली के नीचे घूमते पहियों के दाँतों के बीच से होकर जाना था। पानी में प्रतिबिंब दिखाई देता था, लेकिन नीचे छिपे पहियों को देखना भी उतना ही आवश्यक था, क्योंकि वे आँखों से दिखाई नहीं देते थे। यदि उसके कानों ने पहियों की ध्वनि न सुनी होती, तो उसका निशाना व्यर्थ हो जाता। उसे अपने गुरु की बार-बार कही गई बात याद आई कि जब तक कोई श्रवण शक्ति में निपुणता प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक उसने धनुर्विद्या में निपुणता प्राप्त नहीं की। यह कितना सत्य था! अर्जुन मन ही मन बड़बड़ाने लगा, "अगर रात में भोजन करते समय हवा से दीपक न बुझ जाता, तो शायद मैं बात समझ ही न पाता। अंधेरे में भी हाथ बिना चूके भोजन को मुँह तक कैसे ले जाता है? क्या यह महज़ आदत की बात है? असल बात तो पूर्ण सामंजस्य है—लक्ष्य को देखना, उसके अनुसार धनुष को कसना, बाण को पीछे खींचना, लक्ष्य और दिशा की सटीकता, बाण की गति, लक्ष्य को भेदना, ये सभी अलग-अलग क्रियाएँ एक ही समय में, एक ही क्रिया में समाहित होकर घटित होनी चाहिए। गुरु कहते थे कि धनुर्विद्या में महारत तब तक संभव नहीं जब तक दृष्टि, कंधा, उंगलियाँ, सब एक ही बिंदु पर केंद्रित न हों, एक ही गति में समाहित न हों। केवल अर्जुन ने ही इस महारत को प्राप्त किया। वह एक विशाल वृक्ष था, बहुत विशाल। कितना विशाल? सौ वर्षों की ऊँचाई जैसा विशाल। किसी दादाजी की तरह। उसकी सबसे ऊँची शाखा के सिरे पर, पत्तों की दरारों से दिखाई दे रहा था,

एक गिद्ध बैठा था। जब तक कोई एकाग्रचित्त न हो, उसे देखना मुश्किल था। अन्यथा, इसकी उपस्थिति को लेकर भ्रम हो सकता था। आकाश की ऊँचाई पर। दृष्टि को विचलित करने वाली तीव्र सूर्य किरणें थीं। गुरु ने कहा था, "राजकुमारों, अपने धनुष तैयार कर लो, तीर को तनी हुई डोरी पर सही स्थिति में रखो, निशाना साधकर तीर तैयार रखो। जिसका नाम मैं लूँ, वही तीर चलाए। जिसका तीर गिद्ध को मार गिराएगा, वही विजेता घोषित होगा।" एकाग्रता। अर्जुन की एकाग्रता। सीखने और प्रशिक्षण में। क्रिया और उपलब्धि में। गुरु ने एक बात सिखाई, तो मैंने कड़ी मेहनत से सौ बातें सीख लीं। जागृत अवस्था में और स्वप्न में, आँखों, कंधों और उंगलियों का वही एकाग्रता और समन्वय। खड़े होते हुए भी, बैठे हुए भी। सोलह वर्ष की आयु से पहले ही मेरी दाहिनी भुजा, दाहिना कंधा, दाहिनी छाती, धनुष की डोरी के निरंतर दबाव के कारण खून से लथपथ हो गई थी, फिर सूख गई, जिससे निशान रह गए। निशान आज भी मौजूद हैं।" अर्जुन ने अपने हाथ से उन निशानों को छुआ। जहाँ निशान बने थे, वहाँ की त्वचा सख्त हो गई थी और सुन्न पड़ गई थी। एकाचक्र नगर में ब्राह्मण का नया रूप धारण करने पर मिले घावों को छुपाना बहुत कठिन था। द्रोण देव, जिन्होंने कभी किसी शिष्य को आलिंगन नहीं दिया था, ने अर्जुन को आलिंगन दिया और उनसे कहा, "हे बालक अर्जुन, जिस प्रकार एक शिष्य अपने गुरु की खोज करता है, उसी प्रकार गुरु भी एक योग्य शिष्य की तलाश में रहते हैं, जो उनकी यश और नाम को बढ़ा सके। तुम ही एकमात्र शिष्य हो जो मेरा नाम दूर-दूर तक फैला सकते हो। अपनी एकाग्रता बढ़ाओ। अधिक मेहनत और अभ्यास करो। अपने लक्ष्य को सिद्ध करने में लगे रहो। बड़े धनुषों को चलाने का प्रयास करो। दूर से भी लक्ष्य पर निशाना साधने का अभ्यास करो, जहाँ दृष्टि कमजोर हो जाती है। बाण का उद्देश्य केवल जाकर भेदना नहीं होता। उसे कुल्हाड़ी से भी अधिक तीक्ष्णता से लक्ष्य को काटना चाहिए। तुम्हारे नाम पर एक विशेष प्रकार का बाण होना चाहिए, जिसका नाम 'अर्जुन बाण' हो।" उन्होंने आगे कहा, "अब से मैं तुम्हें धनुष-बाण के करतब नहीं दिखा पाऊंगा। मैं केवल मौखिक रूप से ही तुम्हें तीर चलाने का तरीका बताऊंगा, कारण और परिणाम समझाऊंगा। तुम्हें उन्हें आत्मसात करना होगा और निपुणता प्राप्त करने तक खूब अभ्यास करना होगा।" अपने गुरु को देखे हुए उन्हें तेरह वर्ष से अधिक समय हो गया था। अर्जुन को बताया गया था कि उनके गुरु काफी स्वस्थ हैं, फिर भी उनका चेहरा दुबला-पतला था। उनका पुत्र ब्राह्मण होने के बावजूद क्षत्रिय

स्वभाव का था। द्रोण की मुख्य चिंता यह थी कि उनके पुत्र में क्षत्रियों की तरह आत्म-अनुशासन की कमी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि द्रोण गौ-पकड़ने के अभियान में शामिल हो गए थे, और तब उन्हें अर्जुन से मिलने का अवसर मिला। लेकिन अर्जुन स्वयं उन्हें ठीक से देख नहीं पाए। अर्जुन ने निश्चय किया कि द्वारका से लौटने के बाद उन्हें किसी भी तरह उनसे मिलना होगा। गुरु के चरण स्पर्श करने होंगे।

सड़क तेज़ी से ढलान पर जाती हुई प्रतीत हुई। सारथी ने लगाम कसकर पकड़ी हुई थी, और उसे धीरे-धीरे थोड़ा-थोड़ा करके ही छोड़ रहा था। कुछ छोटे पत्थरों को पार करने के बाद, वे एक समतल सड़क पर पहुँचे। फिर उन्होंने गति बढ़ा दी। उन्होंने रथों के लामंका आवरण हटा दिए, जिससे चारों ओर आकाश दिखाई देने लगा। कहीं-कहीं क्षितिज पहाड़ियों से बाधित था। धूल भरी हवा के कारण उन्हें तारों की स्थिति का स्पष्ट अनुमान नहीं लग पा रहा था। अर्जुन बैठ गए और अपने दाहिने कंधे की दिशा में धुंधले ढंग से चमकते तारों को ध्यान से देखने लगे। अचानक उसने मन ही मन कहा, "युद्ध शुरू होने दो। मैं धनुर्विद्या के ऐसे प्रदर्शन से संसार को चकित कर दूंगा जो मनुष्य ने पहले कभी नहीं देखा होगा। अर्जुन को देखने से पहले ही उसके बाण अपने लक्ष्य को चूर-चूर कर देंगे। अर्जुन के मात्र दस बाण ही पूरी सेना में अराजकता और अफरा-तफरी मचाने के लिए पर्याप्त होंगे। दूत उसकी धनुर्विद्या के गुणगान में गीत रचेंगे और क्षत्रियों की आने वाली पीढ़ियाँ उन गीतों को श्रद्धापूर्वक गाएँगी। अर्जुन का नाम अमर हो जाए। यह आकाश में टिमटिमाते तारों की तरह शाश्वत हो जाए। युद्ध के अंत में, मेरे गुरु द्रोणाचार्य मुझे गले लगाएँ और कहें, 'धनुषर्विद्या में तुम्हारा कौशल मेरी कल्पना से भी परे है। आज वेदों में प्राचीन इंद्र का नाम गीतों में मनाया जाता है। आने वाली पीढ़ियाँ तुम्हारे नाम और महिमा का गुणगान करें। मैं स्वयं तुम्हारी महिमा में चार श्लोक रचूँगा और उन्हें वेदों में जोड़ूँगा।' इंद्र से अधिक वीर और साहसी कौन है? उससे महान कौन है? क्या योद्धा इंद्र को प्रणाम करने के बाद ही युद्धक्षेत्र में प्रवेश नहीं करते? तो क्या वे मानते हैं कि उन्हें कभी हार नहीं माननी पड़ेगी और मृत्यु उनके पास आने का साहस नहीं करेगी? इंद्र, क्या आप ही वह नहीं थे जिन्होंने राजा सुदास को दशराजना युद्ध में विजय दिलाई थी? क्या आप ही वह नहीं थे, जो तृत्सुओं द्वारा की गई प्रशंसा से प्रसन्न होकर सुदास के शत्रुओं को परुष्नि नदी में डुबो दिया था? आने वाले धृतराष्ट्र युद्ध में मेरा ही नाम विजय का सूत्रपात करे। ईश्वर ही जानता है

कि कितने देशों से सेनाएँ और राजा इस युद्ध में लड़ने आएँगे! शायद आर्यावर्त ने इससे पहले कभी इतना शक्तिशाली युद्ध नहीं देखा होगा! काश मैं ही इस महत्वपूर्ण युद्ध में विजय दिलाने वाला होता! ऐसा लगता है कि मैं देव वंश के इंद्र के वीर्य से जन्मा हूँ। इंद्र, मैं जन्म से ही आपके नाम से जुड़ा हुआ हूँ। मुझे आशीर्वाद दीजिए ताकि मैं आपके नाम की ऊँचाई तक पहुँच सकूँ। मैं आपका पुत्र हूँ। युद्ध हो, कम से कम इसलिए कि मैं नाम और यश प्राप्त कर सकूँ! यह युद्ध विशाल पैमाने पर लड़ा जाए। इस प्रकार, ऐसी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा और आकांक्षाओं के विचारों में डूबे अर्जुन ने अपनी आँखें बंद कर लीं। दूर पहाड़ियों से आती सियार की आवाज; दाईं ओर फैले पलाश वृक्षों का घना समूह, रथों के पहियों की सरसराहट, घोड़ों की सरसराहट, ये सब उनकी चेतना से परे रहे, क्योंकि वे आत्म-प्रशंसा में गहरे लीन थे।

कुछ देर बाद चांदनी निकल आई। हालांकि पहाड़ियों से दिन भर की गर्मी निकल रही थी, चांदनी से ठंडक का एहसास हो रहा था। अंधेरे में पहले जो ध्यान अपने शरीर पर केंद्रित था, अब बाहर चांदनी के जादू की ओर मुड़ गया। अर्जुन ने युद्ध की तैयारी वाली मुद्रा छोड़कर आराम से बैठना शुरू कर दिया। खतरे का एहसास और धनुष-बाण चलाने की ज़रूरत कम हो गई। जब चांदनी इतनी तेज हो गई कि घोड़ों की सफेदी साफ दिखाई देने लगी, तो सारथी ने अपना सिर पीछे घुमाकर कहा, "महाराज, जब हम आपकी रक्षा के लिए मौजूद हैं, तो आप जागते क्यों बैठे हैं? कृपया इस ठंडी हवा में सो जाइए।"

चंद्रमा का शरीर हवा से उड़ाई गई धूल से ढका हुआ प्रतीत हो रहा था। अर्जुन, जिसने सोचा कि बिना बारिश के धूल नहीं धुल सकती, बोला, "मैं आठ से दस दिन तक बिना सोए रह सकता हूँ और सुस्ती का कोई लक्षण नहीं दिखाऊँगा?"

सारथी ने आगे कुछ नहीं कहा। वह अपने घोड़ों की ओर मुड़ा। घोड़े आगे चल रहे रथों के पीछे-पीछे चल रहे थे। अर्जुन को लगा कि सारथी को नींद आ रही है। उसने सारथी की इस हड़बड़ी को नज़रअंदाज़ कर दिया। उसने मन ही मन कहा, "क्या यह वही समय नहीं था जब मैंने पांचाली के स्वयंवर में मछली के यंत्र पर प्रहार किया था और आर्यावर्त में सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर होने की ख्याति प्राप्त की थी? और यह कितने वर्ष पहले की बात है? छब्बीस वर्ष से अधिक हो चुके होंगे। अब तो यह सब पुरानी बात हो गई है! बूढ़े तो भूल ही गए होंगे और युवाओं को इसकी सीधी जानकारी नहीं होगी। यह युद्ध हो, सबको पता चल जाएगा कि अर्जुन के कंधे की

शक्ति क्या है, शस्त्र विद्या में उसकी सर्वोच्च निपुणता क्या है, उसका अविश्वसनीय कौशल क्या है। गुरु द्वारा रखी गई नींव के कारण। लेकिन गुरु भी नहीं जानते कि इस निपुणता को प्राप्त करने में कितना परिश्रम और अनुशासन लगा है। और इसे प्रदर्शित करने का कोई अवसर भी नहीं मिला। इस अर्जुन ने वनवास के बारह वर्ष व्यर्थ नहीं बिताए, कम से कम पूरी तरह से तो नहीं। पहले छह वर्ष जंगली जानवरों के शिकार में व्यतीत हुए - उड़ते हुए पक्षी, दूर भागते हुए हिरण, और दुर्लभ रूप से मिलने वाले बाघ और चीते। यह उपलब्धि कितनी विशाल थी? धर्म की एक कमजोरी थी, जुआ खेलना, लेकिन अन्यथा वह अत्यंत प्रतिभाशाली था। बुद्धिमान। उन्होंने कहा था, 'अर्जुन, यदि भविष्य में कोई युद्ध हुआ, तो तुम्हारे प्रयासों से ही हम उसे जीतेंगे। निःसंदेह, तुम्हारे गुरु ने जो शिक्षा दी है वह अपार है, लेकिन हमें संख्यात्मक शक्ति का मुकाबला अपनी गुणवत्ता से करना होगा। इसलिए, यहाँ से तुम हिमालय की ओर बढ़ो और उस पर चढ़ाई करो। क्या तुम किरात नामक एक जनजाति के बारे में जानते हो, जो शिकारी हैं? ऐसा लगता है कि वे एक तीर से सोए हुए शेर को जगा सकते हैं और फिर उसी तीर से उसे वापस सुला सकते हैं! उनमें से कुछ से मित्रता करो और फिर तीरंदाजी में उनके महान कौशल और कला को आत्मसात करो। फिर देव जाति के लोगों की भूमि पर जाओ, जिन्होंने हमें, पांडवों को जन्म दिया। उनके इंद्र तुम्हारे पिता हैं। कहा जाता है कि उनके धार्मिक गुरु मेरे पिता हैं। उनके सेनापति भीम के पिता हैं। क्या तुम्हें याद नहीं है कि माँ ने हमें यह बताया था? एक बार जब उन्हें इस रिश्ते के बारे में पता चलेगा, तो वे निश्चित रूप से तुम्हें युद्ध कला सिखाने के लिए आगे आएंगे। देव जाति के लोग हमारे आर्यों के सभी प्राचीन ज्ञान को जानते हैं। वे विशेष रूप से लंबी दूरी के तीरंदाजी में निपुण हैं। पर्वत की चोटी पर खड़े होकर, वे पर्वत की तलहटी में किसी भी लक्ष्य को अचूक निशाने से भेद सकते हैं, चाहे वह कितना भी धुंधला क्यों न हो।' यह सच है कि मेरे गुरु ने मुझे सिखाया, लेकिन क्या इसे पर्याप्त और अभेद्य कहा जा सकता है? क्या मेरे स्वयं के समर्पित प्रयास के बिना गुरु की शिक्षा प्रभावी होती? यह प्रश्न मुझे प्रशिक्षण बनाम अधिगम, गुरु के निर्देश बनाम शिष्य के परिश्रम के मुद्दे पर ले जाता है। मेरे साथ कई अन्य शिष्य भी थे। लेकिन उनमें से कोई भी धनुर्विद्या में मेरी महारत क्यों नहीं प्राप्त कर सका? दरअसल, उनमें अर्जुन जैसी मेहनत और एकाग्रता की कमी थी। मेरे मन में, मैंने गुरु की शिक्षा की तुलना में शिष्य के परिश्रम के महत्व को बढ़ा-चढ़ाकर बताना शुरू कर दिया। फिर भी

मेरा मन यही कहता रहा कि शिष्य से प्रेम करने वाले गुरु के प्रति भक्ति अवश्य दिखानी चाहिए। वास्तव में, धर्म से ही यह विचार उत्पन्न हुआ कि मुझे शिकारियों और देवभूमि से विशेष कौशल सीखना चाहिए। उनके सिवा और कौन इतनी दूरदृष्टि रख सकता था? मुझे याद है कि वे मुझे नदी के किनारे ले गए थे। और सलाह दी, 'साहस, शक्ति और धर्म के ज्ञान में तुम्हारा कोई सानी नहीं। नकुल और सहदेव तो बस बच्चे हैं, वे दिखते भी वैसे ही हैं। वे स्वतंत्र पहल करने में असमर्थ हैं। इस मामले में तुम ही मेरे सच्चे छोटे भाई हो। भीम सीधे आगे बढ़कर युद्ध कर सकता है। अगर दुर्योधन हमें हमारा क्षेत्र लौटाएगा भी, तो वह केवल तुम्हारे धनुर्धर कौशल के प्रदर्शन और उसके भय से ही संभव होगा। परन्तु भीम का युद्ध कौशल तो पशुवत ही रहेगा।' दूर से बाण चलाने से ही शत्रु की सेना में भ्रम उत्पन्न किया जा सकता है। बाण प्रत्यक्ष शारीरिक युद्ध से कहीं अधिक शक्तिशाली होता है। खैर, धर्म धनुर्धर के महत्व और मूल्य को जानता है। भीम, जो पेड़ों की शाखाओं या पत्थरों जैसे भद्दे हथियारों का शौकीन है, जो जंगल में रहने वाले बर्बर कबीलों के लिए उपयुक्त हैं, वह धनुर्धर के महत्व को कैसे समझ सकता है? क्या वह युद्ध की रणनीति और कौशल जानता है, यह भीम जो धृतराष्ट्र की संतान को अपने गदा से चूर-चूर करके कौरवों से बदला लेने का वादा करता है? कोई गदा लेकर कैसे आगे बढ़ सकता है? दुश्मन की ओर से बरसते तीरों की बौछार के सामने? भद्दे हथियार, लाठियाँ। भद्दे शब्द। क्या युद्ध केले के तने को चूर-चूर कर देने से भी ज़्यादा भद्दा है? नहीं, यह कला और कौशल है। इसमें ऐसी कलात्मकता और जादूगरी चाहिए जो इसे देखने वालों या इसके बारे में सुनने वालों को चकित कर दे, उन्हें नाक पर उंगली रखकर सोचने पर मजबूर कर दे!

दूधिया सफेद रंग की साफ चांदनी थी। कुछ दूर तक पहाड़ियों से रहित समतल भूमि फैली हुई थी। दूर, पहाड़ियों के ऊपर और उनसे परे, उस समतल भूमि में चांदनी ऐसे फैली हुई थी मानो वह कोई खाली पात्र हो। अचानक अर्जुन को लगा कि घोड़ों द्वारा उड़ाई गई धूल और शोर चांदनी के शांत स्वरूप को बिगाड़ रहे हैं। उनका मन हुआ कि वे सारथियों से एक क्षण के लिए रुकने को कहें। मान लीजिए वे उनसे पूछते कि क्यों, तो उनके पास कोई उत्तर नहीं था। बेशक, यह संभव था कि कोई प्रश्न न पूछे। फिर भी, वे शायद खुद को समझा लें कि उनका दिमाग खराब हो गया है! इस विचार ने उन्हें चुप कर दिया और उन्होंने चारों ओर नजर घुमाई। यहाँ भी ज्यादा गर्मी नहीं थी। शांत चांदनी ने हवा को ठंडा कर दिया था।

यह दृश्य उन्हें जागने और सोने से परे एक संतोष का अनुभव करा रहा था। अचानक उन्हें कुछ याद आया और वे चिल्लाए, "सारथी, तुष्टा।" यह महसूस करते हुए कि वह अधमरा है, अर्जुन ने धीरे से उसे बाण से स्पर्श किया। वह अचानक डरकर जाग गया और अर्जुन की ओर देखा। अर्जुन ने उनसे पूछा, "क्या सोमा नाम का कोई पेय होता है?"

तुष्टा ने उत्तर दिया, "ऐसा लगता है कि उनके पास भूतले के पेड़ से निकाला गया पेय है। यह शुद्ध सोम लता से बना पेय नहीं है। वृक्षस्थान में उन्होंने हमें एक थैली भरकर यह पेय दिया था। शायद गर्मी के कारण यह खट्टा हो गया होगा।"

"क्या हमारे पास इसे मिलाने के लिए दूध है?"

"नहीं, महान राजा।"

"ठीक है। मुझे भी थोड़ा सा दे देना।"

तुष्टा ने रथ नहीं रोका। उसने आगे वाले रथ के सारथी को आवाज़ दी। सारथी ने आगे वाले रथ को संदेश पहुँचाया। वह पेय चौथे रथ में रखा हुआ था और सबने पिछली रात उसका आनंद लिया था। जो कुछ बचा था, उसे उन्होंने एक मिट्टी के पात्र में डाला और अर्जुन के सारथी को सौंप दिया, जिसके बाद वह जल्दी से अपने रथ पर लौट आया। सारथी तुष्टा ने दोनों हाथों से आदरपूर्वक पात्र को पकड़ा और अपने स्वामी के सामने खड़ा हो गया। अर्जुन ने ढक्कन खोला और थोड़ा सा पिया। तभी उसे आगे सो रही अपनी पत्नी की याद आई। उसने सोचा कि उसे जगाकर उसके साथ भी पेय बाँट ले। उसकी पत्नी भी उसकी तरह पेय की शौकीन थी। वास्तव में, द्वारका के सभी लोग पेय के शौकीन थे। केवल द्वारका के ही नहीं, बल्कि पूरा यादव वंश ही पेय का भक्त था। जहाँ वह बैठा था, वहीं से उसने पहुँचकर उसके कंधे हिलाए। कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। उसने उसे फिर से जगाने की कोशिश की। वह आधी नींद में लग रही थी। वह कराहने लगी और करवटें बदलने लगी। चलते रथ में ही वह दूसरी तरफ मुड़ी और सो गई। अर्जुन को घृणा हुई। फिर उन्हें क्रोध आया। उन्होंने महसूस किया कि अगर वह जाग भी गई, तो वह पीकर तुरंत वापस सो जाएगी! उन्हें लगा कि नींद लाने के लिए पेय को व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए। उन्होंने स्वयं दो घूंट में बड़ी मात्रा में पेय पी लिया। उन्हें लगा कि यह बहुत खट्टा हो गया है। उन्होंने ताजे रस, दूध और शहद से बने उत्तम पेय का सपना देखा। अकेले पीने से उन्हें बुरा लगा। बिना किसी साथी के पीने में क्या आनंद है! इन सब से दूर जाने के लिए, उन्होंने रथ से बाहर रात के अंधेरे में

झाँका। उन्होंने देखा कि चंद्रमा चुपचाप दूर की पहाड़ियों के बीच उनके साथ चल रहा है। उन्होंने देखा कि चंद्रमा एक पहाड़ी से दूसरी पहाड़ी पर धीरे-धीरे तैर रहा है। यहाँ तक कि रथों के घोड़े और पहिए भी मानो बिना आवाज किए चलना सीख गए थे। चाँदनी पूरी खामोशी से बह रही थी। पेय के दो और घूंट पीने के बाद, उन्होंने बर्तन का ढक्कन बंद कर दिया और उसे अपनी जांघ पर रख लिया। एक मित्र, एक साथी की आवश्यकता होती है। इस समय तक अर्जुन मन ही मन सोचने लगा, "कृष्ण ने काफी दूरी तय कर ली होगी! वे हमेशा तेज चलते थे। वे थकान की परवाह किए बिना, दिन-रात, सर्दी-गर्मी में, पूरी लगन से किसी भी काम में जुट जाते थे। दूसरों के आंखें खोलने से पहले ही वे काम पूरा कर लेते थे। अगर वे रथ में उनके साथ होते, तो अर्जुन सोचता कि वे एक ही पात्र से पानी पीते और चांदनी का आनंद लेते।" अर्जुन ने मन ही मन सोचा, "जंगल में बारह वर्ष के वनवास के बाद, मैं पूरे एक वर्ष तक एकांतवास में रहा। फिर उपप्लव्य में आया मेरा मित्र कल शाम तक मेरे साथ था। अगर मुझे अपनी यात्रा के बारे में थोड़ा पहले पता चल जाता, तो मैं अपने मित्र कृष्ण के साथ यात्रा की योजना बना सकता था, क्योंकि हम दोनों एक ही गंतव्य की ओर जा रहे थे। काश, भाई धर्म ने मुझे पहले ही बता दिया होता, तो मैं और कृष्ण एक ही रथ में यात्रा कर सकते थे, और तब न गर्मी होती, न धूल, न पसीना, न चिपचिपाहट। चुपचाप बैठे रहने पर भी, बिना एक शब्द बोले, हम परम शांति में होते..." उसी क्षण, अर्जुन के हाथ ने लगभग अनजाने में ही बर्तन का ढक्कन खोल दिया। लेकिन मन ने ऐसा नहीं चाहा, और उसने ढक्कन को वापस लगा दिया। पहाड़ियों के पीछे से निकलता हुआ चंद्रमा एक पेड़ की शाखाओं के बीच फंसा हुआ प्रतीत हुआ। चंद्रमा शाखाओं से बाहर नहीं निकला। अर्जुन को लगा कि केवल पांचाली ही उनके साथ ताड़ी, शराब या सोम रस जैसी कोई भी चीज पीने की क्षमता रखती है। अर्जुन ने मन ही मन कहा, "पाँच वर्षों तक, हर पाँच रातों में एक बार, वह मुझे बाहर की ठंड, बाहर की गर्मी, सूरज की रोशनी और रात के अंधेरे को भुला देती थी, अपनी चाँदनी से मुझे हर जगह बिखेर देती थी, मुझे अपने शब्दों के पिंजरे में कैद कर लेती थी, मुझे पराजित तो करती थी लेकिन साथ ही विजय का अहसास भी देती थी, मुझे पूरी रात अपने सपनों से भर देती थी, मुझे अगली चार रातों के वियोग को सहने में सक्षम बनाती थी, जादुई यादें रचती थी। वह थी पांचाली, पाँच वर्षों तक हर पाँचवें दिन मेरी सहेली और साथी! उससे बात करते समय मेरी सारी आशाएँ, इच्छाएँ और आकांक्षाएँ खिल उठती थीं

और आकार ले लेती थीं। एक बार जब मैं उससे दूर हो जाता था, तो वे सब सूख जाती थीं। मेरा भाग्य सपनों के बिना बंजर जागने जैसा हो जाता था। मुझे मेरी साथी से अलग करने के लिए कौन जिम्मेदार था? पाँचवें दिन के भोज के लिए कोई चार दिन खुशी-खुशी भूखा रह सकता है। लेकिन क्या कोई पाँचवें वर्ष की फसल काटने के लिए चार साल का उपवास सह सकता है? वह मुझे सही से समझ नहीं पाई। मैं शारीरिक सुख के लिए घर में भरी हुई नौकरानियों की सेवाएँ लेने को तैयार नहीं था। मुझे याद है कि बचपन से ही माँ ने मुझे समझाया था..." हम पाँचों भाइयों को नौकरानियों से दूर रहने का आदेश दिया गया था, यहाँ तक कि उनकी गंध तक नहीं लेनी थी। उसने हमसे पूछा था, 'कोई अपने से नीचों के साथ कैसे संगति कर सकता है?' दूसरी पत्नी प्राप्त करने के बाद भी यह अर्जुन चार साल का लंबा विरह कैसे सहन कर सका? या वह चार साल के व्रत का इतनी सख्ती से पालन क्यों कर रही थी? मुझे यकीन है कि अगर वह मेरे साथ बिना अनुमति के सो जाती तो धर्म को कोई आपत्ति नहीं होती। भीम को भी कोई आपत्ति नहीं होती। धर्म की इच्छा कभी तीव्र नहीं होती, क्योंकि वह अधिकतर धर्म के प्रश्नों में लीन रहता है। जहाँ तक भीम की बात है, उसकी इच्छा उसके निरंतर शारीरिक व्यायाम में आसानी से विलीन हो जाती है। नकुल और सहदेव कभी तीव्र इच्छाएँ उत्पन्न नहीं करते। क्या उसने नहीं देखा कि इस अर्जुन का शरीर और मन एक अलग नियम पर काम करते हैं? क्या उसने अपने व्रत के नाम पर मेरी उपेक्षा की? आज तक मैं उसके मन को पूरी तरह से नहीं समझ पाया हूँ। उसने मुझे ऐसा करने का कोई अवसर ही नहीं दिया। मेरे प्रिय साथी, तुम हठी हो, और तुमने मुझे अपनी हठधर्मिता में जलने दिया। तुम्हारी हठधर्मिता के इस मुद्दे को सुलझाने और मामले को समाप्त करने के लिए हम मिल नहीं पाए हैं। तुम्हें मानना पड़ेगा, द्वारका से सुभद्रा के साथ जिस उत्साह से मैं निकला था, इंद्रप्रस्थ से दो दिन पहले ही वह सारा उत्साह हवा हो गया। क्या तुम नहीं जानते कि जहाँ तुम्हारी शक्ति का प्रभुत्व है, वहाँ कोई और कैसे प्रवेश कर सकता है और अपना स्थान बना सकता है? जब मैं उदास मन से नगर में आया और उसे तुम्हारी बहन के रूप में तुमसे मिलवाया और तुम्हें उसे स्वीकार करने के लिए कहा, तो तुमने कितनी शांति और गर्व के साथ उसे गले लगाया! न रोए, न क्रोधित हुए, न उदासीनता दिखाई। और सूक्ष्म गर्व के साथ तुमने यह प्रदर्शित किया कि इस नए विवाह का तुम पर ज़रा भी प्रभाव नहीं पड़ा! प्रिय साथी, इसीलिए तुम मुझे वश में कर पाए। अब मैं चीजों को बेहतर ढंग से देख

सकता हूँ, उन्हें स्पष्ट रूप से समझ सकता हूँ। अगले दिन जब मैं तुमसे अकेले मिला, तो तुमने कितने अनुकरणीय आत्म-संयम के साथ पूछा, "क्या तुम्हें अंततः अपनी हठधर्मिता का एहसास नहीं हुआ? कम से कम खुश तो रहो।" क्या तुम्हें लगता है कि मैं तुम्हारी बाहरी शांति में बह गया था? क्या तुम्हें लगता है कि मैंने यह महसूस नहीं किया कि तुम्हारी आवाज़, बाहरी शांति के बावजूद, अंदर से टूटी हुई थी और तुम्हारी आँखें नम होने के बाद सूख गई थीं? तुमने अंतिम फैसला सुनाया, 'मुझसे झूठ मत बोलो कि तुम खुश नहीं हो।' तुम्हें इस बात का घमंड था कि धनुष झुकाकर मुझे जीतने के कारण मुझ पर तुम्हारा विशेष अधिकार है। हमेशा घमंड और अहंकार ही हठ और हठधर्मी रवैये को जन्म देते हैं। और फिर तुम अंदर ही अंदर गायब हो गए। क्या मुझमें सचमुच ऐसा घमंड था? क्या मैं उसकी हठधर्मिता के प्रति अपने हठी रवैये के कारण चुपचाप शहर से भाग गया था?

स्वयंवर में उपस्थित सभी लोग मेरे आकर्षक रूप से चकित रह गए थे—नहीं, केवल रूप ही नहीं, बल्कि मेरे हाव-भाव, चेहरे की रेखाएं, चेहरे की बनावट, मेरा प्रभावशाली कद जो आत्मविश्वास से भरपूर था। फिर हम पर हमला करने वाले क्षत्रियों से युद्ध के बाद, उसके साथ कामपिल्य की गलियों में चलना मेरे लिए कितना गर्व की बात थी। जब हम कुम्हार की कुटिया पहुँचे, तो बाकी चारों उस पर मोहित हो गए थे। तब माँ ने मुझे एक तरफ बुलाया और कहा, 'बेटा, भले ही तुमने प्रतियोगिता जीती हो, लेकिन जो तुमने बाँटा है, उससे तुम्हारे भाईचारे में दरार आ जाएगी। मैं यह तुम्हारे भले के लिए कह रही हूँ। उसे बाँट लो।' मैंने तुरंत उत्तर दिया, 'मेरा उस पर कोई अधिकार नहीं है, और मैं उसके लिए लालची नहीं हूँ। ये चारों उससे शादी कर लें। मैं कुंवारा ही रहूँगा।' क्या मैं अपने भीतर की निराशा और पीड़ा पर विजय पाने के चक्कर में जिद्दी हो गया था? माँ मुझे बहुत समझाने लगीं, "बेटा, अगर तुम यही रवैया रखोगे और ऐसे बोलोगे तो तुम्हारी एकता कायम नहीं रहेगी। मना करने में जिद्दी मत बनो। उसे बराबर बाँटो। और कड़वाहट के साथ नहीं।" क्या आगे बढ़कर त्याग करने वाले व्यक्ति को घमंडी या अभिमानी कहा जा सकता है? क्या इस महान बलिदानकर्ता पर, जिसने अपना हक दूसरों के साथ बाँटा, आत्म-अभिमान का आरोप लगाया जा सकता है?..."

इस समय अर्जुन को थोड़ा पीने की इच्छा हुई। उसने ढक्कन खोला और थोड़ा सा पेय पी लिया। फिर उन्हें याद आया, "अगर किसी पर ऐसा गुण थोपा जाए जो उसमें न हो और उस पर ऐसा होने का आरोप लगाया जाए तो किसे गुस्सा नहीं

आएगा? इसीलिए जब उसने मुझ पर घमंडी और स्वार्थी होने का आरोप लगाया तो मुझे तुरंत गुस्सा आ गया। उसे झूठ क्यों बोलना चाहिए था? क्या मैंने शहर इसलिए नहीं छोड़ा था क्योंकि मैं स्वेच्छा से अपना सब कुछ समूह को सौंपना चाहता था? मैंने शहर क्यों छोड़ा? हाँ, मुझे गुस्सा आया था। लेकिन उसके लिए अपना अधिकार छोड़ने में आत्म-बलिदान का भाव भी था। बेशक, मुझे ठीक से याद नहीं है कि बीस साल पहले क्या हुआ था, उस समय मेरी भावनाओं के उतार-चढ़ाव क्या थे। मैं खुद भी उस समय अपने कार्यों के कारणों, तरीकों और जगहों को स्पष्ट रूप से नहीं समझता। तब मेरे साथ कुछ अंगरक्षक और घोड़े थे, और बेशक, अर्जुन का अतुलनीय धनुष था। यह आत्म-मुग्धता का दौर था, जब व्यक्ति इकत्तीस वर्ष का होता है। यह आत्मविश्वास से भरा हुआ दौर था जब व्यक्ति को लगता था कि वह आर्यावर्त के किसी भी कोने में कहीं भी कोई भी स्वयंवर जीत सकता है, सैकड़ों को झुकाकर कोई भी प्रतियोगिता जीत सकता है, नहीं, हजारों धनुष। भले ही स्वयंवर में कोई प्रतियोगिता न हो, जब मैं अपने सुंदर रूप के साथ हजारों राजकुमारों के बीच खड़ा होता हूँ, तो थोड़ी सी भी बुद्धि वाली राजकुमारी मेरे अलावा किसी और राजकुमार को पुष्पांजलि क्यों देगी? उस समय मुझमें ऐसा ही आत्मविश्वास था। अगर गलती से भी राजकुमारी किसी और को पुष्पांजलि देने की मूर्खता करती, तो मेरा आत्मविश्वास मुझे यकीन दिलाता कि वह मेरे लायक नहीं है! मुझे पता है कि माँ को अपने बेटे से बिछड़ने का दुख होगा, और भाइयों को एक बहादुर भाई के खोने का दुख होगा। और उस सब के बारे में मुझे कैसा लगा! मुझे याद नहीं। या उस समय मैं नए कस्बों और शहरों, विदेशी देशों, नई पहाड़ियों और पहाड़ों, नए जंगलों और नई नदियों को देखने की इच्छा से प्रेरित था? क्या वास्तव में यह घूमने की लालसा थी? इस अर्जुन जितने कस्बे और शहर किसने देखे हैं? खैर, वह पूरे आर्य जगत के बारे में हर छोटी-बड़ी बात जानता है..." फिर उसने पात्र को बंद किया और उसे एक कोने में अपने पैरों के पास रख दिया। रथ का निचला हिस्सा इतना चौड़ा था कि पहियों की गति से वह डगमगाता नहीं था। अब चंद्रमा रथ के ठीक ऊपर था और एक वफादार पिल्ले की तरह आज्ञाकारी रूप से हर जगह उसका अनुसरण कर रहा था। नहीं, चंद्रमा पेड़ों में उलझकर या पहाड़ियों से अवरुद्ध होकर पीछे नहीं रह गया था।

इंद्रप्रस्थ छोड़ने के बाद, बिना किसी तय योजना के, मैं उत्तर दिशा की ओर क्यों चला गया? मैंने गंगाद्वार के पास डेरा क्यों डाला, जहाँ हिमालय की ऊँचाइयों से

आती गंगा नदी शांत मैदानों में धीरे-धीरे उतरती है? क्या उस समय मेरे मन में हिमालय की उन हरी-भरी चरागाहों में लौटने की कोई इच्छा थी जहाँ मेरा जन्म हुआ था और मैंने अपना बचपन बिताया था? जब मैं बहुत थका हुआ होता हूँ, तो मुझे अपने बचपन की वे हरी-भरी चरागाहें याद आ जाती हैं। गर्मियों में वहाँ चमकीली हरी घास होती थी, और सर्दियों में बर्फ की लहरदार आकृतियाँ। वहाँ कुछ घर थे जिनमें भाई तीन या चार पत्नियों को बराबर बाँटकर रहते थे। उनका जीवन नीरस और किसी शासक के अधीन नहीं था। क्या मैं अपने बचपन की जगह पर लौटना चाहता था? लेकिन, सच तो यह है कि मैं कभी वहाँ गया ही नहीं। मुझे अच्छी तरह याद है कि घोड़े पर लंबी यात्रा की धूल और थकान मिटाने के लिए मैं गंगा के ठंडे पानी में डुबकी लगाता था और उत्तर की पर्वत श्रृंखला को निहारता था। वहाँ उलूपी नाम की एक लड़की थी, जो सीधे मेरे पास आई और बोली, 'हे सुंदर, तुम किसी देश के राजा जैसे दिखते हो। तुम किस मनमोहक देश के शासक हो? क्या तुम यहाँ केवल मेरे पिछले जन्म के पुण्य कर्मों के फलस्वरूप आए हो, और किसी अन्य कारण से नहीं?'

"वह एक नाग कन्या थी, और इन नाग कन्याओं को असीम स्वतंत्रता प्राप्त है। यह बात विशेष रूप से पहाड़ियों और पर्वतों में रहने वाले नागों पर लागू होती है। यद्यपि उसके पिता अग्नि देव की पूजा करते थे, जैसे हम आर्य करते हैं, वे कन्याओं की स्वतंत्रता पर हमारी तरह प्रतिबंध नहीं लगाते। निःसंदेह इस क्षेत्र की नाग जनजातियाँ धीरे-धीरे आर्यों के कई रीति-रिवाजों को अपना रही हैं। यद्यपि वे अपनी स्त्रियों को आंतरिक रूप से पूर्ण स्वतंत्रता देते हैं, परन्तु किसी अजनबी के प्रति किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता को वे लज्जा का विषय मानते हैं। आज तक किसी आर्य कन्या ने नाग युवक से विवाह नहीं किया है। भला नाग युवकों में ऐसा क्या है जो हमारी आर्य कन्याओं को आकर्षित करता है? परन्तु यदि कोई कन्या नाग से विवाह करने का निश्चय भी कर ले, तो क्या हमारे लोग उसकी जान बख्शेंगे?" इस विचार से अर्जुन को अपने आर्य होने पर गर्व हुआ और उसने रथ की गति के साथ सिर हिलाया। यद्यपि वह इतने लंबे समय से बैठा था, उसकी पीठ में न तो झुकाव था और न ही दर्द। पीठ की नसें और हड्डियाँ किसी प्रकार की टूट-फूट या थकान का संकेत नहीं दे रही थीं। अर्जुन अतीत में लौटते हुए आगे बोले, "वे शक्तिशाली नाग थे जो सबसे जंगली हाथियों को भी वश में कर सकते थे, और वह उस कबीले के मुखिया की बेटी थी। उनका घर पूरी तरह से बांस का बना था। बांस की दीवारें,

बांस की चटाइयाँ, बांस की छत। बांस के प्याले में स्वादिष्ट पेय था। ऐसा लगता है कि वे ऐरावत कबीले के थे। जब उनकी बेटी मुझसे प्रेम करने के बाद मुझे अपने घर ले आई, तो उन्होंने मेरा कितने आदर और स्नेह से स्वागत किया। ऐसा लगता है कि जैसे ही उलूपी ने मुझे गंगा में स्नान करते देखा, वह मुझ पर मोहित हो गई। उसकी वासना शुद्ध थी, नग्न वासना, जिसमें किसी प्रकार का अभिमान या विवेक नहीं था। वह मुझे बुरी स्त्री नहीं लगी, न ही कोई कानून तोड़ने वाली। उसके लिए मेरा प्रेम जंगल में स्वतंत्र रूप से उछलते हुए हिरण के प्रेम जैसा था। मेरा प्रेम उसकी स्वाभाविक गति की तरह ही स्वतंत्र था। बिस्तर पर कोई नज़ाकत या कौशल नहीं था, लेकिन भरपूर स्वतंत्रता थी, ऐसी स्वतंत्रता जो मानो उसकी जीवन-श्वास थी। मेरी कला उसकी स्वाभाविक स्वतंत्रता के साथ सहजता से घुलमिल गई।" वह मेरी हो गई, मेरी दासी, न केवल इस जीवन के लिए, बल्कि आने वाले सभी जन्मों के लिए। फिर भी, उसमें हिरण की तरह आज़ादी से घूमने की एक स्वाभाविक और सहज इच्छा थी। पहाड़ की चोटी पर चढ़ने और वहाँ से एक ही साँस में उतरने की फुर्ती। अद्भुत स्वास्थ्य! गर्भवती होने के छह महीने बाद तक, वह मेरे साथ शिकार पर जाती रही, पहाड़ी इलाकों में मुझसे भी तेज़ और सहजता से चलती रही। उसने अपने पिता की रस्म की अग्नि के सामने मुझसे विवाह किया; और जल्द ही वह गर्भवती हो गई। वह मुझसे ऐसे जुड़ गई जैसे मेरी अपनी त्वचा से। लेकिन मेरे साथ अंगरक्षक बनकर आए सभी लोग ऊब रहे थे। क्योंकि जो लोग दुनिया देखने के इरादे से निकले थे, वे हिमालय की तलहटी में नागों की सुंदरियों के साथ मौज-मस्ती करते-करते थक गए थे। वे घर लौटने की इच्छा जताने लगे। वे अब कहने लगे, 'निस्संदेह जंगल की इन लड़कियों के शरीर सुंदर, सुडौल और कसे हुए हैं। लेकिन पत्नी के रूप में आर्य कन्या जैसी कोई नहीं। हे महाराज, आप यहाँ से जाने का कोई संकेत नहीं दे रहे हैं। क्या आप यहाँ स्थायी रूप से बसने की योजना बना रहे हैं?' मैं क्रोधित था, लेकिन भीतर ही भीतर मुझे उनकी बात का सार समझ आ रहा था। इसमें कोई शक नहीं कि नाग कन्या से मेरी पशुवत यौन इच्छा तो पूरी हो गई। लेकिन इससे मेरी ऊब कम नहीं हुई। तभी मुझे पंचाली का दृढ़ संकल्प याद आया। यही वो साथ था जो यौन संबंध से खत्म नहीं होता था। यहाँ तक कि जब मैं उसे चुपचाप लेटे हुए देखता था, तब भी उसका शरीर अर्थ प्रकट करता था। पंचाली अब सिर्फ एक यौन वस्तु नहीं थी, वह एक इंसान थी, एक मानवीय साथी। यौन उन्माद शांत होने के बाद भी वह एक साथी बनी रही। तब

मुझे ये सब नहीं दिखा। मैंने चुपचाप पंचाली और उलूपी के बीच का अंतर महसूस किया। लेकिन उलूपी की सीमाओं को मैंने और भी स्पष्ट रूप से समझा।

जब मैंने उलूपी को बताया कि मैं जा रही हूँ, तो वह कितना रोई! ऐसे व्यक्ति के साथ रहना मुश्किल है जो आपके साथ रहना ही नहीं चाहता। और उससे भी ज़्यादा मुश्किल है उस व्यक्ति को छोड़ना जो आपसे जुड़ा हुआ है। अगर उस समय उसने अपने गर्भ में पल रहे बच्चे को जन्म दे दिया होता, तो उससे दूर जाना और भी मुश्किल हो जाता! अगर मेरी बॉडीगार्ड नाभा ने मुझे असलियत न दिखाई होती, तो शायद मैं वहीं फँस जाती! जुदाई की बात सुनकर उसने कितना दुख जताया! मैं दुविधा में थी। मुझे जाने का दुख था, लेकिन रुकना नामुमकिन था। यह एक अजीब स्थिति थी। एक बार उससे बाहर निकलने के बाद, मुक्ति का दुख और आनंद दोनों थे। फिर से लक्ष्यहीन यात्रा पर। घर से दूर उन छह महीनों में मैंने क्या हासिल किया? एक पशुवत वासना को संतुष्ट करने के अलावा कुछ नहीं? क्या वासना महज़ एक चर्बी है जो छह महीनों में पिघल कर गायब हो जाएगी? क्या मैं इस व्यर्थ की भटकन से बचकर इंद्रप्रस्थ नहीं लौट सकता था, जहाँ मैं दासियों में से सबसे सुंदर को चुन सकता था या और भी सुंदर दासियों को अपने साथ शामिल कर सकता था, और क्या तब मुझे घर पर ही मनचाही लड़की नहीं मिल जाती? क्या वहाँ स्वयं पांचाली की दासियाँ नहीं थीं? क्या वहाँ अन्य राजाओं द्वारा मित्रता के प्रतीक के रूप में दी गई आकर्षक युवतियाँ नहीं थीं? क्या अर्जुन के लिए लड़कियों को पाने के लिए अचानक चुपके से शहर छोड़ना आवश्यक था? लेकिन इंद्रप्रस्थ में दासियों के साथ आनंद लेना असंभव था। क्योंकि माँ ने इसके विरुद्ध नियम बना रखा था! इसके अलावा, उन्होंने हम पाँचों भाइयों को बचपन से ही यह सिखाया था कि दासियों के साथ संबंध रखना अपमानजनक है। इस प्रकार माँ ने हमें आर्यावर्त के राजकुमारों में सबसे पवित्र बना दिया था। माँ दो नियमों को लेकर कट्टर थीं—पहला, विवाह से पहले यौन संबंध बनाना गलत है और दूसरा, विवाह के बाद दासियों के साथ यौन संबंध बनाना गलत है। मुझे याद है एक बार इस विषय पर उनसे मेरी बहस हुई थी। मैंने उनसे पूछा था, 'माँ, अगर आपकी बात सही है, तो फिर जब कोई बेटी अपने पति के घर जाती है तो उसके साथ सुंदर सेविकाएँ क्यों भेजी जाती हैं? राजा सुंदर पुत्रियाँ उपहार में क्यों देते हैं?' माँ ने मुझे कोई जवाब नहीं दिया। बल्कि रोने लगीं। जब माँ रोती है और उसकी आँखों से आँसू बहते हैं, तो बहस और चर्चा की गुंजाइश ही क्या रहती है? खैर, तेरह साल से ज़्यादा हो गए

जब मैंने उन्हें आखिरी बार देखा था। हालाँकि वह अपने सभी बेटों के साथ लगभग एक जैसा व्यवहार करती हैं, फिर भी उन्हें मुझसे खास लगाव है। उन्होंने मुझसे खुलकर और बिना छिपाए प्यार किया। उन्होंने हमें साफ संदेश दिया है कि हम उन्हें अपने साथ तभी ले जा सकते हैं जब हम अपना राज्य जीत लें, और अगर हमने उन्हें एकाचक्रपुरा में भीख माँगने वाले ब्राह्मणों की तरह रहने दिया, तो वह हमारे साथ चावल खाने से इनकार कर देंगी। दृढ़ता और पूर्ण समर्पण में माँ की कोई बराबरी नहीं कर सकता..."तभी रास्ता थोड़ा दाहिनी ओर मुड़ गया। चाँद, जो पहले ठीक सिर पर था, अब थोड़ा पश्चिम की ओर झुक गया था। चाँदनी पूरी तरह से पड़ने लगी। हालाँकि चाँद अपना आकार बढ़ाता हुआ प्रतीत हो रहा था, फिर भी वह उदासी से भरा हुआ लग रहा था। सभी घोड़े सीधे अपने चेहरे पर पड़ रही रोशनी को देखकर कुछ स्तब्ध रह गए। वे पहले से ही थकान के कारण धीमे हो रहे थे, लेकिन अब वे भ्रम के कारण और भी धीमे हो गए। सोई हुई सुभद्रा अचानक जाग उठी और बैठ गई। एक मिनट के लिए उसने स्तब्ध होकर इधर-उधर देखा। उसके कपड़े, चेहरा और शरीर धूल से सने हुए थे। मानो कुछ याद आया हो, उसने कहा, 'पानी।' अर्जुन ने एक कोने में रखे लकड़ी के ढोल में रखे पानी से एक मग भर लिया। उसने मग उसे दे दिया। उसने जल्दी से पानी पी लिया, और फिर अपने चेहरे, छाती और गर्दन से पसीना पोंछा। फिर वह वापस सो गई। अर्जुन को भी याद आया कि उसे प्यास लगी है। उसने सुभद्रा द्वारा खाली किए गए मग को पानी से भर लिया और पी लिया। उसे पूर्ण संतुष्टि मिली। तब तक वह गहरी नींद में सो चुकी थी। वह वापस अपनी सीट पर सीधा, बिना झुके बैठ गया। सारथी, जो थोड़ी देर सो चुका था और अब पूरी तरह जाग गया था, ने पूछा, "महाराज, आपको ज़रा भी नींद नहीं आई, मुझे शर्म आ रही है।"

अर्जुन ने आगे कहा, "एक शासक को ऊंघने का अधिकार नहीं है!"

कुछ देर बाद सारथी ने फिर कहा, "क्या मैं महान राजा से कोई उपहार मांगूं?"

अर्जुन ने कहा, "हमारा राज्य हमें वापस मिलने से पहले हम क्या उपहार दे सकते हैं?"

“कुछ खास नहीं, बस इतना ही। निकट भविष्य में शुरू होने वाले युद्ध में, क्या आप यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि मुझे किसी महान योद्धा का सारथी बनने का मौका मिले? मैंने सुना है कि युद्ध के लिए रथों की व्यवस्था का पूरा जिम्मा आपके पास है,” सारथी ने प्रार्थना की।

"सामान्य यात्राओं के लिए रथ चलाने में कुशल होना एक बात है। क्या आपको युद्ध में रथ चलाने का कोई अनुभव है?"

सारथी ने कहा, "मैं इसमें विशेषज्ञता हासिल करना चाहता हूँ। लेकिन आप जानते हैं कि हमारा मत्स्य देश पहाड़ियों और पर्वतों से घिरा हुआ है, है ना? ऐसे भूभाग में रथ युद्ध बहुत दुर्लभ है। इसलिए अब तक मुझे इसमें भाग लेने का बहुत कम अवसर मिला है। मुझे तीरंदाजी का थोड़ा बहुत ज्ञान है। मैं दौड़ते हुए घोड़े से भी निशाना लगा सकता हूँ।"

अर्जुन ने उसे आश्वासन दिया कि वह अपना पूरा प्रयास करेगा। थोड़ी देर बाद चंद्रमा इतना नीचे आ गया कि उनके चेहरे के सामने आ गया। सारथी ने दो बार पीछे मुड़कर देखा, मानो कुछ पूछना चाहता हो, लेकिन कुछ नहीं बोला। अर्जुन ने उसकी उत्सुकता भांप ली और उससे पूछा, "अच्छा, क्या बात है? बताओ।"

सारथी ने कहा, "मुझे आपसे दूसरा उपहार चाहिए।"

अर्जुन ने कहा, "ठीक है। अगर मैं दे सकता हूँ, तो मैं ज़रूर दूँगा।"

सारथी, "महाराज, जब आप अपने देश लौटें, तो कृपया मुझे अपने साथ ले जाएं। मैं आपके घोड़ों की अच्छी तरह और निष्ठापूर्वक देखभाल करूंगा। मुझे रथों की देखभाल करना और उन्हें सुचारू रूप से चलाना आता है। मुझे बढ़ईगिरी का भी पूर्ण ज्ञान है। आप मेरे जीवनयापन के लिए जो भी वेतन दें, मैं उससे संतुष्ट रहूंगा।"

अर्जुन, "तुम्हारे मत्स्य देश में क्या समस्या है?"

सारथी, "क्या मैं खुलकर बोलूं?"

अर्जुन ने कहा, "जी हां, मुझे सच बताओ, सिर्फ सच।" अर्जुन को यह चर्चा राहत भरी लगी। उनका ध्यान रथ, घोड़ों, पहाड़ियों, पेड़ों, आकाश और चंद्रमा की ओर गया। वहां आकाश कम धूल भरा प्रतीत हो रहा था।

सारथी ने कहा, "मैंने कहा था कि मैं केकाया देश से आया हूँ। हिजरत के बाद मेरी शादी हुई। मेरी पत्नी और उसके माता-पिता केकाया से हैं। उनके कोई बेटा नहीं है। केवल एक बेटी है। हम सब साथ रहते हैं। मेरी पत्नी अपने माता-पिता के प्रति मुझसे, अपने पति से, अधिक समर्पित है। उसने मुझे एक बलवान और उपयोगी नौकर के दर्जे तक सीमित कर दिया है।"

अर्जुन ने कहा, "तुम अपनी पत्नी को अपने साथ क्यों नहीं ले जाते और एक अलग घर क्यों नहीं बसा लेते?"

सारथी ने कहा, "जी हाँ, मैंने कोशिश तो की थी। लेकिन मेरी सास और रानी सुदेशना एक-दूसरे के बहुत करीब हैं। अगर मैं अलग से अपना घर बसाना चाहूँ, तो महल वाले भी इसकी इजाज़त नहीं देंगे। आपको पता है, जब आप उपप्लव्य नगर में ससुराल वालों के रूप में डेरा डाले आए थे, तो मैंने आपकी सेवा करने के बहाने वहाँ से निकल जाने की योजना बनाई थी, और मैंने नकुल और सहदेव से मदद मांगी थी, और उन्होंने मदद की भी। मैं वापस नहीं लौटा। मेरी रणनीति यह है कि पहले मैं आपके देश में बस जाऊँ और फिर उन्हें अपने साथ आने के लिए कहूँ। अगर वह आती हैं, तो अच्छा है, और अगर वह मना करती हैं, तो मैं अपने रास्ते चला जाऊँगा और वह अपने रास्ते।"

अर्जुन को अचानक सारथी के प्रति सच्ची दया आ गई। उसने उससे पूछा, "क्या तुमने अपना नाम तुष्टा नहीं बताया था?"

सारथी ने कहा, "जी हां, महान राजा।"

अर्जुन ने कहा, "मैं इसे याद रखूंगा। अगर मैं भूल जाऊं तो मुझे याद दिला देना। अपने स्थान पर लौटने के बाद मैं तुम्हें अपना सारथी नियुक्त करूंगा। तब तक अगर विराट के महल वाले तुम्हें बुलाएं तो मैं उनसे कहूंगा कि हमें तुष्टा की सेवा की आवश्यकता है। क्या यह ठीक रहेगा?"

जहां वह बैठा था, वहां से मुड़कर उसने आदर और कृतज्ञता से सिर झुकाया। फिर उसने उचित स्थान ग्रहण किया और घोड़ों की गति बढ़ानी शुरू कर दी। उसके रथ के केवल पांच घोड़ों ने ही गति बढ़ाई, जबकि अन्य रथ साथ नहीं चल पाए। इसलिए, उसके घोड़े भी धीमे हो गए। घोड़े पहले से ही लंबे समय तक लगातार दौड़ रहे थे, इसलिए थक चुके थे। पहिए अब धीरे-धीरे घूम रहे थे। अर्जुन को एहसास हुआ कि उन्हें तेज करना संभव नहीं है। उसने सोचा कि तब तक कृष्ण कितनी दूर जा चुके होंगे। उसे यह भी संदेह था कि क्या वे कृष्ण तक पहुंच पाएंगे या उन्हें कृष्ण के बिना ही पूरी यात्रा करनी पड़ेगी। उसी समय, आगे वाला रथ रुक गया। फिर एक-एक करके सभी रथ रुक गए। दल का नेतृत्व करने और उसे दिशा दिखाने आए घुड़सवारों में से एक अर्जुन के रथ के पास आया, उन्हें प्रणाम किया और बोला, "महाराज, यदि आप दूर तक देखें तो आपको एक वनक्षेत्र दिखाई देगा। उसके दाहिनी ओर एक गाँव है। उसका नाम जलस्थान है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, वहाँ पानी की प्रचुरता है। पास की पहाड़ी में पानी अपने आप बहता है। वहाँ एक तालाब है जिसका ठंडा पानी कभी खत्म नहीं होता। मेरा मानना है कि

पहाड़ी की तलहटी में स्थित तालाब का पानी कभी सूखा नहीं है। यह मत्स्य देश की पश्चिमी सीमा है। हम अपने स्थान पर लौटने से पहले कुछ देर विश्राम करेंगे। मेरा सुझाव है कि आप दिन भर वनक्षेत्र में विश्राम करें और शाम की ठंडक में अपनी यात्रा फिर से शुरू करें।"

—•✳•—

अध्याय 24

गांव वालों ने अर्जुन और उनके साथियों को भरपूर दूध, दही और घी दिया। साथ ही उन्हें फल, सब्जियां और मांस भी उपलब्ध कराया। सूर्योदय तक अर्जुन ने स्नान और अग्नि अनुष्ठान पूरा कर लिया था। उसके बाद उन्होंने दूध में पके चावल और पका हुआ मांस खाया। फिर वे पेड़ों की ठंडी और आरामदायक छाया में सो गए। कुछ देर बाद सुभद्रा भी सो गईं। बाकी लोग भी घोड़ों को धोने, रथों को साफ करने और भोजन करने के बाद थोड़ी दूरी पर पेड़ों की छाया में सो गए। चार दिशाओं में बारी-बारी से चार व्यक्ति धनुष-बाण लेकर उनकी रक्षा कर रहे थे।

सूर्यास्त से लगभग दो घंटे पहले दल ने विश्राम किया, स्नान किया, भोजन किया और यात्रा के लिए पानी भरकर रथों को प्रस्थान के लिए तैयार किया। प्रस्थान से पहले, अर्जुन ने ग्राम प्रधान से पूछताछ की और पता चला कि पिछले दिन कोई भी दल गाँव में नहीं रुका था। हालांकि, उन्हें पता चला कि पिछली आधी रात को लगभग बीस रथ पुष्कर की ओर रवाना हुए थे। यह जानकारी गाँव के पहरेदार ने दी थी। अर्जुन बात समझ गए। पुष्कर गाँव से तीन दिन की दूरी पर था। वे कृष्ण के रथ ही होंगे। शायद सामरिक कारणों से कृष्ण ने दूर स्थित द्वारका के बजाय पहले गंतव्य का उल्लेख किया होगा। इसका यह भी अर्थ था कि वे अर्जुन के दल से कहीं अधिक तेज़ गति से यात्रा कर रहे थे। अर्जुन ने दल के सबसे तेज़ रथ को आगे

रखने का आदेश दिया और मार्ग जानने वालों को उसमें बैठने को कहा। उनका अपना रथ ठीक उसके पीछे चल रहा था। उन्होंने अन्य सारथियों को भी ऐसा ही करने और गति धीमी न करने का आदेश दिया। सूर्य की गर्मी पिछले दिन से कहीं अधिक तीव्र थी। असहनीय गर्मी थी। उनके सामने पश्चिम दिशा में सूरज था, जो उनकी आँखों को भेद रहा था। धूप से बचने के लिए सुभद्रा ने लामंचा चटाई बिछा दी। लेकिन अर्जुन ने अपनी करवट खुली छोड़ दी और खुले आसमान की ओर देखने लगे। उनके सारथी तुष्ट पिछले दिन की तुलना में अधिक उत्साहित लग रहे थे, क्योंकि वे सीधे बैठे थे और सूरज की गर्मी से अप्रभावित थे। अर्जुन के मन में उनके लिए स्नेह और स्नेह का भाव जागा था। दोपहर में तुष्ट दो बार अर्जुन के सपने में आए थे। लेकिन उन्हें तुष्ट के प्रकट होने का संदर्भ स्पष्ट रूप से याद नहीं था। अर्जुन को लगा कि उन्होंने तुष्ट की दुर्दशा को पूरी तरह समझ लिया है और केवल वही उनकी मदद कर सकते हैं। एक ओर, एक बेटी जो अपने माता-पिता को छोड़कर नहीं जा सकती थी। दूसरी ओर, तुष्ट की दुर्दशा, जो उसके माता-पिता की देखरेख में उसके साथ रह रही थी। यद्यपि उनके ससुराल वाले उनके साथ गुलाम जैसा व्यवहार नहीं करते थे, फिर भी स्थिति ने उन्हें धीरे-धीरे खुद को गुलाम के रूप में देखने पर मजबूर कर दिया था। अर्जुन ने स्वयं से पूछा, "मेरे सिवा और कौन तुष्ट की दुर्दशा को सहानुभूतिपूर्वक समझ सकता है?" अर्जुन पुरानी यादों में खो गए, “मैंने उलूपी छोड़ी, पूर्व की ओर गया और खुद को फिर से मनलूर में फंसा हुआ पाया। मैं राजा चित्रवाहन से मिलने गया, वहाँ मैंने खुद को हस्तिनावती के प्रसिद्ध कुरु वंश का वंशज और एक पांडव बताया और उनके आतिथ्य का आनंद लेने के लिए रुक गया। संयोगवश या शायद जानबूझकर, उन्होंने मुझे अपनी पुत्री से मिलवाया। मुझे यकीन है कि उनका इरादा यही था कि मैं उसे देखूं और उससे मोहित हो जाऊं। खैर, जैसा उन्होंने अनुमान लगाया था, मैं उससे मोहित हो गया - उसे देखते ही। मेरा मन उसी में खो गया। क्या वह लड़की, चित्रांगदा, सचमुच सुंदर थी? मेरी स्मृति बीस साल पीछे चली जाती है। चित्रवाहन स्वयं एक आर्य राजा थे। उनकी पुत्री के रूप में आर्य और गंधर्व दोनों के गुण मिश्रित थे। उनकी आंखें तेज और हल्के रंग की थीं। छोटी भौहें। उनके चेहरे का रंग सफेद और लाल का मिश्रण था जो हल्के और कोमल पीले रंग में बदल गया था। अगर वह सुंदर नहीं थीं, तो उन्हें देखते ही मैं उन पर मोहित क्यों हो गया?” या फिर मैं महिलाओं के

लिए इतना भूखा था कि मेरे लिए कोई भी घटिया चीज दावत जैसी थी? फिर भी, शुरुआती आकर्षण के बाद भी, मैं उससे जुड़ा रहा।

चित्रवाहन ने तर्क दिया, 'हे पांडुपुत्र, मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि इतने प्रतिष्ठित वंश से संबंध रखने वाला, धनुर्विद्या में निपुण और शारीरिक रूप से इतना आकर्षक व्यक्ति मेरी पुत्री पर मोहित हो गया है। परन्तु मेरी स्थिति को समझने का प्रयास कीजिए। मेरी एक ही संतान है, यह पुत्री। मेरा कोई पुत्र नहीं है। प्रख्यात प्रभांजन वंश को आगे बढ़ाना है। इस राज्य को बचाना ही है। इसलिए मैं उसे अपने पुत्र के समान मानता हूँ और उससे अपने वंश को आगे बढ़ाने की अपेक्षा करता हूँ।'

'क्या इसका मतलब यह है कि आप उसका विवाह नहीं कराना चाहते?' अर्जुन ने पूछा।

"बेशक, उसके विवाह के बिना वंश कैसे आगे बढ़ सकता है? लेकिन विवाह के बाद उसे राज्य की उत्तराधिकारी बनकर यहीं रहना होगा। उससे उत्पन्न होने वाला मेरा पोता सिंहासन पर बैठेगा। यदि आप इन शर्तों से सहमत हैं, तो मैं अपनी पुत्री के लिए आपके समान किसी को वर के रूप में नहीं मानूंगा। यदि आप जैसे उच्च कोटि का योद्धा हमारी सेना का प्रमुख बनता है, तो यह देश अच्छी तरह से सुरक्षित रहेगा। मैं बूढ़ा हो रहा हूं और मेरी युद्ध क्षमता बहुत कम हो गई है। उत्तर से गंधर्व लोग समय-समय पर आक्रमण करके हमें परेशान करते रहते हैं। एक बार जब उन्हें पता चल जाएगा कि आप जैसे योद्धा मेरे दामाद हैं, तो उनकी लूटपाट बंद हो जाएगी।" चित्रवाहन ने उत्तर दिया।

शायद तुष्टा के लिए शुरुआत में सब कुछ आदर्श रहा होगा। वह अपना वतन छोड़कर यहाँ आजीविका कमाने आया था। शायद उसके सास-ससुर, जो महल में काम करते हैं, के पास पर्याप्त धन-संपत्ति थी। और उसकी इकलौती संतान एक बेटी थी। शायद उसे शुरू में यही भ्रम था कि सारी संपत्ति उसकी हो जाएगी। बेशक, मुझे ऐसा कोई भ्रम नहीं था। मुझे चित्रावाहन की गद्दी में कोई दिलचस्पी नहीं थी। लेकिन फिर आखिर किस बात ने मुझे उस विवाह के लिए राजी कर लिया? बीस साल बीत चुके हैं। उस समय मैंने इस विषय पर ज्यादा सोचा भी नहीं था। अब तो मेरी याददाश्त भी धुंधली सी हो गई है। पांचाली से क्रोध, अपने भाइयों के संयुक्त राज्य से अलग होने की इच्छा, अपनी माँ को छोड़कर भाग जाना और उस जवानी के पागलपन भरे आवेगों को शब्दों में बयां न करना? निःसंदेह, चित्रांगदा मेरी पत्नी बनी। उसने स्वयं को मेरे बलवान और सुंदर शरीर के हवाले

कर दिया था। वह मेरी धनुर्विद्या की प्रशंसा में मुस्कुराती थी। फिर भी मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि वह कभी ऐसी प्रेमिका नहीं बनी जो मेरे लिए अपना सब कुछ कुर्बान करने को तैयार हो। मुझे लगता है कि तुष्टा की भी यही दुविधा है। एक बेटी जो अपने माता-पिता के लिए बेटे की तरह व्यवहार करती है, वह कभी भी पूर्ण समर्पण, पूर्ण प्रेम नहीं दे सकती। और यह ऐसी चीज नहीं है जो किसी को सिखाई जा सके। वह स्वभाव से अधिकार जताने वाली थी, हमेशा लेने में माहिर थी, देने में नहीं। लेकिन बिना दिए कोई कैसे ले सकता है? बेशक, मुझे चित्रांगदा को बहुत ज्यादा दोष नहीं देना चाहिए। उसके पक्ष में न तो कोई सकारात्मक गुण थे और न ही कोई स्पष्ट दोष। जो होना था वही हुआ। वह गर्भवती हो गई। उलूपी की तरह, हमारा विवाह उसके मासिक धर्म के कारण व्यर्थ नहीं गया। क्या इस अर्जुन का वीर्य कभी निष्फल रहा है? जैसे ही वह गर्भवती हुई, मुझे पहले से ही अकेलापन महसूस होने लगा था। मैं उससे दूर होने लगा था। चित्रवाहन अपने पोते के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। मनलूर राज्य का भावी उत्तराधिकारी धीरे-धीरे उसके गर्भ में पल रहा था। बस यही था। और उस भूमि में अर्जुन का क्या बचा? अर्जुन के वीर्य से जन्मा बच्चा, लेकिन कुरु वंश का गौरवशाली नाम धारण करने का कोई अवसर नहीं। चित्रांगदा के लिए आनंद, चित्रवाहन के लिए आनंद, और उसकी पत्नी के लिए आनंद! ये सभी आनंद से झूमते हुए अर्जुन के मन और आत्मा के भीतर के टूटते हुए मन को कैसे देख सकते थे? चित्रवाहन भाग्यशाली था। उसकी पुत्री के गर्भ से निकला पहला फल पुत्र था। और महल में क्या ही वैभव और उत्सव था! दादा आनंद से फूले नहीं समा रहे थे, पुत्री आनंद से फूली नहीं समा रही थी और गर्व से फूली नहीं समा रही थी। और भला वह मुझ पर ध्यान क्यों दे रही थी कि इस सारी खुशी और चहल-पहल के बीच मैं इतना उदास और निराश क्यों था! क्या वे मेरी दयनीय स्थिति पर ध्यान भी देते यदि उस समय यह खबर न फैली होती कि गंधर्व उत्तर के गांवों पर आक्रमण कर रहे हैं और लोगों का अनाज और अन्य सामान लूट रहे हैं? शायद मेरी घोर निराशा को भी दूर करने वाली एकमात्र चीज युद्ध ही है! मेरे पास अपने सैनिकों का और चित्रवाहन की अप्रभावी सेना का समर्थन था। और पहाड़ों में बने अपने ठिकानों से हम पर ताक-झांक करने वाले उन डाकुओं के खिलाफ़ क्या ही युद्ध था! फिर भी मेरे सैनिक उनमें से कुछ को पकड़ने, उनके राजा के शहर को घेरने, घरों को जलाने और अपने पहाड़ी घर लौटने में कामयाब रहे। क्या वे भुखमरी का सामना करते ही पहाड़ियों की तलहटी

में बसे गांवों में आकर अनाज लूटते हैं? मेरे अंगरक्षकों ने गंधर्व कन्याओं का भोज किया। उनकी स्त्रियाँ बड़े सज-धज कर, फिर भी स्वाभाविक रूप से, अपने शरीर पर रंग लगाती हैं, आगे-पीछे के बालों को सुगंधित फूलों से सजाती हैं, और बाजू और गले में फूलों की मालाएँ पहनती हैं। हमारी स्त्रियाँ ऐसी कलाकारी क्यों नहीं कर सकतीं? और वे कितनी रंगीन दिखती हैं, जब वे अपने पूरे शरीर, गर्दन, छाती, कमर और बालों पर मोर और अन्य जंगली पक्षियों के पंख पहनती हैं। इस तरह सजी-धजी, जब वे बांसुरी की धुन और छोटे ढोल की थाप पर नाचती हैं, तो कोई भी देखने वाला खुद को और दुनिया को कैसे भूल सकता है? ये वे लोग हैं जिन्होंने स्वर्ग की अवस्था प्राप्त कर ली है, सिवाय इसके कि उनके पहाड़ी इलाके में अनाज नहीं उगता। वे मैदानों में उतरकर उपजाऊ मिट्टी पर खेती क्यों नहीं करते? पेड़ काटकर जंगल साफ करके खेती क्यों नहीं करते? सामने दूर पहाड़ियों के पार डूबता हुआ जलता हुआ सूरज आग के गोले जैसा लग रहा था, न केवल आँखों को, बल्कि पसीने से तर त्वचा को भी। लगातार धूप में जलने के कारण पूरी धरती मिट्टी के बर्तन की तरह काली हो गई थी और उस पर धूल ही धूल थी। घिनौना पसीना रथ के पहियों से टपकते तेल जैसा लग रहा था। धूल ने तेल को भी ढक रखा था। सुभद्रा, जिसने अपने शरीर पर लाल तेल मल लिया था, ने अपने वस्त्रों को गर्दन और कंधों के पास से ढीला किया और घास के पंखे से खुद को हवा देने लगी। इस तरह बहकर आई हवा का एक झोंका अर्जुन तक भी पहुँचा। उसके कंधों, बांहों और घुटनों पर घास जैसे काले बाल थे, जिनसे पसीना टपक रहा था। "गंधर्व स्त्रियों के शरीर इतने साफ, इतने चिकने और बाल रहित थे," उसने याद किया। इस विचार से उसे सिर के अलावा बाकी शरीर पर बाल वाली स्त्रियों से घृणा हुई। उसे याद आया कि गंधर्व पुरुष भी अपेक्षाकृत कम बाल वाले थे। जहाँ तक उनकी स्त्रियों की बात है, उनके शरीर पर लगभग बाल नहीं थे। अर्जुन को याद आया कि उसके आने से पहले चित्रावाहन ने कभी भी गंधर्वों पर उनके पर्वतीय निवासों में आक्रमण करने का साहस नहीं किया था। उसके सैनिक पर्वतीय लोगों से बहुत भयभीत थे। अर्जुन को याद आया, "केवल मेरे सैनिकों ने ही उनके ही क्षेत्र में उन पर आक्रमण किया था। क्या उस झरने के पास मेरी उन पाँच कन्याओं से मुलाकात नहीं हुई थी? वे स्त्रियाँ जो पक्षियों का शिकार करने लायक धनुष-बाण लेकर आई थीं, क्या वे अर्जुन को बंधक बनाने आई थीं? जैसे ही उन्होंने मेरे धनुष-बाण के विशाल आकार को देखा, वे भय से पीली पड़ गईं। लेकिन अर्जुन तो कोई बर्बर

नहीं था कि उन पर तीर चलाए? फिर भी उन्होंने असाधारण आत्मविश्वास और साहस का प्रदर्शन किया! उन्होंने मुझसे कहा, 'सुंदर अंगों वाले, हम पाँचों ने तुम्हें बंदी बना लिया है। अपना धनुष नीचे रख दो और हमारे समक्ष आत्मसमर्पण कर दो।'"

'मैं यहां पूरी गंधर्व आबादी को गिरफ्तार करने आया हूं।'

उन्होंने मुझे उन्हें पकड़ने के लिए उकसाते हुए कहा, 'अगर पकड़ सकते हो तो पकड़ लो,' और फिर उन्होंने मुझे घेर लिया। उन्होंने बड़ी कुशलता से मुझे अपनी गिरफ्त में ले लिया!

मैंने कहा, 'मैंने तुम्हारी चाल और छल को भांप लिया है। तुम्हारे आदमियों ने तुम्हें इसलिए भेजा है ताकि मैं तुम्हारे जाल में फंस जाऊं और इस बीच वे छिपकर मुझ पर गोली चला सकें। मैं तुम्हें यकीन दिलाता हूं कि ऐसा नहीं चलेगा।'

'हे सुंदर पुरुष, नहीं, हमें यहाँ किसी ने नहीं भेजा है। हम तो बस जिज्ञासावश यहाँ आए हैं—यह जानने के लिए कि आप कौन हो सकते हैं, इतने सुंदर पुरुष, इतना बड़ा धनुष लिए हुए, और हमारे पहाड़ी इलाके में कुछ खोज रहे हैं। हम पहले एक छिपने की जगह से आपको देख रहे थे। संयोग से हम घनिष्ठ मित्र हैं, जो साथ खेले और पले-बढ़े हैं।'

यह उलूपी की तरह सीधी और स्पष्ट बात थी। मैं उनकी बातों पर विश्वास क्यों न करूँ? फिर भी मैंने सतर्क रहने का फैसला किया। मैंने अपने अंगरक्षकों को पुकारा। लेकिन वे कहाँ थे? वे ज़रूर गंधर्व कन्याओं के साथ मौज-मस्ती कर रहे होंगे, पेड़ों या चट्टानों के पीछे छिपे होंगे। मैं अपनी हंसी नहीं रोक पाया... तभी सुभद्रा ने उससे पूछा, "तुम मन ही मन क्यों हंस रहे हो? क्या बात है?" वह दाईं ओर मुड़ा और उसे देखा। उसकी हंसी गायब हो गई, उसकी जगह एक गंभीर भाव आ गया। वह खुद को पंखा कर रही थी। फिर वह बाईं ओर मुड़ा, अपने अतीत के सपने देखते हुए, "पहाड़ और छोटी पहाड़ियाँ। वे पेड़ और घास नहीं जो जलकर राख हो गए थे, बल्कि ताज़े हरे पौधे जो शांति और संतोष फैलाते थे। कोमल पत्तियों से लदे पेड़, और विभिन्न रंगों के फूल। सफेद झागदार पानी की आवाज़, ठंडा पानी, धीरे-धीरे गिरता हुआ। इन सबके ऊपर, पाँच सुंदर लड़कियाँ, पसीने से रहित, बिना भद्दे और अशोभनीय शरीर के बालों के, पतली भौहों और निर्मल आँखों वाली।" जंगल की ये सुंदरियाँ, असभ्य लड़कियाँ, हमें यह एहसास दिलाती थीं कि हम जंगली हैं और हमें शर्मिंदा करती थीं, मुझसे ये पूछकर, "हे

सुंदर, सारे गंधर्व डरकर पहाड़ियों में भाग गए हैं। तुम्हारे सैनिक हमारी महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार और उन्हें कष्ट क्यों पहुँचा रहे हैं? तुम इन दरिंदों जैसे तो नहीं हो ना?" मुझे अपने सैनिकों को जवाब देना पड़ा और उन्हें प्रेम कला के मूल तत्व सिखाने पड़े।

और उन्होंने मुझसे सीधे चुनौती देते हुए पूछा, 'क्या तुम हम पाँचों का मुकाबला करके उन्हें हरा सकते हो? या शायद हममें से कोई एक भाग्यशाली ही तुम्हारी ताकत का मुकाबला कर पाए?' क्या चुनौती थी, नहीं, क्या दिलचस्प इशारा था! एक बनाम पाँच। यह किसी गहरी भावना से उपजा आकर्षण था। उनके शब्दों में गर्व झलक रहा था। उनमें से एक ने पूछा, 'मान लो तुम हार जाते हो।' फिर हंसी गूंजी। फिर उसने मुझे दिलासा देते हुए कहा, 'डरो मत। हम पाँचों तुमसे पहले ही हार चुके हैं। और जो पुरुष हारी हुई महिलाओं का आनंद लेता है, वह कभी हार नहीं सकता।'

यह एक लकड़ी का घर था। नीचे मुलायम ऊनी कंबल था। और उत्तेजक पेय, खट्टा, कड़वा और मीठा। शहद के साथ भरपूर मात्रा में मिला हुआ। तीन रातें और तीन दिन। अर्जुन ने नींद पर विजय प्राप्त की। एक के बाद एक, सुंदर लड़कियाँ मेरे बिस्तर पर आ गिरीं। एक के बाद एक पाँच, और फिर पहली वाली। पाँचों ने हार मान ली। क्या वे पाँचों मुझे जीतने के लिए पूरी तरह से दृढ़ थीं? वे कामुकता के खेल में अपने कौशल का एकाग्र और समर्पित प्रदर्शन कर रही थीं, जो मेरे भीतर भावनाओं का सैलाब ला सकता था? क्या रोमांचक और उत्तेजक क्रिया, क्या अद्भुत कलाकारी! अगर यह अर्जुन हज़ार साल की तपस्या भी कर ले, तो भी उसे उन असाधारण और मोहक विवरणों, उन अद्भुत मुद्राओं का आनंद नहीं मिलेगा जो हमने अपनाईं..." अर्जुन मन ही मन मुस्कुराया, लेकिन सुभद्रा ने उसे देख लिया और पूछा, "क्या बात है? तुम बार-बार क्यों मुस्कुरा रहे हो?"

वह मुड़ा और एक पल के लिए उसके चेहरे को घूरने लगा। उसने उससे पूछा, "तुम अकेले ही इस तरह पंखा क्यों चला रही हो?" वह उलझन में पड़कर उसे देखने लगी। उसने जवाब दिया, "इतनी गर्मी है। मैं और क्या करूँ?" फिर वह चुप हो गया। उसने कोने में रखे मिट्टी के बर्तन से पानी लिया और जल्दी से पी लिया। फिर उसने अपने गीले होंठ पोंछे और ज़ोर-ज़ोर से पंखा चलाने लगी। सूरज, आग का गोला, पहाड़ियों के बीच से निकल चुका था। गर्म पहाड़ियाँ मानो आग के गोले को और गर्म कर रही थीं। यह बहुत थकाने वाला था। हवा कितनी घुटन भरी थी!

यह ऐसी थकान थी जो अत्यधिक ऊर्जा खर्च करके सारी ताकत सोख लेती थी। रीढ़ की हड्डियाँ उठने के बाद बैठने की हिम्मत ही खो बैठी थीं। एक के बाद एक गहरी आहें फूट पड़ीं। गंधर्व कन्याओं में से एक ने कहा, "सुंदर अंगों वाली, तुम्हारे आदमी बाहर इंतज़ार कर रहे हैं। क्या तुम उन्हें अंदर भेजना चाहती हो?" मैं इतनी थकी हुई थी कि अंदर आए आदमियों से बात करने की भी हिम्मत नहीं थी। श्रवण केवल मेरा करीबी दोस्त ही नहीं था, बल्कि बुद्धिमान भी था। उसने तुरंत स्थिति को समझ लिया। लकड़ी के शहतीरों से एक रथ बनाकर उसने मुझे उसमें लिटा दिया। फिर वे मुझे पहाड़ों की हरी-भरी तलहटी में ले गए। अगर उन्होंने ऐसा न किया होता, तो भगवान ही जाने क्या होता! मान लो कि इन गंधर्व आदमियों ने अपने दुश्मन को लेटा हुआ देख लिया होता, तो वे मुझे आसानी से मार डालते। मैं इतनी थकी हुई थी कि घोड़े की चाल से होने वाले झटकों को सहने की भी ताकत नहीं थी। जिस पहले गाँव में हम पहुँचे, वहाँ मैंने आठ दिन सोमा रस, दूध, दही, घी, शहद, मक्का और चावल खाकर बिताए। क्या मुझे अपनी मनमानी के कारण हुए नुकसान का एहसास नहीं हुआ, जबकि मुझे हर दिन तेल स्नान और पूरा आराम दिया जाता था? अर्जुन वास्तव में क्या चाहता था? क्या उसे उन पाँच लड़कियों की ज़रूरत थी जो उसे अपने कामुक खेलों में लीन कर लें और उसका सारा रस निचोड़ लें? क्या उसे ऐसी पत्नी के प्यार की ज़रूरत थी जिसने अपने पिता के लिए पोते को जन्म दिया हो?

मैंने अपने मित्र श्रावण से कहा, 'हमें इस चित्रवाहन राज्य से बहुत तंग आ चुके हैं। चलो यहाँ से चलते हैं।'

श्रावण ने कहा, 'महाराज, मैंने आपको बहुत पहले ही इस बारे में सोचने के लिए कहा था। क्या आपके जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति को अपने ससुर के महल का द्वारपाल बनना उचित होगा? जी हाँ, चलिए चलते हैं।'

हमें अपने अगले गंतव्य का कोई पता नहीं था। जब मैंने चित्रांगदा को अपने फैसले के बारे में बताया, तो वह निराश हो गई। उसने मुझसे न जाने का आग्रह किया। लेकिन वह रोई नहीं, न ही उसने मुझे रुकने की भीख मांगी। लेकिन चित्रवाहन चिंतित था और उसने मुझसे पूछा, 'यदि तुम अब हमें छोड़कर चले जाओगे, तो गंधर्व आक्रमणों से इस राज्य की रक्षा कौन करेगा? मान लो तुम्हारा यह पुत्र बिना राज्य के रह जाएगा?'

मैंने उत्तर दिया, "आपके हित में मैंने आपकी पुत्री से एक पुत्र उत्पन्न किया है। अब आप उसकी और उसके राज्य की देखभाल कीजिए।" इस पर उनके पास कोई उत्तर नहीं था।

हमारे कुछ साथी, जो एक साल के प्रवास के दौरान स्थानीय महिलाओं के चक्कर में पड़ गए थे, वहीं रुकना पसंद किया। जब हम सब निकले, तो हमें अपने अगले पड़ाव का पता नहीं था। लेकिन निकलने का फैसला करने मात्र से ही हमें प्रस्थान से पहले के उस संक्षिप्त समय में संतोष का अनुभव हुआ। अचानक मुझे अकेले ही कहीं चले जाने का मन हुआ। मैं अंगरक्षकों और अन्य साथियों से छुटकारा पाना चाहता था। सौभाग्य से मेरे कई साथियों ने घर जाने की प्रबल इच्छा व्यक्त की। मैंने उन्हें श्रावण के साथ विदा किया और इस प्रकार अकेले ही घोड़े पर सवार होकर निकल पड़ा, मेरे एकमात्र साथी मेरा धनुष और बाण थे। निकलने से पहले श्रावण ने मुझे एक सलाह दी, "महाराज, अब कभी किसी स्त्री के साथ मत उलझना। हर स्त्री आपके सुंदर शरीर का उपयोग करना चाहेगी और उससे मिलने वाले सुख की हर बूंद निचोड़ लेगी।"

तब तक अंधेरा हो चुका था। पिछले दिन की तरह, उस अंधेरे में पहाड़ियों की श्रृंखला अस्पष्ट सी दिखाई दे रही थी। पसीने से भीगे कपड़े शरीर से चिपक गए थे। पास के एक पेड़ में कुछ कीड़ों की भनभनाहट हवा में गूंज रही थी। आगे चल रहे सारथी ने अभी तक मशाल नहीं जलाई थी। अर्जुन अचानक दिशाहीन और भ्रमित महसूस करने लगे। अंधेरा इतना घना था कि अर्जुन को याद और हकीकत में फर्क करना मुश्किल हो रहा था। खैर, उस रास्ते की यही खासियत थी। सूखी पहाड़ियाँ, कंटीली झाड़ियाँ और पेड़, बाघ और चीते। फिर भी, उन्हें अभी तक एक भी जंगली जानवर नहीं दिखाई दिया था। बारह रथ थे और उनमें लोग भरे हुए थे। शायद इस भीड़ और शोरगुल ने जानवरों को डरा दिया हो। तभी वे एक उपवन के पास पहुँचे। लेकिन उससे ठीक पहले एक घर था जिसके अंदर रोशनी जल रही थी। आगे चल रहे सारथी ने रथ रोक दिया। यही वह छोटा सा गाँव था जिसकी उन्हें उम्मीद थी। उपवन के पास एक कुआँ था। रस्सी से पानी निकालना पड़ता था। सभी रथ रुक गए। गाँव वालों ने उन्हें एक रस्सी और एक घड़ा दिया। उन्होंने घोड़ों को पानी पिलाया और फिर अपने शरीर पर पानी डाला। उन्होंने अपने पैरों और टखनों पर भी पानी छिड़का। फिर वे जलस्थान में पहले के पड़ाव से बचे हुए पके हुए भोजन को खाने के लिए बैठ गए। उन्होंने पानी पिया। उन्होंने अपने सिर, गर्दन,

छाती और पीठ पर भी पानी डाला। अर्जुन ने कुएँ के पास खड़े पहरेदार से पूछा, "क्या कल लगभग इसी समय बीस रथों का एक दल यहाँ से गुजरा था?"

चौकीदार ने कहा, "अभी नहीं। सुबह का समय था। वे इतनी तेज़ी से भाग रहे थे कि पानी पीने के लिए भी नहीं रुके। उन्होंने कहा कि वे अनर्थ देश जा रहे हैं।"

इससे अर्जुन सोचने लगा, "इसका मतलब है कि हमारे बीच की दूरी एक दिन से बढ़कर डेढ़ दिन हो गई है। अब तक तो यह दूरी और भी बढ़ गई होगी। हम उसे पकड़ नहीं पाएंगे। अब मुझे अकेले ही द्वारका तक जाना होगा।"

यह सोचकर वह उदास हो गया। उसने चुपचाप बैठने और घोड़ों को रथ खींचने देने का फैसला किया। कृष्ण भूख और प्यास से डरने वाले नहीं थे। सर्दी-गर्मी भी उन्हें थका नहीं सकती थी। लेकिन बाकी सब का क्या? उनके घोड़े, रथ? उनके सैनिक? लेकिन यहाँ भी कृष्ण की विशेषता यही थी कि वे पूरी तरह सुसज्जित थे। उनके सैनिक, घोड़े और रथ उनकी गति के अनुरूप सावधानीपूर्वक चुने गए थे। उनके पास एक ऐसी टीम थी जो ज़मीन पर नहीं चलती थी बल्कि हवा में उड़ती थी। बड़े भाई धर्म का मन धीमा था। काश उन्होंने समय रहते निर्णय लिया होता, तो उन्हें कृष्ण की संगति का सुख मिलता। और इतनी लंबी यात्रा अकेले करनी थी। इसके अलावा, उन्होंने इस रास्ते पर केवल एक बार ही यात्रा की थी। अर्जुन सोचने लगा, "अच्छा, तब तो मैं उसे अपनी दुल्हन बनाकर ले जा रहा था।" रथ जुलूस में आगे बढ़े, जो लोग रास्ता जानते थे वे आगे चल रहे थे। उनका रथ दूसरा था और अपेक्षाकृत बड़ा था, जिसे पाँच घोड़ों द्वारा खींचा जाना था। कल की तुलना में आज ज़्यादा अंधेरा था। यदि वह अकेले घोड़े पर सवार होकर यात्रा करता, तो तब तक वह कृष्ण से मिल चुका होता। लेकिन उनके पास वह सारा सामान था जिसका हिसाब रखना मुश्किल था। जब मैंने पहली बार द्वारका की यात्रा की, तो क्या मैं अकेले घोड़े पर सवार नहीं हुआ था? मनलूर से मैंने द्वारका तक की लंबी यात्रा की, एक कोने से दूसरे कोने तक, बीच में कई देश थे। कुरुभूमि और पांचाल से जानबूझकर बचते हुए, मैं कोसल, दशार्ण से होकर गुजरा और बीच में, किसी के द्वारा गुमराह किए जाने पर, मैं छह दिन बर्बाद करते हुए कुंतला की यात्रा पर निकल गया। निषाद और अवंती के पास लौटा और क्या-क्या। मैं भूल गया। उस समय मैं किस चीज की तलाश में था? एक ऐसा व्यक्ति जो अपना जन्मस्थान छोड़कर, घर से दूर की यात्रा में उलूपी, चित्रांगदा और एक साथ पांच लड़कियों को पा लेता है? दुनिया भर में उस लक्ष्यहीन भटकने में, अचानक मुझे कुछ समझ

आया। जो मैंने समझा वह पुख्ता हो गया। वह समझ, वह अहसास, यह था कि जीवन भर एक वफादार और भरोसेमंद दोस्त का होना जरूरी है। अर्जुन के पास ऐसा दोस्त नहीं था - यह अर्जुन जिसकी शारीरिक सुंदरता महिलाओं को मोहित करती थी और पुरुषों को ईर्ष्या दिलाती थी, जिसे गुरुओं ने उसकी जादूगरी की सराहना में बार-बार गले लगाया। धनुर्विद्या, यह बेचारा अर्जुन, जिसकी कोई पत्नी नहीं थी जिसे वह अपना कह सके और किसी और की भी नहीं, जिसने अपने बचपन के अंत में ही हिमालय के हरे-भरे चरागाहों को छोड़ दिया, किशोरावस्था बिताने से पहले ही, जहाँ उसे एक सच्चा और समर्पित मित्र मिल सकता था, हस्तिनावती नगर में, जहाँ उसे अपने ही वंश के प्रतिद्वंद्वियों के साथ रहना पड़ा, वह अपने समकालों का प्रेम और मित्रता प्राप्त करने में असफल रहा। एकाचक्र नगर के परदेस में भी उसे कोई सच्ची मित्रता नहीं मिली। परन्तु इंद्रप्रस्थ के निर्माण के समय, कृष्ण स्वयं हमारे लिए रथ, घोड़े, बर्तन, वस्त्र और आभूषण प्रचुर मात्रा में लेकर आए, और जंगल को रहने योग्य भूमि में बदलने में हमारी सहायता की। अब उस मित्रता के लिए कृष्ण के सिवा और कहाँ जाया जा सकता है? एक दिशाहीन भटकने वाले, अपने सगे-संबंधियों से बिछड़े अनाथ के रूप में, मैं अपने व्यथाओं को कृष्ण के सिवा किसके सामने प्रकट करूँ? खैर, द्वारका का मार्ग न पाकर, मैं अनेक देशों से होकर गुजरा, और अंत में प्रभास पहुँचा। वहाँ से जब मैंने उन्हें संदेश भेजा, तो कृष्ण ने वह तुरंत अपने घोड़े पर सरपट दौड़ते हुए मेरे पास आए और अत्यंत स्नेह से मुझे गले लगाया। हमारा पसीना भी आपस में मिल गया। मुझे लगा जैसे मैं आखिरकार घर लौट आया हूँ, क्योंकि उन्होंने धैर्यपूर्वक मेरी भटकन की कहानी सुनी और उसे समझा - आर्यावर्त की पूर्वी सीमा से पश्चिमी सीमा तक की मेरी यात्रा, पहाड़ियों, जंगलों और परदेसियों से होकर मेरी अकेली यात्रा। उन्होंने कहा, 'अर्जुन, चलो द्वारका चलते हैं। और कुछ मत सोचो। मेरे साथ चार दिन आनंद से बिताओ, सब कुछ भूल जाओ। बाद में मैं तुम्हें कुछ बातें बताऊंगा। आत्म-घृणा और आत्म-आरोप, तुम जैसे व्यक्ति को शोभा नहीं देते। जब पूरी द्वारका तुम्हारे अधीन है, तो तुम खुद को अनाथ, पराया क्यों समझते हो? यह क्या है? चिंता मत करो। द्वारका में कोई तुमसे यह नहीं पूछेगा कि तुम वहाँ बिना कारण के क्यों हो। अगर कोई पूछे भी, तो मैं उनकी जिज्ञासा शांत कर दूंगा और समझाऊंगा कि मैंने स्वयं महान पांडव योद्धा को बुलवाया था ताकि वह साल्वों के लोगों के खिलाफ युद्ध में हमारी मदद करें, जो हमें धमका रहे थे। तुम्हारे कद का

एक महान योद्धा और काबिलियत हर जगह काम आती है। इसमें जरा भी शर्मिंदगी महसूस न करें।

"इसी आत्मीयता ने सारी शर्मिंदगी को दूर कर दिया और इसी साथ ने मन को शांति और आनंद प्रदान किया।"

कृष्ण ने कितना मनमोहक नगर बनवाया था! उनका घर समुद्र तट पर है, जहाँ लहरों की ध्वनि सुनाई देती है। वहाँ से विशाल लहरें निरंतर उठती-गिरती हुई दिखाई देती हैं। जब मैं असीम समुद्र को पहले सफेद, फिर नीला और अंत में हरा होते हुए देखता रहा और बदलते हुए समुद्री दृश्य में पूरी तरह खो गया, तो मेरे पास बैठे कृष्ण कहते, 'अर्जुन, जिस तल्लीनता से तुम समुद्र को देख रहे हो, मैं जानता हूँ कि तुम भी मेरे मित्र हो और मित्रता में उतने ही तल्लीन हो।' जब तक मैंने उस समुद्र को नहीं देखा था, मुझे समुद्र का कोई ज्ञान ही नहीं था। जब वे इंद्रप्रस्थ के निर्माण में हमारी सहायता करने के लिए हमारे साथ थे, तब वे समुद्र का वर्णन करते थे—उसके असीम विस्तार और अनगिनत लहरों का, जो जन्म लेती थीं, उठती थीं, गिरती थीं और विलीन हो जाती थीं। समुद्र को याद करते हुए कृष्ण हमेशा अंतर्मन की ओर मुड़ जाते थे। उनके मुख से लहरों का सजीव वर्णन सुनना, अनंत समुद्र में उनके जन्म का वर्णन, उनका रोमांचक उदय, उनका उग्र प्रवाह और तट से टकराना और अंत में विलीन हो जाना सुनना एक सुखद अनुभव है। उनके वर्णन ने समुद्र को एक अलग ही गहराई और अर्थ प्रदान किया।

द्वारका में कदम रखने के तीन महीने बाद, जब मैं पूर्ण विकसित चांदनी को आकाश में भरते और लहरों को उग्र ऊंचाइयों तक उफान मारते हुए, तट को पार करते हुए देख रहा था, तब उन्होंने मुझसे कहा, 'पार्थ (अर्जुन), घर से भागने के कुछ दिनों बाद, घर की याद तुम्हें सताएगी। लेकिन आत्म-अभिमान की भावना घर लौटने की राह में बाधा बन जाती है। घर छोड़ने का अपराधबोध भी आड़े आता है। मैं तुम्हारे बड़े भाई को संदेश भेजूंगा। क्या यह ठीक रहेगा यदि वह स्वयं तुम्हें वापस ले जाने के लिए यहां आएं?'

"कृष्ण ने बिना कुछ कहे ही मेरे मन और मनोदशा को इतनी जल्दी भांप लिया, यह कितना अद्भुत है! मित्र हो या शत्रु, कृष्ण की तरह कौन मन को इतनी गहरी समझ से जान सकता है? उनके लिए बस इतना जानना ही काफी है कि दुर्योधन द्वारका में है। वे अनुमान लगा सकते हैं और फिर से समझ सकते हैं कि दुर्योधन द्वारका में क्या कह रहा होगा और क्या कर रहा होगा, यहाँ तक कि उसकी बोलने

की शैली, बलराम के मन की स्थिति और द्वारका के अन्य नेताओं पर दुर्योधन का क्या प्रभाव होगा। यदि कोई वहाँ जाकर देखे, तो जो उसने कल्पना की या देखा, वह वहाँ वास्तव में जो हो रहा था, उससे हूबहू मेल खाएगा। चांदनी रात में समुद्र की खड़खड़ाहट के बीच कृष्ण ने मेरे एक और अंतर्मन के विचार को जान लिया —'जानते हो, वह सुंदर कन्या जिसने अब तुम्हारे दिल और दिमाग को मोह लिया है, वह कोई और नहीं बल्कि मेरी अपनी बहन सुभद्रा है। वह मेरी सौतेली माँ की पुत्री है।'"

"क्या मुझे इस बात का ज्ञान नहीं था कि वह उसकी बहन है? क्या उसे यह पता नहीं था कि मुझे पता है? उसने इस बात को इस तरह क्यों उठाया? मैं उस पर मोहित क्यों हो गया? उसकी सुंदरता? उसकी कुशलता और बुद्धिमत्ता? या उसमें कुछ रहस्यमय था जिसने मुझे आकर्षित किया?" फिर अर्जुन दाईं ओर सुभद्रा की ओर मुड़ा और उसे ध्यान से देखा! अगले रथ में जल रही मशाल की रोशनी से वह दिखाई दी। वह सो नहीं रही थी। वह चुपचाप और स्थिर बैठी थी, हाथ में एक पंखा पकड़े हुए। उसका चेहरा बहुत प्यारा था। काले घने बाल। बुद्धिमान। अठारह साल पहले की तुलना में थोड़ी मोटी। बुढ़ापे का उस पर कोई असर नहीं हुआ था। बाल अभी भी काले, अभी भी सुंदर। अगर आगे वाले रथ की रोशनी न होती, तो आसपास की पहाड़ियों और मुरझाए पेड़ों की आकृतियाँ दिखाई देतीं, हालांकि धुंधली। अर्जुन अब इस बात को स्वीकार कर चुका था कि चाहे वे कितनी भी तेज़ी से चलें, वे कृष्ण को पकड़ नहीं पाएंगे। उसने अपने सारथी से कहा, "तुष्टा, थोड़ा किनारे हट जाओ और हमारे पीछे के पाँच रथों को आगे जाने दो। कल की तरह, हम रथों की कतार के बीच में रहें। मशाल की गर्मी हमें बहुत तेज़ लग रही है।"

सुभद्रा ने बीच में दखल देते हुए कहा, "हां, बहुत गर्मी है," और फिर गहरी सांस ली।

उस अंधेरे में शांति थी।

घोर अंधेरे में सभी आकृतियाँ अस्पष्ट दिखाई दे रही थीं।

उस शांत अंधेरे में, यादें स्पष्ट होती जा रही थीं।

अर्जुन ने मन ही मन पूछा, "मैं उस पर मोहित क्यों हो गया?" सड़क पर न तो कोई चट्टान थी, न ही कोई पत्थर। सड़क रेत और मिट्टी का मिश्रण थी। रथ डगमगा नहीं रहा था। वह लयबद्ध ढंग से चल रहा था। अचानक अर्जुन को यह बात समझ में आई। उसका मन कृष्ण से भर गया। उनकी आत्मीय निकटता। अर्जुन को

समझने और उसके प्रति सहानुभूति रखने की उनकी क्षमता। अर्जुन मन ही मन सोचने लगा, "ऐसा साथ जिसने हमें समुद्र तट पर रेत पर बैठकर सपने देखने का मौका दिया। कितनी ही रातें, अपनी पत्नियों को महल में छोड़कर, वह सिर्फ मेरे साथ चुपचाप बैठने के लिए समुद्र तट पर आता था! सुभद्रा की भौहें मेरे मित्र जैसी थीं। उसके गाल भी उसके भाई जैसे थे। उसके सुंदर काले बाल। उसका स्वभाव, उसकी कल्पनाशीलता। वह प्रबल आशा और सपना कि अगर मैं उससे विवाह कर लूँ, तो मेरी सारी आंतरिक इच्छाएँ पूरी हो जाएँगी। हाँ, अब मैं इसे स्पष्ट रूप से देख सकता हूँ। मैंने बहन में भाई को देखा। तैंतीस वर्ष की आयु में मैं इसे नहीं देख पाता था। वासुदेव की अनेक पत्नियाँ और संतानें थीं, परन्तु उनमें से कोई भी कृष्ण के समान नहीं था। मैं उनसे परिचित नहीं हूँ। मैं एक सपने में खो गया था, उसे देखकर और उसमें कृष्ण के सभी गुण और विशेषताएं देखकर। मैंने अपने मित्र से कहा, 'कृष्ण, कृपया यह सुनिश्चित करें कि वह मुझसे विवाह करे। मैं इसे अपने जीवन का परम आनंद मानूँगा।'"

कृष्ण ने कहा, 'पार्थ, एक अकेली लड़की तुम्हें जीवन के परम आनंद तक कैसे पहुंचा सकती है?' फिर वे हँस पड़े।

'मैं इससे आगे कुछ नहीं समझा सकता। आप मेरी आँखों से सच्चाई नहीं देख सकते। मुझे उसे जीतने की सबसे अच्छी रणनीति बताइए। अगर आप स्वयंवर का आयोजन करें, तो क्या आपको लगता है कि वह मुझे चुनेगी? अगर राजा द्रुपद की तरह तीरंदाजी की प्रतियोगिता हो, तो मुझे पूरा यकीन है कि मैं जीत जाऊंगा। खैर...'

दो दिन बाद, उन्होंने स्वयं इस विषय को उठाया, 'पार्थ, मैंने सुभद्रा के मन को जानने का प्रयास किया। यदि स्वयंवर होता है, तो इसकी कोई गारंटी नहीं है कि वह तुम्हें माला पहनाएगी। यदि कोई प्रतियोगिता होती है, तो कौन जाने अंत में क्या परिणाम होगा? हम कैसे सुनिश्चित हो सकते हैं कि आर्यावर्त में धनुर्विद्या में तुमसे श्रेष्ठ कोई पैदा नहीं हुआ है? यदि प्रतियोगिता में भाग लेने से पहले ही वह तुम्हें अस्वीकार कर देती है, तो तुम दौड़ से बाहर हो जाओगे। क्या पांचाली ने कर्ण को पहले ही दौर में अस्वीकार नहीं कर दिया था?'

मैंने विरोध किया, 'मैं जन्म से सारथी नहीं हूँ। मैं सर्वोच्च क्षत्रिय जाति से हूँ। मैं शुद्ध आर्य हूँ।' कृष्ण ने कहा, 'लेकिन तुम अब युवा नहीं हो। तुम मेरी उम्र की हो।

इसके अलावा, तुम उस परंपरा से संबंध रखती हो जिसमें बहुपतित्व की अनुमति है। मान लो कि वह इन बातों को लेकर चिंतित है, तो क्या?'

'कृष्ण, मैं तुम्हारे नाम की कसम खाता हूँ। मैं सामूहिक विवाह से तंग आ चुका हूँ। मुझे सिर्फ अपनी पत्नी चाहिए, किसी और की नहीं, सिर्फ मेरी। तुम्हारी बहन को इस बारे में कोई शक नहीं होना चाहिए। वह सिर्फ मेरी पत्नी होगी, किसी और की नहीं।'

मैंने उसके प्रति अपना मन समर्पित करने के बाद उसके साथ जीवन बिताने के अपने सपनों के बारे में उसे बार-बार बताया। उसने मेरा साथ दिया और मुझे उसे जीतने का तरीका बताया। मेरा साथ देने के कारण उसे अपने बड़े भाई बलराम को नाराज़ करने की कीमत चुकानी पड़ी। कृष्ण ने कहा, "देखो, परसों वह रैवता पर्वत की यात्रा पर निकलेगी। तुमने वे पर्वत देखे तो हैं ही। पूर्णिमा के दिन वह उन पर्वतों की परिक्रमा करने का व्रत रखती है। समय का ध्यान रखते हुए, तुम शिकार पर जाने का बहाना करो और अपने शक्तिशाली घोड़ों वाले रथ में अकेले जाओ। सही मध्य बिंदु चुनकर, उसके साथ मौजूद दासी और अंगरक्षकों को डराने के लिए चार बाण चलाओ। इस अफरा-तफरी में उसे उठाओ और अपने रथ में बिठाकर इंद्रप्रस्थ की ओर तेज़ी से बढ़ो। तुम्हें पागलों की तरह रथ चलाना होगा। रास्ते में उसकी रक्षा करना तुम्हारी ज़िम्मेदारी होगी। इसके लिए अपार साहस और दृढ़ संकल्प की आवश्यकता है। क्या तुम यह सब कर पाओगे?"

"तब मेरे पास एक मजबूत रथ था, बिल्कुल वैसा ही जैसा अब मेरे पास है। मेरे पास युद्ध के लिए बने चार बड़े धनुषों के साथ इस्तेमाल करने के लिए बहुत तीखे और मोटे बाण थे। और मेरे घोड़े शुद्ध नस्ल के थे, जो पूरी तरह से मेरे और मेरे नियंत्रण के आदी थे।" अर्जुन फिर दाईं ओर मुड़े। सुभद्रा बैठी हुई सो रही थीं। वे चिंतन में डूब गए, "मैं केवल अनर्थ देश तक का मार्ग जानता था। आगे की यात्रा के लिए हमें पूछताछ करनी थी। कृष्ण ने मुझे आश्वासन दिया, 'तुम्हें बस एक रात रुकना है। उसके बाद हम तुमसे मिलेंगे और तुम्हें सुभद्रा से विवाह करने की अनुमति देने के अपने निर्णय के बारे में बताएंगे। फिर हम तुम्हें द्वारका वापस ले जाएंगे।' यदि कृष्ण की योजना विफल हो जाती, तो मेरे सामने एक कठिन चुनौती थी - मुझे पीछे से आ रहे शत्रुओं और आगे के घोड़ों को एक साथ संभालना था। मुझे पीछे के लोगों से लड़ने के लिए बाण चलाने थे और साथ ही अपने रथ के घोड़ों को भी संभालना था। यदि मुझे रथ से कूदना पड़ता, तो मुझे उसके हाथ-पैर

बांधकर उसे रथ के फर्श पर लिटाना पड़ता।” सुभद्रा अभी भी बैठे-बैठे ऊंघ रही थी। ऐसा कोई दिन नहीं जाता था जब वह सोती न हो। केवल वही लोग नहीं सोते जो सपने नहीं देख सकते, वे बिस्तर पर करवटें बदलते रहते हैं और बैठे-बैठे चाँद या तारों को देखते रहते हैं। वह पंचली जैसी थी। गर्मी की रातों में, इंद्रप्रस्थ की उस ऊँची इमारत की छत पर, जब हम दोनों एक-दूसरे को गले लगाकर लेटे होते थे, तो आकाश में तारे या खिलता हुआ चाँद होता था, और नीचे यमुना नदी का जल वृक्षों की छाया में धीरे-धीरे बहता रहता था। वह एक ऐसी साथी थी जो मेरी बाहों में अपने सपनों की लौ जलाने के लिए घी डाल सकती थी। हर पाँच रातों में एक बार। कभी-कभी कड़ाके की ठंड में भी, जब शरीर अकड़ जाते थे, वह मुझे जगाती, मुझे छत पर खींचकर ले जाती, सफेद चाँद को देखने के लिए, और ऐसे श्लोक सुनाती कि चाँद को अकेला नहीं छोड़ना चाहिए! उसने ऐसा अपने बाकी चार पतियों के साथ कभी नहीं किया, उनके साथ कभी छत पर चाँद देखने और कविताएँ सुनाने नहीं गई। उनके साथ कभी सर्दियों में नहीं। बाकी चार पतियों के साथ कभी पूरी रात नहीं जागी थी। मैं ही वह था... पांचाली के लिए यह एक खास सपना था। खैर, सुभद्रा से शादी करने के बाद मुझे पांचाली के साथ सपने देखने का मौका ही नहीं मिला। लेकिन सुभद्रा बहुत सोती थी। कल रात तो वह पूरी रात सोई रही। आज दोपहर भी उसने उपवन में अच्छी नींद ली। अब, इतनी जल्दी ही वह फिर से सो गई। रथ बीच में है, इसलिए सारथी को कोई काम नहीं करना है। इसलिए तुष्टा अपनी जगह पर ही पीछे झुककर ऊंघने लगता है, क्योंकि घोड़े अपने आप ही रथ के पीछे-पीछे चलते रहते हैं।

अर्जुन ने उसका बायां कंधा हिलाया और "सुभद्रा" कहकर पुकारा।

उसने एक गहरी आह भरी और सांस रोकते हुए धीमी आवाज़ में कहा, "उह।"

अर्जुन ने उसे फिर से झटक कर कहा, "तुम्हें कितनी नींद आ रही है!"

शरीर सीधा करते हुए उसने पूछा, "क्यों?" अँधेरे में भी वह समझ गया कि उसकी आँखें अभी भी बंद हैं। फिर उसने दोनों बाँहें सीधी कीं, कंधे हिलाए और बोली, "मैं ज़मीन पर लेटकर सो जाऊँगी। धनुष को थोड़ा उस तरफ़ कर दो।" तब तक उसका शरीर जागने की स्थिति में वापस आ चुका था। उसने आँखें खोलीं और पूछा, "मुझे क्या करना चाहिए?" उसे समझ नहीं आया कि क्या कहे, और वह बस दूर आसमान को देखता रहा। धूल बहुत थी क्योंकि सड़क रेतीली थी। फिर भी

गाड़ी न तो हिली और न ही डगमगाई, बल्कि शांत लहरों पर तैरती नाव की तरह स्थिर थी।

सुभद्रा ने पूछा, "तुमने क्या कहा?"

अर्जुन ने पूछा, "कृष्ण की अनुपस्थिति में दुर्योधन वहां गया है। अब वहां क्या हो सकता है, आपको क्या लगता है?"

अंततः अर्जुन की बात पूरी तरह समझकर वह पूरी तरह जाग उठी। अर्जुन ने उसे फिर समझाया, "तुम पिछले तेरह वर्षों से वहाँ थी, इसलिए तुम्हें वहाँ के विभिन्न व्यक्तियों के मन की कार्यप्रणाली की अच्छी समझ होनी चाहिए।"

सुभद्रा ने कहा, "लोगों की बातों की चिंता क्यों करें? कृष्ण अधिकतर इधर-उधर यात्रा करते रहते हैं, इस नगर-उस नगर में जाते हैं। अभी हाल ही में वे हमारे लिए कुछ काम से उपप्लव्य नगर गए थे। यादव सेना बड़े भाई बलराम के नियंत्रण में है, जो कभी बाहर नहीं जाते। बलराम अभी तक उस अपमान को नहीं भूले हैं जो तुमने मेरे साथ भागकर उन्हें पहुंचाया था।"

"बिल्कुल," अर्जुन ने सोचा, "अगर मैं सचमुच उसे चाहता था, तो उसके साथ भाग जाने के अलावा कोई और रास्ता नहीं था। वैसे भी, क्या यह विवाह का वह तरीका नहीं है जो एक क्षत्रिय के लिए अत्यंत उपयुक्त है?" अर्जुन ने कभी परंपरा नहीं तोड़ी थी। क्या इतने बुद्धिमान बलराम को यह बात समझ नहीं आती? फिर उन्हें याद आया: "सुभद्रा की दासी और उसके बाण से भयभीत होकर अंगरक्षक रैवत पर्वत से द्वारका भाग गए थे। उन्हें पैदल भागना पड़ा क्योंकि मैंने उनके रथ का पहिया तोड़ दिया था और अपने हाथों से उनके घोड़ों के पैर मरोड़ दिए थे। जब बलराम को इस घटना की खबर मिली, तो ऐसा लगता है कि वे क्रोधित हो गए थे। उन्होंने शहर पर वास्तविक या संभावित खतरे का संकेत देने के लिए ढोल बजाने का आदेश दिया और अपने सभी योद्धाओं को उनके रथों के साथ भेजकर उन्हें प्रेरित किया, 'अपने झंडे फहराओ, अपने बाण उठाओ। अब बलराम के नेतृत्व में युद्ध होगा। सभी तुरंत सार्वजनिक सभा में एकत्रित हों।' ऐसा लगता है कि पूरी सभा सैनिकों से भरी हुई थी। सभा के बाहर रथों की कतारें प्रस्थान के लिए तैयार खड़ी थीं। बलराम की सफेद आँखें लाल हो गई थीं और वे बार-बार घूम रही थीं। उन्होंने योद्धाओं की सभा को संबोधित करते हुए कहा, 'यादव योद्धाओं, यह अर्जुन, जो इन सब का दोषी है, कृष्ण का मित्र है। उसने हमारे साथ इतने दिन बिताए हैं, हमारे साथ खाना खाता था, हमारे घर में ठहरता था, और अब उसने हमारी ही

लड़की को लेकर भागने की हिम्मत की है। अगर कोई हमारी औरतों को लेकर भागने की हिम्मत करे, तो हम इसे अपनी इज्जत पर धब्बा और अपनी मर्दानगी पर चुनौती समझेंगे। हम इस बदमाश का पीछा करेंगे, उसे पकड़ेंगे और मार डालेंगे। फिर हम उसके मांस और हड्डियों को अपने कुत्तों को खिलाएंगे। वरना यादवों की मर्दानगी कैसे गर्व से सिर उठा पाएगी?

मुझे ठीक से याद नहीं कि सत्यकी ने कहा था या उद्धव ने, जिन्होंने सावधानी बरतने की सलाह देते हुए कहा, 'आखिरकार, वह कृष्ण के मित्र हैं। चलो कृष्ण को बुलवाते हैं।' तब कृष्ण धीरे-धीरे वहाँ आए, और भला शब्दों के जादू में कौन उनका सामना कर सकता है? उन्होंने कहा, 'बड़े भाई, यदि कोई हमारी कन्या को ले जाने के लिए इतनी मेहनत करता है, तो इसका अर्थ है कि वह कन्या के परिवार के प्रति अत्यंत आदर और सम्मान रखता है। वह उन्हें इस सारे जोखिम और कष्ट के योग्य समझता है। अर्जुन ने जो किया है, उससे हमारा अपमान नहीं हुआ है। बल्कि इसके विपरीत, इसे हमारे और हमारी प्रजा के लिए सम्मान समझा जाना चाहिए।'

बलराम ने कहा, 'ओह, मैं समझ गया। क्या आप चोरी को एक नेक, ईमानदार व्यक्ति की निशानी मानते हैं?'

कृष्ण ने कहा, "बड़े भाई, जब उसने उसे पाने का इतना दृढ़ निश्चय कर लिया था, तो वह और क्या कर सकता था? स्वयंवर में आने वाले लोग तो बस एक मौका लेने, अपनी किस्मत आजमाने आते हैं। लेकिन उनमें कन्या के प्रति अर्जुन के प्रेम की तीव्रता नहीं होगी। आप जानते हैं कि उसने द्रुपद की पुत्री के स्वयंवर में प्रतियोगिता कैसे जीती थी। अगर हमने भी ऐसी ही प्रतियोगिता आयोजित की होती, तो निःसंदेह अर्जुन ही जीतता। अभी भी देर नहीं हुई है। आप उसे बुला सकते हैं, शस्त्र विद्या में उसकी कुशलता की परीक्षा ले सकते हैं और फिर उसे कन्या को सौंप सकते हैं। क्या आप हमारी बहन के लिए उससे भी बड़ा योद्धा ढूंढ सकते हैं?"

बलराम ने विरोध करते हुए कहा, 'लेकिन वह तो ऐसे घर से आता है जहाँ बहुपति प्रथा प्रचलित है। एक पत्नी के पाँच पति!'

कृष्ण ने कहा, "चलो उन्हें वापस बुला लेते हैं और अर्जुन पर यह शर्त रखते हैं कि हमारी बहन उसे ही अपना पति बनाएगी। जब वह यह शर्त मान लेगा, तब हम विवाह समारोह मनाएंगे।"

यह सच है कि कृष्ण ने अपनी बातों से बलराम को सुभद्रा से मेरे विवाह के लिए राजी कर लिया। शायद उनके मन में सचमुच कोई परिवर्तन नहीं आया था। तब

अर्जुन ने सुभद्रा से पूछा, "लेकिन यह सब तो अठारह साल पहले हुआ था। क्या ऐसा नहीं है?"

सुभद्रा ने कहा, "अठारह साल की बात क्यों? मेरे भाई का स्वभाव ऐसा है कि वह अपने जीवन भर अपने साथ हुए किसी भी अपराध को नहीं भूलेगा। उसका प्रेम भी उतना ही तीव्र और अटल है। उसका क्रोध और घृणा भी। ऐसा लगता है कि खांडवप्रस्थ मिलने के बाद कृष्ण लगभग एक वर्ष तक आपके साथ रहे। उस समय मैं बारह या तेरह वर्ष की थी। मैं अलग घर में रहती थी। मुझे ये सब बातें कैसे याद रह सकती हैं या पता हो सकती हैं? ऐसा लगता है कि उसी समय दुर्योधन द्वारका आया था, बलराम के चरणों में गदा साधना सीखने के लिए। उसने भाई की चापलूसी करते हुए कहा, 'बलभद्र, आर्यावर्त में तुम्हारे जैसा गदा चलाने वाला कोई नहीं हुआ। कौन जाने भविष्य में कोई ऐसा जन्म लेगा जो तुम्हारी बराबरी कर सके? मैं तुम्हारे पास इसलिए आया हूँ क्योंकि मुझे विश्वास है कि महान द्रोण से सीखना भी तुमसे गदा साधना सीखे बिना अधूरा है। इसलिए मैं तुमसे विनती करता हूँ कि मुझे अपना शिष्य स्वीकार करो।' तभी बलराम के मन में उसके प्रति आसक्ति और स्नेह उत्पन्न हुआ। यह बिल्कुल सच है।" बलराम में इसे रद्द करना असंभव है। दुर्योधन इस बात से भलीभांति अवगत है और इसी का लाभ उठाते हुए समय-समय पर मेरे भाई की चापलूसी करता रहा है। इस प्रकार आसक्ति और भी प्रबल हो गई है।

अर्जुन ने पूछा, "लेकिन क्या वह अपनी ही बहन के हितों के खिलाफ काम करेगा?"

सुभद्रा ने कहा, "मैं क्या कहूँ? मैं तो बस सौतेली बहन हूँ। हम दोनों की उम्र में बहुत अंतर है और हम एक ही घर में नहीं पले-बढ़े। क्या आपको नहीं पता था कि मेरे पिता ने अपनी हर पत्नी के लिए अलग-अलग घर बनाए थे? कृष्ण का स्वभाव है कि वे दूर के रिश्तेदार से भी स्नेह दिखाते हैं। जब आप सब तेरह साल वनवास में गुमनामी में रहे, तब कृष्ण ने ही मेरी देखभाल की और मुझे अपने साथ रहने दिया। मैंने सुना है कि बलराम आपका मज़ाक उड़ाते थे, पांडवों, ये कहते थे कि इन मूर्खों ने जुए में सब कुछ हार दिया और फिर अपनी पत्नियों का भरण-पोषण न कर पाने के कारण उन्हें अपने मायके भेज दिया! उन्होंने कभी आपको अपने घर में आमंत्रित नहीं किया और न ही आपसे स्नेह से बात की। आपको कभी भी ठीक से मेहमाननवाज़ी नहीं मिली, एक दिन के लिए भी नहीं। अगर बलराम गदा-युद्ध में

इतने माहिर हैं, तो क्या उन्हें अपने भतीजे अभिमन्यु को यह नहीं सिखाना चाहिए? कृष्ण ने ही अपनी बहन के बेटे को शस्त्र विद्या का प्रशिक्षण देने का दायित्व और परिश्रम उठाया।" सत्यकी ने ही अभिमन्यु को सामान्य आचरण और अनुशासन की शिक्षा दी थी।

अर्जुन यादव सेना की ताकत का अंदाजा लगाने की कोशिश कर रहा था। सुभद्रा को इन मामलों की ज्यादा जानकारी नहीं थी। उसके अनुमान के अनुसार, यह कोई बहुत बड़ी सेना नहीं थी। इसके अलावा, यादव शब्द किसी एक समुदाय या जाति समूह को नहीं दर्शाता था। यह एक आम नाम था जो पारंपरिक रूप से तटवर्ती क्षेत्रों में रहने वाले विभिन्न वंशों के समूह को दिया जाता था, जैसे द्वारका और प्रभासा आदि क्षेत्रों में रहने वाले वृष्टि, भोज, अंधक और शिनि। हर वंश का अपना सरदार और अपनी छोटी सेना होती थी। सेना के आकार से कहीं ज्यादा, हर वंश अपने योद्धाओं के कारण प्रसिद्ध था। ऐसे महान योद्धाओं में सत्यक, सत्यकी, कृतवर्मा, प्रद्युम्न, सांबा, निशात, शंकु, चारुदेशना, विप्रतु, शरण और गदा शामिल थे। ये सभी अपने-अपने वीर थे, जिनके पास अपनी सेनाएँ नहीं थीं। अर्जुन सोचने लगा कि इनमें से कितने लोग बलराम का साथ देंगे और कितने लोग कृष्ण का समर्थन करेंगे? सत्यक बहुत बूढ़ा था। सत्यकी हमेशा से कृष्ण के सच्चे अनुयायी थे। प्रद्युम्न और सांबा, बेशक, कृष्ण के सगे पुत्र थे। हालांकि, सांबा का विवाह दुर्योधन की पुत्री लक्षणे से हुआ था। क्या यह संभव था कि वह ऐसा पुत्र हो जो अपने ससुर के पक्ष में युद्ध में अपने पिता से ही लड़ पड़े? ऐसा प्रतीत होता है कि सांबा ने लक्षणे को चुराने का प्रयास किया था, लेकिन दुर्योधन ने उसे पकड़वाकर कैद कर लिया था।

तब बलराम को उसे छुड़ाने के लिए तुरंत आना पड़ा और अंत में दुर्योधन को धमकाकर दोनों का विवाह करवा दिया। क्या इसका यह अर्थ था कि सांबा अपने ससुर के प्रति शत्रुता रख सकता है? शायद, पूरी संभावना यही थी कि वह द्वारका में ही रहे और किसी का पक्ष न ले। कृतवर्मा बलराम के घनिष्ठ सहयोगी माने जाते थे। प्रारंभ से ही। उनके रिश्ते की वर्तमान स्थिति क्या थी, यह उन्हें ज्ञात नहीं था। गदा और बलराम एक ही माता के पुत्र थे। फिर भी यह ज्ञात था कि कृतवर्मा ने अनेक अवसरों पर कृष्ण का पक्ष लिया था। यह लगभग स्पष्ट था कि यदि दुर्योधन बलराम को अपने वश में करने में सफल भी हो जाता, तो भी उसे सभी यादवों का समर्थन प्राप्त नहीं होता। हालांकि, यह संभव था कि बलराम उसे यादवों की संपत्ति

का एक बड़ा हिस्सा दे दें। जब ऐसे विचार उनके मन में चल रहे थे, तभी अर्जुन के पीछे चंद्रमा उदय हुआ। अर्जुन ने चंद्रमा को देखने के लिए पीछे मुड़ा। राख जैसे आकाश में ठीक ऊपर चंद्रमा मंद दिखाई दे रहा था। अर्जुन को चंद्रमा को देर तक घूरने का मन नहीं हुआ। जब उसने अपना सिर सही स्थिति में घुमाया, तो उसकी नज़र सुभद्रा पर पड़ी। वह अभी भी बैठी-बैठी ऊंघ रही थी। नहीं, ऊंघ नहीं रही थी, बल्कि सचमुच सो रही थी। उसने हथियारों को एक तरफ हटा दिया ताकि वह ठीक से लेट सके और उसे सोने के लिए कहा। वह सोने के लिए लेट गई, मानो उसे दुनिया की कोई चिंता ही न हो! उसने अपने पैरों को अंदर की ओर मोड़ लिया, एक हाथ को तकिया बना लिया और फिर सो गई।

चाँद की रोशनी धीरे-धीरे बढ़ रही थी और रास्ता अपरिचित होता जा रहा था। अर्जुन को नींद आने लगी, लेकिन यह गहरी और मोहक नींद नहीं थी।

अचानक तुष्टा बोला, "तुम्हें पता है कि राजा विराट की पूरी सेना तुम्हारे पक्ष में है।"

अर्जुन को इस जानकारी में कुछ भी नया नहीं लगा। आखिरकार, विराट अभी-अभी उनके दामाद बने थे। इसके अलावा, वे दुर्योधन के प्रति घोर क्रोधित थे। उन्होंने युद्ध की योजना बनाने और तैयारी करने के लिए पूरा शहर उनके हवाले कर दिया था, और उनकी हर मांग पूरी कर दी थी - रथ, घोड़े, सैनिक, भोजन और अन्य उपयोगी सामग्री। इसलिए अर्जुन ने बस इतना कहा, "यह तो सर्वविदित है।" तुष्ट चुप हो गए। अर्जुन ने आगे कुछ नहीं कहा। कुछ देर रुकने के बाद तुष्ट ने स्वयं कहा, "नहीं, मेरा मतलब केवल यह नहीं था कि राजा विराट आपके साथ हैं। मेरा मतलब था कि सभी सैनिक अपनी मर्जी से आपके साथ हैं। विशेषकर सारथी।"

वे सब आपके भाई, राजा भीम, के लिए मरने को तैयार हैं। मुझे पूरा यकीन है कि वे सब आपस में बात कर रहे हैं कि युद्ध में आपका साथ दें और आपके लिए लड़ें।

अर्जुन आश्चर्यचकित रह गया। वे सब भीम के इतने प्रिय क्यों थे? क्या उनकी धनुर्विद्या के कारण? या उनके आकर्षक रूप के कारण? भीम एक तरह से आकर्षक तो थे, लेकिन वे बहुत भारी-भरकम और भद्दे थे। उन्होंने अपना वनवास रसोइए के वेश में बिताया था। सैनिकों के साथ उनके इतने घनिष्ठ संबंध कैसे बन गए? उन्होंने इसका उत्तर जानने की कोशिश नहीं की। किसी तरह इस खबर ने उन्हें उत्साहित नहीं किया। रथ सड़क पर बने पत्थरों के टीलों से गुजरते हुए उछल

रहा था। तुष्ट ने आगे बढ़कर बताया, "आप हमारे सेनापति कीचक को जानते हैं। भीमराज ने एक ही रात में अपने दस दुष्ट भाइयों का वध कर दिया था। उस दिन से हमारे सारथी समुदाय की महिलाएं अपने पतियों की बात सम्मानपूर्वक सुनने लगी हैं। और सभी पति राजा भीम को भगवान मानकर उनकी पूजा करने लगे हैं।"

उसी क्षण अर्जुन के मन में कुछ कौंधा। उन्हें लगा जैसे उनका संतुलन बिगड़ गया हो। तुष्टा चुप हो गए। अर्जुन का मन एकदम खाली हो गया, बिल्कुल खाली। थोड़ी देर बाद उन्हें बैठे-बैठे थकान होने लगी। उन्होंने सुभद्रा को धक्का दिया और उन्हें एक तरफ हटने को कहा ताकि वे लेट सकें। फिर उन्होंने सोने की कोशिश की। उन्हें जम्हाई आई, लेकिन नींद नहीं आई। उन्हें याद आ गया। हाँ, उन्हें भी याद था कि कैसे कीचक ने द्रौपदी पर बुरी नज़र डालकर अपने कमरे में उसके साथ छेड़छाड़ करने की कोशिश की थी, और जब वह वहाँ से भागी, तो कीचक ने विराट के सामने उसका पीछा किया और उसे लात मारी थी। उनका मन भी उबल रहा था। लेकिन वे क्या कर सकते थे? उन्होंने अपने सारे हथियार बाँधकर शहर से लगभग सात मील दूर अमी वृक्ष की शाखा पर टांग दिए थे। खैर, उन्हें वहाँ जाकर धनुष-बाण लाना ही होगा... लेकिन क्या केवल धनुष-बाण से कीचक को मारना संभव था? क्या ऐसा करने से उनकी पहचान उजागर नहीं हो जाती? उस शाम उन्होंने अपने बड़े भाई धर्म से इस विषय पर चर्चा की। यह तय हुआ कि वनवास की अवधि समाप्त होने तक वे चुप रहेंगे। धर्म ने उन्हें बताया कि उन्होंने पांचाली को इसी बारे में निर्देश दिए थे, और तब उन्हें मानसिक शांति मिली: ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि भीम ने जल्दबाजी में कीचक की हत्या कर दी थी, और जब यह खबर दुर्योधन तक पहुंची तो उसे विराटनगर में उनकी उपस्थिति का संदेह हुआ और उसने विराट के पशुओं को पकड़ लिया। यदि वनवास की अवधि समाप्त होने से पहले उनका पता चल जाता, तो उन्हें बारह वर्ष के वनवास और एक वर्ष के वनवास की सजा भुगतनी पड़ती! भीम बहुत मूर्ख था और उसने उन्हें सचमुच मुसीबत में डाल दिया होता। इस विचार से अर्जुन को मानसिक संतुष्टि मिली। अपमानित होने पर भी? पांचाली अर्जुन के पास नहीं गई। यह सोचकर कि वह भीम के पास गई थी, उन्हें बहुत दुख हुआ, उनके स्वाभिमान को ठेस पहुंची। अर्जुन ने स्वयं से पूछा, "क्या पांचाली ने यह कल्पना की थी कि यह अर्जुन अस्तित्व में ही नहीं है?" उनके पेट में दर्द होने लगा, और फिर वे दूसरी तरफ करवट लेकर सो गए। उन्होंने सुभद्रा को इशारा करते हुए कहा, "थोड़ा हट जाओ," और फिर

खाली जगह में मुड़ गए। भीम ने दृढ़ता से कहा था कि अगर उनकी पहचान उजागर भी हो जाए, तो उन्हें वनवास दोहराने की ज़रूरत नहीं है। पांचाली की भी यही व्याख्या थी। धर्म की अवहेलना करने में दोनों बराबर थे। अर्जुन एक बार फिर चिंतन में डूब गए, "मैंने उन्हें शुरू से ही देखा है। भीम का धर्म के प्रति कोई समर्पण नहीं है। पांचाली पूरी तरह से उनके पक्ष में झुकी हुई थी। यह विडंबना ही है कि यही भीम अब विराट की पूरी सेना के प्रिय और देवदूत बन गए हैं! धनुर्विद्या के सर्वोच्च स्वामी, उन्होंने धर्म के लिए स्वयं को संयमित किया और अपने बड़े भाई की इच्छा का आदरपूर्वक पालन किया... वन में भीम बार-बार कहते थे, 'चलो जुए के खेल में शर्त के लिए प्रयुक्त शब्दों को ही स्वीकार कर लें। इसका क्या अर्थ है? क्या इसका अर्थ केवल यह है कि हमें बारह वर्ष वन में रहना है? हमारे समझौते की शर्तों में ऐसी कोई शर्त कहाँ है कि वनवास के दौरान हम दुर्योधन, दुस्साना, शकुनि और कर्ण को न मारें या उन पर युद्ध न करें? चलो युद्ध शुरू करने के लिए अपनी सेनाएँ एकत्रित करें—कृष्ण की सेना का एक भाग, ससुर द्रुपद की सेना और हमारी अपनी इंद्रप्रस्थ सेना, इससे पहले कि उनकी निष्ठा हमसे विमुख हो जाए। इतना ही काफी है। हमें उनसे युद्ध करने के लिए प्रेरित करो। इन सेनाओं के समर्थन से, मैं दुर्योधन का गला तोड़ दूँगा, उसे अपने बाएँ पैर से लात मारूँगा, दुस्साना का सीना चीर दूँगा, कर्ण और शकुनि का मांस जंगली कुत्तों को फेंक दूँगा। तब धर्म की देवी प्रसन्न होंगी। अन्यथा पांडवों का यह वंश समाप्त हो जाएगा।' यह वास्तव में विडंबनापूर्ण है कि भीम को भगवान माना जाता था, वही भीम जो वचन तोड़ने के अपने अपराध का बचाव करने के लिए धर्म के उपदेशों का सहारा लेता है, वही भीम जो आर्यों के धर्म की अवहेलना करते हुए अपने बड़े भाई के पद को अस्वीकार और उपहास करता है। हमें यह खबर कामपिल्य में मिली। लोग भीम को भगवान के रूप में पूजते थे क्योंकि उन्होंने एकाचक्र नगर में राफेशा, बकासुर का वध किया था। न केवल उस नगर के लोग बल्कि वेत्रकिगृह के सभी लोग।

लेकिन भीमा के देवत्व प्राप्त करने से पहले ही हम एकाचक्र से बाहर निकल चुके थे।

जरासंध का वध करने के कारण, उसकी कैद से रिहा हुए सभी राजा भीम को भगवान मानकर उनकी पूजा करते थे। इसीलिए कृष्ण ने उन्हें पूर्व के राजाओं से भेंट एकत्र करने के अभियान पर भेजा। पूर्व के शासकों ने उनसे युद्ध नहीं किया, बल्कि उन्हें बहुमूल्य उपहारों से भरी गाड़ियाँ भेंट कीं। खैर, भाग्यशाली लोग अधर्म

करने या धर्म का उल्लंघन करने पर भी प्रसिद्धि प्राप्त करते हैं। भीम, तुम मेरे बड़े भाई हो। मुझे तुमसे ईर्ष्या नहीं है। लेकिन मुझे केवल उन मूर्ख लोगों के लिए खेद है जो एक ऐसे व्यक्ति की पूजा करते हैं जिसने लगातार धर्म का उल्लंघन किया है!" अर्जुन को फिर से दूसरी तरफ मुड़ने का मन हुआ। फिर उन्हें चलते रथ में सोने का विचार अच्छा नहीं लगा। यद्यपि वे जानते थे कि देखने के लिए केवल पहाड़ और पेड़ ही हैं, फिर भी वे उन्हें देखना नहीं चाहते थे और जागते रहना चाहते थे। लेकिन अगर वे सोते भी नहीं, तो ज़मीन पर लेटे हुए उन्हें देख नहीं पाते। इसलिए वे उठे और सीधी पीठ करके बैठ गए। एक प्रश्न जो उन्हें लगातार परेशान कर रहा था, वह था, "जो आर्य पैदा हुआ है, वह अपने बड़ों का अपमान कैसे कर सकता है?" भीम ने धृतराष्ट्र को कभी पिता या चाचा नहीं कहा। वह हमेशा उन्हें तिरस्कारपूर्वक अंधा कहकर पुकारता था। गांधारी के प्रति भी उसका यही तिरस्कार था, जिसे वह अंधी स्त्री कहता था। गांधारी को अपने बच्चों से प्रेम करने के लिए भला कौन दोषी ठहरा सकता है, और कौन सी माँ अपने बच्चों से प्रेम नहीं करती, चाहे वे कोई भी हों? क्या भीम को धर्म का कोई ज्ञान है, जब वह माता गांधारी की महानता को नहीं देख पाता, धर्म के प्रति उनकी उस प्रतिबद्धता को नहीं देख पाता, जिसमें उन्होंने अपने अंधे पति को इस सुंदर संसार के दर्शन से वंचित रखने के कारण अपनी दृष्टि और इस सौंदर्यपूर्ण संसार के वैभव का त्याग कर दिया? क्या वह अपने पति की महान भक्त और कुरुवंश की ज्योति नहीं हैं? जो भी उन्हें माता गांधारी कहता है, वह उसका उपहास करता है। और पांचाली भी हल्के से मुस्कुराते हुए उसका साथ देती है, जिससे तिरस्कार का भाव और भी प्रबल हो जाता है। धर्म के ये दोनों उल्लंघनकर्ता मृत्यु के बाद नरक में ही जाने वाले हैं। केवल नरक ही नहीं, बल्कि सबसे भयानक नरक में। धर्म के सभी उल्लंघनकर्ता एक दूसरे की ओर उसी प्रकार आकर्षित होते हैं जैसे एक ही पंख वाले पक्षी। चाहे वह पाँचों को समान रूप से व्यवहार करने का दिखावा करने में कितनी भी कुशल क्यों न हो, अब वह भीम के पीछे भाग रही है। खैर, वह माता से किए गए वचन का आंतरिक रूप से उल्लंघन करके धर्म का उल्लंघन कर रही है। आख़िरकार, धर्म किसी भी व्यक्तिगत, निजी संतुष्टि या सुख से बड़ा है। धर्म किसी भी प्रसिद्धि से श्रेष्ठ है। निस्संदेह, पिता की मृत्यु के बाद धर्म द्वारा पिता का दर्जा प्राप्त बड़े भाई ने जुआ खेलने की मूर्खता की होगी। यह निश्चित रूप से उचित कार्य नहीं है। यदि शत्रु उसे जुए के खेल के लिए आमंत्रित करे, चुनौती देते हुए, तो

राजसूय यज्ञ करके महान स्थान प्राप्त करने वाला राजा कैसे इनकार कर सकता है? और एक बार खेल में शामिल होने के बाद, यह तर्क देना कितना उचित है कि केवल जीतना ही चाहिए, हारना नहीं चाहिए? और पूरी सभा में, इस भीम ने राजसूय यज्ञ सफलतापूर्वक संपन्न करने वाले धर्म के हाथों को जलाने की बात कही, क्योंकि वह जुए में हार गया था। उसे बड़ों का कोई आदर नहीं है, उन दादाओं का भी नहीं जिन्होंने बचपन में हमें प्यार से दुलारा, उन आचार्यों का भी नहीं जिन्होंने हमें ज्ञान दिया। उसने एक ही झटके में, गुस्से के एक ही पल में, उन सबको अवसरवादी, अपने पालक की चापलूसी करने वाले गुलाम समझकर त्याग दिया! क्या आर्यों का बदला लेने के सिवा कोई और धर्म या कर्तव्य नहीं है? बेशक उसने कीचक और उसके भाइयों को मारकर कुछ सारथियों की प्रशंसा अर्जित की। लेकिन उसने गुप्त रूप से हमारे वनवास के नियमों का उल्लंघन किया और हमें पूरा वनवास कार्यक्रम दोहराने पर मजबूर कर देता। अगर हमारे इस उल्लंघन का पता चल जाता, तो क्या हम इस नियति से बच सकते थे?

"क्षणिक और आवेगपूर्ण प्रतिशोध की भावना से कहीं अधिक बुद्धिमानी है चिंतनशील दूरदृष्टि रखना। व्यक्ति को अपने समुदाय के धर्म का पालन करना चाहिए। और हमारे बड़े भाई, इसी धर्म के अवतार हैं। यह अर्जुन, धर्म के उस अवतार का निष्ठावान अनुयायी है। गंधर्वों को पराजित करके दुर्योधन को मुक्त कराने वाला यह विजया था, परन्तु उस अवसर पर भीम शत्रु के वध की संकीर्ण संतुष्टि में ही मग्न रहा, अपनी तुच्छता में ही आनंदित रहा! राजा का कर्तव्य है कि वह अपने पशुधन, हरे-भरे मैदानों में चरने वाली गायों की देखरेख करे और स्वयं उनका हिसाब रखे, उन पर राजचिह्न अंकित करे, देखे कि कितनी गायें दूध देती हैं और कितनी नहीं, कितने नर हैं और कितने मादा, कितनी मांसाहारी हैं और कितनी नहीं। यह कार्य वर्ष में एक बार किया जाता है, और जब राजा इस कार्य में लगा होता है, तो यह असामान्य नहीं, बल्कि स्वाभाविक है कि महल में आलस्य से ऊब चुकी रानियाँ और राजकुमारियाँ राजा के साथ शामिल हो जाती हैं। परन्तु क्या भीम का यह आरोप सही था कि..." दुर्योधन अपनी स्त्रियों को राजसी वैभव में जंगल में सिर्फ पांचाली के सामने दिखाने के लिए लाया था, जो फटे-पुराने वस्त्र पहने थी, ताकि वह अपने महल में पली-बढ़ी और घमंडी प्रवृत्ति का प्रदर्शन कर सके? शायद भीम के आरोप में कुछ सच्चाई थी। और यह दुर्योधन के स्वभाव के अनुरूप ही था। उसके खून में नमक नहीं, बल्कि ईर्ष्या भरी हुई थी। ठीक है। फिर

भी यह भीम की संकीर्ण मानसिकता को माफ नहीं करता। दुर्योधन और गंधर्वों के बीच शत्रुता शुरू कैसे हुई? क्या यह इस सवाल पर नहीं थी कि द्वैत वन कुरुओं का है या गंधर्वों का? यह इसी तरह की किसी ग्रीष्म ऋतु में हुआ था। क्या यह दो साल पहले की कोई ग्रीष्म ऋतु नहीं थी? क्या हम सभी द्वैत वन में इसलिए नहीं गए थे क्योंकि हिमालय की तलहटी में होने के कारण वहां गर्मी में ठंडक रहती थी? उसी जंगल में हस्तिनावती की गायें चरती थीं। दुर्योधन अपने दल के साथ वहां गया था। द्वैत वन की उत्तरी सीमा ठीक कहाँ है? कुरु भूमि? क्या द्वैतवन कुरुओं का है? स्वाभाविक रूप से, गंधर्वों ने ऐसे प्रश्न उठाए, 'यदि यह तुम्हारा नहीं है, तो तुम्हारे मवेशी वहाँ कैसे चर सकते हैं? दुर्योधन, यदि यह तुम्हारा नहीं है, तो तुम अपने घोड़ों और सारे राजसी साजो-सामान के साथ वहाँ क्यों गए?' दुर्योधन ने उस क्षेत्र पर अपना दावा करके उनकी स्थिति को चुनौती दी थी। द्वैतवन ऊबड़-खाबड़ इलाका है। यह हिमालय की शुरुआत है। और किसी ने भी स्पष्ट सीमा रेखा खींचकर इसका सीमांकन नहीं किया था। शायद दुर्योधन सही था। हाँ, अब मुझे भाई की बुद्धिमत्ता दिखाई दे रही है। हाँ, उसने सोचा होगा कि यदि कल हम युद्ध जीत जाते हैं और हस्तिनावती से शासन करना शुरू कर देते हैं, तो हम लाभप्रद स्थिति में होंगे। यदि हम अब इस क्षेत्र में गंधर्वों को हरा देते हैं, तो बाद में हम गंधर्व प्रमुख चित्रसेन को बुलाकर उसे समझा सकते हैं, 'देखो, पहले तुमने द्वैतवन पर अपना दावा ठोका था और उसे खो दिया। अब तुम अपनी सीमाओं में रहने की चेतावनी दी जाती है।'... जब अर्जुन यह सोच रहे थे कि भीम में इतनी सूक्ष्म दूरदर्शिता और राजनीतिज्ञता कैसे हो सकती है, तो उन्हें याद आया कि उस समय उन्हें भी यह बात समझ नहीं आई थी। अर्जुन ने सोचा, "खैर, यह विचार धर्म के मन में आया था और हमें इसकी उपयुक्तता पर संदेह हो सकता है। लेकिन यह दूसरी बात है। हम निश्चित रूप से जानते थे कि बड़े भाई हम सब में सबसे बुद्धिमान हैं। वे अपने नाम के अनुरूप ही धर्म के ज्ञाता हैं। उनके समान आर्य धर्म को जानने और समझने का दावा कोई नहीं कर सकता। वे हमारे महान पूर्वजों से संबंधित अनगिनत कथाएँ और किंवदंतियाँ जानते हैं। वे क्या नहीं जानते? इतने सारे ऋषि और उनकी उत्पत्ति, उनके अद्भुत जन्म, इतने सारे राजा और उनके द्वारा किए गए यज्ञों और अनुष्ठानों का विवरण, अनुष्ठानों की पूरी प्रक्रिया, उनके निष्पादन के लिए आवश्यक सामग्रियों की सूची, अनुष्ठानों में प्रयुक्त प्रासंगिक सूत्र, ब्राह्मणों को कितना दान देना है, अतिथियों के साथ कैसा व्यवहार करना है।" हमारे दादाजी ने

उन्हें इक्कीस या बाईस वर्ष की कम उम्र में ही सिंहासन पर बिठा दिया और धर्म को प्रशासनिक और न्यायिक जिम्मेदारियाँ सौंपीं। वे रीति-रिवाज और धर्म के अनुसार इन कर्तव्यों का निर्वाह करते थे और दादाजी भीष्म को प्रसन्न करते थे। आम जनता और बुजुर्गों ने उनके शासन की प्रशंसा करते हुए कहा कि उन्होंने अपने नाम 'धर्म' को सार्थक किया है। बाद में इंद्रप्रस्थ में भी उन्होंने यही प्रतिष्ठा अर्जित की। क्या उन्होंने ब्राह्मण कंकभट्ट के वेश में विराट के दरबार में पुरोहितों को रीति-रिवाजों और परंपराओं के मामलों में उचित सलाह नहीं दी थी? जब हम वनवास में थे, तो कितने ही साधु और ऋषि उनसे मिलने आए थे! और वे कितनी श्रद्धा से उनके चरणों में बैठकर उनकी ज्ञान और बुद्धि को सुनते थे! क्या धर्म के देवता भीम को हमारे इतने बड़े भाई को मूर्ख और बेवकूफ कहने पर श्राप नहीं देंगे? वे देवलोक के धर्माधिकारी के वीर्य से सीधे उत्पन्न हुए थे। धर्म का ज्ञान उनके रक्त में समाया हुआ है।" इस समय, अर्जुन की अपने बड़े भाई के प्रति भक्ति धर्म के प्रति मानसिक प्रणाम के रूप में प्रकट हुई। उन्होंने आगे चिंतन करते हुए कहा, "हमारे और हमारे पूर्वजों, देवताओं के रीति-रिवाजों में इतना अंतर क्यों होना चाहिए? लेकिन, निश्चित रूप से, दुर्योधन-गंधर्व कांड के संबंध में जो कुछ हुआ, उसकी मुझे कोई चिंता नहीं है। मुझे कभी भी दुर्योधन के पकड़े जाने का सही विवरण नहीं मिल पाया। उसके भागे हुए सैनिक आँसू बहाते और हाँफते हुए मेरे पास आए और बोले, 'वे उसे ले गए। वे हमारे राजा दुर्योधन को बाँधकर ले गए। और वे स्त्रियों को उनके ही वस्त्रों से बाँधकर उनकी पीठ पर लादकर ले गए।' मुझे आगे की कोई जानकारी नहीं मिली। बेशक, मुझे पता था कि वह वहाँ अपने पशुओं का निरीक्षण करने गया था और उसने उन चरागाहों पर अपना अधिकार जता दिया जहाँ वे चर रहे थे। मैं तुरंत दुर्योधन को बचाने गया और उसे छुड़ाकर वापस ले आया। वह इतना शर्मिंदा था कि एक पल भी नहीं रुका और बिना कुछ कहे चला गया।" मुझे दुर्योधन और गंधर्वों के बीच हुए युद्ध का विवरण कैसे मिलता? अगर मैं पूछता भी, तो क्या दुर्योधन मुझे बताता? वे गंधर्व पर्वतीय थे। वे बंदरों की तरह ऊँचाइयों पर चढ़-उतर सकते थे। चाहे कितनी भी बार कूदें, वे थकते नहीं थे। उनका शरीर कठोर था, जबकि मैदानी इलाकों का शासक दुर्योधन आरामदेह और सुखमय परिस्थितियों में पला-बढ़ा था। और उसके सैनिकों ने कभी पहाड़ों का अनुभव नहीं किया था। हार का नाटक करके गंधर्वों ने उन्हें पहाड़ों पर बुलाया होगा। जब वे दौड़ते-दौड़ते थक गए होंगे, तो गंधर्वों ने उन पर हमला करके उन्हें

बंदी बना लिया होगा। पीछे से पीछा करते हुए वे दुर्योधन के दल की कुछ महिलाओं को भी ले गए होंगे। इस प्रकार दुर्योधन का दल उनके पीछे पहाड़ों में चला गया होगा। जब दल थक गया होगा, तो उन्हें भी पकड़कर लताओं से बाँध दिया गया होगा। इन पर्वतीय लोगों की युद्ध शैली विरोधियों के लिए अचूक खतरा पैदा करती है। मैदानों में रहने वाले हम लोगों की तरह नहीं, जो रीति-रिवाजों और नियमों के साथ युद्ध करते हैं, रथों, हाथियों और घोड़ों से लैस सेनाओं को इकट्ठा करते हैं, आमने-सामने खड़े होते हैं, तुरही बजाकर और जोश भरे युद्ध गीत गाकर युद्ध की घोषणा करते हैं। नहीं, वे चट्टानों या पेड़ों के पीछे से हमला करते हैं, अपने आप को ऐसे रंगों से रंग लेते हैं जो वातावरण में घुलमिल जाते हैं। यहां तक कि उनके वस्त्र और हथियार भी ऐसे रंगे होते हैं कि वे अपने परिवेश से अलग न दिखें। अनुपस्थिति का भ्रम पैदा करते हुए वे अप्रत्याशित दिशाओं और अप्रत्याशित स्थानों से तेजी से तीर चलाते हैं। वे मैदानों में रहने वाले हम लोगों की तरह रथ, घोड़े या हाथी जैसे साधनों का उपयोग नहीं करते। पहाड़ों में वे अजेय हैं। और वे आसानी से नीचे आकर युद्ध नहीं करते। वे हमें आमने-सामने लड़ने का मौका बहुत कम देते हैं। संक्षेप में, युद्ध की कोई एक शैली नहीं है। व्यक्ति को बहुमुखी होना चाहिए और युद्ध की कई शैलियों में पारंगत होना चाहिए। अगर मैंने देवलोक में अपने पूर्वजों से पर्वतीय शिकारी जनजातियों की शैली पहले न सीखी होती, तो शायद मेरा भी वही हाल होता जो दुर्योधन का हुआ! क्या मैंने पहले मनलूर के उत्तर में गंधर्वों का पीछा करते हुए उन्हें उनके पर्वतीय निवास तक नहीं पहुँचाया था? लेकिन उस समय मुझे कोई गंधर्व पुरुष नहीं मिला। लेकिन गंधर्व बहुत वीर होते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में उनकी संख्या अधिक होती है। दुर्योधन के वे पराजित सैनिक धर्म के सामने रो रहे थे। और बड़े भाई ने कितनी जल्दी धर्म की बात समझ ली। उन्होंने पास खड़े भीम से कहा, 'तुमने सुना, भीम। तुरंत जाओ, उन और अन्य हतोत्साहित सैनिकों को इकट्ठा करो, उनका मनोबल बढ़ाओ और फिर चित्रासेना पर आक्रमण करके अपने भाई और उसकी स्त्रियों को बचाओ।' भीम इस पर ज़ोर से हँसा। उस हँसी में कितना तिरस्कार समाया हुआ था! और उसकी आवाज़ ने धर्म के चेहरे पर प्रहार करते हुए कहा, 'क्या तुम्हें पता है कि मुँह में उंगली डालने पर कैसे काटते हो?' उन्होंने आगे कहा, 'क्या यह संभव है कि तुम, जो वनवास की कठिनाइयों, जैसे भीषण ठंड, भीषण गर्मी और भुखमरी से कमज़ोर हो गए हो, दुर्योधन को मार सको? ऐसा लगता है कि धर्म की देवी ने स्वयं उन गंधर्वों का उपयोग दुर्योधन को

बंदी बनाने के लिए किया था।' और अब क्या आप चाहते हैं कि हम उसे रिहा करवा दें? आपने अपनी बुद्धि उस हाथ के हवाले कर दी है जो पासा फेंकता है, है ना?

धर्म ने सलाह दी, 'भीम, इस तरह मत बोलो। हम आपस में भले ही झगड़ें, लेकिन हम भाई हैं। जब बाहरी लोग हम में से किसी पर हमला करें, तो हम सबको एकजुट होकर भाइयों की तरह उन बाहरी लोगों के खिलाफ लड़ना चाहिए।'

भीम, 'क्या तुम्हें लगता है कि मैंने इस तोते की रट नहीं सुनी? अगर कोई दाढ़ी वाले साधु आस-पास हों, तो उन्हें अपनी लंबी-चौड़ी कहानियाँ और धार्मिक कथाएँ सुनाओ। जाओ और उन्हें बताओ।' मैं तुमसे पूछता हूँ, क्या ये शब्द दुर्योधन के सैनिकों के सामने बोलने लायक हैं? क्या वे बाद में अपने स्वामी को यह नहीं बता देंगे कि पांडवों में एकता नहीं है और वे अपने बड़े भाई का सम्मान नहीं करते, जो सिंहासन पर बैठा है? क्या उन्होंने वास्तव में दुर्योधन को यह बात नहीं बताई है?

"धर्म ने मेरी ओर मुड़कर कहा, 'अर्जुन, इस भीम को धर्म की बारीकियों का कोई ज्ञान नहीं है। क्या धर्म यह सहन करेगा यदि हम अपनी आर्य स्त्रियों, विशेष रूप से कुरु स्त्रियों को आंतरिक शत्रुता के कारण गैर-आर्यों द्वारा बहकाए जाने दें? क्या हमारे बड़े-बुजुर्ग हमें स्वीकार करेंगे?'"

धर्म की बुद्धिमत्ता और ज्ञान की प्रशंसा करनी चाहिए! मेरा रक्त तुरंत खौल उठा। मान लीजिए कि हमारी स्त्रियों को ले जाने वाले इन बाहरी लोगों ने अब तक उनके साथ कुछ हिंसा की हो... लेकिन तभी गंधर्वों के अपने अनुभव ने मुझे आश्वस्त किया। गंधर्व अपने रीति-रिवाज के अनुसार पुरुषों और स्त्रियों के बीच स्वतंत्र आवागमन की अनुमति देते हैं, इसलिए उनके पुरुषों में अन्य स्त्रियों के प्रति कोई विशेष लालसा नहीं होती और वे उनके साथ संयम बरतते हैं। उनके पुरुष अपनी स्त्रियों को आकर्षित करने के लिए फूलों, रंगों, बांसुरी, गीतों और नृत्य का प्रयोग करते हुए कड़ी मेहनत करते हैं! मान लीजिए कि इसी बीच उनके पुरुष हमारी कुरु स्त्रियों को किसी अज्ञात स्थान पर ले गए हों, उन्हें खोल दिया हो, स्वयं को फूलों से सजाया हो, स्त्रियों को भी फूलों से सजाया हो, खुद को रंगा हो, उनके चारों ओर मधुर गीत गाते हुए नृत्य किया हो और हमारी स्त्रियों को आकर्षित किया हो, उनके हृदय और मन को शांत किया हो, और गंधर्व स्त्रियाँ भी नृत्य और गीत में शामिल हो गई हों। मैंने स्थिति की गंभीरता को समझा और तुरंत मौके पर जाने का फैसला किया। अपने पूर्वजों की आत्मा को संतुष्ट करने के लिए आर्य, कुरु स्त्रियों

की पवित्रता की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है। अन्यथा कुरु वंश का यह अर्जुन स्वयं को नरक में पाता। सबसे भयानक नरक में।

"मैं लगभग भूल ही गया था कि पांचाली वहाँ थी, तभी उसने बीच में आकर कहा, 'भीम, तो तुम्हारे भाई के तर्क से यह स्पष्ट होता है कि जब भाइयों ने खुलेआम सभा में अपनी ही वंश की बहू को कामुक तरीके से आमंत्रित किया, तो हमारे वंश की प्रतिष्ठा और सम्मान कलंकित नहीं हुआ। खैर, अब इस बात को छोड़ो। जो अपमान मैंने सहा है, वह उनकी पत्नियों को न सहना पड़े। तुम जल्दी करो और मेरे ससुराल वालों को रिहा करवाओ। भीम, दुर्योधन और दुस्साना को स्वयं मारने की अपनी इच्छा पर अड़े मत रहो। यह काम गंधर्वों पर छोड़ दो और तुम स्त्रियों के साथ लौट आओ।"

तब बड़े भाई, जो शायद ही कभी अपनी आवाज उठाते थे, ने भावुक होकर कहा, 'अर्जुन, एक स्त्री की समझ इस स्तर से ऊपर नहीं उठ सकती। तुम जाओ और उन सबको छुड़ाकर वापस ले आओ।'

"खैर, मैं उन गंधर्वों से कहीं अधिक शक्तिशाली था जो उन गंधर्वों से भी कम ऊंचाई पर रह रहे थे जिनके साथ मैंने पहले हिमालय में चार वर्ष बिताए थे! देववंश के राजा ने मुझे विजय की उपाधि यूं ही नहीं दी थी! मनुष्य से भी ऊंचे धनुष से बेहतर बाण कौन चला सकता है? चट्टानों, पेड़ों और झाड़ियों के पीछे हल्की सी भी सरसराहट को सुनने की इतनी तीक्ष्णता किसके पास है? शायद बेचारे चित्रसेन ने सपने में भी नहीं सोचा होगा कि अर्जुन जैसा महायोद्धा उनसे मुकाबला करेगा! उन वनवासियों गंधर्वों को कैसे पता चलता कि बाणों की नोक कुल्हाड़ी की धार से भी तेज हो सकती है? उन जंगली पर्वतीय लोगों की तो बात ही छोड़िए, आर्यों के बीच भी, जिनके बाणों में मेरे बाणों के सिवा किसी भी पेड़ को चीरने की क्षमता नहीं होती? अंत में चित्रसेन ने क्या कहा, वही चित्रसेन जो बंधे हुए दुर्योधन और उसके साथियों के चारों ओर खुशी से नाच रहा था? उसने मुझसे पूछा, 'पांडव भाइयों में मंझले, तुम अपने शत्रु को छुड़ाने की मूर्खता क्यों कर रहे हो?'"

मैंने आर्यों के योग्य उत्तर देते हुए कहा, "जो कुछ हम आपस में करते हैं वह पूरी तरह हमारा निजी मामला है। जब दूसरे हमारे आंतरिक मामलों में दखल देते हैं, तो दुर्योधन स्वतः ही मेरा भाई बन जाता है।" इससे वह चुप हो गया। जब तक मैं दुर्योधन और दुस्साना को वापस ला पाता, भीम कुरु परिवार की बहुओं के साथ कतार में खड़ा हो चुका था। क्या उसने ऐसा इसलिए किया ताकि मुझे सही काम

करने का श्रेय और प्रसिद्धि न मिले? शायद वह केवल पांचाली के आदेशों का पालन कर रहा था! खैर, वह हमेशा एक स्त्री के शब्दों से प्रभावित हो जाता है। हाल ही में उसने अपनी पत्नी के शब्दों को अपने बड़े भाई के शब्दों से कहीं अधिक मूल्यवान मानना शुरू कर दिया है। ऐसा व्यक्ति धर्म कैसे प्राप्त कर सकता है और देवत्व कैसे पा सकता है?"

अर्जुन ने स्वयं को श्रेष्ठ समझा। उसे इस बात का गर्व था कि उसने कभी अपने बड़ों के विरुद्ध कोई शब्द नहीं कहा। कभी उनका अनादर नहीं किया। न केवल अपने भाई धर्म का, न केवल द्रोणाचार्य का, बल्कि अपने दादा कृपाचार्य, पिता धृतराष्ट्र और माता गांधारी का भी, क्योंकि बड़ों के आशीर्वाद के बिना संसार में कोई कुछ भी कैसे प्राप्त कर सकता है? तभी उसने अपना सिर उठाया। चंद्रमा रथ के ठीक ऊपर आ उठा था। धुंधले, राख जैसे आकाश में कहीं-कहीं एक-दो तारे टिमटिमा रहे थे। उसकी दृष्टि अचानक आकाश और तारों पर टिक गई। उसका मन आकाश के राख जैसे आवरण को भेदकर तारे के शाश्वत बिंदु तक पहुँच गया। यह एक ऐसी चमक थी जो कभी मिटती नहीं। प्रत्येक तारा, अपने शाश्वत स्थान पर स्थिर, तीनों लोकों के निवासियों को प्रकाशित और प्रकाश प्रदान करता है। वह बैठा रहा, उसका सिर आकाश की ओर उठा हुआ था और उसकी आँखें उसे निहार रही थीं। रथ डगमगा रहा था।

काफी समय बाद, अर्जुन आकाश की ओर अपना ध्यान हटाकर नीचे धरती पर आ गए! धरती खाली और बंजर लग रही थी। अचानक उनका मन ऊब और घृणा से भर गया। उन्होंने जम्हाई ली। लेकिन यह नींद की नहीं, ऊब की जम्हाई थी। उन्होंने तुष्ट की पीठ को टकटकी लगाकर देखा। उन्हें लगा कि तुष्ट सो नहीं रहे हैं। उन्होंने उन्हें "तुष्ट" कहकर पुकारा। तुष्ट ने तुरंत अपना सिर पीछे घुमाकर जवाब दिया। अर्जुन ने पूछा, "क्या यहाँ कोई पेय उपलब्ध है?" तुरंत कोई उत्तर नहीं मिला। थोड़ी देर बाद उन्होंने उत्तर दिया, "तुम्हारे जैसे लोगों के लिए उपयुक्त नहीं है। यह केवल चावल से बना है। यह बहुत खट्टा हो गया है। मुझे यकीन नहीं है कि उन्होंने इसे भी छोड़ा होगा।" अर्जुन ने कहा, "कोई बात नहीं। मुझे थोड़ा सा दे दो।" चलते हुए रथ से उतरकर वे ऊपर गए और दूसरे रथ से पेय से भरा एक घड़ा ले आए, घड़ा अर्जुन को सौंप दिया और फिर से लगाम पकड़कर अपने आसन पर बैठ गए, पाँचों लगाम। अर्जुन को वह अत्यधिक खट्टा पेय पसंद नहीं आया। लेकिन इस सुनसान रास्ते पर उनकी ऊब इतनी बढ़ गई थी कि यह घटिया पेय भी उन्हें

अच्छा लगा। वे धीरे-धीरे, लगभग अनिच्छा से, उसे पीने लगे और बीच-बीच में खट्टी डकारें लेते रहे। तुष्टा ने चुप्पी तोड़ते हुए पूछा, "महाराज, आपको विजय की उपाधि कैसे मिली?"

अर्जुन ने प्रतिक्रिया देने में देर की, और धीरे से बोला, "उपाधि, कौन सी उपाधि?" फिर उसने झटपट घड़ा खाली कर दिया। खट्टापन कम हो गया था। उसने घड़े को ढक दिया, अपने होंठ पोंछे, और तुष्टा के प्रश्न को याद करते हुए पूछा, "क्या आपने किसी उपाधि का जिक्र किया था?"

तुश्ता ने कहा, "खैर, यह पेय हम जैसे लोगों के लिए ही है। अगर आपको शीर्षक याद नहीं है, तो आप मुझे कल बता सकते हैं।"

अर्जुन ने कहा, "मूर्ख, तुझे पता ही नहीं कि मैंने हर जगह किस-किस तरह के पेय पिए हैं। तुझे क्या पता? सोम देवता ने भी आज तक ऐसा कोई नशीला पेय नहीं बनाया जो इस अर्जुन की बुद्धि या स्मृति को विचलित कर सके।" फिर वह अकड़कर बैठ गया और बोला, "क्या तुझे पता है कि मैंने बारह वर्ष वन में बिताए हैं?"

तुष्टा ने कहा, "हाँ, मुझे इसके बारे में सब पता है। आपने राजसूय अनुष्ठान किया, फिर जुआ खेला और फिर जंगल में चले गए।"

अर्जुन ने कहा, "हम जंगल में छह-सात साल बिता चुके थे। आप मेरे बड़े भाई धर्म को जानते हैं। वे बहुत बुद्धिमान और दूरदर्शी हैं। बहुत सोच-विचार करने के बाद उन्होंने मुझसे कहा, 'अर्जुन, भविष्य में होने वाले किसी भी युद्ध में हमारी जीत केवल धनुर्विद्या में तुम्हारी निपुणता और कौशल पर निर्भर करेगी। आज भी धनुर्विद्या में तुम्हारी बराबरी का कोई योद्धा नहीं है। फिर भी, अतिरिक्त साजो-सामान से अपने कौशल को और निखारना उचित होगा। तुम्हें विभिन्न समूहों से युद्ध की विभिन्न शैलियाँ और तकनीकें सीखनी चाहिए। पहले देवताओं के देश जाओ और वहाँ की धनुर्विद्या की कला और कौशल को आत्मसात करो।"

तुष्टा ने प्रभावित होकर पूछा, "महाराज, क्या आपने आकाश में उड़कर और सूर्य-चंद्रमा से परे जाकर देवताओं के उस अद्भुत लोक का दर्शन किया? किस महान तपस्या ने आपको यह उपलब्धि हासिल करने की शक्ति दी? इसे प्राप्त करने के लिए आपको कितने वर्षों की तपस्या करनी पड़ी?" लगभग सहज ही, उनके हाथ प्रार्थना में जुड़ गए।

अर्जुन ने कहा, "नहीं, देवताओं की वह भूमि नहीं। आप हिमालय के बारे में जानते हैं, वे पर्वत जहाँ से गंगा और यमुना जैसी पवित्र नदियाँ निकलती हैं और जहाँ से वे मैदानों में बहती हैं? यदि आप इन पर्वतों पर और ऊपर चढ़ेंगे, तो आपको एक जनजाति मिलेगी। उन्हें देव जनजाति के नाम से जाना जाता है। वे बहुत वीर योद्धा हैं। हम, पांडव भाई, सभी हिमालय के निचले क्षेत्रों में स्थित हरे-भरे मैदानों में पैदा हुए और पले-बढ़े हैं।"

क्या आप इसके बारे में जानते हैं? तभी हमारा उन देव जाति के लोगों से परिचय हुआ। वे अपने देश को देवभूमि कहते हैं। उनकी भूमि को देवभूमि कहा जाता है, ठीक वैसे ही जैसे हम नागों की भूमि को नागभूमि और गंधर्वों की भूमि को गंधर्वभूमि कहते हैं। वह कितनी अद्‌भुत भूमि है! जैसे-जैसे आप उस तक पहुँचने के लिए चढ़ते जाते हैं, आपके शरीर का हर अंग तीव्र पीड़ा से भर जाता है - आपकी जांघें, घुटने, पैर। दर्द से मांसपेशियां अकड़ जाती हैं। उस क्षेत्र में सूर्य की गर्मी नहीं होती, और गर्मी का वहाँ कोई स्थान नहीं है। वहाँ शराब कभी खट्टी नहीं होती। और पका हुआ भोजन लंबे समय तक रखे रहने पर भी सड़ता नहीं है। वह जम जाता है और सिकुड़ जाता है। पानी बर्फ की शिलाओं में बदल जाता है। वहाँ हम ग्रीष्म ऋतु की चिलचिलाती गर्मी से मुक्त रहते हैं। वह ऐसी ही भूमि है। जब हम इंद्रप्रस्थ में शासन कर रहे थे, तब हम उन्हें गधों पर अनाज लादकर अनाज पहुँचाते थे। यद्यपि उस भूमि से ही नीचे के सभी मैदानों को पानी मिलता है, फिर भी वहाँ खेती नहीं होती। गर्मी के मौसम में ही वे ढलानों पर कुछ जगहों पर खेती कर पाते हैं। बाकी समय उनका भोजन शिकार किए गए जानवरों और जंगली जड़ों व फलों से आता है। और वे कितने सुंदर और तंदुरुस्त हैं! वे इतने बलवान हैं कि हमारी तरह पसीना बहाकर भी उनकी ताकत कम नहीं होती। चार चोटियों पर चढ़कर उतरें, तब भी थकान नहीं होती। उनकी ताकत इतनी अच्छी तरह से संरक्षित रहती है...

तुष्टा ने अपनी स्थिति बदलकर अर्जुन की ओर मुख कर लिया और पूरी तरह सिर हिलाकर उनकी बात से सहमत हुआ। अर्जुन को उनका प्रशंसात्मक इशारा स्पष्ट रूप से दिखाई दिया। इससे उन्हें अपनी आवाज़ बुलंद करने और आगे बोलने का हौसला मिला, "खैर, वे हमें जानते हैं। इसके अलावा, हमारे पिता पांडु ने नियोग विधि से हमें पाँच भाई दिए। देवों ने ही हमारी माताओं पर नियोग विधि की थी। हमें इस रिश्ते से उत्पन्न लगाव और स्नेह का लाभ भी मिला। जब मैं वहाँ गया, तो ठंड

से काँपते हुए, भेड़ की खाल से बने वस्त्र से खुद को ढँककर, ऊनी कंबल से अपने सिर और शरीर को बचाते हुए, यहाँ नीचे गर्मी का सूरज बेरहमी से जल रहा था। आम तौर पर वे बाहरी लोगों का स्वागत नहीं करते। यदि कोई अजनबी बिना परिचय के उनके देश में प्रवेश करे, तो वह निश्चित रूप से चट्टानों या पेड़ों के पीछे से उड़ते हुए तीरों से छलनी हो जाएगा।"

तुष्टा, "तो फिर तुमने कैसे काम चलाया?"

अर्जुन ने कहा, "उस देश में किसी भी तरफ से प्रवेश का कोई रास्ता नहीं है। कुछ पहाड़ी दर्रे हैं जिनसे होकर ही वहां जाया जा सकता है। इन रास्तों की सुरक्षा में पहरा रहता है। मुझे यह सब पता था।"

इसलिए, मैंने पहाड़ पर चढ़ते समय सबसे पहले जोर-जोर से चिल्लाकर अपनी पहचान बताई। बाद में वहां तैनात पहरेदारों ने मुझे पहचान लिया और मेरे साथ चलने लगे।

तुश्ता, "क्या उन्होंने तुम्हें तीरंदाजी सिखाई?"

तुष्टा ने कहा, "ओह, तुम्हें पता है कि वे विशेष समूहों या कुलों में संगठित हैं। हर कुल का अपना विशिष्ट शस्त्र और युद्ध शैली होती है। विभिन्न कुलों के सरदारों ने स्वयं मुझे युद्ध कला सिखाई। वायु, अग्नि, वासु, वरुण, मरुत, साध्य, निरृति, स्वयं और अन्य कई लोगों ने मुझे प्रशिक्षण दिया। उनके धनुष यहाँ मैदानों में हमारे धनुषों जितने बड़े नहीं हैं। वैसे भी, उनमें से किसी के पास भी मेरे धनुष जितना बड़ा धनुष नहीं था। फिर भी, निशाना साधने और कार्रवाई की फुर्ती में हम उनके कौशल और विशेषज्ञता से वंचित हैं। एक धनुष से वे एक साथ कई लक्ष्यों पर कई तीर चला सकते हैं। तीर हमेशा सीधा जाता है। लेकिन शायद तुम्हें विश्वास न हो, लेकिन उनमें तीर को टेढ़ा-मेढ़ा चलाकर लक्ष्य को नष्ट करने का कौशल भी है। क्या यह पहाड़ी इलाका नहीं है? अगर वे बड़े-बड़े पत्थरों के पीछे से ऐसे तीर चलाते हैं, तो वह निश्चित रूप से छिपे हुए दुश्मन को लग जाएगा। ये विशेष तीर हैं, विशेष आकार के और इनका वजन इनकी लंबाई के साथ विशेष रूप से वितरित होता है। मैंने यह सब सीखा। साथ ही कुछ नई तकनीकें भी। उन्होंने मुझे सब कुछ सिखाया, कुछ भी नहीं छिपाया। मैंने उनके साथ चार साल बिताए और एक नौसिखिए की तरह नए कौशल सीखे और नई विधियों में महारत हासिल की। उन्होंने तो मेरी बहुत प्रशंसा करते हुए यह भी कहा कि मैंने उनके कौशल में उनसे

भी बेहतर महारत हासिल कर ली है! तुष्टा, अगर अब युद्ध छिड़ जाए, तो मैं दुनिया को दिखाऊंगा कि विजया तीरंदाजी में कितना महान उस्ताद है!

तुष्टा ने उत्सुकता से पूछा, "क्या आप एक तीर चलाकर अपनी कुशलता का प्रदर्शन कर सकते हैं?"

अर्जुन ने रथ से बाहर देखा। उन्होंने अपना एक धनुष उठाया, उसे सही स्थिति में रखा, अपने शस्त्रागार से एक विशेष आकार का बाण निकाला और उसे बाईं ओर चलाया। फिर उन्होंने तुष्ट से कहा, "रथ रोक दो। क्या तुम अपने सामने उस चौड़े पत्थर को देख रहे हो? उसके पीछे एक पेड़ दिखाई दे रहा है। क्या तुम उसे देख पा रहे हो?"

तुष्टा को देखने के लिए अपनी आँखों को बहुत केंद्रित करना पड़ा, और उसने कहा, "हाँ, हाँ।"

अर्जुन ने कहा, "अब जाओ और देखो कि मेरा बाण उसकी सूंड के निचले हिस्से में फंसा हुआ है। उसे वापस ले आओ।"

धुंधली चाँदनी थी। रथ दौड़ रहा था। दूर एक बड़ा पत्थर और उसके पीछे एक पेड़ दिखाई दे रहा था। तुष्ट ने आगे चल रहे रथ चालकों को अपने रथ रोकने के लिए पुकारा। पीछे वाले रथ चालक स्वयं ही रुक गए। रथ से उतरकर तुष्ट, दो अन्य लोगों के साथ, उस अदृश्य पत्थर के पीछे गए। उन्होंने देखा कि तीर पेड़ के दाहिनी ओर से गुजर रहा था और उसके तने में धंस गया था। इस खोज ने तुष्ट के मन में पहले आश्चर्य, फिर भय और अंत में भक्ति का भाव उत्पन्न किया। उन्होंने शाखा से तीर निकाला और उसे वापस अपने पास रखते हुए उनके हाथ भय और भक्ति से कांप रहे थे। रथों की कतार चलने लगी। अर्जुन ने कहा, "मैंने न केवल कौशल सीखा, बल्कि इस विशाल धनुष से अभ्यास भी किया। अपने प्रयोगों से मैंने इस धनुष के अनुरूप बाण तैयार किए। मुझे नए लक्ष्यीकरण बल और गति की आवश्यकता थी, जो मूल बाणों से तीन गुना अधिक हो। भला ऐसे बाणों का सामना कौन कर सकता है? एक दिन, देवों के राजा इंद्र ने मुझे बुलवाया और कहा, 'पुत्र, हमारे पश्चिमी क्षेत्र में एक विशिष्ट जनसमूह रहता है। तुम जानते हो कि हम नीचे मैदानों में रहने वाले लोगों से व्यापार करते हैं, उन्हें अपने ऊनी कंबल देकर उनके अनाज, तांबा, घी आदि का आदान-प्रदान करते हैं। हम यह व्यापार ग्रीष्म ऋतु में करते हैं, और ये लोग रास्ते में हमें लूट लेते हैं। ऐसा लगता है कि उनकी आजीविका इसी लूटपाट पर निर्भर है। लेकिन वे भी हमारी तरह कंबल बनाते हैं

और उन्हें मैदानों में रहने वाले लोगों को बेचते हैं। बेशक, हमारे कंबल गुणवत्ता में उनसे श्रेष्ठ हैं। देखो, हमारी बकरियां और भेड़ें श्रेष्ठ नस्ल की हैं।'" मैदानों में रहने वाले लोग हमारे कंबलों के दीवाने हैं और हम उनके बदले जो भी राशन मांगते हैं, वे देने को तैयार रहते हैं। उस लुटेरे गिरोह को निवातकवाका कहते हैं। अगर तुम उन्हें वश में कर लो, तो यही तुम्हारे द्वारा सिखाए गए कौशलों का इनाम होगा।' इससे पहले देवताओं ने इस गिरोह से निपटने के कई प्रयास किए होंगे, लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। मैंने ठान लिया कि मैं वह हासिल करूंगा जो वे हासिल नहीं कर पाए थे।

तुष्टा ने पूछा, "हे भगवान अर्जुन, आपने यह कैसे किया?" अर्जुन की ओर मुख करके, उसने प्रार्थना की मुद्रा में अपने हाथ जोड़ रखे थे।

अर्जुन ने कहा, "उस सर्दी से कुछ समय पहले, मैंने कुछ देव योद्धाओं की सहायता से उन लोगों के क्षेत्र का सर्वेक्षण किया। मैंने उनके गाँव की भौगोलिक स्थिति और विशेषताओं तथा उनके निवास स्थान में आने-जाने के रास्तों का अध्ययन किया। वे एक अत्यंत दुर्गम भूभाग में रहते हैं। फिर मैंने देवों से कहा कि वे गधों और बकरियों के साथ, अपनी पीठ पर कंबल लादकर, उस रास्ते से जाएँ। तब ये लोग देवों के दल पर लूटपाट करने के लिए टूट पड़े। पूर्व योजना के अनुसार, हम उनके स्थान पर गए, उनके गाँवों और घरों को जला दिया। फिर हमने उस संकरे रास्ते में उनका इंतज़ार किया जिससे होकर उन्हें अपने गाँव जाना था। एक ऊँची जगह से देवों के एक छोटे से दल ने लूट का माल लेकर लौट रहे दल पर गोलीबारी शुरू कर दी। नीचे से हमने भी उन पर हमला किया। इस प्रकार हम लूटपाट करने वाले दल के सभी सदस्यों को मार गिराने में सफल रहे। सच कहूँ तो, मुझे इस अभियान पर वास्तव में गर्व नहीं है, और इसके लिए किसी वास्तविक वीरता की आवश्यकता नहीं थी। वे वास्तव में इतने अजेय नहीं थे। बार-बार हार के कारण देवों में उनके प्रति भय का भाव विकसित हो गया था। बेशक, यह समझ में आता है कि उनके बर्फीली ऊँचाइयों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाली शक्ति और साहस, मैदानों में उतरते ही उनका साथ छोड़ते हुए प्रतीत हुए। लेकिन अब इंद्र का राजा के रूप में पद खतरे में था, क्योंकि लूटपाट करने वाले गिरोह को वश में करने में किसी भी विफलता के कारण उनका सिंहासन त्याग दिया जाता। यह देवों की परंपरा थी। मैंने इंद्र को अपना सिंहासन बनाए रखने में

मदद की थी। उन्होंने मुझे विधिपूर्वक अपने सिंहासन पर बैठाया और सार्वजनिक रूप से मुझे विजया की उपाधि देकर सम्मानित किया।

तुष्टा अर्जुन के प्रति श्रद्धा भाव से मौन रहा। उसे आशा थी कि अर्जुन अपने कुछ अन्य कारनामों और वीरतापूर्ण अनुभवों के बारे में बताएगा। पर उसे यह नहीं सूझ रहा था कि वह उससे यह कैसे पूछे। फिर वह एक बार फिर अपने घोड़ों की ओर मुड़ गया। परन्तु अर्जुन के विचार अभी भी देवलोक से नहीं हटे थे। "यद्यपि मैंने उनके साथ चार वर्ष बिताए थे, मेरी रुचि मुख्य रूप से युद्ध कौशल में थी, और युद्ध कला के पाठों के बीच के संक्षिप्त अंतरालों में, मैंने उनके नृत्यों को सीखने का प्रयास किया था। अर्जुन नाम एकाग्रता का पर्याय था। वे भी एकाग्रता में सक्षम थे। यद्यपि उनके पुरुष और महिलाएं बिना किसी बाहरी प्रतिबंध के स्वतंत्र रूप से घूम-फिर सकते थे, फिर भी वे मुझे एक बाहरी व्यक्ति की तरह मानते थे। शायद वे मुझे इसलिए नीचा समझते थे क्योंकि मैं वहाँ एक नौसिखिए के रूप में उनकी धनुर्विद्या सीख रहा था। लेकिन जब मैंने वह उपलब्धि हासिल कर ली जो उनके इंद्र और सेनापति नहीं कर पाए थे और उनके अपने राजा ने मुझे अपने सिंहासन पर बैठाकर और विजय की उपाधि देकर मुझे अपने बराबर का दर्जा दिया, तो उन्होंने मुझे अपने समुदाय का सदस्य मान लिया। और विजय स्वयं इंद्र की उपाधियों में से एक मानी जाती है, और उनमें से कोई भी इसके योग्य नहीं था। उन्होंने कितना शानदार विजयोत्सव आयोजित किया था! और उस अवसर पर कितना आनंददायक पेय बह रहा था! और मेरे चारों ओर अत्यंत सुंदर स्त्रियाँ नृत्य कर रही थीं, जो सामान्यतः उनके सरदारों के लिए आरक्षित होती थीं। और उनके नाम - घृतची, मेनके, राम्भे, पूर्वचित्ति, स्वयंप्रभा, उर्वशी, मिश्राकेशी, दंडगौरी, वरौथिनी, गोपाली, सहजन्या, कुंभयोनि, प्रजागड़ा, चित्रसेने, चित्रलेखे, सहा और मधुरस्वरा— ये सभी इंद्र के प्रत्यक्ष और व्यक्तिगत नियंत्रण में मनोरंजन करने वाली महिलाएं थीं। यदि किसी कुल का मुखिया कोई सराहनीय कार्य करता था, तो उसे इंद्र की इच्छा अनुसार एक दिन या एक महीने के लिए इनमें से किसी एक महिला का साथ मिलता था। देवताओं की त्वचा अत्यंत श्वेत थी, और ये उनकी चुनी हुई महिलाएं थीं जिन्हें इंद्र के लिए रखा गया था। वे बकरी पालन, कंबल बुनना, सर्दियों में यात्रा के दौरान तंबू ढोना और बच्चों की परवरिश जैसे नियमित कार्यों से मुक्त थीं। उनके एकमात्र कर्तव्य नृत्य, पान और यौन सुख थे। वे अत्यंत कुशल वेश्याएं थीं। जिस रात मुझे यह उपाधि दी गई, वह एक साफ रात थी, सर्दियों के बाद की उन रातों में

से एक। साफ आकाश में चंद्रमा कोमल और चमकीला तैर रहा था। लेकिन चांदनी में चमकती बर्फ की चोटियां स्वयं चंद्रमा से अधिक आकर्षक लग रही थीं। फिर भी, यह तब था जब चंद्रमा, जिसने प्रकाशमान किया स्वप्नों में डूबे हुए और आसपास के वातावरण को पवित्र करते हुए, बर्फ पर दिव्य सोम मादक द्रव्य छिड़कते हुए, चित्रसेना मेरे पास आए और बोले, 'विजय, तुम्हारा एक और पुरस्कार प्रतीक्षा कर रहा है, कृपया मेरे पीछे आओ।' मैं उनके पीछे चल पड़ा। इंद्र के महल के सामने पत्थर से बना एक भव्य महल था। जब मैं उसमें प्रवेश किया, तो मुझे उर्वशी मिली। चित्रसेना ने समझाया, 'क्या आज दोपहर तुमने उस पर अपनी वासना भरी दृष्टि नहीं डाली थी? खैर, इंद्र ने उसे तुम्हें दे दिया है। तुम जब तक चाहो उसे अपने पास रख सकते हो। तुम उसे अपने देश भी ले जा सकते हो।' फिर उन्होंने दरवाजा बंद कर दिया और हम दोनों को अकेला छोड़ दिया। उसके मनमोहक चेहरे पर कितना गर्व और नज़ाकत थी! उस धुंधली रोशनी में भी, उसका शरीर बर्फ की तरह सफेद और चमकदार था। हमें गर्म रखने के लिए आग जल रही थी, एक सफेद ऊनी कंबल और पंख जैसा मुलायम गद्दा था।

उर्वशी ने कहा, "विजया, क्या तुम्हें हमारी धरती पर कदम रखे साढ़े चार साल नहीं हो गए? तुम ऐसे रहते थे मानो यहाँ धनुष-बाण के सिवा कुछ हो ही नहीं। क्या तुम्हें लगता है कि सिर्फ इन्हीं को समर्पित जीवन जीना सार्थक है?"

"उसका अंदाज़ ऐसा था जो आपकी आंतरिक शक्ति और आत्मविश्वास का मज़ाक उड़ा सकता था और आपको शर्मिंदा कर सकता था। उसने आगे कहा, 'क्या तुम मेरी बात नहीं समझ रहे? तुम हमारे साथ नाच सीखने नहीं आए थे। तुमने पुरुषों से बेतरतीब ढंग से नाच सीखना पसंद किया। तुम वाद्य यंत्र बजाते थे। कभी समूह में शराब नहीं पीते थे। कभी हमारी संगति में गाना नहीं गाते थे। कभी हमारे साथ वाद्य यंत्र नहीं बजाते थे। क्या तुम्हें लगता है कि जीवन का एकमात्र उद्देश्य तीर चलाना और उसकी आवाज़ सुनना है?'"

—•✳•—

"इस सवाल पर मेरी प्रतिक्रिया कैसी थी? डर? क्या मैं महिलाओं के साथ अनुभवहीन पुरुष था? मैंने पिछले दस साल निर्वासन में बिताए थे और यौन संबंध

से परहेज किया था। अब मैं अड़तालीस साल का था। दस साल का उपवास। और मेरे बगल में एक गोरी, बेहद आकर्षक युवती बैठी थी, जो यौन सुख की कला में माहिर थी। उसकी उम्र कितनी थी? तीस से थोड़ी कम। जब वह मेरे इतने करीब थी, अपनी बातों में हंसी-मजाक और उत्तेजना भर रही थी, तो मैं बेचैन महसूस कर रहा था। यह एक ऐसी बेचैनी थी जिसका कारण मैं समझ नहीं पा रहा था।"

उर्वशी बोली, "विजय, तुम्हारे जैसे एकाग्रचित्त पुरुष के पीछे कौन सी स्त्री नहीं भागेगी! और हम जैसी वरांगनाएँ तो तुम पर दीवानी हो जाती हैं। तुम्हारा चेहरा और शरीर कितना मोहक है! मैं अब स्वीकार करती हूँ कि मैं तुम्हारे शरीर के लिए भीतरी तौर पर तड़प रही थी, तुम्हारी अनुपस्थिति में मुझे खालीपन महसूस हो रहा था। लेकिन हम आधिकारिक तौर पर इंद्र के दरबार की हैं। हम अपने साथी और सहचर नहीं चुन सकतीं। मैं सौभाग्यशाली हूँ कि आज स्वयं इंद्र ने मुझे तुम्हारा साथ दिया है। एक रात के लिए कोशिश करो। यदि तुम मुझे अपने योग्य पाओ, तो इंद्र से मुझे तुम्हें सौंपने का अनुरोध करना, मैं तुम्हारे साथ तुम्हारे लोक में आ जाऊँगी। लगता है तुम पृथ्वीवासी संतानों के बहुत शौकीन हो। मैं तुम्हें तुम्हारी इच्छा अनुसार संतानें दूँगी।"

ये शब्द सुनने में बहुत मधुर थे। भला ऐसी मोहक बातें करने वाली स्त्री की संगति में किसी पुरुष का पुरुषत्व कैसे उत्तेजित नहीं हो सकता? क्या वह सचमुच मुझसे प्रेम करती थी या केवल अपनी दरबारी कला और आकर्षण का प्रदर्शन कर रही थी? अगर यह कला ही थी, तो भी उसके शब्द सचमुच मदहोश कर देने वाले थे।

उसने आगे कहा, "हे सुंदर, पहले यह तरल पियो। इसके बाद तुम इस देवलोक के वास्तविक आनंद में प्रवेश करने के लिए तैयार हो जाओगे।"

वह कामुकता से इतनी करीब थी। वह ऐसी लग रही थी मानो किसी स्त्री को साफ आसमान में चमकते चांद से तराशकर बनाया गया हो। ऐसा लगता है कि देवलोक में सबसे सुंदर और कुशल वेश्या को उर्वशी का दर्जा और उपाधि दी जाती है। और इंद्र ने मुझे ऐसी ही एक स्त्री भेजी थी। और वह अद्‌भुत पेय जो उसने मुझे दिया! वह किस पौधे से निकाला गया है? क्या इसका मतलब यह है कि इंद्रप्रस्थ में हमारा पेय शुद्ध सोम रस से नहीं बनता? देवलोक में भी, अपने चार साल के प्रवास में, मैंने ऐसा पेय नहीं चखा था, जिसमें जरा भी खटास न हो और फिर भी इतना तीव्र स्फूर्तिदायक हो। क्या यह विशेष पेय इंद्र और उनके सबसे

करीबी साथियों के लिए ही था? इसे पीकर ऐसा लगता है मानो चांद तुम्हारे पास उतर आया हो। इससे शरीर में गर्माहट आती है और हल्का पसीना आता है। और उसका आलिंगन मेरे शरीर को और भी अधिक उत्तेजित कर देता था। उसने मुझसे पूछा, 'विजया, तुम अपने आप में क्यों सिमट रहे हो? मानो तपस्या कर रहे हो। जब तक हम दोनों उत्तेजित नहीं होंगे, तब तक कैसे हो सकता है?' असली ख़ुशी?'

दोपहर की सुहावनी गर्मी में इंद्र ने अपना दरबार लगाया। दरबार में देवों की आबादी को विभाजित करने वाले सभी तैंतीस कुलों के प्रमुख उपस्थित थे। उनके अलावा भी कई अन्य लोग थे। दरबार में नृत्य, गायन और दरबारी महिलाओं द्वारा वाद्य यंत्रों का वादन हो रहा था। नृत्य में उर्वशी सबसे उत्कृष्ट कलाकार के रूप में उभरीं। उनके शरीर की हर मुद्रा उनकी सुंदरता की एक विशिष्ट विशेषता को प्रकट कर रही थी। मैं उन्हें मंत्रमुग्ध होकर देख रहा था, यह सचमुच सच है। अंत में इंद्र ने भाषण दिया। उन्होंने कहा, 'कुलों के प्रमुखों, याद रखें कि यह महान योद्धा, जिसने हमारे सबसे बड़े शत्रु, निवातकवकों को सफलतापूर्वक पराजित किया, केवल हमारा शिष्य नहीं है जो हमसे सीखने आया है। वास्तव में, वह मेरा पुत्र है, अर्थात् इंद्र का पुत्र। वह मेरे पूर्ववर्ती इंद्र से उत्पन्न हुआ था। आप देख सकते हैं कि उसकी शक्ल-सूरत और कद-काठी मेरे पूर्ववर्ती इंद्र की याद दिलाती है। इसलिए, उसके प्रति अपने पितृ प्रेम के प्रतीक के रूप में, मैं उसके सिर को सूंघता हूँ, उसे अपने सिंहासन पर बिठाता हूँ, और फिर उसे विजय की उपाधि प्रदान करता हूँ।' सभा की स्वीकृति के बाद, 'ऐसा ही हो', ये शब्द बर्फ से ढके पहाड़ों में बार-बार गूंजते रहे।

उर्वशी ने कहा, "विजया, मैंने गहन तपस्या में बैठे लोगों में भी कामेच्छा जगाने में सफलता पाई है, और वृद्धावस्था से पीड़ित लोगों में भी यौन इच्छा को जागृत करने में सक्षम रही हूँ। तुम मेरे प्रति उदासीन होने का बहाना बनाकर मुझे धोखा नहीं दे सकते। यह बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं है।"

जैसे ही मैं देवलोक पहुँचा, इंद्र ने मुझे पुत्र के रूप में स्वीकार कर लिया, जब उन्होंने मुझे उन्हें पिता कहने की अनुमति दी। लेकिन उस दोपहर उन्होंने मेरे सिर को सूंघकर औपचारिक रूप से इसकी घोषणा की। देवलोक जाने से पहले, धर्म ने सुझाव दिया था, 'अर्जुन, देवलोक पहुँचने के बाद, हमारे नियोग माता-पिता, जिन्होंने हमें जन्म दिया है, के दर्शन करो, उन्हें प्रणाम करो और उनका आशीर्वाद प्राप्त करो। मेरे जन्म के धर्माधिकारी यम के नाम से जाने जाते हैं। भीम के जन्म के

लिए जिम्मेदार धर्माधिकारी मरुत कहलाते हैं। तुम्हारे जन्म के लिए जिम्मेदार धर्माधिकारी इंद्र कहलाते हैं। नकुल और सहदेव के जन्म के लिए जिम्मेदार जुड़वां देव चिकित्सक अश्विनी कहलाते हैं। वे सभी तुम्हारे पिता के समान हैं। जब तुम उनसे मिलो, तो उनमें से प्रत्येक को विशेष रूप से उनके द्वारा उत्पन्न पुत्र का उल्लेख करना। लेकिन उनके चरणों में प्रणाम करना मत भूलना।'

"चाँद नीचे उतरकर मन में छा गया और फिर ऊपर चढ़ गया। यह एक सुखद, कोमल पसीना था। यह एक खामोशी थी जो कीड़ों की भिनभिनाहट से और भी गहरी हो गई थी। उसने कहा, 'विजया, तुम मुझसे इतनी घृणा क्यों करते हो? मैं तुम्हें क्यों घृणा करती हूँ? मैं यहाँ केवल इसलिए नहीं आई हूँ क्योंकि मैं तार्किक रूप से उसके आदेशों का पालन करने के लिए बाध्य हूँ। क्या तुम्हारा शरीर उन ज्वालाओं को महसूस नहीं करता जो मेरे शरीर को भस्म कर रही हैं? जब मैं उन ज्वालाओं के बीच हूँ जो सभी बर्फीली चोटियों को पिघला सकती हैं, तो तुम वहाँ स्थिर, बर्फीली चोटी की तरह जमे हुए क्यों बैठे हो?'"

उर्वशी ने आगे कहा, 'अर्जुन, तुम एक महान धनुर्धर हो, ठीक है। लेकिन तुम एक नपुंसक भी हो। अगर तुमने शुरू में ही बता दिया होता कि तुम नपुंसक हो, तो मुझे तुम्हारे शरीर की चाहत ही नहीं होती। तब मुझे इस अपूर्णता के सारे दर्द से मुक्ति मिल जाती। संयोगवश तुम्हारा बाहरी रूप पुरुष जैसा है। लो, इसे अपने असली स्वरूप को छुपाने का बहाना समझो...' उसने मेरे बाएं गाल पर ज़ोर से थप्पड़ मारा, जो दर्द से सूज गया। तभी चंद्रमा बादल के पीछे छिप गया। यह अर्जुन के जीवन का सबसे बड़ा अपमान था। उर्वशी क्रोधित होकर चिल्लाई, 'तुम जानते हो कि देवलोक में हर कोई मेरे चरणों को छूने के लिए भी तरसता है। जब मैं स्वयं वासना से ओतप्रोत होकर तुम्हें गले लगा रही थी, तब तुमने थोड़ी सी भी प्रतिक्रिया न देकर मेरा अपमान किया है। मैं इंद्र को इसकी सूचना दूंगी और तुम्हें दंडित करवाऊंगी।' जैसे ही वह खड़ी हुई, मैं कुछ कहना चाहता था, पर शब्द मेरे गले में अटक गए। 'मैं आपके चरणों को स्पर्श करूंगा।' वह इतनी तेज़ी से बाहर निकल गई! एक पुरुष के लिए, नपुंसकता का आरोप लगना, और वो भी एक स्त्री द्वारा, इससे बड़ा अपमान क्या हो सकता है? ये विचार मेरे मन में घूम रहे थे। लेकिन मेरा शरीर अकड़ क्यों गया और प्रतिक्रिया देने से इनकार क्यों कर दिया? क्या अर्जुन की यौन शक्ति समाप्त हो गई थी? नहीं, जब उसने मेरे गाल पर थप्पड़ मारा तो मुझे गुस्सा नहीं आया। लेकिन उसके जाने के बाद मैं क्यों रोया? अगर शरीर

उन्माद में झूम रहा होता और मन उसे नियंत्रित कर रहा होता तो यह अधिक स्वाभाविक होता। लेकिन इस मामले में, मन ने ही शरीर की भूमिका निभा ली, उसी के अनुसार व्यवहार किया और शरीर को अपमानजनक स्थिति में धकेल दिया। जब तक मैं इस अपमान से उबर पाता, उर्वशी स्वयं इंद्र को वहाँ ले आई थी। इंद्र के दरबार की ये वेश्याएँ कितनी शक्तिशाली हैं!

इंद्र ने कहा, 'अर्जुन, तुम विजय की उपाधि धारण करने वाले महान योद्धा हो। यदि तुम नपुंसक हो, तो पूर्ण एकाग्रचित्त होकर हमारी उर्वशी के समक्ष आत्मसमर्पण कर दो। वह एक वैद्य हैं जो तुम्हारी नपुंसकता दूर कर तुम्हारी यौन इच्छा को चरम सीमा तक प्रज्वलित कर सकती हैं। यदि तुम ऐसा करने से इनकार करते हो, तो यह उनका अपमान होगा। तुम्हारा पद चाहे कितना भी ऊंचा क्यों न हो, हमारे देवलोक में किसी को भी उस स्त्री को ठुकराने और अपमानित करने का अधिकार नहीं है जो उसे चाहती है। इसके अतिरिक्त, यह स्त्री दरबारी नर्तकी है। उसका अपमान दरबार का अपमान है, और इसका अर्थ है मेरा अपमान। क्योंकि मैंने तुम्हें उसे वासना भरी निगाहों से देखते हुए देखा, इसलिए मैंने उसे तुम्हारे पास भेजा है।'

मैं इंद्र को क्या जवाब दे सकता था? उसके आलिंगन और उत्तेजक स्पर्श के बावजूद, मेरा शरीर लकड़ी के टुकड़े की तरह अकड़ गया था, और इस अकड़न की अनुभूति ने शरीर को और भी कठोर बना दिया! शरीर का व्यवहार कितना विचित्र हो सकता है! या शायद मेरे जीवन की यौन शक्ति समाप्त हो गई थी? जब मैं स्वयं इस स्थिति को लेकर स्पष्ट नहीं था, तो मैं उसे क्या जवाब और स्पष्टीकरण दे सकता था?

मैंने कहा, 'हे पिता, मैंने जो भी गलती की हो, उसके लिए मुझे दंड दीजिए, चाहे दंड कितना भी कठोर क्यों न हो। मुझे ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि मेरे किसी भी पुरुष उत्तराधिकारी पर नपुंसक होने का आरोप न लगे। उन्हें ऐसी अपमानजनक और क्रूर निंदा का सामना न करना पड़े। मैं ही वह था जो सीमित समय के लिए भी ब्रह्मचर्य का पालन न कर पाने के कारण स्त्री-पुरुषों की तलाश में देश भर में भटकता रहा। अचानक मुझे याद आया कि मैंने उसे अपने साथ क्यों नहीं लिया, इसका कारण धर्म से जुड़ा एक प्रश्न है।'

इंद्रा, 'बोलिए। समझाइए।'

'तुम ही मेरे पिता हो जिसने मुझे जन्म दिया। तुमने स्वयं ही खुले दरबार में मेरा सिर सूंघकर हमारे बीच इस रिश्ते की घोषणा की थी। वह तुम्हारी भोग-विलास की वस्तु है। उसके शरीर का आनंद लेने का अधिकार रखने वालों में कुल के मुखिया भी शामिल हैं, जो मेरे भाइयों के पिता हैं। इसका अर्थ है कि वे भी मेरे पिता हैं। खैर, अगर यह सब सच है, तो क्या उर्वशी मेरे लिए माँ का दर्जा नहीं रखती?'

उर्वशी जोर से हंसते हुए बोली, 'इंद्र, क्या तुम उससे कम से कम दस साल छोटे नहीं हो? तुमने उसे कैसे जन्म दिया होगा? यह असंभव है!'

लेकिन इंद्र हँसे नहीं। उन्होंने शांत स्वर में कहा, 'जिस इंद्र ने तुम्हें जन्म दिया, वह मुझसे पहले का एक इंद्र था। और उसकी मृत्यु को इतने वर्ष बीत चुके हैं! उस इंद्र ने तो उसका चेहरा भी नहीं देखा था।'

तो फिर तुमने मेरे सिर को क्यों सूंघा और मुझे अपना बेटा क्यों कहा?

इंद्र ने आगे कहा, 'मेरी स्थिति और पद के कारण।'

'तो लीजिए, बात यह है। उसी पद के कारण, वह मेरे लिए माँ के समान है।'

यह कहना मुश्किल है कि इंद्र मेरी बात मानते या नहीं। उन्हें मेरी बात मानने में कोई कठिनाई नहीं होती। अगर वे नहीं भी मानते, तो कोई हानि नहीं होती। लेकिन क्या उर्वशी अपना रुख छोड़ देती? जिस प्रकार नपुंसक कहलाना मेरे जीवन की जड़ों को काटने वाली कैंची के समान था, क्या वह मुझे यौन संतुष्टि दिए बिना विदा करना, उर्वशी पद पर आसीन होने के नाते अपनी प्रतिष्ठा और रुतबे पर कुल्हाड़ी चलाने जैसा नहीं समझती? उसने कहा, 'इंद्र, अपने धर्माधिकारी को बुलाओ। अपने अन्य कुल प्रमुखों को भी बुलाओ। धर्म का जो मुद्दा उसने उठाया है, उसका हल होना चाहिए। अभी। तुरंत।' उसने आदेश जारी किया। उसके पास कितना बड़ा अधिकार था!

"ये वही धर्माधिकारी नहीं थे जिन्होंने मेरे बड़े भाई को जन्म दिया था। वे लगभग मेरी ही उम्र के थे। ऐसा प्रतीत होता था कि भीम के जन्म का कारण बने मरुत छह वर्षों से अस्थमा से पीड़ित थे। मैं उनके पास गया, उन्हें प्रणाम किया और अपना परिचय दिया। उन्होंने माता और भीम के कुशल मंगल के बारे में बड़े स्नेह से पूछा! उन्होंने मुझे गले लगाया और मेरे सिर पर हाथ फेरा। उनके मोटे हाथों से प्रेम झलक रहा था। अगर हमारे असली पिता जीवित होते, तो कौन जानता है कि वे हम पर कितना गहरा स्नेह बरसाते। या शायद यह स्नेहपूर्ण शैली भीम के पिता की ही

विशेषता थी। अश्विनी बंधुओं ने भी अब नकुल और सहदेव को जन्म देने वाले वृद्धों का स्थान नहीं पा लिया था।"

शाम को इंद्र के दरबार में सभी पक्षों की बात सुनने के बाद धर्माधिकारी के शब्द कितने विचित्र थे! उन्होंने कहा, "अर्जुन, हम उस तरह के रिश्ते को नहीं मानते जिसका आप ज़िक्र कर रहे हैं। आपने कहा है कि निःसंतान व्यक्ति वंश को आगे बढ़ाने के लिए नियोग का सहारा ले सकता है। हमारे यहाँ ऐसा कोई रिवाज नहीं है। आप स्वयं जानते हैं कि हम सामूहिक विवाह करते हैं, एक कुल के सभी पुरुष और महिलाएं सामूहिक रूप से आपस में विवाहित होते हैं। यदि किसी स्त्री की संतान न हो, तो हम उसे केवल प्रजनन क्षमता से रहित मानते हैं। बस इतना ही। न तो वह और न ही कोई और इस बात पर शोक मनाते हैं। उम्र के अनुसार बच्चे एक-दूसरे को माता-पिता कहते हैं। जैसे ही कोई लड़की यौन रूप से परिपक्व होती है, उसे दूसरे कुल की पत्नी के रूप में भेज दिया जाता है। इस प्रकार हम अंतर-कुल विवाह करके व्यभिचार की समस्या से बचते हैं। संक्षेप में, हमारा संसार आपके संसार से बिल्कुल अलग है। आप अपनी प्रथा और कानूनों को हमारी उर्वशी को अपमानित करने के लिए कैसे लाड़ कर सकते हैं?"

मैंने चुनौती दी, 'क्या मैं अपने संसार के धर्म का पालन करने के लिए बाध्य नहीं हूँ?'

धर्माधिकारी, 'आप अपने संसार में ऐसा कर सकते हैं, बिल्कुल। यदि आप हमारे संसार में अपने धर्म के बीज बोने का प्रयास करेंगे, तो यह अधर्म होगा, हमारे धर्म का उल्लंघन होगा। याद रखिए, हम ही आपके मूल धर्म का पालन करते हैं, आप नहीं।'

उर्वशी ने अंतिम फैसला सुनाया, "अर्जुन, हमारे यहाँ धर्म के मामलों में हमारे धर्माधिकारी का ही अंतिम निर्णय होता है। उनके विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकती, और इसके बाद कोई बहाना स्वीकार नहीं किया जाएगा। हमारी इस बात को स्वीकार करो कि तुम नपुंसक हो। यदि तुमने मेरी प्रतिष्ठा धूमिल करने का प्रयास किया, तो मैं चुप नहीं रहूँगी। अन्यथा अभी मेरे शयनकक्ष में मेरे साथ आओ और मेरे आरोप को गलत साबित करो।" वह अचानक गायब हो गईं। मैंने देखा कि उनके गालों में खून दौड़ रहा था...

रथों की गति धीमी हो गई थी। सुभद्रा दूसरी ओर मुड़ी और मुड़ते समय कुछ आवाज़ हुई। अर्जुन को अपने पेट में जकड़न महसूस हुई। रथ के हिलने से उनके

पेट में भी वैसी ही हलचल हुई। अब उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि उर्वशी ने उन पर केवल आरोप लगाया है या उन्हें श्राप दिया है। देवलोक से लौटने के बाद उन्हें वनवास में ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ा। उसने मन ही मन कहा, "पांच साल की अनुपस्थिति के कारण पंचाली ने भले ही सहानुभूति दिखाई, पर मैं जानता था कि हमारे बीच अब कोई सच्चा प्रेम नहीं बचा था। मैंने विराट के नगर में नपुंसक का वेश क्यों धारण किया और स्त्रियों को संगीत और नृत्य क्यों सिखाया? गंधर्व देश में तो ऐसी गंधर्व कलाएँ पुरुष और स्त्रियाँ स्वतः ही सीख लेते हैं। कोई भी किसी को भी सिखा सकता है, चाहे वह पुरुष हो या महिला। लेकिन हमारे आर्यावर्त में तो स्त्रियों को सिखाने का अधिकार केवल नपुंसक के पास ही है। क्यों? मद्रा, गंधर्व और बाहलिका जैसे देशों में तो यह प्रथा नहीं है। हम स्त्रियों की पवित्रता और शुद्धता की रक्षा के विचार से कितने ग्रस्त हो गए हैं! भेस बदलकर रहते हुए क्या मैं कोई और काम नहीं कर सकता था? लोग कहते हैं कि मैंने अपने बोलने, हाव-भाव, बैठने-उठने और व्यवहार में पूरी तरह से नपुंसक जैसा व्यवहार किया और किसी को शक भी नहीं हुआ कि मैं अभिनय कर रहा हूँ। खुद पंचाली ने भी यही कहा था। क्या यह महज़ एक कला थी? मुझे महल में स्त्रियों के नृत्य शिक्षक के रूप में नियुक्त करने से पहले, राजा विराट ने मेरे साथ सुंदर स्त्रियों को छोड़कर मेरी परीक्षा ली। मैं परीक्षा में सफल रहा। वह परीक्षा मैंने बिना किसी कठिनाई के उत्तीर्ण कर ली। फिर पूरे एक साल तक, सुबह-शाम मैं सुंदर युवतियों के बेहद करीब रहा। मुझे उन्हें सही मुद्रा और हाव-भाव सिखाने के लिए उनके प्यारे शरीरों को छूना पड़ता था। हालांकि एक शिक्षक के रूप में उनके हाथों, बाहों और कमर को छूते हुए मेरा मन उत्तेजित होता था, लेकिन मेरा शरीर शांत रहता था।

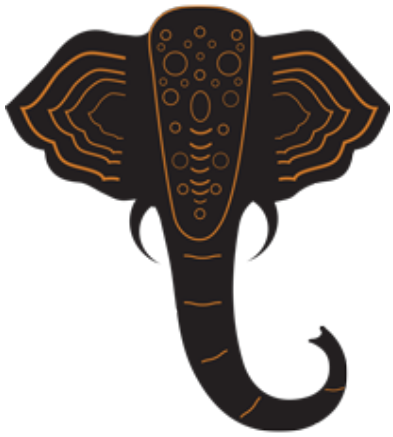
गुप्त वनवास के कुछ ही समय बाद, जब सुभद्रा मेरे पास आईं, तब भी शरीर में कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखी। उपप्लव्य पहुँचने के कई दिनों बाद, उन्हें कहना पड़ा, 'अब तो तुम सचमुच बुढ़ापे की चपेट में आ गए हो। शायद वनवास में तुम्हारी उम्र तेजी से बढ़ गई है।' लेकिन क्या यह अर्जुन सचमुच बूढ़ा हो गया है? क्या बुढ़ापा मुझ पर आ गया है, मुझ पर जो इतना बड़ा धनुष थाम सकता है और बिना थके लगातार तीरंदाजी का अभ्यास कर सकता है? पचास या इक्यावन साल की उम्र में? या फिर मैंने उर्वशी की चुनौती क्यों नहीं मानी कि मैं उनके साथ शयनकक्ष में चलूँ? क्या मैं हार से डर गया था? स्वयं इंद्र ने मुझे आश्वासन दिया था कि यदि मैं पूरी तरह से उनके सामने आत्मसमर्पण कर दूँ, तो उनमें नपुंसकता दूर करने और मेरी

यौन शक्ति को पुनः जगाने की क्षमता और कौशल है। मैंने उनकी सलाह क्यों नहीं मानी? मेरा पेट कस गया। असहनीय जकड़न। मेरे शरीर का हर हिस्सा दर्द कर रहा था। मेरी आँखें उर्वशी की सुंदरता से भर उठीं... उनके सामने बैठा तुष्ट ऊंघ रहा था। उनके चरणों के पास सो रही सुभद्रा सिसकती हुई साँस ले रही थी। दूर की पहाड़ियाँ मानो साँस लेने में तकलीफ से फूलती-सिकुड़ती हुई प्रतीत हो रही थीं। केवल मरुथा, जो भीम के नियोग पिता थे, जीवित थे। यदि अन्य जीवित होते, तो वे भी मुझे उतना ही स्नेह और प्रेम दिखाते। उस धर्माधिकारी ने क्या कहा था? मेरा मन उलझन में था। मुझे सब कुछ याद नहीं आ रहा। रिश्ते के बारे में कुछ नहीं। नियोग के बारे में कुछ नहीं। ऐसा लगता है कि महान ऋषि कृष्ण द्वैपायन ने हमारी दोनों रानियों को केवल एक निस्वार्थ उद्देश्य से अपना वीर्य दान किया था - निःसंतान महिलाओं को मातृत्व का अनुभव कराने के लिए। लेकिन वे कौन सी आंतरिक प्रेरणाएँ थीं जिन्होंने हमारे नियोग पिताओं को हमें जन्म देने के लिए प्रेरित किया? मेरे पेट का दर्द और बढ़ गया..." अर्जुन ने पेट का तनाव कम करने के लिए अपनी स्थिति बदली और रथ की चौखट पर पैर टिका दिए। उन्हें कुछ राहत महसूस हुई। उन्होंने सोचा कि अगर कोई उन्हें पंखा कर दे तो अच्छा होगा। सुभद्रा सो रही थीं। लेकिन अगर वह जाग भी रही होतीं, तो भी बिना बताए उनकी ज़रूरत को समझ नहीं पातीं। खैर, पांचाली बहुत अलग थीं। हालाँकि उनके मन में अर्जुन के लिए कोई सच्चा प्रेम नहीं था, फिर भी पांचाली ने एक पत्नी के रूप में अपने कर्तव्यों को अनुकरणीय भक्ति और समझ के साथ निभाया था। उनकी बराबरी कौन कर सकता था? जब वह सोच रहे थे कि क्या दुनिया में कोई ऐसी स्त्री है जो एक पुरुष की ज़रूरतों को समझने और पत्नी के कर्तव्यों को निभाते हुए उसकी सेवा करने में उनकी बराबरी कर सके, तो उनका मन इंद्रप्रस्थ की ओर चला गया। उन्हें याद आया कि सुभद्रा को पाने के बाद, पांचाली के साथ उनका समय अभी तक नहीं आया था। उन्होंने सोचा, "अब धर्म की बारी है। एक साल के लिए। फिर भीम की। एक और साल। फिर वह मेरी होंगी, पूरी तरह से मेरी, पूरे एक साल के लिए।" खैर, इस बार तो मुझे उसे मनाना ही होगा, यह सुनिश्चित करना होगा कि उसका मेरे प्रति क्रोध शांत हो जाए, और उसे पुराने अच्छे दिनों की तरह फिर से अपना साथी बना लूँ... अचानक उसे याद आया कि दुर्योधन क्या प्रचार कर रहा था। वह क्या प्रचार कर रहा था? पांडव तो केवल कुंती की संतान थे, और कुरु वंश से संबंधित नहीं थे। इसलिए वे कौरवों के साथ राज्य साझा करने के योग्य नहीं थे।

रथ तेज़ी से मुड़ने लगे। तब उसे अपने दादा भीष्म याद आए। अर्जुन ने याद किया, "उन्होंने मेरी प्रशंसा करते हुए मुझे सुंदर बालक कहा था और मुझे अपनी जांघों से कसकर लगा लिया था। यह तब की बात है जब पिता की मृत्यु के बाद हम पर्वत ढलानों से हस्तिनावती पहुँचे थे। मुझे याद है कि वह पथरीली सड़क थी जिस पर हम चले थे।" मेरी स्मृति में अतीत की तस्वीरें एक के बाद एक उभरने लगीं..."अर्जुन को अब रथ की दीवार से टेक लगाकर बैठना मुश्किल लग रहा था। वह अचानक उठ बैठा। पेट में मतली के कारण उसे उल्टी जैसा महसूस हो रहा था। इससे पहले कि वह उल्टी करने के लिए रथ से अपना चेहरा बाहर निकाल पाता, उसके मुंह से पित्त निकलने लगा। वह अनियंत्रित रूप से बाहर आ रहा था। तुष्टा, जो ऊंघ रहा था, आवाज सुनकर जाग उठा, सुभद्रा के पास से गुजरा और अर्जुन के कंधों को धीरे से मलने लगा। उसने अपने स्वामी से कहा, "वह पेय अच्छा नहीं था। मैंने आपको पहले ही चेतावनी दी थी कि यह आप जैसे लोगों के लिए नहीं है, हे महाराज।" लेकिन इन शब्दों का अर्थ अर्जुन के मन तक नहीं पहुंचा। वह यादों में डूबा हुआ था - दादाजी की यादों में, और उसके मन में एक प्रश्न पनप रहा था, एक अधूरा प्रश्न, एक प्रश्न जो कृष्ण से पूछा जाना था।

—•✳•—

भाग छह



अध्याय 25

शाम की सैर के दौरान समुद्र की ठंडी हवा हमेशा चलती रहती थी। हालांकि यह हवा उमस भरे मौसम की चिपचिपाहट से पूरी तरह राहत तो नहीं देती थी, लेकिन पसीना सुखाने में ज़रूर मदद करती थी। लहरों की गर्जना चरम पर पहुँच रही थी। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि द्वारका में लोग हवा को लहरों से जोड़कर देखते थे। लहरों को देखने के लिए समुद्र तट की रेत पर खड़े होने या बैठने की ज़रूरत नहीं थी। यहाँ तक कि घर में सोते हुए और आँखें बंद करते हुए भी, नाचती हुई लहरें दिखाई देती थीं और उनकी लयबद्ध गर्जना सुनाई देती थी। लहर, हवा, गर्मी और पसीना एक दूसरे से जुड़े हुए थे, एक दूसरे से उत्पन्न होते हुए। यदि कोई घोड़े पर सवार होकर रैवता पर्वत की एक दिन की यात्रा करके उस पर चढ़ता, तो दूर-दूर तक उसे शांत पानी, ठंडी हवा और पसीने से रहित शरीर दिखाई देता। फिर भी युयुधन जैसे लोगों के लिए, वह रेत जिसे लहरें व्यर्थ ही जीतने की कोशिश करती थीं, एक अनूठा आकर्षण रखती थी। गर्मी के मौसम में भी, वह सूर्यास्त से पहले रेत पर जल्दी पहुँच जाते और उस पर बैठ जाते। उमस भरी हवा, उमस, चिलचिलाती धूप—ये सब उनके लाल चेहरे, धूप से झुलसी पीठ, बांहों और छाती को और भी

लाल कर देते थे। अगर कोई उनसे उनकी धूप से झुलसी त्वचा के बारे में पूछता, तो वे हंसते हुए कहते, "देखो, मैं पचास साल का हो चुका हूँ। मेरा पोता चौदह साल का हो रहा है। चाहे त्वचा सांवली हो या काली, किसे परवाह है और किसे चिंता है?" भला उनसे इतनी बेबाकी से ऐसा सवाल कौन पूछ सकता है? बेशक, कोई नहीं—सिवाय उनके करीबी दोस्त कृष्ण के। हालाँकि वे दोनों लगभग बराबर उम्र के थे, रिश्ते के लिहाज से वे कृष्ण के मामा थे। ऐसा लगता था मानो युयुधन के परदादा और कृष्ण के परदादा एक ही व्यक्ति हों। चूंकि वे एक ही उम्र के थे, इतने घनिष्ठ मित्र थे और उन्होंने साथ में बहुत कुछ किया था, साथ पले-बढ़े थे, इसलिए किसी को भी अपने खून के रिश्ते की चिंता नहीं थी। वह कृष्ण से कहते थे, "कृष्ण, जिस दिन मेरे पोते का जन्म हुआ, यानी मेरे छत्तीसवें वर्ष में, मैंने खुद को दादा मानना शुरू कर दिया। लेकिन तुम, पोते की शादी हो जाने के बावजूद, खुद को बूढ़ा मानने से इनकार करते हो। तुम्हारी त्वचा का रंग गहरा हो गया है, और मेरी भी। लेकिन, तुम्हारी तरह, मैं भी अपनी रंगत निखारने के लिए दूध की मलाई और चंदन नहीं लगाता। क्या मैं लगाता हूँ?"

दोपहर में जो बादल मंडराते हुए आए थे और इकट्ठा होकर बारिश की उम्मीद जगा रहे थे, वे शाम की हवाओं से बिखर गए।

लोग बारिश की उम्मीद करते थे और मौसम की पहली बारिश में अपने पसीने से तर शरीर को भिगोने के लिए बाहर आते थे, उत्सुकता से आसमान की ओर देखते हुए। हमेशा की तरह, शाम होते-होते बादल छंट गए और उनकी उम्मीदें भी टूट गईं। लेकिन युयुधन ने कभी हवा को दोष नहीं दिया। रेत पर बैठकर, सीना हवा में लहराते हुए, उन्हें मानसिक शांति मिलती थी। इस अभ्यास से उनके मानसिक और शारीरिक तनाव दूर हो जाते थे। उनका मन नीली और हरी लहरों के पार पानी में विश्राम पाता था। उस शाम भी, वे रेत के विशाल विस्तार पर बैठे थे। मछली पकड़ने वाली नावों के पार, लाल सूरज डूब रहा था, अपनी लाल किरणों से आँखों को चुभ रहा था। उन्होंने खुद से पूछा, "इस साल अभी तक पहली बारिश क्यों नहीं हुई?" यह बात उन्हें सचमुच परेशान कर रही थी। उनका डर और चिंता इसलिए नहीं थी कि बारिश में देरी से अत्यधिक उमस होगी, या मनुष्यों और पशुओं के लिए पानी की कमी होगी, या इससे कृषि कार्य बाधित होंगे और अंततः अकाल पड़ेगा। उनकी अंतरात्मा उन्हें बता रही थी कि उस वर्ष आर्यावर्त में भयंकर युद्ध होने वाला है। उनके मित्र कृष्ण ने भी कहा था कि वनवास समाप्त होने के बाद, चाहे दुर्योधन

पांडवों को उनका राज्य लौटाए या न लौटाए, युद्ध अवश्य होगा। पांडवों को उनकी इच्छा पूरी हो या न हो, यह युद्ध केवल कुरुओं के मामलों तक ही सीमित नहीं था। विवाह संबंध होने के कारण पांडवों का युद्ध में पांचालों का समर्थन प्राप्त करना स्वाभाविक था। संभवतः पांचाल पिछले बारह वर्षों से इस घटना की तैयारी कर रहे थे। दुर्योधन भी आर्य जगत के सभी शासकों का समर्थन जुटा रहा था और अपनी सेना को मजबूत कर रहा था। उससे पीछे न रहने के लिए, पांडव भी युद्ध में समर्थन के लिए गुहार लगा रहे थे: क्या इसीलिए कृष्ण उपप्लव्य में पांडवों के साथ डेरा डाले हुए थे? - युयुधन ने स्वयं से पूछा। यह सर्वविदित था कि वह स्वयं पांडवों का समर्थक था। आख़िरकार, वह कृष्ण का घनिष्ठ मित्र था। वह अर्जुन का भी अच्छा मित्र था। क्या उसने राजसूय यज्ञ के दौरान पांडवों की सहायता नहीं की थी? दुर्योधन ने धर्म को, जो जुए में अच्छा नहीं था, जुआ खेलने के लिए आमंत्रित किया और उसकी जुआ खेलने की इच्छा को भड़काया। कृष्ण ने कहा था कि सवाल यह नहीं है कि कोई खेल जानता है या नहीं, क्योंकि जुआ खेलकर कमाना कुटिल है। धर्म को लगा कि कृष्ण सही थे। दुर्योधन न केवल खेल में जीता, बल्कि उसने पांडवों को आपसी समझौते के अनुसार उनका क्षेत्र लौटाने से भी इनकार कर दिया। अब वह आने वाले युद्ध में यादवों का समर्थन मांगने आया था। अचानक एक विशाल लहर उसकी ओर तेज़ी से बढ़ी, उसके पैरों और जांघों को भिगो दिया और रेत को भीग दिया। सफेद झाग के रूप में समुद्र में वापस जाते हुए उसने उसके शरीर को चीर दिया। गर्मी की शाम में समुद्र का पानी कितना गर्म लग रहा था! द्वारका पहुंचे दुर्योधन बलराम के अतिथि थे। दुर्योधन ने बलराम से कहा, "मेरे प्रिय गुरु, आपको मुकुटधारी होने के नाते मुझे औपचारिक आतिथ्य सत्कार देने की आवश्यकता नहीं है। कृपया मुझे किसी आधिकारिक अतिथि कक्ष में ठहराने की जहमत न उठाएं।" युयुधन ने याद करते हुए कहा, "हाँ, स्वाभाविक रूप से, क्या दुर्योधन को बलराम के निजी अतिथि के रूप में नहीं रखा जाएगा? पांडवों के अपनी बहन से संबंध होने, कृष्ण का विरोध करने और मेरी सलाह को अनसुना करते हुए, क्या बलराम दुर्योधन को उसकी हर बात मान लेंगे? यह जानते हुए कि कृष्ण उपप्लव्य में पांडवों के साथ हैं, दुर्योधन यादवों को विभाजित करने और उनमें फूट डालने के लिए यहाँ आया है। क्या मंदबुद्धि बलराम इस चाल को समझ पाएंगे?" तभी एक और विशाल लहर उसकी ओर आ रही थी, जो पिछली लहर से कहीं अधिक बड़ी थी। युयुधन को आभास हुआ कि यह केवल उसके पैरों या जांघों

को गीला करने से कहीं अधिक करेगी। फिर भी उसने वहाँ से उठने की परवाह नहीं की। उसे विश्वास था कि अगर उसके कपड़े गीले भी हो जाएँगे, तो वे पल भर में सूख जाएँगे। इससे उसे तसल्ली मिली, लेकिन पानी में मौजूद नमक के उसकी त्वचा पर चिपकने के विचार से वह सहम गया। लेकिन जैसे ही यह विचार उसके मन में आया, लहर उसकी ओर तेज़ी से बढ़ी और उसे निगल गई। पानी ने उसे कमर से ऊपर तक जकड़ लिया। जैसे ही पानी उसके नीचे से पीछे हटा, उसने एक गड्ढा बना दिया, जिससे वह अस्थिर हो गया। मन ही मन हंसते हुए वह चेहरा ऊपर करके लेटा रहा। एक और लहर आ रही थी, और पहले से ही आगाह होकर वह वहां से उठ गया, उसकी नाक, मुंह और आंखें रेत और खारे पानी से भरी हुई थीं। वह धीरे-धीरे पहाड़ी पर चढ़ गया।

—•✳•—

अध्याय 26

भोजन के बाद युयुधन अपने घर के आंगन में बिछे नरम गद्दे पर सो गया। गद्दा हाथी घास का बना था। अनार्त देश, जिसमें द्वारका स्थित था, हाथी घास के लिए प्रसिद्ध था। यादव इस घास से गद्दे बुनने के लिए जाने जाते थे, जो उस देश में बहुतायत में उगती थी। खासकर गर्मियों में, घास का गद्दा ही एकमात्र ऐसा बिस्तर था जिस पर कम से कम असुविधा के साथ सोया जा सकता था। युयुधन के आंगन में गद्दों की एक कतार बिछी थी। उन पर उसके पिता सत्यक, उसके पुत्र और पोते-पोतियां आराम से लेटे हुए थे। हालांकि, नवविवाहित दंपति, उमस के बावजूद, घर के अंदर, अलग-अलग कमरों में और घर के पीछे या उसकी छाया में सोए, जहां वे ताक-झांक करने वाली नजरों से सुरक्षित थे। इस तटीय शहर में, छत की बजाय भूतल पर सोना अधिक आरामदायक था। समुद्र से आने वाली हवाएं कभी-

कभी इतनी तेज और शक्तिशाली होती थीं कि छत पर सोना आरामदायक नहीं होता था। फिर भी, नवविवाहित जोड़े ने छत पर सोने में कोई संकोच नहीं किया। इस पर बूढ़ी महिलाओं ने नवविवाहित पति से मज़ाक करते हुए कहा, "तेज़ हवा के झोंके से तुम्हारी पत्नी उड़ सकती है। इसलिए, सोते समय भी अपने पैरों को उसके पैरों से लपेटकर, उसकी कमर को कसकर पकड़े रहना!" द्वारका की बूढ़ी महिलाएं उम्रदराज़ हो गई थीं, लेकिन उनके शब्द अपनी जीवंतता और उत्साह में सदा युवा थे।

युयुधन के पुत्रों और पोते-पोतियों की चहल-पहल जारी रहने के दौरान, वह और उनके पिता सत्यक, अगल-बगल गद्दों पर लेटे हुए, आपस में बातचीत कर रहे थे। पिता-पुत्र का रिश्ता शुरू से ही बहुत गहरा था। दस वर्ष पूर्व माता की मृत्यु के बाद, युयुधन ने अपने पिता के साथ बहुत समय बिताया। जिन दो व्यक्तियों से उनका सबसे गहरा लगाव था, वे थे उनके अपने पिता और उनके वरिष्ठ मित्र कृष्ण। कृष्ण की संगति में वे अधिक सहज महसूस करते थे और बिना किसी झिझक के बातें करते थे। उनकी बातचीत व्यापक होती थी, जिसमें यह देश, वह देश, युद्ध, शांति, अंतरराज्यीय संबंध, व्यापार आदि विषय अंतहीन रूप से शामिल होते थे। युयुधन जानते थे कि उनके पिता, जो अपने समय के एक महान योद्धा थे, अब अस्वस्थ थे। वे बाहर नहीं जा सकते थे और अपना अधिकांश समय घर पर ही बिताते थे। उनके विचार अपने अतीत और अपने बीते अनुभवों के इर्द-गिर्द घूमते रहते थे। वृद्ध सत्यक को समुद्र पसंद नहीं था। उन्हें अनार्ता देश भी पसंद नहीं था। उनका नियमित कथन होता था, "मनुष्य को हमेशा नदी के किनारे ही अपना घर बनाना चाहिए। तब उसे मीठा, पीने योग्य पानी मिलेगा। खेती योग्य भूमि मिलेगी। भरपूर पशु-संग्रह होंगे। तट पर क्या है? खारा पानी, रेत, भ्रष्ट व्यापार और साल भर पसीना बहाने के सिवा कुछ नहीं। मुझे अपने तटीय क्षेत्रों के बारे में मत बताओ। दुनिया का कौन सा शहर हमारे मथुरा की बराबरी कर सकता है?" उनके पिता ने ये शब्द शायद हज़ार बार दोहराए होंगे! क्या यह तैंतीस वर्ष पहले की बात नहीं है जब यादव, जरासंध से डरकर, तटीय भूमि पर भाग गए थे और वहीं बस गए थे? सत्यक ने अपने पुत्र से कहा था, "देखो, युयुधन, उस समय तुम सोलह वर्ष के थे।

आप बातें ठीक से समझ नहीं पा रहे हैं। आप हमारे मथुरा और इस द्वारका के बीच का अंतर ठीक से नहीं समझ पाएंगे। मथुरा में साल भर उमस नहीं रहती, जैसा कि यहाँ है। गर्मियों में बेशक बहुत गर्मी होती है, लेकिन वह सूखी गर्मी होती

है, यहाँ की तरह पसीना नहीं आता। सर्दियों में आप जितना चाहें उतना काम कर सकते हैं, फिर भी थकते नहीं। इस खराब मौसम में गायें और भैंसें मथुरा की तरह इतना दूध कैसे दे पाती हैं? खैर, हम जरासंध के अत्याचार से बच गए। और वह पुण्यवान कौन था जिसने जरासंध का वध किया? क्या वह हमारे वंश की किसी लड़की का पुत्र नहीं था? उसका नाम क्या है? उस घटना को पंद्रह साल हो गए हैं। फिर हमें मथुरा लौटना होगा। आज भी मेरी यही इच्छा है कि मैं वापस जाकर यमुना नदी के किनारे वहीं पर मर जाऊं। अगर मेरा शरीर उस किनारे पर जलाया जाए, तो मैं स्वर्ग जाऊंगा।" बेटे को अक्सर इस तरह की बातें सुननी पड़ती थीं।

युयुधन भली-भांति जानता था कि कृष्ण द्वारा भीम के हाथों जरासंध का वध कराने के बाद से मथुरा लौटने की उसके पिता की इच्छा और भी प्रबल हो गई थी। जब तक उसकी माता जीवित थीं, वे भी मथुरा लौटने की बात करती रहीं। मथुरा छोड़े हुए अब अठारह वर्ष बीत चुके थे। परन्तु युयुधन स्वयं तट के वातावरण में रम चुका था। वह न केवल समुद्र का आदी था, बल्कि उससे आसक्त भी था। सोलह वर्ष की आयु तक तो उसके लिए सब खेल ही था। उसके बाद ही उसका वास्तविक जीवन शुरू हुआ और वह द्वारका में अपना जीवन व्यतीत कर रहा था। क्या यादव यहाँ आने के बाद विदेशी व्यापार से समृद्ध नहीं हुए थे? आर्यावर्त काल में मथुरा के यादवों का अन्य शासकों की दृष्टि में कोई विशेष महत्व नहीं था। यादवों की साधारणता और सादगी पड़ोसी कुरुओं के वैभव के बिल्कुल विपरीत थी। कहा जाता था कि कुरु क्षत्रिय यादवों को हीन क्षत्रिय समझते थे। अब हस्तिनावती का शासक दुर्योधन उनके पास आ गया था। वह सिर्फ सशस्त्र बलों की भीख मांगने नहीं गया था। वह मुख्य रूप से युद्ध के लिए धन जुटाने के लिए वहां गया था। युयुधना ने पूछा, "इस तटीय भूमि को, जिसने हमें धन-संपत्ति प्रदान की, छोड़कर उस गरीब भूमि पर जाने का क्या लाभ है, जहां हमारा मुख्य व्यवसाय पशुपालन और कृषि होगा, जो दोनों ही अपेक्षाकृत कम धन-उत्पादक व्यवसाय हैं?"

उनके बेटे और पोते आपस में ऊँची आवाज़ में बातें कर रहे थे। सत्यक ने बगल वाले गद्दे पर सो रहे अपने बेटे से पूछा, "लगता है हस्तिनावती से दुर्योधन का दूत आया है। क्या यह सच है?"

युयुधन ने सरल स्वर में कहा, "हम।" बूढ़ा व्यक्ति चुप रहा। उसके अधिकांश दांत गिर चुके थे। जब उसने 'हम' कहा, तो वह 'आम' जैसा लगा, मानो कोई प्रश्नवाचक शब्द हो। अपने पिता की बोली से इतना परिचित होने के बावजूद युयुधन

'हम' और 'आम' में अंतर नहीं कर सका। जब उसने स्पष्ट किया कि उसका उत्तर "नहीं" था, तो युयुधन ने बताया कि दुर्योधन स्वयं हस्तिनावती से क्यों आया था। लहरों की गड़गड़ाहट के बावजूद, सत्यक अपने पुत्र के शब्द सुन सका। उसने अपनी अधनी आँखों से आकाश की ओर देखा, उठ बैठा और अपने पुत्र से पूछा, "युद्ध पांडवों और उनके शत्रुओं के बीच है। क्या जरासंध को पांडवों ने ही नहीं मारा था? इसलिए, उनका साथ देना हमारा धर्म है। तुम क्या सोचते हो?"

युयुधना ने कहा, "बिल्कुल, बिल्कुल हाँ। लेकिन बलराम का स्वभाव बहुत ही कुटिल है।"

बूढ़े आदमी ने पूछा, "वो क्या था?" उसने बेहतर सुनने के लिए अपना बायाँ कान बाएँ हाथ से खोल लिया। तेज़ हवा उसके कान में घुस गई और उसके बेटे की आवाज़ सुनाई नहीं दी।

युयुधन ने कहा, "जी हाँ, आपकी बात सही और उचित है। कृष्ण भी यही कहते हैं। लेकिन बलराम का मन कुटिल है।" उसी क्षण युयुधन ने पीछे एक परछाई देखी। अचानक आँगन में सारी बातें रुक गईं। जब उसने पीछे मुड़कर देखा, तो उसने साक्षात बलराम को वहाँ खड़े देखा! युयुधन को अपनी मूर्खता का एहसास हुआ। ऐसा नहीं था कि उसे बलराम से डरने का कोई कारण था। बल्कि युयुधन सोचता था कि किसी के सामने उसकी बुराई करना आसान है, लेकिन किसी अनुपस्थित व्यक्ति की बुराई करना सबसे शर्मनाक होता है। लेकिन बलराम अचानक वहाँ आ गए थे!

बलराम ने क्रोध में कहा, "जी सत्यकी, बलराम का मन कुटिल है। क्यों, बलराम स्वयं कुटिल हैं। जी हां, युयुधन, तुम सही कह रहे हो।" उनकी आवाज़ में क्रोध था। यदि बलराम इस स्थिति पर इस तरह कोई प्रतिक्रिया न देते, तो युयुधन को बहुत अपराधबोध और बेचैनी होती। बलराम के अचानक बोले गए शब्दों ने उसे राहत दी। इससे उसे खुलकर बोलने की हिम्मत भी मिली।

युयुधन ने कहा, "मैं सच बोल रहा था। अगर इस बीच आप बदल गए हों, तो मुझे क्षमा कर दीजिए। कृपया आइए और बैठ जाइए।" उन्होंने अतिथि को अपना गद्दा दिखाया। अपने राजसी रुतबे के अनुरूप, बलराम कमर से पैर तक रेशमी वस्त्र पहने हुए थे, उमस के कारण छाती के घने बाल खुले हुए थे और सिर पर मुकुट था। वे सहजता से बैठ गए। उन्होंने अपने बाएं हाथ की उंगलियों को बार-बार अपनी बाईं ठुड्डी पर दबाना शुरू किया।

युयुधान ने पूछा, "क्या आपके दांत में दर्द है?"

बलराम ने कहा, "ये मेरे बाएँ ऊपरी दाँत हैं। ये ढीले हो गए हैं। देखिए, यहाँ, हाँ, यहाँ।" वह अपनी जीभ से प्रभावित दाँत को छूते हुए बोले, "मेरा मन करता है कि इन्हें उखाड़कर फेंक दूँ। लेकिन जड़ अभी पूरी तरह से ढीली नहीं हुई है। अब मेरे दाएँ ऊपरी दाँत में भी दर्द हो रहा है।"

युयुधना के पिता ने कहा, "मैंने भी इसे सहा है। यह नरक है।"

युयुधान ने बलराम से पूछा, "आपकी उम्र कितनी है?"

सत्यक, "रुको, मैं तुम्हें उनकी उम्र बताता हूँ। रिश्ते में मैं उनका बड़ा भाई हूँ।" कुछ देर मन ही मन हिसाब लगाने के बाद उन्होंने आगे कहा, "मैं उनहत्तर साल का हूँ। मान लो अस्सी। बलराम, तुम अपनी माता रोहिणी के इकलौते पुत्र थे। तुम्हारा जन्म उनके विवाह के एक वर्ष के भीतर हुआ था। तुम्हारे पिता ने उसी दिन तुम्हारी माता और उनकी चार छोटी बहनों का विवाह किया था। उस समय मैं सत्रह या अठारह वर्ष का रहा होगा। मैंने उस विवाह में बहुत मेहनत की और हर तरह से मदद की। तुम्हारे पिता की उम्र भी मेरी ही थी। तुम्हारी माता और उनकी चार बहनें पौरव वंश की थीं। उनकी अन्य सात पत्नियाँ उग्रसेन के भाई देवल की पुत्रियाँ थीं। बाकी दो पत्नियाँ दासियाँ थीं। कुल मिलाकर तुम्हारे पिता की चौदह पत्नियाँ थीं। अगर तुम चाहो तो मैं उन सभी चौदह के नाम बता सकता हूँ। क्या तुम्हें अपनी सभी माताओं के नाम क्रम से याद हैं?"

बलराम ने मन ही मन नामों को याद करने का प्रयास किया। वे उतनी तेज़ी से याद नहीं आ रहे थे। उनकी माता रोहिणी, फिर इंदिरा, फिर वैशाखी, भद्रा, और अंतिम नाम क्या थे? सबसे आखिरी नाम सुनमनी था, लेकिन वे सूची पूरी करने के लिए बहुत संघर्ष कर रहे थे, पर उन्हें कोई सफलता नहीं मिल रही थी। सत्यक ने उनकी मदद करते हुए नाम दोहराए, "रोहिणी, इंदिरा, वैशाखी, भद्रा, सुनमनी, सहदेवी, शांति देवी, श्रीदेवी, देवरक्षित, वृकादेवी, उपादेवी, देवकी। सूतनु और वदावा, दो दासियाँ। देखो, तुम्हें अपनी माताओं के नाम तक याद नहीं हैं। इस पर गर्व करने की कोई बात नहीं है। इससे तुम्हें कोई लाभ नहीं होगा।"

बलराम को अपमानित महसूस हुआ। उन्हें गुस्सा भी आया। उन्होंने जवाब दिया, "बड़े भाई सत्यक, कोई इतनी सारी पत्नियों से विवाह क्यों करे? अगर सात बहनें हों, तो एक ही पुरुष उन सभी से विवाह क्यों करे? बच्चों के लिए इतने सारे नाम

याद रखना कितना मुश्किल होगा। क्या किसी को यह एहसास नहीं होना चाहिए कि इतनी सारी पत्नियों के नाम याद रखना खुद के लिए भी कितना कठिन होगा?"

सत्यक यह नहीं समझ पा रहा था कि बलराम ने ये शब्द मज़ाक में कहे थे या व्यंग्य में। वह तो बस इस बात से प्रसन्न था कि वह नामों का सफलतापूर्वक और इतनी तेज़ी से पाठ कर सका। सत्यक को अपनी इस क्षमता पर बहुत गर्व था कि वह यादवों में से यह याद रख सकता था और पहचान सकता था कि अनार्त देश में किसके पास कितनी पत्नियाँ थीं और किस पत्नी ने किन बच्चों को जन्म दिया था। युयुधन ने बलराम के विचारों का लहजा बदलने के लिए हस्तक्षेप किया और कहा,

"पिताजी, आपने अभी तक हमें बलराम की उम्र नहीं बताई है, जबकि वास्तव में आप यही बताना चाहते थे।"

सत्यका, "ओह, आपका मतलब उनकी उम्र से है? रुकिए, मैं पता लगाता हूँ। उनकी माँ का विवाह तब हुआ था जब मैं सत्रह वर्ष का था। उनका जन्म विवाह के पहले वर्ष में ही हुआ था, और वे प्रथम संतान थे। इसका मतलब है कि वे मुझसे लगभग अठारह वर्ष छोटे होंगे। अब, आप भी गिन लीजिए। मुझे लगता है कि आपकी उम्र बासठ होगी।"

युयुधना, "अच्छा, यह वह उम्र है जब दांत गिरने लगते हैं। क्या मैं सही कह रही हूँ?"

बलराम ने कहा, "बड़े भाई, दुर्योधन हस्तिनावती से आ गया है। लगता है भीष्म अब एक सौ बीस वर्ष के हो गए हैं। उनके सारे दांत सही सलामत हैं। वे किसी भी पैनकेक को, चाहे वह कितना भी सख्त क्यों न हो, आसानी से काट सकते हैं। जो लोग धर्म के अनुसार जीवन जीते हैं, उनके दांत कभी नहीं गिरते।" सत्यक ने तुरंत हस्तक्षेप करते हुए पूछा, "तो क्या आप यह आरोप लगा रहे हैं कि मैं, जिसके सारे दांत गिर चुके हैं, धर्म का उल्लंघन करने वाला हूँ?"

बलराम ने कहा, "नहीं, मैंने ऐसा नहीं कहा। मैं तो बस इतना कहना चाहता था कि शुद्ध ब्रह्मचारी के दांत नहीं झड़ते। लेकिन मैं इससे आगे बढ़ गया। ऐसा इसलिए है क्योंकि आम तौर पर ब्रह्मचारी का शरीर दूसरों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक समय तक शक्ति बनाए रखता है। मेरे पिता को ही देख लीजिए, जिन्होंने चौदह पत्नियां रखीं। वे कितने साल मुर्दे की तरह बिस्तर पर पड़े रहे!"

सत्यक को ये शब्द अच्छे नहीं लगे। युयुधन को भी ऐसा रवैया पसंद नहीं आया। अब युयुधन को यकीन हो गया था कि बलराम दुर्योधन के अनुरोध पर चर्चा करने

आए हैं। हालाँकि औपचारिक रूप से उनका राज्याभिषेक नहीं हुआ था, फिर भी बलराम अनार्त देश में रहने वाले सभी यादवों के शासक होने का दिखावा करते थे। आमतौर पर, अगर उन्हें युयुधन की ज़रूरत होती, तो वे उसे बुला लेते थे। लेकिन आज, वे स्वयं युयुधन के पास आए थे। युयुधन इसका कारण और पृष्ठभूमि समझ गया था। शायद बलराम आने वाले युद्ध में दुर्योधन का साथ देना चाहते थे। युयुधन ने सोचा, "चूँकि कृष्ण शहर में नहीं हैं, बलराम यह जताना चाहते हैं कि उन्होंने अपने मित्र मुझसे सलाह ली है। या हो सकता है कि वे चाहते हों कि मैं कृष्ण को पांडव-समर्थक होने के बजाय पांडव-विरोधी होने के लिए मना लूँ।" हालाँकि, युयुधन को पूरा विश्वास था कि वे बलराम से मौखिक बहस में कभी नहीं हारेंगे। क्योंकि उन्हें घुमा-फिराकर बात करने की आदत नहीं थी, युयुधन सीधे मुद्दे पर आ गए।

युयुधना, "आपके इस दुर्लभ आगमन का मुझे क्या श्रेय देता है?"

बलराम शायद शर्मिंदा महसूस कर रहे थे क्योंकि उन्होंने अपने पिता पर ज़रूरत से ज़्यादा कठोर हमला कर दिया था। लेकिन सीधे सवाल ने उनके मन को हल्का कर दिया। इसलिए उन्होंने युयुधन से कहा, "अच्छा, मैंने सोचा कि मैं समुद्र की ओर टहलने चलूँ। कभी-कभी चाँदनी रात में नावें माल लेकर आती हैं। अगर तुम बीच-बीच में अचानक जाकर जाँच नहीं करोगे और उनके मन में डर नहीं पैदा करोगे, तो माल ढुलाई का काम संभालने वाले लोग चोरी कर लेंगे। है ना? तो चलो, हम साथ चलते हैं। मेरे साथ आओ।"

वे दोनों साथ-साथ किनारे पर गए। वे सीधे लंगर डालने की जगह पर नहीं गए, बल्कि बाईं ओर मुड़कर कंटीले पेड़ों के झुंड के पीछे छिप गए। वहाँ पहुँचकर बलराम ने कहा, "चलो यहीं बैठते हैं।" उनके सामने लहरें थीं। सफेद झाग। लहरों की आवाज़ जो लगातार उठती, गिरती और फिर छोटे-छोटे कणों में बदल जाती थी।

Yuyudhana said, " I see the boats coming."

बलराम ने कहा, "हाँ, वे आते हुए प्रतीत हो रहे हैं। लेकिन बैठ जाइए। मुझे आपसे कुछ बात करनी है।" उन्होंने युयुधन के कंधों पर हाथ रखकर उसे बिठा दिया। फिर बलराम भी बैठ गए और दाँत के दर्द को कम करने के लिए धीरे-धीरे अपनी उंगली से उसकी ठोड़ी को मलने लगे। हालाँकि लहरें एक के बाद एक गर्जना के साथ आ रही थीं, उनका ध्यान दाँत के दर्द पर ही केंद्रित था। या शायद

दर्द पर ध्यान देना महज़ बातचीत शुरू करने का एक तरीका था। वे सोच रहे थे कि बात कैसे शुरू करें।

युयुधन ने स्वयं ही प्रश्नचिह्न खोलते हुए पूछा, "क्या दुर्योधन अपने पक्ष के लिए समर्थन जुटाने आया है?"

बलराम ने कहा, "देखिए, मैं चिंतित हूँ कि हम यादव इस मामले में एकजुट होकर खड़े हों। हम यादवों ने न्याय का मार्ग त्याग दिया है। हमें रिश्तेदारी और मोह-माया को त्यागकर न्याय के सिद्धांत के अनुरूप ही निर्णय लेना चाहिए। आप और कृतवर्मा इस समस्या पर चर्चा कर सकते हैं और दुर्योधन को हमारी सहायता का आश्वासन देकर विदा कर सकते हैं। क्या आपको नहीं लगता कि यही उचित है?"

Yuyudhana, "What about Krishna?"

बलराम ने कहा, "जो व्यक्ति कभी शहर में नहीं रहता और हर जगह घूमता रहता है, उस पर कैसे भरोसा किया जा सकता है? अब तो उसने अपनी स्वतंत्र सोच भी खो दी है। क्या आपको लगता है कि जो व्यक्ति अपनी पत्नियों की बात मानता है, वह न्याय की भावना से राजनीतिक मुद्दों को सुलझा सकता है?"

अब तक युयुधन बलराम के मन की बात अच्छी तरह समझ चुका था। ज़ाहिर है, वह कृष्ण की भागीदारी के बिना इस महत्वपूर्ण मुद्दे का फैसला करना चाहता था। इरादों की बात ही क्या? उसने सोचा, बलराम ने तो अपना मन बना लिया था। उसने दुर्योधन को अपना समर्थन देने का वचन ज़रूर दिया होगा। और यह कोई रहस्य नहीं था कि कृतवर्मा बलराम का कट्टर अनुयायी था। उसकी रणनीति स्पष्ट रूप से कृष्ण के करीबी सहयोगी युयुधन का समर्थन हासिल करना थी। उसे अचानक बलराम द्वारा कृष्ण पर अपनी पत्नियों का गुलाम होने का आरोप लगाने का मतलब समझ में आ गया। लेकिन इसमें कृष्ण की क्या गलती थी? दरअसल, मामला बलराम और रुक्मिणी के भाई के बीच बिगड़े संबंधों से जुड़ा था। लेकिन कृष्ण ने अपने भाई और रुक्मिणी के बीच हुए झगड़े में न तो अपनी पत्नी का साथ दिया और न ही अपने भाई का। लेकिन ऐसी परिस्थितियों में वह और क्या कर सकता था? आख़िरकार, शुरू से ही रुक्मिणी और कृष्ण के बीच कोई प्रेम संबंध नहीं था। दोनों के बीच मित्रता पनप ही नहीं सकती थी, क्योंकि जब कृष्ण रुक्मिणी के साथ भाग गए थे, तब उनके भाई ने कसम खाई थी कि वह कृष्ण को मारने से पहले कभी अपने नगर में प्रवेश नहीं करेगा। फिर उसने कृष्ण से युद्ध किया और

पराजित हुआ। उसने अपना नया नगर बसाया और अपनी मृत्यु तक वहीं रहा। उसने फिर कभी अपने पिता के नगर का दौरा नहीं किया। युयुधन ने इस घटना पर विचार करते हुए कहा, "जब क्षत्रिय विवाह में अपनी दुल्हन के साथ भाग जाना वैध विवाह का तरीका है, तो रुक्मा को स्थिति को स्वीकार कर लेना चाहिए था और विवाह के बाद कृष्ण के साथ अपने संबंध को मजबूत करना चाहिए था। वह मूर्ख अपनी जिद पर अड़ा रहा और अपने अपमान को सहता रहा। वह कभी अपनी बहन के घर नहीं गया। उसने अपने बहनोई से कभी बात नहीं की। वह जरासंध समूह में शामिल हो गया था और चाहता था कि उसकी बहन का विवाह शिशुपाल से हो। कृष्ण द्वारा जरासंध को मरवा देने और स्वयं शिशुपाल का वध कर देने के बाद भी, रुक्मा की कृष्ण के प्रति शत्रुता कम नहीं हुई। बल्कि, यह और बढ़ गई। उसने कभी अपनी बहन को आमंत्रित नहीं किया और न ही उससे बात की। उसने फिर कभी उसका चेहरा नहीं देखा। उसने अपने पिता को भी धमकी दी कि यदि वे रुक्मिणी से संबंध बनाए रखते हैं और उससे दोबारा मिलते हैं, तो वह माता-पिता-पुत्र का रिश्ता तोड़ देगा। इस प्रकार उसने रुक्मिणी को उसके मायके से अलग कर दिया। लेकिन एक स्त्री का अपने मायके से लगाव कैसे खत्म हो सकता है, भले ही कई साल बीत जाएं? इसलिए रुक्मिणी ने फैसला किया कि भले ही उसका भाई कभी न आए, वह रुक्मिणी के घर में ही रहेगी। उनके बाद, वह स्वयं पहल करके अपने भाई से मिलने जाती और यह सुनिश्चित करती कि मायके से उसका रिश्ता फिर से जुड़ जाए। कृष्ण उसे यह सुख देने से कैसे मना कर सकते थे? वह दस बेटों के बाद एक पुत्री की माँ थी। उसके पहले तीन पुत्रों का विवाह उस समय हो चुका था। जब उसने आँखों में आँसू लिए कहा, 'अहंकार में अड़ियल मत बनो। मुझे मायके जाने दो।' कृष्ण उसके भाई की तरह हठी नहीं थे। इसलिए उन्होंने उसे उसके भाई के घर भेज दिया। उसके साथ उसका किशोर पुत्र प्रद्युम्न और कुछ अंगरक्षक भी गए। प्रद्युम्न उसका चौथा पुत्र था। रुक्मा पहले तो अड़ियल था और अपनी बहन से बात करने से इनकार कर रहा था, जो विवाह के पच्चीस-छब्बीस साल बाद उससे मिलने आई थी। लेकिन रुक्मा की पत्नी ने उसे समझाया और उससे बात करने के लिए राजी किया। तब वह उससे मिलने गया। उसने उसके चरणों में प्रणाम किया, जिन्हें उसने अपनी उंगलियों और आँसुओं से छुआ। लेकिन भाई के आँसू उसकी बहन के सिर पर गिरे। रुक्मिणी स्वभाव से अत्यंत स्नेही और भावुक थीं। वे केवल सुंदर ही नहीं थीं, बल्कि धैर्य, शांति और स्नेह से परिपूर्ण थीं।

जब क्रोधित कृष्ण अपने पलायन का विरोध करने वाले रुक्मा को मारने ही वाले थे, तब उन्होंने अपने भाई के प्रेम के कारण कृष्ण को रोका था, है ना? युयुधन ने स्वयं से पूछा, "मैं तब सोलह वर्ष का था और कृष्ण का रथ चला रहा था। मैंने यह सब अपनी आँखों से देखा। जब अभिमानी अहंकार आँसुओं में पिघलने लगता है, तो क्या पुनर्मिलन स्वाभाविक रूप से नहीं हो जाता, विशेषकर जब बात रुक्मिणी जैसी स्नेही बहन की हो?" खैर, उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि उनकी बहन तीन महीने उनके साथ रहें। वे पहली बार उनके साथ द्वारका में उनके पति के घर गए। रुक्मिणी ने अपने भाई से कहा, 'भाई, अपनी पुत्री शुभांगी का विवाह मेरे पुत्र प्रद्युम्न से कर दीजिए। यह आपके द्वारा मुझे क्षमा करने और अपने क्रोध के पूर्ण त्याग का प्रतीक होगा। मेरा यह चौथा पुत्र, सौंदर्य में आपकी पुत्री के सामर्थ्य में कुछ भी नहीं है।' विदर्भ के लोग गोरे रंग के लिए जाने जाते हैं। प्रद्युम्न का रंग अपने पिता के रंग से अधिक मिलता-जुलता है।' कृष्ण की उपस्थिति में यह बात कहते हुए रुक्मिणी अपनी हंसी नहीं रोक पाईं।

कृष्ण ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "रुक्मिणी, मैं तुम्हारी बात समझ सकता हूँ। लेकिन मुझे संदेह है कि शुभांगी और प्रद्युम्न पहले से ही गुप्त रूप से एक ही लक्ष्य की ओर साजिश रच रहे हैं!"

रुक्मिणी ने अपने पति को ताना मारते हुए कहा, "वैसे, क्या आपने अपने बेटे को सलाह दी थी कि वह अपनी माँ की संगति में समय बर्बाद न करे, बल्कि अपने मामा की बेटी को लेकर वापस आए, और क्या आपने उसे उसी के अनुसार प्रशिक्षित किया था?"..." जब युयुधन अतीत को याद कर रहा था, तब बलराम ने दुर्योधन का मुद्दा फिर से उठाया। उन्होंने पूछा, "एक पुरुष के लिए कौन अधिक महत्वपूर्ण है? उसकी पत्नी या उसका बड़ा भाई? जो कोई आर्य धर्म को भूल जाता है, वह स्त्रियों के बीच राजनीति और झगड़े में उलझने के लिए बाध्य है। क्या आपको ऐसा नहीं लगता?" फिर अचानक वह पीड़ा में बोला, "आह।" "जीभ का दांत से हल्का सा स्पर्श होने पर भी मुझे इतना तेज दर्द होता है।" उसने अपनी उंगलियां अपने बाएं जबड़े पर फेरनी शुरू कीं। युयुधन ने कोई जवाब नहीं दिया। अतीत में उसने जो दृश्य प्रत्यक्ष रूप से देखा था, वह उसकी आंखों के सामने स्पष्ट रूप से उभर आया, "भोजकटका में उसने जो महल बनवाया था, उसमें भव्य विवाह समारोह के बाद अपने नगर लौटने से इनकार करने के बाद, अगले दिन दरबार में जुआ चल रहा था। रुक्मा और बलराम खेल रहे थे, और कई आमंत्रित

राजा देख रहे थे - अश्मक देश से वेणु, अक्ष, श्रुतवर्ष, चानूरा, अंशुमन और कलिंग देश से जयत्सेना। बलराम एक अनाड़ी और अयोग्य खिलाड़ी था। जुए में कौशल, आत्मविश्वास और तीक्ष्ण बुद्धि की आवश्यकता होती है। एकाग्रता भी। निरंतर अभ्यास से ही महारत हासिल करनी चाहिए। यदि किसी के पास खुले समुद्र में व्यापार से अर्जित धन से उत्पन्न अहंकार के अलावा कुछ नहीं है, तो वह केवल धन को बहने दे सकता है। लेकिन वह कैसे जीत सकता है?" विवाह जुलूस के लिए लाई गई सभी चीज़ें - हाथी, रथ, सोना, गहने और कपड़े - दांव पर लगाकर हारने के बाद, भला बलराम झगड़ा क्यों न करे? रुक्मा ने अशिष्टता से बलराम पर चिल्लाते हुए कहा, "एक बार जुआ खेलने बैठ जाओ, तो पूरा समय बैठना चाहिए, बीच में छोड़कर नहीं जाना चाहिए। हारने पर क्यों झगड़ा कर रहे हो? मुझसे उधार लो या यहाँ एकत्रित राजाओं से?" "खैर, रुक्मा को ऐसे शब्द नहीं बोलने चाहिए थे, खासकर नए ससुराल वालों से।" वहाँ एकत्रित राजा ज़ोर से हँसे, तालियाँ बजाईं और महल में विशेष रूप से तैयार किया गया पेय पीने लगे। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। राजा दूर-दूर से विवाह जैसे समारोहों में पीने, जुआ खेलने और मौज-मस्ती करने के लिए आते थे। बलराम भी नशे में था, और उसने चुनौती भरे स्वर में, लड़खड़ाते शब्दों में उत्तर दिया, "रुख्मा, क्या तुम्हें पता है कि तुम किससे बात कर रहे हो? मैं समुद्रों का राजा हूँ।" बलराम नशे में और क्रोध में, दोनों ही स्थितियों में हकलाता है। रुक्मा बलराम जितना नशे में नहीं था। इसलिए वह थोड़ा संयम बरत सकता था। कृष्ण का यह कथन बिलकुल सत्य है कि जुआ खेलते समय होश खोना नशे में होश खोने से भी बदतर होता है। यह स्थिति के प्रभाव के कारण होता है। रुक्मा ने भड़काऊ लहजे में कहा, 'एक गंवार जिसे जुए का ज्ञान नहीं। क्षत्रिय होने का दावा करता है, उसे पासा फेंकना भी नहीं आता। द्वारका के यादव असली आर्य नहीं हैं।' ये शब्द सुनते ही बलराम की आँखें क्रोध से लाल हो गईं। जहाँ वह बैठा था, वहीं से वह रुक्मा पर कूद पड़ा और बाघ की तरह उसका गला पकड़ लिया। इससे पहले कि कोई कुछ समझ पाता, बलराम ने स्तब्ध खड़े-खड़े ही उसकी गर्दन तोड़ दी और उसे मार डाला। राजाओं ने उसे इस हालत में देखा, विवाह के घर में एक शव देखकर वह भय से काँप रहा था। सबसे बुरी बात यह थी कि दुल्हन के पिता की हत्या उसके मामा के बड़े भाई ने की थी! कितने ही राजसेवक दुःख और भय से चीखते हुए घटनास्थल से भाग गए? रुक्मा के बच्चे, पोते-पोतियाँ, पत्नी और अन्य रिश्तेदार शव के पास दौड़े और उस पर अविभाजित दुःख से गिर पड़े। इसी

बीच, कृष्ण, जो रुक्मिणी के मायके की महिलाओं और बच्चों से शिष्टाचारवश मिल रहे थे और एक नए रिश्ते के माध्यम से पुराने संबंधों को मजबूत कर रहे थे, घटनास्थल पर पहुंचे। उनके पीछे रुक्मिणी भी थीं, जिन्होंने अपने मृत भाई का सिर हाथों में थाम रखा था। लेकिन वहां कौन इतना साहस कर सकता था कि कह सके कि बलराम ने जो किया वह अपराध था? तब तक किसने सोचा था कि रुक्मिणी का गला इतना शक्तिशाली होगा कि वह इतनी जोर से बोल सकेंगी? उन्होंने अपने दुःख को दबाया, सीधे बलराम के पास गईं और चीख कर बोलीं, 'हे प्रभु, मैं आपको आदरपूर्वक प्रणाम करती थी क्योंकि आप मेरे पति के बड़े भाई थे। अगर मुझे जरा भी अंदाजा होता कि आप एक क्रूर और कसाई हैं, तो मैं ऐसा कभी नहीं करती। मेरे बड़े भाई, जो इतने लंबे समय से हमसे संपर्क में नहीं थे, अकेले ही खुश थे।' जब मैंने अपनी मर्जी से पहल करते हुए अपने बेटे के लिए उनकी बेटी का हाथ मांगा, ताकि शादी के जरिए हमारा रिश्ता मजबूत हो सके, तो शादी के ठीक अगले दिन तुमने कुत्ते जैसा घिनौना काम किया।' फिर वह शव के पास खड़े कृष्ण की ओर मुड़ी और बोली, 'तुम ही तय करो कि इस आदमी को क्या सजा दी जानी चाहिए।'

कृष्ण क्या कहते? वे सिर झुकाए खड़े रहे, मानो अपने बड़े भाई के अपराध और शर्म से बोझिल हों। सबकी निगाहें उन पर टिकी थीं। आखिर, उन्होंने अपने घर की लड़की का विवाह उनके बेटे से कर दिया था। और क्या यह उनके भाई का ही वह घिनौना कृत्य नहीं था?

बलराम ने बड़ी जल्दी से अपने कृत्य और स्वयं को सही ठहराते हुए कहा, "कृष्ण, याद करो कि तुमने इस स्त्री से विवाह कैसे किया जो तुम्हारे पास खड़ी है। जरासंध ने विदर्भ के राजा भीष्मक की पुत्री का विवाह अपने दत्तक पुत्र शिशुपाल से करवाकर दक्षिण में अपनी शक्ति और प्रभाव बढ़ाने की योजना बनाई थी। उसकी यह बड़ी योजना थी कि वह अपने प्रभाव क्षेत्र को इतना फैलाए कि अंततः द्वारका के अनार्त देश को घेर ले और उसे हड़प ले। और क्या हमने इस गठबंधन को रोकने और उस कन्या को अगवा करने की योजना बनाकर इस रणनीति का मुकाबला नहीं किया, ताकि जरासंध अपमानित हो और हमें उस कन्या के पिता की मित्रता और समर्थन भी प्राप्त हो? जब तुम उसे लेकर भागने की कोशिश कर रहे थे, तो भीष्मक ने तुम्हारा पीछा नहीं किया। लेकिन रुक्मा तुम्हारे पीछे आया। वह स्पष्ट रूप से तुम्हें जान से मारने के इरादे से तुम्हारा पीछा कर रहा था। क्या वह

जरासंध का प्रमुख शिष्य नहीं था? विवाह के इतने वर्षों बाद भी, वह हमसे शत्रुता रखता रहा।" अब जब उसके पुराने मित्र के परिवार में कोई योग्य वर नहीं बचा, तो उसने हमारे लड़के को स्वीकार कर लिया। छोड़ो इसे। क्या तुम्हें पता है उसने मुझे और यादवों को कितना बुरा-भला कहा? क्या हम गैर-आर्य हैं, जैसा उसने आरोप लगाया? जरासंध को पांडवों के भीम ने मारा था। तुमने शिशुपाल को मारा था। रुक्मा का वध करना मेरा सौभाग्य था। कृपया अपनी पत्नी को सलाह दो कि वह उच्च राजनीति में दखल न दे। क्या तुम उसे सलाह दोगे या मैं उसे सबक सिखाऊँ?

रुक्मिणी ने गुस्से में कहा, 'अयोग्य दुष्ट, बोलते समय अपनी जीभ पर नियंत्रण रखो।'

बलराम दहाड़े, "अरे कुतिया, अपना मुँह बंद कर। भौंकना बंद कर।" बेचारे कृष्ण ऐसी स्थिति में क्या करते? क्या वे अपनी पत्नी को अपने बड़े भाई का साथ देने के लिए समझाते? या क्या वे अपने बड़े भाई को ससुराल में उस अपराध के लिए लड़ाई की चुनौती देते जो उन्होंने गुस्से में किया था? वे इस स्थिति को कैसे सुलझाते, जब वे सिर झुकाए और पत्थर की तरह फटे होंठों के साथ चुप खड़े थे? वे वहाँ अपराधबोध दर्शाने वाली मुद्रा में खड़े थे, मानो अपराध उन्होंने किया हो, न कि बलराम ने। क्या यह भयानक घटना एक साल पहले नहीं हुई थी? शायद थोड़ा पहले। मुझे याद है कि तब गर्मी शुरू नहीं हुई थी। दिन सुहावने थे और रातें ठंडी। उस विनाशकारी दिन से, बेचारी रुक्मिणी, जो लाल रंग की थीं, पीली पड़ गईं, मानो उनका खून बह रहा हो। एक दयालु पति की तरह, कृष्ण अब उनके साथ बहुत समय बिताते हैं ताकि उनके दुख का बोझ हल्का हो सके।

बलराम ने धीरे से बुदबुदाते हुए कहा, इस बात का ध्यान रखते हुए कि उसकी जीभ उसके दांतों को न छू ले, "या तो यह दांत गिर जाए या यह दर्द बंद हो जाए। क्या तुम्हें पता है यह कितनी बड़ी यातना है?" आसमान में बिखरे हुए कुछ बादल भी छंट गए थे, जिससे आसमान एकदम साफ नीला हो गया था। चांदनी। तारों की टिमटिमाहट। लहरों की हल्की चमक।

युयुधन ने कहा, "बलराम, घुमा-फिराकर बात करना आपका स्वभाव नहीं रहा है। इस मामले में मैं भी आप ही की तरह हूँ। चलिए, सीधे और स्पष्ट बात करते हैं। मैं आपसे एक ऐसा प्रश्न पूछना चाहता हूँ जो उस विषय से सीधा संबंधित नहीं है जिस पर आप चर्चा करना चाहते हैं। आप, जो रुक्मा के साथ खेले गए खेल से अनभिज्ञ थे और अपेक्षित रूप से हार गए। आप जानते थे कि रुक्मा ने पहल नहीं

की थी और न ही आपको खेलने के लिए आमंत्रित किया था। अपनी हार से क्रोधित होकर आपने उसे मार डाला। यदि आपका किया हुआ सही था, तो क्या आप इस बात से सहमत नहीं हैं कि उसी तरह, पांडवों को भी, जिन्हें जुए में दुर्योधन ने उनके वस्त्र सहित सब कुछ छीन लिया था, उसी समय दुर्योधन को मार डालना चाहिए था, जैसा आपने रुक्मा के मामले में किया था? क्या उन्होंने रुक्मा को न मारकर गलती नहीं की?"

बलराम पूरी तरह से असमंजस में था, इतना असमंजस कि उसके दांत का दर्द भी दब गया। उसने किसी तरह पूछा, "तुम क्या कह रहे हो?"

युयुधन, "क्या तुम्हें दुर्योधन के चेहरे पर थूककर उसे यह सलाह नहीं देनी चाहिए कि वह आने वाले युद्ध में उसके लिए समर्थन जुटाने के बजाय, जुए के खेल की शर्त को लागू करे कि वे पांडवों को उनका राज्य लौटा दें?"

बलराम को लगा जैसे उनके पैर जवाब दे रहे हों। अचानक दांत का दर्द और भी तेज हो गया। लेकिन युयुधन लगातार बोलता रहा, "मैं जानता हूँ कि दुर्योधन तुम्हारा मित्र है और गदा-युद्ध में तुम्हारा शिष्य है, और तुम उससे बहुत स्नेह रखते हो। साथ ही, तुममें स्त्री-सुलभ हठ है कि तुम कृष्ण की इच्छा के ठीक विपरीत करते हो। अपने भीतर झाँको, अपनी आत्मा में देखो। अगर तुम्हें लगता है कि रुक्मा की हत्या करना न्यायसंगत और उचित था, तो इसी तर्क से तुम्हें पांडवों का समर्थन करना चाहिए। अन्यथा, तुरंत रुक्मिणी के महल जाओ और उनसे क्षमा मांगो।"

बलराम देख सकते थे कि युयुधन ने अपने तर्क के विभिन्न हिस्सों को बड़ी कुशलता से जोड़कर एक ऐसा प्रभाव उत्पन्न किया था जिसका विरोध करना असंभव था, और उन्हें एक बेहद मुश्किल स्थिति में धकेल दिया था। वास्तव में, रुक्मा की घटना उन्हें हमेशा सताती रही थी, यहाँ तक कि सपनों में भी, और उनकी मानसिक शांति भंग करती रही थी। यह उनके मन में एक काँटे की तरह चुभ रही थी। उन्होंने उत्तर दिया, "क्या आपने कहा कि मुझे दुर्योधन से स्नेह है? उसी प्रकार, क्या आपको कृष्ण से स्नेह नहीं है? अपने पूरे जीवन में अब तक, क्या आपने कभी एक बार भी यह माना है कि कृष्ण गलती कर सकते हैं? क्या आपने इस बारे में सोचा है? आप अपने स्वामी का अनुसरण कुत्ते की तरह आँख बंद करके और पूरी निष्ठा से करते हैं। आप मेरी बात की सच्चाई को कैसे समझ सकते हैं? यह मेरे लिए नहीं, बल्कि आपके लिए है कि आप अपने अंतर्मन में गहराई से देखें।" उनके शब्द तेज़ी से निकले, दाँत के दर्द की परवाह किए बिना। दर्द बढ़ने

पर उन्होंने अपने दोनों जबड़े दबा लिए। उनके शब्दों ने युयुधन को क्षण भर के लिए अवाक कर दिया। बलराम उनकी प्रतिक्रिया का इंतजार करने की स्थिति में नहीं थे क्योंकि दर्द असहनीय था। उनके चेहरे की सारी मांसपेशियां तीव्र पीड़ा से अकड़ गईं। लेकिन अचानक उनके मन में एक विचार आया और वे रुककर बोले, "देखो, कल मैं इस पीड़ा से उबरकर यहाँ आऊँगा। चलो बैठकर गंभीरता और जिम्मेदारी से बात करते हैं। आज तक किसी ने मुझसे यह नहीं कहा, 'बलराम, तुमने अन्याय किया है'।" युयुधन से पूछे बिना ही कि क्या वह उनके साथ वापस चलेगा, बलराम अकेले ही तट छोड़कर चले गए, उनके पैर रेत पर सरसराते हुए घर की ओर चल पड़े। तट पर कंटीले पेड़ों से पक्षी चहचहाने लगे। युयुधन ने सोचा कि बलराम के तेज कदमों की आवाज से वे परेशान हो गए हैं। और चाँदनी भी थी।

वह बैठे रहे। लहरों की आवाज़ के आदी उनके कान अब शांत थे। चांदनी सभी बाहरी आकृतियों को धुंधलेपन से ढक रही थी। युयुधन बलराम के शब्दों से अभी भी क्रोधित थे। उन्होंने स्वयं से पूछा, 'क्या कृष्ण मेरे स्वामी और मालिक हैं? क्या मैं वह कुत्ता हूँ जो कभी अपने स्वामी के निर्देश से विचलित नहीं होता?' उन्होंने तुरंत इस विचार से स्वयं को सांत्वना दी कि कृष्ण के साथ संबंध की समझ से कहीं अधिक, बलराम ने जानबूझकर उन्हें क्रोधित और भ्रमित करने के लिए ऐसा कहा था। फिर भी, उनके भीतर कहीं गहरी परत थी जो अभेद्य और मौन बनी हुई थी, जिसका अर्थ स्पष्ट नहीं था। अब तक उन्हें उस संबंध पर सचेत रूप से विचार करने का अवसर नहीं मिला था। चीजों का मूल्यांकन करने का कोई मौका नहीं मिला था। कृष्ण उनसे पाँच वर्ष बड़े थे। वही थे जिन्होंने यादवों को उस स्थिति में पहुँचाया था जिसमें वे थे, और वे इसके लिए स्वयं जिम्मेदार थे। वे यादवों में सबसे बुद्धिमान थे। उनका चिंतन और निर्णय व्यापक थे, जो संपूर्ण आर्य जगत के घटनाक्रमों को समाहित करते थे। व्यक्तिगत मामलों में वे अत्यंत स्नेही और करुणामय थे। जहां तक उसकी दृष्टि थी, उसने और कृष्ण ने कभी स्वयं को स्वामी, सेवक या दास की भूमिका में नहीं देखा था। फिर भी अब उसे यह आभास हुआ कि कृष्ण अधिक बुद्धिमान और सक्षम होने के कारण, उन्होंने हमेशा उसकी इच्छाओं, विचारों और निर्णयों का सम्मान किया था। साथ ही उसने स्वयं से यह प्रश्न पूछा, किसी बेहतर राय को स्वीकार करने में क्या बुराई है? फिर भी बलराम के प्रति उसके क्रोध के भीतर कुछ ऐसा था जिसे बेहतर ढंग से समझने की आवश्यकता थी। नींद आने की इच्छा से वह उठा और शहर की ओर चलने लगा।

तभी अचानक उसे लहरों की आवाज़ सुनाई दी। अपनी चेतना से दबे हुए, उसने पीछे मुड़कर देखा। सूर्य के प्रकाश में चांदी की चादरों की तरह चमकती लहरें चंद्रमा की रोशनी में जगमगा रही थीं। यह दृश्य उसे कुछ देर रुककर देखने के लिए ललचा रहा था। फिर वह उस स्थान पर गया जहां लहरें रेत के स्तर तक उठकर समुद्र में लौट जाती थीं। वह रेत पर उकड़ू बैठ गया, लहरों को देखता रहा, अपने सीने और कंधों को समुद्र से आती पानी से भरी हवा के सामने खुला छोड़ दिया। उसकी आँखें अतीत में, दूर-दूर तक, देखने लगीं। जब वह पहली बार कृष्ण से मिला था तब उसकी उम्र कितनी थी? बारह या तेरह वर्ष का। उस समय मथुरा नगर पर कंस का शासन था। कंस क्रूरता की साक्षात मूर्ति था। उसने अपने पिता को भी कैद में डालने से संकोच नहीं किया। उसने स्वयं को राजा घोषित कर दिया था। क्या कोई ऐसा यादव था जो उसकी कैद में न गया हो? किसने सुख से जीवन व्यतीत किया होगा? उसे याद था कि कैसे उसके पिता बच्चों को इशारे करते थे यदि वे गली में खेलते समय भी महल, राजा या उससे संबंधित शब्दों का प्रयोग करने का साहस करते। उसका शासन आतंक का था। अविश्वास का माहौल छाया हुआ था और गली में कोई भी भरोसे के लायक नहीं था। हर जगह गुप्त जासूस तैनात थे। यहां तक कि जब बच्चे राजा-राजा का खेल खेलते थे, तब भी सैनिक उन्हें पकड़कर पूछताछ करते थे। उन्हें कोड़े मारे जाते थे और यातनाएं दी जाती थीं, उनसे उनके बड़ों के राजा और उसके शासन के बारे में विद्रोही विचारों की जानकारी निकलवाई जाती थी। वास्तव में, पूरा नगर ही एक विशाल जेल बन गया था जहाँ कोई भी स्वतंत्र नहीं था और हर कोई भय से ग्रस्त था। बच्चों से लेकर बूढ़ों तक, पूरी आबादी अपने राजा के भय में जीती थी। कंस के जन्मदिन पर, सभी को दूध के बड़े-बड़े घड़े उठाने पड़ते थे, साफ धुले हुए कपड़े पहनने पड़ते थे, चेहरे पर मुस्कान रखनी पड़ती थी और उसके पक्ष में विजय के नारे लगाने पड़ते थे। अन्यथा, अवज्ञाकारी और अनुशासनहीन लोगों को जासूसों द्वारा दंडित किया जाता था। जासूस दूध, मक्खन और मलाई का भरपूर आनंद लेते थे। लोग किसी जासूस को आसानी से पहचान लेते थे जब वे किसी व्यक्ति या उसके परिवार को बिना गाय पाले भरपूर दूध और उसके उत्पादों का आनंद लेते हुए या बिना खेती किए उत्तम भोजन का लुत्फ उठाते हुए देखते थे। जब शहर में इतने सारे लोग थे, तो किसी ने कंस का अंत क्यों नहीं किया? नहीं, उन्हें अपनी आत्मा का कोई भय नहीं था, लेकिन शरीर का भय उनके रास्ते में आ गया। इसके अलावा, अन्याय और

अत्याचार के खिलाफ लड़ने जैसे विचार तभी उत्पन्न हो सकते थे जब लोग एक साथ मिलकर विचार करें। कंस के राज्य में किस पर मित्र के रूप में भरोसा किया जा सकता था? जब लोग एक-दूसरे पर भरोसा नहीं करते थे तो कोई सामुदायिक कार्य नहीं हो सकता था। कंस को स्वयं अपनी प्रजा पर विश्वास नहीं था। उसने जरासंध के राज्य से लोगों को प्रशासन, सेना और जासूसी प्रणाली में महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया था। इससे लोगों का डर और भी बढ़ गया, और जरासंध के बारे में यह अफवाह थी कि वह पूरे पूर्व में केवल आतंक के बल पर शासन कर रहा था। उसने अपनी दो बेटियों का विवाह कंस से करवाकर उसे दामाद बना लिया था। अगर कंस कोई प्रतिरोध करता, तो वह हमेशा अपने ससुर से सेना भेजने की उम्मीद कर सकता था। जरासंध की विशाल सेना के सामने मथुरा का छोटा सा राज्य क्या था? वे मथुरा को पैरों तले रौंद देते। वह सेना कितनी बड़ी थी? एक विशाल सेना। और किसी को भी ठीक से पता नहीं था कि वह कितनी बड़ी थी। और इसी बात ने स्थिति को और भी जटिल बना दिया। एक अज्ञात कारक कल्पनाओं पर पलते हुए आसमान छूते खतरे में बदल सकता है!

फिर लोगों के डर और भावनाओं का फायदा उठाने और उन्हें भड़काने के लिए ज्योतिषी बहुतायत में मौजूद थे। वे आसानी से अत्याचारी राजा का ध्यान अपनी ओर खींच लेते थे। वे उसे चेतावनी देते थे, 'महाराज, आपका जीवन खतरे में है। आपको मारने की कोशिशें चल रही हैं। अगर बूढ़े नहीं तो युवा ही करेंगे। सावधान!' और राजा उन्हें भरपूर इनाम देता था। सुरक्षा अधिकारी संभावित हत्यारों की तलाश में युवाओं को बेपरवाही से पकड़ लेते थे। युवाओं का यह अंधाधुंध उत्पीड़न अपरिहार्य हो गया था। आखिर कौन सा युवा भविष्य में हत्यारा बनने का कोई स्पष्ट बाहरी संकेत या लक्षण दिखा सकता था? पकड़े गए युवक को चार दिनों तक एक बिना खिड़की वाले, अंधेरे कमरे में कैद रखा गया और कोड़े मारे गए। युयुधन को याद आया कि ग्यारह साल की उम्र में उसे भी गिरफ्तार किया गया था और तीन दिनों के लिए जेल में डाल दिया गया था! फिर उसे आखिरकार छोड़ दिया गया था, और चेतावनी दी गई थी कि वह राजा या उसके अधिकारियों को मारने की योजना न बनाए। यहां तक कि जिन्होंने कभी ऐसे काम करने के बारे में सोचा भी नहीं था, वे भी इस तरह सोचने के लिए बुरी तरह उकसाए गए!

युयुधन ने बीते हुए वर्षों की यादों से अपना मन मुक्त किया। दूर से उसे एक विशाल लहर आती हुई दिखाई दी। वह आगे बढ़ती जा रही थी और चांदनी को

अपने हरे रंग में समेटे हुए थी। रेत पर बिताई रात सार्थक हो गई थी, यह सोचकर वह लहर को आगे बढ़ते हुए देखने में मग्न हो गया। इस दृश्य से उत्पन्न उल्लास ने उसकी नसों को भर दिया। हाल ही में उसे ऐसा अनुभव नहीं हुआ था। अचानक उसे कुछ याद आया। उसे बचपन में भी ऐसा ही उल्लास हुआ था। वह अकेला नहीं था जिसने ऐसा अनुभव किया था। इसमें मथुरा शहर, उसकी पूरी आबादी शामिल थी। यह महल के सामने जमा विशाल भीड़ में प्रकट हुआ था, एक ऐसी भीड़ जिसका आकार कल्पना से परे था। उसी समय कृष्ण ने अत्याचारी कंस पर छलांग लगाई और उसे नीचे गिराकर मार डाला। युयुधन का शरीर उत्साह से कांप उठा था और वह खुशी से लगभग बेहोश हो गया था। तब कृष्ण केवल अठारह वर्ष के थे। कृष्ण अपने बड़े भाई बलराम के साथ व्रज से मथुरा आए थे, ताकि कंस द्वारा आयोजित वार्षिक शस्त्र-प्रदर्शन में शामिल हो सकें। कृष्ण और बलराम पहली बार मथुरा आए थे। इस प्रदर्शन में, कंस अपनी सेना के शस्त्रों को इंद्र के नाम पर प्रदर्शित करता था, ताकि यह भ्रम पैदा हो सके कि वह इंद्र के समान शक्तिशाली है। वह लोगों को यह विश्वास दिलाना चाहता था कि वह इंद्र का अवतार है। अधिकारी वही शस्त्र प्रदर्शित करते थे जिनका उपयोग स्वयं कंस ने किया था। राजसी सेवक पूछते थे, "क्या तीनों लोकों में कोई ऐसा योद्धा है जो राजा के इस धनुष को झुका सके? क्या तुममें से कोई इसे उठाकर झुका सकता है?" लेकिन इन चुनौतियों का कभी सामना नहीं हुआ। भला कौन इतनी हिम्मत कर सकता था? यदि कोई दावा करता कि वह ऐसा कर सकता है, तो उसे तुरंत जेल में डाल दिया जाता था या इससे भी बदतर, उसे मृत्युदंड दे दिया जाता था। इस प्रकार, यह मिथक कायम रहा कि कोई भी मनुष्य उस दिव्य रूप से संरक्षित धनुष को संभाल नहीं सकता! कुछ लोग राजा को प्रसन्न करने के लिए इस मिथक पर विश्वास करने का दिखावा करते थे, लेकिन कुछ ऐसे भी थे जो वास्तव में इस पर विश्वास करते थे। खैर, जासूस, जो मानो दीवारों के पीछे से सब कुछ सुन लेते थे, सब कुछ जान जाते थे। शायद अत्याचारी की शक्ति सीमित थी, लेकिन क्या कोई जासूसों की शक्ति को नज़रअंदाज़ कर सकता था? इसी तरह यह मिथक पनपा कि कंस का धनुष वास्तव में इंद्र का पौराणिक धनुष था। तीस वर्षीय बलराम और अठारह वर्षीय कृष्ण दोनों व्रज में ग्वाले नंदा गोपा के घर में पले-बढ़े थे। उन्हें बचपन से ही मक्खन के गोले और ढेर सारे पैनकेक खिलाए जाते थे। इस तरह भरपूर भोजन मिलने के कारण वे कठिन शारीरिक श्रम के आदी थे, क्योंकि उन्हें दूर के चरागाहों

में मवेशियों को चराना पड़ता था और कृषि कार्यों में सक्रिय रूप से भाग लेना पड़ता था। उनका शरीर मजबूत ग्रामीण लोगों जैसा था। धनुष के प्रभारी राजसेवक ने घोषणा की: "यह धनुष वेदों में वर्णित भगवान इंद्र का धनुष है। तीनों लोकों में, राजा कंस को छोड़कर, जो स्वयं देवत्व का अवतार है, कोई भी मनुष्य इस महान शस्त्र को छूकर जीवित नहीं रह सकता।" वहाँ जमा हुए सभी दर्शक विस्मय में आ गए और फिर आदरपूर्वक धनुष को प्रणाम किया। अधिकारी ने प्रभाव डालने के लिए कहा, "यदि कोई साधारण मनुष्य इसे छू ले, तो वह पल भर में राख हो जाएगा।" इसका उद्देश्य भीड़ को राजा और उनके धनुष के प्रति अधिक भयभीत और आदरपूर्ण बनाना था। कृष्ण ने भोलेपन से पूछा, "क्या मैं इसे उठाने का प्रयास करूँ?" अधिकारी ने उत्तर दिया, "ठीक है, यदि आप विवाहित हैं, तो आप ऐसा तभी कर सकते हैं जब आप अपनी पत्नी को विधवा बनाने के लिए तैयार हों!" कृष्ण आगे बढ़े, और उन्होंने न केवल उसे सीधा पकड़कर उठाया, बल्कि उसे अपने सीने से लगाकर झुकाया भी। इस प्रक्रिया में, बांस के घिस जाने के कारण धनुष के टुकड़े-टुकड़े हो गए। भीड़ चकित रह गई। किसी ने कहा, "यह युवक अवश्य ही भगवान का अवतार है।" बाकी लोगों ने भी यही बात मान ली और श्रद्धापूर्वक कृष्ण को प्रणाम किया। यहाँ तक कि कंस की कथा का प्रचार करने वाला अधिकारी भी कृष्ण के दिव्य स्वरूप में विश्वास करने लगा। वह कंस को यह बुरी खबर देने के लिए दौड़ा। मिथक गढ़ने में माहिर अत्याचारी कंस भी कृष्ण के दिव्य स्वरूप के नए मिथक का शिकार हो गया। फिर, घोर भय से व्याकुल होकर, उस अत्याचारी ने एक अशांत हाथी के रखवाले को, जिसे वह स्वयं संभालने से डरता था, कृष्ण पर छोड़ देने और उन्हें मरवा देने का आदेश दिया। कृष्ण किसी भी बात से विचलित नहीं हुए, वे अत्यंत कठिन परिस्थितियों में भी शांत रहे। यदि कोई साँप उन्हें काट लेता, तो वे उसे पकड़कर धैर्यपूर्वक जाँचते कि वह विषैला है या नहीं। अन्यथा वे उस विशाल हाथी को कैसे भ्रमित कर सकते थे, उसे दिशाहीन करके पत्थर की दीवार से टकराने पर मजबूर कर सकते थे? जब वह कमजोर पड़ गया, तो उन्होंने उसके सिर पर प्रहार किया और उसे मार डाला। यह सब करने के लिए असाधारण साहस की आवश्यकता थी। जब व्रज के किसान बालक द्वारा राजसी हाथी को मारने की खबर शहर में फैली और कृष्ण की दिव्यता में विश्वास मजबूत हुआ, तो कंस ने अपने दरबार के प्रमुख पहलवानों, चानूरा और मुष्टिका को कृष्ण को युद्ध के लिए चुनौती देने को कहा।

कुश्ती का मैदान दर्शकों से खचाखच भरा हुआ था। कंस अपने महल की सामने वाली बालकनी में रखी अपनी चमकदार कुर्सी पर बैठकर मैच देख रहा था। नीचे, लाल मिट्टी पानी से नरम और समतल हो गई थी। चानूरा और मुष्टिका विश्व के सर्वश्रेष्ठ पहलवान माने जाते थे। वे खेल के नियमों और परंपराओं की अवहेलना करने के लिए भी प्रसिद्ध थे। विशेष रूप से, वे इस नियम का पालन नहीं करते थे कि कुश्ती में प्रतिद्वंद्वी को हराना चाहिए, लेकिन उसे मारना नहीं चाहिए। वे अत्यंत क्रूर और निर्दयी थे। युयुधान को याद आया, "जब मेरे पिता, जो मेरे बगल में बैठे थे, ने कहा कि बेचारा युवक बिना किसी अच्छे कारण के सीधे मौत के मुंह में जा रहा है, तो मेरे पेट में इतना तेज दर्द क्यों हुआ? आखिर मैं तब कृष्ण को जानता भी नहीं था, उनसे मेरा कोई परिचय नहीं था। सच तो यह है कि मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि बाद में हम इतने घनिष्ठ मित्र बन जाएंगे। मैं तो कंचे खेलता हुआ बच्चा था। वह अठारह साल का युवक था, जिसने एक हाथी को मार डाला था। फिर भी मेरा सारा ध्यान उसी पर टिका था, और मेरा मन उसी की ओर बह रहा था। प्रतियोगिता में, जब चानूरा गिर गया तो दर्शक एक स्वर में कैसे हँसे! आस-पास किसी जासूस की चिंता किए बिना, उन्होंने कृष्ण को थका हुआ देखकर चिंता से आह भरी। दो प्रतियोगिताएँ थीं - एक में चालीस वर्षीय चानूरा का मुकाबला अठारह वर्षीय कृष्ण से था, और दूसरी में तीस वर्षीय बलराम का सामना उनसे कुछ बड़े मुष्टिका से था। लेकिन भीड़ का सारा ध्यान चानूरा और कृष्ण के बीच की लड़ाई पर केंद्रित था। कृष्ण ने चानूरा को थकाने की रणनीति अपनाई, जो चालीस वर्ष का होने के कारण आसानी से थक सकता था।" जब चानूरा पूरी तरह थक चुका था, तो कृष्ण ने उसे केवल ज़मीन पर ही नहीं पटका, बल्कि उसका गला दबाकर उसकी पहले से ही कम होती साँस को और भी रोक दिया। यह देखकर भीड़ खुशी से झूम उठी और तालियाँ बजाने लगी—शायद तालियों की गड़गड़ाहट सुनकर कंस मर ही गया था। एक पल में कृष्ण बालकनी पर कूद पड़े जहाँ कंस अपने चमकते सिंहासन पर भौंहें चढ़ाए बैठा था। कृष्ण ने उस कंस का गला पकड़ लिया जिसने पूरी जनता को आतंकित कर रखा था; अब उसने न तो आवाज़ उठाई, न ही विरोध किया, बल्कि बस गिर पड़ा, लकवाग्रस्त हो गया। कृष्ण ने तब चिल्लाकर कहा, 'मेरे मारने से पहले ही कंस मर चुका था। मैंने बस उसकी गर्दन तोड़ दी।' शायद उन्होंने सच ही कहा था। इसमें कोई शक नहीं था कि अपने स्वामी

की मृत्यु से पहले ही कंस के अंगरक्षक पत्थर की तरह स्थिर हो गए थे। इस बीच, बलराम द्वारा मुष्टिका को परास्त करने पर किसी का ध्यान नहीं गया।

बारह साल के उस लड़के में पहली बार पैदा हुई वो भावनाएँ - प्रशंसा, स्नेह, भय, आदर और अन्य - समय के साथ और भी प्रबल होती गईं और मित्रता के गहरे बंधन में विलीन हो गईं। बड़ों की मर्दानगी और आत्मसम्मान की भावना अत्याचारी के निरंकुश शासन के भय से कुचल गई थी। कृष्ण ने छोटों को इकट्ठा किया और उन्हें सिखाया कि पुरुषों के रूप में साहस और गरिमा के साथ कैसे जीना है। अगर मैं कंस के अत्याचारी शासन में पला-बढ़ा होता, तो क्या मुझमें कोई साहस, नैतिक साहस विकसित होता? मुझे पक्षियों की चहचहाहट बांसुरी जैसी सुनाई देती है, और कृष्ण इन पक्षियों को वेणु या बांसुरी वादक कहते हैं। हाँ, प्रश्न को दोहराते हुए, क्या मुझमें नैतिक साहस विकसित होता? मेरे मन ने मुझे बार-बार आश्वस्त किया कि कृष्ण के साथ मेरे संबंध को स्वामी और उसके वफादार दास, कुत्ते के बीच के संबंध के रूप में वर्णित करना गलत है। ठीक उसी समय, युयुधन ने "कौन है?" शब्द सुने। वह आवाज से ही समझ गया कि यह नगर का रात्रि रक्षक नंदक है। युयुधन पीछे मुड़ा और बोला, "मैं हूँ," और अपना परिचय दिया। नंदक ने उसे पहचान लिया और पास आकर पूछा, "आधी रात को तुम यहाँ इस तरह क्यों बैठे हो?" युयुधन की तरह, वह भी कृष्ण का मित्र था। वास्तव में, उससे भी अधिक घनिष्ठ मित्र। जब यादव जरासंध के भय से मथुरा से भागे, तो एक क्षत्रिय को जाना पड़ा। लेकिन एक किसान होने के नाते, नंदक को ऐसी कोई आवश्यकता या विवशता नहीं थी। इसके अलावा, वह वास्तव में मथुरा का निवासी भी नहीं था। वह कृष्ण के व्रज से आया था। एक किसान के लिए, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था कि कौन शासन करता है। शासक को प्रथागत भू-राजस्व चुकाने के बाद उसके साथ संबंध समाप्त हो जाते थे। फिर भी, उनके बचपन की मित्रता और संबंध की पृष्ठभूमि के कारण, अपने मित्र के प्रति अपार प्रेम के कारण नंदका ने अपना पैतृक गाँव, अपनी ज़मीन, अपने पिता और भाई-बहनों को छोड़कर मथुरा में अपने मित्र का अनुसरण किया था। उनकी माता का कोई वध नहीं था। अब वे केवल नगर की सुरक्षा ही नहीं संभालते थे, बल्कि समुद्र से आने वाली व्यापारिक नौकाओं की निगरानी का भी जिम्मा उन पर था ताकि उनमें रखे माल की चोरी न हो। यद्यपि इस कार्य के लिए उनके अधीन काफी संख्या में सैनिक थे, फिर भी वे रात्रिकालीन गश्त अकेले ही करना पसंद करते थे, बिना किसी सहायता के।

उन्होंने पूछा, "युयुधना, तुम समुद्र के पास आए हो?"

युयुधना ने कहा, "नहीं, बलराम मुझे यहाँ किसी बात पर चर्चा करने के लिए लाए थे। लेकिन फिर उन्हें बहुत तेज दांत दर्द हुआ और उन्हें जाना पड़ा। उनके जाने के बाद मुझे बस अकेले बैठकर लहरों को देखने का मन हुआ।"

नंदका ने कहा, "अच्छा, मुझे यकीन है कि वह आपसे आगामी युद्ध में दुर्योधन का साथ देने के अपने विचार का समर्थन करने के लिए कह रहा होगा। क्या मैं सही हूँ?"

युवुधना, "क्या उसने तुमसे भी पूछा?"

Yuyudhana, 'No, $_{toot}$h-ache and he had m,

उसने कहा, "वह कृष्ण के मित्रों और रिश्तेदारों के पास जा रहा था..." लेकिन वह किनारे पर, उनसे थोड़ी दूर, किसी चीज़ को घूरने के लिए रुक गया। बाद में मिलने का बहाना बनाकर नंदक युयुधन को रेत पर दौड़ता हुआ छोड़कर चला गया। उसके बाएं कंधे पर बंधे धनुष और बाण दौड़ते समय मानो नाच रहे थे। युयुधन का पहले तो मन हुआ कि वह भी उसके साथ दौड़े, लेकिन किसी तरह उसे रेत पर दौड़ने का मन नहीं हुआ। वह खड़ा हो गया। थोड़ी देर में दौड़ते हुए नंदक उसकी नज़रों से ओझल हो गया। उसने जम्हाई ली। उसे घर जाकर सोने का मन कर रहा था। वह उस दवा के बारे में उत्सुक था जो बलराम उसके दांत दर्द को ठीक करने के लिए इस्तेमाल करते थे। उसे याद आया कि जब उसके पिता को दांत दर्द हुआ था, तो उन्होंने सोने से पहले उनके दांतों के पीछे लौंग का पाउडर लगाया था। वह रेत पर पैर घसीटते हुए घर चला गया। दरवाजे पर खड़े चौकीदार ने उसकी आवाज़ पहचानकर उसे अंदर जाने दिया।

—•⁕•—

जब युयुधन अपने गद्दे पर लेटा हुआ था, तब उसके पिता ने उससे पूछा, "तुमने बलराम के साथ इतनी देर तक किन गोपनीय मामलों पर चर्चा की?"

युयुधन ने प्रश्न किया, "क्या अतीत में हमारे यादवों में से कोई कंस जितना क्रूर था?"

पिताजी ने कहा, "जहाँ तक मुझे पता है, कोई नहीं।"

बेटे, "तो फिर कंस ही इतना बुरा क्यों निकला?"

बूढ़ा व्यक्ति अचानक बेटे की ओर बढ़ा और बोला, "क्या तुम जानते हो कि महिलाओं के लिए हमारे नियमों और मानदंडों का निष्ठापूर्वक पालन करना क्यों अनिवार्य है? यदि महिलाएं हमारे रीति-रिवाजों पर सवाल उठाने लगें, उनका पालन करने के बजाय बहुत अधिक स्पष्टीकरण मांगने लगें, तो यह हमारे समाज और समुदाय, हमारे कुल और कबीले के पतन की शुरुआत होगी।"

बेटे, क्या तुम थोड़ा विस्तार से समझा सकते हो?

पिताजी, "आपको याद होगा कि जब आपकी पत्नी पहली बार इस घर में आई थी, तो मैं उसे कुछ करने के लिए कहता था या कुछ करने से मना करता था, तो वह कितनी भड़क उठती थी। अब जब वह बूढ़ी हो गई है और उसकी अपनी बहू भी है, तो वह शांत हो गई है। क्या मैं सही कह रहा हूँ?"

पुत्र: "पिताजी, कंस की क्रूरता और आपकी बहू के बीच क्या संबंध है?"

पिताजी, "मुख्य विषय की शुरुआत के तौर पर। आप बाद में इसका संबंध समझ लेना, अगर समझ पाए तो। आप कंस की माता, उग्रसेन की पत्नी के बारे में जानते ही होंगे, जो असाधारण साहस वाली स्त्री थीं। यहाँ तक कि बेहद साहसी भी। वह घोड़े पर सवार होकर, बाण-धनुष लेकर शिकार पर जाया करती थीं। आपको मथुरा के पास स्थित इंद्रगिरि नामक स्थान याद होगा। मथुरा से घोड़े पर कुछ ही घंटों की दूरी पर है। एक बार वह इंद्रगिरि के पास के जंगल में शिकार करने गई थीं, बिल्कुल अकेली, सिवाय उनकी करीबी सहेली चित्रा के, जो शायद अभी भी जीवित हैं। यहीं ताम्रस्थली नामक स्थान पर, वह शायद अभी भी जीवित हों। क्या आपने ताम्रस्थली देखी है? मैं जो कहने जा रहा हूँ, वह सच है क्योंकि मैंने अपने पिता से वही सुना है जो चित्रा ने उन्हें सुनाया था। अपनी आँखों से। इसीलिए जब मैंने आपकी पत्नी को डांटा था, वही सलाह मैं अब आपकी बहू को दे रहा हूँ।"

पुत्र, "मुझे बताओ कि इंद्रगिरि के जंगल में क्या हुआ था।"

सत्यक ने बताया, "मासिक धर्म के दौरान स्त्री को घर से दूर नहीं जाना चाहिए। क्या हमारे यहाँ यह नियम नहीं है कि उस समय स्त्री को जल स्रोतों वाले अनजान और अपरिचित स्थानों पर जाने से बचना चाहिए? खैर, सत्यक को ऐसे नियमों और निषेधों की कोई परवाह नहीं थी, क्योंकि वह हमेशा पूछती थी, क्यों नहीं? जब वह शिकार के लिए जंगल में थी, तो उसे वहीं मासिक धर्म हो गया। चूंकि मासिक धर्म के दौरान घोड़े की सवारी करना उचित नहीं था, इसलिए उसने वहीं तंबू लगाया। मेरा मानना है कि पास में एक झील है। वह वहाँ जाती थी, अकेले ही उसमें स्नान करती थी। उसके दोस्तों और साथियों ने उसे अपवित्र अवस्था में वहाँ जाने से रोकने की कोशिश की। यह सर्वविदित है कि ऐसे जल में बुरी शक्तियाँ, अशुभ ग्रह, मानव गर्भ में जन्म लेने की प्रतीक्षा करते हैं। अनगिनत शापित जीव ऐसे अवसर की प्रतीक्षा में रहते हैं। ऐसा लगता है कि मासिक धर्म के दौरान एक या दो ऐसे ही बुरे जीव उसके गर्भ में प्रवेश कर गए। कंस की माता ने स्वयं बाद में बताया कि बिजली की गति से चलने वाला एक अत्यंत शक्तिशाली काला गोला उसके गर्भ में प्रवेश कर गया था। हर महीने वह गर्भवती हो जाती थी। यह होना तय था; और उससे पैदा हुआ बच्चा कंस था। बचपन में किसी भी यादव बच्चे की लंबाई, कद-काठी, शरीर और घनी भौंहें कंस जैसी नहीं थीं। वास्तव में, यह एक राक्षसी जन्म था; जब उसकी माँ को अपनी ही धृष्टता पर पछतावा हुआ, तब तक बहुत देर हो चुकी थी। इसका क्या लाभ? उसे इस घटना से पहले ही समझदार हो जाना चाहिए था।

युयुधन को याद आया कि उसके पिता इस बात पर ज़ोर देते थे कि परिवार की माहवारी वाली महिलाओं को घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए और किसी भी अनजान पानी के पास नहीं जाना चाहिए। वे आज भी इस बात पर अड़े हुए थे। केवल पिता ही नहीं, बल्कि परिवार के बड़े-बुजुर्ग भी आम तौर पर इस नियम का पालन करवाते थे। उसे एहसास हुआ कि इतने वर्षों बाद भी उसने इस नियम को गंभीरता से नहीं लिया था। विवाह के शुरुआती वर्षों में उसकी पत्नी पारंपरिक रीति-रिवाजों और नियमों के प्रति थोड़ी उदासीन थी। वह बड़ों द्वारा माने जाने वाले कई रीति-रिवाजों की अवहेलना करती थी। लेकिन अब जब वह स्वयं बड़ी हो गई थी, तो वह अपनी बहू पर उन्हें लागू करने की कोशिश कर रही थी। इन सब बातों पर विचार करते हुए युयुधन के मन में एक सवाल उठा: क्या ये बुरी शक्तियां और शापित जीव केवल झीलों, तालाबों, कुओं, नालों और नदियों में ही घात लगाए बैठे रहते हैं, या समुद्र में भी? जैसे ही उसने समुद्र के बारे में सोचा, उसके कानों में

लहरों की सरसराहट सुनाई देने लगी। वह अपने पिता से पूछकर अपना संदेह दूर करना चाहता था। लेकिन वह ऐसा नहीं कर सका, क्योंकि उसका मन, न केवल कान, समुद्र और उसकी आवाज़ से भर गया था। ऊपर आसमान चांदनी से जगमगा रहा था। समुद्र भले ही दिखाई न दे रहा हो, लेकिन पास ही था, अपनी लहरों के साथ चांदनी में खेल रहा था। द्वारका की सुंदरता ने उसे मंत्रमुग्ध कर दिया। थोड़ी देर बाद उसने अपने पिता की ओर देखा, लेकिन पाया कि बूढ़ा सो रहा है। हाल ही में उसके पिता की सोने की आदत ऐसी ही हो गई थी। वह जागते, फिर अचानक खर्राटे लेने लगते। फिर एक मिनट बाद आंखें खोल लेते। युयुधन ने भी जम्हाई ली और आंखें बंद कर लीं। समुद्र की मधुर ध्वनि ने उसे भी जल्द ही सुला दिया। लेकिन थोड़ी देर बाद वह एक सपने से जाग उठा। उसने सपने में एक काली, दुष्ट शक्ति को बिजली की गति से गर्भ में प्रवेश करते देखा, बार-बार देखा। सपने में वह सोचने लगा कि क्या उस जबरन प्रवेश से कर्ण की माता को दर्द नहीं हुआ, क्या वह डरी नहीं? सपने में वह खुद भी डर गया और पसीने से तरबतर होकर जाग उठा। उसके पिता गहरी नींद में थे। वह उठ बैठा। समुद्र की गड़गड़ाहट शांत हो गई थी। चांद नीचे आ गया था, और आंगन में रोशनी से ज्यादा परछाइयां पड़ रही थीं। युयुधन जानता था कि उसे अब और नींद नहीं आएगी, फिर भी वह पीठ के बल लेट गया, आँखें खुली हुई थीं। उसका मन पीछे हटती लहरों की आवाज़ पर केंद्रित था, लेकिन तभी अचानक उसे लगा कि सब कुछ अवास्तविक है। जब उसे एहसास हुआ कि पुराने रीति-रिवाजों और आचरण के नियमों में उसकी रुचि अभी गंभीर नहीं हुई है, तो उसने सोचा कि क्या उसे ताम्रस्थली जाकर चित्रा से मिलना चाहिए। लेकिन क्या वह अभी भी जीवित थी? उसे याद था कि उसने उसे द्वारका आते-जाते देखा था। लेकिन हाल ही में नहीं। अगर जीवित है, तो उसकी उम्र कम से कम नब्बे वर्ष होगी। आखिर, ताम्रस्थली बहुत दूर नहीं थी, घोड़े पर दो घंटे की यात्रा, समुद्र के समानांतर और उसके दाहिनी ओर, सीधे। यह प्रभास की दिशा में स्थित थी। उसने सुबह घोड़े पर जाने का फैसला किया। उसने उस जगह को अंदर से नहीं देखा था। उसने अनुमान लगाया कि वहाँ एक बड़ा किला होगा, जिसमें एक प्रवेश द्वार होगा, और शायद पंद्रह से बीस घर होंगे। चूंकि गर्मी का मौसम था, इसलिए उसने सुबह-सुबह ही लहरों की गड़गड़ाहट सुनी जो उठती और करीब आती जा रही थीं। उसे लगा कि

ध्वनि से ही वह समझ सकता है कि लहरें आगे बढ़ रही हैं। फिर उसने नींद भगाने के लिए अपने शरीर को घुमाया।

ताम्रस्थली की गलियों में जब कुत्तों ने घोड़े पर सवार अजनबी को देखा और सूंघा, तो वे ज़ोर-ज़ोर से भौंकने लगे। जब युयुधन ने उन्हें शांत करने के लिए कुछ शब्द कहे, तो कुत्ते भौंकना बंद करके अपनी पूंछ हिलाने लगे। यह गाँव उनकी अपेक्षा से कहीं बड़ा था, पंद्रह-बीस घरों वाला गाँव नहीं, बल्कि लगभग चालीस घरों वाला गाँव। इसमें आठ दो मंजिला इमारतें थीं, और बाकी एक मंजिला। सभी इमारतें एक ही प्रकार की और एक ही शैली में बनी थीं। न केवल घरों की दीवारें, बल्कि किला भी तांबे के भूरे रंग का था, जो गाँव के नाम के अनुरूप था। यह सोचकर कि किसने इसे इतना उपयुक्त नाम दिया है, ताम्रस्थली, यानी तांबे का स्थान, अजनबी-घुड़सवार ने एक गली की बच्ची से चित्रा के घर के बारे में पूछा। छोटी बच्ची ने पलटकर पूछा, "आपका मतलब हमारी मालकिन, दादी चित्रा के घर से है?"

खैर, पिताजी सही थे। चित्रा लगभग नब्बे से पचानवे वर्ष की थीं। उनका मुँह दाँतों से खाली था। लेकिन वे उतनी बूढ़ी नहीं दिखती थीं जितनी उन्हें होनी चाहिए थीं। जब वे बहुत छोटी थीं, तब वे बहुत सुंदर और बुद्धिमान रही होंगी। अब वे लगभग बहरी हो चुकी थीं। उन्होंने कहा, "आप मेरी सही उम्र जानना चाहते हैं। सच में कौन जानता है? मैंने इन आँखों से क्या-क्या देखा है! मेरी स्वामिनी की मृत्यु के बाद महल से मेरा रिश्ता पूरी तरह टूट गया। मैंने सुना है कि आप और कंस का वध करने वाले कृष्ण अच्छे मित्र हैं। मुझे बेवजह द्वारका क्यों जाना चाहिए? अब समय बहुत बदल गया है। लेकिन कृष्ण मुझसे मिलने और बात करने आना कभी नहीं भूलते।"

युयुधन ने उससे कहा कि कृष्ण ने उसे उससे मिलने भेजा है। उसने अपने बाएं हाथ की एक उंगली से सोने की अंगूठी उतारकर उसे देते हुए कहा, "लो, इसे ले लो। मैं तुमसे यह जानने आया हूँ कि क्या सचमुच जल में शापित प्राणी हैं। मैंने सुना है कि तुम्हारी प्रेमिका के गर्भ में कंस का जन्म ऐसे ही किसी प्राणी के प्रवेश से हुआ था। मैं तुमसे शपथ लेता हूँ कि यदि तुम मुझे सच बताओगी, तो मैं किसी और को इसके बारे में नहीं बताऊंगा।" उसने अंगूठी उसकी हथेली पर रख दी और उसे अपने हाथों से बंद कर दिया।

चित्रा, "तुम ये सब पुरानी बातें क्यों जानना चाहती हो?"

युयुधना ने कहा, "चित्रा, मुझे इस मामले के बारे में पहले से ही थोड़ी जानकारी है। जैसा कि तुमने कहा, तुम्हारी स्वामिनी की मृत्यु, कंस की मृत्यु और उस भूमि से हमारे पलायन के बाद से कई वर्ष बीत चुके हैं।"

अपनी हथेली में अंगूठी पकड़े हुए चित्रा ने कहा, "लेकिन, स्वामी जी, मैंने इसे गुप्त रखने की शपथ ली है।" यही उसका अंतिम प्रतिरोध था।

युयुधन ने कहा, "देखो यहाँ। वह मर चुकी है। कंस मर चुका है। मैं तुम्हारा हाथ पकड़कर तुमसे वादा करता हूँ कि मैं यह बात किसी को नहीं बताऊंगा।"

चित्रा ने अपनी हथेली से अंगूठी उतारकर अपनी कमरबंद में छिपा ली। फिर उसने अपने आंगन में जमा बच्चों को भगा दिया। उसने पाया कि उसकी आवाज़ में अभी भी जोश था। उसने उसे अंदर बुलाया और उसके सामने दूध का मग रख दिया। उसने रसोई के दरवाजे के पास खड़ी अपने पोते की पत्नी को उन्हें अकेला छोड़ने का आदेश दिया। फिर वह दीवार से टेक लगाकर बैठ गई और बोली, "तुमने कहा था कि तुम और कृष्ण दोस्त हो। क्या उसने तुम्हें यह नहीं बताया?"

युयुधना, "उसने मुझसे कहा कि मैं यह बात सीधे तुम्हारे मुंह से सुनूं। उसने कहा कि मैं तुमसे सारी जानकारी प्राप्त कर सकता हूं। क्या उसे सब कुछ पता है?"

चित्रा ने कहा, "अच्छा, जिस दिन हम मथुरा से यहाँ आ रहे थे, उन्होंने मुझे एक तरफ बुलाया और सब कुछ जान लिया। मुझे तब की बातें ज़्यादा याद हैं। अब आपको क्या लगता है मेरी उम्र कितनी है?"

युयुधन ने कहा, "जितना तुम्हें याद है, उतना बताओ।" उस समय उन्हें कृष्ण पर गुस्सा आया क्योंकि उन्होंने अपने इतने करीबी दोस्त से यह रहस्य साझा नहीं किया था। शायद इस पर चर्चा करने का कोई अवसर ही नहीं था। उन्होंने किसी तरह अपने गुस्से को दबाया और चित्रा की कहानी सुनी।

चित्रा, "खैर, यह सब उस जलस्थान के पास हुआ था। लेकिन मुझे शापित प्राणियों के बारे में कुछ नहीं पता। मेरी स्वामिनी बहुत ही जीवंत और सुंदर महिला थीं। क्या यह सच है कि आप लोग समय-समय पर रैवतक पहाड़ियों पर जाते हैं? यह यादव क्षत्रियों की एक पुरानी परंपरा है कि वे आस-पास की पहाड़ियों पर जाते हैं। क्या आपको मथुरा के पास इंद्रगिरि याद है? जब हमने अपना देश छोड़ा था तब आपकी उम्र कितनी थी? वह पूर्व दिशा में एक पहाड़ी थी। वह कई रंगों के सुंदर फूलों, लताओं और हरे-भरे छायादार पेड़ों से भरी हुई थी - एक बहुत ही सुखद और शांत जगह। राजपरिवार की सभी महिलाएं वहाँ थीं। हमारे साथ रसोइये

और अन्य नौकर भी थे। जैसा कि मैंने कहा, मेरी स्वामिनी एक जीवंत और सक्रिय महिला थीं। निःसंतान और बहुत बहादुर। उन्होंने अपने धनुष-बाण से एक हिरण का पीछा किया और जल्द ही घने जंगल में एक सुनसान जगह पर पहुँच गईं। वहाँ कोई नहीं था। उसी समय द्रुमिला प्रकट हुए, जो राक्षस वंश के राजा थे। पूर्ण राक्षस नहीं। उनका जन्म एक राक्षस की माता आर्य थीं या इसका उल्टा—अब मुझे ठीक से याद नहीं। उसने उस पहाड़ी क्षेत्र के उत्तर में जंगल साफ करके अपना राज्य स्थापित किया था। वह लंबा-चौड़ा और हट्टा-कट्टा था, हमारे यादव राजाओं की तरह वस्त्र धारण किए हुए। क्या नीचे के लोग ऊपर वालों के पहनावे, खान-पान और तौर-तरीकों का अनुकरण नहीं करते? हमारा राज्य उसके नए राज्य के निकट ही था। उसने पीले रेशमी वस्त्र, सिर पर मुकुट, गले में सफेद फूलों की माला और चमकदार बालियां पहनी हुई थीं। चुपचाप हिरण का पीछा करते हुए उसकी मुलाकात राक्षस से हुई। वह डरपोक स्त्री नहीं थी। एक पल के लिए उसे लगा मानो उसका पति उग्रसेन स्वयं उसके सामने खड़ा हो। लेकिन कमजोर शरीर वाले पति और बलवान शरीर वाले राक्षस में क्या समानता थी? उसने उससे पूछा, 'तुम मेरे पति के वेश में क्यों आए हो?' उसने उत्तर दिया, 'युवती, मैंने कोई वेश नहीं बदला है। मैं एक असली पुरुष हूँ।' क्या मुझे और स्पष्टीकरण देने की आवश्यकता है? आप जानते हैं कि पति के वेश में प्रकट होने में एक चाल होती है। वेशभूषा। अगर पता चल जाए तो एक महिला हमेशा बाद में यह बहाना बना सकती है कि उसने उसे अपना पति समझ लिया था! प्रेमी की चतुराई ऐसे बहाने बनाने में होती है। यही रिवाज है।" उसने बेजान हंसी और तिरछी नज़र से देखा।

Yuyudhana, "What happened next?"

चित्रा, "क्या मुझे स्पष्ट बात समझानी चाहिए? रानी और उनके दल पूरे पखवाड़े तक मथुरा नहीं लौटे। शाम होते ही वह हमें शराब पिलाकर हम सबको विदा कर देती थीं। और खुद रात के लिए तैयार रहने के लिए पूरे दिन सोती रहती थीं। सच सिर्फ मुझे ही पता था। आखिर, कोई बिना किसी भरोसेमंद साथी के इस तरह कैसे रह सकता है? उनके पति चिंतित हो गए कि उनकी पत्नी पखवाड़े भर बाद भी नहीं लौटीं। वह भी बीमार पड़े थे। एक दिन, अचानक और बिना बताए, वह सिर्फ दो अंगरक्षकों के साथ रात में वहाँ पहुँच गए। चारों ओर चाँदनी थी। पूरा इलाका हरे-भरे पेड़ों, लताओं और फूलों से ढका हुआ था। वह सीधे उस बगीचे में आए जहाँ हमने डेरा डाला हुआ था। उन्होंने रानी का तंबू ढूँढा और दरवाजे पर खड़े हो गए।

मैं उस समय दरवाजे पर पहरा दे रही थी। उन्हें देखकर मैं डर गई। मेरे साथ एक और साथी थी, वह भी डरी हुई थी। वह नौकरानी थी, साथी नहीं। उसका नाम इला था। वह भी उतनी ही डरी हुई थी। उन्हें हमारी सुरक्षा पर इतना ध्यान क्यों देना चाहिए था? चेहरे? तंबू का कपड़ा दरवाज़ा खोलकर वह अंदर घुस गया और उसने एक ऐसे आदमी को देखा जिसने बिल्कुल उसी की तरह कपड़े पहने थे। वह किसी प्रेतबाधित व्यक्ति की तरह खड़ा था। मालकिन भला कैसे नहीं डरती? लेकिन वह साहस और दृढ़ता से भरी हुई स्त्री थी। उसने अपनी बाहों में लिए राक्षस को धक्का दिया और उसे अपने पास बिठा लिया। फिर उसने असली पति पर क्रोधित होने का नाटक किया और उस पर चिल्लाई, 'अरे अजनबी, मेरे पति के वेश में, तू मुझे धोखा देने आया है। मैं पति की बड़ी भक्त हूँ। मैं तुझे चेतावनी दे रही हूँ। मैं तुझे श्राप दूँगी।' द्रुमिला अपने पति पर झपटी, उसके सिर पर ज़ोर से मारा और उसे बेहोश कर दिया। जब उग्रसेन को होश आया, तो उसने नाटक जारी रखा और उसे समझाया, 'उसका मेकअप इतना सटीक था कि मुझे लगा कि यह तुम ही होगे। मुझे कैसे पता चलता कि वह धोखा दे रहा है? अपनी आवाज़ मत उठाओ। कहीं तुम्हारी बेइज्जती न हो जाए और तुम लोगों की नज़रों में हंसी का पात्र न बन जाओ।'

युयुधना ने बीच में दखल देते हुए कहा, "क्या उसने उसे मौके पर ही नहीं मार डाला था?"

चित्रा, "तुम क्षत्रियों में एक खास तरह की स्त्रियाँ होती हैं, जो सबसे अलग होती हैं। वे इतनी कुशलता से काम करती हैं कि पति जानते हैं कि उन्हें धोखा दिया जा रहा है, फिर भी वे अपनी पत्नियों के जादू से बच नहीं पाते। वह जानता था कि वह झूठ बोल रही है, लेकिन फिर भी वह कुछ और ही मानना चाहता था। उग्रसेना विश्वास करने वाली भी थी और धोखा देने वाली भी। उसी रात हम सबको वहाँ से भेज दिया गया। मुझे एक अंधेरे कमरे में बंद कर दिया गया, मेरे हाथ-पैर बाँध दिए गए। मुझे तब तक यातना दी गई जब तक मैंने सच नहीं बता दिया। लेकिन उसकी पत्नी ने बहस करना नहीं छोड़ा, 'वह धोखेबाज़ उसी रात आया था। वह कह रहा था कि तुम हो, और मुझसे बातें कर रहा था। भगवान का शुक्र है, तुम उसी समय आ गए।' खैर, जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, जब कोई पुरुष धोखा खाना चाहता है, तो स्त्री की बातें सच हो जाती हैं। एक और बात हुई थी। क्या तुम जानते हो? जो विवाह के बाद चार साल तक गर्भ धारण नहीं कर पाई थी, अब गर्भवती हो गई।

राजा ने मुझे और सेविका इला को आदेश दिया कि हम इस घटना के बारे में किसी को एक शब्द भी न कहें।"

युयुधना ने पूछा, "क्या उसके और बच्चे नहीं थे?"

चित्रा ने कहा, "क्यों नहीं? उस प्रेमी द्वारा पहली बार गर्भ धारण करने के बाद, बाकी सभी बच्चे उग्रसेन के ही थे - सभी आठ लड़के और पाँच लड़कियाँ, मुझे उनके नाम भी याद हैं - लड़कों के नाम थे न्याग्रोध, सुनामा, कंका, सुभुमीपा, शंकु, सुतनु, अनाद्दष्टि, पुष्टिमान। लड़कियों के नाम थे कंसा, कंसवती, सुतनु, कंका, राष्ट्रपाली।"

Yuyudhana, "where are they?"

चित्रा, "हाँ, मैं तुम्हें वह दुख भरी कहानी सुनाऊँगी। तुम्हें पता है, पहला पुत्र कंस था। उसका शरीर इतना विशाल था कि शिशु अवस्था में भी उसके हाथ-पैर उसकी माँ की गोद से भी लंबे थे। उग्रसेन ने उसे कभी गोद में उठाकर या उठाकर प्यार नहीं किया। लेकिन उसके जन्म के समय उसने उसके सिर को सूंघा और उसे अपना बच्चा मान लिया। जब वह बच्चा छह महीने का हुआ, तो उसकी पत्नी के गर्भ में एक और बच्चा पल रहा था। ज़ाहिर है, वह उग्रसेन का ही बच्चा था। है ना? प्रसव के बाद उसकी देखभाल कौन करता? वह एक के बाद एक तेज़ी से बच्चे पैदा करने लगी। उसे बहुत शारीरिक कष्ट सहना पड़ रहा था। एक बच्चा उसकी गोद में दूध पी रहा था, जबकि दूसरा बच्चा उसके पेट में था, जो उसका पोषण कर रहा था। यह कहना मुश्किल है कि उग्रसेन ने इतनी जल्दी इतने सारे बच्चे क्यों पैदा किए। क्या यह इतनी असाधारण प्रजनन क्षमता वाली पत्नी को देखकर उसकी खुशी का इज़हार था? या फिर यह उसके साथ हुए विश्वासघात का बदला था, ताकि उसके शरीर को नष्ट किया जा सके?" क्या यह जंगल था? या फिर किसी स्त्री का प्रेम जीतने के लिए यौन शक्ति का प्रदर्शन करने की पुरुषवादी प्रवृत्ति? खैर, उसके गर्भ से तेरह बच्चे निकले। इस बीच, क्या आप जानते हैं कि क्या हुआ? उसने सभी बच्चों से प्रेम किया, चाहे वे जन्म ले चुके हों या अभी जन्म लेने वाले हों। लेकिन उसने कंस को पूरी तरह से अनदेखा कर दिया, यहाँ तक कि उसके प्रति शत्रुता भी दिखाई। उसने कभी बच्चे को गोद में नहीं उठाया, कभी उसे दुलार नहीं किया, कभी उसके साथ नहीं खेला। कभी उसे माता-पिता का प्यार नहीं दिखाया, बच्चे के पेशाब से उसके कपड़े गीले हो गए! यहाँ तक कि जब कंस बड़ा हो रहा था, तब भी उसे उग्रसेन से कोई ध्यान नहीं मिला। उसके साथ लगभग एक नौकर के बच्चे

जैसा व्यवहार किया जाने लगा, जो घर के दान पर जी रहा था। लेकिन वह माँ जिसने उसे गर्भ में धारण किया, उसे अपने गर्भ में पाला और फिर उसे जन्म देने की पीड़ा सही, यह सब कैसे सहन कर सकती थी? उसने उग्रसेन के व्यवहार का जवाब कंस पर अतिरिक्त प्रेम बरसाकर दिया। लेकिन उसने कंस के प्रति क्रोध का प्रकोप भी दिखाया, जो उसके प्रति उसकी चिंता का संकेत था। उग्रसेन ने कभी बच्चे को पीटा नहीं, कभी उसे दंडित नहीं किया, लेकिन माँ ने उस पर खूब प्यार बरसाया। कभी-कभी उसे मारती थी। ऐसी पिटाई के बाद, वह दूसरे चरम पर पहुँच जाती — बच्चे को पकड़कर अपने शरीर से लगा लेती और उसे चूम-चूम कर लो। कंस को बहुत बुरा लगता होगा जब वह अपने पिता को अपने छोटे भाई-बहनों को गोद में उठाते और दुलारते देखता, जबकि उसके साथ एक अजनबी, एक परदेसी जैसा व्यवहार किया जाता था। ऐसे हालात में बढ़ते हुए लड़के का क्या होता? शारीरिक रूप से तो वह मजबूत हो गया था, और शायद मानसिक रूप से भी वह कठोर हो गया होगा। उसने कभी किसी मान्यता प्राप्त शिक्षक से धनुर्विद्या या वेदों की नियमित या व्यवस्थित शिक्षा नहीं ली। जब प्रेम ही न हो तो शिक्षा कैसे हो सकती है? जहाँ पिता को उसकी शिक्षा या विकास की कोई परवाह नहीं थी, वहीं माँ, गर्भधारण और प्रसव के दुष्चक्र में फँसी होने के कारण, लड़के पर ध्यान नहीं दे पाती थी। कंस केवल गदा और पत्थर या धातु की कुल्हाड़ी जैसे साधारण हथियारों में ही निपुण हो सका। जब उसके सगे पुत्र न्यग्रोध अठारह वर्ष का हुआ, तो उग्रसेन ने अपने बड़े पुत्र कंस की उपेक्षा करते हुए औपचारिक रूप से उसके सिर पर ताज पहनाने का प्रयास किया। कंस को जन्म देने वाली माँ भला इस घोर अपमान को कैसे सहन कर सकती थी? उसके साथ अन्याय हुआ? उसने अपने पति से पूछा, 'इस भेदभाव का क्या अर्थ है?' उस समय भी उसे सच बता देना चाहिए था। लेकिन उसने नहीं बताया। फिर भी, यह जानते हुए भी कि वह बेवफाई की दोषी है, उसने उससे तेरह संतानें पैदा कीं। उसने अपनी आवाज बुलंद की और पूछा कि वह अपने सबसे बड़े बेटे को सिंहासन के अधिकार से क्यों वंचित कर रहा है। तब तक, कंस स्वयं अपने जन्म के बारे में सच्चाई जान चुका था। आपको याद होगा मैंने नौकरानी इला का जिक्र किया था। वह बहुत मुंहफट लड़की थी, और उसने कंस को सारा रहस्य बता दिया। आप जानते हैं, वह केवल नौकरानी बनने लायक है, कभी साथी नहीं। सच्चाई का पता चलते ही कंस अपनी माँ के पास गया और उससे इसके बारे में पूछा। वह माँ जो बिस्तर पर पड़ी थी,

कई गर्भधारण और प्रसवों से थक चुकी थी, और जिसका सारा खून निकल चुका था, उसने अपने विशालकाय बेटे के चेहरे और कंधों को कोमलता और स्नेह से छुआ। फिर उसने उत्तर दिया, 'पुत्र, तुम मेरे पुत्र हो, इसमें कोई संदेह नहीं है। मैं भी उतनी ही प्रिय हूँ।' मैं तुम्हारी माँ हूँ, और बाकी सब कुछ महत्वहीन है।" जलती आँखों वाला यह पुत्र सीधे दरबार में पहुँचा जहाँ उग्रसेना मुख्य पुरोहित, मंत्रियों और सार्वजनिक नेताओं के साथ विराजमान थीं। राजा के सामने चुनौती भरे लहजे में खड़े होकर उसने भयानक स्वर में चिल्लाकर कहा, "आज ही, क्या आप मुझे अपना युवराज घोषित करेंगे या नहीं?" उस समय भी राजा सच्चाई का सामना कर सकते थे। नहीं, वे भयभीत थे और काँप रहे थे। उन्होंने सहमति दे दी, और अगले दिन कंस का राज्याभिषेक हो गया। उग्रसेना ने अपने हाथों से कंस के सिर पर मुकुट रखा। रक्तहीन माँ बड़े तकिये से टेक लगाकर समारोह देखती रही और आँसू बहाती रही। फिर वह अपने कक्ष में गई, अन्य सभी बच्चों को गले लगाया और अपने शरीर में बची हुई थोड़ी सी ऊर्जा का उपयोग करके रोने और आँसू बहाने लगी। उसकी हालत और बिगड़ गई। उग्रसेना आने वाली घटनाओं का पूर्वाभास नहीं कर सकती थीं। शायद वह भविष्य को अधिक स्पष्ट रूप से देख सकती थीं! सचेत तर्क से नहीं, बल्कि सहज ज्ञान से, मानो। उस दिन वह इतना रोई कि उसका उसके शरीर पर प्रतिकूल, विषैला प्रभाव पड़ा और एक सप्ताह के भीतर ही उसकी मृत्यु हो गई, उसका सिर उसके पति की गोद में था। उस बेहोशी की हालत में भी उसने तीन बार कहा, 'मैंने धोखा दिया।' उसके पति ने उसके मृत शरीर को गले लगाया और बुदबुदाया, 'हाँ, मैंने खुद को धोखा खाने दिया।' मैं ठीक उसके पास थी और मैंने यह सब स्वयं सुना। उसकी मृत्यु के बाद, शायद वह अपने साथ हुए धोखे की जड़ का पता लगाने के विचार में व्यस्त हो गया। उसने बाहरी दुनिया से नाता तोड़ लिया और अपने भीतर गहराई में उतर गया। उसने अपने राजसी कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को त्याग दिया और अपने बच्चों, विशेषकर सबसे छोटे बच्चे, की देखभाल करने लगा। वह उन्हें दूध पिलाता और माँ की तरह अपनी गोद में सुलाता था। मैं उसे बच्चों की देखभाल के काम में निर्देश देती थी। अगर घरेलू मोर्चे पर यह सब हो रहा था, तो सार्वजनिक क्षेत्र में कुछ और ही चल रहा था। कंस ने अपने प्रति पूरी तरह वफादार एक गुट खड़ा कर लिया और प्रशासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली। उसने शहर के सुरक्षाकर्मियों को बदल दिया और उनकी जगह अपने आदमियों को नियुक्त कर दिया। उसने हाथी पालकों को बदल

दिया, सेना प्रमुखों को बर्खास्त कर दिया और सेना में अपने आदमियों को भर दिया। फिर उसके आतंक और मृत्यु के शासन का आरंभ हुआ। उसके चार भाई, न्याग्रोध, सुनामा, कंका और सुभुमीपा, नदी में डूबकर मर गए। उनकी मृत्यु से जनता में शोक से कहीं अधिक आतंक फैल गया। इस घटना को लेकर कानाफूसी और अटकलें लगाई जा रही थीं। एक महीने बाद, कहा जाता है कि उसके दो और भाइयों को पिछवाड़े में खेलते समय एक बाघ उठा ले गया। बेशक, कोई प्रत्यक्षदर्शी नहीं था। किसी ने नहीं पूछा कि जानवर किस दिशा से आया था, क्योंकि महल के पीछे नदी थी! यह कल्पना करना असंभव था कि कोई बाघ यार्नुना नदी पार करके भीड़ भरे शहर में आ जाए! वह भी शाम के समय। उग्रसेना क्रोध और दुःख से चिल्लाया। परिणामस्वरूप, अगले दिन युवराज ने उसे रोग-कक्ष में अलग-थलग कर दिया और उसे बंद कर दिया। उसने आदेश दिया कि कोई भी राजा से न मिले क्योंकि डॉक्टरों ने कहा था कि उसे बिना किसी बाधा के आराम करने दिया जाना चाहिए। बाकी छोटे बच्चे अचानक गायब हो गए, और किसी को कुछ पता नहीं चला कि क्या हुआ था। ज़ाहिर है, आधिकारिक तौर पर यही बताया गया कि उनकी मौत उल्टी की बीमारी से हुई थी। कहा जाता है कि सारी मौतें एक हफ्ते के अंदर हुईं। कम से कम लोगों का तो यही मानना था। महल में हम बस इतना जानते हैं कि वे सब अचानक गायब हो गए। लेकिन हममें से किसी ने भी यह पूछने की हिम्मत नहीं की कि ऐसा कैसे हुआ।

अपना विवरण समाप्त करने के बाद चित्रा दरवाजे की ओर मुड़ी। उसने देखा कि उसके पोते की पत्नी दहलीज के पास खड़ी कुछ इशारा कर रही है। चित्रा उठकर घर के अंदर चली गई। युयुधन वहीं बैठा रहा। इस नए ज्ञान के प्रकाश में वह अपने बचपन के अनुभवों की समीक्षा करने लगा, और कंस और उसके प्रशासन के बारे में उसने जो कुछ देखा और सुना था, वह अब अपने आप एक नए रूप में प्रकट हो रहा था। उसके जाने के बाद जो सन्नाटा छाया रहा, उससे उसे अतीत की एक स्पष्ट तस्वीर प्राप्त करने में मदद मिली। द्रुमिला आधी राक्षसी थी। लेकिन राक्षस भी मनुष्य ही थे। कंस निश्चित रूप से मानव मांस खाने वाला नहीं था। यह विचार कि यदि वह राक्षसी बीज के बजाय आर्य बीज से पैदा हुआ होता, तो शायद वह ऐसा न बनता, उसके मन के एक कोने में उसे परेशान कर रहा था। एक और दृष्टिकोण खुल गया। जरासंध भी आधा राक्षसी था, जिसका पिता आर्य और माता राक्षसी थीं। क्या कंस के आधे राक्षस पिता की संतान होने के कारण

जरासंध ने अपनी दो पुत्रियों का विवाह कंस से करने का प्रस्ताव रखा था? यदि ऐसा है, तो जरासंध को कंस के जन्म के बारे में कैसे पता चला और किसने बताया? या फिर जब कंस ने अपने भाई-बहनों की हत्या करवा दी और अपने पिता को कारागार में डलवा दिया, तो उसने सभी यादवों से नाता तोड़ लिया। लोग उससे दूरी बनाए रखने लगे। उसे अपना शासन चलाने के लिए विदेशी सहायता लेनी पड़ी। पूर्वी क्षेत्र में जरासंध का बहुत प्रभाव था। केवल युद्धों में विजय प्राप्त करके ही नहीं, बल्कि अन्य शासकों की सहायता करके भी उसने अपने साम्राज्य की सीमाओं का विस्तार किया था। यह स्वाभाविक ही था कि कंस ने जरासंध से सहायता मांगी हो। इसके अलावा, यह जानकर कि कंस भी उसकी ही तरह आधा राक्षस था, जरासंध को कंस से प्रेम हो गया होगा, जिसके परिणामस्वरूप अंततः उसने अपनी दो पुत्रियों का विवाह कंस से करने का प्रस्ताव रखा। कंस और जरासंध के बीच गठबंधन होने के साथ ही यादवों की स्वतंत्रता का अंत हो गया। कंस वस्तुतः जरासंध का प्रतिनिधि बन गया था, जो मथुरा में उसकी सत्ता का प्रतिनिधित्व करता था। जासूसी, कारागार, सर्वव्यापी संदेह और अविश्वास का माहौल, अचानक होने वाली हत्याएं, नागरिकों द्वारा हथियार रखने और इस्तेमाल करने पर प्रतिबंध, और यहां तक कि ज़ोर से बोलने पर भी रोक - ये सभी विशेषताएं राज्य की परस्पर संबंधित थीं और एक दूसरे से विकसित हुई थीं। जैसे-जैसे कंस की जरासंध पर निर्भरता बढ़ती गई, अपने लोगों की अनुपस्थिति से उत्पन्न खालीपन ने उसकी पत्नियों के प्रति उसके लगाव को और भी बढ़ा दिया होगा। कंस जैसा क्रूर व्यक्ति भी अपनी दोनों पत्नियों के लिए एक आदर्श पति था और उनके प्रति उसका प्रेम लोगों के बीच प्रसिद्ध था। वह उनके बिना कभी खाता, सोता या अंतरंग बातें नहीं करता था। वह एक पत्नी की गोद में सिर रखकर सोता था जबकि दूसरी उसे पंखा करती थी। उसने महल की सुंदर दासियों की ओर कभी दृष्टि भी नहीं डाली। बड़ी का नाम अस्ती और छोटी का नाम प्राप्ति था। दोनों निःसंतान थीं। उसने तीसरी से विवाह क्यों नहीं किया? क्या यह उनके प्रति उसके लगाव के कारण था या अपने ससुर के भय के कारण? संभव है कि अपने ही भाई-बहनों का वध करने वाले निःसंतान कंस को अपने मामा देवक की पुत्री देवकी से एक अजीब सा स्नेह हो गया हो। देवकी का चेहरा इतना आकर्षक था कि वह इस तरह के व्यवहार को आकर्षित कर सकती थी। अस्सी वर्ष की आयु में भी, उसके चेहरे से कोमल स्त्री प्रेम, नारीत्व की कोमलता और सौम्यता झलकती थी। वासुदेव

ने देवक की सात पुत्रियों से विवाह किया था, जिनमें से कंस ने देवकी को विशेष प्रेम और ध्यान दिया था। शायद उसने देवकी के पुत्रों में से किसी एक को गोद लेने और उसे अपना उत्तराधिकारी बनाने के बारे में सोचा हो। शायद कंस की निःसंतान पत्नियाँ देवकी के प्रति अपने पति के इस लगाव को सहन नहीं कर पाई हों। यह भी संभव था कि मगध के शासकों को यह आशंका रही हो कि मथुरा के प्रशासन में यादवों का प्रभाव पुनर्जीवित होकर मजबूत होगा। कंस के दरबारी ज्योतिषी सभी मगध के थे। जब यह घोषणा हुई कि कंस की मृत्यु निश्चित रूप से देवकी के बच्चों के हाथों होगी, तो यह स्वाभाविक और समझ में आने वाला था कि देवकी के प्रति उसका प्रेम तीव्र घृणा में परिवर्तित हो गया। लेकिन उसने देवकी को क्यों नहीं मारा, उस शरीर को जिसमें उसकी मृत्यु के बीज थे? क्या यह उसके लिए इतना कठिन काम था? उसके मन में अब भी इतना गहरा प्रेम था कि वह उसे मारने का दृढ़ संकल्प ही नहीं जुटा पाया। लेकिन, स्वार्थ की भावना प्रबल होती है। उसने देवकी को जेल में डाल दिया। उसका तर्क यह रहा होगा कि चूंकि उसकी मृत्यु देवकी के बच्चों के हाथों होगी, न कि सीधे देवकी के हाथों, इसलिए वह देवकी के बच्चों को मारने को प्राथमिकता देगा, न कि स्वयं देवकी को। इस प्रकार उसने आदेश दिया कि देवकी से उत्पन्न प्रत्येक बच्चे को उसकी आँखों के सामने काट डाला जाए। लेकिन क्या उसने उस स्त्री के भयानक दुःख के बारे में नहीं सोचा, जिसे वह प्यार करता था? क्या उसके स्वार्थ की क्रूरता इस स्तर तक गिर सकती है कि वह अपनी प्रिय स्त्री के बच्चों को अपने हाथों से मार डाले? इस चिंतन के क्षण में, युयुधन को लगा कि उसे अपने मन को विश्राम देना चाहिए। वह बिना हिले-डुले, सभी विचारों से रहित होकर बैठ गया। उसके मन की आंतरिक शांति और बाहर की हवा की खामोशी मक्खियों की भिनभिनाहट से भंग हो रही थी। इसमें पास ही कहीं हलचल मचाते समुद्र की गर्जना भी शामिल थी। लेकिन उसके मन की गहराई में चिंतन जारी था। ऐसा प्रतीत होता था कि ज्योतिषी की भविष्यवाणी को न केवल कंस, बल्कि देवकी और वासुदेव ने भी सत्य मान लिया था। शायद कंस के आतंक के शासन ने यादवों को मृत्युदंड के डर से इस भविष्यवाणी पर विश्वास करने के लिए बाध्य कर दिया था! सात संतानों को खोने के बाद, देवकी ने कारागार में एक रणनीति बनाई। वह कंस को यह विश्वास दिलाने में सफल रही कि उसका अगला प्रसव वास्तव में तय समय से एक महीने बाद होगा। उसने अपने पिछले सात बच्चों को तुरंत मृत्युदंड के लिए प्रस्तुत कर दिया था, जिससे अगले प्रसव के समय के

बारे में उसके दावे को विश्वसनीयता मिली। कंस मान गया। आठवें बच्चे, एक पुत्र को, कारागार से चुपके से बाहर निकालकर वासुदेव के मित्र नंदा की देखरेख में सौंप दिया गया, और एक अन्य बच्चे को कारागार में चुपके से लाया गया ताकि वह कंस के नरसंहार का शिकार बन सके। क्या कंस चार दिन के बच्चे और नवजात शिशु में अंतर नहीं कर सकता था? उस समय यह माना जाता था कि शिशु कृष्ण ने कंस के वध के रूप में अपने भाग्य के प्रति जागरूकता पहले ही प्रकट कर दी थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उनके दत्तक माता-पिता ने व्यवस्थित रूप से उनके मन में यह विचार बिठा दिया था। अन्यथा वे इतने आश्चर्यजनक और पूर्ण आत्मविश्वास के साथ कंस पर कैसे आक्रमण कर सकते थे? या शायद कृष्ण स्वभाव से ही इतने साहसी थे। युयुधन कृष्ण के उस प्रसिद्ध साहस के बारे में सोचते-सोचते ऊंघने लगा, जिसमें उन्होंने यह देखने के लिए सांप को पकड़ा था कि वह विषैला है या नहीं। नींद में भी वह चित्रा से सुनी कंस की कहानी में उलझा हुआ था। एक पराया बीज आक्रामक रूप से मिट्टी पर गिरा और मूल, देशी पौधों और उनकी जड़ों को नष्ट कर दिया। वह पराया बीज पाप का बीज था, एक घोर विनाश का बीज था। अब यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो गई थी। जो कुछ हुआ वह न तो उग्रसेन के अपनी पत्नी के प्रति प्रेम के भ्रम का परिणाम था और न ही उसकी पत्नी के छल और वैवाहिक निष्ठा का भ्रम पैदा करने की कुशलता का। यह वास्तव में एक आक्रामक, हिंसक प्रवेश, एक दुष्ट, पापी बीज के प्रवेश के कारण हुआ था। इस खोज से उन्हें अत्यंत प्रसन्नता हुई और वे अचानक अपने कुल के बोध से जागृत हो गए। वे पूरी तरह से होश में आने और उस क्षण के प्रति अधिक सजग होने के लिए अपना सिर हिलाने लगे। ठीक उसी समय, बूढ़ी औरत बाहर आई और युयुधन से बोली, "महाराज, आइए हमारे साथ भोजन करें।" उन्होंने यह कहकर बहाना बनाने की कोशिश की कि उन्हें घर पर भोजन करना है। चित्रा ने उनकी बात नहीं मानी। इसी बीच उनके पोते की पत्नी अपने दाहिने हाथ में पानी से भरा तांबे का बर्तन और एक लकड़ी का कटोरा लेकर बाहर आई। जब उन्होंने थाली में अपना चेहरा और हाथ धोए, तो वह बर्तन और थाली लेकर वापस गईं और भोजन से भरी एक थाली लेकर लौटीं। उन्होंने उसे उनके सामने रख दिया।

बाजरे, दही, घी, शहद और पके हुए गेहूं के दानों से बना पैनकेक थाली में सजा हुआ था। जैसे ही उसने पैनकेक के टुकड़ों को दूध में डुबोकर खाना शुरू किया,

उसने चित्रा की ओर मुड़कर पूछा, "तुम्हारी मालकिन इतनी आसानी से एक अजनबी पर कैसे मोहित हो गई?"

चित्रा, "भगवान के लिए, इतनी आसानी से यह मत कहो कि वह अपने पति के अलावा किसी और पुरुष के प्यार में पड़ गई। तुमने उग्रसेन को देखा ही होगा। क्या वह डरपोक और कमजोर नहीं है? लालची भी है। अब तो उसकी उम्र सौ साल से अधिक हो गई होगी? फिर वह यादव सिंहासन पर क्यों बैठा है? वह ऐसा तो नहीं है कि कह दे कि वह बूढ़ा हो गया है और उसे पद छोड़ देना चाहिए। एक कमजोर और डरपोक पति। क्या तुम जानती हो कि मेरी प्रेमिका कैसी थी? उसमें अकेले ही बाघ का शिकार करने का साहस था। और जीवन शक्ति भी। लेकिन उसका शरीर बड़ा नहीं था, बस औसत था। फिर भी वह धनुष-बाण लेकर घोड़े पर सवार हो जाती थी, और कोई भी घोड़ा उसके लिए मुश्किल नहीं था। वह अकेले ही इंद्रगिरि वन में शिकार करने जाती थी। पास के एक राज्य का शासक द्रुमिला पैदल आता था। तुममें से किसी ने उसे नहीं देखा है। उसके कंधे बाघ जैसे थे और सीना चौड़ा था। उसे देखने वाली कोई भी स्त्री उसकी मर्दानगी से तुरंत मोहित हो जाती थी। कम से कम भीतर से तो। खुद। शेरनी जैसी स्त्री, मेरी स्वामिनी, ऐसे शानदार पुरुषत्व के प्रतीक पर ही मोहित हो सकती थी। जब हम वहाँ से लौट रहे थे, तो उसने मुझसे कहा, 'चित्रा, मैं उस पर पूरी तरह मोहित हो गई हूँ। आज रात वह मेरे तम्बू में आएगा। क्या तुम मेरी सबसे करीबी साथी नहीं हो?' तुम्हें उस समय उसे देखना चाहिए था, उसकी झुकी हुई और उदास आँखें, पिचके हुए गाल और मुरझाया हुआ चेहरा। चित्रा के सिवा कौन अपनी स्वामिनी के अंतर्मन को पढ़ सकता था?

युयुधना ने कहा, "पंद्रह रातों तक वह बिना किसी चूक के उसके तम्बू में आता रहा। क्या ऐसा नहीं है? उसे उसके साथ चले जाना चाहिए था। उग्रसेन जैसे पति के पास लौटने की उसकी क्या इच्छा थी? क्या द्रुमिला उसे अपने साथ ले जाने के लिए तैयार नहीं थी?"

चित्रा, "आपने क्या कहा?" उसकी सुनने की शक्ति कमज़ोर थी। समुद्र की गड़गड़ाहट के कारण उसे अक्सर सुनने में और भी कठिनाई होती थी। या शायद उसके कानों में लटके बड़े-बड़े झुमकों ने उसके कानों की लोबियों को लंबा कर दिया था। उसने आगे कहा, "आपका मतलब है कि वह उसे अपने साथ ले गया? बाद में उसे इतना पछतावा हुआ कि उसने ऐसा नहीं किया। उसने अपने महल के

एक नौकर के ज़रिए मुझे बुलवाया, मैं अपनी मालकिन की जानकारी में वहाँ गई। मैंने देखा कि राक्षस वंश से होने के बावजूद, वे बिल्कुल हमारे जैसे ही व्यवहार करते थे। उसने मुझसे विनती की, 'चित्रा, अपनी मालकिन से कहो कि वह फिर से टहलने के लिए बाहर आए। वहाँ से मैं उसे अपने शहर ले जाऊँगा। या उसे अपने घोड़े पर मेरे शहर आने दो। या मैं अपनी सेना के साथ उसके पति पर हमला करूँगा, उसे हराऊँगा और उसे अपने साथ ले जाऊँगा। लेकिन मुझे जो भी कदम उठाना हो, उसके लिए उसकी सहमति चाहिए।' लेकिन उसने प्रस्ताव ठुकरा दिया।"

"क्यों? क्या उसके लिए उसका प्यार खत्म हो गया?"

"तुमने क्या कहा? तुमने द्रुमिला को नहीं देखा। खैर, पुरुष होने के नाते तुम बात नहीं समझोगे। एक दिन उसकी स्वामिनी ने खुद मुझे समझाया था। उसने बताया कि पहली ही रात उसे यह आभास हो गया था कि जो भी स्त्री उसके शरीर का सुख ग्रहण करेगी, वह उसकी दासी बनने को तैयार हो जाएगी, एक जन्म के लिए नहीं बल्कि तीन जन्मों के लिए। वह ऐसा ही पुरुष था। और उसने पंद्रह रातों तक उसके शरीर का सुख भोगा। इतना ही नहीं, वह उनके मिलन का फल अपने गर्भ में लिए हुए थी। लेकिन आखिर वह आर्य स्त्री थी क्या? आर्य धर्म कहता है कि कोई स्त्री अपने पति को छोड़कर किसी दूसरे पुरुष के साथ नहीं भाग सकती। उसने धर्म का हवाला दिया और यह कहते हुए कि भाग्य ने उसके माथे पर यही लिखा है, रोने लगी। वह वहीं रुक गई। लेकिन राक्षस धर्म में, स्त्री को अपने पति के हत्यारे पुरुष के साथ भी खुशी-खुशी जाने की अनुमति है। उनके लिए मुख्य बात स्त्री का हृदय और मन जीतना है।"

दूध में डूबा हुआ पैनकेक का एक टुकड़ा चबाते हुए उन्होंने कहा, "लेकिन आपने मुझे बताया था कि बाद में उसने उग्रसेना को तेरह बच्चे दिए थे।"

चित्रा ने कहा, "हाँ, उसने शुरू से ही अपने पति को अपने शरीर में प्रवेश करने की अनुमति दी थी, लेकिन उसके पास पहले उसके गर्भ का द्वार खोलने की क्षमता नहीं थी। उसने खुद मुझसे यह बात स्वीकार की थी। लेकिन जब द्रुमिला ने सफलतापूर्वक पहला प्रवेश कर लिया, तो बाद में उग्रसेना के लिए उसके अंदर प्रवेश करना और उन सभी बच्चों को जन्म देना आसान हो गया। क्या आप विवाहित हैं? आपकी कितनी पत्नियाँ हैं? आपके कितने बच्चे और पोते-पोतियाँ हैं?"

युयुधन ने कुछ नहीं कहा। वह दूध और शहद में डूबे पैनकेक के टुकड़े चबाता रहा। चित्रा भी चुप थी। पूरी घटना में उसने जो बात कही, वह थी पाप के बीज का विचार।

उसने चित्रा से अपने विचार की पुष्टि करने का सोचा और उससे पूछा, "द्रुमिला पूर्ण राक्षस नहीं था। उसके पिता या माता में से कोई एक राक्षस था। आपने स्वयं कहा है कि उसका व्यवहार हमारे जैसा था। केवल इसलिए कि वह उसकी संतान था, कंस का क्रूर होना आवश्यक नहीं था। यदि वह क्रूर हुआ भी, तो इसके पीछे किसका पाप था?"

युयुधन ने आगे कहा, "मैं आपसे बस मन की शांति के लिए पूछ रहा था। क्योंकि हर पाप की कोई न कोई जड़ होती है, किसी न किसी की ज़िम्मेदारी ज़रूर होती है।" उसे अंदर बहुत उमस महसूस हो रही थी। घर के बाहर अच्छी हवा चल रही थी। वहाँ न तो गर्मी थी और न ही उमस। उसने अपने सिर के वस्त्र से अपना चेहरा, गर्दन और छाती पोंछी और ऐसा करते हुए उसे समुद्र की आवाज़ सुनाई दी। उसे याद आया कि कृष्ण ने ही ज़िम्मेदारी का विचार सुझाया था। कृष्ण चाहे कोई भी विषय हो, हमेशा ज़िम्मेदारी का ज़िक्र ज़रूर करते थे।

युयुधान ने इस पर विचार किया और महसूस किया कि कृष्ण की बातें बार-बार सुनने के कारण वह भी इस विचार को अपने आप, लगभग अनजाने में ही, उठा लेता था। तभी चित्रा ने, कई वर्षों पहले की तरह सिर हिलाते और आँखें घुमाते हुए कहा, "सच जानने के बाद उसे अपनी पत्नी को छोड़ देना चाहिए था। लेकिन उसने ऐसा क्यों नहीं किया? यही तो सवाल है, है ना?"

युयुधान ने चित्रा की बात से सहमति जताई। वह सोचने लगा कि उग्रसेन ने अपने लिए भ्रम क्यों पैदा किया, या क्या वह जानता था कि चित्रसेन झूठ बोल रही है, फिर भी उसने जानबूझकर उसे सच मान लिया? वह इस बात से हैरान था। कुछ देर बाद चित्रा ने खुद कहा, "एक और विचार मेरे मन में आया है। क्या मैं बताऊँ? आपको गुस्सा तो नहीं आएगा?"

युयुधना ने कहा, "मुझे गुस्सा क्यों आना चाहिए? आप जो कहना चाहते हैं, कहिए।"

चित्रा ने कहा, "तुम क्षत्रिय लोग बड़े क्रोधी स्वभाव के हो।"

युयुधना, "नहीं, मैं क्रोधित नहीं होऊंगी। कृपया बताइए।"

चित्रा ने कहा, "अब बीते दिनों की बातों को क्यों कुरेदना? ये सब तो बहुत पहले हुआ था। भूल जाओ।"

युयुधना ने पूछा, "जब द्रुमिला अपनी पत्नी के साथ संभोग कर रहा था, तो उसके वीर्य उसके गर्भ में समा गए। क्या यह कोई विपत्ति थी? उसने उस वीर्य के फल को अपना क्यों नहीं माना?"

चित्रा, "कोई व्यक्ति किसी और के बीज को अपना कैसे मान सकता है?"

उसने आगे कहा, "महाराज, आपने अपना नाम क्या बताया था? आपने युयुधना सत्यकी बताया था। आप जानते हैं कि आप लोग अपनी और दूसरों की चीज़ों में तीखा अंतर करते हैं। आजकल यह भेद चरम पर पहुँच गया है। मथुरा में भी ऐसा ही था और अनार्ता में आने के बाद भी वैसा ही बना हुआ है। कितनी ही दासियों के गर्भ में वे वीर्य नहीं डालते, उन्हें गर्भवती नहीं करते? क्या दासियों के पति बिना किसी भेदभाव के इस स्थिति को स्वीकार नहीं करते? आप लोग बच्चे के सिर को सूंघकर उसकी माँ के गर्भ की पवित्रता की जाँच करते हैं। बाद में, जब भी उग्रसेन के बीज से कोई बच्चा पैदा होता, तो वह नामकरण संस्कार के दौरान अपनी पत्नी के सामने उसके सिर को सूंघता और फिर अपनी पत्नी को बताता कि बच्चा उसका है। लेकिन आप जानते हैं कि मैंने स्वयं उग्रसेन से संतानें पैदा की हैं। हो सकता है कि उनमें से कुछ उसकी हों, हालाँकि मुझे यकीन नहीं है। मुझे पक्का पता नहीं है कि वे उसकी संतान हैं या मेरे पति की। जो भी किसी शासक की दासी से विवाह करता है, वह यह जानते हुए करता है कि उसकी पत्नियाँ वे न केवल अपनी रानियों की बल्कि अपने राजाओं की भी सेवा करते हैं। लेकिन हम आपके सिर सूंघने की रस्म का पालन नहीं करते। मेरे पति ने इस बात की परवाह किए बिना कि उनके पिता कौन थे, मेरी कोख से जन्मे सभी बच्चों को सहर्ष अपना लिया। लेकिन उग्रसेन ने कंस के साथ बचपन में भेदभाव क्यों किया?

युयुधान ने अपना सारा ध्यान चित्रा पर केंद्रित कर लिया, उसकी दृष्टि लक्ष्य से हटी ही नहीं, यहाँ तक कि उसकी भौंहें भी स्थिर रहीं। चेहरे और गर्दन पर जो पसीना आ रहा था, वह अब टपकने लगा था। पसीना पोंछने वाला हाथ भी अचानक रुक गया। समुद्र की गर्जना भी थम गई। उसका ध्यान केवल कमरे में मक्खियों की भिनभिनाहट पर था, जिसने वास्तव में शांति की अनुभूति को और बढ़ा दिया। उसने जल्दी से खाना खत्म किया और आगे खाना लेने से इनकार कर दिया। उसने थाली में हाथ धोए। वह कुछ देर तक चुपचाप बैठा रहा। तभी चित्रा

बोली, "कितनी उमस है! खासकर अंदर। चलो बाहर आँगन में चलते हैं, जहाँ हम समुद्र की ठंडी हवा का आनंद ले सकते हैं।" वह उठ खड़ी हुई।

आंगन की छत को सहारा देने वाले खंभे से बंधे घोड़े के आसपास लगभग चालीस बच्चे खेल रहे थे और शोर मचा रहे थे। युयुधन को ऐसा महसूस हुआ कि सामने वाले घरों से लगभग पंद्रह महिलाएं बाहर आ गई थीं और चित्रा के घर से उसके निकलने का इंतजार कर रही थीं।

चित्रा, जो उनके साथ बाहर आई थी, ने उत्सुक भीड़ से कहा, "ये कृष्ण वासुदेव नहीं, बल्कि उनके मित्र युयुधन सत्यकी हैं। वे किसी काम से यहाँ से गुजर रहे थे और शिष्टाचार भेंट कर रहे थे। ऐसा लगता है कि कृष्ण वासुदेव पिछले तीन महीनों से कुरुलोक में हैं। कौन जाने कब वे द्वारका लौटेंगे?"

युयुधना ने सोचा कि इन महिलाओं के चेहरे उदासीन हो गए थे, मानो उन्हें स्थिति में कोई दिलचस्पी न हो। उनकी उम्र बीस से पचास के बीच थी। कुछ महिलाओं ने अपनी गोद में छोटे बच्चे ले रखे थे। लगभग छह साल के बच्चे भी अपनी माताओं के पैरों के पास धूल में खेल रहे थे। बच्चे गंदे और बिना नहाए हुए लग रहे थे, जाहिर है वे सीधे अपने काम करने की जगह से आए थे - खेतों या पशुशालाओं से।

उसने आगे कहा, "अगर आप कृष्ण वासुदेव को कोई संदेश पहुंचाना चाहते हैं, तो आप इस आदमी को बता सकते हैं। वह कृष्ण के आने पर उन्हें संदेश पहुंचा देगा।" लगभग पचास साल की एक महिला हंस पड़ी। बाकी कोई नहीं हंसा। स्थिति का संदर्भ न समझ पाने के कारण, युयुधन मूर्खतापूर्वक घोड़े और उसके आसपास खेल रहे बच्चों को घूरता रहा। बच्चे भी निराश लग रहे थे क्योंकि कुछ भी रोमांचक नहीं होने वाला था।

चित्रा ने पूछा, "क्या आप जानते हैं कि ये महिलाएं कौन हैं?"

लेकिन एक महिला चिल्लाई, "हम जानते हैं कि वह कौन है। वह युयुधना सत्यकी है।" इससे पहले कि वह पहचान पाता कि बोलने वाली कौन है, महिला ने अपनी बात पूरी कर ली।

चित्रा ने समझाया, "आपको पता है, जब कृष्ण ने उन स्त्रियों को राक्षस नरकासुर से मुक्त कराया, तो उन्होंने उन सभी से विवाह कर लिया ताकि उन्हें सुरक्षा प्रदान कर सकें। उन्होंने उनमें से चौबीस को यहाँ छोड़ दिया और उनके लिए घर बनवाए। उन्होंने स्वयं यह सुनिश्चित किया कि उनके लिए भूमि उपलब्ध कराने हेतु जंगल साफ किया जाए। वे उस पर खेती करते हैं और उससे जो पैदावार होती है,

उसी से अपना जीवन यापन करते हैं। ये सभी बच्चे उन्हीं के हैं। जब भी कृष्ण इस नगर में आते थे, वे बच्चों के लिए गुड़ से भरी एक गाड़ी लाते थे। जब उन्होंने आपका घोड़ा देखा, तो उन्हें लगा कि यह कृष्ण का घोड़ा है, और इसलिए वे गुड़ पाने के लिए ऐसे इंतजार कर रहे थे जैसे मक्खियाँ गुड़ के टुकड़ों पर टूट पड़ती हैं। देखिए, वे यहाँ से कैसे जा रहे हैं, क्योंकि उन्हें कुछ नहीं मिल रहा है।”

युयुधना को मूर्खता का एहसास हुआ। बच्चे इधर-उधर भाग रहे थे। स्त्रियाँ भी धीरे-धीरे एक-एक करके गायब हो रही थीं। घोड़ा बेचैन था क्योंकि हरी मक्खियाँ उसे काट रही थीं।

युयुधान ने चित्रा से पूछा, "मुझे इस शहर में कोई पुरुष क्यों नहीं दिख रहा है?"

उसने जवाब दिया, "सुबह के समय पुरुषों के मौजूद होने की उम्मीद कैसे कर सकते हो? वे खेतों में काम करने, पशुपालन करने, शिकार करने और मछली पकड़ने में व्यस्त रहते हैं। स्त्रियाँ भी उनके साथ जाती हैं। मेरे जैसी बूढ़ी स्त्रियाँ, बच्चे या खाना बनाने वाली स्त्रियाँ ही घर पर रहती हैं। इसके अलावा, दस घरों में ही पुरुष हैं। बाकी चौबीस घरों में एक ही पति है, जो घर पर नहीं रहता, तुम्हारा दोस्त कृष्ण वासुदेव। हाँ, कुछ घरों में बच्चे बड़े हो चुके हैं। बस इतना ही।"

तब तक सूरज ढलकर कंधों के स्तर पर आ चुका था। हालाँकि चित्रा के घर का दरवाजा पश्चिम की ओर था, लेकिन किले की दीवार के कारण घर के सामने से समुद्र दिखाई नहीं देता था।

—•⁕•—

अध्याय 28

जब वह घोड़े पर सवार होकर लौट रहा था, बादल छंट गए और सूर्य की तेज किरणें निकलने लगीं। पसीने की गंध नाक में घुस गई। युयुधन सोचने लगा कि बच्चे

के सिर को सूंघकर माँ की पवित्रता की परीक्षा कैसे ली जा सकती है। वह सोचते हुए बोले, "हाँ, मैं भी रीति-रिवाज के तौर पर अपने बच्चों के सिर सूंघता था। लेकिन मान लो कि गर्मी का मौसम होता, तो क्या सिर से पसीने की गंध नहीं आती? अगर सिर को धोकर चंदन के धुएँ में रखा जाता, तो उसकी गंध अलग होती। इसके अलावा, उन दिनों में वीर्य की शुद्धता और ऐसी बातों की चिंता नहीं की जाती थी। तो फिर चित्रा के तर्कों का क्या? मुझे अपनी पत्नी की पवित्रता या निष्ठा पर कभी संदेह नहीं हुआ। वह हमेशा अपने ससुराल में रही थी, इसलिए उसका स्वभाव अलग तरह से विकसित हुआ था। यह सोचकर तसल्ली मिली। कृष्ण कंस के बारे में जानते थे, और उन्हें यह तब पता चला जब वे बीस या बाईस वर्ष के थे। लेकिन उन्होंने मुझसे इस बारे में कभी बात क्यों नहीं की? क्या जानबूझकर इस विषय से बचा गया? या फिर बस कोई अवसर ही नहीं आया? इस बार जब मैं उनसे मिलूंगा, तो मैं उनसे इस बारे में पूछूंगा। कंस के जन्म में निहित पाप की जिम्मेदारी के सवाल पर चित्रा का क्या जवाब था? मुझे इस बारे में कृष्ण से बात करनी चाहिए।" वह भी उसकी बातों से सहमत हो सकता है, उन पर विश्वास कर सकता है - ऐसे में वैवाहिक निष्ठा के संदर्भ में बच्चे के जन्म के समय नैतिक शुद्धता कैसे बनी रह सकती है? जब स्थिति इतनी नाजुक लग रही थी जैसे समुद्र से बाईं ओर से आती तेज हवा घोड़े को बहा ले गई हो, ऐसे नाजुक क्षण में, कृष्ण पांडवों के साथ वहीं डटे रहे। एक बार जब वे इन पांडवों से मिलने जाते हैं, तो पता नहीं कब लौटेंगे। वे अपनी पत्नी और बच्चों को भी भूल जाते हैं। कृष्ण को एक पल के लिए छोड़ दें, तो मुझे यकीन है कि यह स्वाभाविक था कि जरासंध कृष्ण द्वारा कंस के वध के बारे में सुनकर क्रोधित हो गया होगा, जिसने उसकी शाही शक्ति के प्रतिनिधि के रूप में कार्य किया था। वह इस स्थिति पर और कैसे प्रतिक्रिया दे सकता था? इस विचार ने युयुधन को भी आश्चर्यचकित कर दिया। अब तक उसने कंस को केवल एक शत्रु, एक राक्षस, एक क्रूर व्यक्ति, एक कसाई के रूप में देखा था। लेकिन अब? कंस की माता की करीबी सहेली, जिसने कंस के प्रसव में सहायता की थी, से घटना के बारे में जानने के बाद, युयुधन को अब कंस का मानवीय रूप दिखाई देने लगा था। यह सचमुच ही कहा गया था कि बलवान और शक्तिशाली पिता अपने पुत्रों की अपेक्षा पुत्रियों से अधिक प्रेम करते हैं। जरासंध की केवल दो पुत्रियाँ थीं, अस्ति और प्राप्ति, और उनका दामाद उनकी बड़ी देखभाल और प्रेम से कर रहा था। जरासंध को लगा कि कोई बड़ी साजिश रची गई होगी और मगध के ज्योतिषियों की

भविष्यवाणी सच हो गई होगी। मगध के ये ज्योतिषी, कंस की दोनों विधवाओं के साथ, न्याय की अपील करने के लिए जरासंध के पास गए थे। जब वे रोईं तो जरासंध कैसे शांत रह सकते थे? ये बाहर से आए अधिकारी और जासूस अपने देश में धन-दौलत और विशेषाधिकारों का आनंद कैसे उठा सकते थे?

कृष्ण के साहस की कोई बराबरी नहीं कर सकता था। वे जितने बुद्धिमान थे, उतने ही भरोसेमंद भी थे। तब उनकी उम्र मुश्किल से अठारह वर्ष थी, लेकिन जरासंध से होने वाले प्रतिशोध को भांपने की उनमें दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता थी। उन्होंने यह समझ लिया था कि यदि कोई बाघ को मारता है, तो उसका साथी अवश्य बदला लेने की कोशिश करेगा। लेकिन बड़े-बुजुर्ग डर से कांप रहे थे। कंस के आतंक के शासन में वे पूरी तरह से मर्दानगी खो चुके थे। लेकिन किसने उनके आसपास युवाओं को इकट्ठा किया, उनमें नई जान फूंकी और उन्हें शस्त्रों का प्रशिक्षण दिया? युयुधन ने अतीत पर विचार करते हुए स्वयं से पूछा, "रक्षा और सुरक्षा चौकियों पर तैनात विदेशी कर्मियों के चले जाने के बाद, शहर की शांति भंग हो गई, क्योंकि आपराधिक तत्वों ने लूटपाट और हिंसा की घटनाओं को अंजाम दिया। क्या कुछ लोग ऐसे नहीं थे जिन्होंने पूछा, 'यह दुष्ट युवक कौन है?' उनका इशारा कृष्ण की ओर था। यदि मेरे पिता जैसे कुछ लोगों ने धैर्य न रखा होता और कृष्ण का साथ न दिया होता और लोगों को अनुशासन में रहने के लिए प्रेरित न किया होता, तो हम पर कितनी विपत्तियाँ आ सकती थीं?" कृष्ण को शिनि, अनाद्दष्टि, अक्रूर, विप्रितु और यहाँ तक कि साठ वर्षीय उग्रसेन जैसे नेताओं का सक्रिय समर्थन प्राप्त था, जिन्होंने असाधारण साहस का परिचय दिया। यदि चित्रक, श्यामा, सत्राजित, प्रसेन और अन्य योद्धा, जो अपने युद्ध कौशल को भूल चुके थे, स्वयं को पुनः प्रशिक्षित न करते और कृष्ण के पीछे दृढ़ता से खड़े न होते, तो हमें निश्चित रूप से हार का सामना करना पड़ता। जैसा कि मेरे पिता अक्सर बताया करते थे, इसी समय कृष्ण और बलराम ज्ञान प्राप्त करने के लिए महान गुरु संदीपनी के चरणों में बैठने के लिए अवंतीपुरा गए थे। और उन दोनों को कितनी तेजी से सीखना पड़ा! उन्हें चौंसठ दिनों में सब कुछ सीखना पड़ा - वैदिक ज्ञान, धनुर्विद्या और सब कुछ! इससे पहले कि वे आगे बढ़ पाते, कृष्ण मथुरा वापस आ गए क्योंकि उन्हें खबर मिली थी कि जरासंध की सेना शहर पर चढ़ाई कर रही है। ऐसा लगता है कि यह वह समय था जब द्रोणाचार्य धनुर्विद्या के एक महान गुरु के रूप में प्रसिद्ध थे। लेकिन वे हमारी शीघ्र सीखने की आवश्यकता को कैसे पूरा कर

सकते थे? क्या भीष्म कौरवों को जरासंध जैसे शक्तिशाली शासक की प्रत्यक्ष शत्रुता मोल लेने की अनुमति देते? इसीलिए मेरे पिता ने उन्हें संदीपनी से ज्ञान प्राप्त करने की सलाह दी, यद्यपि वह द्रोणाचार्य से अधिक दूर स्थित थे।

"इसे ही मैं सच्चा युद्ध कहता हूँ। मुझे याद है कि मैं, जो उस समय मात्र बारह वर्ष का था, इतना साहस और उत्साह दिखा सकता था। मेरा काम शत्रुओं के बारे में जानकारी एकत्र करना और संदेश पहुँचाना था। लेकिन देखने में तो मैं कंचे खेलने वाले एक बच्चे से ज़्यादा कुछ नहीं था। कृष्ण ने ही मुझे साहस और दृढ़ संकल्प से परिपूर्ण बनाया। उन्होंने मुझे इतना कठोर हृदय बनाया कि मुझे भय का अर्थ ही नहीं पता था। मैं उन्हें अपने गुरु और शिक्षक के अलावा और क्या कहूँ? और बलराम तो यह भी कहते हैं कि मैं एक कुत्ता हूँ जो वफ़ादारी से उनका अनुसरण करता है, मानो वे मेरे स्वामी हों। जब जरासंध ने मथुरा पर कब्ज़ा किया, तो बलराम ने अत्यंत वीरता से युद्ध किया। निःसंदेह, उनमें साहस की कोई कमी नहीं थी। लेकिन उनमें रणनीति की कमी थी। आज भी उनमें वह कमी है। जरासंध के पास एक विशाल सेना थी। और वह अकेला नहीं था। उसे कलिंग के श्रुतयु, करोषा के दंतवक्त्र, विदर्भ के सोमक, भोज वंश के रुक्मी और अपने दत्तक पुत्र शिशुपाल का समर्थन प्राप्त था। कृष्ण ने इस तरह के समर्थन की जानकारी जुटा ली थी।" लेकिन कृष्ण ने शुरुआत में ही घोषणा कर दी थी, 'इनमें से कोई भी बड़ी सेना लेकर नहीं आया है। नदियों और नालों से होकर लंबी दूरी तक रथों को ले जाना असंभव है। हमारे पड़ोसी पंचाल जरासंध की मदद के लिए सामग्री नहीं देंगे। केवल शासक ही आए हैं। जैसा मैं कहता हूँ वैसा करो, और हम उन्हें आसानी से हरा देंगे।' कृष्ण की रणनीति ही हमें अंतिम विजय दिलाने में सहायक रही। मथुरा के आसपास के जंगलों में, हमारे आधे योद्धा ग्वालों के वेश में तैनात थे। बाकी आधे शहर के अंदर थे। हमने उन्हें घेर लिया। पहले दिन हमने यह आभास कराया कि हम किले की रक्षा करने में असमर्थ हैं, जिससे उन्हें शहर में प्रवेश करने का मौका मिल गया। फिर जंगल में तैनात हमारी सेना ने पीछे से उन पर हमला किया और अंदर मौजूद सेना ने सामने से। संयुक्त हमले से यह भ्रम पैदा हुआ कि हमारे पास बहुत बड़ी सेना है। वे डर गए और भाग गए। रात में हमने उनका पीछा किया और उन्हें पूरी तरह से नष्ट कर दिया... इस अभियान की याद से युयुधन प्रसन्न हो गया और हँसने लगा। घोड़े को लगा कि वह उसकी प्रशंसा कर रहा है और उसने अपनी गति बढ़ा दी। कंटीले पेड़ों के बीच से तेज़ी से गुज़रते हुए, उन्हें याद आया,

"हाल ही में बलराम यादव सेना के सामने यह दावा कर रहे थे कि वे उनमें सबसे वीर हैं। वे आगे कहते थे, 'कृष्ण मूल रूप से कायर हैं। वे केवल लोमड़ी की तरह रणनीति में माहिर हैं। यह सच है कि वे कभी-कभार सफल हो जाते हैं। लेकिन क्या सभी शत्रु हमेशा इतने भोले होंगे कि उनकी चालों में फंस जाएं? आख़िरकार, एक क्षत्रिय को सम्मान और प्रतिष्ठा केवल शक्ति और साहस के प्रदर्शन से मिलती है, भागने से नहीं।' यादव सेना में कई ऐसे हैं जिन्हें इस तरह की बातें बहुत पसंद आती हैं और वे उत्साहित हो जाते हैं। सेना में कुछ ऐसे भी हैं जो कृष्ण को तुच्छ समझते हैं। ये नौजवान अब शेखी बघारते हैं कि वे मथुरा से द्वारका भागने वालों की तरह कायर नहीं हैं। और ये लोग उस समय नाक बहने वाले गंदे बच्चों से ज़्यादा कुछ नहीं थे जब यह पलायन हुआ था। और उनमें से कुछ तो पैदा भी नहीं हुए थे। इन लोगों के लिए, बलराम एक महायोद्धा हैं। बेशक, बलराम की वीरता पर कोई सवाल नहीं उठा सकता। लेकिन क्या कृष्ण कायर थे?"

मुझे वह सब स्पष्ट रूप से याद है जो हुआ था। जब जरासंध ने मथुरा पर दूसरा आक्रमण किया, तो कृष्ण समझ गए कि यह प्रतिशोध की कार्रवाई थी। तब वे और बलराम कुछ युवा सैनिकों के साथ दक्षिण की ओर गए और देखा कि उनके जाने की खबर तेजी से फैल रही है। जरासंध ने शहर पर आक्रमण करने का विचार छोड़ दिया और इसके बजाय भाइयों का पीछा किया? क्या उसने ऐसा नहीं किया? उसके पास एक विशाल सेना थी। उन्होंने रथों, हाथियों और घोड़ों के साजो-सामान से लैस सेना को, औपचारिक साजो-सामान की तो बात ही छोड़िए, उन्हें एक देश से दूसरे देश तक दौड़ाने पर मजबूर कर दिया, कभी उन्हें पास होने का भ्रम दिया तो कभी उन्हें चकमा दे दिया। इतनी विशाल सेना इतनी लंबी दूरी आसानी से कैसे तय कर सकती थी? यह सचमुच एक हाथी की तरह था जो अपने भारी बोझ के साथ एक बिल्ली का पीछा कर रहा हो! सेना उनका पीछा करते-करते थक गई थी। उसके हाथी पीछे छूट गए, रथ टूट गए, घोड़े थक गए और पैदल सैनिक भोजन की अपर्याप्त आपूर्ति से क्रोधित हो गए। वे सभी पूरी तरह से थक गए थे। जरासंध का साथ देने वाले शासकों को अपनी जान बचाने के लिए भागना पड़ा। कृष्ण ने मुझे बाद में बताया जब मैं वह इतना परिपक्व हो चुका था कि अगर उनके पास एक छोटी सी सेना होती तो वे उसे उसी युद्ध में ही समाप्त कर देते।

दूसरी बार पराजित होने पर जरासंध ने मथुरा पर एक और आक्रमण की तैयारी की। अब उसने कृष्ण को न मारने की तो कम से कम उनके पूरे नगर को नष्ट

करने की योजना बनाई। उसने स्वयं से पूछा, 'यदि मैं यह नहीं करता तो कम से कम मेरे नाम का क्या होगा?' इस बार उसने और भी बड़ी सेना एकत्रित कर ली थी! उसके पूर्व समर्थक पूर्व से आ रहे थे। रुक्मा विदर्भ से आ रही थी। दक्षिण-पश्चिम से कालयावन और अन्य शासक आ रहे थे। यह सेनाओं का एक दुर्जेय जमावड़ा था। कहा जाता है कि इतनी बड़ी सेना पहले कभी किसी नगर के विरुद्ध नहीं जुटाई गई थी। यह सब कृष्ण को मारने के लिए था। और तब वह बीस या इक्कीस वर्ष के थे। मैं पंद्रह वर्ष का था, लेकिन मैं पहले से ही एक पूर्ण सैनिक था। मैंने भी गुरु संदीपनी के अधीन लगभग छह महीने का प्रशिक्षण प्राप्त किया था। ऐसे अशांत समय में, कोई आराम से व्यवस्थित शिक्षा कैसे प्राप्त कर सकता है? उस समय तक नई यादव सेना का निर्माण हो चुका था। उसमें युवा सैनिकों का वर्चस्व था। यह कृष्ण के नेतृत्व, साहस और प्रेरणादायक उपस्थिति के माध्यम से निर्मित हुई थी। जासूस चारों ओर से सूचना ला रहे थे कि जरासंध ने कृष्ण के बच निकलने की संभावना को स्वीकार कर लिया था, इसलिए उसका लक्ष्य अन्य सभी नेताओं को गिरफ्तार करना और मथुरा को पूरी तरह नष्ट कर देना था। लेकिन जरासंध कृष्ण और अन्य नेताओं के मृत्यु और गिरफ्तारी से बच निकलने के लिए तैयार था, क्या वह उनकी पत्नियों और बच्चों को बख्शेगा? हम स्वयं किले में लड़ने और जरूरत पड़ने पर मरने के लिए दृढ़ थे। नए सैनिकों ने घोषणा की, 'चलो लड़ें। चलो जितने हो सके उतने शत्रुओं को मार डालें। चलो उनका खून बहा दें और वीर गाथाओं के नायक बनें।' क्या मैंने स्वयं, एक पंद्रह वर्षीय योद्धा, गले में खराश होने तक 'हम युद्ध चाहते हैं' नहीं चिल्लाया था? फिर भी मैं कृष्ण से उन शब्दों के लिए क्रोधित था जो उन्होंने एकत्रित भीड़ से कहे थे - भयभीत और विचलित महिलाओं, बुजुर्गों और सरदारों से। इसी कारण मैंने मन ही मन उन्हें कायर मान लिया था। उन्होंने उनसे क्या कहा था?

उन्होंने कहा, "दादा-दादी, हमें अपने जासूसों से खबर मिली है। ऐसा लगता है कि दुश्मन एक विशाल सेना के साथ हमला करने वाला है। उसकी अपनी सेना भी काफी बड़ी है और उसका इलाका भी बहुत विशाल है। उसके सभी सहयोगी रथों, घोड़ों, हाथियों के साथ, लगभग पूरी आर्य भूमि के साथ, हमारे मथुरा को नष्ट करने के लिए उसके साथ मिल रहे हैं। हमारे पड़ोसी पंचालों और कुरुओं को छोड़कर, सभी दुश्मन के साथ हैं। लेकिन हम इस बारे में भी निश्चित नहीं हो सकते क्योंकि युद्ध के दौरान कुछ भी हो सकता है। अगर दुश्मन उन्हें धमकी देता है, तो यह

निश्चित नहीं है कि ये दोनों भी हार न मानें। उसका क्रोध असीम है। स्वाभाविक है। क्या कंस की मृत्यु का बदला लिए बिना उसकी आत्म-महत्व की भावना संतुष्ट होगी? इसके अलावा, हमने उसे दो बार हराया है। लेकिन उस समय हमारे पास उसे पूरी तरह से खत्म करने की ताकत नहीं थी।" उनके भाषण के बाद, एक नेता, शंख चिल्लाया, "कंस को मारकर तुमने बहुत बड़ी गलती की।"

तब कृष्ण ने उत्तर दिया, "तो क्या तुम गुलामी में रहना पसंद करते? क्या तुम सब यह नहीं मानते थे कि मेरा जन्म कंस को मारने के लिए हुआ है? क्या तुम भी मगध के ज्योतिषियों की बातों पर विश्वास नहीं करते थे?" उनमें से कुछ ने दबी आवाज़ में कृष्ण पर हम पर विपत्ति लाने का आरोप लगाया। यह सुनकर मुझे कितना क्रोध आया!

कृष्ण ने आगे कहा, "अब हमारे पास केवल दो ही विकल्प हैं। पहला - मैं और मेरा भाई बलराम हमेशा के लिए चले जाएंगे, और तुम सब जरासंध के सामने आत्मसमर्पण करके अपनी जान बचा सकते हो। दूसरा - हम सब मिलकर मथुरा छोड़ दें और किसी दूर देश में बस जाएं, जो जरासंध की पहुंच से बाहर हो और उसकी सेना के आक्रमण से परे हो, जहां जमीन खत्म होती है और समुद्र शुरू होता है।"

शंख ने स्वयं चिल्लाकर कहा, "क्षत्रिय का कर्तव्य है कि वह लड़े या मर जाए। यदि यादवों ने दो बार साहस और दृढ़ संकल्प का प्रदर्शन करने के बाद भी अब पीठ फेर ली, तो उनके मान-सम्मान का क्या होगा?" क्या वे सब चिल्ला नहीं रहे थे, "शर्म, शर्म, शर्म!" उस सामूहिक शोर में भी बलराम की आवाज़ सबसे अलग सुनाई दे रही थी। राजा उग्रसेन भ्रमित और व्याकुल दिख रहे थे। कृष्ण के पिता वासुदेव भी वैसे ही थे। तब बलराम के प्रति मेरा आदर कितना बढ़ गया! वे एक सच्चे योद्धा थे, और मैंने तब उन्हें एक सच्चे क्षत्रिय के रूप में पूजा!

कृष्ण ने हमसे एक प्रश्न पूछा, 'क्या महानतम योद्धाओं को युद्ध के दौरान पीछे हटना आवश्यक नहीं लगेगा? और फिर जब उन्हें उपयुक्त परिस्थिति मिलेगी, तो क्या वे आक्रमण करके शत्रु को मार नहीं डालेंगे? ऐसा करना क्षत्रिय धर्म का उल्लंघन कैसे हो सकता है?'

बलराम ने गरजते हुए जवाब दिया, "युद्ध के समय बात अलग होती है। लेकिन आप जो सुझाव दे रहे हैं, वह रसोई के बर्तन, गद्दे और पानी खींचने वाली रस्सियाँ

लेकर भागने का कायरतापूर्ण कार्य है। यदि हम आपकी सलाह मान लें, तो यादवों के नाम और सम्मान का क्या बचेगा?"

कृष्ण ने शांत भाव से उत्तर दिया, "यह सब एक ही बात है। हम केवल जीवित रहने और जीवन यापन करने के लिए जा रहे हैं। हम एक नई भूमि की तलाश में हैं ताकि हम अस्थायी रूप से अपना जीवन यापन कर सकें, और जब समय अनुकूल होगा तो हम जरासंध का वध कर देंगे।"

बलराम ने पूछा, 'इतनी दूर जाने के बाद तुम जरासंध को कैसे मारोगे?'

कृष्ण ने कहा, "मैं इस समय आपको यह कैसे बता सकता हूँ? मैं यहाँ उपस्थित उग्रसेना, पिता वासुदेव, मेरी माता देवकी जो इस समय घर पर शोक मना रही हैं, और रोहिणी जिसने आपको जन्म दिया है और जो मेरी वरिष्ठ माता हैं, की शपथ लेता हूँ कि मेरा पलायन केवल अपनी जान बचाने के लिए नहीं है। यदि कोई जीवित रहा, तो कम से कम एक दिन शत्रु को मारने की संभावना तो रहेगी। हम उसे परास्त कर सकते हैं। यदि हम अपनी शक्ति के अनुपात में अत्यधिक विशाल सेना के सैलाब का वीरतापूर्वक सामना करने का प्रयास करें, तो हमें अपने प्राणों के बलिदान और क्षत्रिय अभिमान की संतुष्टि के अलावा और क्या प्राप्त होगा? मैं इस पलायन के निर्णय की पूरी जिम्मेदारी लेने को तैयार हूँ। यदि इससे आपको संतुष्टि मिलती है, तो आप इसे कर्तव्य से पलायन कह सकते हैं। मैं आपको शाम तक निर्णय लेने का समय देता हूँ। याद रखें, हमें कल सुबह होने से पहले निकलना होगा और इसका अर्थ है कि पूरी रात कठिन तैयारी करनी होगी।"

शाम की समय सीमा से पहले, एक-एक करके सभी ने कृष्ण के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। उग्रसेन ने सबसे पहले ऐसा किया, उसके बाद वासुदेव, अक्रूर, मेरे पिता सत्यक, चित्रक, सत्राजित, प्रसेन आदि ने भी ऐसा ही किया—वास्तव में, किसी ने भी असहमति नहीं जताई। शाम को जब सभी एकत्रित हुए, तो उन्होंने सर्वसम्मति से घोषणा की, 'कृष्ण, आपके द्वारा जिम्मेदारी लेने और इस कार्य से उत्पन्न अपमान को स्वयं वहन करने के आश्वासन पर, हम आपके सुझाव के अनुसार चलने के लिए सहमत हैं।' फिर भी, बलराम एकमात्र अपवाद थे, और उन्होंने चुपचाप बैठकर अपनी असहमति व्यक्त की। कृष्ण ने किसके लिए सारी जिम्मेदारी अपने कंधों पर ली? आर्यावर्त के क्षत्रियों में भरपूर वीरता और साहस है। उनका पुरुषार्थ या जीवन का लक्ष्य लड़ना या मरना है। केवल ऐसा क्षत्रिय जो इस पुरुषार्थ का पालन करता है, स्वर्ग में स्थान प्राप्त कर सकता है और वहाँ अपना घर

बना सकता है! और कृष्ण ने आर्य क्षत्रिय धर्म को त्यागने के अपराध को प्रसन्नतापूर्वक सहन किया, और यादवों को एक अलग राह दिखाई। जिस तरह से उन्होंने अपना रास्ता बनाया, उससे वे कायरों के झुंड जैसे लग रहे थे, मानो वे अपने क्षत्रिय होने के योग्य ही न हों। और यह कैसी जगह थी जहाँ उन्होंने शरण ली! वहाँ पहुँचने के लिए हमें हफ़्तों तक पहाड़ों और जंगलों को पार करना पड़ा। क्या जरासंध इतनी दूर की यात्रा कर पाए होंगे? इस जगह तक आने-जाने में कम से कम चार महीने लगे। और यह एक अनजान इलाका था। और सबसे बढ़कर, अगर वे इतने लंबे समय तक अपने राज्य से दूर रहते, तो क्या राज्य पर कब्ज़ा करने के प्रयास नहीं होते? बीस वर्षीय कृष्ण ने हमारे नए जीवन के लिए इस जगह को चुनने से पहले इन सभी बातों पर विचार किया।

जब पीढ़ियों से एक ही घर में रह रहे लोगों को उसे हमेशा के लिए छोड़ने के लिए कहा जाता है, तो वे आसानी से यह कैसे तय कर सकते हैं कि किन चीजों को पीछे छोड़ना है और किन चीजों को साथ ले जाना है? कृष्ण ने उन्हें सलाह दी, 'रास्ते में तुम्हारी गाड़ियाँ खराब हो सकती हैं, बैल बोझ ढोने से मना कर सकते हैं और यहाँ तक कि अधिक भार के कारण मर भी सकते हैं। तुम्हें अपना बोझ बहुत भारी लग सकता है और बाद में रास्ते में उसका कुछ हिस्सा फेंकना पड़ सकता है। इसलिए, केवल वही सामान पैक करो जो बिल्कुल आवश्यक हो। वहाँ ज्यादा ठंड नहीं होगी। इसलिए बहुत ज्यादा ऊनी कंबल मत ले जाओ। अनाज, थोड़ा आटा और खाना पकाने के बर्तन काफी होंगे। बेशक, तुम्हें धनुष, बाण और अन्य हथियार ले जाने चाहिए।' कृष्ण के कितना भी विरोध करने के बावजूद, महिलाओं ने बिना सोचे-समझे सामान पैक करना शुरू कर दिया और पुरुषों को सामान ढोना पड़ा! और यह देखा जा सकता था कि लोगों का लगाव बेकार की चीजों से भी था! कई लोग अपने हाथियों को पीछे छोड़ गए लेकिन अपने घोड़े और बकरियों को अपने पीछे-पीछे ले गए। रास्ते में, कई लोग शारीरिक रूप से थक गए, कुछ को बुखार आ गया, और कई लोगों के पैरों से अधिक चलने के कारण खून बहने लगा। कई लोगों पर बेबसी का भाव हावी हो गया। वहाँ सूरज की भीषण गर्मी थी। यहाँ तक कि जो लोग कृष्ण के विचार का पूर्णतः समर्थन करते थे, वे भी अब खुलेआम उन्हें कोस रहे थे। वे यहाँ तक कहने लगे कि कंस का शासन इससे बेहतर था। कृष्ण स्वयं अपने ऊपर बरसाई गई गालियों की परवाह नहीं करते थे, मानो उन्होंने सुना ही न हो। वे इधर-उधर घूमते रहे, आंदोलन की देखरेख करते रहे, लोगों का

हौसला बढ़ाते रहे और उनकी समस्याओं में शामिल होते रहे। उन्होंने उन्हें सलाह दी कि वे अपने अनाज को एक साथ रखें, एक साथ पकाएँ और एक साथ खाएँ, यह तर्क देते हुए कि इससे उनकी यात्रा में तेजी आएगी। लेकिन यादव परिवार उनकी बात मानने को तैयार नहीं थे। हर कोई अपने समूह की पहचान बनाए रखने की कोशिश कर रहा था, यह दावा करते हुए कि उनके अनाज की गुणवत्ता बेहतर है और उनके द्वारा पकाया गया भोजन स्वर्गिक है। रास्ते में, प्रत्येक समूह ने अपनी अलग-अलग रसोई स्थापित की, अलग-अलग समूह अलग-अलग समय पर खाना पकाते या खाते थे। कृष्ण के क्रोध भड़काने का क्या लाभ? बूढ़ी महिलाओं ने उनसे पूछा कि उन्होंने यह निराशाजनक यात्रा शुरू ही क्यों की। जैसे-जैसे गायों का दूध सूखता गया, माताओं के स्तन सूखते गए, और बच्चे भूख से मरने लगे, गर्मी के मौसम में, लोग अपनी बदकिस्मती के लिए एक-दूसरे को दोष देने लगे। जिन पर दोष लगाया गया उनमें कंस, जरासंध और, ज़ाहिर है, कृष्ण शामिल थे। लेकिन कृष्ण, जिन्हें जन्म के तुरंत बाद ही अपनी माँ की भूमि से वनवास दे दिया गया था, किसी भी भूमि से आसक्ति नहीं रखते थे। किसी के पास उनकी जैसी अद्भुत क्षमता नहीं थी कि वे कहीं भी, कभी भी सो सकते थे, लंबी यात्रा की थकान, उस भूमि की विचित्रता या जलवायु की अपरिचितता की परवाह किए बिना। इस प्रकार कई लोग शारीरिक थकावट के कारण नींद खो बैठे... युयुधन ने इस बिंदु पर जम्हाई ली, क्योंकि उन्हें एहसास हुआ कि पिछली रात उन्हें पर्याप्त नींद नहीं मिली थी। उसी समय, पिछली अनिद्रा की याद उन्हें सता रही थी। उन्होंने याद करते हुए कहा, "मुझे विशेष रूप से मेरे लिए एक घोड़ा दिया गया था। मुझे घोड़े पर सवार होकर आवाजाही की निगरानी करने का काम सौंपा गया था। पंद्रह साल के लड़के के लिए यह कितनी बड़ी ज़िम्मेदारी थी! ज़ाहिर है, इससे मुझे बहुत गर्व महसूस हुआ। मैं कृष्ण को प्रसन्न करने के लिए अपना काम करने को उत्सुक था। और कृष्ण ने मुझे सलाह दी, 'युयुधन, याद रखना कि तुम चाहे कितनी भी अच्छी तरह से अपने कर्तव्यों का पालन करो, लोग तुम्हारी आलोचना कर सकते हैं। लेकिन कभी भी अपना आपा मत खोना और क्रोध में मत आना। दूसरों की आलोचना या प्रशंसा की परवाह किए बिना काम करना सीखो..."

उस समय तक युयुधन द्वारका के निकट पहुँच चुके थे और समुद्र तट पर आ गए थे। सूर्य उनके सिर के ठीक ऊपर था। समुद्र की उठती लहरें सूर्य की किरणों से सीधे टकरा रही थीं।

—•✳•—

अध्याय 29

रास्ते में उनकी मुलाकात बलराम से हुई। उनका बायां जबड़ा थोड़ा सूजा हुआ लग रहा था, लेकिन उनके चेहरे पर दर्द का कोई निशान नहीं था। घोड़े से उतरते हुए वे उनके पास गए और पूछा, "दांत का दर्द कैसा है?"

बलराम ने मुंह चौड़ा खोलते हुए और उंगली से अपने जबड़े की ओर इशारा करते हुए कहा, "देखो यहाँ।" उनके दो दांत गायब थे। उन्होंने आगे कहा, "उस रात यहाँ से जाने के बाद, मैंने एक पूरा मग भरकर एक तीखा पेय पी लिया। वह समुद्री व्यापारियों द्वारा दिया गया एक बहुत ही तेज़ पेय था। क्या आप जानते हैं कि वह कितना तेज़ था? उसे पीकर मैं चील की तरह आसमान में उछल पड़ा! पेय के अंदर जाते ही मुझे दर्द का कोई एहसास नहीं रहा, और मैंने तुरंत अपनी उंगलियों से अपने दोनों कांपते हुए दांत एक साथ खींच लिए। थोड़ी देर तक दर्द हुआ। थोड़ा खून भी निकला। अंत में मुझे गहरी नींद आ गई।" वे हँसे।

उन्होंने आगे कहा, “दोपहर हो चुकी है, फिर भी वातावरण में व्याप्त उदासी कम नहीं हुई है। पिछली रात मैं क्या कह रहा था? हाँ, मैं यही कह रहा था कि यह पूरे यादव समुदाय के सम्मान का सवाल है। कृष्ण मान-सम्मान और अपमान में अंतर नहीं कर सकते। कम से कम ज़्यादा तो नहीं। क्या यह उचित और सम्मानजनक है कि हम उस व्यक्ति का साथ दें जिसने बल प्रयोग करके हमारी कन्या को चुराकर और भगाकर हमारा अपमान और बेइज्जती की है?”

युयुधना ने अनजान होने का नाटक करते हुए कहा, "आप किस बारे में बात कर रहे हैं?"

बलराम ने कहा, "बेशक, उस अर्जुन के बारे में जो मेरी बहन सुभद्रा को लेकर भाग गया था। और क्या?"

युयुधना, "अरे, वो बात। उस घटना को हुए सत्रह साल नहीं हो गए क्या? उसका एक बेटा हुआ है और उसकी शादी भी हाल ही में हुई है। तुमने अपने ही भतीजे की शादी में नाराज़ होकर न जाने का फैसला किया था।"

बलराम ने कहा, "क्या तुम्हें लगता है कि महज़ वर्षों के बीतने से अपमान मिट जाएगा? तुमने भी रुक्मा की हत्या को मंज़ूरी नहीं दी थी। तुम जानते हो बलराम, इस क्षत्रिय वंश में क्षत्रिय रक्त दौड़ता है। मैं क्या कर सकता था? क्या किसी वंश की लड़की के साथ भाग जाना और बच निकलना उसी वंश का अपमान करना नहीं है? विदर्भ के लोगों को अपमानित करने के लिए हमने रुक्मिणी को अपने साथ लिया था। लेकिन हमने अर्जुन को हमें इस तरह अपमानित करने का क्या कारण दिया?"

युयुधना, "बलराम, आप दोनों ही मामलों में गलत हैं। क्या आपके दांतों की जड़ें कमजोर हो जाने के कारण आपकी याददाश्त की जड़ें भी कमजोर हो जानी चाहिए? क्रोधित न हों। यह स्वाभाविक है कि समय बीतने के साथ-साथ हमारे प्रेम और घृणा से तथ्य रंगीन और विकृत हो जाते हैं। इसलिए, मुझे जो वास्तव में हुआ था उसे बाद में उत्पन्न हुई भावनात्मक भावनाओं से अलग करने दें। यदि मैं गलत हूँ, तो मुझे सुधारने में संकोच न करें।"

बलराम ने एक शब्द भी नहीं कहा। वे रेत पर एक कंटीले पेड़ की छाँव में बैठ गए। उनका चेहरा लहरों की ओर था। वे शायद ही कभी केवल समुद्र को देखते थे। उनके लिए समुद्र से संबंध कभी सीधा नहीं था, केवल व्यापारिक नौकाओं के माध्यम से ही व्यावहारिक था। लेकिन अब असामान्य रूप से वे लहरों को निहार रहे थे, बिना हिले-डुले। युयुधन घोड़े से उतरे, उसे अकेले घर जाने का आदेश दिया और फिर बलराम के सामने बैठ गए। फिर उन्होंने बलराम से कहा, "सुभद्रा हमारे वंश की कन्या है। अर्जुन को उससे प्रेम हो गया। इसका अर्थ है कि वह उससे पराजित हुआ। यानी कि वह हमसे पराजित हुआ। वह उसे पाने की लालसा में पागल हो गया था। लेकिन जब वह उसे ले जा रहा था, तो क्या उसने ज़रा भी विरोध किया? नहीं, वह भी उसके सुंदर रूप पर मोहित हो गई। उसने उसे अपने रथ पर बिठाया और चला गया। अब यह ऐसी स्थिति है जिसे हमारे लिए अपमान नहीं माना जा सकता। साथ ही, कृपया ध्यान दें कि हम विदर्भ को अपमानित करने के लिए रुक्मिणी को नहीं लाए थे। जब हम मथुरा में थे और वहाँ से पलायन करने का निर्णय लेने से पहले ही, विदर्भ में रुक्मिणी का स्वयंवर आयोजित किया गया

था। जरासंध के सभी राजा उसमें शामिल हुए थे। कृष्ण ने भी वहाँ जाने का निर्णय लिया, और मथुरा की रक्षा और सुरक्षा की ज़िम्मेदारी आपको सौंप दी। उनका इरादा क्या था? कुछ भी रहस्यमय या बुरा नहीं। आख़िरकार, कृष्ण एक युवक थे। एक अविवाहित युवक। क्या आपको नहीं लगता कि लड़कियाँ क्या हम इतने योग्य कुंवारे को चुनेंगे? क्या हमने तब यह हिसाब नहीं लगाया था कि अगर लड़की कृष्ण से प्यार कर बैठती है, तो इसका मतलब होगा कि जरूरत पड़ने पर विदर्भ से हमें सहायता और समर्थन की गारंटी मिल जाएगी? मुझे बताइए अगर मैं झूठ बोल रहा हूँ।

बलराम ने कहा, "दरअसल, कृष्ण ने एक घुमंतू ब्राह्मण से रुक्मिणी का इतना मनमोहक वर्णन सुना था कि वे वहाँ गए थे। इसीलिए वे गए थे।"

युयुधना, "ऐसा भी हो सकता है। लेकिन क्या मुख्य विचार वही नहीं था जो मैंने बताया है, एक ऐसा विचार जिसे आप सभी ने सर्वसम्मति से स्वीकार किया है? क्या विवाह में लड़के और लड़की के बीच केवल आपसी आकर्षण से कहीं अधिक कुछ शामिल नहीं होता, वास्तव में, इसमें संबंधित परिवारों के हित भी शामिल होते हैं? अगर मैं गलत हूँ तो मुझे बताएँ।"

लहरों को देखते हुए बलराम ने कहा, "ठीक है। आगे बढ़ो।"

युयुधन के भीतर कुछ ऐसा हुआ कि वह अपनी कहानी सुनाते-सुनाते रुक गया। रुक्मिणी असाधारण रूप से आकर्षक थीं। हालांकि अब वह दादी बन चुकी थीं, फिर भी उनमें वो आकर्षण था जो उनसे कहीं कम उम्र की महिलाओं में नहीं था। इससे उन्हें अपने पहले के विचार पर पुनर्विचार करना पड़ा, और उन्होंने सोचा, "मैंने सोचा था कि कृष्ण उनसे बिल्कुल भी आकर्षित नहीं थे, और वे स्वयंवर में केवल जरासंध की नाक तोड़ने के उद्देश्य से गए थे। मैं कितना मूर्ख था! अब मेरा विवेक इस सरल व्याख्या को स्वीकार नहीं कर सकता। मेरे मित्र का इरादा इतना सरल नहीं हो सकता था।"

बलराम से युयुधन ने कहा, "कृष्ण स्वयंवर गए थे, है ना? इसी बीच जरासंध ने मथुरा पर आक्रमण करने का प्रयास किया, लेकिन उसे पराजित होकर लौटना पड़ा। संपूर्ण आर्य जगत जानता है कि क्या हुआ, कैसे उसने तुम भाइयों का पीछा किया और अंत में तुमने उसे धूल चटा दी, पूरी तरह से थकाकर पीछे हटने पर मजबूर कर दिया। आर्य जगत के सभी राजपरिवार स्वयंवर में एकत्रित हुए थे। कंस का वध करने और शक्तिशाली जरासंध को धूल चटाने पर विवश करने वाला यह

उन्नीस वर्षीय युवक वहाँ का मुख्य आकर्षण था। ऐसा लगता है कि उसकी वीरता के बारे में सुनकर उस लड़की ने उसके गले में माला पहनाने का निर्णय लिया था। ऐसा लगता है कि उसने यह बात अपने भाई रुक्म को बताई थी। कहानी का यह अंश मुझे विवाह के बाद रुक्मिणी से ही पता चला। पंद्रह वर्षीय लड़की को कैसे पता चल सकता था कि उसका भाई रुक्म जरासंध के समूह के प्रभाव में है? इस प्रकार उसके भाई ने उसके विश्वास को धोखा दिया और जरासंध को यह सूचना मिल गई। जरासंध ने चतुराई से गणना की कि यदि कृष्ण भीष्मक की पुत्री को जीत लेते हैं, तो यह इससे कृष्ण को नष्ट करने का उसका कार्य और भी कठिन हो गया। जरासंध के निर्देश पर, रुक्मा ने अपनी बहन को कृष्ण को स्वीकार करने से रोकने के लिए हर संभव प्रयास किया। लेकिन वह युवती दृढ़ थी, टस से मस नहीं हुई। तो रुक्मा क्या कर सकता था? जरासंध ने खुलेआम धमकी दी कि यदि स्वयंवर तुरंत रद्द नहीं किया गया, तो वह और उसके लोग भीष्मक की राजधानी कुंडीनापुरा को नष्ट कर देंगे। लड़की का पिता अत्यंत भयभीत हो गया। जरासंध ने कृष्ण की हत्या करने का भी प्रयास किया। लेकिन कृष्ण खतरे को लगभग सहज रूप से भांप लेते थे। आखिरकार, बचपन से ही वे सांपों के साथ खेलते थे, उन्हें उनके छिपने के स्थानों से बाहर निकालते थे। अत्यंत सावधानी और कुशलता का प्रयोग करते हुए, वे सुरक्षित मथुरा लौट आए। स्वयंवर को रोकना ही पड़ा। अब बताइए, क्या यह उन घटनाओं का पहला चरण नहीं था जिनकी हम चर्चा कर रहे हैं?

बलराम ने इतनी ज़ोर से जम्हाई ली कि उनका दर्द भरा जबड़ा लगभग अपनी जगह से हट गया। वे बस इतना बुदबुदाए, "हाँ, मुझे याद है कि मैंने मथुरा की रक्षा की थी। हाँ, मुझे याद है कि कृष्ण वहाँ गए थे। तो क्या? आगे क्या हुआ?" युयुधन ने बलराम के मसूड़ों को देखा जिनमें दाँत नहीं थे।

इस समय जम्हाई लेना स्वाभाविक था, क्योंकि सूरज की गर्मी आसमान को झुलसा रही थी। युयुधान ने आगे कहा, "आप जानते हैं कि हम मथुरा से अपने सामान के साथ निकले और द्वारका आए। वहाँ जरासंध ने अपनी विशाल सेना को मथुरा को चारों ओर से घेरने का आदेश दिया। लेकिन वह एक खंडहर और निर्जन शहर था। इसलिए वहाँ युद्ध संभव नहीं था। किसी को नहीं पता था कि यादव कहाँ गए थे और क्यों। जरासंध ने सोचा कि वे किसी जंगल में भाग गए हैं, उसकी सेना के जाने और फिर लौटने का इंतजार कर रहे हैं। उसने पूरे शहर को ध्वस्त करने का आदेश दिया। उसकी सेना में कई देशों के लोग शामिल थे। यह पहले से ही

एक प्राचीन शहर था, जिसके मिट्टी के घरों में चूहों ने सुरंगें बना रखी थीं। इसे पूरी तरह से नष्ट करना उसके लिए कोई समस्या नहीं थी। उसने यह सुनिश्चित किया कि हमें एक नया शहर बनाना पड़े। यदि युद्ध होता, तो कम से कम उसे विजेता होने का संतोष तो मिलता, उन शत्रुओं को मारने का संतोष जो उसे दो बार हरा चुके थे। यदि वह खाली हाथ लौटता, तो वह मानसिक रूप से खाली हो जाता। जरासंध ने एक दत्तक पुत्र का पालन-पोषण किया था, जिसे अपने दत्तक पिता दमाघोष से अधिक प्रेम था। विध्वंस अभियान का जिम्मा उसी के पास था। उसने तीन दिनों में काम पूरा कर लिया। जरासंध बहुत प्रसन्न हुआ, उसने उसकी पीठ थपथपाई और उसे गले लगा लिया। आखिर जरासंध हमेशा उन लोगों के प्रति उदार ही तो रहता है, जिनकी वह सराहना करता है?

बलराम ने थोड़ी झुंझलाहट के साथ कहा, "अरे, तुम उस व्यक्ति की प्रशंसा क्यों करने लगे हो जिसने हमारे मथुरा को पूरी तरह से नष्ट कर दिया था?"

युयुधन ने कहा, "क्यों नहीं? क्या हुआ अगर वह शत्रु हो? हमें उसके अच्छे गुणों को पहचानना और उनकी प्रशंसा करनी चाहिए। ऐसा लगता है कि अपने दत्तक पुत्र शिशुपाल को गले लगाते हुए उन्होंने कहा, 'पुत्र शिशुपाल, मैं देखूंगा कि तुम्हें एक अच्छा उपहार मिले। यह भीष्मक की पुत्री रुक्मिणी है। क्या तुमने उसके बारे में नहीं सुना, जो पूरे आर्य देश में सबसे सुंदर कन्या मानी जाती है? मैं उसका विवाह तुमसे करवा दूंगा।' तब शिशुपाल ने अपने दत्तक पिता को आदरपूर्वक प्रणाम किया। जरासंध ने वहां उपस्थित सभी शासकों को प्रस्तावित विवाह में आमंत्रित किया और उनसे कहा कि वे उनके साथ सीधे विदर्भ चलें। आप जानते हैं कि जब जरासंध आमंत्रित करते हैं, तो वह एक आदेश के समान होता है। एक विवाह के लिए इतनी बड़ी सेना क्यों? फिर वे रास्ते में और भीष्मक की राजधानी कुंडीनापुर में डेरा डालते समय उस सेना को भोजन कैसे कराते? इसलिए, शासकों ने अपनी-अपनी सेनाओं को अपने-अपने राज्यों में वापस जाने का आदेश दिया और अपने साथ केवल उतने ही अंगरक्षक और रथ ले गए जितने आवश्यक थे।" घोड़े, भोजन और अन्य आवश्यक सामग्री। हम अभी द्वारका पहुँचे ही थे कि हमें यह सब खबर मिली, विदर्भ की ओर उनके अग्रसर होने की खबर। कृष्ण, हमेशा की तरह दूरदर्शी होकर, यह अनुमान लगा रहे थे कि जरासंध भीष्मक को अपनी पुत्री का विवाह शिशुपाल से करने का आदेश देगा, और यदि ऐसा हुआ तो विदर्भ पूरी तरह से जरासंध के अधीन हो जाएगा। मेरे पिता ने विदर्भ जाकर कन्या का

अपहरण करने के कृष्ण के विचार का समर्थन किया। इससे न केवल विदर्भ को हड़पने की जरासंध की योजना विफल हो जाएगी, बल्कि इस तरह उसे अपमानित करने पर मथुरा से पलायन की शर्मिंदगी भी कम से कम आंशिक रूप से दूर हो जाएगी। अन्य जो इस विचार से सहमत थे, वे थे सरन, प्रसेन और चित्रक। आप भी सहमत थे, है ना बलराम?

बलराम ने कहा, "जी युयुधन, मैं मान गया था। तब मुझे लगा कि कृष्ण ने जो सुझाव दिया था, वही हमारे लिए उचित था। लेकिन क्या तुम जानते हो कि असल बात क्या थी? रुक्मिणी एक सुंदर कन्या थी और कृष्ण उसे बहुत चाहते थे। यही असली कारण था कि वे रुक्मिणी के साथ भाग जाना चाहते थे। अगर कृष्ण ने हमें यह सच बताया होता, बजाय इसके कि उन्होंने जो सार्वजनिक कारण बताया, तो क्या हम विदेश में इस तरह के एकांतवास में शामिल होते, खासकर तब जब हम हिजरत के बाद थके हुए थे और हमें अभी भी अपने घर बनाने और खेती के लिए ज़मीन तैयार करनी थी? उन्होंने बस अपना असली मकसद छिपाया और हमें एक ऐसा कारण बताया जो हमें भा गया।"

इस घटनाक्रम के इस संस्करण से युयुधन के लिए मुश्किलें खड़ी हो गईं, क्योंकि उसका अपना ही एक अलग संस्करण था। वह सोच रहा था कि क्या यह सच है। अपनी स्थिति को भांपते हुए बलराम ने आगे कहा, "युयुधन, मैंने जो कहा है, उस पर संदेह मत करो। तुम जानते हो कि कृष्ण कन्याओं और स्त्रियों के प्रति कितने आसक्त हैं। क्या वे भी हमारी तरह एक ही पत्नी से संतुष्ट रहे हैं? इतनी सुंदर स्त्री से विवाह करने के बाद उन्होंने सात और स्त्रियों से विवाह किया और राक्षस नरकासुर के चंगुल से मुक्त कराई गई सभी स्त्रियों को औपचारिक रूप से अपनी पत्नियां बना लिया। वे अपनी मनचाही स्त्री को पाने के लिए किसी भी हद तक जा सकते थे। सच्चाई यह है कि उन्होंने हम सबको धोखा दिया और विदर्भ जाने के लिए राजी किया। क्या तुम नहीं समझते?"

असमंजस और संदेह में फंसी युयुधना तुरंत जवाब नहीं दे सकी। अपनी स्थिति को भांपते हुए बलराम ने आगे कहा, "तब तुम मुश्किल से पंद्रह-सोलह वर्ष के थे। तुमने कृष्ण के रथ को पीछा कर रहे शत्रुओं से भी तेज दौड़ाकर रातोंरात यादवों के बीच वीर का दर्जा हासिल कर लिया। देखो, तब मैं बत्तीस वर्ष का था। मुझे उस समय की घटना तुमसे कहीं अधिक स्पष्ट रूप से याद है। सुनो, मैं तुम्हें बताता हूँ कि वास्तव में क्या हुआ था। हम सब घोड़ों पर सवार होकर और अपने साथ

मजबूत रथ लेकर दक्षिण की ओर भागे, हमारा एकमात्र उद्देश्य जरासंध की नाक पर कालिख पोतकर उसे अपमानित करना था। हम कितनी तेजी से भागे और समय को मात देने के लिए हमने कितनी कोशिश की! जब तक हम वहाँ पहुँचे, विवाह तय हो चुका था। दरअसल, शिशुपाल का विवाह अगले दिन रुक्मिणी से होना था। भीष्मक के पास कोई दूसरा विकल्प नहीं बचा था। हाँ, एक विकल्प था। या तो वे अपनी पुत्री का विवाह शिशुपाल से करवा दें या अपने नगर कुंदिनापुरा को नष्ट करवा दें। लेकिन अगर वे अपनी पुत्री का विवाह शिशुपाल से होने देते, तो इससे निश्चित रूप से यादवों की नजरों में उनकी प्रतिष्ठा गिर जाती। साथी क्षत्रियों। फिर उनका पुत्र रुक्मा था, जो अपने पिता के प्रति पूरी तरह से विश्वासघाती था। वह पूरी तरह से जरासंध और शिशुपाल के पक्ष में था। आपने भी रुक्मा की हत्या का विरोध किया था। इसी समय हम वहाँ पहुँचे, भीष्मक को हमारे आने की खबर मिली, लेकिन उन्होंने हमें नगर के द्वार के बाहर डेरा डालने के लिए कहना उचित समझा। अन्यथा उन्हें डर था कि जरासंध तुरंत हमारे विरुद्ध युद्ध छेड़ देगा।

युयुधन, "याद रखो, भीष्मक ने हमें बेघर भिखारियों की तरह अपने शहर के बाहर इंतजार करने के लिए कहकर हमारा अपमान किया था, इसलिए तुम उससे बहुत क्रोधित हुए थे। तब भी तुम इतने अधीर और उतावले थे।"

बलराम, "हाँ, आप सही कह रहे हैं। मुझमें धैर्य की कमी है और कृष्ण में सम्मान की भावना की। खैर, यह अच्छा हुआ कि हमें राजधानी के बाहर आतिथ्य सत्कार मिला। कृष्ण ने यही कहा था। उन्होंने हमें समझाया, 'कल विवाह है। बहुत संभव है कि उसी शाम वह लड़की देवी इंद्रानी की पूजा करने के लिए इस रास्ते से गुजरे। वह ठीक कहाँ पूजा करेगी, यह आप में से कोई भी वैदिक ब्राह्मण का वेश धारण करके पता लगा सकता है। आमतौर पर यह पूजा वृक्षों के समूह के बीच की जाती है। यह पूरी तरह से स्त्रीत्व का अनुष्ठान है। वहाँ कोई पुरुष नहीं होगा। उस समय, मैं लड़की को अचानक पकड़ लूँगा और जितनी जल्दी हो सके उसे अपने साथ ले जाऊँगा। इस बीच, आप सभी यहीं रुकें। जो भी मेरा पीछा कर रहे हों, उन्हें इस रणनीतिक स्थान पर रोकें और उनसे लड़ें। तब तक मैं दो नदियाँ पार कर चुका हूँगा। यदि रथ खराब हो जाए, तो मैं उसे बाँधकर अपने घोड़े पर बिठाकर ले जाऊँगा।' क्या आप नहीं देख सकते कि वह उसी लड़की के पीछे था। सब कुछ उसकी योजना के अनुसार हुआ। क्योंकि शाम हो चुकी थी और अंधेरा था, और इसलिए... जरासंध और उसके समर्थकों ने हम पर आक्रमण किया और हम ही

शारीरिक रूप से घायल हुए। हमारी तरफ से, उस लड़ाई में तुम्हारे पिता के पहले दांत टूट गए थे। मेरी पीठ पर देखो, उस लड़ाई में लगी चोट का लंबा निशान।

युयुधना ने पूछा, "पर क्या यह सच नहीं था कि जरासंध का अपमान हुआ था, उसकी नाक पर काली स्याही पोत दी गई थी?"

बलराम ने कहा, "हां, लेकिन इसके लिए मेहनत मैंने की थी, कृष्ण ने नहीं।"

Yuyudhana, "Did Krishna claim that he was behind that success?"

बलराम चुप रहे।

युयुधन को याद आया, "जैसे ही कृष्ण रुक्मिणी को लाए और रथ में बिठाया, मैंने रथ को तेज़ी से दौड़ाया। वे कितने उत्तम घोड़े थे! पीछे हमारी सुरक्षा के लिए दो रथ थे। साथ ही चार घुड़सवार भी थे। मैंने इतनी तेज़ी से रथ चलाया कि वे सब बहुत पीछे छूट गए। कृष्ण ने प्रशंसा में चिल्लाकर कहा, 'शाबाश, शाबाश, युयुधन!' यह कहते हुए वे रुक्मिणी के हाथ-पैर बाँध रहे थे। रुक्मिणी को तब तक पता नहीं चला कि कृष्ण ने उसका अपहरण किया है, जब तक मैंने उनका नाम लेकर उनसे नहीं पूछा कि सड़क के दो भागों में बँटने पर मुझे बाएँ जाना चाहिए या दाएँ। रुक्मिणी ने कृष्ण से कहा, 'यादव, मैं चलते हुए रथ से कूदकर भाग नहीं सकती। कृपया मुझे खोल दीजिए। रस्सी मेरे शरीर में चुभ रही है।' मुझे लगता है कि उसने उनसे संघर्ष किया होगा, यह सोचकर कि वह कोई अपराधी होगा। रथ में आराम से बैठने के बाद उसने मुझसे विनती की, 'कृपा करके सारथी, और तेज़ चलाइए। अगर अंधेरा हो गया, तो जरासंध के आदमी नहीं आ पाएँगे। इस देश में रास्ता देखने के लिए। फिर आप धीरे-धीरे गाड़ी चला सकते हैं ताकि घोड़े थक न जाएं।' हां, उसी समय मैंने पीछे मुड़कर पहली बार उसका चेहरा देखा। वह मुझे अपनी ही उम्र की लगी। लेकिन कृष्ण ने उससे पूछा, 'हो सकता है उन्हें रास्ता न पता हो, लेकिन तुम्हारे पिता के आदमी जो उनके साथ हैं, उन्हें पता होगा। है ना?' उसने बड़ी प्यारी मुस्कान के साथ जवाब दिया, 'एक तरह से पिता की इज्जत बच गई। वे भूख से मर रहे थे क्योंकि क्षत्रिय होने के नाते उन्होंने जरासंध की धमकियों के आगे कायरतापूर्ण तरीके से आत्मसमर्पण कर दिया था। मैं और मेरी मां बहुत रोईं। हां, हमारी सेना उनके साथ हो सकती है। लेकिन मैं उन्हें जानती हूं और वे तेज नहीं हैं। चिंता मत करो।' और फिर वह कितनी जोर से रोने लगी। जब कृष्ण ने उसके कंधे पकड़कर उसे दिलासा देने की कोशिश की, तो उसने उनसे पूछा, 'आप आखिर हैं कौन? पिता! माता!...' वह फूट-फूट कर फूट पड़ी और जोर-जोर से रोने लगी...

बलराम, "खुलेआम अपनी बात कहना उनका स्वभाव नहीं है। उनका तरीका दूसरों से बहुत अलग है। क्या उन्हें इस बात का घमंड नहीं है कि यादवों के नेता वे हैं, न कि उनके बड़े भाई बलराम? दादाजी, बूढ़े व्यक्ति, नाममात्र के लिए ही सिंहासन पर बैठे थे। वे चाहते हैं कि शासक उनके नेतृत्व का पालन करे। उन्होंने विवाह किया है और चाहते हैं कि उनसे विवाह करने वाली सभी महिलाएं सुख-सुविधाओं में रहें। वे आर्यावर्त में सर्वश्रेष्ठ शासक के रूप में प्रसिद्धि पाना चाहते हैं। क्या कृष्ण के बारे में मेरा विचार सही है?"

युयुधन ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसका मन अपनी यादों में खोया हुआ था, उन्हें विस्तार दे रहा था और उनमें विवरण भर रहा था। अचानक उसके कानों में पड़ी आवाज़ों ने उसका ध्यान भटका दिया। बलराम अपनी कहानी जारी रखते हुए कह रहे थे, "कृष्ण को उसका आशीर्वाद दिलाने के लिए मैंने अपने प्राणों की परवाह किए बिना युद्ध किया। आख़िर हम कितने थे और जरासंध के कितने आदमी थे? उसका भाई ही कृष्ण का पीछा करते हुए पूर्णा नदी तक गया, उनसे युद्ध किया लेकिन पराजित हुआ। बाद में भी वह जरासंध और शिशुपाल के साथ था। जुए में मुझे अपमानित करने के लिए उसे मारना कैसे गलत था? क्या यह उचित था कि एक छोटे भाई की पत्नी, इन सब बातों को भूलकर, अपने पति की उपस्थिति में, खुलेआम मुझे इस तरह गाली दे? क्या कोई स्त्री अपने ऊपर किए गए अच्छे कार्य को कृतज्ञतापूर्वक याद रखती है?"

फिर भी युयुधन चुप रहा। उसकी दृष्टि लहरों पर टिकी, दूर स्थित एक लहर पर जो मानो स्थिर थी। जब लहर चली, तो उसकी आँखें उसका पीछा करने लगीं। देखते-देखते वह लहर बहुत ऊँची उठती हुई प्रतीत हुई। दूसरी लहरें भी उठीं। लौटते समय वे ज़ोरदार आवाज़ के साथ किनारे से टकराईं। दोनों को एहसास हुआ कि समुद्र में ज्वार-भाटा चल रहा है। वे उठ खड़े हुए। लहरों की व्यवस्थित गति क्षण भर के लिए किनारे से टकराने और पीछे हटने के शोरगुल में बदल गई।

बलराम को अचानक कुछ याद आया और उन्होंने कहा, "देखो। जब मैं घर से निकला था, दुर्योधन विश्राम कर रहा था। हम अतिथि को इंतज़ार नहीं करवा सकते। और वह भी एक ऐसे राजा को जो सिंहासन पर विराजमान है, एक राजकवि। मुझे जल्दी वापस जाना होगा। तुम भी आ सकते हो। तुम उससे मिल सकते हो।"

युयुधना, "तुम आगे बढ़ो।"

बलराम ने कहा, "इसका मतलब है कि आप उसे देखना नहीं चाहते।"

युयुधना ने कहा, "बलराम, मैं भी आपकी ही तरह स्पष्टवादी और बेबाक व्यक्ति हूँ। वह एक राजा हैं। वह मेरे लिए महज एक परिचित हैं, घनिष्ठ मित्र नहीं। यदि उन्हें मुझसे इतना महत्वपूर्ण कार्य है, तो मुझे पूरा विश्वास है कि वे मुझसे मेरे घर पर ही मिलेंगे।"

बलराम ने कुछ नहीं कहा। उन्होंने मन ही मन महसूस किया कि युयुधन के इन शब्दों में अहंकार झलक रहा है। उन्होंने मन ही मन कहा कि आखिर वह कृष्ण के सन्यासी हैं, और फिर वहां से चले गए। तब तक समुद्र और भी उग्र और उग्र हो चुका था। युयुधन उससे दूर हटकर एक ऊँची और सुरक्षित जगह पर चले गए। वे वहाँ खड़े रहे और नीला-हरा समुद्र सूर्य के प्रकाश से लाल हो उठा। उन्होंने वहाँ रुक्मिणी का चेहरा देखा, जो झुकी हुई और सिसकियों के साथ रो रही थीं। और क्या ही सुंदर और मनमोहक चेहरा था! उसमें इस बात की थोड़ी सी संतुष्टि झलक रही थी कि उनके पिता का सम्मान वापस मिल गया था। युयुधन ने मन ही मन सोचा कि उस क्षण से ही उन्होंने अपने घर को दृढ़ता से चलाया, कभी भी उसकी प्रतिष्ठा से समझौता नहीं किया। युयुधन ने सोचा, "कृष्ण ऐसी आदर्श पत्नी से प्रसन्न और संतुष्ट क्यों न हों? स्त्रियों के प्रति उनकी अतृप्त लालसा! बलराम सही कहते हैं। हर स्त्री को पाने का एक विशेष कारण होता है। सत्यजीत की पुत्री सत्यभामा। जाम्बवंत की पुत्री जाम्बवती। फिर अन्य - भद्रा, मित्रविंदा, नीला, कालिंदी, लक्ष्मण, कुल मिलाकर आठ नियमित पत्नियाँ। उनका रूप ऐसा था कि कोई भी स्त्री उनका विरोध नहीं कर सकती थी। वे वाणी के जादूगर थे। उनकी बुद्धि अत्यंत तीक्ष्ण थी। वे युद्धों में हमेशा विजयी होते थे। वे जहाँ भी जाते, उन्हें वर भेंट किए जाते और वे सभी से विवाह कर लेते। एक पुरुष कितनी स्त्रियों का भरण-पोषण कर सकता है? शायद वे बहुत से बच्चे पैदा कर सकते हैं। लेकिन क्या वे उन सभी के साथ एक सफल गृहस्थ जीवन व्यतीत कर सकते हैं? वे नगर में कम ही रहते हैं। वे पूरे आर्य जगत की राजनीति में व्यस्त रहते हैं। इसके अतिरिक्त, निश्चित रूप से, यादवों की रक्षा का उनका कर्तव्य भी है। जैसे ही वे नगर में आते हैं, पत्नियों में झगड़े, प्रतिद्वंद्विता और उनका ध्यान आकर्षित करने की होड़ मच जाती है। वे पूछती हैं, 'आपने उसके साथ तीन रातें क्यों बिताईं?'" और मेरे साथ केवल एक ही?' विवाह के बाद किसी स्त्री के शरीर में रुचि कैसे बनी रह सकती है? शायद उनके पिता का यह कहना सही था कि कृष्ण अपनी पत्नियों के ध्यान से बचने के लिए ही इतने

समय तक शहर से बाहर रहते थे! कृष्ण के पिता वासुदेव की चौदह पत्नियाँ थीं। उनकी छह कम थीं। युयुधन का शरीर पसीने से तर हो रहा था। उसने आकाश की ओर गर्दन उठाई। बादलों का कोई नामोनिशान नहीं था, और उसे बारिश की तीव्र इच्छा हुई। समुद्र अपनी नियमित गति में डूबा हुआ था, अपने चारों ओर घूम रहा था, जैसे किसी बड़े बर्तन में उबलता हुआ दूध लाल हो रहा हो। उन्होंने अपना भाषण जारी रखते हुए कहा, "नहीं, केवल आठ पत्नियाँ? नहीं, नरकासुर से प्राप्त उन स्त्रियों का क्या? यह तय करना कठिन है कि कृष्ण के कर्म अच्छे हैं या बुरे। हाँ, शायद बलराम सही हैं। मैं मित्रता में अंधा हो गया हूँ। लेकिन बलराम भी ईर्ष्या से ग्रस्त हैं। नरकासुर एक लुटेरा था। उसके कारण द्वारका इतनी असुरक्षित हो गई थी कि पर्याप्त अंगरक्षकों के बिना कोई भी बाहरी व्यक्ति वहाँ नहीं पहुँच सकता था। उसके लिए बर्तन, सोना और घोड़े चुराने के लिए पर्याप्त अंगरक्षक नहीं थे।"

वह सुंदर आर्य कन्याओं को चुराकर अपना हरम भरता था। उसने द्वारका को नरक बना दिया था; निवासी लगभग उसे छोड़ने का मन बना चुके थे। यदि उस समय कृष्ण का साहस, धीरज और चतुराई हमारी सहायता न करते, तो उसका और उसके साथियों का पीछा करना असंभव होता, वे खरगोशों की तरह भाग सकते थे। उसकी मृत्यु के बाद, हमारे सामने एक समस्या खड़ी हो गई। डाकू की संपत्ति - बर्तन, धन और आभूषण - को बाँटना आसान था। कृष्ण ने कहा, 'युयुधन, हम इन स्त्रियों को कैसे छोड़ सकते हैं, भले ही उसने उन्हें भ्रष्ट कर दिया हो? चलो हम उन्हें बाँट लें और उनसे विवाह कर लें।' लेकिन हमने उनके सुझाव का विरोध क्यों किया? हमने सोचा कि यदि हम उनसे विवाह करते हैं और उनसे संतान उत्पन्न करते हैं, तो इससे हमारे यादव वंश की पवित्रता नष्ट हो जाएगी। लेकिन कृष्ण ने हमारी बात नहीं मानी। इसके बजाय, उन्होंने हमें चुनौती देते हुए घोषणा की कि वे स्वयं उन सभी से विवाह करेंगे। न केवल चुनौती दी, बल्कि वास्तव में उनसे विवाह भी किया। और कितनी स्त्रियों से? जब कृष्ण बैलगाड़ियों में भरकर बच्चों, विवाहित और अविवाहित महिलाओं को लेकर द्वारका में प्रवेश कर रहे थे, तो यादव कृष्ण के कन्याओं और स्त्रियों के प्रति प्रेम पर कितना हँसे होंगे! उन्होंने कितनी स्त्रियों के साथ शारीरिक संबंध बनाए होंगे? और कितनी स्त्रियों ने उन्हें संतान दी होगी? खैर, कृष्ण की संतान विशाल है। शायद आने वाले वर्षों में यादवों की सभी पीढ़ियाँ कृष्ण की ही संतान हों... युयुधन को ताम्रस्थली की याद आ गई। उन्होंने अपना मुख आकाश की ओर झुकाकर समुद्र को देखना शुरू किया। ज्वार उमड़ रहा था।

लहरें पहाड़ियों, घाटियों और मैदानों का रूप धारण कर रही थीं, आपस में टकराकर समुद्र में लौट रही थीं। वे अपने विचारों में खो गए, "उन्होंने उन स्त्रियों से विवाह क्यों नहीं किया? नरकासुर, उसका असली नाम क्या था? हमने उसे यही नाम दिया था क्योंकि उसने अनार्त देश को नरक बना दिया था। उस समूह के कितने बच्चे थे, कुछ स्त्रियों को बंदी बनाने के बाद पैदा हुए थे और कुछ उनके पतियों से बंदी बनाने से पहले ही पैदा हुए थे। कृष्ण ने उन सभी को अपने बच्चों के रूप में स्वीकार किया था।" मुझे चित्रा की बातें याद आ गईं। हमने उन्हें अपने बच्चे के रूप में क्यों नहीं अपनाया? मेरी पत्नी, जिसने पहले कृष्ण की उन्हें अपनाने के लिए निंदा की थी, ने भी परसों कहा कि अगर कृष्ण न होते तो ये स्त्रियाँ और बच्चे निराशा से समुद्र में डूब जाते। अगर मैंने उनमें से एक या दो से विवाह कर लिया होता, तो क्या वह स्वीकार करती? कृष्ण की अपनी पत्नियाँ उनके विवाह के बारे में क्या सोचती थीं? मैंने तब इन बातों को जानने की कोशिश ही नहीं की, न ही ये सवाल पूछे। तब मैंने बस कृष्ण पर गुस्सा किया और उनसे दो महीने तक कोई संपर्क नहीं रखा। बस इतना ही। मैं अब भी उस तरह के व्यवहार से बाहर नहीं निकल पाया हूँ। अब कृष्ण, चाहे उनका दूसरों से कितना भी कड़वा झगड़ा क्यों न हो, वे ऐसा कभी नहीं करेंगे। वह हमेशा मुस्कुराता रहेगा, हर मौसम का आदमी..."तभी युयुधना का सबसे छोटा बेटा सत्यकृत वहाँ पहुँचा और चिल्लाते हुए बोला, 'पिताजी, आपका अग्नि अनुष्ठान अभी समाप्त नहीं हुआ है और आपने भोजन भी नहीं किया है। आपका घोड़ा अभी-अभी घर लौटा है। दादाजी इस बात से नाराज़ थे कि आप अभी तक घर नहीं लौटे, इसलिए माँ ने मुझे आपको ढूँढ़कर घर वापस लाने के लिए कहा है।"

—•⁕•—

युयुधन ने अपना हवन संस्कार किया। भूख लगने पर उन्होंने एक बार फिर भोजन किया। भोजन के बाद उन्हें नींद आने लगी। शरीर पसीने से तर हो गया था। गर्मी असहनीय थी और रात को उन्हें अच्छी नींद नहीं आई थी। वे जानते थे कि अगर वे दिन में सोएंगे तो पिता उन्हें डांटेंगे। पिता तो पोते-पोतियों के होने के बाद भी उन्हें डांटते थे। युयुधन जानते थे कि भविष्य में भी पिता ऐसा ही करते रहेंगे। लेकिन उन्हें नींद का तीव्र आवेग महसूस हो रहा था। उनके पास एक योजना थी जिसके तहत वे पिता की नजरों से बचकर सोना चाहते थे। दूर-दूर तक नावों पर नजर रखने के लिए नंदका ने भंडारगृह के ऊपर, जहाँ नावें लंगर डालती थीं, एक ऊँचा बुर्ज बनवाया था। बुर्ज में एक खुला आँगन था जो चार लोगों के सोने के लिए काफी बड़ा था। उसके ऊपर एक और छोटा खुला आँगन था जो केवल नंदका के लिए था। नंदका का आँगन आदर्श था। वहाँ हमेशा ठंडी हवा चलती रहती थी। युयुधन नंदका के आँगन में सोने के लिए घर से निकल गए।

युयुधन को पंद्रह बड़े महल, फिर दो मंजिला इमारतों की दो कतारें और दो व्यापारिक गोदाम पार करने पड़े, तब जाकर वह बाईं ओर स्थित तीसरे गोदाम तक पहुँचे, जहाँ नंदका का टावर था। टावर की सीढ़ियाँ इमारत के बाहर थीं। छत पर पहुँचते ही तेज़ हवा चलने लगी, जिससे पसीना सूख गया। टावर के पहले प्रांगण में चार युवक सो रहे थे। दीवार की ओर, लगभग उनकी ही उम्र का एक व्यक्ति बालकनी से उत्तर दिशा में फैले पूरे समुद्र तट को देख रहा था। युयुधन को देखते ही वह उठ खड़ा हुआ और उनका अभिवादन किया। जब युयुधन ने कहा, 'मैं थोड़ी देर ऊपर सोना चाहता हूँ', तो उस व्यक्ति ने एक गद्दा बिछाया, युयुधन के लिए तकिया रखा और चला गया। चारों दीवारों में बनी खिड़कियों से ऐसी हवा आ रही थी जो अपने रास्ते में आने वाली वस्तुओं को उड़ा ले जा सकती थी। हालाँकि यह गर्म गर्मी की हवा थी, फिर भी यह त्वचा के रोमछिद्रों में जमे पसीने को सुखाकर उसे आराम दे रही थी। लेटते ही वह तुरंत गहरी नींद में सो गया।

अच्छी नींद से तरोताज़ा होकर जब युयुधन जाग रहा था, तभी उसे नीचे से एक ज़ोरदार आवाज़ सुनाई दी। यह उस व्यक्ति की आवाज़ थी जिसने उसके लिए गद्दा बिछाया था। आवाज़ आई, "उठो, तुम सब। हे क्रतु, उठो। उत्तर से नावें आ रही हैं।" युयुधन उठा और उत्तरी खिड़की से बाहर देखा। वहाँ लगभग अस्सी से सौ फीट लंबी चार नावें थीं। वे बाईं ओर ज़मीन और दाईं ओर असीम समुद्र के बीच एक सीधी रेखा में आ रही थीं। ज्वार-भाटा नहीं था और समुद्र शांत था। उसने

अपनी आखिरी नींद इस उम्मीद में ली कि व्यापारिक नावें ऊनी वस्त्र, चीनी मिट्टी के बर्तन, कीमती पत्थर और चांदी लाएंगी। लेकिन नावों के आते ही सोने का कोई मौका नहीं था। माल उतारने और नाविकों की बातचीत का शोर होना तय था। इसलिए उसने शोर शुरू होने से पहले थोड़ी सी नींद लेने की कोशिश की। तभी नंदक आए और बोले, "विप्रथु ने मुझे बताया था कि आप यहाँ सो रहे हैं। कृपया सोते रहिए। नावें आ रही हैं। मैं जाकर नावों से माल उतारने का काम देखता हूँ और व्यवस्था करता हूँ। पता नहीं गर्मी से बेचारे मजदूर कहाँ पड़े होंगे। मुझे उन्हें ढूँढना पड़ेगा।" फिर वे जल्दी से चले गए। युयुधन फिर से उठ खड़े हुए। समुद्र देखने के लिए बस बैठना ही काफी था। चारों ओर की खिड़कियाँ इतनी नीची थीं कि समुद्र दिखाई देता था। उनके पीछे समुद्र था और सामने द्वारका। ठीक सामने कृष्ण का महल था। यह आठ छोटी इमारतों से घिरा हुआ था, जिनमें उनकी आठ पत्नियाँ अलग-अलग रहती थीं। इन इमारतों के बगल में देवकी और वासुदेव का घर था। इसके बगल में वासुदेव की अन्य सात-आठ पत्नियों के लिए इमारतों का एक परिसर था, जो बच गई थीं। इनके बगल में उग्रसेन का महल था। बूढ़ा व्यक्ति हिल नहीं सकता था क्योंकि उसके अंगों में ताकत नहीं बची थी। उनकी भी कोई पत्नी नहीं थी, फिर भी वे अपना पद छोड़ने को तैयार नहीं थे। चित्रा ने उनके बारे में सच ही कहा था। एक सौ दस साल के बलराम का घर था। उग्रसेन के महल के बगल में बलराम का घर था। उनकी एक ही पत्नी थी और वे साथ रहते थे। कृष्ण की तरह अलग-अलग इमारतों की कोई ज़रूरत नहीं थी। कृष्ण चाहे जिस भी पत्नी से मिलने जाते, दूसरी पत्नियों में तीव्र ईर्ष्या पैदा हो जाती थी। बलराम एक पत्नी के साथ ही सुखी थे। युयुधन ने अपना घर शहर के बीचोंबीच, पेड़ों के झुंड के बीच छिपाकर बनाया था। वहाँ पर्याप्त हवा नहीं आती थी। किले की दीवारें एक साफ-सुथरे चौकोर आकार में थीं। वसंत उत्सव के लिए की गई सफेदी से दीवारें चमक रही थीं। इस वर्ष का वसंत उत्सव कृष्ण की अनुपस्थिति में मनाया जाना था। वे पांडवों के साथ साढ़े तीन महीने से दूर थे। पांडवों के साथ होते ही वे द्वारका को पूरी तरह भूल गए। या शायद वे उन्हें अपना राज्य वापस पाने की योजना बनाने में मदद करने के लिए रुके थे, लेकिन अब युद्ध निश्चित लग रहा था। दुर्योधन ने युद्ध करने का निश्चय कर लिया था और अब द्वारका में उनका समर्थन प्राप्त करने आया था। युयुधन को लगा कि दुर्योधन केवल समर्थन ही नहीं चाहता, बल्कि वह भाइयों के बीच फूट डालने भी आया है। तभी उसे लहरों के शोर के बीच एक आवाज़

सुनाई दी, "तुम वहाँ, इसे और ज़ोर से खींचो, और अधिक बल लगाओ। तुम, क्रतु, रस्सी को कसकर पकड़ो।" "हाँ" की आवाज़ कई स्वरों में गूंजी। युयुधन ने मुड़कर देखा। वे अभी पहली नाव को लंगर डाल रहे थे और उसे समेट रहे थे। उसका मन हुआ कि वह नीचे जाकर सब देखे। लंबी नाव के ऊपरी हिस्से में दो विशाल गठ्ठे थे, इतने भारी कि उन्हें उठाने के लिए दो आदमियों की ज़रूरत थी। गठ्ठे सूती कपड़े में लिपटे हुए थे और रस्सी से बंधे हुए थे।

Yuyudhana enquired, "What merchandise do they contain?"

नंदका ने कहा, "ऊनी कंबल।" फिर उन्होंने गठ्ठे संभाल रहे एक आदमी से कहा, "क्रतु, इसे ध्यान से संभालो। नहीं तो कंबल गीले हो जाएंगे।" फिर वे युयुधन की ओर मुड़े और बोले, "उस लोक के लोगों ने एक नए प्रकार के कंबल बनाने शुरू कर दिए हैं। बुनाई में क्या ही कुशलता है, और उन पर क्या ही अद्भुत डिज़ाइन बने हैं! तुम्हें याद होगा कि पिछली बार हमने उन्हें सूती कपड़ा, हाथीदांत की कलाकृतियाँ और मोती भेजे थे। ये हमें उनके बदले में भेजे गए हैं।" फिर वे क्रतु की ओर मुड़े जो इतना शक्तिशाली था कि सारा भार अकेले ही संभाले हुए था। युयुधन भी उस युवक को घूरने लगा। वह लगभग बीस वर्ष का था। उसका शरीर सुगठित था। उसकी आँखें बड़ी और चमकीली थीं। उसके बाल घुंघराले थे। तब तक गठ्ठे किनारे पर पहुँच चुके थे। नाव के फर्श पर धातु की छड़ें रखी थीं, मानो तूफ़ानों के अस्थिर करने वाले प्रभाव को रोकने के लिए रखी गई हों, और वे मौसम और लहरों के पानी से जंग खा चुकी थीं। हालांकि इस वजह से उनकी चमक काफी कम हो गई थी, फिर भी वे इतनी अच्छी तरह चमक रहे थे कि यह स्पष्ट था कि वे तांबे के थे। धातु की छड़ों के बीच चीनी मिट्टी के घड़े जड़े हुए थे। उनके मुंह मजबूती से बंद थे ताकि घड़े हिलें नहीं। युयुधन तुरंत समझ गया कि उनमें विदेशी शराब है। उसने भी कई बार इसका स्वाद चखा था। जैसा कि बलराम ने सही कहा था, इस शराब में किसी को राजसी बाज की गति से आकाश में पहुंचाने की शक्ति थी। यह आर्यों के सोम पेय की तरह हल्की नहीं थी। बलराम ने यह सुनिश्चित किया था कि इन घड़ों को एक अलग भवन में रखा जाए ताकि उनके अलावा किसी और की उन तक पहुंच न हो। अक्सर, वे विदेशी इन घड़ों को मुफ्त उपहार के रूप में भेजते थे। युयुधन को याद आया कि उसके पिता सत्यक ने इस विदेशी शराब की निंदा करते हुए कहा था कि यह यादवों के मनोबल को नष्ट कर रही है, जो अपनी हल्की सोम शराब की जगह इसका सेवन कर रहे थे। अनार्त देश के तटीय क्षेत्र में

प्रवास करने के बाद, यादवों ने व्यापार और वाणिज्य के आधार पर अपनी समृद्धि का निर्माण किया था। वास्तव में, यादवों के पास हस्तिनावती के कुरुओं की तुलना में कहीं अधिक धन-संपत्ति थी, जो पीढ़ियों से समृद्ध थे। आर्य जगत में कोई भी धन-संपत्ति में यादवों की बराबरी नहीं कर सकता था। युयुधन को यह देखकर बहुत दुख और पीड़ा हुई कि यादवों ने सोम को केवल एक रस्म तक सीमित कर दिया था और वे विदेशी पेय के लिए इतने उत्सुक थे कि उसे स्वयं तैयार करने तक लगे थे। क्रतु और तीन अन्य युवक तांबे की छड़ों को किनारे पर ले जा रहे थे। उन्होंने शराब के घड़े छड़ों के बीच रख दिए।

अपना काम खत्म करने के बाद जब क्रतु अपने वस्त्र ठीक करते हुए किनारे पर आया, तो युयुधना ने पूछा, "तुम्हारा देश कौन सा है?"

उन्होंने आश्चर्य से उत्तर दिया, "क्यों? मैं तो यहीं का हूं, अनार्ता की भूमि का। इसी द्वारका का।"

युयुधना, "मैंने तुम्हें पहले कभी नहीं देखा था।"

क्रतु ने कहा, "तुम युयुधन सत्यकी हो, है ना? मैं अधिकतर समुद्र में रहता हूँ। इस बार मैं यहीं रुक गया हूँ क्योंकि मेरी माँ बहुत बीमार हैं। मैं इन नावों पर सूती वस्त्र, हाथीदांत की वस्तुएँ और मसाले लेकर जाऊँगा।"

युयुधना, 'तुम्हारे पिता का नाम क्या है?'

क्रतु ने कहा, "तुम इस जगह पर बहुत कम आते हो जहाँ नावें लंगर डालती हैं, बल्कि मुझे कहना चाहिए, कभी नहीं आते। इसीलिए तुम मुझे नहीं जानते। मैं कृष्ण वासुदेव का पुत्र हूँ।"

इस उत्तर ने युयुधन को असमंजस में डाल दिया। कृष्ण की आठ पत्नियों में से उनकी माता कौन थीं? वह तो उन सभी को अच्छी तरह से जानते थे।

उनके पुत्र, जो क्षत्रिय थे और धनुर्विद्या के क्षत्रिय पेशे से जुड़े थे, वे घाट पर काम करने जैसे गैर-क्षत्रिय काम में कैसे लगे हो सकते थे? तभी उन्हें यह ख्याल आया कि क्रतु उन स्त्रियों में से किसी एक का पुत्र होना चाहिए जिन्हें कृष्ण ने नरकासुर से मुक्त कराया था। हालांकि, कृष्ण ने तो उनसे केवल सात वर्ष पहले ही विवाह किया था। यह बीस वर्षीय युवक अपनी माता के गर्भ से कृष्ण से विवाह से पहले ही जन्मा होगा। लेकिन इससे उनके मन में यह संदेह और गहरा गया कि क्या उनका जन्म नरकासुर द्वारा उनकी माता को बंदी बनाए जाने से पहले हुआ था या फिर जबरन बंदी बनाए जाने के बाद। उसी समय खाली नावों को थोड़ा और आगे पानी

में ले जाया गया। माल से भरी एक और नाव बंदरगाह में आई। क्रतु भी उस समूह में शामिल हो गया जो उससे माल उतारने वाला था। माल उतारने का काम शुरू होने के कुछ ही समय बाद एक स्त्री वहाँ आई। उसकी आयु पैंतीस से अड़तीस वर्ष के बीच थी। उसका चेहरा थका हुआ था। उसने अपने बाएं हाथ में एक साल का बच्चा उठाया हुआ था। वह गले में लटकी एक डोरी से भोजन से भरा एक बर्तन लिए हुए थी। किनारे से वह पुकार रही थी, "बच्चे, क्रतु, इधर आओ, मैं तुम्हारे लिए भोजन लाई हूँ।"

नाव से बेटे ने जवाब दिया, "आपको आने की ज़रूरत नहीं थी। मैं खुद इसे लेने आ जाता।"

मां ने कहा, "तुम काफी दिनों से नहीं आए। और मुझे पता है कि तुम काम में इतने मग्न हो जाते हो कि अक्सर खाना खाना भूल जाते हो, खासकर जब काम बहुत ज्यादा होता है।"

क्रतु ने कहा, "इस नाव के अलावा, आगे तीन और नावें हैं। अगर मैं अभी खा लूँगा, तो काम करने के लिए बहुत सुस्त हो जाऊँगा। बढ़ई नावों की मरम्मत करने आ रहे हैं। देखो, उस मीनार के सामने वाले आँगन में, कृपया वहाँ छाया में इंतज़ार करो।" फिर उसने ऊपर वाले हिस्से से गठ्ठियाँ उतारनी शुरू कर दीं। वह वहीं खड़ी रही। बच्चा रोने लगा। लहरों की हल्की आवाज़, लोगों की बातचीत की आवाज़ और भारी वस्तुओं के खिसकने की आवाज़ के बावजूद, उसने रोने की आवाज़ साफ़ सुनी। उसने अपनी माँ को पुकारा, "माँ, बच्चा धूप की गर्मी से रो रहा है। वहाँ जाओ। वहाँ छाया है, और वहाँ हवा भी चलती है। जाओ और वहाँ बैठ जाओ। इस भयानक गर्मी में बच्चे को बुखार हो सकता है।" यह एक आदेश जैसा लग रहा था। वह मीनार की ओर बढ़ी, और फिर आँगन की सीढ़ियाँ चढ़ने लगी।

युयुधन उसे देख रहा था। वह कृष्ण की आठों पत्नियों से भली-भांति परिचित था। उनके साथ उसका इतना घनिष्ठ संबंध था कि वह उनके घरों में जा सकता था, उनसे हंसी-मजाक कर सकता था और उनसे अपने लिए व्यंजन बनाने की मांग भी कर सकता था। कृष्ण की अनुपस्थिति में, यदि उन्हें कोई काम करवाना होता था, तो वे उसे बुला लेती थीं। लेकिन वह नरकासुर की बंदी पत्नियों से बिल्कुल अपरिचित था। वे सभी अलग-अलग जगहों पर थीं, कुछ द्वारका में, कुछ प्रभास में और बाकी कई तटीय गांवों में बसी हुई थीं। बेशक, वह कृष्ण द्वारा उनके रहने की व्यवस्था के बारे में जानता था। वह केवल उन्हें दूर से देख रहा था, और कभी

उनके घर नहीं गया था। उनसे कभी बात नहीं की थी। और वे भी कभी उसके घर नहीं आई थीं। यह आपसी दूरी या तो यह दर्शाती थी कि उसे उन्हें जानने की कोई आवश्यकता नहीं थी या वे उसके परिचय के योग्य नहीं थीं। उसने इसे समझने की बहुत कोशिश की, लेकिन व्यर्थ। अब क्रतु ने उसका ध्यान आकर्षित किया। वह सोचने लगा कि उसकी माता का नाम क्या हो सकता है। उसके मन में उसके बारे में जानने की जिज्ञासा जागृत हुई। उसकी आँखें स्थिर और चमकीली थीं और वह गरीबी के चिथड़े पहने हुए थी। उसका चेहरा शांत और संतुष्ट था, जैसा कृष्ण की आठों पत्नियों में से किसी का नहीं था—ऐसा चेहरा जो सब कुछ सह लेता था और कभी शिकायत नहीं करता था। वह मीनार के सामने वाले आँगन में बैठी थी और ऐसा लग रहा था मानो वह हाल ही में किसी गंभीर बीमारी से ठीक हुई हो। उसका मन हुआ कि वह उसके पास जाकर उससे बात करे। लेकिन वह उसे जानता नहीं था और अचानक उसके पास जाने में उसे शर्म आ रही थी। वह भंडारगृह में वापस गया और सीढ़ियाँ चढ़ गया। उसने उसे पहले आँगन में, जिसकी खिड़कियाँ खुली थीं, बच्चे को स्तनपान कराते हुए देखा। जैसे ही उसने उसे देखा, उसने भय, आदर और उलझन के मिले-जुले भाव से प्रतिक्रिया दी और बच्चे को अपने शरीर से लगा लिया।

युयुधना, "कृपया बैठ जाइए, बैठ जाइए। मैं अभी-अभी क्रतु से मिला हूँ। मैंने आपको पहले नहीं देखा था। इसलिए मैंने आपसे मिलने का फैसला किया। क्या आप मुझे पहचानते हैं?"

क्रतु की माँ, "अनर्त देश में युयुधान सात्यकि को पहचानने में कौन असफल हो सकता है?"

उसके जवाब से युयुधना प्रसन्न हो गया। उसने उसे बैठने के लिए मनाने की कोशिश की। वह दीवार के सहारे बैठ गई। बच्चे का सिर अपनी उठी हुई बाईं गोद पर टिकाकर उसने बच्चे को दूध पिलाना शुरू कर दिया। उसका स्तन सुडौल, बड़ा और हिलता-डुलता था। यह दृश्य उसे अपने सबसे छोटे बच्चे की याद दिला रहा था। "अगर ऐसा है, तो तुमने मुझे कब देखा था?"

क्रतु की माता ने कहा, "क्या नरकासुर की कैद से मुक्त होने के बाद हम सबको यहाँ लाने वाले आप ही नहीं थे? जब हमारा विवाह हुआ था, तब आप भी उपस्थित थे।"

उन्हें याद आ गया। वही थे जिन्होंने नरकासुर से मुक्त कराई गई स्त्रियों और बच्चों को तीस रथों में द्वारका ले जाने का काम देखा था। जब कृष्ण ने तट पर उन सभी का विवाह कराया, तो वे एक-एक करके, अपने बच्चों के साथ (यदि कोई थे), कृष्ण को पुष्पमाला पहनाने आए। और कृष्ण ने भी बदले में उन्हें पुष्पमाला पहनाई। यह सच है कि जब कृष्ण ने उन सभी का सामूहिक विवाह कराया था, तब वे वहाँ मौजूद थे। लेकिन उन्होंने केवल देखा था, सहमति नहीं दी थी। वे चुप रहे क्योंकि उनका झगड़ा करने का मन नहीं था। अब वह क्रोध शांत हो गया था। उन्हें देखकर उनके मन में उनके लिए दया का भाव जागा।

उसने उससे पूछा, "तुम्हारा बेटा कुली का काम कर रहा है। क्या तुम इतनी गरीबी में जी रही हो?"

उसने उत्तर दिया, "मैं, कृष्ण वासुदेव की पत्नी होकर, गरीब होने का दावा कैसे कर सकती हूँ?" वह हँसी। उसकी हँसी में सूक्ष्म उदासी झलक रही थी। लेकिन उसमें न तो हताशा थी और न ही निराशावाद।

Yuyudhana, "Then why this plight?"

क्रतु की माता ने कहा, "शादी के शुरुआती दिनों में हमारे लिए अलग-अलग घर बनवाए गए। राजकोष से हमारी आजीविका का प्रबंध किया गया। एक साल बीत गया, तुम्हारा दोस्त कहाँ था? राजकोष उसके भाई बलराम के नियंत्रण में था। इस नगर में भला कौन चाहता था कि वह हमारी शादी करवाए? और बलराम तो इसके घोर विरोधी थे। उन्होंने सवाल उठाया कि राजकोष से पैसा अपने छोटे भाई की अनगिनत पत्नियों के भरण-पोषण पर खर्च करना उचित है या नहीं। इसलिए उन्होंने हमें सहायता देना बंद कर दिया। कृष्ण किसी कारणवश नगर से बाहर चले गए थे। अब हम क्या करते? क्या पेट इंतजार कर सकता था? कृष्ण वासुदेव की पत्नियाँ होने के नाते, हमने सोचा कि हमारे लिए दासता करना उचित नहीं होगा। इससे कृष्ण का मान कलंकित होता। इसलिए हमने छोटे-मोटे काम करने का फैसला किया। मेरा बेटा क्रतु तब चौदह वर्ष का था। वह हट्टा-कट्टा लड़का था। इसलिए उसने नावों पर काम करना शुरू कर दिया। मैंने घर पर सूत बनाना शुरू कर दिया।"

Yuyudhana, "The rest?"

क्रतु की माता ने कहा, "द्वारका में ये सब अपना जीवन यापन कैसे करते थे? कुछ प्रभास चले गए, और कुछ अन्य स्थानों पर। उन्होंने कृषि, सूत सृजन और

बुनाई का काम शुरू किया। और यह विचार हमें कृष्ण ने ही दिया था। इस तटीय क्षेत्र में खेती योग्य भूमि बहुत कम है। कृष्ण अपने लौटने के बाद नरकासुर द्वारा लूटी गई संपत्ति को यहाँ लाए और हम सब में बाँट दिया। उन्होंने अपने लिए कुछ बर्तन और सोना रख लिया। बलराम इस बात से बहुत क्रोधित हुए कि कृष्ण ने राजकोष की संपत्ति अपनी नई पत्नियों में बाँट दी।"

तब युयुधन को याद आया। लगभग तीन-चार साल पहले, इसी तरह का हंगामा हुआ था। बलराम ने उसे अदालत में पेश नहीं किया था, क्योंकि वह कृष्ण का मित्र था। कृष्ण ने भी खुलकर कुछ नहीं कहा था। वे चुप रहे। युयुधन अपनी यादों और क्रतु की माता के शब्दों को जोड़ने लगा। इसी में मग्न होकर उसने घाट पर हो रहे शोर को नहीं सुना। थोड़ी देर बाद, उसने बच्चे को अपने बाएं स्तन से हटाकर दाहिने स्तन से लगा दिया। जब वह बच्चे को दूसरी गोद में रख रही थी, तभी उन्हें सामान उतारने की आवाज़ सुनाई दी। आगे क्या कहें, यह न जानते हुए उसने उससे पूछा, "आपका नाम क्या है?"

क्रतु की माता, "धृति।"

युयुधना, "तुम्हें यह नाम किसने दिया?"

क्रातु की माँ ने कहा, "बच्चों का नाम कौन रखता है? दादा-दादी और माता-पिता।"

युयुधना, "वे कौन हैं?"

क्रतु की माता ने कहा, "ओह, मैं सिंधु देश से आती हूँ। मैं एक कृषक परिवार से आती हूँ। हमारे पास बहुत उपजाऊ भूमि थी।"

युयुधन, "तुम नरकासुर के दल के हाथों कैसे बंदी बन गए?"

क्रतु की माता ने कहा, "मेरी शादी हो चुकी थी। मेरे पति और उनके लोग मुझे बड़े धूमधाम से अपने महल में ले जा रहे थे। तभी नरकासुर के लुटेरों के गिरोह ने हम पर हमला कर दिया। हमारे लोगों ने लाठियों और चाकू से बचाव करने की कोशिश की। लेकिन वे उन पेशेवर हत्यारों और लुटेरों का मुकाबला कैसे कर सकते थे? लुटेरे इस तरह लड़ रहे थे कि युवतियों और लड़कियों को ज़रा भी चोट नहीं आई। मुझे और दो अन्य महिलाओं को पकड़ लिया गया। बाकी सभी मारे गए। वे सोना, तांबे के बर्तन और अन्य दहेज लूट ले गए।"

Yuyudhana, "When was Kratu born?"

क्रातु की माँ, "हमारी गिरफ्तारी के एक साल बाद?"

युयुधना, "तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध जन्म हुआ?"

क्रतु की माँ ने कहा, "उस लुटेरों के गिरोह को कौन चाहेगा? पूरे गिरोह ने एक-एक करके हम पर हमला किया।"

युयुधन ने उसकी कहानी सुनकर गहरा दुःख महसूस किया। उस गिरोह का नाश करने वाले कृष्ण के प्रति उसका आदर और श्रद्धा और भी बढ़ गई। इसका अर्थ यह था कि डाकू केवल अनार्ता क्षेत्र तक ही सीमित नहीं थे, बल्कि वे अन्य स्थानों पर भी अधिकारियों से छिपकर घूमते थे। बाहर, माल उतारने की आवाज़ लहरों की गड़गड़ाहट के साथ मिल रही थी। लहरों का शोर और भी तेज़ हो गया। उसने उससे पूछा, "क्या कृष्ण तुम्हारे घर आते हैं?" उसकी सामान्य रूप से शांत आवाज़ गुस्से में भड़क उठी, "ये कैसी बातें हैं?" उसने अपना सिर उठाकर उसकी ओर देखा। उसका चेहरा क्रोध से लाल था। उसने आगे कहा, "तुम मुझे क्या समझते हो? क्या तुम्हें लगता है कि यह बच्चा उनके दर्शन के बिना पैदा हुआ था?"

युयुधना ने कहा, "कृपा करके क्रोधित न हों। मेरा इरादा कुछ बुरा कहने का नहीं था। देखिए, आप इतनी सारी हैं। और उनकी आठ और नियमित पत्नियाँ हैं। इसके अलावा, वह शहर में बहुत कम आते हैं। और जब आते भी हैं, तो तरह-तरह के कामों में व्यस्त रहते हैं। आप सबके घर आने का उन्हें समय कैसे मिल सकता है?"

उसने एक हल्की सी आह भरी। उसका गुस्सा अपने आप शांत हो गया। अब वह शांत स्वर में बोली, "मुझे पता था कि, उसके दोस्त होने के नाते आप कुछ भी गलत नहीं कह रहे हैं। पिछले दो सालों में, वह एक दिन आया और फिर तीन दिन मेरे साथ बिताए। उन तीन दिनों में उसने मुझे जीवन भर का सुख और संतोष दिया। उसने मुझे बहुत स्नेह दिया। तब तक मैं उससे नाराज़ थी। नाराज़ इसलिए थी क्योंकि उसने नाम के लिए ही हमारी शादी करवाई और फिर हमें छोड़ दिया। अब मैं चीज़ों को बेहतर ढंग से समझ सकती हूँ। उसका काम कई जगहों पर है। अलग-अलग देशों में। वह शायद ही कभी शहर में आता है। जैसा कि आप कहते हैं, जब वह शहर में होता भी है तो उसे और भी बहुत सी बातों की चिंता रहती है। और उसकी आठ पत्नियाँ हैं जिनकी शादी भव्य समारोहों में हुई है और जिनके माता-पिता उच्च पदस्थ हैं। और हम भी हैं। और हम इतने सारे हैं। वह हममें से हर एक पर कितना ध्यान दे सकता है? फिर भी वह हमारे घर कम से कम एक दिन के लिए तो आ जाता है। हम इससे ज़्यादा की उम्मीद कैसे कर सकते हैं?"

बाहर समुद्र में मानो ज्वार उमड़ रहा था। एक तरह की उदासी उसके मन में समा गई। उसने खिड़की से बाहर देखा, लहरें कई गुना बढ़ गई थीं और सूरज समुद्र की ओर झुक गया था। सूरज की रोशनी से जगमगाती लहरें भव्य लग रही थीं। सूरज की गर्मी में खुशी और उदासी दोनों घुल-मिल गई थीं, और साथ ही एक तरह का उखड़ जाने का एहसास भी उन्हें सता रहा था। वह उसकी ओर मुड़ा। बच्चा सो गया था। उसने धीरे से बच्चे का मुंह अपनी छाती से हटाया और उसे गद्दे पर लिटा दिया।

युयुधना, "क्या तुम्हारे समूह की बाकी सभी पत्नियाँ भी तुम्हारी तरह सोचती हैं? क्या उनमें भी उसके प्रति वैसी ही निष्ठा और प्रतिबद्धता है?"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। उसने अपने दाहिने हाथ से बच्चे के चेहरे पर बैठी मक्खी को हटाया। जिस हाथ से उसने ऐसा किया था, उसकी पाँचों उंगलियाँ अलग-अलग थीं और ऐसा लग रहा था जैसे वे उसकी ओर इशारा कर रही हों। उसने सोचा कि क्या उसका जवाब यह सवाल होगा, "क्या हथेली की सभी पाँचों उंगलियों की लंबाई बराबर होती है?" उसकी अपनी समझ भी उसे इसी ओर ले गई। उसे एहसास हुआ कि पाँचों उंगलियों का बराबर होना अस्वाभाविक होगा। जब वह इन बातों पर सोच रहा था, तो लहरों की चमक, जो प्रकाश को प्रतिबिंबित कर रही थी, फीकी पड़ती हुई प्रतीत हुई। फिर उसने कहा, "मुझे दूसरों की चिंता नहीं है। जहाँ तक मेरी बात है, मैं बस इतना चाहती हूँ कि वह एक बार फिर मेरे घर लौटे, बच्चे के सिर को सूंघे, उसे अपनाए और उसका नाम रखे। मेरी इससे बड़ी कोई इच्छा नहीं है। तुमने मेरे बेटे क्रतु को देखा है, जो नीचे घाट पर काम कर रहा था। कृष्ण ने ही उसके सिर को सूंघा, उसे गले लगाया और उसका नाम रखा। यह तब की बात है जब वह दो साल पहले हमारे घर आया था।"

जैसे ही उनका नाम लिया जा रहा था, क्रतु स्वयं आंगन में आ गए। वे कमर पर लंगोटी के अलावा नंगे बदन थे, और उनका शरीर, हाथ, छाती, गर्दन, चेहरा और टांगें पसीने से तरबतर थीं। युयुधन को वहाँ देखकर क्रतु आश्चर्यचकित रह गए और शर्मिंदा होकर खड़े हो गए, मानो वे अपने आने का उद्देश्य ही भूल गए हों। उनकी माता ने उनसे पूछा, "क्या तुमने हाथ धो लिए? आओ, खाना खाओ।" जमीन पर नज़र गड़ाए हुए उन्होंने उत्तर दिया, "मैं बाद में खाऊँगा।" युयुधन ने बीच में कहा, "मेरी उपस्थिति की परवाह मत करो। कृपया खाओ।" क्रतु ने अपनी नज़र जमीन से नहीं हटाई। युयुधन भी काफी असहज महसूस कर रहे थे, और उन्होंने कहा,

"तुम अपना भोजन समाप्त करो, मैं प्रतीक्षा करूँगा।" फिर वे वहाँ से सीढ़ियाँ चढ़कर अगले आंगन में चले गए। यह आखिरी आंगन था। वहाँ एक तेज़ हवा चल रही थी जिससे शरीर को सुकून मिल रहा था। उन्होंने चारों खिड़कियाँ खोल दीं ताकि हवा चारों दिशाओं से आए। लहरों की आवाज़ इतनी तेज़ नहीं थी। लेकिन समुद्र ध्वनि से कहीं अधिक दृश्य रूप से उपलब्ध था। मन दूर क्षितिज में व्याप्त शांति में विलीन हो गया। उसका मन उस शांति के बिंदु में लीन हो गया और वह कुछ देर तक शांत खड़ा रहा। फिर उसने समुद्र से नज़रें हटा लीं। वहाँ द्वारका नगर, अपनी संपूर्णता और विविधता के साथ, उसकी आँखों के सामने फैला हुआ था। उसकी आँखों ने इमारतों, हवेलियों, गलियों की कतारों, तारों की तरह बिखरे हुए छोटे-छोटे घरों और शहर की सुरक्षा के लिए बने किले का अवलोकन किया। उसे गर्व और संतोष का अनुभव हुआ कि उन्होंने यह सब अपने हाथों से बनाया था। उसे इस बात का भी संतोष था कि यह नगर मथुरा और अन्य देशों के अन्य नगरों से कहीं अधिक सुंदर, स्वच्छ और सुखमय था। उसकी भटकती नज़रें अंततः नगर की दीवारों के पार के परिदृश्य पर टिकीं। तांबे के रंग का खुला मैदान। उसके आगे रैवतक पर्वत श्रृंखला। और आगे धुंधलापन था। विपरीत दिशा में और उसकी पीठ के पीछे असीम और अथाह समुद्र फैला हुआ था। और वहाँ की भूमि उसकी आँखों के सामने आ गई। कितनी भूमि और कितने देश, और कितने देशों की यात्रा उसने स्वयं की थी! सिंधु, बहलिका, वातधन, गांधार, केकय, त्रिगर्त, मद्रा, उत्तरकुरु, हेमकुटा, कुरु, पंचाल, भोज, कोसल, विदेह, अंग, वंग, पुंड्र, चंपा, मगध, कुंतला, पुलिंद्रा, कलिंग, चेदि, अवंती, विदर्भ आदि देश! और इनमें से प्रत्येक में कितने छोटे-छोटे राज्य! प्रत्येक में चार से दस राज्य। और उतने ही राजा। और इनसे परे, वह जानता था, कितने अज्ञात राज्य। उस तरफ हिमालय, उस तरफ विंध्य। युयुधन देशों की संख्या और विविधता को देखकर आश्चर्यचकित रह गया। उसने सोचा, "कृष्ण को सब कुछ पता है। उन्हें पता है कि कौन सा देश कहाँ है और कितनी दूर है। साथ ही शासकों की शक्ति और उनके स्वभाव का भी।" फिर उसने समुद्र की ओर मुड़ने का सोचा। और वह उसकी ओर मुड़ा और उसने जल का असीम और अनंत विस्तार देखा, सिवाय लहरों द्वारा इधर-उधर बने अस्थायी अवरोधों के। हालांकि समुद्र के दूर के हिस्से सीधे दिखाई नहीं देते थे, क्या इसका यह मतलब था कि समुद्र में ऐसे क्षेत्र भी थे जहाँ लहरें नहीं चलती थीं? अचानक यह समझ आने पर कि बिना लहरों के समुद्र नहीं होता, युयुधन को लगा

जैसे उसने कुछ नया खोज लिया हो! वैसे तो कहा जाता था कि पृथ्वी समुद्र की सीमा बनाती है, लेकिन समुद्र की सीमा क्या है? युयुधन ने सोचा कि पृथ्वी के किनारों की तो कोई बात ही नहीं करता। यह तो बिल्कुल असीम है। जब उसे याद आया कि वे मथुरा से समुद्र की सीमा तक आ गए हैं, तो उसे कृष्ण का भी ख्याल आया। उसने सोचा, "क्या वह विराट नगर में हैं या कहीं और?" घर से दूर रहने पर वह एक पहेली की तरह होते थे, क्योंकि किसी को भी उनके ठिकाने, उनकी गतिविधियों और उनके विचारों का कोई अंदाजा नहीं होता था! सब कुछ तभी पता चलता था जब वह लौटकर खबर देते थे। युयुधन ने खुद से पूछा, "मेरे सिवा वह किसे सब कुछ बताएंगे?" उसे पूरा यकीन था कि कृष्ण तब तक नहीं लौटेंगे जब तक वह जरासंध को मारने में मदद करने वाले पांडवों को विजय नहीं दिला देते। युयुधन चिंतन करने लगा, "इस अनर्त देश में आकर और पुराने कुशस्थल के स्थान पर द्वारका नामक नया नगर बसाने के बाद हम कृषि और व्यापार से समृद्ध हुए। धनवान होते ही हम जरासंध को पूरी तरह भूल गए। बलराम और उनके साथी मथुरा से भागने के दौरान हुए अपमान को भूल गए। लेकिन कृष्ण नहीं भूले। उन्होंने पुराने रिश्ते को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। जब अंधे धृतराष्ट्र ने पांडवों को जंगल की एक छोटी सी जमीन भेंट की और उन्हें संदेश भेजा कि वे वहाँ नगर बनाकर बसें, तो क्या कृष्ण ने ही पांडवों की सेवा में सोना, तांबे के बर्तन, रथ, घोड़े और द्वारका के सर्वश्रेष्ठ वास्तुकार और बढ़ई नहीं दिए थे? बलराम ने पांडवों को हमारी मेहनत से अर्जित संपत्ति देने का कितना पुरजोर विरोध किया था? बलराम, सभी यादवों ने तो इसका विरोध किया था। क्या उन सभी ने यह तर्क नहीं दिया था कि बेघर होने के दुर्भाग्य के बाद उन्हें धन प्राप्त हुआ, इसलिए वे इसे किसी अज्ञात, अनभिज्ञ पक्ष को क्यों दें? यही सोच थी... बड़े-बुजुर्गों ने भी यही तर्क दिया। उनका कहना था कि पांडव उनकी मौसी के बच्चे तो हो सकते हैं, लेकिन उनकी मौसी को नवजात शिशु के रूप में भोज वंश की कुंती ने गोद ले लिया था और उन्होंने कुंती नाम ही धारण कर रखा था। उनका जन्म का नाम यहाँ ज्ञात नहीं था, लेकिन क्या यह उन पर अपना धन लुटाने का पर्याप्त कारण था? उनमें से किसी को भी कृष्ण की दूरगामी योजना समझ नहीं आई। सौभाग्य से उन्होंने ज्यादा विरोध नहीं किया और कृष्ण की सलाह को हल्के विरोध के साथ मान लिया। मथुरा के पास और कौन था जिस पर हम भरोसा कर सकते थे? अगर ऐसे लोग होते भी, तो क्या वे जरासंध के भय से हमसे दूर नहीं रहते? पांडवों का राज्य विशाल नहीं

था। लेकिन उन्होंने अपने साहस और वीरता से इसकी भरपाई कर दी। भीम की असीम वीरता, अर्जुन की धनुर्विद्या में श्रेष्ठता और नकुल और सहदेव का संयमित लेकिन ठोस कौशल और साहस ही पांडवों की कुल संपत्ति थी। और इससे अधिक कोई क्या अपेक्षा कर सकता है? पास ही में उनके रिश्तेदार पंचाल रहते थे। हम सबसे आगे, कृष्ण ने देखा कि उनकी संयुक्त शक्ति इन दोनों में से एक पश्चिम में जरासंध के प्रभाव को रोक सकता था। कृष्ण ने उस समय खाद प्रदान की जब जरासंध को जड़ पकड़नी थी, ताकि पांडवों का पौधा मुरझाने से बच सके। मथुरा से इतनी दूर होने के कारण, हमारे लिए अकेले जरासंध का सामना करना असंभव था। कृष्ण ने उसे कैसे हराया? पांडव बस गए। उन्होंने खेती के लिए आसपास के जंगल को साफ किया। उन्होंने एक नई तरह की बस्ती बसाई। उनके प्रतिद्वंद्वी रिश्तेदार ईर्ष्या करते थे, लेकिन पांडवों ने अपनी स्थिति को और मजबूत किया, जिससे उनके प्रतिद्वंद्वियों की ईर्ष्या और बढ़ गई। इन सब में कृष्ण का हाथ था। उन्होंने ही उन्हें प्रतिष्ठित राजसूय अनुष्ठान करने के लिए प्रोत्साहित किया था। यह अनुष्ठान तब तक कैसे किया जा सकता है जब तक आर्यावर्त के सभी राजाओं को अपनी सर्वोच्चता स्वीकार करने के लिए बाध्य न किया जाए? लेकिन क्या पांडवों में जरासंध को हराने की शक्ति थी? उसकी विशाल सेना, अन्य शासकों के व्यापक समर्थन और उसके अधीन अधिकांश राजाओं की चापलूसी को देखते हुए, पांडवों के अलावा और कौन यह चमत्कार कर सकता था? यह कृष्ण ही थे जिन्होंने यह कार्य किया। जरासंध ने गुफा में आमने-सामने युद्ध करने की बेहद जोखिम भरी रणनीति अपनाई, क्योंकि उसकी सेना से युद्ध करना असंभव था। चाहे कैसी भी लड़ाई हो, कृष्ण जोखिम उठाने से कभी नहीं हिचकिचाते थे, यहाँ तक कि जान की हानि भी। ऐसा लगता है कि धर्मराज भयभीत थे। उनका डर था, "अगर जरासंध ने कृष्ण के साथ उनके दोनों भाइयों को भी कैद कर लिया तो क्या होगा? आखिर वह तो राक्षसी माता से ही तो पैदा हुए थे।" धर्मराज को लगा कि जरासंध तीनों को सड़क के बीचोंबीच घसीटकर उनके हाथ-पैर काट डालेगा और उनकी खाल नोच डालेगा। माना जाता है कि जरासंध वामाचार के हिंसाप्रिय भैरव संप्रदाय के प्रभाव में था। जरासंध सिंहासन पर बैठे एक सौ एक क्षत्रियों को हड्डियों के ढेर में बदलने की योजना बना रहा था। इसीलिए वह राजकुमारों को कैद करने में व्यस्त था। एक सौ एक शासकों को कैद करते ही वह उन्हें वामाचार मानव बलि में टुकड़े-टुकड़े करने की योजना बना रहा था। धर्मराज को यह सोचकर डर लग रहा था कि उनके

दोनों भाई और कृष्ण भी उस बलिदान में शामिल होंगे! धर्मराज ने कृष्ण से विनती की, "हे कृष्ण, मैं राजसूय यज्ञ नहीं करना चाहता। मैं अपने भाइयों को खोना नहीं चाहता।" लेकिन भीम और अर्जुन साहसी स्वभाव के थे। वे कृष्ण की रणनीति में पूरी तरह फिट बैठते थे। जब कृष्ण ने कहा, "क्या भय से डरने वाले कायर विजय प्राप्त कर सकते हैं? मेरे साथ आओ। जो मेरे साथ होगा, वही तुम्हारे साथ भी होगा; जो भी जिम्मेदारी हो, उसे मेरे कंधों पर लो," तो वे तुरंत सहमत हो गए। कृष्ण सही थे। उन दोनों में अपार साहस था, लेकिन शत्रु की चालों को भेदने की कृष्ण जैसी बुद्धि और सूक्ष्मता उनमें नहीं थी। तीनों ने धर्मराज को इस विचार के लिए राजी कर लिया और फिर चल पड़े। कृष्ण आगे, भीम बीच में और अर्जुन पीछे थे। वे तीन चुने हुए, शक्तिशाली घोड़ों पर सवार थे। कृष्ण को आर्यावर्त के हर कस्बे, गली, नाले, नदी, पहाड़ी, पर्वत और जंगल का गहन ज्ञान था। उन्हें दुनिया के बारे में जानने की अदम्य जिज्ञासा है, और वे विदेशी आगंतुकों से अन्य देशों और लोगों के बारे में जानने के लिए प्रश्न पूछते हैं। वे जो कुछ भी सीखते हैं, उसे याद रखते हैं, और किसी न किसी कारण से दूसरे देशों की यात्रा करते हैं। इस प्रकार वे मार्गों को पहचानने और उनका पता लगाने में कुशल हैं। आखिर, जब किसी ने दस मार्गों का ज्ञान प्राप्त कर लिया हो, तो ग्यारहवें मार्ग की कल्पना करना क्या कठिन होगा? वे दूसरों से ऐसे प्रश्न पूछकर अपना ज्ञान बढ़ाते रहते हैं। खांडवप्रस्थ और गिरिव्रज के बीच कितनी दूरी है? बेहतरीन घोड़ों के साथ भी, कम से कम बीस दिन लगेंगे। रास्ते में गंगा, शोंनी, गंडकी और अन्य नदियाँ हैं। रास्ते में कितनी नदियाँ, कितने जंगल! रास्ते में खाना पकाना। गिरिव्रज पहुँचने से पहले घोड़ों पर बिना रुके सवारी करना! इसे राजधानी बनाने के लिए उपयुक्त स्थान माना जाता था। द्वारका से अधिक सुरक्षित। पहाड़ियों की एक श्रृंखला से घिरा हुआ। बीच में बसा हुआ, एक शहर बनाने के लिए पर्याप्त जगह थी। और एक नदी, जो वहीं से निकलती है और शहर से बाहर बहती है। शत्रु कितना भी शक्तिशाली हो और घेराबंदी कितनी भी लंबी चले, शहर में पानी की कभी कमी नहीं होती थी। भीतरी पहाड़ी श्रृंखला को ढकने वाले घने जंगल साल भर ईंधन की आपूर्ति करते थे। और शहर से बाहर जाने और वापस आने का एक गुप्त मार्ग था, जिससे बाहरी लोगों की नज़र से बचा जा सकता था। बाहरी पहाड़ी श्रृंखला में जरासंध की विशाल सेना तैनात थी। शहर उपजाऊ कृषि भूमि से घिरा हुआ था। ऐसा लगता था कि चाहे हर जगह सूखा ही क्यों न हो, जरासंध के मगध में हमेशा कुछ न कुछ बारिश होती ही थी। युद्ध में

उसे कौन हरा सकता था? केवल कृष्ण की रणनीति ही ऐसा कर सकती थी। भयंकर बाघ की गुफा में प्रवेश करने की रणनीति, नहीं, बल्कि सीधे उसके मुख में प्रवेश करना, उसके हृदय के रहस्य को समझना और फिर उसे सबसे कमजोर बिंदु पर ध्वस्त कर देना! लेकिन यह एक बेहद खतरनाक रणनीति थी। इस रणनीति के विचार मात्र से ही युयुधन आंधी में पत्ते की तरह कांपने लगा। हवा भले ही ज़ोरों से चल रही थी, फिर भी वह इस विचार से पसीना बहाने लगा। उसने खिड़की से बाहर देखा। लहरें उछल रही थीं और टकरा रही थीं, ज़ोरदार शोर मचा रही थीं।

—•⁕•—

अध्याय 31

चांदनी रात में, गिरिव्रज पर्वत श्रृंखला ने स्वप्नलोक का भ्रम पैदा कर दिया था। इसने भय का भाव भी उत्पन्न किया। चारों ओर पहाड़ियों की श्रृंखला थी, जो घने जंगलों से ढकी हुई थी, लेकिन चांदनी में सब काली दिखाई दे रही थीं। वैहारा पर्वत की तलहटी में, गर्म पानी के कुंड में गर्दन तक डूबे हुए जरासंध उन पहाड़ियों को निहार रहे थे जिन्होंने उनके नगर को प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान की थी। उनकी निगाहें चोटियों पर टिकी थीं। बचपन में वे अपनी माँ के साथ कितनी बार इन चोटियों पर चढ़ते और फिर उतरते थे, हर दिन सुबह-सुबह! बाद में जवानी के दिनों में, व्यायाम करते समय, जब वे अपने पूरे शरीर को सिर से पैर तक मोड़ते थे, तो उनकी मांसपेशियां पत्थर या धातु की तरह उभरी हुई दिखती थीं, छूने पर चटकने की आवाज पैदा करती थीं, लेकिन आज अधिक चलने के कारण उनकी जांघों और घुटनों में दर्द हो रहा था। वे सत्तर वर्ष के थे, नहीं, पूरे सत्तर नहीं, और वे सोचते थे कि वे बूढ़े नहीं हैं!... तभी उन्हें अपनी माँ की याद आई। वह भी एक बलवान स्त्री

थीं, उनकी मांसपेशियां तनी हुई थीं। फिर भी उन्हें कभी-कभी शरीर में दर्द होता था। राजसी चिकित्सकों ने इसे गठिया बताया था। जरासंध सोचने लगा कि कहीं उसे भी वही बीमारी तो नहीं हो गई है और मन ही मन सोचने लगा, "दर्द शुरू हुए कितने दिन बीत गए! ये गर्म झरने किसी भी दर्द को पसीने में बदल देते हैं और उसे गायब कर देते हैं। जहाँ तक मुझे पता है, और कौन सा शहर ऐसे औषधीय गर्म झरनों का दावा कर सकता है? गिरिव्रज एक पवित्र तीर्थस्थल है। धरती से निकलने वाला पानी उबलते पानी जैसा है, और उसके पिता ने ही यहाँ यह ऊँचा चबूतरा बनवाया था। चबूतरे के नीचे उन्होंने एक पतली नहर खोदी थी, जो उंगली से भी पतली थी, जिससे उबलता पानी बहता था।" उसने सोचा कि यह दर्द से राहत दे रहा है, और फिर उसने अपने पैर पानी में लटका दिए। संतुलन खोकर वह पानी में गिर गया और माथे तक डूब गया। फिर वह तुरंत संभल गया। उसे आश्चर्य हुआ कि ऐसा क्यों हुआ, जो उसके साथ पहले कभी नहीं हुआ था। उसने खुद से पूछा, "क्या यह किसी आने वाले संकेत का जिक्र है?" लेकिन वह तुरंत ही अपनी सामान्य स्थिति में वापस आ गया। क्या इसका मतलब यह था कि आने वाली कोई भी विपत्ति तुरंत टल जाएगी? फिर उसने अपना सिर घुमाकर चांदनी में जगमगाते जंगलों को देखा, जो पहाड़ियों की चोटियों पर काले रंग से ढके हुए थे, और उसे लगा कि शगुन का रहस्य कहीं न कहीं उन छिपे हुए जंगलों में ही है। पानी बहुत गर्म लगने पर उसने आदेश दिया, "गर्म पानी का बहाव कम करो या कुछ देर के लिए पूरी तरह बंद कर दो।" तभी उसे याद आया कि सर्दी का मौसम शुरू हो चुका है। उसने पूछा, "पहाड़ियों की चोटियों पर बसे इन जंगलों में क्या था? शहरों में लोग रहते थे, और टोल गेटों और नगर द्वारों पर सैनिक तैनात रहते थे। लेकिन जंगलों में? जंगल का मतलब तो बस जंगली जानवर, बाघ, भालू और भेड़िये होते हैं। जब वे तुम पर हमला करते, तो तुम उन्हें अपनी तलवार से चीर देते, और यहाँ तक कि हाथी के संवेदनशील अंगों को भी चकनाचूर कर देते। बस यही है। जंगल का मतलब है जंगली जानवरों से लड़ना और उन्हें मारना। मैं कितनी रातों में कितने देशों के जंगलों में घूमा हूँ। फिर भी मुझे अंधेरे या अर्ध-अंधेरे से डर क्यों लगता है, और उनमें ऐसा क्या है जो मुझे डराता है?" फिर उसे भूत-प्रेत और आत्माएँ याद आईं। उसे अपनी माँ की कहानियाँ याद आईं, जो उसने बचपन में सुनाई थीं, वे कहानियाँ जो उसकी जाति और कबीले के अनुभव को बयां करती थीं, रात में मशालें लेकर घूमने की उनकी प्रथा को। उनका मानना था कि मशालों

की रोशनी से भूत-प्रेत डरकर भाग जाते थे। लेकिन उसने खुद से पूछा, "अंधेरे और चांदनी में क्या हम मशालें लेकर चलते हैं? शायद उसने मुझे डराने के लिए ही ये कहानियां सुनाई हों! लेकिन मेरी मां के लोग, राक्षस, जंगलों में रहते हैं, रातों में ज़्यादा सक्रिय रहते हैं। शायद जब वह पिता के महल में आई, तो उसे भी अंधेरे से डर लगने लगा। इससे मुझे अपनी दो बड़ी सौतेली माताओं की याद आती है जो बांझ थीं। मुझे लगता है कि वे बहनें थीं। एक लड़के के रूप में वे मुझसे कितना डरती थीं क्योंकि मुझमें राक्षसी लक्षण दिखते थे! खैर, वे अंत तक मुझसे डरती रहीं। अगर कोई राक्षसी स्त्री से पैदा होता तो क्या होता? मुझे उनके चेहरे ठीक से याद नहीं हैं। आखिर, मैं तब सिर्फ चौदह साल का लड़का था, और अब पचपन या छप्पन साल बीत चुके हैं, और कोई स्पष्ट तस्वीर कैसे याद कर सकता है? हर बार जब वह राक्षसों के व्यवहार का विवरण देती थी, तो मैं स्तब्ध रह जाता था और फिर भी उसे दोबारा सुनना चाहता था। ऐसे खौफनाक विवरणों में राक्षसों की लड़ाइयों, भयंकर प्रतिशोध, अविश्वसनीय क्रोध की कहानियां शामिल थीं। अचानक पेड़ों की शाखाओं को तोड़कर शत्रु को पीट-पीट कर, उसे ज़मीन पर गिराकर, पत्थर और चट्टानों से उसके दिमाग को चूर-चूर कर देना, कुचले हुए दिमाग से कच्चा, सफेद मांस बाहर निकालना, और पीड़ितों को कतार में खड़ा करके देवी उरीमारी को बलि देना। हाल ही में राक्षस जाति हमारे मगध के जंगलों और पहाड़ियों से लगभग गायब हो गई है। पिता एक राक्षसी स्त्री से प्रेम करते थे और उन्होंने उस पर कितना प्रेम बरसाया! न केवल इसलिए कि उसने उन्हें एक पुत्र को जन्म दिया—उनका प्रेम इतना गहरा था कि उन्होंने उसका नाम आंशिक रूप से उसी के नाम पर रखा। फिर भी राक्षसों के प्रति उनके मन में कितनी तीव्र घृणा थी —वे उनका शिकार जंगली जानवरों की तरह करते थे, उन्हें मार डालते थे और उनकी खाल उतार लेते थे। न केवल राक्षस बल्कि सभी अन्य राजा बृहद्रथ के नाम से कांपते थे—निश्चित रूप से, पिता एक सच्चे मर्द थे... उन्होंने सेवक को आदेश दिया, "बहुत ठंड लग रही है। थोड़ा और गर्म पानी चालू करो।" फिर वह चिंतन में डूब गया... "ऐसा लगता है कि माँ विपुल पहाड़ियों के पार जंगलों में अकेली पाई गई थीं। क्या वह उसे भागने देतीं? क्यों, उन पर तीर चलाने, पत्थर फेंकने या तलवार से उन्हें घायल करने के बजाय, उसने उन्हें सीधे आमने-सामने की लड़ाई के लिए क्यों चुनौती दी? उन्होंने दृढ़ता से उसका मुकाबला किया और उसे इतना थका दिया कि वह जल्द ही हार गया। जब वह मुझे अपने सीने से लगाकर, पिताजी

के सामने बैठकर, लड़ाई की कहानी सुनाती थीं, तो उनका सीना गर्व से फूल जाता था। और पिताजी के चेहरे पर जीत का कैसा भाव था..." उसने दोहराया, "गर्म पानी थोड़ा कम कर दो।" फिर अतीत की ओर लौटते हुए, "...हाँ, अगर कोई मेरे जैसा विशाल और शक्तिशाली पुत्र पाना चाहता है, तो उसे राक्षस स्त्री से ही विवाह करना चाहिए..." फिर उसने पानी में अपने विशाल शरीर की छवि को देखा... "जब तक मैं विवाह योग्य हुआ, तब तक पिता ने इन देशों से राक्षसों का सफाया करवा दिया था। पिता ने बहुत बड़ा पाप किया, बहुत बड़ा पाप। उन्हें यह एहसास नहीं था कि साँप को जीवित रहने देना चाहिए क्योंकि उसका विष औषधीय उपयोग के लिए आवश्यक है। खैर, मेरा पुत्र सहदेव एक आर्य क्षत्रिय पत्नी के गर्भ से हाथी के गोबर की तरह गिरा..." फिर वह अपने पैरों से धूल झाड़ने लगा।

दीपक की रोशनी में खाना खाते हुए अस्ती ने कहा, "मुझे लगातार पांच बार जम्हाई आ रही है, लेकिन खाना मेरे पेट में जाने से इनकार कर रहा है।"

उसकी बहन प्राप्ति ने तुरंत बीच में दखल देते हुए कहा, "जब से मैं बैठी हूँ, तब से गिन रही हूँ। पिताजी ने कुल छत्तीस बार जम्हाई ली। नींद उनकी आँखों पर हावी हो रही है।"

जरासंध ने कहा, "हाँ, अगर आप तप्त कुंड के गर्म झरनों में स्नान करेंगे, तो आपके साथ यही होगा। झरने से बाहर निकलने के बाद कम से कम आधे घंटे तक आपको पसीना आएगा। आज मैं कितनी देर तक गर्म पानी में बैठा रहा!"

उनके मना करने के बावजूद, उनकी दोनों विधवा बेटियों ने उन्हें भरपूर मात्रा में अधपका मांस का करी परोसा और उन्हें जबरदस्ती खिलाया। मांस के करी से रस छलक रहा था। अपने पति की मृत्यु के बाद, दोनों बहनें विधवा होकर अपने पिता जरासंध के पास लौट आई थीं, क्योंकि अब उनके कोई पुत्र नहीं थे। उन्हें फिर से जम्हाई आने लगी और वे अपना भोजन समाप्त करने ही वाले थे कि उन्हें एक ज़ोरदार आवाज़ सुनाई दी। उन्होंने पूछा, "पुत्र, क्या यह आवाज़ चैत्यक पर्वत की चोटी की ओर से नहीं आ रही है? यह आवाज़ इतनी तेज़ है जैसे कोई भारी धातु का बर्तन किसी चट्टान पर गिर गया हो। कौन हो सकता है जिसकी इतनी हिम्मत है कि वह ऐसी आवाज़ निकाले जो महल तक पहुँच जाए? मुझे उसे ज़िंदा ही चमड़ी उतारनी होगी।" तभी स्वामी की चीख सुनकर एक नौकर प्रकट हुआ। उसने एक मिनट तक इंतज़ार किया कि उसे जाकर देखने का शाही आदेश मिल जाए। आदेश न मिलने पर वह स्वयं ही सच्चाई का पता लगाने के लिए निकल पड़ा।

जरासंध ने अंगड़ाई लेते हुए फिर से जम्हाई ली और अपनी बेटियों से कहा, "ये घटिया जम्हाइयाँ! बच्चियों, मैं सोने जा रहा हूँ।" वह ऊपरी हॉल की सीढ़ियाँ चढ़ने लगे। उन्हें अब अपनी मांसपेशियों और हड्डियों में कम दर्द महसूस हो रहा था। उनकी दूसरी बेटी, प्राप्ति ने उन्हें ताड़ी का एक बड़ा मग दिया और कहा, "यह मात्रा में काफी है। इसे पीजिए और चैन से सोइए। सुबह तक आपका शरीर सूखी रुई की तरह हल्का हो जाएगा।" वह उनके सामने बैठ गई और जब उन्होंने उससे पूछा, "क्या तुमने खाना खा लिया?" तब भी वह उठने से इनकार कर दिया।

जब उसने आधा मग पी लिया, तो नीचे से नौकर ने चिल्लाकर कहा, "महाराज, यह अपशगुन है। किसी ने चैत्यगिरि शिखर पर लगे तीनों ढोलों की चमड़ी फाड़कर उन्हें इतनी ऊंचाई से फेंक दिया है। ऐसा लगता है कि इसमें तीन अजनबी शामिल हैं।"

जरासंध अपने सेवक पर बहुत क्रोधित था क्योंकि उसने अपने संदेश की शुरुआत अपशगुन शब्द से की थी। लेकिन साथ ही उसके मन में यह विचार भी आया कि शायद यह वाकई अपशगुन था। ये ढोल नरभक्षी राक्षसों की खालों से बने थे, जिनका जरासंध के पिता बृहद्रत ने शिकार करके वध किया था। बृहद्रत ने राक्षस की खालों से ढके तीन बड़े तांबे के ढोल बनवाए थे और उन्हें चैत्यगिरि पर्वत की चोटी पर बने चूल्हे जैसे चबूतरे पर रखा था। इन तीनों विशाल ढोलों को दिन में तीन बार - सुबह, शाम और रात को बजाया जाता था और इनकी भयानक ध्वनि लोगों के हृदयों में आज्ञाकारिता और समर्पण की भावना जगा देती थी। इस ध्वनि के साथ ही लंबे बिगुल भी उतनी ही ज़ोर से बजते थे। जरासंध को आश्चर्य हुआ कि इन्हें पहली बार कब स्थापित किया गया था। फिर उसे याद आया कि उसके जन्म के वर्ष में ही उसके पिता ने इन्हें स्थापित किया था। तब से, मौसमों की परवाह किए बिना, ये ढोल प्रतिदिन तीन बार बिना किसी रुकावट के बजते रहे हैं। ड्रमों के ऊपर एक गुंबद बनाया गया था ताकि वे बारिश में भीग न जाएं।

जरासंध ने गरजते हुए आदेश दिया, "क्या तुमने उन्हें जिंदा नहीं छीला? उन्हें यहाँ घसीटो। वे रात के अंधेरे में, चाँदनी की अर्ध-अंधेरी रोशनी का फायदा उठाकर भाग सकते हैं।" यह संदेह करते हुए कि तीनों की खाल तीन ढोल के लिए पर्याप्त होगी या नहीं, उसने पूछा, "वे कितने बड़े हैं? उनकी ऊँचाई और चौड़ाई कितनी है?"

नौकर ने उत्तर दिया, "अंधेरे में हमें ठीक से दिखाई नहीं दे रहा था। उनमें से दो हट्टे-कट्टे लग रहे थे। तीसरा तुमसे भी लंबा था और उसके कंधे चौड़े थे। वे तीनों ब्राह्मण कुंवारे थे।"

जरासंध, "तुमने उन्हें पकड़कर यहाँ क्यों नहीं लाया?"

नौकर ने कहा, "वहाँ केवल एक ही रक्षक था। उन्होंने कहा कि वे राजा से मिलना चाहते हैं और हमें उन्हें यहाँ लाने के लिए कहा। फिर वे इस दिशा में बढ़ने लगे। अब किसी भी समय यहाँ पहुँच जाना चाहिए।"

जरासंध को न सिर्फ आश्चर्य हुआ, बल्कि वे पूरी तरह से असमंजस में पड़ गए। वे स्तब्ध रह गए। उन्होंने सोचा, "जो मुझसे मिलने आए हैं, वे नगर के द्वार से क्यों नहीं आए? ढोल बजाते हुए वे कहाँ से आए हैं?" जल्द ही वे उनके सामने आ गए। जरासंध को लगा कि आगे चल रहे व्यक्ति को उन्होंने पहले कहीं देखा है। उसका चेहरा सांवला और आकर्षक था। बीच वाला सबसे सुंदर था। पीछे वाले का शरीर इतना सुगठित था कि जरासंध के मन में उसके लिए प्रेम जागृत हो गया। वह बहुत लंबा था, उसने एक लंबा वस्त्र और ऊपरी वस्त्र पहना हुआ था। उसके गले में फूलों की माला थी और माथे पर चंदन की पट्टी लगी हुई थी। उसके लंबे बाल पीठ तक लहरा रहे थे। उसकी चाल निर्भीक साहस का प्रतीक थी।

नेता ने कहा, "राजा जरासंध को आशीर्वाद! हमें थोड़ा खेद है कि हम आपको विश्राम के समय परेशान कर रहे हैं। इन दो भिक्षु अविवाहित ब्राह्मणों का आप उचित स्वागत कर सकते हैं। लेकिन हमने निश्चय किया है कि जब तक हम आपके यहाँ आने के उद्देश्य पर चर्चा पूरी नहीं कर लेते, तब तक हम आपसे कोई आतिथ्य सत्कार स्वीकार नहीं करेंगे। ये दोनों व्यक्ति रात के मध्य में ही अपना मुँह खोलेंगे—रात के पहले और बाद के हिस्सों के मिलन बिंदु पर। इसलिए, अब आप वापस जाकर विश्राम कर सकते हैं। मध्यरात्रि के समय आप नीचे आ सकते हैं या आप हमें अपने कमरे में चर्चा के लिए बुला सकते हैं। क्या हम तब तक यहीं बैठे रहें? हमें बस दर्भ घास की एक चटाई चाहिए।"

जरासंध सोने की कोशिश कर रहा था, पर सो नहीं पा रहा था। वे दर्भ की चटाई पर एक कतार में पद्मासन में बैठी थीं, मानो तीन गुड़िया हों। वे कौन हो सकती हैं? दरअसल, उनका आसन पूर्ण पद्मासन नहीं था। जरासंध ने सोचा कि उस विशालकाय व्यक्ति की जांघें पद्मासन में कभी नहीं समा सकतीं। उसकी मांसपेशियां इतनी कठोर थीं कि ऐसी आसन संभव ही नहीं था। यहां तक कि बाकी

दोनों के शरीर भी ब्राह्मणों की तरह सिकुड़े हुए नहीं थे। वह सोचने लगा कि किस व्रत के कारण वे आधी रात तक चुप रहीं। वह करवट बदलते हुए आंखें बंद करके सोचने लगा। उसके मन में यह ख्याल आया कि वे श्मशान के रात्रि देवता भैरव के उपासक हो सकते हैं, और इस विचार ने उसके मन में सहानुभूति जगा दी। लेकिन साथ ही कुछ भय भी पैदा हुआ, यह भय कि कहीं वे उसकी तरह मानव बलि देने न आ जाएं, कहीं उसे पकड़कर बलि न चढ़ा दें। यह भय तब भी बना रहा जब उसके पहरेदार उन अजनबियों पर पहरा दे रहे थे। इसलिए वह उठा और तसल्ली के लिए नीचे झाँका। उसने देखा कि वे तीन आकृतियाँ कब्रिस्तान के बीचोंबीच बैठी हैं, जैसे बलिदान होने की प्रतीक्षा कर रही हों। उसे लगा मानो उनकी आँखें स्थिर हों, पलकें ज़रा भी न हिल रही हों, और उनकी प्रतिमा जैसी मुद्रा बिल्कुल जमी हुई हो। उसने मन ही मन पूछा, "उन्होंने ढोल की खाल क्यों फाड़ दी और तांबे के ढोल क्यों फेंक दिए?" उसे एहसास हुआ कि उस दिन से ढोल नहीं बजेंगे। जब वह अपने प्रजाजनों के मन पर इस परिवर्तन के प्रभाव के बारे में सोचने लगा, तो जरासंध दूसरी ओर मुड़ा और सो गया। लेकिन एक बार फिर, उनके अचानक वहाँ प्रकट होने का रहस्य उसे परेशान करने लगा, जिससे नई भावनाएँ, नई चिंताएँ और नए भ्रम पैदा हो गए। उसे नीचे जाकर उनसे तुरंत उनके आने का कारण पूछने की तीव्र इच्छा हुई। लेकिन फिर मान लीजिए कि उनका जवाब आधी रात तक मौन रहने का वचन होता। फिर उसने चिंता न करने का फैसला किया और मन ही मन कहा, "वे किसी खास मकसद से आए हैं, और अगर आधी रात को संदेश भेजना उनकी आदत है तो भेज दें।" उसने सोने का निश्चय किया। उसने मन को दृढ़ किया, खुद को कंबल से अच्छी तरह ढक लिया और आंखें बंद करके सोने की कोशिश की। लाख कोशिश करने पर भी नींद नहीं आई। जब उसे यकीन हो गया कि नींद नहीं आएगी, तो उसने सोचा कि कोशिश करना व्यर्थ है। वह उठा और खिड़की से बाहर झाँका। दूर पहाड़ियों की श्रृंखला अँधेरे में और भी रहस्यमय और मायावी होती जा रही थी। आधी रात वह समय होता है जब रहस्य और भी गहरे हो जाते हैं। उसने सोचा, "उनसे बात शुरू होने में कितना समय लगेगा? क्या सहदेव सो रहे थे? क्या उन्होंने ढोल गिरने की आवाज नहीं सुनी?" खैर, अगर उन्होंने सुनी भी होती, तो वे तो बस कंधे उचकाकर वापस सो जाते! जरासंध ने मन ही मन अपने बेटे के बारे में कहा, "आखिरकार, वह हाथी का मल है।" अचानक उसे शिशुपाल की याद आ गई। कोई भी उसे धर्मघोष का पुत्र नहीं कहता था। उसे

हमेशा जरासंध का दत्तक पुत्र कहा जाता था। वह साहस की साक्षात मूर्ति था। जरासंध ने मन ही मन सोचा, "यह मेरा पुत्र क्यों नहीं बना? इसकी माता यादव वंश की बताई जाती है। यह हमारे घर कब आया, कितने समय पहले? उत्तर में कुरु पांडव बलवान हो रहे हैं, और पिछली बार जब यह आया था, तब शिशुपाल ने सुझाव दिया था कि हम उन पर नज़र रखें। लेकिन यह गधा, सहदेव, कुछ नहीं समझता। यहाँ तक कि सुख-सुविधाओं के प्रति स्वाभाविक क्षत्रिय लालसा भी नहीं..." खिड़की के पार दूर तक फैली पहाड़ियाँ और भी गहरी और रहस्यमयी होती जा रही थीं। वह समय को लेकर असमंजस में था, क्योंकि चाँदनी पूरी तरह से अंधेरी रात में घुल गई थी। दिन के बारे में सोचते हुए, जरासंध अपने शयनकक्ष के फर्श पर बेचैनी से बड़े-बड़े कदम रख रहा था। जैसे ही उसने दीपक की रोशनी में अपनी बदलती परछाईं देखी, उसका ध्यान नीचे बैठे अजनबियों की ओर गया। असहनीय जिज्ञासा ने उसे ताली बजाने और सीढ़ियों पर प्रतीक्षा कर रहे नौकर को बुलाने के लिए प्रेरित किया। नौकर सीढ़ियाँ चढ़कर उसके सामने खड़ा हो गया।

जरासंध, "वे लोग अब क्या कर रहे हैं?"

नौकर ने कहा, "वे कब्रिस्तान में गुड़ियों की तरह दीपक की रोशनी में बैठे हैं।"

"क्या उनके लिए आधी रात नहीं हो गई है?"

नौकर ने कहा, "मैं उनसे पूछ लूंगा।"

वह नौकर को उनसे पूछने से रोकना नहीं चाहता था। उसने नीचे से नौकर की आवाज़ सुनी। नौकर खुद ऊपर आया और बोला, "अब वे बात करने के लिए तैयार हैं।"

जब वह नीचे उतरे, तो वे पहले की तरह ही उकड़ू बैठे थे। उनके सामने उनके लिए एक ऊँचा आसन बना हुआ था, जैसा कि उनके राजसी पद के लिए आवश्यक था। आसन पर एक सुंदर कढ़ाई वाला कालीन बिछा हुआ था। उस पर बैठकर उन्होंने कहा, "मुझे यहाँ आपकी उपस्थिति और उद्देश्य पर बहुत संदेह है। आप, जो स्वयं को भिक्षु ब्राह्मण कहते हैं, चंदन के लेप और फूलों की मालाओं से क्यों सजे हुए हैं?"

मध्य में बैठा वह व्यक्ति, जिसने पहले बात की थी, अब बोला, "शाबाश, जरासंध! आर्य परंपरा के आचरण के बारे में आपकी समझ प्रशंसनीय है। चूंकि आप आधे आर्य हैं, इसलिए आपकी समझ भी आधी सही है। क्षत्रिय भिक्षु-कुंवारे

पुष्पमाला और चंदन का लेप लगाते हैं। बेशक, ब्राह्मण नहीं। यदि आपने किसी उचित गुरुकुल में अध्ययन किया होता, तो आपको यह पता होता।"

उनकी कही बात सही थी या गलत, लेकिन उन्होंने उसे इतना हल्के में लेकर, उसका नाम लेकर और लगभग उसे एक असभ्य व्यक्ति कहकर, जिसने गुरुकुल की शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, उसे निश्चित रूप से क्रोधित कर दिया था। लेकिन वह उनके अपराध के लिए उचित दंड तय करने में असमर्थ था, जो कि ढोल तोड़ना और उसे आधी रात तक इंतजार कराना था।

उन्होंने अधिकारपूर्ण स्वर में कहा, "पहले मुझे बताओ कि तुम कौन हो।"

अजनबी ने कहा, "हमारी पहचान जानने से पहले, एक महत्वपूर्ण बात जान लीजिए। हमारी सेनाओं ने आज रात आपके गिरिव्रज को घेर लिया है और रणनीतिक क्षेत्रों पर कब्ज़ा कर लिया है। जब हम कहते हैं, हमारी सेनाएँ, तो क्या आप जानते हैं कि ये किसकी सेनाएँ हैं? द्रुपद और दृष्टद्युम्न के नेतृत्व में पंचाल सेना, द्रोणाचार्य के नेतृत्व में कौरव सेना, बलराम के नेतृत्व में द्वारका के यादवों की सेना, धर्मराज के नेतृत्व में कुरु वंश के पांडवों की सेना, और वे सभी जो आपसे डरकर पहले ही दक्षिण की ओर भाग गए थे - शूरसेना, भद्रकारा, बोध, साल्व, पाटनचार, सुस्थल, सुकुत्त, कुलिंदा, कुंती, शल्वयान और उनकी सेनाएँ, उन छियासी शासकों की सेनाएँ जिन्हें आपने बंदी बनाया था, और अन्य। इससे अधिक विवरण की आवश्यकता नहीं है। इतना ही काफी है। हमने आपसे बात करने से पहले आधी रात तक प्रतीक्षा की क्योंकि इसी दौरान हमारी सेनाओं ने आपके शहर को घेर लिया और रणनीतिक स्थानों पर कब्ज़ा कर लिया।"

जरासंध तीन ढोलों के टूटने से उपजे अपशगुन के विचार से भर गया था। तीनों अजनबियों के प्रवक्ता ने पूछा, "क्या आप मुझे पहचान नहीं पा रहे हैं?" उसकी निगाहें सीधे जरासंध की आँखों से मिलीं। अजनबी ने दोहराया, "मुझे ध्यान से देखिए," और चुपचाप बैठ गया। जरासंध को अपनी पहचान को लेकर असमंजस में देखकर अजनबी ने स्वयं ही जानकारी दी, "मैं कृष्ण वासुदेव हूँ। जी हाँ, मैं ही हूँ जिसने आपके पूरे शस्त्र बल के साथ हम पर आक्रमण करने पर युद्ध करने से इनकार कर दिया था। अब मैं लगभग उतनी ही बड़ी सेना के साथ लौटा हूँ जितनी सेना का आपने तब हमारे विरुद्ध नेतृत्व किया था। जहाँ तक इन दोनों की बात है, यह अर्जुन है, जो धनुर्धरों में श्रेष्ठ है और जिसने द्रुपद की पुत्री के स्वयंवर में दुल्हन को जीता था। दूसरा वही भीम है जिसने स्वयंवर हॉल का मुख्य स्तंभ उखाड़कर

वहाँ मौजूद क्षत्रियों की भीड़ पर फेंका था।" जरासंध की स्मृति जागृत हो गई। हाँ, उसने खंभा उखाड़कर पूरी छत गिरा दी थी। उसके कंधों में कितनी ताकत थी! उसे याद आया कि वे सब इस बात पर पछता रहे थे कि स्वयंवर उत्सव में सेना लेकर क्यों नहीं गए, क्योंकि उन्हें लगा कि यहाँ जाना ज़रूरी नहीं है। बीते दिनों का शोर अब भी उसके कानों में गूँज रहा था, लेकिन जल्द ही वह शांत हो गया और उसे वर्तमान में वापस ले आया। तभी कृष्ण वासुदेव ने कहा, "तुमने तो यह मान लिया था कि तुम्हारे शहर के चारों ओर पहाड़ियों की मज़बूत सुरक्षा को कोई दुश्मन पार नहीं कर सकता, है ना? अब वही एकांत और सुरक्षा तुम्हारे जैसे चूहे को फँसाने का जाल बन गई है। लेकिन हम सच्चे क्षत्रिय हैं। हम बिना ठोस कारण के किसी को नहीं मारते। हम तुम्हारे शहर को वैसे नहीं जलाएँगे जैसे तुमने हमारे मथुरा को जलाया था। एक सच्चा आर्य अपनी सेना की सुरक्षा में नहीं पनाह लेता। वह अपने शस्त्रों की शक्ति पर ही खड़ा होता है या गिरता है। हालाँकि यह विशाल सेना हमारे साथ है, हम इसका इस्तेमाल नहीं करेंगे। हम तुम्हें अपना क्षत्रिय दर्जा साबित करने का मौका देते हैं। क्या तुम चुनौती स्वीकार करते हो?"

जरासंध को ऐसा लगा मानो उसके मजबूत महल की नींव ही ढह गई हो, और वह स्थिति को समझने की कोशिश कर रहा था, तभी कृष्ण ने फिर कहा, "क्या आप स्पष्ट कर सकते हैं कि आप आर्य हैं या गैर-आर्य?"

जरासंध ने कुछ क्रोध के साथ उत्तर दिया, "मेरी आर्य स्थिति एक ग्वाले से कहीं अधिक श्रेष्ठ है।"

कृष्ण ने कहा, "ठीक है। यदि तुम आर्य हो, तो हमारी चुनौती स्वीकार करो। तुम हममें से किसी एक को चुनकर आमने-सामने की लड़ाई लड़ सकते हो। तुम अर्जुन से बल और बाणों से लड़ सकते हो। तुम भीम से कुश्ती कर सकते हो। मैं किसी भी रूप में तुमसे लड़ने के लिए तैयार हूँ। तुम्हें मुझसे व्यक्तिगत द्वेष भी है। इसलिए, यदि तुम चाहो, तो मुझे चुन लो। मैं तुम्हें एक बात का आश्वासन देता हूँ; यदि तुम हम तीनों में से किसी एक को चुनकर उसे हरा देते हो, तो हमारी सेना, जिसने तुम्हारे नगर पर अँधेरी रात की तरह आक्रमण किया है, बिखर जाएगी। यदि तुम युद्ध में हार जाते हो, तो हमें तुम्हारे गिरिव्रज पर कब्ज़ा करने में कोई दिलचस्पी नहीं है। हमें तुम्हारा मगध नहीं चाहिए। हम तुम्हारे पुत्र सहदेव का राज्याभिषेक करेंगे और फिर चले जाएँगे। तुम्हारे पिता, जिन्होंने राक्षसों की सेना को पराजित किया और मगध का विस्तार किया, अपने परिपक्व पुत्र, तुम्हारा

राज्याभिषेक किया और वनवास के लिए चले गए, एक वीर आर्य थे। लेकिन तुम, जिसने अपने इतने वृद्ध पुत्र का राज्याभिषेक करने से इनकार कर दिया है, एक गैर-आर्य हो। मैं वेदों की शपथ लेता हूँ, कि..." यदि तुम हार गए, तो हम तुम्हारे पुत्र का राज्याभिषेक करके चले जाएँगे। हम संकटकालीन परिस्थितियों में उसकी सहायता करेंगे। यदि तुम सच्चे आर्य और सच्चे पुरुष हो, तो चुनौती स्वीकार करो और हम तीनों में से किसी एक को आमंत्रित करो। अन्यथा, यह स्वीकार कर लो कि तुम न आर्य हो, न पुरुष और न ही क्षत्रिय। हम चुपचाप चले जाएँगे और अपनी सेनाओं को पीछे हटने का आदेश देंगे।

जरासंध का शारीरिक और भावनात्मक तापमान तेज़ी से बढ़ गया। उसने तीनों को घूरकर देखा। फिर उसने कहा, "मैं उससे नहीं लड़ूंगा जो जान बचाने के लिए भागा है।" फिर उसने भीम को ध्यान से देखा और पूछा, "क्या तुम वही हो जिसने राक्षसी स्त्री से विवाह किया है?" भीम ने कोई उत्तर नहीं दिया, लेकिन कृष्ण ने कहा, "हाँ।" जरासंध उठकर भीम के पास गया और अपने हाथ से भीम के कंधे छुए। उसने भीम से कहा, "आओ।" भीम ज़ोरदार झटके से खड़ा हो गया।

कृष्ण ने तुरंत कहा, "अपने पुत्र को बुलाओ, उसका राज्याभिषेक करो और सत्ता के प्रतीक उसे सौंप दो, क्योंकि हमें इस राज्य पर कब्जा करने की कोई इच्छा नहीं है।"

जरासंध ने ताली बजाई और सेवक सहदेव को बुलाने दौड़ा। सहदेव अधजाने, भ्रमित और आँखें मलते हुए आए। अपने पिता से मुकुट और तलवार प्राप्त करने के समय भी उन्हें पता नहीं था कि क्या हो रहा है। जब जरासंध ने कहा, "ढोल बजाने वालों को बुलाओ," तो कृष्ण ने तुरंत हस्तक्षेप करते हुए कहा, "ढोल की थाप पर कुश्ती करना राक्षस प्रथा है। हम इसे नहीं चाहते।" प्रांगण में सेवक बड़ी-बड़ी मशालें लेकर खड़े थे, जो ज़ोर से जल रही थीं। जरासंध की पुत्रियाँ अस्ति और प्राप्ति, जो तब तक घर के अंदर थीं, बाहर आईं। उन्हें देखते ही कृष्ण ने उन्हें प्रणाम किया और कहा, "तुम मेरी मौसी हो। यदि तुम्हारी पुत्रियाँ होतीं, तो वे मेरी पत्नियाँ होतीं। परन्तु मुझे यह सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ।" वे उनके स्वर से भ्रमित हो गईं। इसी बीच अर्जुन ने भीम को वस्त्र उतारने और केवल एक धोती पहने युद्ध के लिए तैयार होने में सहायता की। जरासंध ने एक पुरानी धोती पहन रखी थी और अपनी धोती को कसकर बांध लिया था। भीम की उभरी हुई मांसपेशियां मशालों की लालिमा को परावर्तित करती हुई प्रतीत हो रही थीं। इन मांसपेशियों ने सत्तर

वर्षीय जरासंध को आकर्षित किया, जिनका शरीर ढीला-ढाला था। और जल्द ही महल के कुछ सेवक दर्शक बनकर जमा हो गए।

—•✳•—

अध्याय 32

युयुधन ने अतीत को याद करते हुए कहा, "कृष्ण ने जरासंध को कितनी आसानी से फँसा लिया था। कृष्ण ने बार-बार कहा था कि शत्रु से लड़ने का तीन-चौथाई हिस्सा उसके गुप्त इरादों और उसकी कमजोरी को जानने में ही निहित होता है, यह बात बिल्कुल सही थी। जरासंध, कंस का ससुर था, जो कृष्ण का मामा था। भीम लगभग तैंतीस या चौंतीस वर्ष का था। जरासंध और भीम की उम्र में बहुत अंतर था, चौंतीस से सत्तर वर्ष तक! सत्तर वर्ष का होने के बावजूद, उसने अपने पुत्र को राज्य की बागडोर सौंपना उचित नहीं समझा। वह सत्ता का इतना स्वार्थी और लालची था। मान लीजिए जरासंध ने कृष्ण से पूछा होता, 'क्या आप नहीं जानते कि असमान आयु के व्यक्तियों के बीच कुश्ती प्रतियोगिता नहीं होनी चाहिए?' सौभाग्य से, उसने नहीं पूछा और कृष्ण जानते थे कि जरासंध यह सवाल नहीं पूछेगा। उन्होंने अपने सोए हुए पुत्र को जगाया और उसका राज्याभिषेक करवाया, और कुश्ती के अखाड़े की ओर चल पड़े। जरासंध का शरीर मोटा था। जन्म से ही, और बाद में उम्र और राजसी भ्रष्टाचार के कारण भी।" भीम का शरीर कठोर और मजबूत था, हड्डियाँ पत्थर जैसी दृढ़ थीं। यह नियमित और दैनिक व्यायाम का परिणाम था। बेशक, यहाँ मुख्य कारक उम्र थी। क्या सत्तर वर्षीय जरासंध हाथों को पकड़ने और कंधों को जोड़ने जैसी प्रारंभिक क्रिया से ही थक नहीं जाते? जब कृष्ण ने पुकारा, 'भीम, जरासंध थका हुआ प्रतीत होता है। दया करो', तो वृद्ध जरासंध उत्तेजित हो गया और उसने अपनी पूरी ताकत लगा दी। वह थक गया और साँस लेने में कठिनाई

महसूस करने लगा। भीम की मानसिक प्रतिक्रिया कुछ धीमी थी। वह केवल अपनी तकनीकी निपुणता का प्रदर्शन कर रहा था। या क्या वह वृद्ध जरासंध पर दया दिखा रहा था? कृष्ण ने कितनी ही बार और स्पष्ट रूप से उसे संकेत दिए, भीम ने ध्यान नहीं दिया। जब कृष्ण और अर्जुन दोनों ने दो दिशाओं में संकेत दिए, तब भीम बात समझ गया। उसने मुश्किल से साँस ले रहे वृद्ध जरासंध को ठोकर मारी, उसे औंधे मुँह नीचे लिटाया और उसकी पीठ पर बैठ गया। उसने जरासंध के शरीर पर इतना दबाव डाला कि उसकी साँस रुक गई। लेकिन कृष्ण ने बाद में मुझे समझाया, 'युयुधन, भीम ने जरासंध को पीठ पर सवार होकर जानबूझकर नहीं मारा, क्योंकि इसका मतलब होता उस बूढ़े को हराना। हालांकि उसने उसे मार डाला, भीम ने उसे हराया नहीं। ऐसा इसलिए था क्योंकि भीम बड़ों का बहुत आदर करता है।' वह डरपोक सहदेव वहीं खड़ा रह गया, अपनी जान के डर से कांप रहा था। आखिर क्यों घमंडी पिताओं के बेटे इतने कायर निकलते हैं?

भोर होते-होते जरासंध का शव महल के सामने प्रदर्शित किया गया और यह बात सार्वजनिक कर दी गई। उसके शव को देखकर नागरिकों के हृदय में भय का संचार हो गया। सेनापतियों ने भीम और कृष्ण के चरणों को स्पर्श करके आत्मसमर्पण किया। क्या किसी को अपने नगर और देश पर कोई गर्व नहीं था? या जरासंध देशभक्ति को बढ़ावा देने के बजाय केवल अपना अहंकार ही प्रदर्शित कर पाया? शासन कला एक कठिन कला है। जिस दिन उनकी विजय हुई, उसी दिन कृष्ण ने जरासंध द्वारा कैद किए गए शासकों को यज्ञ में अर्पित करने के लिए मुक्त कराया। अचानक समुद्र से हवा चलने लगी। शरीर से टपकता पसीना ठंडा होकर आराम देने लगा। युयुधन पानी की तलाश में इधर-उधर देखने लगा ताकि वह अपनी छाती, कंधे, पीठ और पेट को गीला कर सके और हवा में ठंडक महसूस कर सके। उसने कोने में एक मिट्टी का घड़ा देखा और पास ही एक मग रखा था। उसने मग में पानी डाला और फिर पसीना धोया। फिर उसने पसीने से हुए पानी की भरपाई के लिए वह पानी पी लिया। उसका मन समुद्र की ओर चला गया। समुद्र बारी-बारी से फैलता और सिकुड़ता हुआ प्रतीत हुआ। उसने अपनी आँखें सीधे समुद्र पर टिका दीं, पूरे समुद्र को एक ही दृष्टि में समा लिया। फिर युयुधन चिंतन में डूब गया, "राजसूय एक ऐसा अनुष्ठान था जिसमें समुद्र तक फैले भूभाग के शासकों को या तो बलपूर्वक वश में किया जाता था या शांतिपूर्वक राजी करके सर्वोच्चता स्वीकार करने के लिए राजी किया जाता था। यदि कोई उस बड़े पत्थर को तोड़

सकता है, तो तालाब खोदना कितना आसान होगा?" जब पांडवों द्वारा जरासंध के वध की खबर आर्य जगत में फैली, तो कौन सा शासक उनके राजसूय अधिकार को अस्वीकार कर सकता था? पूर्वी राज्य से भीम कितने ही रथ भर उपहार और भेंट लेकर आए थे? कुछ राजा जरासंध के वध में पांडवों की वीरता से भयभीत थे, जबकि अन्य उनका साथ देना चाहते थे! और क्या उत्तर से अर्जुन, दक्षिण से सहदेव और पश्चिम से नकुल समान भेंट और उपहार नहीं लाए थे? युयुधन के मन में अचानक एक निराशावादी विचार आया, "मान लीजिए कि कृष्ण भीम और अर्जुन के स्थान पर मुझे और किसी अन्य को, मान लीजिए बलराम को, ले जाते, तो क्या होता? क्या सत्तर वर्षीय अत्याचारी से निपटने के लिए शक्तिशाली भीम की आवश्यकता थी? खैर, मैं भी उस बूढ़े को परास्त कर देता। कृष्ण तो आसानी से कर सकते थे। उस स्थिति में, अत्याचारी जरासंध के वध का श्रेय हम यादवों को मिलता, जो पहले मथुरा से भाग गए थे।" हम स्वयं राजसूय की सत्ता स्थापना क्यों नहीं कर सके? पूर्व के शासक, जो भीम को भेंट चढ़ाते थे, वे हमें भी भेंट चढ़ा सकते थे। हम उत्तर, दक्षिण और पश्चिम में भी इसी प्रकार विजय प्राप्त कर सकते थे। युयुधन ने खिड़की से बाहर झाँकते हुए उमस भरी गर्मी पर आह भरी। जो शरीर कुछ देर पहले ठंडा हुआ था, अब फिर से पसीना बहाने लगा। यादवों का नेतृत्व करना आसान नहीं था, वे निर्देशों का पालन नहीं करते थे। उग्रसेन, जो एक बूढ़ा और दुर्बल व्यक्ति था, इतना कमजोर कि दो लोगों की सहायता से भी वह मुश्किल से सिंहासन पर बैठ पाता था, उसने सिंहासन छोड़ने से इनकार कर दिया। कृष्ण के बड़े भाई बलराम उग्रसेन के उत्तराधिकारी बनने के लिए तत्पर थे। शुरू से ही बलराम को कृष्ण से यह शिकायत थी कि वह अपनी लोकप्रियता और छवि का निर्माण कर रहे थे, जिससे उनकी वरिष्ठता का दावा कमजोर हो रहा था। यदि बलराम राजा बन जाते, तो कृष्ण के कार्यों में बाधा उत्पन्न हो जाती, और बलराम अपनी सत्ता की जंजीरों में कृष्ण को जकड़ने से नहीं हिचकिचाते। परन्तु कृष्ण की सहमति के बिना बलराम का सिंहासन पर बैठना असंभव था। और जब तक बलराम सिंहासन पर थे, कृष्ण स्वयं भी सिंहासन पर नहीं बैठ सकते थे। बेशक, कृष्ण में ऐसी कोई महत्वाकांक्षा नहीं दिखती। कृष्ण ने मुझे कभी ऐसी महत्वाकांक्षा का जरा सा भी संकेत नहीं दिया। उन्हें केवल अपने मनचाहे कार्यों को पूरा करने में रुचि है। उन्हें अपने कुछ कार्यों से उत्पन्न होने वाली अलोकप्रियता की कोई चिंता नहीं थी। युयुधन ने पसीना पोंछने के लिए अपनी पीठ और गर्दन को

जोर से रगड़ा। बाहर सूर्य बादलों के पीछे छिप गया था। उसने आकाश की ओर देखा, यह आशा करते हुए कि उसे तुरंत बारिश के संकेत मिल जाएंगे। यह हर दिन दोहराया जाता था—बादल बारिश की झूठी उम्मीद जगाते थे, जो कभी नहीं आती थी। उसने निराशा से अपनी आँखें नीचे कर लीं। खैर, शायद यह कहना पूरी तरह सही नहीं होगा कि कृष्ण को औपचारिक राजत्व की चिंता नहीं थी। हाँ, उसे इसमें दिलचस्पी तो थी, लेकिन उसने इस बारे में चिंता नहीं की, अपने मन को इस विचार में उलझने नहीं दिया। समय आने पर वह अपना दावा पेश करने के लिए खड़ा होगा। अन्यथा कोई उसका सम्मान नहीं करेगा।

युयुधन को शिशुपाल की घटना याद आ गई। "हाँ, हाँ, कृष्ण सही समय पर अपना अधिकार जताने और दावा करने में ज़रा भी संकोच नहीं करते थे। जब लगभग अजेय जरासंध मारा गया, तो शिशुपाल भी स्तब्ध रह गया था। इसीलिए उसने भीम को उपहार और भेंट दी थी। इसके अलावा, शिशुपाल के पास पांडवों को अपना शत्रु मानने का कोई कारण नहीं था। जब वह राजसूय समारोह के लिए इंद्रप्रस्थ पहुँचा, तो उसने देखा कि इसके पीछे कृष्ण का हाथ था। उन्होंने वहाँ मथुरा के शत्रु सभी शासकों को इकट्ठा किया था, जिन्हें पहले जरासंध से लाभ और समर्थन प्राप्त हुआ था। जब राजसूय समारोह में सबसे पहले किसे सम्मानित किया जाए, यह मुद्दा उठा, तो शिशुपाल को किसी को भी यह सम्मान मिलने से कोई आपत्ति नहीं होती। उसे स्वयं इसमें कोई रुचि नहीं थी। साथ ही, उसके यह सम्मान प्राप्त करने की संभावना भी बहुत कम थी। जरासंध ने उस समय तक रुक्मिणी से अपने विवाह की व्यवस्था कर ली थी। शिशुपाल द्वारा मथुरा को पूरी तरह नष्ट करने के अभियान का संचालन और देखरेख करने के बाद, जरासंध ने उसे रुक्मिणी का हाथ देने का वादा किया था। वह? वह कृष्ण को कैसे क्षमा कर सकता था जिसने उसे इतनी सुंदर दुल्हन से वंचित कर दिया था? जब हताशा और अपमान एक साथ मिल जाते हैं, तो कोई कैसे बातें भूल सकता है? शिशुपाल ने अपने पुराने साथियों और सहयोगियों को इकट्ठा किया और स्वाभाविक रूप से कृष्ण को सर्वोच्च सम्मान दिए जाने का विरोध किया। और उसके तर्क पूरी तरह से तर्कहीन और औचित्यहीन नहीं थे। उसने कहा था, 'धर्मराज, यदि आप और कृष्ण व्यक्तिगत मित्र हैं, तो कृपया उन्हें अपने महल में ले जाइए और उनका भरपूर सम्मान कीजिए। जब इतने सारे शासक यहाँ एकत्रित हैं, तो आप अन्य शासकों को कमतर आंककर कृष्ण को सर्वोच्च सम्मान देने का आधार क्या रखते हैं? हम सभी यहाँ विधिवत

ताजपोशी वाले शासक हैं, वैध रूप से सिंहासन पर आसीन हैं। लेकिन कृष्ण ताजपोशी वाले शासक नहीं हैं। यहाँ तक कि वे सिंहासन के उत्तराधिकारी राजकुमार भी नहीं हैं। वे केवल एक साधारण क्षत्रिय हैं। क्या इस साधारण व्यक्ति को आगे बैठाकर ताजपोशी वाले शासकों को पीछे की सीटों पर धकेलना उनका अपमान नहीं है?' इस स्थिति को कैसे अस्वीकार किया जा सकता है? बेशक, यह समझ में आता है कि पांडवों को कृतज्ञता के कारण उस व्यक्ति को प्रथम स्थान देना चाहिए था जिसने उनके लिए इतना कुछ किया था। लेकिन क्या स्वयं कृष्ण ने ऐसा नहीं चाहा था? अन्यथा, भीष्म द्वारा यह प्रस्ताव रखे जाने पर कृष्ण ने तुरंत यह सम्मान क्यों स्वीकार कर लिया? भीष्म पांडवों के मन को जानते थे, लेकिन कृष्ण के प्रति कृतज्ञ भी थे क्योंकि कृष्ण ने कुरु वंश के सदस्यों को राजसूय यज्ञ करने में सहायता की थी जिससे वंश की प्रतिष्ठा बढ़ी थी और कुरु वंश के काँटे पर काँटा रहे जरासंध का वध करने में भी सहायता की थी। कृष्ण यह कहकर मना कर सकते थे, "मैं यह नहीं चाहता। मैं इसके लिए बहुत छोटा हूँ।" उस समय कृष्ण की आयु कितनी थी? पैंतीस या छत्तीस? शायद वे एक वर्ष छोटे भी रहे हों। वे शालीनता से सुझाव दे सकते थे कि यह सम्मान किसी बड़े को दिया जाए या किसी मुकुटधारी क्षत्रिय को दिया जाए। इसके बजाय उन्होंने शिशुपाल की चुनौती स्वीकार कर ली, जिसने उनकी योग्यता पर प्रश्न उठाया था। दोनों के बीच खुला युद्ध हुआ था। मान लीजिए कृष्ण मारे जाते? आखिर शिशुपाल कोई कमजोर तो नहीं था।" युयुधन गद्दे पर आराम से लेट गया। आँखें अपने आप बंद होने लगीं। उसे फिर से नींद आने लगी। गर्मियों में अक्सर ऐसा ही होता था, जब नींद आने लगती थी। खैर, समुद्र तट पर होने के विचार से उसे कुछ राहत मिली। फिर उसे इंद्रप्रस्थ की याद आई, "हम सब राजसूय के समय वहाँ थे। क्या धूमधाम और भव्यता थी! कितने लोग थे! क्या शानदार आतिथ्य सत्कार था!" फिर उसे यह भी याद आया कि शिशुपाल का वध करने और विधिपूर्वक उसका अंतिम संस्कार करने के बाद कृष्ण ने सम्मान का स्थान ग्रहण किया था। बलराम उस पूरे समय वहीं मौजूद थे। युयुधन सोचने लगा कि क्या बलराम के मन में कृष्ण के प्रति तभी से कड़वाहट आ गई थी। सच है, बलराम ने कृष्ण के चुनाव का खुलेआम विरोध नहीं किया था और न ही कोई कड़वा शब्द बोला था। लेकिन भला उनके मन में कड़वाहट कैसे नहीं आई होगी? युयुधन को अब नींद हावी होने लगी। उसने दो बार जम्हाई ली। अब उनके मन में यह सवाल उठने लगा, "जिसने इतनी आसानी

से इतनी सारी उपलब्धियाँ हासिल कीं और जिसने अकेले ही राजसूय विधि की स्थापना की, क्या वह सर्वोच्च स्थान पाने का हकदार नहीं है? उपलब्धि और योग्यता या वरिष्ठता, इनमें से ज़्यादा महत्वपूर्ण क्या है? क्या ताजपोशी वाले राजा का दर्जा वाकई महत्वपूर्ण है?" जल्द ही ये सारे सवाल गहरी नींद में डूब गए।

—•✳•—

अध्याय 33

नींद हल्की होती जा रही थी। पूरी तरह जागने से पहले ही उसने कदमों की आहट सुनी। उसने एक आवाज़ भी सुनी। आधी नींद में भी युयुधन ने पहचान लिया कि वह आवाज़ नंदक की थी। लेकिन दूसरी आवाज़ वह नहीं समझ पाया।

दूसरी आवाज़ का लहजा उन्हें बहुत हास्यास्पद लगा। उनके बोले कुछ शब्द उन्हें समझ नहीं आए। दूसरा व्यक्ति इतनी ज़ोर से चिल्ला रहा था मानो नंदक बहरे हों। नंदक पास आए और युयुधन से बोले, "क्रतु ने मुझे बताया था कि तुम यहाँ सो रहे थे। क्या मैंने तुम्हारी नींद खराब की?" नंदक ने दूसरे व्यक्ति को बैठने को कहा। वे पद्मासन की मुद्रा में बैठ गए। युयुधन तुरंत समझ गए कि दूसरा व्यक्ति अभिर जनजाति का था। वह सांवला, लंबा, हट्टा-कट्टा और नुकीली नाक वाला था। उसके गाल और आँखें भी नुकीली थीं। उसके हाथ में एक लंबी छड़ी थी। उसके पैर शिकारी कुत्ते की तरह पतले और लंबे थे, और शायद इसी वजह से वह ग्रेहाउंड से भी तेज़ दौड़ता होगा।

युयुधन उठ खड़ा हुआ और उसने अपने शरीर को आराम दिया। तब नंदक ने कहा, "देखो, यादवों और इन लोगों के बीच का पुराना झगड़ा फिर से शुरू हो गया है। वह हमें यह समझाने आया है कि इस बार इस झगड़े का कारण कौन है। यहाँ

हमें यह भी नहीं पता कि कृष्ण कब लौटेंगे। हम इस मामले को कैसे सुलझा सकते हैं?"

युयुधन इस संघर्ष और इसके विवरणों से भली-भांति परिचित था। ऐसा प्रतीत होता था कि आभीर अनार्त देश के मूल निवासी थे। वास्तव में, वे इस क्षेत्र के किसी भी भाग में बसकर खेती नहीं कर रहे थे। वे मुख्य रूप से कृषक नहीं थे और न ही अनाज और सब्जियां उनका मुख्य भोजन थीं। वे घुमंतू ग्वाले थे। वे बड़ी संख्या में मवेशी पालते थे और बूढ़ी गायों और बैलों का मांस, गाय का दूध, जड़ और फल खाकर अपना जीवन यापन करते थे। हालांकि, उनमें से एक बहुत छोटा समूह बरसात के मौसम में जमीन की बहुत पतली पट्टियों पर खेती करता था और गेहूँ उगाता और काटता था। वे इस अनाज को पकाकर खाते थे। वे आर्यों की तरह नियमित कृषक नहीं थे, जो फसल बढ़ाने के लिए हल और खाद का प्रयोग करते हों। मथुरा के यादवों के आगमन से पहले भी यह भूमि आर्यों के कब्जे में थी। जब मथुरा से बड़ी संख्या में लोग यहाँ आकर बसने लगे, तो कृषि उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता तीव्र हो गई। पहले तो जंगली जानवरों से बचाव के लिए ज़मीन की बाड़बंदी की जाती थी, लेकिन ये बाड़ें अभिरा लोगों द्वारा पाले जाने वाले मवेशियों के विशाल झुंड को रोकने के लिए पर्याप्त मजबूत नहीं थीं। अभिरा युवक इस बात से नाराज़ थे कि नए बसने वालों ने उस चरागाह भूमि को घेर लिया था जहाँ वे अपने मवेशियों को चरा सकते थे। उन्होंने अपनी शत्रुता और क्रोध को बाड़ तोड़कर और अपने मवेशियों को उस भूमि पर चरने देकर व्यक्त किया। आर्यों के बीच, जो धारदार धातु के बाण चलाते थे, और अभिराओं के बीच, जो विषयुक्त बांस के बाण चलाते थे, नियमित रूप से और लगातार युद्ध होते रहते थे। कभी-कभी, यादव क्रोधित हो जाते थे और कई अभिराओं को मार डालते थे। अभिराओं ने रात के अंधेरे में यादवों के घरों और ज़मीनों में आग लगाकर अपना बदला लिया। बहुत समय पहले, नाग मथुरा के लोगों को इसी तरह परेशान करते थे। युयुधन को याद आया कि उनके पिता और उनकी पीढ़ी ने यह अनुभव किया था। जब कृष्ण बहुत छोटे थे और व्रज में एक किसान के घर में रहते थे, तब नाग उन्हें परेशान करते थे। एक बार युयुधन ने यमुना नदी पार करके द्वारका आए व्रज के एक नेता से पूछा, "नंदक, ऐसा लगता है कि कृष्ण ने तुम्हारे नगर में रहते हुए एक नाग का वध किया था। उस नाग का नाम क्या था?"

नंदका नाम याद करने की कोशिश करते हुए बोला, "उसका नाम क्या था? मुझे देखने दो।" उसने अपने हाथों से अपना सिर थाम लिया। नाम याद करने की कोशिश में उसके चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गईं। थोड़ी देर बाद उसने कहा, "क्या वह कालिया नहीं था? हम भी उस घटना स्थल पर गए थे। वे नदी पार करके हम पर हमला करने आ रहे थे। नहीं, हर दिन नहीं। एक रात वे चोरों की तरह आए, हमारी फसलों में आग लगा दी और भाग गए। हम हर रात उन घुसपैठियों से बचाव के लिए पहरा देते थे। एक दिन हमने उन्हें पकड़ लिया, मैं तुम्हें बताता हूँ। सिर्फ़ कालिया ही नहीं, हमने तीन और लोगों को भी मार डाला। उस दिन से वे जंगल छोड़कर चले गए और पता नहीं किस दिशा में भागे। कोई नहीं जानता।" थोड़ी देर रुककर नंदका ने पूछा, "तुम यह सब क्यों जानना चाहते हो?"

युयुधन ने कहा, "बस जानना चाहता था। कोई खास वजह नहीं। मुझे वह घटना अचानक याद आ गई।" दरअसल, युयुधन को कृष्ण में आए बदलाव अचानक याद आ गए थे। व्रज में रहते हुए उन्होंने कालिया को पकड़ने और मारने तथा नाग आक्रमणकारियों को भगाने में महान दृढ़ संकल्प दिखाया था। बाद में जब पांडव खांडव वन को कृषि भूमि में परिवर्तित कर रहे थे, तब कृष्ण ने ही नेतृत्व संभाला और एक अभियान का आयोजन किया जिसमें अर्जुन और अन्य लोगों ने वन में आग लगा दी ताकि आदिवासी लोग धुएं के साथ बाहर आ जाएं और फिर जलते हुए वन से भागते हुए उन पर तीर-कमान से निशाना साधा। उसके बाद ही तो अभीरों ने हमें यहाँ परेशान करना शुरू किया था, है ना? कभी-कभी बलराम और कृतवर्मा उन्हें सबक सिखाने में सफल हो जाते थे। तब कृष्ण ने आदिवासियों के प्रति अपनी शत्रुतापूर्ण नीति को त्याग दिया और यादवों और अभीरों के बीच सौहार्दपूर्ण समझौता कराया। कृष्ण ने उनसे कहा, 'हमारे पास जो कृषि योग्य भूमि है, वह हमारे लिए पर्याप्त है। यदि आवश्यक हुआ, तो हम उस पर खेती को और बढ़ा देंगे।' हम खेती के लिए ज़मीन साफ़ करने हेतु और जंगल न जलाने पर सहमत हैं। लेकिन आपको यह सुनिश्चित करना होगा कि आपके मवेशी हमारी बाड़ के पास कहीं भी न आएं। जंगली जानवर आपके मवेशियों का पीछा करके उन्हें मार डालते हैं। वे हमारी ज़मीनों में भी घुस आते हैं। उनका शिकार करने में आप हमारा सहयोग ले सकते हैं। हम आपके साथ संयुक्त शिकार में शामिल होंगे। संयुक्त शिकार से प्राप्त मांस केवल आपका होगा।' बलराम और कृतवर्मा ने इस समझौते का कितना कड़ा विरोध किया! बलराम ने अभिराओं की उपस्थिति में भी

अपना विरोध व्यक्त करने में संकोच नहीं किया और व्यंग्यपूर्वक कहा, 'संयुक्त शिकार तो होगा, लेकिन मांस केवल उनके लिए। और हमें शेष वन भूमि नहीं जलानी चाहिए। वीर आर्य इन पशुपालक वनवासियों से कैसे डर सकते हैं? यदि आप इन आदिवासियों से डरने के लिए इतने कायर हैं, तो आपको उनके विरुद्ध हमारे संघर्ष में शामिल होने की आवश्यकता नहीं है।' आप घर पर कंबल ओढ़कर सो सकते हैं!' कृष्ण को धैर्यपूर्वक अपनी बात समझानी पड़ी। "वे हमारे आने से पहले यहाँ रहते थे। अब उन्हें भी जीना है, और हमें भी। हमारे पास अब पर्याप्त कृषि योग्य भूमि है। चूंकि हम इतनी अधिक फसल उगाते हैं, इसलिए हमें मांस खाने की आवश्यकता नहीं है। वे हमारी तरह खेती नहीं करते। आइए इस व्यर्थ के झगड़े को जारी न रखें।" क्योंकि वासुदेव, मेरे पिता, उग्रसेन और अन्य वरिष्ठ कृष्ण से सहमत थे, इसलिए बलराम और कृतवर्मा, बाकी दो लोगों के पास कम से कम कुछ समय के लिए सहमत होने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। एक तरह से, यह अच्छी बात थी। समूहों के बीच घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण संबंध विकसित हुए। हमारे महान इंद्र उत्सव के दौरान, हमने उन्हें दूध के बर्तन, भरपूर ताड़ी और बाइसन का मांस दिया। हमारे आतिथ्य में प्रथुका, शक्तु और मीठी दलिया जैसे विशेष व्यंजन शामिल थे, जिनका स्वाद उन्होंने यथासंभव लंबे समय तक अपने जीभ पर रखा। कृष्ण ने स्वयं उनकी महिलाओं और बच्चों को एक बड़े करछुल में दूध-चावल परोसा। जब युयुधन सोच रहा था कि अब उनके बीच झगड़ा क्यों शुरू हुआ, तो उसे अचानक कुछ याद आया। दरअसल, हाल ही में हुए इंद्र उत्सव में कृष्ण उपस्थित नहीं थे।

इसलिए अभीरा समुदाय से किसी को भी उत्सव में आमंत्रित नहीं किया गया था। शायद यही यादवों के प्रति उनकी शिकायत रही होगी। तभी अभीरा ने कहा, "कुछ दिन पहले आपने हमसे यह समझौता किया था कि जंगल जलाकर खेती के लिए कोई नई ज़मीन साफ़ नहीं की जाएगी। लेकिन अब उधर देखिए।" उन्होंने खिड़की से दूर स्थित पहाड़ी की ओर उंगली करके कहा, "आपके लोगों ने उस पहाड़ी के उस पार जंगल में आग लगा दी है। अभी गर्मी का मौसम है और जंगल पूरी तरह सूखा है। आग आपकी तरफ से लगाई गई है ताकि हवा लपटों को पूरे जंगल में फैला दे। क्या आपको लगता है कि आप अपने शहर से इतनी दूर किसी ज़मीन पर खेती कर सकते हैं? समझौता मौजूदा ज़मीन के उपयोग को बढ़ाने का था, न कि जंगल साफ़ करके उसे बढ़ाने का।"

युयुधन को इस घटनाक्रम की कोई जानकारी नहीं थी। पिछली रात जब वे मिले थे, बलराम ने उन्हें इसके बारे में नहीं बताया था। शायद अगर उनके मन में दुर्योधन का गंभीर मुद्दा न होता, तो वे इसके बारे में बात करते। युयुधन ने सोचा, "शायद उन्होंने अनुमान लगा लिया होगा कि कृष्ण द्वारा किए गए समझौते को तोड़ना मेरे लिए गलत होगा।" युयुधन अभिराओं के विशिष्ट उच्चारण और वाक्य संरचना से भी चकित थे। उन्होंने संस्कृत के 'त्वम्' को 'थोम्', 'अग्नि' को 'अग्नि' और 'क्षेत्र' को 'क्षेत्र' में बदल दिया था। 'कृष्ण' का अर्थ 'कृष्ण' हो गया था। युयुधन जानते थे कि आर्यों के संपर्क में आने से अभिराओं ने आर्य भाषा का कुछ संशोधित रूप ग्रहण कर लिया था। उन्होंने पूछा, "अब क्या किया जाना चाहिए?"

"अगर कृष्ण यहाँ होते, तो वे सब कुछ ठीक कर देते। आप उनके मित्र हैं। आप अपने लोगों को सलाह दें और सब कुछ ठीक करें।"

एक और बात ने युयुधन का ध्यान खींचा। वह सोचने लगा कि क्या वह 'अभिरा आगंतुक इसलिए चिल्ला रहा था क्योंकि उसे लगता था कि वह बहरा है! या शायद बोलने का यही उसका स्वाभाविक तरीका था। यहाँ तक कि जब युयुधन ने उसे बताया कि उसकी सुनने की शक्ति अच्छी है और उसे धीमी आवाज़ में बोलने के लिए कहा, तब भी उसने "हाँ" कहा और फिर पहले की तरह ही ज़ोर से बोलने लगा!

नंदका ने समझाया, "देखिए, जब ये लोग हमारी आर्य भाषा का प्रयोग करते हैं, तो उनकी आवाज़ अपने आप ऊँची हो जाती है। लेकिन जब वे अपनी भाषा बोलते हैं, तो आवाज़ अधिक शांत और स्वाभाविक होती है।"

युयुधान चुप रहा, उसे समझ नहीं आ रहा था कि किसी को क्या सलाह दे। उसके शरीर पर अब तक जमा हुआ पसीना, जिस पर उसे अब तक ध्यान नहीं गया था, अब उसकी नज़र में आया। जब वह अपने ऊपरी वस्त्र के किनारे से पसीना पोंछ रहा था, तभी अभिरा कुत्ते की तरह उछल पड़ा और बोला, "सूरज ढल रहा है। मुझे सूर्यास्त से पहले अपने लोगों के पास पहुँचना है। क्या अब मैं आपसे विदा लूँ?"

युयुधन को अभी यह समझ नहीं आ रहा था कि वह इस परिस्थिति में क्या कर सकता है। उसने मन ही मन सोचा, "अजनबी को घर बुलाने का क्या फायदा?" फिर उसने सोचा कि सबसे अच्छा यही होगा कि पहले अपने पिता से इस बारे में बात कर ले और फिर वासुदेव के घर जाकर कोई हल निकाले। अभिरा अपने

दाहिने हाथ में लाठी पकड़े सीढ़ियों से नीचे उतरे और चले गए। युयुधन कुछ देर चुप रहे। फिर उन्होंने खिड़की से बाहर झाँका और आगंतुक को गायब होते देखा। उन्होंने कहा, "नंदक, वह अकेले ही चले गए। क्या ऐसा हो सकता है कि शहर में हमारे लोग उनके साथ मारपीट करें?" नंदक ने उत्तर दिया, "बिल्कुल नहीं, लोग बेवजह झगड़ा नहीं करेंगे। देखो, वह हमारी भाषा जानते हैं। इसलिए शहर में उनके कुछ अच्छे परिचित हैं। क्या तुम्हें लगता है कि वह उनमें से किसी के घर जाए बिना और उनके घर भुट्टा या घी में पका हुआ पैनकेक खाए बिना चले जाएँगे? या कुछ और? जो भी उपलब्ध हो? बेशक, वह तुम्हारे जैसे बड़े लोगों के बहुमंजिला घरों में तो नहीं जाएँगे।"

युयुधन को राहत मिली। नंदक जलपात्र के पास गए, मग में पानी भरा और सबसे पहले युयुधन को दिया। उसके बाद उन्होंने पानी पिया और घास की गद्दी पर युयुधन के पास बैठ गए। नंदक किसी बात में मग्न थे, यह समझकर युयुधन ने उनसे कोई बातचीत नहीं की। कल से उनका अपना सिर भी किसी न किसी बात के बारे में सोचते-सोचते थक गया था। फिर भी, नंदक ने खुद ही बातचीत शुरू की, "लगता है हस्तिनावती के राजा आ गए हैं। लगता है उनके और हमारी सुभद्रा के ससुराल वालों के बीच युद्ध होने वाला है। ऐसा लगता है कि बलराम पूरी यादव सेना को दुर्योधन के पक्ष में लगाना चाहते हैं। क्या यह सच है?"

युयुधना, "हाँ, ऐसा ही लगता है। कृष्ण को अब तक शहर में होना चाहिए था। कोई बात नहीं। आपको क्या लगता है कि न्याय किस पक्ष में है?"

नंदका, "लगता है इसकी शुरुआत जुए के खेल से हुई थी। सबको पता है कि समझौता यह था कि तेरह साल बाद पांडवों की ज़मीन उन्हें वापस कर दी जाएगी। मुझे याद है सुभद्रा ने हमें उनकी दुश्मनी के बारे में बताया था। लेकिन मैं खुद अलग सोचता हूँ। क्षत्रिय जाति की यह बुरी आदत है कि वे जुआ खेलकर सब कुछ गंवा देते हैं, और वे लड़ने के लिए उतावले रहते हैं, किसी भी छोटी सी ज़मीन पर कब्ज़ा करने के लिए तैयार रहते हैं। कृपया मुझ पर गुस्सा न करें क्योंकि मैं आपकी जाति पर दोष लगा रहा हूँ।"

नंदक वैश्य जाति से थे। उनकी जाति का मुख्य व्यवसाय खेती करना और उससे फसलें प्राप्त करना था। इस जाति के लोग पशुपालन, बढ़ईगिरी (जिसमें रथ बनाना और उनकी मरम्मत करना शामिल था), धातु का काम, कपड़ा बुनना और इसी तरह के उपयोगी वस्तुओं के उत्पादन से जुड़े कार्य भी करते थे।

नंदका ने आगे कहा, "जानते हो, आजकल मैं क्या सोचता हूँ? अब तक तो मैं कंस को क्रूर और दुष्ट समझता था। बाद में मुझे जरासंध द्वारा मथुरा पर आक्रमण और विजय के परिणामों का भय सताने लगा। तुम्हें पता है, कृष्ण और मैं साथ-साथ पले-बढ़े। मैं सचमुच उनके बड़े भाई को अपना बड़ा भाई मानता था। लगता है, जब मैं तीन साल का था, तब मेरी माँ गर्भवती हुईं और उन्होंने एक बच्चे को जन्म दिया, जिसकी तीन महीने बाद मृत्यु हो गई। तुम्हें पता है, जब बच्चे को दूध पिलाने के लिए स्तन का दूध इस्तेमाल नहीं होता, तो स्तन में दर्द होने लगता है। इस दर्द से बचने के लिए, मेरी माँ ने मुझे फिर से स्तनपान कराना शुरू कर दिया। माँ का दूध सूख जाने के बाद भी यह सिलसिला जारी रहा और मैं उनका दूध पीता रहा। अगर कोई मुझे स्तनपान कराने से मना करता, तो मैं हंगामा करता। मुझे आज भी वह सब स्पष्ट रूप से याद है। कृष्ण माँ से झगड़ते थे कि उन्होंने मुझे अपना स्तनपान कराया लेकिन उन्हें नहीं। तब माँ हम दोनों को एक साथ दूध पीने देतीं और खेल-खेल में हमारी पीठ थपथपातीं, जिससे हमें और भी मज़ा आता। आमतौर पर मैं बाएँ स्तन से दूध पीता था और वह दाएँ से। बाद में कृष्ण भी हमारी तरह खेतों में हल चलाने लगे, पशुओं की देखभाल करने लगे, जंगल में तीर-कमान से शिकार करने लगे। हम दोनों में क्या फर्क था? सोलह साल की उम्र में वे क्षत्रिय बन गए क्योंकि अकेले में उनके माता-पिता के क्षत्रिय होने का पता उन्हें चल गया था। उस पल से वे बिल्कुल बदल गए। अब याद करके मुझे ये सब और भी साफ दिखाई देता है। उन दिनों मैं भोला था, ऐसी बातें नहीं समझता था। इसका क्या मतलब है कि वे बिल्कुल बदल गए थे? क्या इसका मतलब यह था कि वे एक अलग ही इंसान बन गए थे? इसका मतलब यह था कि वे अपना ज़्यादातर समय कुश्ती और तीरंदाजी के अभ्यास में लगाने लगे। और उनका चेहरा इतना गंभीर हो गया मानो उनके सिर पर पूरी दुनिया का बोझ हो! पहले की सारी चंचलता और मस्ती गायब हो गई। क्या आप इसका कारण बता सकते हैं? बहुत आसान - क्षत्रिय छवि के अनुरूप जीने का उनका प्रयास... युयुधन ने बीच में टोकते हुए कहा, "शायद वे अपने माता-पिता की हालत को लेकर चिंतित थे, उन असली माता-पिता की जिन्होंने उन्हें जन्म दिया था।"

नंदक ने उत्तर दिया, "यह भी संभव है। यदि कृष्ण क्षत्रिय न होते या उन्हें कभी अपनी क्षत्रिय पहचान का पता न चलता, तो वे कृषि जीवन व्यतीत करते। चूंकि वे बुद्धिमान हैं, इसलिए शायद वे धातु-कारीगरी या बढ़ईगीरी में कुछ नया आविष्कार

कर लेते। ऐसे में वे सुखी होते और दूसरों को भी सुखी बनाते।" फिर वे चुप हो गए, आगे कुछ कह पाने में असमर्थ।

युयुधन उठकर बोला, "आप क्या कह रहे हैं?" बाईं खिड़की से समुद्र एक विशाल प्रचंडता के लिए तैयार प्रतीत हो रहा था। समुद्र के स्वरूप को निश्चित रूप से परिभाषित करना कभी आसान नहीं था; यह हर समय अपना रूप बदलता रहता था। कभी यह क्षितिज में समाते हुए एक गोल बर्तन की तरह फूलता था, तो कभी एक सपाट हरे गद्दे की तरह अनंत तक खुलता हुआ अंधकार में विलीन हो जाता था। जब नंदक समुद्र के रहस्यमय स्वरूप और प्रकृति पर ध्यान लगा रहे थे, तो वे बातचीत से भटक गए।

फिर नंदका ने आगे कहा, "मैं यह इसलिए कह रहा हूँ ताकि यह स्पष्ट हो सके कि कंस जब तक जीवित रहा, उसने यादव क्षत्रियों को आतंकित और सताया। उसने कभी दूसरों को परेशान नहीं किया। वह दूसरों से केवल राजा होने के नाते अपना हक मांगता था—उनकी उपज का छठा हिस्सा। हम सब नियमित रूप से भुगतान करते थे। हमें क्या फर्क पड़ता है कि हम पर कौन शासन करता है? कुछ दिन पहले मेरे शहर से कुछ रिश्तेदार आए थे। इस गर्मी में इतनी लंबी दूरी तय करना उनके लिए बहुत मुश्किल रहा होगा। मैं तो यहाँ एक संपन्न व्यक्ति हूँ। बेचारे, उनके पास घोड़े नहीं थे, और उन्हें पूरी दूरी पैदल ही तय करनी पड़ी। उनके पैरों से बहुत खून बह रहा था और उनके पेशाब में भी खून आ रहा था। अब व्रज में कोई शासक नहीं है। वे मथुरा से यहाँ आए थे, और जरासंध मथुरा को नष्ट करके लौट गया था। यदि कोई शासक नहीं है, तो कम से कम उपज का छठा हिस्सा देने के कर्तव्य से तो मुक्ति मिल जाती है। लेकिन फिर भी, उन्हें सुख नहीं मिला। हर तरह के आवारा और बदमाश, खुद को शासक बताते हुए, घोड़ों पर सवार होकर यहाँ आते रहे। उन्होंने कहा, "वे हमें अंधाधुंध लूट रहे हैं। अब हमें साल में दो-तीन बार कर चुकाना पड़ता है। हमारे कस्बे के लोगों ने दूत भेजकर आपसे विनती की है कि आप लौट आएं, मथुरा का पुनर्निर्माण करें और शांतिपूर्ण शासन स्थापित करें। उन्हें लगता है कि वे आपके शासन में सुखी रह सकते हैं..."

युयुधन सत्यकी इस विचार से तुरंत उत्साहित हो गए! जरासंध के वध के बाद मथुरा लौटने के बारे में किसी ने नहीं सोचा था। कृष्ण ने भी नहीं। द्वारका ने उन्हें धन-दौलत तो दी ही थी। फिर भी, सत्यकी ने सोचा, यादवों की एक शाखा मथुरा लौटकर वहाँ क्यों न बस जाए? आख़िरकार, यह तो उनकी जन्मभूमि थी। नंदक ने

कहा, "मैंने बलराम से इस बारे में बात की थी। उन्होंने यह कहकर इस विचार पर पानी फेर दिया, 'मथुरा की ज़रूरत किसे है?'..." फिर नंदक चुप हो गए। युयुधन ने मन ही मन पूछा, "अगर मथुरा लौटने में किसी की दिलचस्पी नहीं है, तो कम से कम मैं ही अपनी जन्मभूमि क्यों न लौट जाऊँ?"

नंदक ने कहा, "राज्य बनाना और फिर उन पर शासन करना क्षत्रियों की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। यह एक आदत भी है। मैं बस इतना कह रहा हूँ कि राजा कोई भी हो, हमारा बोना, खेती करना और फसल काटना अनिवार्य है। मुझे नहीं लगता कि यह तय करना इतना महत्वपूर्ण है कि न्याय दुर्योधन के पक्ष में है या पांडवों के पक्ष में। जब पेट भरने के लिए भोजन और बालों में सजाने के लिए फूल मिल गए, तो और क्या चाहिए? उन्होंने जुआ खेला। जीतने वाले ने हारने वाले को दांव नहीं दिया। अब युद्ध भी होगा। जब तक क्षत्रिय जाति रहेगी, युद्धों की कमी नहीं होगी। भला हमें क्या लेना-देना कि कौन ज़मीन जोतता है, कौन युद्ध जीतता है?" युयुधन ने शहर लौटने के बाद कृष्ण से मथुरा लौटने के बारे में चर्चा करने का निर्णय लिया। केवल लौटना ही नहीं, बल्कि एक नगर बसाना और वहाँ बसना। इससे निश्चित रूप से पड़ोसी राज्यों के साथ विवाद और युद्ध होंगे। अचानक उसने देखा कि शाम आसमान में छा रही है। सूर्य की लाल रोशनी से समुद्र की रूपरेखा सीमित हो जाने के कारण समुद्र विशाल प्रतीत होने लगा। मथुरा में समुद्र नहीं था। लेकिन वहाँ एक नदी थी, और युयुधन को याद आया कि उसने नदी को प्रेम से देखने की ऐसी इच्छा पहले कभी नहीं की थी, जैसी अब समुद्र को देख रहा था।

नंदक ने कहा, "अभिरा अपने हाल पर खुश थे। गलती हमारी है क्योंकि उन्होंने ही पहले उकसाया। बाण-तीर से अपनी वीरता दिखाने के लिए उनमें से कुछ जंगल में गए और उसमें आग लगा दी। अब क्या ये लोग कल जाकर खेत जोतेंगे, बीज बोएंगे और खेती करेंगे, धूप, बारिश और सर्दी में पक्षियों और कीड़ों से उसकी रक्षा करेंगे? कम से कम आप पहल कीजिए, बलराम से मिलिए और अभिराओं और हमारे बीच किसी भी हिंसक टकराव को रोकने की कोशिश कीजिए। अगर कृष्ण यहाँ होते तो क्या करते? यह अभिरा आपकी खोज में आया था क्योंकि आप कृष्ण के घनिष्ठ मित्र हैं।"

युयुधन स्वयं समझ गया था कि कुछ करना ही होगा। उसने सोचा कि यदि वे कृष्ण के आने तक प्रतीक्षा करते रहे, तो दोनों पक्षों के बीच शत्रुता और बढ़ जाएगी। जब युयुधन ने इस अप्रिय स्थिति को रोकने का निश्चय कर लिया, तब

नंदक ने कहा, "मैंने नौकाओं को मरम्मत के लिए भेजा था। मुझे जाकर देखना होगा कि वहाँ क्या प्रगति हुई है। कल, कुल मिलाकर दस नौकाओं में माल निर्यात के लिए ले जाना है। इसलिए, कृपया परसों मुझसे मिलें, क्योंकि मुझे आपसे बहुत सी बातें करनी हैं।"

—•✳•—

अध्याय 34

वहां से युयुधन बलराम के निवास पर गया। बलराम ने आश्चर्य से उससे पूछा, "क्या दुर्योधन तुमसे नहीं मिला?"

Yuyudhana, "Where?"

बलराम ने कहा, "अच्छा, वह खास तौर पर आपसे मिलने आपके घर गया था। वह करीब बीस मिनट पहले चला गया। शायद वह आपके पिता से कुछ बात कर रहा हो। शायद आप अभी समुद्र तट से आ रहे हों।"

युयुधन आश्चर्य से भर गया, लेकिन साथ ही उसे कुछ गर्व भी महसूस हुआ। गर्व इसलिए कि हस्तिनावती के शासक ने उससे मिलने के लिए इतनी दूर चलकर उसके घर तक आने की जहमत उठाई थी। लेकिन जल्द ही उसे एहसास हुआ कि इस मुलाकात के पीछे स्वार्थ था। बलराम बार-बार अपने बाएं हाथ से अपना गाल छू रहे थे। युयुधन ने उनसे पूछा, "दर्द कैसा है?"

बलराम ने उत्तर दिया, "कल जितना दर्द तो नहीं है। लेकिन इतना दर्द तो है कि गाल छूने पड़ रहे हैं।" युयुधन समझ गया कि बलराम ने शराब पी रखी है, शायद दर्द कम करने के लिए या शायद दर्द को बहाना बना लिया हो। लेकिन उसे घर जाकर दुर्योधन से मिलने की ज़्यादा इच्छा थी। वह सीधे अभिरास के विषय पर आ गया और उस पर अपनी राय व्यक्त की।

बलराम ने पूछा, "क्या आप जानते हैं कि यह झगड़ा बार-बार क्यों होता है?"

"खैर, मैंने आपको पहले ही कारण बता दिया है। किसी समझौते के एक पक्ष द्वारा समझौते की शर्तों का उल्लंघन करने पर झगड़ा होना स्वाभाविक है। हमारे लोग जंगल क्यों जलाएं?"

बलराम ने कहा, "युयुधन, तुम्हारा वर्णन तो बुखार से पीड़ित बिल्ली की कहानी जैसा है! हमारी आर्य स्त्रियाँ गोरी और लाल रंग की हैं, यह सच है। क्या इसका यह अर्थ है कि उन्हें अकेले नहीं घूमना चाहिए? क्या उन्हें खेतों में काम नहीं करना चाहिए? क्या हमें असहाय और निष्क्रिय होकर देखते रहना चाहिए जब वे हमारी स्त्रियों का खेतों से अपहरण कर लेते हैं?"

युयुधना इस बात से भलीभांति अवगत था कि इस दावे में तथ्यों का ठोस आधार था कि अभिरा जनजाति, और केवल वे ही नहीं, बल्कि नाग, कुलिंद और अन्य जनजातियाँ भी आर्य महिलाओं के प्रति आसक्त थीं और जब भी उन्हें मौका मिलता था, उनका अपहरण कर लेती थीं।

युयुधना ने कहा, "जी हां, हम इस शर्त पर अड़े रहेंगे कि वे हमारी महिलाओं के साथ छेड़छाड़ और अपहरण न करें। कृष्ण के लौटने के बाद हम समझौते पर और सख्ती से पुनर्विचार करेंगे।"

कृष्ण का नाम सुनते ही बलराम क्रोधित हो गए। वे लगभग चिल्लाते हुए बोले, "क्या तुम्हें लगता है कि कृष्ण की मध्यस्थता से स्त्रियों के विषय में कोई और कड़ा समझौता हो सकता है? जब भी उन्हें मौका मिलता है, वे अभिरा स्त्रियों के साथ भोग-विलास करने से नहीं रुकते। उनका दावा है कि वे बिना मांगे ही उन्हें भेंट की जाती हैं और वे उन्हें प्रसन्नतापूर्वक दी जाती हैं!"

युयुधन ने पूछा, "यह झूठ है, सरासर झूठ। जब उसकी आठ पत्नियां हैं और नरकासुर से मुक्त कराई गई स्त्रियों में से भी पत्नियां हैं, तो उसे उन काली स्त्रियों के पीछे क्यों भागना चाहिए?"

“एक स्त्री गोरी हो या काली, इससे क्या फर्क पड़ता है? कृष्ण के लिए तो स्त्री, स्त्री ही है। शायद आप कृष्ण को पूरी तरह नहीं जानते। यह बिलकुल भी असंभव नहीं है कि वे स्वयं ऐसा करते हैं, इसलिए वे पूछें कि उनके कुछ पुरुषों द्वारा हमारी स्त्रियों को छूने पर इतना हंगामा क्यों? ऐसे मामलों को गंभीरता से केवल वही लोग उठाते हैं जो हमारे लोगों के नैतिक स्तर को बहुत महत्व देते हैं। यह बात कृष्ण के बारे में बिल्कुल भी सच नहीं है,” बलराम ने उत्तर दिया।

युयुधन क्रोधित हो गया। लेकिन वह यह तय नहीं कर पा रहा था कि क्यों और किसके विरुद्ध! वह सोचने लगा, "क्या बलराम कृष्ण के साथ मेरे संबंधों को खराब करने के लिए झूठ बोल रहे हैं? या कृष्ण ने सचमुच ऐसा व्यवहार किया था?" उन्होंने आठ पत्नियाँ विवाहित की थीं। उन्होंने नरकासुर के चंगुल से मुक्त हुई सभी स्त्रियों से समुद्र तट पर पुष्पमाला पहनाकर विवाह किया था। फिर भी, युयुधन को आश्चर्य हुआ, क्या उनके गैर-आर्य स्त्रियों के साथ विवाहेतर संबंध थे? यद्यपि वे कृष्ण के घनिष्ठ मित्र थे, फिर भी उनकी और कृष्ण की आयु में अंतर था। वे गुरु और शिष्य के रूप में उनके बीच के अंतर को भी नहीं भूले थे। इन दो परिस्थितियों के कारण उनके लिए कृष्ण के साथ स्त्रियों के बारे में खुलकर चर्चा करना कठिन था। उन्होंने अपनी बातचीत में इस मुद्दे को उठाना संभव नहीं समझा था। इन तथ्यों को देखते हुए, वे अपने ऊपर लगे आरोपों पर कैसे विश्वास कर सकते थे? इसके अलावा, वे दूसरों के साथ कृष्ण के बारे में चर्चा करने से कतराते थे। फिर भी, उन्हें सच्चाई जानने की जिज्ञासा थी।

—•⁕•—

अध्याय 35

जब युयुधन घर पहुँचा, तो उसने दुर्योधन को अपने पिता के साथ प्रांगण में बात करते हुए पाया। उसने दुर्योधन को आखिरी बार चौदह वर्ष पूर्व राजसूय के समय देखा था। तब भी वह राजसी अहंकार से भरा हुआ था। अब तो वह और भी बढ़ गया था। उसके पिता ने उसे उसके राजसी रुतबे के अनुरूप एक ऊँचे चबूतरे पर बैठाया था, जो नरम गद्दे और रेशमी कपड़े से ढका हुआ था। उसके पिता स्वयं एक साधारण लकड़ी के आसन पर बैठे थे। इस भीषण गर्मी में भी दुर्योधन ने अपना मुकुट धारण कर रखा था। उसने कीमती पत्थरों से जड़ा रेशमी वस्त्र पहन रखा था।

उसका चेहरा चौड़ा था, जो गांधार देश के लोगों की विशेषताओं को दर्शाता था। उसके पास एक दासी पंखा कर रही थी। युयुधन ने सम्मानपूर्वक उसके पैर छुए क्योंकि वह उससे बड़ा था। दुर्योधन ने उसे गले लगाया, उसके कंधे पकड़े और उसे अपने पास बैठा लिया। लेकिन वह असमंजस में था - वह अपने पिता के साथ ऊँचे आसन पर कैसे बैठ सकता था जबकि उसके अपने पिता एक निचले आसन पर बैठे थे? इसी बीच, दासी उसके लिए एक लकड़ी का स्टूल ले आई। बैठने के बाद उसने दुर्योधन से पूछा, "क्या यहाँ बहुत गर्मी नहीं है?"

"हाँ, वाकई बहुत गर्मी है..." दुर्योधन ने उत्तर दिया और दासी की ओर मुड़कर कहा, "लेकिन वह बहुत ज़ोर से पंखा चला रही है।"

पिताजी ने कहा, "वैसे, क्या वहां यहां से ज्यादा गर्मी होती है? मैं तो वहां के मौसम के बारे में बिल्कुल भूल ही गया हूं।"

दुर्योधन ने उत्तर दिया, "हाँ, वहाँ गर्मी बहुत अधिक है। लेकिन यहाँ उमस अधिक है, जिससे पसीना अधिक आता है। इसके अलावा, यहाँ पका हुआ भोजन वहाँ की तुलना में जल्दी खराब और खट्टा हो जाता है। और गर्मी..." सत्यक ने सहमति जताते हुए कहा, "हाँ, हाँ, आप इसे सौ बार कह सकते हैं। आपका कुरु देश हमारे मथुरा के बहुत करीब है।"

आस-पास पड़े खाली बर्तनों को देखकर युयुधन समझ गया कि उसके पिता ने अतिथि का सत्कार शहद और मीठे पेय पदार्थों से कर दिया है। दुर्योधन ने बातचीत शुरू करते हुए कहा, "युयुधन, यादवों में, मेरे गुरु बलराम के बाद, तुम सबसे वीर हो। तुम्हारे पिता न केवल यादव वंश के लिए, बल्कि पूरे आर्य जगत के लिए गौरव हैं। इसीलिए मैं धर्म के एक संवेदनशील विषय पर चर्चा करने तुम्हारे पास आया हूँ। यदि मैं गलत हूँ, तो आदरणीय सत्यक, कृपया मुझे सुधार दें। क्या आप सुधारेंगे?" युयुधन ने अपने पिता के चेहरे की ओर देखा। दाँतविहीन वृद्ध ने दुर्योधन को आश्वस्त करते हुए कहा, "बिल्कुल, निश्चित रूप से।" उन्होंने अपनी सहमति जताने के लिए सिर हिलाया।

दुर्योधन बोला, "दुर्योधन भले ही दुर्योधन के सारे गुण समेटे हुए हो, पर मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि कंजूसी या लोभ उनमें से एक नहीं है। मैं शुरू में ही स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैं किसी क्षेत्र के लालच में नहीं बोल रहा हूँ। यहाँ मुख्य बात यह है कि मेरे पिता हिंद वंश के थे। मेरी माता जन्म से नहीं, बल्कि अपनी इच्छा से अंधी हैं। क्योंकि उनके पति उन्हें कभी देख नहीं सके, इसलिए उन्होंने

स्वयं को हमेशा के लिए आँखों पर पट्टी बाँधकर दृश्य जगत से नाता तोड़ लिया। न केवल कुरुवंश में, बल्कि पूरे आर्य जगत में मेरी माता को देवी के रूप में पूजा जाता है। वे पति-भक्ति के सर्वोच्च आदर्शों की प्रतीक देवी हैं। याद रखिए, हम चौदह संतानें हैं। बेशक, हमारी चाची कुंती के बारे में बुरा-भला कहना हमारे लिए अनुचित होगा। आखिर, वह भी हमारे परिवार की ही हैं। ऐसा लगता है कि वे मूल रूप से आपके यादव वंश की थीं। जहाँ तक हमारा सवाल है, यह कोई गंभीर बात नहीं है। रहने दीजिए। उनके पुत्र उनके पति से नहीं, बल्कि किसी और कारण से पैदा हुए थे। अपने पति की सहमति से नियोग साधना करने वाली पांडु ने नियोग साधना की। फिर भी, इससे एक पेचीदा सवाल उठता है। अगर नियोग साधना ही थी, तो इतनी दूर हिमालय तक क्यों गईं? भले ही यह बात छोड़ दें, नियोग साधना नियमतः एक पुत्र की प्राप्ति के लिए की जाती है ताकि वंश निरंतर चलता रहे। पांडु को कुंती से एक के बाद एक तीन संतानें हुईं, और इसके अतिरिक्त अपनी दूसरी पत्नी से नियोग साधना के माध्यम से जुड़वाँ संतानें हुईं। एक ओर उनका पति नपुंसक और गंभीर रूप से बीमार था, और दूसरी ओर उनकी पत्नी संतान उत्पन्न कर रही थी। खैर, आप खुद ही निष्कर्ष निकाल लीजिए। आप ही बताइए कि कुरु वंश का वास्तविक उत्तराधिकारी कौन है? सच है, मैं युद्ध में आपका समर्थन मांगने आया हूँ। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात वह समर्थन नहीं, बल्कि धर्म का पालन करना है। आप ही तय कीजिए कि अब धर्म का मार्ग क्या है, मैं जो भी निर्णय हो, उसे स्वीकार करूँगा। यादवों की यह प्रतिष्ठा है कि वे कभी धर्म का त्याग नहीं करते, और यह प्रतिष्ठा बनी रहेगी। सूर्य और चंद्रमा के अंत तक जीवित रहो। केवल इसलिए कि यादव वंश का कोई एक सदस्य धर्म के मार्ग से भटक जाता है, इससे पूरे वंश की प्रतिष्ठा पर कोई असर नहीं पड़ेगा।

अचानक हवा थम गई, हालांकि दुर्योधन स्वयं दासी द्वारा चलाई जा रही हवा का आनंद ले रहा था। लेकिन युयुधन, हालांकि वह नंगे बदन था, पसीने से तरबतर था। मानो उसका शरीर पिघल रहा हो। उसने सोचा कि हस्तिनावती के स्वामी, जो उसके सामने राजसी वैभव में बैठे थे, उनकी उपस्थिति में अपने पहने हुए धोती से पसीना पोंछना अपने आप को अपमानित करना होगा। साथ ही, धोती का इतनी बार इस्तेमाल हो चुका था कि वह बदबूदार हो गई थी। उसने बस आकाश की ओर देखा। शाम धीरे-धीरे रात के अंधेरे में बदल रही थी।

दुर्योधन ने सत्यक से विनम्रतापूर्वक पूछा, "शाम के यज्ञ का समय हो रहा है। क्या मैं जाऊं?"

"आप इसे यहां कर सकते हैं। लेकिन, बेशक, यह किसी राजा या रानी का महल नहीं है।"

"मामा जी, यह दुर्योधन ऐसे छोटे-मोटे भेद नहीं करता। मैं कल सुबह की अग्नि-पूजा और दोपहर के भोजन के लिए आपके घर आऊंगा। कैसा रहेगा? मेरे दादा भीष्म ने यहाँ आने से पहले मुझे सलाह दी थी कि मुझे अपने मामा सत्यक के यहाँ के शानदार भोजन को नहीं छोड़ना चाहिए, वहाँ के व्यंजन अश्वमेध यज्ञ के पारंपरिक भोजन के भी सानी हैं!" दुर्योधन ने कहा।

"क्या सच में?" बूढ़ा व्यक्ति इस दिखावटी चापलूसी से फूला हुआ था, और इसे और भी पुख्ता करने के लिए उसने पूछा, "महान भीष्म को हमारे भोजन के स्वाद के बारे में कैसे पता चला?"

दुर्योधन ने बड़े ही व्यापक उत्तर से प्रश्न को टाल दिया, "ऐसी कौन सी बात है जो पूज्य भीष्म को ज्ञात न हो?" परन्तु सत्यक के लिए इतना कमज़ोर उत्तर भी पर्याप्त था। उसने दुर्योधन से कहा, "तुम्हें कल अवश्य आना। मैं युयुधन को तुम्हें यहाँ लाने के लिए भेजूँगा। अब, युयुधन, महान राजा को बलराम के महल में ले चलो।"

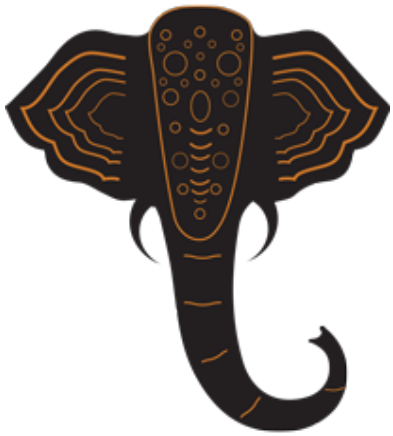
उस रात युयुधन थोड़ा जल्दी सो गया। अंदर, पिता अपनी बहू और रसोइए के साथ अगले दिन के खाने पर चर्चा कर रहे थे। वे एक नौकर को शाही अतिथि के सम्मान में बलि देने के लिए एक जवान बैल लाने का आदेश दे रहे थे। बूढ़ा अपनी बात दोहरा रहा था। हालाँकि पिता के ऊँचे शब्द उसके कानों को भेद रहे थे, युयुधन का मन कहीं और था। उसने सोचा, "पांडवों को राजसूय यज्ञ किए सोलह वर्ष हो गए थे।" वह भी उसमें गया था। उसे याद आया कि उस समय बहुत से लोग गांधारी के यज्ञ की चर्चा कर रहे थे। वे कह रहे थे कि वह आर्य धर्म के सार का अवतार थीं। उन्होंने अपनी दृष्टि का वरदान त्याग दिया क्योंकि उन्होंने उस सुख का आनंद लेने से इनकार कर दिया जो उनके पति को नहीं मिला था। लेकिन वह उन्हें देख नहीं पाए और उस महान देवी से मिलने नहीं गए। इसका सीधा सा कारण यह था कि धृतराष्ट्र राजसूय यज्ञ में नहीं आए थे। ऐसा लगता था कि जन्म से ही उन्होंने अपने जन्म नगर की सीमा से बाहर जाने का साहस नहीं किया था। खैर, अगर वे आते भी, तो अपनी अंधी आँखों से क्या देख पाते? उन्हें अन्य गवाहों की रिपोर्ट पर भरोसा करना पड़ा। उन्होंने कहा कि वे इसे अपने स्थान पर सुनना पसंद करेंगे।

और फिर वह महान पति-भक्त कैसे आ सकती थीं जब उनके पति नहीं आ सके? उसी समय उनके मन में उस महान महिला को श्रद्धापूर्वक देखने की इच्छा हुई। उनके पिता बार-बार कह रहे थे, "इतने महान राजा होते हुए भी इतने विनम्र और सरल स्वभाव के व्यक्ति। यह हमारा सौभाग्य है कि उन्होंने हमारे साथ भोजन करने की कृपा की।" हवा खूब चल रही थी, हालांकि वह हल्की गर्म हवा थी। नींद आ रही थी, लेकिन हवा से गर्मी पैदा हो रही थी। जैसे ही युयुधन ने अपने शरीर को आराम दिया और दूसरी तरफ करवट ली, उन्होंने सोचा कि दुर्योधन सही कह रहा था। दुर्योधन ने कहा था, "हम अपने पिता से उत्पन्न हुए हैं। पांडव अपने असली पिता के अलावा किसी अन्य बीज से उत्पन्न हुए हैं। इसलिए न्याय हमारे पक्ष में है।" युयुधन को लगा कि इस तर्क को गलत साबित करना आसान नहीं है। साथ ही, वे इसे पूरी तरह स्वीकार करने को भी तैयार नहीं थे। कृष्ण की तरह अर्जुन भी उनके मित्र थे। उन्होंने अर्जुन को सुभद्रा से विवाह कराने में सहायता की थी। युयुधन ने चिंतन किया, "पिछले तेरह वर्षों से सुभद्रा मेरी बहन के समान रही हैं, सुबह से लेकर अधिकांश समय हमारे घर में ही बिताती हैं... मैंने अभिमन्यु को धनुर्विद्या का इतना प्रशिक्षण दिया है कि वह मुझे अपना गुरु कह सकता है। नियोग का अभ्यास धर्म के विरुद्ध नहीं हो सकता। आख़िरकार, पति की इच्छा तो यही होती है कि वह एक या तीन पत्नियाँ चाहे..." उन्हें अचानक याद आया कि उन्होंने स्वयं विदेशी बीज बोना पाप माना था। क्या कंस का द्रुमिला के विदेशी बीज से जन्म लेने के कारण ही उसने पूरे यादव वंश पर अत्याचार किया था? विदेशी बीज तो कोयल के घोंसले में कौवे के अंडे के समान है। तो क्या इसका अर्थ यह था कि पांडव कुरु वंश को नष्ट करने के लिए ही पैदा हुए थे? लेकिन इन सबमें सबसे महत्वपूर्ण बात न्याय का सिद्धांत था। उन्होंने आगे विचार करते हुए कहा, "केवल न्याय ही नहीं, बल्कि धर्म भी। सुभद्रा का विवाह किसी पांडव से कराना या हमारे व्यक्तिगत मित्रता और प्रेम जैसे अन्य कारकों को धर्म पर आधारित निर्णय लेते समय नजरअंदाज करना होगा..." तभी उन्हें प्यास लगने लगी। नौकरानी को पानी लाने के लिए बुलाने की अनिच्छा से, क्योंकि इससे उनके विचारों में खलल पड़ता, वे स्वयं उठे, आंगन में रखे पानी के बड़े बर्तन के पास गए, एक पात्र में पानी डाला और जल्दी से पी गए। वे घास के गद्दे पर लौट आए। उन्होंने अंदर उन्हें कर्मभक व्यंजन के बारे में चर्चा करते सुना। उन्होंने फिर सोचा, "लेकिन पांडवों ने कुरु वंश के किसी भी बड़े का अनादर नहीं किया था। वास्तव में, वे दुर्योधन से भी अधिक बड़ों का सम्मान करते

थे। उनमें कंस जैसी क्रूरता नहीं थी। धर्मराज का तथाकथित निरंकुश शासन वास्तव में इतना सौम्य था कि विरोध की कोई आवाज ही नहीं उठी।" जम्हाई लेते और पलंग पर करवटें बदलते हुए युयुधन सोचने लगे कि उग्रसेन ने कंस के साथ भेदभाव क्यों किया, यह सवाल सबसे पहले चित्रा नामक वृद्धा ने उनके मन में डाला था। यह विचार कृष्ण द्वारा नरकासुर से मुक्त कराई गई स्त्रियों से जन्मे बच्चों को अपने पुत्रों के रूप में स्वीकार करने की स्मृति से जुड़ गया। उन्हें याद आया कि कृष्ण ने उनमें से एक के सिर को प्यार से छुआ था और उसका नाम क्रतु रखा था। संक्षेप में, युयुधन मानसिक और नैतिक उथल-पुथल में डूब गए। कंस की क्रूरता का कारण पराये बीज से जन्म लेना था। कृष्ण, जिन्होंने दूसरे बीज से जन्मे बच्चों को अपना पुत्र माना, उन्होंने ही कंस का वध किया था। देवी गांधारी के अंधे पति से संतानें उत्पन्न हुईं। पांडव नियोग के माध्यम से पराये वंश से उत्पन्न हुए थे। कृष्ण ने सक्रिय रूप से उनका पक्ष लिया था। उन्होंने चाहे जितना भी प्रयास किया हो, धर्म के तराजू पर पांडवों और कौरवों के दावों को तौलना उनके लिए असंभव था। उनके मन में पलड़ा संतुलित नहीं हो रहा था। चित्रा का प्रश्न, "उग्रसेन ने कोमल शिशु कंस के साथ भेदभाव क्यों किया?" उन्हें सता रहा था। उन्होंने सोचा कि द्वारका में ऐसे महान वैदिक विद्वान नहीं हैं जो इतने जटिल मुद्दों पर प्रकाश डाल सकें। वे कृष्ण से क्रोधित हो गए। उन्होंने कहा कि वे विराट नगर जा रहे हैं, लेकिन वे वहीं छिपे हुए हैं। इस महत्वपूर्ण समय में वे यहाँ क्यों नहीं हैं? युयुधन ने मन बना लिया कि जब तक कृष्ण मामले को स्पष्ट नहीं कर देते और उनके संदेह दूर नहीं कर देते, तब तक वे पांडवों का समर्थन नहीं करेंगे। उन्होंने कहा कि युद्ध से उनका कोई लेना-देना नहीं है। धीरे-धीरे नींद उन्हें अपनी गिरफ्त में ले रही थी।

—•⁕•—

भाग सात



अध्याय 36

"सचमुच, मैं बहुत जल्दी निकल गया," कर्ण ने मन ही मन कहा। कुत्ता चुपचाप उसके पीछे-पीछे चल रहा था। शायद इसलिए कि उसने व्यायाम नहीं किया था, और इस तरह समय बच गया। लेकिन कितना समय बच सकता था? उसने खुद से पूछा, "आखिर इस बुढ़ापे में, मैं शरीर को व्यायाम देने में कितना समय लगाता? मैं पैंसठ साल का हूँ।" अपने जीवन में पहली बार कर्ण को बुढ़ापा अपने ऊपर हावी होता महसूस हुआ। उसे इसका कोई खास अफसोस नहीं था। न ही कोई गर्व। बल्कि उदासी का भाव था। उत्साह और उमंग दोनों ही कम थे। कर्ण ने याद करते हुए कहा, "इस अँधेरे में मुझे नाव दिखाई नहीं दे रही। इतने सालों से, नहीं, दशकों से, नाव बिना रुके आती रही है। आसमान राख जैसा लग रहा है। मैं मुर्गे की बांग सुनकर ही निकला। शायद मेरी तरह मुर्गे को भी रात को नींद नहीं आई होगी!"

मुर्गे की बांग सुनकर ही समय का पता चलता है, जब मन दिशाहीन भ्रम में डूबा हो। सिर उठाते ही उसने नदी का किनारा देखा। चौड़े स्नान स्थल को छोड़कर, नदी के दोनों किनारों पर घनी, तीन आदमकद ऊँची जंगली घास और पौधे उगे थे। "खैर, ये तो घोर अंधेरी रात में भी दिखाई देते हैं।" फिर कर्ण ने अपना चेहरा आकाश की ओर उठाया। उसे ऐसा लगा जैसे आकाश से राख गिर रही हो और उसके चेहरे को ढक रही हो। वह जानता था कि यह एक भ्रम है और उसे हंसी आ रही थी जब उसे याद आया कि वह कृष्ण से एक ऐसी शाम को मिला था जो बुझते हुए दीपक की रोशनी जैसी थी। क्या वह शाम का अंधेरा था या रात का अंधेरा? मैंने कृष्ण को कभी इतने करीब से नहीं देखा था। इस किनारे से आगे बढ़ते ही उन्होंने कहा, 'कर्ण, लगाम बाँधो, सारथी की जगह से उठो और यहाँ आओ। मुझे तुमसे कुछ बात करनी है।' वे झुके और मेरे पैर छुए, और बोले, 'डरो मत। तुम मुझसे चौदह साल बड़े हो।' तुम मेरी मौसी के सबसे बड़े बेटे हो।’ भ्रम। आसमान राख जैसा दिख रहा है, पर राख की बारिश कैसे हो सकती है? हे भगवान, सिर्फ एक रात की नींद छूटने से ये सब कैसे हो सकता है? पानी की कलकल की आवाज़ के बीच मैंने अपना चेहरा धोया। उन्होंने समझाया, ‘क्या तुम्हें नहीं पता कि कुंती मेरी मौसी हैं? तुम उनके सबसे बड़े बेटे हो।’ मैंने बेवजह अपना चेहरा क्यों धोया? किनारे पर रेत पर लेटा कुत्ता म्याऊं कर रहा था। शायद वह सोच रहा था कि मैं इतनी सुबह और इस अंधेरे में क्यों आया हूँ। मैं बस धुंधले से उस कुत्ते को देख पा रहा था जो लेटा हुआ मुझे देख रहा था। सुबह जब मैं नदी पर जाता था, वह कभी मेरे पीछे नहीं रहता था। मेरा मन करता था कि मैं उसके पास जाऊं और उसे सहलाऊं। कृष्ण ने आगे कहा, ‘मुझे भी नहीं पता था। राजसूय के दौरान ही मैं तुम्हें करीब से देख पाया। जैसे ही मैंने तुम्हारा चेहरा देखा, मैं कुंती के चेहरे से उसकी समानता देखकर दंग रह गया – वही चौड़ी आंखें, माथा, चेहरा और यहां तक कि दांतों की बनावट भी। अचानक मेरे मन में एक शंका पैदा हो गई।’ वहाँ से निकलने के बाद, मैंने कुंतिभोज के महल में पूछताछ की। कल रात मैंने तुम्हारी माता कुंती से पूछा था। उन्होंने मेरे संदेह की पुष्टि की। अभी दिन नहीं निकला था। अँधेरे पानी में कोई अपनी परछाई नहीं देख पाता। मैं वापस आया और कुत्ते को गर्दन से पकड़कर बैठ गया। उसकी पूंछ अपने आप प्यार से हिलने लगी। जब से हम उसे पिल्ला बनाकर लाए थे, तब से ऐसा ही होता आ रहा है। अगर मैं एक दिन के लिए भी शहर से बाहर चला जाता, तो वह खाना नहीं खाता और जीभ नीचे करके लेट

जाता। मैंने उसे गले लगा लिया। प्यार भरी आवाज़ निकालते हुए उसने मेरे शरीर को चाटा। कृष्ण ने आगे कहा, 'कर्ण, मैं तुम्हें कुछ भी करने के लिए मजबूर नहीं करना चाहता। तुम खुद सोचो। तुम्हें ही करना है। अगर तुम हाँ कहोगे, तो मैं पांडवों को खबर पहुँचा दूँगा। वे ज़रूर आएँगे और सम्मानपूर्वक तुम्हारे पैर छुएँगे। वैसे भी दुर्योधन तुम्हारा मित्र है।' वह मेरे घुटनों के बीच दुबक गया और आराम से सो गया। मुझे भी नींद आने लगी। लेकिन मुझे पूरा यकीन था कि उस समय नींद मेरे बस में नहीं थी। पूरी रात मैं बिस्तर पर करवटें बदलता रहा, नींद नहीं आ रही थी। भला ये नींद कैसे आई? मेरे सारे अंग, पूरा शरीर, बुरी तरह दर्द कर रहे थे। मुझे जम्हाई आई। बस आँखें बंद करके बैठा रहा। मुझे हल्की-हल्की नींद आने लगी। कुत्ते को छोड़कर मैं रेत पर लेट गया, अपने शरीर और अंगों को फैलाया। नींद कहीं भीतर से आ गई। मुझे सीधे-सीधे सपने नहीं आए - बस सपनों के टुकड़े, बिखरी हुई छवियाँ, असंबद्ध चित्र। वे सब बेतरतीब थे, कोई क्रम नहीं, कोई पैटर्न नहीं, कोई जुड़ाव नहीं। नदी का पानी शांत, स्थिर और काला पड़ा था। नदी का पानी चित्रों की लहरों में बदल गया, जो मुझ पर छा गईं और मेरी साँस रोक दीं। अचानक डरकर मैं उठा और बैठ गया। कुत्ता मेरे पास आया और मुझे सूंघा। ये कौन सी नदी थी? मुझे हमेशा से नदियों के सपने आते रहे हैं। जब से मैं ऐसी बातें समझने लगा हूँ। बचपन में ज़्यादा और बाद में कम। शादी के बाद, बच्चे हुए और फिर पोते-पोतियाँ हुए, ये सपने लगभग बंद हो गए, शायद एक-दो बार ही आए हों। पिछले आठ-दस वर्षों में एक बार भी नहीं। यह एक ऐसा सपना था जिसमें पानी ज्वार की तरह उठता था, मुझे डुबो देता था और मेरी सांस रोक देता था। शुरुआत में, अगर मैं हर बार इस सपने के आने पर अपनी पत्नी के कंधे न झटकता, तो पता नहीं मुझमें कितना डर पैदा होता! यह एक अजीब सपना था जो बार-बार मेरी नींद खराब करता था। ऐसा लगता था जैसे मेरे पिछले जन्म का कोई पाप मुझे सताने लौट आया हो। जब मैंने दुर्योधन से पूछा कि क्या उसे भी ऐसे सपने आते हैं, तो उसने कहा, 'कभी नहीं।' राजा को लगा कि ये सपने किसी बुरी शक्ति के कारण हैं। उसने मेरे लिए उस बुरी शक्ति को दूर करने के लिए एक अनुष्ठान करवाया। अनुष्ठान के बाद, मुझे दो महीने तक कोई सपना नहीं आया। लेकिन बाद में फिर से वही सपने आने लगे, मुझे सताने के लिए, पानी मुझ पर छा जाता था और मुझे निगल जाता था। भयानक काला पानी।

कुत्ता खड़ा हो गया। उसके कान फड़फड़ा रहे थे और वह अपना शरीर हिला रहा था। मेरा नहाने का मन नहीं था। लेकिन बिना नहाए और सूर्य देव की पूजा किए मैं घर कैसे लौट सकता था? यह तो मैंने कभी किया ही नहीं था। मुझे तारे दिखाई नहीं दे रहे थे। सुबह का एकमात्र संकेत मुर्गे की बांग थी। उसने शायद समय से पहले ही बांग दे दी थी। माँ ने मुझसे झूठ क्यों बोला? मैं उनसे पूछना चाहता था, लेकिन वह वहाँ नहीं थीं। पिताजी भी वहाँ नहीं थे। पड़ोसियों को विश्वास नहीं हो रहा था कि बच्चा उनकी कोख से पैदा हुआ है। क्या वह बांझ औरत थीं जो संतान नहीं दे सकती थीं? या पिताजी नपुंसक थे जो संतान पैदा नहीं कर सकते थे? दोनों ही आरोप झूठे होने चाहिए। इतनी प्रेममयी वह बांझ कैसे हो सकती हैं? मुझे याद है जब मैं सात या आठ साल का था, माँ मुझे गले लगाती थीं और कहती थीं कि मैं कितना मीठा हूँ, और उन्हें मेरे गालों को काटना अच्छा लगता था। पिताजी कहते थे, 'मेरे जैसे धनुष बनाना ही काफी नहीं है, तुम्हें निशाना लगाना और तीर सटीक चलाना भी सीखना होगा।' उनकी इच्छा थी कि मैं एक साधारण व्यक्ति से ऊपर उठूँ। मैं मात्र एक सारथी था—मैं, जिसमें क्षत्रिय रक्त तो था, पर पूर्णतः क्षत्रिय का दर्जा प्राप्त नहीं कर सका, धनुष तो बनाता था, पर धनुर्धर बनने की आकांक्षा नहीं रख सका, रथों का डिज़ाइन तो बनाता था, पर उनका स्वामी नहीं बन सका। उन्होंने मुझे सलाह दी, 'पुत्र, मैंने अपना सारा जीवन धृतराष्ट्र राजा के सारथी के रूप में व्यतीत किया है। तुम्हें कभी किसी और का सारथी नहीं बनना चाहिए।' दिन का उजाला धीरे-धीरे फैल रहा था। दोनों किनारों पर घनी पत्तियाँ अधिक स्पष्ट दिखाई देने लगीं। पानी की ओर पीछे मुड़कर देखने पर मैंने तैरती हुई लकड़ी, तख्तों के टुकड़े, धनुष बनाने के लिए मोड़े गए बाँस और रस्सी बनाने की सामग्री देखी—ये सब पानी में भिगोकर रखे गए थे। तब मुझे समझ आया कि इस तट के लिए सूतघट्टा या सारथियों का तट कितना उपयुक्त था। मैंने इस बारे में कभी सोचा भी नहीं था। लगभग एक हजार कदम दूर क्षत्रियघट्टा था, और उसके बगल में ब्राह्मणघट्टा। घाट वह स्थान होता था जहाँ स्नान किया जाता था और कपड़े धोए जाते थे। यह वह स्थान था जहाँ पानी हमारी जाति के व्यावसायिक कार्यों को पूरा करने के लिए पानी उपलब्ध कराया गया था। वह दृश्य आज भी मेरी स्मृति में स्पष्ट है। सूतघट्टा के पास का पानी रथों के निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री से भरा हुआ था। जब विराट नगर में पांडवों को देखा गया, तो युद्ध अपरिहार्य हो गया, जिससे रथ चालकों को चौबीसों घंटे भरपूर काम मिल गया। चांदनी रातों में हमें रात में भी

काम करना पड़ता था। खैर, अब दिन निकल रहा था। फिर भी स्नान का समय नहीं हुआ था। स्नान के तुरंत बाद, मुझे उगते सूरज को श्रद्धापूर्वक देखने के लिए पूर्व दिशा की ओर मुड़ना पड़ा। मैं कुछ देर चुप रहा। मैं उनसे पूछना चाहता था, लेकिन वे वहाँ नहीं थीं। पिताजी भी वहाँ नहीं थे। जब सब कुछ इतना स्पष्ट हो गया था, तो पूछने के लिए क्या था? या क्या कृष्ण मेरे और मेरे राजा के बीच दरार पैदा करने के लिए झूठ बोल रहे थे? यह असंभव नहीं है कि एक अवांछित बच्चे को नाव में छोड़ दिया जाए और वह बह जाए। ऐसा लगता है कि माता-पिता कुंती नगर के मूल निवासी थे। एक रात बिताने के बाद, सुबह वे नदी के किनारे सूर्य की पूजा कर रहे थे। फिर उन्होंने मुझे नाव में चुपचाप तैरते हुए देखा, एक नन्हा सा बच्चा, मुस्कुराता हुआ। मेरी मुस्कान सूर्य की तरह चारों दिशाओं में प्रकाश फैला रही थी, सात वृत्तों में। पिताजी ने मेरी ओर इशारा करते हुए कहा, 'देखो वहाँ; मैं यहाँ सूर्य देव से प्रार्थना कर रहा था कि वे हमें एक संतान प्रदान करें। ऐसा लग रहा था मानो ईश्वर ने हमें यह उपहार भेजा हो। लो, नाव को पकड़ो।' वे ईश्वर के रहस्य को देखकर चकित थे। अविश्वास और विश्वास से मुझे घूर रहे थे। जैसे ही नाव उनसे दूर जाने लगी, ऐसा लगा जैसे माँ ने चिल्लाकर कहा, 'मेरा बच्चा' और उसके पीछे तैरने लगीं। पिताजी जाग गए, पानी में कूद गए और नाव को किनारे तक खींच लाए। माँ आनंद से भर उठीं, 'प्यारा बच्चा, सुंदर बच्चा।' उन्होंने बच्चे से, यानी मुझसे कहा, 'बच्चे, तुम स्वयं सूर्य देव का उपहार हो। देखो वहाँ, जैसे एक कुम्हार मिट्टी से गुड़िया बनाता है, वैसे ही सूर्य देव ने तुम्हें अपनी चमक के एक अंश से बनाया, तुम्हें अपनी किरणों की नाव में बिठाया और मुझे भेजा। आख़िरकार, क्या यह "क्या वे सारथियों के अधिष्ठाता देवता हैं?" जैसे ही माँ ये शब्द कहतीं, मेरा मन सूर्य जगत तक पहुँच जाता। कितना आनंद! माँ ने मेरे कोमल मन में कैसा स्वप्न रचा और रोपा! जैसे-जैसे मुझे यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि शिशु का जन्म एक स्वाभाविक घटना है, और मुझे यह पता चला कि मेरा जन्म इस माँ के गर्भ के अलावा किसी और गर्भ में हुआ है, एक निर्दयी स्त्री की संतान के रूप में जिसने मुझे अनिश्चित भाग्य के भरोसे छोड़ दिया था, मैं दुखी हो गया। और मुझे इस बात का भी गहरा दुख हुआ कि मैं भी दूसरों की तरह एक स्त्री की संतान हूँ, न कि सूर्य देव द्वारा अपने प्रकाश से विशेष रूप से निर्मित। लेकिन जैसे-जैसे मैं बड़ा हुआ, धनुर्विद्या में निपुण हुआ और राजा दुर्योधन का दाहिना हाथ बना, जिसे उनके तेजस्वी मुकुट में जड़े बहुमूल्य रत्नों में से एक माना जाता था, मैं मन ही मन यह मानने लगा कि मेरा

निर्माण सूर्य के प्रकाश से हुआ है, और साथ ही मैं अपनी माँ राधा के दिव्य पुत्र के रूप में उनके पूर्ण प्रेम और स्नेह का आनंद लेकर प्रसन्न था। जब भी मैं उगते सूरज के सामने खड़ा होकर उनसे प्रार्थना करता, सूर्य के प्रकाश में मेरी भक्ति और भी निखर उठती। किरणें। घर लौटने के बाद, मैं कितनी बार बूढ़ी हो चुकी माँ को प्यार से गले लगाता और उन्हें नरम गद्दे पर लिटा देता! धिक्कार है कृष्ण पर! उन्होंने यह सब नष्ट कर दिया, मुझे सूर्य के अंश होने के मेरे अधिकार से वंचित कर दिया, और मुझे उस दुष्ट कुंती के गर्भ से गिरे हुए शिशु में बदल दिया! इस समय, कर्ण को लगा कि उनकी आँखें अपने आप बंद हो रही हैं। नींद से नहीं, बल्कि भीतर के अंधकार से। वह कुछ देर तक बिना हिले-डुले बैठे रहे। फिर अचानक किसी समाधि से बाहर आने की तरह खड़े हो गए। उन्होंने अपनी धोती, ऊपरी वस्त्र और कवच उतार दिया, और केवल कमरबंद में रह गए। जैसे ही वह पानी में उतरे, आकाश से और प्रकाश आया। हमेशा की तरह, उन्होंने कमर तक पानी में डुबकी लगाई और वहीं खड़े रहे। वह अपने हाथों से धोना नहीं चाहते थे, क्योंकि इससे पानी में हलचल मच जाती। हालाँकि सर्दी पूरी तरह से शुरू नहीं हुई थी, लेकिन गंगा नदी काफी ठंडी थी, क्योंकि वह अपने हिमालयी घर से केवल एक रात की यात्रा करके आई थी। शांत और स्थिर पानी में, उन्होंने अपने शरीर, कंधों, बाहों और चेहरे का प्रतिबिंब देखा। उनके शारीरिक गठन का अंदाजा लगाने के लिए कृष्ण के वर्णन की आवश्यकता नहीं थी। उनके कंधे चौड़े और सीना चौड़ा था। चौड़ा चेहरा। बड़ी सफेद पुतलियों वाली आंखें। छह उंगलियों जितना चौड़ा माथा। कर्ण ने सोचा, "मैंने उस कुंती को कभी ठीक से नहीं देखा। लगता है वह यहीं विदुर के घर में रहती है, इस सूतघट्टा से कुछ दूरी पर, सूतंगी जल घास के झुंड के पार; कहा जाता है कि वह विदुर के घर के पास किनारे पर बैठती है। मैंने पांडवों की माता होने के कारण तिरस्कारवश उसकी ओर देखने से इनकार कर दिया था। मुझे कृष्ण के वर्णन से ही उसके शरीर की बनावट और रूप की कल्पना करनी होगी। हाँ, उन्होंने कहा था, 'कर्ण, तुम उसके बच्चों में से इकलौते हो जो उससे बहुत मिलते-जुलते हो। धर्म, भीम और अर्जुन देवलोक के अपने नियोग पिताओं से मिलते-जुलते हैं। तुम्हारा रंग भी उसी के जैसा है।'..." कर्ण ने पानी की दर्पण जैसी चिकनी सतह पर प्रहार किया, जिससे उसमें लहरें उठ गईं। फिर वह आकारहीन, गहरे पानी में तैरने के लिए कूद पड़ा। यह वही जगह थी जहाँ वह रोज़ किनारे से किनारे तक तैरता था। अब पहली बार, मध्य बिंदु पर पहुँचते ही वह

थका हुआ महसूस कर रहा था। इतना ही नहीं, उसे शांत पानी की गहराई में तेज़ धाराओं का खिंचाव भी महसूस हुआ। उसने सोचा कि अगर उसने विपरीत दिशा में गति नहीं की, तो पानी के नीचे की धाराएँ उसे बहा ले जाएँगी। उसके अंग डर से काँपने लगे। वह ज़ोर-ज़ोर से हाथों और पैरों से पानी पर प्रहार करने लगा। यह पहली बार था जब वह इतनी आवाज़ और ज़ोर से तैर रहा था। उसे अपने तैरने पर शर्म आ रही थी जब उसे अपने बच्चों और पोते-पोतियों को दी गई सलाह याद आई, "तुम्हें सीधा तैरना चाहिए, बिना शोर किए, जैसे कोई कुशल तीरंदाज तीर चलाने के लिए तैयार हो।" किनारे पर बैठा कुत्ता गुस्से से भौंका, मानो उसे लगा कि उसका मालिक पानी में किसी दुश्मन से लड़ रहा है! फिर वह उसकी मदद करने के लिए पानी में कूद गया। कर्ण जानता था कि अगर जानवर पानी के नीचे की धारा के वश में आ गया, तो उसे बचाना मुश्किल होगा। अचानक, दिशा बदलते हुए, वह तैरकर किनारे की ओर वापस आ गया। उसने कांपते हुए कुत्ते को किनारे तक पहुँचाया। फिर जब वह कमर तक गहरे पानी में खड़ा हुआ, तो उसके पैरों के नीचे की कीचड़ भरी ज़मीन धीरे-धीरे धंसने लगी, जिससे उसका सहारा छिन गया। उसे याद आया कि वह पानी में इस तरह दिशाहीन होकर कभी नहीं खड़ा हुआ था। तब तक सूर्य दिखाई देने लगा था। पानी के नीचे उसके शरीर के अंग अविकसित लग रहे थे। सूर्य की स्तुति में प्रार्थना करने का समय हो गया था। आदत के चलते, उसके हाथ प्रार्थना की मुद्रा में जुड़ गए। आँखें अपने आप आधी बंद हो गईं। जीभ अपने आप प्रार्थना बोलने लगी। ब्राह्मणों के लिए, पवित्र अग्नि पूजा का माध्यम थी। क्षत्रियों के लिए, बड़े पैमाने पर अनुष्ठान करने के लिए धन देकर ब्राह्मण पुजारी को बुलाना आवश्यक था। सूत या सारथी जाति के सदस्यों को ये दोनों विकल्प नहीं मिलते थे। कर्ण पिछले पचास वर्षों में पहली बार प्रार्थना का पाठ करते समय लड़खड़ाया। सूर्य ही एकमात्र देवता था जो प्रतिदिन बिना किसी चूक के प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता था। कर्ण के पिता उसे बताया करते थे कि सूत समुदाय का कर्तव्य है कि वह सूर्य के सात घोड़ों वाले रथ के सारथी के रूप में कार्य करे। सूर्य पूजा के दौरान बोले जाने वाले शब्दों का सही उच्चारण करने में कठिनाई होने पर कर्ण बड़ी मुश्किल से अपनी आँखें बंद करके, मानसिक एकाग्रता से सही शब्दों पर ध्यान केंद्रित करने का प्रयास करता था। यद्यपि उसने अपने आलीशान निवास में कई अनुष्ठान ब्राह्मण पुरोहितों से करवाए, फिर भी उसकी भक्ति का केंद्र उगते सूरज के सामने ही था। वह सूर्य देव का सच्चा भक्त था। वह सोचता था कि क्या

उसकी भक्ति का केंद्र उसी प्रकार विचलित हो गया है जैसे पानी में कंकड़ गिरने से उसकी शांति भंग हो जाती है! या शायद सूर्य की तीक्ष्ण किरणें, या पानी की चिकनी सतह का लाल से सफेद हो जाना, और जोन्दु के पत्तों पर सूर्य की चकाचौंध, उसकी भक्ति को भंग कर रही थी।

बस एक बार, बस एक दिन। उसने यंत्रवत प्रार्थना दोहराई, अपनी खोखली हथेली में तीन बार सूर्य को जल अर्पित किया और फिर किनारे पर लौट आया।

कुत्ते ने अपनी पूंछ हिलाई और फिर गर्दन झुकाकर उसके पास खड़ा हो गया, मानो उसके आदेश मानने को तैयार हो। जब उसने खुद को सुखाया, वस्त्र और कवच पहने और किनारे से दूर आया, तो उसने देखा कि बीस-तीस लोग उसका इंतज़ार कर रहे हैं। उसने उन्हें अपने ही लोगों के रूप में पहचाना। वे उसकी जाति के थे। वे स्नान स्थल पर आए थे। जब वह वहाँ होता, तो वे किनारे के पास नहीं जाते, क्योंकि वे उसका बहुत सम्मान करते थे। वे बैठते तक नहीं थे। वे बस वहीं खड़े होकर उसका इंतज़ार करते थे। कर्ण एक क्षण के लिए स्थिर खड़ा रहा। फिर उसने उन्हें एक नज़र देखा, मानो वह उनके आदर को स्वीकार कर रहा हो। सिंहक, जो रथों का प्रसिद्ध डिज़ाइनर और निर्माता था, पास आया, आदरपूर्वक ज़मीन को छुआ और उसे प्रणाम किया। कर्ण ने सिंहक से पूछा, "क्या आप काम के लिए इतनी जल्दी आ गए हैं?"

बहुत काम है। इसे करना ही होगा।

"केवल इतने कम?"

"महामहिम, हमारे लोगों में यह अफवाह फैली हुई है कि युद्ध नहीं होगा।"

"आपको यह किसने बताया?"

"ऐसा लगता है विदुर ने कहा था। लगता है पांडवों की ओर से शांति वार्ता के लिए कोई दूत आया है। उन्होंने उसका नाम भी लिया।" फिर उसने अपने एक मित्र चैत्य से नाम पूछा।

पचास वर्षीय जाति नेता चैत्य अपने बुलावे का इंतज़ार कर रहे थे। वे आगे आए, ज़मीन को छुआ और कर्ण को प्रणाम किया। फिर उन्होंने कहा, "कहा जाता है कि वे पांडवों के रिश्तेदार हैं। लोगों ने कहा कि उनका नाम मुझे याद नहीं है। अगर यह सच है, तो महाराज को ज़रूर पता होगा।"

कर्ण ने कृष्ण का नाम नहीं लिया। उसे याद आया कि पिछली शाम कृष्ण ने उसका हाथ पकड़कर कहा था कि वे सच्ची शांति स्थापित करने आए हैं। कर्ण ने

मन ही मन पूछा, "अगर वे सचमुच शांति चाहते थे तो शत्रु के खेमे में फूट डालने में उनकी क्या रुचि थी? उन्होंने मेरे जन्म की कहानी सुनाकर मेरे मन को भ्रमित कर दिया और सूर्य देव के प्रति मेरी विधिवत भक्ति को भंग कर दिया। क्या वे शांति की झूठी अफवाह फैलाकर हमारे लोगों को भ्रमित करने और हमारी तैयारियों में बाधा डालने की योजना बना रहे थे?"

चैत्य ने आगे कहा, "मेरे बड़े भाई विदुर से मिलने गए। एक बात से दूसरी बात निकली और संयोगवश मेरे भाई ने विदुर को बता दिया कि सूत समुदाय ने सौ रथ बनाने का दायित्व ग्रहण कर लिया है। इस पर विदुर ने टिप्पणी की, 'मूर्ख, युद्ध नहीं होगा। जब युद्ध ही नहीं होगा, तो राजमहल के लोग तुम्हारे रथ कैसे खरीदेंगे? यदि कल वे कहें कि उन्हें रथ नहीं चाहिए, तो तुम क्या करोगे? साधारण रथ तो बिक जाएंगे, लेकिन बिना युद्ध के इन युद्ध रथों को कौन खरीदेगा?..."

कृष्ण विदुर के साथ डेरा डाले हुए थे। कर्ण ने स्थिति का जायजा लेते हुए कहा, "चूंकि मैं वहां नहीं गया, इसलिए कल शाम कृष्ण स्वयं मेरे घर आए। उन्होंने मुझे अपने साथ रथ में थोड़ी देर चलने का न्योता दिया। उन्होंने कहा, 'कोई सारथी न हो, हम दोनों मिलकर रथ चलाएंगे।' क्या मैंने रथ इसलिए चलाया क्योंकि वे अतिथि थे या इसलिए कि वे क्षत्रिय थे और मैं सूत? क्या विदुर, कृष्ण और कुंती ने मिलकर मेरे जन्म और वंश के बारे में झूठी कहानी गढ़ी थी?"

सिंहका ने पूछा, "क्या हम विदुर पर विश्वास कर सकते हैं, महान राजा?"

कर्ण सीधा जवाब नहीं दे सका। सूत समुदाय के लिए, वह और विदुर दो सबसे प्रमुख नेता थे। फिर भी, उनके बीच कभी मतभेद नहीं थे। विदुर धृतराष्ट्र की माता की दासी के पुत्र थे। वे धृतराष्ट्र के सारथी के पुत्र, अधिरथ के पुत्र थे। विदुर में योद्धा के गुण नहीं थे और कर्ण को इन्हीं गुणों के कारण सेनापति का पद दिया गया था। फिर भी विदुर को दरबार में स्थान प्राप्त था। वे कभी-कभी पांडवों के दृष्टिकोण से दुर्योधन को सलाह देते थे, जिसके लिए उनकी कड़ी निंदा की जाती थी। भीष्म ने उन्हें धर्मात्मा की उपाधि दी थी। लोगों का मानना था कि विदुर कभी झूठ नहीं बोल सकते। फिर भी वे सिंहक के प्रश्न का उत्तर कैसे दे सकते थे? कर्ण ने स्वयं को समझाया, "उनकी रणनीति चाहे जो भी हो, मैं अपने स्वामी दुर्योधन के मन को जानता हूँ। और मुझसे बेहतर कौन जानता है?"

कर्ण ने उत्तर दिया, "यह सब झूठ है। युद्ध निश्चित है।"

चैया ने विनती की, "हे महाराज, कृपया युद्ध करवाइए। अन्यथा हम, जो युद्ध सामग्री बनाकर अपना जीवन यापन करते हैं, कैसे जीवित रह पाएंगे?"

कर्ण आगे बढ़ गया। बाकी लोग आदरपूर्वक कुछ दूरी पर उसके पीछे-पीछे चल रहे थे। कुत्ता भी उसके पीछे-पीछे चल रहा था। सूरज पहले ही तेज हो चुका था। उसने फैसला किया कि उसे जल्दी घर जाकर खाना खत्म करना चाहिए और काम के लिए तैयार हो जाना चाहिए। हो सकता है कि दरबार कृष्ण का संदेश और शांति प्रस्ताव सुनने के लिए इकट्ठा हो जाए। या दुर्योधन उसे बुला ले। उसने अपने कदम तेज कर दिए। रास्ते में उसने एक बार जम्हाई ली। किले को पार करके नगर में प्रवेश करते ही पहले किसानों का इलाका आता था, और उसके ठीक बगल में सूत परिवारों का इलाका था। सूत बस्ती के बीचोंबीच कर्ण का आलीशान घर था। यह विशेष रूप से दुर्योधन की देखरेख में उसके लिए बनवाया गया था। कुत्ता दरवाजे पर रुक गया। कर्ण अंदर चला गया। घर के पीछे वाली गली में कुछ कहा-सुनी हो रही थी। उसकी आवाज से उसे समझ आ गया कि उसकी पत्नी इसमें शामिल है। वह सोच ही रहा था कि बात क्या है, तभी अचानक शोरगुल थम गया। उसने सोचा कि उसके आने की खबर से ही कहा-सुनी बंद हुई होगी। बहुत सी पत्नियाँ रखने का उनका पुराना पछतावा फिर से जाग उठा। दुर्योधन के प्रति उनका क्रोध फिर से जागृत हो गया। दुर्योधन ने ही उन्हें इतनी पत्नियाँ रखने के लिए प्रेरित किया था। दुर्योधन ने ही कर्ण को सलाह दी थी, 'देखो, कर्ण, तुम राजा के घनिष्ठ मित्र हो। तुम्हारी हैसियत के लिए एक से अधिक पत्नियाँ होना आवश्यक है। तुम्हारे पास कम से कम चार या पाँच होनी चाहिए।' दुर्योधन एक क्षत्रिय था जिसे दहेज में दासियों का समूह प्राप्त करने की आदत थी। कर्ण जैसे व्यक्ति के लिए जब चाहना संभव होता था, तो दुल्हनों की कमी नहीं होती थी। कर्ण ने मन ही मन दुर्योधन को शाप देते हुए कहा, 'महान राजा ने मुझे सभी क्षत्रिय अवगुण सिखा दिए हैं।' अपने राजा और स्वामी को शाप देने से उसे अच्छा लगा। कर्ण ने पूछा, "बच्चे कहाँ हैं?" दरवाजे के पास प्रतीक्षा कर रही सेविका उनके सामने आई और प्रणाम करते हुए बोली, "शत्रुंजय और विपता अपने बच्चों के साथ धनुर्धर का अभ्यास करने गए हैं। लगता है द्रुमा, वृकारथ और सत्यसेना सेना के घोड़ों की देखभाल करने गए हैं। चित्रसेना और सुशर्मा अपने शिकार के लिए जाल तैयार कर रहे हैं। सुषेना रसोई में है।" "ठीक है" कहते हुए कर्ण नरम आसन पर बैठ गए। कुत्ता दहलीज पर सिर टिकाकर सो रहा था। नदी में हाल ही में नहाने के कारण उसका लाल शरीर चमक

रहा था। कर्ण के मुख्य महल के पीछे कतार में छोटे-छोटे घर थे। पुत्र अपने परिवारों के साथ अलग-अलग इकाइयों में रहते थे और सभी सेना में अलग-अलग कुशल काम करते थे। फिर भी वे सभी कर्ण की इस इच्छा को मानते थे कि पूरा संयुक्त परिवार कर्ण के मुख्य महल में एक साथ भोजन करे। कर्ण अपने भोजन का आनंद तब लेते थे जब उनके छोटे पोते-पोतियां उनके चारों ओर बैठते थे। उन्होंने अपनी पत्नियों के साथ कभी भोजन नहीं किया, जिनसे उन्होंने केवल अपनी प्रतिष्ठा दिखाने के लिए विवाह किया था!

कुछ समय बाद, उनके पुत्र सुषेना ने उन्हें दोपहर के भोजन के लिए बुलाया। सुषेना कर्ण की प्रथम पत्नी गुणकेली का पुत्र था, जिसकी मृत्यु हो चुकी थी। गुणकेली की मृत्यु के बाद, अपने पिता के भोजन की देखभाल करना सुषेना का दायित्व बन गया था। वह अपने पिता की व्यक्तिगत आवश्यकताओं का भी ध्यान रखता था। वह भोजन के समय नियमित रूप से अपने पिता के साथ रहता था। कर्ण ने अपने हाथ-पैर धोए और फिर घर के पीछे बने बड़े ढके हुए आंगन में चले गए। बैठने के लिए बीस लकड़ी के तख्ते आमने-सामने दो पंक्तियों में लगाए गए थे। भोजन लकड़ी की तराशी हुई थालियों में परोसा गया था। जल्द ही कर्ण के अठारह पोते-पोतियां उनके पास दौड़ पड़े, अपने दादा के पास बैठने के लिए होड़ लगा रहे थे। उन्होंने उनमें से प्रत्येक से बात की और उन्हें बैठाया। उन्होंने अपने पुत्र सुषेना को भी बैठाया। जैसे ही थालियां पके हुए चावल, मटन और गाय के दूध जैसे स्वादिष्ट व्यंजनों से भर गईं, बच्चों का शोर शांत हो गया। मांस के टुकड़े चबाते हुए कर्ण कृष्ण के विचारों में डूबे हुए थे। उन्होंने जाना था कि कृष्ण ने छल से जरासंध का वध कराया था। कर्ण को ज्ञात था कि कृष्ण मनुष्य के स्वभाव और इरादों को भलीभांति समझते हैं। उसे लगा कि उसने पूरी रात जागकर इन बातों के बारे में सोचते हुए व्यर्थ ही बिता दी। उसने सोचा कि भोजन के बाद थोड़ी देर सोकर इसकी भरपाई कर लेगा। तभी सामने वाली पंक्ति में बैठा आखिरी लड़का—कौन था? जी हाँ, द्रुमा का तीसरा पुत्र, विश्वजीत, रोने लगा। उसके बगल में बैठी, विकरथ की सबसे बड़ी संतान, एक चंचल और हंसमुख लड़की थी। लड़का इसलिए रो रहा था क्योंकि उसने अपना हाथ उसकी थाली में डालकर एक निवाला चुरा लिया था! कर्ण अपनी हंसी नहीं रोक पाया। उसने लड़की को डांटते हुए कहा, "देखो। कभी दूसरों की थाली में हाथ मत डालो।" कर्ण को अपनी माता राधा याद आ गई, जिनका निधन केवल छह वर्ष पहले हुआ था। लेकिन दूसरी माता या

तथाकथित माता, कुंती, तेरह वर्षों से विदुर के घर में रह रही थीं। क्या उन्हें यह नहीं पता था कि वह उनका पुत्र है? उसने एक बार भी अपनी माँ की सहेली से संपर्क क्यों नहीं किया और उसके ज़रिए उसकी पहचान करके उससे बात क्यों नहीं की? या यह सब धूर्त कृष्ण द्वारा गढ़ा गया झूठ का पुलिंदा था? उसे याद आया कि उसकी माँ बच्चों से बहुत प्यार करती थी। उसे याद आया कि जब वह अपने बेटों, शत्रुंजय, विपता और द्रुमा पर गुस्सा होकर उन्हें पीटने की कोशिश करता था, तो वह बच्चों के पास दौड़कर जाती, उन्हें गले लगाती और मेरा हाथ उनसे छुड़ा देती। कर्ण ने आह भरी, "कितना अच्छा होता अगर मेरा चेहरा इस कुंती के बजाय उनका होता?" उसे याद आया कि उनका चेहरा लंबा था और माथा छोटा था। उसने एक बार फिर जम्हाई ली। लेकिन उसके मन ने उसे बताया कि नींद उसे नहीं आने वाली।

उसने कहा, "सुषेना, क्या तुमने कुत्ते को खाना खिलाया?" बेटे ने कोई जवाब नहीं दिया। कर्ण समझ गया, उठा और अपनी थाली लेकर बाहर के आंगन में गया और उसमें से खाना कुत्ते को खिला दिया। फिर वह अपनी थाली लेकर वापस आया और अपना भोजन जारी रखा। रसोइए ने थाली में फिर से खाना भर दिया।

सुषेना ने अपने पिता से पूछा, “पिताजी, आपको रात भर नींद नहीं आई। आप बिना किसी कारण के बार-बार दरवाजे तक जा रहे थे और उसे खोल रहे थे। ऐसा क्यों?” कर्ण ने अपने बेटे के चेहरे की ओर देखा। सुषेना ने आगे कहा, “देखिए पिताजी, अभी भी आपकी आंखें नींद की कमी से लाल हैं और आपके गाल पिचके हुए लग रहे हैं।”

कर्ण ने उत्तर दिया, "नींद नहीं आई।" फिर वह अपने मुंह में खाना ठूंसने लगा।

“कल शाम आप पांडवों के दूत कृष्ण के साथ अकेले रथ में बैठकर इतनी लंबी दूरी तक गए थे। अंधेरा था। जब आप लौटे तो काफी देर हो चुकी थी। आपने शत्रु के साथ अकेले जाने का जोखिम क्यों उठाया?”, पुत्र ने पूछा।

"इसके साथ गलत क्या है?"

"वापस आने के बाद आपने कुछ नहीं खाया। पूरी रात आपको ज़रा भी नींद नहीं आई। क्या कोई ऐसी बातचीत हुई जिससे आप परेशान हुए? या क्या कोई ज़हर दिया गया था?"

मैंने कुछ नहीं खाया, कुछ नहीं पिया।

क्या किसी को केवल भोजन या पेय से ही जहर दिया जा सकता है? अंधेरे में, जहर से युक्त कांटे को धीरे से चुभोकर भी पर्याप्त प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है। हम नाग बाण को जहर से युक्त करके प्रयोग करते हैं। ठीक इसी तरह।

"नहीं। वहां ऐसा कुछ भी नहीं था।"

सुषेना चुप रही। कर्ण को अपने मुँह में भरे भोजन को पचाने में कठिनाई हो रही थी। चाहे वह जीभ से उसे नीचे धकेलने की कितनी भी कोशिश करे, भोजन नीचे नहीं उतर रहा था। अपने पुत्र की नज़र में आए इस खालीपन को देखते हुए, उसने जल्दी से भोजन निगल लिया। लेकिन थाली में जो भोजन बचा था, वह वैसे ही पड़ा रहा।

भोजन की रस्म पूरी करने के बाद, उन्होंने अपने सभी पोते-पोतियों से थोड़ी देर बातचीत की, उनके गालों को सहलाया, उन्हें चूमा और फिर अपने पलंग पर चले गए। वे मोटे ऊनी कंबल से ढके गद्दे पर लेट गए। आँखें अपने आप बंद हो गईं। माता राधा का दुबला-पतला शरीर। पिता अधिरथ का कमजोर शरीर, हड्डियों का ढाँचा, मांस का ढाँचा कम। उनका चौकोर चेहरा। उनके पिता ने कहा था, "पुत्र, मैं सारथी बन गया। लेकिन तुम्हें इससे बेहतर अवसर मिलना चाहिए। तुम्हें रथ में सवार योद्धा बनना चाहिए। मुझे जो भी थोड़ा-बहुत धनुर्विद्या आती है, मैं तुम्हें सिखा दूँगा। हम अभी निकल सकते हैं।" हस्तिनावती में धनुर्विद्या के सर्वश्रेष्ठ गुरु कृपाचार्य थे। कोई भी राजकुमार धनुर्विद्या सीखने में रुचि नहीं रखता था। कर्ण ने सोचा, "दुर्योधन मुझसे बारह साल छोटा है। और धर्मराज दस साल। मुझे बताया गया था, यह कृपा ज्यादा ज्ञानी नहीं है। जो कुछ भी वह सिखाता है, वह पर्याप्त नहीं है। बेहतर होगा कि तुम किसी अच्छे गुरु के पास जाओ, उनकी लगन से सेवा करो और उनके चरणों में बैठकर सीखो।" माँ मुझे जाने देने से डरती थीं, एक अनजान गुरु की तलाश में भटकने से। डर से ज़्यादा स्नेह और प्रेम था जो मुझसे बिछड़ने को सहन नहीं कर सकता था। 'क्या हम क्षत्रिय नियमित गुरु से ही सीखने पर ज़ोर देते हैं? नहीं, नहीं, तुम्हें नहीं जाना चाहिए।' मैं तब अठारह साल का था, लेकिन अपनी उम्र के हिसाब से लंबा था। मेरा शरीर बड़ा था, और जब हम साथ खड़े होते थे, तो मेरी माँ का सिर मेरी गर्दन तक भी नहीं पहुँचता था। उनका लंबा चेहरा अक्सर मेरे सामने आता है। मैं सचमुच भाग्यशाली था। वह अपने बेटे को साठ साल का होते देखने के लिए जीवित रहीं। अपने जीवन के अंतिम दिनों में, मेरे समुदाय के अन्य सदस्यों की तरह, उन्होंने भी मुझे महाराजा कहकर संबोधित करना शुरू

कर दिया। जब मैंने उनसे मुझे महाराजा नहीं बल्कि किसी और नाम से संबोधित करने के लिए कहा, तो उन्होंने मेरी बात नहीं सुनी। बचपन में। मुझे महाराजा कहने का उनका क्या मतलब था, यह मैं नहीं जानती थी! शायद इसलिए कि उन्हें पता था कि मैं आखिर एक क्षत्रिय संतान थी! मेरे जन्म का रहस्य अपने गर्भ में छिपाए हुए ही उनकी मृत्यु हो गई। मेरे जन्म के सच को अपने प्रेम में लपेटे हुए ही उनकी मृत्यु हुई। क्या उन्हें कुंती के लिए कोई सम्मान नहीं था, जो उनकी पुरानी प्रेमिका बनकर इस शहर में रहने आई थीं? या फिर वे किसी संभावित बदनामी से बचने के लिए डरी हुई और चुप रहना पसंद करती थीं? पांडु की दुल्हन बनकर विधिपूर्वक यहाँ आने के बाद कुंती कितने समय तक इस शहर में रहीं? क्या उस समय भी उन्होंने कुंती से मुलाकात नहीं की? उन्होंने कुंती को नहीं देखा। या शायद उन्होंने उनसे मिलने की कोशिश की हो, लेकिन उनका स्वागत ठंडे तरीके से किया गया और फिर कहा गया, 'राधा, तुम्हें मुझसे फिर कभी नहीं मिलना चाहिए।' मुझे आश्चर्य होता है कि क्या कुंती ने अपने पहले बच्चे के बारे में जानने की परवाह की होगी। ऐसा लगता है कि कुंती एक नपुंसक पति के साथ निःसंतान रहीं। सच कौन जानता है? और माँ ने इसे निगल लिया और अपने गर्भ में सुरक्षित रखते हुए मर गईं। शायद कुंती को माँ के बारे में कोई जानकारी ही नहीं थी। इस शहर में किसी से शादी करना। खैर, मैं माँ के मन को अच्छी तरह जानती थी। कुंती के मन को समझना तो नामुमकिन है। उस समय भी, उन इलाकों के क्षत्रियों में यह चलन प्रचलित था कि बिना शादी के बच्चे पैदा करना शर्मनाक और घृणित बात है। अब तो इन इलाकों के क्षत्रियों ने भी इस प्रथा को अपनाना शुरू कर दिया है। क्षत्रियों के ये बदलते चलन कितने अजीब लगते हैं! दुर्योधन और दुस्साना की बेटियों को दूसरे पुरुषों से संबंध रखने की सख्त मनाही थी। हमारे सूत समुदाय ने अभी तक इस मामले में क्षत्रियों का अनुकरण नहीं किया है। अगर वे ऐसा करते, तो क्षत्रिय पुरुषों की वासना को संतुष्ट करने के लिए अविवाहित, युवा लड़कियाँ कहाँ से आतीं? अचानक कर्ण के मन में एक विचार कौंधा। उसे याद आया कि किशोरावस्था में वह और दुर्योधन अपनी यात्राओं के दौरान नौकरानियों के साथ कैसे मजे करते थे! उनमें से कई सूत समुदाय की थीं। यह सोचकर कर्ण शर्म से लाल हो गया। वे उसके समुदाय और जाति की थीं। कर्ण और दुर्योधन ने अपने यौन कारनामों के बारे में आपस में चर्चा की थी। कर्ण अब भी इस प्रथा में लिप्त था। उसकी उम्र तिरपन वर्ष थी। क्षत्रिय स्त्रियाँ कमरबंद की पवित्रता और गर्भ की शुद्धता के नियमों

का पालन करती थीं। उसका मन उसकी स्मृति के साथ तरह-तरह के खेल खेल रहा था। कुछ बातें जो अब उसकी स्मृति में उभर रही थीं, उन्हें उसने पहले कभी याद नहीं किया था। उसने सोचा, "अभी ही क्यों?" उसे जम्हाई आई। उसने उम्मीद जताई, "शायद आज दरबार नहीं लगा है।" उसके शरीर को नींद की सख्त जरूरत थी, कम से कम थोड़ी सी नींद तो चाहिए थी। जैसे ही उसने शरीर को फैलाया और चेहरा ऊपर करके लेट गया, आँखें बंद कर लीं, वह गहरी नींद में डूब गया। उसका मन जो भंवर में फंसा हुआ था, एक घड़े की तरह हो गया था, जो एक अथाह कुएँ में उतर रहा था। घड़े की तरह, वह भीतर से गर्म था, लेकिन कब तक, शायद अनंत काल तक या कुछ ही क्षणों में, वह गहरे पानी से भर गया। वह गहरा पानी बाढ़ में बदल गया और चारों ओर सब कुछ निगल गया। वह डर गया और अचानक जाग गया। यह एक भयानक सपना था जो उसे किसी दुष्ट आत्मा की तरह सता रहा था, मानो उसकी नींद खराब करने के लिए घात लगाए बैठा हो। वह दूसरी तरफ मुड़ गया, इस सपने से निपटने का कोई रास्ता न सूझ रहा था। एक बार फिर, वह स्मृतियों की दुनिया में डूब गया, "छोटी नाव उफनती नदी के बीचोंबीच बह रही थी। आँखों में दर्द से जलन हो रही थी। इतनी गहरी जम्हाई ली कि गाल की हड्डियाँ लगभग अपनी जगह से हट गईं। घर के सामने के आँगन में बच्चों का शोरगुल था। वे तेज़ धूप में कौन से खेल खेल रहे थे? किसने कहा, 'मैं तीर चलाऊँगा। मैं अपने तीर से कुएँ से गेंद निकालूँगा।' क्या यह सत्यसेना का पुत्र विश्वजीत था? शायद। हाँ, यह उसकी आवाज़ थी। मैंने बच्चों को सिखाया था। लेकिन भीष्म ने नियम बनाया था कि गैर-क्षत्रियों को तीरंदाजी की सूक्ष्म कलाएँ नहीं सिखाई जानी चाहिए। इसलिए, मुझे द्रोण के विद्यालय में कभी पूर्ण रूप से प्रवेश नहीं मिला। मुझे इतना ही सिखाया जा सकता था कि मैं एक सेवक या सारथी के सहायक का काम कर सकूँ। पिताजी ने कहा था, 'बेटा, ये क्षत्रिय ऐसे ही होते हैं, बिलकुल स्वार्थी। क्या तुमने परशुराम का नाम सुना है? वे सुदूर अतीत में रहते थे। उन्होंने क्षत्रियों की कमर तोड़ दी थी।' उन्हें बड़े पैमाने पर नष्ट कर रहे थे। वे भार्गव वंश के थे। इस वंश के ब्राह्मण अभी भी मौजूद हैं। उनके पास जाओ। उन्होंने किसी क्षत्रिय को शिक्षा न देने की प्रतिज्ञा की है। वैसे भी हम क्षत्रिय नहीं हैं। उन्हें बताओ कि तुम क्षत्रिय नहीं हो, पूरी श्रद्धा से उनकी सेवा करो, कड़ी मेहनत करो और जो कुछ वे सिखा सकें, सीखो। मैं तुम्हारे जैसी लंबी भुजाओं वाले किसी को नहीं जानता, जो धनुर्विद्या के लिए आदर्श हैं। पिताजी इस विचार से ग्रस्त थे कि उनका

पुत्र धनुर्विद्या का उस्ताद बने! क्या मैं उनसे कम महत्वाकांक्षी नहीं था? सामान्य धनुर्विद्या में महारत हासिल किए बिना कोई अग्नि बाण का उपयोग कैसे कर सकता है? मेरे गुरु भार्गव ने मुझे इतनी लगन से सिखाया! यह बहुत ही कठोर प्रशिक्षण था, अच्छी तरह और व्यवस्थित रूप से सिखाया जाता था, केवल तभी जब शिष्य स्वयं मुझसे इसकी अपेक्षा करता था। यह द्रोण के प्रशिक्षण से भी कठिन था। द्रोण ने महान प्रतिबद्धता दिखाई। या फिर वे बस कुछ सामान्य तरकीबें सिखाते थे जो आरामपसंद शाही युवाओं को प्रसन्न करती थीं। भार्गव के साथ कोई आधा-अधूरा काम नहीं था, एकाग्रता से कोई ढिलाई नहीं थी। भक्ति। जब मैं पहली बार उनके पास गया, तो उन्होंने मुझसे कहा, 'बाल वासुषेना, तुम्हारी भुजाएँ, कंधे और चौड़ा सीना, ये सब एक कुशल धनुर्धर बनने के लिए उपयुक्त हैं। एक उत्कृष्ट योद्धा बनने के गुण। दुर्भाग्य से तुम मेरे पास छह-सात साल देर से आए हो। इस उम्र में उतना अच्छा और उतना अधिक नहीं सीखा जा सकता जितना कि छोटी उम्र में। फिर भी, आशा मत छोड़ो। पूरी एकाग्रता से अध्ययन करो।' अगर मैंने अपने जीवन की सबसे बड़ी गलती न की होती, तो मैं उनके साथ अपना प्रशिक्षण पूरा कर लेता। काश, मुझमें इतना दृढ़ निश्चय होता कि मैं कोई रहस्य उजागर न करता! मैं भीतर से अत्यंत प्रसन्न था क्योंकि मैंने यह कला सीख ली थी। लेकिन मेरे भीतर एक तीव्र क्रोध उमड़ रहा था क्योंकि मैं इस रहस्य को छुपाने के लिए बेताब था कि मैंने, सूत ने, अपने गुरु से यह झूठ बोला था कि मैं ब्राह्मण हूँ ताकि मैं उनकी शिक्षाओं का लाभ उठा सकूँ। रहस्य छुपाना सीखना चाहिए, उन्हें अपने भीतर रखना चाहिए, जैसे मेरे माता-पिता ने किया जिनके रहस्य उनके साथ ही मर गए। शायद उन्होंने अकेले में इस बारे में बात की हो। शायद! मैंने भगा को एक सच्चा मित्र माना। लेकिन उसने अपने छल से मुझे धोखा दिया। नहीं, यह कोई छल या कपट नहीं था। उसे लगा कि उसे कोई राज़ पता चल गया है। इसे अपने तक सीमित न रख पाने के कारण उसने इसे बता दिया। दूसरों को दोष क्यों देना? गलती पूरी तरह मेरी थी। गुरु ने मुझसे पूछा, 'वासुशेन, तुमने अपनी जाति के बारे में झूठ क्यों बोला?'

मेरे हाथ-पैर कांपने लगे और पूरा शरीर पसीने से भीग गया। मैंने उत्तर दिया, 'आदरणीय गुरुदेव, मैंने आपको धोखा देने के लिए झूठ नहीं बोला। मेरा उद्देश्य केवल ज्ञान प्राप्त करने की तीव्र इच्छा थी। क्योंकि मुझे पता चला था कि आप किसी गैर-ब्राह्मण व्यक्ति को शिक्षा नहीं देते...'

गुरु ने कहा, 'नहीं। हमारा नियम तो यही है कि हम कभी भी किसी क्षत्रिय को शिक्षा नहीं देते।'

उनके स्पष्टीकरण से मुझे कुछ हिम्मत मिली और मेरी उम्मीद फिर से जाग उठी। मैंने जवाब दिया, 'मैं क्षत्रिय नहीं हूँ।'

गुरु ने कहा, "पर तुम सूत हो। यह क्षत्रिय जाति की स्त्रियों के गर्भ में बोए गए क्षत्रिय बीजों से उत्पन्न समुदाय है। यह तेजी से बढ़ने वाली जाति है। इसका बीज प्रजनन के सिद्धांत द्वारा निर्देशित होता है। वैसे भी, सूत क्षत्रियों की सेवा में ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं। इसलिए, मैं तुम्हें अभी शिक्षा नहीं दूंगा। तुम चले जाओ।"

कर्ण अचानक जाग उठा। उमस तो नहीं थी, फिर भी वह पसीने से तरबतर होने लगा। उसे एहसास हुआ कि भार्गव का यह कथन कि सूत क्षत्रियों के वफादार सेवक होते हैं, उसके मामले में सच साबित हुआ। उसका जीवन उसके लिए कोई रहस्य नहीं था। वह इससे विशेष रूप से असंतुष्ट भी नहीं था। फिर भी अतीत की यादें उसे सताने लगीं। सिर्फ यादें ही नहीं, बल्कि कुछ समझ भी। कुछ चीजों के प्रति एक नई जागरूकता। अब उसे एहसास हुआ कि बीज ही फल का स्वभाव निर्धारित करता है। महान ऋषि भारद्वाज ने एक कुम्हार स्त्री से संतान उत्पन्न की और द्रोणाचार्य को अपना पुत्र मान लिया। संतान की पहचान माता से नहीं, बल्कि पिता से होती है। प्राचीन काल में शारद्वंत ने एक आदिवासी स्त्री से कृपा और कृपी को जन्म दिया, लेकिन उन्होंने उन्हें अपना पुत्र मानकर ब्राह्मण बना दिया। प्रख्यात ऋषि पराशर ने एक मछुआरे स्त्री से कृष्ण द्वैपायन नामक सांवले बालक को जन्म दिया और वह पुत्र वैदिक विद्या के महानतम विद्वानों में से एक बन गया। जी हाँ, बीज ही फल का स्वभाव निर्धारित करता है। तब कर्ण ने मन ही मन पूछा, 'यदि ऐसा है, तो क्षत्रियों ने कृषक समुदाय की स्त्रियों से उत्पन्न संतानों को क्षत्रिय क्यों नहीं माना, बल्कि उन्हें सूत नामक एक अलग और निम्न जाति के रूप में क्यों रखा? उन्होंने उनकी संतानों को अपना क्यों नहीं माना? और इस प्रकार क्षत्रियों की सेवा के लिए उत्पन्न हुई यह जाति अत्यंत तीव्र गति से बढ़ी। धृतराष्ट्र नामक एक व्यक्ति ने छियासी सूतों को जन्म दिया। तो फिर दुर्योधन, दुस्साना और अन्य तेरह बंधुओं ने कितने सूतों को जन्म दिया होगा? यदि आर्यावर्त के सभी राजाओं द्वारा उत्पन्न सूतों की कुल संख्या गिनी जाए, तो यह संख्या कितने हज़ार होगी? क्षत्रियों की संख्या से दस गुना या सौ गुना? "कृषकों की जनसंख्या क्षत्रियों की जनसंख्या से

कहीं अधिक तेज़ी से बढ़ रही है..." उसने जम्हाई ली, लेकिन नींद नहीं आई। फिर उसने नौकरानी को आवाज़ दी और पानी लाने को कहा। नदी का मीठा पानी उसे अच्छा लगा। उसे पूरे शरीर में ठंड लग रही थी। वह कुछ देर तक अंधेरे कमरे में अकेला बैठा रहा, और उसका मन शांत हो गया, अब वह यादों में उलझा नहीं था। सामने के हॉल में मक्खियाँ ज़ोर से भिनभिना रही थीं। कर्ण ने सोचा कि मन का शांत रहना अच्छा है, न अतीत में उलझना और न वर्तमान में। पिछली शाम के बाद पहली बार कर्ण को मन की शांति मिली। वह सोच रहा था कि मन नियंत्रण से बाहर क्यों हो जाता है और अपनी मर्ज़ी से नाचता है। और जब मन करता है, शांत भी हो जाता है। मन के रहस्यों को लेकर उसकी उलझन ने उसकी शांति को भंग नहीं किया। यहाँ तक कि मक्खियाँ भी भिनभिनाने के बाद अचानक शांत हो गईं। फिर वे एक अलग धुन पर दोबारा भिनभिनाने लगतीं। जब यह सब चल रहा था, नौकरानी ने कमरे में झाँका। कर्ण ने अपना सिर उसकी ओर घुमाया। दिशा।

उसने बताया, "राजमहल से रथ आ गया है।"

कर्ण उठकर बाहर चले गए। उन्होंने द्वार पर दुर्योधन के सबसे प्रिय और करीबी सारथी सुनामा को देखा। कर्ण को देखते ही सुनामा ने प्रणाम किया और कहा, "मुझे आपको तुरंत ले जाने का आदेश मिला है।" दुर्योधन की यह प्रथा थी कि जब भी कोई अत्यावश्यक कार्य होता था और कर्ण के रथ को तैयार होने में लगने वाला समय कम करना होता था, तो वह कर्ण को अपने रथ में ही ले जाते थे। इसलिए कर्ण ने अनुमान लगाया कि यह किसी महत्वपूर्ण परामर्श के लिए होगा। सारथी ने आगे कहा, "दरबार की बैठक भी होगी।" कर्ण अंदर गए, रेशमी धोती, रेशमी आंवला, सीने पर कवच, बाजूबंद और हार पहना। सुषेण ने मोतियों का हार पहनाया और सिर पर पगड़ी बांधी। जब रथ सूत गली से गुजरा, तो रास्ते में या अपने आंगन में बैठे लोग कर्ण के सम्मान में खड़े हो गए। लेकिन क्षत्रिय बस्ती के लोग नहीं उठे। उन्होंने केवल मुस्कुराकर और सिर हिलाकर अपना सम्मान व्यक्त किया। कर्ण ने मन ही मन सोचा, "अगर उन्हें पता होता कि मैं क्षत्रिय हूँ, कुंती का पुत्र हूँ, तो वे भी खड़े हो जाते।" रथ ने सूत क्षेत्र की तुलना में क्षत्रिय क्षेत्र को कम समय में पार कर लिया, क्योंकि सूत क्षेत्र अपेक्षाकृत छोटा था।

दुस्साह द्वार पर प्रतीक्षा कर रहा था। दुर्योधन उसके आने का इंतज़ार कर रहा था। उसके साथ दुस्साना और शकुनि भी थे। उसके बाकी ग्यारह भाइयों को इस उच्च स्तरीय परामर्श में आमंत्रित नहीं किया गया था। दुर्योधन ने कर्ण को अपने

पास बैठाया और बिना किसी भूमिका के बोला, "देखिए, कल हमने उसका स्वागत करने में देरी करने का निर्णय लिया था। हमने ऐसा इसलिए किया क्योंकि हमें लगा कि उससे औपचारिक रूप से मिलने और उसका स्वागत करने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिए हमने सोचा कि महान व्यक्ति को हमसे मिलने से पहले चार दिन प्रतीक्षा कराना अच्छा रहेगा। मुझे लगता है कि यह सही निर्णय था। लेकिन फिर मैंने सोचा कि उससे मिलने की रस्म जल्दी पूरी कर लूँ और बिना किसी देरी के उसे द्वार से विदा कर दूँ।"

कर्ण ने पूछा, "क्यों?"

दुर्योधन ने कहा, "खैर, वह किसी भी देरी का फायदा उठाकर अपना मकसद पूरा करेगा। लगता है कल दोपहर को वह दादाजी से मिलने गया था। रात में उसने द्रोणाचार्य से मुलाकात की। आज सुबह वह युयुत्सु गया और वहीं भोजन किया। लगता है कल शाम को वह आपके घर आया और आपको रथ में बिठाकर ले गया। बेशक, उसका अनाज आपके साथ नहीं पकेगा। लेकिन मुझे बाकी लोगों के बारे में इतना यकीन नहीं है, जो उसकी चालाकी में आसानी से फंस सकते हैं। इसके अलावा, उनका झुकाव पहले से ही पांडवों की तरफ है। और आप यकीन मानिए, वह मेरे माता-पिता से भी मिलने जाएगा। वह हमारी पत्नियों के चक्कर लगाने और उनके बीच बुराई फैलाने से भी नहीं हिचकिचाएगा।"

कर्ण को पसीना आने लगा। उसे इस बात का डर सताने लगा कि कहीं दुर्योधन को कृष्ण की कही बातें पता न चल गई हों। लेकिन दुर्योधन द्वारा खुलेआम उसकी वफादारी को स्वीकार करके उस पर भरोसा जताना उसके लिए राहत की बात थी।

दुस्साह आकर बोला, "उन्होंने तुम्हें बुलवाया है। कृष्ण का रथ दरबार के बाहर आ गया है!"

दुर्योधन तुरंत उठ खड़ा हुआ। बाकी तीनों भी उसके पीछे-पीछे उठे। वे जल्दी से दरबार में चले गए। भीष्म, द्रोण, विदुर, कृपा और अन्य लोग अपने राजकुमार के सम्मान में अपनी सीटों से उठ खड़े हुए। बगल वाले सिंहासन पर बैठे राजा धृतराष्ट्र नहीं उठे। बैठते ही दुर्योधन ने कहा, "दूत को बुलवाने से पहले, हमें यह स्पष्ट कर लेना चाहिए कि उसके साथ कैसा व्यवहार किया जाना चाहिए। याद रखें, वह कोई ताजपोशी वाला दूत नहीं है। इसलिए, द्वारपाल उसे बुला लाए। और उसके प्रवेश करने पर कोई भी न उठे।"

एक मिनट के लिए सभा में सन्नाटा छा गया। थोड़ी देर बाद भीष्म बैठे-बैठे बोले, "मैं स्वयं ताजपोशी वाला शासक नहीं हूँ। क्या आपका मतलब यह है कि जब मैं दूसरे राज दरबारों में जाऊँ, तो कोई खड़ा न हो?"

दुर्योधन ने कहा, "ठीक है, आप भले ही राजा न हों, लेकिन आप सर्वत्र आदरणीय व्यक्ति हैं। मैंने स्वयं देखा है कि कृष्ण को उनकी अपनी द्वारका में भी कम सम्मान प्राप्त है। इसके अलावा, यह भी प्रश्न है कि यह दूत मित्रतापूर्ण इरादों से आ रहा है या शत्रुतापूर्ण इरादों से।"

इस विषय पर कुछ चर्चा हुई। अंत में भीष्म खड़े हुए और बोले, "जो जरासंध को पराजित कर सके और जिसने हमारे वंश के सदस्यों को राजसूय विधि का सफलतापूर्वक पालन करने में सहायता की, उसके सिर पर मुकुट हो या उसके बाल मेरे समान सफेद हों, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। एक क्षत्रिय को पूर्ण राजसी सम्मान मिलना चाहिए। मैं स्वयं जाकर उसका स्वागत करूंगा और उसे यहाँ लाऊंगा।" इतना कहकर वे सभा से चले गए। विदुर, द्रोण और कृपा उनके पीछे-पीछे गए। कर्ण अपनी सीट से नहीं हिला। वह भी यही मानता था कि भले ही कृष्ण मुकुटधारी राजा न हों, उनका स्वागत और सम्मानपूर्वक अभिनंदन किया जाना चाहिए। परन्तु भीष्म के इस तर्क से वह सहमत नहीं था कि सभी क्षत्रियों को, चाहे वे मुकुटधारी हों या न हों, राजसी सम्मान मिलना चाहिए। वहाँ केवल कृष्ण ही नहीं थे, बल्कि उनके साथ युयुधन सत्यकी भी थे। उन्हें राजसूय विधि के दिनों में सत्यकी को देखने की धुंधली सी स्मृति थी। इन दोनों के अलावा, लगभग बीस व्यक्ति, उत्तम वस्त्रों में, प्रवेश कर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि वे सभी द्वारका से आए थे। वे कृष्ण के साथ आर्यावर्त में सबसे भव्य माने जाने वाले हस्तिनावती शासकों के प्रसिद्ध दरबार की शान-शौकत देखने आए थे। केवल कृष्ण और युयुधन को ही एक-दूसरे के बगल में बैठने का सम्मान प्राप्त था। बाकी सभी आम आगंतुकों की तरह खड़े थे, उनकी आँखें दरबार की भव्यता और समारोह को देखकर फटी रह गईं। औपचारिक शिष्टाचार के बाद, कृष्ण ने कर्ण की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि डाली। लेकिन कर्ण ने उनकी ओर नहीं देखा। कर्ण कृष्ण की यात्रा का परिणाम पहले से ही जानता था। वास्तव में, सभी को पता था कि क्या होने वाला है। कर्ण चुपचाप बैठा था, औपचारिक रस्मों को पूरा होने दे रहा था। एक बार तो उसे जम्हाई भी आई। उसे नींद आ रही थी। वह सुस्त और उदास महसूस कर रहा था। लेकिन फिर यह महसूस करते हुए कि यह दरबार है, उसने अपनी आँखें खुली

रखने और जागते रहने की पूरी कोशिश की। उसने कृष्ण को यह कहते हुए सुना कि पांडवों ने शांति वार्ता इसलिए शुरू नहीं की क्योंकि वे युद्ध से डरते थे। फिर उन्होंने भीम और अर्जुन की वीरता और कौशल का वर्णन किया। कर्ण को नींद आ रही थी, पर उनके मन में यादें उमड़ रही थीं। उन्हें भार्गव के धनुर्विद्या विद्यालय से निष्कासित होने के बाद देखी गई अनगिनत जगहें याद आ रही थीं। उनके गुरु अद्वितीय थे। लेकिन, एकमात्र विकल्प, द्रोण, भीष्म के अधीन थे। कर्ण ने मन ही मन सोचा, "मैं जहाँ भी गया, मैंने खुद को सर्वश्रेष्ठ धनुर्विद् पाया।" उन्होंने सोचा कि क्या उनके गुरु भार्गव उन्हें सिखाना जारी रखते यदि उन्होंने क्षत्रिय स्वामियों की सेवा न करने का वचन दिया होता? लेकिन, कर्ण ने स्वयं से पूछा, धनुर्विद्या में निपुण सूत अपने कौशल का उपयोग क्षत्रिय सेना के सेवक के अलावा और कैसे कर सकता है? बेशक, वह जंगलों में जंगली जानवरों का शिकार करने में अपने कौशल का उपयोग कर सकता था। लेकिन तब तक ऐसे विचारों के लिए बहुत देर हो चुकी थी, जो कभी सही समय पर नहीं आते। लेकिन उस दिन, वे विचार उनके मन में गूंजने लगे। कर्ण ने कृष्ण को यह कहते हुए सुना, “संसार में कोई धनुर्धारी अर्जुन के बराबर नहीं हो सकता, जो चलते रथ से, दौड़ते घोड़े से या खड़े होकर, हर प्रकार के बाण चला सकता है—सीधे, घुमावदार, धातु से बने या ज्वालाशील। वह एक साथ चार बाण चला सकता है। उसने केवल द्रोण से ही नहीं सीखा...” कर्ण ने स्वयं से पूछा कि क्या अर्जुन उससे बेहतर धनुर्धारी था। परन्तु वह यह भी जानता था कि इस प्रश्न का उत्तर कभी प्रत्यक्ष प्रतियोगिता या आमने-सामने की लड़ाई से नहीं निकला था। कर्ण को यह स्वीकार करना पड़ा कि अर्जुन की रणनीति की समझ श्रेष्ठ थी। उसने विराट नगर में हुए पशु-भगाए के समय या जब पांडव वनवास में थे तब वन में पशु-शिविरों का निरीक्षण करने जाते समय इसका अनुभव किया था। इसके विपरीत, कर्ण ने इस तथ्य को भी ध्यान में रखा कि उसे कभी स्वतंत्र रूप से कोई रणनीति बनाने का अवसर नहीं मिला था। उसने सोचा कि उसे कभी भी वे अवसर, समर्थन, प्रशिक्षण और गुरु का प्रेम नहीं मिला, जो अर्जुन को प्रचुर मात्रा में प्राप्त थे! भार्गव द्वारा निर्वासित किए जाने के कारण उसे हर जगह भटकना पड़ा था। क्षत्रिय युवकों को नगरों के नेताओं के सामने अपनी कुशलता दिखाने के कई अवसर मिले, और हर चतुराई भरी चाल पर उन्हें भरपूर और ज़ोरदार प्रोत्साहन मिला। कर्ण ने स्वीकार किया कि कौरव और पांडव दोनों पक्षों को मिलाकर, अर्जुन सबसे कुशल और सटीक धनुर्धर था। कर्ण ने मन ही मन

सोचा, "फिर भी, मैंने भार्गव से केवल आधा ही सीखा है, इसलिए मुझे अर्जुन में कुछ भी असाधारण नहीं लगता। यदि मुझे भी वही अवसर मिलता, तो मैं निश्चित रूप से यह साबित कर सकता था कि मैं उसके बराबर हूँ। और उसकी भुजाएँ भी मेरी भुजाओं जितनी लंबी नहीं हैं।" कर्ण ने अपने लंबे हाथों को देखा। और उसने दरबार में उपस्थित लोगों की भुजाओं की लंबाई का अंदाज़ा लगाने के लिए चारों ओर देखा। उसे विश्वास हो गया कि किसी की भी भुजाएँ उसकी भुजाओं जितनी लंबी नहीं थीं। कर्ण अतीत में खो गया, "अर्जुन को प्रस्तुत करते हुए द्रोणाचार्य ने कहा था, 'कुरुओं में श्रेष्ठ, मैंने आपके पोते को विश्व में अद्वितीय धनुर्धर बनाया है। आप स्वयं उसकी परीक्षा ले सकते हैं।' तब मैं, जो दर्शकों के बीच था, आवेग में आकर अपनी स्थिति भूल गया। मैंने चुनौती दी, 'मैं अर्जुन की सभी चालें दोहरा सकता हूँ। मुझे घर से अपना धनुष और बाण लाने का मौका दीजिए।' जब मैंने चुनौती के संकेत के रूप में अपना हाथ आगे बढ़ाया, तो दर्शक स्तब्ध रह गए। यहाँ तक कि पिता, जो अपने पुत्र को महान योद्धा बनते देखने के लिए इतने चिंतित थे, वे भी भयभीत होकर मेरे पास दौड़े आए और मेरे बराबर खड़े होकर मेरे कान में बोले, 'पुत्र, तुम्हें राजपुत्रों से प्रतिस्पर्धा नहीं करनी चाहिए। हम सूत हैं।' यदि ऐसा था, तो अर्जुन के धनुर्धर के रूप में अद्वितीय होने का दावा कैसे सार्थक हो सकता है? यदि पिता मेरे पास आकर मुझे 'पुत्र' कहकर संबोधित न करते, तो किसी को पता ही नहीं चलता कि मैं सूत हूँ। भीम ही तुरंत आगे आए और मुझसे पूछा। व्यंग्यपूर्वक, 'हे धनुर्धर, पांडु के पुत्र अर्जुन को प्रतियोगिता में चुनौती देने के आपके साहस की प्रशंसा करनी चाहिए। लेकिन पहले अपने शहर, अपनी गली, अपनी जाति और अपने वंश के साथ-साथ अपने परिवार का भी खुलासा करें।'

मैंने उत्तर दिया, 'मैं एक धनुर्धर हूँ। यदि अर्जुन में साहस और कौशल है, तो वह मुझसे मुकाबला करे। मेरी उत्पत्ति, मेरे पूर्वज, मेरी जाति और मेरे वंश के बारे में चिंता क्यों करें?'

भीम ने कहा, 'हाँ, अब मुझे पता चल गया। क्या तुम महाराजा धृतराष्ट्र के सारथी के पुत्र नहीं हो? तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई एक क्षत्रिय को प्रतियोगिता के लिए चुनौती देने की?'

वहाँ मौजूद कई लोगों ने चिल्लाकर कहा कि मुझे पकड़कर मेरी हैसियत का उल्लंघन करने के लिए दंडित किया जाना चाहिए। मुझे यकीन है कि वे सभी राजपरिवार के सदस्य रहे होंगे। या शायद क्षत्रिय रहे होंगे। अगर उस समय

दुर्योधन मेरी मदद के लिए न आता, तो वे मुझे सज़ा दे सकते थे..." कर्ण ने तब दुर्योधन की ओर देखा। उसने पाया कि दुर्योधन कृष्ण को स्थिर निगाहों से देख रहा था। लेकिन दुर्योधन हमेशा दृढ़ था। वह हमेशा वही करता था जो वह चाहता था। मित्रता का जो हाथ उसने कर्ण की ओर बढ़ाया था, वह अब तक पीछे नहीं हटा था। लेकिन कृष्ण ने उनके रिश्ते को अलग तरह से समझाया, "कर्ण, दुर्योधन ने तुम्हारा साथ मित्रता के कारण नहीं दिया। इसलिए नहीं कि वह इतना उदार था कि एक सूत को अपने बराबर दर्जा दे। वह पांडवों से ईर्ष्या से जल रहा था। वह जानता था कि अर्जुन एक महान धनुर्धर है। जैसे ही उसने किसी को अर्जुन का सामना करने के लिए तैयार देखा, उसने अवसर का लाभ उठाया और इस पुराने सिद्धांत पर कि शत्रु का शत्रु मित्र होता है, तुम्हें मित्रता का हाथ दिया। अब तुम बस उसे बता दो कि तुम पांडवों से नहीं लड़ोगे, इससे उसकी मित्रता की परीक्षा होगी।" कर्ण चिंतित था। क्या कृष्ण सही थे? शायद यह सत्य का एक पहलू था। उसने याद किया, "मैं अर्जुन से पहली बार धनुर्विद्या के दौरान परिचित हुआ था।" प्रतियोगिता। कोई भी प्रतियोगिता प्रतिद्वंद्विता और ईर्ष्या को जन्म देती है। मैं भी ईर्ष्या करने लगा। बेशक, दुर्योधन का तीव्र ईर्ष्या करना स्वाभाविक था क्योंकि अर्जुन बहुत ही अभिमानी था। बाद में, उसके और पांडवों के बीच हर संघर्ष के दौरान, मैं हमेशा अर्जुन को अपना कट्टर प्रतिद्वंद्वी, अपनी शत्रुता और ईर्ष्या का निशाना मानता था। इससे मेरी आत्मा को संतुष्टि मिलती थी। साथ ही, इसका अर्थ यह भी था कि मेरे स्वामी का मेरे प्रति प्रेम और भी गहरा हो जाता था। निश्चित रूप से, मैं अर्जुन से केवल दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए घृणा नहीं करता था। इस मामले में कृष्ण गलत थे, और उनके शब्द सत्य नहीं थे। लेकिन फिर, सामान्य शत्रु मित्रता का जन्म कराते हैं, है ना? भाग्य के मनुष्य के साथ व्यवहार करने के अजीब तरीके होते हैं। मान लीजिए उस समय मुझे अपने जन्म का सत्य पता होता, और अर्जुन ने मेरे छोटे भाई के रूप में मेरे पैर छुए होते? कौन जाने क्या होता। वह निश्चित रूप से मेरे पैर छुता, उसने हमेशा बड़ों का बहुत सम्मान किया है। और वह मुझसे चौदह वर्ष छोटा है! कृष्ण ने कितनी सहजता से कहा था, 'कर्ण, दुर्योधन के साथ अपनी मित्रता की परीक्षा लो।' कृष्ण के शब्दों में एक जादुई शक्ति है, वे इतने आकर्षक और प्रेरक हैं कि उनका विरोध करना इतना कठिन है। वे कितनी कुशलता और शक्ति से सभा को संबोधित कर रहे हैं! द्रोण, कृपा, धृतराष्ट्र, वास्तव में, सभी लोग प्रशंसा में सिर हिला रहे हैं! कृष्ण भाषा का इतना प्रभावी ढंग से प्रयोग करते हैं कि

यदि दुर्योधन इतना दृढ़ न होता, तो वह शब्दों के सैलाब में बह जाता। क्षण भर के लिए पूरी सभा कृष्ण के प्रभाव में आ जाती है। क्या मित्रता कोई ऐसी चीज है जिसकी परीक्षा ली जानी चाहिए? क्या कोई ऐसे दूध के साथ प्रयोग कर सकता है जो इतनी आसानी से दही बन जाता है... अचानक, कर्ण को पसीना आने लगा। चिपचिपा कवच असहनीय था। उसने देखा कि दो सुंदर दासियाँ दुर्योधन के दोनों ओर पंखा कर रही थीं। यह एक मनमोहक दृश्य था। कर्ण के मन से यह संदेह कभी दूर नहीं हो सका कि क्या कृष्ण परीक्षा का सुझाव देकर उनकी मित्रता को नष्ट करने की कोशिश कर रहे थे!

कुछ देर बाद, उसे लगा कि उसका दिमाग पूरी तरह खाली हो रहा है। असहनीय नींद उसे अपनी गिरफ्त में ले रही थी। दूर से आती मक्खियों की भिनभिनाहट उसकी नींद को एक लय दे रही थी, जिससे उसकी नींद और तेज़ हो रही थी। उसे कहीं दूर जाकर सोने का मन कर रहा था। या फिर उसे नींद का विरोध करना छोड़ देना चाहिए। इसी विचार में वह डूब गया। उसने अपनी पीठ और सिर कुर्सी के गद्दी पर टिका दिए और गहरी नींद में सो गया। धीरे-धीरे दरबार में हो रही घटनाओं से उसका संबंध टूटता गया और जल्द ही पूरी तरह से टूट गया।

अपनी ही खर्राटे की आवाज़ सुनकर कर्ण अचानक जाग गया। पसीने से उसका चेहरा चिपचिपा और तैलीय हो गया था। वह डर के मारे आँखें खोलने लगा। तब तक कृष्ण अपना भाषण पूरा कर चुके थे। अब सभा को विदुर संबोधित कर रहे थे। वे ऐसे बोल रहे थे मानो कोई शास्त्र कथा सुना रहे हों। कर्ण ने दुर्योधन की ओर देखा, दुर्योधन ने भी उसकी ओर देखकर मुस्कुराते हुए कहा, 'क्या कृष्ण इतने उबाऊ थे कि तुम्हें गहरी नींद आ गई!' दुर्योधन मानो यही कह रहा था। फिर वह उठा और एक बगल के दरवाजे से बाहर चला गया। उसने अपना चेहरा और आँखें धोईं। दुस्साना, जो उसके पीछे गया था, बोला, 'महाराजा बहुत प्रसन्न हुए।'

'किस बात से खुश हो?'

'तुम्हारे सो जाने से ही। तुम्हारा सो जाना भाषण और वक्ता की अहमियत का बेहतरीन आकलन था।' दुस्साना ज़ोर से हँस पड़ा। हँसने का यही एकमात्र तरीका था।

कर्ण अपनी सीट पर लौट आया। विदुर अभी भी खड़े थे। इसका अर्थ था कि भीष्म, द्रोण और कृपा अपनी बात कह चुके थे। यह हमेशा एक जैसा ही होता था।

वही क्रम - भीष्म, द्रोण और कृपा। फिर विदुर। साथ ही, उनके भाषणों को सुनने की आवश्यकता नहीं थी, बल्कि उनके विषयवस्तु को समझने के लिए भी। सभी एक निर्धारित और अपेक्षित प्रारूप का पालन करते थे। भीष्म दुर्योधन के मित्रों को ही सारा दोष देते थे, कभी दुर्योधन को स्वयं नहीं। उनके प्रति उनका रवैया अस्पष्ट था - क्रोध और प्रेम का मिश्रण। वृद्ध भीष्म यही कहते थे कि उनका पुत्र भला था, लेकिन बुरी संगति में पड़ गया। इसका अर्थ था कि असली दोषी शकुनि और कर्ण थे। दोनों में से शकुनि को कम ज़िम्मेदारी सौंपी जाती थी। कर्ण ने सोचा, "मैं उनकी नज़रों में सबसे बड़ा बलि का बकरा हूँ। आख़िर मैं हूँ कौन? एक सूत, एक आश्रित। शकुनि रानी गांधारी के बड़े भाई थे। शुरू से ही भीष्म मुझे नापसंद करते थे, और मैं उन्हें अपने पेट में तिल्ली की तरह मानता था। द्रोण लगभग उसी राग में गाते हैं, उसी बात को थोड़े नरम शब्दों में दोहराते हैं। वे ज़रूर इस बात पर ज़ोर देते कि महाराजा को उस अनपढ़ कर्ण की सलाह कभी नहीं माननी चाहिए! खैर, कृपाचार्य तो इतने प्रतिष्ठित लोगों को संबोधित करने का अवसर पाकर ही अभिभूत हैं! निश्चित रूप से वे शास्त्रों का हवाला देते। वे महाराजा की आलोचना करने की हिम्मत कभी नहीं करते। उनके भाषण हमेशा राजा से इस निवेदन के साथ समाप्त होते थे, 'संक्षेप में, हम आपसे विनती करते हैं कि धर्म का पालन हो, समय पर बारिश हो और फसल अच्छी हो।' यह विदुर हमेशा अंतहीन प्रस्तुतियाँ देते रहते थे। वे इतना भटकते थे कि कोई कभी समझ ही नहीं पाता था विदुर अच्छी तरह जानते हैं कि उनका कहने का मतलब क्या है... तभी दुर्योधन ने जम्हाई ली और कर्ण को देखकर धीरे से मुस्कुराए। उनके दाहिनी ओर बैठे दुस्साना ने भी उतनी ही गहरी जम्हाई ली। कर्ण जानते थे कि अब उन्हें और नींद नहीं आएगी। उन्होंने विदुर की बात सुनने का निश्चय कर लिया था। उन्होंने द्वार पर खड़ी एक सेविका को शीतल पेय लाने का आदेश दिया। यह शहद, सोगड़े की जड़ों के रस और दूध का मिश्रण था। उन्हें यह पसंद नहीं आया। उन्होंने सोचा कि विदुर इतने वाचाल क्यों हैं। यह प्रश्न पहले भी कई बार उनके मन में आया था। अब उन्हें इसका उत्तर मिल गया। जी हाँ, ऐसा इसलिए था क्योंकि वे सचमुच सूत थे। महल में रानी की सेविका से जन्मे। लेकिन उनके पिता एक ऋषि थे, जो जंगल में एक आश्रम में रहते थे और वेदों के अध्ययन में लीन थे। विदुर का शरीर योद्धा जैसा नहीं था। साथ ही, उनमें महल के सुख-सुविधाओं को त्यागकर वन में तपस्या और अध्ययन करने का मानसिक बल और सामर्थ्य नहीं था। ऐसे सूत स्वाभाविक रूप से शास्त्रों और

राजवंश के वृत्तांतों का पाठ करने का पेशा अपना लेते थे। समय-समय पर वे राजसी व्यक्तियों का मनोरंजन करते हुए उनके पूर्वजों, वंश, उनकी गौरवशाली उपलब्धियों, उनके द्वारा किए गए रीति-रिवाजों, उनके द्वारा निर्मित और युद्धों में ध्वस्त किए गए नगरों, युद्धों में लूटी गई महिलाओं और ऐसे ही अन्य विवरणों का सजीव और रोचक वर्णन करते थे। वे छोटे राजकुमारों को भी शिक्षा देते थे और राजपरिवार द्वारा पारंपरिक रूप से पालन किए जाने वाले आचरण नियमों पर टिप्पणी करते थे। वृद्ध भीष्म भी कुरुओं के इतिहास के इतने विवरण अपने स्मरण में नहीं रख पाए थे जितने विदुर ने रखे थे। भीष्म विदुर का विशेष आदर करते थे क्योंकि उन्होंने अपने वंश और परिवार के गौरवशाली कार्यों को अपने स्मरण में संजो रखा था। विदुर को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि भीष्म उनका और उनकी सेवाओं का सम्मान करते हैं। वह कुरु वंश के महान पूर्वजों - दुष्यंत, भरत, हस्तिन, अजमिला, देववती और दिलीप - के बारे में अंतहीन उपदेश देने का हर अवसर लपकता था। कर्ण ने विदुर को तिरस्कार भरी दृष्टि से देखा। दुर्योधन की प्रतिक्रियाओं, उसकी रुचि या उदासीनता की परवाह किए बिना, विदुर अतीत में स्थापित धर्म के सिद्धांतों को स्थापित करते रहे। कर्ण ने वहां उपस्थित सभी लोगों के चेहरों पर नजर डाली। उसने पाया कि केवल भीष्म ही विदुर के प्राचीन उपदेशों को ध्यानपूर्वक सुन रहे थे। द्रोण ने कुरु वंश की पुरानी कहानियों में कभी रुचि नहीं दिखाई। अंधे धृतराष्ट्र की सूखी आंखों से कुछ भी समझना असंभव था। कृष्ण ध्यान से सुन रहे थे। कर्ण यह तय नहीं कर पा रहा था कि यह कूटनीतिक शिष्टाचार के कारण था या वास्तविक रुचि के कारण। उसका ध्यान विदुर की ओर गया। सूत समुदाय विदुर को एक महान आत्मा और विद्वान मानता था। अब वह एक ही स्वर में बिना किसी बदलाव के लगातार बोलता जा रहा था, और उसकी बिना संवारी दाढ़ी भी उसी एकरस गति में थी। कुछ लोग विदुर को ज्ञान और विद्वत्ता के मामले में महान कृष्ण द्वैपायन के समान मानते थे। यह भी कहा जाता था कि कृष्ण द्वैपायन उनके सगे पिता थे। उनका शरीर भी उन्हीं जैसा था, हालांकि उन्होंने उनके पदचिह्नों पर चलकर वन में अध्ययन नहीं किया। उन्होंने महल के सुख-सुविधाओं का आनंद लेने के लिए वहीं रहना पसंद किया। एक बार जब किसान महिलाएं महल में सेविका बनकर आती हैं, तो वे आराम के जीवन की आदी हो जाती हैं और फिर कभी धूप, पसीने और मिट्टी में मेहनत करने वाले किसान के जीवन में वापस नहीं लौटतीं। कर्ण को तुरंत एहसास हुआ कि यह बात उन पर भी

लागू होती है, क्योंकि उन्होंने भी धरती पर मेहनत करने का जीवन छोड़कर महल का जीवन अपना लिया था। उन्होंने इस विचार से खुद को सांत्वना दी कि एक योद्धा के पास क्षत्रियों की सेनाओं में सेवा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता। कर्ण पिछली रात से ही इस बात को लेकर चिंतित था। यह बात उसे अलग-अलग रूपों में परेशान कर रही थी। एक सूत योद्धा और क्या कर सकता था? तभी उसे अचानक विराट सेना के प्रमुख कीचक का मामला याद आया, जो सूत जाति का ही था। उसकी अपनी बहन विराट राज्य की रानी थी। और ऐसा लगता था कि उस देश में सूत जाति के लोग परंपरा से ही शासक बनते थे। ऐसे में... कर्ण आगे सोचने की हिम्मत नहीं कर पाया। संयोगवश, विदुर ने आखिरकार अपना निरर्थक भाषण समाप्त कर दिया। कर्ण को भूख लगने लगी। उसने दुर्योधन के घर जाकर कुछ खाने का सोचा। वह सोचने लगा कि अब आगे कौन बोलेगा? क्या दुर्योधन स्वयं बोलेगा या धृतराष्ट्र कुछ स्पष्टीकरण के लिए हस्तक्षेप करेंगे? उस बूढ़े व्यक्ति के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता था। वह निश्चित रूप से कोई भी क्षेत्र छोड़ना नहीं चाहता था, लेकिन वह पांडवों के साथ युद्ध से भयभीत था। वह स्वभाव से ही इतना डरपोक था। भीष्म, द्रोण और विदुर ने जिस प्रकार लगातार पांडवों की वीरता का बखान किया और हमारी कमियों की ओर ध्यान दिलाया, उससे उस अंधे, बूढ़े कर्ण के हृदय में पांडवों का भय बैठ गया था। स्वयं देख पाने में असमर्थ होने के कारण वह दूसरों की बातों में आसानी से आ जाता था। यहाँ तक कि पति-पूजा की उस महान भक्त, आँखों पर पट्टी बाँधे गांधारी को भी युद्ध के परिणामों को लेकर ऐसा ही भय था। तभी कर्ण ने कृष्ण को कुछ कहते सुना। कृष्ण ने कहा, 'दुर्योधन, मैं तुम्हें एक बात बताना भूल गया था। जब तक तुम्हारी दृष्टि लंबे समय से संचित ईर्ष्या, भय और घृणा से ढकी रहेगी, तब तक तुम मेरी बातें नहीं समझ पाओगे। इस अवरोधक भावना को त्याग दो और एक नया व्यक्ति बनो। याद रखो, युद्ध अपरिहार्य नहीं है।'

कर्ण को बेचैनी महसूस हुई कि उसने ये शब्द कहीं सुने हैं। कहाँ? वह तुरंत स्रोत, संदर्भ और वक्ता का पता नहीं लगा सका। तभी दुर्योधन ने पूछा, "क्या किसी और को कुछ कहना है?" सभा कुछ देर के लिए शांत हो गई। दुर्योधन ने कर्ण से पूछा, "क्या तुम कुछ नहीं कहना चाहते?" इससे कर्ण असमंजस में पड़ गया। उसने चुप रहने का निश्चय कर लिया था। फिर भी वह दरबार में हमेशा बोलता था, यह उसकी नियमित प्रथा थी। दुर्योधन उसे कभी चुप नहीं रहने देता था। लेकिन कर्ण

असमंजस में था, वह खुद से पूछ रहा था, "आज, इतने दिनों में, मेरे पास कहने के लिए क्या है?" अब वह अपने स्वामी, महाराजा की स्थिति से पूरी तरह अवगत था। उनकी सामान्य प्रथा यह थी कि पहले वह, महाराजा, शकुनि और दुस्साना के बीच चर्चा होती थी, जिसके बाद एक निर्णय लिया जाता था, और फिर समूह के प्रवक्ता के रूप में सुझाव या सलाह प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी आमतौर पर कर्ण की होती थी। फिर शकुनि और दुस्साना उसका समर्थन करते थे। दुर्योधन द्वारा निर्णायक और अधिकारपूर्ण ढंग से अपनी बात रखने के साथ ही यह प्रक्रिया समाप्त हुई। यह सिलसिला वर्षों से चला आ रहा था। अब कर्ण की बारी थी। यह समझते हुए कि यदि वह अभी नहीं बोले तो दरबार की लय बिगड़ जाएगी, वह तुरंत खड़े हो गए और सभा को संबोधित करने लगे, जबकि भीष्म, द्रोण और विदुर अपनी वृद्धावस्था के कारण बैठे रहे।

कर्ण ने सभा को सीधे शब्दों में संबोधित करते हुए कहा, "हमारे समक्ष मुख्य मुद्दा कुरु वंश की शुद्धता है। केवल पिता से सीधे जन्मी संतानें ही शासन करने के योग्य हैं। नियोग के नाम पर, हम परदेसियों से जन्मी संतानों को वैध संतान नहीं मान सकते..." उनकी जीभ उनके मुख से अलग हो गई। जीभ से परे अंतर्मन ने जीभ से नाता तोड़ लिया, और जीभ थम सी गई। अंतर्मन का नियंत्रण टूटते ही जीभ रुक गई। उनके अतीत ने उन्हें याद दिलाया कि कैसे एक अविवाहित लड़की ने एक अज्ञात ऋषि से नाजायज संतान को जन्म दिया था और उसे मरवा न पाने के कारण उसने उसे अपनी मां की दासी को दे दिया। संतान न होने के कारण उसके पति ने उसे उसके मायके निर्वासित कर दिया था। फिर जब वह उसके नगर के पास गई और उसे एक संतान मिलने की सूचना भेजी और उसे दिखाया, तो उसने उसे गोद में उठाकर प्यार से गले लगा लिया। उसने अपनी पत्नी को प्रेम में सराबोर कर दिया और उसे अपने घर ले आया। फिर उसने सबको बताया कि वह संतान सूर्य देव का उपहार है। कर्ण ने सोचा, 'यदि मैं सूत अधिरथ का पूर्णतः वैध पुत्र हूँ और उनके अंतिम संस्कार करने का हकदार हूँ, तो मैं तर्कसंगत रूप से यह कैसे कह सकता हूँ कि माता के गर्भ में स्वतंत्र रूप से बीज से जन्म लेने वाले बच्चे अवैध हैं?' यही वह प्रश्न था जिसने उनकी जीभ को रस्सियों से बाँध दिया था, मानो उसका कार्य ही न कर पा रहा हो। सभा उन्हें मौन देख रही थी। उन्होंने उनके चिंतित चेहरे को देखा और उनके चेहरे, गर्दन और माथे से पसीना बहता हुआ देखा। तभी दुस्साना उठे और वहीं से बोलना शुरू किया जहाँ कर्ण ने अचानक छोड़ा था। कर्ण

को राहत मिली। फिर भी, भीतर ही भीतर उनका मन सन्नाटे में जम गया था। वे वक्ता के शब्द नहीं सुन पा रहे थे, बल्कि केवल उनके हाथों के इशारे, भुजाओं, होंठों और मुँह की गति देख पा रहे थे। वे अपनी कुर्सी के पीछे झुक गए और कार्यवाही को ऐसे देख रहे थे मानो वह बिना शब्दों का कठपुतली शो हो। दुस्साना के लंबे मूक अभिनय के बाद शकुनि और दुर्योधन के मूक अभिनय एक के बाद एक शुरू हुए। फिर धृतराष्ट्र ने हस्तक्षेप किया। भीष्म और कृष्ण एक तरफ और दुर्योधन दूसरी तरफ, आपस में वाकयुद्ध करने लगे। अचानक दुर्योधन राजगृह से निकल गया। उसके साथ दुस्साना, दुस्साहा, उसके भाई और शकुनि भी चले गए। दुस्साना वापस आया और कर्ण को इशारा किया। राजा के निजी कक्ष में महाराजा और उनके सलाहकारों के साथ चर्चा में शामिल होने के कुछ ही समय बाद कर्ण को थोड़ा-बहुत सुनाई देने लगा। उसका लकवाग्रस्त मन अभी तक सामान्य नहीं हुआ था। दुस्साना और शकुनि ने दुर्योधन का ज़ोरदार समर्थन किया। उन्होंने महाराजा की प्रशंसा करते हुए कहा कि उनके सत्य और न्याय के वचन कृष्ण के छलपूर्ण भाषण से कहीं अधिक मूल्यवान हैं। महाराजा कर्ण की ओर मुड़े। लेकिन बेचारे कर्ण को स्थिति और संदर्भ का कोई ज्ञान नहीं था।

दुर्योधन ने कहा, 'कर्ण, तुम्हें क्या हो गया है? तुमने पहले वाक्य के बाद बोलना क्यों बंद कर दिया और शब्दों के लिए क्यों अटक रहे हो?'

कर्ण के पास कोई उत्तर नहीं था।

दुर्योधन, 'क्या तुम बीमार हो?'

कर्ण ने किसी तरह जवाब दिया, 'मेरा सिर अचानक घूमने लगा।'

महाराजा ने एक सेविका को आवाज़ दी। उन्होंने उसे आदेश दिया कि कर्ण को नरम गद्दे पर लिटा दे और उसके माथे और बगलों पर घी मल दे। उन्होंने उसे शहद और दूध मिला हुआ सोम रस लाने को कहा।

कुछ देर आराम करने और रस पीने के बाद कर्ण इतना ठीक हो गया कि उठकर बैठ गया। तभी दुस्साह हाँफता हुआ कमरे में आया और बोला, "कृष्ण सभा को सलाह दे रहे हैं कि वे तुम्हें पकड़ लें और बाँध दें, फिर तुमसे राज्य की बागडोर छीन लें। उन्होंने उनसे कहा, 'क्या पांडवों को खांडवप्रस्थ भेजने का निर्णय तुम्हारा ही नहीं था? यदि अब तुम सही कदम नहीं उठाते, तो आर्यावर्त को विनाश से बचाना असंभव होगा।' दादाजी ने कहा कि वह सही कह रहे हैं। पिताजी भी सहमति में सिर हिला रहे थे।"

'क्या ऐसा है?' दुर्योधन ने कहा और एक मिनट सोचा। उसने कहा, "दुस्साह, रस्सी लाओ। चलो कृष्ण को ही रस्सी से बांधकर जेल में डाल देते हैं।" फिर वह बाहर चला गया। दुस्साना और शकुनि उसके पीछे-पीछे गए। कर्ण की शारीरिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि वह उठकर चल सके। वह बैठा रहा। उसने सभा भवन से बहुत शोर और हंगामा सुना। चीख-पुकार मची हुई थी। शोरगुल के बीच महाराजा के कुछ शब्द सुनाई दिए। फिर सन्नाटा छा गया। थोड़ी देर बाद महाराजा, दुस्साना और शकुनि वापस लौटे। महाराजा का चेहरा क्रोध से लाल था। वह धड़ाम से अपनी कुर्सी पर गिर पड़े।

दुस्साना ने कर्ण को समझाया, "कृष्ण ने अपने साथ आए लोगों के बारे में झूठ बोला था। वे कोई निर्दोष नागरिक नहीं थे जो हमारे दरबार की शान-शौकत देखने आए हों। वे वास्तव में उनके अंगरक्षक थे। उन्होंने हमें कितनी कुशलता से धोखा दिया!"

—•✳•—

अध्याय 37

उस रात खाना खाने के तुरंत बाद वह सो गया। लेकिन वह जल्दी जाग भी गया। उसने एक सपना देखा। उसमें कुछ भी स्पष्ट या साफ नहीं था। क्या वह सपने के पूरी तरह से साकार होने से पहले ही जाग गया या सपना ही उसे पूरी तरह से समझ आ गया?

क्या उसी सपने ने उसे जगाया? उसे पक्का पता नहीं था। क्या यह वही आम सपना था जिसमें बाढ़ का पानी उसे डुबो देता है? नहीं, वह निश्चित नहीं था, पक्के तौर पर हाँ या ना नहीं कह सकता था। उसे दूर से बांसुरी की मधुर ध्वनि सुनाई दी। यह चरवाहों की बस्ती से आ रही होगी। अभी आधी रात नहीं हुई थी। संगीत

कानों को सुकून दे रहा था। वह बिस्तर पर करवटें बदलता रहा, लेकिन पूरी रात उसे नींद नहीं आई। फिर भी उसे शाम की तुलना में कम थकान महसूस हो रही थी। उस रात उसका मन पिछली रात की तुलना में कम अशांत था। वास्तव में, उसे एक तरह की मानसिक शांति थी। उसने मन ही मन सोचा कि उसे कल बांसुरी वादक को अपने घर बुलाकर उसका वादन सुनना चाहिए। नहीं, दिन में नहीं। रात इसके लिए बेहतर समय है। उसे कल रात बुलाना चाहिए। फिर उसने अपने मन को शांत किया और सोने की कोशिश की। उसने खुद से कहा कि बांसुरी की आवाज़ न केवल रात में, बल्कि दूर से भी सुनाई देनी चाहिए। वरना उसका जादू कम हो जाएगा। कर्ण अपने मन में विचार कर रहा था, "कृष्ण ने क्या कहा था? 'वर्षों से संचित ईर्ष्या, भय और घृणा को त्याग दो, अन्यथा तुम मेरे वचन नहीं समझ पाओगे। इनसे एक नए व्यक्ति के रूप में बाहर निकलो। यह युद्ध इतना कठिन नहीं है।' हाँ, उन्होंने कल शाम मेरे रथ में बैठे हुए भी ऐसे ही शब्द कहे थे। मुझे अब याद आ रहा है। कृष्ण ने कहा था, 'कर्ण, जो प्रश्न तुम्हें परेशान कर रहा है वह यह है कि तुम अपने पैंसठ वर्षों के जीवन के कर्मों को रातोंरात कैसे मिटा सकते हो और स्वयं को एक बिल्कुल नए व्यक्ति में कैसे बदल सकते हो? तुम स्वयं से पूछ रहे हो कि तुम ऐसा कैसे कर सकते हो, जबकि तुम्हारे जीवन के सभी आवश्यक तत्व मौजूद हैं - सूत जाति के रीति-रिवाजों का पालन करना, सूत स्त्रियों से विवाह करना, सूत स्त्रियों से संतान और नाती-पोतों को जन्म देना, सूत रीति-रिवाजों का पालन करना, दुर्योधन के साथ तुम्हारी गहरी मित्रता और पांडवों के प्रति तुम्हारी उतनी ही गहरी घृणा। खैर, मैं तुम्हें बता दूं कि सूत रीति-रिवाज तो केवल बाहरी संकेत हैं, और इन्हें त्यागकर तुम अपने जीवन को स्वीकार कर सकते हो।" अपने जन्म के बारे में नव-खोजे गए सत्य को दुनिया के सामने प्रकट करो। फिर दुनिया को अपनी नई लेकिन सच्ची पहचान बताओ। फिर तुम परख सकते हो कि पुराने परिवेश में पैदा हुई पुरानी नफरतें और पुराने प्रेम बदले हुए हालातों में टिक पाएंगे या नहीं। अच्छा, नए सिरे से जन्म लेने की कोशिश करो...' उन्होंने और भी बहुत सी बातें कहीं। मुझे अब याद नहीं आ रहा। अगर राजा पांडु ने कुंती से विवाह किया होता और अपने नाजायज बेटे को भी साथ ले गए होते, तो उन्हें निःसंतान होने के कारण हिमालय जाने की ज़रूरत नहीं पड़ती, तब मैं महाराजा पांडु का इकलौता पुत्र होता। मैं दुर्योधन से बारह साल बड़ा होता। मैं कुरु राज्य का इकलौता शासक होता और दुर्योधन मेरा उत्तराधिकारी होता...' उन्हें ऊँघने का मन

हुआ। फिर उन्हें लगा कि वे सपना देख रहे हैं। तब अगर कुंती ने धर्म, भीम और अन्य पुत्रों को जन्म भी दिया होता, तो सबसे बड़े होने के नाते शायद उन्हें राजसूय संस्कार करने का सम्मान मिल जाता! या फिर वे दुर्योधन के सबसे बड़े शत्रु बन जाते! हालात पूरी तरह से अप्रत्याशित दिशा में जा रहे थे। जैसे कोई पक्षी डाल का सहारा छोड़कर दिशाहीन होकर उड़ने लगता है, लेकिन उड़ता जरूर है। खैर, उसे नींद नहीं आ रही थी। कर्ण सोचने लगा, "अगर दुर्योधन को हमारे नए रिश्ते के बारे में पता चलेगा तो उसकी क्या प्रतिक्रिया होगी? क्या वह कहेगा कि इंद्रप्रस्थ के राजा आप हैं, पांडव नहीं? लेकिन क्या उसे यह पता नहीं होगा कि मैं पांडवों के साथ रहूंगा? यह सब पागलपन है! आखिर वे पांडु के पुत्र के रूप में पैदा हुए थे जबकि मैं नाजायज संतान हूं। मुझे निकाल दिया गया था, पांडव बनने के लिए आवश्यक रीति-रिवाजों से वंचित कर दिया गया था। हम अचानक भाई कैसे बन सकते हैं? कोई 65 साल के जीवन को कैसे चूर-चूर कर, उसे उसके विपरीत रूप में बदल सकता है? आखिर जीवन कोई लचीली मिट्टी नहीं है जिसे मनचाहे आकार में ढाला जा सके। कृष्ण के लिए ऐसा करना आसान है। अगर कृष्ण मेरी जगह होते तो क्या वे वैसा ही व्यवहार करते जैसा वे मुझे सलाह दे रहे हैं? और कोई ऐसा व्यवहार कैसे कर सकता है? मैं महाराज दुर्योधन के स्वभाव को भली-भांति जानता हूं। वह कहेंगे, 'कर्ण, तुम जो मेरे समर्थन और शक्ति के प्रमुख स्तंभ थे, शत्रु के पक्ष में चले गए। मैं निश्चित रूप से युद्ध लड़ूंगा। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि मैं..." मुझे तुम्हारे विरुद्ध युद्ध करना होगा।' क्या मुझे किसी भी पक्ष में शामिल होने से इनकार कर देना चाहिए और देश ही छोड़ देना चाहिए? शायद यही समाधान है। मैं पैंसठ वर्ष का हो रहा हूँ। शायद समाधान यही है कि मैं सांसारिक लेन-देन से पूरी तरह विमुख होकर किसी वन में जाकर एक साधु की कुटिया में रहने लगूँ..." समाधान की झलक देखकर उन्हें संतोष हुआ। उन्होंने गहरी साँस ली और बाईं ओर करवट ली। उनसे थोड़ी दूरी पर सो रही सुषेना ने पूछा, "पिताजी, क्या आपको आज रात भी नींद नहीं आ रही?" अपने मन में उठ रहे इस प्रश्न का अंतिम समाधान खोजने के लिए दृढ़ संकल्पित कर्ण, अपने पुत्र से किसी भी प्रकार की बातचीत से विचलित नहीं होना चाहते थे, इसलिए उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। फिर उन्होंने आत्ममंथन जारी रखा, "हाँ, सबसे अच्छा रास्ता सेवानिवृत्ति ही है। लेकिन इसका मतलब केवल मेरा अपना पलायन होगा। मैं खुद को बचा सकता हूँ। इसका मतलब दुनिया के सामने कोई घोषणा करना नहीं होगा। इसलिए, असली समाधान केवल सेवानिवृत्ति

नहीं, बल्कि सत्य की सार्वजनिक घोषणा के बाद सेवानिवृत्ति है। हाँ, यह मेरे लिए निश्चित रूप से कठिन होगा। फिर भी, क्या यह उस व्यक्ति के लिए वास्तव में एक कठिन परीक्षा हो सकती है जो सब कुछ त्याग रहा है? इतने महत्वपूर्ण निर्णय के आलोक में, यह कुछ भी नहीं होगा..." सुषेना को भी नींद नहीं आ रही थी, क्योंकि वह भी बिस्तर पर करवटें बदल रहा था। कर्ण को इस बात की चिंता सता रही थी कि कहीं उसके बेटे को उसकी चिंता का कारण पता न चल जाए। लेकिन उसे पूरा विश्वास था कि ऐसा होना असंभव है। कर्ण अपने पुत्र के बारे में सोचने लगा, "जब मैं उसे मना करता हूँ, तब भी वह यहाँ मेरे साथ रहने और एक ही कमरे में सोने की ज़िद करता है। वह सचमुच का पुत्र है, पुत्रों में श्रेष्ठ पुत्र। और वे सभी पत्नियाँ, जिन्हें दुर्योधन ने मेरे रुतबे के लिए मेरे गले से बाँध रखा है, वे सभी पीछे वाले हॉल में, शानदार भोजन के बाद गहरी नींद में सो रही हैं..." पत्नियों का ज़िक्र होते ही उसके सेवानिवृत्ति के सारे सपने चकनाचूर हो गए। ...हाँ, मैं दुनिया को अपने जन्म का सच बता सकता हूँ और अपनी असली पहचान उजागर कर सकता हूँ। लेकिन मेरे बच्चों और पोते-पोतियों का क्या होगा? वे सब महाराजा दुर्योधन की सेवा में हैं। क्या वे अपने मामाओं, पांडवों की सेवा में चले जाएँगे? यदि नहीं, तो क्या महाराजा उन्हें वफ़ादार मानेंगे? क्या वे पांडवों का साथ देकर अपने पूर्व स्वामी, महाराजा के हितों के विरुद्ध कार्य करेंगे? या वे मेरे साथ वन में जाने का निर्णय लेंगे? यह कैसी निराशाजनक उलझन है! मैं जिस भी तरफ जाता हूँ, काँटों के जंगल में ही फँस जाता हूँ। लेकिन कृष्ण ने सही कहा था। प्रशंसा भरी निगाहों के पूरी तरह हकदार... उन्हें करवट बदलने का मन कर रहा था। लेकिन अपने बेटे को अपनी नींद न आने की बात बताकर जगाने से बचने के लिए, उन्होंने बिस्तर पर करवटें नहीं बदलीं। उन्होंने अपनी सांसों को काबू में रखा। बांसुरी की मधुर धुन कमरे में दूर से आती हुई सुनाई दे रही थी। लेकिन यह तभी स्पष्ट सुनाई देती थी जब हवा उस दिशा से चलती थी, और दिशा बदलने पर धीमी हो जाती थी। हवा की दिशा अनिश्चित थी। सर्दी आ रही थी, और हल्की ठंड लग रही थी। उन्होंने खिड़कियाँ बंद कर दीं। बांसुरी की धुन ने उनकी यादों को संवेदनशील बिंदुओं पर छू लिया। हाँ, उन्होंने सोचा कि पूरी सच्चाई जाने बिना, पूरी सभा के सामने पांडवों के कुरु उपाधि के दावे को नकारना गलत था। कर्ण ने मन ही मन कहा, "कल मुझे महाराजा से मिलना है और उन्हें एक बात स्पष्ट रूप से बतानी है, और उनसे कहना है, 'महाराज, आप गलत राह पर चल रहे हैं। आपका तर्क इस आधार पर

नहीं टिकता कि पांडव कुरु नहीं हैं। धर्म के अनुसार वे कुरु हैं, और आपको इसे स्वीकार करना होगा। लेकिन उनके विरुद्ध आपका तर्क अलग होना चाहिए। उनसे कहिए कि इंद्रप्रस्थ पूरी तरह से आपका हो गया था जब वे पहली बार जुए में हार गए थे। आपके पिता ने नासमझी से वह लौटा दिया जो आपका था। फिर उन्होंने दोबारा दांव लगाया, और आप फिर से जीत गए। तर्क दीजिए कि आपके पिता को उन्हें वरदान के रूप में वह देने का कोई अधिकार नहीं था जो आपने महाराजा के रूप में जुए में जीता था। इसलिए, आप उन्हें वह क्षेत्र वापस नहीं करेंगे।' लेकिन क्या महाराजा मेरी सलाह मानेंगे? उनके कितने सहयोगी राजा इस तर्क को स्वीकार करेंगे कि नियोग से जन्मे बच्चे वैध नहीं होते? और कितने मेरे इस तर्क को मानेंगे कि एक बार पिता अपने पुत्र को सिंहासन पर बिठा देता है, तो उसे राज्य के मामलों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं रहता? महाराजा... इन दावों का संतुलन बनाएँ। लेकिन मुझे अपनी बात कहनी ही होगी..." इस निर्णय से उसे कुछ संतोष मिला। फिर बिना कोई आवाज़ किए वह दूसरी तरफ मुड़ गया और सो गया। बांसुरी की मधुर ध्वनि अब भी सुनाई दे रही थी। दूर की यादें उस नींद के साथ घुलमिल गईं जो अब उस पर हावी हो रही थी। उसके भीतर उमड़ती नींद बर्तन में उबलते दूध की तरह धीरे-धीरे ऊपर उठ रही थी। लेकिन नींद इतनी प्रबल नहीं थी कि बांसुरी की मधुर ध्वनि को दबा सके। या क्या वह सपना देख रहा था? अपने शरीर की हर नस, मांसपेशी, टांग, हाथ और कंधे, साथ ही उनके बीच के अंतराल को भी शिथिल करते हुए, उसने स्वयं को नींद के हवाले कर दिया। अंततः नींद आ गई। और वह गहरी नींद थी। इसके बाद एक बहुत ही मनमोहक दृश्य सामने आया। यह दृश्य दूर के किसी जल से धीरे-धीरे उभर रहा था। यह एक विशाल सभा भवन था। इसमें एक हजार स्तंभ थे। केंद्र में एक सिंहासन था, और कर्ण उस सिंहासन पर बैठा था। उसके बगल में एक और छोटा सिंहासन था। उस पर धर्मराज विराजमान थे। इसके बाद एक और दृश्य आया। अब एक विशाल जंगल था। उसमें से एक सेना तेज़ी से गुज़र रही थी। उसके बीचोंबीच कर्ण रथ पर सवार थे।

फिर अर्जुन घोड़े पर सवार होकर चिल्लाते हुए दिखाई दिए, 'बड़े भाई, एक महान महाराजा होने के नाते इस तरह बिना किसी औपचारिकता के आना आपको शोभा नहीं देता। इस कार्य के लिए आपको स्वयं क्यों आना चाहिए? हम इसे पूरा करने के लिए यहाँ हैं। कृपया वापस जाइए।' कामदेव की स्वप्निल चेतना इस दृश्य

को समझने का प्रयास कर रही थी। कर्ण ने सोचा, उसकी भुजाएँ मेरी भुजाओं जितनी लंबी हैं। उसका धनुष मेरे धनुष जितना ऊँचा है। हमारे दोनों धनुष अपने आप एक साथ खड़े हैं। वे एक दूसरे से जुड़कर एक जोड़ी बनाते हैं। फिर अंततः वे विलीन होकर एक धनुष बन जाते हैं। कितना विशाल धनुष! यह दो व्यक्तियों जितना ऊँचा था, एक दूसरे के कंधों पर खड़ा हो। यह एक मोटी, मजबूत रस्सी से बंधा हुआ था। कर्ण ने देखा कि वह और अर्जुन इसके दोनों सिरों से एक साथ बाण चला रहे थे। और क्या अविश्वसनीय गति! वे धातु के बाण थे जो एक के बाद एक देश को चीरते हुए आगे बढ़ रहे थे। एक सफेद घोड़ा था, जो उसके कंधे जितना ऊँचा था। वह हर भूमि में स्वतंत्र रूप से विचरण कर रहा था। उसके पीछे विशाल धनुष था। धनुष के माध्यम से द्रौपदी दिखाई दे रही थी। क्या मनमोहक सुंदरता! और उनका हावभाव ऐसा था मानो उनमें ऐसा आत्मविश्वास झलक रहा हो जो पूरी दुनिया को मोहित कर सकता हो। उनके सिर के ऊपर मछली पकड़ने वाला यंत्र घूम रहा था। नीचे कुंड में पानी स्थिर, दर्पण की तरह चिकना था। कर्ण ने खुद को यंत्र को गिराने के लिए तैयार पाया। उस अभिमानी कन्या ने अपनी दासी से पूछा, 'क्या यह सूत नहीं है?' और उसने जले पर नमक छिड़कते हुए कहा, 'बड़े भाई, यह एक क्षत्रिय कन्या का घोर अपमान है। किसने उसे इस विवाह प्रतियोगिता में भाग लेने की अनुमति दी जो केवल क्षत्रियों के लिए है?' तब दुर्योधन ने आगे आकर कहा, 'वह मेरे बराबर है।' वहाँ अफरा-तफरी मच गई। कानाफूसी और चीख-पुकार मच गई। कर्ण को बीच में ही धनुष तानने का अपना कार्य छोड़ना पड़ा। उनके चेहरे पर कितना घोर तिरस्कार था! और वह भी पूरी सभा में। राजाओं और राजकुमारों की भीड़ तनाव से देख रही थी। उनके सामने ब्राह्मणों की भीड़ थी। जब कर्ण शर्म से सिर झुकाए वहीं खड़ा था, तो किसी ने दया करके उसे बैठने के लिए जगह दी। बैठते ही कर्ण ने पैर फैला लिए। उसके सामने वही अभिमानी कन्या खड़ी थी, और यह एक अलग दृश्य था, और बहुत बाद का समय था। लेकिन यह वही अभिमानी लड़की थी, अब एक स्त्री। दुर्योधन ने ताना मारा, 'दुस्साना, इसके पतियों को अपनी हैसियत का एहसास हो गया है। लेकिन हम एक दासी को राजसी वस्त्र पहनने की छूट नहीं दे सकते। यह सभी राजपरिवारों का अपमान होगा। उससे कहो कि वह अपनी साड़ी उतार दे और एक छोटा सा कपड़ा पहन ले। अगर वह मना करे, तो उसकी साड़ी खींचकर उतार देना। चाहे इस प्रक्रिया में वह नंगी ही क्यों न हो जाए, कोई बात नहीं। अगर उसे खुद अपनी इज्जत की

परवाह नहीं है, तो तुम्हें क्यों होनी चाहिए?' शोर मच गया। कानाफूसी होने लगी। वह नहीं झुकी। उसने चीखकर जवाब दिया, 'सूता, तुम्हें श्राप! तुम मुझे कभी भी अपनी जाति की स्त्री के स्तर तक नहीं गिरा सकते!' वह उछल-कूद करने लगी। उसके राजसी वस्त्र हवा में लहरा रहे थे। उसके कदम अहंकार से भरे थे। तभी ढोल बजने की भयानक आवाज़ आई। ढोल बजाने वाला भीम था। अर्जुन बांसुरी बजा रहा था। दूर से नहीं, बल्कि ठीक उसके सामने, उसके कानों को बुरी तरह से भेदते हुए। वह मधुर नहीं, बल्कि कर्कश थी। असहनीय रूप से भद्दी। तभी कर्ण अचानक जाग उठा। बांसुरी बंद हो गई थी। उसे समय का पता नहीं था। लेकिन उसे यकीन था कि यह एक सपना था। फिर भी, मन में एक शंका थी कि यह सपना था या महज़ याद। उसे पता था कि वह सोया था। अगर यह सच था, तो यह याद नहीं हो सकती थी। जब वह समय के बारे में सोच रहा था, तभी उसे पेशाब करने की तीव्र इच्छा हुई। हालांकि उसे यकीन था कि इससे सुषेना जाग जाएगी, उसने अपने शरीर पर कंबल लपेटा, उठा और बाहर चला गया। दरवाजे के पास सो रहा कुत्ता अपने कान फड़फड़ाने लगा। वह कर्ण के पास आया और उसके पैरों से उलझ गया। शौच करने के बाद उसने सिर उठाया। आकाश राख जैसा दिख रहा था। तारे साफ दिखाई दे रहे थे। फिर भी उसे आभास हुआ कि जल्द ही सूर्योदय होने वाला है। उसने दरवाजे बंद किए और नदी की ओर चल पड़ा। उसे शौच करने की तीव्र इच्छा हो रही थी।

कुत्ते के कोमल कदमों की आहट उसके पीछे-पीछे आ रही थी। कस्बे को पार करने के बाद, वह उस किनारे पर पहुँचा जहाँ हाथी घास घनी उग आई थी। उसने शौच किया और फिर सूतघट्टा की ओर तेज़ी से बढ़ा। हालाँकि अँधेरा था, फिर भी उसे सब कुछ साफ़ दिखाई दे रहा था। कल से उन्होंने और अधिक लकड़ी का ढेर लगा दिया था। आसपास बिखरे हुए बुरादे और लकड़ी के टुकड़ों से स्पष्ट था कि पिछली बार जब वह यहाँ आया था, तब से उन्होंने और अधिक काम किया होगा। कर्ण किनारे पर बिना हिले-डुले बैठ गया। कुत्ते ने धूल को खुरचकर अपने लिए एक गर्म जगह बना ली थी। फिर वह उस खाली जगह में सो गया। पानी की सतह चिकनी थी, जैसे किसी चिकनी लकड़ी के तख्ते की सतह। वहाँ एकदम सन्नाटा था। एकदम स्थिर। कुछ देर बाद, कर्ण उठा और थोड़ी देर रेत पर शरीर को हिलाया-डुलाया। गहरी साँस लेते हुए उसे पसीना आने लगा। शरीर में दिन-रात छाई सुस्ती दूर हो गई थी और उसमें एक नया जोश आ गया था। वह पानी में

उतरा और अपना सिर नीचे कर लिया। वह थोड़ी दूर तक तैरा। हालांकि धारा कल जितनी तेज़ नहीं थी, फिर भी उसमें शरीर को खींचने की शक्ति थी। अपने हाथों से पानी को ज़ोर-ज़ोर से पीटते हुए, वह बिना ज़्यादा शोर किए किनारे तक तैर गया। तब तक पूरा दिन निकल चुका था। पूरब की ओर खड़े होकर उसने सूर्य की स्तुति करते हुए प्रार्थना की। हालांकि उसका मन पूरी तरह से सूर्य प्रार्थना पर केंद्रित नहीं था, फिर भी कल की तरह विचलित नहीं था। वह सूर्य प्रार्थना समाप्त करने ही वाला था कि कुत्ता भौंकने लगा। पहले वह गुर्राया, फिर ज़ोर से भौंका मानो किसी पर झपटने वाला हो। उसने एक स्त्री की आवाज़ सुनी जो जानवर को भगा रही थी। वह पीछे मुड़ा। भय, उलझन, तेज़ धड़कन और अंत में घोर आश्चर्य ने उसे घेर लिया, जब उसने देखा कि सफेद बालों और सफेद वस्त्रों वाली कुंती सूतघट्टा पहुँच चुकी है। वह कुत्ते से डरी हुई नहीं लग रही थी। फिर भी उसके चेहरे पर आत्म-यातना के कारण लालिमा थी। उसका चेहरा गंभीर था। कर्ण ने जल्दी से कुत्ते को पट्टा पहनाया।

एक मिनट तक झिझक और असमंजस के बाद, उसने विनम्रता से पूछा, "आर्य महिला, आप कौन हैं? आप क्षत्रिय महिला जैसी दिखती हैं। आप सूतघट्टा क्यों आई हैं?"

"मैं विदुरा के घर में रहता हूँ, पिछले साढ़े तेरह साल से ऐसा ही कर रहा हूँ।"

"तो आपको यह जरूर पता होगा कि मैंने कभी विदुरा की दहलीज पर कदम नहीं रखा है।"

कुंती को समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। इसलिए वह चुपचाप बैठी रही। गुर्राता हुआ कुत्ता कर्ण के पैरों के बीच मजबूती से दबा हुआ था। कुंती की नज़र रेत पर बिखरे लकड़ी के टुकड़ों पर पड़ी। कर्ण ने उसे एकटक देखा। उम्र के कारण उसका शरीर थोड़ा ढीला पड़ गया था, फिर भी उसका शरीर आकर्षक था - लंबी भुजाएँ, चौड़ा सीना, बड़ी आँखें, चौड़ा माथा और बर्फ जैसे सफेद बालों से भरा सिर। वह कर्ण से बहुत मिलती-जुलती थी, और कर्ण को एहसास हुआ कि उसने पहले कभी उसे ध्यान से नहीं देखा था।

"कर्ण, कृष्ण ने तुम्हें पूरी सच्चाई बता दी है।"

"क्या उसी ने तुम्हें मुझे इस हालत में देखने के लिए यहाँ भेजा था?"

एक बार फिर कुंती को तुरंत जवाब देने में असमर्थता हुई। एक-दो क्षण बाद, उसने धीरे से उत्तर दिया, "नहीं। मैं अपनी मर्जी से आई हूँ।"

इस जवाब से कर्ण को संतोष मिला। उसे उससे यह पूछने की ज़रूरत नहीं लगी कि वह क्यों आई है। वह कोई पहल करने में असमर्थ थी। उसने उसे बैठने को कहा और खुद रेत पर बैठ गया। वह उससे कुछ दूरी पर बैठी। कुत्ते ने गुर्राना बंद कर दिया और अपने लिए बनाई हुई जगह पर वापस चला गया।

कुंती ने कहा, "चाहे कितने भी वर्ष बीत जाएं, तुम मेरे अपने पुत्र ही रहोगे। और पांडव तुम्हारे छोटे भाई हैं।"

कर्ण तुरंत कुछ कह नहीं पा रहा था। वह कुंती के कथन के गहरे अर्थ को समझने की कोशिश कर रहा था। कुंती ने फिर कहा, "अब तुम्हारा स्थान हस्तिनावती में नहीं, बल्कि उपप्लव्य में है। चलो, हम चलें... यदि दुर्योधन हमें हमारा राज्य सौंप दे, तो तुम इंद्रप्रस्थ के शासक बनोगे। या फिर पांडव सेना के सेनापति बनोगे।"

"हे महान देवी, क्या द्रौपदी इस बात से सहमत होंगी?"

"उसे इसका विरोध क्यों करना चाहिए?"

"वह पांचों पांडवों की पत्नी हैं, लेकिन क्या अब वह मुझे अपना पहला पति स्वीकार करेंगी? आपके दबाव में नहीं, बल्कि स्वेच्छा से।"

कुंती ने अपना सिर उठाया और कर्ण के चेहरे को ध्यान से देखा। कर्ण की नज़र दृढ़ थी। कुंती की नज़र कठोर थी। उसने उत्तर दिया, "कर्ण, मैंने अपने पुत्रों का पालन-पोषण इस प्रकार किया है कि उनमें से कोई भी पराई स्त्रियों के प्रति वैसा व्यवहार न करे और उनके बारे में वैसी बातें न करे जैसा तुमने किया है। यदि तुम्हें वह अवसर मिला होता, तो मुझे पूरा विश्वास है कि तुम द्रौपदी के बारे में वे शब्द नहीं कहते जो तुमने वास्तव में कहे हैं। दुर्योधन और उसके दुष्ट साथियों की संगति में तुम बहुत गिर पड़े हो।"

कर्ण की आँखें और कठोर हो गईं। उन्होंने उत्तर दिया, "तुम्हें मेरी बहू पर नज़र पड़ते ही तुरंत गुस्सा आ जाता है, है ना? मैं पैंसठ वर्ष का पुरुष हूँ। मेरा घर बच्चों और नाती-पोतों से भरा है। मैं क्षत्रिय संगति में रहकर भ्रष्ट हो चुका हूँ और मेरी इतनी पत्नियाँ हैं कि मैं उन्हें संभाल नहीं सकता। क्या तुम मेरे शब्दों का असली अर्थ समझती हो? तुम्हारे पुत्र मुझे बड़े भाई के रूप में स्वीकार कर सकते हैं, क्योंकि वे तुम्हारी आज्ञा मानते हैं। कम से कम वे मुझे बर्दाश्त तो कर ही सकते हैं। लेकिन क्या वह, जो तुम्हारे वंश में तुम्हारे पुत्रों के लिए घर बसाने आई है, मुझे बड़े भाई के रूप में सिंहासन पर बैठने और घर चलाने को स्वीकार करेगी? जिस प्रकार

मेरा अनुभव तुम्हारे पुत्रों से भिन्न भूमि पर प्राप्त हुआ है, उसी प्रकार उसका पालन-पोषण भी कहीं और हुआ है, तुम्हारे पुत्रों से पराये देश में। और फिर क्या तुम मेरे अपने बच्चों और नाती-पोतों की भिन्न पृष्ठभूमि पर भी विचार नहीं करोगी? इन सभी विविध और भिन्न तत्वों को एक साथ मिलाकर, गूँथकर और फिर से ढालकर एक नई शैली में नहीं ढाला जा सकता।"

कुंती चुप रहीं। कुछ देर तक पूरा वातावरण श्मशान की खामोशी में डूबा रहा। सूतंगी के पत्तों पर ठंड के निशान सूरज की किरणों में और भी स्पष्ट दिखाई देने लगे, जो उस समय उन पर पड़ रही थीं। कर्ण ने पूछा, "यह सूतघट्टा है। सूर्य का जन्म हुआ है। रथ बनाने वाले कारीगरों के काम पर आने का समय हो गया है। अगर लोग हमें इस तरह बात करते हुए देख लें, तो बेवजह अटकलें और अफवाहें फैल सकती हैं। क्या आपको कुछ और कहना है? अगर कहना हो, तो जल्दी कहिए।"

कुंती चुप रही, उसकी निगाहें ज़मीन पर टिकी थीं। उसे लगा कि उसकी चिंता सच्ची थी। फिर भी वह इस मौके पर सही शब्द ढूंढने के लिए संघर्ष कर रही थी। सामने वाले किनारे पर एक पेड़ पर बैठी चिड़िया की तीखी आवाज़ सुनते हुए उसने किसी तरह जवाब दिया, "युद्ध में मेरे पाँचों बेटों की रक्षा करना तुम्हारा कर्तव्य है। अर्जुन से तुम्हें विशेष घृणा है। मैंने सुना है कि तुमने कई बार उसे जान से मारने की कसम खाई है।"

"पर वह मेरे प्रति भी उतना ही शत्रुतापूर्ण है। उसने तो कई बार मुझे जान से मारने की कसम खाई है। माँ, क्या आप उससे कहेंगी, 'पुत्र अर्जुन, तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम अपने बड़े भाई कर्ण के जीवन की रक्षा करो?' क्या आप बाकी चारों को भी इसी तरह का आदेश देंगी?"

कुंती मानसिक रूप से असमंजस में पड़ गई। कर्ण के सुझाव पर उसे आश्चर्य तो हुआ ही, साथ ही साथ चिंता भी सताने लगी। अपनी सारी मानसिक शक्ति जुटाकर उसने उत्तर दिया, "आप मेरे साथ चलिए। इससे भाइयों के बीच युद्ध की संभावना टल जाएगी। आपको दुर्योधन से भी लड़ने की आवश्यकता नहीं है। बाकी पांच लोग युद्ध संभाल लेंगे।"

कर्ण ने दृढ़ता से कहा, "हे पूज्यवर, आपने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। नहीं, मैं गलत हूँ। आपने मुझे पर्याप्त रूप से स्पष्ट उत्तर दिया है। लेकिन मेरे मंदबुद्धि मन को और स्पष्ट उत्तर चाहिए। मातृत्व और पुत्रत्व जैविक प्रक्रियाओं के स्वतः प्राप्त

होने वाले उपहार नहीं हैं। वैध मातृत्व एक कठिन परिश्रम से अर्जित अधिकार है, जिसमें वर्षों की देखभाल और परिश्रम शामिल है; बच्चे के मल-मूत्र की देखभाल, स्तनपान, दुलार और स्नेह के वर्ष! आपने निश्चित रूप से अपने पाँचों पुत्रों के मामले में इसे विकसित किया है। मुझे विश्वास है कि आप उन्हें ऐसा कोई आदेश नहीं देंगी जिससे उन्हें हानि हो। इतना ही नहीं। मुझे विश्वास है कि आप युद्ध समाप्त होने से पहले उन्हें यह नहीं बताएंगी कि मैं उनका सबसे बड़ा भाई हूँ। क्यों? क्योंकि आप अपने सबसे बड़े पुत्र के स्वभाव को जानती हैं। वह पारंपरिक धर्म को सर्वोच्च महत्व देता है। आपके अन्य पुत्र भी इसी प्रकार के स्वभाव के हैं। शायद भीम को छोड़कर। क्या आपके पुत्र भीष्म, विदुर और अन्य वरिष्ठों के चरणों को आदरपूर्वक स्पर्श नहीं करते? मान लीजिए कि वे युद्ध लड़ने से इनकार कर देते हैं और इससे पीछे हट जाते हैं, यदि उन्हें अपने रिश्ते के बारे में पता चल जाए तो..." कर्ण? इसलिए, तुम उन्हें यह नहीं बताओगे कि मैं कौन हूँ। क्या मेरा यह कहना सही है?

कुंती सिर झुकाए बैठी रही। उसमें न तो जवाब देने की ताकत थी और न ही उठकर जाने की। उसने देखा कि उसका सीना और गर्दन पसीने से भीग रहे हैं। कर्ण ने आगे कहा, "कृष्ण के यहाँ आकर मुझसे बात करने से पहले मुझे इन मुद्दों और समस्याओं का पता नहीं था। मेरा मानना था कि कुछ अनजान माता-पिता ने मुझे जन्म दिया और नाव में छोड़ दिया। जब मैं मातृत्व और माँ-बच्चे के रिश्ते का अर्थ समझने की उम्र में पहुँचा, तो मुझे एक अनपेक्षित बच्चे के रूप में अपने भाग्य को लेकर शुरू में डर लगा। लेकिन जल्द ही मेरा डर दूर हो गया। मेरी माँ ने मुझे अपने प्यार में डुबो दिया। ऐसा लगता है कि वह आपकी और आपकी माँ की भी सेविका रही थी। कृष्ण ने मुझे कल यही बताया था।"

शायद आप उनके स्वभाव से थोड़ा बहुत परिचित होंगे। वे हाल ही तक जीवित थीं और उन्होंने मुझे बूढ़ा होते देखा। उनके देहांत के बाद, मेरी माँ की कमी मेरे मित्र दुर्योधन की माता गांधारी ने पूरी कर दी। देखिए, मैं इतना बूढ़ा हो गया हूँ, फिर भी मुझे माँ की बहुत ज़रूरत है। बेशक, जब माता राधा जीवित थीं, तब भी गांधारी ने मुझे माँ का प्यार दिया था। लेकिन उस समय मुझे उनके प्यार की इतनी ज़रूरत नहीं थी, क्योंकि मुझे इसकी आवश्यकता नहीं थी। मैंने हस्तिनावती में ही नहीं, बल्कि किसी भी देश में गांधारी से बड़ी माँ के बारे में नहीं सुना। उन्होंने अपने पति को जो सुख नहीं मिला, उसे न चाहते हुए अपनी आँखें त्याग दीं। वे लगभग अंधी हो गईं, अपनी आँखों पर पट्टी बाँधकर हमेशा के लिए बंद कर लीं। शायद

पति के प्रति ऐसी भक्ति रखने वाली पत्नी ही सच्ची मातृत्व का उदाहरण हो सकती है! कितनी ही बार जब मैं उनके पास गया और उनके चरण छूकर कहा, 'माँ, मैं कर्ण हूँ', तो उन्होंने अपने दोनों गर्म हाथों से मेरे झुके हुए सिर पर हाथ रखकर मुझे दीर्घायु का आशीर्वाद दिया। अब छत्तीस वर्ष हो गए हैं जब दुर्योधन ने मेरी सहायता की थी, जब धनुर्षप प्रतियोगिता में सूत होने के कारण मुझे भाग लेने से मना कर दिया गया था। तब मेरी उम्र कितनी थी? उनतीस। उस दिन से ही उस महान माता ने मुझे अपने पुत्रों के साथ अपना मातृ स्नेह साझा करने की अनुमति दी है। क्या यह मानना गलत होगा कि वह चाहती होंगी और अपेक्षा करती होंगी कि कर्ण उनके पुत्रों के हित में पूरी तरह समर्पित हो?

एक बार फिर चारों ओर सन्नाटा पसरा हुआ था। नदी के पानी पर छाई धुंध घनी नहीं थी। नदी के किनारों पर उगी सूतंगी झाड़ियाँ स्थिर खड़ी थीं। यह दृश्य कुंती को हिमालय की ठंड और बर्फ तथा वहाँ अपने पति के साथ बिताए जीवन की याद दिला रहा था। उसे बर्फ से ढके पहाड़ों की निर्मल शांति भी याद आ रही थी। वह असहाय महसूस कर रही थी, मानो विशाल पर्वत अपने भार से उसे दबा रहे हों और उसके शब्दों को रोक रहे हों। कर्ण ने अपना सिर उठाकर उसका चेहरा देखा। उसकी आँखें उस पर टिकी हुई थीं, मानो उसकी दृष्टि उसकी आँखों में कैद हो गई हो। उसने सोचा कि अचानक उसकी दृष्टि चली गई है। लंबी भुजाएँ, चौड़े कंधे, बड़ी आँखें, चौड़ा माथा और गाल। ये सब धर्मराज में नहीं थे। भीम भी हमेशा से अलग था। अर्जुन का शरीर और चेहरा बिल्कुल अलग था। नकुल और सहदेव माद्री की संतान थे। जब ये विचार उसके मन में चल रहे थे, तभी कुत्ता गुर्राने लगा और उठ खड़ा हुआ। उसने काफी शोर मचाया। कर्ण ने उसकी ओर कान लगाए। उसने सोचा कि रथ चलाने वाले काम पर आ रहे हैं। कुत्ता भौंका और उछलता हुआ दूर चला गया।

कर्ण अचानक खड़ा हो गया और बोला, "कृपया अब चली जाइए। हमारे कर्मचारी यहाँ हैं। झूठी अफवाहों या अनावश्यक अटकलों के लिए कोई गुंजाइश न रहने दीजिए।" फिर वह उसके करीब आया। उसके पैरों को कसकर पकड़ते हुए, उसने मानो मन ही मन में धीमी आवाज़ में कहा, "मैंने तुम्हें माँ न कहने का निश्चय किया था। यह सोचकर कि शायद हम फिर कभी न मिलें, मेरा मन बदल गया है। अपने जीवन में मैंने बहुत अपमान और तिरस्कार सहे हैं। लेकिन इन सभी वर्षों में मैंने सुख-सुविधाएँ और लाभ भी भोगे हैं। यदि मैं अब तुम्हें माँ के रूप में अस्वीकार

कर दूँ, तो मैं स्वयं से झूठ बोलने और सुख की वास्तविकता को नकारने का दोषी होऊँगा। हो सकता है तुमने मेरा पालन-पोषण न किया हो। क्या इससे कोई फर्क पड़ता है कि तुमने मुझे जन्म दिया?"

जब वह उसके पैरों से उठ रहा था, उसका सिर उसकी छाती से छू गया। लोगों की भीड़ पास आती जा रही थी। उसने हाथ से इशारा किया कि वह तुरंत चली जाए। उलझन और अनिश्चितता से भरी कुंती चली गई। उसने उंगली से उसे रास्ता दिखाया और फुसफुसाते हुए बोला। झाड़ियों के मोड़ पर जैसे ही वह गायब होने वाली थी, उसने पीछे मुड़कर देखा। उसकी दोनों आँखें आँसुओं से भर उठीं। एक पल के लिए वह जड़वत खड़ी रह गई। उसकी आँखों में भरे पानी की झीलें उसके गालों पर छलक गईं। कुंती गायब हो गई। उसके साथ एक आकृति भी गायब हो गई, एक रूप जो सफेद वस्त्रों में लिपटा हुआ था, सफेद बालों का मुकुट पहने हुए, विशाल शरीर वाला, लंबा लेकिन कमर से ऊपर थोड़ा झुका हुआ। अब उसकी आँखों के सामने केवल घनी उगी हुई सुतांगी झाड़ियाँ ही दिखाई दे रही थीं, जिनके फूल हवा में झूम रहे थे।

—•✳•—

अध्याय 38

सुतांगी घास की घनी झाड़ियों से गुज़रते हुए उसका दिल तेज़ी से धड़क रहा था, और झाड़ियों को पार करने के बाद ही उसकी धड़कन सामान्य हुई, जब उसे एहसास हुआ कि अब वह अपने बेटे को दिखाई नहीं दे रही है। तब उसे पता चला कि वहाँ कोई रास्ता ही नहीं था। वह समझ गई कि उसके बेटे ने ही उसे रास्ता बताया था। वह झाड़ियों के बीच से धीरे-धीरे आगे बढ़ी, रास्ते में आने वाली डालियों को सावधानी से हटाती हुई। उसे संभलकर और धीरे-धीरे कदम रखने पड़े, और

कुत्ते के भौंकने की आवाज़ के पार पहुँचकर वह दूसरे छोर पर पहुँच गई। उसके चारों ओर केवल डालियाँ और पत्ते थे, और ऊपर राख जैसे धुएँ वाले आकाश का सन्नाटा छाया हुआ था। उसे साँस लेने के लिए रुकना पड़ा, दिल की धड़कन को काबू में करना पड़ा, अपने कंधों को हिलाना पड़ा और आगे बढ़ने के लिए अपने पैरों को ज़ोर से पटकना पड़ा। उसने अपने चलने की आवाज़ सुनी। उसे बैठने की ज़रूरत महसूस हुई। और वह गिरे हुए पत्तों और टूटी हुई टहनियों से ढकी ज़मीन पर उकड़ू बैठ गई। लेकिन आराम करने से पहले, उसे एहसास हुआ कि उसकी छाती में उस जगह दर्द हो रहा है जहाँ उसके सिर ने उसे छुआ था जब उसने अपना चेहरा उसके घुटनों के बीच रखा था। उसने दोनों हाथों से उस जगह को टटोला। उसकी लंबी जांघें, अपनी दुबली-पतली अवस्था में भी, किसी भी सिर को संभालने के लिए पर्याप्त मजबूत थीं। कुंती ने मन ही मन स्थिति का जायजा लेते हुए कहा, "कृष्ण, आपने ऐसा क्यों किया? यह एक ऐसा रहस्य था जो मेरे सिवा किसी को नहीं पता था। आपकी बुद्धि कैसी है? तीन दिन हो गए जब मैं आधी रात को नदी किनारे रोई थी। आपने मुझसे पूछा था, 'मुझे सच बताओ।' मुझे पता चला है कि कर्ण आपका पुत्र है। लगता है कि वह आपका विवाह से पहले जन्मा पुत्र है, आपका पहला पुत्र। मुझे सच बताओ।" कृष्ण, मुझे यह रहस्य आपको नहीं बताना चाहिए था। मुझे इसे नकार देना चाहिए था, इसे हमेशा के लिए अपने भीतर दबा लेना चाहिए था। मैं इस रहस्य को अपने भीतर सुरक्षित रखते हुए मर जाती, मेरे साथ ही राख हो जाती, जैसे बेचारी राधा मर गई। जब मैं पांच छोटे बच्चों के साथ विधवा होकर यहाँ आई, तो वह खुद मुझसे छुपकर मिलने आई और मैं उसे पहचान नहीं पाई। उसने मुझे बताया कि वह कौन है। फिर उसने मुझसे कहा, 'स्वामी, वह अब विदेश में धनुर्विद्या सीखने गया है। अगर अब सच सामने आ गया, तो इससे आपकी इज्जत और मान-सम्मान को ठेस पहुंचेगी। क्या आप मुझसे एक वादा करेंगी? वह अब पूरी तरह से मेरा पुत्र बन चुका है। अगर उसे पता चल गया तो... सच यह है कि वह मुझे छोड़ सकता है। मेरा हाथ थामकर मुझसे वादा करो कि तुम हमारे वर्तमान रिश्ते में कभी बाधा नहीं बनोगी। क्या तुम बनोगी?' "खैर, राधा, मुझे इस बात का संतोष है कि मैंने तुमसे किया वादा निभाया। याद रखो, कृष्ण ने ही तुम्हारे और कर्ण के बीच का रिश्ता तोड़ा था, कुंती ने नहीं। तुम भले ही अब इस दुनिया में न हो। फिर भी मैं सच इसलिए कह रहा हूँ ताकि यह तुम तक पहुँच जाए।" फिर उसने अपना सिर उठाकर आकाश की ओर देखा। राख से रंगा

आकाश अपने रहस्यों में खोया हुआ शांत था। सूतंगी के फूल हवा में सरसरा रहे थे। मुझे द्रौपदी से कहना होगा, 'बालिका, कृष्ण, तुम्हें देखे हुए साढ़े तेरह वर्ष हो गए हैं। क्या तुम कर्ण को पति के रूप में स्वीकार करोगी, नहीं वसुषेन को, उन नामों को जो मैंने नहीं दिए, मेरे सबसे बड़े पुत्र को जिसका मैं नाम नहीं रख सका? तुम पाँच संतानों की माता हो और शायद तुम्हारी उर्वरता सूख गई हो या शायद, जैसा कि उसने कहा, वह पुरुष बीज के साथ मिलन से परे जम गई हो। लेकिन उस दिन यदि तुम्हारे पास पर्याप्त उर्वरता होती, तो क्या तुम अपने उपवन में छह संतानों को जगह देती?' कृष्ण ने पैंसठ वर्षों से जमीन में दबे उस रहस्य को क्यों कुरेदा, जैसा कि कर्ण ने स्वयं कहा था, इतने वर्षों की धूल क्यों साफ की? उसने मन ही मन कृष्ण से पूछा। "जिस दल का तुम समर्थन करते हो उसे जिताने के लिए, क्या दर्द की एक संवेदनशील नस को छूना आवश्यक था?"

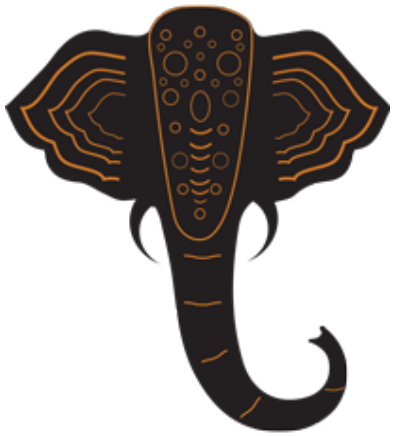
उसके दोनों हाथों के बीच सीने में एक सुखद दर्द था। उसके मन में उस जगह को दबाने की एक स्वप्निल इच्छा थी जहाँ उसने उसे चोट पहुँचाई थी। उसने अपनी आँखें बंद कर लीं। कुंती ने मन ही मन कहा, "बच्चे के जन्म के बाद, मैंने उसे एक बार भी स्तनपान नहीं कराया। वह एक अभागा बच्चा था जो जन्म के तुरंत बाद अपनी माँ से अलग हो गया था, और मैं ही वह थी जिसके कोमल और मातृत्व से भरे स्तन दूध न मिलने के कारण दुख रहे थे। लेकिन जन्म से ही माँ के दूध से वंचित इस बच्चे में अन्य, अधिक सुखी बच्चों की तुलना में माँ पर निर्भरता का भाव अधिक है। धर्म, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव ने कभी ऐसी निर्भरता का भाव नहीं दिखाया। गांधारी, तुम जो आँखों पर पट्टी बाँधे हो, ईर्ष्या से जल सकती हो, लेकिन मुझे तुमसे कोई ईर्ष्या नहीं है क्योंकि तुमने मेरे पुत्र से पुत्रवत भक्ति अर्जित की है। शायद इसलिए कि तुमने अपने पति को जो नहीं मिला, उसे त्यागने के लिए अपनी दृष्टि त्याग दी, इसलिए मेरा पुत्र धर्म भी श्रद्धा से अपनी आँखें आधी बंद कर लेता है।" ...फिर कुंती दोनों आँखें पूरी तरह बंद करके बैठ गई। उसकी भौंहें पसीने से चिपचिपी थीं और पलकें भी पसीने से तर हो गई थीं। उसकी दृष्टि अंतर्मुखी हो गई। यह वैसी ही धुंधली दृष्टि थी जैसी पानी के नीचे होती है, पानी के मंद हरे रंग से छनकर आती हुई दृष्टि। उसे ऐसा लगा मानो पिछले साढ़े तेरह वर्षों से उसके हृदय में सुलग रही युद्ध की इच्छा ठंडे पानी में डूब गई हो। उसका मन हुआ कि वह अपने पुत्रों से कहे, "मेरे प्यारे पुत्रों, धर्म और भीम, मेरी बात ध्यान से सुनो। यह कर्ण तुम्हारा बड़ा भाई है। उसका बड़े भाई के रूप में आदर करो और

उसे उचित सम्मान और निष्ठा दो। यदि दुर्योधन हमारा क्षेत्र लौटाने से इनकार करता है, तो उसे न करने दो। तुम पाँचों, कर्ण के नेतृत्व में, एक नया राज्य बनाओ और नए राज्यों पर विजय प्राप्त करो..." उसने उठकर उन्हें अपनी बदली हुई इच्छा के बारे में बताने की कोशिश की। लाख कोशिश करने के बावजूद, वह अपनी आँखें खोलकर हिल नहीं सकी। पलकें ऐसे चिपक गईं मानो बिल्व फल के चिपचिपे रस से चिपकी हों। शायद अगर गांधारी उसकी आँखों पर बंधी पट्टी हटा दे, तो पलकें भी उतनी ही चिपक जाएँगी। शायद आंखें खोलकर अंतर्मन देखना ज्यादा बुद्धिमानी भरा है! उसे कर्ण के शब्द याद आए, 'अर्जुन भी मुझसे उतना ही क्रोधित है। क्या तुम अर्जुन को आदेश दोगी कि युद्ध में कर्ण के जीवन की रक्षा करना उसका कर्तव्य है? और बाकी चारों की भी?' फिर भी, आंखें बंद करके, उसे कर्ण की आलोचनात्मक टिप्पणी याद आई, 'हे देवी, तुमने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। नहीं, मैं गलत हूँ। तुमने उत्तर काफी स्पष्ट रूप से दे दिया है।' फिर उसने कल्पना में कृष्ण से कहा, 'कृष्ण, अपनी चाची के पुत्रों को युद्ध जितवाने के लिए, तुमने अपनी चाची को शारीरिक रूप से नहीं तो आत्मा से मार डाला है। तुमने ऐसा क्यों किया? तुम पापी हो। तुम्हारा राक्षसी मन है जो धर्म और कर्म के बारे में नहीं सोचता।' कृष्ण के प्रति उसका क्रोध आंसुओं में बदल गया। गर्म आंसुओं से उसकी आंखें भर गईं और पलकें चिपचिपी हो गईं। उसने कृष्ण पर आरोप लगाते हुए कहा, 'कृष्ण, मैं सोचती थी कि केवल तुम ही नैतिकता और न्याय जानते हो।' क्या तुम्हारे सूक्ष्म धार्मिक बोध ने तुम्हें यह नहीं बताया कि तुम्हें इस बुढ़िया के भीतर आग नहीं लगानी चाहिए? हे पापी, तुम पापी!' वह कुछ देर तक फूट-फूटकर रोई और फिर उसे याद आया। उसने कहा था, 'चाची, हमने इतने वर्षों तक इस रहस्य को छुपाए रखा है, और बस बहुत हो गया। हम इसका परिणाम जानते हैं। अब आइए इस रहस्य का पर्दा हटा दें।' कुंती को गहरा अफसोस हुआ। उसने तरह-तरह की बातें कहीं। कानों को बहुत भाने वाली। मानो कोई सुंदर पर्दा हटा दिया गया हो। लेकिन उसके शब्द बोलते ही मिट गए, कोई स्मृति नहीं बची। पर्दा हटने का परिणाम क्या हुआ? 'कृष्ण, इसके बाद जो कुछ भी हुआ है, उसके लिए तुम ही जिम्मेदार हो।' उसने अपनी साड़ी के किनारे से पसीना और आंसू पोंछे, उसे जोर से दबाया। लेकिन पलकें बंद ही रहीं। फिर उसने उन्हें जबरदस्ती खोला। अब खुली आँखों से उसने देखा कि सूतंगी की झाड़ियाँ उसे घेरे हुए हैं। शाखाओं को अलग करके उसने जो रास्ता बनाया था, वह अब उसके पीछे बंद हो गया था।

उसने सोचा, 'मान लो मैं वापस चली जाऊं, लेकिन तब वह वहां नहीं होगा। मान लो मैं उसके घर चली जाऊं?' सिर के ऊपर राख जैसा आकाश भारी बोझ जैसा लग रहा था। भारी आकाश मानो कह रहा हो, 'कुंती, तुम वापस नहीं जा सकती।' कुंती ने सोचा, 'मुझे आज सुबह यहां नहीं आना चाहिए था। तो फिर मैं क्यों आई? मैंने उससे युद्ध में मेरे पांचों बेटों की रक्षा करने की प्रार्थना की थी। लेकिन वास्तव में मैं यह नहीं पूछना चाहती थी। असल में, मैं कुछ भी पूछने नहीं आई थी। मैं चीजों को जानने और समझने की कोशिश कर रही थी। नहीं, किसी को बोलना नहीं चाहिए। शब्द हमारे वश से बाहर निकल जाते हैं और अपनी राह पर चल पड़ते हैं।' फिर वह चुप हो गई। सूतंगी की झाड़ियां सरसराहट कर रही थीं। फिर ऊपर का आकाश उसे दबाने की कोशिश कर रहा था। उसे भ्रम हो रहा था कि आकाश नीचे आ रहा है, धरती पर उतर रहा है। अब उसे एहसास हुआ कि अगर वह इस तरह यहां नहीं आती, तो चीजें इस तरह नहीं होतीं जैसी हुईं। खुद से पूछते हुए, 'मैं क्यों आई?', उसने फिर से अपनी आंखें बंद कर लीं। वही सवाल, अब बस वही सवाल उसे सता रहा था। कुछ देर बाद वह अचानक खड़ी हो गई। उसने कान अंदर की ओर करके सुना। उसे अपने दाहिनी ओर नदी बहती हुई महसूस हुई। वह फिर चलने लगी, अपने हाथों से सूतंगी की शाखाओं को हटाती हुई। पहले वह एक कीचड़ भरे इलाके में पहुँची, और फिर पानी दिखाई दिया। दस कदम आगे बढ़ने पर, वहाँ केवल पानी ही पानी था, कोई हरियाली नहीं थी। उसने पानी से अपने हाथ और चेहरा धोया। फिर उसने हथेली भर पानी लिया, सूर्य की ओर मुँह किया और आँखें बंद कर लीं। उसने पानी बहाते हुए कहा, "राधा, जब तुम्हारा निधन हुआ था, मैं यहीं इस शहर में थी। तब मुझे समझ नहीं आया कि क्या करूँ। लो, मेरी ओर से तुम्हें अर्पित किया गया यह जल, एक विदा आत्मा के रूप में। मेरे बच्चे की माता होने के नाते, मैं तुम्हें अंतिम प्रणाम करती हूँ।"

—•✳•—

भाग आठ



अध्याय 38

एक सुबह, जब राजमहल के चारों ओर अनुष्ठानिक अग्नि का धुआँ फैल गया, तो राजा शल्य ने अपने रथ में दो घोड़े जोते और रवाना हो गए। उनसे आगे शिविर के मुख्य आयोजक अपने कर्मचारियों के साथ पिछली रात ही चले गए थे। राजा, सेना प्रमुखों और आम सैनिकों के लिए, उनकी हैसियत के अनुसार, तंबू और शामियाने लगाना, उनके रात्रि भोजन और पहरेदारी की व्यवस्था करना उनका कर्तव्य और उत्तरदायित्व था। उन्होंने सौ बैलगाड़ियों में खाद्य सामग्री, गद्दे और कंबल, खाना पकाने के बर्तन, ईंधन के लिए लकड़ी की आपूर्ति का प्रबंधन किया। बैलगाड़ियों की आपूर्ति करना किसानों का प्रथागत कर्तव्य था। वे भोर में ही निकल गए थे। सूर्योदय के लगभग दो घंटे बाद, राजा शल्य स्वयं रवाना हुए। उनके आगे घुड़सवार सेना की टुकड़ियाँ थीं। उनके पीछे रथ थे। रथों के बीच शल्य का अपना रथ था।

उनके पीछे वज्र और अजय के रथ थे। तीनों रथों के चारों ओर पैदल सैनिक उनके अंगरक्षकों के रूप में तैनात थे। उनके पीछे हाथियों की कतारें थीं। उनके पीछे पचास घोड़ागाड़ियाँ थीं जो हथियारों और अन्य युद्ध सामग्री - तीर, धनुष, तलवारें, भाले, गदाएँ, बरछी और योद्धाओं के वस्त्रों से लदी हुई थीं। उनके पीछे सैनिकों के मनोरंजन के लिए चुनी गई महिलाओं को ले जाने वाली गाड़ियाँ थीं। सबसे पीछे पैदल सेना थी। दूर-दूर से ग्रामीण सेना के इस भव्य जुलूस को देखने के लिए एकत्रित हुए थे।

रुक्मरथ ने युद्ध में लड़ने के लिए स्वेच्छा से हामी भरी। लेकिन उसने देखा कि उसके पिता युद्ध के प्रति अत्यधिक उत्साही थे। वे जिद्दी थे और उन्होंने रुक्मरथ से कहा था, "युद्ध में जाना या न जाना तुम्हारी मर्जी है। मैं तो निश्चित रूप से जाऊंगा।" वज्र के लिए तो योद्धा जीवन के सिवा कुछ नहीं था। रुक्मरथ चिंतित हो गया और सोचने लगा, "अगर सब लोग युद्ध में चले गए तो शासन और प्रशासन कौन संभालेगा? जब कोई प्रभारी नहीं होगा, तो पड़ोसी राज्य इस अवसर का लाभ उठाकर आक्रमण कर सकते हैं। संभव है कि उत्तरी जंगलों में रहने वाले नाग भी हमला कर दें।" इसलिए यह तय किया गया कि वह राज्य का प्रशासन और रक्षा करने के लिए वहीं रुकेगा। राजपरिवार के सभी पुरुषों ने जोर दिया कि वज्र और अजय की पत्नियों को भी वहीं रुकना चाहिए क्योंकि यह एक बड़ा युद्ध होने वाला था। पत्नियों ने पुरुषों के निर्णय का पालन करने के लिए सहमति दे दी, लेकिन उन्होंने व्यंग्यात्मक टिप्पणी करने से खुद को नहीं रोका, "वैसे भी, आपकी जरूरतों को पूरा करने के लिए आपके पास नौकरानियों की पूरी सेना है!"

मौसम सुहावना था, न तो सर्दियों की भीषण ठंड थी और न ही गर्मियों की चिलचिलाती गर्मी। तेज धूप में सेना दोपहर तक लगातार चलती रही। वे इरावती नदी की एक छोटी सहायक नदी के किनारे थोड़ी देर रुके, भोजन किया और विश्राम किया। फिर वे तीन घंटे और चले और वहीं रुक गए। उन्होंने वहीं पूरे दिन डेरा डालने का निर्णय लिया। सूरज अभी भी तेज चमक रहा था। सूर्यास्त में अभी लगभग दो घंटे बाकी थे। लेकिन रथ के हिलने-डुलने से राजा शल्य थक गए थे। वे तंबू के बीच में लकड़ी के तख्ते पर बिछे गद्दे पर सो गए। टांगें फैलाते-फैलाते उन्हें नींद आ गई। सूर्यास्त तक उनकी नींद पूरी हो गई। वे उठे, बैठ गए और चारों ओर नजर डाली। हालांकि यह एक तंबू था, फिर भी देखने में बहुत सुंदर था। इसमें एक अलग ही भव्यता थी! छत सूखी दर्भा घास से ढकी थी और दीवारें भी उसी तरह

बनी थीं। दीवारों पर रंग-बिरंगे पर्दे लटके थे। पलंग राजसी शैली का था, जो मुलायम और चमकदार रेशमी कपड़े से ढका हुआ था। वहाँ आरामदायक तकिए थे। सामने का दरवाज़ा भी भव्य ढंग से सजा हुआ था। राजा उठे और बाहर झाँका। उनके पास ही उनके पुत्रों वज्र और अजय के तंबू थे। उनके तंबुओं के चारों ओर सैनिकों के लिए अन्य संरचनाएँ थीं, जो उनके पद और प्रतिष्ठा के अनुरूप थीं। इस सेना को रसद आपूर्ति करने का प्रभारी चक्षु था। उसने अच्छा काम किया था, और शल्य रात्रि भोज के बाद उसे एक सुंदर स्त्री से पुरस्कृत करना चाहता था। उसी समय, ब्राह्मण पुरोहित अनुष्ठानिक अग्नि लेकर उसके तंबू में आया, और फिर उसने घी डालकर अग्नि को प्रज्वलित किया, जिससे एक मनमोहक सुगंध उत्पन्न हुई। शल्य ने श्रद्धापूर्वक अग्नि-अनुष्ठान में भाग लिया।

जब पिता, दोनों पुत्र और ब्राह्मण - कुल चार लोग - भोजन कर रहे थे, तब वज्र ने कहा, "भोजन एक नए तरीके से तैयार किया गया है। परिवापा व्यंजन महल के रसोइयों द्वारा पकाए गए भोजन से कहीं अधिक स्वादिष्ट है।"

साल्या मान गई और बोली, "ठीक है, चलो रसोइए को भी इनाम दे देते हैं।"

अजया ने पूछा, "उन्होंने स्टेक और मटन पकाया है। आज खास मौका क्या है?"

ब्राह्मण ने अनुमान लगाया, "शायद आज कोई विशेष दिन है।"

भोजन के बाद, राजा साल्या ने रसद अधीक्षक को बुलवाया और उत्तम भोजन और समग्र व्यवस्था की प्रशंसा की। फिर उन्होंने कहा, "नौकायन दासियों के शिविर में जाओ। तुम्हें जो सबसे अच्छी लगे, उसे चुन लो, वह तुम्हारी सेवा के लिए हमारी ओर से तुम्हें इनाम होगी। ध्यान रखना कि युद्ध के अंत तक व्यवस्था ऐसी ही बनी रहे। जिसे तुम चुनोगे, वह पूरी तरह तुम्हारी संपत्ति होगी।"

अधिकारी ने आदरपूर्वक हाथ जोड़कर उत्तर दिया, "आपने इस बेचारे पर बड़ी मेहरबानी की है। लेकिन वास्तव में ये सारी व्यवस्थाएं दुर्योधन के आदमियों की थीं। वे बस हमारा इंतज़ार कर रहे थे, ताकि हमारा भव्य स्वागत कर सकें। मेरे कर्मचारियों को भी बिना कोई काम किए भरपेट भोजन मिला।"

वज्र और अजय आश्चर्य से अभिभूत हो गए। तभी शल्य को याद आया। दुर्योधन खोखले वादों और झूठी बातों का आदमी नहीं था। वास्तव में, उसके कर्म उसकी बातों से कहीं बढ़कर थे। अब वज्र और अजय स्थिति को बेहतर ढंग से समझ पाए। यद्यपि यहाँ खाना पकाने में इस्तेमाल होने वाली सामग्रियाँ घर जैसी ही थीं, फिर भी खाना पकाने की शैली ने स्वाद को अलग बना दिया था। शायद यह कुरुओं और

उनकी हस्तिनावती का विशिष्ट स्वाद था! खैर, हर चीज ने उन्हें सच्चा आनंद दिया था।

शल्य के मन में अब तक संदेह पनप रहा था। अब वह भी मिट गया। उन्होंने सोचा, "हमारे लिए मुख्य मुद्दा क्षेत्र या किसे क्या मिलेगा, यह नहीं है। नहीं, मूल मुद्दा यह है कि धर्म की विजय होनी चाहिए। सत्ता संघर्ष के बाद, यदि पांडव न्याय का मार्ग अपनाने को तैयार हों, तो हम उन्हें क्षेत्र दे सकते हैं। हमारा असली झगड़ा तीनों पांडवों से है, न कि सबसे छोटे दो पांडवों से। दुर्योधन के इन्हीं शब्दों के कारण मैंने पांडवों को समर्थन देने का अपना पूर्व वादा तोड़ दिया था।" वे इस अचानक हुए निर्णय को लेकर चिंतित थे। अब उनका मन संतुष्ट और शांत था। हाँ, अब उन्हें पूरा विश्वास हो गया था कि दुर्योधन केवल खोखले वचनों का धनी नहीं है। उन्होंने मन ही मन दोहराया, "दुर्योधन के कर्म उसके वचनों से कहीं अधिक प्रबल हैं।" मौसम सुहावना था, न ज़्यादा गर्म और न ज़्यादा ठंडा। नीम और तुलसी की तीखी सुगंध से मच्छर दूर रहे, क्योंकि उनकी पत्तियों को बाहरी दीवारों के चारों ओर जलाकर उनका धुआँ दीवारों पर फैलाकर उन्हें शुद्ध कर दिया गया था। वह अपने महल की तरह ही चैन से सोया। हमेशा की तरह, वह आधी रात को उठा। वह सुबह की महत्वपूर्ण घटना—युद्ध की शुरुआत—के बारे में उत्सुक था। उसने खुद से पूछा, "क्या यह युद्ध सचमुच शुरू होगा? या यह केवल मानसिक तनाव और धमकियों का युद्ध है?" इस बारे में सोचते-सोचते उसे हल्की नींद आ गई। फिर वह जागा और अपने सहायक नीपा के साथ नदी पार करके शौच करने गया। फिर उसने स्नान किया और ब्राह्मण पुजारी के साथ अनुष्ठानिक मंत्रों का जाप किया और अग्नि-अनुष्ठान संपन्न किया। इसी बीच, बाहर इंतज़ार कर रहा आपूर्ति अधिकारी अंदर आया और झुककर बोला, “दुर्योधन के आदमी कह रहे हैं, ‘हम आपके तम्बू और भोजन का इंतज़ाम कर देंगे।’ वे चाहते हैं कि मैं और मेरा दल आपके सौ बैलगाड़ियों के साथ अपने स्थान पर लौट जाएँ। मैं क्या करूँ?”

महाराजा शल्य तुरंत उत्तर नहीं दे सके। उन्होंने अपने पुत्रों अजय और वज्र को बुलवाया। उन्होंने सुझाव दिया, "यह सत्य है कि अतिथियों को आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करना मेज़बान का दायित्व है। फिर भी, यदि अतिथि अपना सारा सामान वापस भेज दें तो क्या इससे उनका सम्मान कम नहीं होगा? युद्ध के समय कौन जाने कब तक चलेगा? साथ ही, उनका सामान भी खत्म हो सकता है। इसलिए, हमारी आपूर्ति भी उनके साथ-साथ जारी रहनी चाहिए।"

राजा साल्या ने यह सलाह मान ली। लेकिन उनके आपूर्ति अधिकारी ने एक और बात कही, "उन्होंने हमारे सैनिकों के मनोरंजन के लिए पच्चीस गाड़ियों में दासी-नौकरानियाँ भेजी हैं। वे हमसे कह रहे हैं कि हम अपनी दासियों को गाड़ियों में भरकर वापस भेज दें।"

साल्या ने एक मिनट सोचा और फिर अधिकारी से पूछा, "क्या इसका मतलब यह है कि आपने हस्तिनापुरा की दासियों को हमारे सैनिकों में बांट दिया है?"

"तो क्या हमारे सैनिकों ने उन्हीं का खाना नहीं खाया था?"

राजा मौन होकर मन ही मन सोचने लगा। फिर उसने पूछा, "वज्र और अजय, क्या तुम रात में मद्रा की कन्याओं के साथ गए थे या हस्तिनापुरा की कन्याओं के साथ?"

वे चुप रहे। उन्हें समझ आ गया था कि उनके पिता उनसे बहुत नाराज़ हैं। पिता ने कहा, "पूरी दुनिया के मर्द मद्रा देश की स्त्रियों को देखकर मोहित हो जाते हैं, वे इतनी आकर्षक होती हैं। तुम दोनों ने बिना सोचे-समझे उनकी दासियों को स्वीकार कर लिया। चाहे वे कितनी भी मित्रवत क्यों न हों, दूसरे देशों की स्त्रियों को इतनी आसानी से स्वीकार नहीं करना चाहिए। और खासकर युद्ध के समय तो बिल्कुल नहीं। आज से उनकी स्त्रियों को सख्ती से वापस भेज दो।"

कोई कुछ नहीं बोला। पिता चले गए और अपने पलंग पर बैठ गए। अजय उनके पास गया और विनम्रता से बोला, "अगर सैनिकों को यह एक सुविधा भी न मिले तो वे युद्ध में कैसे लड़ेंगे? हमारे पास दासियों की संख्या बहुत कम है। कल रात हमारे सैनिक इन्हीं कुछ महिलाओं के लिए लड़ रहे थे। हमें अपनी महिला आपूर्ति को पूरा करने के लिए उनकी महिलाओं को बुलाना पड़ा। उन्हें भी रहने दीजिए। आखिर वे हमारे मित्रों की दासियाँ हैं। क्या हमारे सैनिकों को युद्ध में अपनी वीरता और पराक्रम का प्रदर्शन करके मद्रास भूमि का गौरव नहीं बढ़ाना चाहिए?"

शल्य चुप रहे। उनके दोनों पुत्र यह कहकर बाहर चले गए कि उन्हें प्रस्थान की तैयारी करनी है। अपने स्वामियों द्वारा लिए गए निर्णयों की पुष्टि करने के बाद, रसद अधिकारी अपना काम करने के लिए निकल पड़ा। नाश्ते के बाद, उन्होंने अपनी यात्रा फिर से शुरू की। सबसे आगे रसद से भरी गाड़ियाँ, फिर घुड़सवार सेना, फिर रथ-योद्धा और मध्य में राजाओं के रथ थे। राजाओं के रथ अंगरक्षकों से घिरे हुए थे। उनके पीछे हाथियों की कतारें थीं। हस्तिनावती की दासियाँ और रसद कर्मचारी अगले शिविर की व्यवस्था देखने के लिए आगे चले गए थे।

रास्ते में उन्हें शतद्रु, सरस्वती, दृषद्वती और यमुना नदियों को पार करना था। इनके अलावा, कई छोटी-छोटी नदियाँ और नाले भी थे। दुर्योधन ने इन नदियों को पार कराने के लिए नौकाओं का इंतजाम किया था। नाविकों ने रथों को पार कराया। हाथी सवारों को उनके हाथियों पर बिठाकर ही पार कराया गया। संकरी नदियों और नालों को पार कराने के लिए बांस के पुल बनाए गए थे। परिवहन की व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि पैदल सेना भी संतुष्ट थी।

चौदह दिनों की यात्रा के बाद वे हस्तिनावती पहुँचे। उनके आगमन से एक दिन पहले ही दुर्योधन ने रास्ते में उनके शाही स्वागत की व्यवस्था कर रखी थी। उसने राजा शल्य को आदरपूर्वक प्रणाम किया और वज्र और अजय का हार्दिक आलिंगन किया। वह बलवान पुरुष था, जिसका मुख चौड़ा और गंधार जैसा था और सीना उभरा हुआ था। हस्तिनावती मुकुट और सोने-बहुमूल्य पत्थरों से बने हार पहने वह गरिमामय प्रतीत हो रहा था। स्वागत की औपचारिकताओं के बाद उसने रास्ते में आतिथ्य सत्कार में हुई किसी भी चूक के लिए उनसे क्षमा मांगी। फिर वज्र और अजय स्नान करने चले गए।

दुर्योधन कूटनीतिक ढंग से शल्य के बैठने की जगह से लगभग चार उंगल नीचे एक आसन पर बैठ गया।

उन्होंने राजा शल्य से कहा, "मामा, मेरे छोटे भाई ने मुझे सब कुछ बता दिया है। मुझे पता है कि यह प्रचार किया गया है कि दुर्योधन लालची है, वह दूसरों के राज्य हड़पने की लालसा रखता है, वह लाभ के लिए जुआ खेलता है, आनंद के लिए नहीं। यह मेरा सौभाग्य है कि आपने इस सारी झूठी प्रचार को समझकर मेरी सहायता की। जो वास्तव में मुझे बचाएगा और मेरी रक्षा करेगा, वह केवल सेनाएँ नहीं, बल्कि आपका हार्दिक आशीर्वाद है। पूरा आर्यावर्त जानता है कि आप धर्म के सच्चे रक्षक हैं। मुझे विश्वास है कि आपका मेरे साथ जुड़ना कुछ राजाओं के मन में धर्म के प्रति मेरी निष्ठा को लेकर जो संदेह है, उसे दूर कर देगा।"

साल्या ने कुछ नहीं कहा।

दुर्योधन ने आगे कहा, "एक बहुत महत्वपूर्ण मामला सुलझाना है। मैंने आपका इंतज़ार इसलिए किया ताकि निर्णय लेने से पहले मैं आपके ज्ञान और अनुभव का लाभ उठा सकूँ। अभी मैं इसे समझा नहीं सकता क्योंकि आप यात्रा की थकान से ग्रस्त हैं।"

"कोई बात नहीं। अब तुम मुझे बता सकती हो," साल्या ने कहा।

"शायद अब तक आपको मेरे पक्ष में खड़े शासकों की सूची पता चल गई होगी। वे सभी महान योद्धा हैं। हम अभी अपनी संयुक्त सेनाओं के सर्वोच्च सेनापति के चुनाव पर विचार-विमर्श कर रहे हैं। जैसा कि आप जानते हैं, मैं हमेशा बड़ों, बुजुर्गों का आदर करता हूँ। क्या ऐसा करना आर्य धर्म नहीं है? हमारे पक्ष के शासकों में आप सबसे वरिष्ठ हैं। मेरी इच्छा है कि आप यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँ, और इस युद्ध में हमारी सफलता का श्रेय आपको ही जाएगा, जिससे क्षत्रिय जगत में मद्रास जाति का नाम रोशन होगा। बेशक, एक प्रस्ताव यह भी है कि यदि आप इसे स्वीकार नहीं करते हैं, तो पूज्य भीष्म इसे संभाल लें। भले ही हमारे दादाजी को औपचारिक रूप से हमारी सेनाओं का प्रमुख बना दिया जाए, लेकिन युद्ध का वास्तविक संचालन अंततः आपकी ही जिम्मेदारी होगी। आपकी बहुमूल्य राय प्राप्त करने के बाद ही मैं दूसरों को इसे स्वीकार करने के लिए मनाऊँगा।" दुर्योधन ने उत्तर दिया।

शल्य ने कहा, "पूज्य भीष्म ही हमारे सर्वोच्च सेनापति होने चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह पद दादाजी को ही मिलना चाहिए।"

कुछ देर तक दोनों चुप रहे। थोड़ी देर बाद चाचा ने दुर्योधन से कहा, "हम कल हस्तिनावती पहुँचेंगे। युद्ध कहाँ लड़ा जाएगा? और यह कब शुरू होगा?"

"इन सवालों का फैसला तो हमें लूटने आए लुटेरों को करना है। मुझे युद्ध में ज़रा भी दिलचस्पी नहीं है। नहीं, मैं इससे बचना ही बेहतर समझता हूँ। तुमने मुझसे कहाँ पूछा? पांडवों के समर्थन की असली रीढ़ पाँचाल वंश है, यानी द्रुपद, जिसने अपनी पुत्री को पाँचों में बाँटने के लिए दे दिया था। वह हस्तिनावती और दादा भीष्म को नष्ट करना चाहता है। इसीलिए उसने हमें उकसाया है और अपने दामादों को हमारे खिलाफ युद्ध के लिए तैयार किया है। क्या तुम्हें इसका कारण नहीं पता? लगता है हमारे गुरु द्रोणाचार्य द्रुपद के सहपाठी थे। द्रोणाचार्य एक गरीब ब्राह्मण थे। द्रुपद के राजा बनने के बाद, द्रोणाचार्य उनसे मदद मांगने गए। उस अहंकारी ने उनका अपमान किया और उन्हें नीचा दिखाया। कृपया बताइए, चाचा जी। जो राजा विद्या का सम्मान नहीं करता, वह किस नरक में जाएगा? क्या कोई ऐसा व्यक्ति जो अग्नि अनुष्ठानों और अन्य रीति-रिवाजों का सम्मान नहीं करता, जीवित रह सकता है? वैसे, क्या आपको अपनी यात्रा के दौरान दैनिक अनुष्ठान करने में कोई कठिनाई हुई?" दुर्योधन ने पूछा।

साल्या ने तुरंत जवाब दिया, "नहीं, नहीं। आपके लोगों ने घी की भरपूर आपूर्ति का इंतजाम किया था। मेरे पुजारी ने पवित्र अग्नि को अत्यंत सावधानी से अपने साथ ले गए थे।"

दुर्योधन ने कहा, "उस अहंकारी क्षत्रिय द्रुपद ने आदरणीय द्रोणाचार्य का घोर अपमान किया। दादा भीष्म सदा धर्म के प्रति समर्पित रहे हैं। संरक्षण की तलाश में द्रोणाचार्य हस्तिनावती आए थे। हम सब तब छोटे लड़के थे। यह चालीस वर्ष पूर्व की बात है। द्रुपद द्रोणाचार्य, उन्हें शरण देने वाले भीष्म और भीष्म द्वारा संरक्षित एवं विकसित हस्तिनावती को नष्ट करने की साजिश रच रहा है। क्या किसी परिवार को नष्ट करने के लिए उसे विभाजित करना कारगर रणनीति नहीं होगी? इसीलिए उसने अपनी पुत्री का विवाह पाँचों बंधुओं से कर दिया ताकि उन्हें अपने शिविर में ले जा सके और अब उनके नाम पर हस्तिनावती पर आक्रमण कर सके। कामपिल्य दक्षिण में यहीं पास में है। उनका आक्रमण वहीं से शुरू होगा। हमें गंगा के दूसरे किनारे पर डेरा डालकर अपनी भूमि की रक्षा करनी होगी। अन्यथा वे नावों से हम पर आक्रमण करने आ सकते हैं। हममें से कुछ का मानना है कि नदी में कुछ दूर तक नीचे की ओर जाकर उनका इंतजार करना ही सर्वोत्तम है।"

जैसा कि दुर्योधन ने शायद अनुमान लगाया था, उसके शब्दों ने शल्य को द्रुपद के प्रति क्रोध से भर दिया। शल्य को याद आया कि पांडवों की ओर से उनके पास आने वाला पुजारी पांचाल का पुजारी था। पांडवों में से कोई भी नहीं आया था। शल्य अब युद्ध को पांडवों और कौरवों के बीच नहीं, बल्कि कुरु और पांचालों के बीच का युद्ध समझने लगा। पांडवों का समर्थन करने के अपने पूर्व वादे को याद करके वह प्रसन्न हुआ कि उसने एक गंभीर गलती करने से खुद को बचा लिया था। उसका पूरा मन ऊपर से नीचे तक भीष्म के दर्शन में डूबा हुआ था। भीष्म केवल एक कुरु दादा नहीं थे। वे क्षत्रियों में सबसे ऊंचे कद के व्यक्ति थे। बाकी सभी साधारण क्षत्रिय थे। लेकिन वे एक अत्यंत वीर और शक्तिशाली योद्धा थे। एक ब्रह्मचारी जो आत्म-बलिदान की साक्षात मूर्ति थे। उसने सोचा, "यहाँ एकत्रित योद्धाओं में, मैं वरिष्ठता में भीष्म के बाद दूसरे स्थान पर हूँ। दुर्योधन ने मुझे सर्वोच्च सेनापति बनने के लिए कहा था। पूज्य भीष्म को वह पद संभालने दीजिए। जब वे वहाँ हैं, तो मैं इसके बारे में सोच भी कैसे सकता हूँ?" शल्य को जल्द से जल्द भीष्म से मिलने की तीव्र इच्छा हुई। उन्हें याद आया कि बहुत समय पहले भीष्म उनके भाई के पुत्र के लिए वर की तलाश में उनके पास आए थे। दुर्योधन ने रास्ते

भर उनका भरपूर आतिथ्य सत्कार किया। कुरु वंश उदारता और आतिथ्य सत्कार के लिए प्रसिद्ध था। भीष्म भी दुर्योधन की तरह ही उदार थे। जब वे वर मांगने आए थे, तो कितने उपहार लाए थे! शल्य ने याद करते हुए कहा, "हमने उनसे कहा कि हम वधू मूल्य की प्रथा को प्राथमिकता देते हैं। बस इतना ही। और उन्होंने हम पर उपहारों की वर्षा कर दी।" फिर राजा शल्य अपनी स्थिति बदलकर तकिये पर झुक गए। दुर्योधन के अनुकरणीय आचरण का एक और प्रमाण यह था कि वह चार उंगल नीचे आसन पर बैठा था, मानो कोई सेवक उनके चरणों में बैठा हो। अचानक मद्रा के राजा को आर्य आचार संहिता पर गर्व हुआ। इस गर्व के साथ ही उनके मन में धर्म की रक्षा करने का दृढ़ संकल्प जागा।

शल्य ने दुर्योधन से पूछा, "क्या पांडव उपप्लव्य नगर में युद्ध की तैयारी नहीं कर रहे हैं? लेकिन आपने यह कैसे अनुमान लगाया कि आक्रमण कम्पिल्य की ओर से होगा?"

"दरअसल, वे उपप्लव्य में इसलिए मौजूद हैं ताकि यह भ्रम पैदा हो सके कि वे आक्रमण की शुरुआत वहीं से करेंगे। वास्तव में वे उपप्लव्य और खांडवप्रस्थ के बीच में हैं।"

"What is this Khandavaprastha?"

यह वही स्थान है जिसे बाद में उन्होंने इंद्रप्रस्थ कहने का अहंकार किया। जब हमने इसे दान में दिया था, तब इसका मूल नाम खांडवप्रस्थ था। अब हम जुए में हारे हुए इस शहर को युद्ध के द्वारा वापस जीत लेंगे। यह उनकी एक धूर्त चाल है कि वे यह अफवाह फैला रहे हैं कि उनकी नज़र हस्तिनावती पर नहीं है, ताकि हमारे समर्थकों को बाँटा जा सके। वास्तव में, पाँचाल अपने नाम पर युद्ध छेड़ रहे हैं। वैसे, आपको एक महत्वपूर्ण तथ्य की जानकारी नहीं है। धृष्टद्युम्न नाम का एक व्यक्ति है, जो इन पाँचों भाइयों की पत्नी द्रौपदी का बड़ा भाई है। उसने पांडव सेना का सर्वोच्च सेनापति पद ग्रहण कर लिया है। वह पांडव सेना का सर्वोच्च सेनापति कैसे बन गया? पांडवों में से किसी ने यह सर्वोच्च पद क्यों नहीं संभाला? क्या यह इस बात का संकेत नहीं है कि असली लड़ाई द्रुपद की सेना द्वारा लड़ी जाएगी? पांडवों के सैनिक कहाँ हैं? उनका इरादा यह आभास कराना है कि वे वहाँ से आगे बढ़ेंगे, लेकिन वास्तव में वे कामपिल्य से शुरू करके हस्तिनावती पर आक्रमण करके उसे नष्ट करना चाहते हैं। गैर-आर्य तब तक चैन से नहीं बैठेगा जब तक वह हमारी आर्य संस्कृति का पूर्ण विनाश न कर दे।

अंतिम वाक्य शल्य की समझ से परे था। इसलिए उसने दुर्योधन से पूछा, "क्या द्रुपद आर्य नहीं है?"

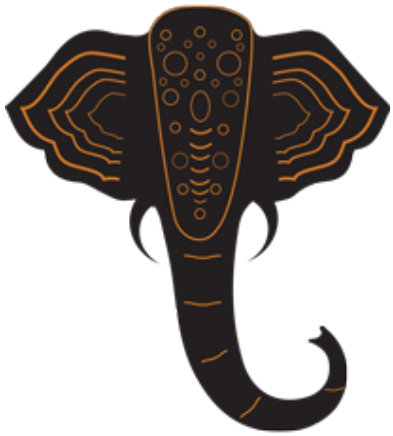
"मामा, आप तो पुराने ज़माने के हैं, धर्म के पक्के अनुयायी हैं। कुटिल लोगों के दिमाग की अंदरूनी चालें आपकी समझ से परे हैं।" वह हँसे। फिर धीरे-धीरे समझाते हुए बोले, "पांचाल देश की आधी आबादी आदिवासी है, जंगलों में रहती है। इसका मतलब है कि आधी आबादी गैर-आर्य है। आदिवासियों में भाई-भाई की पत्नी की प्रथा है। इसी से द्रुपद का अपनी बेटी के लिए ऐसा विवाह हुआ। क्या यह साबित करने के लिए काफी सबूत नहीं है कि वह आर्य नहीं हैं? उनकी आधी सेना गैर-आर्यों की है। उनका इरादा अलग है। वे द्रुपद की युद्ध में मदद सिर्फ आर्य संस्कृति के केंद्र हस्तिनावती को नष्ट करने के इरादे से कर रहे हैं। अब समझ में आया कि आर्य शासकों का बड़ा हिस्सा इस युद्ध में हमारे साथ क्यों शामिल हुआ है? याद रखिए, इस युद्ध में पांडवों का साथ देने वाले सभी या तो गैर-आर्य हैं या कम से कम अर्ध-आर्य हैं।"

शल्य ने खुद को एक नए काम में लगा हुआ पाया। अब उसे एहसास हुआ कि आर्य जगत की अंदरूनी बातों की उसे कोई समझ नहीं थी। उसने देखा कि रुक्मरथ आर्य राजनीति के रहस्यों को उससे कहीं बेहतर जानता था। शल्य ने सोचा, "जब मैं प्रशासन चला रहा था, तब मेरे पास नाममात्र के जासूस थे। रुक्मरथ ने जासूसों की व्यवस्था को और मजबूत कर दिया है। नई व्यवस्था में जासूस मंत्रियों के माध्यम से नहीं, बल्कि सीधे राजा को रिपोर्ट करते थे। खैर, मेरे जैसे बूढ़े लोगों और शासन के हमारे विचारों के दिन अब गिने-चुने हैं।" फिर उसने आह भरी। लेकिन उसे इस बात का ज्यादा अफसोस नहीं हुआ। उसने अपने तम्बू की खिड़कियों से बाहर देखा। उसने हर जगह दर्भा घास देखी, जो एक या दो आदमियों जितनी ऊंची थी। झाड़ियों को पार करने के लिए कहीं कोई रास्ता नहीं था। इसके पत्ते नुकीले थे जो चेहरे और शरीर को घायल कर सकते थे। शल्य को आश्चर्य हुआ कि यात्रा के दौरान उसने इस पर ध्यान नहीं दिया था। कुरु देश में दर्भा घास बेतहाशा उगी हुई थी, जबकि मद्रा देश में यह बहुत कम थी। शल्य ने सोचा, "यह तीव्र वृद्धि कहाँ से शुरू होती है? क्या सरस्वती नदी के इस किनारे से?" उन्हें लगा कि कुरु भूमि एक पवित्र भूमि है। उन्होंने पूछा, "इस वृद्धि का क्या महत्व है?" दर्द कम करने के लिए अपने अंगों को हिलाते हुए उन्होंने सोचा, "हमारे राज्य का उत्तरी भाग नागों के आक्रमणों के लिए असुरक्षित है। मेरे सारे स्वर्णिम

वर्ष उनसे लड़ने में व्यतीत हुए। अब जब हमारे अधिकांश पुरुष दूर हैं, तो वे निश्चित रूप से रातों में आकर आक्रमण करेंगे। क्या घर पर मौजूद छोटी सेना पर्याप्त है?" फिर उन्हें लगा कि रुक्मरथ के रहते चिंता का कोई कारण नहीं है। जंगलों से आने वाले बर्बरों द्वारा पवित्र कुरु भूमि को नष्ट करने की योजना ने उन्हें क्रोधित कर दिया। उन्होंने मन ही मन कहा, "दुर्योधन, कम से कम आधे आर्य पुरुष हैं, और केवल बाकी आधे ही स्त्रियाँ हैं।" दुर्योधन उन्हें घूरता रहा, उनके मन की बात समझ नहीं पाया। इस पर राजा शल्य ने ताली बजाई। द्वार पर प्रतीक्षा कर रहा उनका सेवक नीपा आया। उसने वज्र और अजय को बुलवाया। उन्होंने जल्दी से स्नान किया और आ गए। उन्होंने उन्हें दुर्योधन का सार बताया कि गैर-आर्य और अर्ध-आर्य द्रुपद के नेतृत्व में आर्यों के हस्तिनावती को नष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं। फिर उन्होंने अपने पुत्रों से वचन लिया कि यदि आवश्यक हुआ तो वे अपने प्राणों की आहुति देकर कुरु भूमि की रक्षा करेंगे। इसी प्रकार, उन्होंने अपनी सेना के प्रमुखों को बुलवाया, उन्हें द्रुपद के नेतृत्व में गैर-आर्य और अर्ध-आर्यों द्वारा आर्यों के प्रमुख सांस्कृतिक केंद्र हस्तिनावती को नष्ट करने की साजिश के बारे में समझाया और उनसे भी कुरु भूमि की रक्षा के लिए लड़ने का वचन लिया। अपना उद्देश्य पूरा होने पर दुर्योधन ने अपने मामा को प्रणाम किया और अन्य लोगों की प्रशंसा की। यह कहते हुए कि वह अगले दिन हस्तिनावती के द्वार पर उन सभी का स्वागत करने के लिए उपस्थित रहेंगे, वह अपने रथ पर सवार होकर अंगरक्षकों के साथ अपने महल लौट गए।

—•✳•—

भाग नौ



अध्याय 40

हर कोई हस्तिनावती को देखने के लिए बेताब था। उन्हें बताया गया था कि यह दुनिया का सबसे पुराना शहर है। कितना पुराना, यह कोई नहीं जानता था।

इस पर कई सम्राटों का शासन रहा था। कहा जाता है कि इसका निर्माण चालीस पीढ़ियों में हुआ था। सैनिकों को गंगा नदी के उत्तरी भाग से पार कराया गया और नदी के दूसरे किनारे पर उनका शिविर लगाया गया। शल्य, वज्र, अजय और अन्य नेताओं को शहर में लाया गया और एक विशाल महल में ठहराया गया। महल तक जाने वाली सड़क ही चौड़ी थी, जबकि शहर की बाकी सभी सड़कें संकरी गलियाँ थीं। घर ईंटों से बने थे, जिनमें से अधिकांश एक से अधिक मंजिल के थे। ये घर धनवानों का प्रतिनिधित्व करते थे। महल के पीछे ईंटों से बनी इमारतें और झोपड़ियों से घिरी पाँच गलियाँ थीं। यह सूत समुदाय का क्षेत्र था। इमारतें एक-दूसरे

से अलग नहीं थीं, बल्कि सटी हुई थीं। शल्य को आश्चर्य हुआ कि इतना समृद्ध शहर किष्किंधा की तरह इतना भीड़भाड़ वाला कैसे हो सकता है। फिर भी, वह और अन्य लोग उत्साहित थे। उन्हें इस शहर की रक्षा करने का गौरव प्राप्त था। शहर मित्रवत शासकों से भरा हुआ था। लगभग सभी आर्य जगत के शासक वहाँ एकत्रित हुए थे। वे एक-दूसरे को जानने-समझने में व्यस्त थे। उनमें से कुछ तो कुछ देशों की भौगोलिक स्थिति से भी अनभिज्ञ थे। विशेष रूप से, सुदूर देश से आए गांधारों ने तो पूर्वी देशों के बारे में सुना भी नहीं था। दक्षिण से आए लोग उत्तर और पश्चिम के उन देशों से बिल्कुल अनभिज्ञ थे जहाँ से बाह्लिक आए थे। हर कोई एक-दूसरे के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने का प्रयास कर रहा था। प्रशासन प्रणाली पर अक्सर चर्चा होती थी। इस प्रकार की अखिल आर्य सभाएँ हाल ही में दुर्लभ हो गई थीं। पिछले कई वर्षों से स्वयंवर, जो ऐसी सभाओं का आयोजन करते थे, नहीं हुए थे। हाल के वर्षों में, धर्मराज द्वारा किए गए राजसूय अनुष्ठान के अलावा कोई भी राजसूय अनुष्ठान नहीं किया गया था। अश्वमेध जैसे कहीं अधिक कठिन और खर्चीले अनुष्ठान को करने का तो सवाल ही नहीं उठता था। लेकिन इस युद्ध ने उनमें से कई को एक साथ ला दिया था, और कई लोगों के बाद में आने की उम्मीद थी। हालांकि, किसी को भी यह नहीं पता था कि युद्ध किस दिन शुरू होगा। लेकिन क्षत्रिय मनोरंजन की सुविधाओं की कोई कमी नहीं थी - भोजन, शराब और आनंद के लिए सुंदर महिलाओं की कोई कमी नहीं थी। जो लोग तैरना चाहते थे, उनके लिए महान गंगा नदी थी। शामों को घुड़सवारी खूब होती थी। दुर्योधन मेहमानों की सुख-सुविधाओं का जायजा लेने और उनकी शान-शौकत को बढ़ाने के लिए उनके बीच घूमता रहता था। फिर भी, कई युवा शासकों और कुछ योद्धाओं को समय बहुत धीरे-धीरे बीतता हुआ लगता था। वे अधीर और ऊबे हुए थे। उनमें से कई जुए के खेल में मग्न हो जाते थे।

वज्र और अजय अपने साथियों के साथ घुलमिलकर काफी समय बिताते रहे। वे समय-समय पर अपने पिता को अपनी सीखी हुई बातें बताते रहे। उदाहरण के लिए, उन्होंने शल्य को बताया कि दुर्योधन और कर्ण एक-दूसरे के बहुत करीब थे। कर्ण सूत जाति का था और भीष्म और द्रोण दोनों ही उससे घृणा करते थे। कर्ण भी उनके प्रति वैसी ही शत्रुता रखता था। दुर्योधन ने सभी को समान रूप से प्रसन्न रखते हुए, चतुराई से अपनी सेना को एकजुट कर लिया था। इस युद्ध ने राजपरिवारों में, भाई-भाई और पिता-पुत्र के बीच कई मतभेद पैदा कर दिए थे।

ऐसा प्रतीत होता था कि दुर्योधन द्वारका के यादवों में फूट डालने में सफल हो गया था। इस प्रकार उसने पांडवों के पीछे सभी यादवों को एकजुट करने के कृष्ण के प्रयासों को विफल कर दिया। परिणामस्वरूप, कृष्ण के बड़े भाई बलराम दुर्योधन का समर्थन करने के लिए हस्तिनावती की ओर चल पड़े। उनके तीन-चार दिनों में वहाँ पहुँचने की उम्मीद थी। बलराम एक अत्यंत वीर और शक्तिशाली योद्धा थे, और वे एक कुशल नेतृत्वकर्ता भी थे। अब ऐसा प्रतीत हो रहा था कि कृष्ण अकेले ही निराश होकर पांडवों के पास गए थे। उनके साथ केवल चार-पाँच यादव योद्धा ही गए थे। कृष्ण ने शांति वार्ता का बहाना बनाकर हस्तिनापुर आकर कौरवों के शिविर को विभाजित करने का प्रयास किया था। दुर्योधन को इस चाल का भनक लग गई और उसने कृष्ण को गिरफ्तार कराने का प्रयास किया, लेकिन भीष्म और द्रोण ने उसे रोक दिया। वास्तव में, ऐसा कहा जाता है कि कृष्ण ने जानबूझकर भीष्म और द्रोण को दुर्योधन के विरुद्ध भड़काने का प्रयास किया था। कहा जाता है कि दुर्योधन की ऐसी कार्रवाई की आशंका में कृष्ण अपने अंगरक्षकों को भेस बदलकर लाए थे। खैर, वे बच निकलने में सफल रहे।

वज्र और अजय नदी के दूसरे किनारे पर डेरा डाले अपने सैनिकों से मिलने नियमित रूप से जाया करते थे। ढलान और नीचे के मैदान में फैले हुए तम्बुओं से शिविर में हर जगह सैनिकों और घोड़ों की चहल-पहल थी। शुरुआत में दोनों भाई विभिन्न देशों से आए सैनिकों का अध्ययन करने में रुचि रखते थे। जल्द ही उनकी रुचि समाप्त हो गई। और सैनिक भी वास्तविक कार्रवाई न होने से ऊबने लगे थे। इतने सारे सैनिकों का बचा हुआ भोजन जमा होकर सड़ रहा था और इतने सारे सैनिकों के मूत्र और शौच से असहनीय दुर्गंध का एक भयानक वातावरण बन गया था। यह वह रणनीतिक स्थान था जहाँ से पंचालों द्वारा हस्तिनावती पर आक्रमण शुरू करने की उम्मीद थी। वहाँ से सैनिकों को कहीं और ले जाना संभव नहीं था। इसके अलावा, दुर्योधन को स्वयं आने वाले सैनिकों की संख्या का कोई निश्चित अनुमान नहीं था, इसलिए अग्रिम योजना बनाना संभव नहीं था। वास्तव में, उसकी अपेक्षा से अधिक सैनिक आ चुके थे। अब उसे इतनी बड़ी संख्या में सैनिकों को भोजन और आवास प्रदान करने की कठिनाइयों का एहसास हुआ। इसमें कोई शक नहीं कि उनके खजाने में सोने की कोई कमी नहीं थी। लेकिन उनके अनाज का भंडार घटता जा रहा था। सामान्य प्रथा के विपरीत, उन्हें उसी वर्ष दूसरी बार गांवों से अनाज का भुगतान वसूलना पड़ा। और लोग अपना अनाज जमीन के नीचे

छिपाकर भुगतान से बचने की कोशिश कर रहे थे। इससे क्रोधित होकर राजा ने अपने सैनिकों को जंगलों में भी छिपे हुए अनाज की तलाश करने का आदेश दिया। सैनिकों को जब भी जमीन के नीचे अनाज जमा करने का संदेह होता, वे जमीन खोद डालते थे। दुर्योधन ने इस शिविर के लिए गांवों से बलवान पुरुषों और महिलाओं को रसोइयों के रूप में भर्ती कराया था। ऐसी अफवाहें भी थीं कि अन्य देशों के सैनिक, काम न मिलने के कारण, महिलाओं की तस्करी करने और फिर एक महिला के बदले सात से आठ पुरुषों की दर से उनका बलात्कार करने के लिए गांवों में छापे मार रहे थे। जनता में युद्ध के प्रति एक तीव्र और लगभग उन्मादी घृणा विकसित हो गई थी।

मद्रा के कुछ क्रोधित सैनिकों ने वज्र और अजय से पूछा, "उन्हें हमें युद्ध के समय के आसपास बुलाना चाहिए था। उन्होंने हमें समय से पहले यहाँ इकट्ठा होने के लिए क्यों कहा?"

कुछ लोगों ने कहा, "क्या युद्ध तब शुरू नहीं होता जब दुश्मन हम पर हमला करते हैं?"

फिर भी कुछ अन्य लोगों का कहना है, "भले ही वे युद्ध में हमें पूरी तरह से नष्ट न कर दें, लेकिन हम बीमारियों से मक्खियों की तरह मर रहे हैं, जिनमें से कुछ बीमारियां सीधे गंदगी की दुर्गंध के कारण होती हैं।"

दोनों भाई अपने सैनिकों की भावनाओं और पीड़ा को समझते थे। इसलिए वे उन पर चिल्लाना नहीं चाहते थे। इसके बजाय, उन्होंने उन्हें धैर्य रखने की सलाह दी। ऐसा करते हुए भी, दोनों भाइयों को दुर्गंध को नाक में जाने से रोकने के लिए अपनी उंगलियाँ नाक में डालनी पड़ीं और फिर हस्तिनावती के अधिक सुख-सुविधाओं में लौट गए।

दोनों भाइयों को उल्टी जैसा महसूस हुआ। जब वे कस्बे लौटे, तो वही घर था। वही खाना। वही औरतें, या वही जुए का खेल। इसलिए वे उत्तर की ओर चल पड़े; नदी उनके दाहिनी ओर थी। वहाँ इतने राजा थे कि राजाओं का महत्व लगभग खत्म हो गया था! जल्द ही स्थानीय लोगों ने राजशाही में रुचि खो दी, और यहाँ तक कि उनसे ऊब भी गए। शासकों को अपने साथ अंगरक्षक ले जाना आवश्यक नहीं लगा। जब दोनों भाई कुछ दूर चले,

शहर से लगभग चार मील दूर, वे युद्ध के लिए तैयार रथों की विशाल संख्या देखकर आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने उन्हें गिनना शुरू किया, लेकिन गिनती भूल

गए - दो हज़ार? पाँच हज़ार? खैर, गिनती करना असंभव था। उन्हें एहसास हुआ कि यह एक विशाल युद्ध होने वाला है, लेकिन वे सोचने लगे, "यह कब शुरू होगा? या क्या युद्ध होगा ही नहीं? दुस्साना ने उनके शहर में आकर संकेत दिया था कि यह केवल शक्ति प्रदर्शन बनकर रह सकता है, कोई वास्तविक मुकाबला नहीं। शायद सेनाओं, रथों और पशुओं के इस विशाल जमावड़े की खबर पाकर पांडवों ने युद्ध न करने का फैसला किया हो। तो इसका मतलब है कि हमारे सैनिक यहाँ बीमारी से मर जाएँगे।" वे जल्द से जल्द निर्णय की उम्मीद कर रहे थे, चाहे जो भी हो। वज्र को अपने गृहनगर की याद आने लगी। उनकी पत्नी बड़ी चतुर थी। जब भी वह अपने लिए कोई नई दासी चुनते, वह चतुराई से दोनों पक्षों को भेदते हुए, पति को ठेस पहुँचाए बिना अपनी बात मनवा लेती थी। इस प्रकार उनके लिए उनका प्रेम बढ़ता गया। रथों की उन विशाल कतारों को देखकर उन्हें उनकी पत्नी की याद आ गई। और उनकी स्मृति उन्हें व्याकुल कर रही थी।

—•⁕•—

अध्याय 41

शल्य का प्रारंभिक अहंकार समय के साथ धीरे-धीरे कम होता गया। ऐसा नहीं था कि दुर्योधन उनका कम सम्मान करता था। वास्तव में, वह समय-समय पर शल्य से मिलने आता और उनका अभिवादन करता था। शल्य दुर्योधन की समस्याओं को समझता था, विशेषकर इतने सारे राजाओं की देखभाल करने की उसकी ज़िम्मेदारी को। शल्य जिज्ञासा से भरा हुआ था। वह हर शासक से, जिससे वह मिलता, विभिन्न राज्यों के नाम, आकार, सेना और उपलब्धियों के बारे में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करता था। इस जानकारी से उसे तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में स्वयं को देखने में मदद मिली और उसका आत्म-मूल्यांकन अधिक विनम्र और

संयमित हो गया। उसे यह भी स्पष्ट होता जा रहा था कि यदि युद्ध छिड़ गया, तो वृद्ध होने के कारण वह कई अन्य लोगों की तुलना में युद्ध कौशल और साहस का प्रदर्शन बहुत कम कर पाएगा। इससे उसकी आत्म-छवि को ठेस पहुंची। उसने सोचा, "खैर, मैं आ तो गया हूँ। चलो युद्ध को अंत तक देख लेता हूँ। और मुझे विश्वास है कि मेरे पुत्र, वज्र और अजय, मद्रा का नाम खराब नहीं करेंगे और अच्छी तरह से लड़ेंगे।" इस विचार से उसे कुछ राहत मिली।

लेकिन हस्तिनावती आने का एक प्रबल कारण था। वह महान भीष्म के दर्शन करना चाहता था। भीष्म को देखे हुए साठ वर्ष बीत चुके थे, जब वे पांडु के लिए वर की तलाश में मद्रा आए थे। शल्य को पता चला कि उस यात्रा के बाद भीष्म हस्तिनावती से बाहर नहीं निकले थे। सिवाय एक अपवाद के, जब वे धर्मराज द्वारा आयोजित राजसूय अनुष्ठान में भाग लेने गए थे। भीष्म एक ऐसे व्यक्तित्व थे जिनका पूरे आर्यावर्त में आदर था। मद्रा के राजा को आशा थी कि भीष्म उनके आगमन पर उनका व्यक्तिगत रूप से स्वागत करेंगे। लेकिन वे उनसे मिलने नहीं आए। ऐसा प्रतीत होता था कि वे अब तक किसी से व्यक्तिगत रूप से नहीं मिले थे। उन्होंने किसी का भी व्यक्तिगत रूप से स्वागत नहीं किया था। अपने आगमन के अगले दिन शल्य ने दुर्योधन से भीष्म से मिलने की इच्छा व्यक्त की। दुर्योधन ने उत्तर दिया, "वे अस्वस्थ हैं और विश्राम कर रहे हैं। उचित समय पर मैं तुम्हें उनके पास ले चलूँगा।" शल्य ने मन ही मन पूछा, "मैं यहाँ दो महीने से हूँ। क्या वे इतने समय से बीमार थे?" भीष्म के विषय में वज्र और अजय दो सूचनाएँ लेकर आए थे। पहली यह कि वृद्ध भीष्म मानसिक रूप से बीमार थे, और अपने दो पोते-पोतियों की मृत्यु का दुख सहन नहीं कर पा रहे थे, जिन्हें उन्होंने बड़े प्यार और देखभाल से पाला-पोसा था। दूसरी यह कि वे दुर्योधन की ओर से युद्ध करने के इच्छुक नहीं थे, और इसे छिपाने के लिए उनकी बीमारी की कहानी फैलाई गई थी। इस कहानी के अनुसार, भीष्म ने स्वयं को एकांतवास में बंद कर लिया था। चाहे जो भी बात सच हो, इससे राजा शल्य को कोई राहत नहीं मिली। वे चिंतित थे कि यदि भीष्म युद्ध के विरुद्ध हैं, तो इसका अर्थ है कि दुर्योधन धर्म के विरुद्ध कार्य कर रहा है। उन्होंने स्वयं से प्रश्न किया, "क्या मैं उसके झूठे तर्कों में फँस गया था?" भीष्म से मिलने की उनकी इच्छा और प्रबल हो गई। एक दिन वे रथ पर सवार होकर भीष्म के महल गए। द्वारपाल ने शल्य को बताया कि स्वामी घर पर नहीं हैं। उसने यह भी कहा कि उसे नहीं पता कि वे कहाँ गए हैं। शल्य ने संदेश छोड़ा, "मद्र के राजा शल्य आपसे

मिलने आए थे।" उन्होंने द्वारपाल से कहा कि भीष्म के लौटने पर यह संदेश पहुंचा दे। फिर वे रथ में सवार हुए और सारथी को आगे बढ़ने का आदेश दिया।

कई राजाओं ने अपनी-अपनी जासूसी प्रणालियाँ स्थापित कर रखी थीं। इन जासूसों के माध्यम से पांडव शिविर के शासकों की गतिविधियों, दुर्योधन से पुराने अपराधों का बदला लेने के लिए पांडवों से मिले राजाओं की पहचान, कौरव शिविर के शासकों की पहचान और पांडवों के प्रति व्यक्तिगत द्वेष के कारण कौरव शिविर में शामिल हुए शासकों की जानकारी एकत्र की जाती थी। कुछ शासक युद्ध से संबंधित कई मामलों पर गरमागरम चर्चा करते थे। राजा शल्य को अपने पुत्र रुक्मरथ की याद आई। उन्हें विश्वास था कि यदि वह आया होता, तो वह अपने साथ अपनी जासूसी प्रणाली भी ले आता। शल्य को लगता था कि वह इन सब चीजों में अच्छा नहीं है। उसने कभी अपनी जासूसी प्रणाली बनाने के बारे में सोचा ही नहीं। वज्र और अजय भी कुछ खास अच्छे नहीं थे। वे कुशल योद्धा थे। शल्य स्वयं बहुत बूढ़ा था। हस्तिनावती आए अधिकांश शासक उससे कम से कम तीस वर्ष छोटे थे। इसलिए, वह आसानी से उनसे मेलजोल स्थापित नहीं कर पाता था। उदाहरण के लिए, वह उनकी संगति में खुलकर शराब नहीं पी सकता था। और निश्चित रूप से स्त्रियों के साथ संबंध तो बिल्कुल नहीं बना सकता था। साल्या को लगता था कि इस उम्र में तो महिलाओं के बारे में बात करना भी शर्मनाक है। बहादुरी भरे कारनामे करना तो दूर की बात है; यहाँ तक कि उस पर दांव लगाना भी उसे हास्यास्पद लगता था। जब समानता ही नहीं है, तो दोस्ती कैसे हो सकती है? उसे बस अपने दोनों बेटों द्वारा जुटाई गई जानकारी से ही संतोष करना पड़ता था। अक्सर उसका मन घर लौटने का करता था। लेकिन फिर, इतने लंबे समय तक वहाँ इंतज़ार करने के बाद कोई कैसे जा सकता है?

इसी बीच खबर आई: पांडव अंततः अपनी सेनाओं के साथ आगे बढ़ रहे थे। सात टुकड़ियाँ थीं, जिनमें से प्रत्येक का एक अलग सेनापति था। सात सेनापति थे द्रुपद, विराट, धृष्टद्युम्न, शिखंडी, सत्यकी, चेकितान और भीमसेन। ये सभी कुशल सेनापति थे। इन सभी ने सर्वसम्मति से धृष्टद्युम्न को अपना सर्वोच्च सेनापति चुना था। एक और खबर भी फैली। यह खबर थी कि पांडव सेना उपप्लव्य से उत्तर की ओर बढ़ रही है। शायद इंद्रप्रस्थ की ओर। इस खबर ने हस्तिनावती में दुर्योधन के समर्थन में एकत्रित शासकों की नज़र में उसकी विश्वसनीयता को चकनाचूर कर दिया। उन्हें स्पष्ट हो गया कि पांडव केवल उस राज्य को पुनः प्राप्त करने में रुचि

रखते थे जो उन्होंने जुए के खेल में खो दिया था, न कि हस्तिनावती को नष्ट करने में। कुछ स्पष्टवादियों ने तो यह बात दुर्योधन के सामने ही कह दी। दुर्योधन भी बहुत असमंजस में था। उनकी दुविधा यह थी: मान लीजिए कि वे उस रास्ते जाने का नाटक करें और उन्हें धोखा देकर हस्तिनावती की ओर दौड़ पड़ें, तो क्या किया जाए? उन्हें एहसास हुआ कि उन्होंने इस संभावना पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया था। उन्होंने तुरंत कर्ण और दुस्साना के नेतृत्व में एक छोटी सी सेना को इस स्थिति से निपटने के लिए भेजा। लेकिन पांडव सेना उस रास्ते पर बिल्कुल नहीं मुड़ी, बल्कि उत्तर की ओर बढ़ती रही। दुर्योधन और उनके सलाहकारों को शत्रु सेना की चाल समझने में पूरा एक दिन लग गया। दुर्योधन को अब पूरा यकीन हो गया था कि पांडवों की रणनीति हिरण्यवती नदी के किनारे से कुरु क्षेत्र पर आक्रमण करने की है। उन्होंने शत्रु से बीच रास्ते में मिलने का फैसला किया और उन्हें हस्तिनावती तक पहुंचने से रोकने का निश्चय किया। तदनुसार, उन्होंने अपने समर्थकों की सेनाओं को, जो वहाँ बिना काम के ऊब रही थीं, उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ने का आदेश दिया। अब जब आखिरकार कुछ हो रहा था, तो सैनिक अधिक उत्साहित हो गए। सेनाएँ अलग-अलग समूहों में आगे बढ़ीं। उन्हें जासूसों द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर आगे बढ़ना था, और कोई स्पष्ट और सीधा रास्ता नहीं था। उन्हें पेड़ों के झुंडों, घनी घास के मैदानों और झाड़ियों से होकर गुजरना पड़ा। इससे उनकी यात्रा धीमी हो गई। और जब सैनिक एक पंक्ति में मार्च कर रहे थे, तो उनकी टुकड़ी कितनी लंबी लग रही थी! गिनना मुश्किल था, मानो एक अंतहीन पूंछ हो।

केवल सेनाएँ ही रवाना हुईं, लेकिन शासक राजधानी में ही रुके रहे। दुर्योधन ने व्यक्तिगत रूप से सभी शासकों से मिलकर कहा, "पूज्य भीष्म हमारे सर्वोच्च सेनापति बनने के लिए सहमत हो गए हैं। कृपया आइए। हमें सभी सेनापतियों की उपस्थिति में उन्हें औपचारिक रूप से सर्वोच्च सेनापति के रूप में स्थापित करना है।" इतने दिनों से वहाँ रहने के बावजूद, उनमें से किसी को भी भीष्म के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। वे सभी उस महान योद्धा के दर्शन के लिए उत्सुक और उत्साहित थे। माना जाता था कि उनकी आयु एक सौ बीस वर्ष थी। यह अच्छी बात थी कि वे सभी उनके नेतृत्व में युद्ध करेंगे। लेकिन सभी के मन में यह जानने की जिज्ञासा थी कि भीष्म अब तक मौन और गुमनाम क्यों रहे? उन्होंने यह कमान क्यों स्वीकार की? उनके पास समय नहीं था। उसी दोपहर वे रथों में सवार होकर कुरुओं के दरबार में गए। उनका स्वागत पहले से कहीं अधिक भव्यता से किया

गया। वास्तव में, दुर्योधन ने उन्हें भव्य आतिथ्य प्रदान करने में कभी संकोच नहीं किया था। शासकों की सभा के केंद्र में दुर्योधन का सिंहासन था। उनके बगल में, सिंह के आकार के सिंहासन पर स्वयं भीष्म विराजमान थे। सभी की निगाहें आश्चर्य से उन पर टिकी थीं। लंबा कद, लेकिन कमर और पीठ झुकी हुई। उनके सिर पर क्षत्रिय मुकुट था। चेहरा झुर्रियों से भरा हुआ था। उनकी गोरी त्वचा पर जगह-जगह काले धब्बे थे, जो समय के प्रभाव को दर्शाते थे। उभरी हुई और सफेद रंग की नसों वाली उनकी हथेली बगल के तकियों पर टिकी थी। साफ, चौड़ी आंखें, लेकिन धंसी हुई, देखने वालों पर कुछ हद तक उग्र प्रभाव डालती थीं। सिर थोड़ा झुका हुआ था, लेकिन बुढ़ापे का क्षीण प्रभाव नहीं था। शल्य के बगल में बैठे अजय ने पूछा, "इतना कमजोर व्यक्ति किस प्रकार का आदेश दे सकता है?"

क्योंकि शल्य ने प्रश्न इतनी ऊँची आवाज़ में पूछा कि दूसरों को भी सुनाई दे गया, इसलिए शल्य क्रोधित हो गया। आँखों में क्रोध दिखाते हुए उसने फुसफुसाकर कहा, "पूज्य भीष्म के विषय में बात करते समय अत्यंत आदरपूर्ण शब्दों और लहजे का प्रयोग करना चाहिए।"

अजय ने फुसफुसाते हुए वही सवाल दोहराया। शल्य के पास तुरंत कोई जवाब नहीं था। फिर भी, उनके लिए उस युवक के हल्के लहजे में भीष्म के बारे में बात करना असंभव था। उन्होंने चुप रहना ही बेहतर समझा। लेकिन अजय उनकी ओर घूर रहे थे, जवाब की उम्मीद में। वज्र भी जवाब के लिए अपने पिता की ओर मुड़े। इस बात से चिंतित कि चुप रहने से कहीं उन्हें यह गलतफहमी न हो जाए कि वह उनसे सहमत हैं, उन्होंने अंत में कहा, "तुम्हारे जैसे लड़कों को इस योद्धा की महानता का कोई अंदाजा नहीं है। वर्षों पहले, काशी के राजा द्वारा आयोजित स्वयंवर में, भीष्म ने अकेले ही दुल्हनों को उठाया था। जब शासकों की पूरी भीड़ उन पर टूट पड़ी, तब भी उन्होंने उन्हें पराजित किया। कुरु राज्य के विस्तार में भीष्म का ही योगदान था।"

वज्र स्पष्ट रूप से असमंजस में थे, जैसा कि उनकी आँखों से झलक रहा था। उन्होंने शल्य से पूछा, "क्या तुमने कहा कि वह कन्याओं को अगवा कर लेता था? लेकिन क्या वह आजीवन ब्रह्मचारी नहीं है?"

"अपने लिए नहीं। अपने छोटे भाई के लिए।"

"लड़की तभी खुश होगी जब उसे उसका चाहने वाला अपने साथ ले जाए। एक के द्वारा ले जाए जाने और फिर किसी और को सौंप दिए जाने में उसे क्या सुख

मिलेगा? क्या उसका यह छोटा भाई घर पर गुड़ियों से खेल रहा था?"

शंख बजने से उनकी चर्चा रुक गई। ढोल गड़गड़ाने लगे। सभा का ध्यान उस वृद्ध योद्धा की ओर गया। दुर्योधन खड़ा हुआ, उपस्थित राजाओं को प्रणाम किया और भीष्म को इस युद्ध का सर्वोच्च सेनापति नियुक्त करने की अनुमति मांगी। सभा ने सहमति में जयकार की। दुर्योधन ने औपचारिक रूप से भीष्म को सर्वोच्च सेनापति का ताज पहनाया। उन्हें सोने की थाली में धनुष, बाण और तलवार भेंट की गई। उन्होंने दोनों हाथों से तलवार उठाई।

इसके बाद विभिन्न विभागों के सेनापतियों के चयन की प्रक्रिया शुरू हुई। मुख्य प्रश्न यह नहीं था कि किसे चुना जाए, बल्कि यह था कि किसे बाहर रखा जाए। हर कोई सेनापति बनना चाहता था और उन्होंने इसके लिए अपना उत्साह दिखाया। दुर्योधन खड़ा हुआ और उसने योद्धाओं के शौर्य, निष्ठा, पराक्रम और शत्रु के प्रति शत्रुता की जमकर प्रशंसा की। फिर उसने एक-एक करके नाम लिए - कुरुओं और पांडवों के धनुर्विद्या शिक्षक द्रोण, द्रोण के पुत्र अश्वत्थामा, मद्रास के राजा शल्य, कर्ण, चंद्रवंश के भूरिश्रवा, सिंधुवंश के राजा जयद्रथ, कंबोज के राजा सुदक्षण, भोज के राजा कृतवर्मा, मामा शकुनि, भाई दुस्साना और बाहलिका। सभी अगले नामों की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे। लेकिन दुर्योधन ने सूची वहीं रोक दी। वज्र और अजय गिनती कर रहे थे। कुल ग्यारह नाम थे, अतः ग्यारह सेनापति थे। इस प्रकार सशस्त्र बलों में ग्यारह विभाग थे। वे प्रसन्न थे कि उनके पिता उन ग्यारह में से एक थे। इसका मतलब यह था कि वे उसके माध्यम से बात कर सकते थे।

सेनापतियों को पुष्पमाला पहनाकर, माथे पर सिंदूर लगाकर और वस्त्र एवं तलवार भेंट करके औपचारिक रूप से नियुक्त किया गया। भीष्म ने पहली बार अपने मुख से धीमी लेकिन स्थिर आवाज़ में कहा, "यदि हम शत्रु को शहर तक पहुँचने देंगे तो हम शहर के विनाश को न्योता देंगे। हमें उनका सामना राजधानी से दूर ही करना होगा। आज ही सेनापतियों को अपनी टुकड़ियों के साथ निकलना होगा। मैं उनके साथ रहूँगा।"

दुर्योधन ने कितनी देर तक भाषण दिया! लेकिन पूज्य भीष्म ने अपना भाषण चार वाक्यों में ही समाप्त कर दिया। सभी ने इस अंतर को महसूस किया। भोजन के बाद वे रवाना हुए। युद्ध में भाग लेने आए सभी शासक सेनापति नहीं बने। लेकिन दुर्योधन ने सभी को उनकी सेनाओं के आकार के अनुसार पद और प्रतिष्ठा प्रदान की। उदाहरण के लिए, पचपन पैदल सैनिकों के एक समूह को पट्टी कहा जाता

था; और समूह के एक अधिकारी को पट्टी प्रमुख नियुक्त किया जाता था। तीन पट्टी प्रमुखों के ऊपर सेरिदमुख या गुलममुख का पद होता था। तीन गुलममुखों के ऊपर गणमुख का पद होता था। सभी को एक उपाधि दी गई थी, और किसी को भी उपेक्षित नहीं किया गया था। वज्र और अजय गणमुख बने।

—•✳•—

अध्याय 42

सुबह से ही सैनिक मार्च कर रहे थे। मार्च करते सैनिकों के बीच-बीच में राशन और आवश्यक सामान से लदी गाड़ियाँ थीं, युद्ध के दौरान रथों के खराब होने पर उनकी मरम्मत के लिए औजार, चमड़े की रस्सियों का भंडार, आदि।

हाथियों को नियंत्रित करने के लिए कई तरह की चीज़ें बांधी गई थीं: भाले; बरछी; तीर रखने के लिए थैलियाँ; धातु की लाठियाँ; पताकाएँ; अलग-अलग आकार और मोटाई की रस्सियाँ, नारियल की रस्सी, गद्दे; तेल; गुड़; तीरों पर लगाने के लिए ज़हर से भरी शीशियाँ; नुकीली लाठियाँ; ज़हर लगे तीर और चमड़े के वस्त्र। रथों की संख्या सैनिकों की संख्या के बराबर थी। दो घोड़ों वाले रथ, चार घोड़ों वाले रथ और विशेष झंडे वाले रथ, यदि उनमें कोई मान्यता प्राप्त योद्धा सवार हो। प्रत्येक रथ के साथ घोड़ों पर सवार दो अंगरक्षक और दो पैदल सैनिक थे जो दोनों पहियों की सुरक्षा करते थे। प्रत्येक सारथी ने अपने रथ को फूलों से सजाया था। वे पूरे रास्ते फूल तोड़ रहे थे। फूलों के लिए मची होड़ के कारण अक्सर यातायात जाम हो जाता था। सबसे पीछे हाथी थे। उनकी पीठ से चारे के गट्ठे लटक रहे थे और मोटे गद्दे वाली सीट पर सात लोग बैठे थे, जिनमें से दो पेशेवर हाथी पालक थे जो जानवरों को नियंत्रित करने के लिए इस्तेमाल होने वाले उपकरण लिए हुए थे। उनमें से दो कुशल तीरंदाज थे, जबकि दो तलवारबाज़ थे।

सातवां भाला चलाने में माहिर था, जो दूर से भी निशाने पर सटीक वार कर सकता था। उनके हथियार आसन के बीच में रखे थे। वे खुद को मालाओं से सजाने में किसी से कम नहीं थे। उनके हाथी भी अपनी गर्दन में विशाल मालाओं से सजे हुए थे।

हस्तिनावती में प्रवास के दौरान वज्र और अजय ने कई मित्र बना लिए थे। उनमें चंद्रवंशी भूरी भी शामिल थे, जो उनके सबसे घनिष्ठ मित्र बन गए थे। दुर्योधन ने अपने भाई भूरिश्रवा को सेनापति नियुक्त किया था। भूरी और उनके एक अन्य भाई, शाला, वज्र और अजय के साथ गण प्रमुख बन गए थे। भूरिश्रवा का अपना जासूसी नेटवर्क था। इसलिए शल्य के दोनों पुत्रों को नवीनतम घटनाओं की जानकारी मिलती रहती थी। पांडव सेना का सामना करने के लिए प्रस्थान करते समय भूरी, वज्र और अजय एक ही रथ में सवार हुए।

अजय ने पूछा, "ऐसा लगता है कि पांडवों के पास केवल सात सेनापति हैं। क्या इसका मतलब यह नहीं है कि उनकी सेना हमारी सेना से छोटी है?"

Bhoori said, "Yes."

वज्र ने आगे कहा, "दुर्योधन के इस दावे को याद करो कि उनके साथ कोई नहीं है, जबकि पूरा आर्यावर्त उनके साथ है। लेकिन सात टुकड़ियाँ कोई छोटी सेना नहीं होतीं।"

रथ शहर से चार मील दूर था। उस बिंदु तक का रास्ता राजसी था। लेकिन हाल ही में रथों, हाथियों और बैलगाड़ियों के घोड़ों के इस्तेमाल के कारण सड़क ऊबड़-खाबड़ और गड्ढों से भरी हो गई थी। कांपते हुए रथ में अजय ने कहा, "क्या आपको नहीं लगता कि उनकी तरफ के सेनापति अपेक्षाकृत युवा दिखते हैं?"

"बिल्कुल। उनके सर्वोच्च सेनापति धृष्टद्युम्न की आयु लगभग पचास या इक्यावन वर्ष होगी। और हमारे सेनापति की आयु एक सौ बीस या बाईस वर्ष बताई जाती है। शिखंडी अपने भाई धृष्टद्युम्न से काफी छोटे बताए जाते हैं। सत्यकी और चेकिताना की आयु लगभग पचास वर्ष होगी। यद्यपि भीम बावन या तिरपन वर्ष के हैं, फिर भी उनमें अकेले ही बीस पेशेवर पहलवानों से लड़ने की शक्ति और सामर्थ्य है। उनमें एक युवा बैल जैसी शक्ति है। वे निडर होकर और बिना डगमगाए अपनी दिशा में आगे बढ़ते हैं। बेशक, केवल द्रुपद ही वृद्ध हैं। उनकी आयु सत्तर से पचहत्तर के बीच होगी। मुझे विराट की आयु का ठीक-ठीक पता नहीं है। ऐसा लगता है कि कुछ ही दिन पहले उन्होंने अपनी सोलह वर्षीय पुत्री का विवाह किया है। छोटी पत्नी

की पुत्री का। उनकी आयु सत्तर से कम और साठ से अधिक होगी।" भूरी ने उत्तर दिया।

अजय ने पूछा, "हमारे पक्ष का क्या?" लेकिन उन्होंने स्वयं उत्तर दिया, "मैंने द्रोणाचार्य को देखा है। उनकी आयु सत्तर से अस्सी के बीच होगी। मेरे पूज्य पिता जी चौरासी वर्ष के हैं। स्वयं वे यही कहते हैं। केवल वह लंबा-चौड़ा जयद्रथ ही चालीस से पैंतालीस वर्ष का हो सकता है।"

Bhoori agreed, "Yes."

"शकुनि दुर्योधन की माता का बड़ा भाई है। क्या आपने स्वयं नहीं कहा था कि दुर्योधन और भीमसेन की आयु एक समान है? इसका अर्थ है बावन या तिरपन। खैर, मुझे लगता है कि सेनापति शकुनि की आयु लगभग पचासी होगी। क्या आपको नहीं लगता कि कर्ण अपने रूप-रंग से साठ या पैंसठ वर्ष का होगा?"

वज्र ने सहमति जताते हुए कहा, "हां, हां। मैंने उसे देखा है।"

"आपका भाई भूरीश्रवा अपेक्षाकृत छोटा है। लेकिन मैंने कृतवर्मा और सुदक्षिण को नहीं देखा है।" अजय ने उत्तर दिया।

तब तक रथ मुख्य मार्ग से हटकर एक तरफ मुड़ गया। आगे बढ़ने में आसानी के लिए सैनिक आगे बढ़कर रास्ते में घनी झाड़ियों को साफ करने लगे। हालांकि आखिरी बारिश को चार महीने हो चुके थे, फिर भी झाड़ियाँ, लताएँ और पेड़ घने उग आए थे। इतने सारे आदमियों, जानवरों और वाहनों की आवाजाही से कीचड़ उछल गया था। स्वाभाविक रूप से, रथ की गति धीमी हो गई। हाथियों के समूह में कुछ हलचल दिखाई दी। केवल शोर सुनाई दे रहा था, अजय और उसके पाँच साथियों को कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। नीचे उतरकर देखना शारीरिक रूप से असंभव था कि क्या हो रहा है। अजय, जो एक कुशल शिकारी था, ने अनुमान लगाया और समझाया, "हाथियों ने अपनी सूंड से पेड़ों को उखाड़कर यह हलचल मचाई होगी। या गलती से नर और मादा हाथी आपस में टकरा गए होंगे, और नर हाथी उत्तेजित हो गए होंगे।"

भूरी ने उस अश्लील मजाक को देखा और हंसते हुए कहा, "हमारे तंबुओं में भी नौकरानियों की कमी नहीं है।"

वज्र ने पूछा, "क्या युवा लोग बूढ़ों से बेहतर नहीं लड़ते?"

अजय ने तुरंत जवाब दिया, "बूढ़ों से पूछो। वे कहते हैं कि युवाओं के लिए शराब और स्त्रियों से बढ़कर कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं है। क्या मेरे पिता भी यही बात बार-

बार नहीं कहते?"

वज्र ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "दुर्योधन बड़ों की बात नहीं सुनता। वे कहते हैं कि वह अहंकार से भरा हुआ है। फिर उसके सभी सेनापति बूढ़े क्यों हैं?"

अजय ने कहा, "वह बूढ़े लोगों की बात नहीं सुनता, लेकिन उनके बिना उसका काम नहीं चलता। वे उसकी बात न मानने पर उसे कोस रहे होंगे, और वह अपनी ज़िद के कारण उनकी बात नहीं मानता। लगता है कि वह उनकी गालियों के बिना नहीं रह सकता। शायद, वे भी उसकी ज़िद और गालियाँ सहने की उसकी तत्परता के बिना नहीं रह सकते।"

रथों की गति फिर धीमी हो गई। ऐसा लग रहा था कि कुछ रथ आगे कहीं फंस गए हैं। ढलान के कारण, आगे चल रहे कुछ रथ फंसे हुए रथों से टकरा गए। इसलिए, वे रथ यात्रा को एक अलग सड़क की ओर मोड़ने की कोशिश कर रहे थे, जिसे विशेष रूप से इसी उद्देश्य के लिए बनाया जा रहा था। रथ यात्रा फिर से शुरू होने में कुछ समय लगेगा। सभी रथों से उतरकर पेशाब करने लगे। कुछ लोग थोड़ी दूर जाकर शौच भी करने लगे।

अजय और उनके साथियों को ले जा रहे रथ धीरे-धीरे चलने लगे। लेकिन लाल चींटियों ने उनके रथ पर हमला कर दिया था। उन्हें चींटियों की मौजूदगी का पता तब चला जब भूरी की जांघ पर चींटियों ने ज़ोर से काट लिया। चींटियां हर जगह थीं। सिर्फ लाल चींटियां ही नहीं, बल्कि काली चींटियां भी। रथ के फ्रेम पर, कंबलों पर। रथ में रहना नामुमकिन हो गया। वे रथ से उतर गए और पैदल चलने लगे। पीछे एक हाथी चींटियों के काटने से पागलों की तरह नाच रहा था।

फिर उन्होंने रास्ता बदल दिया। उन्होंने रथों को रोक दिया और हाथियों को दो-दो के समूह में आगे बढ़ने दिया। उनके कुचलने से बना रास्ता पार करने में आसान लग रहा था। उनके पीछे घोड़े और रथ चलने लगे।

वज्र ने पैदल चलते हुए पूछा, "क्या आपको नहीं लगता कि पांडव सेना को भी ऐसी ही कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है?"

एक मिनट सोचने के बाद भूरिश्रवा ने उत्तर दिया, "वे आक्रमणकारी दल हैं। उन्हें आसान मार्ग चुनने का लाभ है। मुझे नहीं पता कि वे अभी कैसे आगे बढ़ रहे हैं। हमारे जासूसों ने हमें केवल उपप्लव्य शहर से उनके मार्च के बारे में ही जानकारी दी है।"

"हमें वो सारी जानकारी बताओ," अजय ने पूछा।

भूरिश्रवा ने उत्तर दिया, "भीमसेन ने उनकी सेना का नेतृत्व किया। उनके पीछे शस्त्रधारी नकुल और सहदेव, अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँच पुत्र - विंध्य, श्रुतसेन, श्रुतकीर्ति, शतनिक और श्रुतसेन - सभी कुशल योद्धा माने जाते थे। उनके मामा धृष्टद्युम्न ने उन्हें प्रशिक्षित किया था। अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु, जिनका हाल ही में विराट नगर में विवाह हुआ था, सोलह वर्ष की आयु में भी वीर हैं। वे किसी पर भी आक्रमण कर सकते हैं। उनके पीछे रसद से लदे रथ थे। फिर सेवक। उनके पीछे पंचाल सेना। फिर शस्त्रागार और शस्त्र। वैद्य। फिर औषधियाँ। उनके पीछे केकेय राजकुमार थे। उनके पीछे चेदि देश के लगभग पचास वर्षीय धृष्टकेतु थे। उनके पीछे काशी के राजा के पुत्र अभिभू, और श्रेणिमन, वसुदन, शिखंडी, सभी धर्मराज की रक्षा के लिए उनके चारों ओर थे।"

ऊबड़-खाबड़ सड़क के कारण उनका ध्यान भटक रहा था, इसलिए वे स्थिर रूप से बात नहीं कर पा रहे थे।

उनकी सेना ने निस्संदेह तेज़ गति से मार्च किया। फिर भी अव्यवस्था थी। बहुत सारे सैनिक, वाहन और जानवर एक खराब सड़क पर चल रहे थे। कीचड़ भरे रास्तों ने पहियों को फंसा लिया था। जब तक वे पांडव शिविर पहुंचे, तब तक वे पूरी तरह से अस्त-व्यस्त हो चुके थे। उचित भोजन और नींद के बिना उन्हें वहां पहुंचने में तीन दिन लग गए।

—•⁕•—

अध्याय 43

कौरव सेना ने पांडवों के पूर्व शिविर से लगभग चार मील दूर डेरा डाला। पर्याप्त जगह थी। सैनिकों ने झाड़ियों, घास और पेड़ों को काटकर इलाका साफ किया। यह सर्वमान्य धारणा थी कि यही युद्ध स्थल होगा। जिस दिन वे उस स्थान पर पहुँचे,

उसी दिन सर्वोच्च सेनापति भीष्म की अध्यक्षता में एक युद्ध सभा आयोजित की गई। शिविर के मध्य में बांस के खंभों और जंगली पेड़ों के पत्तों से बना एक तंबू था, जिसकी दीवारें कपड़े से ढकी थीं। ठंड से बचने के लिए उसकी छत पर मुलायम सूती कपड़े की एक परत बिछाई गई थी। यात्रा से थके हुए भीष्म तंबू के अंदर तकिए के सहारे आराम कर रहे थे। अन्य भी काफी थके हुए थे। केवल दुर्योधन, कर्ण और जयद्रथ ही उमंग में थे, शारीरिक थकावट से बेखबर। कृपा, द्रोण, अश्वत्थामा, शल्य और अन्य सभी शांत और गंभीर बैठे थे। भीष्म ने अपना मुकुट उतार दिया था, और उनके सिर पर वृद्धावस्था के कारण पड़े काले धब्बे स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। फिर भी उन्होंने स्पष्ट स्वर में कहा, "ठीक है, हम अब इस स्थान पर पहुँच गए हैं, और यदि युद्ध होना है, तो वह यहीं होगा।"

लेकिन भीष्म ने कोई निश्चित और विस्तृत सुझाव या सलाह नहीं दी। उन्होंने कोई प्रश्न भी नहीं पूछा। बाकी सब चुप रहे। यहाँ तक कि महान योद्धा भीष्म ने भी आगे कुछ नहीं कहा। उन्होंने अपनी आवाज़ धीमी कर ली और बोलना बंद कर दिया।

दुर्योधन ने कहा, "खैर, ये सभी महान योद्धा युद्ध करने के लिए इतनी दूर से आए हैं। हम हस्तिनावती से केवल इसी उद्देश्य से आए हैं।"

एक बार धीरे से जम्हाई लेने के बाद भीष्म ने कहा, "तुमने शेखी मारी थी कि अगर हम अपनी सेना को इकट्ठा करके अपनी ताकत का प्रदर्शन करें, तो वे दया की भीख मांगते हुए रेंगते हुए आएंगे। हमारी सेना विशाल है। और अगर वे रेंगते हुए आएंगे तो युद्ध कैसे हो सकता है?"

राजा साल्या ने सहमति में सिर हिलाते हुए कहा, "हाँ, हाँ।"

दुर्योधन ने सारा दोष शत्रु पर डालने की कोशिश की और कहा, "लेकिन आप देख सकते हैं कि वे हमसे युद्ध करने के लिए तैयार होकर वहां मौजूद हैं।"

भीष्म ने कहा, "मैंने यही कहा था। युद्ध होने दो। मैंने पहले कभी एक ही समय और एक ही स्थान पर इतनी विशाल सेनाएँ एकत्रित नहीं देखी थीं। उनकी सेना भी कम विशाल नहीं है।"

दुर्योधन ने चिंता से कहा, "लेकिन उनकी सेना हमारी सेना का मुकाबला नहीं कर सकती। डरने की कोई बात नहीं है।"

भीष्म ने कहा, "मैं यह भयवश नहीं कह रहा हूँ। आप एक मिनट चुप रहिए।" फिर उन्होंने द्रोण की ओर मुड़कर कहा, "महान गुरु, कृपया युद्धविज्ञान के अनुसार हमें अपना विशेषज्ञ अनुमान बताइए। यहाँ आपसे अधिक इस विज्ञान का

ज्ञान किसी के पास नहीं है। क्या अतीत में कभी इतनी विशाल सेनाओं का टकराव हुआ है?"

द्रोण ने उत्तर दिया, "नहीं।" वह एक लंबा, दुबला-पतला व्यक्ति था, जिसकी हड्डियाँ उभरी हुई मांसपेशियों से कहीं अधिक थीं। वह अर्धपद्मासन में पीठ सीधी करके बैठा था।

भीष्म ने आगे कहा, "हम तो छोटे-मोटे युद्धों के आदी हैं—कुछ रथ, दो-तीन सौ योद्धा, कुछ हाथी, तीखे बाणों से शत्रु पर आक्रमण करना या किसी नगर को घेरकर उस पर कब्ज़ा करना। लेकिन यह तो एक अविश्वसनीय दृश्य है। इतनी विशाल सेनाएँ और उनकी संख्या कितनी अधिक है! जब दोनों पक्षों के पास इतने विशाल संसाधन हों, तो यह किस प्रकार का युद्ध होगा? इतने अलग-अलग देशों की सेनाएँ, जिनमें से प्रत्येक की अपनी विशिष्ट पहचान है। प्रत्येक राजा के रथ पर अलग-अलग ध्वज। इन्हें आसानी से याद रखा जा सकता है और पहचाना जा सकता है। लेकिन वहाँ भाले, तलवारें और बरछी लिए वे सैनिक? जैसे ही दोनों पक्ष एक-दूसरे पर टूट पड़ेंगे, पहचान को लेकर भ्रम होना तय है। संभव है कि हमारे सैनिक अनजाने में अपने ही सहयोगियों पर हमला कर दें। संभव है कि हमारे हाथी अपने ही सैनिकों को अपने पैरों से कुचल दें और फिर अपनी सूंड से उन्हें ज़मीन पर पटक दें। ऐसी स्थिति में कोई कैसे निपट सकता है?"

द्रोणा ने कहा, "हां, मैं भी इन सब बातों के बारे में सोच रहा हूं। मुझे कोई जवाब नजर नहीं आ रहा है।"

सैंधव, शल्य और अन्य लोग इन समस्याओं से अनभिज्ञ थे। वे इस भोले आत्मविश्वास से भरे हुए थे कि उनके पास इतनी विशाल सेना है कि वे शत्रु को आसानी से कुचल, रौंद और नष्ट कर सकते हैं। तभी एक संतरी आया और उन्हें सूचित किया कि भंडार प्रबंधक द्वार पर प्रतीक्षा कर रहा है। मुख्य प्रबंधक और रसद आपूर्तिकर्ता दुर्योधन की अनुमति से अंदर आया। उसने दुर्योधन और भीष्म को आदरपूर्वक प्रणाम किया और बोला:

अगर आप मुझे युद्ध का सटीक स्थान बता दें, तो मैं आपूर्ति व्यवस्था स्थापित करवा दूँगा। अब सभी को यही लग रहा है कि जिस स्थान पर हम डेरा डाले हुए हैं, वही युद्ध का मैदान बनने वाला है। हमारे शत्रु की सेनाएँ, जो यहाँ पहले ही पहुँच चुकी हैं, रणनीतिक रूप से बेहतर स्थिति में हैं। यहाँ से लगभग तीन-चार मील दूर हिरण्यवती नदी है। वे नदी के दोनों किनारों पर डेरा डाले हुए हैं। उन्होंने इस

प्रकार व्यवस्था की है कि नदी के ऊपरी हिस्से में पीने का पानी, खाना पकाने का पानी और नहाने का पानी जैसी सुविधाएँ उपलब्ध हैं, और निचले हिस्से में घोड़ों और हाथियों के लिए पानी है। नदी के किनारे के लगभग पंद्रह मील लंबे हिस्से में उन्होंने अपने सैनिकों को तैनात कर रखा है, जिससे हमें पानी नहीं मिल पा रहा है। नदी के उस हिस्से से पानी लाने का हमारे पास कोई रास्ता नहीं है। बेशक, हमसे बारह मील पीछे वैशम्पायन झील है। लेकिन इतनी बड़ी सेना के लिए हम वहाँ से पानी कैसे लाएँगे? जानवरों को पानी पिलाना तो नामुमकिन है। फिर हमारे सैनिकों के लिए नहाने के पानी की व्यवस्था भी एक समस्या है। पर्याप्त पानी की कमी के कारण, कल शाम तक हमारा शिविर उफान पर आ सकता है। पेशाब और मल से भयानक बदबू आना।"

दुर्योधन अचानक क्रोधित होकर बोला, "क्या नदी पर उनका एकाधिकार है? क्या इसमें हमारा कोई हिस्सा नहीं है?"

भीष्म ने शांत भाव से, लेकिन थोड़ी सी व्यंग्यात्मकता के साथ कहा, "क्या उन्हें राज्य में अपना हिस्सा युद्ध के माध्यम से ही वापस नहीं लेना होगा? हमें भी पानी में अपना हिस्सा युद्ध के माध्यम से ही प्राप्त करना होगा। क्या वे मात्र मांगने पर हमें पानी उपलब्ध करा देंगे?"

दुर्योधन ने सोचा, "सेना प्रमुख बनने के बाद भी वह उनके पक्ष में बोल रहा है। इस रफ्तार से तो हम यह युद्ध कैसे जीतेंगे?"

कृपाचार्य ने पूछा, "क्या उन्हें यहाँ से खदेड़कर रणनीतिक रूप से उपयुक्त भूभाग पर कब्जा करना संभव नहीं है?"

द्रोणाचार्य ने पूछा, "तुम यह कैसे करोगे?" फिर उन्होंने विस्तार से समझाया, "मान लो हम दाहिनी ओर मुड़कर नदी के ऊपरी भाग की ओर बढ़ गए, तो यह उनके लिए हस्तिनावती की ओर दौड़ने का संकेत होगा, यानी हमारा काम तमाम। मान लो हम विपरीत दिशा में निचले भाग की ओर जाकर जल तक पहुँच वाली जगह पर पहुँच गए, तो इसका मतलब होगा कि हमने उन्हें अपने राज्य में प्रवेश करने दिया है। अगर हम वापस भी चले गए, तो हमें इस नदी जैसी सुविधाजनक नदी कहीं नहीं मिलेगी। केवल नदी का बहता जल ही इतने सारे मनुष्यों और पशुओं को शुद्ध करने की शक्ति रखता है। ठहरा हुआ जल कभी नहीं। जब तक हम उनसे मिलेंगे, वे हमसे एक दिन आगे निकल चुके होंगे। इसीलिए उन्होंने जानबूझकर दोनों किनारों पर कब्जा कर रखा है, वहाँ हमारा इंतज़ार कर रहे हैं।"

स्टोर और सप्लाई के मैनेजर ने कहा, "हमें यह भी जानकारी मिली है कि उन्होंने नदी पर कई जगहों पर बांस के पुल बनाए हैं। ऐसा माना जाता है कि वे लकड़ी की नावें भी लाए थे। अब वे लकड़ी के तख्तों से पुल बना रहे हैं ताकि वे लोगों और सामान को नदी के पार ले जा सकें।"

भीष्म ने प्रबंधक को आदेश दिया, "उन्होंने एक बहुत ही रणनीतिक स्थान पर कब्जा कर लिया है। हम असहाय हैं। एकमात्र उपाय यही है कि और अधिक गाड़ियाँ मंगाई जाएँ और उनके द्वारा पानी पहुँचाया जाए। साथ ही, यह भी सुनिश्चित करें कि मूत्र और मल को जमीन में दबा दिया जाए।" भीष्म ने आँखों से इशारा करके उसे जाने को कहा। उसके जाने के बाद, भीष्म चर्चा के विषय पर लौट आए, "हे महान गुरु, हम इस विशाल युद्ध का प्रबंधन कैसे करेंगे?"

द्रोण ने कहा, "हालांकि उनकी सेना हमारी सेना जितनी बड़ी नहीं है, फिर भी वह बहुत बड़ी है। वे इसे कैसे संभालेंगे?"

भीष्म, "जैसा कि आप सिखाते आ रहे हैं, युद्ध में दो पक्ष होते हैं - हमलावर और बचाव करने वाला। क्या ऐसा नहीं है? हमलावर, बचाव करने वाले की तुलना में, छोटी-छोटी बातों पर भी ध्यान देते हुए योजना बनाता है। बताइए, अब हम हमला करने जा रहे हैं या बचाव करने?"

दुर्योधन ने कहा, "बेशक, हमलावर।"

भीष्म ने सिर हिलाते हुए कहा, "मैंने हस्तिनापुर और कुरु राज्य की रक्षा के लिए इस सेना की सर्वोच्च कमान स्वीकार की है। मैं उन पर आक्रमण करने के खिलाफ हूँ।"

भीष्म का विरोध करते हुए कर्ण ने कहा, "यदि हम आक्रमण और बचाव की स्थितियों का इतनी बारीकी से आकलन करते रहेंगे तो हम कभी युद्ध नहीं जीत पाएंगे। यदि हमारा उद्देश्य जीतना है, तो हमें पहले आक्रमण करना होगा।"

भीष्म ने कहा, "कर्ण, जब द्रोण जैसे वरिष्ठ, धनुर्विद्या के कुशल शिक्षक, धैर्यपूर्वक गहन चिंतन कर रहे हों, तब तुम्हारा इस प्रकार अचानक हस्तक्षेप करना अत्यंत अनुचित है। यदि तुम थोड़ा धैर्य रखोगे, तो इससे हमारी मुलाकात की गरिमा और तुम्हारी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा दोनों में वृद्धि होगी।"

दुर्योधन तुरंत समझ गया कि भीष्म ने जानबूझकर कर्ण को उसकी औकात दिखाई है। क्रोध और शर्म से कर्ण का चेहरा लाल हो गया। उसने दुर्योधन के इशारे को समझ लिया, मानो वह उसके भले के लिए यह सब सहन करना चाहता हो।

एक मिनट सोचने के बाद द्रोण ने कहा, "देखो, सूर्यास्त का समय हो गया है। आज युद्ध शुरू नहीं हो सकता। लगभग एक घंटे में अंधेरा हो जाएगा और कुछ भी दिखाई नहीं देगा। ऐसे अंधेरे में वे हम पर हमला क्यों करेंगे? लेकिन मेरा अनुमान यह है: वे निष्क्रिय नहीं बैठेंगे। याद रखो, उनके साथ चतुर कृष्ण हैं। उन्होंने कोई प्रत्यक्ष कमान नहीं संभाली है, फिर भी हो सकता है कि वे पूरे युद्ध की रणनीति बना रहे हों। कम उम्र में ही उन्होंने कंस जैसे शक्तिशाली राजा को मार डाला था। जरासंध का उन्होंने कितनी आसानी से वध कर दिया था! बेशक, उनकी रणनीति में बहुत साहस की आवश्यकता होती है। उनके साथ भीम, अर्जुन, सत्यकी और चेकितान जैसे साहसी योद्धा हैं। उनकी रणनीति की एक प्रमुख विशेषता बिजली की गति है। मैं उनकी गतिविधियों और उपलब्धियों पर नजर रख रहा हूं, और यही बात मुझे सबसे ज्यादा प्रभावित करती है। इसलिए, वे कल सुबह हम पर हमला जरूर करेंगे। अगर वे आज रात ही हमला कर दें तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। या वे यहां हमारे लिए भ्रम पैदा कर सकते हैं, और फिर हस्तिनावती की ओर कूच कर सकते हैं।"

दुर्योधन ने पूछा, "कृष्ण ने इतनी विशाल सेना से कब युद्ध किया था?"

द्रोण, "कभी नहीं।"

भीष्म मौन थे। उनकी धँसी हुई आँखें आधी बंद थीं। फिर धीरे-धीरे पूरी तरह बंद हो गईं। केवल द्रोण ही जानते थे कि ये नींद से बंद नहीं हुईं। शल्य और अन्य लोग बस देखते रहे। थोड़ी देर बाद भीष्म ने आँखें खोलीं और कहा, "चूँकि यह एक अनोखा युद्ध है, ऐसा युद्ध जो मनुष्यों द्वारा पहले कभी नहीं लड़ा गया, इसलिए दोनों पक्षों के लिए यह लाभकारी हो सकता है कि वे एक सामान्य आचार संहिता बना लें। कम से कम हम अनावश्यक प्राणों की बलि से बच सकते हैं। हम उन लोगों के जीवन को बचा सकते हैं जो मरना नहीं चाहते। और दोनों पक्षों में भ्रम की स्थिति से बच सकते हैं। हम और शत्रु के प्रतिनिधि मिलकर एक पारस्परिक रूप से सहमत आचार संहिता बना सकते हैं। फिर दोनों पक्ष उसका पालन कर सकते हैं।"

द्रोणा ने उनका समर्थन करते हुए कहा, "हां, लेकिन हमें यह जल्द से जल्द करना होगा। तुरंत।"

दुर्योधन ने विरोध करते हुए कहा, "आखिरकार, हम युद्ध लड़ रहे हैं। हत्या के धंधे को किस तरह की आचार संहिता नियंत्रित कर सकती है? सबसे बढ़कर, मैं इस समय उनसे मिलने के पक्ष में नहीं हूँ।"

भीष्म ने कहा, "चूंकि मुझे युद्ध अभियानों का प्रमुख बनाया गया है, इसलिए युद्ध मेरे निर्णय के अनुसार ही संचालित होगा। महान गुरु भी सहमत हो गए हैं।"

द्रोणा ने तुरंत कहा, "हां, हां।"

भीष्म ने अपने निजी पुरोहित को बुलाया और निर्देश दिया, "हमारा मानना है कि यह युद्ध यथासंभव धर्म के अनुसार ही संपन्न होना चाहिए। युद्ध से पहले, इसके लिए आचार संहिता तय करने हेतु हमें पांडव पक्ष के नेताओं से विचार-विमर्श करना होगा। धर्मराज से जाकर पता करो कि यह विचार-विमर्श कहाँ और कैसे संपन्न किया जाना चाहिए। उन्हें बता दो कि यदि वे यहाँ आना चाहें तो भीष्म उनकी सुरक्षा और आवागमन की स्वतंत्रता के लिए उत्तरदायी हैं। यदि वे इस बात से सहमत न हों, तो मैं उनके शिविर में जाने के लिए तैयार हूँ। रथ में जाओ और स्वयं को भीष्म का दूत बताओ। उनके पहरेदार धर्मराज को सूचित कर देंगे। कहना कि यह अत्यंत आवश्यक है।"

पुजारी तुरंत वहां से चले गए।

भीष्म ने कहा, "उसे जाने और लौटने में कम से कम दो घंटे लगेंगे। अभी आप सब अपने-अपने तम्बुओं में जाकर आराम कीजिए। अपनी सेनाओं का भी ध्यान रखिए।" फिर भीष्म उठ खड़े हुए। उन्हें भी आराम की ज़रूरत थी। उनका तंबू युद्ध सभा के तंबू के बगल में ही था। सबके चले जाने के बाद भीष्म वहीं रुक गए, तकिये के सहारे आराम करते हुए उन्हें नींद आ गई। दुर्योधन दूसरे कामों के लिए चले गए। कुछ देर बाद भीष्म ने दासी को बुलाकर शाम की अग्नि पूजा की सामग्री तैयार करने को कहा।

जैसा कि उम्मीद थी, पुजारी तीन घंटे बाद लौट आया।

उन्होंने बताया, "धर्मराज और अन्य लोगों ने प्रणाम भेजा है। उन्होंने आपका और गुरुदेव का कुशल-मंगल पूछा है। वे दोनों शिविरों के बीच एक मध्य बिंदु पर बैठक के लिए सहमत हुए हैं। वे चार प्रतिनिधि भेजेंगे और हम भी चार प्रतिनिधि भेजेंगे। उन्होंने यह शर्त भी रखी है कि दोनों पक्षों के रथों को चलाने के लिए अलग-अलग सारथी नहीं होंगे। उन्होंने कहा है कि यद्यपि उन्हें आदरणीय भीष्म और गुरु द्रोणाचार्य के वचनों की शक्ति पर पूर्ण विश्वास है, फिर भी उन्होंने आदरणीय भीष्म से यह आश्वासन मांगा है कि वे दुर्योधन द्वारा अवसर का अनुचित लाभ उठाकर पांडव पक्ष के चारों प्रतिनिधियों को जान से मारने के किसी भी संभावित हमले से

बचाएंगे। दुर्योधन द्वारा उन्हें बंदी बनाने का भी कोई प्रयास नहीं किया जाना चाहिए।”

भीष्म ने पूछा, "ये अंतिम शब्द किसने कहे?"

Priest, "Krishna of the Yadavas."

भीष्म ने पूछा, "क्या तुमने ये बातें किसी और को भी बताई हैं?"

पुजारी ने कहा, "जी हां, महाराजा दुर्योधन रास्ते में इंतजार कर रहे थे और उन्होंने मुझसे विस्तृत जानकारी प्राप्त की।"

भीष्म ने एक मिनट तक स्थिति पर विचार किया। फिर उन्होंने कहा, "तुम पांडवों के पास वापस जाओ। उनसे कहो कि वे मध्य बिंदु पर न आएं। हम स्वयं रथ में उनके पास जाएंगे। उनसे कहो कि वे हमसे अपने शिविर में ही मिल सकते हैं। हमारे शिविर में किसी और को योजना में हुए बदलाव के बारे में मत बताना। यदि दुर्योधन या कोई पहरेदार तुमसे मेरे संदेश के बारे में पूछे, तो उन्हें बताना कि भीष्म पांडवों के सुझाव पर सहमत हो गए हैं। अब तुरंत यहाँ से चले जाओ।"

भीष्म ने द्रोण और शल्य को बुलवाया। यह तय हुआ कि पांडवों से मिलने के लिए ये तीनों ही दल में शामिल होंगे। उन्होंने साथ में भोजन किया। शल्य ने इस विचार से पीछे हटने की कोशिश की। उन्हें इस बात का गहरा अपराधबोध सता रहा था कि पांडवों को समर्थन का वादा करने के बाद भी उन्होंने उनका साथ छोड़ दिया था। भीष्म ने पूछा, "शल्य, तुम हमारे साथ क्यों नहीं जाना चाहते?" शल्य कोई स्पष्टीकरण न दे पाने के कारण मान गए। इस बार पुजारी पहले से जल्दी लौट आए। उन्होंने अग्नि अनुष्ठान जल्दी पूरा किया और दल के साथ जाने के लिए तैयार हो गए। उन्होंने उन्हें अपना मार्गदर्शक बनाया। चारों चार घोड़ों द्वारा खींचे गए रथ में सवार हुए। रात में अर्धचंद्र था। आसपास का दृश्य धुंधला दिखाई दे रहा था। कहीं-कहीं पेड़ों के झुंड थे। छोटी-छोटी घास भी थी। शाम की खामोशी दोनों शिविरों में हाथियों और घोड़ों की आवाजों से टूट रही थी। उन्हें दूसरे शिविर के बाहरी इलाके तक पहुँचने में एक घंटे से भी कम समय लगा और वे मशाल की रोशनी में आगे बढ़े। उन्हें पांडव शिविर की रोशनी दिखाई दे रही थी। उनके आने का आभास होते ही कुत्ते भौंकने लगे। पहरेदार उनके पास आए, बड़ी विनम्रता से उन्हें रथ से उतरने में मदद की और फिर उन्हें नदी पार करा दिया। इसके बाद उन्हें दुश्मन के शिविर में ले जाया गया। वहाँ पहुँचने वालों ने स्पष्ट रूप से देखा कि

दुश्मन का शिविर उनके शिविर की तुलना में कहीं अधिक सुव्यवस्थित और संगठित था।

रथ में सवार होकर जब वे सभा तम्बू की ओर बढ़े, तो द्वार पर धर्मराज, नकुल, कृष्ण और अर्जुन प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने आदरपूर्वक बड़ों के चरण स्पर्श किए और उन्हें अंदर ले गए। उनके बैठने के बाद, उनके सेनापति धृष्टद्युम्न आए। उन्होंने सभी को अपने बड़ों की तरह प्रणाम किया। आगंतुकों ने महसूस किया कि उनके मन में पांडवों जैसा आदर और स्नेह का भाव नहीं था। वास्तव में, वे देख सकते थे कि उनके मन में अब भी उनके प्रति पारंपरिक शत्रुता और तिरस्कार का भाव था। वे मोटे और मुलायम गद्दे पर बैठे और आरामदायक तकियों के सहारे आराम किया। उन्हें शहद और अन्य आतिथ्य-भरी वस्तुएँ भेंट की गईं। फिर धर्मराज बैठ गए, और बाकी सब भी बैठ गए। स्थिति की नवीनता के कारण उनमें से कोई भी यह तय नहीं कर पा रहा था कि विचार-विमर्श कैसे शुरू करें। भीष्म और उनके दो साथी, जो पूरी यात्रा के दौरान मौन रहे थे, मौन ही रहे। द्रोण तो जैसे अवाक रह गए। कुछ देर बाद धर्मराज ने चुप्पी तोड़ी, "दादाजी, महान गुरु, चौदह साल हो गए जब मुझे आखिरी बार आपके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। चाचा शल्य, आप हमसे बहुत कम मिलते हैं। आप बहुत दूर रहते हैं।"

इन तीनों को ऐसा लगा मानो उनका हृदय रक्तपात हो रहा हो। चौदह वर्ष पहले, जब धर्मराज चालीस वर्ष के थे, उनका शरीर और चेहरा पूर्ण रूप से विकसित था। उनकी आँखों में तब संतोष झलकता था। अर्जुन, जो तब पैंतीस या छत्तीस वर्ष के थे, आर्य जाति के साहस और उत्साह के साक्षात अवतार प्रतीत होते थे। अब धर्मराज बांस के खंभे की तरह पीले पड़ गए थे, उनका चेहरा बिखरे बालों से ढका हुआ था। उनकी आँखें, जो आमतौर पर शांत रहती थीं, अब खाली और निराशा से भरी हुई थीं। वे पूरी तरह से असहाय थे। भीष्म ने विदुर से सुना था कि धर्मराज आजकल पूरी तरह से भीम के वश में हैं। अब उन्हें इसका प्रमाण मिल गया। भीष्म ने स्वयं से पूछा, "भीम कहाँ हैं?" उनकी चिंता तब शांत हुई जब उन्हें एहसास हुआ कि भीम में शत्रु सेना के सेनापति, अपने दादा से मिलने की भी तमन्ना नहीं है। वे बार-बार इस प्रश्न से परेशान थे; बारह वर्षों तक वनवास, राज्यविहीनता और दूसरों के घर में दासता के लिए कौन जिम्मेदार था? जुआ कब तक मनोरंजन बना रह सकता है और कब यह शोषण का साधन बन जाता है? लेकिन वह चुप रहा। द्रोण भी चुपचाप गंभीर बैठा रहा। साल्या उदासीन बना रहा।

कुछ मिनटों की चुप्पी के बाद कृष्ण ने बोलना शुरू किया, "दादाजी, हम यहाँ इसलिए एकत्रित हुए हैं ताकि यह पता लगा सकें कि इस युद्ध को अनावश्यक मानव वध के बिना सर्वोत्तम तरीके से कैसे लड़ा जा सकता है। मुझे विश्वास है कि आपने इस बारे में विचार किया होगा। यदि आप हमें अपने विचार बताएँ, तो हम अपनी राय बनाने में बेहतर स्थिति में होंगे।"

भीष्म का मन अब इस ओर झुक गया। उन्होंने उत्तर दिया, "जी कृष्ण। हम तो इसी उद्देश्य से आए हैं। अब तक इतनी विशाल सेनाओं के बीच कभी सीधा युद्ध नहीं हुआ है। यदि दोनों पक्ष पागल, जंगली बैलों की तरह विपरीत दिशाओं से टूट पड़ें, एक-दूसरे के हाथ-पैर, हड्डियाँ तोड़ते हुए मार डालें, तो इसमें आनंद क्या होगा? यदि युद्ध का यही परिणाम होगा, तो न तो मुझे और न ही आपके सेनापति धृष्टद्युम्न को कोई काम मिलेगा। आइए हम आपस में चर्चा करके अपनी-अपनी जिम्मेदारियों का निर्णय लें। अभी।"

शल्य ने अप्रत्याशित रूप से हस्तक्षेप करते हुए कहा, "भीष्म, सब लोग आपको दादाजी कहकर बुलाते हैं। मैं आपको क्या कहूँ? अच्छा, तो मैं भी आपको दादाजी ही कहूँ।"

भीष्म, "नहीं, नहीं। मुझे भीष्म कहिए। लेकिन आप क्या कहने वाले थे?"

साल्या ने कहा, "आपने सेना प्रमुख की जिम्मेदारी तो ठीक से समझा दी। लेकिन एक सवाल मुझे परेशान कर रहा है: क्या यह युद्ध होना ही चाहिए? क्या इसे टाला नहीं जा सकता?"

भीष्म ने कहा, "तुम यह प्रश्न कृष्ण से पूछो। वे तुम्हें इसकी अनिवार्यता समझा देंगे। हम दोनों ने इससे बचने की कोशिश की थी। हम बच नहीं सके। अब तो यह सवाल ही नहीं उठता।"

शल्य ने पूछा, "तो फिर तुमने दुर्योधन का सेनापति बनने के लिए क्यों सहमति दी?"

अब तक चुप रहे नकुला ने कहा, "चाचा, आपने हमारे दूत के साथ यह संदेश भेजकर कि आप हमारा समर्थन करेंगे, अपनी सेना के साथ दुश्मन के शिविर में क्यों शामिल हो गए और उसके सेनापतियों में से एक बन गए?"

शल्य नकुल के चेहरे को घूर रहा था। उसे वह चेहरा कुछ हद तक अपने या अपने पुत्र रुक्मरथ के चेहरे जैसा लगा। आखिर वह उसकी बहन का पुत्र था। उसकी उम्र पचास के करीब थी। वह शांत स्वभाव का लग रहा था। ऐसा बिल्कुल

नहीं लग रहा था कि वह अपनी बड़ी माँ के पुत्रों का गुलाम हो। शल्य ने मन ही मन पूछा, "क्या दुस्साना ने उसके बारे में मुझसे झूठ बोला था?" उसका मन दुविधा में पड़ गया। भीष्म ने उससे कहा, "बताओ शल्य, हमें बताओ। कुछ मत छुपाओ। अगर तुम अपनी बहन के पुत्रों का साथ देते तो यह स्वाभाविक ही होता। क्या कोई विशेष कारण था कि तुम हमारी तरफ आए?"

शल्य खुद को एक कठिन परिस्थिति में फंसा हुआ पाया। उसने खुद से पूछा: 'मैंने दुर्योधन का साथ क्यों दिया?' उसे वे सारी घटनाएँ याद आईं जिनके कारण मैंने ऐसा किया था।

उन्हें सच्ची कहानी सुनाने का मन हुआ। यह बात बताने का निश्चय करके उन्होंने कहा, "आप जानते हैं, मेरे पुत्र त्रिगर्तों के मित्र हैं। वे दुर्योधन के मित्र हैं। मेरे पुत्रों को छोड़िए। पहले तो मैंने पांडवों का पक्ष लेने का निश्चय किया था। फिर एक दिन दुर्योधन ने अपने भाई दुस्साना को स्वयं भेजा। दुस्साना ने मेरे मन में पांडवों के विरुद्ध विष भर दिया, यह कहकर कि कुंती के पुत्र ही सब कुछ हैं और माद्री के पुत्रों पर हुकुम चलाते हैं। उसने दावा किया कि पांडवों ने अपने सौतेले भाइयों को घोड़ों की देखभाल और गोबर साफ करने जैसे छोटे-मोटे काम करने के लिए मजबूर कर दिया है। उसने मुझे आश्वासन दिया कि यदि वे युद्ध जीत गए, तो वे मेरे भतीजों, नकुल और सहदेव का राज्याभिषेक करेंगे। उसने यह भी आश्वासन दिया कि कोई युद्ध नहीं होगा। यह केवल शक्ति प्रदर्शन होगा। उसने तर्क दिया कि यदि कौरव अधिक शक्ति प्रदर्शित करें, तो पांडवों को उनकी गलती का एहसास कराया जा सकता है और वे न्याय स्वीकार कर लेंगे। इसी कारण उसने हमें अपने साथ शामिल होने के लिए कहा। मेरे सभी पुत्र भी अपनी बात पर अड़े रहे और दुर्योधन का पक्ष लेने पर अड़े रहे।" उन्होंने मुझसे कहा, "पांडवों का अहंकार तो देखो, उन्होंने एक साधारण दूत को भेजा। लेकिन दुर्योधन ने अपने छोटे भाई को भेजा। अब बताओ, धर्मराज, तुममें से कोई क्यों नहीं आया?"

नकुला ने स्वयं उत्तर दिया, "चाचा जी, वह तो वर्षों से युद्ध की तैयारी कर रहा है। हम, जो जंगल में निर्वासन और छुपकर गुलामी कर रहे थे, भला कैसे कर सकते थे? क्या हम सचमुच व्यक्तिगत रूप से मिलने की स्थिति में थे? लेकिन आपने हमारे दूत को समर्थन देने का वादा किया था।"

साल्या को एहसास हुआ कि उसने खुद को मूर्ख साबित कर दिया है। इससे वह अवाक रह गया।

नकुल ने कहा, "हम पाँचों भाइयों में क्रम इस प्रकार है। कुंती के सबसे बड़े पुत्र धर्म प्रथम स्थान पर हैं। मैं द्वितीय स्थान पर हूँ। तीसरे स्थान पर सहदेव हैं, और भीम और अर्जुन अंतिम स्थान पर आते हैं। अब आपको सच्चाई पता चल गई है। अच्छा, कम से कम अब तो आप अपनी सेना लेकर हमारे पास आ जाइए।"

उनके चाचा इन शब्दों से एक साथ भयभीत और आश्वस्त महसूस कर रहे थे। असमंजस में पड़कर उन्होंने लड़खड़ाते हुए जवाब दिया, "दुर्योधन के उदार आतिथ्य का आनंद लेने के बाद, उनसे ऐसा व्यवहार पाकर... क्या मैं आर्य नहीं हूँ, बालक? क्या मुझे आर्य ही नहीं बने रहना चाहिए!"

कृष्ण ने पूछा, "दादाजी, क्या आपकी यह इच्छा नहीं है कि हम इस युद्ध को यथासंभव धर्म के युद्ध में, धर्म के लिए लड़े जाने वाले युद्ध में परिवर्तित कर दें?"

भीष्म ने कहा, "जी कृष्ण।"

कृष्ण ने कहा, "धर्म के लिए लड़ा गया युद्ध तब तक नहीं हो सकता, जब तक उसमें भाग लेने वाले राजकुमार और शासक उसके उद्देश्यों के बारे में स्पष्ट न हों और जिस पक्ष में वे शामिल हुए हैं, उसके कारणों को स्पष्ट रूप से न समझें। यदि शल्य जैसे निकट संबंधी को भी सत्य का ज्ञान नहीं है, तो क्या आपको लगता है कि आपके खेमे के अन्य लोग इससे अवगत हैं? इसी प्रकार, हो सकता है कि हमने भी अपने समर्थकों से झूठ बोला हो। इसलिए, हम आपके पक्ष के शासकों को इस युद्ध के वास्तविक कारणों के बारे में बताएंगे और उनसे अपील करेंगे कि वे आपका पक्ष छोड़कर हमारे साथ जुड़ जाएं। इसी प्रकार, आप भी हमारे पक्ष से अपील करके उन्हें अपने पक्ष में शामिल होने के लिए मना सकते हैं। इसके बाद युद्ध शुरू हो सकता है। धर्म युद्ध का यही पहला नियम होना चाहिए। शल्य, एक आर्य झूठे व्यक्ति के आतिथ्य और स्नेह से बाध्य नहीं होता।"

द्रोण ने कुछ देर सोचा। फिर पहली बार बोले, "कृष्ण की बातें उचित और न्यायसंगत हैं। लेकिन दुर्योधन इसे कभी स्वीकार नहीं करेगा।"

कृष्ण ने कहा, "बहुत से लोग सत्य को समझे बिना ही लड़ते हैं। क्या हमें इसे रोकना नहीं चाहिए?"

भीष्म ने कहा, "गुरुजी, हमें दुर्योधन को इस बात के लिए राजी करना होगा।"

कृष्ण ने कहा, "दादाजी ने न्याय के सिद्धांत को तुरंत समझ लिया है।"

शल्य को कुछ याद आया और उसने बीच में ही टोकते हुए कहा, "दुर्योधन के पक्ष में शामिल होने का एक और कारण है। आर्य धर्म को भीष्म से बेहतर हम नहीं

जान सकते। मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि यदि भीष्म दुर्योधन के पक्ष में हैं, तो मुझे भी उनके साथ हो जाना चाहिए, क्योंकि भीष्म कभी धर्म के विरुद्ध नहीं जा सकते।”

धर्मराज ने विनम्रतापूर्वक कहा, "मैं भी यही पूछना चाहता था। क्या दुर्योधन ने हमें हमारा राज्य देने से इनकार करके सही किया? यदि वह गलत था, तो आपने उसका साथ क्यों दिया? आप पूरे राज्य के मूल शासक थे, इसलिए आपका उस पर कोई दायित्व नहीं था, क्योंकि उसने ही आपको भोजन और पालन-पोषण दिया था। आपने ही हस्तिनावती की रक्षा की, उसका पालन-पोषण किया और उसे विकसित किया और फिर उसे उसे सौंप दिया। वृद्धावस्था में मुट्ठी भर चावल खाना कोई ऋण नहीं माना जा सकता। वास्तव में, यह आपका अधिकार है। इसलिए, मुझे विश्वास है कि दुर्योधन का साथ देने में धर्म का कोई सूक्ष्म अर्थ अवश्य है। यदि ऐसा है, तो कृपया हमें बताएं। हम इस युद्ध से हट जाएंगे।"

भीष्म ने उत्तर दिया, "मैं खुले तौर पर और सीधे तौर पर यह नहीं बता सकता कि मैंने सेनापति का पद क्यों स्वीकार किया। मेरे मन ने मुझे बताया कि इसे स्वीकार करने से धर्म का प्रचार होगा। वह भी तुम्हारी ही तरह मेरा पोता है, और मैं उसे त्याग नहीं सकता।"

धर्म ने कहा, "हम यह युद्ध केवल राज्य के लिए नहीं लड़ रहे हैं, बल्कि पूरे विश्व को यह घोषित करने के लिए लड़ रहे हैं कि हम आपके पोते-पोती हैं।" ये शब्द सुनकर भीष्म का हृदय प्रसन्न हो गया।

तब तक आधी रात हो चुकी थी। भीष्म, द्रोण और शल्य, जो लंबी यात्रा करके आए थे, काफी थक चुके थे। अर्जुन को छोड़कर पांडव दल के सभी सैनिक भी नींद में थे। इसलिए, दोनों पक्ष युद्ध के नियमों और कायदों को तय करने के लिए उत्सुक थे। उन्होंने बिना किसी विवाद या चर्चा के आर्यों के युद्ध नियमों को स्वीकार कर लिया। उन्होंने कुछ नए नियम भी बनाए। यह तय हुआ कि युद्ध केवल दिन के समय ही लड़ा जाएगा। अंधेरा होने पर, दोनों पक्षों को शंख बजाकर अपने-अपने शिविरों में लौट जाना था। यदि कोई व्यक्ति या व्यक्ति युद्ध में असमर्थ या थका हुआ मैदान छोड़ दे, तो उसे मारा नहीं जाना चाहिए। रथ पर सवार योद्धा केवल रथ पर सवार योद्धाओं से ही युद्ध करेगा। हाथी पर सवार सैनिक केवल अपने ही हाथियों से लड़ेंगे। इसी प्रकार, घुड़सवार सेना केवल घुड़सवार सेना से ही लड़ेगी। पैदल सेना केवल पैदल सेना से ही लड़ेगी। कोई भी सैनिक या सेनापति दूसरे पक्ष

के किसी भी सैनिक को आमने-सामने की लड़ाई के लिए चुनौती दे सकता है। ऐसी लड़ाई तभी शुरू होनी चाहिए जब चुनौती स्वीकार करने वाला पक्ष आकर अपनी तैयारी की घोषणा कर दे। ऐसी लड़ाई में किसी बाहरी व्यक्ति को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। आत्मसमर्पण करने वालों और कैद में बंद लोगों को नहीं मारा जाना चाहिए। पीठ दिखाकर भागने वालों, जिनके हथियार समाप्त हो चुके हों, और जिनके कवच फट चुके हों, उन्हें मारना सख्त मना था। घोड़ों की देखभाल करने वालों, रसद ढोने वालों, सैनिकों के लिए हथियार ले जाने वालों, शंख बजाने वालों और ढोल बजाने वालों पर हथियार नहीं चलाना चाहिए।

विचार-विमर्श सुबह तक चलता रहा। अगर उन्होंने युद्ध के नियमों के अलावा किसी और बात पर चर्चा की होती, तो उन्हें और भी कई मुद्दों पर बात करनी पड़ती। लेकिन किसी ने भी उनका ज़िक्र नहीं किया। फिर तीनों आगंतुक खड़े हो गए। बाकी चार लोगों ने तीनों के पैर छूकर सम्मान व्यक्त किया। शल्य के पैर छूते हुए धर्म ने पूछा, "मामा, अब आप इस स्थिति में धर्म का अर्थ बेहतर ढंग से समझ गए हैं। जब हम यह घोषणा करें कि दोनों पक्षों के लोग पुनर्विचार के बाद अपना पक्ष बदल सकते हैं, तो कृपया आप अपनी सेना के साथ हमारे साथ आ जाइए।"

शल्य के चेहरे को देखकर कृष्ण ने कहा, "हे महाराज, यदि आप अपनी सेना के साथ आ सकें, तो हमें अत्यंत प्रसन्नता होगी। यदि आपके पुत्र आप पर अत्यधिक दबाव डालें, तो आपके लिए अपनी सेना को छोड़कर अकेले हमारे पास आना कठिन होगा। बिना सेना के शासक उतना ही शक्तिहीन होता है जितना कि बिना शस्त्र के सेना। अतः आप अपनी सेना के साथ यहीं ठहरें। लेकिन धर्म और उसके अनुयायियों के साथ आपका आशीर्वाद और शुभकामनाएँ बनी रहें। हे गुरुदेव, जिस प्रकार शत्रु सेनाओं के प्रमुख होते हुए भी हमारे साथ दादा भीष्म का आशीर्वाद है, उसी प्रकार आप भी हमारे साथ रहें।"

भीष्म का पुरोहित दूसरे तंबू में सो रहा था। उन्होंने उसे जगाया और फिर चारों रथ में सवार हो गए। बाकी चार लोग आगंतुकों के साथ उनके शिविर की सीमा तक गए। जब तक चारों अपने शिविर में पहुँचे, सुबह हो चुकी थी। तीनों योद्धा अपने-अपने तंबू में लौट गए और सो गए।

लेकिन उनमें से कोई भी सो नहीं सका। हाथियों की चिंघाड़ और घोड़ों के हिनहिनाने से उनकी नींद भंग हो रही थी। सामान इधर-उधर ले जाने की हलचल भी थी। फिर आम सैनिकों की फुसफुसाहट और बातचीत का शोर भी था। ज़ाहिर

है, उनका मन बहुत विचलित था। वे अपने थके-हारे शरीर की सहनशक्ति के अनुसार ही सोए। भीष्म तब उठे जब सूर्य चार व्यक्तियों की ऊँचाई तक चढ़ चुका था। स्नान करने के बाद, उन्होंने पुजारी द्वारा तैयार की गई सामग्री का उपयोग करके अग्नि देव को तीन बार विधिपूर्वक प्रणाम किया। जब तक उन्होंने यह सब समाप्त किया, आपूर्ति प्रबंधक एक समस्या लेकर आया, "दादाजी, हमें शुरू से ही पानी की समस्या है। क्या आपको नवीनतम जानकारी है?"

उसने प्रश्नवाचक दृष्टि से उसकी ओर देखा।

उन्होंने समझाया, "सभी सैनिकों को लग रहा था कि युद्ध आज सुबह शुरू हो जाएगा। यह एक अभूतपूर्व युद्ध है। वे सभी खून की नदियों और दोपहर तक चारों ओर फैले शवों, टूटी हड्डियों और मांस के ढेरों के बारे में बात कर रहे थे। इस विचार मात्र से ही वे इतने भयभीत हो गए थे कि उनमें से अधिकांश रात में ही कई बार शौच करने लगे और उन्होंने जितना भी पानी पिया था, वह पसीने के रूप में बाहर निकल गया। साथ ही, उन्हें बार-बार पेशाब भी आ रहा था। वे अभी भी दस्त और अनियंत्रित पेशाब से ग्रस्त हैं। दुर्गंध पहले ही अपना असर दिखाने लगी है और पूरे वातावरण में फैल रही है। इसे सहन न कर पाने के कारण, कई लोग अपना मानसिक संतुलन खो रहे हैं और चिल्ला रहे हैं, 'हम मर रहे हैं'। डर तेजी से फैल रहा है। आपके तंबू मुख्य शिविर से थोड़ी दूरी पर हैं, इसलिए दुर्गंध अभी तक आप तक नहीं पहुंची है। इसके अलावा, यहां अनुष्ठान में चढ़ाए गए घी की सुगंध ने शायद दुर्गंध को कम कर दिया हो।"

एक मिनट के लिए सेनापति चुप रहा। फिर उसने कहा, "क्या घबराए हुए लोग अनुभवहीन नौसिखिए हैं?"

प्रबंधक, "जी नहीं। शायद कुछ सैनिक कच्चे हों। कल से ही जब हमारी सेनाएं यहां आने लगीं, सैनिक एक के बाद एक वहां के पेड़ों की चोटियों पर चढ़कर स्थिति का जायजा लेने के लिए दौड़ रहे हैं। हमारी तरफ तो सैनिकों का एक विशाल सागर सा दिखता है। और वहां क्षितिज के पार दुश्मन की सेनाएं अनंत तक फैली हुई दिखाई दे रही हैं। इतनी विशाल सेनाएं, इतना बड़ा युद्ध उन्होंने पहले कभी न देखा था और न ही सुना था। इस दृश्य ने उन्हें सचमुच डरा दिया है। इसके अलावा, वे अब तक छोटे पैमाने की लड़ाइयों के आदी रहे हैं जिनमें छोटी सेनाएं एक-दूसरे पर टूट पड़ती हैं और परिणाम अपेक्षाकृत कम समय में सामने आ जाता है। या तो आप मरते हैं या बचते हैं, या तो आप जीतते हैं या हारते हैं। कोई लंबा

इंतजार नहीं, कोई उम्मीद या प्रत्याशा नहीं। उन्होंने पहले कभी सैनिकों का ऐसा सागर नहीं देखा था। मैंने भी ऐसा कुछ पहले कभी नहीं देखा।"

एक मिनट रुकने के बाद भीष्म ने फिर कहा, "महाराजा और गुरु को भेजो। यह सुनिश्चित करो कि पूरा इलाका ठीक से साफ हो जाए।"

प्रबंधक ने पूछा, "पानी की कमी होने पर कितनी सफाई करना संभव है?"

भीष्म ने बस इतना कहा, "जितना संभव हो।" फिर वे अग्नि की ओर मुड़े और उसमें थोड़ा और घी डाला। अग्नि प्रज्वलित हो उठी। घी की हल्की और मनमोहक सुगंध धीरे-धीरे पूरे वातावरण में फैल गई। उन्होंने प्रेमपूर्वक एक बार उस सुगंध को साँस में लिया। उन्हें लगा कि उनकी उम्र उन्हें वृक्ष की चोटी पर चढ़कर दृश्य का अवलोकन करने की अनुमति नहीं देगी। वे बस उठे और हमेशा की तरह सामने वाले भाग में बैठ गए। उन्हें युद्ध स्थल का चक्कर लगाने या उसका अवलोकन करने की कोई इच्छा नहीं हुई।

कुछ देर बाद दुर्योधन द्रोण के साथ आया। द्रोण एक आसन पर बैठ गए। दुर्योधन अपने दादा के बगल में बैठ गया। उसने कहा, "गुरु ने मुझे सब कुछ बता दिया है। खैर, इस समय अपने सैनिकों को हमें छोड़कर शत्रु के पाले में जाने का विकल्प देना असंभव है। यदि हम पूर्ण पारदर्शिता का सिद्धांत अपनाते हैं, यानी सबको सब कुछ बताने की प्रथा, तो हम राज्य का शासन कैसे चला सकते हैं? शायद हम शासन चला सकें। लेकिन इस तरह से युद्ध का प्रबंधन करना बिलकुल असंभव होगा।"

भीष्म ने कहा, "ऐसा लगता है कि इस अनोखे और अभूतपूर्व युद्ध के परिणामों के भय से बड़ी संख्या में सैनिक पेशाब और शौच कर रहे हैं। डर, जैसा कि मैं आपको बता नहीं सकता, महामारी की तरह फैलता है। यदि हम ऐसे लोगों को अपने साथ रखेंगे, तो वे बाकी लोगों को भी संक्रमित और भ्रष्ट कर देंगे। इसलिए, इस समय यह पता लगाना बुद्धिमानी होगी कि कौन डरे हुए हैं और कौन इस युद्ध में रुचि नहीं रखते, और उन्हें हटा देना चाहिए। युद्ध में, शत्रु से भी बड़ा खतरा अपनी ही सेना की कायरता या अनिच्छा होती है।"

दुर्योधन ने कहा, "लेकिन क्या सेनापतियों का काम अनिच्छुक या भयभीत लोगों को प्रेरित करना नहीं है?"

भीष्म ने कुछ चिढ़कर कहा, "पुत्र, मुझे कर्तव्यों और जिम्मेदारियों के बारे में सिखाने का साहस मत करो। मैंने तुमसे कहीं अधिक युद्ध जीते हैं, जितने युद्ध

देखने का अवसर तुम्हें मिला है।"

दुर्योधन ने कहा, "इसीलिए मैंने आपसे हमारी सेनाओं का मुख्य सेनापति बनने का अनुरोध किया था।"

भीष्म, "इसीलिए मैं तुमसे यह कह रहा हूँ। युद्ध में जाने वाले व्यक्ति को यह स्पष्ट रूप से पता होना चाहिए कि वह युद्ध क्यों लड़ रहा है। यदि आंतरिक प्रतिबद्धता न हो, तो शारीरिक साहस कैसे उत्पन्न हो सकता है? यही बात हमारे शत्रुओं पर भी लागू होती है। उन्हें भी यह स्पष्ट रूप से पता होना चाहिए कि वे युद्ध क्यों कर रहे हैं। उनकी ओर से कुछ लोग हमारी तरफ आ सकते हैं, तुम्हारी ओर से कुछ लोग उनकी तरफ जा सकते हैं। जब यह सब तय हो जाए, तब हम सही मायने में युद्ध शुरू कर सकते हैं। अन्यथा, इसकी क्या गारंटी है कि आधे-अधूरे मन वाले तुम्हें पीठ में छुरा नहीं घोंपेंगे? इसीलिए मैं यह सुझाव दे रहा हूँ। मैंने अभी तक कोई युद्ध नहीं हारा है। और मैं कह सकता हूँ कि तुमने अपने द्वारा लड़े गए किसी भी युद्ध में कभी जीत हासिल नहीं की है।"

दुर्योधन ने कहा, "दादाजी, ऐसा लगता है कि आपका इरादा मुझे अपमानित करना है।"

भीष्म ने कहा, "एक सच्चे क्षत्रिय को युद्ध लड़ना चाहिए और फिर जीतना चाहिए।" दुर्योधन के सिर पर धीरे से हाथ फेरते हुए उन्होंने आगे कहा, "उसे कभी भी जुए में लूटपाट नहीं करनी चाहिए।"

उस समय द्रोणाचार्य ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "यदि आप दादाजी की सलाह मान लें, तो युद्ध में आपकी सफलता की संभावना अधिक होगी। पूज्य भीष्म, मैंने महाराजा को भी यही बात कही थी। यदि हम कल जाकर युद्ध के उन उचित नियमों और शर्तों पर सहमति न बनाते, तो हमारी निश्चित रूप से हार होती। नए नियमों के अनुसार, जब तक हम उन्हें अपनी तैयारी का संकेत न दे दें, वे हम पर आक्रमण नहीं कर सकते। वे निःसंदेह जानते हैं कि हमारे सैनिक कल रात से भयभीत थे। मान लीजिए कि उन्होंने आज सुबह या कल रात हम पर आक्रमण किया होता, तो भय फैल जाता और हमारे सैनिक भाग जाते। तब वे आसानी से हमारे रथ, घोड़े, हाथी और हथियार छीन लेते और हमारी कमजोर स्थिति का फायदा उठाकर हमारा पीछा करते। फिर दो दिनों के भीतर वे विजयी होकर हस्तिनावती में प्रवेश कर जाते। क्या आप जानते हैं कि अनिच्छुक सैनिकों को अलग करने से हमें मजबूती मिलेगी?"

भीष्म दुर्योधन के चेहरे को ध्यान से देखते रहे। वह गहरी सोच में डूबे हुए थे। भीष्म ने पूछा, "क्या आप हमारे प्रश्नों का उत्तर स्वयं देना चाहते हैं या पहले अपने सलाहकारों से परामर्श करना चाहेंगे? एक राजा को स्वयं सोचने और निर्णय लेने में सक्षम होना चाहिए। यदि आप हमें 'ना' कहते हैं, तो युद्ध में जीत दिलाने की जिम्मेदारी आपके सलाहकारों की होगी। देखिए, मैं सेनापति की तलवार लौटाने के लिए तैयार हूँ, जो युद्ध संचालन पर सर्वोच्च अधिकार का प्रतीक है।"

दुर्योधन ने कुछ देर सोचा और फिर कहा, "ठीक है। चूंकि आप युद्ध जीतने की जिम्मेदारी लेने के लिए तैयार हैं, इसलिए मैं आपकी रणनीति का पालन करने के लिए सहमत हूं।"

भीष्म ने बाहर इंतज़ार कर रहे संतरी के लिए ताली बजाई। उन्होंने संतरी से कहा कि वह हाथी की पीठ पर सवार होकर सार्वजनिक घोषणाएँ करने वाले अधिकारियों को बुला लाए। थोड़ी देर बाद, उनमें से चार अधिकारी आ गए। भीष्म ने उन्हें आदेश दिया, "यह बात हमारे सभी सैनिकों को बता दो। नियोग पद्धति से जन्मे पांडव कुरु वंश के नहीं हैं। उन्हें खांडवप्रस्थ देना भी अन्याय था। महाराजा दुर्योधन ने जुए में वह सब कुछ वापस पा लिया जो पहले गलत तरीके से उन्हें दिया गया था। अब उन्हें वह क्षेत्र लौटाने की कोई आवश्यकता या औचित्य नहीं है। हम युद्ध नहीं चाहते थे, लेकिन उन्होंने हमारे विरुद्ध एक विशाल अभियान की पहल की है। जो भी यह मानते हैं कि प्राचीन कुरु वंश की रक्षा करना उनका धर्म है, वे हमारी तरफ से लड़ें। जो मानते हैं कि न्याय पांचों पांडवों के साथ है, वे उनके पास जा सकते हैं। जो इस युद्ध में शामिल नहीं होना चाहते, वे अपने स्थानों पर वापस जा सकते हैं। जो भी कल सूर्यास्त से पहले हमें नहीं छोड़ेंगे, वे स्वतः ही हमारे पक्ष में मान लिए जाएंगे। युद्ध परसों सूर्योदय के समय औपचारिक रूप से प्रारंभ होगा। तुम चारों चारों दिशाओं में जाकर यह संदेश सुनाओ ताकि प्रत्येक सैनिक और प्रत्येक सेनापति इसे स्पष्ट रूप से सुन सकें।"

दुर्योधन ने पूछा, "इतना लंबा संदेश क्यों?"

भीष्म ने कहा, "यह करना ही होगा।" फिर चारों उद्घोषकों की ओर मुड़कर उन्होंने कहा, "ठीक है, आप लोग तुरंत अपना काम शुरू कर दीजिए।" वे चले गए।

कुछ समय बाद दुर्योधन बाहर चला गया। वह सभी सेनापतियों के तंबू में जाकर शिष्टाचार का पाठ करने ही वाला था। तभी उसके दादा ने उसे बुलाया। उसके जाने

के बाद द्रोण भीष्म के पास गए और बोले, "देखिए, धर्म के मेरे ज्ञान के अनुसार, ये पाँचों कुरु वंश के सदस्य माने जाने चाहिए। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि मैं उनके पक्ष में चला जाऊँगा। क्यों? इसके दो कारण हैं। आप दोनों जानते हैं। पहला: उनके चावल खाने का ऋण। दूसरा: परिकाल राजा द्रुपद के प्रति मेरा क्रोध अभी शांत नहीं हुआ है। क्या पांडवों की मुख्य सेना पाँचालों की सेना नहीं है?"

भीष्म ने कहा, "गुरुजी, आप ब्राह्मण परिवार में जन्मे हैं। लेकिन आपका पेशा धनुर्विद्या है। इतने वर्षों बाद भी किसी से द्वेष रखना ब्राह्मणों का गुण नहीं है। आप जानते हैं कि उसने आपको कई वर्षों पहले अपमानित किया था। उसे इसके लिए दंड भी मिला था और उसने आपसे क्षमा भी मांगी थी। यह सब बहुत पहले की बात है... ब्राह्मणों का इतना निर्दयी और प्रतिशोधी होना उनके स्वभाव के विपरीत है। आप क्षत्रिय क्यों नहीं बन जाते?"

द्रोण ने कहा, "मुझे लगता है कि वह घमंड कर रहा है, यह कहते हुए कि 'मैं द्रुपद नहीं हूँ अगर मैं अपने पुत्र धृष्टद्युम्न के हाथों इस द्रोण को न मरवाऊँ। मैं उसे उसके अपने शिष्य अर्जुन के हाथों अपमानित करवाऊँगा।' भला आग कैसे बुझेगी अगर उसमें बार-बार घी डाला जाए?"

भीष्म ने कहा, "आखिरकार, एक दिन तो इस शरीर का जाना तय है। इस विचार से विचलित न हों कि यदि शरीर का जाना ही है, तो इससे क्या फर्क पड़ता है कि उसे कौन नष्ट करता है - द्रुपद का पुत्र भी उतना ही अच्छा है जितना कोई और। क्यों न उसे यह उत्तर भेजा जाए, 'यदि मुझे आपसे या आपके पुत्र से कोई शत्रुता नहीं है, तो आप मुझे कैसे मरवा सकते हैं?'"

द्रोण, "आप मुझे पंचालों से घृणा न करने की सलाह दे रहे हैं। क्या आप स्वयं उनसे घृणा नहीं करते?"

भीष्म ने कहा, "मैं क्षत्रिय हूँ। अगर मेरे मन में द्वेष भी हो तो कोई बात नहीं। लेकिन आप ब्राह्मण हैं।"

द्रोण बस हंस पड़े। यह पहली बार नहीं था कि भीष्म ने द्रोण के ब्राह्मण जन्म और क्षत्रिय स्वभाव की तुलना करके उनका मज़ाक उड़ाया हो। और भीष्म के कद और अधिकार वाला कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो दोस्ताना और हल्के-फुल्के अंदाज़ में उनकी आलोचना करने की हिम्मत कर सके। द्रोण को बूढ़े भीष्म का मज़ाक बहुत पसंद था। द्रोण ने भीष्म से पूछा, "मेरा कर्तव्य है कि मुझे भोजन मिले और द्रुपद के प्रति शत्रुता हो। लेकिन आप, जैसा कि धर्मराज ने कहा, पूरे राज्य के

मूल शासक हैं। आपके पास दुर्योधन का पक्ष लेने के लिए मेरे जैसे कोई कारण नहीं हैं। तो फिर आपने उसके शिविर में क्यों शामिल हुए? आपने उसका सेनापति बनने के लिए क्यों सहमति दी? क्या कुरु वंश के सदस्य के रूप में पांचों पांडवों की वैधता में आपका विश्वास टूट गया है?"

भीष्म ने कहा, "गुरुजी, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि उनकी वैधता में मेरा विश्वास डगमगाता है, तो मैं आर्यों के धर्म का उल्लंघन करने का दोषी होऊंगा। जहाँ तक सेनापति का पद स्वीकार करने के कारण की बात है, मैं आपको किसी दिन बाद में समझाऊंगा। क्या आपने अपने अनुष्ठान पूरे कर लिए हैं?"

द्रोण ने कहा, "मैं सुबह बहुत देर से उठा। दुर्योधन मुझसे मिलने आया था। उसने कहा, 'गुरुजी, वीरता और पराक्रम में आपके समान कोई योद्धा नहीं है।' उसने कहा कि मैं हजारों शत्रुओं का आसानी से नाश कर सकता हूँ। आप जानते हैं, जब से युद्ध का प्रश्न उठा है, वह व्यवस्थित रूप से मेरी कृपा पाने की कोशिश कर रहा है, प्रतिदिन मेरी अत्यधिक प्रशंसा कर रहा है।"

भीष्म ने कहा, "अब आप अनुष्ठान कर सकते हैं।"

द्रोण चले गए। भीष्म ने पहरेदार को भोजन लाने का आदेश दिया। फिर उन्होंने आदेश जारी किया कि किसी को भी उनसे मिलने की अनुमति न दी जाए। इसके बाद वे आराम करने के लिए अंगड़ाई लेने लगे। उन्हें जम्हाई आई। उन्होंने अपने शरीर को ढीला छोड़ा। हालांकि उन्हें यकीन था कि नींद नहीं आएगी, फिर भी उन्होंने अपनी आँखें बंद कर लीं। मच्छर उनकी आँखों और कानों के आसपास भिनभिना रहे थे। उन्हें एहसास हुआ कि पिछले लगभग सत्तर वर्षों से उन्हें महल के बाहर सोने का कभी अवसर नहीं मिला था। बेशक, महल में स्थिति बिल्कुल अलग थी। वहाँ चंदन और नीम के मिश्रण को जलाकर मच्छरों के प्रकोप से निपटा जाता था। इतने लंबे समय के बाद, पहली बार उन्हें महल के सुख-सुविधाओं से वंचित होने का अहसास हुआ। भीष्म को याद आया कि उनके पोते धर्म ने बारह वर्ष जंगल में इससे भी बदतर परिस्थितियों में बिताए थे। उन्हें धर्म का दुबला-पतला शरीर याद आया। उन्होंने सोचा, उनका नाम ही धर्म है, जो उन्हें आर्य ऋषियों ने दिया था। भीष्म ने मन ही मन सोचा, "यह व्यक्ति इसे अधर्म या धर्म का उल्लंघन कहता है, अपनी भूमि छोड़ने को तैयार नहीं है। धर्म के सभी उल्लंघन ईर्ष्या, अहंकार और अभिमान से उत्पन्न होते हैं। लेकिन अंततः बात एक ही है – उन्हें धर्म और कर्म का रंग देना, उनके लिए एक सौ आठ औचित्य खोजना, और आर्य धर्म

को धर्म का उल्लंघन बताना, ये तो बहुत ही बुरे दिन हैं...” फिर योद्धा करवट बदलकर सो गया। लेकिन उसके मन में विचार आते रहे, “क्या कुरु होने के पांडवों के दावे के बारे में मेरा विश्वास सचमुच टूट गया है?” गहरी सांस लेते हुए भीष्म को दुर्गंध आई – “शायद हवा उस दिशा से बह रही है।” वे हँसे। “क्षत्रिय गुण संसार से लुप्त हो रहा है।” दुर्गंध असहनीय थी, और उसने अपनी नाक बंद कर ली। "अच्छा, अगर मैं गहरी साँसें कम लूँ, तो दुर्गंध मेरी नाक को प्रभावित नहीं करेगी। मुख्य प्रश्न यह है: शरीर से पसीने की बूँदों के रूप में पानी का निकलना, न कि रथ पर चढ़कर शत्रु पर बाणों की वर्षा करते हुए निकलने वाले पसीने के रूप में। नहीं, यह प्रश्न नहीं था? ऐसा कुछ नहीं। ऋषियों ने ही तो उन्हें धर्म नाम दिया था। ऐसा लगता है कि इस उपाधि पर केवल दुर्योधन ही नहीं, बल्कि कई और लोग भी सवाल उठा रहे हैं। तो क्या वे मेरे पोते-पोती नहीं हैं?" उद्घोषक के ढोल की आवाज़ ने उसके विचारों को विराम दिया। उद्घोषकों की आवाज़ भी सुनाई दी। भीष्म ने वह आवाज़ सुनी जिसमें युद्ध में रुचि न रखने वालों को अपने-अपने स्थानों पर जाने का निर्देश दिया जा रहा था। वह सोचने लगा, "कितने अपने स्थानों पर लौटेंगे? मान लो कि सब चले गए। कोई युद्ध नहीं। धर्म की विजय। धर्म का तर्क है कि मैं किसी के प्रति बाध्य नहीं हूँ। जब राजा ही सब कुछ का स्वामी है, तो कोई राजा के प्रति अपने दायित्वों से मुक्त होने का दावा कैसे कर सकता है? मैं राज्य और उसकी संप्रभुता का परम स्रोत होने का दावा कैसे कर सकता हूँ? मैंने राज्य और संप्रभुता की इच्छा न होने के कारण ही सब कुछ त्याग दिया था! अब दोनों मुझे अपना दादा कहते हैं। मूर्ख! अब वह कैसे दावा करता है कि केवल वही मेरे असली पोते-पोती हैं! मूर्ख, लोभ से भरा हुआ!" मच्छरों का झुंड उसके शरीर पर कम होता जा रहा था।

धीरे-धीरे उसे नींद आ गई, कुछ समय के लिए, मच्छरों और दुर्गंध से दूर एक नींद।

जब वह जागा, तो उसे ऐसा लगा जैसे वह लगभग तीन घंटे सोया हो। नींद के दौरान जो विचार उसके मन में आया था, वह अब उसके सामने आ गया। वह जानना चाहता था कि द्वैपायन वन शिविर से कितनी दूर है। फिर उसने सोचा, "दूरी कोई मायने नहीं रखती। मुझे रथ में आराम करते हुए जाना ही होगा। ऋषि कृष्ण द्वैपायन अपने शिष्यों के साथ रहते हैं। रिश्तेदारी के नियमों के अनुसार, उनका दर्जा मेरे भाई के समान है। धर्म और कर्म के मामलों में वे हमेशा से मेरे मार्गदर्शक

रहे हैं। मुझे उनसे सलाह लेनी चाहिए और कल शाम से पहले शिविर लौट आना चाहिए।" वह एक तरफ मुड़ा। उसे अब नींद नहीं आ रही थी। फिर वह जल्दी से उठ बैठा। उसने संतरी को ताली बजाकर बुलाया और उसे आदेश दिया कि वह जाकर महाराजा को बुलाए।

भीष्म की बात सुनने के बाद दुर्योधन ने कहा, "जब हमें परसों सुबह युद्ध में उतरना ही है, तो सेनापति का कहीं किसी ऋषि के पीछे भागने का क्या अर्थ है?"

भीष्म ने कहा, "कोई साधारण ऋषि नहीं। ये वही ऋषि हैं जिन्होंने तुम्हारे दादाजी को जन्म देने के लिए अपना वीर्य दान किया था। जब कुरु वंश विलुप्त होने की कगार पर था, तब उन्होंने इसे बचाया था। क्या अब इस सेनापति को युद्ध जीतने के लिए उनका आशीर्वाद लेने नहीं जाना चाहिए?"

दुर्योधन कुछ नहीं बोला। उसने प्रबंधक को बुलाया और उसे चार घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले दो रथ तैयार करने को कहा। दस सैनिकों के साथ वे चल पड़े। दुर्योधन ने सुरक्षा कारणों से एक छोटी सेना ले जाने का सुझाव दिया। लेकिन भीष्म ने यह कहकर इस विचार को अस्वीकार कर दिया, "ऋषियों और साधुओं से मिलने जाते समय सेना नहीं ले जानी चाहिए। चिंता मत करो। यात्रा के दौरान मुझे बंदी नहीं बनाया जाएगा।" फिर वे पहले रथ में चढ़ गए और एक मुलायम तकिये पर आराम से बैठ गए। पीछे वाले दूसरे रथ में भोजन और अन्य सामग्री थी। कौरव शिविर से दक्षिण की ओर बढ़ते हुए, उन्हें बाईं ओर अपनी सेना का एक हिस्सा दिखाई दिया। दूर, हाथी पेड़ों के तनों और शाखाओं को मजे से तोड़ रहे थे। उन्हें हाथी पर सवार एक उद्घोषक संदेश सुनाता हुआ दिखाई दिया। भीष्म के मन में धर्म के प्रश्न के सिवा कुछ और नहीं था - क्या पांडव कुरु वंश के वैध सदस्य थे? यदि दुर्योधन ने केवल यह तर्क दिया होता कि वह अपने प्रतिद्वंद्वियों को वह क्षेत्र वापस नहीं देगा, तो भीष्म को चिंता नहीं होती। यह संसार के नियमों के अनुरूप होता। नहीं, असली चिंता तो यह थी कि उसने धर्म का एक मूलभूत मुद्दा उठा दिया था। वह धर्म के लिए युद्ध करने का दावा कर रहा था। यदि धर्म की उसकी व्याख्या सही थी, तो भीष्म का पांडवों के दावे की सत्यता और न्यायसंगतता में विश्वास न केवल धर्म का स्पष्ट उल्लंघन होता, बल्कि इससे भी कहीं अधिक, यह उनके अपने जीवन, उनकी उपलब्धियों और उनके आदर्शों का पूर्ण पतन होता। पांडवों की पराजय या पराजय, या विशाल सेनाओं को देखते हुए मानव जाति के अस्तित्व के प्रश्न से भी भीष्म इतना चिंतित नहीं थे, जितना कि इस प्रश्न से कि क्या उनका पूरा

जीवन अपने आदर्शों के संदर्भ में पूर्णतः असफल रहा है। उन्हें इस बात का गहरा अफसोस था कि उन्होंने कृष्ण द्वैपायन की तरह वन में एक भिक्षु ऋषि का जीवन पूर्णतः नहीं अपनाया। इसके बजाय, उन्होंने सोचा कि उन्होंने एक अधिक जटिल नियति को स्वीकार कर लिया है, जो न तो यहाँ है, न वहाँ, न पूर्ण गृहस्थ है और न पूर्ण संन्यासी। उन्होंने अपने पैर फैलाए और आराम किया। द्वैपायन वन की ओर एक रास्ता जा रहा था। उसके दोनों ओर कहीं-कहीं खेती योग्य भूमि के छोटे-छोटे टुकड़े थे। उनके बीच घने जंगल थे। यद्यपि वे नरम आसन पर बैठे थे, फिर भी रथ की गति उन्हें बहुत अस्थिर और बेचैन कर रही थी। डगमगाती चाल से उनके वृद्ध शरीर की दुर्बलता स्पष्ट हो रही थी, एक ऐसी दुर्बलता जो उन्होंने महल के सुख-सुविधाओं के बिना अब तक कभी महसूस नहीं की थी। उन्होंने अपने शरीर पर ध्यान लगाया, "यह शरीर कितना पुराना है? इतने लंबे समय तक जीने के बाद मैं वर्षों की गिनती भूल गया हूँ, उनके आने-जाने का। यह प्राचीन शरीर इतना पुराना है कि इसे अमर कहा जा सकता है।" जैसे-जैसे उनकी स्मृति वृद्धावस्था, अधवृतावस्था और वृद्धावस्था की शुरुआत की ओर जाती गई, उन्हें लगा कि उनका जीवन अधिकतर मध्य आयु और वृद्धावस्था में बीता है, और बचपन और युवावस्था बहुत कम। यदि कोई स्मृति के धागे को खोलकर पीछे जाए, तो स्मृति उसे कितना पीछे ले जा सकती है? भीष्म ने स्वयं से पूछा: "कोई उस समय को कैसे याद रख सकता है जब वह शिशु था और अपनी माँ की गोद में पेशाब और शौच करता था, जब उसके पास अपने अनुभवों को सचेत रूप से समझने की बुद्धि भी नहीं थी? क्या स्मृति में अनुभवों को सहेजने की क्षमता तभी विकसित नहीं होती जब व्यक्ति अपनी माँ से दूर सोने की क्षमता प्राप्त कर लेता है? लगता है मुझे कभी माँ की गोद में सोने का सौभाग्य नहीं मिला। बचपन में मैं अपनी माँ से कितनी घृणा करता था! वह कैसी माँ हो सकती है जिसने अपने गर्भ से जन्म दिए बच्चे से सारे रिश्ते तोड़ दिए और अपने मायके चली गई! क्या मेरे पिता को आर्य कन्या नहीं मिल सकती थी? उन्होंने लंबी और पतली नाक वाली, गहरी आँखों वाली, कद में ऊँची और गोरी त्वचा वाली आर्य सुंदरियों के बजाय गैर-आर्य स्त्रियों को पसंद किया। वास्तव में, उनकी दोनों पत्नियाँ गैर-आर्य थीं। भगवान ही जाने उन्हें इन असभ्य, वन में पली-बढ़ी आदिवासी स्त्रियों में क्या मिला?" बेशक, भीष्म जानते थे कि ब्रह्मचारी होने के कारण उन्होंने स्त्रियों के बारे में जानकारी दूसरों से ही प्राप्त की थी। स्वाभाविक रूप से, उन्हें इनका कोई प्रत्यक्ष अनुभव नहीं था। यहाँ तक कि उनका

ज्ञान भी बहुत सीमित था क्योंकि वे सरकारी कामकाज में व्यस्त रहते थे और उनके पास इन चीजों के लिए समय नहीं था। उसने खुद से पूछा, "मुझसे, जो महिलाओं के प्रति तिरस्कार के लिए जाना जाता था, कौन महिलाओं के बारे में बात करेगा? पिता ने पहले गंगा से विवाह किया, जो मेरी माता थीं। मेरी सौतेली माँ अपनी अंतिम साँस तक मुझे गंगा का पुत्र कहती रहीं। अब यह कृष्ण द्वैपायन मेरा चचेरा भाई है। केवल वही व्यक्ति जो ऋषि का दर्जा प्राप्त कर चुका है, मुझे गंगा का पुत्र कहता है, बाकी सब मुझे भीष्म कहते हैं। मेरा असली नाम तो दुनिया से मिट गया है। मुझे भी ऐसा लगता है कि देवव्रत मेरा नाम नहीं, बल्कि किसी अजनबी का है। पिता एक युवक थे जो गंगा नदी से लेकर हिमालय की तलहटी तक के जंगलों में शिकार करते थे। उनका शरीर मेरे जैसा ही बड़ा था। वह एक पहाड़ी जनजाति की युवती थीं, जिनका नाम गंगा था। जब उन्होंने उनसे संपर्क किया, तो उन्होंने कहा, 'राजा, मैं भी आपसे प्रेम करती हूँ। लेकिन हमारे रीति-रिवाज, नियम और परंपराएँ एक जैसी नहीं हैं।' युवावस्था के आवेग में उन्होंने उनकी आपत्ति को खारिज कर दिया। लेकिन उन्होंने आगे समझाया, 'नहीं, मैं इसे स्पष्ट कर दूँ। हमारे यहाँ पुत्री से जन्मी सभी संतानें एक ही परिवार की होती हैं।' मेरी माँ ने कहा, "लेकिन आपकी प्रथा अलग है। आपके यहाँ बच्चे पति की संपत्ति होते हैं। मैं आपके साथ चलूँगी। लेकिन इस शर्त पर कि मुझे अपने लोगों की प्रथा का पालन करने की अनुमति दी जाए। आपको मुझे हमारे बच्चों को मेरी माँ के घर भेजने की अनुमति देनी होगी। क्या आप इसके लिए सहमत हैं?" मेरे पिता, भावनाओं में बहकर, बोले, "प्यारी महिला, मुझे आप चाहिए, बच्चे नहीं।" फिर मेरी माँ ने अपनी बात पर अड़े रहते हुए कहा, "जिस क्षण आप हमारे बच्चों पर अपना अधिकार जमाने की कोशिश करेंगे, मैं आपको चेतावनी देती हूँ कि हमारा रिश्ता अपने आप खत्म हो जाएगा।" यही वह सख्त शर्त थी जिस पर मेरी माँ मेरे पिता के साथ आईं।

क्या ये बच्चे दूसरे के हैं या पिता के? यह सवाल भीष्म को परेशान कर रहा था। कांपते रथ में आराम कर रहे भीष्म अचानक उठ बैठे। उनकी नज़र सूखे पत्तों से झड़ते पेड़ों पर पड़ी... आगे पाँच आदमी घोड़ों पर सवार थे। पीछे एक और रथ था, और उसके पीछे पाँच और आदमी घोड़ों पर सवार थे। पहियों के सूखे पत्तों पर घिसने और घोड़ों के खुरों की आवाज़ ज़मीन पर गूँज रही थी। उन्होंने स्वयं से पूछा, "क्या ये पिता के हैं या माता के? बीज के हैं या मिट्टी के?" ऐसा लगता है कि प्रेम में डूबे पिता के मन में यह प्रश्न कभी आया ही नहीं। उनका सारा ध्यान स्वयं और

अपनी प्रिय स्त्री पर केंद्रित था। वह गर्भवती हुईं, प्रसव के लिए अपने मायके चली गईं। उन्हें प्रसव के लिए मायके क्यों जाना चाहिए? उन्होंने बच्चे को जन्म दिया, स्वास्थ्य लाभ किया और बिना बच्चे के अपने पति के घर लौट आईं। फिर प्रेम। गर्भधारण। मायके में प्रसव और स्वास्थ्य लाभ। फिर बिना बच्चे के अपने पति के घर लौटना। यह सिलसिला बारह से चौदह वर्षों के अंतराल में सात बच्चों के जन्म तक चलता रहा। इतने वर्षों तक इस गतिविधि में व्यस्त रहे राजा को अंततः अपने राजा के कर्तव्यों का एहसास हुआ। उन्होंने यह भी पाया कि उनकी उम्र बढ़ रही है। वे उत्तराधिकारी को लेकर चिंतित थे। भीष्म ने अपने मन में विचार किया, "तो फिर मैं यही सोचता था कि यही समस्या है। उत्तराधिकारी के रूप में नहीं, बल्कि पिता की इच्छा के अनुसार।" क्या वह अपनी ही संतान को उठाना, उसके साथ खेलना, उसे सहलाना और उससे प्यार करना पसंद नहीं करेगा? उसने उससे कहा, 'तो तुम मेरे साथ मेरी मां के घर चलो और वहीं रहो।' आप बच्चों को जी भर के खेलने देते हैं। पिता ने जोश से जवाब दिया, 'मैं आर्य हूँ, और मैं सास के घर में बंधुआ मजदूर बनकर खुद को नीचा नहीं दिखा सकता। इसके अलावा, मैं राजा हूँ।' उसने पलटवार करते हुए कहा, 'क्या मैं आपके साथ तभी नहीं आई थी जब आपने मुझे अपने लोगों की रीति-रिवाजों का पालन करने की अनुमति दी थी, जो आपके लोगों से अलग हैं?' उन्होंने विनती की, 'अपने पति की खातिर, अपनी रीति-रिवाज छोड़ दो।' वह अपनी बात पर अड़ी रही। उसने जोर देकर कहा, 'पति के लिए सब कुछ त्याग देना आपकी रीति-रिवाज है। मैं इसका पालन क्यों करूँ? खैर, मैं यह जानना चाहती हूँ कि बच्चे बीज से पैदा होते हैं या मिट्टी से?' जो सवाल जवानी में उन्हें परेशान नहीं करता था, अब उन्हें परेशान करने लगा। उन्होंने तर्क दिया, 'मैं आर्य हूँ। बच्चे बीज से पैदा होते हैं, मिट्टी से नहीं।' उतनी ही दृढ़ता से उसने कहा, 'मैं पहाड़ों से हूँ। मेरा समुदाय एक अलग नियम के अनुसार रहता है। कौन कह सकता है कि कौन सा पक्षी कहाँ से कौन सा बीज उठाता है और उसे बोता है? यह तो पेट ही बता सकता है।' जो गर्भ धारण करती है और बच्चे को जन्म देती है, उसी का उस पर अधिकार है। संतान मेरी है, और मैं अपनी माँ की हूँ। मैं तुम्हारे रीति-रिवाजों का पालन नहीं करना चाहती। हमारे यहाँ, किसी स्त्री पर अपनी मर्ज़ी से ज़बरदस्ती नहीं की जा सकती। वह चट्टान की तरह अड़ियल थी, लेकिन राजा होने के नाते वह किसी भी विरोध को बर्दाश्त करने को तैयार नहीं था, और अब वह उसके नगर में रह रही थी। यह इच्छाओं का संघर्ष था। उसने अपना

अंतिम आदेश दिया, 'इस बार प्रसव यहीं होगा। मैं तुम्हें तुम्हारी माँ के घर नहीं भेजूँगा।' वह रोई, चीखी और गालियाँ दीं, सब व्यर्थ। आठवाँ प्रसव पति के घर में हुआ। राजा ने बच्चे की निगरानी के लिए पहरेदार तैनात कर दिए। एक दिन सुबह, वह गायब हो गई, उस बच्चे को छोड़कर जो गर्भ धारण कर चुका था, बड़ा हो चुका था और उसकी कोख से बाहर आ गया था। पिता ने उसे खोजने की ज़हमत नहीं उठाई। लेकिन अगर उसने कोशिश भी की होती, तो क्या वह लौटती? फिर वह उसी तकिये से टेक लगाकर रथ में पैर लटकाए बैठा रहा। रथ शक्तिशाली घोड़ों द्वारा खींचा जा रहा था। गांधार, बहलिका और सिंधु देशों के घोड़े असली घोड़े थे। जयद्रथ से दुस्साले का विवाह कराने के बाद, उनके साथ संबंध स्थापित होने पर उत्तम नस्ल के घोड़ों की कोई कमी नहीं रही। उन्हें आश्चर्य होता था कि वे घोड़े पालने की कला में महारत क्यों नहीं हासिल कर पाए। फिर उसने अपनी धँसी हुई आँखें बंद कर लीं और हिलती हुई गाड़ी के साथ झूलने लगा। "बचपन में मेरी माँ की याद मुझे कितना सताती थी! कितनी पत्थर दिल माँ रही होगी वो, जिसने अपने ही बच्चे को छोड़ दिया! खैर, नौकरानियाँ, पिताजी और मैं उसे कोसते थे और कहते थे कि वो औरत ही नहीं है। अब जब मैं पीछे मुड़कर सोचता हूँ, तो मुझे लगता है कि उसमें मातृत्व की भावना बिल्कुल नहीं थी। पहले सात बच्चे, सभी बेटे, वो अपने मायके में छोड़कर पिताजी के पास लौट जाती थी। फिर उसने मुझे मेरे पिताजी की देखभाल में छोड़ दिया। उसे माँ कैसे कहा जा सकता है? मुझे इस प्रथा के बारे में हिमालयी आदिवासी लोगों से तब पता चला जब मैं वहाँ किसी युद्ध में जीत हासिल करने गया था। तब मेरी उम्र पचास साल थी। लगता है कि रिवाज था बच्चे को जन्म देकर मायके को सौंप देना। तब भी मुझे याद है कि मेरा मन बहुत उदास था। मुझे यह भी याद है कि उस पहाड़ी क्षेत्र में युद्ध करते समय मुझे यह भ्रम होता था कि जो भी लंबा आदमी मुझे मिलता था, वो मेरे सात भाइयों में से एक होता था! तब मुझे एहसास हुआ कि हमारे सभी भ्रमों में से, एक भ्रम हमारी उत्पत्ति से जुड़ा होता है। और जन्म सबसे गहरा अनुभव है।

हाँ, माँ हमें छोड़कर चली गईं। लेकिन पिता का मेरे प्रति प्रेम और स्नेह असीम था। मेरी देखभाल के लिए कई नर्सें थीं, लेकिन सच कहूँ तो, पिता ने ही मुझे पाला-पोसा, मेरा पालन-पोषण किया, मुझे अत्यंत कोमल भाव से बड़ा किया। इसीलिए महल की नौकरानियों ने मुझे 'पुरुष द्वारा पाली-पोसी गई बच्ची' का उपनाम दिया था। और मैंने कितनी कम उम्र में ही तीरंदाजी, शिकार और युद्ध कला में महारत

हासिल कर ली थी। मुझे कभी डर का एहसास ही नहीं हुआ। पिता, जो हमेशा मेरी माँ के अभाव के अकेलेपन को दूर करने के लिए मेरे साथ रहे और मुझे बहुत कम उम्र में ही सिंहासन पर बिठाया, अचानक बुढ़ापे में एक स्त्री के पीछे पागल क्यों हो गए? वह भी एक मछुआरे की बेटी के लिए! उसका नाम ही काली था। वह सांवली थी। और पिता का शरीर विशाल था, मेरी ही ऊँचाई का। एक विशिष्ट आर्य, आर्य त्वचा और आर्य मुद्रा। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि बुढ़ापे में वे प्रेम में इतने मग्न थे। उनका पहला प्रेम पर्वतीय जनजाति की एक लड़की से था, और इस बार मछुआरों के समुदाय की एक लड़की से। मेरी समझ से परे है कि ये आर्य पुरुष निम्न जाति की स्त्रियों में क्या पाते हैं! वे युद्ध में, शिकार में और यहाँ तक कि शांति और निष्क्रियता के समय भी उनका पीछा करते हैं। भीष्म अपनी स्मृति को तब तक तराशते रहे जब तक कि वह तेज रोशनी से भर नहीं गई। उन्हें वही कहानी, वही पुरानी बातें दोहराई गईं। उन्होंने सोचा, "क्या यह सही है या गलत? मुझे स्पष्ट नहीं है। खैर, आखिरकार, मैं अविवाहित हूँ, और शायद ये बातें मेरी समझ से परे हैं।" फिर उन्होंने धूल उड़ाते रथ से बाहर देखा। फिर वे चिंतनशील हो गए, "आर्यों ने हर जगह निर्दयतापूर्वक भूमि पर कब्जा कर लिया है और उन्हें कृषि भूमि में बदल दिया है। वे हर जगह बसने लगे। अचानक, पिताजी बीमार पड़ गए और बिस्तर पर पड़ गए। किसी भी चिकित्सा उपचार का कोई लाभ नहीं हुआ। अंत में मुझे उनके सारथी के माध्यम से बीमारी का रहस्य पता चला। सारथी अपने स्वामी का सबसे करीबी व्यक्ति होता है। वह अपने स्वामी की गतिविधियों के साथ-साथ उनके आंतरिक रहस्यों के बारे में भी सब कुछ जानता है।" इसलिए जब मैंने उससे और पूछा, तो उसने बताया, 'राजकुमार, आपके पिता मानसिक बीमारी से पीड़ित हैं। कुछ दिन पहले हम शिकार के लिए दक्षिण गए थे। हमें यमुना नदी पार करनी थी। नाव एक लड़की चला रही थी। जब मैं लड़की कहता हूँ, तो मेरा मतलब वास्तव में पच्चीस या छब्बीस वर्ष की एक युवती से है। आपके पिता उस स्त्री पर पागल हो गए हैं। आपके पिता ने उसे लुभाने के लिए कहा कि वह उसे जो चाहे उपहार देंगे। उसने उत्तर दिया, 'हे महाराज, यदि आप मुझसे विवाह करेंगे, तो मैं पूरी तरह से आपकी हो जाऊँगी।' फिर वह उन्हें अपने पिता के पास ले गई। उसके पिता मछुआरों के समुदाय के मुखिया थे। वे बहुत ही व्यावहारिक स्वभाव के व्यक्ति प्रतीत होते थे। सारी जानकारी बड़ी चतुराई से विस्तार से निकालने के बाद, उसने स्वामी से कहा, "महाराजा, आपका एक पुत्र पहले से ही वयस्क हो चुका है, और

आप भी मेरी ही तरह बूढ़े हो रहे हैं। मेरी पुत्री को आपसे विवाह करके क्या लाभ होगा?" आपके पिता ने उत्तर दिया, "उसे क्या लाभ होगा? उसे महल में जीवन, ढेर सारे गहने और विलासितापूर्ण जीवन मिलेगा।" मछुआरों के मुखिया ने जवाब दिया, "मेरी पुत्री अपने सौतेले पुत्र की पत्नी की दासी बनने को तैयार नहीं है, और मैं उसे आपको तभी अर्पित करूँगा, जब आप और आपका पुत्र पवित्र अग्नि की शपथ लें कि मेरी पुत्री से उत्पन्न पुत्र आपके सिंहासन पर बैठेगा, अन्यथा हमारा आपसे कोई संबंध नहीं रहेगा।" आपके पिता अचानक उन्हें छोड़कर रथ पर चढ़ गए। उन्होंने मुझे जल्दी घर जाने को कहा। उनके मन में उसके लिए आकर्षण अभी भी कम नहीं हुआ है। लेकिन आपसे अपना सिंहासन छोड़ने के लिए कहना उनके लिए शर्मनाक होगा। इसके अलावा, वे आपसे बहुत प्रेम करते हैं। क्या उन्होंने आपका पालन-पोषण ऐसे नहीं किया जैसे वे आपके लिए पिता और माता दोनों हों?

"खैर, मैं सारथी के साथ मछुआरों के सरदार और उसकी बेटी के पास गया था। कितने साल पहले की बात है? मेरी याददाश्त मुझे सालों पीछे ले जाती है। कितने? शायद सौ साल। तब मैं बाईस साल का था और पिताजी लगभग साठ साल के थे। मछुआरों के सरदार और उसकी बेटी के पास जाते समय मेरे मन में जो भावनाएँ थीं, उन्हें मैं ठीक से याद नहीं कर पा रहा हूँ। यह अजीब बात है।" फिर भीष्म ने अपने पैरों की स्थिति ठीक की और अपने दाहिने हाथ को तकिए पर रखकर आराम किया। उसने मन ही मन सोचा, "मैं घोड़े या रथ पर हमेशा कितना अकड़ा हुआ और सीधा बैठा करता था! इस तरह झुकना मेरी आदत कभी नहीं थी। क्या मैं पिता के प्यार और देखभाल का एहसान चुकाने की इच्छा से भरा हुआ था? या फिर बिस्तर पर बीमार पड़े पिता के लिए बताई गई दवा लाने की उत्सुकता से, चाहे वह कहीं भी हो और उसे लाने में कितना भी जोखिम क्यों न हो? खैर, अभी मुझे याद नहीं आ रहा कि उस समय क्या हुआ था। जब मैं और सारथी वहाँ पहुँचे, तो वह नाव चला रही थी। उसका रंग सांवला था। पानी में भीगी और धूप में तपती उसकी मांसपेशियाँ मजबूत थीं, और उसके घुटने, जांघें, बाहें और सुडौल स्तन भी। सारथी ने मुझे उसकी पहचान बताई, और तब मुझे आज भी याद है कि मैंने थोड़ी सी घृणा के साथ सोचा कि पिता को ऐसी स्त्री कैसे पसंद आ सकती है। मेरी यह नकारात्मक प्रतिक्रिया तब और बढ़ गई जब मैं उसके पिता की झोपड़ी में - या घर में? - नदी के दूसरे किनारे पर उसके पास बैठा था और मछली की गंध मेरी नाक में आई। जैसे कि उनके झुर्रियों वाले चेहरे से। खैर, मुझे विवरण याद नहीं है।

उनके पिता कितने विनम्र थे जब उन्होंने मुझे चबूतरे पर बैठाया, प्रणाम किया और फिर मेरे सामने साष्टांग प्रणाम किया! मुझे लगता है कि उदारता तब उमड़ती है जब कोई व्यक्ति अपने पौरुष, साहस और पराक्रम के चरम पर होता है। उस दिन से लेकर आज तक, मेरे अनुभव ने मुझे यही सत्य सिखाया है। अपने से निचले दर्जे के लोग आपके पैरों में गिरते हैं, आपकी चापलूसी करते हैं, कहते हैं, 'मैं दास हूँ और आप मेरे स्वामी,' और फिर भीख मांगने के बहाने एक-एक करके आपसे चीजें छीन लेते हैं।

मुझे सूखी हाथी घास के नरम गद्दे पर बिठाने के बाद, और जब मेरी नाक मछली की दुर्गंध से बुरी तरह प्रभावित हो रही थी, तब उसके पिता खड़े हुए, सिर झुकाकर प्रणाम किया। फिर वे सीधे मुद्दे पर आए, "राजकुमार, इस गरीब के घर में आपके आने से इसे आशीर्वाद मिला है और समृद्धि आई है। आपके पिता ने मेरी पुत्री से विवाह करने की प्रबल इच्छा व्यक्त की है। मुझे इसमें केवल एक ही अड़चन नज़र आती है। देखिए, आप किसी भी शत्रु को, चाहे वह कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो, पराजित करने में सक्षम हैं।" मैं स्तब्ध रह गया और पूछा, "यह अड़चन कैसे हो सकती है? मुझे बताइए, निषाद।" उन्होंने उत्तर दिया, "अच्छा, अगर कल आप अपनी असाधारण शक्ति का प्रयोग करके मेरी पुत्री को राज्य से वंचित कर दें, तो इस गरीब की पुत्री क्या कर सकती है?" मैंने उत्तर दिया, "ठीक है, आपकी पुत्री से जन्मा पुत्र ही पिता के सिंहासन का उत्तराधिकारी होगा। मैं इसी क्षण से अपने सभी राज्य त्याग देता हूँ। यह मेरी प्रतिज्ञा है।" वे प्रसन्न और प्रशंसा से मुझे प्रणाम करते हुए बोले, "पुत्र का आशीर्वाद मिलना चाहिए।" 'तुम्हारे जैसा। मुझे तुम्हारे जैसा बेटा पाने का सौभाग्य नहीं मिला।' उन्होंने मेरी खूब प्रशंसा की, मुझे चापलूसी भरे शब्दों से सराबोर कर दिया। फिर एक बार फिर कमर झुकाकर सम्मानपूर्वक बोले, 'कृपया मेरी एक आखिरी शंका दूर कर दीजिए। मैं एक गरीब आदमी हूँ। कृपया क्रोधित न हों क्योंकि मैंने अपनी बात स्पष्ट और विस्तार से कही है। अगर आप क्रोधित हुए, तो मुझे पता है कि यह मेरे जीवन का अंत होगा।'

मैंने कहा, 'डरें नहीं और खुलकर बोलें।'

उन्होंने कहा, "हाँ, तुमने राज्य को ठुकरा दिया है। चाहे पूरी दुनिया उलट-पुलट हो जाए, मुझे यकीन है कि तुम अपने वचन से पीछे नहीं हटोगी। लेकिन तुम्हारा यह वचन तुम्हारे बच्चों को कैसे बांध सकता है? अब तुम्हारी शादी की उम्र हो गई

है। मेरी बेटी के बच्चे और तुम्हारे बच्चे लगभग एक ही उम्र के होंगे। क्या इससे आगे चलकर जटिलताएँ पैदा नहीं होंगी?"

मैंने सोचा, 'मेरे बच्चे मुझसे वह काम करने की मांग कैसे कर सकते हैं जिसे मैं उन्हें करने से मना करता हूँ?'

उन्होंने कहा, "क्या आपको लगता है कि ये वो ज़माना है जब बच्चे अपने माता-पिता की बात मानते हैं? बेशक, अगर आपके बच्चे न होते तो बात कुछ और होती। वैसे भी, कोई अजन्मे बच्चे के व्यवहार का सटीक अनुमान कैसे लगा सकता है? और, महोदय, आप सब बड़े लोग हैं। मुझे अपनी बेटी को एक बड़े परिवार में देने से डर लगता है। और मैं नहीं चाहती कि उसे बाद में कष्ट सहना पड़े। कृपया अपने पिता से कहिए कि वे उसके लिए कोई दूसरी महिला ढूंढ लें।"

मैंने कहा, 'निषादा, मैं अपने पिता के खातिर यह महान प्रतिज्ञा लेता हूँ: मैं जीवन भर कुंवारा रहूँगा और ब्रह्मचर्य का व्रत लूँगा। मैं यह भी शपथ लेता हूँ कि मैं कभी राजा नहीं बनूँगा। इसलिए, अपना भय और संदेह दूर कर दो। कृपया अपनी पुत्री को मेरे साथ भेज दो।' ये शब्द मेरे मुँह से अनायास ही निकल आए!

उस समय मैंने उन शब्दों को ठीक से समझा और पचाया नहीं था। जब मैं उसे रथ में ले जा रहा था, तो मछली की दुर्गंध भी मेरे साथ थी। मैं उस औषधि को ले जाने के लिए बहुत उत्साहित था, जिसे राजसी शिष्टाचार का कोई ज्ञान नहीं था, वही एकमात्र औषधि जो पिता की बीमारी ठीक कर सकती थी! एक पिता जिसने मुझे इतनी देखभाल से पाला था। और एक माँ जिसने मुझे जन्म दिया और उसके बाद गायब हो गई। भगवान जाने बाईस साल बाद वह कहाँ थी, मैंने तब सोचा। जब मैं औषधि लेकर लौटा, तो पिता का चेहरा खुशी से भरा हुआ था। साथ ही शरमा भी रहा था। उन्होंने उसे देखा। फिर जब उन्होंने मुझे देखने की कोशिश की तो उन्होंने अपना सिर झुका लिया। बाद में, एक साल बाद, उन्होंने मेरे कंधों को छुआ और कहा, 'तुमने कैसा भयानक (भीष्म) व्रत लिया है! सेना लेकर किसी दूसरे राज्य को जीत लो। उसके राजा बनो। इस जगह और इसके मामलों को छोड़ दो। मैं उसे और उसके पिता को मना लूँगा कि वे तुम्हें ब्रह्मचर्य के व्रत से मुक्त कर दें। तब तुम विवाह कर सकते हो।'

लेकिन तब तक मेरे मन और हृदय ने यह अटल निश्चय कर लिया था कि मैं जीवन भर ब्रह्मचारी रहूँगा। मेरा नाम मूल देवव्रत से बदलकर नया नाम भीष्म हो गया। अब कौन जानता है कि देवव्रत कौन है या कौन था? अगर कोई मुझे नींद से

जगाने के लिए 'देवव्रत' पुकारे, तो मैं स्वयं भी कोई प्रतिक्रिया नहीं दूँगा। खैर, देवव्रत लुप्त हो गया, और भीष्म अमर हो गया। देवव्रत का बलिदान एक मछुआरे की झोपड़ी के चबूतरे पर हुआ। बहुत बाद में मुझे यह अहसास हुआ कि उन सीधे-सादे, अनपढ़ मछुआरों ने अपनी धूर्तता और वाक्पटुता से इस योद्धा को परास्त कर दिया था।

रास्ते में एक छोटी सी धारा बह रही थी। घुड़सवारों ने अपने पशुओं को बिना उतरे पानी पिलाया और आगे बढ़ गए। पानी इतना गहरा था कि रथों के पहिये आधे डूब गए थे। रथों में जुते घोड़े पानी पीने के लिए झुक गए। सारथी ने कहा, 'दादाजी, मैं घोड़ा बदलना चाहता हूँ। क्या आप थोड़ी देर आराम करेंगे?' "पानी देखकर मुझे अपने शिविर की स्थिति याद आ गई। शायद मानव मल-मूत्र की दुर्गंध कम हो गई है! जब पूरा स्थान अच्छी तरह से धोकर साफ कर दिया जाएगा, तो दुर्गंध पूरी तरह से गायब हो जाएगी, और तब तक कायर और उदासीन लोग जा चुके होंगे।" भीष्म नीचे उतरे और पेशाब करने चले गए। फिर वे लौटे और पेशाब करने से लगी अशुद्धता को दूर करने के लिए अपने पैर धोए। फिर उन्होंने थोड़ा पानी मुँह में लिया और थूक दिया। और उसके बाद वे रथ में अपने स्थान पर लौट आए। उन्होंने सारथी से पूछा, "हमें अभी कितनी दूरी तय करनी है?" उनके सारथी सुकेशा ने कहा, "हम तेज़ गति से चल रहे हैं। अभी तीन-चार घंटे और लगेंगे। मुझे रास्ता अच्छी तरह से पता है। घोड़ों के लिए पर्याप्त चारा है। सूर्यास्त के बाद भी हल्की चाँदनी रहेगी। क्या दादाजी थक नहीं गए हैं?"

भीष्म ने कहा, 'नहीं। मुझे दूरी का एहसास कभी नहीं हुआ।'

सुकेशा, मैं शेखी नहीं मारना चाहता। लेकिन मुझे यह कहना ही होगा कि जब मैं घोड़े पर सवार होता हूँ तो कोई भी घोड़ा बेकाबू होने की कोशिश नहीं करता, एकसमान लय और गति बनाए रखता है, और वह जबरदस्त रफ्तार से दौड़ता है।

भीष्म मन ही मन सोचने लगे, "निम्न जाति और दर्जे के लोगों का यही तरीका होता है कि वे अपनी बेटियों का विवाह धनी और उच्च जाति के परिवारों में कर देते हैं और फिर सत्ता और अधिकार हथिया लेते हैं। निषाद ने भी ठीक यही किया था। धीरे-धीरे वह अपनी बेटी के पीछे-पीछे हमारे घर में बस गया। जल्द ही मैंने खुद को हर अधिकार से वंचित पाया। और मेरा मन घृणा, क्रोध, वैराग्य और अन्य ऐसी भावनाओं से भर गया जिन्हें मैं अब याद नहीं कर सकता! पिता पूरी तरह से उसके प्रति आसक्ति में डूबे हुए थे। उसने एक बच्चे को जन्म दिया। तब तक पिता को

अपनी मूर्खता का एहसास होने लगा था और उन्हें पछतावा होने लगा था। इससे एक मानसिक बीमारी हो गई। मैं खुद आम तौर पर घर-परिवार से दूर रहता था और वेदों के अध्ययन में लीन रहता था। मैंने सांसारिक चिंताओं को त्यागकर परलोक पर ध्यान केंद्रित करने का निश्चय कर लिया था। मैं और पिता बहुत कम मिलते थे। मुझे खुद उनसे मिलने की बिल्कुल भी इच्छा नहीं थी। उसने दूसरे बच्चे को जन्म दिया। फिर कुछ समय बाद पिता का निधन हो गया। मुझे आज तक नहीं पता कि उनकी मृत्यु मानसिक बीमारी के कारण हुई या यौन भोग में अत्यधिक लिप्तता के कारण। बुढ़ापे में। मुझे महिलाओं से घोर घृणा है। और मैंने महिलाओं को अपने अनुभव के आधार पर देखा है - मेरी अपनी माँ, वह माँ जिसने मुझे जन्म दिया और फिर त्याग दिया, और वह सौतेली माँ जिसने मेरे पिता की मृत्यु का कारण बनी। खैर, इन सब बातों ने ब्रह्मचर्य के मेरे निर्णय को और भी मजबूत बना दिया।

"धिक्कार है! आज मुझे बार-बार वही बुरी बातें याद आ रही हैं और मुझे इससे घृणा हो रही है। क्या मेरे मन को भरने के लिए और कुछ नहीं है?" फिर उन्होंने एक बार अपना सिर छुआ। ये बातें सौ साल पहले घटी थीं, लेकिन अगले ही दिन युद्ध था। भीष्म ने सोचा, "मुझे कल शाम तक शिविर में लौटना होगा। खैर, इस भागदौड़ से मैं थक जाऊंगा। मुझे बस कृष्ण द्वैपायन से सलाह लेने का मन हुआ और मैं आवेग में निकल पड़ा। शायद अगर मैंने अपना जीवन वेदों के अध्ययन में लगाया होता, तो मैं भी कृष्ण द्वैपायन जैसा बन पाता। लेकिन मैं गृहस्थ जीवन के जाल में फंस गया। पिता की मृत्यु के बाद भी मैं चौदह साल तक घर से दूर रहा। फिर वही बुरी बातें याद आ गईं।" उन्होंने एक बार फिर अपना सिर हिलाया। अपनी धंसी हुई आँखों से चारों ओर देखा और शाम को फैलते हुए पाया। लेकिन अभी नहीं, और पेड़-पौधे, झाड़ियाँ और कुंजियाँ डूबते सूरज की किरणों से लाल हो रहे थे। सड़क पर बिखरे सूखे पत्तों पर घोड़ों के खुरों की चरमराहट सुनाई दे रही थी। भीष्म कुछ देर तक उस दृश्य में मग्न रहे। फिर अचानक वे हँस पड़े, और सारथी ने पीछे मुड़कर देखा कि क्या हो रहा है। फिर अपनी गलती का एहसास होने पर उसने अपना सिर वापस घुमा लिया।

लेकिन स्मृति उसका पीछा नहीं छोड़ रही थी। उसका नाम काली था, पर वे उसे अपनी भाषा में क्या कहते थे? मैंने ही सबसे पहले उसे मछली की गंध वाली स्त्री, मत्स्यगंधी कहा था। और वह भी सारथी की उपस्थिति में। यह नाम महल में सभी

के कानों तक पहुँच गया। इससे शर्मिंदा होकर, उसने अपने शरीर पर तरह-तरह के लेप लगाने शुरू कर दिए - चंदन, सिवेट और लोबान - ताकि उसके शरीर से मछली की जो दुर्गंध आती थी, उसे मिटा सके। और यह तो और भी बुरा था, दूसरी तीखी गंधें भी हमारी नाक में घुस रही थीं। खैर, असभ्य व्यक्ति को आभूषण और पहनावे की सीमाएँ कभी पता नहीं चलतीं। इसी वजह से उसे दूसरा नाम, योजनगंधी मिला, हालाँकि पिता ने विवाह के समय उसका नाम सत्यवती रखा था। पिता की मृत्यु के बाद, यहाँ तक कि उनके जीवित रहते हुए भी, जब उसके पिता, जो एक मछुआरा थे, वस्तुतः राज्य पर शासन करते थे, राज्य की गरिमा धूमिल हो गई। प्रजा ने सत्ता का विरोध किया और शासक से भयभीत नहीं हुई। राजा का खजाना खाली हो गया क्योंकि किसी ने भी कर या लगान नहीं दिया। मुझे बताया गया था कि मेरे नाम का इस्तेमाल अक्सर जनता को डराने के लिए किया जाता था।

पिता की मृत्यु के कितने वर्षों बाद ऋषि पराशर इस कृष्ण द्वैपायन को लेकर हमारे नगर आए थे? मुझे ठीक से याद नहीं है। पता नहीं कितने वर्ष। ऋषि बच्चे को उसकी माता से मिलवाने आए थे। बाद में मुझे कुछ और जानकारी मिली। दरअसल, मेरी सौतेली माँ ने खुद मुझे बताया। ऐसा लगता है कि तब वह सोलह वर्ष की लड़की थीं और नदी पार कराने का काम करती थीं। एक बार संयोगवश ऋषि पराशर वहाँ थे और नदी पार करना चाहते थे। जब महान ऋषि ने उस सुडौल लड़की को, जो पूरी लगन से चप्पू चला रही थी और अपने शरीर की सुंदरता का प्रदर्शन कर रही थी, देखा तो वह उसके आकर्षण से अछूते नहीं रहे। उन्होंने उससे कहा, 'हे कन्या, मैं तुम्हारी सुंदरता से मुग्ध हो गया हूँ और तुम्हारे जिस्म ने मेरे शरीर में आग लगा दी है। अभी मेरे साथ आओ और मुझे तुम्हें अपने वश में करने दो।' फिर वह नाव को किनारे पर ले गई और उसे एक पेड़ की जड़ से बाँध दिया। वे नाव के फर्श पर ही एक-दूसरे के शरीर में मग्न हो गए। ऋषि ने उसके साथ कुछ दिन बिताए। पराशर ने अपनी सहेली को गर्भ धारण कराया। ऐसा करने के बाद, उन्होंने उसे अलविदा कहा और ऐसे चले गए जैसे कुछ हुआ ही न हो। लेकिन उन्होंने संकेत दिया था कि वे बाद में लौटेंगे। उसके माता-पिता ने गर्भवती बेटी की बड़े प्यार से देखभाल की। एक पुत्र का जन्म हुआ। इससे तीनों बहुत खुश हुए। एक दिन पराशर लौटे और बोले, "यह बच्चा मेरा है। इसे मुझे दे दीजिए, मैं इसे अपने साथ ले जाऊंगा।" उसके पिता ने उत्तर दिया, "नहीं, मैं इसे नहीं दूंगा। आपने केवल बीज बोया है और इसे जन्म दिया है, आपने उससे विवाह नहीं किया है।"

ऋषि ने तर्क दिया, "क्या हुआ अगर हमने विवाह नहीं किया होता? बीज मेरा है, इसलिए बच्चा भी मेरा है। यदि आप इसे मुझे नहीं सौंपेंगे, तो मैं आप पर श्राप दूंगा।" खैर, बच्चा अभी भी स्तनपान कर रहा था, और वे उस समय बच्चे को उसकी माँ से अलग करने के लिए अनिच्छुक थे। मुझे कहना होगा कि ये मछुआरे पहाड़ी लोगों से बेहतर हैं, और संतान के प्रति अधिक लगाव रखते हैं। वे महान ऋषि की बच्चे के पालन-पोषण की क्षमता को लेकर भी चिंतित थे। वे एक समझौते पर पहुँचे। ऋषि ने कहा, 'ठीक है, तुम आठ वर्ष की आयु तक उसकी देखभाल कर सकती हो। जब वह उस आयु का हो जाएगा, तो मैं उसे लेने वापस आऊँगा ताकि उसे ब्राह्मण दीक्षा देने के बाद उच्चतम ज्ञान का उपदेश दे सकूँ।' जैसा कि तय हुआ था, वह आठ वर्ष बाद लौटा और रोते हुए लड़के को अपने साथ ले गया। लड़का अपनी माँ की तरह सांवला था। इसलिए लड़के का नाम कृष्ण रखा गया, यानी सांवला। और उसने लड़के का नाम वहीं रख दिया। स्वाभाविक रूप से, मछुआरा क्रोधित हो गया। उसने अपनी बेटी को चेतावनी दी, 'याद रखना। जो भी तुम्हें छुए और चाहे, उनसे कहना कि वे मुझसे मिले बिना आगे नहीं बढ़ सकते। ये अजनबी आते हैं, अपने बीज बोते हैं, और बिना विवाह किए फसल ले जाते हैं। और वह मिट्टी जो अपने गर्भ में बीज को पालती-पोसती है, खाली रह जाती है, विरह, दुःख और कलंक की पीड़ा सहने के लिए।' इसी चेतावनी के कारण, जिसे उसने गंभीरता से दिल में उतार लिया था, मेरे पिता को दंड भुगतना पड़ा। वह उससे शादी किए बिना भी उसे पा सकता था, जैसा कि उस ऋषि ने किया था।

"जब कृष्ण द्वैपायन को पहली बार हस्तिनावती लाया गया था, तब उनकी उम्र कितनी थी? मुझे ठीक से याद नहीं है। बारह या तेरह?"

इतनी कम उम्र में ही वे कितनी सहजता और पूर्णता से वेदों का पाठ करते थे! इतनी कम उम्र में ही उन्होंने वेदों के विशाल अंशों को याद कर लिया था। उन्होंने उनमें से कुछ के अर्थ और निहितार्थों को भी समझ लिया था। उनके पिता ने उन्हें अच्छी शिक्षा दी थी, और इस प्रकार लड़के को अपने साथ ले जाने का उनका निर्णय उचित था। पराशर कुछ समय तक महल में रहे। उनके पुत्र की माता एक वर्ष पहले ही विधवा हुई थीं। उनके दो छोटे बच्चे थे। पराशर को उनकी संगति में कोई रुचि नहीं थी। और उनकी माता भी उतनी ही उदासीन थीं। हमारे नौकरों ने मुझे यह बताया, हालांकि उस समय मुझे इस मामले में कोई दिलचस्पी नहीं थी। मेरा मानना है कि पुत्र ने माता के समक्ष श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया। कृष्ण द्वैपायन ने

अपनी माता के प्रति अपनी भक्ति अंत तक जारी रखी। आज भी जब वे उन्हें याद करते हैं, तो आदरपूर्वक अपना सिर झुकाते हैं।

मुझे अब याद आया कि पराशर ने जब सुना कि मैं गंगा नदी के दूसरे किनारे पर एक कुटिया में रहकर वेदों का अध्ययन कर रहा हूँ, तो वे मुझसे मिलने आए। उन्होंने मुझसे कहा, "हाल के दिनों में क्षत्रियों ने वैदिक अध्ययन छोड़ दिया है। भीष्म, आपने तो ब्रह्मचर्य का व्रत लिया ही है। आप ब्राह्मण क्यों नहीं बन जाते? जब आपके पिता शासक बने, तो क्या उनके छोटे भाई देवपी भार्गव वंश में शामिल होकर अर्ष्टिषेण परिवार में नहीं चले गए थे? अब आपका छोटा भाई सिंहासन पर बैठेगा, तो आप मेरे साथ चलें और ब्राह्मण बन जाएँ।" मैंने पराशर की बात क्यों नहीं मानी? अगर मैं तब ब्राह्मण बन जाता, तो हस्तिनावती में घरेलू कर्तव्यों और जिम्मेदारियों के बंधन से मुक्त हो जाता। ब्रह्मचारी होते हुए भी मैं गृहस्थ जीवन की समस्याओं से बच नहीं पाया।

"अगर पराशर उसे अपने साथ न ले जाते, तो कृष्ण अपनी माता के साथ हमारे घर आते और मेरे पिता के पुत्र और मेरे भाई बन जाते। अब, बेशक, हम चचेरे भाई हैं। क्षत्रियों ने हाल ही में नाजायज संतान वाली दुल्हनों से विवाह न करने का चलन शुरू किया है। लेकिन उन दिनों हालात अलग थे। दुनिया कितनी तेजी से बदलती है! अगर ऐसा है, तो हमारे प्राचीन धर्म, सनातन धर्म का क्या होगा!" यह विचार उन्हें परेशान करने लगा। उन्हें याद आया कि जब उन्होंने ऋषि पराशर से पूछा था, "हे महान ऋषि, आपने बालक को अपने साथ क्यों ले लिया, उसे उसकी माता के पास क्यों नहीं छोड़ा?" पराशर का उत्तर था, "पहला, वह मेरा बालक है। मेरे बीज से उत्पन्न हुआ है। इसलिए, उस पर उसका दावा करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। दूसरा, यदि मैं उसे उसके पास छोड़ देता, तो वह मछुआरा बन जाता। अब देखिए, वह कितनी जल्दी वैदिक विद्वान बन गया है। वह आगे चलकर एक महान वैदिक ऋषि और विद्वान बनेगा। तीसरा, यह सत्य है कि मेरा उससे पहला मिलन मेरी कामुक इच्छा से प्रेरित था। लेकिन क्या आप जानते हैं कि मैं उसके गर्भवती होने तक क्यों रुका रहा? क्योंकि मैं एक ऐसे पुत्र की कामना करता था जो मेरे द्वारा स्थापित वैदिक ज्ञान की परंपरा को आगे बढ़ा सके और उसे जीवित रख सके। मैंने इसे सौभाग्य समझा कि प्रकृति ने मेरे लिए वह भूमि चुनी जिसमें मुझे अपना बीज बोना था।" भीष्म ने सोचा, "उनके शब्द सत्य हैं। कृष्ण द्वैपायन के तुलनीय कोई वैदिक विद्वान और विशेषज्ञ नहीं है। कौन जानता है, शायद मैं भी उस स्तर तक

पहुँच पाता।” कृष्ण द्वैपायन की सलाह मानकर ब्राह्मण बन जाना! यह सोचकर वह दुखी हो गया। उसका मन कृष्ण द्वैपायन की छवि से भर गया। वह उस छवि से भावुक हो गया। क्या करिश्मा था! क्या ज्ञान और बुद्धिमत्ता थी! सब कुछ उस सांवले शरीर में समाया हुआ था! उसने मन ही मन ऋषि को प्रणाम किया। उसने आगे सोचा, "हाँ, पराशर सही हैं। फसल हमेशा बीज से ही आती है। इसलिए वह हमेशा बीज की ही होती है। नहीं तो यह बच्चा मछुआरा बन जाता..." लेकिन तभी उसके मन में एक शंका उत्पन्न हुई। यदि बच्चा अपनी माँ से सांवला रंग पाता है, तो वह पूरी तरह से बीज का कैसे हो सकता है?

रात हो चुकी थी। चांदनी में सामने का रास्ता धुंधला दिख रहा था। आगे चल रहे दो घुड़सवार तेल में डूबी मशालें लिए रास्ता दिखा रहे थे। भीष्म ने सारथी से पूछा, “क्या रास्ता साफ दिखाई दे रहा है?” सारथी ने उत्तर दिया, “जी दादाजी, साफ दिखाई दे रहा है। और मैं इस रास्ते से भलीभांति परिचित हूँ।” फिर वह अपनी सीट से उठा, भीष्म को ऊनी कंबल ओढ़ाया और वापस अपनी सीट पर बैठ गया। उसने ऐसा इसलिए किया क्योंकि वह जानता था कि रथ के तेज चलने से ठंडी हवा अंदर आ रही है। एक बार फिर कृष्ण द्वैपायन की स्मृति ने उसे जकड़ लिया। उसे इस बात का अफसोस होने लगा कि उसने तब ब्राह्मण बनने का विकल्प क्यों नहीं चुना और अपना पूरा जीवन आध्यात्मिक जीवन की प्राप्ति और सांसारिक बंधनों से मुक्ति के लिए क्यों नहीं समर्पित किया। उन्होंने सोचा, "मैं वहाँ झोपड़ी में रह रहा था, लगभग एक ब्राह्मण का जीवन जी रहा था। मैंने महल और उसकी मानसिक चिंताओं से नाता तोड़ लिया था। नदी मेरे और महल के जीवन के बीच थी। तब मुझे नाव की याद भी नहीं आई। पिता की मृत्यु के चौदह वर्ष बाद की बात है। मेरी अनुपस्थिति में, ऐसा लगता है कि सत्यवती के बड़े पुत्र चित्रांगदा की एक गंधर्व ने हत्या कर दी थी। दूसरा पुत्र विचित्रवीर्य तब तेरह वर्ष का था। मेरी सौतेली माँ अपने बीमार और रोते हुए पुत्र के साथ मेरे पास आई। फिर उसने ज़मीन को छुआ और कहा, 'भीष्म, मैं तुम्हारी माँ हूँ। फिर भी मैं तुम्हारे सामने नतमस्तक हूँ। कृपया इधर मुड़कर देखो।'"

"बचपन से ही मेरे मन में माँ के प्रति कोई श्रद्धा या आदर नहीं था। भला इस स्त्री के लिए भला कैसे? पर मैंने वेद पढ़े थे। भला किसी भी भीख मांगने वाले को, विशेषकर किसी स्त्री को, मैं कैसे मना कर सकता था? उसने मुझे एक दुख भरी कहानी सुनाई। 'गंधर्व ने तुम्हारे छोटे भाई चित्रांगदा को द्वंद्वयुद्ध के लिए चुनौती दी

और एक ही मिनट में उसे मार डाला। यह कुछ ही दिन पहले हुआ है। अभी तक उसे जल चढ़ाया भी नहीं गया है। लगता है गंधर्व ने हमारे राज्य के उत्तरी भाग पर कब्जा कर लिया है। कहा जा रहा है कि वह दो दिन में हस्तिनावती पर आक्रमण करने के लिए तैयार है। अब तुम्हारे सिवा हमें कौन बचा सकता है? इस नाजुक समय में तुम्हारे छोटे भाई की मदद कौन कर सकता है?' उसने अपने बीमार बेटे से मेरे चरणों में गिरने को कहा!"

मैंने कहा, 'मैं, एक ब्रह्मचारी जिसने सभी राजनीतिक आकांक्षाओं का त्याग करने की प्रतिज्ञा ली है, अब क्या कर सकता हूँ?'

माँ, 'तो फिर तुम्हारे पिता, दादा, परदादा और सौ पीढ़ियों पहले तक जिन्होंने वर्षों से राज्य बनाया था, वह अब पहाड़ियों के आदिवासी लोगों के नियंत्रण में आ जाएगा। मैं तो बस एक स्त्री हूँ। मैं क्या कर सकती हूँ? तुम्हारे पिता भी नहीं हैं। इस लड़के को तो मछली पकड़ना भी नहीं आता। अब मुझे ही उसे मछली पकड़ना सिखाना होगा और उसे आजीविका का कोई दूसरा रास्ता दिखाना होगा।'

मैं, 'मैं आपके और आपके बेटे के भरण-पोषण की पूरी जिम्मेदारी लूंगा।'

वह बोली, 'मैं यहाँ सिर्फ़ इसी के लिए नहीं आई हूँ। शायद आपको इस राज्य से लगाव नहीं है। अब तो मेरी भी इसमें रुचि नहीं रही। मेरी बात सुनो। मैं तुम्हें सच बता रही हूँ। अब मुझे एहसास हो गया है कि जो व्यक्ति दो नाव और चार जाल संभाल सकता है, वह राज्य पर शासन करने के लिए कहे जाने पर पूरी तरह असहाय हो जाएगा। अब मुझे शासन करने की कोई इच्छा नहीं है। लेकिन तुम्हारे पिता से विवाह किए और तुम्हारे परिवार में शामिल हुए मुझे उन्नीस साल हो गए हैं। मैं तीन साल तक उनके साथ पत्नी के रूप में रही। इसलिए, मैंने ठान लिया है कि इस राज्य को बर्बाद नहीं होने देना चाहिए। अगर हम इसे नहीं बचाते हैं, तो हम तुम्हारे पिता और तुम्हारे कई महान पूर्वजों की स्मृति के साथ अन्याय करेंगे। इसीलिए मैं तुम्हारे पास घुटने टेककर विनती करने आई हूँ। अगर इस मछुआरे को इस राज्य से इतना लगाव है, तो क्या तुम्हें कोई कर्तव्य बोध नहीं होता, तुम जो अपने पिता की संतान हो और एक प्रखर योद्धा बने हो?'

"उसे धर्म और तर्क की ये सारी बातें कब से समझ आने लगीं? महल में उसके शुरुआती दिनों में मैंने उसके व्यवहार और स्वभाव को ध्यान से देखा था। मुझे उससे घृणा हुई थी। मैं मन ही मन उस पर हँसी थी। लेकिन अब वह सुसंस्कृत प्रतीत हो रही थी। धर्म, कर्तव्य और पैतृक ऋण की चुनौती देकर उसने ऐसा

दिखाया मानो मैं एक आदिम और असभ्य व्यक्ति हूँ जबकि वह एक अत्यंत सुसंस्कृत है। मेरे मन के किसी कोने में क्रोध सुलग रहा था। मुझे इस बात की खुशी भी थी कि मुझे संतुष्टि का अहसास हुआ। भय दूर हो गया।"

मैंने कहा, 'मैं कल जवाब दूंगा। अब आप जा सकते हैं।'

उसने पूछा, 'अगर कल तक हस्तिनावती को गंधर्वों द्वारा पकड़ लिया गया तो?'

"क्या किसी महिला द्वारा मदद की भीख माँगने से ज़्यादा शर्मनाक कुछ हो सकता है? इसके अलावा, मुझे गंधर्व लोगों के प्रति हमेशा से ही शत्रुता रही है। न केवल शत्रुता, बल्कि क्रोध और तिरस्कार भी। क्या वे पहाड़ी जनजातियों के उन समूहों में से एक नहीं हैं जो मेरे जन्म के लिए ज़िम्मेदार थे? मैं खड़ी हो गई और बोली, 'आगे बढ़ो। मैं तुम्हारे पीछे आ रही हूँ। हस्तिनावती की रक्षा करके लौट आऊँगी।' जब नाविक मुझे वापस ले जा रहा था, मैं नाव के एक छोर पर खड़ी थी। वह बीच में खड़ी थी। उसने मुझे याद दिलाया कि उस लड़के का नाम विचित्रवीर्य था, जो डर के मारे अपनी माँ की गोद में दुबका हुआ था।"

"महल में मेरी वापसी की खबर पूरे शहर में जंगल की आग की तरह फैल गई। शांतनु के वीर योद्धा पुत्र की वापसी से सब खुश थे। ब्रह्मचर्य का जीवन अपनाने वाले के रूप में मेरा सम्मान भी किया जाता था। मैं चौदह वर्षों की लंबी अनुपस्थिति के बाद लौटा था। मुझे देखने और मेरा स्वागत करने के लिए अनगिनत भीड़ उमड़ पड़ी। मैंने पाया कि राज्य के पास नाममात्र की भी सशस्त्र सेना नहीं थी। मैंने बिखरे हुए सैनिकों का पता लगाने और मुझे रिपोर्ट करने के लिए गांवों में दूत भेजे। गांवों के मुखियाओं को यह काम सौंपा गया था। मैं भी लगभग अपनी तीरंदाजी भूल चुका था। मैंने अभ्यास किया और उन्हें प्रशिक्षित किया। खैर, हम शत्रु के लिए तैयार हो गए। लेकिन गंधर्व ने हम पर हमला करने की हिम्मत नहीं की। जल्द ही हमें उत्तरी भाग से, जिस पर आक्रमण करके कब्जा कर लिया गया था, खबर मिली कि वह भाग गया है। मैं स्वयं नवगठित सेना के साथ उत्तर की ओर गया। स्थानीय लोगों से गंधर्व की भूमि के बारे में जानकारी प्राप्त करके, हमने उस पर आक्रमण किया, उसे घेर लिया और भयंकर युद्ध लड़ा। मेरा विश्वास करो, पहाड़ों में पहाड़ों के आदी लोगों से लड़ना कोई मजाक नहीं है। यह सबसे कठिन प्रकार का युद्ध है जो कोई कर सकता है।" कल्पना कीजिए। जैसे-जैसे हम ऊंचाइयों पर चढ़ते गए, हमारी सांसें अक्सर फूलने लगीं। और एक व्यक्ति बहुत जल्दी थक जाता था। अंततः, वह युद्ध में शहीद हो गया। कुरु वंश का सम्मान और प्रतिष्ठा बच गई। मैं

राजधानी लौट आया और अपनी सौतेली माँ को गंधर्व को मारने की सूचना दी, और उसी रात मैं अपने पूर्वजों का ऋण सफलतापूर्वक चुकाकर अपनी कुटिया में वापस आ गया।

अगली सुबह वह अपने बेटे के साथ मुझसे मिलने आई। उसने मुझसे कहा, 'भीष्म, आप अमर हों। चूंकि मैं स्वयं को आर्य और आपको अपना पुत्र मानती हूँ, इसलिए मैं आपको आशीर्वाद दे रही हूँ। आपने राज्य को बचाया, लेकिन आप इस एकांत स्थान पर लौट आए। लेकिन जिस राज्य को आपने बचाया है, उसका प्रबंधन और शासन कौन कर सकता है? मैं आपकी प्रतिबद्धताओं और प्रतिज्ञा से भलीभांति परिचित हूँ। इसलिए, मैं यह सुझाव देने से बहुत दूर हूँ कि आप सीधे सफेद छत्र के नीचे बैठें और अपनी प्रतिज्ञा तोड़ें। मैं बस इतना चाहती हूँ कि आप इस बालक का समर्थन करें, उसके निकट रहें और उसे आगे बढ़ने में सक्षम बनाएँ। जब यह बालक अपने पैरों पर खड़ा हो सके, तो यदि आप चाहें तो आप इस स्थान पर लौट सकते हैं। यदि आप इतनी जिम्मेदारी स्वीकार कर सकते हैं, तो उस गंधर्व को भगाने में आपकी असाधारण सफलता का वास्तविक अर्थ और महत्व होगा।'

"जिसने प्रशासन और राज्य के मामलों की उलझनों को त्याग दिया था, उसके लिए ये फिर से अपरिहार्य हो गए। सत्ता में वापस आने के बाद, मैं प्रशासन और लोक नीति के क्षेत्र में अपनी लंबी अनुपस्थिति के दौरान विकसित हुई स्थिति का आकलन कर सका। याद है वह बूढ़ा मछुआरा जो महल में घुसकर वस्तुतः शासक बन गया था? दरअसल, वह ससुर बनकर पिछले दरवाजे से आया था। वह मोहित पिता बीमार पड़ गया और बिस्तर पर पड़ गया। फिर उसकी मृत्यु हो गई। धीरे-धीरे ससुर का कुप्रशासन शुरू हो गया। जब कोई अयोग्य व्यक्ति सर्वोच्च पद पर आसीन होता है, तो न केवल वह पद बल्कि उसके अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली सभी संस्थाएँ भी भ्रष्ट होने लगती हैं। पहले तो, अपनी अयोग्यता से अवगत होकर, वह लोगों के प्रति बहुत विनम्र रहता था। धीरे-धीरे वह एक अत्याचारी और तानाशाह बन गया। लोगों का सरकार पर से सारा विश्वास उठ गया। वास्तव में, लोग उसके शासन से इतने तंग आ चुके थे कि वे किसी भी विकल्प का स्वागत करने को तैयार थे, यहाँ तक कि एक ऐसे बाहरी व्यक्ति का भी जो उन्हें इस दुष्ट व्यक्ति से मुक्ति दिला सके। ऐसा ही लगता है कि गंधर्वों ने उत्तरी भाग पर कब्जा कर लिया था।" जनता की सहमति से कुछ हिस्सों पर शासन किया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके पोते चित्रांगदा को उनके दादा ने ही प्रशिक्षित किया था।

जब वह लड़का, जो गरिमा और अहंकार में अंतर नहीं कर सकता था, बारह वर्ष का हुआ, तो दादा की मृत्यु हो गई। मैंने नदी के ठीक उस पार, विपरीत किनारे पर अपना घर बना लिया था, पूरी तरह से अपनी पढ़ाई में डूबा हुआ था, अपने पूर्वजों के राज्य में चल रही घटनाओं से पूरी तरह बेखबर और अनभिज्ञ था। वह लड़का सिंहासन पर बैठा। मछुआरे का पुत्र, काली, राजा बना। मछुआरे की आशाएँ साकार हुईं। उसकी बेटी की आकांक्षाएँ पूरी हुईं। राज्य का कोई भी युवक सेना में भर्ती होने के लिए आगे नहीं आया। हमारा देश अपने महान विद्वानों और ऋषियों के लिए जाना जाता है। जब उन्होंने देखा कि मछुआरे के पोते के कुशासन के कारण स्थिति बद से बदतर होती जा रही है, तो कई लोग पड़ोसी देशों, अधिकतर पंचाल में, अप्रवासी बनकर राज्य छोड़कर चले गए। राज्य का राजस्व अस्त-व्यस्त था, क्योंकि कोई कर नहीं चुकाया जा रहा था। स्थिति इतनी खराब हो गई थी कि राजा उसे स्वयं घोड़े पर सवार होकर राजस्व एकत्र करने जाना पड़ा। घरवालों को बुरा-भला कहने के बाद, उसे मुट्ठी भर अनाज दिया गया मानो वह कोई भिखारी हो। जब यह व्यक्ति उत्तर में गंधर्व से लड़ने गया, तो गंधर्व ने पूछा, 'तुम कौन हो?'

He answered, 'Maharaja Chitrangada.'

"क्या यह महाराजा चित्रांगदा का इलाका नहीं है?" दूसरे व्यक्ति ने पूछा था।

'हाँ'

गंधर्व, 'चित्रांगदा मेरा नाम है। इसका अर्थ है कि आपके अपने कथन के अनुसार यह मेरा क्षेत्र है।'

उसने कहा, 'अरे, मेरा नाम चित्रांगदा है।'

गंधर्व ने कहा, 'देखो, लोग मुझे पिछले चालीस वर्षों से चित्रांगदा कहकर पुकारते आ रहे हैं। और तुम इस नाम से कब से जानी जाती हो?'

उन्होंने कहा, 'पिछले सत्रह वर्षों से।'

गंधर्व ने कहा, "अब बताओ, यह नाम किसके पास ज़्यादा समय से है? यह नाम सबसे पहले मुझे दिया गया था। तुम्हारे पिता ने मुझसे यह नाम छीन लिया और फिर तुम्हें दे दिया। पहले तुम अपनी माँ के पास जाओ और बदले हुए नाम से वापस आओ। फिर हम देखेंगे कि क्या किया जा सकता है।"

"जब सिंहासन पर बैठा यह महान व्यक्ति गंधर्व का उत्तर देने में असमर्थ होकर भ्रमित हो गया, तो वहाँ मौजूद उसकी प्रजा इतनी हँसी कि उनकी पसलियों में दर्द होने लगा। थोड़ी देर बाद जब गंधर्व ने चित्रांगदा पर आक्रमण किया और उसकी

गर्दन काट दी, तो उसकी सेना के तथाकथित सैनिक भयभीत होकर भाग गए और पेड़ों और चट्टानों की शरण में चले गए। जनता ने राहत की गहरी साँस ली!"

पेड़ कम होते गए और मैदानी इलाके शुरू हो गए। ठंडी हवा रथ में घुस आई। भीष्म ने खुद को कंबल से अच्छी तरह ढक लिया। सारथी ने पूछा, 'दादाजी, क्या मैं आपको एक और कंबल ओढ़ा दूं?' बूढ़े योद्धा ने उत्तर दिया, 'नहीं। यह कंबल भी शरीर पर भारी लग रहा है।' फिर उन्होंने कंबल के किनारे को तकिया बनाकर खुद को फैलाया। रास्ता ऊबड़-खाबड़ था और रथ बुरी तरह डगमगा रहा था। जाहिर था, सड़क की ठीक से देखभाल नहीं की गई थी। उन्होंने सोचा कि क्या उन सड़कों की इतनी बुरी तरह उपेक्षा करना उचित था जो उन जंगलों की ओर जाती थीं जहाँ ऋषि-मुनि तपस्या करते थे। फिर वे उठ बैठे। थोड़ी देर बाद, मैदानी इलाका जंगल में बदल गया, क्योंकि मशालों की रोशनी में रथ ऊंचे पेड़ों के बीच से अपना रास्ता बना रहा था। रास्ते का यह हिस्सा गर्म लग रहा था। भीष्म को याद आया कि उन्होंने राज्य को सामान्य स्थिति में लाने के लिए कितना कुछ किया था! स्मृति ने एक बार फिर उन्हें जकड़ लिया। सारा अतीत उनकी आंखों के सामने आ गया। उन्होंने सोचा, "जनता से कर वसूलना वास्तव में कठिन नहीं है। ईमानदार और सक्षम व्यक्तियों की भर्ती की जा सकती है, उन्हें प्रशिक्षित किया जा सकता है और पद पर नियुक्त किया जा सकता है। यहाँ तक कि मैं, जो पच्चीस वर्ष की आयु में ही राजा-राजकश बन चुका था, प्रशासन के बारे में लगभग कुछ भी नहीं जानता था। मुझे सब कुछ नए सिरे से, अपने दम पर करना पड़ा। एकत्रित कर को प्रजा की संतुष्टि और स्वीकृति के अनुसार उचित रूप से खर्च किया जाना चाहिए। प्रत्येक राजा को यह भ्रम होता है कि उसकी प्रजा उसके प्रति श्रद्धा रखती है। लेकिन जनता की स्वीकृति और प्रशंसा की वास्तविक परीक्षा तभी होती है जब राज्य पर किसी शक्तिशाली शत्रु द्वारा हमला किया जाता है। उसे निर्वासन में गए विद्वानों और अन्य विशेषज्ञों की वापसी के लिए अवसर पैदा करने होंगे। और उनके रिश्तेदारों को उन्हें वापस लौटने के लिए राजी करने का काम सौंपना होगा। इन सब के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है, और शक्ति से भी अधिक, संवेदनशीलता की।"

इस बीच, मुझे विचित्रवीर्य नामक उस बालक को शिक्षित और प्रशिक्षित करना था। चुनौती केवल उसे सुसंस्कृत बनाना ही नहीं थी। उसे क्षत्रिय के रूप में रूपांतरित करना था। क्या यह हिमालयी परिश्रम नहीं था?" तभी रथ में ज़ोरदार

कंपन हुआ। ऐसा लगा जैसे हड्डियाँ टूट रही हों। पुरानी हड्डियाँ। सारथी ने गति धीमी कर दी। पर इससे कोई लाभ नहीं हुआ, क्योंकि सड़क ही बेहद खराब थी। भीष्म ने सोचा कि सारथी का कौशल सड़क की बदहाली के आगे कुछ भी नहीं है। उन्होंने चारों ओर खड़े विशाल वृक्षों पर नज़र डाली और उनके घने पत्तों से होकर गुजरती हवाओं की सरसराहट सुनी।

—•⁕•—

भाग दस



अध्याय 44

हाथियों की पीठ पर लगे ढोल की आवाज़ सुनते ही सैनिक चुप हो गए और उत्सुकता से संदेश सुनने लगे। भारी बोझ ढोने वाले बैल, युद्ध में इस्तेमाल होने वाले घोड़े और हाथी उत्साह नहीं दिखा रहे थे; सैनिकों में डर और गुस्से भरी चीखें सुनाई दे रही थीं। अब उनका ध्यान संदेश की ओर गया। जो लोग संदेश को पूरी तरह नहीं सुन पाए या उसके अर्थ को स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाए, उन्होंने दूसरों की मदद ली। संदेश था, "पांडव अपने पिता की संतान नहीं हैं। इसलिए वे कौरव वंश के नहीं हैं। अतः महाराजा दुर्योधन ने उन्हें राज्य देने से इनकार कर दिया है। जो इस बात को स्वीकार करते हैं, वे यहीं रुककर दुर्योधन की ओर से लड़ सकते हैं। जो सहमत नहीं हैं, वे शत्रु पक्ष में जा सकते हैं या घर लौट सकते हैं।" इस संदेश ने सैनिकों के मन को प्रसन्न कर दिया, लेकिन साथ ही उन्हें असमंजस में भी डाल दिया। जो युद्ध की संभावना से उत्साहित थे, वे निराश हो गए, और जो युद्ध के प्रति उत्साहित नहीं थे, उन्हें ऐसा लगा जैसे उनके शरीर से बुखार उतर गया हो। लेकिन निराश लोगों को दोस्तों द्वारा दी गई व्याख्या से कुछ सांत्वना मिली, "इसका वह अर्थ नहीं है जो आप सोच रहे हैं। इसका मतलब केवल इतना है कि जो लोग लड़ना नहीं चाहते, वे जा सकते हैं।" लेकिन, इस संदेश ने युद्ध के प्रति उनके उत्साह को कम कर दिया।

घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले रथों की कतारों के पीछे चल रहे पैदल सैनिकों ने घोषणा बिल्कुल नहीं सुनी। पानी और भोजन न मिलने के कारण वे घुड़सवार सेना और रथों में सवार अधिक भाग्यशाली सैनिकों को कोसने में व्यस्त थे। वे खुद को पूरी तरह उपेक्षित महसूस कर रहे थे। हर युद्ध में यही हाल होता था। जब वे अपने भाग्य पर विलाप कर रहे थे, तभी कुछ लोग जो पेशाब या शौच के लिए गए थे और घुड़सवार सेना की कतारों से होते हुए लौटे, वे ढोल बजाने वाले संदेशवाहक द्वारा दिया गया संदेश लेकर आए। यह खबर सुनकर वे खुश हो गए। उन्होंने यह खबर अपने साथियों तक पहुंचाई। उस समूह के सभी दो सौ लोगों को संदेश मिल गया।

एक सिपाही, जो अपनी पीठ पर पसीने की पपड़ी को अपनी बाईं उंगली से मल रहा था, क्योंकि वह उसके कपड़ों से चिपक गई थी जिन्हें पानी की कमी के कारण

धोया नहीं गया था, बोला, "कम से कम हस्तिनापुरा में तो नदी थी। लेकिन जिस जगह हमें डेरा डालने को कहा गया है, वह नदी से चार मील दूर है। मेरा इलाका इन जगहों से कितना अलग है। वहाँ तो पानी की कोई कमी नहीं है - हर जगह झरने और जलप्रपात हैं। यह कितना बदहाल देश है। चलो यहाँ से निकल चलते हैं।"

"हां, हां। आप सही कह रहे हैं। चलिए हम सब एक साथ घर चलते हैं," दूसरे ने कहा।

एक अन्य व्यक्ति ने पूछा, "तो क्या आप यह कहना चाह रहे हैं कि कुंती के बच्चे कौरव वंश से संबंधित हैं?"

पसीने की पपड़ी को कुशलता से पोंछते हुए, उसने पूछा, "कुंती के ये बच्चे कौन हैं? और यह कौरव वंश क्या है जिसके बारे में आप बात कर रहे हैं?"

दूसरा वाक्य था, "क्या तुम्हें यह भी नहीं पता, मूर्ख? हम अब कुंती के वंशजों से लड़ रहे हैं। हस्तिनावती के लोग कौरव हैं।"

समूह में नए शामिल हुए एक व्यक्ति ने पूछा, "क्या यह कुंती कौरव वंश की पुत्री नहीं है?"

तथ्यों की जानकारी रखने वाले एक सैनिक ने ही इस कथन पर हँस दिया। बाकी कम जानकार सैनिकों को समझ नहीं आया कि वह क्यों हँसा। हँसने वाले सैनिक ने अपने साथियों का मज़ाक उड़ाते हुए कहा, "हम तो बिलकुल मूर्ख और अज्ञानी हैं। इसीलिए तो हमें पहाड़ों के बर्बर समझा जाता है। जो कौरव वंश के बारे में कुछ नहीं जानता, वह किस तरह का आर्य हो सकता है?"

पसीना पोंछते हुए एक व्यक्ति बोला, "खैर, हम आर्यावर्त से आए आर्य हैं। आर्य क्षेत्र से हमारी दूरी पच्चीस दिन है। वहाँ पहुँचने के लिए हमें गांधार नदी पार करनी होगी। हमारी जलवायु इतनी गर्म और उमस भरी नहीं है। इस युद्ध और इस वंश से हमारा क्या लेना-देना है?"

एक अन्य बुजुर्ग व्यक्ति ने कहा, "परेशान होने की क्या ज़रूरत है? उन्होंने कहा कि जो लोग घर जाना चाहते हैं, वे जा सकते हैं। मेरे लिए इतना ही काफी है। चलो सब साथ-साथ घर चलते हैं।"

जिसने दूसरों का उपहास उड़ाया था, उसने कहा: "मूर्खों। बेवकूफों, तुम नहीं जानते कि कौरव कौन हैं और कुंती के बच्चे कौन हैं। तुम यह भी नहीं जानते कि

सिर्फ इसलिए कि वे कहते हैं कि हम जा सकते हैं, इसका मतलब यह नहीं है कि हम तुरंत निकल जाएं।"

पसीने से तरबतर एक और सिपाही ने पूछा, "क्यों नहीं?" सवाल पूछते ही उसने मारने के अंदाज़ में हाथ उठाया। पीछे कहीं एक घोड़े ने हिनहिनाहट की। फिर दूसरे घोड़े ने भी वैसी ही आवाज़ निकाली। उसके बाद करीब बीस-तीस घोड़ों ने एक साथ आवाज़ निकाली। एक और सिपाही ने कहा, "घोड़े खूब मज़े कर रहे हैं। यहाँ नर और मादा दोनों तरह के घोड़े हैं!" फिर वह अपनी ही बात पर हँस पड़ा।

किसी और ने कहा, "इसीलिए तो हम कहते हैं कि आर्यावर्त के ये लोग घोड़ों के रहस्य नहीं जानते। जबकि हमारे लोग जानते हैं..." उसे बीच में रोकते हुए, जिसने हाथ उठाया था, उसने पूछा, "क्यों नहीं? मुझे बताओ?"

ज्ञानी व्यक्ति ने कहा, "चलिए अब देखते हैं। जो मूर्ख नहीं हैं, वे उत्तर दें।"

पगड़ीधारी एक व्यक्ति बोला, "क्या इसमें कोई वैदिक रहस्य छिपा है? मैं समझाता हूँ। मेरी बात सुनो। मेरे राजा की पत्नी गांधार राजपरिवार से है। कहते हैं कि यह कौरव राजा गांधार स्त्री का पुत्र है। इसका मतलब है कि हमारा राजा उसी की तरफ से लड़ेगा। और हमारे पास कोई विकल्प नहीं है। हमें उसी तरफ लड़ना होगा जिस तरफ हमारा राजा चाहता है। तुम घर जाना चाहो, लेकिन तुम्हें जाने कौन देगा?"

तीन सैनिक एक साथ चिल्लाए, "तो फिर उन्होंने ढोल बजाकर संदेश क्यों सुनाया?" लेकिन उनमें से अधिकांश पगड़ीधारी सैनिक की बात से सहमत थे। जो बात पहले सरल, सहज और आसान लग रही थी, अब बहुत जटिल हो गई थी। उनके पीछे घोड़ों के पैर पटकने की आवाज़ सुनाई दी। वे पीछे मुड़े। वहाँ बड़े-बड़े डंडे लिए घुड़सवार थे, जो जानवरों को आगे बढ़ने का इशारा कर रहे थे। जो जानवर बात नहीं मानते थे, उन्हें डंडों से मारा जाता था या बुरी तरह पीटा जाता था। घोड़े काबू में आ गए, लेकिन उनकी बेचैनी कम नहीं हुई।

जिस व्यक्ति ने घोड़ों के रहस्यों के बारे में उनके ज्ञान का जिक्र किया था, उसने कहा, "देखो यहाँ। मैं अब तक इसे देखता आ रहा हूँ। मैंने देखा है कि यहाँ भी ऐसे घुड़सवार हैं जो घोड़ों से संवाद करने के लिए हमारे द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली संकेतों की प्रणाली का उपयोग करते हैं। उस आदमी को देखो, जो उस लाल घोड़े पर सवार है, जो अपने उभरे हुए पिंडलियों के बल घोड़े के पेट के चारों ओर जकड़े हुए है। वह ज़रूर उन्हीं में से एक होगा। कोई बाहरी व्यक्ति इन संकेतों को

नहीं समझ सकता। उसने इसे हमारे लोगों से ही सीखा होगा। मैं कसम खाकर कह सकता हूँ।"

घुड़सवार जानवरों को काबू में लाने में कामयाब रहा। उसने अपने सेवकों को लगाम लगाने का तरीका बताया। सेवकों के व्यवहार और आज्ञापालन से यह स्पष्ट था कि वह एक प्रभावशाली व्यक्ति, एक उच्च अधिकारी था। उसकी उम्र लगभग पचास वर्ष थी, रंग गोरा और कद लंबा था। उसने घुड़सवार की तंग पोशाक पहनी हुई थी। उसके चेहरे पर राजसी अधिकार झलक रहा था, लेकिन उसके सिर पर मुकुट नहीं था, छोटा सा भी नहीं। केवल एक पगड़ी थी।

घोड़े पर सवार होकर युयुत्सु ने दुर्योधन की सेना के सभी घोड़ों का निरीक्षण किया। उन्होंने उनके चेहरे, आँखों की तीक्ष्णता और उनके द्वारा गिराए गए गोबर की जाँच की। उन्होंने उनके मूत्र के रंग और प्रत्येक घोड़े के स्वास्थ्य के बारे में पूछताछ की। जब भी उन्हें कोई जानवर मामूली बीमारी से पीड़ित मिला, उन्होंने तुरंत दवा का सुझाव दिया। फिर वे रथों की ओर बढ़े। रास्ते में उनसे मिले दुस्साना ने निरीक्षण करते हुए उनसे पूछा, "युयुत्सु, सब ठीक है? क्या आपने रथों में जुते घोड़ों को देखा?"

युयुत्सु ने कोई जवाब नहीं दिया। दुस्साना ने भी आगे कोई पूछताछ नहीं की। वह बहुत जल्दी में था, इसलिए चला गया। घोड़ों को अभी रथों से नहीं जोड़ा गया था। लेकिन उन्हें बांधकर बाकी घोड़ों से अलग रखा गया था। जब तक वह उनके पास पहुंचा, युयुत्सु का मन बदल गया। उसे आगे जाने की कोई इच्छा नहीं थी। उसे यह भी नहीं पता था कि आगे कहां जाना है। जब उसने अपने घोड़ों को दाईं ओर मोड़ा, तो उसने हाथी पर सवार ढोल बजाने वाले को अपना संदेश चिल्लाते हुए सुना। बेशक, वह इस मामले से अवगत था, और उसने यह संदेश पहले भी दो बार सुना था। फिर भी वह रुका, और उसी संदेश को फिर से सुना, "जो लोग महान राजा दुर्योधन के साथ नहीं रहना चाहते, वे शत्रु पक्ष में जा सकते हैं या जो युद्ध नहीं लड़ना चाहते, वे अपने स्थानों पर लौट सकते हैं। उन्हें कल सुबह तक फैसला करने का समय दिया गया है।" उसे लगा कि वह किसी एकांत स्थान पर जाकर इस मामले पर विचार करे। लेकिन वह कहां जाता? चाहे वह कितनी भी दूर चला जाए, उसे पैदल सैनिकों की भीड़ मिल ही जाती थी। या फिर हस्तिनावती से रसद से लदे घोड़े, रथ, हाथी और बैलगाड़ियाँ। युयुत्सु को एहसास हुआ कि घोड़े पर सवार होने पर उसका दिमाग सबसे अच्छा काम करता है। फिर भी, अब वह

असहाय महसूस कर रहा था, उसे कोई उम्मीद की किरण नज़र नहीं आ रही थी। क्या यह थकान के कारण था? या पिछली तीन रातों से नींद न आने के कारण? या फिर क्या? इस समय उसका दिमाग सुन्न हो गया। यह सोचते हुए कि क्या पचास साल की उम्र में कोई घोड़े की पीठ पर बैठकर सोच नहीं सकता, उसने हार मान ली। उन्हें दुश्मन से मिलने या घर लौटने का विकल्प दिया गया था। युद्ध और शांति पर बातचीत शुरू हुए छह महीने बीत चुके थे। फिर भी, उसे दुर्योधन के फैसले पर ज़रा भी संदेह नहीं था। बेशक, वह युद्ध चाहता था। लेकिन उसे यकीन नहीं था कि पांडवों के पास युद्ध करने के लिए पर्याप्त संसाधन हैं या नहीं। अब उसने देखा कि उनके पास भी सेना की सात टुकड़ियाँ थीं। उनके साथ कुछ शासक भी अपनी सेनाओं के साथ उनका समर्थन कर रहे थे। युयुत्सु स्वयं शुरू से ही युद्ध के खिलाफ था। उसने यह बात दुर्योधन को भी स्पष्ट कर दी थी। लेकिन किसी ने उसकी बात नहीं सुनी। तभी जिस घोड़े पर वह बैठा था, वह हिनहिनाने लगा। उसने अपने दोनों अगले पैर उठाए और अपनी मांसपेशियों को ढीला कर दिया। यह सोचकर कि उसे क्या हुआ है, उसने अपनी जांघों और टांगों से उसके शरीर को कसकर पकड़ लिया। फिर वह अपनी स्थिति का और गहराई से विश्लेषण करने लगा। क्या उसने सचमुच युद्ध को अस्वीकार कर दिया था? या कुछ और बात थी? उसने निश्चित होने के लिए अपनी स्मृति को खंगाला। उन्होंने मन ही मन सोचा, "नहीं। मेरे लिए मुद्दा युद्ध या युद्ध न होना नहीं था। मेरा जन्म इस घर में राजा धृतराष्ट्र की एक दासी के रूप में हुआ था। उनकी पत्नी गांधारी की दासी। माँ हमेशा धृतराष्ट्र को मेरे पिता कहती हैं। वह उनके साथ ऐसा व्यवहार करती हैं मानो वह उनकी नियमित पत्नी हों, जिनका विवाह विधिपूर्वक, सात फेरे लेने की रस्म के साथ हुआ हो। बेशक, विवाह नहीं हुआ था। फिर भी उन्होंने उनके प्रति एक पत्नी की वफादारी दिखाई है। क्षत्रिय प्रथा के अनुसार, दुल्हन के साथ कई सुंदर युवतियों को सहेलियों और सेविकाओं के रूप में भेजा जाता था - दुल्हन की सेवा करने के लिए, बिस्तर पर उसके पति को प्रसन्न करने के लिए। दासियों में मेरी माँ अकेली थीं जिन्हें गांधारी को 'सहेली' कहकर संबोधित करने का सौभाग्य प्राप्त था। गांधार राजा बहुत धनी नहीं थे, और वे केवल दस दासियों को ही भेज सकते थे। आज भी गांधारी माँ को 'सहेली' कहकर बुलाती हैं। मेरी माँ ही थीं जो आँखों पर पट्टी बाँधकर गांधारी का हाथ पकड़कर उन्हें सैर कराती थीं।" जब उसने अपनी जांघों और टांगों की पकड़ मजबूत की तो घोड़े ने अपने अगले पैरों से जमीन को छुआ।

"घोड़े को भी आराम नहीं मिलता। खैर, जो राजा मेरे लिए पिता समान हैं, वे मुझे पुत्र कहकर पुकारते हैं, इसमें कोई शक नहीं। लेकिन सिर्फ पुत्र, राजकुमार नहीं। वह उपाधि तो गांधारी की संतानों के लिए थी, जिन्होंने उनके साथ सात-चरण विधि की थी, उनके गर्भ से निकले सभी चौदह बच्चे। सभी चौदह पुत्र। साथ ही पंद्रहवीं संतान, उनकी पुत्री दुस्साले। लेकिन हम तो सिर्फ पुत्र हैं। धृतराष्ट्र की संतान। कौरव नहीं। राजकुमार नहीं। घोड़े को भी आराम नहीं मिलता। चाहे कितना भी थकाने वाला और मुश्किल हो, मैं किसी अजनबी घोड़े की बजाय उस घोड़े पर सवारी करना पसंद करता हूँ जिस पर मैं सवारी करने का आदी हूँ। घोड़े के प्रति मेरा प्रेम ही उसका विनाशक प्रतीत होता है।" तभी

दुर्योधन विपरीत दिशा से आया। युयुत्सु को देखते ही उसने अपना घोड़ा उसकी ओर मोड़ दिया और उसके अंगरक्षकों ने भी उसका अनुसरण किया।

दुर्योधन ने बातचीत शुरू करते हुए कहा, "भाई युयुत्सु, क्या घोड़े स्वस्थ और तंदुरुस्त हैं? अभी कुछ देर पहले गुरु द्रोण ने कहा था कि इस युद्ध में घोड़ों की अहम भूमिका होगी। घोड़ों के स्वामी होने के नाते सारी जिम्मेदारी आपके कंधों पर है। ऐसे नाजुक समय में ही जानवर महामारियों की चपेट में आ जाते हैं। नई जगह, नई मिट्टी, नया पानी, यहाँ तक कि चारा भी नया है। क्या चारे की आपूर्ति ठीक है?"

युयुत्सु ने संक्षेप में उत्तर दिया, "सब ठीक है।" उसे आगे बात करने की इच्छा नहीं थी। दुर्योधन ने उसके चेहरे की ओर देखा। फिर उसके पास आकर, उसने उसके कंधे पर हाथ रखा और पूछा, "क्या बात है, छोटे भाई?" उसकी आवाज़ में स्नेह था। युयुत्सु ने कोई उत्तर नहीं दिया। शायद इसलिए कि वह अपने भाई पर जवाब देने का दबाव नहीं डालना चाहता था या फिर इसलिए कि वह अन्य घुड़सवारों के सामने बोलने से हिचकिचा रहा था, दुर्योधन ने विषय को आगे नहीं बढ़ाया। उसने बस इतना कहा, "लगता है पूरब से राजा आ गए हैं। मुझे उनका स्वागत करने जाना होगा।" फिर वह चला गया। युयुत्सु ने उसकी ओर मुँह नहीं किया। उसने घोड़े को भी उस दिशा में नहीं मोड़ा। अब उसे चीजें सुलझती हुई लग रही थीं। उसके लिए युद्ध चाहना या न चाहना कभी कोई मुद्दा नहीं था। वह जानता था कि इस मामले पर अंतिम निर्णय लेना उसके बस की बात नहीं है। आखिरकार, वह भी एक दासी का पुत्र था, ठीक वैसे ही जैसे उसके जैसे पचासी अन्य पुत्र थे। दुर्योधन ने उन्हें कभी भाई-बहन का दर्जा नहीं दिया था। उन्होंने कभी उन्हें भाई कहकर संबोधित नहीं किया था। वे सभी अपने-अपने काम के नाम से पुकारे जाते

थे—घोड़ों की देखभाल करने वाला, रथों का सेवक, हाथी-सेवकों का अधीक्षक। उन्हें इसकी इतनी आदत हो गई थी कि यह स्वाभाविक हो गया था, और उन्हें इससे कभी कोई घृणा महसूस नहीं हुई। युयुत्सु ने सोचा, "हाँ, मैं एक दासी की संतान हूँ। क्या मैं नहीं जानता कि मुझे नियमित रूप से विवाहित पत्नियों की संतानों के समान दर्जा पाने की इच्छा नहीं रखनी चाहिए?" जब द्रुपद का पुरोहित दूत बनकर आया था, तब दुर्योधन ने पहली बार कहा था, "ठीक है, वे पाँच भाई हो सकते हैं। लेकिन हम सौ भाई हैं। याद रखो, मेरे निन्यानवे छोटे भाई हैं। सिर्फ तेरह नहीं। इसे याद रखना।" बाद में जब यादवों के कृष्ण शांति वार्ता के लिए आए, तब उन्होंने भी यही बात कही थी। मुझे याद है कि यह सुनकर पिता के चेहरे पर संतोष की चमक आ गई थी। क्या पिता को लगा कि उनके सबसे बड़े पुत्र ने अंततः उन्हें भाईचारे का प्रेम दिखाकर भाई मान लिया है? लेकिन मेरे भीतर एक उथल-पुथल मची हुई थी। शांति वार्ता विफल होने और युद्ध निश्चित हो जाने के बाद, दुर्योधन के व्यवहार में कितना अद्भुत परिवर्तन आया! स्वामी की भाषा गायब हो गई। उसकी जगह एक भाई की भाषा ने ले ली। वह भाईचारे और चिंता से भर उठा। जिसने कभी हमारी झोपड़ियों का पता लगाने की भी जहमत नहीं उठाई थी, वह अपने सेवक के साथ स्वयं हमारे नेताओं से मिलने आया। वह हमारी पत्नियों और बच्चों के कल्याण के लिए कितना चिंतित था! इससे सूत पत्नियों में कितनी खुशी और संतुष्टि का भाव उत्पन्न हुआ! यहाँ तक कि मेरी अपनी पत्नी और बच्चों में भी! और उनके पतियों में भी! स्वयं महाराजा स्वयं आए थे! मेरी पत्नी भद्रा ने मुझसे पूछा, 'जब स्वयं महाराजा स्वयं यहाँ आए हैं, तो आपका चेहरा इतना उदास क्यों है?'

"अगर मैं उसे विस्तार से समझा भी दूं, तो भी वह मेरे भीतर जल रही कड़वाहट और अस्वीकृति की भावना को कैसे समझ पाएगी!" घोड़े ने अपने अगले पैर उठा लिए। वह समझ गया था कि अगर उसने ज़्यादा ज़ोर लगाया तो वह अड़ियल हो जाएगा। वह तुरंत नीचे उतर गया और लगाम एक नौकर को सौंपकर उसे अपने साथ भेज दिया। नौकर ने उससे पूछा कि क्या उसे दूसरा घोड़ा चाहिए। युयुत्सु को समझ नहीं आ रहा था कि उसे दूसरा घोड़ा क्यों चाहिए और उसे यह भी नहीं पता था कि वह कहाँ जाना चाहता है।

“यह विरोध का भाव केवल मुझमें ही क्यों विकसित हुआ, दूसरों में क्यों नहीं?” उसने स्वयं से पूछा, लेकिन जैसे ही उसने यह प्रश्न पूछा, उत्तर तुरंत उसके मन में कौंध गया। पर वह उस उत्तर को स्वयं को स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं कर सका।

अचानक उसे अपने चाचा विदुर की याद आ गई। एक तरह से, उन्होंने ही बचपन से उसका पालन-पोषण किया था। एक अंधा पिता अपनी इतनी बड़ी संतान, जिसमें विवाहित पत्नी से पंद्रह और नौकरानियों से छियासी संतानें थीं, के साथ इतना प्यार-दुलार कैसे कर सकता था और उनके साथ खेल सकता था? और तो और, नौकरानियों की कोख से जन्मे बच्चों के साथ विवाहित पत्नी से जन्मे बच्चों की तरह इतना प्यार-दुलार कैसे किया जा सकता था और उनके साथ खेला कैसे जा सकता था? उसे बताया गया था कि उसके चाचा विदुर उसे तब से ही पसंद करते थे जब वह एक वर्ष का शिशु था। उसकी माँ अक्सर उसे बताया करती थी कि उसके चाचा उसे असाधारण रूप से चौकस और बुद्धिमान बच्चा मानते थे। उसने सोचा, "अगर मेरे चाचा ने मुझमें रुचि न ली होती और मेरा पालन-पोषण न किया होता, तो मैं भी दूसरे सूत संतानों जैसा ही होता। मुझे तो विरोध और अस्वीकृति का अर्थ भी न पता होता। यह सिर्फ हस्तिनावती में ही नहीं है। हर महल के चारों ओर दासी-दासीयों की संतानों का ही समुदाय बसा हुआ था। चाचा मुझे यह बात अक्सर कहते थे। वे यह भी कहते थे कि इस सूत संतान की भक्ति और वफादारी के बिना कोई भी राज्य टिक नहीं सकता..." युयुत्सु अब अपने चाचा के शब्दों का अर्थ समझ गया था। और इससे उसका विरोध और अस्वीकृति का भाव और भी तीव्र हो गया। यह कैसी जिंदगी थी? स्त्री का काम राजा को यौन सुख देना था, ठीक वैसे ही जैसे आम रानियाँ करती थीं। गर्भ से जन्म लेने वाले इन बच्चों को वैश्य की तरह अपनी जमीन जोतने और स्वतंत्र जीवन जीने का अवसर भी नहीं मिलता था। और उन्हें राजकुमार का दर्जा भी नहीं दिया जाता था। अगर बच्ची होती, तो वह किसी राजकुमारी की दासी या सहेली बन जाती। जब उसकी शादी हुई तो उसे उस राजकुमारी के साथ जाना पड़ा, और अपने पति को अपने शरीर का आनंद लेने और सूता समुदाय को आगे बढ़ाने के लिए संतान पैदा करने की अनुमति देनी पड़ी। उसकी सोच में तभी एक नौकर ने दखल दिया जो उसके लिए एक और घोड़ा लेकर आया था। वह एक चतुर व्यक्ति लग रहा था, क्योंकि वह ठीक वही जानवर लाया था जो वह चाहता था, युयुत्सु परिवार के कुछ प्रिय घोड़ों में से एक। वह उसकी पीठ पर चढ़ गया, लेकिन उसे समझ नहीं आ रहा था कि कहाँ जाए। उसे दूसरे घोड़ों की देखरेख करने का मन नहीं था। अचानक, उसे चाचा विदुर से मिलने की तीव्र इच्छा हुई। उसी समय, वर्तमान युद्ध की एक रोचक बात उसके मन में आई। बूढ़े दादाजी, जिनकी हड्डियाँ उभरी हुई थीं, और दृढ़ जबड़े वाले गुरु,

सभी युद्ध में शामिल होने आए थे। और, बेशक, बाकी सभी भी। उसने खुद से पूछा: लेकिन चाचा विदुर क्यों नहीं आए? निस्संदेह, वह कोई खास अच्छे योद्धा नहीं हैं। लेकिन क्या ये सभी बूढ़े लोग जो आए हैं, अच्छे योद्धा हैं? वे ज्यादातर युवाओं को प्रेरित और प्रोत्साहित करने आए हैं। और उन्हें उकसाने आए हैं, 'तुम मूर्ख लोग।' डर के मारे पीठ मत फेरो। क्या तुम्हें पता है कि पुराने समय में हम कितनी बहादुरी से लड़ते थे? साथ ही, रणनीतियों और युक्तियों को तैयार करने में भी मदद करते थे। लेकिन चाचा क्यों नहीं आए? भीष्म और द्रोणाचार्य की तरह, उन्होंने भी पहले युद्ध का विरोध किया था। लेकिन उन्होंने अपना रुख बदल लिया है और इस युद्ध में सेना का नेतृत्व करने आए हैं। लेकिन चाचा युद्ध के विरोध के अपने रुख से जरा भी नहीं डिगे और शहर में ही रुकने का फैसला किया। चाचा के प्रति उनका आदर अचानक बढ़ गया। वे यह जानने के लिए उत्सुक थे कि शत्रु से जुड़ने या घर लौटने का विकल्प देने के पीछे कौन था और क्यों। फिर वे मुख्य सेनापति, आदरणीय भीष्म के तंबू की ओर चल पड़े।

तंबू के रखवाले से पता चला कि योद्धा शिविर में नहीं है। माना जाता है कि वह किसी गंभीर मामले पर सलाह लेने के लिए उस वन में गया है जहाँ ऋषि कृष्ण द्वैपायन रहते थे। तंबू का रखवाला सोमरथ भी युयुत्सु की तरह सूत था। लेकिन वह धृतराष्ट्र का पुत्र नहीं था। उसका जन्म हस्तिनावती में एक दासी से हुआ था, जिसके विवाह से पहले पांडु से संबंध थे। स्वाभाविक रूप से, उसके हृदय में पाण्डवों के लिए विशेष स्नेह था। वह युयुत्सु को भी पसंद करता था। चौदह वर्ष पहले, जब दुर्योधन ने धर्मराज को जुए के खेल में पराजित कर वन में भगा दिया था, तब युयुत्सु ने पूरी सभा में धर्म का प्रश्न साहसपूर्वक उठाया था। उस दिन से सोमरथ युयुत्सु के प्रति विशेष आदर रखता था। विशेषकर इसलिए कि भीष्म और द्रोण जैसे ज्ञानवान बुजुर्गों और अपने पिता धृतराष्ट्र और महाराजा दुर्योधन जैसे राजसी व्यक्तियों की उपस्थिति में एक सूत के लिए खुले दरबार में बोलना अविश्वसनीय साहस का काम था। सोमरथा की बातों से युयुत्सु ने ढोल वादक के विकल्पों को प्रस्तुत करने के संदेश का अर्थ समझ लिया था।

युयुत्सु, "इस ड्रमर के संदेश के बारे में आपका क्या विचार है?"

सोमरथा, "तुम्हारा क्या मतलब है?"

युयुत्सु, "तुम्हारे पिता राजा पांडु हैं। अब क्या तुम अपने भाई के शिविर में शामिल होने के लिए स्वतंत्र नहीं हो?"

सोमरथा असमंजस और स्तब्ध रह गया। उसने पूछा, "आप क्या कहना चाह रहे हैं?"

युयुत्सु, "भाईचारा और कर्तव्य।"

सोमरथा ने कहा, "देखो, मज़ाक मत करो। वे मुझसे जान-पहचान तक नहीं रखते। उन्होंने कभी मुझे माँ नहीं माना और न ही कभी मुझे अपनी माँ कहा।"

युयुत्सु, "शायद उन्हें डर है कि अगर उन्होंने तुम्हें भाई कहा, तो वे धर्मराज के बजाय तुम्हें राजा बनाने के लिए बाध्य महसूस कर सकते हैं!"

सोमरथा ने कहा, "एक दासी का पुत्र राज्य पर दावा कैसे कर सकता है? युयुत्सु, तुम आज कुछ ज्यादा ही विनोदपूर्ण मूड में लग रहे हो। क्यों?"

युयुत्सु ने एक शब्द भी नहीं कहा। उसने खुद से पूछा कि वह ऐसे सवाल क्यों पूछ रहा है। उसके पास कोई जवाब नहीं था। वह घोड़े पर सवार हुआ और चल पड़ा। उसे नहीं पता था कि वह कहाँ जा रहा है। उसे लग रहा था कि वह और उसका घोड़ा बेवजह थक रहे हैं। लेकिन उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। उसने सोचा कि शायद सबसे अच्छा यही होगा कि वह अपने तम्बू में जाकर सो जाए। इसलिए वह अपने तम्बू की ओर चल पड़ा। लेकिन जब वह वहाँ पहुँचा, तो उसे हस्तिनावती वापस जाकर अपने चाचा से मिलने की तीव्र इच्छा हुई। लेकिन यह दूरी कम नहीं थी। तेज़ गति से भी सवारी करने पर लगभग आठ घंटे का सफर तय करना पड़ता। फिर वह घोड़े से उतरा, अपने तम्बू में गया और सो गया। देखते ही देखते वह गहरी नींद में सो गया।

लेकिन कुछ देर बाद, उसे ऐसा लगा जैसे भीतर से कोई अंधकार उसे घेर रहा हो, और वह जाग गया। वह अचानक उठ बैठा। अब अपने मामा से मिलने की इच्छा प्रबल हो गई थी। उसने नींद में आए पसीने को अपने चेहरे पर पोंछा और घोड़े पर सवार होकर चल पड़ा। उसने अपने नौकर को अपने गंतव्य के बारे में नहीं बताया। सैनिकों, हाथियों, घोड़ों और वाहनों के जमावड़े वाले स्थान से आगे निकलने के बाद, उसने सीधी सड़क को छोड़ दिया। वह जानता था कि पूरे रास्ते में उसे रसद से भरी गाड़ियाँ और युद्ध सामग्री से लदे हाथी मिलेंगे। वह दाईं ओर मुड़ा और तेज़ी से घोड़े दौड़ाए। शिविर और उसके आसपास के क्षेत्र को पार करने के बाद, वह धूल रहित, हरे-भरे वातावरण के ऊपर साफ नीले आकाश वाले इलाके में पहुँच गया। इससे उसे बहुत खुशी हुई। उसका मन भी शांत हो गया। उसने सोचा, "खैर, उन्होंने विकल्प तो खुलेआम घोषित कर ही दिए हैं।" वह

दुर्योधन का साथ छोड़कर पांडवों से जुड़ने का मौका नहीं छोड़ना चाहता था। उसने महसूस किया कि ऐसा करने से पहले उसे अपने मामा से सलाह लेनी चाहिए। अब उसके मन में यह बात स्पष्ट हो गई थी कि वह अपने मामा विदुर के पास जा रहा है। उन्हें इस बात में जरा भी संदेह नहीं था कि पांडव उनका आलिंगन करेंगे और उनका अत्यंत गर्मजोशी से स्वागत करेंगे। एक गाँव पार करने के बाद और सही रास्ते का पक्का पता चलने पर, वह सोचने लगा, "एक विधिवत विवाहित पत्नी से जन्मे बच्चों के लिए अधिक प्रेम क्यों होना चाहिए? उस पत्नी की जगह, जिसने अपनी आँखें मूंद ली थीं, क्या मेरी माँ ही मेरे पिता की सभी ज़रूरतों का ख्याल नहीं रखती थी? बुरा नहीं है, यह घोड़ा अच्छा दिखता है। यह तेज़ दौड़ता है, और झटके नहीं खाता। यह इतनी सहजता और सुंदरता से चलता है मानो हवा में तैर रहा हो। मुझे मेरी ज़बान पर मेरी विधिवत विवाहित पत्नी से जन्मे चौदह पुत्रों के नाम हैं, वरिष्ठता क्रम में - दुर्योधन, दुस्साना, दुस्साह, दुस्साला, दुर्धरश, दुष्प्रदर्शन, दुर्मर्षन, दुर्मुख, दुष्कर्ण, दुर्मादा, दुर्विगा, दुर्विरोचन, दुष्पराजय, दुर्धर, और अंत में, एक पुत्री, दुस्साले। बेशक, मैं पुत्री के प्रति प्रेम को समझ सकता हूँ। क्या उस पिता को, जिसने दासी महिलाओं से संतानें पैदा की हैं, इन बच्चों के लिए इतना प्रेम नहीं होना चाहिए कि वह उन्हें याद रखे।" कम से कम उनके नाम तो जानते हो? वह तो कुछ ही जानता है— जलसंध, समा, सहा, विंदा, अनुविन्द, और बेशक, मैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि ये गांधारी की प्रिय दासी और सहेली के बच्चे हैं। बाकी तो मानो हैं ही नहीं। और, स्वाभाविक रूप से, इन बच्चों को जब चाहे अपने पिता से मिलने का कोई अधिकार नहीं था। बेशक, ऐसा लगता भी नहीं कि उनकी ऐसी कोई इच्छा है। यह बात उसे अजीब लगी। चीजों के प्रति, पूरी व्यवस्था के प्रति, उसकी अस्वीकृति की भावना फिर से जागृत हो गई। उसने सोचा, "दुर्योधन ने कितनी खुशी से कहा था, 'मेरे भाई युयुत्सु; मेरे प्यारे छोटे भाई।' स्नेह के शब्द! और पिताजी आज भी जब मैं उनके पास जाता हूँ तो केवल मुझे ही गले लगाते हैं, लेकिन उससे आगे नहीं बढ़ते, हमारे पुराने रिवाज के अनुसार मेरे सिर को सूंघकर मुझे वैध पुत्र के रूप में स्वीकार नहीं करते... इस बिंदु पर उसे यह जानकर झटका लगा कि वह भी, एक दासी का पुत्र होते हुए, दासियों के बच्चों के अलावा अन्य बच्चों के नाम बेहतर याद रखता है!"

—•✳•—

अध्याय 45

जब तक वह हस्तिनावती पहुँचा, तब तक पूरा शहर सो चुका था और युयुत्सु को यह अच्छा लगा। वह अपने घर नहीं जाना चाहता था। रास्ते में ही उसने अपने मामा के घर सीधे जाने का निश्चय कर लिया था। वह मुख्य द्वार से अंदर नहीं गया, बल्कि नदी के किनारे पहुँचने के लिए दाईं ओर मुड़ गया। घना अंधेरा था। अपने मामा के घर से नदी किनारे जाने वाली सीढ़ियों पर उसने दो लोगों को बैठे देखा। उसने अनुमान लगाया कि वे कुंती और मामा होंगे। वह जानता था कि कुंती ज्यादातर सीढ़ियों पर बैठती थीं या सामने के आँगन के चबूतरे से नदी को देखती रहती थीं। उसके मामा भी देर से सोते थे और नदी के किनारे बैठना उन्हें भी पसंद था। एक-दूसरे के करीब बैठे वे ज्यादातर चुप थे। मामा स्वभाव से कम बोलने वाले थे। कुंती भी धीरे-धीरे चुप होती जा रही थीं। उसकी चाची परसावी बीमार थीं। युयुत्सु ने सोचा, "वह बिस्तर पर होंगी। यह वह समय है जब बच्चे, बहुएँ और नाती-पोते सो रहे होते हैं।" वह रुका और घोड़े को बांध दिया। फिर वह सीढ़ियाँ चढ़ने लगा, तभी उसके चाचा ने उसे पहचान लिया। वे उससे मिलने के लिए सीढ़ियों से नीचे उतरे और 'युयुत्सु' कहकर पुकारा। युयुत्सु जल्दी से ऊपर चढ़ गया और पहले चाचा को और फिर कुंती को प्रणाम किया। विदुर ने पूछा, "क्या तुम सीधे युद्ध शिविर से आ रहे हो?" चाचा को आमतौर पर हर बात की जानकारी होती थी।

सूता समुदाय और उससे निचली जातियों के लोग उससे बहुत प्यार और सम्मान करते थे। इसलिए अनगिनत दिशाओं और स्रोतों से उसे खबरें मिलती रहीं। नदी में पैर और चेहरा धोने के बाद, विदुर उसे घर ले गए। रसोई में कुंती ने युयुत्सु को भोजन परोसा। उसने उसे अक्सर देखा था और जब भी वह चाचा के घर जाता था, उससे बातें करता था। उसने पहले कभी ध्यान नहीं दिया था कि उसके हाथ कितने

बड़े थे। अब उसे एहसास हुआ कि वे इतने बड़े थे कि इस बुढ़ापे में भी वे आसानी से गदा उठा सकते थे। वे इतने बड़े थे कि उनके दो चम्मच चावल से ही उसका पेट भर जाता था। उसने युद्ध के बारे में कुछ नहीं पूछा। चाचा स्वयं घोड़े को चारा और पानी देने बाहर गए। फिर वह लौटकर उसके पास बैठ गए। उन्होंने धीमी आवाज़ में पूछा, "तुम सब अचानक इस तरफ क्यों आ गए?"

युयुत्सु ने पहले ढोल बजाने वाले के संदेश वाली घटना का वर्णन किया और फिर आगे कहा, "मेरा मन उथल-पुथल में था। मैं बस तुमसे मिलने, तुमसे बात करने और अपनी मानसिक शांति वापस पाने के लिए यहाँ आया। यहाँ आते समय मैंने पांडवों के पास जाने का निश्चय कर लिया।"

विदुर ने तुरंत कोई जवाब नहीं दिया। और युयुत्सु अच्छी तरह जानता था कि उसका चाचा कोई भी जवाब देने से पहले हमेशा सोच-विचार करता था। युयुत्सु ने कुंती के चेहरे की ओर देखा। कुंती ने उससे पूछा, "क्या तुम अकेले हो जो पांडवों के साथ शामिल हुए हो?"

उन्होंने उत्तर दिया, "नहीं, मुझे नहीं पता। मैंने इस बारे में किसी और से बात नहीं की। मुझे यह भी लगा कि अगर मैं उनसे बात करूँ भी तो वे कर्तव्य और सम्मान के सूक्ष्म पहलुओं को नहीं समझ पाएँगे।" फिर उन्होंने गर्दन झुकाकर दूध में मिले हुए सात-आठ चावल के गोले खाए। उसके बाद उन्होंने कहा, "चाचा जी, आप, दादाजी और गुरुजी, तीनों इस बात पर एकमत थे कि युद्ध में जाना और उसे होने देना गलत है। लेकिन अब वे उस युद्ध में लड़ने गए हैं जिसे उन्होंने पहले अधर्म, धर्म का उल्लंघन बताया था। इतना ही नहीं, उन्होंने सेनापति और मुख्य सेनापति का दायित्व भी स्वीकार कर लिया है। केवल आप ही घर पर रहे, अपनी अंतरात्मा से समझौता नहीं कर पाए। मैं आपसे इस बारे में चर्चा करके और आपके ज्ञान से लाभ उठाकर अपने निर्णय की परीक्षा लेना चाहता था। इसीलिए मैं यहाँ आया हूँ।"

विदुरा ने कोई जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप बैठे रहे, उन्होंने साधारण लेकिन साफ-सुथरे कपड़े पहने थे। उनके बाल और दाढ़ी हमेशा की तरह बिखरे हुए थे। युयुत्सु ने आगे पूछा, "क्या युद्ध में जाने से इनकार करने के कारण ही आपको यहाँ सुई चुभोने जैसी तकलीफें नहीं झेलनी पड़ रही हैं?"

उत्तर कुंती ने दिया। उसने कहा, "उनके पक्ष में लड़ने से इनकार करने पर वे उस पर अत्याचार करने से कैसे बच सकते हैं? अगर उसने सिर्फ इतना कह दिया

होता कि वह युद्ध में जाने के लिए बहुत बूढ़ा हो गया है, तो वे उसे क्षमा कर सकते थे। लेकिन तुम्हारे चाचा ने दृढ़ नैतिक रुख अपनाया और कहा, 'तुम जो कर रहे हो वह अन्याय है। यह धर्म का उल्लंघन है। मैं तुम्हारे युद्ध में भाग नहीं लूंगा। मैं अपने बच्चों और पोते-पोतियों को भी इसमें भाग लेने से रोकूंगा।' क्या तुम्हें लगता है कि ऐसे शब्दों से प्रतिशोध नहीं होगा? यह सच है कि दुर्योधन युद्ध में चला गया, बस यह कहकर कि 'इस बूढ़े नौकर के बेटे के हमारे साथ न आने से कोई फर्क नहीं पड़ता।' लेकिन यहाँ जड़ जमाए बैठा अंधा पिता विदुर पर, यहाँ तक कि सपनों में भी, खूब गालियाँ बरसाता है। वह इतना नीचे गिर गया कि उसने अपने कुछ आदमियों को उसकी दूध देने वाली गायें चुराने के लिए भेज दिया। उसने घर के पीछे रखे अपने चारे के भंडार को आग लगाकर नष्ट करवा दिया। सौभाग्य से, अनाज का भंडार नष्ट नहीं हुआ क्योंकि वह घर के अंदर रखा था।"

युयुत्सु ने कहा, "उसने इतने गुप्त तरीके क्यों अपनाए? वह राजा के रूप में अपने अधिकार का प्रयोग करके उसे दंडित कर सकता था।"

कुंती ने कहा, "खैर, शुरू से ही वह अंधा व्यक्ति विदुर का प्रिय रहा है। इसके अलावा, उसे डर है कि विदुर का आदर करने वाले लोग इस कृत्य से नाराज हो सकते हैं। शायद यही कारण है कि उसने दंड का आदेश नहीं दिया।"

अब अंततः विदुर ने बोलना शुरू किया, "धृतराष्ट्र का ऐसा व्यवहार करना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। परन्तु मुझे दुख इस बात का है कि हस्तिनावती के लोग अब मुझे तिरस्कार भरी नजरों से देखने लगे हैं, मानो मैं कोई गद्दार हूँ। जब राजा युद्ध पर जाता है, तो क्या पूरे राज्य को, सारी प्रजा को, युद्ध में नहीं जाना चाहिए? लोगों की नजर में केवल बूढ़े, शारीरिक रूप से अक्षम, स्त्रियाँ और बच्चे ही पीछे रहने के विशेषाधिकार के पात्र हैं। उनका मानना है कि बाकी सभी को राजा और उसके उद्देश्य का अनुसरण करना चाहिए।"

कुंती ने दो और बार खाना परोसा। जब उसने तीसरी बार खाना परोसने के लिए बर्तन में हाथ डाला, तो युयुत्सु ने कहा, "नहीं।" रसोई में दूध, दही और मक्खन की तीखी गंध पहली बार उसकी नाक में पड़ी। विदुर ने पूछा, "जब युद्ध चल रहा होता है, तो राजा के प्रति भक्ति का बुखार स्वाभाविक रूप से बढ़ जाता है। जो व्यक्ति युद्ध नहीं चाहता, उसे उससे दूर रहने की अनुमति क्यों नहीं मिलनी चाहिए?"

युयुत्सु ने कहा, "तुम कुंती के साथ उपप्लव्य नगर क्यों नहीं चले जाते, जहाँ पांडव और उनके समर्थक रहते हैं?"

विदुर ने कहा, "मैं क्यों जाऊँ? मेरा जन्म इसी नगर में हुआ है। मैं यहीं पला-बढ़ा हूँ। मेरे बच्चे और पोते-पोतियाँ इसी नगर के आसपास बीज बोते हैं, खेतों में खेती करते हैं और फसल काटते हैं। मेरी गायें और मवेशी यहीं पले-बढ़े हैं, नदी किनारे घास चरते हैं और नदी का पानी पीते हैं। मैं यह सब छोड़कर एक अजनबी की तरह क्यों भाग जाऊँ? आख़िर मेरा गुनाह क्या है? मैंने यह नहीं कहा कि हस्तिनावती पांडवों को दे दो। मैंने कहा था कि उन्हें उनका हिस्सा लौटा दो। हमें केवल अपना हिस्सा रखना चाहिए। शासकों और नेताओं को ऐसे शब्द पसंद नहीं आते। पांडवों के साथ हुए अन्याय से उन्हें कोई फ़र्क नहीं पड़ता। उन्हें चिंता है कि अगर वे क्षेत्र छोड़ देंगे, तो इससे उनके पहले के विशाल राज्य के पंख कट जाएँगे और उनका अहंकार कम हो जाएगा। यही उनकी हठधर्मिता है।"

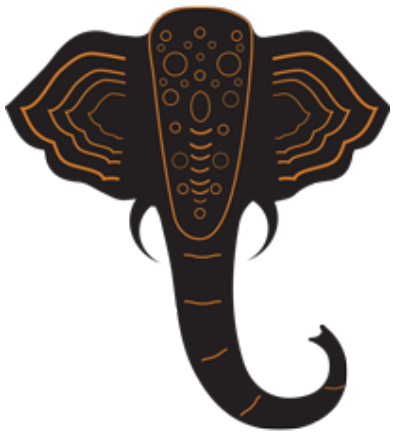
युयुत्सु ने अपना भोजन समाप्त किया, तांबे के पात्र से पानी पिया और हाथ-मुँह धोए। कुंती ने उसकी थाली हटा दी। तीनों रसोईघर में ही बैठ गए। विदुर ने कहा, "तो क्या तुम पांडवों से जुड़ना चाहते हो? अगर यही तुम्हारी इच्छा है, तो तुम्हें अवश्य ही ऐसा करना चाहिए। पूरी निष्ठा से युद्ध करो। लेकिन यह निश्चित है कि यहाँ वे तुम्हारी पत्नी और बच्चों को परेशान करेंगे। तुम इसके बारे में क्या करने का इरादा रखते हो?"

युयुत्सु ने इस पहलू को नहीं देखा था। यह सच था कि सेनापति भीष्म ने उन्हें घर लौटने या पांडवों के पक्ष में जाने का विकल्प दिया था। यही संदेश ढोल बजाकर और शोर मचाकर दिया गया था। अब, उसने देखा कि मामला इतना सरल या आसान नहीं था। शायद यह विकल्प केवल अन्य शासकों के लिए था, इस राज्य की प्रजा के लिए नहीं, उन लोगों के लिए नहीं जो इस मिट्टी में उगाई गई उपज, इसकी हवा और पानी पर पलते-बढ़ते थे। लेकिन क्या संदेश में यही निहित था? क्या उसे वापस जाकर स्पष्टीकरण मांगना चाहिए? मान लीजिए कि उसे बताया गया कि इस राज्य के योद्धाओं के पास ऐसा कोई विकल्प नहीं है। ऐसे विचार उसके मन में आते ही उसे बहुत नींद आने लगी। वह पिछली तीन रातों से सोया नहीं था। फिर ऊबड़-खाबड़ रास्तों से लंबी यात्रा की थकान थी। फिर कुंती द्वारा परोसे गए भरपूर भोजन से उसका पेट भारी था। विदुरा ने कहा, "चुपके से मत जाओ। एक पुरुष की तरह जाओ और खुलकर घोषणा करो कि तुम्हें दुर्योधन का पक्ष अन्यायपूर्ण लगता है, और तुम उस पक्ष में शामिल हो रहे हो जिसे तुमने अधिक न्यायसंगत समझा है। सामना करो, कभी कायर मत बनो।"

युयुत्सु ने सहमति में सिर हिलाया। कुंती, जो उसकी नींद को देख रही थी, ने सुझाव दिया कि उसे अंदर जाकर सो जाना चाहिए।

—•✳•—

भाग ग्यारह



अध्याय
46

बंधे हुए घोड़ों के चबाने और रगड़ने की आवाज़ हवा में गूंज रही थी। कुछ दूरी पर हाथियों की कतारें खड़ी थीं। नौकर घोड़ों का गोबर इकट्ठा कर रहे थे, लेकिन उसे कहाँ फेंकना है यह न जानते हुए, उन्होंने उसे इधर-उधर छोटे-छोटे ढेरों में जमा कर दिया था। शिविर के किनारे से दुर्गंध फैलने लगी थी। द्रोणाचार्य के लिए विशेष रूप से लगाए गए शामियाने में पिछली रात किए गए अग्नि अनुष्ठान की सुगंध अभी भी बनी हुई थी, जो बाहर से आ रही दुर्गंध को दबा रही थी। सुबह स्नान करने के बाद, वे अग्नि के पास बैठे थे और अभी अनुष्ठान शुरू नहीं किया था। दाईं ओर टहनियों के गट्ठे और घी से भरे पत्तों के प्याले रखे थे। कोई अनुष्ठानिक सूत्र उनकी स्मृति और चेतना से निकलने के लिए संघर्ष कर रहा था, लेकिन वे उसे पहचान नहीं पा रहे थे। उन्हें इस बात पर गुस्सा भी आ रहा था कि इस समय उन्हें इसकी चिंता क्यों हो रही है। वास्तव में, यह इस अवसर के लिए प्रासंगिक सूत्र नहीं था। फिर उन्होंने छोटे मिट्टी के बर्तन में जल रही आग को हवा देना शुरू किया और साथ ही उसमें टहनियाँ डालते रहे। उन्हें याद आया कि ब्राह्मण दीक्षा लेने के बाद से पिछले अस्सी वर्षों से वे लगातार इस अग्नि की रक्षा और पूजा करते आ रहे थे। उन्हें पहले कभी भी चकमक पत्थर से अग्नि प्रज्वलित करने और टहनियों से इसे जलाऊंगी नहीं। ऐसा इसलिए था क्योंकि वे जहाँ भी जाते, चूल्हे की मूल अग्नि को हमेशा जलता हुआ अपने साथ रखते थे। तभी उन्हें बंधे घोड़ों के पैर पटकने की आवाज़ सुनाई दी। द्रोण ने सोचा कि यदि ये जानवर, जो प्रतिदिन सवार को पीठ पर बिठाकर दौड़कर अपने शरीर को हल्का और ऊर्जावान बनाते हैं, इस प्रकार बंधे हों, तो वे बेचैनी से पैर पटकने के अलावा और क्या कर सकते हैं? इससे उन्हें याद आया कि वे उस सुबह की सवारी चूक गए थे। इस विचार से उनके शरीर में दर्द होने लगा। उन्हें भीष्म की वह बात याद आई, जो वे कभी-कभी उनका मज़ाक उड़ाते हुए कहते थे, "हे गुरु, जब आप सवारी करते हैं, तो आप अपने शरीर का व्यायाम करते हैं, घोड़े का नहीं!" वे बहुत हष्ट-पुष्ट नहीं थे, और उनकी हड्डियाँ कुछ स्पष्ट रूप से दिखाई देती थीं। उनका शरीर दुबला-पतला था। जब वे मन ही मन कह रहे थे कि शरीर ही समस्त शक्ति और ऊर्जा का स्रोत है, तो अनजाने में ही उनकी नज़र अपने निर्बल शरीर पर पड़ी। उसके चेहरे पर झुर्रियाँ बहुत कम थीं। उसे लगता था कि केवल मोटे लोगों के चेहरे पर ही झुर्रियाँ और सिलवटें पड़ती हैं। उसने धुएँ के बादल से लपटों को निकलते देखा। तभी उसे अचानक उस अनुष्ठानिक मंत्र के शब्द याद आ गए, जो उसे परेशान कर रहा था: "वह (अग्नि)

जल में संकेत के रूप में छिपा है, वह वन के वृक्षों में वन-अग्नि के रूप में छिपा है, वह लकड़ी जैसी स्थिर वस्तुओं में निवास करता है, वह जीवित प्राणियों में भूख की अग्नि के रूप में रहता है।" वह इस बात से दुखी था कि वह इतना उत्तम मंत्र कैसे भूल गया। समय बीतने के साथ, उसकी स्मृति में केवल दैनिक अनुष्ठानों में प्रयुक्त मंत्र के शब्द ही रह गए थे। शेष वेद उसकी चेतना से विलीन हो गए थे। उसने सोचा, "क्या भीष्म सही हैं? क्या मैं नाम के सिवा क्षत्रिय नहीं रह गया हूँ, सभी पवित्र ज्ञान को भूल गया हूँ, युवावस्था में वेदों का अध्ययन किया लेकिन धीरे-धीरे एक कुशल धनुर्धर बन गया हूँ, पवित्र ज्ञान का उपदेश देने वाले ब्राह्मण के योग्य नहीं हूँ?" बाहर घोड़े हिनहिना रहे थे। “यह मेरे घोड़े की हिनहिनाहट है। मैं इसे हज़ारों घोड़ों की हिनहिनाहट के बीच भी पहचान सकता हूँ। अगर मैं हज़ारों लोगों के बीच भी इसे पुकारूँ, तो यह मेरी आवाज़ पहचान लेगा और मेरी बात मानेगा।” उसे याद आया कि उसका घोड़ा उसकी आवाज़ पहचानने से पहले अपने कान खड़े करके ध्यान से सुनता था। अनुष्ठान शुरू हुआ। उसके मुँह से नियमित मंत्रों के शब्द इतनी तेज़ी और धाराप्रवाह निकले जैसे किसी कुशल धनुर्धर के हाथ से तीर निकलते हैं! घी की सुगंध उसकी नाक में भरते ही, वैदिक मंत्रों के शब्द बार-बार अग्नि के विविध स्वरूप को व्यक्त कर रहे थे। यही एकमात्र मंत्र था जो उसकी स्मृति में बस गया था। उसने सारा घी अग्नि में डाल दिया। जैसे ही लपटें छाती तक उठीं, उसे ऐसा लगा मानो वह अग्नि को उसके पूरे वैभव में देख रहा हो। अग्नि से प्रार्थना करते हुए कि वह उसे सही मार्ग दिखाए, उसने अनुष्ठान के अनुसार तीन बार परिक्रमा की। फिर वह अपने तम्बू से बाहर आया और देखा कि यह उसका घोड़ा था। उसने अनुमान लगाया कि अनुष्ठानिक मंत्रों को सुनकर ही घोड़े ने हिनहिनाहट की होगी। जैसे ही वह उसके पास गया और स्नेह से उसकी गर्दन सहलाई, उसने भी उतने ही स्नेह से उसे सूंघा। उसके मुंह से भीगे हुए चावल का चूरा चारों ओर टपक रहा था। वह उसकी गंध महसूस कर सकता था। उसका घोड़ा घोड़ों के एक समूह से घिरा हुआ था। हवा उनके हिनहिनाने की आवाज़, ज़मीन पर उनके पंजों के रगड़ने की आवाज़ और रथों की मरम्मत कर रहे बढ़ईयों के शोर से भरी हुई थी। तम्बू के अंदर, आग पर जल रहे घी की मनमोहक सुगंध फैली हुई थी। उस सुगंध का पूरा आनंद लेने के लिए आंखें बंद करके धीरे-धीरे और गहरी सांस लेनी पड़ती। बाहर, दुर्गंध इतनी असहनीय थी कि एक दिन भी सहन करना मुश्किल था। उसने सोचा कि अगर वह वहां और देर तक खड़ा रहा,

तो दुर्गंध उसे जकड़ लेगी। एक-दो मिनट से ज़्यादा देर तक नथुनों में सांस रोकना मुश्किल था। इसलिए, उसने खुलकर सांस लेने और दुर्गंध का सामना करने का फैसला किया। नौकर पीछे से आया और धीमी आवाज़ में आदरपूर्वक बोला, "गुरुजी।" द्रोण पीछे मुड़ा और उसे कहते सुना, "खाना ठंडा हो रहा है।" आप नहाने और सुबह की रस्में निभाने में देर कर चुके थे।

द्रोण ने पूछा, "अगर खाना ठंडा हो जाए तो क्या होगा?" अनजाने में ही उन्होंने अपने जवाब में थोड़ी नाराज़गी भर दी थी। सेवक अपने स्वामी के व्यवहार में उतार-चढ़ाव से परिचित था, इसलिए उसे आश्चर्य नहीं हुआ। वह चुपचाप खड़ा रहा। फिर उसने कहा, "तुम जाओ। मैं तुम्हारे पीछे आता हूँ।" फिर उसने तम्बू में प्रवेश कर रहे सेवक से पूछा, "क्या मेरा पुत्र अश्वत्थामा खाने के लिए तैयार है?"

नौकर ने कहा, "वह सुबह घोड़े पर सवार होकर बाहर गया था। वह अभी तक लौटा नहीं है। उसने स्नान भी नहीं किया है।"

द्रोणा ने गुस्से से कहा, "अरे बेवकूफ, क्या तुझे पता नहीं कि मैं उसके बिना कभी खाना नहीं खाता?"

वह कुछ देर तक सिर झुकाए चुपचाप खड़ा रहा। फिर बोला, "खाना ठंडा हो रहा है। अगर दूध को दोबारा उबाला गया तो वह फट सकता है। यह कल रात का दूध है। दूध वालों ने कहा है कि शाम से पहले ताजा दूध नहीं मिलेगा।"

द्रोण ने पूछा, "वह कहाँ चला गया?" उसका हाथ अपने लाल घोड़े की गर्दन सहला रहा था। सूरज बहुत तेज़ था। बहुत जल्द सूरज सिर के ऊपर चढ़ जाएगा।

उसने उत्तर दिया, "एक सारथी आया और उसने उसे सूचना दी कि उसके अधीन युद्ध-रथ तितर-बितर हो गए हैं। सूर्योदय से पहले का समय था। उसने अपना मुँह भी नहीं धोया और अपने घोड़े को भी नहीं नहलाया, वह उनके पीछे चल पड़ा। यह निश्चित है कि जब तक वह अपने रथों को ठीक से व्यवस्थित नहीं कर लेता, तब तक वह वापस नहीं लौटेगा।"

द्रोणाचार्य ने बस "उह" कहकर हल्की सी आवाज़ निकाली। नौकर अंदर चला गया। वह अपने बेटे पर क्रोधित हो गए। घोड़े ने अपनी गर्दन और आगे बढ़ा ली। उन्होंने उसे खोल दिया और रस्सी से उसे रगड़ा। उन्होंने सोचा कि अगर उसे धो दिया होता तो अच्छा होता। लेकिन उन्हें जल्द ही एहसास हो गया कि पानी नहीं होगा। बाद में उन्होंने सोचा कि उनके बेटे ने रथों, घोड़ों और सैनिकों को अपने अधीन एक सुव्यवस्थित गठन में रखकर सही किया था, ताकि वे किसी भी समय

युद्ध में उतरने के लिए तैयार रहें। लेकिन उनका क्रोध बरकरार रहा क्योंकि उनका बेटा बिना चेहरा धोए और ब्राह्मण के लिए आवश्यक रीति-रिवाज किए बिना घोड़े पर सवार होकर चला गया था। अब उन्हें पूरा यकीन हो गया था कि उनका बेटा कभी भी सच्चा ब्राह्मण नहीं बन पाएगा। नौकर दरवाजे पर फिर प्रकट हुआ। द्रोणाचार्य को याद आया कि नौकर ने कहा था कि अगर दूध को दोबारा उबाला गया तो वह फट जाएगा और शाम तक दूध की आपूर्ति नहीं होगी। सेना, रथों, घोड़ों, हाथियों और अन्य कर्मियों की कल्पना करते हुए, उन्हें शाम तक भी दूध मिलने की उम्मीद नहीं रही। भीतर कहीं से एक आवाज ने द्रोणाचार्य को चेतावनी दी कि शायद यह आखिरी मौका होगा जब वह दूध के साथ भोजन करने का सुख भोगेंगे। जानवर की गर्दन को लगभग आठ बार तेजी से रगड़ने के बाद, उसने घोड़े को बांध दिया। फिर दरवाजे पर पहुँचकर उसने कहा, "थोड़ा पानी लाओ। मैं हाथ धोकर फिर खाना खाने बैठूंगा।"

उन्हें दूध में पकाए हुए चावल हमेशा पसंद थे। लेकिन अब उन्हें समझ आ गया था कि पानी में पकाए हुए और फिर दूध में मिलाए हुए चावल दूध में पकाए हुए चावल के मुकाबले कहीं भी स्वादिष्ट नहीं थे। यह कल शाम का दूध था। जैसे ही उन्हें एहसास हुआ कि इस तरह इस्तेमाल न करने पर दूध फट जाता, उन्होंने खाना स्वीकार कर लिया। उनके जबड़े और दाढ़ के दांत अभी भी चावल चबाने के लिए काफी मजबूत थे। लेकिन उनके नुकीले दांत गायब थे—कब से? उन्होंने खुद से पूछा। दस साल, नहीं नौ साल। जैसे ही उन्होंने थाली में चावल डाले और खाना शुरू किया, उन्हें अपने बेटे की याद आ गई। गुस्सा फिर लौट आया। वह बहुत कम ही अपने बेटे के बिना खाना खाते थे। और उनका बेटा जानता था कि उनके पिता को उनके बिना खाना पसंद नहीं था। आज, उन्होंने सोचा कि क्षत्रियों की सुविधा ही मायने रखती है। ब्राह्मण तो अपने अनुष्ठान स्वयं करने की प्रथा को लगभग भूल ही चुके थे। अब वे अनुष्ठान करने के लिए पुजारियों को बुलाने लगे थे। उन्होंने मन ही मन कहा, "शायद इन्होंने स्नान करना भी छोड़ दिया है। इतनी रात हो गई है और अश्वत्थामा ने अभी तक अग्नि-पूजा नहीं की है। मैंने कैसा पुत्र उत्पन्न किया है! मुझे उसी कमरे में भोजन करना चाहिए था जहाँ अग्नि-पूजा हुई थी। इस कमरे में घोड़े के गोबर की दुर्गंध मेरी नाक में चुभ रही है। या फिर यह भी मानव मल है? और इन योद्धाओं में इतनी स्वच्छता की समझ नहीं है कि वे शौच के लिए दूर जा सकें। लेकिन जब सेना हर जगह है, तो वे कितनी दूर जा सकते हैं? मुझे

यकीन नहीं है कि वह भोजन के लिए घर लौटेंगे। शायद उन्होंने दुर्योधन के तम्बू में, कर्ण के तम्बू में या दुस्साना के तम्बू में ही भोजन कर लिया होगा। खैर, किसी और जगह पर ही! मैं जानता हूँ कि वह इतने लंबे समय तक भोजन से दूर रहने वाले नहीं हैं..." इस विचार से द्रोण का व्याकुल मन शांत हुआ। लेकिन जल्द ही अग्नि-पूजा किए बिना हर जगह भोजन करने के कारण उनके प्रति क्रोध फिर से जागृत हो गया। उन्हें यह जानकर दुख हुआ कि जनेऊ धारण करने के समय से लेकर मृत्यु तक अनुष्ठानिक अग्नि की रक्षा करने की प्रथा शायद लुप्त हो जाए। वे भोजन नहीं कर सके। भोजन का आनंद नहीं ले सके। लेकिन वे चावल बर्बाद करने के विरुद्ध थे। वे इस प्राचीन कहावत में विश्वास करते थे कि भोजन को अस्वीकार करना उसका अपमान करना है। लेकिन अश्वत्थामा का नियम कुछ और ही था। वे अक्सर अधिक भोजन मांगते थे, और तीसरी बार भोजन लेते समय उन्होंने अपनी आवश्यकता का गलत अनुमान लगाया। चावल बर्बाद हो गया, थाली में बिना इस्तेमाल किए पड़ा रहा, जिसे कचरे के रूप में फेंक दिया गया। द्रोण ने अपने पुत्र को लगातार नसीहत और फटकार के बावजूद चावल बर्बाद करने के लिए शाप दिया। उन्होंने मन ही मन पूछा, "ऐसे व्यक्ति के बारे में क्या कहा जाए? क्या वह मानसिक रूप से मंदबुद्धि है, बुद्धि के मामले में बैल के स्तर पर अटका हुआ है? या फिर, हाँ। या क्या ऐसा हो सकता है कि उसने प्रतिष्ठा के लिए भोजन बर्बाद करने की क्षत्रियों वाली आदत अपना ली हो? क्या वह मुझसे डरता है और इसलिए केवल मेरी गालियाँ सुनना पसंद करता है, इसलिए वह मुझे बातें समझाने से कतराता है?" द्रोणाचार्य को शक था कि उनका पुत्र क्षत्रिय रीति-रिवाजों का पालन कर रहा है, इसलिए वे इसकी जाँच करना चाहते थे। उनका दाहिना हाथ अपने आप चलने लगा। उन्होंने चावल थाली में उंडेल दिए और थाली खाली कर दी। फिर उन्होंने चावल खाकर हाथ धोने के लिए बाहर चले गए। आदमियों, घोड़ों, हाथियों और रथों के शोर के बीच उन्हें ढोल की आवाज़ साफ़ सुनाई दी। उनकी जिज्ञासा तुरंत जाग उठी। उन्होंने मन ही मन कहा, "क्या ढोल की आवाज़ युद्ध शुरू होने का संकेत है? इसका मतलब है कि भीष्म ने मुझसे सलाह लिए बिना ही युद्ध का समय तय कर लिया है।" इस विचार से ही उन्हें अपमानित महसूस हुआ। उन्होंने संदेश को बहुत ध्यान से सुना। लेकिन कोई संदेश नहीं था, केवल ढोल की आवाज़ थी। ढोल की आवाज़ अन्य शोरों में घुलमिल गई थी। द्रोणाचार्य ने थाली धो रहे

सेवक से पूछा, "हव्य, बाहर कुछ घोषणा हो रही है। क्या तुमने ढोल की आवाज़ सुनी? जल्दी जाओ और पता लगाओ कि क्या हो रहा है।"

अपने वस्त्र ठीक करते हुए हव्या काम करने के लिए दौड़ पड़ा। द्रोण मन ही मन सोचने लगे, "यह बूढ़ा मुझे नाम का गुरु तो कहता है, पर जब भी कोई अहम फैसला लेना होता है, तो मुझे दूर रखता है। धृतराष्ट्र के साथ भी ऐसा ही है। यहां तक कि दुर्योधन, जो खुद को मेरा शिष्य कहता है, वह भी कोई बेहतर नहीं है।" फिर वे पूजा की भट्टी के सामने बैठ गए। उसकी सुगंध के कारण घोड़े के गोबर की दुर्गंध दूर ही रही। गहरी सांस लेते हुए उन्हें जम्हाई आई। बचपन से ही उन्हें भोजन के बाद झपकी लेने की आदत थी। उन्होंने पास पड़ी चटाई को बिछाया और अंगड़ाई ली। ढोल की आवाज बंद हो गई थी। या नहीं? उन्हें हल्का सा आभास हुआ कि कुछ घोषित किया जा रहा है। उन्होंने सोचा कि अश्वत्थामा का यह कथन कि उसके कान कमजोर हो रहे हैं, शायद सच था। उन्होंने एक बार फिर जम्हाई ली। फिर उन्होंने आंखें बंद कर लीं। बाहर घोड़े ने हिनहिनाया। उनके शरीर में दर्द हो रहा था, शायद शिविर में जीवन गतिहीन होने के कारण। उन्हें नींद आ रही थी।

तभी हव्या लौट आया। पास आकर उसने बताया, "वे घोषणा कर रहे हैं। वे कह रहे हैं कि नियोग से जन्मे वे पाँचों लोग कुरु वंश के बिल्कुल भी नहीं हैं। पांडव हम पर आक्रमण करने आ रहे हैं। जो लोग कुरु वंश की पवित्रता की रक्षा को धर्म मानते हैं, उन्हें हमारे साथ रहना चाहिए। जो लोग मानते हैं कि न्याय पांडवों के पक्ष में है, वे उनके खेमे में शामिल हो सकते हैं। जो लोग इस विवाद में नहीं पड़ना चाहते, वे अपने घर वापस जा सकते हैं। ढोल बजाते हुए घोषणाकर्ता हाथी की पीठ से यह बात कह रहा है।"

द्रोणा को एहसास हुआ कि यह घोषणा उनके सहयोग से लिए गए निर्णय के अनुरूप थी। इसका अर्थ यह था कि उन्हें बाहर रखने का कोई निर्णय नहीं लिया गया था। परिणामस्वरूप उनकी असंतुष्टि काफी कम हो गई। मन ही मन "ठीक है" कहते हुए वे एक तरफ मुड़े और सो गए। हालांकि दांतों के बीच से आती खर्राटे की आवाज ने उनकी नींद में खलल नहीं डाला, फिर भी गहरी नींद में जाने से पहले वे तीन बार करवट बदले और चेहरा ऊपर की ओर करके सो गए।

जब वह उठा और शरीर को हिलाया, तो उसने देखा कि हव्या रसोई के दरवाजे पर खड़ा है। द्रोण ने सोचा कि वह कुछ कहने का इंतजार कर रहा है। उसने हव्या से पूछा, "क्या बात है?" हव्या दो कदम आगे बढ़ा, उसके चेहरे पर भय और भक्ति

भाव थे और उसने कहा, "उन्होंने यह विकल्प दिया है कि जो लोग इसमें शामिल नहीं होना चाहते, वे घर लौट सकते हैं। मैं घर लौटने के बारे में सोच रहा था, और मुझे आपकी अनुमति चाहिए थी।"

द्रोणाचार्य को उसकी बातों का अर्थ तुरंत समझ नहीं आया। उन्होंने उससे स्पष्टीकरण मांगा, जो उसने दिया।

द्रोणा ने कहा, "तुम डरपोक हो। विकल्प सैनिकों के लिए घोषित किए गए थे, तुम्हारे जैसे लोगों के लिए नहीं।"

हव्या, "पर जब युद्ध चल रहा होता है, तो क्या केवल सैनिक ही अपनी जान गंवाते हैं? दुश्मन हमारे तम्बुओं पर भी हमला करते हैं। वे शिविर में आग लगा देते हैं। मैं सैनिक नहीं हूँ, यह सच है, लेकिन अगर मैं चिल्लाकर कहूँ कि मैं तो बस एक नौकर हूँ, सैनिक नहीं, तो उस उत्तेजना और अफरा-तफरी में कौन मेरी बात सुनेगा? और अगर वे सुन भी लें, तो कौन इतना धैर्य रखेगा कि मेरे साथ भेदभाव करके मुझे बख्श दे?"

द्रोण ने कहा, "लेकिन इस युद्ध में ऐसा नहीं होगा। दोनों पक्षों ने इस नियम का पालन करने पर सहमति जताई है कि केवल युद्ध में सक्रिय रूप से शामिल लोगों पर ही तीर या अन्य हथियारों से हमला किया जा सकता है। इसलिए, साहस और आत्मविश्वास बनाए रखें।" लेकिन मन ही मन उन्हें इस समझौते के पालन को लेकर गहरा संदेह था।

हव्या ने भी इसी संदेह को दोहराते हुए कहा, "महान गुरुदेव, क्या आपको सचमुच लगता है कि जब लोगों का गुस्सा भड़क उठता है, तो उनके पास नियमों के लिए समय होता है? कृपया इस बात पर क्रोधित न हों कि मैंने आपकी उपस्थिति में युद्ध के बारे में बात करने का साहस किया है।"

जब द्रोण राजकुमारों को धनुर्विद्या सिखाने के लिए पहली बार हस्तिनावती पहुंचे, तो हव्या के पिता को उनके घर में नौकर के रूप में नियुक्त किया गया। उनका नाम नल था। द्रोण की पत्नी उस समय जीवित थीं, लेकिन वे नाबालिग थीं। नल खाना बनाते थे। हव्या तब आठ वर्ष का लड़का था। उसे घोड़ों को चराने का काम सौंपा गया था। नल की मृत्यु के बाद, द्रोण ने हव्या को घोड़ों को चराने के काम से मुक्त कर दिया और उसे रसोई में रसोइया के रूप में काम पर लगा दिया। इस काम के कारण हव्या को कुछ हद तक स्वतंत्रता मिली।

फिर भी द्रोण क्रोधित हुए। लेकिन उन्हें यह भी लगा कि हव्या की बातें सच हैं। वे पद्मासन में बैठ गए और ढोल बजाकर घोषित विकल्पों के परिणामों पर विचार करने लगे। उन्होंने सोचा कि कितने लोग शत्रु के पक्ष में चले जाएंगे और कितने अपने घर लौट जाएंगे। बेशक, हस्तिनावती के सैनिकों के ऐसा करने का कोई सवाल ही नहीं था। वे दुर्योधन के ऋणी थे, क्योंकि दुर्योधन ने ही उन्हें भोजन दिया था। द्रोण यह अनुमान लगाने लगे कि कौन से शासक रुकेंगे और कौन चले जाएंगे। तभी उन्होंने देखा कि हव्या अभी भी वहीं खड़ी है। उन्हें एहसास हुआ कि उन्होंने हव्या के प्रश्न का उत्तर नहीं दिया था।

द्रोणाचार्य ने कहा, "हव्य, तुमने इतने दिनों तक राजा दुर्योधन का भोजन किया है। इस नाजुक समय में यदि तुम उसे त्याग दोगे तो यह धर्म का उल्लंघन होगा।"

हव्या चुप रहा। द्रोण ने सोचा कि उनके शब्दों का असर हव्या के मुंह पर हुआ है। उन्होंने एक बार ज़ोर से जम्हाई ली और आदेश दिया, "मेरे लिए थोड़ा पानी लाओ।" हव्या द्वारा लाया गया पानी से भरा प्याला लेकर वे बाहर गए और अपना मुंह धोया। लौटकर वे चटाई पर बैठ गए और बचा हुआ पानी पी लिया। हव्या ने प्याला रसोई में वापस रख दिया, लेकिन वे अपने स्वामी के पास आकर खड़े हो गए। द्रोण ने उन्हें देखने के लिए पीछे मुड़कर देखा और महसूस किया कि उनके शब्दों से उनका मुंह बंद नहीं हुआ था।

उन्होंने हव्या से पूछा, "क्या बात है?" हव्या ने अत्यंत विनम्रता से उत्तर दिया, "मैंने आपकी सेवा की है और आपका भोजन खाया है। मैं अभी भी खा रही हूँ। महाराजा दुर्योधन का भोजन नहीं। इसके अलावा, जब आप कहते हैं कि पांडव कुरु वंश के नहीं हैं, तो धर्म की देवी इसे कैसे स्वीकार कर सकती हैं? मुझे याद है कि मेरे मामा का एक दामाद खांडवप्रस्थ के महल में सेवा करता था। पांडवों के राज्य खोने के बाद, वह हस्तिनावती आया। मैं वही दोहरा रही हूँ जो उसने मुझसे कहा था। अनुष्ठान और रीति-रिवाज निभाने में पांडव भाइयों में सबसे बड़े, धर्मराज की कोई बराबरी नहीं कर सकता। खैर, छोड़ो। मैं धर्म की बारीकियों पर चर्चा करने में सक्षम नहीं हूँ। आखिर मैं एक वैश्य हूँ। एक ऐसा व्यक्ति जो भूमि बोने, खेती करने और फसल काटने से अपना जीवन यापन करता है। मैं आपकी सेवा में पली-बढ़ी हूँ। मुझे इस युद्ध में बेवजह क्यों उलझना चाहिए?"

उसने गर्दन घुमाई और हव्या का चेहरा देखा। व्यथित होकर हव्या ने कहा, "सच कहूँ तो, मुझे युद्ध के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। अब मुझे अपनी पत्नी और

बच्चों की याद सता रही है। अगर मैं मर गया तो उनका क्या होगा?"

द्रोण ने हव्या को ध्यान से देखा। हव्या कुछ देर तक वहीं खड़ा रहा, उसकी निगाहें झुकी हुई थीं। फिर वह रसोई में चला गया। लेकिन द्रोण की शांति भंग हो गई थी। हव्या के कहे हुए सारे शब्द उसकी स्मृति में गूंज रहे थे। द्रोण हव्या के इस विचार से प्रसन्न थे कि धर्म की देवी इस बात को स्वीकार नहीं करेंगी कि पांडव कुरु वंश से संबंधित नहीं हैं। यदि दुर्योधन ने प्रतिद्वंद्वी राजाओं के आधार पर ही पांडवों को उनका राज्य देने से इनकार कर दिया होता, तो द्रोण को कोई आपत्ति नहीं होती। लेकिन वह इस तर्क को पचा नहीं पा रहे थे कि नियोग से जन्म लेने के कारण वे वंश के वैध सदस्य नहीं हैं, क्योंकि उन्होंने नियोग को एक स्वीकृत आर्य प्रथा माना था, जो पूरी तरह से वैध थी। साथ ही, वे खुले तौर पर उसका विरोध करने की स्थिति में भी नहीं थे। उन्होंने गहरी सांस ली और मन ही मन कहा कि नियोग अनादि काल से चली आ रही एक प्रथा है। सांस लेते हुए उन्होंने चूल्हे की मनमोहक सुगंध को महसूस किया। उनके मन में अतीत की यादें उमड़ आईं। उन्हें एक नई बात पता चली। जब भी वे गहरी सांस लेकर किसी सुगंध को ग्रहण करते, उनकी स्मृति जागृत हो जाती। उन्होंने स्वयं से पूछा, "सूंघने और याद करने के बीच क्या संबंध है?" उनकी नाक एक बार फिर अनुष्ठानिक अग्नि की सुगंध को ग्रहण करने लगी। द्रोण ने सोचा, "यह अग्नि की गंध मेरी उत्पत्ति, मेरी जड़ों, मेरे पूर्वजों की गंध है। मैंने इसे पूरी तरह से त्यागकर धनुर्विद्या को अपनाया। मुझे याद है मेरे पिता भारद्वाज के मित्र सत्यव्रत ने क्या कहा था। वे मुझसे कितना प्रेम करते थे! लगता है एक बार पिता गंगाद्वार में स्नान कर रहे थे। नदी के ऊपरी भाग में एक अप्सरा भी स्नान कर रही थी। उसकी सुंदरता किसी मिश्रित नस्ल से उत्पन्न हुई थी, जो किसी विशेष प्रकार से मोहक थी। वह एक देव पुरुष और गंधर्व या विद्याधर जनजाति की स्त्री के मिलन से जन्मी थी। नृत्य, गायन और प्रेम-क्रीड़ा में उसकी कुशलता और कलात्मकता ने उसकी सुंदरता को कई गुना बढ़ा दिया था। वह किनारे पर लौट आई, धूप और हवा में अपने शरीर को सुखाया और उसे एक कपड़े से लपेट लिया। शायद वह अपनी सुंदरता में इतनी मग्न थी कि उसने नदी के निचले भाग में स्नान कर रहे पिता को देखा ही नहीं। पिता का कामुक रूप से उत्तेजित होना स्वाभाविक था। जब पिता ने उससे प्रेम निवेदन किया, तो उसने स्पष्ट रूप से इनकार कर दिया और चली गई। ये आदिवासी स्त्रियाँ! क्या वह आर्यों का कोई राजकुमार या राजा था? लोककथाओं में, वे उन्हें बहलाने और हमेशा के लिए

गुलाम बनाने के लिए अपनी सारी चालाकी और धूर्तता का इस्तेमाल करते थे। भला उस आदिवासी लड़की में इतनी शिष्टाचार की बात कैसे हो सकती थी कि वह जटाधारी ऋषि की इच्छा पूरी करे? हाँ, मुझे अब उसका नाम याद आ गया है - घृतची। द्रोण ने एक बार फिर गहरी साँस ली। पिता ने चाहे कितनी भी मिन्नतें कीं, उसने उन्हें अपना शरीर देने से इनकार कर दिया और इतनी निर्दयी थी कि पहाड़ियों पर चढ़कर अपने लोक में विलीन हो गई। उसके जिस्म की तीव्र लालसा से तड़पते इस पुरुष को क्या करना चाहिए था? एक क्षत्रिय राजा उसे रोक देता या अपने बाणों से धमकाकर उसके साथ ज़बरदस्ती करता। पिता, जो शांत स्वभाव के थे, ऐसा कभी नहीं कर सकते थे। वे स्वभाव से बहुत कोमल और शांत थे। मुझे अच्छी तरह याद है कि वे मुझे कितनी बार सलाह देते थे कि किसी भी परिस्थिति में क्रोध नहीं करना चाहिए। लेकिन उनका और मेरा स्वभाव अलग था, शायद एक-दूसरे से बिलकुल विपरीत। अभी भी गीले कपड़ों में, वे अप्सरा को पहाड़ियों के पार विलीन होते हुए देख रहे थे, तभी संयोग से एक कुम्हार वहाँ आ गई। वह उस परिवार से थी जो अनुष्ठानों और रीति-रिवाजों में सहायता करने में माहिर था। उसका नाम क्या था, उस स्त्री का नाम जो मेरी माँ बनी? कौन मुझे उसका नाम बता सकता है? मुझे उसे देखने की कोई याद नहीं है। जब मैं पाँच साल का था, तो पिता मुझे उससे दूर ले गए और कहा, 'यह मेरी संतान है। इस बच्चे के सिवा कोई और नहीं है जो...' मेरे ज्ञान और विद्या को संरक्षित और प्रचारित करने में मेरा उत्तराधिकारी कौन हो सकता है? कृपया उसे मेरे हवाले कर दीजिए। मैं उसे ले जाऊँगा।' खैर, वह मुझे अपने साथ ले गया। मुझे इन सब बातों की याद धुंधली सी है। मुझे उसका नाम नहीं पता। मुझे उसके चेहरे का आकार और बनावट याद नहीं है। मुझे याद है कि सत्यव्रत ने एक दिन मुझसे कहा था, 'तुम्हारा चेहरा तुम्हारी माँ जैसा है, तुम्हारे पिता जैसा नहीं।' जब पिता ने उससे विनती की, 'हे स्त्री! मैं कामोत्तेजना से व्याकुल हूँ। मुझे लगता है मैं नरक में हूँ। तुम अकेली हो। मुझे तुम्हें अपने बल से वश में करने की कोई इच्छा नहीं है। मैं तुमसे विनती करता हूँ कि मुझ पर दया करो और मुझे अपना शरीर दो।' उस पर दया करके, वह उसके साथ सोने के लिए राजी हो गई। फिर उसने मुझे गर्भ धारण किया, जन्म दिया, पाला-पोसा और पाँच साल की उम्र तक मेरा पालन-पोषण किया। जब वह मुझे उससे लेने आया, बीज के फल पर अपना अधिकार जताते हुए, उसने रोते हुए भी मुझे सौंप दिया। मुझे उसे देखने की याद नहीं है। मैं उसे नहीं जानता। नाम। बीज का

नाम महत्वपूर्ण है; मिट्टी का नाम मायने नहीं रखता। फिर भी मैं उसके चेहरे के बारे में सोच सकता हूँ। उसका चेहरा बिल्कुल मेरे जैसा था। मैं जवानी में भी ऐसा ही दिखता था। मेरा चेहरा तो हड्डियों का ढाँचा ही है।" द्रोण को अचानक कुछ याद आया। उन्हें याद आया कि भीष्म की माता भी उसी पर्वतीय क्षेत्र से थीं। इसीलिए भीष्म के सात बड़े भाई गंधर्व वंश के सदस्य बने। क्योंकि उनका वंश बच्चे को बीज से नहीं, बल्कि माता, यानी मिट्टी से जुड़ा मानता था। द्रोण ने सोचा, "मान लीजिए कि देवलोक की उस स्त्री ने पिता को कृपा दी होती, मान लीजिए कि मैं उस घृतची का पुत्र होता, तो मुझे यकीन है कि वह मुझे पिता को नहीं सौंपती। तब मैं क्या होता? और कहाँ होता?" इस विचार से ही वृद्ध गुरु स्तब्ध रह गए। उनका बचपन कष्टों से भरा था, गरीबी में बीता, फिर गुरु का पद प्राप्त हुआ, दूसरों का चावल खाने की मजबूरी रही, इत्यादि। संक्षेप में, यही उनका जीवन था। लेकिन वहाँ, देवलोक में, उनकी दुनिया बिल्कुल अलग होती। उन्होंने सोचा, "शायद मेरे कई भाई-बहन रहे होंगे। एक पिता या कई पिता, लेकिन सभी की पहचान तो निश्चित रूप से हो सकती थी।" तभी द्रोण का मन भटक गया और उस अथाह अंधकार में विलीन हो गया। उनका आंतरिक अंधकार बाहरी अंधकार में विलीन हो गया। वे किसी मूर्ति की तरह स्थिर बैठे रहे। फिर अनजाने में ही वे दाईं ओर मुड़े। हव्या अंदर चला गया था। द्रोण ने सोचा, "शायद वह अपना भोजन कर रहा है।" लेकिन उनका मन एक ऐसी धारा की तरह हो गया था जो रेगिस्तान में भटककर वहीं सूख गई हो।

कुछ देर बाद, उन्हें बाहर घोड़ों के खुरों की आवाज़ सुनाई दी। घोड़े के तेज़ी से आने, अचानक रुकने और सवार के उतरने की कर्कश आवाज़ से वे समझ गए कि अश्वत्थामा ही हैं। गुरु के मन में घोर अंधकार छा गया, जब उन्होंने अचानक एक दरवाज़े के ज़ोर से बंद होने की आवाज़ सुनी। यह स्पष्ट था कि तंबू बनाने वालों ने उसमें रहने वालों के आकार का अनुमान नहीं लगाया था। और अश्वत्थामा के भारी-भरकम शरीर के लिए दरवाज़े बहुत छोटे थे। द्रोण ने महसूस किया कि यह तंबू किसी विशेष व्यक्ति के लिए नहीं बनाया गया था। यह तो बस एक सामान्य प्रकार का तंबू था जो एक विशेष दर्जे के लोगों - शासकों और सेनापतियों - के लिए आरक्षित था। अश्वत्थामा के चेहरे से कोई भी आसानी से समझ सकता था कि उन्होंने सुबह के स्नान और अनुष्ठान नहीं किए थे। सवार के वस्त्रों का असली रंग क्या था, यह अनुमान लगाना कठिन था, क्योंकि वे उनके शरीर से कसकर चिपके

हुए थे। उनकी सफेद दाढ़ी और सिर के बाल धूल से भूरे-भूरे हो गए थे। उसके बड़े पेट के चारों ओर कसकर लिपटा मोटा धागा पसीने से भीगा हुआ था।

"तुम बिना खाना खाए कहाँ चले गए थे?"

"मेरे रथ, घोड़े और सैनिक इधर-उधर बिखर गए थे। मैंने उन्हें ढूंढा और व्यवस्थित रूप से संगठित किया।"

"आपका भोजन?"

“मैंने अपना काम समाप्त कर लिया है। महाराजा दुर्योधन के तम्बू में।” फिर अपने पिता के पास बैठकर, पसीने की गंध से भीगे हुए, उन्होंने आगे कहा, “ऐसा लगता है कि अचानक भीष्म कृष्ण द्वैपायन से मिलने के लिए जल्दी से चले गए। महाराजा ने उन्हें समझाने की कोशिश की कि अभी शिविर छोड़ने का सही समय नहीं है, खासकर एक सेनापति के लिए। लेकिन वृद्ध योद्धा यह कहकर चले गए कि वे महान ऋषि से धर्म के एक सूक्ष्म बिंदु का स्पष्टीकरण चाहते हैं। वे कल शाम लौटेंगे और युद्ध परसों सुबह शुरू होगा। भीष्म ने यही निर्णय लिया था।”

द्रोणाचार्य की जिज्ञासा जागृत हुई। धर्म की व्याख्या करने की यह नई समस्या क्या थी? वे जानने के लिए उत्सुक थे। तब तक उनके पुत्र के पसीने की दुर्गंध पूरे कमरे में फैल चुकी थी। इसने अनुष्ठान की अग्नि में जले चंदन की मीठी सुगंध को भी दबा दिया था। गहरी साँस लेते हुए द्रोणाचार्य को घुटन महसूस हुई। उन्हें यह भी संदेह हुआ कि घोड़े के गोबर की दुर्गंध तम्बू में आ रही है। लेकिन फिर उन्होंने अपने आप को यह सोचकर फटकारा कि वे पसीने की गंध और घोड़े के गोबर की दुर्गंध में अंतर नहीं कर पा रहे हैं। उन्होंने अपने पुत्र से पूछा, "तुम कहाँ नहाए थे?"

मैंने स्नान नहीं किया है। युद्ध के दौरान ऐसी दिनचर्या कैसे निभाई जा सकती है?

"इसका मतलब है कि आप अग्नि अनुष्ठान नहीं कर सके?"

बेटे ने कोई जवाब नहीं दिया। जैसे गर्मी महसूस कर रहा हो, उसने घोड़े जैसी आह भरी। लेकिन असल में यह सर्दी के मौसम की शुरुआत थी। गर्मियाँ बीत चुकी थीं, बारिश और बाढ़ आ-जा चुकी थीं, पेड़-पौधे फिर से हरे-भरे होने लगे थे, और रातें इतनी ठंडी हो गई थीं कि कंबल ओढ़ना ज़रूरी हो गया था। और दिन सुहावने थे।

द्रोण ने शब्दों से कहीं अधिक क्रोधित होकर कहा, "क्या तुम ब्राह्मण हो या अछूत?" द्रोण को यह बात समझ आ गई और उन्होंने तुरंत इस विषय को अपने मन से निकाल दिया, और अब उनका ध्यान किसी और बात पर केंद्रित हो गया।

वह थी धर्म के उस सूक्ष्म बिंदु के बारे में उनकी जिज्ञासा, जिसके कारण भीष्म का मन व्याकुल था। द्रोण ने स्वयं से पूछा, "क्या बात है? क्या यह प्रश्न है कि नियोग से जन्मे पांडव कुरु वंश के वैध वंशज हैं?" बेशक, वे जानते थे कि भीष्म इस समस्या को लेकर गंभीर थे। और इस विषय पर भीष्म के विचार भी स्पष्ट थे। उन्हें इस मुद्दे पर कृष्ण द्वैपायन के पास जाने की आवश्यकता नहीं थी। द्रोण ने सोचा, "मेरे लिए कितना अपमानजनक है कि सेनापति होने के नाते वे युद्ध के इस समय में धर्म के किसी विषय पर चर्चा करने के लिए वन में चले गए। यह कैसे हुआ? आमतौर पर, जब भी धर्म का कोई प्रश्न उठता था, वे मुझे बुलाते थे और मुझसे चर्चा करते थे।"

लेकिन क्या यह कोई चर्चा थी? भीष्म तो लगभग एकालाप ही कर रहे थे। उन्होंने गंगा के उस पार दूसरे तट पर स्थित एक आश्रम में वेदों के अध्ययन में दस से पंद्रह वर्ष व्यतीत किए थे। और धर्म के विषय में उनकी रुचि कभी कम नहीं हुई थी। वेदों, शासन विज्ञान और प्राचीन आदर्शों से संबंधित बारीकियों पर उनकी गहरी पकड़ थी। युद्ध विज्ञान के पीछे भागते हुए मैंने बहुत पहले ही वैदिक विद्या और अध्यापन का अध्ययन छोड़ दिया था। और राजा द्रुपद के उन अपमानजनक शब्दों को सुनने के बाद मैंने वैदिक अध्ययन से पूरी तरह नाता तोड़ लिया था। फिर भी जब भी धर्म का कोई प्रश्न उठता, भीष्म मुझे बुला लेते थे। अब वे कृष्ण द्वैपायन के पास क्यों गए? उन्होंने मुझे इस यात्रा के बारे में सूचित नहीं किया। वे मुझे अपने साथ ले जा सकते थे। आज सुबह ही उन्होंने मुझसे मजाक में कहा था, 'तुम्हारा स्वभाव ब्राह्मण जैसा नहीं है। तुम क्षत्रिय क्यों नहीं बन जाते?' मुझे लगा कि उन्होंने यह बात सिर्फ मजाक में कही है। या क्या उनका सच में यही मतलब था और इसीलिए उन्होंने मुझे धर्म की चर्चा से दूर रखा? क्योंकि मैं एक कर्मठ ब्राह्मण नहीं हूँ?" फिर उन्होंने बिना किसी कारण के दो बार अपनी बैठने की मुद्रा बदली। उनकी सामान्य बैठने की मुद्रा अर्ध-पद्मासन थी। एक पैर दूसरे पैर की जांघ पर रखा होता था और तीसरा पैर ज़मीन को छूता था। जब वे अपनी बैठने की मुद्रा ठीक कर रहे थे, तभी उन्होंने अश्वत्थामा को उठकर बाहर जाते देखा। उन्होंने अश्वत्थामा को रसोई में हव्या को पुकारते हुए सुना, "हव्या, मुझे मेरा भोजन परोस दो। जल्दी करो।" द्रोण ने सोचा, "उन्होंने कहा कि उन्होंने महाराजा दुर्योधन के तम्बू में भोजन किया था, और अब वे फिर से वही भोजन करने के लिए इतने उत्सुक हैं।" वे अपने पुत्र के लालच से भलीभांति परिचित थे। हमेशा खाने की चिंता करता था, लेकिन स्नान, अध्ययन और धार्मिक अनुष्ठानों की कभी नहीं। तुरंत उनके

मन में आया, "जब मैं स्वयं वैदिक ज्ञान और धार्मिक अनुष्ठानों में रुचि नहीं रखता, तो मैं अपने पुत्र से इसकी अपेक्षा कैसे कर सकता हूँ?" इस विचार से उन्हें क्रोध आया। वे अपने पैरों को हिलाने लगे और एक बार फिर अपनी बैठने की मुद्रा बदलने की कोशिश की। उन्होंने मन में विचार किया, "पिताजी वैदिक अध्ययन और धनुर्विद्या में महान विशेषज्ञ थे। उन्होंने मुझे दोनों समान रुचि से सिखाए।" उन्होंने मुझे सलाह दी थी, 'पुत्र, दोनों में निपुणता प्राप्त करने का प्रयास करो और दोनों का अभ्यास करो। लेकिन कभी भी एक को दूसरे की कीमत पर हासिल करने की कोशिश मत करो।' वे यह बात अक्सर दोहराते थे। यद्यपि वे इन दोनों क्षेत्रों में पारंगत थे, फिर भी उन्होंने निर्भीकता से गरीबी को अपनाया। उन्होंने शक्तिशाली शासकों के दरबारों की शोभा बढ़ाने के निमंत्रण को ठुकरा दिया। वे कभी दूसरों के पास नहीं जाते थे, और जरूरतमंदों को उनके आश्रम में आना पड़ता था। उन्हें आश्रम के नियमों का पालन करना पड़ता था। वे अपनी मृत्यु तक इसी प्रकार रहे। मुझे लगता है कि वे सही थे। एक विद्वान व्यक्ति किसी विशेष राज्य का प्रजा नहीं होता, न ही किसी राजा का सेवक। उसका राज्य जंगल के बीच स्थित उसका साधारण आश्रम है। यही विद्वान व्यक्ति का आदर्श था जिसे पिता ने संजोया और व्यवहार में उतारा। उस समय और कई वर्षों बाद तक भी मैं उनके शब्दों को नहीं समझ पाया था। मुझे लगता है यही मेरा दुर्भाग्य है।" द्रोण का क्रोध शांत हो गया और इस समय तक उन्हें मानसिक शांति मिल चुकी थी। बाहर से आ रही ठंडी हवा त्वचा को तो सुकून दे रही थी, लेकिन नाक को असहनीय लग रही थी। इससे प्रेरित होकर वे पूजा की भट्टी के पास चले गए, जिसकी सुगंध बाहर की दुर्गंध को कम कर रही थी। एक गहरी साँस लेने के बाद उन्हें प्रसन्नता हुई। फिर वे अतीत में चले गए, "पिता की मृत्यु के बाद, मैं अग्निवेश के पास शिक्षा के लिए क्यों गया? गुरु के पास अनेक विद्याएँ थीं। जैसे कि बाण की कपड़े से बंधी नोक को तेल में डुबोकर प्रज्वलित करना और फिर उसे चलाना। अविश्वसनीय गति से हवा में से गुजरते समय भी लौ नहीं बुझती थी। वैसे भी, बाण की गति हमेशा हवा की गति से अधिक होती है, चाहे वह किसी भी दिशा से बहे—विपरीत, पीछे या आर-पार। मैं अग्निवेश के पास अग्नि अनुष्ठान के गुप्त सूत्र को सीखने के लिए वैदिक ऋषि के पास जाने के बजाय ज्वलंत बाण का उपयोग सीखने क्यों गया?" मैंने अपने उन सहपाठियों से दूरी क्यों बनाई जो प्रख्यात वैदिक ऋषि कृष्ण द्वैपायन के पास अध्ययन करने गए थे, और अग्निवेश के पास क्यों गया, जो तीरंदाजी के प्रसिद्ध

शिक्षक थे और अग्नि बाणों के उपयोग में विशेषज्ञ थे? दरअसल, मेरा स्वभाव ही ऐसा था। आखिरकार, व्यक्ति को अपने स्वभाव का पालन करना ही पड़ता है, और मैंने तब जो किया वह सही था।" इस विचार से उन्हें मानसिक संतुष्टि मिली। "पिता की मृत्यु के शोक को भूलकर, मैंने कितने उत्साह से अध्ययन किया! सुबह, दोपहर और शाम, शिक्षक ने मुझे उपदेश दिया, और मैंने उनसे जो कुछ सीखा, उसका मैंने चार अलग-अलग तरीकों से अभ्यास किया, जब तक कि मैंने अपने कौशल में निपुणता प्राप्त नहीं कर ली। मैंने सेना के गठन, उसकी समग्र स्थिति, उसकी गति, आक्रमण, कब्जा और रक्षा से संबंधित नई-नई तकनीकें सीखीं। अग्निवेश ने स्वयं ये तकनीकें अपने पिता के चरणों में सीखी थीं, और उनका मुझे ये सिखाना उनके पिता, उनके गुरु के प्रति उनके ऋण का भुगतान मात्र था। ऋण चुकाने की इसी इच्छा ने उन्हें मुझे इतने उत्साह और समर्पण के साथ सिखाने के लिए प्रेरित किया।" यह एक शिक्षक के सामान्य कर्तव्य से कहीं बढ़कर था। अन्यथा कोई इतनी निःस्वार्थता और पूर्णता से ज्ञान कैसे बाँट सकता है? द्रोण अपने गुरु के प्रति श्रद्धा और प्रेम से भर उठे। उन्होंने अपनी आँखें बंद कर लीं और अपने मन को स्मृति कक्ष में ले जाकर अपने गुरु को याद करने का प्रयास किया। फिर कुछ मिनटों के लिए उनका मन अपने गुरु के चित्र पर स्थिर हो गया। लेकिन बाहर से आए शोर ने उन्हें विचलित कर दिया। अश्वत्थामा रसोई में बड़े-बड़े बर्तनों में मीठा चावल का दलिया खा रहा था और अप्रिय शोर कर रहा था। उन्हें आश्चर्य हुआ कि क्या उनका पुत्र ऐसी अप्रिय आवाज़ें किए बिना खा-पी नहीं सकता। कुछ देर बाद, उनका मन बाहरी दुनिया से हटकर अपने भीतर की गहराई में चला गया। "हाँ, अब मैं समझ सकता हूँ कि द्रुपद ने मुझसे मित्रता क्यों की। न केवल नई बातें मेरे ध्यान में आ रही हैं, बल्कि पुरानी बातें भी अब एक नए रूप में, नए परिप्रेक्ष्य में दिखाई दे रही हैं। मुझे आश्चर्य है कि ये बातें अब तक मेरे मन में क्यों नहीं आईं। यह स्वाभाविक था कि मंदबुद्धि छात्र अधिक बुद्धिमानों से मित्रता करें ताकि उनकी सहायता प्राप्त कर सकें।" मेरे मामले में तो यह बात और भी सच थी, क्योंकि मैं न केवल बुद्धिमान था, बल्कि शिक्षक का चहेता भी था। न केवल मंदबुद्धि छात्र, बल्कि औसत दर्जे के छात्र भी मेरी मदद लेते थे।

द्रुपद कोई मंदबुद्धि नहीं थे। लेकिन वे औसत से ऊपर भी नहीं थे। वे कितने विनम्रता और मित्रता से मेरे पास आते थे। वे कहते थे, 'द्रोण, आपके साथ के बिना मैं यहाँ से भाग जाता। अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद आपको यहाँ अकेला

छोड़कर मैं घर कैसे लौट सकता हूँ? मैं यह वियोग कैसे सहन करूँगा? पिछले पंद्रह दिनों से मैं पानी में तैरते हुए तीर चलाना सीखने के लिए बहुत संघर्ष कर रहा हूँ। मेरा ध्यान तीर चलाने पर नहीं लग रहा क्योंकि मेरा सारा ध्यान इस बात पर है कि नाक में पानी कैसे न जाए। क्या आप मुझे विस्तार से समझा सकते हैं कि यह कैसे किया जाता है?' या 'गुरुजी मुझसे बहुत नाराज़ हैं। कृपया मेरे पक्ष में कुछ कह दीजिए। क्या आप उन्हें, अच्छा अवसर देखकर, बताएँगे कि द्रुपद मन लगाकर पढ़ाई कर रहे हैं और वे आलसी नहीं हैं।' या 'द्रोण, आप मेरे बड़े भाई के समान हैं। कहीं और रहने का निर्णय मत लीजिए। सिंहासन पर बैठने के बाद मैं आपको उसका आधा भाग भेंट करूँगा। आप अविश्वास से क्यों मुस्कुरा रहे हैं?' मैं सूर्य और चंद्रमा की कसम खाकर कहता हूँ कि मैं अपना वचन निभाऊँगा।' उनकी तरह, मेरे अन्य मित्रों ने भी मुझ पर ऐसे ही अतिरंजित मित्रतापूर्ण वादे बरसाए! उनमें सबसे अतिरंजित द्रुपद थे। ऐसा लगता है कि उनके पिता, पृषत, मेरे पिता के मित्र थे। इसलिए, हम मित्रों के पुत्र हैं। वे अक्सर कहते थे कि हम इसी कारण मित्र हैं। कई राजा पिता के आश्रम में आते थे। मुझे उन सभी के नाम याद नहीं हैं। जहाँ तक पिता की बात है, उन्होंने कभी भी उनकी मित्रता को अधिक महत्व नहीं दिया। मुझे अब लगता है कि पिता जी का विचार बुद्धिमानी भरा था।" अश्वत्थामा भोजन समाप्त करके चला गया। द्रोण ने पहले उसकी परछाई देखी और फिर उसके शरीर से उत्पन्न अंधेरा, जिसने द्वार को अवरुद्ध कर दिया था। उन्होंने उस ओर देखने के लिए मुड़ा, लेकिन तब तक उनका पुत्र जा चुका था। वह बाहर अपने घोड़े को तेज़ी से साफ़ कर रहा था। फिर उनकी नज़र सामने वाली छप्पर की दीवार पर पड़ी। उन्होंने धनुषों को एक कतार में रखा देखा। विभिन्न आकारों के बाण शस्त्रागारों में रखे थे, तलवारें, गदाएँ, कुल्हाड़ियाँ, भाले और बरछी। ऐसा लग रहा था मानो दीवार इन्हीं हथियारों से बनी हो। उनकी नज़र एक ही नज़र में सब पर पड़ गई। "अग्निवेश के अधीन अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद, जब अन्य लोग अपने-अपने नगरों के लिए चले गए, तो मैं अपनी पढ़ाई पूरी करने के लिए भार्गव की खोज में निकल पड़ा। मुझमें महत्वाकांक्षा का कीड़ा जल रहा था, और मैं सभी शस्त्रों में निपुण होना चाहता था। मैं इस सर्वोच्च महत्वाकांक्षा से प्रेरित था कि मैं यह प्रतिष्ठा प्राप्त करूँ कि संसार में ऐसा कोई शस्त्र नहीं है जिसमें द्रोण ने निपुणता प्राप्त न की हो। अग्नि बाणों में निपुणता के मामले में भार्गव अग्निवेश से भी आगे निकल गए थे।" भार्गव कुल्हाड़ी चलाने में भी माहिर थे। वे दूर-दूर तक सटीक निशाने पर

कुल्हाड़ी चला सकते थे। इसके अलावा, वे उस कुल से थे जिसने केवल ब्राह्मणों को ही युद्ध कला सिखाने की प्रतिज्ञा ली थी, क्षत्रियों को कभी नहीं। जब मैंने अपना ब्राह्मण होने का परिचय देते हुए कहा कि मैं अंगिरस गोत्र का हूँ, मेरा नाम द्रोण है और मैं भारद्वाज का पुत्र हूँ, जो एक ब्राह्मण थे, तो मुझे शिष्य के रूप में स्वीकार कर लिया गया। अगर उन्हें पता चल जाता कि मैं क्षत्रियों के प्रति उनकी घृणा को अनुचित मानता हूँ, तो मैं तुरंत निष्कासित हो जाता। उनकी निगाहें अभी भी छप्पर की दीवार के सहारे रखे हथियारों के ढेर पर टिकी थीं। "जो थोड़ा पढ़ा-लिखा होता है, वह राजा या स्वामी बन जाता है। वह प्रशासन की बागडोर संभालता है। लेकिन ज्ञान की कई शाखाओं में पारंगत, सच्चे विद्वान, सत्ताधारियों की सेवा करके ही अपना पेट पालते हैं। या वे मेरे जैसे शिक्षक बन सकते हैं। लेकिन कभी स्वामी नहीं। यह कैसा रहस्य है!" सुंदर महल, सुख-सुविधाओं के सभी साधन, दासियाँ, उनसे विवाह करने वाली सुंदर राजकुमारियाँ—ये सब शासकों, सत्ता के धनी लोगों के लिए हैं। हालाँकि मैं शस्त्र विद्या में इतना निपुण था, फिर भी मुझे कोई सुंदर कन्या पत्नी के रूप में नहीं मिली। यह द्रोण किसी भी तरह से बदसूरत नहीं है, न ही बौना है। शायद थोड़ा दुबला-पतला है। मैं अकेले ही दस क्षत्रियों को मार गिरा सकता हूँ। मेरे बाण पलक झपकते ही उनके सिर काट सकते हैं। फिर भी, मुझे स्वयंवरों में भाग लेने का अधिकार नहीं दिया गया। सभी स्वयंवर केवल क्षत्रियों के लिए थे। वे केवल क्षत्रिय वर-वरों के विवाह के लिए होते हैं। हमारा काम केवल विवाह में पवित्र शब्द बोलने वाले पुजारी का ही रहा! बेशक, कुछ शासक ऐसे भी थे जो अकाल जैसी विपत्ति आने पर अपनी पुत्रियों का विवाह ब्राह्मण से कर देते थे ताकि विपत्ति को टालने में उनकी आध्यात्मिक सहायता प्राप्त कर सकें। फिर भी वे ऐसा बड़ी अनिच्छा से, अपनी इच्छा के विरुद्ध करते थे। अफसोस! कामुक इच्छाओं से ओतप्रोत और सभी शस्त्रों के ज्ञाता द्रोण को अपनी युवावस्था में कोई सुंदर कन्या नहीं मिली। भला, अन्यथा हस्तिनापुर के महल में सेवा करने वाले एक गरीब ब्राह्मण कृपाचार्य की बहन से उनका विवाह कैसे हो गया? यह कन्या, कृपा, तभी आकर्षक लगती थी जब मैं कामुक इच्छाओं से अभिभूत होता था! और वह घोर गरीबी में पली-बढ़ी थी। गरीबी और बदहाली के माहौल में पली-बढ़ी एक कन्या में अपने पति के प्रति प्रेम और वैवाहिक शिष्टाचार का पालन करने का साहस और साहस कैसे आ सकता था? ऐसा लगता है कि उसके पिता गौतम गोत्र के शरदवन नामक ब्राह्मण थे। मेरी ही तरह उन्होंने भी धनुर्विद्या की खोज में वैदिक

अध्ययन छोड़ दिया था। ऐसा लगता है कि एक दिन, तीर बनाने के लिए लकड़ी मुहैया कराने वाली जनजाति की एक महिला कुरु जनजाति के उसी इलाके के जंगल में पक्षियों का शिकार कर रही थी। वह अकेली थी। कामुक ब्राह्मण ने उस महिला को अपनी प्यास बुझाने के लिए बुलाया। उसने उसकी इच्छा के विरुद्ध उसके साथ ज़बरदस्ती की और उसे गर्भवती कर दिया। उसने दो बच्चों को जन्म दिया, एक लड़का और एक लड़की। वे कितने दिन साथ रहे, इसका कोई सटीक विवरण नहीं है। शायद एक दिन या एक महीना। इसके बाद वह उसे छोड़कर चला गया और फिर कभी उससे नज़र नहीं मिला। बाद में वह बहुत बीमार पड़ गई। तब उसकी मुलाकात बूढ़े राजा शांतनु से हुई और उसने बच्चों को उनकी देखरेख में सौंपते हुए कहा, 'ये आपकी प्रजा हैं। इन्हें अपने बच्चों की तरह पालिएगा।' फिर उसकी मृत्यु हो गई। शांतनु को बच्चों से बहुत प्यार था। शायद बच्चों के प्रति उसका यह लगाव इसलिए था क्योंकि पहाड़ी जनजाति की उसकी पत्नी अपने सभी बच्चों को अपने साथ ले गई थी और उन्हें अपनी माँ के घर छोड़ गई थी! कुछ दिनों बाद, मुझे नहीं पता कितने दिन बाद, बूढ़े राजा की भी मृत्यु हो गई। बच्चे महल के हाशिये पर जीवन यापन करते रहे, बचा हुआ और सड़ा हुआ खाना खाकर गुज़ारा करते रहे। उनमें अपनी माता के कबीले के लक्षण दिखाई देते थे। वे सांवले, छोटे कद के और बौने थे। दस साल बाद, पूछताछ करने के बाद, उनके ब्राह्मण पिता महल में आए और उन्हें अपने साथ ले गए। उन्होंने अपने बेटे को धनुर्विद्या सिखाई। बेटे ने छह-सात साल तक पढ़ाई की, तभी पिता का देहांत हो गया। वह अपनी बहन के साथ हस्तिनापुरा लौट आया और सूत लड़कों को शस्त्र विद्या सिखाकर जीविका कमाने लगा। उसे आचार्य, यानी शिक्षक कहा जाने लगा। उसे एक साधारण सारथी के बराबर वेतन मिलता था। किसी तरह उसने अपनी बहन का पालन-पोषण किया। गरीबी ने प्रकृति द्वारा प्रदत्त उसकी सारी सुंदरता को नष्ट कर दिया होगा। अपनी पत्नी की याद से द्रोण व्याकुल हो गए। "वह बुरी नहीं थी," उन्होंने सोचा, "लेकिन मुझसे बहुत डरती थी। वह मेरे सामने भय से कांपती थी। गरीबी ने उसे मेरे साथ सादगी से रहने का धैर्य दिया था। वह महत्वाकांक्षाओं और आकांक्षाओं से पूरी तरह रहित थी। अपने बड़े भाई कृपाचार्य की तरह। मैं अपनी पत्नी के बड़े भाई के साथ कब तक रह सकता था? और उसके घर में क्या सुविधाएँ थीं?" इतना ज्ञान और कौशल मेरे दिमाग, मेरे हाथों, मेरी उंगलियों में भरा हुआ था, फिर भी मुझे जीविका के लिए भटकना पड़ा... बाहर,

घोड़ा इतनी ज़ोर से हिनहिनाया कि उसकी आवाज़ आसमान तक पहुँच गई। फिर उसके खुरों की धमक सुनाई दी। यह सोचकर कि कहीं कोई दूसरा घोड़ा उसके घोड़े पर हमला तो नहीं कर रहा, वह दौड़कर सामने के दरवाजे पर गया और अपने बेटे अश्वत्थामा को देखा। उसका शानदार घोड़ा अपने पिछले पैरों पर खड़ा था, अपने अगले पैरों को हवा में ऊँचा उठाए हुए। उसने अपने हाथों से सहारा देकर उसे इस तरह खड़ा किया था। भ्रमित घोड़ा पागलों की तरह हिनहिना रहा था। द्रोण ने सोचा कि उसका पचपन वर्षीय बेटा जानवर को ऐसे सता रहा है जैसे कोई पंद्रह वर्षीय लड़का किसी पिल्ले को छेड़ रहा हो। इससे उसे गुस्सा आया, लेकिन साथ ही अपने बेटे की शक्ति और साहस पर गर्व भी महसूस हुआ। उसने अपने बेटे को कुछ हद तक मूर्ख भी समझा। वह बस वहीं खड़ा देखता रहा। अश्वत्थामा घोड़े को पकड़े हुए था। अंत में उसने घोड़े को नीचे उतारा और उसे उसके चारों पैरों पर खड़ा होने दिया। यह उसका घोड़ा था। वह अपने घोड़े के साथ ऐसे खेलता था मानो वह कोई नया घोड़ा हो जिसे वश में करना हो, और फिर उस पर सवार हो जाता था। शायद वह ऐसा अपने नाम को सार्थक करने के लिए करता था जिसका अर्थ है 'घोड़े के शरीर वाला'। उसमें घोड़े जैसी ताकत थी और उसे घोड़े बहुत पसंद थे। द्रोण को आश्चर्य होता था कि इतना शक्तिशाली पुत्र अपनी छोटी, कमजोर माँ के शरीर से कैसे पैदा हुआ। बचपन से ही वह असामान्य रूप से बड़ा था, उसके हाथ-पैर लंबे थे और शरीर सुगठित था। और उसकी माँ को इस भारी-भरकम बच्चे को संभालना मुश्किल लगता था। वह इतनी कमजोर थी कि उसे जन्म देते समय उसकी जान भी जा सकती थी! बेशक, वह ज्यादा दिन जीवित नहीं रही। उसकी मृत्यु क्यों हुई? बेशक, गरीबी के कारण। लेकिन गरीबी ने सबसे पहले नुकसान कहाँ से पहुँचाया? मुझे याद करने दीजिए। "हाँ, उस समय हम वृकास्थल में रह रहे थे। दरअसल, वृकास्थल एक पुराना नाम था। उन्होंने उस जगह को भेड़ियों का शिकार करके और उन्हें मारकर साफ किया था। मांस के लिए एक हिरण भी उपलब्ध नहीं था। मैं एक ऐसा पति था जो भीख माँगने से इनकार करता था। लेकिन रसोई का चूल्हा जलता रहना ज़रूरी था, ताकि खाना पकता रहे। इसलिए बेचारी कृपे को भीख माँगकर जो कुछ भी मिलता, उसी से हम तीनों का पेट भरना पड़ता था—मेरा, उसका और उस लड़के का। और मेरा क्या? मैं तो बस उदास होकर सिर पर हाथ रखकर बैठी रहती थी। जब पड़ोस के बच्चे कहते, 'हमने दूध पी लिया', तो छह साल का अश्वत्थामा झोपड़ी में अपनी माँ के पास

दौड़कर जाता और पूछता, 'माँ, मुझे दूध चाहिए'। वह रोता और ज़िद करता। और उसे दूध कहाँ से मिलता? वह भीख माँगकर इकट्ठा किए गए गेहूँ के आटे को पानी में मिलाकर लड़के को देती और कहती कि यह दूध है! लड़का उसे पी लेता और खुश हो जाता, जैसे सचमुच दूध पी रहा हो। लेकिन दूसरे बच्चे उसे पकड़ लेते और उसका मज़ाक उड़ाते। लड़का कुछ नहीं समझता था। लेकिन वह समझ जाती थी। शायद उसे ज़िंदगी बहुत मुश्किल लग रही थी? उसने लड़के को मुझे सौंप दिया। वह बीमार पड़ गई और दो महीने बाद उसकी मृत्यु हो गई। वह अचानक हमारी जिंदगी से गायब हो गई।

तभी मुझे अपने सहपाठी द्रुपद की याद आई, जिसने कहा था कि शिक्षा पूरी करने के बाद मेरे बिना अपने नगर में रहना उसके लिए असहनीय होगा! उसने बिना किसी उकसावे के वादा भी किया था कि वह अपना सिंहासन मेरे साथ बराबर बाँटेगा। अगर मुझे तब उसकी दोस्ती की सरासर झूठी सच्चाई पता होती, तो मैं उसके पास नहीं जाती, चाहे इसका मतलब मेरे और मेरे बेटे के लिए भूख से मरना ही क्यों न होता। खैर, मैं द्रुपद के पास गई, कभी उसे पैदल ले जाकर तो कभी उसे अपने कंधों पर उठाकर। कितने दिन लगे? मुझे कैसे याद है? पचास साल पहले की बात है। जब तक हम अपनी मंज़िल पर पहुँचे, चिलचिलाती धूप में हमारी त्वचा और चेहरा काला पड़ चुका था, हमारे कपड़े फटे हुए थे और पसीने से हमारे शरीर से बदबू आ रही थी। द्रुपद के महल में प्रवेश पाना लगभग नामुमकिन था। अपनी वंशावली और अन्य जानकारियाँ सुनाने के बाद, आखिरकार हमें प्रवेश मिल ही गया। और उन्होंने हमें पूरे दरबार में देखना पसंद किया, न कि किसी एकांत कमरे में, अपने सिंहासन से हम पर नज़र रखते हुए, जिसका आधा हिस्सा मुझे देने का वादा किया गया था!

"मेरे शब्द क्या थे? मैंने कहा, 'मित्र यज्ञसेना द्रुपद, मैं तुम्हें ढूंढते हुए आया हूँ। मुझे नहीं पता था कि तुम अब सिंहासन पर हो। तुम्हारे पिता का निधन कब हुआ? कृपया पहले इस भूखे लड़के के भोजन का प्रबंध कर दो, फिर हम बात कर सकते हैं। और बात करने के लिए बहुत कुछ है।' मैं भावुक होकर उनके करीब गया। लेकिन उनके पहले शब्द, जो मेरे कानों को चुभ गए, थे, 'पहरेदार, तुमने इस आदमी को दरबार में कैसे आने दिया, बिना यह बताए कि ऐसे अवसर पर कैसे व्यवहार करना है और क्या कहना है?' मुझे लगा जैसे मेरा सिर चकरा रहा हो। लेकिन मैंने किसी तरह कहा, 'क्या तुम मुझे पहचानते नहीं? तुम मुझे अपना बड़ा

भाई कहते थे। मैं कोई और नहीं बल्कि द्रोण हूँ, अग्निवेश का प्रिय शिष्य और तुम्हारा घनिष्ठ मित्र।' द्रुपद ने कहा, 'हाँ, मैं देख रहा हूँ कि तुम मेरे गुरु के शिष्य हो। लगता है उन्होंने तुम्हें केवल तीरंदाजी सिखाई है। कितनी अफ़सोस की बात है कि उन्होंने तुम्हें शिष्टाचार नहीं सिखाया। तुम्हें यह नहीं सिखाया कि किसके साथ कैसा व्यवहार करना है।' कितना अहंकार! वह तुरंत गंभीर हो गए, और बोले, "यदि तुम दयनीय स्थिति में हो, तो मुझे तुम्हें शरण देने में कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु शर्त यह है कि तुम मेरे साथ मित्रता जताने और मुझे बराबरी का दर्जा देने का यह व्यर्थ का व्यवहार छोड़ दो और दरबार में मेरा आदर और भय मानो। संतरी, इन्हें नौकरों की रसोई में ले जाओ और इन्हें भोजन कराओ।" भला द्रोण ने अपमान और तिरस्कार कब सहन किया है? मैंने उन्हें उत्तर दिया, "हे यज्ञसेन, यदि मैं तुम्हारा अहंकार नहीं तोड़ता, तो मैं अग्निवेश का शिष्य नहीं हूँ।" मैं तुरंत अपने पुत्र को साथ घसीटते हुए वहाँ से चला गया। मुझे आश्चर्य होता है कि क्षत्रियों का अहंकार कब चूर-चूर होगा! बेशक, द्रुपद कोई अपवाद नहीं थे। यह तो सभी शासकों का स्वभाव है।

एक बार फिर, अनेक देशों की यात्रा पर निकल पड़ा। इसी तरह भटकते हुए मेरे मन में एक विचार आया। नहीं, सटीक कहूँ तो, त्रिगर्थ देश के सूतों को धनुर्विद्या का प्रशिक्षण देते समय यह विचार आया। उस समय मैं जीवन-यापन के संघर्ष में पूरी तरह लीन था। मैंने स्वयं से पूछा: कब तक तुम इस तरह से, इस अनिश्चित जीवन-यापन में जीओगे? मुझे लगा कि द्रुपद द्वारा मुझ पर किए गए अपमान का बदला न लेने पर धनुर्विद्या में मेरी महारत व्यर्थ है। वहीं मेरे प्रतिशोध लेने के संकल्प ने आकार और शक्ति प्राप्त की। वहीं मुझे जीने का एक सर्वोपरि उद्देश्य मिला। इसी बीच मुझे पता चला कि मेरे बहनोई, कृपाचार्य, धृतराष्ट्र और पांडु के पुत्रों के धनुर्विद्या गुरु बन गए हैं। मैंने उन्हें दस-बारह वर्षों से नहीं देखा था। मेरे ठिकाने के बारे में कौन जानता था? और उनके सिवा और कौन जानने का हकदार था? कृपाचार्य की स्मृति ने कृपा की स्मृति को जागृत कर दिया, और उनकी स्मृति उन्हें देखकर मुझे बहुत प्रेरणा मिली। मेरा बेटा मुझसे अक्सर पूछता था, 'पिताजी, आप कहते हैं कि मेरा एक चाचा है। वो मुझसे मिलने कभी नहीं आए। और आपने भी मुझे उनसे मिलने नहीं ले गए।' और अश्वत्थामा जब मुझे अपने साथ ले जा रहे थे, तो उनका नजारा अद्भुत था। उनके कंधे पर धनुष, पीठ पर बाणों का तरकश और हाथ में एक तेज कुल्हाड़ी थी। उनके साथ होने पर जंगली जानवरों— बाघ,

चीता और भालू—से डरने की कोई जरूरत नहीं थी। तब उनका शरीर इतना भारी-भरकम नहीं था जितना अब है। एक लंबा लड़का, चौड़ी छाती और मेरे जैसा दुबला-पतला शरीर।

हमारे कृपा दयालु तो हैं, लेकिन उनमें समझ की कमी है। उन्हें क्षत्रियों के अहंकार और घमंड का कोई ज्ञान नहीं है। या शायद बचपन से ही हस्तिनावती के शासकों के संरक्षण में पले-बढ़े होने के कारण उनके मन में उनके प्रति दासता का भाव विकसित हो गया था! यदि वे कुछ आश्रमों में दर्शन कर पाते, तो उन्हें गुरु के उच्च पद का ज्ञान हो जाता। वे आचार्य तो केवल नाम के ही थे। भीष्म द्वारा दी गई यह उपाधि बहुत ही साधारण थी। क्या कुरु राजकुमारों के लिए यह अपमानजनक नहीं होता कि उन्हें कोई ऐसा व्यक्ति शिक्षा दे जो आचार्य पद का न हो? कृपा को अपने आत्मसम्मान से अधिक वेतन और सुविधाओं की चिंता थी। उन्हें उतना ही वेतन मिलता था जितना पचास घोड़ों के रखवाले को मिलता था। लेकिन वे इस मामूली वेतन को भी एक बड़ा वरदान मानते थे। वे इस बात से अत्यंत प्रसन्न थे कि सूतों के गुरु से पदोन्नत होकर वे धृतराष्ट्र और पांडु के पुत्रों, राजकुमारों के गुरु बन गए थे। जब हम उनसे मिले, तो उन्होंने अपने खास अंदाज़ में कहा, 'जीजाजी, हमें काफी छात्रों को पढ़ाना है। आप तो वैसे भी कई शस्त्रों में माहिर हैं। क्यों न आप मेरे साथ इस काम में भागीदार बन जाएं? मैं भीष्म से मिलूंगा, उन्हें बताऊंगा कि आप मेरी बहन के पति हैं, और उन्हें आपको नियुक्त करने के लिए मना लूंगा। वे बहुत दयालु हैं। मुझे यकीन है कि वे मना नहीं करेंगे। आपको रहने के लिए घर, पर्याप्त अनाज, दूध देने वाली गाय और कुछ वेतन मिलेगा। क्या इतना काफी होगा? मैं तो कुंवारा ही रहा हूं। चलिए साथ रहते हैं, अलग-अलग चूल्हे लगाकर चिमटी से आग जलाने की कोशिश में अपना चेहरा कालिख से न काला करें!' आज भी वे वैसे ही हैं। अपनी बहन की तरह। कोई बड़ी महत्वाकांक्षा या आकांक्षाएं नहीं। बस उन्हें आचार्य कहिए, वे संतुष्ट हो जाते हैं, उनका चेहरा खुशी से खिल उठता है। अगर मैं इस प्रस्ताव को मान भी लेता, तो कोई खास फर्क नहीं पड़ता – त्रिगर्थ के बजाय यहां मजदूरी करना पड़ता। बस इतना ही। इस द्रोण ने तो पेट भरने के अलावा कुछ हासिल ही नहीं किया होगा। मैं कृपा के साथ गया और भीष्म को आदरपूर्वक प्रणाम किया। उन्होंने कितना अहंकार और घमंड दिखाया! वे आजीवन ब्रह्मचारी थे, वैदिक विद्या के ज्ञाता थे, एक वीर योद्धा थे जिन्होंने काशी राजा की पुत्रियों के स्वयंवर में क्षत्रिय दूल्हों की पूरी भीड़ को हराकर अपने सौतेले भाइयों के

लिए तीनों कन्याओं को ले आए थे। वे इतने अभिमानी थे कि उनकी निगाहें हमेशा आकाश की ओर ही रहती थीं, कभी भी अपने सामने खड़े मनुष्यों की ओर नहीं! धृतराष्ट्र और पांडु के पुत्रों द्वारा सीखा गया धनुर्विद्या का ज्ञान उनके लिए नगण्य था। जब मैंने धागे से बंधे बाण से एक गहरे कुएँ में गिरी गेंद को निकाला, तो यह उनकी समझ से परे था। कृपा के शिष्यों की उपलब्धि का यही स्तर था! खैर, उन्हें तो बस अपने पैसे का ही मूल्य मिला! किसी ने कहा, 'हे पूज्यवर, कृपया हमें इस प्रकार बाण चलाना सिखाएँ।' यह किसने कहा? अर्जुन ने? हाँ, वही होंगे। वह लड़का नई कलाओं को सीखने में स्वाभाविक रूप से प्रतिभाशाली था और तीरंदाजी की नई-नई तरकीबें बहुत जल्दी सीख लेता था। मैंने कहा, 'बच्चे, शिष्य के रूप में औपचारिक दीक्षा दिए बिना सिखाना रीति-रिवाज के विरुद्ध है।' वह मेरे चरणों में गिर पड़ा और बोला, 'मैं अभी आपके पूजनीय चरणों को स्पर्श कर आपसे विनती करता हूँ। कृपया मुझे अपना शिष्य स्वीकार करें और मुझे सिखाएँ।'

मैंने उनसे कहा, 'यह इस तरह से नहीं हो सकता, सिर्फ एक लड़के के अनुरोध से। बड़ों को आकर व्यवस्था करनी होगी।' अगले दिन सभी लड़के मुझे ढूंढते हुए उसी जगह आ गए। उन्होंने कहा, 'हमारे दादाजी ने हमें आपको उनके पास ले जाने के लिए कहा है। कृपया आइए।' मैंने कहा, 'मैं तुम्हारे दादाजी की प्रजा नहीं हूँ। इसलिए मैं उनके आदेशों का पालन करने के लिए बाध्य नहीं हूँ। अगर वे चाहें, तो मैं अभी इस राज्य को छोड़ दूंगा। इसके अलावा, मैं ज्ञान का भक्त हूँ, सत्य के प्रति समर्पित हूँ। सत्य के ऐसे साधक किसी के वश में नहीं होते, और किसी शासक के सेवक नहीं होते। तुम अभी छोटे बच्चे हो। तुम धर्म की इस सूक्ष्मता को नहीं समझोगे। मेरे कहे हुए शब्द अपने दादाजी को बता दो।' आधे घंटे के भीतर, पूज्य भीष्म दौड़ते हुए मेरे पास आए। इस प्रकार इस द्रोण का जीवन में विश्वास फिर से जागृत हुआ, और इससे उन्हें सांसारिक मामलों पर मजबूत पकड़ प्राप्त हुई। भीष्म ने कहा, "धनुष चलाने में आपकी निपुणता और धर्म के सूक्ष्म ज्ञान के बारे में सुनकर, मैं आपको धनुर्विद्या का महान आचार्य मानता हूँ। कृपया हमें धनुष-बाण चलाने में अपनी कुशलता का प्रदर्शन करें। महल आपको आपकी इच्छानुसार उपहार और पुरस्कार प्रदान करेगा।" मैंने उत्तर दिया, "महाराजा पर हमारी कृपा बनी रहे। मैं उन कलाबाजों की परंपरा में नहीं आता जो अपनी चतुराई दिखाकर पुरस्कार बटोरते हैं।" भीष्म ने कहा, "नहीं, मेरा ऐसा कोई इरादा नहीं था। क्या यह

स्थापित नियमों के अनुसार नहीं है कि किसी शिक्षक की नियुक्ति से पहले उसकी योग्यता की परीक्षा ली जानी चाहिए?”

द्रोणाचार्य ने कहा, ‘महाराज, मेरा आपके यहाँ शिक्षक बनने का कोई इरादा नहीं है। राजा द्वारा नियुक्त व्यक्ति सच्चा गुरु कैसे हो सकता है? गुरु को अपने चरणों में शिक्षा पाने के इच्छुक व्यक्तियों को स्वीकार या अस्वीकार करने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। चलिए, इस विषय को छोड़ देते हैं। आप एक श्रेष्ठ क्षत्रिय हैं। मैंने सुना है कि आप शस्त्र विद्या में निपुण हैं। आप अपनी कुशलता दिखाइए, और मैं भी अपनी। यदि कोई ऐसी बात है जो हम साझा कर सकते हैं और जिसका आनंद ले सकते हैं, तो आइए ऐसा करें।’

अंततः, भीष्म गुण को पहचानने और उसकी सराहना करने में सक्षम थे। या क्या यह मुझमें योग्यता और क्षमता की पहचान थी या अपने पोते-पोतियों को ऐसी बातें सिखाने की स्वार्थी इच्छा थी जो उन्हें किसी ने नहीं सिखाई थीं? बेशक, यह दोनों ही बातें रही होंगी। भीष्म ने कहा, “आचार्य, तुम्हें हमारे देश में रहना होगा। निवास स्थान, आचार्य के अध्ययन का स्थान, उनके अध्यापन का स्थान, उनकी आजीविका चलाने के लिए भूमि और उन्हें दिए गए उपहार, ये सब तुम्हारी संपत्ति हैं और राजा का इन पर कोई अधिकार नहीं होगा। मैं इस नियम का पालन करूंगा। मेरे पोते-पोतियों की शिक्षा पूरी होने पर, मैं तुम्हें शिक्षक शुल्क के रूप में तुम्हारी इच्छा अनुसार कुछ भी देने का वादा करता हूं। तुम्हारा आश्रम हमारे हस्तिनावती में स्थापित हो। हमारे बच्चे तुम्हारे ज्ञान से लाभान्वित हों।”

—•✳•—

बाहर अश्वत्थामा की आवाज़ सुनाई दी। उन्होंने अश्वत्थामा को कहते सुना, "मामा जी, क्या आप पैदल आए हैं?" उन्हें पता था कि कृपाचार्य आ गए हैं। उनके आने से उनकी यादों का सिलसिला टूट गया। उन्हें कुछ घृणा हुई। बेशक, यादों की इस यात्रा ने उन्हें पूरी तरह से खुश तो नहीं किया, लेकिन इसने उनका ध्यान ज़रूर खींच लिया। चाहे कोई भी क्षेत्र हो, द्रोणाचार्य मानसिक एकाग्रता की निःसंकोच प्रशंसा करते थे। उन्होंने कृपा को अपने पुत्र से कहते सुना, "पुत्र, मैं क्या करूँ? इस युद्ध की गहमागहमी में मुझे रथ कौन देगा? मैं कम से कम घोड़े पर तो सवारी करना चाहता हूँ। लेकिन मैं किसी अनजान जानवर पर कैसे चढ़ूँ, जो मुझे अपनी पीठ से गिरा सकता है?" द्रोणाचार्य ने सोचा, "उनका तम्बू कहाँ है?" उन्होंने पहले इसके बारे में नहीं पूछा था। वे भूल गए थे। उन्हें खुशी हुई कि कृपा स्वयं उनसे मिलने आए थे। द्रोणाचार्य ने अंदर से आवाज़ लगाई, "अश्वत्थामा, अपने मामा को अंदर भेजो।" उनका रंग सांवला, कद छोटा और शरीर दुबला-पतला था। वह अंदर आया और थकान से आह भरते हुए ज़मीन पर बैठ गया। उसने कहा, "कितने घोड़े, कितने रथ, कितने सैनिक! क्या राक्षसों और हमारे बीच हुए युद्ध में भी, देवताओं के स्वामी इंद्र के नेतृत्व में, इतनी विशाल सेना एकत्रित हुई थी?" द्रोण ने उसकी बात रोककर हव्य को कृपा के बैठने के लिए चटाई बिछाने का आदेश दिया। हव्य ने तुरंत चटाई ली और उसे बिछाया। फिर वह अंदर से शहद और पानी लाया। कृपा ने कहा, "ओह, मैं देख रहा हूँ कि आपको शहद दिया जा रहा है। आपके लिए एक अलग तम्बू और एक अलग सेवक दिया गया है। आप राजा के समान हैं।" फिर उसने वह पत्ता उठाया जिस पर शहद परोसा गया था।

"तुम्हारा तम्बू कहाँ है?"

कहना मुश्किल है। क्या आप उधर देख सकते हैं? बिलकुल नहीं। आप जानते हैं, वह जगह जहाँ महिष्मतीपुरा की सेना डेरा डाले हुए है। उसके आगे एक झोपड़ी है। बहुत छोटी सी। छोटी हो या बड़ी, मेरे जैसे कमज़ोर आदमी के लिए कोई मायने नहीं रखती। जब मैं रात को सो रहा था, तो हर तरह के रसदकर्मी उसमें घुस आए। वे हर समय ज़ोर-ज़ोर से खर्राटे लेते रहे और उनके शरीर से पसीने की भयानक बदबू आती रही। आपके शिविर का हिस्सा कहीं बेहतर है। आपको तो सिर्फ़ घोड़े के गोबर से काम चलाना पड़ता है। लेकिन मेरे हिस्से में हमें इंसानी मल की भयानक बदबू से जूझना पड़ता है। घोड़े के गोबर से तो कुछ खास नहीं मिलता।

"क्या आपने खाना खा लिया?" द्रोणा ने पूछा।

"इस शरीर को कहाँ से खाना मिलता है, इससे क्या फर्क पड़ता है? एक मुट्ठी भर भी ज़्यादा खाने से पेट खराब हो जाता है। मुझे तो आम सैनिकों वाला खाना दिया गया है। मेरी उम्र में क्या इतना मोटा खाना चबाना मुमकिन है? और मेरे लिए नरम खाना बनाने की मेहनत कौन करेगा? अगर मैं इसे बिना चबाए निगल जाऊँगा, तो बदहजमी और पेट दर्द हो जाएगा।"

द्रोणाचार्य के दो नुकीले दांत टूट चुके थे, एक-एक दांत दोनों सिरों पर। अगला दांत ढीला था, लेकिन उसमें दर्द नहीं था। कृपा उनसे पांच साल छोटे थे, लेकिन उनके केवल सात-आठ दांत ही बचे थे, जो ढीले और हिलते-डुलते थे। उन्होंने खुद यही कहा था। बेशक, किसी ने भी उनके मुंह के अंदर जाकर टूटे हुए दांतों की सही संख्या नहीं गिनी थी! बेचारे कृपाचार्य, जब तक वे दांत अपने आप नहीं गिर जाते, तब तक वे न तो खा सकते थे और न ही बोल सकते थे। द्रोणाचार्य अपने निजी सेवक को युद्ध में ले गए थे। हालांकि वह उनका सेवक था, लेकिन उसकी तनख्वाह और राशन महल से आता था। चूंकि कृपा को शुरू से ही अपना खाना खुद पकाने का दर्जा प्राप्त था, इसलिए उनके मामले में सेवक की आवश्यकता ही नहीं थी।

कृपा सोच रहा था, "यह तो बड़ा तम्बू है। मैं हव्या से नरम खाना बनाने को कह सकता हूँ। अगर मैं छप्पर की दीवार के पास लेट जाऊँ, तो कम से कम थोड़ी नींद तो आ जाएगी।" लेकिन इस विचार से उसे थोड़ी शर्मिंदगी महसूस हुई, जो उसके चेहरे पर साफ दिख रही थी। अब तक उसने कभी इस तरह की कोई मदद नहीं माँगी थी। द्रोणाचार्य को अपने बहनोई पर दया आ गई। हस्तिनावती में आचार्य का पद ग्रहण करने के बाद भी द्रोणाचार्य कृपा के घर में रह सकते थे। कृपा ने उन्हें ऐसा करने के लिए मनाने की कोशिश भी की थी। लेकिन द्रोणाचार्य को लगा कि अगर वे ऐसे व्यक्ति के साथ रहेंगे जिसने जीवन भर महल की दया और उदारता पर जीवन बिताया है, तो इससे आचार्य के रूप में उनकी प्रतिष्ठा कम हो जाएगी। इसके अलावा, कृपा और उसकी बहन, जिन्हें जन्म देने वाली आदिवासी महिला ने शांतनु को सौंप दिया था, को राजपुजारी ने ऐसे नाम दिए थे जो महल की दान-पुण्य पर उनके जीवन यापन का प्रमाण थे। ये नाम प्रचलित हो गए थे, ऐसे नाम जो कभी विधिवत नामकरण समारोह द्वारा नहीं दिए गए थे। कृपा गौतम वंश से संबंध होने के कारण गौतम नाम धारण कर सकते थे। लेकिन उन्होंने अपने वंश का प्रचार-

प्रसार नहीं किया। परिणामस्वरूप, हस्तिनावती के लोग, जो उनके वंश से अनभिज्ञ थे, कृपा को कृपा या राजा की कृपा के समान मानने लगे। या कभी-कभी वे इसे ईश्वर की कृपा के समान भी मानते थे! द्रोण ने उनकी ओर देखा। आराम और भोजन की कमी के कारण उनका वृद्ध शरीर जम्हाई लेने को तैयार था। वे चटाई पर उकड़ू बैठे शहद को पत्ती पर मल रहे थे।

द्रोण ने पूछा, "तुम यहाँ क्यों आए हो?" कृपा को अपना प्रश्न समझ न आने पर द्रोण ने स्पष्ट किया, "मेरा मतलब है, तुमने अपनी इस हालत में युद्धक्षेत्र में आने का चुनाव क्यों किया?" कृपा ने पत्ता नीचे रख दिया, फिर पानी पिया और होठों पर लगा शहद पोंछा। फिर उसने कहा, "महाराजा दुर्योधन ने मुझे व्यक्तिगत रूप से संदेश भेजा था, जिसमें लिखा था, 'तुम्हें युद्ध में आना ही होगा। हम वहाँ लड़ने के लिए हैं, लेकिन हम चाहते हैं कि तुम हमें आशीर्वाद दो और हमारा मार्गदर्शन करो। तुम्हें आना ही होगा।' यह उनके महान हृदय को दर्शाता है। मैं आने से कैसे इनकार कर सकता था?"

“अच्छा, उसने किन मामलों पर सलाह मांगी थी, और आप उसे मार्गदर्शन दे रहे हैं?” कृपा व्यंग्य को तुरंत समझ नहीं पाया। जी हां, प्रश्न तो वह समझ गया था, पर उसे समझ नहीं आ रहा था कि उत्तर में क्या कहे। उसे यह समझने में दो पल लगे कि उसे जवाब देना नहीं आता। द्रोणाचार्य का गुस्सा शांत हुआ और उन्होंने कहा, “जब तुम अपने हाथ-पैर भी नहीं फैला सकते और थोड़ी देर आराम भी नहीं कर सकते, तो घर क्यों नहीं लौट जाते? अगर तुम्हारी इच्छा हो, तो मैं तुम्हारे लिए रथ का इंतजाम कर दूंगा।” कृपा समझ गया कि द्रोणाचार्य यह सुझाव दे रहे थे कि उसके साथ हुए व्यवहार के प्रति अपनी नाराजगी व्यक्त करने का सबसे अच्छा तरीका घर लौट जाना है, और उसका मन किया कि वह उसी क्षण चला जाए। कृपा ने सोचा, "घर लौटकर मैं चैन से सो सकूंगा। मैं एक पूरा मग दूध पी सकूंगा। इस दुर्योधन ने ही मुझे यहाँ आने के लिए उकसाया था, और यहाँ मेरी कोई परवाह नहीं करता। मुझे लगता है वे सोच रहे होंगे कि यह बूढ़ा, कमजोर शरीर वाला आदमी युद्ध में क्या कर सकता है।" उसे याद आया कि पिछली रात उसके तम्बू में घुसने वाले लोग भी यही कह रहे थे। जब उसने लगभग घर जाने का फैसला कर लिया था, तब द्रोण ने हव्य को बुलाया और आदेश दिया, "देखो, कृपाचार्य के लिए नरम चावल पकाओ। या अगर तुम्हारे पास मक्के का आटा है, तो उसे शहद में मिलाकर दूध के साथ दे दो। क्या तुम्हारे पास दूध बचा है?"

"ज़रा सा।"

कृपाचार्य ने उत्साहपूर्वक कहा, "आपका मतलब मक्के के आटे से है? यह तो स्वादिष्ट है।" वे झोपड़ी के पिछले दरवाजे से बाहर गए और अपने पैर धोए। फिर वे रसोई में बैठ गए और मक्के का आटा, शहद और दूध खाने लगे। लेकिन उन्हें यह नहीं पता था कि दूध की कमी के कारण उसमें गर्म पानी मिलाया गया था। जब बिना चबाए खाए जा सकने वाले इस व्यंजन से उनका पेट भर गया, तो वे इसे जीभ पर रखकर और अधिक आनंद लेने लगे। उन्होंने सोचा, "बेशक, मैं वापस जा सकता हूँ। लेकिन मेरी गली के लोग क्या कहेंगे? पड़ोस की औरतें और बच्चे कहते थे कि गुरु कृपाचार्य का शरीर भले ही पतला हो, लेकिन युद्ध संबंधी मामलों में उनका दिमाग बहुत तेज था। अगर अब मैं घर लौटकर अपनी अनुपस्थिति में युद्ध होने दूँ, तो वे क्या कहेंगे? और मान लीजिए कि दुर्योधन मुझे वापस सेवा में नहीं लेता?" हव्या ने उनके विचार को बीच में ही रोकते हुए कहा, "दूध खत्म हो गया है। शहद तो बहुत है। क्या मैं आधा प्याला और डाल दूँ?" कृपा ने हाथ उठाकर नकारात्मक उत्तर दिया और कहा, "अगर मिठाई बढ़ जाए तो ऐसा लगता है जैसे चेहरा रगड़ा जा रहा हो!" फिर उन्होंने बाहर पूजा कक्ष में बैठे अपने बहनोई को पुकारते हुए कहा, "आखिर यह युद्ध है। इतने सारे लोगों की देखभाल करने में इतनी मेहनत लगती है। मुझे यकीन है कि इसीलिए महाराजा दुर्योधन मेरी व्यक्तिगत रूप से देखभाल नहीं कर पाए हैं। और शायद उन्हें इतने विशाल शिविर में मेरे ठिकाने का भी पता न हो..."

बाहर से एक बार फिर ढोल की आवाज़ आई। द्रोण ने कान लगाकर उसे सुनने की कोशिश की, यह सोचते हुए कि कहीं कोई और संदेश तो नहीं है। कृपा की बात उन्हें सुनाई नहीं दी, क्योंकि वे ढोल बजाने वाले के संदेश में इतने मग्न थे। वे बाहर जाकर खड़े हो गए। न तो अश्वत्थामा था और न ही उसका घोड़ा। एक ही जगह बंधे घोड़े धूप में चर रहे थे और रगड़ खा रहे थे। चारों ओर घोड़े के गोबर और सड़ती घास की दुर्गंध फैली हुई थी। शिविर में रहने वालों ने इस स्थिति को युद्ध काल की स्वाभाविक स्थिति मानकर स्वीकार कर लिया था। घोड़ों की देखभाल करने वालों ने महसूस किया कि जानवरों को पानी नहीं पिलाया गया था। उन्होंने सोचा कि अश्वत्थामा घोड़ों के लिए पानी की व्यवस्था के बारे में पूछताछ करने गया होगा। ढोल की आवाज़ और करीब आती गई, और द्रोण के तंबू से थोड़ी दूरी पर ढोल बजाने वाले को ले जा रहा हाथी दिखाई दिया। ढोल की आवाज़ सुनकर घोड़े

डर से हिनहिना उठे। द्रोण ने सोचा, "अगर ये घोड़े ढोल की आवाज़ से इतने डर गए हैं, तो युद्ध शुरू होने पर क्या करेंगे?" जिसने भी उन्हें प्रशिक्षित किया था, उसे कोसते हुए, उन्होंने ढोल की आवाज़ बंद होते सुनी और यह संदेश सुना: "जो लोग धर्म के अनुसार पांडवों को इस वंश का मानते हैं, वे उनके पक्ष में जा सकते हैं..." वही बात, और द्रोण ने खुद से पूछा कि यह संदेश इतनी बार क्यों सुनाया जा रहा है। या क्या वे अलग-अलग हिस्सों को कवर कर रहे थे और यह संदेश दोहराव जैसा लग रहा था? इसी बीच उन्हें एहसास हुआ कि उनकी नाक अब उस दुर्गंध की आदी हो रही है। उन्होंने गहरी सांस लेकर इसकी जांच की और पाया कि यह सच था। कुछ और न सूझने पर, वे कुछ देर वहीं खड़े रहे और चारों ओर नज़र घुमाते रहे। अचानक उन्होंने हाथियों को कतारों में खड़े देखा, लगभग अंतहीन। द्रोण ने सोचा, "इतने सारे हाथी कहाँ से आए? मुझे पता ही नहीं था कि दुर्योधन ने इतने सारे हाथी जमा कर लिए हैं।" उनका मन हुआ कि वे पास के किसी पेड़ पर चढ़कर हाथियों के इस विशाल समूह का अवलोकन करें। पास ही दाईं ओर एक बुरुगा का पेड़ था। लेकिन वह निराश था कि सीढ़ी की मदद से भी उस पर चढ़ना उसके बस की बात नहीं थी। अचानक उसे एक तरह की खुशी महसूस हुई। ढोल की आवाज़ धीमी होती जा रही थी। गोबर की दुर्गंध असहनीय थी। वह अपनी नाक के अजीब व्यवहार से हैरान था, जो कभी दुर्गंध सहन कर रही थी तो कभी असहनीय हो रही थी। तभी उसे एहसास हुआ कि उसके चेहरे का अधिकांश हिस्सा उसकी उभरी हुई नाक से ढका हुआ है। यह एक लंबी नाक थी, जिसका सिरा नुकीला था। ढोल बजना बंद हो गया। उसने अनुमान लगाया कि वे शायद एक ही संदेश दे रहे होंगे, हालांकि वह उसे सुन नहीं पा रहा था।

जब द्रोणाचार्य अपने तम्बू में लौटे, तो उन्होंने कृपाचार्य को चटाई पर लेटे हुए पाया। वे ऊंघते हुए प्रतीत हो रहे थे। वे चुपचाप बैठ गए। फिर भी कृपा तुरंत उठ खड़े हुए, मानो उन्हें द्रोणाचार्य के आने का आभास हो गया हो। चूंकि वे अब पूजा की चूल्हे के पास बैठे थे, इसलिए द्रोणाचार्य की सूंघने की गति बदल गई। हालांकि वे स्थिति के प्रति उदासीन रहना चाहते थे, उनकी नाक अनायास ही लंबी-लंबी सांसें लेने लगी। उनके सामने बैठे कृपा की निगाहें द्रोणाचार्य पर टिकी हुई थीं, और द्रोणाचार्य को इसका एहसास हो गया था। उन्हें मानसिक और शारीरिक रूप से कुछ जकड़न महसूस हो रही थी। गहराई से कोई पीड़ा उभर रही थी। द्रोणाचार्य इस स्थिति के कारणों और परिणामों को लेकर असमंजस में थे। वे यह जानने के

लिए उत्सुक थे कि क्या उनका पेट मूत्र और मल की दुर्गंध के साथ पूजा की ज्वलन की सुगंध के मिश्रण के कारण खराब हो रहा है। कृपा ने द्रोण से कहा, "आपकी स्थिति बेहतर है। आप यहीं अग्नि अनुष्ठान कर सकते हैं। कल और आज मैंने अनुष्ठान किए बिना ही तृप्ति कर ली। मुझे इसके लिए सुविधा कहाँ से मिलेगी? कम से कम आज शाम आपके साथ अनुष्ठान करके मुझे मानसिक संतुष्टि तो मिलेगी। वैसे भी आपके पास घी का एक घड़ा है।" द्रोण को तीव्र व्याकुलता थी। पेट दर्द, दस्त, अनियंत्रित पेशाब और मल त्याग, सिरदर्द, बदन दर्द, ये सभी युद्ध के समय होने वाले स्वाभाविक कष्ट थे, जैसा कि द्रोण भली-भांति जानते थे। और वे शिविर में किसी और से अधिक इन कष्टों के उपचार के बारे में जानते थे। उनके तम्बू में विभिन्न प्रकार की औषधियों का भंडार था। यहाँ तक कि उनका सेवक हव्य भी जानता था कि किस रोग के लिए कौन सा पाउडर या औषधि देनी है। लेकिन द्रोण ने महसूस किया कि उन्हें युद्ध का भय परेशान नहीं कर रहा था। युद्धकला में प्रशिक्षित होने के कारण वे निश्चित रूप से जानते थे कि आर्यावर्त के इस भयंकर और अद्वितीय युद्ध में दोनों पक्षों के सबसे महान योद्धा भी ऐसे युद्ध रोगों से पीड़ित नहीं हो सकते। फिर भी उनके पेट में तेज दर्द होने लगा। यह अचानक शुरू हुआ था। कृपाचार्य उठ खड़े हुए और बोले, "सूरज पश्चिम की ओर ढल रहा है। हम शाम मान सकते हैं। मैं अभी अग्नि अनुष्ठान करूंगा। इससे मुझे मन की शांति मिलेगी।" वे अंदर गए और टहनियाँ और लकड़ियाँ उठाईं, अग्नि को बिना विचलित किए चूल्हे की राख साफ की और फिर टहनियाँ और लकड़ियाँ उसमें डाल दीं। इसके बाद वे मुँह, हाथ और पैर धोने के लिए बाहर गए। चूल्हे पर लौटकर वे घी से भरा पात्र और करछी लेकर उसके पास बैठ गए। जैसे ही उन्होंने चूल्हे को हवा दी, आग भड़क उठी। अनुष्ठान के पवित्र शब्दों का जाप करते हुए उन्होंने उसमें घी डाला। टहनियाँ और लकड़ियाँ चटकने लगीं और घी की मनमोहक सुगंध पूरे कमरे में फैलने लगी। लपटें तेज होती गईं।

जब कृपा अग्नि अनुष्ठान कर रहे थे, तब द्रोणाचार्य के पेट का दर्द और बढ़ गया। द्रोणाचार्य को उल्टी करने की तीव्र इच्छा हुई, लेकिन उन्होंने बड़ी मुश्किल से खुद को रोका क्योंकि वे अनुष्ठान के दौरान उठकर जाना नहीं चाहते थे। बाहर जाना अनुष्ठान की अग्नि का अपमान होता। उनका मन भटकने लगा। वे आँखें बंद करके एक जगह बैठे रहे। कृपाचार्य ने अपनी उपासना में अधिक समय नहीं लगाया। उनकी उपासना संक्षिप्त थी, जिसमें कुछ पवित्र मंत्र शामिल थे जिन्हें वे महत्वपूर्ण

मानते थे और जो उन्होंने अपने पिता से सीखे थे। उन्होंने जल्दी से अग्निनाय श्लोक का पाठ किया, बचा हुआ घी डाला और फिर अनुष्ठान के अनुसार अग्नि के तीन चक्कर लगाए। चटाई पर लौटते समय, द्रोणाचार्य ने कृपा से पूछा, "क्या तुमने ढोल की आवाज़ सुनी?" कृपा ने उत्तर दिया, "हाँ। आवाज़ वहाँ तक पहुँची जहाँ मैं बैठा था।"

"कहते हैं कि हर किसी के पास यह विकल्प है कि वह किसी भी ऐसे पक्ष में शामिल हो जाए जो उसे धर्म के अनुरूप लगे या फिर युद्ध से पूरी तरह पीछे हट जाए। इस स्थिति में आपके विचार से सही धर्म क्या है?"

"मुझे अब इस मामले पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। मैंने इस पर पहले ही अपना पूरा ध्यान दे दिया है। मुझे पूरा विश्वास है कि धर्म पांडवों के पक्ष में है। राजा पांडु की पत्नियों ने अपने पति की सहमति से नियोग विधि से संतानें उत्पन्न कीं। यदि उनकी पत्नियों ने उनकी मृत्यु के बाद भी नियोग विधि से संतानें उत्पन्न कीं, तो भी धर्म उसे मान्य मानता है। दोनों ही स्थिति में, धर्म के अनुसार संतानें पांडु की ही होंगी। इसलिए यह कहना धर्म के विरुद्ध है कि पांडव कुरु वंश से संबंधित नहीं हैं। लेकिन मैं धर्म से बंधा हुआ हूँ कि जिसका भोजन मैंने खाया है, उसका समर्थन करूँ। क्या मेरी निष्ठा उस परिवार के प्रति नहीं होनी चाहिए जिसने मुझे बचपन से भोजन दिया है?"

"क्या दुर्योधन उम्र में आपसे छोटा नहीं है? आपका पालन-पोषण पहले शांतनु ने किया और बाद में भीष्म ने। यदि यह सच है, तो आपको दुर्योधन के प्रति अपनी वफादारी दिखाने की क्या आवश्यकता है?"

"अगर मैं पांडवों के साथ खांडवप्रस्थ गया होता तो बेहतर होता। लेकिन मैं दुर्योधन के दरबार में ही रुक गया।"

द्रोण ने सोचा कि यह मामला हल्के में लेने लायक नहीं है। लेकिन फिर उन्हें याद आया कि दुर्योधन के सिंहासन पर बैठने के बाद वे भी हस्तिनावती में ही रहे थे।

कृपा ने आगे कहा, "इसके अलावा, दुर्योधन मेरे साथ सम्मानजनक व्यवहार करता रहा है। उसने मुझे अपने दरबार में स्थायी स्थान दिया है। मुझे नियमित रूप से राज दरबार के सभी सत्रों में आमंत्रित किया जाता है। मेरा भोजन और अन्य सभी आवश्यक वस्तुएं पूरे वर्ष के लिए एक ही पैकेज में मुझे मिल जाती हैं।"

द्रोण को याद आया कि दरबार में उनका दर्जा कृपा से कहीं अधिक था। उनका निवास एक भव्य महल था, भीष्म के महल जितना विशाल। उनके पास सेवक,

दुधारू गायें, घोड़े और चार रथ थे। लेकिन ये सभी सुविधाएँ दुर्योधन के अधीन थीं। द्रोण के पास पर्याप्त सोना था। उन्होंने मन ही मन सोचा, "जब पांडव खांडवप्रस्थ गए थे, तो मैं अपने प्रिय शिष्य अर्जुन के साथ उस नए नगर में रहने क्यों नहीं गया?" जैसे ही घी का अंतिम करछुल डाला गया, अनुष्ठानिक अग्नि की लपटें धीमी होकर अंगारों में तब्दील हो गईं, लेकिन घी की मनमोहक सुगंध हवा में फैल गई। सुगंध पूरे तम्बू में फैल चुकी थी, इसलिए उन्हें इसका आनंद लेने के लिए गहरी साँसें लेने की आवश्यकता नहीं थी।

"आपको एक और बात पर विचार करना चाहिए। मुझे बचपन से ही पूज्य भीष्म ने पाला-पोसा है। क्या हमने भीष्म की तरह वैदिक ज्ञान का गहन और व्यापक अध्ययन किया है? उनसे बेहतर धर्म को कौन समझता है? चूंकि उन्होंने दुर्योधन की सेना का सर्वोच्च सेनापति बनने की स्वीकृति दे दी है, शायद पांडवों के दावे और अधिकार उतने मजबूत न हों।"

द्रोणदेव इन बातों से सहमत होने को इच्छुक थे। लेकिन उनकी पहली प्रतिक्रिया क्रोध की थी। वे समझ नहीं पा रहे थे कि ऐसा क्यों हो रहा है। हालांकि, भीष्म द्वारा उनका पालन-पोषण न होने से उन्हें कुछ संतोष मिला। कृपा ने उनकी बात काटते हुए कहा, "जहाँ तक मेरी बात है, मैं भीष्म की कृपा और संरक्षण में पला-बढ़ा हूँ। आपने ही उनकी विनती मानकर धनुर्विद्या का विद्यालय स्थापित किया था। आप एक स्वतंत्र राज्य के शासक भी हैं। इसलिए धर्म की व्याख्या करने में आपको मुझसे अधिक स्वतंत्रता है।"

जब तक उन्होंने "वह स्वतंत्र क्षेत्र कौन सा है?" प्रश्न पूरा किया, तब तक द्रोण को अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया था। कृपा ने उत्तर दिया, "अहिच्छैर क्षेत्र में स्थित उत्तर पांचाल। द्रुपद से जीता हुआ।"

द्रोण ने मन ही मन कहा, "हाँ, मैंने द्रुपद से विजय प्राप्त की। धृतराष्ट्र के पुत्रों, पांडु के पुत्रों और दासियों के पुत्रों सहित मेरे सभी शिष्यों ने मेरे अधीन प्रशिक्षण पूर्ण किया था और आर्यावर्त में सबसे सटीक बाण निशानेबाजों के रूप में ख्याति प्राप्त की थी। इस ख्याति के कारण दूर-दूर से मेरे पास शिष्य आते थे। अपने पोतों की धनुर्विद्या में प्रगति देखकर भीष्म अति प्रसन्न हुए और उन्होंने गुरु की पूजा के लिए एक समारोह का आयोजन किया। मैंने भीष्म को अपनी इच्छा तब तक नहीं बताई जब तक वे समारोह के लिए मेरी सहमति लेने नहीं आए। जब मैंने भीष्म को बताया कि मैं गुरु के रूप में द्रुपद की गिरफ्तारी और उसके पैर को अपने पलंग

के एक पैर से जंजीर से बांधना चाहता हूँ, तो यद्यपि वृद्ध योद्धा मन ही मन प्रसन्न थे कि उन्हें अपने पुराने शत्रु, पांचालों से बदला लेने का एक और अवसर मिल गया है, उन्होंने इसे प्रकट नहीं किया। इसके बजाय उन्होंने इस बारे में गहराई से सोचने का नाटक किया और गंभीर चेहरा बना लिया। फिर उन्होंने अपने सभी पोते-पोतियों, पांडु और धृतराष्ट्र दोनों के पुत्रों को इकट्ठा किया और एक समारोह का आयोजन किया।" द्रुपद पर हमला।" द्रोण ने चिंतन किया, "यह पहली और आखिरी बार था जब शत्रु कुलों ने एक सामान्य शत्रु से लड़ने के लिए हाथ मिलाया। काश यह एकता बनी रहती, तो कुरु राज्य का काफी विस्तार हो जाता। खैर, भीम की वीरता, अर्जुन की धनुर्विद्या और दुर्योधन तथा उसके भाइयों के उत्साह को मिलाकर मैंने जो रणनीति बनाई थी, वह सफल रही। काश भीम को आगे बढ़ने दिया जाता, तो वह क्रोध में आकर द्रुपद को अवश्य ही मार डालता। और भला ऐसा कौन चाहता? अर्जुन मेरा आदर्श शिष्य है। उसने अपने गुरु के मन को समझा और सही रणनीति बनाई। उसने द्रुपद को उसके सैनिकों से अलग कर दिया, उसे गिरफ्तार किया और शारीरिक रूप से वश में कर लिया। फिर उसने उसे रस्सियों से बांधकर रथ में बिठाया और मेरे पास ले आया। मैं अभी भी अपनी अच्छी सागौन की लकड़ी से बनी, मोटी टांगों वाली चारपाई पर सो रहा था। उसने द्रुपद को मेरी चारपाई की टांग से बांध दिया, जो कुत्ते के बच्चे की तरह रोने लगा। उसने उपहासपूर्वक उससे कहा, 'अरे, कुत्ते की तरह मत रोओ। इससे मैंने अपने गुरु की नींद में खलल डाला। जैसे ही मेरा पैर उनके सिर से छू गया, मैंने कहा, 'मुझे खेद है। मुझे क्षमा कर दीजिए। मुझे इस मुकुटधारी सिर पर प्रहार नहीं करना चाहिए था।' फिर मैंने अर्जुन से कहा, 'शिष्य, मेरे पैर को क्या छू रहा है?' फिर मैं उठ बैठा, अपने शरीर को समेटा और द्रुपद से कहा, 'हे मेरे प्रिय मित्र द्रुपद, तुम यहाँ ज़मीन पर कैसे बैठे हो? आख़िरकार, हम दोनों एक ही गुरु के शिष्य थे, इसलिए हम बराबर हैं। हमें साथ बैठना चाहिए, चाहे पलंग के चरणों में हो या सिंहासन पर।' तब द्रुपद ने कहा, 'कृपा करके मेरे पैरों और हाथों में बंधी रस्सियाँ खोल दीजिए। मैं अपनी हार स्वीकार करता हूँ। मैं आपके समक्ष प्रणाम करूँगा। मुझे उदारतापूर्वक क्षमा कर दीजिए।' तब मैंने कहा, 'अर्जुन, रस्सियों को थोड़ा ढीला कर दो। आख़िरकार, वह मेरा सहपाठी है। हम बराबर हैं।' तब उन्होंने कहा, 'पंचाल का उत्तरी भाग और दक्षिणी भाग गंगा द्वारा समान रूप से विभाजित हैं। तुम पूरा उत्तरी भाग ले लो, और दक्षिणी भाग मुझे दे दो। मुझे अपनी पैतृक संपत्ति

खोने के कलंक से मुक्ति दिलाइए। कृपया मुझे लात मत मारिए। मैं आपके सामने श्रद्धापूर्वक नतमस्तक होऊंगा।

कृपा ने कहा, "क्या तुम भूल गए? पंचाल राज्य दो भागों में बँट गया था, और उत्तरी भाग जिसमें अहिच्चैरा राज्य था, उसने तुम्हें दे दिया और दक्षिणी भाग जिसमें कामपिल्य राज्य था, अपने पास रख लिया। नहीं, शायद यह कहना ज़्यादा सही होगा कि तुमने उसे वह आधा भाग दिया और उसे संतुष्ट करके विदा कर दिया। खैर, वह राज्य तुम्हारा है। अगर तुम्हें हस्तिनावती राज्य पसंद नहीं है, तो तुम अहिच्चैरा राज्य में जा सकते हो और वहाँ अपने लिए सिंहासन बनवा सकते हो..." तभी कृपाचार्य को खांसी आने लगी।

द्रोण ने मन ही मन सोचा, "जब मैंने दुर्योधन से साफ-साफ कह दिया कि मैं इस युद्ध में भाग नहीं लूंगा, तो दुर्योधन ने व्यंग्यात्मक लहजे में कहा, 'भौतिक कर्मी भी अपने स्वामी की मुसीबत में उसका साथ देते हैं। हे पूज्यवर, अगर आप भी ऐसा कहेंगे तो मेरा क्या होगा?' दुर्योधन ने अपने स्वामी के प्रति कर्तव्य का बहाना बनाया। लेकिन उस समय तो वह केवल धनुष-बाण से खेलता एक युवक था। हाँ, अब मुझे सब कुछ स्पष्ट हो गया है। भीष्म ने कितनी आसानी और चतुराई से मेरे नाम पर उत्तरी पांचाल को कुरु राज्य में मिला लिया। मुझे यह पहले ही समझ लेना चाहिए था। खैर, अब भी मैं अहिच्छैर जाकर एक महल क्यों न बनवाऊं, अपने लिए एक सिंहासन क्यों न बनवाऊं, शासन की बागडोर क्यों न संभालूं, शासकों के बराबर क्यों न हो जाऊं, मैं जो ज्ञान और युद्ध कला में इन शासकों का गुरु हूं, स्वयं रीति-रिवाज क्यों न निभाऊं और आध्यात्मिक पुण्य क्यों न कमाऊं? मैं कितना मूर्ख था, और मैंने भीष्म को वह क्षेत्र हड़पने दिया जो मेरा था..." खाँसी और गले में जकड़न के साथ कृपाचार्य ने कहा, "हे महान गुरु, आपने मुझे पहले क्यों नहीं बताया कि उसने आपका अपमान किया है? आपने उदारतापूर्वक आधा राज्य दान कर दिया। अन्यथा वह द्रुपद भिखारी बन जाता। आपकी उदारता असीम है। लेकिन मुझे कहना होगा कि यह एक अयोग्य व्यक्ति को दिखाई गई।" लेकिन द्रोण बेहतर जानते थे। उन्होंने मन ही मन कहा, "यदि मैंने द्रुपद को आधा राज्य न दिया होता, तो भीष्म कुरु राज्य का विस्तार करने के लिए पूरे पंचाल को हड़प लेते। भीष्म ने बड़ी आसानी से और बड़ी चालाकी से राज्य का विस्तार किया। मुझे गुरु के रूप में केवल इतना ही मिला कि द्रुपद मेरी चारपाई के पैर से बंधा हुआ था और मैं अपने पैर से उसके सिर पर लात मार रहा था! मेरे ज्ञान, युद्ध रणनीति के

कौशल और नेतृत्व क्षमता का उपयोग करके उसने मेरे क्षेत्र का सारा शुल्क हड़प लिया और अपने स्वार्थों को पूरा किया। कितनी चतुराई से उसने यह सुनिश्चित किया कि मुझे अपना पेट भरने के लिए महल पर निर्भर रहना पड़े..." तभी कृपा उठ खड़ी हुई और रसोई की ओर इशारा करते हुए बोली, "मैं यहीं सोऊंगा!" वह लुढ़के हुए गद्दे को लेकर चली गई। चूल्हे की धुएँ वाली गंध में अकेले रह जाने पर, द्रोण अचानक सभी शासकों पर क्रोधित हो गए। उन्होंने मन ही मन कहा, "इन लोगों को इस दुनिया के सारे सुख-सुविधाएँ प्राप्त हैं। इन्हें प्रशासक के रूप में भव्य निवास, मुख्य रानी के रूप में सजी-धजी पत्नी, ढेर सारी दासियाँ, और देश की रक्षा के नाम पर रथ, घोड़े और हाथी, तथा नगर की रक्षा के बहाने जन-जनित उपज में हिस्सा मिलता है। मानो इतना ही काफी नहीं था, इनके नाम पर सारे रीति-रिवाज और अनुष्ठान किए जाते हैं ताकि परलोक में इन्हें खूब पुण्य मिले। और हम जो निरंतर अध्ययन में लीन रहते हैं, इनके जीवन-वृत्तांत संकलित करते हैं, इन्हें पूरे देश की उपलब्धियों का श्रेय देते हैं, इनकी अत्यधिक प्रशंसा करते हैं, और अज्ञानी जनता को इनके पूर्वजों के गौरवशाली कार्यों का वर्णन करते हैं। धिक्कार है, मैं कितना मूर्ख हूँ। काश मैं उत्तर पंचाल का शासक बन जाता! ये लोग हर सांसारिक सुख, सबसे सुंदर स्त्रियाँ चाहते हैं! इन्हें वही दंड मिलना चाहिए जो अतीत में भार्गव जमदग्न्य परशुराम ने इन्हें दिया था..." द्रोण अपने विद्यार्थी जीवन को याद कर रहे थे। अग्निवेश से शिक्षा पूरी करने के बाद, जब वे आगे की पढ़ाई के लिए भार्गव वंश के जमदग्नि के आश्रम में गए, तो उनकी कितनी बारीकी से परीक्षा ली गई। उन्होंने क्षत्रियों को शस्त्र-यंत्र और युद्धकला का प्रशिक्षण देने से इनकार करने की अपनी प्रथा नहीं छोड़ी थी। किसी को स्वयं उनके द्वारा क्षत्रियों को कुचलने की कहानी सुननी चाहिए। रेणुका एक क्षत्रिय कन्या थी। मात्र इसलिए कि उसका विवाह सदा अध्ययन में लीन रहने वाले ऋषि जमदग्नि से हुआ, रेणुका अपने क्षत्रिय सुखों का त्याग कैसे कर सकती थी? ज्ञान के प्रेमी जमदग्नि ने तपस्या का मार्ग अपनाया। चित्ररथ, जो रेणुका की इच्छाओं और झुकावों से अवगत था, ने उसे अपने धन का लालच दिया। वह ज्ञान की खोज करने का दिखावा करते हुए, शिष्य की निष्ठा दिखाते हुए, जमदग्नि के आश्रम में अक्सर जाता था, ताकि वह ऋषि का विश्वास जीत सके। हर तरह के विलासिता में पले-बढ़े शासक वर्ग के पुरुष और महिलाएं अपनी पांचों इंद्रियों को कैसे वश में कर सकते थे? यद्यपि वह उनकी माता थीं, परशुराम ने अपने पति के प्रति बेवफ़ाई करने के कारण उनका सिर काटने में ज़रा

भी संकोच नहीं किया। यह कहते हुए, द्रोण का सिर स्वतः ही परशुराम के प्रति सम्मान में झुक गया। अंत में परशुराम ने चित्ररथ का भी वध कर दिया, इस प्रकार दो पापियों का अंत किया। फिर परशुराम ने कार्तवीर्यार्जुन का भी वध कर दिया, जिसने आश्रम पर आक्रमण करने का प्रयास किया था। कार्तवीर्यार्जुन के पुत्र ने उनकी अनुपस्थिति में जमदग्नि की हत्या कर दी थी। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए, परशुराम ने एक सेना खड़ी की और आर्यावर्त के शासकों का व्यवस्थित रूप से संहार किया, और उनके रक्त को नदियों में बहा दिया। ऐसा कहा जाता है कि परशुराम के समान कुल्हाड़ी चलाने वाला न कभी हुआ, न है और न होगा। खैर, मैं भी यही मानता हूँ कि सभी पाप शासकों से ही उत्पन्न होते हैं, और वे ही सभी अन्याय और अनैतिकता के जनक हैं। परशुराम को पुनर्जन्म लेना चाहिए, और आर्यावर्त की संपूर्ण जाति को नष्ट करने के लिए एक बार फिर इक्कीस युद्ध लड़ने चाहिए। शासक, एक ऐसी जाति जो शराबखोरी, जुआ, वेश्यावृत्ति और क्षेत्र पर विजय प्राप्त करने के लिए युद्ध करने की आदी थी। तभी अचानक द्रोणाचार्य उठे और छप्पर की दीवार के सहारे रखे हथियारों में से लकड़ी के हैंडल वाली कुल्हाड़ी उठाई। उन्होंने मन ही मन पूछा, "आज भी कौन भार्गव वंश की कुशलता से इस हथियार को चला सकता है? मैंने ही उनसे इसे सीखा है। मुझे इस पर गर्व है। अगर मैं इसे घुमाऊं, तो कोई इसके पास नहीं रह सकता। यह एक ही वार में नष्ट होने वाला हथियार है। शरीर के किसी भी हिस्से पर एक ही वार से खून की नदी बह निकलेगी। अब तो कोई इस शानदार हथियार पर ध्यान ही नहीं देता। यह तो धनुष-बाण का युग है, दूर से ही शत्रु पर हमला करने वाले हथियारों का। पुराने और पारंपरिक हथियारों का उपयोग लगभग विलुप्त हो चुका है।" फिर उनका दाहिना हाथ हथियार को घुमाने लगा। द्रोणाचार्य ने सोचा, "यह मेरी उम्र के व्यक्ति के लिए उपयुक्त हथियार नहीं है। इसके लिए यौवन और शक्ति चाहिए। यह हथियार अश्वत्थामा के लिए एकदम सही है।" यदि वह इसे धारण करता रहा, तो वह एक और परशुराम बन जाएगा। कितना दुखद है कि स्वतंत्र चिंतन करने में असमर्थ वह दुर्योधन की रसोई में सड़ रहा है!... "भीष्म के विरुद्ध द्रोण का क्रोध फिर से जागृत हो गया।" हाँ, संपूर्ण शासक वर्ग का नाश होना ही चाहिए। परशुराम ने आर्यावर्त से उन्हें मिटाने के लिए इक्कीस युद्ध लड़े। दुर्भाग्य से, वह वर्ग फिर से पनप गया। अब एक विशाल वृक्ष के रूप में विकसित हो चुका है। अन्य पौधे, लताएँ और वृक्ष इस वृक्ष के लिए खाद बन गए हैं। परशुराम ने इसे फिर

से कैसे पनपने दिया? इतने सारे राजाओं की हत्या के पाप का प्रायश्चित करने के लिए, उन्होंने अनुष्ठान किए और अपने पिता जैसे ऋषियों, भिक्षुओं और शिक्षकों को अपने द्वारा जीता हुआ राज्य दान में दे दिया। फिर वे एक महान तपस्या करने चले गए। क्षत्रिय स्त्रियाँ, अपने पुरुष सदस्यों से वंचित, ब्राह्मण जाति के ऋषियों, भिक्षुओं और शिक्षकों के साथ नियोग की साधना की और संतान उत्पन्न की। जिन ऋषियों, भिक्षुओं और शिक्षकों ने उन्हें संतानें दीं, वे अपने आश्रमों में लौट गए और ज्ञान, बुद्धि और मोक्ष की खोज में जुट गए। शासक वर्ग एक बार फिर समृद्ध होने लगा। पुरानी व्यवस्था बहाल होने लगी। परशुराम ने स्वयं शासन क्यों नहीं किया? उन्होंने शासन में धर्म का समावेश क्यों नहीं किया? ऋषियों और भिक्षुओं की संतानों से जन्मे नए क्षत्रिय धर्म की स्थापना और ज्ञान की खोज में क्यों नहीं जुट गए?

द्रोणाचार्य के मन में कई सवाल उमड़ रहे थे। और इससे पहले कि वे उन्हें स्पष्ट रूप से समझ पाते, अचानक और अकारण उनका मन सुन्न पड़ गया। उन्हें बस क्रोध की छाया ही दिखाई दी। जब भी वे मानसिक पीड़ा या उलझन में होते, द्रोणाचार्य कमरे में बेचैनी से इधर-उधर चलने लगते थे। कुल्हाड़ी को वापस उसकी जगह पर रखकर वे कमरे में बेचैनी से इधर-उधर चलने लगे। लेकिन कमरा बहुत छोटा था, और उन्हें सात-आठ कदम से ज्यादा चलने की जगह नहीं थी। वे अपनी कुटिया से बाहर निकले, लेकिन बाहर भी कोई खाली जगह नहीं थी। उनके मनचाहे चलने के लिए कोई जगह नहीं थी। पूरा इलाका घोड़ों, सैनिकों, घोड़ों के गोबर, मूत्र और मल से भरा हुआ था, और उनकी दुर्गंध से भरा हुआ था। केवल अगर कोई रथ में बैठकर इन सबसे दूर निकल सके, तो ही सौ-हजार कदम चल सकता है। लेकिन उन्हें यह नहीं पता था कि कौन सी दिशा उन्हें सबसे जल्दी खाली जगह तक ले जाएगी। इसके अलावा, यह एक अलिखित नियम था कि युद्ध के दौरान इस तरह की गतिविधियों में शामिल नहीं होना चाहिए। उन्हें याद आया कि उन्होंने स्वयं अपने छात्रों को यह नियम सिखाया था और उनसे इसका कड़ाई से पालन करने को कहा था। सूर्यास्त का समय हो चुका था। डूबते सूरज की लालिमा में धूल साफ दिखाई देने लगी। चारों ओर धूल ही धूल थी। तभी हव्यका ने पीछे से आवाज़ लगाई, "शाम हो गई है। मैंने अग्नि अनुष्ठान की व्यवस्था कर दी है।" वह द्रोण के पास पानी का घड़ा लेकर गए, जहाँ वे खड़े थे। मुँह, चेहरा, हाथ और पैर धोने से पहले ही द्रोण को पेशाब करने की इच्छा हुई। सवाल यह था कि वे कहाँ जाएँ। वहाँ कोई भी ऐसी साफ जगह नहीं थी जहाँ मनुष्य और जानवर न हों। वे

लगभग आठ कदम चलकर एक पत्थर की पटिया के पीछे गए। धोने के बाद वे अंदर गए और अनुष्ठान की चूल्हे के सामने बैठ गए। तभी उनकी नाक को बाहर की गंध से अंतर महसूस हुआ। जैसे ही उसने आग पकड़ रही टहनियों को हवा दी, उसने सोचा, "मैं अहिच्छरा जाकर खुद को राजा क्यों नहीं घोषित कर दिया? द्रुपद ने कितनी स्पष्टता से कहा था, 'द्रोण, संपूर्ण पंचाल अब तुम्हारा है। तुमने मुझे आधा भाग दिया है। तुम दूसरे आधे भाग पर शासन करो। मैं शासक के रूप में तुम्हारी इस नई भूमिका में हर संभव सहायता करूंगा।' हाँ, अब मुझे पीछे मुड़कर देखने पर समझ आता है कि यद्यपि मेरी शासन करने की उसकी सच्ची इच्छा कभी नहीं थी, वह इस बात को लेकर अधिक चिंतित था कि भीष्म कुरुओं के लिए इस क्षेत्र को हड़प न लें। शायद यही संदेश उसके शब्दों में छिपा था। उस समय यह सब न समझ पाना मेरी कितनी बड़ी मूर्खता थी! मैंने तो बस यह सोचकर अपनी आँखें बंद कर लीं कि वह व्यंग्य कर रहा था या विनम्रता दिखाने के लिए बोल रहा था। मैं, जो एक महान आचार्य के शिखर पर पहुँच गया था, सांसारिक मामलों में क्षत्रिय जैसी तीक्ष्ण बुद्धि से बिल्कुल वंचित था!" टहनियों में आग लग गई। पवित्र अनुष्ठान के शब्दों का जाप करते हुए भी, वह इस बात से अवगत था कि उसका मन उसी मुद्दे से व्याकुल है। जैसे ही उन्होंने घी की आखिरी बूंद चूल्हे में डाली, लौ प्रज्वलित हो उठी और कुटिया के पूरे भीतरी हिस्से को रोशन कर दिया। उनके मन ने उन्हें आश्वस्त किया कि न केवल वे, बल्कि कोई भी आचार्य क्षत्रिय जितना सांसारिक ज्ञान नहीं रख सकता। वास्तव में, उनमें व्यावहारिक समझ बिल्कुल नहीं होगी! अब उन्हें पूरा यकीन हो गया था। उन्होंने स्वयं से पूछा, "परशुराम ने क्या हासिल किया? क्रोध में आकर उन्होंने क्षत्रिय जाति का नाश करने का हर संभव प्रयास किया। उन्होंने शासक वर्ग का सफाया कर दिया। लेकिन उन्होंने स्वयं शासन करने से इनकार कर दिया। जैसे किसी किले पर सफलतापूर्वक कब्जा करने के बाद पीछे हट जाना! यह आचार्य जाति के जन्मजात गुण के कारण है! शायद। ऐसा लगता है कि किसी बात पर आवेश और क्रोध से भर जाना ही इनका स्वभाव है। फिर ये आकाश की ओर देखते हुए, स्वप्नों में खोए रहते हैं, पुराने अनुष्ठानिक सूत्रों में महारत हासिल करने और नए सूत्र बनाने में लगे रहते हैं।"

मुट्ठी भर पके हुए चावल और एक कपड़े के टुकड़े को छोड़कर सभी सांसारिक वस्तुओं के प्रति उदासीनता। यदि कोई उन्हें ये भी दे दे, तो वे उसके चरणों में गिर पड़ते हैं, उसकी स्तुति आसमान तक करते हैं और उसे असीम आशीर्वाद देते हैं...

चूल्हे की लपटों का रंग पीला पड़ गया। यह स्थिर रूप से नहीं जल रही थी, न ही इसकी लौ एक समान ऊँचाई पर थी। यह चंचल और अस्थिर थी, बेतरतीब ढंग से उछल रही थी। फिर धीरे-धीरे बुझकर अंगारों में मिल गई। धुएँ की गंध हवा में घनी थी। द्रोण ने एक लंबी साँस ली। बाहर अनगिनत घोड़ों के हिनहिनाने का अंतहीन शोर था। दूर से हाथियों के चिंघाड़ने की आवाज़ आ रही थी। द्रोण को अब तक इन आवाज़ों का पता नहीं चला था। उन्होंने पुकारा, "हव्यक, अंधेरा हो रहा है। एक दीपक जलाओ और उसे यहाँ ले आओ।" जैसे ही हव्यक दीपक नीचे रख रहा था, द्रोण ने निर्देश दिया, "नहीं, वहाँ नहीं। यहाँ कोने में। नहीं तो हवा इसे उड़ा ले जाएगी। क्या दूध आ गया है?" ओह, हाँ, मुझे पता है कि इसकी संभावना बहुत कम है। मैं चावल नहीं खाना चाहता। बस थोड़े से शहद में मक्के का आटा मिला दो। उससे काम चल जाएगा। अभी नहीं। थोड़ी देर बाद। कृपाचार्य क्या कर रहे हैं?

"वह अभी भी सो रहा है। उसने कहा कि पिछली पूरी रात उसे जरा भी नींद नहीं आई।"

—•⁕•—

अध्याय 48

द्रोण चुपचाप बैठे नीम के तेल से भरी बाती की लौ को निहार रहे थे। बीच-बीच में बाहर घोड़ों और हाथियों के शोर से भीतरी शांति भंग हो रही थी। थोड़ी देर बाद, किसी ने कुटिया का दरवाजा धकेल कर अंदर प्रवेश किया। नया प्रवेशकर्ता दरवाजे पर खड़ा होकर द्रोण की ओर घूरने लगा। क्या यह महाराजा दुर्योधन थे? जी हाँ, यह वही थे। उनके सिर पर मुकुट, कंधे पर कवच और चमकीला वस्त्र था। सीने की सुरक्षा के लिए धातु की जैकेट, योद्धा शैली की धोती, कमर से लटकती तलवार और कंधे पर धनुष था। पीठ पर बाणों का तरकश था। नहीं, यह वह नहीं

हो सकते। यह दुर्योधन से छोटा था। उसका सीना भी संकरा था। कमरे में मंद रोशनी थी। द्रोण ने सोचा, "यह तो छोटा सा दीपक है, और नब्बे साल की उम्र में मेरी दृष्टि इतनी अच्छी नहीं है।" इससे पहले कि वह उसकी पहचान कर पाते, आगंतुक ने द्रोण के चरणों में प्रणाम किया। वह बिल्कुल ज़मीन पर गिर पड़ा। द्रोणाचार्य को आश्चर्य हुआ कि यह कौन सा शासक हो सकता है, जो अपने गुरु के प्रति इतनी गहरी भक्ति दिखाता है। उन्होंने अनगिनत शिष्यों को शिक्षा दी थी। जहाँ तक उन्हें याद था, उनमें से किसी ने भी ऐसी भक्ति नहीं दिखाई थी। ये क्षत्रिय शासक सिंहासन पर बैठते ही, गुरु के सामने भी, अहंकारी हो जाते थे। वे बस हाथ जोड़कर प्रणाम करते थे, मानो आदर का दिखावा कर रहे हों। यह कौन सा देश होगा? उसने द्रोणाचार्य से पूछा, 'क्या आप मुझे, अपने शिष्य को, नहीं पहचानते, महाराज?' वह शुद्ध आर्य भाषा में बोल रहा था। बस लहजे में थोड़ा सा अंतर था। यह कौन सा देश था? विभिन्न देशों में आर्य भाषा का उच्चारण अलग-अलग लहजे में होता है। विनम्रता दिखाते हुए उसने उत्तर दिया, 'जी हाँ, मैं आपको कैसे न पहचानूँ? उठिए, महाराज। आप कैसे हैं? हव्यक, शहद का बर्तन लाओ।' वह पास आया और द्रोणाचार्य द्वारा बताए गए चटाई पर बैठ गया। फिर भी, द्रोणाचार्य उसे नहीं पहचान पाए। धुंधली रोशनी में चेहरा साफ दिखाई नहीं दे रहा था। सांवला रंग, लेकिन आर्य वस्त्र पहने हुए।

'तुम्हें अब भी मैं याद नहीं आ रहा। मेरा नाम एकलव्य है। मैं तुम्हारा छात्र हूँ।'

द्रोण ने एकलव्य से खुलकर यह नहीं पूछा कि वह कौन है। वह बस उसके चेहरे को घूरते रहे।

"देखो बेटा। मैंने अलग-अलग समय पर अनगिनत लड़कों को पढ़ाया है। और जब उम्र बढ़ती है, तो चेहरे इतने बदल जाते हैं कि पहचानना मुश्किल हो जाता है। हमारी याददाश्त भी कमजोर पड़ने लगती है। सिर्फ नाम लेने से मेरी याददाश्त नहीं लौटती। तुम कब और कहाँ मेरे विद्यार्थी थे? मुझसे नाराज़ मत होना। मैं बहुत बूढ़ा हो चुका हूँ। और मुझे लगता है कि तुम तीस या पैंतीस साल पहले मेरे विद्यार्थी थे। अगर कोई और जानकारी हो जिससे मैं तुम्हें पहचान सकूँ, तो मुझे बता दो।"

"देखो, यही सबसे सटीक पहचान है," उसने अपना दाहिना हाथ आगे बढ़ाया। उसमें केवल चार उंगलियां थीं और अंगूठा गायब था। क्या वह बिना अंगूठे के पैदा हुआ था? नहीं, ऐसा नहीं लगता था। अंगूठा कटा हुआ होना साफ दिख रहा था। हां, उसे याद आया, और उसके पेट में एक अजीब सी बेचैनी हुई, पसीने की बूंदें

उसके चेहरे पर आ गईं, और उसकी आंखें अचानक बेजान हो गईं। वह कुरु और पांचाल देशों के बीच के जंगलों में रहने वाले निसादा कबीले के मुखिया का बेटा था। उसके पिता चाहते थे कि उनका यह बेटा मुझसे शिक्षा प्राप्त करे, क्योंकि उन्होंने सुना था कि दूर-दूर के राजकुमार मुझसे शिक्षा प्राप्त करने आते हैं। उन्होंने अपने बेटे को मेरा शिष्य बनाने के लिए मुझसे संपर्क किया और मुझे जंगल से कई उपहार दिए, जैसे शहद के बर्तन, फलों की टोकरियां, हाथी दांत, हिरण के सींग, हिरण की चमड़ी की चटाई, बारह बाघ की खाल। लड़के ने मुझ पर पूरी श्रद्धा बरसाई। वह तीरंदाजी में इतना कुशल हो चुका था कि वह झपट्टा मारते बाघों पर निशाना साध सकता था। बाघों, साँपों और हाथियों के बीच पले-बढ़े होने के कारण उनमें अविश्वसनीय साहस था। वे एक ऐसे आदिवासी समुदाय से थे जिन्होंने कभी रथ में सफर नहीं किया था। जैसे ही मैंने उन्हें देखा - या शायद उनके पिता को? - मुझे उनसे स्नेह और स्नेह का भाव उमड़ आया। क्यों? क्योंकि वे मुझे मेरी दिवंगत पत्नी की याद दिलाते थे - वैसा ही चेहरा, नुकीले गाल, आँखों का आकार, नाक की बनावट, सांवला रंग और सहज हँसी। क्या शरदवंता के साथ सोकर जुड़वाँ बच्चों को जन्म देने वाली वह स्त्री भी उसी वनवासी जनजाति से थी?

"आदरणीय गुरुदेव, क्या आपने मुझे पहचाना?"

द्रोण ने कहा, "हाँ," लेकिन यह कहना आसान नहीं था, क्योंकि उन्हें लगा जैसे उनकी साँसें रुक रही हों। उन्होंने धुंधली रोशनी में उनके चेहरे को देखा, लेकिन उन्हें घृणा या तिरस्कार का कोई संकेत नहीं मिला, बल्कि वही सच्ची भक्ति दिखाई दी।

तुम अब क्यों आए?

मैं इस युद्ध में लड़ने आया हूँ। आपकी तरफ से। अपनी पूरी सेना के साथ।

"क्या अब तुम राजा बन गए हो?"

"जी हां। पिता की मृत्यु के बाद, मैं सिंहासन पर बैठा। बीस वर्ष पूर्व। मैं आपको अपने राज्याभिषेक समारोह में आमंत्रित करने के लिए उत्सुक था। लेकिन मुझे इस बात का यकीन नहीं था कि आपका प्रिय शिष्य अर्जुन क्या कहेगा। इसलिए मैंने ऐसा नहीं किया और आपके आशीर्वाद प्राप्त करने के सौभाग्य से वंचित रह गया..."

द्रोणाचार्य ने एकलव्य को अपनी आँखों से देखा। उनके पिता निषाद गोत्र के मुखिया थे। लेकिन उन्होंने अपने पुत्र की तरह आर्य राजाओं की पारंपरिक पोशाक

- मुकुट, योद्धा शैली की धोती और कंधे पर कवच - कभी नहीं पहनी थी। द्रोणाचार्य को आर्य राज्याभिषेक समारोह अपनाने से पहले उनके रीति-रिवाजों का कोई ज्ञान नहीं था। उन्हें अपने पिता की पोशाक याद आई - कमर पर मुलायम चमड़ा, खुला सीना और रंग-बिरंगे पक्षियों के पंखों से बना मुकुट। आम लोग बुने हुए बाँह से बना मुकुट पहनते थे। वे रंग-बिरंगे फूलों की माला पहनते थे। लेकिन द्रोणाचार्य ने सोचा, यह बालक अपनी कलाई पर तांबे की चूड़ियाँ पहने हुए है। उसकी पहचान जानने पर द्रोणाचार्य की पहली उलझन दूर हो गई। अब उनकी याददाश्त साफ होने लगी। उसकी कलाई और हाथ की गति, उसके साहस और गुरु के प्रति उसकी भक्ति को देखकर, द्रोणाचार्य ने निम्न सामाजिक स्थिति के इस बालक को अपना शिष्य स्वीकार कर लिया था, लेकिन अन्य छात्रों ने उसका उपहास किया था! उन्होंने अवश्य ही यह प्रश्न पूछा होगा: एक गैर-आर्य बालक आर्य बालकों की संगति में कैसे पढ़ सकता है? वह भी कुछ शर्मिंदा था, खुद को बेमेल महसूस कर रहा था। शुरुआत में उसे आर्य भाषा नहीं आती थी। लेकिन उसने धीरे-धीरे इसे सीखने की कोशिश की। जब भी वह कोई शब्द गलत बोलता, वे उसके सामने ही उस पर हंसते थे। लेकिन जब बात निशाने की सटीकता और धनुष चलाने के कौशल की आती, तो वे उसके सामने बिल्कुल चुप हो जाते थे! द्रोण ने याद करते हुए कहा, "एक दिन भीष्म ने मुझे बुलाया और कहा, 'आचार्य, मुझे पता चला है कि आप वन के किसी लड़के के साथ हमारे राजकुमारों को शिक्षा दे रहे हैं। किसी कारणवश, लड़के इससे प्रसन्न नहीं हैं। और, ज़ाहिर है, इससे राजपरिवार की प्रतिष्ठा भी गिरेगी।' मैं उनके शब्दों का पूरा अर्थ नहीं समझ पाया। खैर, मुझे उसे दूसरों से अलग करना पड़ा और उसे अकेले अभ्यास और अध्ययन करने देना पड़ा। क्या एक शिक्षक के लिए इससे बड़ा आनंद हो सकता है कि वह इतने प्रेरित और समर्पित, और सटीक लक्ष्य साधने की जन्मजात क्षमता और अडिग धैर्य वाले लड़के को ज्ञान प्रदान करे? उसे गंगा के दूसरे किनारे के वन में भेज दिया गया, और वह भी उनके साथ से छुटकारा पाकर राहत महसूस कर रहा होगा! मैं उसे शिक्षा देने के लिए कभी-कभार नाव से नदी पार किया करता था। राजकुमारों को मेरे नदी पार करके उसे शिक्षा देने जाने के बारे में तभी पता चला जब वे उस वन में शिकार करने गए थे..."

एकलव्य ने उसे वर्तमान में वापस लाते हुए कहा, "आदरणीय गुरु, आपने अर्जुन को अपना सबसे प्रिय शिष्य माना और उसके लिए गुरु शुल्क के रूप में मेरा

अंगूठा मांगा। अब वह युद्ध में आपके विरुद्ध उतर आया है।"

द्रोण को उसके शब्दों में व्यंग्य या उपहास का कोई संकेत नहीं मिला। फिर भी उसे भीतरी तौर पर कुछ घुटन महसूस हुई। उसने कुछ नहीं कहा। हालाँकि अतीत उसके सामने स्पष्ट रूप से प्रकट था, वह चुपचाप बैठा रहा, शायद इसलिए कि उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे या शायद इसलिए कि वह कुछ कहना ही नहीं चाहता था। लेकिन एकलव्य ने आगे कहा, "कई साल बीत गए। क्या आप कुछ भूल गए हैं? एक दिन, सभी राजकुमार नदी पार करके उस जंगल में शिकार करने आए जहाँ मैं रह रहा था। शायद मेरी आहट से उनके कुत्ते ने ज़ोर से भौंका: मुझे पता नहीं था कि वह किसका कुत्ता था। मैं कैसे जान सकता था? उसे जंगली कुत्ता समझकर, मैंने केवल उसकी आवाज़ के आधार पर उस पर अपना तीर साधा। तीर सीधे उसके मुँह में जा लगा। राजकुमार ज़रूर चकित रह गए होंगे। केवल आवाज़ सुनकर इतनी सटीकता से निशाना साधने वाले धनुर्धर को जानने के लिए उत्सुक होकर, वे तीर चलाने वाले की खोज में निकल पड़े। खोज उन्हें मुझ तक ले गई। उन्होंने मुझे पहचान लिया और मुझसे पूछा, 'एकलव्य, तुम यहाँ क्या कर रहे हो?' मैंने उत्तर दिया, 'मैं अध्ययन कर रहा हूँ।' उन्होंने मुझसे पूछा, 'तुम्हारा गुरु कौन है?' मैंने अपनी कुटिया के अंदर की ओर इशारा किया। मैंने आपकी मिट्टी की एक मूर्ति बनाई थी, ताकि जिन दिनों आप नहीं आ पाते थे, उन दिनों अभ्यास से पहले मैं उसे प्रणाम कर सकूँ। वे आपस में फुसफुसा रहे थे कि आपने उस वनवासी लड़के को उनसे बेहतर सिखाया है।" लेकिन, असल में, यह तकनीक आपने मुझे नहीं सिखाई थी। हम वनवासी, जानवरों की आवाज़ों की सूक्ष्म बारीकियों को पहचानने और उन पर निशाना साधने की लगभग स्वाभाविक क्षमता रखते हैं। हालाँकि आपने मुझे यह तकनीक नहीं सिखाई, लेकिन आपने मुझे इसका आर्य नाम, शब्दवेधी बताया। आपके आर्य बालक इस शब्द को भली-भांति जानते थे। लेकिन उनमें इसे अमल में लाने का लक्ष्य और कल्पनाशीलता नहीं थी। तीन दिन बाद आप चिंता से भरे चेहरे के साथ मेरी कुटिया में लौटे। मैंने आपसे पूछा, 'आदरणीय गुरु, आपका चेहरा इतना उदास क्यों है?' आपने उत्तर दिया, 'बालक, मुझे लगता है मैंने वचन तोड़ दिया है। क्या तुम मुझे बचा सकते हो?' मैंने आपके पैर छूकर कहा, 'आपको बचाने के लिए मैं अपना प्राण त्यागने को तैयार हूँ।' एक क्षण के लिए आप स्तब्ध, मौन बैठे रहे। मैंने आपको समझाने की कोशिश की। आपने उत्तर दिया, 'बालक, मैंने अर्जुन को सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर बनाने का वचन दिया

था। शब्दवेधी में तुम्हारी कुशलता को अपनी आँखों से देखने के बाद, वह मुझे ताना मारने लगा है कि मैंने वचन तोड़ दिया है। कैसे क्या आप मेरी प्रतिज्ञा पूरी करने में मेरी मदद कर सकते हैं?' लेकिन तब मुझमें यह कहने की हिम्मत नहीं हुई कि यह तकनीक आपने मुझे नहीं सिखाई थी। यह सच है या झूठ, मेरे लिए महत्वपूर्ण नहीं था। उस समय जो महत्वपूर्ण था, वह यह था कि मैं अपने गुरु को दुख न पहुँचाऊँ। तब आपने मुझसे मेरा दायाँ अंगूठा माँग लिया। यह मानो धनुष-बाण पर अपना पूरा नियंत्रण खो देने जैसा था। बिना एक पल भी संकोच किए, मैंने अपना अंगूठा काट दिया और आपको दे दिया। बाद में, आपने एक औषधीय जड़ी बूटी ली, उसका रस निकाला और मुझे लगा दिया। घाव ठीक होने के बाद, आप मुझसे छुपकर मिलने आते थे और मुझे चार उंगलियों से भी तीर चलाना सिखाते थे...

आगे क्या कहें, यह न जानते हुए वह चुप रहे। ये सारे शब्द द्रोण के मन पर भारी पड़ गए, मानो उन्हें दबा रहे हों और सिर उठाना भी असंभव बना रहे हों। भीतर जलते दीपक की खामोशी, घोड़ों की हिनहिनाहट और हाथियों की चिंघाड़ भी उनके मन में नहीं आई। जब द्रोण खामोशी में जकड़े हुए थे, जिसने बाकी सभी आवाज़ों को दूर कर दिया था, तब एकलव्य ने आगे कहा, "बाद में मैं अपने नगर लौट गया। मेरे पिता ने घोषणा की थी कि हमें आर्यों से कोई वास्ता नहीं रखना चाहिए, हमें गुरु के प्रति आर्य भक्ति शैली और आर्य रीति-रिवाजों को त्याग देना चाहिए। लेकिन राजा बनने के बाद, मैंने हस्तिनावती में चल रही घटनाओं पर बारीकी से नज़र रखी। मुझे दुर्योधन और पांडवों के बीच चल रहे युद्ध के बारे में पता चला। मैं अपनी मर्ज़ी से अपनी सेना के साथ आया, अर्जुन का विरोध करने के लिए, जो मुझसे ईर्ष्या करता था, और यदि संभव हो तो उसे अपने सैनिकों से घेरकर उसका अंत करने के लिए। यहाँ पहुँचने के बाद ही मुझे पता चला कि आप भी अर्जुन का विरोध कर रहे हैं।"

इस समय द्रोणाचार्य को बोलने की तीव्र इच्छा हुई। वे उस झूठ का भंडाफोड़ करने के लिए उत्सुक थे जो उन्होंने राजनीति के रहस्य को छिपाने के लिए मजबूरी में गढ़ा था। उन्होंने कहा, "पुत्र, अनेक देशों के शासक विभिन्न उद्देश्यों से इस युद्ध में शामिल हुए हैं। तुम भी आए हो। यदि तुम दुर्योधन का साथ देना चाहते हो, तो दो। मैं उसके साथ हूँ। परन्तु अर्जुन से बदला लेने का विचार बीज के बिना अंकुर

के समान है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हारे अंगूठा खोने का कारण अर्जुन नहीं था।"

एकलव्य की आवाज भावुक होकर ऊंची हो गई, "वह मुझसे ईर्ष्या करता था क्योंकि मैं उससे बेहतर तीरंदाज था। खैर, जब मैं स्कूल में था, तब उसने यह बात मुझसे खुलकर कही थी।"

कक्षा में कौन सा बुद्धिमान छात्र शीर्ष पर रहने की महत्वाकांक्षा से प्रेरित नहीं होगा? यदि अर्जुन भी ऐसी ही महत्वाकांक्षा से प्रेरित था, तो क्या यह अस्वाभाविक या असामान्य होगा? यह सच है कि अर्जुन ने जो बातें कहीं, वे मेरी दी गई छूट के कारण थीं। क्या आपको लगता है कि उसके शब्द मुझे आपसे अंगूठा मांगने के लिए पर्याप्त थे? क्या उस समय अर्जुन में इतनी परिपक्वता थी कि वह ऐसी मांग कर सके?

"आदरणीय गुरुजी, कम से कम अब तो सच बता दीजिए। आप किससे डर रहे हैं? मैं आपकी सहायता के लिए उपस्थित हूँ।"

"खैर, मेरा मन अब उस अवस्था में पहुँच गया है जहाँ उसे किसी से डर नहीं लगता, मेरा मतलब है किसी से भी नहीं। मैं तुम्हें सीधे-सीधे बताता हूँ। यह सच था कि ये क्षत्रिय बालक तुम्हारी शब्दवेधी विद्या की कुशलता देखकर चकित रह गए थे। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि तुम्हारे पास तांबे का धनुष था। तुम वनवासी, आमतौर पर बाँस के धनुषों के अलावा कोई धनुष नहीं रखते। यहाँ तक कि जब तुम धातु के धनुष को चलाने की कोशिश करते हो, तो तुम्हें उसका इस्तेमाल करना नहीं आता, तुम उसकी तनाव और लोच को माप नहीं पाते। बाँस का धनुष तीर को कितनी दूर तक मार सकता है? तुम्हारे तीरों की नोक में विष होता है, नुकीली धातु नहीं। हल्के तीरों की गति और प्रभाव हमेशा बहुत कम होता है। कुत्ते को जो तीर लगा, उसकी नोक धातु की थी। यह वही तीर था जो मैंने तुम्हें दिया था। भीष्म को यह बात इन बालकों से पता चली। उसी रात उन्होंने मुझे बुलाया और मुझसे पूछा, "हाल के दिनों में वनवासियों ने हम पर हमले बढ़ा दिए हैं। वे आर्य गाँवों में घुसकर अनाज लूट लेते हैं। वे हमारी स्त्रियों को भी अगवा कर लेते हैं। अब अगर तुम ऐसे किसी कबीले के मुखिया के पुत्र को यह विद्या सिखाओगे तो..." आर्यों की धनुर्विद्या का इस्तेमाल करना, क्या हमारे राज्य के हितों के साथ विश्वासघात नहीं होगा? इतना कहना काफी नहीं है। आपको नुकसान की भरपाई करनी होगी। आपको उससे वह वापस लेना होगा जो आपने उसे गलत

तरीके से दिया है। इसका एकमात्र उपाय यह है कि उसका दाहिना अंगूठा काट दिया जाए। इस बीच, आप वनवासियों ने महल के साथ अपने व्यापारिक संबंध बढ़ा लिए थे। क्या आपने अपने वन उत्पादों - बाघों, हिरणों और अन्य जानवरों की खाल, पालतू हाथियों और शहद - का हमारे गेहूं के बदले आदान-प्रदान शुरू नहीं कर दिया था? तब तक आप गेहूं के स्वाद के आदी हो चुके थे। इसलिए, भीष्म आपके साथ संबंध खराब नहीं करना चाहते थे, और वास्तविक शासक होने के नाते, खुले तौर पर आपके अंगूठे को काटने की मांग में खुद को शामिल नहीं करना चाहते थे। भीष्म एक चतुर राजनीतिज्ञ थे, और उन्होंने मुझे इस उद्देश्य के लिए तैयार किया था। मैंने अर्जुन को सिर्फ एक बहाने के रूप में इस्तेमाल किया।

एकलव्य अचंभित और स्तब्ध रह गया। द्रोण का मन भी इतना उथल-पुथल में था कि वे कुछ कह नहीं पा रहे थे और न ही कुछ सुन पा रहे थे। उन्हें अभी भी स्पष्टता नहीं मिल पा रही थी। कुछ देर तक वे दोनों आमने-सामने बैठे रहे, मानो अजनबी हों, दोनों अपने-अपने विचारों में डूबे हुए थे। तभी अंदर दरवाजे पर खड़े हव्यक ने पूछा, "कृपचार्य अभी भी सो रहे हैं। जब मैंने उन्हें रात के खाने के लिए आमंत्रित करने की कोशिश की, तो उन्होंने बड़बड़ाते हुए कहा कि वे खाना नहीं चाहते और फिर से अपनी आँखें बंद कर लीं। अगर आप देर करेंगे, तो मक्के का आटा बहुत नरम हो जाएगा और उसका स्वाद बिगड़ जाएगा।"

"हम दोनों के लिए भोजन लाओ। यह मेरा शिष्य है, निसादा का राजा।"

एकलव्य ने बिना सोचे-समझे तैयार किया हुआ मक्के का आटा खा लिया। द्रोण ने भी ऐसा ही किया। जब वे हाथ धो रहे थे, तभी अश्वत्थामा आ गए। जैसे ही उन्होंने दरवाजा खोला, अंदर आई तेज हवा ने दीपक को लगभग बुझा ही दिया, जिससे लौ तेजी से टिमटिमाने लगी। लेकिन अश्वत्थामा के विशाल शरीर ने हवा को रोककर बाती को स्थिर कर दिया। उन्होंने एकलव्य को पहचाना नहीं। एकलव्य ने बताया, "पिताजी, युयुत्सु अचानक गायब हो गया है। शुरू से ही वह हमारे शत्रुओं के पक्ष में बोल रहा था। महाराजा दुर्योधन को शक है कि वह शत्रुओं के साथ मिल गया है, इसलिए उन्होंने सेवकों को उसकी तलाश में लगा दिया है।"

द्रोणाचार्य ने हाथ धोकर चुपचाप बैठ गए। उन्हें अपने पुत्र को एकलव्य से हुई पुरानी जान-पहचान की याद दिलाने का ख्याल भी नहीं आया। एकलव्य उठकर द्रोणाचार्य के सामने झुक गए, श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया और बोले, "मैंने अपनी सेना से वादा किया था कि मैं जल्द लौट आऊंगा। जब तक मुझे आपका ठिकाना मिला,

तब तक बहुत देर हो चुकी थी। मेरे अधिकांश सैनिक आपकी आर्य भाषा नहीं जानते। हरियाली और पेड़-पौधों से रहित इन वीरान मैदानों में वे असहाय हो सकते हैं। बेहतर यही है कि मैं उनके साथ रहूँ। मैं कल आपसे मिलूंगा।" वे दरवाजा बंद किए बिना ही चले गए। हवा चली और दीपक बुझ गया। द्रोणाचार्य ने हव्यक को पुकारा।

अश्वत्थामा ने भोजन नहीं किया। उन्होंने दुर्योधन के साथ भरपेट भोजन किया था, जिसमें मांस, चावल, पैनकेक और मीठा दलिया शामिल था। पिता और पुत्र अनुष्ठान कक्ष में एक-दूसरे के पास सोए। यद्यपि द्रोण का सिर चूल्हे के पास था, फिर भी बाहर से आती दुर्गंध उनकी नाक में घुस गई। यह उनके पुत्र के पसीने की दुर्गंध के साथ मिली हुई थी। द्रोण को एहसास हुआ कि उनके पुत्र ने पूरे दिन स्नान नहीं किया था। द्रोण सोचने लगे कि क्या उन्होंने पिछले दो दिनों में स्नान किया था। अग्नि अनुष्ठान करने की बात तो दूर, यह कल्पना करना भी उनके लिए और भी कठिन था। तभी द्रोण ने अपने पुत्र के ज़ोर से खर्राटे लेने की आवाज़ सुनी। उन्होंने अपने पुत्र के भारी खर्राटों से भरी एक अचेतन रात को स्वीकार कर लिया। घर पर, उन्हें लगा, सब कुछ अलग था। यह एक विशाल बहुमंजिला घर था। वे भूतल पर सोए और उनका पुत्र ऊपरी मंजिल पर। द्रोण ने मन ही मन कहा, "पर यहाँ तो कोई चारा नहीं है। मुझे उसके खर्राटों को सहना ही पड़ेगा। उसका स्वभाव तो ब्राह्मण जैसा बिल्कुल नहीं है। पर वह क्षत्रिय भी नहीं बन सकता। उसमें आर्य शासक जैसा अभिमान, घमंड और आत्मविश्वास नहीं है। सांसारिक ज्ञान भी नहीं है। पर शारीरिक बल भरपूर है। मैंने उसे शस्त्र विद्या में जो भी कौशल सिखाए हैं, उन सब पर उसकी महारत है। उसे युद्ध कला में दूसरों से श्रेष्ठ बनाने के लिए, मैं उसे गुप्त रूप से कई महत्वपूर्ण तकनीकें और विधियाँ सिखाता था, जो उसके सहपाठियों और अन्य छात्रों को नहीं सिखाई जाती थीं। पर यह मूर्ख तो भोजन का लालच देकर ये सारी बातें अपने सहपाठियों को बता देता है। ऐसा व्यक्ति भला कुछ बन कैसे सकता है?" द्रोण अपने पलंग पर करवट बदल कर लेट गए।

देर रात तक, हालांकि द्रोण के खर्राटे कम नहीं हुए थे, फिर भी उसे नींद आने लगी। नींद में ही उसे अपने पिता की याद आ गई। पिता ने अपने लिए एक आश्रम बनाया था। उनसे शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले किसी भी व्यक्ति को जंगल में स्थित उनके गुप्त ठिकाने पर जाकर उनसे मिलना पड़ता था। उनमें इतनी स्वतंत्रता थी कि वे राजाओं के सामने झुकने से इनकार करते थे। वे बिना किसी डर

के अपने शिष्यों का चुनाव स्वतंत्र रूप से करते थे। यदि कोई उन्हें अयोग्य लगता तो वे उसे शिष्य के रूप में अस्वीकार कर देते थे। ऐसा गुरु कहाँ था जो उन्हें यह बता सके कि किसे पढ़ाना है और किसे नहीं? सपने में उनके पिता उनसे मिलने आए और उन्हें परेशान किया। फिर वे जाग गए। और उनके बेटे के खर्राटे जारी रहे। जल्द ही उनके कान इसकी आदत डाल चुके थे और इसकी यांत्रिक लय पर प्रतिक्रिया देना बंद कर दिया। उनका मन और चेतना धीरे-धीरे नींद के सागर में विलीन हो गई। उन्होंने एक सपना देखा जिसमें उन्होंने एक नया आश्रम स्थापित करने की इच्छा व्यक्त की। सपना सच्ची नींद में बदल गया। लेकिन वे अगली सुबह जल्दी जाग गए। बाहर अभी भी अंधेरा था। पेशाब, मल और पशुओं के गोबर की दुर्गंध इतनी बढ़ गई थी कि उल्टी आने का मन कर रहा था। धुंधली रोशनी में द्रोण ने देखा कि लोग जगह-जगह शौच कर रहे थे। द्रोण क्रोधित हो गए। लेकिन तुरंत ही उन्हें एहसास हुआ कि वे लोग बेबस थे। वे कहाँ जाते? उनका मन भी कहीं दूर, किसी भी जगह जाने का कर रहा था। उन्होंने सोचा, "पांडव बुद्धिमान हैं। वे पहले ही पहुँच गए और अपने डेरे के लिए सबसे अनुकूल जगह चुन ली।" वे कुछ दूर गए और शौच किया। फिर उन्होंने हव्यक को जगाया और पानी लेकर अंदर गए। सूरज तो निकल चुका था, लेकिन अश्वत्थामा नहीं। वह जल्दी उठने वाले नहीं थे। जब वे स्नान करने के लिए अपने तम्बू के पीछे गए, तो हव्यक ने कहा, "पानी का पात्र आधा ही भरा है। कल रात जो पानी आना था, वह अभी तक नहीं आया है। यह पानी खत्म होने के बाद, शौच के बाद नहाने के लिए भी पानी नहीं बचेगा।"

जब तक उसने हाथ-पैर धोकर अंदर आया, एकलव्य आ चुका था। उसके पीछे दो बलवान सेवक थे। उन्होंने ज़मीन पर शहद के दो बड़े घड़े, बाघ की खाल के दो मुलायम टुकड़े और जंगली फलों से भरी एक बाँस की टोकरी रख दी। कल की तरह, उसने फिर द्रोण के सामने प्रणाम किया। बैठने के लिए कहे जाने पर, वह नंगी ज़मीन पर उकड़ू बैठ गया। अश्वत्थामा के खर्राटे बीच-बीच में सुनाई दे रहे थे। द्रोण थोड़ी दूर दूसरी तरफ बैठे थे। खुले द्वार से आती सूरज की किरणें उन पर पड़ रही थीं। द्रोण ने उनका ध्यान से निरीक्षण किया। सूर्य के प्रकाश में चमकता सोने का मुकुट, सोने के कंधे के कवच, हार और अन्य आभूषण अब वहाँ नहीं थे। अब उन्होंने सादा सूती वस्त्र, चमड़े का कवच और चमड़े के कंधे के कवच पहन रखे थे। द्वार पर खड़े उनके सेवक वनवासी जनजाति के पारंपरिक वस्त्र पहने हुए थे। लेकिन उनके कंधों पर धातु के धनुष लटके हुए थे।

बिना किसी भूमिका के, एकलव्य सीधे मुद्दे पर आ गया, "मैंने पूरी रात इस विषय पर विचार किया। अर्जुन से बदला लेने की आशा में मैं इस युद्ध में दुर्योधन का साथ देने आया था। अब मुझे पता चला है कि भीष्म ने ही मेरे साथ अन्याय किया था। और वही इस पक्ष का मुखिया है। इसलिए, अगर मुझे भीष्म से बदला लेना है, तो मुझे अर्जुन का साथ देना ही होगा। कल कुछ घोषणा हुई थी। पांडवों का जन्म किस प्रकार हुआ था?" द्रोण ने 'नियोग' शब्द का प्रयोग किया। एकलव्य ने फिर कहा, "आप लोगों के तो तरह-तरह के रीति-रिवाज हैं, नियोग और न जाने क्या-क्या। हमारे यहाँ ऐसा कुछ नहीं है। हमारा यह अजीबोगरीब विश्वास नहीं है कि अगर कोई बिना संतान के मर जाए और वंश आगे न बढ़े तो पाप लग जाता है। हमारे पास ऐसी कोई संपत्ति नहीं है जिसे हम अपने बच्चों को विरासत में दें, जैसे कि ज़मीन, घर और महल। हमारे लिए यह एक त्रिपक्षीय प्रश्न है कि धर्म अर्जुन के साथ है या दुर्योधन के साथ। इतने सारे लोगों के बीच, उनके पसीने, पेशाब और शौच की बदबू के कारण मुझे पूरी रात नींद नहीं आई। हम ऐसी परिस्थितियों के आदी नहीं हैं। और इस तरह का युद्ध हमारे बस की बात नहीं है। मैंने अपने आदमियों के साथ घर वापस जाने का फैसला किया है।"

द्रोण समाधि की अवस्था में स्थिर बैठे रहे। उन्हें एकलव्य के शब्दों में कुछ नया अर्थ समझ आने लगा। जैसे याद करते हुए एकलव्य ने आगे कहा, "हमारा जंगल कुरु और पांचालों के बीच स्थित है। हमारे पालतू हाथियों की मांग दोनों राज्यों में है। जब मुझे पता चला कि अर्जुन ने पांचालों की पुत्री से विवाह किया है, तो मैंने पांचालों को हाथियों की आपूर्ति बंद कर दी। उन्होंने मुझसे कहा कि वे एक हाथी की कीमत दो और बैलगाड़ी अनाज और पांच और सोने के सिक्कों के बराबर बढ़ा देंगे। लेकिन मैंने मना कर दिया और उसे हस्तिनावती को कम कीमत पर बेच दिया। अब मुझे एहसास हो रहा है कि मैंने बहुत बड़ी गलती की है। अब मैं उन्हें किसी को नहीं बेचूंगा। मैंने यहाँ दोनों तरफ का जायजा लेने के लिए एक पेड़ पर चढ़ाई की। दोनों राज्यों ने इतने सारे हाथी जमा कर रखे हैं। कहा जाता था कि हाथी माल ढोने के लिए खरीदे गए थे। अब मुझे पता चला है कि वे उनका इस्तेमाल युद्ध में कर रहे हैं और उन्हें मौत के मुंह में धकेल रहे हैं। मुझे उन्हें बेचने का बहुत अफसोस है। मैं तुम्हारे आर्य राजाओं की तरह सोने के आभूषण पहनता था, और सोने के बदले हाथी खरीदे गए थे। कल रात गहन चिंतन के बाद, मैंने आर्यों के सारे वस्त्र त्याग दिए और संकल्प लिया।" अपनी पारंपरिक पोशाक पहनने के लिए।"

गुरु अब भी चुप थे। यह कहना मुश्किल था कि क्या उनके पास कहने के लिए कुछ बचा ही नहीं था या वे कुछ सोच ही नहीं पा रहे थे। एकलव्य भी चुपचाप बैठा रहा। लेकिन द्रोण उसे देखते रहे। एकलव्य उठा, अश्वत्थामा के पास से गुजरा और द्रोण के चरणों में प्रणाम किया। फिर वह चला गया। उसके साथ आए दोनों सेवक भी उसके पीछे-पीछे चले गए। द्रोण मूर्ति की तरह स्थिर बैठे रहे। अश्वत्थामा के खर्राटे बंद हो गए। लेकिन नींद में सांस लेते हुए उसका शरीर छाती से नाभि तक लयबद्ध रूप से हिल रहा था। अपने पुत्र को देखकर उन्हें क्रोध आ गया। उन्होंने मन ही मन कहा कि उनका पुत्र ब्राह्मण नहीं है। वे उसे श्राप देना चाहते थे। लेकिन जल्द ही उन्हें एहसास हुआ कि ऐसा करने की हिम्मत उनमें नहीं है। उसी समय हव्यक ने पूछा, "क्या मैं अग्नि अनुष्ठान के लिए सामग्री तैयार रखूँ?" द्रोण ने कोई उत्तर नहीं दिया। हालांकि, हव्यक ने अनुष्ठान के लिए सामग्री तैयार कर ली - टहनियों का एक छोटा गट्ठा और घी से भरा एक पात्र। शहर से बाघ की खाल लाना भूल जाने पर उन्होंने एकलव्य द्वारा लाई गई दो खालें ज़मीन पर रख दीं। फिर वे शहद और एकलव्य द्वारा लाए गए फल अंदर ले गए। द्रोण दर्भ की चटाई पर बैठ गए, टहनियों को चूल्हे में धकेल कर हवा देने लगे। थोड़ी देर में आग लग गई। जैसे ही उन्होंने पवित्र मंत्रों का जाप किया और घी डाला, चूल्हे की सुगंध फैलने लगी। अचानक बाहर से एक हवा आई और मानव-पशु मल की दुर्गंध फैल गई। उन्होंने नाक बंद कर ली और मुँह से साँस लेने लगे। फिर भी दुर्गंध असहनीय थी। यद्यपि कोई अनुष्ठान नहीं था, फिर भी उन्होंने चार करछुल घी डाला। उन्होंने अपना चेहरा आग के पास कर लिया। जलती हुई लपटों की सुखद गर्मी में उनके मुँह से स्वतः ही अनुष्ठानिक शब्द निकल आए। परन्तु उनका मन कहीं और था, एकलव्य के वचनों को याद कर रहा था और उन्हें आत्मसात कर रहा था। द्रोण को याद आया कि एकलव्य ने कहा था कि भीष्म और अर्जुन दोनों के दल का साथ देना व्यर्थ है, और वन में लौट जाना ही सर्वोत्तम है। द्रोण ने इसे सर्वोत्तम निर्णय माना। अब द्रोण अग्नि अनुष्ठान करते हुए सचेतनता से मंत्रों का जाप करने लगे। उनके मन में एक दृढ़ निश्चय स्थापित हो गया, “मैं मानता हूँ कि पांडवों का पक्ष धर्म का है। मैंने दुर्योधन का साथ इसलिए दिया क्योंकि मैंने उसका भोजन किया था। परन्तु अब मैं देखता हूँ कि जिन्होंने मेरे उत्तरी पंचाल को हड़प लिया है, वे मुझसे कहीं अधिक मेरे ऋणी हैं।” उनका निर्णय दृढ़ हो गया। मन हल्का हो गया और मंत्र अधिक स्पष्टता और एकाग्रता से निकलने लगे। उन्होंने अनुष्ठान पूरा किया। अग्नि के चारों

ओर विधिपूर्वक परिक्रमा करते हुए उन्होंने अश्वत्थामा को आँखें खोलते देखा। चूंकि उन्होंने सारा घी चूल्हे में डाल दिया था, इसलिए अग्नि प्रज्वलित होकर भड़क उठी, जिससे अश्वत्थामा का उत्साह और बढ़ गया।

द्रोण ने कहा, "बच्चे, उठो। मैं तुम्हें कुछ बताना चाहता हूँ।"

Ashwatthama sat up.

"देखो यहाँ। आर्य धर्म स्पष्ट रूप से कहता है कि पांडवों का जन्म वैध है। अब हम धर्म का उल्लंघन कर रहे हैं। लेकिन हमें उनके पास नहीं जाना चाहिए। हमें इन लोगों के साथ भी नहीं रहना चाहिए। हमें यहाँ से कहीं दूर जाकर एक आश्रम स्थापित करना चाहिए और वहाँ रहना चाहिए। इस बारे में आपका क्या विचार है?"

अश्वत्थामा ने गहरी जम्हाई लेते हुए कहा, "नहीं। मैं दुर्योधन का साथ नहीं छोड़ूंगा।"

"तुम दोनों का यह कैसा रिश्ता है? ऋषियों और साधुओं ने तुम्हें दुल्हन देने से इनकार कर दिया क्योंकि तुमने अपने ब्राह्मणत्व की पवित्रता को बनाए नहीं रखा। तुम क्षत्रिय दुल्हन पाने में असफल रहे क्योंकि उन्होंने तुम्हें निकम्मा समझकर क्षत्रिय घरों में बेशर्मी से जूठे टुकड़े खाने वाला समझकर तिरस्कृत कर दिया। क्या वह दुर्योधन तुम्हें कम से कम एक दुल्हन दिला सकता है? अब तुम पचपन वर्ष के हो गए हो। भारद्वाज वंश तुम्हारे साथ ही समाप्त हो जाएगा।" क्रोध में उनके शब्द और भी ऊँचे हो गए थे, यहाँ तक कि झोपड़ी के बाहर तक सुनाई दे रहे थे।

अश्वत्थामा ने एक बार फिर जम्हाई ली। अपने मुँह को सामान्य स्थिति में लाने के बाद उन्होंने उत्तर दिया, "पिताजी, आपका दिमाग खराब हो गया है। ऐसा लगता है कि धृष्टद्युम्न जोर-जोर से चिल्ला रहा है कि वह तब तक खुद को पंचाल नहीं मानेगा जब तक वह द्रोण को मार नहीं डालता, जिसने उसके पिता को पलंग से बांधकर अपमानित किया था। वह पांडवों का बहनोई है। यदि अब आप युद्ध करने से इनकार कर दें और भागकर आश्रम बना लें, तो क्या दूसरे देशों के लोग आप पर नहीं हँसेंगे और यह नहीं कहेंगे कि धनुर्विद्या का महान नेता कायर है? क्या मुझे उस धृष्टद्युम्न का खून नहीं बहाना चाहिए?"

द्रोण के पास कोई जवाब नहीं था। कुछ देर रुकने के बाद उन्होंने अपने बेटे से कहा, "जाओ और अपना चेहरा धो लो। हमारे पास उत्तम शहद और फल हैं।" उन्होंने अपने मजबूत कंधों को हिलाकर अपने बेटे को उठने के लिए कहा।

—•✳•—

अध्याय 49

सारथी सुकेशा ने घोषणा की, "शरणस्थल यहाँ है। वे गोल छत वाली कुटियाएँ वहाँ हैं। वही स्थान है।" भीष्म ने घुड़सवारों को रथ से उतरकर पैदल चलने का आदेश दिया। वे स्वयं भी रथ से उतर गए। हालाँकि रथ के डगमगाने और हिलने से उनके पूरे शरीर में दर्द हो रहा था, फिर भी पैदल चलना अच्छा लग रहा था। सुकेशा ने उनका हाथ पकड़कर मशाल की रोशनी में उस वृद्ध योद्धा के साथ चलना शुरू किया। भीष्म ने कहा, "मशालधारियों को पीछे भेज दो। मैं जलने की गंध सहन नहीं कर सकता।" फिर उन्होंने गहरी साँस ली। वे अग्नि की सुगंध का आनंद ले रहे थे। इन आश्रमों में अग्नि कभी बुझती नहीं थी, और उस पर डाले गए घी की सुगंध हजारों फीट दूर तक महसूस की जा सकती थी। अपनी नाक से सुगंध का आनंद लेते हुए भीष्म को अग्नि अनुष्ठान के पवित्र शब्द याद आ गए। उन्होंने पूछा, "अब कितनी दूर है?" सुकेशा ने उत्तर दिया, "ज्यादा दूर नहीं। सौ फीट भी नहीं। वहाँ।" उन्हें सारथी की बात पर विश्वास नहीं हुआ। वे गहरी साँस लेने के लिए रुके। फिर भी उन्हें विश्वास नहीं हुआ। यह एक अलग तरह की गंध थी। वह इसे तुरंत पहचान नहीं पाए। हाँ, अब उन्हें लगा कि वह पहचान सकते हैं। यह ऐसी गंध थी जिसे अपेक्षित होने पर आसानी से पहचाना जा सकता था, लेकिन किसी अनपेक्षित स्थान पर नहीं। अब यह क्या था? भीष्म को अब यकीन हो गया था कि यह किसी मृत शरीर के जलने की गंध थी या पहले से जले हुए मांस और हड्डियों की गंध थी। उन्होंने सुकेशा से कहा, "सुकेशा, क्या यह किसी मानव शरीर - मांस और हड्डियों - के जलने की गंध नहीं है?" यह गंध विपरीत दिशा से आई। सुकेशा ने उत्तर दिया, "जी, दादाजी। आश्रम में किसी की मृत्यु हो गई होगी। यह चिता की गंध है।" भीष्म चिंतित हो गए और सोचने लगे कि किसकी मृत्यु हुई होगी। क्या यह कृष्ण द्वैपायन

थे? हालाँकि उन्होंने मन ही मन प्रार्थना की कि यह कृष्ण द्वैपायन न हों, फिर भी उनका संदेह दूर नहीं हुआ। उन्होंने सोचा, "यद्यपि वह मुझसे छोटे हैं, फिर भी उनकी उम्र लगभग एक सौ आठ या दस वर्ष है। और उनका शरीर सिकुड़ा हुआ और मुरझाया हुआ है। यह किसी भी समय समाप्त हो सकता है।" जैसे-जैसे वे आश्रम के करीब पहुँचते गए, मृत शरीर की दुर्गंध और तीव्र होती गई। इसने न केवल भीष्म की नाक को, बल्कि उनके मन को भी झकझोर दिया। धुंधली चाँदनी में झोपड़ियों की रूपरेखा स्पष्ट होने के बजाय, वे अस्पष्ट और भयावह दिखाई दे रही थीं। पक्षियों या कीड़ों की कोई आवाज सन्नाटे को नहीं तोड़ रही थी। गायों या भैंसों की कोई आवाज वातावरण में सुनाई नहीं दे रही थी। जलते हुए मानव मांस और हड्डियों की दुर्गंध से भरे वातावरण में वैदिक ग्रंथों का पाठ करना वर्जित था। शायद इस मृत्यु से भरे वातावरण में सबसे उपयुक्त ध्वनि उल्लुओं की आवाज होती। लेकिन वह आवाज भी सुनाई नहीं दे रही थी।

लेकिन जब वे आश्रम पहुँचे, तो वहाँ लोग मौजूद थे। लगभग साठ से अस्सी वैदिक विद्वान। तीस से चालीस अविवाहित ब्राह्मण। सफेद और काली दाढ़ी-मूंछ और उलझे बालों वाले। उनमें से कुछ बूढ़े थे, जो इतनी ठंड में भी अपने सीने को कंबल से नहीं ढक रहे थे। उनके साथ तीन जलती हुई मशालें थीं। जब उन्होंने भीष्म और उनके साथियों को पहचाना, तो एक मशालधारी उनकी ओर दौड़ा। उसके साथ कृष्ण द्वैपायन भी थे, जिनके बाल सफेद और सीना काला था। उनके चेहरे पर एक मृत आत्मा जैसी शांति थी। भीष्म बोले, "कृष्ण, लगता है आश्रम में किसी की मृत्यु हो गई है। मैंने आपके पास आने के लिए अशुभ समय चुना है। किसकी मृत्यु हुई है?"

जब उसने उत्तर दिया, "मैं", तो उसकी आवाज़ किसी मृत व्यक्ति जैसी लग रही थी। उसकी आवाज़, उसका चेहरा, उसकी आँखें भूतिया थीं। भीष्म को उसका चेहरा साफ़ दिखाई दे रहा था। दोनों के बीच मशाल की पीली लपटें उठ-गिर रही थीं। मशाल तेल में भीगी हुई थी। उनके चारों ओर भूतों की तरह मंडराती परछाइयाँ खामोश थीं। द्वैपायन का प्रश्न, "आपको यह खबर कैसे मिली?" भीष्म को तुरंत समझ नहीं आया। उन्होंने उत्तर दिया, "जाने का निश्चय करके आप दोपहर तक यहाँ पहुँचने के लिए जल्दी निकल सकते थे। उस स्थिति में, आपको मरते हुए व्यक्ति के चेहरे की अंतिम झलक मिल जाती। यदि आप सूर्यास्त से पहले आते, तो आप मृत व्यक्ति का चेहरा देख सकते थे।" ये शब्द भीष्म को कुछ हद तक

उलझन में डाल गए, और वे उनका अर्थ पूरी तरह से समझ नहीं पाए। द्वैपायन ने मन ही मन कहा, "इससे क्या फर्क पड़ता है कि आपने उसका चेहरा देखा या नहीं?" उन्होंने आगे कहा, "ये मेरे शब्द नहीं हैं, बल्कि मृत व्यक्ति के शब्द हैं।" फिर द्वैपायन अचानक चुप हो गए। जैसे ही हवा शांत हुई, लपटें धीमी पड़ गईं, लेकिन परछाइयों की हलचल जारी रही। इसी क्षण भीष्म को संदेह हुआ कि जिस मृत व्यक्ति का जिक्र हो रहा है, वह द्वैपायन का पुत्र शुकदेव हो सकता है। जब उन्होंने दाईं ओर मुड़कर आश्रम के एक निवासी को देखा, जो लगभग अस्सी वर्ष का था, गोरे रंग का था और काले रंग का कंबल ओढ़े हुए था, तो भीष्म का संदेह पुख्ता हो गया। वह व्यक्ति कह रहा था, "शुकदेव एक महान ऋषि और विद्वान थे। उन्हें अपनी मृत्यु को स्वयं चुनने का वरदान प्राप्त था। उन्होंने स्वयं अपनी मृत्यु का चुनाव किया।"

फिर द्वैपायन गिर पड़े और ज़मीन पर बैठ गए। पास ही किसी ने तुरंत उनकी पीठ को सहारा दिया। उनके सामने बैठकर, धुंधली रोशनी में उनके कंधों को थामते हुए भीष्म ने शोक संतप्त पिता को सांत्वना देने का प्रयास किया, “कृष्ण, यह सच है कि मैं तुमसे बड़ा हूँ। मैं तुम्हारा चचेरा भाई भी हूँ। और वैदिक ज्ञान को आत्मसात और निपुण करने के बाद, तुम्हें सलाह देने की योग्यता किसे है? क्या कोई जन्म से मृत्यु से बच पाया है? कुछ जल्दी चले जाते हैं और कुछ देर से। मैं स्वयं अक्सर अपने लंबे जीवन से घृणा करता हूँ जिसने मुझे सबसे बुरी चीजें होते हुए देखने के लिए मजबूर किया है। लेकिन क्या हम अपनी मृत्यु के स्वामी हैं? कहते हैं कि शुकदेव को इच्छा से मरने का वरदान प्राप्त था। क्या यह कोई साधारण उपलब्धि है? उठो। चलो आश्रम चलते हैं।”

मशाल की रोशनी में द्वैपायन का चेहरा मृत्यु के समान गंभीर दिख रहा था। उनकी आँखें, जो आमतौर पर भेदक दृष्टि रखती थीं, अब सूखी और निर्जीव लग रही थीं। भीष्म और उनके दो शिष्यों ने उन्हें सहारा देकर आश्रम तक पहुँचाया। अस्सी वर्षीय, लाल चेहरे वाले शिष्य ने अपने गुरु से भोजन करने का आग्रह करते हुए कहा, "आपको दूध में मिला हुआ यह मक्के का आटा खाना ही होगा। क्या उनकी मृत्यु उसी दिन तय नहीं हो गई थी जिस दिन उन्होंने उपवास शुरू किया था? आज तो केवल उनका शरीर ही क्षीण हुआ है। आप जैसे ज्ञानी, ऋषि और द्रष्टा इतने दुखी होकर भोजन कैसे त्याग सकते हैं? आप अपने जीवन का उद्देश्य कैसे पूरा कर सकते हैं?"

भाग बारह



अध्याय 50

पूरा आश्रम अंधकार में डूबा हुआ था। जलते हुए मांस की दुर्गंध पाँचों इंद्रियों को व्याकुल कर रही थी। मानो वह वातावरण को आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों

रूप से प्रदूषित कर रही हो। भीष्म को ऐसा लगा जैसे वे स्वयं मृत्यु के गर्भ में प्रवेश कर गए हों। बेशक, उन्हें स्वयं मृत्यु से भय नहीं था, क्योंकि उन्हें स्वेच्छा से मृत्यु का विकल्प प्राप्त था। ऐसा नहीं था कि उन्होंने अपने लंबे जीवन में मृत्यु का सामना नहीं किया था। उन्हें याद था कि उन्होंने अपने परिवार में कितने ही युवाओं को मरते देखा था। उन असामयिक मृत्युओं के कारण ही उन्हें राज्य और कुरु परिवार दोनों की बागडोर संभालनी पड़ी थी! फिर भी, मृत्यु के साथ इन पूर्व अनुभवों ने कभी भी मृत्यु की उपस्थिति का ऐसा तीव्र अहसास नहीं कराया था। भीष्म ने अपने नाभि की नसों से मृत्यु के धुएँ को उठते हुए महसूस किया, जब वे उस महान ऋषि का प्रवचन सुन रहे थे, जिन्हें अब उनका स्वागत करने के लिए बुलाया गया था। यह उनकी अपनी मृत्यु का धुआँ नहीं था। नहीं, जो उसने देखा और अनुभव किया, वह मृत्यु की छाया थी जो सब कुछ पर व्याप्त होकर उसे तैयार कर रही थी—जिस धरती पर वह रहता था, जिस पानी को वह पीता था, जिस अनाज को वह खाता था, और आकाश, सूर्य, चंद्रमा, तारे, पेड़-पौधे जिन्हें उसकी आँखों ने तृप्त कर लिया था। वह आश्रम के कार्य का अर्थ भी समझ सकता था। कृष्ण द्वैपायन के चार प्रमुख शिष्य थे। उनमें से एक ने अन्य शिष्यों का परिचय कराते हुए कहा, "आप उस अस्सी वर्षीय लाल चेहरे वाले, काले कंबल ओढ़े हुए व्यक्ति को देखिए, जो गुरु की कुटिया में इसलिए रहता है ताकि दुखी गुरु अकेले न रह जाएँ, वह पैला है। जो दूध में मिला हुआ आटा लाया है, वह वैशम्पायन है। जो यहाँ दीपक लाया है, वह जैमिनी है। मैं सुमंतु हूँ। गुरु ने हममें से प्रत्येक को एक विशेष वेद का उपदेश दिया है। उपदेश का अर्थ है नियमित पाठ।" भीष्म ने बीच में टोकते हुए कहा, "एक-एक का क्या मतलब है? क्या वेद एक ही वस्तु नहीं है?" भीष्म को याद आया कि लगभग नब्बे वर्ष पूर्व, युवावस्था में, वह वेदों का अध्ययन कर रहे थे, और यह प्रश्न उसी स्मृति से उत्पन्न हुआ। फिर भी, इस प्रश्न का एक गहरा, आंतरिक स्रोत था। वास्तव में, यह प्रश्न वर्तमान के दबावों, विशेष रूप से मृत्यु के रहस्य और वास्तविकता से उत्पन्न हुआ था। और इसलिए उन्होंने बहस जारी रखते हुए पूछा, "वेदों को चार भागों में किस आधार पर विभाजित किया गया? चार भागों में विभाजित करने के बाद, आपमें से प्रत्येक को केवल एक भाग ही क्यों पढ़ाया गया? ऐसा कैसे हुआ कि आपमें से प्रत्येक को चारों भाग नहीं पढ़ाए गए?" सुमंता ने समझाया, "ऐसा इसलिए नहीं है कि एक शिष्य को एक से अधिक वेद नहीं सिखाए जा सकते। गुरु ने कभी यह नहीं कहा कि वे अन्य वेद नहीं सिखाएंगे। लेकिन मुख्य

प्रश्न यह है: एक से अधिक, या यहाँ तक कि एक वेद को भी आत्मसात करने की क्षमता और सामर्थ्य किसके पास है? आप हमारे गुरु को भली-भांति जानते हैं। जब वे आठ वर्ष के थे, तब उनके पिता पराशर उन्हें उनकी माता से ले गए और उन्हें वेदों के आजीवन अध्ययन में लगा दिया। वे जन्म से ही तीक्ष्ण बुद्धि के धनी थे। और उनकी स्मृति शक्ति अद्भुत थी। ईश्वर ही जानता है कि उन्होंने अपने पिता के साथ कितने देशों की यात्रा की! अपने पिता की मृत्यु के बाद भी, उन्होंने अपना निरंतर भ्रमण जारी रखा, विभिन्न देशों का दौरा किया और वैदिक विद्या की विभिन्न परंपराओं की खोज की। आप यह सब जानते हैं। विभिन्न देशों में, वे अनुष्ठानों में विभिन्न पवित्र ग्रंथों का उपयोग करते हैं। यहाँ तक कि उच्चारण भी भिन्न होते हैं। इन अनुष्ठानों के अर्थ और फल पर उनकी अलग-अलग व्याख्याएँ हैं। सिद्धांत और सही अभ्यास को लेकर अंतहीन विवाद होते रहे हैं, होते रहे हैं और जारी हैं। इसके अतिरिक्त, शायद हजारों वर्षों में, विभिन्न ऋषियों और द्रष्टाओं द्वारा विभिन्न परंपराएँ विकसित हुई हैं। और प्रत्येक

पूरा आश्रम अंधकार में डूबा हुआ था। जलते हुए मांस की दुर्गंध पाँचों इंद्रियों को व्याकुल कर रही थी। मानो वह वातावरण को आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों रूप से प्रदूषित कर रही हो। भीष्म को ऐसा लगा जैसे वे स्वयं मृत्यु के गर्भ में प्रवेश कर गए हों। बेशक, उन्हें स्वयं मृत्यु से भय नहीं था, क्योंकि उन्हें स्वेच्छा से मृत्यु का विकल्प प्राप्त था। ऐसा नहीं था कि उन्होंने अपने लंबे जीवन में मृत्यु का सामना नहीं किया था। उन्हें याद था कि उन्होंने अपने परिवार में कितने ही युवाओं को मरते देखा था। उन असामयिक मृत्युओं के कारण ही उन्हें राज्य और कुरु परिवार दोनों की बागडोर संभालनी पड़ी थी! फिर भी, मृत्यु के साथ इन पूर्व अनुभवों ने कभी भी मृत्यु की उपस्थिति का ऐसा तीव्र अहसास नहीं कराया था। भीष्म ने अपने नाभि की नसों से मृत्यु के धुएँ को उठते हुए महसूस किया, जब वे उस महान ऋषि का प्रवचन सुन रहे थे, जिन्हें अब उनका स्वागत करने के लिए बुलाया गया था। यह उनकी अपनी मृत्यु का धुआँ नहीं था। नहीं, जो उसने देखा और अनुभव किया, वह मृत्यु की छाया थी जो सब कुछ पर व्याप्त होकर उसे तैयार कर रही थी—जिस धरती पर वह रहता था, जिस पानी को वह पीता था, जिस अनाज को वह खाता था, और आकाश, सूर्य, चंद्रमा, तारे, पेड़-पौधे जिन्हें उसकी आँखों ने तृप्त कर लिया था। वह आश्रम के कार्य का अर्थ भी समझ सकता था। कृष्ण द्वैपायन के चार प्रमुख शिष्य थे। उनमें से एक ने अन्य शिष्यों का परिचय कराते हुए कहा, "आप उस

अस्सी वर्षीय लाल चेहरे वाले, काले कंबल ओढ़े हुए व्यक्ति को देखिए, जो गुरु की कुटिया में इसलिए रहता है ताकि दुखी गुरु अकेले न रह जाएँ, वह पैला है। जो दूध में मिला हुआ आटा लाया है, वह वैशम्पायन है। जो यहाँ दीपक लाया है, वह जैमिनी है। मैं सुमंतु हूँ। गुरु ने हममें से प्रत्येक को एक विशेष वेद का उपदेश दिया है। उपदेश का अर्थ है नियमित पाठ।" भीष्म ने बीच में टोकते हुए कहा, "एक-एक का क्या मतलब है? क्या वेद एक ही वस्तु नहीं है?" भीष्म को याद आया कि लगभग नब्बे वर्ष पूर्व, युवावस्था में, वह वेदों का अध्ययन कर रहे थे, और यह प्रश्न उसी स्मृति से उत्पन्न हुआ। फिर भी, इस प्रश्न का एक गहरा, आंतरिक स्रोत था। वास्तव में, यह प्रश्न वर्तमान के दबावों, विशेष रूप से मृत्यु के रहस्य और वास्तविकता से उत्पन्न हुआ था। और इसलिए उन्होंने बहस जारी रखते हुए पूछा, "वेदों को चार भागों में किस आधार पर विभाजित किया गया? चार भागों में विभाजित करने के बाद, आपमें से प्रत्येक को केवल एक भाग ही क्यों पढ़ाया गया? ऐसा कैसे हुआ कि आपमें से प्रत्येक को चारों भाग नहीं पढ़ाए गए?" सुमंता ने समझाया, "ऐसा इसलिए नहीं है कि एक शिष्य को एक से अधिक वेद नहीं सिखाए जा सकते। गुरु ने कभी यह नहीं कहा कि वे अन्य वेद नहीं सिखाएंगे। लेकिन मुख्य प्रश्न यह है: एक से अधिक, या यहाँ तक कि एक वेद को भी आत्मसात करने की क्षमता और सामर्थ्य किसके पास है? आप हमारे गुरु को भली-भांति जानते हैं। जब वे आठ वर्ष के थे, तब उनके पिता पराशर उन्हें उनकी माता से ले गए और उन्हें वेदों के आजीवन अध्ययन में लगा दिया। वे जन्म से ही तीक्ष्ण बुद्धि के धनी थे। और उनकी स्मृति शक्ति अद्भुत थी। ईश्वर ही जानता है कि उन्होंने अपने पिता के साथ कितने देशों की यात्रा की! अपने पिता की मृत्यु के बाद भी, उन्होंने अपना निरंतर भ्रमण जारी रखा, विभिन्न देशों का दौरा किया और वैदिक विद्या की विभिन्न परंपराओं की खोज की। आप यह सब जानते हैं। विभिन्न देशों में, वे अनुष्ठानों में विभिन्न पवित्र ग्रंथों का उपयोग करते हैं। यहाँ तक कि उच्चारण भी भिन्न होते हैं। इन अनुष्ठानों के अर्थ और फल पर उनकी व्याख्याएँ भी भिन्न होती हैं। सिद्धांत और उचित अभ्यास को लेकर अंतहीन विवाद होते रहे हैं, होते रहे हैं और जारी हैं। इसके अतिरिक्त, शायद हजारों वर्षों में, विभिन्न ऋषियों और द्रष्टाओं द्वारा विभिन्न परंपराएँ विकसित हुई हैं। और प्रत्येक परंपरा यह अपने सिद्धांतों और रीति-रिवाजों की सर्वोच्चता का समर्थन और प्रचार करता है। गुरु ने इन सभी भिन्नताओं में महारत हासिल कर ली है, और ऐसी कोई परंपरा नहीं है जिससे वे अनभिज्ञ हों।

क्या यह उनकी कोई साधारण उपलब्धि थी कि उन्होंने इन भिन्नताओं के अंतर्निहित सार और सत्य को भेदकर एक उत्कृष्ट संश्लेषण प्रस्तुत किया? उन्होंने इस विशाल कार्य को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। क्या गारंटी है कि भविष्य में हमें कोई ऐसा व्यक्ति मिलेगा जिसमें इतनी व्यापक अध्ययन करने की क्षमता और लगन हो? यह सच है कि प्रारंभ में मेरी चारों वेदों का अध्ययन करने की महत्वाकांक्षा थी। लेकिन जब तक मैं एक वेद पर भी पकड़ बना पाता, तब तक मेरी ऊर्जा और क्षमताएँ समाप्त हो चुकी होती थीं।

तब भीष्म को याद आया: "यह कृष्ण तेरह वर्ष के थे जब वे अपने पिता के साथ अपनी माता से मिलने हस्तिनावती आए थे। लेकिन इतनी कम उम्र में भी उन्होंने अधिकांश वेदों को याद कर लिया था। जब यह तय हुआ कि अंबिका और अंबालिका, जो निःसंतान विधवा थीं, का नियोग करने के लिए वे ही सबसे उपयुक्त हैं, तब उनकी आयु लगभग अट्ठाईस या तीस वर्ष थी। सुबह उठते ही उनके पास वेदों का पाठ और स्मरण करने के अलावा और कोई काम नहीं होता था। उन्होंने हस्तिनावती के ब्राह्मणों से उनके धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन किया। उन्होंने मुझसे भी वे सभी धार्मिक ग्रंथ सीखे जो मुझे ज्ञात थे। बाद में वे अविवाहित रहे। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी विद्या और विद्वत्ता की परंपरा को आगे बढ़ाने के लिए उन्होंने अप्सरा वंश की एक स्त्री का गर्भ उपहार में प्राप्त किया, उसमें अपना बीज बोया और एक पुत्र को जन्म दिया। कहा जाता है कि उनका पुत्र बुद्धि और वैदिक ज्ञान में अपने पिता से कहीं अधिक श्रेष्ठ था। मुझे यकीन नहीं है कि मैंने उन्हें देखा है। शायद, नहीं, वे कभी हस्तिनावती नहीं आए। शायद वे आए हों, लेकिन मैं मुझे उसकी बहुत याद आ रही थी। आमरण अनशन का व्रत लेते हुए उसकी मृत्यु क्यों हुई? मुझे सुमंत से पूछना ही होगा... फिर भी भीष्म को सुमंत से पूछने में एक तरह का डर था। हाँ, एक बार फिर उनका मन मृत्यु की गंध से भर गया था। इससे उन्हें अपने आप से घृणा होने लगी। फिर भी, वे अपनी जिज्ञासा पर काबू नहीं पा सके और द्वैपायन के पुत्र के मरने का कारण पूछ लिया। तेल का दीपक अपनी मंद रोशनी बिखेर रहा था। ऐसा लग रहा था मानो उसकी रोशनी आसपास के अंधेरे से हार रही हो। उनके सामने धुंधली सी दिखाई दे रही थी सुमंत की सफेद दाढ़ी, झुर्रीदार माथा, धँसी हुई आँखें। ऐसा लग रहा था मानो उनके चेहरे के भाव स्वाभाविक रूप से आसपास के अंधेरे में विलीन हो रहे हों।

सुमंता ने उत्तर दिया, "शुकादेव अपने पिता से भी अधिक प्रतिभाशाली थे। लेकिन वे अपने पिता के शिष्य भी थे। अपने पिता की ही तरह उन्होंने अनेक देशों की यात्राओं के माध्यम से ज्ञान का भंडार अर्जित किया था। केवल वैदिक ज्ञान ही नहीं, बल्कि उन्होंने कुछ स्थानों पर वेदों के विपरीत विचारों और चिंतन को भी लगन से आत्मसात किया था। और यही उनके पतन का कारण बना। क्या आस्थाहीन और प्रतिबद्धताहीन व्यक्ति सुखी रह सकता है?"

भीष्म ने कहा, "बिल्कुल नहीं। इससे सुख कैसे मिल सकता है? लेकिन उसने आस्था कैसे खो दी?"

सुमंता कहते हैं, "एक तरह से, उनके मामले को आस्था की कमी के रूप में वर्णित करना कठिन है। शुरुआत में, उन्होंने यह तर्क देना और बनाए रखना शुरू किया कि जीवन के तीन चरणों - ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वनप्रस्थ - में से सर्वोच्च पहला चरण ब्रह्मचर्य है। अब यह एक ऐसा मत है जिसे आसानी से या पूरी तरह से नकारा नहीं जा सकता।"

भीष्म मन ही मन प्रसन्न हुए कि एक महान ऋषि का ऐसा पुत्र है जो उस जीवन-अवस्था की सर्वोच्चता को कायम रखता है जिसे उन्होंने स्वयं अपने जीवन की एकमात्र अवस्था के रूप में स्वीकार किया था। उन्होंने सहमति जताते हुए कहा, "हाँ, भला कोई ऐसा कैसे कर सकता है?"

"गृहस्थ्य का अर्थ है आसक्ति।" सुमंत ने कहा, "गृहस्थ पत्नी और बच्चों जैसी आसक्तियाँ विकसित करता है, जो समय के साथ और भी प्रबल होती जाती हैं और उसे जकड़ लेती हैं। यह भ्रम है कि वृद्धावस्था में इनसे छुटकारा पाना संभव है। इसलिए, समस्या को जड़ से उखाड़ फेंकना ही सर्वोत्तम है। अतः शुकदेव ने इस बात का समर्थन किया कि व्यक्ति को ब्रह्मचर्य अवस्था से बाहर नहीं निकलना चाहिए।"

भीष्म ने प्रशंसापूर्वक सिर हिलाते हुए कहा, "जी हाँ, जी हाँ।"

सुमंता कहते हैं, "उन्होंने इन तर्कों से कुछ स्थानों पर विद्वानों को पराजित किया था। वाद-विवाद कौशल, तर्कशक्ति और तार्किक क्षमता में वस्तुतः कोई भी उनका मुकाबला नहीं कर सकता था। वाद-विवाद में उन्हें कोई हरा नहीं सकता था। जैसा कि आप जानते हैं, विदेह का दरबार अपने दार्शनिक और आध्यात्मिक वाद-विवादों और प्रवचनों के लिए प्रसिद्ध है। वहाँ भी वे विजयी रहे। उन्होंने उनके वचनों की सार-परीक्षा बहुत सख्ती से की। उन्होंने उनकी देखभाल के लिए कामुक कला में

निपुण, बेहद आकर्षक वेश्याओं को भेजा, जिनका कोई भी पुरुष विरोध नहीं कर सकता था। जैसा कि आप जानते हैं, ऋषियों को स्त्रियों के साथ यौन संबंध बनाने की मनाही नहीं है। उन्होंने इस तथ्य को गुप्त रखा था कि ये वेश्याएँ इस कला में निपुण थीं। उनकी सेवा करने के बहाने, उन्होंने उन्हें छुआ और अपने हर तरह के हथकंडे से उन्हें लुभाया। लेकिन शुकदेव न केवल शारीरिक रूप से बल्कि मानसिक रूप से भी अविचलित रहे। उन्होंने उनके व्यवहार में किसी भी तरह की चूक का पता लगाने के लिए उन पर कड़ी निगरानी रखी थी। उन्हें ऐसा कोई संकेत नहीं मिला, यहाँ तक कि उनकी आँखों की कोई हरकत भी नहीं, जिससे यह पता चले कि वे शारीरिक या मानसिक रूप से वेश्याओं के वश में हो गए थे।"

भीष्म ने स्पष्टीकरण मांगा, "क्या वह जन्म से ही नपुंसक था?"

सुमंतु ने कहा, "बिल्कुल नहीं। उनका हर हावभाव, उनके चेहरे की हर हरकत, उनका हर रूप, मर्दानगी से भरपूर था। अपनी मर्दानगी पर उनका नियंत्रण भी उतना ही मर्दाना था।" ये शब्द उन्हें स्वयं की याद दिलाते थे और उन्हें अपने जैसा ही एक व्यक्तित्व दिखाई दिया। भीष्म ने शुक को नहीं देखा था। उन्होंने सोचा, "जवानी में भी, अब भी कौन कह सकता है कि मैं अपनी मर्दानगी में सिंह समान नहीं हूँ? और मैंने अपनी मर्दानगी पर कितना अद्‌भुत नियंत्रण रखा है। विचित्रवीर्य के लिए मैंने कितनी सुंदर वरियाँ प्राप्त कीं। जब उनके दीर्घकालिक रोगग्रस्त पति का निधन हुआ, तो मेरी सौतेली माँ सत्यवती ने मुझसे कई बार विनती की कि मैं उन पर नियोग संस्कार करूँ। क्या मैं अपने ब्रह्मचर्य व्रत से जरा भी विचलित हुआ? इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि पूरा आर्यावर्त भीष्म को ब्रह्मचर्य और ब्रह्मचर्य को भीष्म के समान मानता है।" शुक के प्रति भीष्म का सम्मान और बढ़ गया।

सुमंतु ने आगे कहा, "शुकदेव ने ब्रह्मचर्य को पहले बौद्धिक रूप से स्वीकार किया और फिर उसे भावनात्मक प्रतिबद्धता में स्थापित किया। लेकिन जो व्यक्ति आसक्ति को बुराई बताता था और पारिवारिक बंधनों से मुक्त जीवन जीने में विश्वास रखता था, उसने एक दिन सुबह एक और चरम कदम की वकालत करना शुरू कर दिया। उसका तर्क उसे इस प्रश्न तक ले गया: यदि परिवार, बच्चे और पोते-पोतियाँ अर्थहीन बोझ हैं तो दीर्घ जीवन जीने का क्या अर्थ है? जीवित रहने या न रहने से क्या फर्क पड़ता है? इसी क्षण क्यों न मर जाएँ? पचास वर्ष बाद क्यों मरें? जीवन का लक्ष्य जीवन-मृत्यु के विषैले चक्र से मुक्ति है। इच्छा और स्वार्थ के संसार का त्याग किए बिना वास्तविक मुक्ति नहीं है। लेकिन, तार्किक रूप से, यदि उसका

त्याग कर दिया जाए, तो जीने का कोई औचित्य नहीं रह जाता। केवल मृत्यु से भयभीत लोगों को ही जीना पड़ सकता है। लेकिन फिर मृत्यु से भयभीत होने वाले वे लोग हैं जिन्होंने सांसारिक स्वार्थ से अपना बंधन नहीं तोड़ा है। उसने ऐसे सिद्धांत का प्रचार और बचाव करना शुरू कर दिया। उसे कैसे पराजित किया जा सकता है? उसे कौन पराजित कर सकता है? वह इसी आश्रम में रहता था। वह हमें वाद-विवाद में घसीटता था।" अंततः एक दिन उन्होंने अपने ही सिद्धांत का पालन करने का निश्चय किया। और उन्होंने आमरण अनशन शुरू कर दिया। हमने उनसे ऐसा न करने की विनती की। उनके अपने पिता, उनके जनक, की आँखों में आँसू भर आए। हमारे गुरु बिना किसी कारण के नहीं रोते। उन्होंने अपने पिता से पूछा, 'पिताजी, जब मैं जो करने जा रहा हूँ वह गलत नहीं है, तो आपके रोने का कोई अर्थ नहीं है। वेदों पर आपकी महारत किस काम की?'

यदि कोई भोजन और पानी त्याग दे, तो शरीर कितने समय तक टिक सकता है? और आज दोपहर... सुमंतु के अपनी बात पूरी करने से पहले ही भीष्म को मृत्यु की गंध अपने नाक में महसूस हुई। लेकिन एक अलग तरीके से उन्हें एहसास हुआ कि यह वह नहीं था। जब वे आश्रम में आए थे, तब भीष्म का मन मृत्यु की उपस्थिति से गहराई से भरा हुआ था, लेकिन अन्य विषयों पर चर्चा ने उन्हें इसे थोड़ा भुला दिया था। अब फिर से मृत्यु का बोध इतना गहरा हो गया था कि उससे बाहर निकलने के लिए कोई रास्ता नहीं था। चूंकि उनके सामने और कुछ नहीं था, उनकी आंखें यंत्रवत रूप से सुमंतु के चेहरे को घूर रही थीं। उनका चेहरा भी मृत्यु का प्रतिबिंब प्रतीत हो रहा था। जीवन के लिए संघर्ष कर रहा वह कमजोर प्रकाश अंततः अंधकार को परम सत्य के रूप में स्थापित करता प्रतीत हो रहा था। थोड़ी देर बाद, सुमंतु ने पूछा, "हम केवल इसी विषय पर चर्चा कर रहे हैं, और कुछ नहीं। जब से उनके पुत्र ने उपवास शुरू किया है, गुरु ने स्वयं को बाहरी दुनिया से अलग कर लिया है। ऐसा लगता है कि आपके पोते-पोतियों के बीच दो गुटों में बंटकर युद्ध चल रहा है।" आप यहाँ क्यों आए? क्या आप वहाँ की परिस्थितियों से तंग आ गए थे?

मृत्यु के इस वातावरण में डूबे भीष्म अपने आश्रम आने का मूल उद्देश्य ही भूल गए थे। यद्यपि उन्हें अब याद आ गया था, पर उन्हें वह महत्वहीन लगा। उस विषय में अब उनमें कोई रुचि नहीं थी। सुमंतु ने उनसे आगे कोई उत्तर नहीं मांगा। वे चुप रहे। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। ऐसा सन्नाटा मानो अंधकार के गर्भ से

निकला हो। यह समझते हुए कि इससे निकलने का एकमात्र उपाय शब्दों के माध्यम से ही है, भीष्म ने अचानक उस समस्या का वर्णन किया जिसके कारण वे युद्धक्षेत्र से आश्रम आए थे, "मुझे कल दोपहर तक यहां से जाना है। कृष्ण की वर्तमान स्थिति में उनसे इस विषय पर चर्चा करना संभव नहीं है। यहां आकर कम से कम मैं आपको इसके बारे में बता ही दूं। आप स्वयं वेदों के ज्ञाता हैं। मैं स्वयं एक प्रकार के परिवर्तन से गुजर रहा हूं। परन्तु मैं स्वीकार करता हूं कि मुझे यह नहीं पता कि वह परिवर्तन क्या है।"

जब तक उन्होंने अपनी बात समाप्त की, तब तक आधी रात के तीन घंटे बीत चुके थे। लेकिन सुमंतु नियोग की धार्मिक वैधता या अन्यथा पर कोई निर्णायक सलाह देने में असमर्थ थे। सुमंतु केवल इतना ही कह सके, "ऐसा लगता है कि इस मुद्दे पर भी हमें वही करना होगा जो हमारे गुरु ने वेदों के साथ किया है: विभिन्न सिद्धांतों और प्रथाओं को एकत्रित करना, उनका मिलान करना और एक संतुलित निष्कर्ष पर पहुंचना। लेकिन तब तक..." वे आगे कुछ नहीं कह सके। इसलिए वे चुप हो गए। सन्नाटा एक बार फिर छा गया। मंद दीपक से प्रकाशित छोटे से क्षेत्र को छोड़कर, चारों ओर अंधकार का सागर ही अंधकार था।

सुमंतु ने कहा, "यात्रा के बाद आप थक गए होंगे। रात भी काफी हो चुकी है। कृपया अब सो जाइए। हम इस बारे में सुबह बात करेंगे। अगर हम यह बात गुरुजी के सामने रखें, तो शायद उन्हें दुःख के घेरे से बाहर निकलने में मदद मिले। यह हम दोनों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता है।" फिर वह उठ खड़ा हुआ। कुटिया का दरवाजा आधा खोलते हुए उसने कहा, "यद्यपि हम घने जंगल में हैं, फिर भी यहाँ जंगली जानवरों का कोई डर नहीं है। आखिर यह एक आश्रम है, इसलिए यहाँ लुटेरों का कोई डर ही नहीं है।" फिर उसने दरवाजा बंद किया और अंधेरे में गायब हो गया।

भीष्म ने खुद को बिलकुल अकेला पाया। एक छोटा सा दीपक था, जिसका तेल लगभग खत्म हो चुका था। अंधेरा चारों ओर से घेर रहा था और साँस रोक रहा था। यात्रा के कारण उनके शरीर के पिछले और बगल के हिस्से में दर्द होने लगा था। लेकिन पुआल से भरा गद्दा बहुत नरम था। धान की भूसी से भरा तकिया भी आरामदायक लग रहा था। गर्म ऊनी कंबल ओढ़कर भीष्म सो गए। उन्हें इस बात का थोड़ा दुख था कि उन्हें सफेद कंबल के बजाय काला कंबल दिया गया था। उन्होंने खुद को यह सोचकर दिलासा देने की कोशिश की कि कंबल का रंग मायने

नहीं रखता, लेकिन वे सफल नहीं हुए। उन्होंने फिर खुद को रंग के बारे में चिंता करने के लिए डांटा, मानो काला कंबल उन्हें काला कर देगा। इसका कोई असर नहीं हुआ। एक अस्पष्ट चिंता उन्हें सता रही थी। वे इसे समझ नहीं पा रहे थे। फिर उन्हें कंबल को लात मारकर हटाने का मन हुआ, लेकिन बहुत ठंड थी। बाहर हवा की सीटी की आवाज उन्हें जकड़े हुए अंधेरे का प्रतीक लग रही थी। उनका मन उन्हें बार-बार कह रहा था कि शुका की मृत्यु व्यर्थ नहीं हुई थी। लेकिन इसका अर्थ यह भी था कि उनके मरने का कारण जानने की इच्छा जागृत हुई। भीष्म ने सोचा, "वह भी मेरी ही तरह आजीवन ब्रह्मचारी थे। लेकिन उन्होंने अचूक तर्क के साथ यह माना था कि केवल गृहस्थ के पास ही जीने का वास्तविक कारण होता है। क्यों? क्योंकि गृहस्थ अपने बच्चों और पोते-पोतियों के साथ खेल सकता है, उनका पालन-पोषण कर सकता है, उन्हें सलाह दे सकता है। हाँ, यदि ब्रह्मचर्य सर्वोच्च अवस्था है, तो फिर जीने का क्या अर्थ? या कोई कब तक जी सकता है?" ब्रह्मचर्य के विषय पर भीष्म शुक से सहमत थे। लेकिन फिर भीष्म अगला कदम नहीं देख पा रहे थे। वे तार्किक रूप से सुसंगत आत्म-विनाश के उस मार्ग पर शुक के साथ नहीं चल सकते थे। उसने मन ही मन कहा, "मैंने अपने पिता की यौन इच्छा को संतुष्ट करने के लिए ब्रह्मचर्य का व्रत लिया था। ऐसा मैंने ब्रह्मचर्य को गृहस्थ जीवन से श्रेष्ठ समझकर नहीं किया था। उसके पिता ने मुझसे कहा था कि वे अपनी पुत्री का विवाह ऐसे परिवार में करेंगे जहाँ मेरा कोई अधिकार नहीं होगा, बल्कि मैं गंगा के उस पार दूसरे तट पर स्थित एक आश्रम में रहूँगा। फिर जब उसने स्वयं मुझसे मदद माँगी, तो मैं उस परिवार में वापस आ गया। लेकिन जैसे ही मेरा काम पूरा हुआ, मैं महल छोड़कर चला गया। मुझे सही समय पर यह एहसास क्यों नहीं हुआ कि मेरे काम का अंतिम चरण पूरा हो चुका है? इसके बजाय, मैं एक के बाद एक मोह में बंधता चला गया।" दीपक बुझने की कगार पर लग रहा था। हालाँकि उसे पास रखे मग से उसमें तेल डालने का मन कर रहा था, पर उसने ऐसा नहीं किया, यह सोचकर कि सोते समय प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती। फिर भी, जली हुई बाती की धुएँ वाली गंध उसकी नाक में भर गई। यह मृत्यु की काली गंध के समान थी। अपने ऊपर ओढ़े कंबल के रंग ने अंधकार और मृत्यु के अहसास को और भी तीव्र कर दिया। उसने स्वयं को याद दिलाया कि वह कुटिया में बिल्कुल अकेला सो रहा है। उसे आश्रम में बनी कुटियाओं की संख्या और उनके स्थान का कोई अंदाजा नहीं था। इतना अंधेरा था कि यह जानना असंभव था। उसने स्वयं से पूछा,

"क्या यह कुटिया, जिसमें मैं सो रहा हूँ, कुटियाओं के इस परिसर से बहुत अलग-थलग है?" भीष्म को भय का अनुभव हुआ। उसे याद आया, "क्या पिताजी इतने वर्षों तक हस्तिनावती के उस विशाल महल में अकेले नहीं रहे थे? उनके साथ केवल एक-दो नौकर ही होते थे जो किसी कोने में दुबके रहते थे। आज इस अंधकार में भीष्म को बिना किसी कारण के भय सता रहा है..." कुछ देर बाद, उसने अपना साहस जुटा लिया। लेकिन इससे मृत्यु की व्याप्त गंध कम नहीं हुई। भीष्म उस गंध के स्रोत का पता लगाने की तीव्र इच्छा से ग्रस्त थे। लेकिन उन्होंने स्वयं से पूछा, "इस गंध के स्रोत के बारे में बात करने का क्या अर्थ है?" उनके पास कोई उत्तर नहीं था। कुछ देर बाद, उन्हें नींद आने लगी। नींद के साथ ही शुका की एक काल्पनिक छवि उभर आई। भीष्म मन ही मन सोचने लगे, "शुका कैसा रहा होगा? उसके पिता तो सांवले और दुबले-पतले थे। लेकिन जिस गर्भ में उसका जन्म हुआ, वह एक अत्यंत सुंदर अप्सरा का था। वह कैसी दिखती होगी?" लेकिन यह काल्पनिक छवि उनकी जिज्ञासा को शांत नहीं कर पाई। काश वे एक दिन पहले आ गए होते, ताकि उन्हें मरणासन्न व्यक्ति की एक झलक मिल जाती। वे उनसे मिल सकते थे और उनसे बातचीत कर सकते थे। उन्होंने सोचा, मृत्यु की ओर अग्रसर व्यक्ति से मिलने का क्या लाभ होता? उन्हें लगा कि उन्हें व्रत शुरू करने से पहले या कम से कम व्रत शुरू करने वाले दिन तो शुका को देख लेना चाहिए था। तब तक उनकी आंखें नींद की दुनिया में काफी दूर तक चली गई थीं। उन्हें आशा थी कि वे सपने में शुका से मिलेंगे। लेकिन उन्हें डर था कि अगर वे सपने में उनसे मिले तो शायद डर के मारे चीख पड़ें। लेकिन धीरे-धीरे उनकी जागृति नींद में डूब गई।

—•⁕•—

शिष्यों द्वारा दूध और गुड़ में मिला हुआ भुट्टा जबरदस्ती खिलाने के बाद, द्वैपायन के शरीर में थोड़ी जान और ताकत आ गई। फिर उन्होंने उसे हाथी घास से बने गद्दे पर बिछाई गई हिरण की खाल पर लिटा दिया। इसके बाद उन्होंने उसे गर्म कंबल से ढक दिया और उसका सिर तकिये पर रख दिया। उसके पास उसके तीन शिष्य - पैला, वैशम्पायन और जैमिनी - चुपचाप बैठे थे। पास ही एक खंभे पर लगा दीपक जल रहा था। शुक की मृत्यु के बारे में बात करने के लिए उनके पास कुछ नया नहीं था। किसी को भी मन को संतुष्ट करने के लिए वही पुरानी बात दोहराना आवश्यक नहीं लगा। यद्यपि मृत्यु का वास्तविक समय उसी दोपहर था, लेकिन मरने का निर्णय कई महीने पहले ही ले लिया गया था। इतने महीने क्यों? वे नहीं जानते थे कि निर्णय और क्रिया के बीच का अंतराल निर्णय को मजबूत करने की प्रक्रिया के कारण था या मन को पर्याप्त रूप से मजबूत बनाने के कारण या जीने की इच्छा ने उसके जीवन-दृष्टिकोण को नियंत्रित किया था। द्वैपायन ने पूछा, "सुमंतु कहाँ है?"

जैमिनी ने कहा, "वह हमारे अतिथि भीष्म की देखभाल में व्यस्त हैं।"

द्वैपायन ने कहा, "आप सब जाकर सो सकते हैं।"

जैमिनी, "तुम्हें अकेला छोड़ दूं?"

गुरु ने कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ देर रुककर उन्होंने कहा, "जिस दिन उसने उपवास शुरू किया था, उसी दिन से मैं इस स्थिति के लिए तैयार था। आज कुछ नया नहीं हुआ है। अब तुम जा सकते हो।" लेकिन शिष्य उठकर नहीं गया। गुरु ने अपनी आँखें बंद कर लीं। पर उन्हें नींद नहीं आई। तीनों शिष्य समझ गए कि गुरु अकेले रहना चाहते हैं। पैला ने आँख से इशारा किया कि वे चले जाएँ। फिर वे एक-एक करके चुपचाप चले गए। जैमिनी, जो सबसे आखिर में गया, उसने बिना कोई आवाज़ किए दरवाज़े बंद कर दिए। केवल द्वैपायन ने अपनी आँखें खोलीं। आसन पर रखा दीपक स्थिर जल रहा था, आसन के नीचे का हिस्सा अँधेरा था, बाकी कमरा और दीवारें धुंधली दिखाई दे रही थीं। द्वैपायन उसे घूर रहा था। उसका मन एकदम खाली था। न कोई गंभीर पीड़ा थी, न कोई गहरा दुख। केवल पूर्ण वैराग्य और अलगाव। दुख की तीव्रता के प्रति पूर्ण उदासीनता। सुख से वैराग्यपूर्ण अलगाव। गुरु ने सोचा कि शायद उनका पुत्र शुक बहुत पहले ही इस अवस्था तक पहुँच गया होगा! जलती हुई बाती और उसके नीचे छाए अंधेरे को देखते हुए जब वह दाईं ओर मुड़ा, तो अचानक उसे लगा जैसे उसके सीने से व्यक्तिगत दुःख का

बोझ उतर गया हो। उसने स्वयं से पूछा, "मुझे अब दुःख क्यों नहीं हो रहा? मैं खुलकर क्यों नहीं रोया? दुःख सहन न कर पाने के कारण मैं नदी में डूबकर आत्महत्या क्यों नहीं कर ली? मैं किसी ऊँचे पर्वत पर चढ़कर उससे क्यों नहीं कूद गया?" उसका शरीर सूखी लकड़ियों के बड़े-बड़े लट्ठों से ढका हुआ था, और जलती हुई आग की लपटें नाचने लगीं। उसने फिर स्वयं से पूछा, "मुझे उस अवस्था तक पहुँचने का विचार क्यों नहीं आया जहाँ मेरा पुत्र पहुँचा था? एक पल के लिए भी नहीं? या शुका ने जो किया वह उसके पिता के रूप में उसके चरित्र और गुणों से उत्पन्न कर्मों का फल था?" ऐसे विचारों और प्रश्नों ने उसे दुःख और आश्चर्य से भर दिया। उसे अपने परदादा वशिष्ठ की याद आई, जिनके पुत्रों को राजा कौशिका ने युद्ध में मार डाला था। दुःख सहन न कर पाने के कारण, वशिष्ठ ने अपने आप को रस्सी से बाँधकर नदी में छलांग लगा दी थी। नाविक तैरकर उसके पास पहुँचे, रस्सी काटकर उसे बचा लिया। लेकिन ऋषि ने अपना क्रोध उन पर उतारा और उन्हें जमकर अपशब्द कहे। उन्होंने एक ऊंचे पत्थर से कूदने की कोशिश की, लेकिन मर नहीं सके। फिर उन्होंने लकड़ियों का ढेर बनाकर उसमें आग लगाई और अपना शरीर जला दिया। द्वैपायन को आश्चर्य हुआ कि उन्हें अपने परदादा के बराबर भी दुःख नहीं हुआ। मानो दूर से और एक उदासीन दर्शक की दृष्टि से, उन्होंने अपने जीवन की तुलना अपने परदादा के जीवन से की। उन्होंने तुलना पर विचार करते हुए कहा, "परदादा ने गृहस्थ जीवन व्यतीत किया। ऐसा प्रतीत होता है कि वे अपनी पत्नी से अत्यंत प्रेम करते थे। यद्यपि उनकी पत्नी अरुंधति एक अछूत जाति की महिला थीं, फिर भी उन्होंने उन्हें बिना किसी संकोच के स्वीकार किया और उनसे संतानें प्राप्त कीं। वह गृहस्थी की एक आदर्श महिला थीं और आश्रम में अपने पति के शिष्यों को अपने बच्चों के समान मानती थीं। शायद यही कारण था कि वे अपने बच्चों से इतना प्रेम करते थे। जब उनके बच्चे मर गए, तो वे असहनीय दुःख में पागलों की तरह भटकते रहे। एक अनुकरणीय ऋषि और द्रष्टा, वैदिक ग्रंथों और अनुष्ठानों के ज्ञाता के रूप में ख्यातिप्राप्त, वे पुत्रों की मृत्यु पर इस प्रकार दुःख में कैसे डूब सकते थे? क्या ऐसे गुणों वाला व्यक्ति अपने बच्चों की मृत्यु पर दुःख से व्याकुल हो सकता है? वेदों के ज्ञान को आत्मसात करने और उसे अपने अस्तित्व का अभिन्न अंग बनाने का क्या अर्थ है यदि कोई उस अडिग चट्टान की तरह स्थिर नहीं रह सकता जिसे कितनी भी बारिश भिगो या तोड़ न सके? या क्या गृहस्थ जीवन अनिवार्य रूप से ऐसे आसक्ति, कमजोरियों और बंधनों को जन्म देता है?

मैंने यह नहीं चुना गृहस्थ बनने के लिए। मैं ब्रह्मचारी ही रहा। क्या इससे हमारे बीच का अंतर स्पष्ट होता है?" थकान से उनकी आँखें बंद हो गईं। जैसे ही बाहरी रोशनी बंद हुई, उनकी आंतरिक स्मृति खिल उठी। शायद वशिष्ठ के पुत्र भी अपने पिता से बहुत गहरे रूप से जुड़े रहे होंगे। और उनकी माँ प्रेम से भरी हुई थीं। वे भी उतने ही स्नेही थे। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि बच्चे किम से इतना गहरा लगाव रखते थे। मेरा क्या? मैं आठ साल का था जब पिताजी मुझे मेरी माँ से दूर ले गए। आज भी मुझे स्पष्ट रूप से विवरण याद नहीं है। एक नदी थी जो सदा पानी से भरी रहती थी। यह पूर्वी किनारा था या दक्षिणी किनारा? मुझे याद नहीं है। एक टीले पर एक घर था। मुझे मछली की गंध आती है, सूखी मछलियों का ढेर। छोटी मछलियाँ। उनके हाथ काले और मोटे थे। वह मुझे अपनी नाव में नदी पार कराती थीं, और रास्ते में मछली पकड़ने के लिए जाल डालती थीं। कभी-कभी उन्हें मुट्ठी भर मछलियाँ मिल जाती थीं और कभी-कभी उन्हें खाली हाथ लौटना पड़ता था। वह अपने हाथों से मछली पकड़कर अपना जीवन यापन करती थीं। फिर मुझे सूरज की गर्मी, पसीने से भीगी गर्दन याद आती है। मेरे बचपन की बस इतनी ही यादें बची हैं। उसके बाद की सारी यादें एक ही जगह जम जाती हैं। वैदिक ग्रंथ। और टीकाएँ, और विभिन्न पाठ। और विभिन्न देशों में प्रचलित विभिन्न संस्करण। फिर मुझे याद है जब मैं पिता का हाथ पकड़कर नदी पार कर रहा था, तब माँ का रोता हुआ चेहरा। मुझे याद है कि कोई भी नाव को नदी पार कराने के लिए तैयार नहीं था। माँ घर के अंदर ही रोती रही होंगी। इसलिए पिता को स्वयं नाव चलानी पड़ी। फिर पढ़ाई, भ्रमण, भ्रमण। फिर प्रवचन। बीस वर्ष की आयु में, पिता ने मुझे वैदिक विद्वानों की सभा में अपना वैदिक ज्ञान, अपना सही उच्चारण प्रदर्शित करने का अवसर दिया। मुझे याद है कि विद्वान सभा ने प्रशंसा में सिर हिलाया। इन सब बातों के अलावा, मेरी स्मृति में केवल वैदिक ग्रंथ, अनुष्ठानिक सूत्र और उनके अनंत अर्थपूर्ण निहितार्थ ही हैं। खैर, कृष्ण का यह जीवन वैदिक ज्ञान को याद करने और सुनाने का एक अटूट जाल मात्र है। मेरा जीवन वैदिक ग्रंथों और उनके विभिन्न संस्करणों के संग्रह के लिए समर्पित था। मेरा संग्रह पूर्व के ऋषियों द्वारा एकत्रित संग्रह से कहीं अधिक है।

फिर भी बहुत से ग्रंथ हमसे खो गए होंगे। यदि मैंने यह कार्य न किया होता, तो कितने ही ग्रंथ हमेशा के लिए लुप्त हो जाते। उन वैदिक अंशों की खोज में मैं कितना भटका! कितने ही वैदिक विद्वानों, विद्यालयों और समूहों से मिला और

उनके ज्ञान और ग्रंथों के लिए उन्हें कितना परेशान किया! और उनके रहस्यों को उजागर करने और उनके ग्रंथ देने के लिए मुझे कितना प्रयास करना पड़ा! और उन्होंने अपने ज्ञान को देने से इनकार करके कितनी कंजूसी दिखाई! नींद ने उसके जागने पर कुछ असर डाला था। लेकिन, शुक को याद आया, "क्या उस लड़के ने वेदों का अर्थ गलत समझा था? मैं उसे तर्क और प्रमाण से यह समझाने में असफल रहा कि वेदों की उसकी व्याख्या गलत थी। यदि उसने किसी विशिष्ट ग्रंथ या ग्रंथों के समूह और उनके अर्थ पर बहस करने का विकल्प चुना होता, तो मैं उसे मना सकता था। लेकिन उसकी पद्धति अलग थी, एक अलग ढांचा था। उसने वेदों के दायरे में नहीं, बल्कि स्वयं ढांचे के बारे में प्रश्न पूछे, उसकी नींव पर ही सवाल उठाए। और कैसे प्रश्न! वेद का उद्देश्य क्या है? क्या यह स्वर्ग में प्रवेश की प्राप्ति है? मोक्ष है?" लेकिन स्वर्ग में प्रवेश करने का क्या अर्थ है? मुक्ति क्या है? अनासक्ति का क्या अर्थ है? ऐसे प्रश्नों के उत्तर के लिए वेदों के प्रमाण की क्या आवश्यकता है? खैर, मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि ऐसे प्रश्नों पर बहस में मैं उसे हरा नहीं सकता था। फिर भी, मेरे अंतर्मन में कहीं न कहीं मुझे विश्वास था कि उसने गलत रास्ता चुना है। अब मैं देख सकता हूँ कि मेरे पास उसके द्वारा उठाए गए तर्कों का सामना करने के लिए कोई विधि या तकनीक नहीं थी। फिर नींद ने उसे फिर से अपनी गिरफ्त में ले लिया। वह गहरी नींद में सो गया, उसका सिर तकिए पर था और उसके हाथ-पैर फैले हुए थे।

काफी देर बाद उनकी नींद खुली। उन्होंने खुद से पूछा: मैं कितनी देर सोया? तीनों शिष्य अभी भी बाहर दरवाजे पर इंतजार कर रहे थे। ठंड बहुत थी। वे फुसफुसा रहे थे, "शायद अब वह सो रहे हैं।" यह किसकी आवाज थी? कृष्ण सोच रहे थे कि क्या यह पैला की थी या जैमिनी की। यह जानकर उन्हें प्रसन्नता हुई कि उनके शिष्य इतनी कड़ाके की ठंड में भी नींद छोड़कर उनकी सेवा कर रहे हैं। उन्होंने पूछा: क्या शिष्यों से बढ़कर कोई संतान हो सकती है? फिर उनकी नींद पूरी तरह खुली। दीपक बुझ चुका था। उन्होंने अंधेरे का स्वागत किया। यह बहुत शांतिपूर्ण लग रहा था। यह मन को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करता है। तभी उन्होंने बाहर से एक आवाज सुनी, "दुर्योधन ने पांडवों को गुरु वंश से बाहर करने का फैसला किया है क्योंकि वे नियोग से पैदा हुए थे। भीष्म अपना निर्णय लेने से पहले इस मुद्दे पर गुरु से सलाह लेने आए हैं।" हाँ, यह सुमंतु की आवाज थी, कृष्ण ने सोचा। एक और फुसफुसाती आवाज आई, "कृपया धीरे बोलें। गुरु शायद आधी

नींद में हों।" फिर सुमंतु ने फुसफुसाते हुए कहा, "भीष्म ने दुर्योधन की सेनाओं की सर्वोच्च कमान संभाल ली है। वे यहाँ यह घोषणा करने के बाद आए हैं कि ढोल बजाने वाले के माध्यम से प्रतिभागियों को दुर्योधन के साथ रहने का विकल्प दिया गया है, बशर्ते वे उनकी इस बात को स्वीकार करें कि नियोग में जन्मे पांडव कुरु वंश से संबंधित नहीं हैं, और जो लोग इस बात को अस्वीकार करते हैं, वे पांडवों के पक्ष में जा सकते हैं।"

एक और ने फुसफुसाते हुए कहा, "इस पर यहाँ चर्चा न करें। हम अनुष्ठान कक्ष में चलते हैं।" तभी द्वैपायन को कदमों की आहट सुनाई दी। उनकी नींद पूरी तरह से उड़ चुकी थी। उन्होंने एक बार फिर खुद से पूछा, "मैं कितनी देर सोया?" उन्होंने अपनी आँखें खोलीं। अँधेरा इतना घना था कि आँखें खोलने या बंद करने से कोई फर्क नहीं पड़ता था। बस पलकों की स्थिति थोड़ी बदल जाती थी। उन्हें एहसास हुआ कि झोपड़ी में रहना हमेशा ऐसा ही होता है। उन्होंने फिर से अपनी आँखें बंद कर लीं। उन्होंने सोचा कि उनके बेटे का शरीर अब तक जलकर काला हो गया होगा। आग राख में तब्दील हो गई होगी। उन्होंने सोचा: भोजन और पानी से वंचित, कंकाल की तरह कमजोर शरीर को जलने में कितना समय लगेगा? जब वे भोजन और पानी की कमी से असहनीय पीड़ा झेल रहे थे और दर्द से कराह रहे थे, तब भी उन्होंने अपने शिष्यों द्वारा दिए गए दूध को ठुकरा दिया, यहाँ तक कि अपने पिता द्वारा दिए गए दूध को भी। कितना दृढ़ संकल्प और इच्छाशक्ति थी! द्वैपायन ने मन ही मन कहा, "अब जब उसका शरीर जलकर राख हो गया है, तो उसकी उस असाधारण इच्छाशक्ति और दृढ़ संकल्प का क्या लाभ? और उससे उसे क्या हासिल हुआ?" तभी उसे श्मशान घाट देखने की तीव्र इच्छा हुई। धीरे-धीरे वह उठ बैठा। उसने अपनी छड़ी खोजी और उसे पा लिया। अपने कंधों को कंबल से ढककर वह धीरे-धीरे दरवाजे की ओर बढ़ा। जब उसने बाहर देखा, तो ऐसा लगा मानो मृत्यु अंधकार में जम गई हो। चारों ओर घना अंधेरा था। चूंकि वह जानता था कि उसके शिष्य पूजा कक्ष में धर्म के विषय पर चर्चा कर रहे हैं, इसलिए वह कुटिया के पीछे चला गया। वह आश्रम की हर संरचना का स्थान इतनी अच्छी तरह जानता था कि अंधेरे में भी वह वहाँ पहुँच सकता था - सभी आवासीय कुटियाएँ, पास का गौशाला और उत्तर की ओर स्थित रसोईघर और भंडारगृह। लेकिन उस दिन उसे सब कुछ अस्त-व्यस्त लगा। उसने श्मशान घाट का पता लगाने की कोशिश की। उसने मन ही मन पूछा, "क्या दक्षिण दिशा में, वृक्षों के

समूह के पार, नदी के किनारे, सूखी लकड़ियों की चिता पर उसे नहीं रखा गया था? लेकिन मैं यह कैसे कह सकता हूँ कि 'उसका' दाह संस्कार हुआ, जबकि केवल उसके शरीर का ही दाह संस्कार हुआ, जिसमें आत्मा नहीं थी?" अचानक उसका सिर चकरा गया। उसने पूछा, "आत्मा शरीर छोड़ने के लिए इतनी उत्सुक क्यों थी? वह आत्मा अब कहाँ गई है? उसे किसने देखा है?" सैकड़ों धार्मिक ग्रंथों की यादें उसके मन में उमड़ आईं। थोड़ी देर रुककर, अपनी बैसाखी का सहारा लेकर वह आगे बढ़ा। जब वह लाठी से रास्ता ढूँढ़ने की कोशिश कर रहा था, तभी उसे भीष्म की याद आई। और इससे उन्हें चिंतन करने का विचार आया, "ऐसा लगता है कि वे अब यहाँ मुझसे इस प्रश्न पर परामर्श करने आए हैं कि क्या नियोग धर्म द्वारा स्वीकृत है या धर्म का उल्लंघन है। उनके भाई, उनका नाम क्या है? विचित्रवीर्य निःसंतान मर गए। इसका अर्थ था कुरु वंश का अंत। लेकिन भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत लिया था। इस बात से आश्वस्त होकर कि धर्म का मार्ग नियोग के माध्यम से वंश को आगे बढ़ाने की मांग करता है, भीष्म ने ही अपनी माता की सलाह पर मुझे नियोग संपन्न कराने के लिए आमंत्रित किया था। यह कुरु दादा, जो उस समय पूरी तरह से आश्वस्त थे कि नियोग धर्म है, अब अपने छोटे भाई की बहुओं पर, वह भी पति की सहमति से, संपन्न कराए गए नियोग की धार्मिक वैधता के बारे में संदेह क्यों कर रहे हैं? यदि उन्हें इस बारे में कोई संदेह नहीं था, तो वे मुझसे परामर्श करने के लिए इतनी दूर यात्रा करके क्यों आए? उस समय मैंने केवल नियोग शब्द सुना था। मुझे इसके वास्तविक अर्थ का कोई ज्ञान नहीं था। वैसे भी यह एक क्षत्रिय प्रथा और रीति-रिवाज है। यह उन क्षत्रियों के लिए उपयुक्त था जो वे इस बात को लेकर चिंतित थे कि जिन राज्यों को उन्होंने बड़ी मेहनत से बनाया था, वे अनंत काल तक उनके वंश में ही रहें। मैं, जटाधारी, जिसकी सांसारिक संपत्ति केवल हिरण की खाल की चटाई और अनुष्ठानिक जल ले जाने का पात्र थी, भला इसका पूरा अर्थ कैसे समझ सकता था? उन्होंने मुझसे कहा, 'पुत्र, तकनीकी रूप से तुम मेरे पुत्र विचित्रवीर्य के बड़े भाई हो। तुम वैदिक ब्राह्मण भी हो। कृपया मेरी दोनों बहुओं का नियोग संस्कार करो। ध्यान रखना कि तुम दोनों के साथ समान व्यवहार करो और उनमें से कोई भी मुझ पर पक्षपात का आरोप न लगाए।' क्या मैं इसलिए सहमत नहीं हुआ क्योंकि इतने वर्षों बाद मिली माँ को मैं मना नहीं कर सका? क्या यह वही भीष्म नहीं थे जिन्होंने मुझे नियोग के नियम और प्रक्रिया सिखाई थी? उन्होंने कहा था, 'समय मध्यरात्रि का होना चाहिए।

पुरुष और स्त्री को अपने पूरे शरीर पर घी लगाना चाहिए। घी उनके सिर के बालों से टपकना चाहिए। इसका उद्देश्य यह है कि वे एक-दूसरे के लिए घृणित प्रतीत हों। पुरुष को अपनी इंद्रियों पर पूर्ण नियंत्रण रखना चाहिए और स्त्री के प्रति उसका दृष्टिकोण ऐसा होना चाहिए कि एक पिता के प्रति। स्त्री का रवैया ससुर के प्रति बहू जैसा होना चाहिए। शब्दों का आदान-प्रदान कम से कम होना चाहिए और परिस्थितियों के अनुसार दोनों के बीच शारीरिक संपर्क भी यथासंभव कम होना चाहिए। वास्तव में, समग्र दृष्टिकोण नैदानिक, भावहीन और अत्यंत व्यावहारिक होना चाहिए। भीष्म ने कहा था कि उन्हें एक-दूसरे की ओर देखने से बचना चाहिए, उन्होंने ठीक वही शब्द तो नहीं कहे थे, लेकिन उनका अर्थ वही था। द्वैपायन को याद आया, भीष्म ने कहा था, "तुम एक ऋषि हो। मैं तुम्हें छोटे भाई के समान मानता हूँ। यदि तुम इस प्रक्रिया का पालन करोगे, तो तुम अपने ब्रह्मचर्य से समझौता नहीं करोगे। मैं भी तुम्हारी ही तरह ब्रह्मचर्य का व्रत धारण करने वाला व्यक्ति हूँ। यदि तुम अपना ब्रह्मचर्य खो दोगे, तो मैं भी तुम्हारी ही तरह दुखी हो जाऊँगा। याद रखो, नियोग के पूर्ण होने के बाद तुम्हें सुख या तृप्ति का कोई अनुभव नहीं होना चाहिए। यदि संयोगवश कोई भावना शेष रह भी जाए, तो वह घृणा की होनी चाहिए। बेशक, किसी भी प्रकार का भावनात्मक प्रभाव न होना ही सर्वोत्तम है।" यह तुम्हारे ब्रह्मचर्य की भी परीक्षा होगी।' यह अस्सी वर्ष पहले की बात है। जी हाँ, उसी भीष्म ने ये शब्द कहे थे। -पहली रात मुझे अंबिके के साथ यह करना था। वह बैठी थी या लेटी थी? जब मैं शयनकक्ष में दाखिल हुआ, तो मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या करूँ। उसने उस दोपहर मेरे उलझे हुए बाल देखे थे और मुझे घृणित पाया था। मैंने देखा कि उसने अपने शरीर और बालों पर घी नहीं लगाया था। वह एक कोने में दुबकी हुई थी। मुझे बोलना मना था। मुझे अपनी किसी भी इंद्रिय को जगाना मना था। उस अँधेरे में चुपचाप खड़े रहने के बाद, मैं दरवाजे पर गया और मंद रोशनी में उसके पास रखे कपड़े पहन लिए। मेरी माँ ने उत्साह से मुझसे पूछा, "बेटा, क्या यह फलदायी रहा? तुम ऐसे क्यों खड़े हो, जैसे हिल रहे हो? क्या तुम जानते हो, अगर फल नहीं हुआ और वंश समाप्त हो गया, तो मैं एक भयानक पाप करूँगी? मैंने सपना देखा था कि रानी का जीवन स्वर्गिक होगा।" अब मैं मछुआरे के रूप में बिताए अपने आनंदमय जीवन को पछतावे के साथ याद करती हूँ, नाव चलाती थी और मछलियाँ पकड़ती थी। तुम्हें तपस्या से प्राप्त अपनी आध्यात्मिक शक्ति का हर अंश इस वंश को आगे बढ़ाने के लिए

उपयोग करना चाहिए, और इस प्रकार अपनी माँ का ऋण चुकाना चाहिए! ये शब्द कहते हुए वह रो पड़ी। शरीर और बालों पर घी मलने, इंद्रियों को नियंत्रित करने और पिता के भाव को नियंत्रित करने का यह सारा काम - धर्म के ये सारे नियम किसने बनाए, भीष्म? तो क्या भीष्म सही थे? हाँ, आग अभी भी जल रही है। राख से ढकी होने के बावजूद, मैं नीचे अंगारे देख सकती हूँ। गर्मी भी है, क्योंकि जब मैं चिता के पास जाती हूँ तो उसे महसूस कर सकती हूँ। कालापन और फिर राख में बदल जाती है। यदि अंत राख में जलना है, तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप अभी मरते हैं या पचास साल बाद। तो क्या शुक सही थे? वह एकदम स्थिर खड़ा रहा। जब भी हवा चलती, राख से ढके अंगारे प्रज्वलित हो जाते। इधर-उधर मंद लपटें टिमटिमा रही थीं। उन्होंने मन ही मन पूछा, "क्या हड्डियों को जलने में इतना समय लगता है?" फिर उन्होंने अपनी लाठी से आग के बीच वाले हिस्से को कुरेदा। उन्हें कुछ भी दिखाई नहीं दिया। कंबल और अपने बेटे के जलते शरीर से निकलती गर्मी के कारण उन्हें बहुत गर्मी लग रही थी। उन्होंने कंबल को थोड़ा ढीला किया ताकि हवा उनके सीने को छू सके और बैठ गए। चारों ओर सन्नाटा छा गया। राख के ढेर की तरह जमे उस सन्नाटे में उनका मन कहीं खो गया सा लगा। थोड़ी देर बाद मन फिर चलने लगा। जी हाँ, कृष्ण इस बात से सहमत थे कि पहला कदम मन को स्थिर और नियंत्रित करना है। उन्होंने मन ही मन कहा, "हाँ, यही तो वो कहा करते थे। असल में, वो बिंदु क्या है जहाँ मेरा मार्ग उनसे अलग होता है?" उनका मन एक बार फिर भटक गया, लेकिन जल्द ही भीष्म की स्मृति में ठहर गया। मैं क्या सोच रहा था? जी हाँ, नियोग के बारे में। क्या हर देश अपनी अनूठी परंपरा का पालन करता है? ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे परदादा वशिष्ठ ने राजा कल्मषपाद की पत्नी पर नियोग किया था। राजा ने अपने हाथों से अपनी पत्नी को रंग-बिरंगे वस्त्रों, चमकदार आभूषणों, सुगंधित फूलों, जड़ी-बूटियों और पशुओं की सुगंधों, कीमती पत्थरों से बने हार से सजाया और उन्हें पंख जैसे मुलायम पलंग पर लिटाया। फिर उन्होंने ऋषि वशिष्ठ को चमकदार सफेद वस्त्र पहनाए, उनके लंबे बालों को संवारा, उनके शरीर पर चंदन का लेप लगाया, उनके गले में रंग-बिरंगे और सुगंधित फूलों की माला पहनाई, उन्हें स्वयं शयनकक्ष में ले गए, उन्हें अपनी पत्नी के पास पलंग पर बैठाया और श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़कर ऋषि से प्रार्थना की, 'हे ब्रह्मा, अपने वीर्य की शक्ति से मेरी भूमि में असाधारण तेजस्वी पुत्र उत्पन्न कीजिए और मेरी सहायता कीजिए।' फिर वे कमरे से बाहर चले गए और दरवाजा

बाहर से बंद कर दिया। यह प्रक्रिया तब तक हर रात चलती रही जब तक कि यह स्पष्ट रूप से प्रकट नहीं हो गया कि वह गर्भवती हो गई हैं। फिर दंपति ने कृतज्ञतापूर्वक उन्हें भोज दिया और सौ सफेद गायों, वस्त्रों और कंबलों के उपहार देकर विदा किया। ऋषि को रथ में विधिपूर्वक विदा किया गया, राजा स्वयं उनके राज्य की सीमा तक उनके साथ गए। बाद में एक सुंदर और तेजस्वी बालक का जन्म हुआ। लेकिन घी मलने और इंद्रियों को वश में करने के ये नियम किसने बनाए थे?" उनकी स्मृति पीछे की ओर चली गई। कितना पीछे? अस्सी साल या थोड़ा और? शायद कुछ साल इधर-उधर।" हाँ, इस प्रथा में विकृति भीष्म की ही करतूत थी। एक दासी ने मुझे बताया। उनकी बड़ी बहू अंबिके की उनके प्रति घृणा उनकी माता को पता चल गई थी।" कृष्ण ने याद करते हुए कहा, "तब मेरी माता ने अपने घी से सने लंबे बालों को झटककर उसे खूब खरी-खोटी सुनाई। फिर भी वह इतनी जिद्दी थी कि मेरे पास नहीं आई। इसके बजाय, उसने उस रात अपनी दासी को भेजा। फिर वह मुझे अपना चेहरा दिखाए बिना और मुझे उसकी आवाज सुने बिना चली गई।" बातचीत वर्जित होने के कारण, मुझे यह पता नहीं चल सका कि वह मालकिन थी या उसकी नौकरानी। कारण चाहे जो भी हो—हठ या क्रोध—उसका नौकरानी को भेजना ही वास्तव में नियोग अनुष्ठान को संभव बना पाया। मुझे कैसे पता चलता कि किसी स्त्री के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए? और वह भी तब, जब स्त्री घी से लथपथ हो और मुझे पिता तुल्य भाव दिखाना था? उसने फुसफुसाते हुए कहा, 'ऋषि, आपको प्रणाम, आदरणीय। क्या यह चिपचिपा घी आपके मन को भाता है?'

मैंने उत्तर दिया, 'मत बोलो। धर्म में इसकी मनाही है।'

'किसने कहा तुमसे ये?'

भीष्म।

'ब्रह्मचारी भीष्म को पुरुष और स्त्री के मिलन और संभोग के बारे में क्या ज्ञान है? जैसा कि वे कहते हैं, यदि आप अपनी इंद्रियों को नियंत्रित और निष्क्रिय कर दें, तो वीर्य का स्थानांतरण कैसे हो सकता है? हे पूज्यवर, यदि आप मुझसे वादा करें कि आप क्रोधित नहीं होंगे, तो मुझे आपको कुछ बातें बतानी हैं।'

मैं ही वह हूं जिसने क्रोध और पीड़ा पर विजय प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प किया है।' मेरा हाथ घी से सना हुआ था, तब मुझे यह एहसास नहीं हुआ कि उसने अपने हाथ पर घी नहीं लगाया था।

यह मानना गलत है कि हर कोई सब कुछ जानता है। मुझे यकीन है कि आपको भी पुरुष और स्त्री के मिलन के बारे में कुछ नहीं पता। यह इस बात से ही स्पष्ट है कि आपने घी टपकने और शब्दों के आदान-प्रदान पर प्रतिबंध की कहानी पर विश्वास कर लिया है। मैं अंबिके की दासी हूँ। आपका घिनौना रूप देखकर वह आपसे दूर भाग गई, और उसकी छोटी बहन अंबालिके भी। लेकिन वे दोनों ही यौन क्रिया के बारे में समान रूप से अनभिज्ञ हैं। ज़ाहिर है, उन्हें इसका कोई अनुभव नहीं है। मुझे बताइए, भीष्म जिस वीरता से इन सुंदर, सुगठित, सजीव कन्याओं को लाए और उन्हें चिरस्थायी रोगग्रस्त विचित्रवीर्य को सौंप दिया, वे किसी पुरुष के साथ यौन संबंध बनाने का अनुभव कैसे कर सकती हैं? इसलिए, उनमें यौन संबंध के प्रति लगभग स्वाभाविक घृणा है। और इसके अलावा, आपके गंदे उलझे हुए बाल, आपकी बिखरी हुई दाढ़ी और मूंछें, और बारिश, सर्दी और धूप के संपर्क में आने से आपकी सख्त त्वचा, ये सब उन्होंने पहले छिपकर देखा था। उनके मन में आपके प्रति घृणा भरी हुई थी। क्या तुम समझते हो कि नियोग आधी रात को गर्भ धारण करने का एक सरल काम है? गर्भ की भूमि में वीर्य का सफल बीज बोने में कई दिन लगते हैं। तुम इस विषय में पूरी तरह अज्ञानी थे। इसलिए, अब मेरी बात सुनो और मेरा अनुसरण करो। मैं तुम्हें सारी बारीकियाँ समझाऊँगी। मैं स्वामियों के मन को भी इस कार्य के लिए तैयार करूँगी। भीष्म के निर्देशों को भूल जाओ। बड़ी स्वामिनी जानती हैं कि तुम जल्दी में फसल नहीं उगा सकते। तुम्हें यहाँ कुछ दिनों तक रहने के लिए तैयार रहना होगा..."

शुका, यानी अपने ही कली के शरीर को जलती हुई अग्नि को चुपचाप निहारते हुए, द्वैपायन को स्पष्ट रूप से याद आया कि कैसे उस दासी ने उनकी प्रजनन शक्ति को प्रज्वलित किया था। उसने घी के कारण त्वचा पर जमी चिकनाई को पोंछने के लिए एक बड़ा कपड़ा लिया था। उसने स्वयं अपने शरीर पर चंदन लगाया। उसने मेरे पूरे शरीर को छुआ, जिससे मेरी नसें झनझना उठीं। अंधेरे में, उसने मुझे यह और वह करने का निर्देश दिया। उसने भीष्म के धर्म के नियम की झूठी व्याख्या की। अगली सुबह, दिन के उजाले में, उसने मेरे बालों में जड़ी-बूटी से शैम्पू किया, धोया, सुखाया और करीने से कंघी की। फिर उसने मेरे शरीर पर जीरा के तेल से मालिश की, जिससे त्वचा में हल्की चमक आ गई। संक्षेप में, उसने मुझे अपनी स्वामियों के सामने अधिक आकर्षक बना दिया। वे मुझे सहन तो कर रही थीं, लेकिन एक रोगी की तरह जो किसी दवा की कड़वाहट सहन कर रहा हो। या

फिर असहाय महिलाओं की तरह जो अपने शरीर पर क्रूर हमलों को सह रही हों। लेकिन दासी मुझसे प्रेम करती हुई प्रतीत हो रही थी। या यह प्रेम था या केवल भक्ति और श्रद्धा? खैर, मुझे उसके चेहरे पर सहज आनंद दिखाई दिया। उनके साथ मुझे ऐसा लग रहा था जैसे वे मुझे रोगी की तरह सहन कर रही हों और मैं कोई दवा, लेकिन उस दासी के साथ मुझे ऐसा लग रहा था जैसे कोई कुशल रसोइया अपने उत्कृष्ट खाना पकाने के कौशल पर अपार आनंद प्रदर्शित कर रही हो! उसने कहा, 'ऋषि, क्या मैं आपको अपनी एक बड़ी इच्छा के बारे में बताऊँ?' क्या? मैं एक दासी हूँ। मैं राजा की प्रसन्नता के लिए हूँ। यदि राजा जीवित होते, तो मैं उन्हें सूत समुदाय के बच्चे देती। अभी भी मैं महल में केवल एक दासी हूँ। आपको मेरे साथ सोने के लिए आमंत्रित नहीं किया गया था। जो बीज आपने मेरे गर्भ में बोया है, वह एक दासी के पुत्र के रूप में विकसित होगा। इसका अर्थ है कि वह सूत होगा। लेकिन आपका बीज मैंने अपने सुख और लाभ के लिए ग्रहण किया है। क्या आप कृपया अपनी माँ से कहेंगे कि माँ द्वारा प्रारंभिक पालन-पोषण पूरा होने के बाद, आप बच्चे को अपने साथ शिक्षा और पालन-पोषण के लिए ले जाएँगे? पूज्यवर, मैं नहीं चाहती कि मेरा बच्चा सूत हो। और विशेष रूप से, आपके बीज से उत्पन्न बच्चा। यदि वह ब्राह्मण होता है, तो मैं स्वयं को शुद्ध समझूँगी। मुझे कोई आपत्ति नहीं है यदि वह क्षत्रिय हो। मेरे जैसे निम्न दर्जे के व्यक्ति के गर्भ में, यहाँ तक कि मुझसे भी निचले दर्जे के व्यक्ति के गर्भ में भी, ब्राह्मण बीज से जन्मा बच्चा ब्राह्मण हो सकता है। उदाहरण के लिए, आप, यद्यपि अपने मां, आप ब्राह्मण बन गईं, है ना? ये क्षत्रिय जहां चाहें वहां अपने बीज बोते हैं, लेकिन संतान को अपने समुदाय में शामिल करने से इनकार करते हैं।

"उसकी प्रार्थना ने मुझे क्यों प्रभावित नहीं किया?..." जलते हुए शरीर की दुर्गंध में, उसने अस्सी साल पहले की यादों में झाँका, यह जानने के लिए कि उसने उसकी बातों पर ध्यान क्यों नहीं दिया। लेकिन अतीत बहुत धुंधला और अस्पष्ट लग रहा था। उसे खुद भी यकीन नहीं था कि वे उसके सटीक शब्द थे। लेकिन जहाँ तक वह समझ पाया, शब्दों का सार यही था। लेकिन एक सौ आठ साल की उम्र में भी, उसे वैदिक ग्रंथों की हर पंक्ति, उसके विभिन्न रूपों सहित, याद थी। उसकी याददाश्त अपने जीवन से जुड़ी बातों को भूलने में नाकाम रही। वह मन ही मन हंसते हुए सोचने लगा, "मैंने उसकी विनती क्यों नहीं मानी? उस समय मुझे पुत्र की कोई आवश्यकता नहीं थी और न ही पुत्र प्राप्ति की कोई इच्छा थी। भला वैदिक

ग्रंथों का अध्ययन करने वाले ऋषि को अपने पैरों को उलझाने के लिए पुत्र की क्या आवश्यकता? बेशक, अगर मैंने तब उसकी विनती मान ली होती, तो विदुर मेरा पुत्र होता। आज भी देखा जा सकता है कि विदुर की नाक, माथा, आंखें और आंखों के नीचे की थैली बिल्कुल मेरी जैसी हैं। उसका स्वभाव भी। वह विचित्रवीर्य से उत्पन्न धृतराष्ट्र और पांडु की संतानों से शारीरिक और मानसिक रूप से भिन्न है। इसका कारण क्या हो सकता है?..." उसने कई स्पष्टीकरणों पर विचार किया, लेकिन कोई भी संतोषजनक नहीं लगा। बेहतर स्पष्टीकरण की तलाश करते हुए ही उनका ध्यान अचानक एक और विषय पर चला गया। "परदादा वशिष्ठ ने अछूत कन्या अरुंधति से विवाह किया था। लेकिन मैंने उस दासी से उसी तरह विवाह क्यों नहीं किया? उसका नाम क्या था? वह खुद को सिर्फ एक दासी कहती थी। और मैंने उससे बहुत कम ही बात की थी। मुझे उससे उसका असली नाम पूछने का कोई अवसर ही नहीं मिला। या शायद मुझे कभी उसका नाम जानने का ख्याल ही नहीं आया। मुझे उसका चेहरा भी ठीक से याद नहीं है। मैं उसके चेहरे, उसकी आकृति, उसके रंग, उसके शरीर का वर्णन नहीं कर सकता। विदुर अब गृहस्थ हैं, उनके कई बच्चे, पोते-पोतियां और परपोते-परपोतियां हैं। कितने समय पहले मैं हस्तिनावती गया था? धृतराष्ट्र मुझे आदरपूर्वक प्रणाम करते हैं, उस गरिमा के साथ जिस गरिमा के साथ सिंहासन पर बैठे शासक को वैदिक ज्ञान में पारंगत व्यक्ति का सम्मान करना चाहिए।"

लेकिन जब विदुर ने अपने दोनों हाथों से मेरे पैर पकड़े, तो एक गर्माहट का एहसास हुआ। मुझे अब तक अपने साथ हुए दोनों तरह के व्यवहारों का अंतर समझ नहीं आया था। उन्हें याद आया कि विदुर ब्राह्मण बनने के योग्य थे और उन्होंने बहुत ज्ञान प्राप्त किया था। उन्हें विदुर का चेहरा साफ-साफ याद था। "हाँ, मुझे उनका चेहरा अच्छी तरह याद है। मैंने उन्हें कई बार देखा है। जब भी मैं हस्तिनावती जाता हूँ, वे मुझसे आदर और भय के साथ धर्म के किसी संवेदनशील विषय पर प्रश्न अवश्य पूछते हैं। लेकिन मुझे उनकी माँ याद नहीं आती। विदुर को देखकर भी नहीं। मुझे समझ नहीं आता कि ऐसा क्यों है। क्या यह मानसिक नियंत्रण का परिणाम था? या कुछ और?..." वे इस बारे में चिंता नहीं करना चाहते थे। लेकिन अनजाने में ही उनका अंतर्मन निराशा से भर गया था। उन्होंने सोचा, 'विदुर, तुम्हारी माँ का नाम क्या है?' लेकिन वे यह प्रश्न पूछने के लिए अपना मुँह खोलने से डर रहे थे। वे सोच रहे थे कि ऐसा क्यों है। उन्हें कोई उत्तर नहीं मिला।

थोड़ी ठंड महसूस करते हुए उन्होंने कंबल को अपने शरीर से और कसकर लपेट लिया।

उसे समय का पता नहीं था। उसने एक अकेले पक्षी की आवाज़ सुनी। वही विचार फिर से मन में आने लगा। क्या यह विचार था या स्मृति? जब इन दोनों को अलग करने की कोशिश की गई, तो पाया गया कि ये इतने आपस में जुड़े हुए थे कि इन्हें अलग करना असंभव था। उन्होंने स्वयं से पूछा, "जब मुझे पुत्र की इच्छा नहीं थी, तो बाद में क्यों हुई? लगभग बीस या बाईस वर्ष बाद, जब मैं स्वयं पचास वर्ष का हो गया, तब मुझे पुत्र की तीव्र इच्छा हुई। मैं अपने ज्ञान और विद्वत्ता का उत्तराधिकारी चाहता था। जो इच्छा तब तक मुझमें नहीं थी, वह मुझमें आकाश तक पहुँच गई और इतनी विशाल हो गई कि कोई आँख उसे देख नहीं सकती थी। मेरे भीतर मृत्यु और नश्वरता का भय गहरा था। मैंने हिमालय की उस अप्सरा से विनती की, 'सुंदर, मुझे पुत्र चाहिए। क्या तुम मुझे नौ महीने के लिए अपना गर्भ धारण करने दोगी? और तुम्हें उसकी देखभाल तब तक करनी होगी जब तक वह अपनी माँ का दूध पीना छोड़ न दे।' ऐसा प्रतीत होता है कि उनके समुदाय में बच्चे रीति-रिवाज के अनुसार माँ के होते हैं। शायद उसकी माँ मेरी शर्त पर इसलिए राज़ी हो गई क्योंकि मैं एक ऋषि था। फिर भी वह मुझे पहले अपनी माँ के पास ले गई और उनकी सहमति प्राप्त की। वह भूमि अब कहाँ थी? वह कौन सी नदी थी जो पहाड़ों की घाटियों में गिरती थी? गंगा की एक सहायक नदी के पास मैंने उसे एक साफ चट्टान पर ले जाकर गर्भ धारण किया, और उसने मेरे गर्भ को ग्रहण किया और अंततः व्यापक रूप से दिन के उजाले में ही वह गर्भ धारण कर बैठी। इसलिए नहीं कि वह मेरे कर्तव्यबोध में विश्वास करती थी, बल्कि इसलिए कि उसे लगा कि मैं यौन सुख चाहता हूँ। निश्चित रूप से उसने पहले दिन ऐसा ही सोचा होगा, लेकिन मैं उसके साथ कितने समय तक रहा? मुझे लगता है कि दो सप्ताह बाद उसने कहा, 'ऋषि, गर्भाधान हो गया है। आपको पुत्र चाहिए। मान लीजिए कि पुत्री हुई, तो क्या होगा?' मैंने उत्तर दिया, 'मैं आज से ठीक चार साल बाद इसी स्थान पर लौटूँगा। यदि पुत्र हो, तो मुझे दे देना। यदि पुत्री हो, तो उसे अपने पास रखना। आपको पुत्री को दिखाने की आवश्यकता नहीं है, आप बस मुझे सूचित कर सकती हैं। लेकिन मैं आपको चेतावनी दे रहा हूँ, मुझसे झूठ बोलने की कोशिश मत करना।' जब शुका तीन साल का था और मैंने उसे उसकी माँ से अलग किया, तो वह कितना रोया था। और क्या मैं भी अपने बेटे की तरह नहीं रोया था, जब मेरे

पिता मुझे नाव के पास उस मछली से भरे घर से दूर ले गए थे? लेकिन मेरे पिता तब अपेक्षाकृत युवा थे। तीरंदाजी के अभ्यास से उनके कंधे और सीना मजबूत हो गए थे। तब वे मेरी तरह बूढ़े नहीं थे। और उनका शरीर भी कमजोर नहीं था। मेरी तरह। लेकिन शुका भी मेरी तरह अपनी माँ से बिछड़ने पर रोया, और उसके बाद चार दिन तक मेरी तरह उदास रहा। और उसके बाद उसने कितनी जल्दी और कुशलता से वैदिक ग्रंथों में महारत हासिल कर ली! और वह भी मात्र बारह वर्ष की आयु में! उसकी स्मृति अद्भुत थी, और वह पवित्र ग्रंथों के किसी भी भाग को, जिसका मैंने अध्ययन किया था, तुरंत मौखिक रूप से सुना सकता था। बचपन से ही उसने अपना समय और ऊर्जा खाने-पीने या खेल-कूद में व्यर्थ नहीं की। उसका पूर्ण समर्पण ज्ञान, सत्य और विद्या के प्रति था। मैं भी ब्रह्मचारी था, लेकिन मैंने कभी यह तर्क नहीं दिया कि यह मनुष्य के जीवन की सर्वोत्तम अवस्था है। लेकिन मेरे पुत्र ने ठीक यही करना शुरू कर दिया। उसका मानना था कि यदि कोई सभी बंधनों से मुक्ति चाहता है तो गृहस्थ जीवन और वनवास को त्यागा जा सकता है। लेकिन मुझे यह स्वीकार करना होगा कि जब उसने सभी आसक्तियों के विरुद्ध तर्क दिया, तो वह मुझे सही प्रतीत हुआ। लेकिन पिता के प्रति ऋण का क्या? यदि पिता और गुरु दोनों के ऋण को एक साथ चुकाने के लिए पुत्र की इच्छा न हो, तो पुत्र की इच्छा क्यों होती है? कुछ समय बाद मुझे विश्वास हो गया कि वह भी इसे स्वीकार कर लेगा। ये दायित्व। क्या मैं सचमुच इस पर विश्वास करता था या मैं बस उदासीन था? खैर, मैं भी वेदों के अर्थ की खोज में लगा हुआ था। वह भी। उन्होंने मुझसे पूछा, 'पिताजी, आपने सभी वेदों का अध्ययन किया है। पहले जन्म, और उसके बाद मृत्यु। ये सत्य के दो पहलू हैं। इनके बीच ही सारा चिंतन और मनन समाहित है। जन्म क्यों लेते हैं? जीवन क्यों जीते हैं? मृत्यु के बाद कहाँ जाते हैं? मुझे इन प्रश्नों से परे कुछ नहीं दिखता। क्या आपको इनसे परे कुछ दिखता है?'

मैंने बचाव करते हुए जवाब दिया, 'ये तो वाकई अहम सवाल हैं, बच्चे। तुम्हें सोचना ही होगा...।'

'यह व्यर्थ है। मैं आपको अपने जन्म का कारण बनने के लिए दोष नहीं दे रहा हूँ। फिर भी मुझे संतानोत्पत्ति में कोई अर्थ नहीं दिखता। इसीलिए मैंने यह दृढ़ निश्चय किया है कि ब्रह्मचर्य ही मनुष्य के जीवन की सर्वोच्च अवस्था है।'

'पुत्र, पितृ के प्रति ऋण का क्या होता है?'

'यदि जन्म ही अर्थहीन है, तो जन्म देने वाले का क्या अर्थ हो सकता है? और, भला हम उन्हें क्या प्रतिफल दें?'

उस समय भी मैं यह नहीं समझ पाई कि यह ठंडा, खोखला लहजा और भाव मात्र बहस के मुद्दे नहीं थे! कुछ दिनों बाद जब मेरा बेटा मेरी आँखों के सामने बिना पानी-भोजन के, पूर्णतः निर्जीव अवस्था में पड़ा था, तब मैं उसके द्वारा स्वीकार किए गए आंतरिक दृष्टिकोण को समझ सकी। लेकिन क्या इसे सचमुच एक दृष्टिकोण कहा जा सकता है? यदि दृष्टिकोण नहीं, तो यह क्या था? बेशक, इसका उत्तर जानने से कोई लाभ नहीं होता। 'यदि मृत्यु, जो तीस, चालीस या साठ वर्ष बाद आ सकती है, आज ही, इसी क्षण आ जाए, तो क्या फर्क पड़ता है? मुझे आपकी सरल सांत्वना नहीं चाहिए। मुझे जीवन के मूल उद्देश्य के दृष्टिकोण से उत्तर दीजिए। और आप जैसे ज्ञानी व्यक्ति को रोना शोभा नहीं देता।'...

द्वैपायन का दुख गहराई से उमड़ रहा था, मानो वह लगातार बढ़ता जा रहा हो। लेकिन इससे पहले कि वह दुख शब्दों में व्यक्त हो पाता, उन्होंने अपने रोने और चिंता को रोकने के लिए बहुत संघर्ष किया, क्योंकि उन्हें लगा कि अपने जैसे ऋषि और द्रष्टा के लिए यह उचित नहीं है। इसलिए दुख उनके गले में ही अटक गया। फिर उन्होंने स्वयं से पूछा, क्या ऋषि वशिष्ठ, जो अपने पुत्रों के खोने से व्याकुल थे, किसी पागल की तरह नदी में कूद जाते, या किसी ऊंचे पत्थर से कूद जाते, या आग में समा जाते? क्या वे अज्ञानी, मूर्ख, बुद्धिहीन थे? गले में अटका हुआ दुख अब धीरे-धीरे नीचे उतर गया और छिप गया। उनका मन खालीपन से भर गया। वशिष्ठ की बहू, अदृश्यंती, उनके पीछे दौड़ती हुई आई, रुकी और बोली, "वंश नहीं मरेगा। मेरे गर्भ में चार महीने का शिशु है। यदि आप मर गए, तो उस बच्चे की देखभाल कौन करेगा?" ये शब्द सुनकर, जिसने अपने शरीर को नष्ट करने के इरादे से सूखी लकड़ियों का ढेर लगाकर आग लगाई थी, वह वहाँ से हट गया और अपनी गर्भवती बहू की देखभाल के लिए वहीं रुक गया। द्वैपायन ने पूछा, "मुझे किस बहू की देखभाल करनी होगी?" इस प्रश्न ने उसके मन को सन्न कर दिया और वह कुछ क्षण के लिए विचलित हो गया। थोड़ी देर बाद, भीतर दबा हुआ दुःख फूट पड़ा। जिसने अपने शरीर को कसकर वश में रखा था, वह अब उस अंधकार में ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा, अपने शरीर को ढीला छोड़कर, खुलकर रोने लगा मानो वह शब्दों, ध्वनियों, अक्षरों और लय का प्रयोग कर रहा हो।

—•✳•—

अध्याय 52

वह अपने पुत्र की राख के ढेर के सामने बैठ गया, और जब तक वह धीरे-धीरे कदमों से अपनी कुटिया में लौटा, तब तक भोर हो चुकी थी। वह थोड़ी देर सोया। जब वह उठा तो सूरज निकल चुका था। भीष्म तो और भी देर से उठे। जब दोनों सुबह मिले, तो उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि एक-दूसरे से क्या कहें। भीष्म के लिए, सुबह की पहली किरण में घना अंधकार छाया हुआ था। जिस विषय पर वह कृष्ण द्वैपायन से चर्चा करना चाहते थे, वह भी गायब हो चुका था, चर्चा करने का उनका उत्साह अब मंद पड़ गया था, मानो मृत्यु के अंधकार में विलीन हो गया हो। जब द्वैपायन ने भीष्म को देखा, तो उन्हें याद आया कि वे उनसे मिलने क्यों आए थे, लेकिन उन्होंने बस इतना पूछा, "क्या आप अच्छे से सोए?"

आश्रम के सभी निवासियों ने शुक की आत्मा को जल अर्पित करने के लिए नीचे स्थित तालाब पर जाने की योजना बनाई थी। जब भीष्म उनके साथ गए, तो उन्हें आश्रम, उसके जीवन और वहां के निवासियों का पूरा विवरण प्राप्त हुआ। आश्रम एक टीले पर फैला हुआ था। टीले के चारों ओर खेती योग्य भूमि थी। वैशम्पायन ने बताया, "हमारे पास अनाज, सब्जियां और फल उगाने के लिए पर्याप्त भूमि है।" इसके आगे मवेशियों को चराने के लिए हरे-भरे घास के मैदान फैले हुए थे। टीले के नीचे एक विशाल गौशाला थी जिसमें लगभग पांच सौ गायें थीं। द्वैपायन और उनके चार शिष्यों जैसे उत्कृष्ट विद्वानों के अलावा लगभग पचास शिक्षक शिक्षा प्रदान करते थे। शिष्यों की संख्या लगभग दो सौ थी। वे न केवल विद्वतापूर्ण गतिविधियों में लगे रहते थे, बल्कि कृषि और पशुपालन में भी भाग लेते थे। वैशम्पायन ने आगे कहा, "वास्तव में, हमारे गुरु ने कोई योजनाबद्ध आश्रम स्थापित नहीं किया था। यह बस यूं ही हो गया। हम चारों वैदिक अध्ययन के लिए उनके साथ जुड़ गए। अन्य

शिष्य भी हमारी तलाश में उनके पीछे-पीछे आ गए। हमें उनके भोजन और आवास की व्यवस्था करनी पड़ी। तब तक गुरु अपना भ्रमण पूरा कर चुके थे। उन्हें यात्रा करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। हमने उन्हें इन ढांचों की स्थापना और उनके प्रबंधन के लिए कर्मचारियों की व्यवस्था करने के लिए राजी कर लिया।"

सभी ने तालाब में स्नान किया, कमर तक पानी में खड़े रहे और विधिपूर्वक शुका की आत्मा को जल अर्पण किया। इसी दौरान दो अजनबी उनके पास आए - एक ने ऋषि और भिक्षु का सफेद वस्त्र धारण किया हुआ था, उसका चेहरा मुंडा हुआ था लेकिन सिर पर घने बाल थे, उसकी उम्र लगभग पचास वर्ष थी। वह उस किनारे पर खड़ा था जहाँ भीष्म, कृष्ण द्वैपायन, पैला और अन्य वरिष्ठ विद्वान खड़े थे। वह पानी में नहीं उतरा और समारोह में शामिल नहीं हुआ। पैला ने इस बात पर ध्यान दिया। उसने सोचा कि क्या वह किसी विदेशी देश से आया है, जो आश्रम में अध्ययन करने आया है। फिर उसने दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए तालाब में जल बहा दिया। उन दो अजनबियों में से एक ने अपना परिचय देते हुए कहा, "मेरा नाम वृषा है। मेरा नाम अनारण्य है। हमने वैदिक विद्या का थोड़ा अध्ययन किया है। कुछ बिंदुओं पर हमारे मन में संदेह हैं। हम आपके गुरु कृष्ण द्वैपायन से ही स्पष्टीकरण प्राप्त करने आए हैं। लेकिन अनजाने में हम एक दुखद दिन पर आ गए हैं। हमारा देश बहुत दूर है। हम यहाँ चार दिन रुक सकते हैं और आपके गुरु से इस विषय पर चर्चा कर सकते हैं। हमें कोई जल्दी नहीं है।"

पैला ने पूछा, "क्या आप निर्देश लेना चाहते हैं, या अपने संदेह दूर करना चाहते हैं, या फिर चर्चा करना चाहते हैं?"

वृषा ने कहा, "खैर, हमें नहीं लगता कि तीनों में कोई खास अंतर है। अगर अंतर है भी तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।"

पैला ने कहा, "हमारे गुरु इस समय वैदिक विवादों को सुलझाने और किसी भी बहस में पड़ने की स्थिति में नहीं हैं। कल ही तो उनके पुत्र..." जैमिनी ने बीच में दखल देते हुए कहा, "कोई भारी या थकाऊ चर्चा नहीं होनी चाहिए। एक छोटी सी बहस ठीक रहेगी। क्या इससे हमारे गुरु के मन को कुछ देर के लिए उनके दुख से दूर करने में मदद नहीं मिलेगी?"

भीष्म और द्वैपायन थोड़ा पीछे-पीछे चल रहे थे और लाठी का सहारा ले रहे थे।

अन्य शिक्षक और छात्र खेतों में काम करने या गायों की देखभाल करने चले गए। द्वैपायन, भीष्म और चार प्रमुख शिष्य अनुष्ठान कक्ष के एक हिस्से में बैठे थे।

गुरु हिरण की खाल पर, भीष्म बाघ की खाल पर, और चारों शिष्य तथा दो अजनबी मोटी घास के गद्दों पर बैठे थे।

गुरु ने पूछा, "क्या मेहमानों ने भोजन कर लिया है?"

अनारण्य ने कहा, "हमने अभी-अभी इसे पूरा किया है। आपकी गायों का दूध बहुत स्वादिष्ट है।" उनके स्वर में प्रशंसा और कृतज्ञता थी। पैला ने चर्चा शुरू करते हुए पूछा, "वेदों की किन विशेष अनुष्ठानिक पंक्तियों का स्पष्टीकरण आप चाहते हैं?" सामान्यतः, जब भी कोई बाहरी विद्वान चर्चा के लिए आता था, पैला ही चर्चा की शुरुआत करते थे। उन्होंने आगे की चर्चा में भी अग्रणी भूमिका निभाई। उनकी विद्वत्ता और उपलब्धियों के बारे में आम सहमति थी।

अनारण्या, "स्पष्टीकरण के मुद्दे पर हम बाद में चर्चा कर सकते हैं। लेकिन पहले क्या आप हमें उस अनुष्ठान का अर्थ और उद्देश्य समझा सकती हैं जो आपने जल में खड़े होकर और पवित्र शब्द जपते हुए किया?"

पैला ने कहा, "गुरु के पुत्र का निधन हो गया। शायद आपको भी इसके बारे में पता होगा। रास्ते में प्यास बुझाने के लिए उन्हें जल दिया गया था। आप अपने देश में इस प्रथा का पालन क्यों नहीं करते?"

अनारन्या, "पानी यहाँ से वहाँ कैसे जाता है?"

पैला ने कहा, "यही तो पवित्र शब्दों की शक्ति है।"

अनारण्य, "ठीक है। चलिए शुरू करते हैं। अब मुझे पानी पीना है। मैं अपने इस साथी को आपके कुएँ या तालाब पर भेजूँगा। आप में से कोई उसके साथ जाए, मुट्ठी भर पानी ले और पवित्र मंत्रों का जाप करे। और यहाँ मेरे सामने एक पात्र रख दें। क्या वहाँ से पानी इस पात्र में गिरेगा? या पानी सीधे मेरे मुँह में जाकर मेरी प्यास बुझाएगा? क्या हम यह प्रयोग करके देखें?"

पैला ने कहा, "मृत्युलोक में रहने वाली आत्माओं के लिए अभिप्रेत पवित्र अनुष्ठानिक शब्दों को, जिन्हें अनुभवजन्य और भौतिक शब्दों की कसौटी पर नहीं परखा जा सकता, जीवित लोगों पर लागू करना अनुचित होगा।"

अनारण्य, "क्या इसका मतलब यह है कि आपने स्वयं मृत्युलोक और ऐसे स्थानों को देखा है?"

पैला ने कहा, "इन्हें इन भौतिक आँखों से क्यों देखना चाहिए? वेद तो यही कहते हैं..."

बीच में ही टोकते हुए वृषा ने कहा, “इस बात का क्या प्रमाण है कि वेदों में जिनका वर्णन किया गया है, उन्होंने भी वास्तव में उन्हें देखा था? हमारी पाँच इंद्रियों की पहुँच से परे की चीजों के अस्तित्व में कोई कैसे विश्वास कर सकता है?”

पैला ने बहस जारी रखी। कृष्ण द्वैपायन का मन अभी भी अपने पुत्र की स्मृति में डूबा हुआ था। उन्हें याद था कि उनके पुत्र ने भी अजनबियों की तरह ही तर्क दिए थे, हालांकि उन्होंने वैदिक ऋषियों और द्रष्टाओं के प्रमाणों पर सवाल उठाने की हद तक नहीं गए थे। शुक का मानना था कि मृत्यु के बाद जीवन होता है, जन्म से पहले जीवन होता है, और यह कर्म के चक्र, क्रिया-प्रतिक्रिया के चक्र के कारण होता है। क्या वह सचमुच इसमें विश्वास करता था? द्वैपायन ने स्वयं से पूछा, "क्या वह नहीं जानता था कि शरीर को भूखा रखकर नष्ट करने मात्र से कर्म का चक्र नहीं टूटता? यदि वह जानता होता, तो वह ऐसा न करता। या क्या ऐसा हो सकता है कि विभिन्न जन्मों, कर्म और बाकी सब बातें केवल हमारी कल्पना की उपज हों?" ऐसे विचार उनके मन को वेदों के प्रति अनिश्चितता की ओर धकेल रहे थे। भीतर, उन्हें एक तीव्र खालीपन का अनुभव हो रहा था। उन्हें खालीपन केवल इसलिए नहीं था कि उन्होंने अपने पुत्र को खो दिया था, बल्कि इसलिए था कि उन्होंने जीवन का अर्थ ही खो दिया था। जैसे ही निरर्थकता की भावना उसके मन में घर कर गई, वह आंखें बंद करके चुपचाप बैठ गया।

भीष्म को यह बहस बहुत दिलचस्प लगी। हालांकि, उन्हें चिंता भी हुई क्योंकि यदि सभी वेद झूठे थे, जैसा कि उस अजनबी ने तर्क दिया था, तो क्या इसका अर्थ यह था कि वेदों में वर्णित रीति-रिवाज भी झूठे थे? उन्होंने स्वयं से पूछा, "मेरे पूर्वजों और अन्य शासकों द्वारा संपन्न राजसूय संस्कार, मेरा स्वयं का दिग्विजय संस्कार, मेरे पोते पांडवों द्वारा संपन्न राजसूय संस्कार जिसमें मैंने स्वयं भाग लिया था, और उनके माध्यम से पूर्वजों को यश और सम्मान दिलाना, स्वर्ग की अवधारणा, क्या ये सब केवल झूठ थे? ये अजनबी किस प्रकार की बहस में उलझे हैं?" तब कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "सुमंतु, इन तीनों को बहस जारी रखने दो। मेरा सिर चकरा रहा है। मुझे ले चलो और बिस्तर पर लिटा दो।"

वृषा अचानक रुक गई और बोली, "आदरणीय बड़े, आप अपने पुत्र के निधन से व्याकुल हैं। मुझे खेद है कि हमने आज ही इस विषय पर चर्चा शुरू कर दी। आइए अब यहीं रुकें और चार दिन बाद फिर से शुरू करें। तब तक हम आपके साथ रहेंगे।"

गुरु ने कहा, "नहीं, आप जारी रखिए। मेरे शिष्य भी मेरी ही तरह विद्वान हैं। बुढ़ापा मेरी बुद्धि को कुंद कर रहा है।" फिर वे उठे और तुरंत सुमंतु उनके पास आया और उनका बायां कंधा पकड़ लिया।

द्वैपायन अपनी कुटिया में गए और अपने लिए तैयार किए गए सरकंडे के पलंग पर लेट गए। फिर उन्होंने कहा, "कृपया मुझे एक कंबल ओढ़ा दीजिए। इसके बाद आप जा सकते हैं।" सुमंतु बोले, "आदरणीय गुरु, इनके तर्क एक नई दिशा में जा रहे हैं। ये ग्रंथों के अर्थ की खोज में नहीं हैं। ये स्वयं ग्रंथों पर प्रश्न उठाना चाहते हैं। इनका मार्ग अस्वीकृति का है।" द्वैपायन ने कोई उत्तर नहीं दिया और सुमंतु चले गए। उनके मन और हृदय में व्याप्त शून्यता हर क्षण और गहरी होती जा रही थी। पिछले दिन, जब पुत्र की मृत्यु हुई थी, तब उन्होंने इस बात से सांत्वना पाई थी कि मृत्यु एक और व्यक्ति की हानि थी। अब जो हो रहा था वह कहीं अधिक गंभीर और निराशाजनक था। अब मृत्यु ही परम सत्य है, यह विचार उनके मन और हृदय पर हावी हो गया था! उन्होंने स्वयं से पूछा, "यदि मृत्यु के बाद कुछ भी नहीं है, तो जब तक जीवन है तब तक आनंद क्यों न लें? फिर आनंद, सुख क्या है? यदि इंद्रियों के क्रीड़ा से परे कुछ भी स्वीकार्य नहीं है, तो क्या सुख का अर्थ केवल इंद्रियों की तृप्ति है? एक सौ आठ वर्ष की आयु में, मेरी त्वचा झुर्रियों से भरी है, मेरा मुंह दांतहीन और धंसा हुआ है, और भोजन में मेरी रुचि नहीं रहती। लेकिन फिर मैं खाने में पूरी तरह से कब रुचि रखता था? अब इस उम्र में, इंद्रियों की तृप्ति क्या है?" इस आत्मचिंतन के दौरान, मृत्यु का विचार उनके मन में गहराता चला गया, जिससे उनके विचारों का प्रवाह अचानक टूट गया। उन्होंने अपने विचारों की कड़ी को फिर से जोड़ने का प्रयास किया।

स्मृति अंधकार में डूब गई। फिर बिस्तर पर पीठ के बल लेटे हुए उसने सोचा, "क्या फर्क पड़ता है कि मैं अभी इसी क्षण मर जाऊं या दस साल बाद, क्योंकि मैं अपनी इंद्रियों का आनंद लेने में असमर्थ हूं?" वह इस विचार से सहमत होने लगा। इस प्रश्न पर उसका मन स्थिर हो गया, गतिहीन और जम सा गया। कुछ देर बाद उसने सोचा, "तो शुका का मार्ग सही था और उसने जो किया वह सही था। मान लो मैं भी उसके मार्ग पर चलूँ, बिना भोजन-पानी के इस पलंग पर लेट जाऊँ, और इस सिकुड़े हुए शरीर के साथ दो-तीन दिन में मर जाऊँ, तो फिर क्या? आगे क्या होगा?" चारों ओर भयानक अँधेरा था; चाँद-तारों से रहित रात का अँधेरा। उसका शरीर धीरे-धीरे काँपने लगा। एक अजीब सा डर उसे जकड़ लिया। ऐसा डर जो

उसने पहले कभी महसूस नहीं किया था। यह डर भी चाँद-तारों से रहित रात के अंतिम अँधेरे में विलीन हो जाएगा। उसने पूछा, लेकिन विलीन होने का क्या अर्थ है? ऐसे विलीन होने के बाद क्या बचेगा? उसे इस विचार से कुछ सांत्वना मिली कि अगर कुछ नहीं है, तो डरने की क्या बात है? फिर उसे बेचैनी महसूस हुई कि डर ने उसे शून्यता से अधिक संतुष्टि दी। उसे झोपड़ी में अपने अकेलेपन से बाहर निकलने की तीव्र इच्छा हुई। उसने कंबल हटाया और उठ बैठा। उसने पलंग के पास पड़ी लाठी उठाई और धीरे-धीरे बाहर चला गया। उसने सोचा कि अनुष्ठान कक्ष में बहस चल रही होगी। हाँ, चल रही थी। पैला एक कुशल वाद-विवादकर्ता थे। फिर भी अजनबियों द्वारा दी गई चुनौती उन्हें इतनी कठिन लगी कि उनका मन हुआ कि वे उनके तर्कों पर ध्यान देना बंद कर दें। तभी उन्होंने दाहिनी ओर से एक बछड़ा आते देखा। वह एक नन्हा सा बछड़ा था, शायद एक महीने से भी कम उम्र का। वह गौशाला से उछल-कूद करते हुए भाग रहा था। उसके मुलायम भूरे पंख धूप में चमक रहे थे। द्वैपायन को उस जानवर को गले लगाने की तीव्र इच्छा हुई। यह जानते हुए कि यदि वे लाठी लेकर उसकी ओर बढ़ेंगे तो वह डर के मारे भाग जाएगा, उन्होंने धीरे-धीरे और सावधानी से कदम बढ़ाते हुए लाठी को जमीन पर रख दिया। वह एक बार उछला। लेकिन ज्यादा दूर नहीं भागा। वह ऊपर-नीचे उछल रहा था, लेकिन आगे नहीं बढ़ रहा था। द्वैपायन ने हाथ बढ़ाकर उसका स्वागत किया और उसके पास गए। कहीं वह छूट न जाए, इस डर से उन्होंने जल्दी से दोनों हाथों से उसे पकड़ लिया। अपनी कमजोरी के कारण, उन्हें बछड़ा बहुत मजबूत लगा और वे फिसल गए। उन्होंने अपनी पकड़ नहीं छोड़ी। लेकिन सिर्फ एक पल के लिए। फिर वह खुद को छुड़ाने में कामयाब हो गया। और भाग गया। उसे आश्चर्य हुआ कि क्या वह डर के मारे भागा था या शरारत के कारण। तभी उसने देखा कि उसके घुटने पर हल्की सी चोट लगी है। उसे उसकी कोमल त्वचा याद आई और काश उसने उसे थोड़ी देर और अपनी बाहों में थामे रखा होता। वह ज़मीन पर बैठ गया और बछड़े को देखने लगा। वह उसे अपनी बाहों में नहीं ले सकता था। लेकिन कम से कम वह उसे निहारता तो रह सकता था। वह छोटा सा जीव एक जगह स्थिर नहीं रहा। वह बेचैन था और घास को सूंघ रहा था। लेकिन उसे अपने दांतों से नहीं उखाड़ रहा था।

इसी बीच सुमंतु वहां आ गया। उसने कहा, "पूज्य भीष्म कहते हैं कि उनके लौटने में देर हो रही है। वे आपसे विदा लेना चाहते हैं। उन्होंने मुझे यह पता लगाने

के लिए भेजा है कि क्या वे आपसे तब विदा ले सकते हैं जब आप अभी भी बिस्तर पर हों।"

द्वैपायन ने कहा, "उसे मेरी कुटिया में ले आओ। लेकिन पहले मुझे मेरी कुटिया तक पहुँचने में मदद करो।"

सुमंतु ने उन्हें लाठी थमा दी और उनके बाएं कंधे को सहारा दिया ताकि वे उठ सकें। द्वैपायन किसी तरह चलकर अपनी कुटिया तक वापस पहुंचे। लेटते ही उन्होंने अपने ऊपर कंबल ओढ़ लिया, तभी उन्हें भीतर अंधकार का आभास हुआ। यह मृत्यु का अंधकार था, जो धुएं की तरह पूरे आकाश में व्याप्त था। उन्हें लग रहा था कि अकेले बैठना असहनीय है, तभी भीष्म आ गए। भीष्म के तकिये के पास बैठने के बाद सुमंतु चले गए।

भीष्म ने कहा, "मैं जल्द ही रवाना हो रहा हूँ।"

द्वैपायन ने कहा, "आप इतनी दूर से यहाँ आए। लेकिन आपसे थोड़ी देर भी बात करना असंभव था। ऐसा लगता है कि आप मुझसे कुछ पूछने आए हैं।"

भीष्म, "जी हाँ, लेकिन अब मुझे यह प्रश्न निरर्थक लगता है। कल से, जब से मैं आश्रम पहुँचा हूँ, मुझे यही महसूस हो रहा है। इसके अलावा, मुझे इस बात पर गंभीर संदेह है कि आप इस प्रश्न का उत्तर दे पाएँगे। खैर, मैं फिर भी स्पष्ट कर देता हूँ..." तभी द्वैपायन ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "यह आप ही थे जिन्होंने यह निर्णय लिया था कि नियोग व्यवस्था के माध्यम से वंश को आगे बढ़ाना धर्म के अनुसार है, और मेरी माता को इसके लिए राजी किया था, और मुझे बुलवाया था। आप, जो इतने आश्वस्त थे, अब कैसे इस बात पर संदेह करने लगे हैं कि आपको मुझसे स्पष्टीकरण की आवश्यकता है? दूसरों की राय को भूल जाइए। मुझे बताइए कि आपके मन में क्या है।"

भीष्म तुरंत कोई उत्तर नहीं दे सके। वे अपने मन में विचार करने लगे। बेशक, भीष्म को धृतराष्ट्र और पांडु के जन्म की धार्मिक वैधता पर कोई संदेह नहीं था। जरा सा भी नहीं। पांडवों के जन्म पर भी नहीं। उन्होंने दुर्योधन के मत को स्पष्ट रूप से गलत ठहराया था। भीष्म ने स्वयं से पूछा, "फिर भी, मैं इस विषय पर पूछने यहाँ क्यों आया?" उन्हें अपना व्यवहार अजीब और समझ से परे लगा। उन्होंने फिर स्वयं से पूछा, "क्या मैं केवल अपने विश्वास की दरारों को भरने आया हूँ?" तब द्वैपायन ने कहा, "देखो। इस समय मेरी आस्थाएँ दुविधा में फँसी हुई हैं। शायद तुम्हारे जैसे किसी के साथ रहकर मैं अपनी शंकाओं और दुविधाओं को दूर कर

सकूँ। इस संसार में तुम ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हो जो मुझसे सीधे बात करने का साहस रखते हो। तुम मेरे भाई भी हो। तुमने निष्ठापूर्वक और निरंतर ब्रह्मचर्य का अभ्यास किया है। इतनी जल्दी वापस जाने की क्या योजना है? कुछ दिनों के लिए मेरे साथ रहो। या इससे भी बेहतर, आश्रम में नियमित रूप से निवास करो!"

भीष्म ने कहा, "मैंने दुर्योधन की सेना की सर्वोच्च कमान संभाल ली है। मुझे आज रात तक शिविर में वापस आना होगा और कल हम युद्ध शुरू करेंगे।"

द्वैपायन ने आश्चर्य से पूछा, "आप?" भीष्म ने सहमति में सिर हिलाया। फिर वे चुप हो गए। एक बार फिर चारों ओर सन्नाटा छा गया, श्मशान का सन्नाटा। कुछ देर रुकने के बाद, द्वैपायन ने आगे कहा, "इसका अर्थ यह है कि आप, जो स्वयं दुर्योधन की सेना का नेतृत्व कर रहे हैं, यह कह सकते हैं कि नियोग धर्म का उल्लंघन है। इसका अर्थ यह है कि कुरु वंश को आगे बढ़ाने के आपके सभी प्रयास, जिनमें मेरा योगदान भी शामिल है, धर्म का उल्लंघन हैं।"

लेकिन भीष्म का मन कहीं और ही था, मानो किसी और बात की चिंता में डूबा हुआ हो। वे द्वैपायन को घूरते बैठे रहे। एक बार फिर कुटिया में सन्नाटा पसरा हुआ था, मानो गतिहीन हो गया हो। द्वैपायन ने भीष्म के चेहरे की ओर देखा - सीधी, नुकीली नाक। आँखें इतनी धँसी हुई थीं कि मानो किसी भी क्षण मृत्यु का सन्नाटा छा जाए। द्वैपायन ने उन आँखों को भी देखा जिन्होंने एक सदी से भी अधिक समय तक जीवन देखा था। द्वैपायन सोचने लगे कि दूसरों को ये आँखें कैसी दिखती होंगी और वास्तव में कैसी होंगी। लेकिन उन्होंने खुद से पूछा, उन्हें कौन बताएगा? और अगर वे दूसरों से पूछें भी, तो क्या उनके मन में भीष्म की आँखों के बारे में वही भावनाएँ होंगी जो उनके मन में थीं? फिर द्वैपायन ने सन्नाटा तोड़ते हुए कहा, "कल जब मैंने अपने बेटे का अंतिम संस्कार किया, तब से मैं इस बारे में सोच रहा हूँ। आज सुबह जब उन दो अजनबियों ने बहस शुरू की, तब से यह सोच और भी बोझिल हो गई है। उस सवाल के सामने, यह मुद्दा कि क्या नियोग धर्म का उल्लंघन करता है या नहीं, महत्वहीन हो जाता है। जब हमारे पास मूल प्रश्न का उत्तर ही नहीं है, तो तुच्छ बातों पर दिमाग खपाने का क्या फायदा?" भीष्म ने उनसे स्पष्टीकरण और विस्तार की अपेक्षा करते हुए उनकी ओर देखा। द्वैपायन ने आगे कहा, "यदि हम मृत्यु को अर्थ दे सकें, तो हम जीवन को भी अर्थ दे सकते हैं। यदि जीवन का अर्थ है, तो जन्म और संतानोत्पत्ति का भी अर्थ होगा। तब जन्म और संतानोत्पत्ति के विभिन्न रूपों का तुलनात्मक मूल्यांकन किया जा सकता है।"

भीष्म द्वैपायन के चेहरे को निहार रहे थे, लेकिन उनकी धँसी हुई आँखें इधर-उधर भटक रही थीं, उनमें कोई स्पष्टता नहीं थी और वे अनिश्चित थीं। मृत्यु की गंध, जो कल से उनके मन को जकड़े हुए थी, अब लौट आई थी। दोनों मौन बैठे रहे, एक ही हवा में साँस लेते रहे, एक ही अँधेरे में उनकी दृष्टियाँ थकती जा रही थीं। थोड़ी देर बाद, भीष्म उठे और बोले, "मैं यात्रा के लिए तैयार हो जाऊँगा।" फिर भी, मृत्यु की गंध से भरे द्वैपायन वहीं बैठे रहे। भीष्म एक मिनट तक खड़े रहे, और फिर द्वैपायन की किसी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा किए बिना, लाठी के सहारे अपनी कुटिया में लौट गए।

—•✳•—

अध्याय 53

कुछ देर बाद गुरु की कुटिया के बाहर किसी के दौड़ने की आवाज़ सुनाई दी। पल भर में पुलुहा हांफते हुए पास आया। वह कुटिया की सभी गतिविधियों का मुख्य आयोजक था। वह समग्र पर्यवेक्षक के रूप में खेती और पशुपालन की देखरेख करता था। इसके अलावा, वह शिष्यों के एक समूह को शिक्षा भी देता था। हवा में तेज़ी से दौड़ते हुए गुरु की कुटिया की ओर जाते समय उसके सिर के सफेद बाल पूरी तरह से बिखर गए। उसने गुरु को प्रणाम किया और कहा, "कुटिया पर हमला हो रहा है। कुछ राज दूत आए हैं। वे हमारी सभी विनतियों को सुनने से इनकार कर रहे हैं। वे इस बात पर अड़े हैं कि सभी राजा के आदेशों का पालन करें।"

गुरु ने पूछा, "वह राजआदेश क्या है?"

पुलाहा ने लिखा, "दुर्योधन के प्रांत के राज्यपाल आए हैं। उनके साथ धनुष-बाण से लैस सैनिक घोड़ों पर सवार हैं। उनके साथ युद्ध रथ भी हैं। वे कहते हैं कि वहाँ युद्ध होने वाला है। विभिन्न देशों के सहयोगी शासक अपनी सेनाओं के साथ वहाँ

एकत्रित हुए हैं। ऐसा लगता है कि यह राज्य के सम्मान का प्रश्न है। आदेश में सभी प्रजा को अपने मवेशी भी तुरंत सौंपने का निर्देश दिया गया है। आश्रम भी इस आदेश से मुक्त नहीं हैं। इस आदेश को समझाने और आश्रम पर लागू करवाने के लिए स्वयं प्रांत के राज्यपाल आए हैं, और यह आश्रमों की विशेष स्थिति को मान्यता देने के लिए है।"

गुरुजी आश्चर्यचकित थे। वे स्तब्ध भी थे। फिर भी वे घबराए हुए नहीं दिखे। उन्होंने पुलाहा से बस इतना कहा, "उसे यहाँ बुलाओ।" पुलाहा जितनी तेज़ी से आया था, उतनी ही तेज़ी से वापस भागा। थोड़ी देर बाद घोड़ों के खुरों की आवाज़ सुनाई दी। गुरुजी उठे, धूप में पास के एक पत्थर की ओर चले और उस पर बैठ गए। प्रांत के राज्यपाल अपने घोड़े से उतरे और गुरुजी को प्रणाम किया। उन्होंने विनती भरे स्वर में कहा, "आपको मेरी यात्रा का उद्देश्य पता चल गया होगा। क्या मैं आपसे राज्य के कार्यों में सहयोग करने का अनुरोध कर सकता हूँ?"

द्वैपायन, "सहयोग से आपका वास्तव में क्या तात्पर्य है?"

राज्यपाल ने कहा, "ऐसा लगता है कि आश्रम में अनाज का बड़ा भंडार है। हमें पता चला है कि आपके पास पाँच सौ गायें हैं। साथ ही कुछ बैल और बछड़े भी हैं। जब राज्य अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा हो, तो यदि आप ये सब सौंप देते हैं, तो इसका अर्थ सहयोग होगा। महाराजा दुर्योधन ने स्वयं मुझे आपको उनका सादर अभिवादन पहुँचाने के लिए कहा है।"

गुरु ने कहा, "पर यह तो एक आश्रम है। आश्रम की संपत्ति राजा की नहीं होती।"

राज्यपाल ने कहा, "आप इसे कैसे कहते हैं? कृपया मुझे समझाएं।"

गुरु ने कहा, "मुझे राजा से उपहार में एक भी सोने का सिक्का नहीं मिला। आश्रमवासियों ने सब कुछ अपने परिश्रम से उगाया है। हम अपने पशुओं को पालने, दूध, दही, घी और गोमांस इकट्ठा करने के लिए भी कड़ी मेहनत करते हैं।"

राज्यपाल ने कहा, "सारी भूमि राज्य की, राजा की है। जिस भूमि पर आप खेती करते हैं, जिस पर आप अपने पशु चराते हैं, जिस पर आप अभी बैठे हैं, जिस हवा में आप सांस लेते हैं, और बाकी सब कुछ राजा का है। इसलिए, यह कहना कि आपको शाही उपहार नहीं मिले हैं, राजा का अपमान करने के बराबर है। यह अपने कर्तव्य का पालन न करने का अपराध भी है।" उनके लहजे या आवाज़ में ऋषि को नीचा दिखाने का कोई प्रयास नहीं था। लेकिन उनके शब्दों में वह सम्मान भी नहीं झलक रहा था जो बाहरी तौर पर दिखाया गया था। यह एक सामान्यीकृत

रूप में कहा गया था, किसी विशेष व्यक्ति की ओर इशारा नहीं कर रहा था, बल्कि सभी को शामिल कर रहा था, एक विशिष्ट विवरण के अनुरूप।

गुरु ने कहा, "तुम्हारे राजा को धर्म की बारीकियों का बहुत कम ज्ञान है। देखो, ज्ञान प्राप्ति और सत्य की खोज में लगे रहने वाले किसी राजा के अधीन नहीं हो सकते। उनके आश्रम किसी राज्य के अधिकार क्षेत्र में नहीं आते। हम केवल बुद्ध देव, ज्ञान के देवता, जो हम सभी को ज्ञान प्राप्त करने में सहायता करते हैं, को ही अपना राजा मानते हैं। जाओ और यह बात दुर्योधन को बताओ।"

राज्यपाल ने कहा, "हे पूज्यवर, मैं आज भी आपका बहुत आदर करता हूँ। मैं तो केवल एक प्रशासक हूँ जो ऊपर से मिले आदेशों का पालन करता है। न्याय के सूक्ष्म पहलुओं पर राजा से विचार करना आपका कर्तव्य है। लेकिन यदि आप स्वेच्छा से माल नहीं सौंपते हैं, तो हम उसे बलपूर्वक ले लेंगे। मैं आपको निर्णय लेने के लिए थोड़ा समय देना चाहता हूँ। इससे अधिक करने का मुझे कोई अधिकार नहीं है।" उन्होंने ऋषि को आदरपूर्वक प्रणाम किया, अपने घोड़े पर सवार हुए और भंडारगृह की ओर चल पड़े। यह भंडारगृह छात्रों की झोपड़ियों के पास, रसोई की ओर, एक विशाल रीम वृक्ष के निकट स्थित था।

द्वैपायन को ऐसा लगा मानो उनके पैरों तले ज़मीन खिसक गई हो। उन्हें अपमान का भी एहसास हुआ। उन्हें लगा कि यह आघात उस आघात से भी कहीं अधिक तीव्र और शक्तिशाली था जो सुबह अनुष्ठान कक्ष में अजनबियों द्वारा वेदों की सत्यता और महत्व पर किए गए उनके विश्वास को लगा था। उनसे लड़ना संभव था, चाहे जीत हो या हार। हारने पर भी खोई हुई ज़मीन वापस पाई जा सकती थी। लेकिन राजा के इस आदेश से अगले दिन से आश्रमवासियों को भोजन और दूध नहीं मिलेगा। आश्रम बंद करना पड़ेगा। यह एक ऐसा संकट था जिसका उन्हें अब सामना करना था। वे क्रोधित भी थे। उन्होंने मन ही मन कहा, "राजाओं और उनकी शक्ति पर धिक्कार है!" उन्होंने दुर्योधन को कई बार शाप दिया। उन्हें पूर्व ऋषियों द्वारा उन लोगों के विरुद्ध दिए गए शाप याद आए जिन्होंने उनके साथ अन्याय या उन्हें चोट पहुँचाने का साहस किया था। क्रोध और पीड़ा की ऐसी अभिव्यक्ति से उन्हें कुछ राहत मिली। जब वे अपनी लाचारी से चिंतित थे, तभी अचानक उन्हें एहसास हुआ कि भीष्म अभी भी आश्रम परिसर में मौजूद हैं। उसने खुद को दोषी ठहराया कि जब राज्यपाल आदेश देने के लिए वहाँ मौजूद था, तब उसे यह बात समझ नहीं आई, हालाँकि राज्यपाल ने विनम्र भाषा में आदेश दिया था। इस विचार

से उसका मन हल्का हो गया। वह लाठी का सहारा लेकर सीधे भीष्म की कुटिया में गया। उसने उस वृद्ध योद्धा से बात करते हुए कहा, "अभी-अभी प्रांतीय राज्यपाल यहाँ आए थे।" घटना का वर्णन करने के बाद उसने कहा, "कुटिया तभी बच सकती है जब आप उस अधिकारी को बुलाकर उसे धमकी पर अमल न करने का आदेश दें।"

लेकिन भीष्म ने तुरंत उत्तर देना उचित नहीं समझा। उनकी गहरी धंसी हुई आँखें न केवल बाहरी अंधकार को प्रतिबिंबित कर रही थीं, बल्कि उनके सामने खड़े वैदिक विद्या के उस महान विद्वान को भी दर्शा रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो वे कुछ खोज रही हों।

द्वैपायन, जो उनके चेहरे और आँखों को देख रहे थे, ने पूछा, "यह चुप्पी क्यों? क्या आपको दुर्योधन के आदेशों को रद्द करने का अधिकार नहीं है?"

भीष्म ने कहा, "यह सवाल नहीं है। क्या ऋषि वशिष्ठ आपके परदादा नहीं थे?"

Dvaipayana, "Yes ".

भीष्म कहते हैं, "ऐसा लगता है कि उनके आश्रम में एक सुंदर सफेद गाय थी। उसके थन दूध के घड़े जितने बड़े थे। वह दिन में तीन बार गाढ़ा दूध देती थी, जिसका चिकनापन उंगलियों पर चिपक जाता था। एक बार राजा कौशिक आश्रम आए और उन्होंने उस गाय को देखा। उन्होंने ऋषि से गाय देने का अनुरोध किया। उन्होंने तर्क दिया कि राज्य में सब कुछ राजा का अधिकार है और वह जो चाहे ले सकते हैं। वशिष्ठ सहमत नहीं हुए। राजा ने अपने सैनिकों को गाय को पकड़कर ले जाने का आदेश दिया। एक पल के लिए ऋषि अवाक रह गए। फिर, साहस जुटाकर उन्होंने आश्रम के सभी लोगों - शिक्षकों, शिष्यों, महिलाओं और बच्चों - को इकट्ठा किया। उन्होंने उन्हें लंबी लाठियाँ दीं और राजा और उनके सैनिकों को तब तक पीटा जब तक उनके अंग बुरी तरह घायल नहीं हो गए। उनके शरीर आश्रमवासियों द्वारा किए गए घावों से सूज गए थे। कौशिक के अपनी विशाल सेना के साथ लौटने की आशंका से, निडर ऋषि ने आसपास के आश्रमों और आबादी से अपने स्वयं के लोगों की सेना तैयार की और धनुष-बाण उठा लिए। उनका नेतृत्व करने के लिए। उन्होंने राजा को पराजित किया और अपने आश्रम को बचाया। इसका एक परिणाम यह हुआ कि कौशिका, जिसका राजसी अहंकार अब कम हो गया था, ने अपनी शक्ति और पद त्याग दिया और स्वयं एक ऋषि बन गए, जो दार्शनिक और आध्यात्मिक विषयों के अध्ययन में संलग्न थे। उस युद्ध में वशिष्ठ ने

अपने पुत्रों को खो दिया, लेकिन उन्होंने गाय को नहीं छोड़ा। अच्छा, मुझे याद करने दीजिए। यह मुझे किसने बताया था? फिर उन्होंने आगे कहा, "क्या आपने स्वयं मुझे यह घटना पहले सुनाई थी?"

द्वैपायन ने कहा, "जी हां, मेरे परदादा ने ये सब किया था।"

भीष्म ने कहा, "तब तुम भी ऐसा ही करो। उस अधिकारी को बुलाकर उसे चेतावनी दो। यदि वह तुम्हारी चेतावनी पर ध्यान न दे, तो उसे और उसके सैनिकों को मार डालो। उसके बाद दुर्योधन अपनी विशाल सेना के साथ आ सकता है। तब तक तुम भी अपनी सेना को चुनौती का सामना करने के लिए तैयार कर लो।"

द्वैपायन ने कहा, "परन्तु मुझे धनुर्विद्या का ज्ञान नहीं है। और इस आश्रम में किसी को भी धनुष-बाण चलाना नहीं आता।"

भीष्म ने पूछा, "ऐसा क्यों है?"

द्वैपायन ने कहा, "क्या शासक का यह कर्तव्य नहीं है कि वह अपने शस्त्रों से विद्वानों की रक्षा करे? मैंने सोचा कि यह हमारा काम नहीं है, और मैं यहाँ शांति और अहिंसा का वातावरण बनाए रखना चाहता था।"

भीष्म कुछ नहीं बोले। द्वैपायन उनके चेहरे को निहारते रहे। उन्हें ऐसा लगा मानो वह बूढ़ा योद्धा मन ही मन हंस रहा हो। तभी एक प्रशिक्षक दौड़ते हुए आया और सूचना दी, "वे गोदाम से अनाज निकालकर गाड़ियों में लाद रहे हैं। वे गायों के रस्से खोलकर उन्हें हांक रहे हैं।"

द्वैपायन क्रोधित और उत्तेजित हो गए। ऊँची आवाज़ में उन्होंने कहा, "भीष्म, जल्दी कीजिए। अब केवल आपके आदेश से ही इस आश्रम को बचाया जा सकता है। कृपया उठिए। या क्या मैं राज्यपाल को संदेश भेज दूँ कि भीष्म यहाँ हैं?"

भीष्म ने ऋषि के उत्साह से अविचलित होकर शांत भाव से उत्तर दिया, "मैंने सुना है कि वशिष्ठ और अन्य वैदिक ऋषि थे। मुझे याद है कि मैंने उनके द्वारा रचित कुछ अनुष्ठानिक ग्रंथों का अध्ययन किया है। आप भी वैदिक ऋषि हैं। क्या आप इन ग्रंथों के रचयिता हैं या संकलनकर्ता?"

द्वैपायन ने व्यथित होकर कहा, "इस विकट परिस्थिति में, हमारी सहायता करने के बजाय, आप विभेदक अर्थों के बारे में प्रश्न क्यों पूछ रहे हैं?"

भीष्म ने कहा, "कृष्ण, शांत हो जाओ। उत्तेजित मत हो।" फिर उन्होंने गुरु की ओर मुड़कर कहा, "राज्यपाल को सूचित कर दो कि मैं यहाँ हूँ और उनसे कहो कि वे यहाँ आएँ। उन्हें बता दो कि मैंने आदेश दिया है कि आश्रम में छोटी से छोटी

वस्तु को भी न छुआ जाए।" उनके जाने के बाद उन्होंने द्वैपायन से कहा, "पता नहीं क्यों, लेकिन किसी तरह मैं अब इस प्रश्न को लेकर चिंतित हूँ कि वैदिक ऋषि और द्रष्टा के गुण और विशेषताएँ क्या होती हैं।"

अपने अंतर्मन में उलझे द्वैपायन भीष्म के प्रश्न की गहराई को समझ नहीं पाए। वे बस भागते हुए गुरु को देखते रहे। भीष्म भी मौन थे। थोड़ी देर बाद घोड़ों के खुरों की आहट सुनाई दी। प्रांत का राज्यपाल आ गया। उसने भीष्म को प्रणाम किया, जिन्होंने कहा, "युद्ध के दौरान लोगों से अनाज और अन्य सामान इकट्ठा करना प्रथा है। ये राजा को दिए जाने वाले सामान्य भुगतानों के अतिरिक्त होते हैं। लेकिन आपने आश्रम पर आक्रमण करने और उस पर कब्ज़ा करने का निर्णय कैसे लिया?"

राज्यपाल ने कहा, "महाराजा, मुझे आपके यहाँ होने की जानकारी नहीं थी। और मैं अकेले ही इस प्रसिद्ध आश्रम के मामलों में कैसे हस्तक्षेप कर सकता हूँ?"

भीष्म, "आपका क्या मतलब है?"

राज्यपाल ने कहा, "मैं राजा के दरबार से सीधे जारी किए गए आदेश का पालन कर रहा हूं।"

भीष्म ने कहा, "अब मैं तुम्हें आदेश देता हूँ: इस आश्रम को मत छूना। अपने अनुयायियों के साथ तुरंत यहाँ से चले जाना। यदि महाराजा तुमसे कोई स्पष्टीकरण मांगें, तो मेरा नाम लेना।"

राज्यपाल वहीं खड़ा रहा। भीष्म ने कहा, "मैंने अपने आदेश जारी कर दिए हैं। अब तुम जा सकते हो।" उसने भीष्म को प्रणाम किया और फिर अपने घोड़े पर सवार होकर चला गया।

भीष्म ने द्वैपायन की ओर मुड़कर कहा, "कृष्ण, मुझे आज रात से पहले पहुँचना है, और मुझे पहुँचना ही होगा। कल युद्ध शुरू हो रहा है।" विदाई के औपचारिक शब्द कहे गए। द्वैपायन ने आगे कहा, "युद्ध के बाद, आप यहाँ आश्रम में आ जाइए।" तभी रथ उनके पास आया। सारथी ने भीष्म का हाथ पकड़कर उन्हें रथ में बिठाया। कृष्ण रथ और घोड़ों को अपनी गति से उड़ती धूल में गायब होते हुए देख सकते थे।

—•✳•—

अध्याय 54

रथ उसी ऊबड़-खाबड़ और पथरीले रास्ते से लौट आया। सारथी सुकेशा ने अपने स्वामी को आश्वासन दिया कि लगभग पंद्रह मील के बाद रास्ता ठीक हो जाएगा। तकिये पर लेटते हुए भीष्म को अपनी पीठ और कमर में दर्द महसूस हुआ। पिछली रात भी उन्हें हल्का दर्द हुआ था, और उन्हें तभी तेल मल लेना चाहिए था। बहुत अधिक कंपन के कारण सुकेशा लगाम कसकर पकड़े हुए था और बहुत धीरे-धीरे रथ चला रहा था। रथ को आगे और पीछे के घोड़ों से पर्याप्त दूरी पर रखा गया था ताकि उनके खुरों की धूल रथ में न जाए। यह भीष्म के स्वयं के आदेश पर किया गया था।

हालांकि वे आश्रम से काफी दूर आ चुके थे, फिर भी उनके मन में व्याप्त मृत्यु का भय अभी तक दूर नहीं हुआ था। शायद दो नास्तिकों की चर्चा के दौरान यह भय कुछ समय के लिए टल गया था। अन्यथा, आश्रम में प्रवेश करने के क्षण से ही यह उनके साथ था, लेकिन अलग-अलग रूपों में। आकाश में बिखरे बादल, विभिन्न आकृतियों और रूपों में थे। सड़क के उस पार, अस्पष्ट रूप से दिखाई देने वाले पेड़, रथ और घोड़ों की गति से उड़ती धूल, ये सब मृत्यु के रूपों जैसे प्रतीत हो रहे थे। उन्हें मृत्यु का साक्षात रूप मानना भ्रम था। फिर भी वे मृत्यु को एक वास्तविकता मानते थे, लेकिन यदि यह वास्तविकता है, तो यह भ्रम कैसे हो सकती है? मृत्यु अलग-अलग लोगों के पास अलग-अलग रूपों में आती है। शुकदेव के मामले में, इसने उनके शरीर को भुखमरी से सुखा देने का रूप धारण किया। उन्होंने तुरंत देखा कि ऐसा नहीं था, क्योंकि मृत्यु अपनी इच्छा से उनके पास नहीं आई थी, बल्कि उन्होंने स्वयं को बुलाया था, पूरी चेतना के साथ कि वे क्या कर रहे हैं।

इसका अर्थ यह था कि उसने उसकी क्रूरता को शांत कर दिया, नहीं, केवल मृत्यु की क्रूरता को ही नहीं, बल्कि जीवन के सुख-सुविधाओं को भी। संक्षेप में, वह दोनों के प्रति तटस्थ हो गया, एक ऐसी स्थिति अपना ली जो दोनों की पहुँच से परे थी। रथ बुरी तरह काँप रहा था। और मन चारों दिशाओं में भटक रहा था। कोई स्मृति उसे सता रही थी। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मृत्यु मुझे किस रूप में मिलेगी? मैं इतना जी चुका हूँ कि लगभग अमर महसूस करता हूँ। खैर, शायद मैं किसी वीर क्षत्रिय की तरह युद्ध के मैदान में लड़ते हुए मरूँ। लेकिन ऐसा कैसे हो सकता है जब मैं धनुष उठाकर तीर नहीं चला सकता? हाँ, मुझे याद है। कब की बात है? धृतराष्ट्र इक्यासी या बयासी वर्ष के थे। धृतराष्ट्र की माता और उनकी दो बहनों, एक बड़ी और एक छोटी, को एक साथ लाने से तीन या चार साल पहले की बात होगी। यह स्वयंवर था, एक ऐसा समारोह जिसमें कन्या को अपनी पसंद का वर चुनने की स्वतंत्रता होती थी। मेरा मानना है कि तीनों में से एक ने राजा शाल्व को चुना था, क्योंकि वह पहले उनसे प्रेम करती थी। ऐसे में उन्होंने स्वयंवर का आयोजन क्यों किया? क्या उनके पिता ने अन्य दो पुत्रियों के लिए ऐसा किया? ऐसे समारोह में, क्या यह नकारा जा सकता है कि राजधर्म बलपूर्वक दुल्हन को ले जाने की अनुमति देता है? मैंने उन्हें बाँधकर घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले रथ में बिठा दिया। कितनी थीं? पाँच, मुझे लगता है। पहुँचने के बाद हस्तिनावती, जब मैंने उन्हें खोला, तो रस्सियाँ उनके मांस, बांहों और जांघों में धंस गई थीं। भगवान का शुक्र है, वे रास्ते में नहीं मरे। 'राजधर्म पर लानत!' उसने कहा, 'तुम्हें क्या लगता है कि तुम बलपूर्वक किसी भी चीज़ या किसी भी व्यक्ति को छीनकर जीत सकते हो? तुम मुझे जानवर की तरह बर्ताव करके, मेरे अंगों को बांधकर, मुझे इतनी दूर लाकर और मुझे इस महल रूपी जेल में कैद करके नहीं जीत सकते। मेरा मन कहीं और है। बल से तुम निर्जीव वस्तुओं को जीत सकते हो। तुम मूर्ख हो जो यह नहीं जानते कि शारीरिक बल से तुम मन, हृदय और इच्छाशक्ति वाले मनुष्यों को नहीं जीत सकते।' उसके चेहरे पर कितना तिरस्कार था! मुझे तब तक पता ही नहीं था कि मैं कभी किसी स्त्री के सामने शर्मिंदा हो सकता हूँ। अचानक उसे वशिष्ठ की याद आई। उसने सोचा कि क्या ऋषि ने भी राजा कौशिका द्वारा उसकी गाय छीनने की कोशिश करने पर इसी तरह कहा था! उसने मन ही मन सोचा, "लेकिन मैंने अम्बे को तुरंत राजा शाल्व के पास वापस भेज दिया था। क्या मैं गलत था? क्या शाल्व ने उसे इसलिए ठुकरा दिया क्योंकि अगर वह उस दुल्हन को उपहार में स्वीकार

करता जिसे वह अपने शौर्य और वीरता से जीतने में असफल रहा था, तो इससे उसकी प्रतिष्ठा और मान-सम्मान को ठेस पहुँचती? हाँ, यही कारण रहा होगा। वह भी तो राजा था। क्या कोई ऐसा है जो पद पर रहते हुए अपनी शक्ति का प्रयोग अपने मान-सम्मान को बढ़ाने के लिए नहीं करता? लेकिन अम्बे ने सारा दोष मुझ पर क्यों मढ़ा जबकि शाल्व ने ही उसे ठुकराया था? ऐसा लगता है कि उसने क्षत्रिय-विरोधी परशुराम के वंश से संबंधित ऋषि भार्गव से मेरी शिकायत की थी। भार्गव ने उससे पूछा, 'बच्ची, तुम्हारे साथ यह अन्याय किसने किया? शाल्व ने या भीष्म ने?' उसने उत्तर दिया, 'शाल्व को पसंद है। लेकिन उसने मुझे ठुकरा दिया है। भीष्म, जिसने मुझे जबरदस्ती अगवा किया था, मुझसे विवाह करे। तभी मैं अपने साथ हुए अन्याय का उचित प्रतिफल मानूँगी।' शायद ऋषि भार्गव भी ऐसा ही अवसर चाहते थे! हाँ, वह मुझे टूटते हुए देखना चाहते थे।" मेरे ब्रह्मचर्य के व्रत का उल्लंघन हुआ। वह मुझसे युद्ध करने आया और उसने मुझे दो विकल्प दिए: या तो अम्बे से विवाह करूँ या उससे लड़ूँ। क्या वह उस व्यक्ति की अच्छी पत्नी होती जिससे वह इतनी घृणा करती थी? नहीं, उसका एकमात्र उद्देश्य मुझे मेरे ब्रह्मचर्य के व्रत का उल्लंघन करवाना था। क्या ब्राह्मण कभी इस भीष्म को हरा सकता है? यह सत्य है कि परशुराम ने क्षत्रियों का संहार किया था, लेकिन तब यह भीष्म जीवित नहीं थे। भीष्म ने मन ही मन पूछा, "उसने क्षत्रिय वंश के कितने लोगों को मारा? और ब्राह्मणों द्वारा उसके पक्ष में किए गए दावे में कितनी सच्चाई है और कितनी अतिशयोक्ति? जब मैंने भार्गव को पराजित किया, तो कहा जाता है कि वह अग्नि में कूद गई और स्थिति सहन न कर पाने के कारण मर गई। ऐसा लगता है कि मरने से पहले उसने घोषणा की थी कि वह केवल एक ही उद्देश्य पूरा करने के लिए पुनर्जन्म लेगी, भीष्म की मृत्यु! खैर, क्या उसने बाद में द्रुपद के घर में जन्म लिया था या यहाँ पुनर्जन्म लेने से पहले उसका कोई और जन्म हुआ था? हाँ, मैं यह सब भूल गया था, जो मैंने सुना था। अब मुझे याद आ गया है। मान लीजिए कि कल शुरू होने वाले युद्ध में उसकी भविष्यवाणी सच हो जाए!..." उसका शरीर भय से कांप उठा। "...क्या मुझे उसी स्त्री के हाथों मरना चाहिए जिसे मैंने जीता और अपने साथ ले गया? नहीं, मुझे मरने से डर नहीं लगता। लेकिन हार?..." तभी उसे अपनी पीठ में ठंड का तेज झोंका महसूस हुआ। रथ एक क्षण के लिए डगमगाया और फिर समतल सड़क पर स्थिर हो गया। फिर उन्होंने दूर से घोड़ों के खुरों की आहट को ध्यान से देखा और मन ही मन सोचने लगे, "यह पुनर्जन्म का सारा मामला, क्या

यह सच है? कभी-कभी मुझे संदेह सताने लगता है। आज सुबह तो वे दोनों ऐसी मान्यताओं के विरुद्ध बहस कर रहे थे। वे कह रहे थे कि जो कुछ भी इंद्रियों से परखा नहीं जा सकता, वह कोरी कल्पना है, कोरी भ्रम है। शायद वे दोनों सही हों। द्रुपद के पुत्र नपुंसक थे। लेकिन ऐसे बच्चे तो कई लोगों के होते हैं! शायद मेरे शत्रु, जो मुझे नष्ट करने पर तुले हुए हैं क्योंकि मैं कुरु राज्य की रीढ़ रहा हूँ, उन्होंने कथा और तथ्य को मिला दिया है ताकि नपुंसक मुझे मारने के लिए उकसाया जा सके..." भीष्म अचानक हँस पड़े। "तो शत्रु को कैसे पता चला कि यह युद्ध होगा? और उस समय किसने सोचा होगा कि मैं इस युद्ध में भाग लूँगा? मुझे भी तब पता नहीं था! अगर वह नपुंसक मुझे मारने के लिए पैदा हुआ होता, तो वह अब तक हस्तिनावती पहुँच चुका होता और मुझे मारने का कोई अवसर ढूंढ लेता। शायद यह कहानी मेरे जैसे बच्चे को जन्म देने के अपमान को छुपाने के लिए फैलाई गई हो।" "रथ अब समतल सड़क पर सुचारू रूप से चल रहा था। सड़क के दोनों ओर ऊँचे-ऊँचे पेड़ खड़े थे। आगे चल रहे घोड़े भी पहले से कम धूल उड़ा रहे थे। अच्छी तरह बनी सड़क को देखते हुए भीष्म को एक बार फिर मृत्यु का दृश्य दिखाई दिया। तब उन्होंने सोचा, "मुझे उस आश्रम में जाना ही नहीं चाहिए था।" शुक द्वारा ब्रह्मचर्य के पालन को याद करके उन्हें अपने ब्रह्मचर्य जीवन पर गर्व हुआ। अचानक उन्हें लगा कि उनके लिए जीने का सही मार्ग मृत्यु है, और इससे वे उदास हो गए। उन्होंने अपनी कल्पना में शुक की छवि बनाने की कोशिश की, जिसे उन्होंने कभी देखा नहीं था। यह दृढ़ विश्वास कि उनका विचार ही सही है, उनके अंतर्मन में घर कर रहा था, और तभी उन्होंने सोचा कि आगे चल रहे घुड़सवारों में से एक अचानक दाईं ओर मुड़कर शिकार का पीछा करने लगा। इससे सुकेश भी चौंक गए। उन्होंने कुछ देर तक रथ को तेज़ी से चलाया और फिर रोक दिया। पीछे चल रहे घुड़सवार भी रुक गए और रथ के चारों ओर जमा हो गए। दस मिनट से भी कम समय में, आगे चल रहे घुड़सवार दो आदमियों को बंदी बनाकर ले आए। उनमें से एक लगभग साठ वर्ष का था। दूसरा, जो पहले वाले का बेटा लग रहा था, लगभग तीस वर्ष का था। उसने गंदे कपड़े पहने थे। उसका चेहरा धूप से झुलसा हुआ और गहरा काला था। उनके मजबूत शरीर, सीना, कंधे और उभरी हुई मांसपेशियां यह संकेत दे रही थीं कि वे कठिन शारीरिक श्रम से अपना जीवन यापन करते होंगे। दोनों रथ के सामने भय से कांपते हुए, हाथ जोड़कर प्रणाम कर रहे थे। घुड़सवारों में से एक ने बताया, "महाराजा जी, इन लोगों के पास

दो गाड़ियाँ हैं। इन्हें दो बैल खींच रहे हैं। गाड़ियाँ चमड़े से ढकी हैं। एक गाड़ी में अनाज की तीन बोरियाँ हैं। दूसरी गाड़ी में धातु के काम में इस्तेमाल होने वाले औज़ार, धातु के टुकड़े, धातु की पन्नी और लोहारखाने में आग जलाने के लिए इस्तेमाल होने वाली चमड़े की थैली है। तभी पचास साल की एक महिला, पच्चीस साल की एक और महिला और तीन बच्चे विपरीत दिशा से आ रहे थे। जैसे ही उन्होंने हमें देखा, वे चोरों की तरह गाड़ियों के साथ जंगल में भाग गए। हमें शक हुआ कि वे लुटेरे और डाकू हैं। इसीलिए हम उन्हें यहाँ लाए हैं।"

भीष्म ने उनसे पूछा, "सच बताओ। तुम कौन हो? कहाँ से आए हो? कहाँ जा रहे हो? तुम इस तरह भागकर क्यों छिप गए?"

बूढ़े व्यक्ति ने कहा, "महाराजा जी, हम धातुकर्मी हैं। हमारा कोई ठिकाना नहीं है। हम काम और आजीविका की तलाश में एक देश से दूसरे देश भटकते रहते हैं।"

भीष्म, "तुम इस तरह क्यों छिपे थे?"

बूढ़े आदमी ने कहा, "लगता है युद्ध होने वाला है। हमें कैसे पता चलेगा? कल जब हम इस रास्ते से जा रहे थे, तो एक गाँव में कुछ सैनिकों ने हमें रोक लिया और कहा कि सभी हट्टे-कट्टे लोगों को सेना में भर्ती हो जाना चाहिए। उन्होंने मेरे बेटे का हाथ पकड़कर उसे ले जाना शुरू कर दिया। देखिए, हमें धनुष-बाण चलाने का कोई अनुभव नहीं था। हमने उन्हें यह बताया और यह भी कि हम धातु का काम करते हैं। तब उन्होंने कहा कि हम फिर भी उनके काम आ सकते हैं और तीरों के लिए धातु की नोक बनाने में उनकी मदद कर सकते हैं। हम मान गए। लेकिन जब हम सब गाँव में दाखिल हुए, तो हम सैनिकों को चकमा देने में कामयाब हो गए। जब हमने आपके आदमियों को देखा, तो वे बाकी सैनिकों जैसे ही लग रहे थे। हम डर गए और छिपने के लिए भाग गए।"

भीष्म, "तुम सैनिकों से क्यों भागे?"

बूढ़े आदमी ने कहा, "क्योंकि युद्ध में काम करने वालों को अनाज नहीं मिलता। वे राजा की शक्ति का इस्तेमाल हमारे खिलाफ करते हैं और हमें डराकर काम करवाते हैं। दूसरे, हम जैसे लोगों को युद्ध शिविर के पीछे लोहारखाना लगाने का काम सौंपा जाता है। हमें दुश्मनों के तीरों से घायल हुए तीरों की धातु की नोकों को फिर से आकार देने और तेज करने को कहा जाता है। हमसे क्षतिग्रस्त रथों की मरम्मत करने की उम्मीद की जाती है। और इसकी क्या गारंटी है कि दुश्मन पीछे

से हमला करके हमें मार नहीं डालेंगे? अगर हम शिविर में काम करने जाते हैं, तो हम अपनी पत्नियों और बच्चों को कहाँ छोड़ेंगे? अगर हम अपनी महिलाओं को शिविर में ले जाते हैं, तो सैनिक उन पर टूट पड़ेंगे और उनके शरीर का तब तक आनंद लेंगे जब तक वे लगभग मर न जाएँ। उनके आनंद के लिए एक मृत शरीर भी चलेगा। हम, जो किसी तरह अपना जीवन यापन कर रहे हैं, आपके इस युद्ध में क्यों उलझें?"

भीष्म ने उन दोनों को गौर से देखा। फिर वे रथ से उतरे और उनकी हथेलियों को देखा। कड़ी मेहनत के कारण उनकी हथेलियाँ झुर्रीदार और खुरदरी हो गई थीं। उन्होंने उनसे पूछा, "तुम्हारे रथ यहाँ से कितनी दूर हैं?"

बूढ़े आदमी ने कहा, "ठीक वहीं, उन पेड़ों के बीच में।"

भीष्म रथों की ओर चल पड़े, उनके पीछे सुकेशा और चार सैनिक घोड़ों से उतरकर चल रहे थे। भीष्म नंगे पैर थे।

नरम और कोमल घास पर चलना आसान था। जगह-जगह नुकीले पत्थर और टहनियाँ बिखरी हुई थीं। फिर भी घास उनके पैरों को इतनी आरामदायक लग रही थी कि भीष्म को चलना अच्छा लग रहा था। तभी सिपाही ने बैलगाड़ियों की ओर इशारा किया। बैल अभी भी जुए से नहीं खोले गए थे। लेकिन वे नए आने वालों से डरे नहीं थे। वे बस फुफकार रहे थे। बैलगाड़ियों में सिपाही द्वारा बताई गई सामग्री थी। लेकिन महिलाओं या बच्चों का कोई निशान नहीं था।

भीष्म ने पूछा, "स्त्रियाँ और बच्चे कहाँ हैं?"

बूढ़े आदमी ने कहा, "वे डरकर भाग गए हैं। अगर आप हमसे वादा करें कि आप उन्हें नुकसान नहीं पहुंचाएंगे, तो हम उन्हें बुला लेंगे।"

भीष्म ने पूछा, "क्या तुम मुझसे, जो तुम्हारे दादा की उम्र का हूँ, ऐसा वादा चाहते हो?"

उन्होंने विनम्रता से कहा, “आप तो राजा प्रतीत होते हैं। लेकिन ये सैनिक...” उन्होंने अपनी बात अधूरी छोड़ दी और बीच में ही रुक गए। उन्होंने आदरपूर्वक दोनों हाथ जोड़ लिए। भीष्म ने आश्वस्त करते हुए कहा, “इन्हें बुला लीजिए। किसी को कोई हानि नहीं होगी।”

बूढ़े ने तीन बार जोर से चिल्लाया, उसकी आवाज कोयल पक्षी जैसी लग रही थी। फिर उसने शब्दों में कहा, "बाहर आओ। मैं चिल्ला रहा हूँ। गाड़ियों के पास आओ।" उसने ये शब्द दो बार दोहराए। थोड़ी देर बाद, पेड़ों के झुंड से हलचल

की आवाज आई। जैसा कि सैनिक ने पहले बताया था, पचास साल की एक महिला बाहर आई। बूढ़ी औरत के कंधे पर एक साधारण धनुष था। बड़ी लड़की के पास भी एक लंबा धनुष था। युवती के पास एक बड़ा धातु का धनुष था और उसकी पीठ पर बाणों का तरकश था। भीष्म की निगाहें उस युवती पर टिक गईं। वह गर्भवती थी, पूर्ण रूप से गर्भवती। वह भारी कदमों से चल रही थी, पेट का बोझ आसानी से नहीं उठा पा रही थी। उसकी छाती के निचले हिस्से तक वह दुबली थी। उसका पेट गुब्बारे की तरह फूला हुआ था। वे आकर पुरुषों के पीछे खड़ी हो गईं।

भीष्म ने पूछा, "ये कौन हैं?"

बूढ़े व्यक्ति ने समझाया, "यह महिला मेरी पत्नी है। पीछे खड़ी वह युवती मेरी बहू है। ये बच्चे मेरे पोते-पोती हैं।"

भीष्म ने कहा, "लेकिन आपने कहा था कि आपको तीरंदाजी नहीं आती। आपकी स्त्रियाँ भी धनुष-बाण चलाती हैं।"

बूढ़े आदमी ने कहा, "सिर्फ आत्मरक्षा के लिए। और जंगल के छोटे जानवरों का शिकार करने के लिए..." उसने अपनी बात अधूरी छोड़ दी।

भीष्म ने एक बार फिर गर्भवती स्त्री को इतनी तीव्रता से देखा मानो अपनी धँसी हुई आँखों से उसे निगल जाना चाहते हों। फिर उन्होंने कहा, "ठीक है, अब आप जा सकती हैं। लेकिन यह युद्ध का समय है। मुख्य सड़कों से बचें। शायद बाहर निकलने से पहले आपको चार-पाँच दिन किसी गाँव में बिताने चाहिए। अपने अनाज को किसी सुरक्षित स्थान पर छिपाकर रखें।" फिर वे रथ में सवार हुए, तकिया ठीक किया और उस पर लेट गए। रथ की ओर लौटते समय उन्हें कोमल घास अपने पैरों को सुखद लगी। उन्होंने अपनी यात्रा फिर से शुरू की। सड़क के दोनों ओर पेड़ लगे हुए थे। रथ के किनारों से आकाश में सफेद, रुई जैसे बादल दिखाई दे रहे थे। लेकिन भीष्म उन्हें नहीं देख पा रहे थे, क्योंकि उनकी दृष्टि फूले हुए पेट वाली गर्भवती स्त्री की छवि से अवरुद्ध थी। रथ अब ज्यादा नहीं डगमगा रहा था, क्योंकि सड़क थोड़ी रेतीली थी, पहियों से हल्की सरसराहट की आवाज आ रही थी जो उन्हें सुखद लगी। स्थिर गति ने उनके आनंद को और बढ़ा दिया। उन्हें नींद आने लगी, और तकिया को और ठीक करके वे सो गए। गर्मी इतनी तेज़ थी कि कंबल ओढ़ने की ज़रूरत नहीं थी, और नींद उसे जागते हुए संसार से दूर खींच रही थी। फिर भी, उसे रथ की गति का एहसास हो रहा था। उसे हल्का सा आभास था कि वे काफी दूर का सफर तय कर चुके हैं। थोड़ी देर बाद जब एक

पहिया अटक गया, तो उसकी नींद टूट गई। अचानक उसके दिमाग के भीतर से एक विचार उठने लगा और सतह पर उभरने लगा: "विचित्रवीर्य की मृत्यु के बाद, उन्होंने मुझे शादी करने का आदेश दिया। मेरी माँ चाहती थीं कि मैं अपने सौतेले भाई की दो विधवाओं का नियोग संस्कार करूँ, और उन्होंने मुझे आश्वासन दिया था कि इससे मेरे ब्रह्मचर्य के व्रत का उल्लंघन नहीं होगा।" उसे लगा, "शायद मुझे उनकी बात मान लेनी चाहिए थी।" फिर उसने अपना सिर खुजाते हुए आँखें खोलीं। बाहर असीम आकाश फैला हुआ था, नीला, काला नहीं। उसने खुद को फटकारा कि उसने अभी तक संन्यास का विचार नहीं छोड़ा था, जो उसे अब भी आकर्षित कर रहा था।

—•⁕•—

अध्याय 55

जैसे ही द्रष्टा और वैदिक श्लोकों के संग्रहकर्ता के बीच का अंतर उनके मन में समाहित हुआ, उन्हें मृत्यु के भय से मुक्ति मिल गई। हल्का महसूस करते हुए, द्वैपायन अपनी कुटिया में कंबल ओढ़कर सो गए। एक-एक करके उन पर आ रही विपत्तियों का प्रभाव उनके मन से कम होता गया। हाँ, पुत्र की मृत्यु सहन की जा सकती है, यहाँ तक कि वाद-विवाद द्वारा वैदिक ज्ञान की नींव को चुनौती देने वाली चर्चा भी सहन की जा सकती है, उन्होंने महसूस किया, लेकिन आश्रम को लूटने के शाही आदेश का विरोध कैसे किया जा सकता है? इस विचार से वे क्रोधित हो गए। और इससे उन्हें अपने परदादा की याद भी आ गई। उन्हें याद आया कि भीष्म ने ही उन्हें यह याद दिलाया था। उनका मन किया कि वे दुर्योधन को युद्ध में पूर्ण विनाश का श्राप दें। इसी बीच, वही गुरु जो पहले आए थे, फिर से दौड़ते हुए आए

और जोर से बोले, "आदरणीय गुरु, वही प्रांतीय राज्यपाल अपने कर्मचारियों के साथ वापस आ गए हैं। इस बार वे बिना एक शब्द बोले अनाज लूट रहे हैं।"

गुरुजी उठे और बोले, "लेकिन मेरी उपस्थिति में ही भीष्म ने आदेश दिए थे, है ना?"

प्रशिक्षक ने बताया, "हमने उसे यह बात समझाने और उन्हें रोकने की कोशिश की। राज्यपाल ने हमसे कहा, 'हमने उस समय जाने का नाटक इसलिए किया क्योंकि हम बूढ़े आदमी को अपमानित नहीं करना चाहते थे। हम केवल एक ही आदेश का पालन करते हैं, सिंहासन का आदेश। और दरबार में बूढ़े और निकम्मे लोगों की बातों का कोई सम्मान नहीं होता। कल सुबह तक अनाज और अन्य सामान युद्धक्षेत्र में पहुँच जाना चाहिए।"

गुरु ने पूछा, "क्या इन्हें रोकने का कोई उपाय नहीं है?" यह प्रश्न पूछते ही उन्हें श्राप याद आ गए। फिर उन्हें अनुष्ठान कक्ष में उन दो वाद-विवाद करने वालों की भी याद आ गई। उन्होंने सोचा कि क्या श्राप देने से वास्तव में भौतिक संसार में कोई प्रभाव पड़ता है? प्रशिक्षक ने बताया था कि वे सैनिकों के एक दल के साथ आए हैं। उन्होंने स्वयं से पूछा: "मेरे परदादा, जो श्राप देने में सक्षम थे, उन्होंने गदाओं का प्रयोग क्यों किया? दूसरी बार उन्होंने सैनिकों का समूह क्यों एकत्र किया और बाणों से युद्ध क्यों किया?" ऐसे प्रश्नों ने उन्हें किसी महत्वपूर्ण हानि का गहन अहसास कराया। कल तक जो दुःख उन्होंने दबा रखा था, वह अब आँसुओं के रूप में बहने लगा। फिर भी उन्हें खुलकर रोने की इच्छा नहीं हो रही थी। जब उन्हें इस बात का गहरा अहसास हुआ कि उनके आश्रम के निवासी घुड़सवारों और बाणों से लैस सैनिकों का सामना करने में असमर्थ हैं, तो वे बैठने तक के लिए भी बहुत कमजोर महसूस करने लगे। वे कंबल से ढके गद्दे पर लेट गए। उसका दिमाग सुन्न हो गया था और उसका सिर पानी से भर गया था, जिससे उसे यह सोचने पर मजबूर होना पड़ा कि क्या उसकी मृत्यु का क्षण आ गया है।

वह लेटा रहा।

शाम को पुलाहा कुटिया में दाखिल हुआ। उसके साथ उसके चार प्रमुख शिष्य—पैला, वैश्म्पायन, जैमिनी और सुमंतु भी आए।

वहाँ दो अजनबी मौजूद थे। द्वैपायन ने उन दोनों के नाम याद करने की कोशिश की और अंत में उन्हें याद आ गए - वृषा और अनारण्य।

गुरुजी इतने कमजोर थे कि उठ भी नहीं पा रहे थे। बाकी सब उनके चारों ओर जमा हो गए। पुलहा ने कहा, "शायद आज रात हम अपना पेट भर पाएँगे। वो भी तब, जब हमने उनसे भीख माँगी थी, तो वे आज रात के लिए पर्याप्त भोजन छोड़ गए थे। हमारे पास आश्रम बंद करने और आश्रमवासियों को अपने हाल पर छोड़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। समस्या ये है: अगर वे सब चले गए, तो अगली फसल के लिए कौन खेती करेगा और बीज बोएगा? अगर हम ऐसा नहीं करेंगे, तो फसल ही नहीं होगी। इसका मतलब ये है कि हम आश्रम को फिर कभी खोल नहीं पाएँगे।"

पैला ने कहा, "ठीक है, हम यहीं रह लें, जंगली जड़ों, फलों और बेरों पर ही गुजारा करें। हममें से कुछ लोगों के पास वापस जाने के लिए घर या परिवार नहीं है। ये लोग कहाँ जाएँगे?"

सुमंतु की बात से सब सहमत थे जब उसने कहा, "उन्होंने सिर्फ आश्रम से ही भोजन सामग्री नहीं लूटी है। उन्होंने आसपास के गांवों में भी यही किया है। उन ग्रामीणों को अब जड़ें खोदकर निकालनी पड़ रही हैं। तो, अगर हम सब जड़ें और बेर इकट्ठा करने की कोशिश करें, तो कब तक चल पाएगा? क्या हमें शिकार करने के लिए जानवर मिलेंगे? वैसे भी, हमें शिकार करना नहीं आता।"

जैमिनी ने सुझाव दिया, "आइए हम वैदिक अध्ययन से प्राप्त शक्ति का प्रयोग करके दुर्योधन के दल को युद्ध में पराजित होने का श्राप दें।" तुरंत ही वृषा ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "देखिए, हम पांचाल से होकर यहाँ आए हैं। वहाँ भी गाँवों में इसी तरह की लूटपाट हो रही थी। वे पांडवों के दल के हैं, है ना? वहाँ के लोग भी इसी तरह श्राप दे रहे हैं। यदि उनका श्राप सही है, तो पांडव पराजित होंगे, और यदि आपका श्राप सही है, तो कौरव पराजित होंगे। अब, केवल एक ही पक्ष जीत सकता है या मैं गलत हूँ? बेशक, यह संभव है कि दोनों पक्षों के लोग मारे जाएँ। एक ही युद्ध में दोनों पक्ष कैसे पराजित हो सकते हैं?"

जैमिनी ने जोर देते हुए कहा, "लेकिन वैदिक ग्रंथों का अध्ययन करने के कारण हमारा अभिशाप और भी अधिक शक्ति उत्पन्न करेगा।"

अनारण्या रोते हुए बोली, "तो फिर तुमने अपने श्राप से राज्यपाल और उसके आदमियों को क्यों नहीं मार डाला? या उन सबको शारीरिक रूप से अपंग क्यों नहीं बना दिया?"

सभी लोग क्रोधित हो गए, लेकिन कोई कुछ नहीं बोला। उनके चेहरों पर घोर निराशा और दिशाहीनता झलक रही थी। झोपड़ी के अंधेरे और सन्नाटे में भी निराशा स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी।

कुछ देर बाद पुला ने दृढ़ता से कहा, "कम से कम अब हम एक काम तो कर सकते हैं। हम अपने बीच से उन लोगों को गिन लें जो बहादुर हैं और लड़ने के लिए तैयार हैं। फिर उन्हें इकट्ठा करें। हम रात के अंधेरे में आगे बढ़ें। उन्होंने युद्ध के मैदान के रास्ते में हमारा सामान छिपा रखा होगा। हम रात में उन पर धावा बोलें, उनके शिविर में आग लगा दें और उन पर हमला करके कम से कम कुछ को मार डालें। फिर हम अनाज को उन्हीं गाड़ियों में भरकर घने जंगल में छिपा दें। गायों को हम चारों दिशाओं में भगा दें और उनके साथ चले जाएं। अगर कल राजसी सेना आश्रम लौटती है तो उन्हें कुछ नहीं मिलेगा, न आदमी और न सामान। हमें इस अभियान को लुटेरों के अभियान जैसा दिखाना होगा। अब आप लोग पैला, जैमिनी, वैशम्पायन और सुमंतु से क्या कहते हैं?"

उन चारों में से किसी ने भी उत्तर नहीं दिया। वे चिंतन में लीन थे। इसी बीच गुरु ने स्वयं कहा, "इन चारों में से किसी एक की भी मृत्यु मेरे द्वारा जीवन भर संकलित और व्यवस्थित किए गए वैदिक ग्रंथों के एक भाग की हानि होगी। यदि वे मर गए, तो कोई भी ऐसा नहीं बचेगा जो इस ज्ञान को भावी पीढ़ियों तक प्रभावी ढंग से पहुंचा सके। इसलिए, उन्हें इस अभियान में शामिल न होने दें।"

दोनों अजनबी थोड़ी चालाकी और व्यंग्य से भरी हंसी हंसे। पुलहा गुरु का पूरा उत्तर नहीं सुन पाया क्योंकि उसका मन किसी और बात में मग्न था। एक मिनट बाद वह बोला, "हम एक और काम कर सकते हैं। हम कुल मिलाकर लगभग ढाई सौ हैं। चलो हम अलग-अलग दिशाओं में चले जाएं, उन गांवों में जाएं जहां राजसैनिक नहीं गए हैं। हम ग्रामीणों को अपने आने की सूचना पहले ही दे देंगे। चलो हम उनका अनाज बर्तनों और अन्य पात्रों में भरकर जंगलों में ले जाकर छिपा दें। चलो हम गड्ढों को किसी चीज से ढक दें ताकि वे दिखाई न दें। चलो हम असहाय ग्रामीणों को लड़ाकू सेना में संगठित करें और रात में राजा के डेरा डाले सैनिकों पर हमला करने के लिए उनका नेतृत्व करें। अगर हम जन प्रतिरोध खड़ा कर सकें, सैनिकों के प्रति उनके भय को बढ़ा सकें और उन्हें संगठित कर सकें, तो सैनिक वास्तव में राजआदेश का पालन किए बिना ही दिखावा करेंगे। लोग चैन की सांस ले पाएंगे!"

वैशम्पायन ने पूछा, "क्या यह आश्रमों का कर्तव्य है?"

पुलाहा ने दृढ़ स्वर में उत्तर दिया, "अन्यथा आश्रम का अस्तित्व अर्थहीन हो जाएगा।"

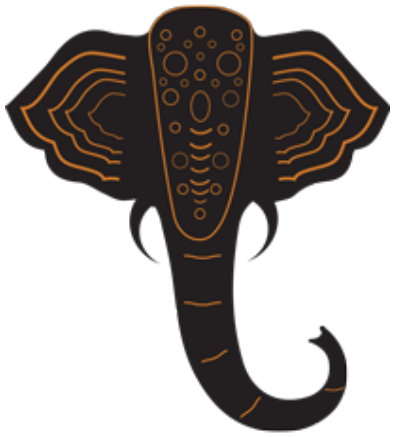
वैशम्पायन ने पुलहा को यह कहकर क्रोधित कर दिया, "अर्थ और निरर्थकता की बातें मत करो। वेदों के अध्ययन के माध्यम से गुरु से इन विषयों का जो ज्ञान मुझे प्राप्त हुआ है, वह कृषि और पशुपालन के तुम्हारे ज्ञान से कहीं अधिक है।" दोनों के बीच तीखी बहस और आरोप-प्रत्यारोप का दौर चला। पुलहा हाथ उठाकर खड़ा हो गया। वैशम्पायन भी खड़ा हो गया। सुमंतु ने दोनों के बीच हस्तक्षेप करते हुए कहा, "अब ऐसे झगड़ों में उलझना समय की बर्बादी है। आश्रम के मामलों का निर्णय हमारे गुरु को करना है। उन्हें ही हमें बताना चाहिए कि क्या करना है।"

गुरुजी आंखें बंद करके सो रहे थे। उनका दिमाग अब इतनी तेजी से काम नहीं कर पा रहा था कि वे आश्रम के भविष्य के बारे में तुरंत कोई निर्णय ले सकें। दरअसल, उनका दिमाग अन्य दिशाओं में भटक रहा था।

पुलाहा उठे और चले गए। उनके चेहरे पर आश्रम के लिए प्राण त्यागने का दृढ़ संकल्प और दृढ़ता झलक रही थी। वे दोनों अजनबी भी उनके साथ चले गए।

—•✳•—

भाग तेरह



अध्याय 56

संजय धृतराष्ट्र के महल के ठीक सामने अपने घोड़े से उतर गया। सर्दी शुरू हो चुकी थी, फिर भी उसे पसीना आ रहा था। घोड़ा भी पसीने से तर था। उसके हाथ, चेहरा, शरीर और बाल सब धूल से सने हुए थे। घोड़े को बांधने से पहले ही एक सेविका दौड़कर आई और बोली, "महाराजा और रानी ने आपके घोड़े के खुरों की आवाज सुनी और मुझे जाकर देखने को कहा कि क्या आप ही हैं। चाचा विदुर उनके साथ हैं।"

उसने नौकर से कहा, "घोड़े के लिए पानी का इंतजाम करो। और मेरे लिए भी एक मग पानी।"

वह सीढ़ियों से कूदकर राजकक्ष में दाखिल हुआ। संजय के बोलने से पहले ही धृतराष्ट्र ने शिकायत करते हुए कहा, "तुमने तीन दिन की देरी कर दी। हम तो बिना सोए ही बेसब्री से तुम्हारा इंतज़ार कर रहे हैं। जल्दी बताओ क्या हुआ।"

धृतराष्ट्र कंबल ओढ़े हुए, तकिये के सहारे लेटे हुए बड़े पलंग पर उठ बैठे। उसी पलंग पर, रानी गांधारी दूसरे तकिये के सहारे लेटी हुई थीं। उन्होंने अपनी आँखों पर बंधी पट्टी से संजय की ओर देखा, क्योंकि उन्हें उनकी उपस्थिति का आभास

ध्वनि से हो गया था। सामने वाली दीवार पर एक छोटी सी अलमारी में मोटी बाती वाला दीपक जल रहा था। विदुर नीचे लकड़ी के तख्ते पर सफेद कंबल ओढ़े बैठे थे।

संजय ने अपना विवरण देते हुए कहा, "युद्ध वास्तव में आज सुबह ही शुरू हुआ। मैंने दोपहर तक की कार्यवाही देखी और तुरंत यहाँ के लिए रवाना हो गया।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "इसमें देरी क्यों हुई? हमें पता चला है कि पूज्य भीष्म तीन दिन पहले ही कृष्ण द्वैपायन के आश्रम से लौट आए थे।"

संजय ने कहा, "हाँ, वह लौट आया था। हमारी तरफ से तो सब तैयार थे। लेकिन इस बात पर सहमति नहीं बन पाई कि पहला कदम कौन उठाएगा। दादाजी अड़े हुए थे कि पहला कदम वही उठाएँ क्योंकि वही तो हमारे खिलाफ युद्ध छेड़ने आए थे। दरअसल, अंत में यही हुआ। खैर, मुझे याद करने दीजिए। तीन दिन पहले दुश्मन पक्ष का मनोबल अचानक गिर गया। ऐसा लगता है कि उन्होंने लगभग युद्ध रद्द करने, सहयोगी सेनाओं को वापस भेजने और जंगल की ओर बढ़ने का फैसला कर लिया था। इसीलिए उन्होंने पहला कदम उठाने में देरी की।"

धृतराष्ट्र ने अपनी पत्नी से पूछा, "यदि उन्होंने ऐसा किया होता, तो युद्ध में होने वाली अनावश्यक जानमाल की हानि को टाला जा सकता था। क्या आप सहमत नहीं हैं, देवी?" फिर संजय की ओर मुड़कर उन्होंने कहा, "हमें बताइए कि उनका मनोबल पहले कैसे टूटा और फिर कैसे बहाल हुआ। कृपया हमें सारी जानकारी दीजिए।"

संजय, "मैं आसानी से अपने पक्ष से संबंधित जानकारी जुटा सकता था। युद्ध की गहमागहमी के बीच भी, महाराजा दुर्योधन जब भी मुझे देखते, मुझसे युद्ध में हमारी दैनिक सफलताओं का विस्तृत विवरण पूछते थे। मैं शत्रु शिविर में रखे गए अपने जासूसों के संपर्क में भी हूँ। मैं आपको इन और अन्य स्रोतों से प्राप्त जानकारी दूंगा। बेशक, हमारे शत्रुओं के भी हमारे शिविर में जासूस हैं। इन जासूसों के माध्यम से वे महत्वपूर्ण कारकों का आकलन कर पाते हैं, जैसे कि हमारे सहयोगी कौन हैं, उनमें से कौन सबसे उत्साही और समर्पित है, और उनकी सापेक्ष शक्ति और कमजोरी क्या है। ऐसा लगता है कि चार रात पहले, अर्जुन के मन में अचानक एक विचार आया। उन्हें एहसास हुआ कि विरोधी सेना का मुखिया उनके अपने दादा भीष्म थे, जिन्होंने उनका पालन-पोषण किया था, और जिन्हें उनके धनुर्विद्या के गुरु द्रोणाचार्य का समर्थन प्राप्त था। दुर्योधन और अन्य, बेशक, उनके अपने

भाई थे। ऐसा माना जाता है कि उनके मन में यह संदेह उत्पन्न हुआ: क्या उनसे युद्ध करना धर्म था? वे इस विचार से भी व्याकुल थे कि, भले ही एक अपने सगे-संबंधियों को मारने का सवाल ही छोड़ दें, तो युद्ध आर्यावर्त के अधिकांश क्षत्रिय पुरुषों का सफाया कर देगा। ऐसे में, हमारी क्षत्रिय स्त्रियों की पवित्रता और सतीत्व नष्ट हो जाएगा, जब दूसरे, विशेषकर निम्न जाति की स्त्रियाँ, उन्हें अगवा कर लेंगी। यह संभव था कि आर्य पुरुषों से वंचित आर्य स्त्रियों की यौन इच्छा उन्हें निम्न जाति के पुरुषों की ओर आकर्षित करे। इससे जाति और समुदाय के भ्रम के कारण धर्म का उल्लंघन होगा। अर्जुन ने कहा, "राज्य की लालसा के कारण ही यह सब होगा। वैसे भी बुढ़ापा हम पर हावी हो रहा है। चलो जंगल में चलते हैं, एक आश्रम स्थापित करते हैं और वेदों का अध्ययन करते हैं। अंततः, दुर्योधन हमारा भाई है। उसे राज्य का आनंद लेने दो।" ऐसी शंकाओं से पूरी रात व्याकुल रहने के बाद, उन्होंने सुबह युद्ध करने से इनकार कर दिया। बेचारे धर्मराज असमंजस में थे और असहाय महसूस कर रहे थे। आखिर, वे धर्म के प्रति अपनी निष्ठा के लिए प्रसिद्ध हैं, है ना?"

मंद रोशनी वाले दीपक में धृतराष्ट्र ने सिर हिलाते हुए कहा, "हां, हां।"

संजय ने कहा, "यद्यपि नकुल और सहदेव इस विचार से सहमत नहीं थे, फिर भी अपने बड़े भाई के प्रति उनकी निष्ठा और आज्ञाकारिता पूर्ण थी। भीम उस समय वहाँ उपस्थित नहीं थे। ऐसा लगता है कि वे रसोई में अपने पेट की देखभाल के लिए डेरा डाले हुए थे, क्योंकि वे जानते थे कि एक बार सुबह युद्ध के मैदान के लिए निकल जाने के बाद, दिन भर की लड़ाई समाप्त होने तक देर रात तक कुछ भी खाने को नहीं मिलता।"

धृतराष्ट्र ने पूछा, "आप चाहे जो भी कहें, अर्जुन बुरा व्यक्ति नहीं है। क्या मैं सही नहीं कह रहा, विदुर?" विदुर ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह उस खंभे की तरह स्थिर बैठे रहे जिस पर उन्होंने अपनी पीठ टिका रखी थी। धृतराष्ट्र उनकी चुप्पी का अर्थ समझ गए। उन्होंने पूछा, "इसके बाद क्या हुआ, संजय?"

संजय कहते हैं, "स्वाभाविक रूप से, शत्रु सेना के सेनापतियों में हलचल और भ्रम का माहौल था। कुछ को तो यह भी लगा कि युद्ध शुरू होने से ठीक पहले होने वाले युद्ध के उन्माद से उन्हें अस्थायी राहत मिल गई है। यह खबर आम सैनिकों तक पहुँच गई। वे खुशी से झूम उठे और फुसफुसाते हुए आपस में कहने लगे, 'युद्ध नहीं, युद्ध नहीं। अब हम अपने घरों, अपने शहरों और अपने देशों में वापस

जा सकते हैं।' वे खुशी से उछल पड़े, चिल्लाने लगे और तालियाँ बजाने लगे। भीम को इन घटनाओं की जानकारी मिली। उसने अपना भोजन और चावल बीच में ही छोड़ दिया और अपने भाई के पास दौड़कर गया और उससे पूछा, 'अर्जुन, अगर तुम डरे हुए हो, तो उपप्लव्य नगर चले जाओ और अपने बिस्तर पर आराम से सो जाओ।'" मैं युद्ध करूंगा।' अर्जुन ने उत्तर दिया, 'मैंने धर्म का प्रश्न उठाया है, और इसका भय से कोई लेना-देना नहीं है।' भीम के यह कहने पर कि 'कायरता हमेशा धर्म का वेश धारण कर लेती है' अर्जुन क्रोधित हो गया। भावनाएँ इतनी उग्र हो गईं कि दोनों भाई लगभग आपस में लड़ने ही वाले थे... धृतराष्ट्र ने हस्तक्षेप करते हुए पूछा, "क्या वे आपस में लड़ पड़े?"

संजय कहते हैं, "वे ऐसा कर सकते थे, लेकिन उसी समय धृष्टद्युम्न, द्रौपदी वहाँ आ गईं। भीम के पीछे-पीछे द्रौपदी भी आईं और उन्होंने अर्जुन को उनके कायरतापूर्ण धर्म के लिए फटकारा। कहा जाता है कि अर्जुन भी उनसे बहुत क्रोधित हो गए। उन्होंने समस्त स्त्री जाति का उपहास करते हुए कहा कि सभी विपत्तियाँ स्त्रियों के कारण होती हैं। तब कृष्ण ने हस्तक्षेप करते हुए कहा: 'अब तुममें से कोई कुछ न बोले। मैं अर्जुन को समझाऊँगा और उन्हें मना लूँगा।'"

फिर उसने अर्जुन का हाथ पकड़ा और उसे अपने तम्बू में खींच ले गया। पूरे दिन, यानी दोपहर, शाम और रात, उसने अर्जुन से बातें कीं और उसे उपदेश दिए। कल सुबह तक ऐसा लगता है कि वह अर्जुन के मन को उसकी मूल स्थिति में वापस लाने में सफल हो गया था।

विदुर ने पहली बार अपनी चुप्पी तोड़ते हुए पूछा, "कृष्ण ने किस प्रकार की सलाह और शिक्षा दी?"

धृतराष्ट्र लगभग चिल्लाते हुए बोले, "क्या वह कृष्ण नाम का व्यक्ति किसी वेश्या का बेटा नहीं है, जो छल-कपट और चालबाज़ियों से भरा हुआ है?"

संजय ने आगे कहा, "आरंभ में कृष्ण ने केवल अर्जुन को ही अपने उपदेश दिए। फिर अन्य लोग भी उन्हें सुनने लगे। विशेषकर अन्य सेनापति। यहाँ तक कि कुछ गैर-क्षत्रिय भी। उपदेश अब केवल अर्जुन को ही बताया जाने वाला रहस्य नहीं रह गया। इसका सार यह है: युद्ध का अर्थ है पुरुषों की मृत्यु और स्त्रियों का अनाथ होना। बाद में जीवित स्त्रियाँ बलपूर्वक या स्वेच्छा से अन्य जाति या नस्ल के पुरुषों के पास चली जाती हैं। ये बातें होना ही है। लेकिन आप क्यों सोचते हैं कि यह केवल क्षत्रिय स्त्रियों के साथ होने पर ही धर्म का उल्लंघन है? क्या पवित्रता और

शुद्धता केवल आर्य स्त्रियों के लिए ही चिंता का विषय है? अन्य जातियों की स्त्रियों के लिए क्यों नहीं? क्या आपकी परदादी सत्यवती आर्य थीं? क्या भीष्म की माता गंगा आर्य थीं? क्या उलूपी, जिनसे आपने विवाह किया और जिनके साथ आप एक वर्ष तक रहे, आर्य थीं? अतीत में कितने गैर-आर्यों ने हमारे वंश में प्रवेश किया है? क्या आपकी बहू उत्तरे की माता सुदेशने, आर्य होते हुए भी, सूत जाति की नहीं हैं? यदि पवित्रता होनी है, तो... यह सभी समूहों की महिलाओं के लिए होना चाहिए, हमारे और उनके दोनों समूहों के लिए। इस मामले में किसी भी प्रकार का भेदभाव करना गुस्ताखी और अहंकार के समान है। कृष्ण के इन शब्दों ने वहां मौजूद आम सैनिकों का उत्साह बढ़ा दिया और वे इतने प्रसन्न हुए कि तालियां बजाने लगे।

धृतराष्ट्र, "अरे छल करने वाले!" उस अंधे बूढ़े का चेहरा निराशा से भर गया था। पास ही बैठे विदुर धृतराष्ट्र के चेहरे को घूरने लगे। हालांकि वे अंधे थे, महाराजा को मानो यह आभास हो गया था कि विदुर उन्हें घूर रहे हैं। उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा, "देवी, आप क्या कहती हैं?" वह दुविधा में थीं, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहें या क्या करें। गांधारी को याद आया कि जब कृष्ण यहाँ थे, तब उन्होंने उनके दोनों पैर दबाकर उन्हें प्रणाम किया था।

संजय ने वृत्तांत जारी रखते हुए कहा, "कृष्ण ने अर्जुन से आगे कहा, 'भीष्म और द्रोण से युद्ध करने में तुम्हारी अनिच्छा के बारे में। तुम जानते हो कि दुर्योधन तुम्हें पांडु पुत्र होने का दावा अस्वीकार करता है। चूंकि भीष्म और द्रोण उसके पक्ष में हैं, इसलिए यह माना जाना चाहिए कि उन्होंने तुम्हारे जन्म की वैधता के प्रश्न पर दुर्योधन की स्थिति को स्वीकार कर लिया है। यदि तुम सोचते हो कि ये दोनों वृद्ध धर्म के प्रति समर्पित हैं, तो इसका अर्थ यह है कि तुम दोनों भाई नाजायज संतान हो, विवाह के बाहर जन्मे हो, तुम्हारी माता कुंती एक वेश्या है। इसका अर्थ यह है कि यदि तुम भीष्म और द्रोण से युद्ध करने और उन्हें मारने के मुद्दे पर कोई नैतिक आपत्ति उठाते हो, तो तुम स्वयं इन सब बातों को स्वीकार कर रहे होगे। क्या तुम इस दावे से सहमत होगे कि तुम एक वेश्या के पुत्र हो?' इस पर अर्जुन क्रोधित हो गया और उसने कृष्ण से पूछा कि वे क्या बकवास कर रहे हैं। कृष्ण ने उससे कहा, 'अपना आपा मत खोओ। मैं केवल तुम्हें धर्म के बारे में तुम्हारी अपनी धारणा के निहितार्थों को समझाने का प्रयास कर रहा हूँ। अच्छा, क्या तुमने यह नहीं कहा था कि धर्म एक राज्य से बड़ा है? हाँ, यह राज्य से भी बड़ा है। जो धर्म के मार्ग में बाधा डालते हैं, वे मर सकते हैं। आपके प्रयासों में आप भी मर सकते हैं। लेकिन बात

यह नहीं है। बात धर्म के प्रति समर्पण और उसके लिए संघर्ष की है। इसलिए, यदि आप अब युद्ध करने से इनकार करते हैं, तो आप धर्म का उल्लंघन करने के दोषी होंगे। इतना ही नहीं, पूरी दुनिया आपको कायर घोषित करेगी। भले ही आप पीछे हट जाएं, भीम युद्ध जारी रखेंगे। धृष्टद्युम्न युद्ध नहीं छोड़ेंगे। नकुल और सहदेव लड़ेंगे। धर्मराज स्वयं अपनी क्षमता के अनुसार लड़ेंगे। मैं भी उनके साथ हूं। युयुधन भी हैं। फिर अभिमन्यु, घटोत्कच और द्रौपदी के पांचों पुत्र हैं। यदि आपका मन करे, तो आप जा सकते हैं और धर्म के अर्थ पर ध्यान लगाकर विश्राम कर सकते हैं।' धीरे-धीरे कृष्ण अर्जुन का ध्यान युद्ध की ओर मोड़ने में सफल हो गए।

गांधारी ने कहा, "हाँ, वह शब्दों का कितना बड़ा जादूगर है।" कृष्ण की प्रशंसा में कहे गए उसके ये शब्द धृतराष्ट्र को खीझ गए। उसने असहमति से उसकी ओर देखा। उसे पता नहीं था कि सफेद पट्टी से ढकी उसकी आँखें दीवार की ओर मुड़ी हुई थीं। महल के अंदर सन्नाटा पसरा हुआ था। केवल महल के बाहर शोर था, जिससे संकेत मिल रहा था कि दिन अभी समाप्त नहीं हुआ है। रथों के पहियों की घरघराहट। सड़क पर घोड़ों के खुरों की आहट। हवा में घुलती हुई 'हाँ', 'उठाओ' और 'धक्का दो' जैसी आवाज़ें। धृतराष्ट्र इन आवाज़ों से समझ गया कि युद्धक्षेत्र में सामग्री और रसद ले जाई जा रही है। तभी गांधारी को समझ आया कि कृष्ण के शब्द छलपूर्ण और धोखे के इरादे से कहे गए थे। जब उसे एहसास हुआ कि कृष्ण उसकी और कुंती की तुलना कर रहे हैं, उनके महत्व को संतुलित कर रहे हैं, तो उसने मन ही मन अपने पति को खुद से अधिक चतुर समझा। एक क्षण के लिए, उसने युद्ध को दुर्योधन द्वारा अपनी माता की असाधारण पवित्रता और शुद्धता को विश्व के समक्ष प्रकट करने के प्रयास के रूप में समझा। इससे पहले कि वह इन विचारों को पूरा कर पाती, धृतराष्ट्र ने बोलना शुरू कर दिया।

उन्होंने कहा, "संजय, तुमने कहा था कि आज सुबह चाचा के सर्वोच्च नेतृत्व में युद्ध शुरू हुआ। तुम्हारे जाने तक युद्ध की क्या स्थिति थी? उस दौरान कुंती के पुत्र कितनी दूर तक पीछे हट गए? उनकी तरफ से कितने लोग मारे गए? हमें विस्तृत जानकारी दो।"

संजय, "ओह! मैं इसका वर्णन कैसे करूँ! हमारी सेनाएँ सागर की तरह दूर-दूर तक फैली हुई हैं! इसके सर्वोच्च सेनापति, हमारे दादा भीष्म, विशाल हिमालय पर्वत के समान हैं, जहाँ से नदियाँ निकलती हैं और अंततः सागर को उसका जल देती हैं। मैं कैसे वर्णन करूँ कि वे युद्धक्षेत्र के ठीक बीच में अपने रथ पर कैसे खड़े

थे! वे किसी पर्वत शिखर के समान खड़े थे। घोड़ों का उत्साह चाँदनी के समान सफेद था! और अन्य शक्तिशाली योद्धा, अपने सर्वोच्च सेनापति को घेरे हुए, युद्ध-उत्साह से भरे हुए थे! और भीष्म का क्या अद्भुत शौर्य था, जिसने उन सभी के शौर्य और गौरव को शिखर पर पहुँचा दिया! काशी के राजा, जिन्होंने अतीत में गंधर्वों को एक ही झटके में पराजित कर उन्हें यमलोक भेज दिया था, ने अपनी तीन पुत्रियों का स्वयंवर आयोजित किया था। तब भीष्म ने अद्वितीय शौर्य का प्रदर्शन किया, कुरु वंश का नाम और यश बुलंद किया, उसे दोपहर के सूर्य से भी ऊँचा उठाया। वे अजेय हैं, हमारे भीष्म। भीष्म, अपने रथ पर खड़े होकर..." शानदार रथ पर सवार धृतराष्ट्र ने अपने विशालकाय धनुष, जो मनुष्य के समान ऊँचा था, का परीक्षण करते हुए एक बाण चलाया। बाण के निकलते ही गर्जनापूर्ण ध्वनि ने हमारे सैनिकों के शौर्य और युद्ध-उत्साह को बढ़ा दिया और हमारे शत्रुओं के हृदयों में भय उत्पन्न कर दिया। तभी..." उसी क्षण धृतराष्ट्र गांधारी की ओर मुड़े और बोले, "देवी, क्या आप सुन रही हैं?" उनका चेहरा संजय की ओर था, जो युद्ध की घटनाओं का वर्णन कर रहे थे। उनके चेहरे पर अनेक भाव थे - आनंद, उत्साह और उदासी। परन्तु संजय अपने आप से परे किसी बात पर ध्यान नहीं दे रहे थे, वे पूरी तरह से कथावाचक के रूप में अपने अभिनय में, अपनी आवाज़ के उतार-चढ़ाव में, अपनी कथा-रचना की कुशलता और उसके प्रदर्शन में लीन थे। पास में बैठे विदुर इतने शांत और स्थिर थे मानो अनुपस्थित ही हों। शेल्फ पर रखा दीपक बिना किसी झिलमिलाहट के स्थिर जल रहा था।

संजय ने आगे कहा, "जैसे ही हमारे अजेय सेनापति ने अपना विशाल धातु का धनुष उठाया और क्रोध का पहला बाण चलाया, हमारे सैनिकों ने शंख बजाए, ढोल बजाए और सींगों से बने बिगुल बजाए। युद्ध शुरू होने से पहले, हमारी ओर से सभी ने सोमा रस का सेवन किया, जिससे उन्हें देवताओं के राजा इंद्र की शक्ति प्राप्त हुई और वे उत्साह से भर गए। क्या महाराजा दुर्योधन की उदारता और दानशीलता की कोई सीमा रही है, जहाँ तक सोमा रस, इंद्र को आमंत्रित करने वाले पेय की बात है? उन्होंने अमर सोमा रस से भरी गाड़ियाँ और घड़े बाँटे थे। मृत्यु को नकारने वाले सोमा रस से मदहोश हमारे शक्तिशाली सैनिकों के गर्जना करते सागर के बाद के कार्यों का वर्णन मैं कैसे करूँ? जब स्वयं सागर आगे बढ़ रहा हो, तो रेतीला किनारा उसका विरोध कैसे कर सकता है? सैनिकों के इस सागर के सामने शत्रु का मनोबल पहले ही टूट चुका था। शत्रु के घोड़े इतने

भयभीत हो गए कि उन्होंने अपने सवारों को गिरा दिया और कुछ घोड़ों पर चढ़ गए। दुश्मन के हाथी इधर-उधर भागने लगे और अपने ही कई सैनिकों को मार डाला। रथ आपस में टकरा गए, उनके ढांचे और पहिए अफरा-तफरी में क्षतिग्रस्त हो गए, और रथ चालक दर्द से चीखने लगे। मुझे आश्चर्य हुआ कि ऐसे कायर लोग लड़ने क्यों आए!

धृतराष्ट्र ने पूछा, "क्या उनकी तरफ से कोई महत्वपूर्ण योद्धा शहीद हुए?"

संजय ने कहा, "मुझे यह गिनने का अवसर ही नहीं मिला कि उनके कितने हज़ार सैनिक मारे गए। मुझे उनके एक प्रमुख योद्धा श्वेता की मृत्यु का पता चला, जो विराट की वरिष्ठ पत्नी का पुत्र था, और विराट, जैसा कि आप जानते हैं, पांडवों के रिश्तेदार हैं, नहीं, मुझे खेद है कि मैंने गलती से ऐसा कहा, कुंती के पुत्रों के रिश्तेदार हैं। इसके तुरंत बाद मैं यहाँ तेज़ी से आया क्योंकि मुझे पता था कि आप युद्ध की खबर जानने के लिए उत्सुक होंगे। अब तक कितने लोग मारे गए होंगे! क्या रेत के टीले उफनते समुद्र का सामना कर सकते हैं? क्या कोमल पत्ते आंधी का सामना कर सकते हैं? क्या केले के पौधे पागल हाथी के आक्रमण का सामना कर सकते हैं? न केवल इस लोक में, बल्कि स्वर्ग और नरक के अन्य दो लोकों में भी कोई इतना मूर्ख नहीं हो सकता जितना कि कुंती के ये पुत्र युद्ध में शक्तिशाली कौरवों से भिड़े!"

इस प्रकार संजय का महान युद्ध का प्रत्यक्षदर्शी वृत्तांत समाप्त हुआ। वर्णन समाप्त तो हुआ, लेकिन धृतराष्ट्र के कानों और मन में गूंजता रहा। अचानक कमरे में सन्नाटा छा गया। हमेशा की तरह मंद जलता दीपक भी शांत हो गया। महल के बाहर रथों और उनके पशुओं के चलने की आवाज़ ने महल के भीतर के सन्नाटे को और भी गहरा कर दिया। कुछ देर रुकने के बाद धृतराष्ट्र ने ताली बजाई, और जब उन्होंने दासी के आने की आवाज़ सुनी, तो उन्होंने आदेश दिया, "राजकीय अश्वपालक को कहो कि संजय को युद्ध के मैदान से शुभ समाचार लाने के लिए उपहार स्वरूप दो घोड़े दे। और संजय, मेरी यही कामना है कि तुम मुझे प्रतिदिन हमारी विजयों का ऐसा ही शुभ समाचार लाते रहो।"

संजय ने कहा, "महाराज, यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे आपसे प्रतिदिन इतने सुंदर पुरस्कार प्राप्त होते हैं। लेकिन दिन भर की खबरें एक ही दिन में आप तक पहुंचाना असंभव है। जानकारी विभिन्न स्थानों और स्रोतों से एकत्र करनी पड़ती है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि जैसे ही मुझे कोई महत्वपूर्ण खबर मिलेगी, मैं

आपके द्वारा उपहार में दिए गए घोड़ों पर सवार होकर वापस यहां आऊंगा और आपको खबर दूंगा। रानी की कृपा हम पर भी बनी रहे। मेरी पत्नी एक गरीब महिला हैं जिन्हें आभूषणों की आवश्यकता है।" धृतराष्ट्र ने रानी को उपहार देने के लिए प्रेरित किया।

गांधारी ने तुरंत अपनी बाईं कलाई से सोने का कंगन निकालकर संजय को दे दिया। इसे ग्रहण करने के बाद, संजय, जो युद्ध का वृत्तांत सुनाते हुए काफी देर से खड़े थे, बोले, "अब मैं घर जा रहा हूँ। इन तीन दिनों से मुझे नींद नहीं आई है और आज सुबह से मैंने कुछ खाया भी नहीं है।" फिर वे चले गए।

जैसे ही महल के पार उनके कदमों की आहट धीरे-धीरे गायब हुई, धृतराष्ट्र ने कहा, "विदुर, तुम्हारी चुप्पी इस खुशखबरी से तुम्हारी असहमति और तुम्हारी नाखुशी को दर्शाती है। क्या तुम्हें लगता है कि मैं इसे महसूस नहीं कर सकता? जब संजय युद्ध के मोर्चे से इतनी खुशखबरी लेकर आया है, तो तुमने अपने होंठ बंद कर लिए हैं! क्या तुम रो रहे थे?"

गांधारी ने भी व्यंग्य के इस अभ्यास में अपने पति का साथ दिया, "अब वह घर जाएगा और जब वह कुंती को युद्ध की खबर देगा तो जोर-जोर से रोएगा, मुझे पूरा यकीन है!"

धृतराष्ट्र ने आदेश दिया, "यदि तुम इस शुभ समाचार पर हमारे साथ आनंद साझा करने की इच्छा नहीं रखते, तो कल से यहाँ मत आना।"

विदुर ने कहा, "आज शाम भी मैं यहाँ इसलिए हूँ क्योंकि आपने मुझे बुलवाया था, महाराजा।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मेरे जीवन की एकमात्र गलती तुम्हारी संगति की इच्छा करना रही है।"

विदुर ने कुछ नहीं कहा। वे कुछ देर चुप रहे, और उन्हें पता था कि महाराजा उनकी चुप्पी को भी सुन रहे हैं। फिर वे उठे और बोले, "महारानी, क्या अब मुझे जाने की अनुमति मिल सकती है?" उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना, उन्होंने अपने कंधों और सिर पर कंबल ठीक किया और चले गए। जब वे बाहरी प्रांगण पहुँचे तो उन्होंने संजय को अपना इंतज़ार करते हुए पाया। बिना बुलाए ही संजय अपने घोड़े के साथ अकेले चलने लगे। बाईं ओर, सूत बस्ती में, मशाल की रोशनी में, लोग युद्ध मोर्चे के लिए रसद की ढुलाई और परिवहन की व्यवस्था कर रहे थे। नदी किनारे स्थित विदुर के घर का रास्ता किसी भी यातायात से खाली था।

विदुरा ने कहा, "चलो मेरे घर खाना खाते हैं। फिर हम बात कर सकते हैं।"

—•⁕•—

अध्याय 57

सभी लोग सो चुके थे। कुंती भी। केवल रसोइया ही अपने स्वामी की प्रतीक्षा कर रहा था, मंद रोशनी वाले दीपक के सामने धैर्यपूर्वक बैठा हुआ, कभी-कभी ऊंघता हुआ। रात में संजय ने दलिया के अलावा कुछ नहीं खाया, जो मक्के के आटे, शहद और दूध का मिश्रण था। साथ ही, दूध में पका हुआ चावल भी था, जो हमेशा की तरह था।

जब संजय गेहूं की रोटी चबा रहा था, तब विदुर ने पूछा, "युद्ध के अपने वृत्तांत में तुमने इतने झूठ क्यों बोले?"

संजय अचंभित रह गया, "मैं? झूठ बोल रहा हूँ!" उसने और कुछ नहीं कहा। उसके जबड़े, जो चबा रहे थे, रुक गए। उसे नीचे बहती नदी की सरसराहट सुनाई दी। उसने सोचा, "मेरे चाचा के घर में, यह आवाज़ हमेशा आती रहती है, दिन-रात, बहते पानी की आवाज़। रात के सन्नाटे में, यही एकमात्र सुनाई देने वाली आवाज़ थी।" फिर उसे घृणा से याद आया कि उसने मोर्चे पर तीन दिन क्या-क्या सहा था - आदमियों, घोड़ों और हाथियों का शोर और दुर्गंध, उनकी आवाजाही, झड़पें और मल-मूत्र।

विदुर, "आपने कहा कि भीष्म के धनुष से गर्जना करते हुए बाण जाने पर शत्रुओं के हृदय कांप उठे। क्या कोई यह विश्वास कर सकता है कि एक सौ बीस वर्ष का, झुर्रियों से ग्रस्त बूढ़ा व्यक्ति इतना बड़ा धातु का धनुष उठाकर तीर चला सकता है? यदि कोई युवा भी ऐसा करे, तो क्या उसकी ध्वनि युद्ध के शोरगुल से परे, आसपास के क्षेत्र से बाहर जा पाएगी, शत्रु शिविर तक पहुंचना तो दूर की बात है? खैर, जहाँ

तक आपकी समुद्र, ज्वार, आंधी और चक्रवात से तुलना की बात है, तो इस बारे में जितना कम कहा जाए उतना ही अच्छा है!"

विदुर की बात संजय के मन में धीरे-धीरे बैठ रही थी। उसके जबड़े फिर से चलने लगे। जीभ पर चबाए हुए केक को पलटने की क्रिया रोकते हुए उसने पूछा, "युद्ध का वर्णन और कैसे किया जा सकता है?"

विदुरा ने सरल और संक्षिप्त रूप से उत्तर दिया, "सच। ठीक वैसे ही जैसे हुआ था और जैसा आपने अपनी आँखों से देखा था।"

संजय फिर से चबाने लगा। उसे नदी की कलकल की आवाज़ फिर से सुनाई देने लगी। वह सोच रहा था कि यह आवाज़ सीढ़ियों से टकराते पानी की है या पानी में उठने वाले भंवरों की। उसे अपनी पत्नी की याद आई और उसे घर जाकर उसे सोने का कंगन देने की तीव्र इच्छा हुई। उसने सोचा, "शायद वह सो रही होगी या युद्ध के मैदान में मेरी सुरक्षा को लेकर चिंतित होकर बिस्तर पर करवटें बदल रही होगी।" जब सुबह युद्ध शुरू हुआ, तो वह पीछे था। उसने केवल सैनिकों की खुद को और दूसरों को जगाने की आवाज़, हाथियों की चिंघाड़ और हवा में उड़ते तीरों की सरसराहट सुनी। लेकिन उसने अपनी आँखों से कुछ नहीं देखा। उसे बस इतना याद था कि उसने उन सैनिकों का चेहरा देखा था, डरा हुआ चेहरा, जिन्होंने उसे युद्ध शुरू होने की सूचना दी थी। उसने मन ही मन सोचा, "अगर मैं लड़ाई के बीच में चला जाऊँ, तो क्या मुझे उन हज़ारों तीरों और भालों में से किसी एक से घायल होने का खतरा नहीं होगा जो चारों ओर से बरस रहे थे? मैं, जो महज़ एक दर्शक और कथावाचक हूँ, घटनाओं को दर्ज करने और बताने के बजाय क्यों मर जाऊँ? मैंने तो बस अपने आदमियों को खुशी से चिल्लाते सुना, 'श्वेता मर गई', मानो वे किसी शिकार अभियान में किसी जानवर की मौत की घोषणा कर रहे हों। लेकिन वह कौन था? वह तो विराट का सबसे बड़ा बेटा बताया जाता था। विराट कौन था? वही तो गाय को पकड़ने गया था, और अब एक बूढ़ा आदमी जिसकी बेटी की शादी अर्जुन के बेटे से हुई थी। इतनी सी जानकारी इकट्ठा करने के लिए भी मुझे चार लोगों के चक्कर लगाने पड़े।" फिर उसने चबाया हुआ पदार्थ निगल लिया और विदुर की ओर मुड़कर बोला, "चाचा जी, मैंने अपनी आँखों से दादाजी को सफेद घोड़ों द्वारा खींचे गए रथ में जाते देखा। उनके आगे धातु का धनुष और बाण रखे थे। वे तकिये पर बैठे थे, ताकि थक न जाएँ। क्या उनकी उम्र का कोई व्यक्ति स्वयं

सीधे युद्ध कर सकता है? लेकिन उनके बीच ऐसे व्यक्ति का होना युवा योद्धाओं का उत्साह बढ़ाएगा। यह तो निश्चित है।"

विदुरा ने कहा, "तुम्हें बस यही कहना चाहिए था, सीधी-सादी सच्चाई।"

संजय, "आप भली-भांति जानते हैं कि मेरे पिता, जब जीवित थे, धृतराष्ट्र के दरबार में मंत्री थे। अपनी मृत्यु से पहले, अपने झुर्रीदार हाथ को हथेली में पकड़े हुए, उन्होंने विदाई के रूप में कहा था, 'सत्ता और पद पर आसीन लोगों को हमेशा शुभ समाचार देना। आप निश्चिंत रहें कि सत्ता में, विशेषकर सिंहासन पर, ऐसा कोई व्यक्ति न कभी हुआ है और न कभी होगा जो अप्रिय समाचार सहन कर सके। राजाओं को समाचार देते समय इस बात को कभी न भूलें।' इसके अलावा, चाचा जी, हम सूत हैं। और क्या हमारे समुदाय का कर्तव्य अपने राजाओं की वीरता, बुद्धिमत्ता और वैभव का गुणगान करना नहीं है?"

विदुर को भी बहती नदी की सरसराहट सुनाई दी। उन्हें खुशी हुई कि उन्होंने अपना निवास महल के पास, शहर से स्थानांतरित कर लिया था, जहाँ उन्हें सुबह उठते ही धृतराष्ट्र की बातें सुननी पड़ती थीं, जो उनके सामने बैठे गाय की तरह सिर हिलाते थे और एक भी अप्रिय शब्द बोलने पर उनसे मार खाते थे। लेकिन अब वे नदी के किनारे थे, नदी की ओर जाने वाली सीढ़ियों और नदी से ही प्रसन्न थे। अब उन्हें नदी की सरसराहट सुने बिना किसी आवश्यक चीज की कमी महसूस होती। संजय ने फिर पूछा, "चाचा जी, क्या यह हमारा जातिगत पेशा नहीं है?"

विदुर ने कहा, "संजय, तुम्हारे पिता गवलगाना मुझसे छोटे थे। और याद रखो, रिश्तेदारी के लिहाज से मैं महाराजा धृतराष्ट्र का छोटा भाई हूँ। लगता है मैं धृतराष्ट्र से छह-सात दिन छोटा हूँ। अगर मैंने सूत जाति का पेशा अपनाया होता, तो मैं महाराजा का मंत्री होता। लेकिन महाराजा जानते थे कि मुझमें उस पारंपरिक पेशे की योग्यता नहीं है, इसलिए उन्होंने तुम्हारे पिता को उस पद पर नियुक्त किया। जैसा कि तुम जानते हो, मैंने शुरू से ही सत्य को ही कहा है, चाहे सुनने वालों को कितना भी अप्रिय क्यों न लगे, हालांकि, निश्चित रूप से, मैंने हमेशा विनम्र भाषा का प्रयोग किया है।"

संजय ने कहा, "लेकिन आप तो महाराजा के भाई हैं।"

विदुर ने कहा, "अभी मैं इस बात की चर्चा में नहीं पड़ना चाहता कि किस प्रकार का भाई? सभी सूत जाति के लोग राजवंश के भाई होते हैं। और भाईचारे का कर्तव्य केवल चापलूसी और झूठ बोलना ही नहीं होता। यद्यपि तुम्हारे पिता ने सूत

जाति के धर्म का पालन किया, फिर भी वे धनी नहीं हुए। कोई बात नहीं। तुम न तो शासक राजा हो, न मंत्री। तुम तो केवल राजा के पिता को समाचार देने वाले एक संवाददाता हो। मैं तुमसे बस इतना आग्रह करता हूँ कि तुमने जो सत्य देखा है या विश्वसनीय गवाहों से जो सत्य एकत्रित किया है, उसे ही बताओ। स्वामी के क्रोध से कभी मत डरो। और न ही किसी वस्तु के प्रति लालची बनो, जैसे कि तुम्हारी बाईं हथेली में वह सोने का कंगन।"

संजय ने कहा, "तो फिर आप सुझाव देते हैं कि मैं कोई खबर न दूं। महाराजा ने मुझे कभी आश्वासन नहीं दिया कि वे मुझे किसी भी खबर, चाहे अच्छी हो या बुरी, के लिए वेतन देंगे और न ही यह कि वे मुझे गुस्से में अचानक नौकरी से निकाल देंगे। ऐसे में मैं और क्या कर सकता हूं? जो इनाम मुझे तुरंत मिलते हैं, वही एकमात्र इनाम हैं जो मुझे मिल सकते हैं। मुझे अपने परिश्रम का कोई और प्रतिफल नहीं मिलता। क्या आप जानते हैं कि युद्ध के मोर्चे तक घोड़े की सवारी करने, वहां की दुर्गंध सहने और फिर घोड़े पर ही महल लौटने की वजह से मेरे नितंबों से खून बह रहा है?" वह अभी भी खा रहा था। और चावल को गेहूं की रोटी जितना चबाने की जरूरत नहीं थी। वैसे भी, वह और चबा नहीं सकता था। इसलिए उसने जल्दी से चावल निगल लिया।

विदुर को केवल नदी के शांत प्रवाह की आवाज़ सुनाई दे रही थी। उन्हें एहसास हुआ कि धृतराष्ट्र के साथ उनके संबंध कभी टूटे नहीं थे, भले ही वे अप्रिय बातें कहने में कभी संकोच नहीं करते थे। उन्होंने सोचा, "संबंधों में कोई वास्तविक दरार नहीं आई। ज़्यादा से ज़्यादा, वे मुझे कृतघ्न कह देते। मैं खुलकर उनके विचारों और कार्यों की आलोचना करता। फिर हम चार दिन तक एक-दूसरे से बात नहीं करते। मैं घर पर रूठकर बैठा रहता। फिर वे मुझे बुलवाते, और मैं चला जाता। हमेशा वे मुझे बुलवाते, और मैं कभी अपनी मर्ज़ी से नहीं जाता। लेकिन फिर मैं सिर्फ़ उनके बुलवाए जाने पर ही क्यों चला जाता? मैंने उनसे पूरी तरह संबंध क्यों नहीं तोड़ लिए?" उनका मन इस मामले की पड़ताल करने लगा। "हाँ, भाइयों की ये सारी बातें तो महज़ शिष्टाचार का दिखावा हैं। हालाँकि हमारे पिता एक ही हैं, मैं उनका सेवक हूँ क्योंकि मेरी माँ भी एक दासी थीं। असल में, भाई नहीं। सच तो ये है कि उन्होंने अपनी सौतेली माँ के पुत्र पांडु के लिए कभी भी सच्चे भाई जैसा स्नेह नहीं विकसित किया। लेकिन एक सेवक के रूप में मेरा काम स्वाभाविक रूप से सेवा करना था। मेरा काम उनके लिए अनेक प्रकार की सेवाएँ बन गया— उस अंधे

लड़के का हाथ पकड़ना, उसे महल के प्रांगण में घुमाना, कभी नदी किनारे ले जाना, उसे कहानियाँ सुनाना, उसके सौ प्रश्नों के उत्तर देना, उसके साथ भोजन करना, उसका शारीरिक सहारा बनना और उसके साथ और उस पर इतना समय बिताना। खैर, शायद इन्हीं सब बातों ने मुझ पर उनकी गहरी निर्भरता को जन्म दिया! शायद मैं भी उनकी संगति पर निर्भर हो गया! अगर मैं संजय की तरह केवल उनके वेतन पर निर्भर होता और मेरे पास ज़मीन, घर और मवेशी जैसे अपने संसाधन न होते, तो मुझे यकीन है कि मैं भी संजय की तरह ही दास होता, बेचारा।" तभी संजय का भोजन समाप्त हो गया, जिसका संकेत उसने थाली उठाकर उसमें से बचा हुआ दूध और चावल सीधे पीकर दिया।

विदुर ने कहा, "संजय, तुम एक काम कर सकते हो। धृतराष्ट्र शायद युद्ध में अपने पक्ष की अच्छी खबरें ही सुनना चाहते हों। लेकिन मुझे सिर्फ सच में दिलचस्पी है, सिर्फ सच में। तुम महाराजा को वही बताओ जो वो सुनना चाहते हैं, लेकिन मुझे असली तथ्य बताओ। मैं तुम्हें पूरे युद्ध की खबर देने के बदले दस सोने के सिक्के दूंगा। लेकिन याद रखना, यह सिर्फ तुम्हारे और मेरे बीच की बात है, महाराजा से इसका कोई लेना-देना नहीं है।" संजय ने बीच में ही टोकते हुए कहा, "मामा, आप हमारे समुदाय के सबसे बड़े हैं। आप इसके मुखिया हैं। क्या मैं आपको वेतन के बदले खबरें दूं? क्या मुझे भी सही तथ्य जानने में दिलचस्पी नहीं है? ज़रूर, जैसे ही मुझे सही तथ्य मिलेंगे, मैं आपको बता दूंगा। मैं महाराजा को वही बताऊंगा जो वो सुनना चाहते हैं, उनसे उतना ही लूंगा जितना वो वादा करेंगे, और शायद थोड़ा और भी..."

संजय की बात काटते हुए विदुर ने कहा, "नहीं, अतिरिक्त धन या इनाम हड़पने की बात मत करो। स्वामी दें या न दें, तुम्हें भुगतान करना मेरी खुशी होगी। तुम उन्हें भी सच बता दो। अगर उन्हें सच पसंद नहीं आया, तो वे तुम्हें अगले दिन से उनसे न मिलने का आदेश दे सकते हैं। ठीक है, अगर वे ऐसा कहते हैं, तो उन्हें अपना चेहरा मत दिखाना। बस मुझे युद्ध की खबर यथासंभव सच्चाई से बताओ। क्या तुम जानते हो कि मैं इस बात पर इतना जोर क्यों दे रहा हूँ? उन्हें यह धारणा न बनने दो कि सूत केवल शासकों की सस्ती चापलूसी करने वाले हैं। उन्हें यह पता चलने दो कि हम चाहे जो भी हो जाए, सच बोलने का साहस रखते हैं। तुम युयुत्सु के बारे में जानते हो। वह महाराजा धृतराष्ट्र का पुत्र है, हालांकि एक दासी से। उसने दुर्योधन जैसे अहंकारी व्यक्ति को भी मुंहतोड़ सच बोलने का साहस दिखाया। अब

वह पांडवों के साथ चला गया है। उसने कहा है कि वह उस पक्ष के लिए लड़ेगा जिसे वह न्यायसंगत समझता है।"

यह जानकर संजय ने आश्चर्यचकित होकर पूछा, "सचमुच?"

विदुरा ने कहा, "अच्छा, अगर तुम उसकी बहादुरी दिखा सको, तो तुम भी दूसरों की नजरों में आत्मसम्मानित और आदरणीय व्यक्ति होने की प्रतिष्ठा हासिल कर लोगे..."

खाना खत्म करने के बावजूद संजय बैठा रहा। उसकी निगाहें ज़मीन पर टिकी हुई थीं। विदुर उठ खड़ा हुआ और बोला, "बेचारा, रसोइए को सोने दो। बहुत रात हो गई है।" तब संजय भी उठ गया। दोनों बाहर गए और हाथ धोए। रसोइए ने रसोई के दरवाज़े बंद कर दिए और कुंडी लगा दी।

संजय, जो अपने घोड़े की ओर जा रहे थे, वापस आकर विदुर से बोले, "एक महत्वपूर्ण समाचार है। यह ऐसी खबर नहीं है जो मैं महाराजा को बता सकूँ। ऐसा लगता है कि दादाजी और कर्ण के बीच झगड़ा हुआ था। परिणामस्वरूप, कर्ण ने शपथ ली कि जब तक भीष्म उनका नेतृत्व करेंगे, वह युद्ध नहीं करेंगे। कहा जाता है कि वह रूठकर अपने तम्बू में लौट गए हैं।"

विदुरा ने कहा, "महाराजा से इतनी महत्वपूर्ण खबर कभी मत छुपाओ। उन्हें बता दो। झगड़ा कैसे शुरू हुआ?" विदुरा ने कंबल को अपने शरीर के चारों ओर और कसकर लपेट लिया। घर के सामने के आंगन से ठंडी हवा चल रही थी। नदी की आवाज़, जो अब दूध के उबलने जैसी लग रही थी, सीढ़ियों से नीचे से साफ सुनाई दे रही थी।

संजय कहते हैं, "ऐसा लगता है कि दुर्योधन ने भीष्म से पूछा, 'दादाजी, आप शत्रु पक्ष के प्रमुख योद्धाओं के पराक्रम और इतिहास का आकलन कैसे करते हैं? आप हमारे योद्धाओं को कैसे मापते हैं? कृपया मुझे बताएं कि हम उनसे किस हद तक श्रेष्ठ हैं।' भीष्म ने दोनों पक्षों के सभी योद्धाओं का विस्तृत आकलन किया, लेकिन कर्ण का नाम नहीं लिया। स्थिति और भी बिगड़ गई क्योंकि कर्ण वहीं मौजूद था। दुर्योधन ने अपने दादाजी को याद दिलाया कि वे उनके सबसे महान योद्धाओं में से एक, कर्ण के बारे में चर्चा करना भूल गए थे। भीष्म ने उत्तर दिया, 'मैं रथ-योद्धाओं को तीन श्रेणियों में विभाजित करता हूँ - रथी या रथ-योद्धा, अतिरथी या उत्तम रथ-योद्धा और महारथी या सर्वोच्च रथ-योद्धा, बढ़ते क्रम में। मेरे आकलन में, मुझे खेद है कि आपका यह सूत मित्र एक साधारण रथ-योद्धा या रथी की श्रेणी में भी नहीं

आता। अधिक से अधिक वह अर्धरथी या आधा रथ-योद्धा है। वह अपनी क्षमता से अधिक का बखान करता है। "स्वाभाविक रूप से महाराजा कर्ण क्रोधित हो गए। दोनों के बीच तीखी बहस हुई। महाराजा कर्ण ने दादाजी पर कुरु परिवार में घुसपैठ करने वाले कपटी सर्प होने का आरोप लगाया और कहा कि उनकी निष्ठा और प्रेम पूरी तरह से पांडवों के प्रति है, जो उनके शत्रु थे। भीष्म ने उत्तर देते हुए कहा कि कर्ण अर्जुन के समकक्ष नहीं है और उस महारथी का सारथी बनने के भी योग्य नहीं है। तब कर्ण ने घोषणा की कि ऐसे नीच सेनापति के नेतृत्व में युद्ध करना उनके पुरुषत्व का अपमान है। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि वे तब तक युद्ध नहीं करेंगे और युद्ध से दूर रहेंगे जब तक कि उस बूढ़े को उसके सर्वोच्च सेनापति पद से हटा नहीं दिया जाता। इस घोषणा के तुरंत बाद, वे अपने तम्बू की ओर चल पड़े। महाराजा दुर्योधन पूरी तरह से असहाय होकर हाथ मलने लगे और फिर स्वयं अपने मित्र को मनाने गए, लेकिन व्यर्थ। कर्ण अपने निर्णय पर अड़ा रहा और बोला, "वह बूढ़ा, जिसका सिर डगमगा रहा है, पद छोड़ दे, नहीं तो मैं कसम खाता हूँ कि मैं युद्ध में जान देकर लड़ूँगा या फिर आकर मुझसे माफी मांगेगा। यहाँ तक कि दुर्योधन भी कर्ण पर इसलिए गुस्सा था क्योंकि उसने दादाजी के लिए एकवचन का प्रयोग किया था।" लेकिन उसने खुद को संयमित किया, यह समझते हुए कि यह झगड़े और क्रोध का समय नहीं था और इसलिए भी क्योंकि कर्ण उसका घनिष्ठ मित्र था...

विदुर ने कहा, "कर्ण हमेशा से ही अहंकारी रहा है...", लेकिन आखिरी शब्द उन्होंने नहीं कहे। संजय ने इस बात पर ध्यान दिया। यह कोई रहस्य नहीं था कि सूत समुदाय में दो सबसे सम्मानित व्यक्ति स्वयं विदुर और कर्ण थे। जिस प्रकार धर्म, आचरण और न्याय के मामलों में विदुर को सर्वोच्च सम्मान प्राप्त था, उसी प्रकार युद्ध कौशल और वीरता के मामलों में कर्ण को सर्वोच्च सम्मान प्राप्त था। संपूर्ण सूत समुदाय को ऐसे दो नेताओं पर गर्व था। वे विदुर को चाचा और कर्ण को महाराजा कहकर इस बात का संकेत देते थे। यह भी सर्वविदित था कि दोनों एक-दूसरे को पसंद नहीं करते थे, लेकिन इससे दोनों के प्रति उनके समान सम्मान में कोई बाधा नहीं आई। संजय समझ गए कि उनके चाचा ने आखिरी शब्द इसलिए नहीं कहे क्योंकि वे जानते थे कि उनके जैसे युवा लोग विदुर की तुलना में कर्ण की ओर अधिक आकर्षित होते हैं। संजय ने कहा, "मैं कल विश्राम करूंगा और फिर परसों सुबह युद्ध के लिए निकलूंगा।" फिर वे घोड़े पर सवार होकर चले गए।

—•✳•—

अध्याय 58

वे सभी अपने घरों में कंबल ओढ़कर गर्माहट से सो रहे थे, खिड़कियाँ और दरवाजे बंद थे। विदुर नदी के किनारे बने चबूतरे पर सो रहा था और लगातार बहती शांत नदी की कलकल ध्वनि सुन रहा था। पिछले पंद्रह-बीस वर्षों से वह कई रातों तक जागता रहा था और उसे नींद नहीं आती थी।

कभी-कभी जब उन्हें नींद आती थी, तो वे आधी रात को अचानक उठ बैठते थे और भोर तक अनिद्रा से परेशान रहते थे। भोर होते-होते उन्हें नींद तो आती थी, लेकिन पक्षियों की चहचाहट, गायों, बछड़ों, बेटों और पोते-पोतियों के शोरगुल और हलचल के कारण वे सो नहीं पाते थे। विदुर सोचने लगे, "अब क्या समय हुआ होगा?" उनका मन तारों को देखने के लिए बाहर जाने का कर रहा था, लेकिन इतनी ठंड में उठने का ख्याल ही उन्हें हतोत्साहित कर रहा था। उन्हें धृतराष्ट्र के कठोर शब्द याद आ गए। उन्होंने कहा था, "यदि तुम मेरे साथ आनंद में शामिल नहीं होना चाहते, तो मुझसे मिलने यहाँ मत आओ।" उन्होंने मन ही मन स्थिति का जायजा लिया, "खैर, यह उतना भी चुभने वाला नहीं है। उन्होंने अतीत में अनगिनत बार मुझसे इससे भी बुरी बातें कही हैं। उन्होंने तय कर लिया है कि मैं पांडवों का समर्थक हूँ। न्याय और धर्म का कभी पक्षधर नहीं। खैर, गांधारी ने कहा कि मैं घर जाकर अपनी पत्नी को युद्ध में पांडवों की हार के बारे में रोते हुए बताऊंगा। उनके जैसी महान महिला, पति-पूजा की महान भक्त, जिन्होंने इतना बलिदान दिया है, एक साधारण स्त्री की तरह ईर्ष्या और घृणा क्यों दिखाएंगी? और कुंती को देखो, वह कितनी अलग हैं। इसीलिए मेरे उनके साथ स्वाभाविक, मैत्रीपूर्ण संबंध हैं। उनके साथ खुलकर बात की जा सकती है। जब मैं उदास होता हूँ, तो उनसे अपनी चिंताएँ बाँटने से हमेशा मेरा मन हल्का हो जाता है। यहाँ तक कि अपनी पत्नी

परसवी से भी मुझे ऐसा सहारा नहीं मिलता। फिर भी यह मानना पड़ेगा कि गांधारी एक सच्ची देवी हैं। वह एक महान पत्नी हैं। जब उन्हें पता चला कि उनके होने वाले पति अंधे हैं, तो उन्होंने तुरंत अपनी आँखों पर पट्टी बाँध ली और हस्तिनावती के पास एक ऐसी दुल्हन बनकर आईं जिसने अपना बलिदान दिया था। दृष्टि की कमी के बावजूद, वह अपने पति के साथ अंधों की इस अंधेरी दुनिया को साझा करती है। पिछले साठ वर्षों से मैं उसे एक आदर्श पत्नी के रूप में जीवन जीते हुए देख रहा हूँ। लेकिन मैं उसके साथ मित्रतापूर्ण संबंध नहीं बना सकता और न ही उसकी सहानुभूतिपूर्ण समझ प्राप्त कर सकता हूँ, जैसा कि मैं कुंती के साथ कर सकता हूँ। वह आदर्श नारीत्व की प्रतीक के रूप में पूजनीय और सम्मानित है, हाँ, लेकिन मित्रता नहीं। लेकिन यह पहली बार था जब उसने मेरे बारे में इतने सीधे और कठोर शब्दों का प्रयोग किया। यही बात मुझे चिंतित करती है..."उसे उतना ही दुख हुआ जितना कि अगर उसने अपनी जो छवि बनाई थी, उसका आधा हिस्सा ढह गया हो! एक प्रकार का अवर्णनीय अवसाद उस पर हावी हो गया। इससे उबरने के लिए संघर्ष करते हुए उसने अपने अंगों को बिस्तर पर फैलाया और खुद को कंबल से ढक लिया। कुछ देर बाद, उसे नींद आ गई।

लेकिन चैन से सो पाने से पहले ही वह जाग गया। रात एकदम शांत थी, पक्षियों की चहचाहट भी सुनाई नहीं दे रही थी। नदी की धीमी आवाज़ ने शांति के इस एहसास को और भी गहरा कर दिया। उन्होंने मन ही मन सोचा, "यह नदी कब से मेरा हिस्सा है, मेरा एक अभिन्न अंग है! यह नदी मुझे पांडवों की याद दिलाती है। जब उन्होंने लाख से बने महल में जलाकर उन्हें मारने की योजना बनाई और पांडवों को वाराणसी भेज दिया, तो मुझे धृतराष्ट्र के पास रहना घृणित लगा और मैं नदी के किनारे इस एकांत स्थान पर आकर बस गया, भीड़-भाड़ से दूर एक घर बनाया। उन शुरुआती दिनों में, रात में बाघ और भालू घर के आसपास घूमते रहते थे। अब हस्तिनावती बहुत विकसित हो गया है, और लगभग पंद्रह वर्षों से इसके नागरिकों ने जंगली जानवरों की आवाज नहीं सुनी है। तभी पांडवों को भेजा गया था। धृतराष्ट्र मन ही मन कितना क्रोधित हुआ होगा जब उसने देखा कि युवा धर्मराज, युवराज के रूप में, धर्म, नैतिकता और कानून के अनुसार शासन कर रहे हैं और जनता का प्रेम और सम्मान अर्जित कर रहे हैं। जब उनके पुत्र दुर्योधन ने कहा, 'पिताजी, अगर हम इसे ऐसे ही चलने देते रहे, तो लोग कल मांग कर सकते हैं कि उन्हें ताज पहनाकर सिंहासन पर बैठाया जाए। इससे हमारे लिए अनगिनत

समस्याएं खड़ी हो जाएंगी। तब हम, जो आपके पुत्र बनकर पैदा हुए हैं, सड़कों पर भिखारी बन जाएंगे।' उस अंधे बूढ़े ने कितनी जल्दी सहानुभूति से जवाब दिया! केवल वही लोग सांसारिक ज्ञान प्राप्त करते हैं जो कम उम्र में कठिनाइयों का सामना करते हैं, जैसे धृतराष्ट्र और दुर्योधन के मामले में। धर्मराज के साथ ठीक इसका उल्टा हुआ, जो अपेक्षाकृत कम उम्र में प्रतिष्ठित राजसूय यज्ञ सफलतापूर्वक करने के बाद अहंकारी हो गए। और कैसे उनके अहंकार और घमंड ने धर्मराज को कगार पर धकेल दिया! मुझे अब याद आ रहा है। जब मुझे उन्हें जुए के खेल में आमंत्रित करने के लिए भेजा गया, तो मैंने धर्मराज से कहा, 'धर्मराज, धृतराष्ट्र ने मुझे आपको जुए के खेल में आमंत्रित करने के लिए भेजा है। वे शकुनि को आपके सामने खेलने के लिए कहेंगे। गांधार के उन दुष्टों के पास जुए का अभ्यास करने के अलावा और कोई काम नहीं है, जब तक कि वे उसमें माहिर न हो जाएं, और यह व्यक्ति अपनी बहन की उदारता पर पलने वाला परजीवी है। आप उससे हार जाएंगे। इसलिए, कृपया मुझे वापस जाकर उनसे यह कहने की अनुमति दें कि आप जुआ एक बुराई और गैरकानूनी है, इसलिए आप निमंत्रण अस्वीकार कर रहे हैं।' अब उस अहंकार से भरे व्यक्ति ने क्या कहा? उसने उत्तर दिया, 'अगर मैं, आर्यावर्त का सबसे धनी शासक, जुए के खेल की चुनौती को अस्वीकार कर दूं, तो मेरे मान-सम्मान और प्रतिष्ठा का क्या होगा?' और फिर उसने मेरी सलाह को अनसुना करते हुए अपने विनाश की ओर कदम बढ़ा दिया। खैर, अगर उन्हें बाद में कष्ट भोगना पड़ा, तो इसके लिए वे स्वयं जिम्मेदार हैं। हर घटना उनके अपने निर्णयों का परिणाम थी। धृतराष्ट्र और दुर्योधन को उनकी मूर्खता और अहंकार के कारण हुई विपत्तियों के लिए क्यों दोषी ठहराया जाए? बेशक, इससे धृतराष्ट्र और दुर्योधन कम दुष्ट नहीं हो जाते, लेकिन इससे दोष सही जगह पर आ जाता है। तभी अचानक विदुर को लगा कि कोई नींद से जाग गया है। उसने सामने का दरवाजा खुलने की चरमराहट सुनी। उसने सोचा कि शायद कुंती होंगी, और उसका अनुमान सही निकला। उसने नदी की ओर उतरते कदमों की आवाज सुनी। वह अकेली ऐसी शख्स थीं जो दिन-रात, सर्दी-गर्मी की परवाह किए बिना बार-बार नदी पर जाया करती थीं। विदुर का मन हुआ कि वह उनके पीछे जाएं और उन्हें पिछली सुबह शुरू हुए युद्ध के बारे में बताएं। उन्हें आभास था कि वह खबर जानने के लिए उत्सुक होंगी। वह उठे, कंबल ओढ़ा, दरवाजा खोला और बाहर चले गए। अंधेरा था, लेकिन ऊपर तारे साफ टिमटिमा रहे थे। पूरब में चांदी की एक लकीर

दिखाई दे रही थी। वह नदी की सीढ़ियों से नीचे उतरे। कुंती जो अंधेरे में अकेली किनारे पर बैठी उम्मीद भरी निगाहों से पानी को देख रही थीं, अब उन्होंने अपना सिर पीछे की ओर घुमाया।

कुंती, जिसने पहले ही यह खबर सुन ली थी, ने गहरी आह भरी। विदुर इस बात से अवगत थे कि घर की तुलना में सीढ़ियों पर नदी की आवाज़ ज़्यादा तेज़ थी। कुंती बोलीं, "अर्जुन को युद्ध शुरू करने में इस तरह दो दिन की देरी नहीं करनी चाहिए थी।"

विदुर ने कहा, "कर्ण का व्यवहार मुझे सचमुच आश्चर्यचकित करता है। मैंने वर्षों पहले ही यह मान लिया था कि वह एक नीच, घृणित व्यक्ति है। लेकिन मैंने यह नहीं सोचा था कि वह युद्ध के समय अपने स्वामी के साथ विश्वासघात करने की हद तक अपना अहंकार त्याग देगा, या क्या वह डरपोक हो गया है?"

कुंती, "तुम्हारा क्या मतलब है?"

विदुर ने कहा, "शुरू से ही दुर्योधन के सभी बुरे कर्म कर्ण की सलाह से उत्पन्न हुए। कर्ण ने ही उसे आपकी बहू द्रौपदी को खुले दरबार में घसीटने की सलाह दी थी। कर्ण ने ही उसे द्रौपदी के राज वस्त्र उतारने की सलाह दी थी। दुर्योधन ने अपने कंधों की शक्ति पर भरोसा करते हुए इस युद्ध में जाने का निर्णय लिया। अब भीष्म के कहे किसी कथन को बहाना बनाकर उसने..."

कुंती ने कहा, "विदुरा, मुझे अपना स्पष्ट मत बताओ। क्या तुम मानते हो कि कर्ण आधा रथ-योद्धा है?"

विदुर कहते हैं, "संभवतः भीष्म ने उसके अहंकार को ठेस पहुँचाकर उसे उसकी औकात दिखाना चाहा होगा। परन्तु यह किसी सेवक के लिए अपने स्वामी के हित की घोर अवहेलना करने का कोई कारण नहीं है। बेशक, इससे हमारा कल्याण हो सकता है। परन्तु न्याय और निष्पक्षता की दृष्टि से यह उचित नहीं है।"

कुंती चुप रहीं। विदुर शर्मिंदा महसूस कर रहे थे। उन्हें लगा कि घर की तुलना में पानी के पास यहाँ ठंड कम है। कुंती भी सफेद कंबल में लिपटी हुई थीं। वह कंबल हल्का हरा पड़ रहा था। विदुर सोच रहे थे कि पक्षी क्यों नहीं चहचहा रहे हैं। शायद वे ठंड से बचने के लिए गर्म घोंसलों में छिपे हुए हैं। कुंती के चारों ओर कंबल का ऊपर-नीचे होना यह दर्शाता था कि वह गहरी साँस ले रही हैं।

विदुरा, "क्या आप मुझसे सहमत नहीं हैं?"

कुंती ने कहा, "विदुरा, तुम जानते हो कि हमारी मित्रता इतनी गहरी हो गई है कि हम दोनों के बीच झगड़े का कारण बहुत कम ही मिलता है। मैंने तुम्हें बचपन से ही रूठने जैसा बचकाना व्यवहार करते नहीं देखा। जब मैं हस्तिनावती में दुल्हन बनकर आई थी, तब तुम अठारह साल के थे, है ना? तो क्या मैं सीधे-सीधे कुछ कहूँ?"

विदुर को लगा जैसे वह अचानक से चौंक गया हो। उसने कुंती को इस लहजे में बात करते कभी नहीं सुना था। इससे पहले कि वह अपनी सहमति या असहमति व्यक्त कर पाता, कुंती ने आगे कहा, "आपके समुदाय में आप और कर्ण सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं। आपका समुदाय आपको धर्म का ज्ञाता मानकर आदर करता है, केवल आपका समुदाय ही नहीं, बल्कि सभी लोग। उन्हें इस बात पर गर्व है कि कर्ण एक महान योद्धा है। आपके लिए उसके मन में तिरस्कार और शत्रुता हो सकती है, लेकिन ईर्ष्या कभी नहीं। लेकिन आप उससे ईर्ष्या करते हैं। आपके साथ और आपके घर में साढ़े तेरह वर्ष बिताने के बाद, मैंने यही समझा है।"

विदुर को ऐसा लगा मानो उनके चारों ओर का अंधकार उन पर प्रहार कर रहा हो। अगर किसी और ने ऐसे शब्द कहे होते, तो उनके मन में इतना भय नहीं उठता। कुंती के आरोप का एक ही सांस में जवाब देने में वे असमर्थ महसूस कर रहे थे। कंबल के अंदर उन्हें पसीना आ रहा था। नदी को ध्यान से देख रही कुंती ने कुछ देर बाद मानो स्वयं से कहा, "मैं साढ़े तेरह वर्षों से तुम्हारे चावल खाकर जी रही हूँ। तुम्हारी उदारता ने तुम्हें दुर्योधन से दूर कर दिया, जो अपने शत्रु की माता को तुम्हारे आतिथ्य सत्कार को स्वीकार नहीं कर सकता था। यदि मैं तुम्हें दुख या पीड़ा पहुँचाऊँ, तो मुझे कृतघ्नता का पाप लगेगा। फिर भी ये शब्द अनजाने में ही मेरे मुँह से निकल आए। याद रखना, ये तुम्हारे प्रति मेरी मित्रता से उपजे हैं।"

इससे विदुर और भी उदास हो गए। कुंती के क्षमाप्रार्थी शब्दों ने उन्हें और भी पीड़ा पहुँचाई: "आप यहाँ खुले में क्यों बैठे हैं? घर जाइए और अपने गर्म बिस्तर पर सो जाइए।" कुंती उठीं और नदी के निचले किनारे पर उगी लंबी-लंबी घास के बीच से चली गईं। लेकिन विदुर वहीं बैठे रहे। उनके मन में यह प्रश्न गहरा उठ रहा था, "क्या कर्ण के प्रति मेरा रवैया ईर्ष्या का है?" उन्होंने मन ही मन सोचा, "मैंने स्वयं कहा है कि वहाँ जो युद्ध हो रहा है, उसकी उत्पत्ति ईर्ष्या की भावना से हुई है। मैंने साढ़े तेरह वर्ष पहले दुर्योधन को सलाह दी थी कि पांडवों की उन्नति और समृद्धि से उसकी ईर्ष्या अंततः एक भयंकर रक्तपात का कारण बनेगी। मैंने धृतराष्ट्र को भी

यही सुझाव दिया था। खुले दरबार में मैंने कर्ण से कहा था, 'कर्ण, अर्जुन की धनुर्विद्या में श्रेष्ठता से तुम्हारी ईर्ष्या ने तुम्हें इस प्रकार बोलने और अपने मित्र दुर्योधन को युद्ध और विनाश के मार्ग पर चलने की गलत सलाह देने के लिए विदार बनाया है।' क्या तब भीष्म ने सहमति में सिर हिलाते हुए नहीं कहा था, 'बिल्कुल सही?' क्या ऐसा व्यक्ति जो यह सब कह सकता है, ईर्ष्या का शिकार हो सकता है?" विदुर ने जलती हुई मशाल से अपने मन की गलियों और उपगलियों में ईर्ष्या का कोई भी प्रमाण ढूँढ़ा। परन्तु व्यर्थ। अब वहाँ अधिक प्रकाश था, और सुबह के पक्षी चहचहाने लगे थे। सामने जल में शीत ऋतु का कोहरा छा गया था, जो नए मौसम के आगमन का संकेत था। उन्होंने अपना बिना दाँतों वाला मुँह खोला और ज़ोर से साँस छोड़ी। जैसे-जैसे वह और ज़ोर से करने लगा, उसे सर्दियों का कोहरा और धुंध साफ़ दिखाई देने लगी। इस क्रिया से वह थक गया और उसकी छाती और मुँह में दर्द होने लगा। उसे रुकना पड़ा। इसी बीच, उसके बच्चे और पोते-पोतियाँ एक-एक करके सीढ़ियों से नीचे उतरने लगे। उसने अपना चेहरा धोया और सीढ़ियाँ चढ़ने लगा, क्योंकि उसकी साँसें तेज़ हो रही थीं।

उसका मन अंतर्मुखी हो गया और वह सोचने लगा, "हाँ, नदी के पानी के बहने की आवाज़ यहाँ नीचे की तुलना में ज़्यादा सुनाई दे रही है। मैंने इसे पहले कभी क्यों नहीं सुना?" सूरज की पीली रोशनी में वह खुले मैदान की ओर चल पड़ा। उसने सोचा, "हाँ, ईर्ष्या तभी संभव है जब कोई प्रबल महत्वाकांक्षा और आकांक्षा हो। कोई आशा हो जिसे पूरा करना हो। इसलिए अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति से ईर्ष्या होना स्वाभाविक है। लेकिन क्या यह कहा जा सकता है कि कर्ण मुझसे श्रेष्ठ है? उम्र में, धर्म के ज्ञान में, लोकप्रियता में? मुझे उससे ईर्ष्या क्यों करनी चाहिए? ठीक है, चलो कर्ण के साथ निष्पक्ष रहें और उसकी खूबियों को देखें। वह धनुर्धर है, हाँ। लेकिन यह वह क्षेत्र था जिसे मैंने स्वेच्छा से त्याग दिया था। सिवाय आत्मरक्षा के लिए आवश्यक कार्यों के। लेकिन क्या कर्ण में मेरे जैसा साहस है कि वह राज आदेश का उल्लंघन करते हुए युद्ध को धर्म का उल्लंघन बता दे और न केवल उसमें भाग न ले, बल्कि अपने बच्चों या पोते-पोतियों को भी ऐसा करने न दे? लेकिन कर्ण में भी भीष्म के अधीन युद्ध न करने का साहस था। फिर भी, यह अहंकार की अभिव्यक्ति थी, आत्ममुग्धता से उपजी हठधर्मिता थी, मेरे जैसी सैद्धांतिक क्रिया नहीं। आखिरकार, अहंकार ही सभी पापों की जड़ है। और अनैतिक कृत्यों की बात करें तो, हमारी तुलना नहीं की जा सकती।

सारा दिन विदुर अपने पलंग पर कंबल ओढ़े लेटे रहे। उन्होंने अपने शयनकक्ष की खिड़की से नीचे सीढ़ी पर बैठी कुंती को देखा। यह उनकी रोज़ की दिनचर्या थी, और यही उनकी नियमित जगह थी। युद्ध पर जाने का निर्णय पता चलने के बाद से वह अधिकतर नदी के किनारे बैठी रहती थीं। विदुर को तब लगा कि वह पानी में बहकर उनसे दूर जा रही हैं, उनसे विमुख हो रही हैं। उन्होंने न केवल कर्ण के प्रति ईर्ष्या का आरोप लगाया, बल्कि तेरह और आधे वर्षों तक उनका पालन-पोषण करने के कारण उनके प्रति अपने दायित्व की याद दिलाकर उन्हें शर्मिंदा भी किया। एक बार फिर भीतर से कुछ अनमोल खोने का अहसास उन्हें सता रहा था। विदुर ने सोचा, "जब से वह मेरे साथ रहने आई हैं, दुर्योधन मुझे तुच्छ समझकर मेरा घोर अपमान कर रहा है। कर्ण ने तो खुलेआम कहा था कि मैं चींटियों का टीला हूँ जिसमें नागों की माँ रहती है। और अब, उन्होंने कहा कि मैं उस आदमी से ईर्ष्या करता हूँ!" यह विचार उन्हें क्रोधित कर गया। उन्हें तुरंत याद आया कि उन्हें क्रोध पर विजय प्राप्त कर मानसिक समता और शांति प्राप्त कर लेनी चाहिए थी। उन्होंने अपने भीतर उमड़ते क्रोध को दबाने का प्रयास किया। उन्हें याद आया कि उन्होंने खुले दरबार में अनगिनत बार कहा था कि क्रोध असंख्य विपत्तियों की जड़ है, और भीष्म जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति भी उनकी बात से सहमत होते थे और प्रशंसा व्यक्त करते थे। कुंती दोपहर के भोजन पर परिवार के साथ शामिल हुईं। भोजन के दौरान बातचीत करना अनिवार्य नहीं था। उन्होंने उदासीनता से मुट्ठी भर चावल खा लिए। बातचीत का कोई अवसर नहीं आया। भोजन करते समय उन्हें गांधारी की कही बात याद आई कि वह कुंती को जोर-जोर से रोते हुए यह खबर सुनाएंगे। कुंती के प्रति गांधारी की ईर्ष्या स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी। उन्हें याद आया कि उन्होंने अक्सर कामना की थी कि गांधारी, जो वैसे तो एक महान महिला थीं, उनमें ईर्ष्या का दोष न होता। इससे वे और भी महान बन जातीं। कुंती के बारे में क्या? विदुर को याद आया कि जब माद्री जीवित थीं, तब वह उनसे बहुत ईर्ष्या करती थीं। यद्यपि माद्री के प्रति उसके मन में सहानुभूति थी क्योंकि वह भी एक नपुंसक पति से बंधी हुई थी, लेकिन माद्री के प्रति उसकी तीव्र ईर्ष्या केवल माद्री की अंतिम संस्कार की चिता में ही शांत हुई।

उन्होंने सोचा, "मुझे इस बात का कोई अंदाजा नहीं है, हालांकि मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता, कि बाद में शायद उनके मन में किसी बेहतर स्थिति वाले व्यक्ति के लिए ईर्ष्या की भावना रही हो। जब गांधारी का पुत्र सिंहासन पर बैठा और

उनका पुत्र, जिसने राजसूय विधि का पालन किया था, जुए में अपना राज्य हारकर वनवास चला गया, तो क्या कुंती को एक दिन के लिए भी प्रतिद्वंद्वी रिश्तेदारों के लिए थोड़ी सी भी ईर्ष्या नहीं हुई?" विदुर की याददाश्त धुंधली पड़ने लगी।

शाम को विदुर के स्वास्थ्य में थोड़ी सी गिरावट आई। उन्हें बुखार का कष्ट महसूस हुआ। उनका शरीर हल्का-हल्का कांपने लगा। रात्रि भोज के दौरान कुंती ने अकेले ही थोड़ा-सा भोजन किया, लेकिन उन्हें कोई रुचि नहीं थी। भोजन के बाद वह विदुर के पास गईं और बोलीं, "युद्ध क्षेत्र से अगली खबर कब आएगी?" उनके पूछने से दोनों के बीच तनाव कुछ कम हुआ और विदुर ने उत्तर दिया, "संजय कल सुबह मोर्चे के लिए रवाना होंगे। वे परसों लौट सकते हैं। इस बीच मैं राशन ढोने वाली गाड़ियों के चालकों से जानकारी ले लूंगी।" फिर कुंती विदुर की पुरानी बीमारी से ग्रस्त पत्नी परसावी के पास जाकर बैठ गईं। विदुर को एक तरह का अकेलापन महसूस हुआ। उस रात उन्हें अच्छी नींद नहीं आई। अगले दिन भी उन्हें बुखार रहा।

अगले दिन धृतराष्ट्र की सेविका यह संदेश लेकर आई, “महाराजा आपको बुला रहे हैं।” विदुर अपने पलंग से उठे बिना बोले, “मेरी तबीयत ठीक नहीं है। महाराजा को बता दीजिए कि मैं लेटा हुआ हूँ।” दो घंटे बाद वह लौटी और बोली, “यदि आप चल नहीं सकते, तो रथ में आइए। यदि आपका रथ तुरंत उपलब्ध न हो, तो वह महल से एक भेज देंगे।” अपना संदेश समाप्त करने के बाद वह उनके सामने खड़ी रही। विदुर ने उससे कहा, “मैं रथ में बैठने के लिए बहुत कमजोर हूँ।” फिर वह दूसरी ओर मुड़ गए, दीवार की ओर मुँह करके। उन्होंने अपने आप को कंबल से पूरी तरह ढक लिया। उन्हें क्रोध आ रहा था, लेकिन उन्होंने खुद को समझाने की कोशिश की कि उन्हें क्रोध नहीं आ रहा है। उसने मन ही मन कहा, "जब मैंने धृतराष्ट्र को अप्रिय सलाह दी, तो कितनी बार उन्होंने मुझे दासी का पुत्र कहकर पुकारा और मुझसे कहा कि मैं फिर कभी उनके घर की दहलीज पार न करूँ? और कितनी बार उन्होंने मुझे इस तरह बुलवाया? जब मैंने उनसे पूछा कि क्या उनका ऐसा कहना उचित था, तो कितनी बार उन्होंने मुझे यह सब भूल जाने को कहा और मेरी पीठ थपथपाई? बेशक, कभी-कभी वे कहते, "तुम मुझे महाराजा क्यों कहते हो? क्या मैं तुम्हारा बड़ा भाई नहीं हूँ? मुझे अपना बड़ा भाई कहो।" लेकिन किसी और दिन वे कहते, 'तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई मुझे भाई कहने की? सिर्फ इसलिए कि तुम मेरी माँ की दासी से पैदा हुए हो, क्या तुम इतना अधिकार

और रुतबा जता सकते हो? अगर मेरे पिता ने नियोग के माध्यम से किसी आदिवासी स्त्री से पुत्र को जन्म दिया होता, तो क्या वह लड़का मेरा छोटा भाई होता?' फिर, भाईचारे के संबंध फिर से स्थापित करने के प्रयास होते, और फिर ऐसे संबंध को नकारने के प्रयास! इन क्षत्रियों से मेलजोल नहीं रखना चाहिए। इनसे दूर रहना ही बेहतर है।" उसने नौकरानी के महल की ओर जाने की आवाज़ सुनी। अचानक उसे कुंती की याद आ गई। उसे एहसास हुआ कि आखिर वह भी एक शासक क्षत्रिय वंश से थी। इस अहसास ने उसकी पीड़ा को और बढ़ा दिया।

—•✳•—

अध्याय 59

विदुर के जाने के बाद, धृतराष्ट्र और गांधारी एक ही बड़े पलंग पर सोए। लेकिन उन्होंने अलग-अलग कंबल और तकिए इस्तेमाल किए, ताकि करवट बदलते समय उनकी नींद में खलल न पड़े। धृतराष्ट्र ने बड़ा तकिया इस्तेमाल किया क्योंकि उनके कंधे चौड़े थे। वे हमेशा दीवार की ओर मुंह करके सोते थे। गांधारी पलंग के दूसरे हिस्से में सोती थीं। उन्हें काले कंबल के बिना नींद नहीं आती थी, और उन्होंने नौकरानी से पूछा, "क्या तुम मुझे कंबल ओढ़ा रही हो?" उन्होंने उसे आदेश दिया, "ऊँघना मत। समय-समय पर बाती में तेल डालते रहना और ध्यान रखना कि वह बुझ न जाए।" नौकरानी ने धीरे से मन ही मन कहा, "एक अंधे को क्या फर्क पड़ता है कि दीपक जल रहा है या नहीं?" लेकिन, ज़ाहिर है, वह जानती थी कि अगर दीपक बुझ गया, तो वह उसकी गंध से ही पता लगा लेंगे। नौकरानी के कमरे से जाने के बाद, उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा, "क्या तुमने विदुर की अहमियत समझी?"

गांधारी ने पूछा, "इसमें नया क्या देखने को है?"

उस विषय पर चर्चा वहीं रुक गई। उसने सोचा कि वह उसे ताना मारते हुए कहेगी, "यह सब जानते हुए भी, तुम ही तो उसे अपनी संगति में आने देते हो!" लेकिन उसने ऐसा नहीं कहा। वह तय नहीं कर पा रहा था कि क्या वह गुस्से में बोल नहीं पा रही थी या उसका मन किसी और बात में उलझ गया था। उसका मन विदुर के बारे में सोचना छोड़कर बगल में सो रही पत्नी की ओर मुड़ गया। वह उसे समझने की कोशिश कर रहा था, अपने मन में उसकी वास्तविकता को फिर से गढ़ने की कोशिश कर रहा था। मन की अशांत अवस्था में उसे नींद नहीं आ रही थी और वह किसी से बात करने के लिए बेचैन था। लेकिन पत्नी का स्वभाव अनिश्चित होता है, वह मिजाज और मिजाज में उतार-चढ़ाव से भरी होती है। विदुर अधिक भरोसेमंद था, या यूं कहें कि उसकी मांगों को अधिक मानता था। वह अपने स्वामी की हर बात धैर्य से सुनता था, चाहे वह कुछ भी कहे। यहां तक कि जब वह उससे असहमत होता था, तब भी विदुर ऐसे तीखे शब्दों का प्रयोग नहीं करता था। लेकिन उस दिन, उसने विदुर को अलग पाया और उसे एक नए नजरिए से देखा। उसे ऐसा क्यों करना पड़ा? आखिर उस दिन विदुर ने ऐसी क्या नई बात कही थी? उनकी कही हुई ज़्यादातर बातें तो सामान्य और अपेक्षित थीं, सिवाय इसके कि उन्होंने अपने स्वामी के इशारों पर चलने और जब भी उन्हें बुलाया जाए, साथ देने की अपनी तत्परता का कड़वा ज़िक्र किया। धृतराष्ट्र ने खुद को दिलासा देते हुए पूछा, 'तो चिंता क्यों?' बाहर से उन्हें अभी भी लोगों के काम करने और बातें करने की चहल-पहल सुनाई दे रही थी। ये बैलगाड़ियों के ठीक होने और चलने की आवाज़ें थीं, सांडों का बैलों को पुकारना, पहियों की घरघराहट, सामान को इधर-उधर ले जाने की आवाज़ें, और उन्हें उठाने वाले मज़दूरों की चीखें। हाँ, उन्हें मशालों के जलने की गंध भी साफ़ सुनाई दे रही थी। एक तरह से, इन सब बातों ने उन्हें तसल्ली दी जब उन्होंने खुद से पूछा, "वे बेचारे पांडव कौरवों की तरह इतनी बड़ी मात्रा में और इतनी तरह का राशन कैसे पहुँचा सकते हैं? क्या मैंने पांडव कहा? नहीं, मुझे कहना चाहिए था, कुंती के ये पुत्र। वह बेचारा पांचाल उन्हें क्या दे सकता है? अगर वह दे भी दे, तो वे इतनी लंबी दूरी तक सामान कैसे पहुँचाएँगे?" ऐसे विचारों ने अचानक उन्हें अपने मामा भीष्म और उनकी पौराणिक वीरता की याद दिला दी। संजय द्वारा बताई गई कहानी उन्हें प्रसन्नता से याद आई और उन्हें लगा कि वे अपने पिता गवलगना से भी बेहतर वर्णन कर सकते हैं। वे संजय के शब्दों के आनंद में डूब गए। तभी अचानक, बिना ज्यादा सोचे-समझे, उनके मुँह से

कुछ शब्द निकल गए। उन्होंने गांधारी से पूछा, "क्या आपने मामा भीष्म को देखा है?"

Gandhari, "Why?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "ऐसा लगता है कि वह लंबा और बलवान शरीर वाला व्यक्ति है। इस उम्र में भी वह किसी ऊंचे पर्वत की चोटी की तरह खड़ा रहता है। क्या आपने कभी पर्वतों की चोटियाँ देखी हैं?"

गांधारी ने कहा, "क्या मैं पर्वतीय देश से नहीं आती? वास्तव में, मुझे समतल मैदानों का कोई ज्ञान नहीं है। मैं केवल पहाड़ों को जानती हूँ, जो हरे-भरे पेड़ों, लताओं, पौधों और झाड़ियों से ढके होते हैं। और, बेशक, उन सभी के ऊपर शिखर होते हैं।"

धृतराष्ट्र ने पूछा, "क्या हमारी यह कुरु भूमि पूरी तरह से समतल और सपाट है?"

गांधारी ने कहा, "ऐसा कहा जाता है। मैंने इसे देखा नहीं है।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "इसका मतलब है..." वह अपने ज्ञान को अपने मन में पिरोने की कोशिश कर रहे थे, तभी गांधारी ने बीच में दखल देते हुए कहा, "आप जानते हैं कि जैसे ही मेरे पिता ने मेरा विवाह आपसे कराने का फैसला किया, मैंने अपनी आंखों पर पट्टी बांध ली। मेरी निगाहें सिर्फ अपने वतन गांधार पर टिकी हैं।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "इसका मतलब है कि तुमने चाचा को नहीं देखा है।"

गांधारी ने कहा, "मैं कैसे याद रख सकती थी? तुम्हारे चाचा गांधारा आकर अपने भतीजे के लिए मेरा हाथ नहीं माँगे थे। तुम्हारे लोग तो केवल आभूषणों से भरी गाड़ियाँ, धातु के बर्तन, मैदानों में उगाया गया अनाज, सैनिक और उनके सेनापति ही भेजे थे। तुम्हें ये सब बातें कैसे याद रह सकती थीं?"

तब तक धृतराष्ट्र का मन भक्ति भावों से भर चुका था। गांधारी जैसी पत्नी के प्रति उनका गर्व और श्रद्धा बढ़ गई, क्योंकि उन्हें पति के लिए किए गए उनके बलिदान और पति के प्रति उनकी भक्ति का स्मरण हुआ। उन्होंने जन्म से ही अपने पति को जो त्याग नहीं मिला था, उसे त्यागने के लिए स्वयं को आँखों पर पट्टी बाँध ली थी, और फिर न केवल कुरुओं में बल्कि पूरे आर्यावर्त में देवी के रूप में पूजी जाने लगीं। उन्हें उनके प्रति कृतज्ञता का भाव था। उन्होंने अपना बायाँ हाथ उनकी ओर बढ़ाया, जो उनके बगल में लेटी थीं। जैसे ही उनकी उंगलियाँ कंबल को छूईं, उन्हें कंबल खुरदुरा लगा, लेकिन वे यह नहीं कह सके कि यह काला कंबल था या सफेद। गांधारी ने उनसे पूछा, "यह क्या है?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "हे महानुभाव, आप एक देवी हैं जो इस कुरु वंश की रक्षक बनकर आई हैं।" इतने भावपूर्ण शब्दों का भी उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। वे भी चुप हो गए। उन्हें इस बात का दुख था कि वे मात्र स्पर्श से उनका रंग नहीं जान सकते थे। उन्होंने सुना था कि उनका रंग शुद्ध लाल और गोरा है। पर्वतीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों का यही सामान्य रंग होता है। वे उनकी त्वचा की कोमलता, उनके शरीर की दृढ़ता और शक्ति को महसूस कर सकते थे, लेकिन स्पर्श से रंग का पता लगाना असंभव था। इससे उनके मन में एक विचार आया - "मान लीजिए कि नौकर ने मुझे काले कंबल के बहाने सफेद कंबल ओढ़ा दिया और धोखा दिया? गांधारी भी देख नहीं सकतीं, इसलिए मेरी शंका दूर करने वाला कोई नहीं है। मान लीजिए कि सभी दासियों ने मिलकर हमें धोखा दिया हो? खैर, यह एक गर्म कंबल है, और यह काला ही होगा। लेकिन उन्हें भी पकड़े जाने और दंडित होने का डर होगा।" इस अंतिम विचार से उन्हें कुछ सांत्वना मिली।

फिर उन्होंने कहा, "यह चाचा भीष्म ही थे जिन्होंने इस कुरु वंश को बचाया। आज भी इस उम्र में वे अपनी महान शक्ति और वीरता का प्रदर्शन करके हमें बचा रहे हैं।"

गांधारी चुप रही। उसे उम्मीद थी कि वह उसके कथन के समर्थन में कुछ कहेगी, लेकिन उसे निराशा हुई। उसने पूछा, "क्या तुम्हें ऐसा नहीं लगता?" उसने बस "हाँ" कहा। फिर वह बाईं ओर मुड़ गई, उसकी पीठ उसकी ओर थी। उसने कंबल के सरकने की आवाज़ और उसकी साँसों की आवाज़ से यह महसूस किया कि अब वह अलग दूरी से सुनाई दे रही थी। उसने समझा कि वह सोना चाहती है, और चुपचाप लेट गया। उसे कुछ दुख हुआ कि जिस दिन युद्ध शुरू हुआ था, उस दिन वह इतनी जल्दी सो गई। उसने भी सोने की कोशिश की, पीठ के बल लेटकर कंबल ओढ़ लिया। यह उसकी आदत थी, चाहे वह कितना भी करवट बदले, सोते समय वह इसी स्थिति में लौट आता था। उसे संजय के शब्द याद आए और वह प्रसन्न हुआ। लेकिन अचानक उसे पांडव सेना याद आ गई। कहा जाता था कि उनके समर्थक संख्या में कम होते हुए भी युद्ध कौशल में बलिष्ठ थे। धृष्टद्युम्न एक अनुभवी योद्धा और सक्षम नेता माना जाता था। कृष्ण तो निश्चित रूप से एक कुशल रणनीतिकार थे। सत्यकी एक योद्धा था। ऐसा लगता था कि भीम का पुत्र भी पांडवों के पक्ष में शामिल हो गया था। और भीम स्वयं इतने बलवान थे कि वे रथ को टुकड़े-टुकड़े कर उसके टुकड़े शत्रुओं पर फेंक सकते थे। शारीरिक शक्ति और

उग्र स्वभाव में वे लगभग राक्षस के समान थे। अर्जुन की धनुर्विद्या, नकुल और सहदेव का कौशल और पराक्रम, और द्रौपदी के पाँचों पुत्र। वृद्ध व्यक्ति को यह संदेह सता रहा था कि संजय के कहे अनुसार उनके लिए सब कुछ इतना आसान नहीं होने वाला! ऐसे संदेहों ने उन्हें व्याकुल कर दिया। फिर उन्होंने स्वयं से पूछा, "जब मैं अस्सी वर्ष की आयु में भी शारीरिक रूप से कमजोर और जल्दी थक जाता हूँ, तो क्या मेरे चाचा भीष्म, जो एक सौ बीस वर्ष के हैं, यानी मेरे दादाजी की आयु के हैं, युद्ध लड़ने में सक्षम माने जा सकते हैं, नेतृत्व करने की तो बात ही छोड़िए? क्या संजय ने मुझे खुश करने के लिए झूठ बोला?" उसी समय, उनके मन का एक अन्य भाग संजय पर विश्वास करना और उनकी बातों को सत्य मानना चाहता था। उन्होंने सोचा, "मैं एक गृहस्थ हूँ, मेरी पत्नी स्वस्थ और बलवान है, और मेरे पास नौकरानियों की पूरी टोली है। लेकिन भीष्म जैसे आजीवन ब्रह्मचारी वृद्धावस्था के कष्टों को कैसे सहन कर सकते हैं?" इस विचार से उसे सुकून मिला। वह भीष्म की महानता का बखान करने लगा और उन्हें सबसे ऊँची पर्वत चोटी के समान ऊँचा बताने लगा। तभी धीरे-धीरे नींद ने उसे अपनी गिरफ्त में ले लिया।

क्या वह सिर्फ़ हल्की नींद थी या सचमुच गहरी नींद? वह ठीक से कह नहीं सकता था। गांधारी के ज़ोर से खर्राटे सुनकर वह अचानक पूरी तरह जाग गया। उसने उसे छूने के लिए अपना बायाँ हाथ बढ़ाया और पाया कि वह पीठ के बल लेटी हुई है। उसने अंदाज़ा लगाया कि शायद इसीलिए वह खर्राटे ले रही थी। फिर उसने उसे हल्के से हिलाया और करवट लेकर सोने की सलाह दी। वह गहरी नींद में ही एक तरफ़ मुड़ गई। उसके दाँत रहित मुँह से साँसें उसी लय में चल रही थीं। उसे उस पर गुस्सा आया। उसे अपना अनुभव याद आया कि जब नींद टूटती है तो उसे वापस पाना मुश्किल होता है और इससे उसका गुस्सा और बढ़ गया। उसका मन हुआ कि उसे जगाकर उसकी नींद खराब करने के लिए उसे पीट दे। लेकिन उसने खुद को रोक लिया, यह सोचकर कि वह पलटकर कह सकती है, "तुम सिर्फ़ मेरे खर्राटों की वजह से परेशान हो रहे हो। तुम्हारे खर्राटों का क्या? आख़िर मैं तो तुम्हारे जितने खर्राटे नहीं लेती!" उसकी समस्या बनी रही, जागते रहने और अकेले होने की समस्या, जहाँ बात करने के लिए कोई नहीं था।

कुछ देर बाद धृतराष्ट्र को पेशाब करने की तीव्र इच्छा हुई। उन्हें पता था कि यह नींद न आने की चिंता का ही एक हिस्सा है। उन्होंने दासी को आवाज़ दी। दासी आ गई। उन्होंने गांधारी की साँसें तेज़ होते हुए सुनीं। दासी के साथ चलते हुए उन्होंने

पाया कि ज़मीन बहुत ठंडी है। उन्होंने सोचा कि शायद दीपक जल रहा होगा, लेकिन उन्हें इस बात का पक्का यकीन नहीं था। लेकिन जिस आसानी से वह उन्हें अपने साथ ले जा सकीं, उससे यह संकेत मिलता था कि दीपक जल रहा होगा और प्रकाश दे रहा होगा। बाहर जाकर, उन्होंने उन्हें एक समतल पत्थर की पटिया पर बैठने के लिए कहा, जहाँ वे शौच कर सकें। शौच के बाद, वे खड़े हो गए। वह पानी से भरा एक पात्र लेकर आई। उसने उनके पैरों पर पानी डाला और फिर उन्हें पोंछकर सुखा दिया। वापस आते हुए उन्होंने पूछा, "तुम वहाँ, तुम्हारा नाम क्या है?" उसने कोई उत्तर नहीं दिया। उन्होंने कहा, "तुम वहाँ, दासी, मैं तुमसे पूछ रहा हूँ।"

उसने कहा, "चारू।"

उसने कहा, "यह अच्छा नाम है। तुम्हारी उम्र कितनी है?"

वह फिर चुप हो गई। उसने सवाल दोहराया। उसने जवाब दिया, "पैंसठ।"

उन्होंने कहा, “क्या सच में? जब कोई तुम्हारी हथेली को छूता है और उसकी कोमलता को महसूस करता है, तो ऐसा लगता है जैसे तुम लगभग सोलह साल की हो।” वे एक पल के लिए वहीं खड़े रहे। वह भी वहीं खड़ी रही। फिर उन्होंने कहा, “क्या किया जाए? बुढ़ापा मुझ पर पूरी तरह हावी हो गया है।” अब भी वह चुप रही। उनके हाथ पर उसकी पकड़ वैसी ही थी। फिर उन्होंने आगे कहा, “तुमने कहा था तुम्हारा नाम चारू है? क्या मैं अकेला ऐसा व्यक्ति हूँ जो 81 साल की उम्र में बुढ़ापे से पूरी तरह घिर गया हूँ या हर पुरुष के साथ ऐसा ही होता है?”

फिर भी चारू चुप रही। उन्होंने प्रश्न दोहराया और कहा, "कृपया उत्तर दीजिए।" तब उसने उत्तर दिया, "मुझे कैसे पता चलेगा, महाराजा? आपको यह बात अपने जैसे वृद्ध व्यक्ति से ही पता करनी चाहिए। आपको इस ठंड में ऐसे खड़े नहीं रहना चाहिए। कृपया अपने बिस्तर की गर्माहट में वापस जाइए और सो जाइए।" फिर वह तेज़ी से चलने लगी, मानो अपने स्वामी को धक्का दे रही हो।

जब वह बिस्तर पर लौटा, तो गांधारी फिर से खर्राटे ले रही थी। उसे बिस्तर पर लिटाने और कंबल ओढ़ाने के बाद चारू चली गई। उसने उसके कदमों की आहट सुनी। अब उसे उसके पैरों में बंधी पायल की झंकार भी सुनाई दी, जो उसने पहले नहीं सुनी थी। कंबल के अंदर उसे गर्माहट महसूस हो रही थी। अब उसे यकीन हो गया था कि यह काला कंबल ही होगा। महल के चारों ओर गहरी शांति छाई हुई थी। क्या उन्होंने सारा सामान पहुँचा दिया था या वे बस काम खत्म करके सो गए

थे? उसने एक बार फिर खुद से तसल्ली देने वाला सवाल पूछा, "कुंती के पुत्र युद्ध के लिए इतना सारा सामान कैसे जुटा लेते हैं?" फिर उसने खुद को पूरी तरह कंबल से ढक लिया। उसने बस थोड़ी सी जगह छोड़ी ताकि बाहर की हवा अंदर आ सके। अंदर सब कुछ गर्म था। उसने सोचा, "उसने क्या कहा था? हाँ, कि मुझे अपने हमउम्र किसी पुरुष से इसका उत्तर पता करना चाहिए। मैं किससे पूछूँ? मुझे एक भी उपयुक्त नाम नहीं मिल रहा। चाचा भीष्म ब्रह्मचारी हैं। वे ऐसी बातें कैसे समझ सकते हैं? इसके अलावा, मैं उनसे इतनी संवेदनशील, निजी बातें नहीं कर सकता। द्रोण बूढ़े हैं, लेकिन वे इतने घनिष्ठ मित्र नहीं हैं कि ऐसी बातों में उनका विश्वास लिया जा सके। और उस बेचारे बूढ़े ब्राह्मण कृपा की बात करें, तो वे इतने दीन और चापलूस हैं कि वे मुझसे केवल दहलीज के दूसरी ओर से ही बात करते हैं! इसमें कोई संदेह नहीं है कि एकमात्र व्यक्ति जिससे मैं ऐसी बातों पर खुलकर बात कर सकता हूँ, वह विदुर हैं। लेकिन उनसे भी ऐसी बातों पर चर्चा संभव नहीं है। मुझे याद है कि उन्होंने मुझे धर्म पर एक व्याख्या दी थी, जिसमें कहा था कि गृहस्थों को भी ब्रह्मचारियों की तरह रहना चाहिए, और यहाँ तक कि पत्नी के साथ संभोग करने पर भी व्यक्ति ब्रह्मचारी बना रह सकता है। और इस विषय पर मुझसे चर्चा करने के लिए और कौन है? शायद मुझे सारथी या उसके पिता या किसी बूढ़े व्यक्ति को इस पर चर्चा करने के लिए बुलाना चाहिए।" एक महाराजा होने के नाते, मेरे लिए नौकरों के साथ, बिल्कुल अकेले ऐसा करना ठीक नहीं होगा..." उन्हें आश्चर्य हुआ कि उनका कोई ऐसा घनिष्ठ मित्र नहीं था जिससे वे नाजुक, निजी मामलों पर चर्चा कर सकें। इससे उन्हें दुख भी हुआ। गांधारी खर्राटे लेते रहे। अब उन्हें एहसास हुआ: "केवल पत्नी होना ही काफी नहीं है। एक मित्र होना चाहिए, एक घनिष्ठ मित्र, एक विश्वासपात्र, जिससे अपने गहरे राज़ और दुख बाँट सकें। एक ऐसा मित्र जो आपकी बात सुने, आपके दृष्टिकोण को समझे और आपके हित में सलाह दे।" एक बार फिर उन्हें आश्चर्य हुआ कि उनका ऐसा कोई मित्र नहीं था। फिर वे अपने गर्म कंबल में वापस चले गए। उसकी गर्माहट में वे बिल्कुल अकेले थे। उन्हें इस बात पर भी आश्चर्य हुआ कि ऐसे विचार अब तक उनके मन में कभी नहीं आए थे। न ही ऐसी भावनाएँ। काफी देर तक उन्हें नींद नहीं आई।

जब वह सुबह उठे, तो उन्होंने अनुमान लगाया कि हलचल भरे, जागते शहर के ऊपर सूरज को निकले लगभग दो घंटे हो चुके थे। दासी ने उनके अनुमान की पुष्टि की। वह उसकी आवाज़ से समझ गए कि वह सुस्मेता थी। उन्हें पता चला कि चारू

रात्रि सेवा के बाद विश्राम करने घर गई थी। सुस्मेता ने उनका चेहरा धोने, स्नान करने और साफ कपड़े पहनने में मदद की। फिर वह उन्हें पलंग पर ले गई और बिठा दिया। उन्होंने तुरंत महसूस किया कि गांधारी उनके बगल में बैठी हैं। सुस्मेता उन्हें अकेला छोड़कर चली गईं। कमरे में सन्नाटा पसरा हुआ था। महल का वातावरण भी शांत था। केवल सन्नाटा ही नहीं, बल्कि एक खालीपन, शून्यता का आभास था। थोड़ी देर बाद सुस्मेता लौटीं। उन्होंने महाराजा से कहा, "पुजारी ने अग्नि पूजा शुरू कर दी है। क्या हम चलें?" धृतराष्ट्र और गांधारी दोनों उठ गए। दासी ने उनका हाथ पकड़कर उन्हें पूजा के चूल्हे तक ले गई। चूल्हा आंगन के एक कमरे में था। जब उन्होंने आग में अनाज डाला और पुजारी द्वारा दिया गया अनुष्ठानिक जल अर्पित किया, तो नौकर उन्हें वापस उनके कमरे में ले गया। जब वे सोफे पर बैठे, तो उसने अपनी पत्नी से पूछा, "बाकी महल बिल्कुल शांत हैं। ऐसा लग रहा था कि अनुष्ठान कक्ष में हम दोनों ही मौजूद थे।"

गांधारी ने कहा, "बहू और नाती-पोतों की पत्नियां कल युद्ध शिविर के लिए रवाना हो गईं।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "वे मोर्चे पर क्यों जाएं? क्या जाने के लिए कोई दासी नहीं हैं?"

गांधारी ने पूछा, "क्या वे भी मेरी तरह आंखों पर पट्टी बांधकर अपने आदमियों को दासियों के हवाले करने को तैयार हैं?"

उन्हें उसके शब्दों का सटीक अर्थ समझ नहीं आया। लेकिन उन्होंने उसकी आवाज़ में नाराज़गी महसूस की। उन्हें और स्पष्टीकरण मांगने की ज़रूरत नहीं लगी। इसी बीच, सुस्मिते शाही जोड़े को सुबह के नाश्ते के लिए ले जाने आ गईं।

धृतराष्ट्र दिनभर अपने मन में गहरे खालीपन की अनुभूति से व्याकुल रहे। शाम होते-होते उन्हें महल के दूसरे प्रांगण में चक्कर लगाने का मन हुआ। उन्होंने एक नौकर को पुकारा। कोई उपस्थित नहीं था। तब उन्होंने दो बार पुकारा और ताली बजाई। तब उन्हें लगा कि जो नौकरानी आई है, वह चारू है। उन्होंने उससे पूछा, "तुम कहाँ गई थीं?" उसने उत्तर दिया, "मैं रानी के साथ थी।" धृतराष्ट्र ने पूछा, "रानी कहाँ हैं?" उसने उत्तर दिया, "वह सुबह की धूप में एक दासी से बातें कर रही हैं।"

Dhritarashtra, "On what topic?"

चारू कहती हैं, "यह उसके बचपन की कहानी है। गांधार की भूमि पहाड़ियों और पर्वतों से भरी है। ये हरे-भरे वनस्पतियों से ढके ऊंचे इलाके हैं। ठंडी। फिर

उसने कहा कि यह भूमि साल में सात से आठ महीने तक गर्म रहती है। इस गर्म भूमि में अपनी पहुंच से बाहर, अपने देश की ठंडक की याद से व्याकुल होकर वह फूट-फूट कर रोने लगी।"

यह सुनकर वह मन ही मन बेचैन हो गया। हस्तिनावती में दुल्हन बनकर आने के बाद गांधारी ने कभी अपने जन्मस्थान की यात्रा नहीं की थी। उसने स्वयं अपने जन्मस्थान जाने का विचार यह कहकर टाल दिया था, "अगर मैं वहाँ जाऊँगी, तो इन अंधी आँखों से किसे देखूँगी? वैसे भी, मेरे भाई तो यहाँ मुझसे मिलने आते हैं।"

उसने चारू से कहा, "चारू, कृपया मुझे थोड़ी देर धूप में घुमाओ। लेकिन वहां नहीं जहां रानी बैठी हैं।"

सुबह की हल्की धूप सुहावनी और आरामदायक लग रही थी। पूरा शहर शांत था, न कोई हलचल सुनाई दे रही थी और न ही दिखाई दे रही थी। मोर्चे पर सामान और रसद पहुँचाने का काम पूरा हो चुका होगा। सभी महल खाली थे, उनके निवासी मोर्चे पर गए हुए थे। पुरुष लड़ने गए थे और स्त्रियाँ अपने पतियों का साथ देने गई थीं। धृतराष्ट्र ने मन ही मन सोचा कि वह उनसे न जाने के लिए कहेंगे। शायद वे युद्ध के मनोरंजन का आनंद लेने गई हों। अपने पतियों को वीरतापूर्वक शत्रुओं का नाश करते देखने का आनंद लेने गई हों। "युद्ध कैसा दिखता है?" धृतराष्ट्र सोचने लगे। फिर उन्होंने सेवक से पूछा, "चारू, क्या तुमने कभी कोई युद्ध देखा है?"

चारू ने कहा, "नहीं। मैं तो बस अपने पति की देखभाल करती हूँ जो युद्ध में गए हैं।"

Dhritarashtra, "How old is he?"

चारू, "बीस..." फिर उसने अपनी जीभ काट ली और उसे महसूस किया।

धृतराष्ट्र ने कहा, "सच बताओ।" वह चुप रही। जब उन्होंने उससे जवाब देने के लिए दबाव डाला, तो उसने कहा, "छब्बीस।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "तो तुम्हारी असली उम्र क्या है? तुमने रात में मुझसे झूठ बोला था जब तुमने कहा था कि तुम्हारी उम्र पैंसठ है।"

वह फिर चुप हो गई। उसने बस उसका हाथ पकड़कर उसे थोड़ा घुमाया। फिर उसने अपनी मर्जी से कहा, "आपके बच्चे और पोते-पोतियां अभी छोटे हैं। मेरे पति ने मुझे उनके महलों में सेवा करने से मना किया है। लेकिन आप बूढ़े हैं। इसके अलावा आप अंधे भी हैं। उन्होंने कहा कि उन्हें आपके महल में मेरे काम करने पर

कोई आपत्ति नहीं है। मुझे यहां काम करते हुए अभी सिर्फ एक महीना हुआ है। कल जब आपने मुझसे मेरी उम्र पूछी, तो मुझे झूठ बोलना पड़ा क्योंकि मुझे आपकी आवाज़ में छिपी उत्सुकता का एहसास हो गया था। इसलिए मैंने कहा कि मैं पैंसठ साल की हूँ।"

हालांकि उसने तटस्थ, भावहीन और शांत स्वर में बात की, धृतराष्ट्र को अपनी पौरुषशक्ति खोने का अहसास हुआ और ऐसा लगा जैसे वह वहीं गिर पड़े। लेकिन वह वहीं स्थिर खड़े रहे। उन्हें यकीन था कि अगर उसने उनका हाथ न पकड़ा होता तो वह गिर ही जाते। एक-दो पल के लिए उनका सिर चकरा गया। फिर अचानक उन्हें लगा जैसे सूरज उनके शरीर को जला रहा हो और उन्हें खूब पसीना आने लगा। उन्हें बैठने का मन हुआ। लेकिन वह ऐसा नहीं करना चाहते थे क्योंकि इससे उसे यह आभास हो जाता कि वह उसके शब्दों से इतने प्रभावित हुए हैं। इसलिए उन्होंने धीरे-धीरे अपने कदम कम कर दिए। लगभग दस कदम चलने के बाद उनका शरीर संभल गया। उन्हें किसी हलचल भरे शहर का शोर सुनाई नहीं दिया और उन्होंने सोचा कि शाम हो गई होगी। उन्होंने खुद से पूछा, "क्या वे सब युद्ध में चले गए हैं? औरतें भी? आज तक किसी नौकर ने मुझसे इस तरह बात नहीं की। आखिर नौकरानी तो राजा के आनंद के लिए ही होती है, ठीक वैसे ही जैसे उसका राज्य। शायद मुझे उसे नौकरी से निकाल देना चाहिए या शायद उसे सजा देनी चाहिए। लेकिन क्या सजा? मैं उसे कैसे दूँ?" जब उसके मन में ऐसे विचार उमड़ रहे थे, तभी उसे उसकी मधुर आवाज़ याद आई। उसे याद आया कि उसने उसकी उम्र इसी आवाज़ से पता लगाई थी, और अपनी चतुराई और पैनी नज़र के लिए उसने खुद को शाबाशी दी। लगभग बीस कदम और चलने के बाद उसने उससे कहा, "मुझे वापस ले चलो और सोफे पर लेटने में मेरी मदद करो।" उसने उससे पूछा, "क्या अब तुम मुझे काले कंबल से ढक रही हो?" यह सुनिश्चित करने के बाद, उसने अपने अंगों को आराम दिया और सो गया।

रात के खाने और अन्य ज़रूरतों की ज़िम्मेदारी सुस्मित पर थी। उसने उससे पूछा, "अरे, तुम आ गई। वह कहाँ है? उसका नाम क्या है?" उसने जवाब दिया, "वह एक अजीब किस्म की लड़की है। उसका पति मोर्चे पर गया हुआ है। उसने कहा कि वह यहाँ अकेले नहीं रह सकती। वह अचानक यह कहकर चली गई कि वह अपने पिता के शहर जा रही है।"

धृतराष्ट्र ने पूछा, "उसके पिता का नगर कौन सा है?"

सुस्मित ने कहा, "मुझे नहीं पता।"

धृतराष्ट्र ने इस मामले में कोई और दिलचस्पी नहीं दिखाई। न केवल इसलिए कि उनके पास बैठी गांधारी जाग रही थी, बल्कि इसलिए भी कि उन्हें बेचैनी महसूस हो रही थी कि सुबह से ही अपनी चुप्पी से वह उनका अपमान कर रही थी। साथ ही, इस बात का भी अपमान और गुस्सा था कि उस सेविका ने महाराजा होते हुए भी उनकी अवज्ञा की और चली गई। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। उन्हें आश्चर्य हुआ कि क्या दीपक जल रहा है या नहीं। उन्हें सुस्मित को बुलाकर यह पूछने का मन नहीं हुआ कि दीपक जल रहा है या नहीं। गांधारी खर्राटे नहीं ले रही थी। उन्हें उस पर गुस्सा आया क्योंकि जागते हुए भी वह चुप थी और जानबूझकर उन्हें अकेलापन महसूस करा रही थी। फिर उन्होंने अपने मन से सब कुछ मिटाने के लिए खुद को पूरी तरह से कंबल से ढकने की कोशिश की। लेकिन वे इसमें सफल नहीं हुए। उसने खुद से पूछा, "संजय मुझे सूचना देने कब आएगा? कल या परसों? क्या वह कल आया था या परसों? मुझे बातें ठीक से याद नहीं हैं। क्या मैं गांधारी से पूछूँ? लेकिन मैं कैसे पूछूँ, जब वह मुझसे इतनी स्पष्ट रूप से बच रही है? कोई जल्दी नहीं। मुझे खुशखबरी तभी मिलेगी जब पूज्य भीष्म अपनी सेना के साथ शत्रु पर टूट पड़ेंगे और शत्रु सेना को पूरी तरह से नष्ट कर देंगे। ब्रह्मचार्य ही उनकी अद्भुत शक्ति और सामर्थ्य का रहस्य है। मुझे अचानक कुछ और याद आया। क्या विदुर ने मुझे बताया था? या किसी और ने? नहीं, विदुर ने ही बताया था। ऐसा लगता है कि पांडवों ने अपनी पत्नी द्रौपदी के अलावा किसी और स्त्री को स्पर्श नहीं किया है। केवल अर्जुन की दूसरी पत्नी है। ऐसा लगता है कि कुंती, जब उनके पुत्र धनुर्विद्या और शस्त्र विद्या सीख रहे थे, तब उन्होंने नाग की तरह अपने पुत्रों की पवित्रता की रक्षा की और यह सुनिश्चित किया कि वे दासियों के साथ न सोएँ। वह उन्हें यौन अतिभोग के प्रति आगाह करती थीं, उनके पिता का उदाहरण देकर। एक व्यक्ति जो इस तरह के अत्यधिक भोग-विलास के कारण असाध्य रूप से बीमार हो गया। यहाँ तक कि अपनी राजधानी इंद्रप्रस्थ बनाने के बाद भी, उन्होंने कभी भी दासियों के साथ यौन संबंध नहीं बनाए। बेशक, वे जुआ खेलते थे और वनवास में चले गए। लेकिन वनवास भी ब्रह्मचर्य का ही एक रूप था। इसका अर्थ यह है कि हमारे शत्रुओं के पास पाँच ऐसे योद्धा हैं जो चाचा की तरह ब्रह्मचर्य का अभ्यास करते हैं, और इसीलिए शक्तिशाली हैं। इस विचार ने उन्हें कुछ हद तक उदास और भयभीत कर दिया। फिर उन्हें याद आया, “लेकिन मैंने तो कुंती के

बिल्कुल विपरीत किया। मैंने क्या किया? मैं अपने पुत्र को सलाह देता था, 'पुत्र, हमारा देश कितना समृद्ध है। हमारे पास यहाँ कितनी दासियाँ हैं। फिर भी यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो धन और अनाज खर्च करके दूसरे देशों से सुंदर दासियाँ लाओ और उनका आनंद लो। तुम पांडवों से बेवजह ईर्ष्या क्यों करते हो? और मुझ पर अपने छोटे भाई के पुत्रों के साथ अन्याय करने का आरोप न लगे।' अब मैं देखता हूँ कि जिन चीजों पर हम पहले गर्व करते थे—हमारा धन और हमारी सुंदर दासियाँ—वे हमारी कमजोरी और भय के प्रतीक बन गई हैं। हमारे मामा का ब्रह्मचर्य शुद्ध और कठोर है। यह कुंती के पुत्रों के ब्रह्मचर्य से कहीं अधिक कठिन है, क्योंकि इसमें विवाह का त्याग करना पड़ता है। खैर, इस मामले में हम शत्रु से अधिक बलवान हैं, और इस मामले में हमारी जीत निश्चित है।" धृतराष्ट्र ने मन ही मन यह विश्वास दिलाने के लिए बहुत संघर्ष किया कि कुंती के पुत्रों पर उनकी विजय निश्चित है। काफी देर बाद, उन्हें नींद आई, और गहरी नींद सोई। लेकिन अचानक ही वह जाग गया। क्या यह सपना था या अचेतन मन की बड़बड़ाहट? यह स्पष्ट नहीं था। उसने अपने बेटों को युद्ध में एक-एक करके टुकड़े-टुकड़े होते देखा! उसे एहसास हुआ कि यह अब महज़ एक सपना था, हकीकत नहीं। यह जानकर कि यह महज़ एक सपना था, उसे कुछ राहत मिली। वह बिस्तर पर करवटें बदलने लगा। उसे पेशाब करने की तीव्र इच्छा हुई। लेकिन किसी कारणवश उसे नौकरानी को बुलाकर उसकी मदद लेने का मन नहीं हुआ। उसने इच्छा को नियंत्रित करने का फैसला किया और बिस्तर पर ही लेटा रहा। उस दिन गांधारी खर्राटे नहीं ले रही थी। फिर भी वह सो रही थी। या वह जाग रही थी? यह जानने की उसकी जिज्ञासा बढ़ रही थी। तभी उसे पेशाब रोकना मुश्किल लगा और उसने अपने बुढ़ापे को कोसना शुरू कर दिया। उसने नौकरानी को आवाज़ दी। कोई नहीं आया। उसने फिर आवाज़ दी। कोई जवाब नहीं। उसने फिर आवाज़ दी, इस बार और ज़ोर से। सुस्मेती आई। गांधारी ने कहा, "अरे, तुम मेरी नींद खराब कर रहे हो।" उसकी आवाज़ में शिकायत थी।

मूत्र त्याग करके बिस्तर पर लौटने के बाद धृतराष्ट्र ब्रह्मचार्य की शक्ति के रहस्य को समझने में मशगूल हो गए। उन्होंने पाया कि समस्या के बारे में उनकी समझ और उनका स्पष्टीकरण संतोषजनक नहीं था। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि ऐसे मामलों में विदुर से परामर्श करना सबसे उचित होगा। धृतराष्ट्र ने सोचा, "विदुर आज पूरे दिन नहीं आए। मुझे उन्हें कल बुलवाना होगा।" गांधारी गहरी आहें भर

रही थीं। लेकिन उन्हें संदेह था कि क्या वह सचमुच सो रही हैं। अचानक उन्हें घोर अकेलापन महसूस हुआ। वे सोचने लगे कि क्या विदुर उनसे मिलने आएंगे या कुंती ने उनके मन में उनके विरुद्ध विष भर दिया है। भोर होने से पहले भी, पूर्ण शांति होने के बावजूद, उन्हें नींद नहीं आई।

जब सुस्मिते दूसरी बार लौटे, तो उन्होंने कहा, "एक रथ ले जाओ और विदुर को बताओ कि उसका बड़ा भाई गंभीर रूप से बीमार है और यदि वह उसके पास नहीं गया तो शायद वह जीवित न रह पाए।"

कुछ देर बाद, उन्हें रथ के लौटने की आहट सुनाई दी। उन्हें पास आते कदमों की आहट भी सुनाई दी। ये केवल सुस्मित के कदम नहीं थे, बल्कि विदुर के भी थे। विदुर चिंतित होकर पूछ रहे थे, "क्या बीमारी है?" धृतराष्ट्र फुर्ती से उठ बैठे और बोले, "पास आओ।" उन्होंने अपने मित्र और भाई को गले लगाने के लिए अपनी बाहें खोल दीं। जैसे ही उन्होंने विदुर को गले लगाया, धृतराष्ट्र ने पाया कि विदुर की छाती, कंधे और गर्दन बहुत गर्म थे। जब विदुर ने धृतराष्ट्र की दृष्टिहीन आँखों से आँसू बहते देखे, तो उनकी आँखों से भी आँसू बहने लगे।

—•✳•—

अध्याय 60

धृतराष्ट्र ने संजय से कहा, "तीन दिन हो गए जब तुम मोर्चे से खबर लेकर आए थे। खबर न मिलने के कारण हम यहाँ व्यथित हैं। क्या मैंने तुम्हें दो घोड़े इस उम्मीद से नहीं दिए थे कि तुम हमें प्रतिदिन खबर दोगे?"

संजय ने उत्तेजित होकर कहा, "अगर बताने लायक कुछ है ही नहीं तो यहाँ आने का क्या फायदा? आज कुछ बताने लायक घटना घटी है। आज से असली युद्ध शुरू हो सकता है।" पसीना पोंछते हुए वह सेविका की ओर मुड़ा और बोला,

"अगर आप मुझे थोड़ा रस दे दें जिससे मेरा गला तर हो जाए, तो मैं बोल सकता हूँ। मुझे बहुत भूख भी लगी है। महाराज, क्या मैं बैठ कर बात कर सकता हूँ?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "जी हां, बैठ जाइए।" उन्होंने दासी से लकड़ी का आसन लाने को कहा। "इसे शहद मिला हुआ पानी पिलाइए। साथ ही, भूख मिटाने के लिए मक्का, शहद और दूध का मिश्रण भी दीजिए। रसोइए से कह दीजिए कि संजय बाद में यहीं भोजन करेंगे। संजय, आज तक की क्या खबर है?" उन्होंने एक ही सांस में तेज़ी से ये सवाल पूछ लिया।

लकड़ी के चबूतरे पर बैठे और खंभे से टेक लगाए विदुरा ने कहा, "स्पष्ट रूप से बोलो। जैसा कि तुमने पिछली बार बताया था।"

संजय ने बताया, "पहले मुख्य बातें: भीष्म का युद्ध से पीछे हटना। द्रोण द्वारा सर्वोच्च सेनापति का पदभार संभालने की संभावना। दुर्योधन की सेना में कमी। पांडवों की कुशल रणनीति। अब विस्तार से। आज युद्ध शुरू होने के दो घंटे के भीतर ही भीष्म ने घोषणा की, 'मैं अब और नहीं लड़ूंगा। मैं सर्वोच्च सेनापति के पद से पीछे हट रहा हूं।' उन्होंने अपने सारथी को उन्हें तम्बू में वापस ले जाने का आदेश दिया। लेकिन वास्तव में वे सीधे अपने तम्बू में नहीं गए। उन्होंने युद्धक्षेत्र से दूर, धूल और युद्ध के शोर से परे, मृत घोड़ों, हाथियों और सैनिकों की दुर्गंध से दूर, उस झील के पास, जहाँ से हमारे शिविर को पानी मिलता है, एक पेड़ के नीचे भूख से मरने का निश्चय किया था। वे सीधे उसी स्थान पर गए। जब सेना ने खुद को अपने सर्वोच्च सेनापति के बिना पाया, तो वह तितर-बितर और अव्यवस्थित हो गई। तब कर्ण ने मोर्चा संभाला और युद्ध का नेतृत्व किया। उस समय मुझे लगा कि मेरे पास बताने के लिए पर्याप्त महत्वपूर्ण समाचार हैं और मैं मोर्चे से चला गया।"

विदुर ने पूछा, "पूज्य भीष्म ने ऐसा क्यों किया?" जब धृतराष्ट्र ने सुना कि उनके मामा, जो जीवन भर ब्रह्मचारी रहे और साक्षात पुरुषत्व के प्रतीक थे, जिनसे उन्हें निश्चित विजय प्राप्त करने की उम्मीद थी, ने ऐसा व्यवहार किया है, तो उन्हें लगा जैसे उन पर किसी अशुभ तारे का प्रहार हो गया हो। गांधारी एक स्तंभ की तरह अकड़ी और चुपचाप बैठी रहीं।

संजय ने आगे कहा, "याद है, मैंने तुम्हें पहले बताया था कि मैंने जानकारी इकट्ठा करने के लिए दुश्मन के शिविर में अपने जासूस भेजे थे। खैर, जो जानकारी वे लाए और महाराजा दुर्योधन के जासूसों से मिली जानकारी के आधार पर, मैं निम्नलिखित तस्वीर को जोड़ पाया। पांडवों ने अनुमान लगाया था कि जब तक भीष्म रथ के

मुखिया हैं, तब तक कोई निर्णायक घटना नहीं होगी। उन्हें लगा कि पाँचों पांडवों में से कोई भी सीधे तौर पर किसी से नहीं लड़ रहा है, क्योंकि उनके दादा ने उन्हें यही निर्देश दिया था। और इसी तरह, पांडव पक्ष का कोई भी व्यक्ति अपने चचेरे भाइयों में से किसी को भी मारने के लिए तैयार नहीं था। आखिर, वे बचपन से साथ पले-बढ़े थे, और स्नेह के बंधन इतनी आसानी से कैसे टूट सकते हैं? इसके अलावा, तीर-कमान से लड़ने वालों को मारना तो संभव था, लेकिन वे उस बूढ़े सेनापति को कैसे मार सकते थे जो रथ में एक नरम गद्देदार सीट पर तकिए के सहारे बैठा रहता था और पर्दे के पीछे से कार्रवाई का मार्गदर्शन करता था? लेकिन, बेशक, वे जानते थे कि वास्तव में कार्रवाई दूसरों द्वारा निर्देशित की जा रही थी। जब वे ऐसी समस्याओं से चिंतित थे, तब यादव कृष्ण ने एक रणनीति बनाई। तुम्हें याद है ना।" क्या यह वही नपुंसक द्रुपद का पुत्र शिखंडी है, जिसे काशी के राजा की पुत्री अम्बे माना जाता है, जिसकी अग्नि में मृत्यु हो गई थी और जिसने भीष्म द्वारा किए गए अपमान का बदला लेने के लिए पुनर्जन्म लिया था? ऐसा माना जाता है कि कृष्ण ने पांडवों को सलाह दी थी कि आज उस प्राणी के लिए, जो न पुरुष है और न स्त्री, पांडव सेना का नेतृत्व करने और भीष्म को चुनौती देने का उचित समय है। उन्होंने यह मिथक फैलाकर अपने सैनिकों का उत्साह बढ़ाया कि भीष्म आज निश्चित रूप से उस प्राणी द्वारा मारे जाएंगे जो विशेष रूप से उस वृद्ध योद्धा को मारने के लिए पैदा हुआ है...

गांधारी ने हस्तक्षेप किया, "क्या आपने अंबे का जिक्र किया?"

धृतराष्ट्र ने गांधारी की स्मृति में छूटी हुई बात को पूरा करते हुए कहा, "तुम्हें चाचा की महान वीरता की कहानी तो पता ही है। अम्बे मेरी माता और पांडु की माता से भी बड़ी थीं। स्वयंवर में चाचा ने सबको परास्त कर तीनों कन्याओं को बंदी बना लिया, उन्हें बांधकर अपने रथ में यहाँ ले आए..." गांधारी ने बीच में ही टोकते हुए भीष्म पर ताना मारा। उन्होंने कहा, "मैंने तुम्हारे चाचा की दूसरों के मामलों में दखल देने और उन्हें बिगाड़ने की आदत वाली कहानी तो सुनी ही है। मैं बस उनका नाम भूल गई थी। इसीलिए मैंने बीच में दखल दिया।"

धृतराष्ट्र को उसके लहजे और अपने मामा के प्रति उसके चिड़चिड़ेपन का कोई मतलब समझ नहीं आया। लेकिन फिलहाल वह उसे उकसाना नहीं चाहता था। उसने संजय की ओर मुड़कर कहा, "हाँ, उन्होंने अपने आदमियों को जोश दिला दिया है। अब आगे क्या?"

विदुरा ने उत्तर दिया, "संजय मक्का और दूध का सेवन करने में व्यस्त है।"

संजय, जो तेजी से खाना खा रहा था, विदुर की बात सुनकर हँसे बिना नहीं रह सका। उसके मुँह का खाना निकलकर ज़मीन पर बिखर गया। अचानक हँसी से उसे खाँसी आ गई। विदुर ने उसे सलाह दी, "धीरे-धीरे खाओ," फिर भी वह तेजी से खाने लगा और अपनी हँसी रोकने की कोशिश की। फिर उसने आगे कहा, "अपनी जिज्ञासा को रोक न पाने के कारण, मैंने अपनी आँखों से देखा, बेशक दूर से। शिखंडी बिना आवरण के एक ऊँचे रथ पर खड़ी थी। कमर से नीचे स्त्री के वस्त्र थे, लेकिन कमर से ऊपर पुरुष के वस्त्र और कवच थे। उसकी पीठ पर लंबी चोटी लटक रही थी। योद्धा का मुकुट। पतली कमर वाली शिखंडी, हरम में मनोरंजन करने वाली के योग्य, एक हाथ में धनुष और दूसरे में बाण लिए हुए थी। उसने पूज्य भीष्म को संबोधित करते हुए कहा, 'हे भीष्म, हे भीष्म, हे अहंकार के अवतार। हे भीष्म, जिसने मुझे एक असहाय स्त्री के रूप में बंदी बनाकर मेरा जीवन बर्बाद कर दिया। अब मैंने अपना स्त्रीत्व त्याग दिया है और यहाँ पुरुष बनकर तुम्हें समाप्त करने आई हूँ। यदि तुम सच्चे पुरुष हो, तो मुझसे आमने-सामने की लड़ाई लड़ो, अपने मनचाहे हथियार, धनुष, तलवार या गदा का प्रयोग करो। यदि तुममें मेरी चुनौती स्वीकार करने का साहस है, तो जमीन को छूकर प्रणाम करो, अपनी स्वीकृति दर्शाओ।' हिजड़े के ये शब्द दूर-दूर तक फैल गए। न केवल हमारे सैनिकों में, बल्कि उनके सैनिकों में भी, हर जगह ज़ोरदार ठहाके गूंज रहे थे। हंसी कुछ मिनटों तक जारी रही। तनावग्रस्त सैनिकों के लिए, यह एक सुखद राहत और मनोरंजन था! हंसी आगे की पंक्तियों से लेकर पीछे की पंक्तियों तक फैल गई। पूरा युद्धक्षेत्र हंसी से गूंज उठा। मैं भीष्म को देखने के लिए काफी करीब था। चाहे उन्हें उस पागलपन भरी हंसी से अपमान महसूस हुआ हो या वे सचमुच एक हिजड़े से लड़ना नहीं चाहते थे, या उन्हें डर था कि अम्बे का भूत उन्हें खत्म कर देगा, आखिरकार, मृतकों की आत्माओं में जीवितों से अधिक शक्ति होती है, खैर, जैसे ही हंसी रुकी, उन्होंने अपने सारथी से पूछा, 'ये क्यों हंस रहे हैं?' उसने कहा कि वह जाकर पता लगाएगा, लेकिन जब वह हंसी का कारण बताने लौटा तो वह भी हंस पड़ा। इसी बीच, हंसी की एक और लहर उठी। दोनों तरफ के सैनिकों ने अपने धनुष कंधों पर बांध लिए और ताली बजाने लगे। कुछ शिखंडी की तरह कमर हिलाते हुए नाचने लगे। स्वाभाविक रूप से, जब उसके सैनिक अनुशासन का उल्लंघन करते हैं तो क्या कोई सेनापति चुप रह सकता है? दादाजी

का... चेहरा गंभीर और कठोर हो गया। कुछ क्षणों के लिए वे आत्ममग्न प्रतीत हुए। फिर वे अपनी विशालता में खड़े हुए और बोले, "यह भीष्म निर्भय हैं। यह सबको ज्ञात हो। परन्तु भीष्म के महान शौर्य और प्रतिष्ठा के लिए यह उचित नहीं है कि वे एक हिजड़े की चुनौती को गंभीरता से लें। मैं सर्वोच्च सेनापति के पद से विमुख होता हूँ। सारथी, मेरा रथ वापस मोड़ो।" हमारे सैनिक व्याकुल हो गए। शत्रु पक्ष में लोगों को यह कहते सुना जा सकता था कि बूढ़ा कुंवारा शिखंडी के उससे विवाह करने के डर से भाग गया! वे इस पर हंसने लगे। परन्तु अर्जुन ने आकाश में एक के बाद एक पांच बाण चलाए, सैनिकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया और जोर से कहा, "हमारे परम पूजनीय दादाजी के बारे में कोई भी हल्के में बात न करे। कोई भी न हंसे।" सैनिकों का शोर शांत हो गया। केवल फुसफुसाहटें ही रह गईं। खैर, आज के युद्ध का सर्वोच्च नायक एक हिजड़ा था। फिर मैं भीष्म के पीछे चला गया। बाद में सुना कि कर्ण युद्धक्षेत्र में प्रवेश कर गया था। केवल सुना, स्वयं नहीं देखा।"

क्योंकि संजय को युद्ध के विभिन्न पहलू और विवरण तुरंत याद नहीं आ रहे थे, इसलिए वे चुप हो गए, मानो अपनी कहानी समाप्त करने का संकेत दे रहे हों। वे सूखी पत्ती की थाली में रखा भोजन भी समाप्त करना भूल गए। भीष्म के युद्ध से संन्यास लेने की खबर से धृतराष्ट्र का हृदय भयभीत हो गया। उन्हें एहसास हुआ कि उनकी चाची का पुनर्जन्म केवल भीष्म को मारने के लिए हुआ है। उन्होंने सोचा, "कितनी अफ़सोस की बात है कि उनका पुनर्जन्म हमारे शत्रु द्रुपद की संतान के रूप में हुआ। मानो जो मित्र हमसे नाराज़ होते हैं, वे भी हमारे शत्रुओं का सहारा लेते हैं! नपुंसक होने का क्या अर्थ है? हाँ, मुझे पता है कि इसका अर्थ न पुरुष है न स्त्री। लेकिन इसका क्या तात्पर्य है? और अब मुझे याद आया कि धृष्टद्युम्न ने द्रोण को मारने में सहायता के लिए विशेष रूप से अग्नि देव की पूजा की थी। क्या पता शिखंडी को भी उनके विरुद्ध खड़ा कर दिया गया हो? चाचा को युद्ध के मोर्चे पर रहना चाहिए था।"

इसी बीच, विदुर ने पूछा, "अच्छा, पूज्य भीष्म के सर्वोच्च आदेश के तहत वास्तव में क्या हासिल हुआ?"

संजय, "मैं कैसे कहूँ? कौन गिन सकता है कि पिछले दस दिनों की लड़ाई में कितने हज़ारों लोग मारे गए, कितने घायल हुए जिनके अंग कट गए और खून बह रहा था? जब किसी एक जगह पर कोई घटना घटित होती है, तो अगले दिन वह

जगह युद्धक्षेत्र नहीं रह जाती। क्यों? मरे हुए लोग, मरे हुए घोड़े, मरे हुए हाथी सड़ते हैं और उनसे भयानक दुर्गंध आती है। फिर भी युद्धक्षेत्र को बहुत दूर ले जाना भी संभव नहीं है। अगर हम बहुत दूर चले गए, तो सामग्री परिवहन में समस्याएँ पैदा हो जाएँगी। यह भी जोखिम है कि अगर हम एक दिशा में गए, तो दुश्मन दूसरी दिशा से हम पर हमला कर सकता है। दुश्मन पक्ष में भी कई मौतें हुई हैं। लेकिन कुल मिलाकर, हमें ज़्यादा नुकसान हुआ है। शुरुआत में, अगर हमारे पास ग्यारह के मुकाबले सात की संख्या का लाभ था, तो अब हम बराबर हैं, यानी हमारे सात और उनके सात। शायद यह बिल्कुल भी असंभव नहीं है कि उन्हें थोड़ा कम नुकसान हुआ हो, और इसलिए अभी उनकी सेना हमसे थोड़ी बड़ी हो। द्रोण के अनुसार, हम पाँच हैं और वे भी पाँच हैं।" धृतराष्ट्र इतनी ज़ोर से चिल्लाया कि उसकी आवाज़ कमरे से भी दूर तक सुनाई दी, "हमारी तरफ इतना भारी नुकसान हुआ है!" उसने आगे कहा, "यह कैसे संभव है जब हमारे साथ चाचा जैसा पर्वत शिखर जैसा लंबा व्यक्ति है?"

संजय, "पांडवों ने हमें इतनी जल्दी हरा दिया। उनके हमले से भी ज़्यादा, उनके हमले के डर ने हमारे शिविर में इतनी अफरा-तफरी और गड़बड़ी पैदा कर दी कि कई लोगों ने उस अफरा-तफरी में एक-दूसरे को मार डाला। ऐसा लगता है कि हमारे काफी सैनिक मैदान छोड़कर भाग गए। कई लोग डर गए थे कि उनकी हार निश्चित है, क्योंकि उनका नेतृत्व एक बूढ़ा आदमी कर रहा था जो धनुष पकड़ने और तीर चलाने के लिए बहुत कमज़ोर था! इसके विपरीत, उनका मानना था कि दुश्मन के शिविर में भीम एक दुर्जेय योद्धा था, जो अपनी जान से कभी नहीं डरता था। वह अपनी जान से इतना कम डरता था कि वह अकेले ही दुश्मनों से भिड़ने और उन्हें मार गिराने से भी नहीं हिचकिचाता था! वह कभी एक जगह नहीं रुकता था, बल्कि हर जगह मौजूद रहता था। उसके साथ पांच सौ योद्धाओं की एक छोटी सी टुकड़ी थी, जो दुनिया के कोने-कोने तक उसका पीछा करती थी। वे तलवारों और भालों से हमारे सैनिकों पर टूट पड़ते थे। वे हाथियों के माथे पर सटीक निशाना लगाते थे और उन्हें घायल कर देते थे। घायल हाथी पागल हो जाते थे और हमारे सैनिकों को रौंद देते थे। उन्हें काबू में नहीं किया जा सकता था। मुझे यह कहने की ज़रूरत नहीं है कि..." अर्जुन की धनुर्विद्या में निपुणता का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए। वह दूर से ही हाथियों की छोटी-छोटी आँखों में सटीक तीर मारी कर सकता है। और फिर, पीड़ा में, वे इतनी उग्रता और गति से दौड़ पड़ते हैं कि

कोई भी शक्ति उनका सामना नहीं कर सकती। विडंबना यह है कि हमने जो असंख्य हाथी एकत्रित किए थे, वे हमें ही नष्ट करने के लिए हम पर ही टूट पड़े हैं! अचानक कुछ याद आने पर संजय थोड़ी देर रुका। फिर उसने आगे कहा, "मेरे मन में भीम और हाथी का अटूट संबंध है। हाथी का अर्थ भीम है और भीम का अर्थ हाथी। जहाँ तक मुझे याद है, उसने तुम्हारे सत्रह पुत्रों को मारकर उनके शवों को फेंक दिया है..."

गांधारी ने बीच में ही टोक दिया। वह दुख से चीखने-चिल्लाने लगी। संजय, विदुर और धृतराष्ट्र घबरा गए। नौकर दौड़कर उसके पास गया। गांधारी की आँखों पर बंधी पट्टी आँसुओं से भीगी हुई थी। संजय को जल्द ही अपनी गलती का एहसास हो गया। उसने तुरंत सुधार करने की कोशिश की, "हे देवी, मैंने जो कहा था, उसका मतलब यह था कि उसने महाराजा के सत्रह बच्चों को मार डाला है। उनमें से आपका कोई बेटा नहीं है। आपके बेटे सुरक्षित हैं।" तभी नौकर ने एक बर्तन से मग में पानी डाला और ठंडे पानी से उसका सिर धोने लगा। संजय ने उसे फिर से स्थिति समझाई। वह समझ गई कि क्या हुआ था और पूछा, "क्या मेरे किसी बच्चे को नहीं मारा गया? मुझे सच बताओ।"

जब संजय ने जवाब दिया, "बिल्कुल निश्चित रूप से," तो वह शांत हो गई।

संजय ने आगे कहा, "लगभग आठ दिन पहले, भीम ने आठ लोगों को मार डाला था - सुनभा, आदित्यकेतु, कुंडाधर, बहवासी, महोदरा, अपराजिता और पंडितक। मुझे देखना होगा, हाँ, एक और होना चाहिए, लेकिन मुझे अभी उसका नाम याद नहीं आ रहा है। ऐसा लगता है कि उसने नौ लोगों को शारीरिक रूप से कुचलकर मार डाला था। यह कब हुआ था? कल या परसों, मुझे याद नहीं आ रहा है। उनके नाम? मुझे देखना होगा। व्युधोरस्क, कुंडलिना, अनादृष्टि, कुंडाभेरी, दीर्घबाहु, और, खैर, मुझे याद नहीं आ रहा है। वापस आते समय मैं सभी नामों को याद करने की बहुत कोशिश कर रहा था ताकि मैं आपको बता सकूँ। अब वे मेरी स्मृति से फिसल रहे हैं। हाँ, मुझे अब बाकी नाम याद आ गए हैं - नहीं, केवल एक, कनकध्वज। खैर, मैं आपसे वादा करता हूँ कि जैसे ही मुझे वे याद आएंगे, मैं आपको बता दूँगा, ज़रूरत पड़ने पर दौड़कर वापस भी आऊँगा!"

संजय अपनी यादों को सहेजने के लिए अथक प्रयास कर रहा था, और उसी समय धृतराष्ट्र भी अपनी यादों को कुरेदने में लगे हुए थे। बूढ़े राजा ने मन ही मन पूछा, "ये कैसे नाम हैं? और इन्हें ये नाम किसने दिए? ये मेरे पुत्रों के ही नाम होंगे।

वरना संजय को इनके बारे में इतनी निश्चितता न होती। इनकी माताएँ कौन हो सकती हैं? केवल संजय ही आवश्यक पूछताछ करके मेरे लिए इनका पता लगा सकता है। आख़िरकार, मैंने कभी भी दासियों को उनके नाम से नहीं पुकारा। मैं हमेशा उन्हें केवल दासियाँ ही कहता था। अभी हाल ही में मैंने उनके नाम याद रखने का अभ्यास शुरू किया है। ये घटनाएँ कितने समय पहले घटी थीं? कोई इतनी पुरानी घटनाओं को कैसे याद रख सकता है?" अपने आत्मचिंतन से बाहर आकर उन्होंने संजय से पूछा, "संजया, भीम के शिकार ये लोग कितने साल के थे?"

संजय, "अच्छा, मैंने जिन पहले आठों का ज़िक्र किया, मुझे याद हैं। उनमें सबसे बड़े की उम्र पचास साल होगी। बाकी सब उनसे डेढ़ साल छोटे होंगे। वे सभी एक ही माँ की संतान थे। उन्होंने भीम पर एक साथ हमला करने की कोशिश की। उनकी आशा और महत्वाकांक्षा भीम को मारना या कैद करना था ताकि उनका भाई दुर्योधन उन्हें भरपूर इनाम दे। क्या आप जानते हैं कि क्या हुआ? भीम ने उन्हें बुरी तरह पीटा और बेहोश कर दिया। फिर उसने एक-एक करके उनके सिर काट दिए और उन्हें हमारी सेना पर फेंक दिया! जब हमारे सैनिकों ने खून से लथपथ कटे हुए सिर देखे, तो वे डर गए और इधर-उधर भागने लगे। वे एक-दूसरे पर गिर पड़े और दहशत तेज़ी से फैल गई। मैंने जिन नौ का ज़िक्र दूसरी बार किया, वे भी भाई थे। दुर्योधन ने उन्हें उकसाकर भेजा था। लेकिन वे भी..." गांधारी ने क्रोध में अचानक बात काटते हुए कहा, "किसके भाई? क्या मेरे पुत्र दुर्योधन ने सचमुच उन्हें अपने भाई कहा था या ये शब्द तुम्हारी ही देन हैं, हे सूत? महाराजा की उपस्थिति में तुम्हें यह जानना चाहिए।" उचित सम्मान के साथ बात कैसे करें।"

शेल्फ पर रखा हुआ दीपक, जो लगातार जल रहा था, अब मंद होता प्रतीत हुआ। द्वार पर खड़े सेवक ने उसमें तेल डाला और बाती को सीधा किया। दीपक से कमरा न केवल मंद प्रकाश से, बल्कि सन्नाटे से भी भर गया। तब विदुर बोले, "यह संजय की कल्पना नहीं है। यह एक सच्चाई है। दुर्योधन खुले दरबार में शेखी बघारता था, 'कुंती के पुत्र भले ही पाँच हों, लेकिन हम सौ हैं। मेरे स्वयं के कुल निन्यानवे भाई हैं। उन्हें हमसे लड़ने आने दो। हम उन्हें कुचल देंगे और हरा देंगे।' अगर उसने युद्ध के मैदान में ऐसा कहा होता तो आश्चर्य की बात नहीं होती। मुझे यकीन है कि उसने 'भाई' शब्द का प्रयोग किया होगा, जैसा कि संजय ने बताया है।"

गांधारी चुप थीं। महाराजा का मन एक रोचक विचार में मग्न था। यह सर्वविदित था कि गांधारी ने चौदह पुत्र और एक पुत्री को जन्म दिया था। धृतराष्ट्र ने गणना की कि दासियों से जन्मे पुत्रों की संख्या सौ में से चौदह घटाने पर प्राप्त होगी। परन्तु वे इस सरल गणितीय गणना को हल करने में असमर्थ रहे और विदुर की ओर मुड़कर बोले, "विदुर, यदि तुम चौदह घटा दो तो कितने शेष बचेंगे?"

विदुरा इस प्रश्न के संदर्भ और उद्देश्य को समझ नहीं पाए, लेकिन उन्होंने तुरंत उत्तर दिया, "छियासी।"

धृतराष्ट्र सोचने लगे, "दुर्योधन ने यह अनुमान कैसे लगाया कि उसके पिता से जन्मे, लेकिन उसकी माता से नहीं जन्मे उसके भाइयों की संख्या ठीक छियासी थी? क्या उसे यकीन था कि यह सही अनुमान है? शायद। मुझे याद नहीं। हो सकता है उसने गिनती रखी हो क्योंकि यह उसके लिए ज़रूरी था। तभी..." संजय ने कहा, "यहाँ आने से पहले, मैं अपने घर के पास से गुज़रा, अपनी पत्नी को पुकार कर उसे अपना चेहरा दिखाया और फिर जल्दी से यहाँ आ गया। यहाँ आने तक मैं घोड़े से नहीं उतरा। अब मैं घर जाकर सोऊंगा। मैं कल आराम करूंगा। फिर परसों, नहीं, नहीं, कल ही, मैं मोर्चे पर जाऊंगा। अब कृपया मुझे जाने की अनुमति दें।"

—•✳•—

अध्याय 61

धृतराष्ट्र को सोए हुए अभी आधा घंटा ही हुआ था कि अचानक उनकी नींद खुल गई और उन्होंने सेविका को आवाज़ दी। सेविका ऊंघ रही थी, लेकिन तुरंत उनके पास दौड़ी आई। उन्हें सेविका की आहट सुनाई दी। उसकी उपस्थिति का अनुमान लगाते हुए उन्होंने पूछा, "दीपक क्यों नहीं जल रहा है?"

सेवक ने कहा, "यह जल रहा है, महाराजा।"

धृतराष्ट्र, “तुम झूठ बोल रहे हो।”

सेवक ने कहा, "नहीं महाराजा, मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ। मैं इसे कैसे साबित करूँ? अगर मैं रानी को जगाकर उनसे जाँच और पुष्टि करने का अनुरोध करूँ, तो वे भी देख नहीं सकतीं। अभी यहाँ कोई और सेवक नहीं है जो मेरी बातों की पुष्टि कर सके।"

महाराजा ने कहा, "मुझे तो जलने की गंध नहीं आ रही है।"

नौकर ने कहा, "मालिक, दीपक जलाते समय थोड़ी सी गंध आती है, और जब दीपक बुझने वाला होता है तो बहुत गंध आती है। लेकिन क्या दीपक के अपने आप लगातार जलते रहने पर भी गंध आती है?"

उन्हें एहसास हुआ कि किसी भी बहस में वह हमेशा उन पर भारी पड़ेगी, इसलिए वे चुप रहे। उन्होंने उसके जाने की आवाज़ सुनी। क्या वे दिवास्वप्न देख रहे थे या अचानक नींद क्यों उड़ गई, उन्होंने खुद से पूछा। फिर वे दूसरी तरफ मुड़े। वहाँ एकदम सन्नाटा था। उन्होंने मन ही मन कहा कि आधी रात को हमेशा ऐसा ही सन्नाटा रहता है। तभी उन्हें याद आया कि महल में कोई नहीं था। उनके बच्चे, बहुएँ और पोते-पोतियाँ, कोई भी घर पर नहीं था। उन्हें बताया गया था कि महल के पीछे स्थित सूता बस्ती में अब कोई पुरुष नहीं है। उन्हें याद आया कि विदुर ने उन्हें यह जानकारी दी थी। ऐसा लग रहा था कि वहाँ सिर्फ औरतें ही थीं। महलों के इस विशाल परिसर में वे अकेले रह गए थे। उसने मन ही मन सोचा, "हालाँकि मैं इतना चिल्लाया और इतनी ज़ोर से बोला, फिर भी इतनी नज़दीक लेटी हुई वो जाग नहीं सकती थी? वो खर्राटे नहीं ले रही। उसकी छाती के लयबद्ध रूप से ऊपर-नीचे होने का कोई संकेत नहीं है, जो सोने का स्पष्ट संकेत होता है। खैर, एकदम चुपचाप और बेसुध होकर, वो मुझे पूरी तरह से अकेला छोड़कर चली गई है..." हालाँकि उसका गुस्सा बढ़ता जा रहा था, पर वो उसे जगाकर और उससे तीखी बहस करके अपना गुस्सा ज़ाहिर नहीं करना चाहता था। जब उसे झगड़ालू नौकरानी की याद आई, तो उसे बुरा लगा। लेकिन उसे पूरा यकीन था कि नींद तो उसे आने ही वाली नहीं थी। उनका मन चिंतन में डूब गया, "संजय ने बताया कि ब्रह्मचारी चाचा भीष्म शिखंडी से बिना युद्ध किए ही पराजित हो गए। आदरणीय भीष्म ने शिखंडी से लड़ना अपमान और तिरस्कार क्यों समझा? लेकिन यह शिखंडी कैसा दिखता है? मैं कल्पना भी नहीं कर सकता। लगता है, हमारी तरफ

से ग्यारह में से छह टुकड़ियाँ नष्ट हो गईं, केवल पाँच बची हैं। उन्होंने केवल दो खोई हैं। यह भयानक खबर है, और मैं भय से कांप रहा हूँ। उस भीम की आवाज़ कितनी तेज़ है। जुए के अखाड़े में वह कितनी ज़ोर से चिल्लाया था। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि मनुष्य का गला ऐसी आवाज़ें निकाल सकता है। मेरे पेट में यह बेचैनी क्यों हो रही है? मैंने सुबह, दोपहर और रात में क्या खाया था? हाँ, मुझे याद है। केवल सख्त मांस, पका हुआ अनाज। और कुछ नहीं। आख़िर एक बिना दाँत वाला बूढ़ा आदमी क्या मांस खा सकता है? कुछ नहीं। केवल रस। इसलिए, यह साधारण पेट दर्द नहीं हो सकता। और यह दर्द केवल पेट तक ही सीमित नहीं है। मुझे यह पूरे शरीर में, हाथों में भी महसूस हो रहा है।" चेहरा, सिर, हर जगह। खैर, उसे नौकरानी न कहूँ। वह तो बहुत ही बदतमीज़ है। शायद मुझे पीठ के बल लेटकर सोने की कोशिश करनी चाहिए। लेकिन अब जब मैं लेट रहा हूँ, तो बीते हुए कल के टुकड़े याद बनकर मुझे सता रहे हैं। सत्रह मृत बच्चों की याद। सब एक झटके में उमड़ आती है। लेकिन असल में, उन्हें दो समूहों में मारा गया था - पहले आठ और बाद में नौ, सभी के सिर काटकर सैनिकों के कड़ाहे में फेंक दिए गए थे, मानो वे गेंद खेल रहे हों। यह सोचकर मुझे बहुत डर लगता है। नहीं, यह गूढ़ दर्द पेट दर्द नहीं है। यह एक तीव्र, अवर्णनीय दर्द है..."कुछ क्षणों के लिए वह भय से मानसिक रूप से लकवाग्रस्त हो गया। उसे लगा जैसे नींद उस पर हावी हो गई हो। जब संजय उनके नाम बता रहा था, तब उसने उन पर ध्यान नहीं दिया था। लेकिन संजय भी नामों को याद करने में असमर्थ था। धृतराष्ट्र ने सोचा, "अगर वह भी उनके नाम स्पष्ट रूप से या सही ढंग से याद नहीं कर सकता, तो मैं कैसे करूँ?" इस विचार ने उसे सांत्वना दी। लेकिन जल्द ही यह तीव्र दर्द के आगे फीका पड़ गया। उसने सोचा कि क्या यह शरीर के किसी तत्व की अधिकता के कारण था। उसने मन ही मन कहा, "शायद मुझे कोई ठंडा मीठा पेय या कोई जड़ी-बूटी का पेस्ट पी लेना चाहिए। अगर मैं नौकरानी को इन्हें लाने भेजूं, तो महल और भी अकेला और खाली लगेगा। मान लो मैं महल के वैद्य को बुला लूं? लेकिन शायद वो भी मोर्चे पर चला गया हो। मुझे तो दर्द भी कम होता हुआ महसूस हो रहा है। लगता है पहले आठ भाई थे, जिनकी एक ही माँ थी। सबसे बड़ा पचास साल का था। ये कौन हो सकता है? और उनकी माँ कौन थी? क्या वो दीर्घकेशी हो सकती है? या कोई और? मुझे तो नाम बिल्कुल याद नहीं आ रहे। कितने समय पहले की बात है? खैर, जब वो बूढ़ी हो गई, तो उसने नौकरी छोड़ दी और दूसरे

काम करने लगी। क्या वो ज़िंदा है? अगर सबसे बड़ा बेटा पचास साल का है, तो वो छियासठ या सड़सठ साल की होगी। धिक्कार है, मुझे कुछ भी याद नहीं आ रहा। मुझे सब कुछ आवाज़ों से ही पहचानना और भेद करना पड़ रहा है। कोमल आवाज़, विनम्र आवाज़, रोने वाली आवाज़, ताना मारने वाली आवाज़, उकसाने वाली आवाज़। साथ ही उनके शरीर का एहसास, उनकी लंबाई, उनका आकार, उनके शरीर की कसावट, उनके शरीर का स्पर्श। उनकी उम्र, उनके शरीर का पहला समर्पण, उनका आने का तरीका, एक-दूसरे पर गिरते हुए, ईर्ष्या से भरे हुए। भला कोई उनके सारे नाम कैसे याद रख सकता है? मुझे सिर्फ एक नाम अच्छी तरह याद है, और वो है विशाखे, और उसका स्नेह और प्रेम। कितना अफ़सोस है कि उसका बेटा युयुत्सु दुश्मन के पाले में चला गया। मेरा अपना बेटा, मेरे खून से जन्मा, मेरे साथ गद्दारी कर बैठा। वो नीच कभी चैन से नहीं जी पाएगा। उसे युद्ध में मर जाना चाहिए था। मेरे उन सत्रह वफ़ादार बेटों की जगह। इस विचार से वह फिर से बीमार पड़ गया, शायद शरीर में किसी तत्व की अधिकता के कारण या पेट में तेज दर्द के कारण। उसे लगा कि कहीं उसे उल्टी तो नहीं हो रही है। इससे पहले कि वह अपनी बेचैनी का कारण समझ पाता, दुख के छिपे हुए स्रोत पूरी ताकत से फूट पड़े। जब उसे एहसास हुआ कि यह बेचैनी उसके दबे हुए दुख का परिणाम है, तो उसे बेहतर महसूस हुआ और दर्द धीरे-धीरे कम होता हुआ प्रतीत हुआ। सन्नाटा असहनीय था, मानो हर चीज़ से जीवन निचोड़ रहा हो। उसने सोचा, लेकिन निश्चित रूप से नहीं, कि शायद दीपक जल रहा हो। अन्यथा क्या वह नौकर इतनी ज़ोर से कहता कि आग लगी है? उसने मन ही मन कहा, "संजय को आने दो। मैं उनके नाम जान लूँगा और पता लगा लूँगा कि उनकी माताएँ जीवित हैं या मर चुकी हैं। लगता है कि ज़्यादातर दासियाँ ज़्यादा बच्चे पैदा करने के कारण जल्दी मर जाती हैं। लेकिन गांधारी पंद्रह बच्चे पैदा करने से कमज़ोर नहीं हुई है।" अचानक उसे अपनी पत्नी पर गुस्सा आया जो उसके बगल में सो रही थी। उसने उसे ज़ोर से रोते हुए सुना था, फिर भी वह नहीं उठी। या हो सकता है कि वह उठी हो लेकिन सोने का नाटक कर रही हो। उसने उसे कोसा और फिर दाईं ओर मुड़ गया। लेकिन नींद नहीं आई। थोड़ी देर बाद, उसे पेशाब करने की तीव्र इच्छा हुई और साथ ही शौच भी करना चाहा। उसने नौकरानी को आवाज़ दी। उसकी पहली ही आवाज़ पर, उसे उसके आने की आहट सुनाई दी। इसका मतलब था कि वह सो नहीं रही थी।

जब वह उसे उस जगह ले गई जहाँ उसे शौच करना था, तो उसने उससे पूछा, "क्या तुमने उस जगह पर राख बिछाई है?" उसने उत्तर दिया, "मैं हमेशा उसे तैयार रखती हूँ।"

लेकिन धृतराष्ट्र को शौच करने की इच्छा नहीं हुई। खुली हवा से उन्हें सुकून मिला। उस जगह से चार कदम दूर जाकर उन्होंने पूछा, "सुस्मे, क्या तुमने भी सुना जब संजय मुझे सूचना दे रहा था?"

सुस्माइट ने कहा, "हां, थोड़ा बहुत।"

महाराजा, "उसने आठों नाम लिए, सभी भाइयों के नाम। लगता है भीम ने उन सभी को मार डाला। क्या आपको उनके नाम याद हैं?"

सुस्माइट, "वे सुनाभा, आदित्यकेतु, बहवाशी, कुंडधारा, महोदरा, अपराजिता, पंडितका और विशालाक्ष थे।"

महाराजा, "बहुत बढ़िया! तुम तो बड़े होशियार हो। तुमने आठों नाम बता दिए। संजय भी सूची के बीच में कुछ नाम भूल गया था। तुम्हें ये कैसे पता चले?"

सुस्मित ने कहा, "उनका घर मेरे घर के पास ही है। और जिन नौ अन्य लोगों के मारे जाने का उसने ज़िक्र किया था? उनका घर मेरे घर के ठीक पीछे है। अगर आप चाहें तो मैं उनके नाम भी बता सकता हूँ।"

महाराजा, "उनकी माताओं के नाम क्या थे?"

सुस्माइट, "अभी उन्हें क्यों मांग रहे हो?"

महाराजा ने कहा, "आप मेरे उन बेटों को जानती हैं जो मर गए। मैं उनकी माताओं को सांत्वना देना चाहता हूँ जिन्होंने उन्हें जन्म दिया..." तभी वह ज़ोर से हंस पड़ी। पूरी तरह से हैरान होकर, उन्होंने उसकी ओर मुड़कर पूछा, "तुम क्यों हंस रही हो?"

सुस्मित ने कहा, "महाराज, क्या कोई ऐसा पुरुष है जो देवला, पाटाली और अश्विनी की कोख से जन्मे बच्चों का एकमात्र पिता होने का दावा कर सकता है? मेरी माताजी हमें उनकी कहानी विस्तार से सुनाया करती थीं। इसके अलावा, गर्भवती दासियों में यह स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है कि वे बच्चे को उच्च दर्जा दिलाने के लिए शाही पिताओं को श्रेय देती हैं। आप अंधे हैं। कौन जानता है कि कितने लोगों ने आपके नाम का कितनी बार दुरुपयोग किया है। वे शाही पिता का उल्लेख तभी करते हैं जब बच्चा लड़का हो। यदि किसी पुत्री का श्रेय शाही पिता को दिया जाता है, तो शाही लोग उसकी सेवा का कोई उपयोग नहीं कर पाएंगे और पुत्री को

भूखा रहना पड़ सकता है। क्या उन्हें ऐसी स्थिति को रोकना नहीं चाहिए? यदि मेरी माताजी आज जीवित होतीं, तो वे आपको आपकी संतानों का सही विवरण, उनके नाम और संख्या बता सकती थीं।"

महाराजा, "सचमुच?" उनके हाथ-पैर कांपने लगे।

जम्हाई लेते हुए सुस्मिते ने कहा, "बिना कंबल के बहुत ठंड लग रही है। कृपया जाकर सो जाइए।"

रात के सन्नाटे की ठंडक से बिस्तर ठंडा लग रहा था। कंबल ओढ़ने के बाद भी उसे गर्म होने में काफी समय लगा। ठंड से बचने के लिए उसने शयनकक्ष के एक कोने में चूल्हा लगाने का निश्चय किया। वह सारी नौकरानियों पर क्रोधित हो उठा। उसने मन ही मन पूछा, "उसने मुझसे क्या कहा? उसने अपने नाम क्या बताए? देवला, पताली और अश्विनी। सब निकम्मी वेश्याएँ।" उन्हें कोसने से भी कोई फायदा नहीं हुआ, क्योंकि उनके कारण हुए अपमान का भाव कम नहीं हुआ। उसे याद आया: जब उसके चाचा उसके लिए, एक अंधे व्यक्ति के लिए, दुल्हन ढूंढने के लिए चिंतित थे और अंततः गांधारी से उसका विवाह कराने में सफल हुए, उससे पहले उसने कभी किसी स्त्री के साथ संबंध नहीं बनाया था। लेकिन बाद में उसने कितनी नौकरानियों के साथ संबंध बनाए? उनमें से कितनी ने उसका हाथ पकड़कर अपने फूले हुए पेट पर नहीं फेरा और उससे नहीं कहा, "महाराज, मैं आपसे गर्भवती हो गई हूँ। अपने गर्भ से भरे इस पेट को स्पर्श कीजिए।" वह कितना आनंदित होता था। अब उसने अपने आप से पूछा, "जीवन में इससे बड़ा सुख क्या हो सकता है कि अपने गर्भ को स्पर्श करे जिसे उसने फलित किया हो? सुस्मित ने जो बताया है, यदि वह सत्य भी हो, तो मेरे बीज से जन्मे बच्चे छोटे नहीं हो सकते। यदि कुछ दासियों ने इस संबंध में राजकुमारों के नामों का दुरुपयोग किया हो, तो मुझे अपने अनुभव की सत्यता के बारे में संदेह से क्यों व्याकुल होना चाहिए?" ऐसे विचारों से उसे कुछ शांति मिली। इन विचारों को थामे हुए उसने सोने की आशा की। और सोने का बहुत प्रयास किया। काफी कोशिश के बाद उसे हल्की-हल्की नींद आने लगी और फिर वह गहरी नींद सो गया।

—•✳•—

अध्याय 62

सुबह गर्म पानी से स्नान करने के बाद धृतराष्ट्र पूजा कक्ष में गए। वहाँ उन्होंने निर्देश दिया कि भविष्य में वे सुबह और शाम दोनों समय इंद्र स्तुति का पाठ करें और फिर घी चढ़ाएँ। उन्होंने देवताओं के राजा इंद्र से प्रार्थना की और उनसे अपने पक्ष को निश्चित विजय दिलाने की विनती की। इसके बाद वे अपने कक्ष में लौट गए। भोजन के समय उन्होंने गांधारी को उदास और चुप पाया। वे उससे बातचीत शुरू करने की बहुत कोशिश कर रहे थे, तभी गांधारी ने एक नौकर को बुलाया। उसने कहा, "मुझे धूप में बाहर ले चलो। यहाँ अंदर बहुत उमस और ठंड है।" धृतराष्ट्र संकेत समझ गए। बिना कुछ कहे वे पलंग पर लेट गए और अपने आप को कंबल से ढक लिया। पिछली रात उन्हें परेशान करने वाले विचार फिर से आने लगे।

कुछ देर बाद, उसे कदमों की आहट सुनाई दी। उसने व्यक्ति को पहचान लिया और कहा, "आओ, ज़रा पास आओ। क्या तुम विदुर हो?" विदुर ने उत्तर दिया, "मैं बस तुमसे मिलने और तुम्हारा हालचाल पूछने आया था। क्या तुमने कल रात अच्छी नींद ली?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "पास आओ, यहीं सोफे पर। या फिर बाहर धूप में टहलते हुए बात करना पसंद करोगे?"

विदुरा ने कहा, "चलो। बाहर चलते हैं। मैं तुम्हें ले चलूंगा।"

सूर्य की हल्की गर्मी मन को सुकून दे रही थी। धृतराष्ट्र ने कहा, "भाई, क्या तुम जानते हो कि मैं अब क्या सोच रहा हूँ? मैं अपने बचपन को याद कर रहा हूँ जब तुम मुझे हाथ पकड़कर शहर के बाहर नदी के किनारे सैर पर ले जाया करते थे। क्या हम थोड़ा और आगे चलें?"

विदुर ने महाराजा का दाहिना हाथ पकड़ रखा था। विदुर के सुरक्षित साथ में महाराजा बिना लड़खड़ाए सहजता से चल रहे थे। विदुर ने पूछा, "महाराज, हमें किस रास्ते जाना चाहिए? यदि हम बाईं ओर मुड़ेंगे तो हम नगर की ओर बढ़ेंगे, लेकिन यदि हम सीधे चलेंगे तो हम गंगा के तट पर पहुँच जाएँगे।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मैं तुम्हें कितनी बार महाराजा कहकर संबोधित करने के लिए डांटूं? विवाह के बाद से मैंने कभी शहर में कदम नहीं रखा। तो चलिए शहर की

ओर चलते हैं।"

विदुरा ने पूछा, "क्या किसी राजा के लिए अपने घोड़े, रथ, छतरी और मालाओं के प्रतीकों के बिना सार्वजनिक सड़कों पर चलना उचित होगा?"

धृतराष्ट्र ने सोचने में सिर्फ एक मिनट का समय लिया। फिर उन्होंने कहा, "ठीक है, मैं अब सिंहासन पर नहीं बैठा हूँ। तो चलिए शहर चलते हैं।"

सड़क पर हल्की धूल थी। उस पर टहनियाँ और अन्य फेंकी हुई चीजें बिखरी पड़ी थीं। साथ ही मानव मल-मूत्र की दुर्गंध भी थी। और चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था।

महाराजा ने पूछा, "विदुरा, यह कैसी दुर्गंध है? क्या कोई सफाई नहीं करता?"

विदुरा ने कहा, "घरों में रहने वाले ही नहीं हैं तो सफाई कैसे हो सकती है? सारे पुरुष या तो युद्ध में लड़ने गए हैं या किसी और तरह से उसमें मदद करने। इस गली की महिलाओं को भी मोर्चे पर बुलाया गया है। घरों में सिर्फ बच्चे, बीमार और बूढ़े ही बचे हैं। वो भी कभी-कभार ही मिलते हैं, कहीं किसी घर में तो कहीं किसी घर में।"

धृतराष्ट्र ने पूछा, "यह किसकी गली है?"

विदुरा ने कहा, "नौकरानियां। उनके बच्चे इसे सूता बस्ती कहते हैं।"

विदुर महाराज को सूत बस्ती में लगभग तीन सौ कदम आगे ले गए। फिर वे दाईं ओर मुड़े और कुछ दूर चलने के बाद उतनी ही दूरी तय करने के लिए फिर से दाईं ओर मुड़ गए। फिर वे कुछ दूर बाईं ओर चले और फिर बाईं ओर मुड़ गए। महाराज ने आश्चर्यचकित होकर पूछा, "विदुर, आप मुझे एक ही दिशा में आगे-पीछे ले जा रहे हैं?"

विदुरा ने कहा, "सूता बस्ती में कुल पाँच गलियाँ हैं। दोनों ओर छोटे-छोटे घर और झोपड़ियाँ हैं। हम अभी सभी गलियों में चल रहे हैं। क्या आपके पैरों में दर्द हो रहा है? क्या हम महल वापस चलें?"

महाराजा को याद आया और उन्होंने पूछा, "विदुरा, याद है जब मैं छोटा बच्चा था, तुम मुझे पूरे शहर में घुमाया करते थे। जहाँ तक मुझे याद है, उस समय यह सूता बस्ती अस्तित्व में नहीं थी।"

विदुर को साठ-पैंसठ साल पहले की बातें याद आ रही थीं। और हस्तिनावती में उस समय घटी घटनाएँ भी। उन्होंने समझाया, "उस समय भी सूत कहलाने वाले लोग थे। लेकिन उनका अपना कोई अलग समुदाय नहीं था। उनकी वर्तमान बस्ती

उस समय पूरी तरह से घने जंगल से घिरी हुई थी, पेड़ों और वनस्पतियों से भरी हुई। और उस समय यह महल कहाँ था जिसमें आप अब रहते हैं? भीष्म का एक महल था, फिर आपकी माता का एक और। और आपकी माता का निवास ही एकमात्र महल था। अभी हाल ही में आपके और आपके चौदह पुत्रों के लिए कई महल बने हैं। आपके पास इतनी सारी नौकरानियाँ हैं। और उन नौकरानियों के लिए झोपड़ियाँ भी हैं। ये सभी जंगल साफ करके बनाई गई हैं। जैसे-जैसे उनके बच्चे होते गए, सूत समुदाय की यह नई बस्ती धीरे-धीरे अस्तित्व में आई। यह इतनी बड़ी हो गई कि अब इसमें पाँच गलियाँ हैं। अब सूत हस्तिनावती का सबसे बड़ा समुदाय है।"

यहां भी, रात की तरह ही, लगातार गूंजती आवाज़ों के अलावा पूर्ण सन्नाटा छाया हुआ था। अगर सूरज तेज़ न होता, तो धृतराष्ट्र इस समय को रात से अलग नहीं कर पाते। सन्नाटे ने दिन और रात दोनों को निगल लिया था। महाराजा ने पूछा, "क्या पूरा सूत समुदाय युद्ध पर चला गया है?"

विदुरा ने कहा, "हां, मेरे अपने परिवार को छोड़कर।"

बूढ़े राजा को इस बात का बहुत दुख था कि उनका अपना मित्र युद्ध से बाहर था। इस बात को टालने के लिए उन्होंने कहा, "पुरुषों का युद्ध में जाना तो समझ में आता है। लेकिन महिलाओं को वहाँ क्यों ले जाया जाए? क्या वे चार दिन भी महिलाओं के बिना नहीं रह सकते?"

जैसे अचानक कुछ याद आ गया हो, विदुर ने उत्तर दिया, "आप ही सबसे अच्छे उत्तर दे सकते हैं! देखिए, कल रात मैं संजय के साथ बाहर गया था। मैं आपको वही बताता हूँ जो उसने मुझे बताया। ऐसा लगता है कि सैनिक मृत्यु के बीच में रहता है। उसके चारों ओर, पीछे, आगे और दोनों तरफ, सैनिक भाले से घायल होकर, हाथियों के पैरों तले कुचलकर या आग में जलकर मारे जा रहे हैं। वह इसे अपना बड़ा सौभाग्य समझेगा कि वह इस भाग्य से बच गया। हाँ, उस अनमोल क्षण का सौभाग्य। वह मृत्यु के विचार से इतना भरा हुआ है कि यदि वह अपने सामने किसी स्त्री को देख ले तो वह उसे पागलों की तरह पकड़ लेगा, उसे पटक देगा और वहीं उसके साथ भोग-विलास करेगा! ऐसा लगता है कि यौन सुख ही व्यक्ति को मृत्यु के अनुभव को भुलाकर कल की लड़ाई लड़ने की शक्ति और साहस देता है।"

धृतराष्ट्र आत्ममग्न हो गए; उन्होंने अनायास ही "हाँ" कह दिया।

विदुरा ने आगे कहा, “लगता है मोर्चे पर महिलाओं की कमी हो रही है, चाहे कितनी भी महिलाएँ भेजी जाएँ! अब तो क्षत्रियों के लिए रखी गई दासियों को भी आम सैनिकों को दिया जा रहा है। जो योद्धा सबसे अधिक संख्या में शत्रुओं को मार गिराने में साहस और कौशल दिखाते हैं, उन्हें हर शाम विशेष सम्मान दिया जाता है। ऐसा लगता है कि चाहे कोई भी पक्ष जीते, मोर्चे पर भेजी गई सभी दासियाँ युद्ध समाप्त होने पर गर्भवती होकर लौटेंगी। उनके गर्भ से ही आने वाली पीढ़ी का जन्म होगा। क्योंकि तब तक अधिकांश क्षत्रिय और योद्धा मर चुके होंगे।”

धृतराष्ट्र को विदुर के उपदेश देने पर कुछ नाराज़गी हुई। उन्होंने मन ही मन कहा, "यह विदुर तो हमेशा ऐसा ही करता है। धर्म के मामलों में खुद को बड़ा विद्वान समझता है। भला कुत्ते को आज़ादी देने पर उससे क्या उम्मीद की जा सकती है? यही कि वह मालिक की गोद में चढ़कर उसका दुरुपयोग करेगा।" उन्हें विदुर पर बहुत गुस्सा आया। लेकिन उन्होंने अपना गुस्सा रोक लिया, क्योंकि उन्हें डर था कि विदुर उनसे मिलना बंद कर देगा और उन्हें एकांतवास में रहना पड़ेगा।

जैसे ही वह आगे बढ़ रहा था, तभी विपरीत दिशा से घोड़े पर सवार कोई तेज़ी से आया। सवार ने लगाम तेज़ी से खींची और महाराजा को अपने सूत मामा विदुर के साथ देखकर रुक गया। धृतराष्ट्र ने पूछा, "आप कौन हैं?"

घुड़सवार ने कहा, "मैं महाराजा कर्ण का दूत हूँ।"

महाराजा, "कर्ण कब से महाराजा बन गया?"

दूत ने कहा, "हम उन्हें इसी नाम से पुकारते हैं। महाराजा दुर्योधन ने स्वयं इस प्रथा को मंजूरी दी है।"

महाराजा, "आप अब कहाँ से आ रहे हैं?"

दूत, "मोर्चे से। कर्ण के परिवार को समाचार देने के लिए। कल भीष्म के सर्वोच्च सेनापति पद से हटने के बाद, द्रोणाचार्य को यह पद सौंपा गया। महाराजा कर्ण अपनी इस बात पर अड़े रहे कि वे भीष्म के नेतृत्व में युद्ध नहीं करेंगे। भीष्म के जाने के बाद ही, यानी कल, कर्ण ने युद्ध के लिए धनुष उठाया। जब तक वे युद्ध से दूर रहे, एक भी सूत ने युद्ध में भाग नहीं लिया। और न ही किसी दासी ने सैनिकों और योद्धाओं का उत्साह बढ़ाने में अपना पूरा मन लगाया। लेकिन महाराजा कर्ण के आते ही, हमारे सूत पागलों की तरह लड़ने लगे। क्या आप जानते हैं कि वे कितनी तेजी से शत्रुओं का सफाया कर रहे हैं? मैं महाराजा कर्ण के घर यह समाचार देने जा रहा हूँ।"

महाराजा, "कर्ण का घर कहाँ है?"

दूत ने कहा, "वहाँ, उस अगली गली में। वह इमारत जो इतनी प्रमुखता से दिखाई देती है। वह एक दो मंजिला महल है।"

विदुर को यह नहीं पता था कि सूत कर्ण के समर्थन में युद्ध से हट गए थे। उन्हें आश्चर्य हुआ कि क्या संजय ने जानबूझकर यह खबर उनसे छुपाई थी। और, ज़ाहिर है, यह दावा नहीं किया जा सकता था कि संजय को इसकी जानकारी नहीं थी। यह इतनी महत्वपूर्ण घटना थी कि इसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता था। कर्ण का अपने समुदाय पर जो प्रभाव था, उसे देखकर विदुर थोड़ा कांप उठे। उन्होंने मन ही मन पूछा, "संजय ने मुझसे यह बात क्यों छुपाई? क्या उन्हें लगा कि मैं कर्ण से ईर्ष्या करूंगा?" इससे उन्हें तुरंत कुंती द्वारा उन पर लगाए गए आरोप की याद आ गई। उन्होंने सोचा, "मेरा समुदाय मुझे आदर और सम्मान देता है। लेकिन कर्ण ने ही उनका सारा प्रेम और स्नेह जीत लिया है। शायद इसलिए कि मैं उनके समुदाय से दूर, नदी के किनारे अकेला रहता हूँ।" इस विचार मात्र से ही वे ठंडी हवा के झोंके की तरह कंपकंप पड़े।

दोपहर में विदुर घर लौट आए। उन्हें कुंती के चेहरे को सीधे देखने से डर लग रहा था। लेकिन किसी से बात किए बिना समय बिताना भी मुश्किल था।

—•⁕•—

अध्याय 63

झील से बाईं ओर मुड़कर रथ रोककर सारथी रथ से उतरा और थके हुए भीष्म का हाथ पकड़कर उन्हें नीचे उतरने में मदद की। वे झील के किनारे एक आरामदायक जगह पर बैठ गए। सारथी तकिए लाने के लिए रथ की ओर भागा। तकिए पर बैठने के बाद भीष्म ने निश्चय किया कि अब उन्हें सारथी की कोई आवश्यकता नहीं है

और उसे विदा कर देना चाहिए। उन्होंने उससे कहा, "वापस जाओ।" लेकिन वह योद्धा के सामने मूक व्यक्ति की तरह खड़ा रहा। अचानक उसके मन में एक नया विचार आया। उसने सोचा, "मैं, एक क्षत्रिय, पलंग पर कैसे मर सकता हूँ? खैर, मुझे अपने अंतरात्मा के सामने शर्म आ रही है। नहीं, मुझे मोर्चे पर वापस जाना चाहिए और आम सैनिकों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ना चाहिए और किसी भी बाण से मर जाना चाहिए। लेकिन नहीं, कर्ण अगला सर्वोच्च सेनापति होगा। मैं उसके अधीन लड़ने के लिए कैसे वापस जा सकता हूँ?" सारथी अभी भी खड़ा था। उसे एक मिनट लगा एक समाधान खोजने में। उसने सारथी से पूछा, "देखो, क्या रथ में बाण हैं?"

सारथी ने कहा, "औपचारिकता के लिए, यहाँ केवल तीन तीर हैं। अलग-अलग आकार के।"

भीष्म ने कहा, "रथ लेकर जल्दी जाओ और बाणों का पूरा भंडार लेकर लौट आओ। किसी भी आकार के बाण चलेंगे। अब धनुष और तीनों बाण यहाँ रख दो और तकिए हटा दो।"

बैठने के बाद, वह धँसी हुई आँखों से रथ को तब तक देखता रहा जब तक वह उसकी दृष्टि से ओझल नहीं हो गया। लेकिन वास्तव में वह उसे देख नहीं पा रहा था क्योंकि धूल चारों ओर फैल रही थी, हर जगह नाच रही थी, रथ को उसकी दृष्टि से ओझल कर रही थी। उसने सोचा, "मैंने ऐसी धूल कभी नहीं देखी, जो धरती से आकाश तक उठकर दोनों को जोड़ रही हो। लेकिन आकाश स्वयं गिद्धों से बुने हुए कपड़े जैसा है! वे अपने फड़फड़ाते पंखों से आकाश को ऐसे काला कर रहे हैं मानो वे काले, वर्षा लाने वाले बादल हों! उनकी परछाइयाँ धरती पर अंधकार की वर्षा की तरह गिर रही हैं! ईश्वर ही जाने क्या वे मृत्यु के सड़ते और जलते हुए मांस की गंध से युद्धक्षेत्र की ओर खींचे चले जाते हैं; या क्या उनकी पैनी आँखें दूर-दूर तक देख पाती हैं और पहाड़ियों की तरह ढेर लगे शवों को देख लेती हैं।" तभी उसे पीछे से कुछ शोर सुनाई दिया। उसने पीछे मुड़कर देखा तो उसे दो गिद्ध और एक कुत्ता, मात्र बीस कदम की दूरी पर दिखाई दिए। "क्या वे सोचते हैं कि मैं मर चुका हूँ! या शायद उन्होंने सूंघ लिया कि मैंने जीवन त्यागने का मन बना लिया है। शायद पक्षियों और जानवरों में मृत्यु को भांपने की कोई विशेष क्षमता होती है..." उसने उन्हें गोली मारकर भगाने की कोशिश की। वह खड़ा हुआ और उन्हें भगाने के लिए अपने हाथ ऐसे हिलाने लगा जैसे उन्हें पीट रहा हो। वे टस से मस नहीं हुए और

बिना किसी डर के वहीं बैठे रहे। दोनों गिद्ध वहीं उछल पड़े और नंगी गर्दनों से उसकी ओर घूरने लगे। कुत्ता भी उम्मीद भरी निगाहों से उसे देख रहा था। खड़ा रहना मुश्किल पाकर वह बैठ गया। उसे धातु का धनुष इतना भारी लगा कि वह उसे पकड़ नहीं पा रहा था, मानो उसकी जिंदगी का बोझ ही इतना भारी हो! उसे ऐसा लगा जैसे उसकी जिंदगी धरती की गोद में एक बहुत बड़ा बोझ हो! तभी उसने गिद्धों के पंखों की फड़फड़ाहट सुनी और वे दो छलांगें लगाने लगे। उसका मन पीछे मुड़कर देखने या भागने का नहीं हुआ। दूर से उसने लोगों को बड़े-बड़े बर्तनों में पानी भरते और उन्हें ले जाते देखा। उसे शिविर की जगह का ठीक-ठीक पता नहीं था। वह जानता था कि शिविर किस दिशा में जा रहा है, इसका पता लगाना नामुमकिन था, क्योंकि एक के बाद एक जगह मरे हुए और मरते हुए मांस की दुर्गंध से असहनीय होती जा रही थी और जानवर उसे खा रहे थे। भीष्म ने सोचा, "यह दुर्योधन, जो कुछ समय पहले तक मेरी चापलूसी करता और मुझे प्रणाम करता था, अब अहंकारी और अकड़ू हो गया है। इसमें इतनी धृष्टता है कि वह मेरे सामने मुझसे कहता है, 'दादाजी, पराजय की जिम्मेदारी हमेशा सर्वोच्च सेनापति की होती है। जब आपका सारा प्रेम और स्नेह उन्हीं की ओर बहता है, तो आप हमें विजय कैसे दिला सकते हैं?' उसने यह कब कहा? क्या यह कल था या परसों? और ये शब्द उस व्यक्ति के मुँह से, जो दिन में चार बार मेरी चापलूसी करता था, मुझसे कहता था, 'कृपया मेरी स्थिति पर विचार करें, क्योंकि मैंने आपकी अतुलनीय वीरता पर भरोसा करते हुए कर्ण को बाहर रखा था।'..." भीष्म ने कल्पना की कि उन्होंने एक बार फिर गिद्धों को उछलते हुए सुना। वे उड़ रहे थे जहाँ वे हजारों मृत मनुष्यों, घोड़ों और हाथियों के शवों पर दावत कर सकते थे। उस बूढ़े योद्धा ने मन ही मन पूछा, "वे एक ऐसे बूढ़े को क्यों चाहते हैं जो अभी मरा नहीं है? इन गिद्धों के दादा-परदादाओं ने भी कभी एक जगह पर इतनी बड़ी संख्या में लाशें और शव नहीं देखे थे! अब जब सारे पुरुष मर चुके हैं, तो वे मुझे अभी भी जीवित ही अपनी चोंचों से छेदना चाहते हैं।" भीष्म को हाल की घटनाएँ याद आईं — हस्तिनावती और उनके द्वारा स्थापित और संरक्षित कुरु वंश। उनके स्वामी एक आधी रात को आए और उन्हें जगाकर कहा, "राजा को उस सेनापति को हटाने का अधिकार है जो विजय नहीं दिला सकता और उसकी जगह किसी अधिक सक्षम सेनापति को नियुक्त करने का। लेकिन मैं एक अजेय योद्धा के रूप में आपकी लंबे समय से चली आ रही प्रतिष्ठा को धूमिल नहीं करना चाहता। हालांकि, एक शासक

के रूप में मेरा कर्तव्य है कि मैं आपके काम को देखूं और फिर अपना अंतिम निर्णय लूं।"

मैंने पूछा, 'आप मुझसे क्या करने की उम्मीद करते हैं?'

दुर्योधन ने कहा, 'देखो कि कर्ण युद्ध में वापस आ जाए। तुम्हें अपने रथ के साथ आगे बढ़ते रहना होगा।'

मैंने कहा, 'तो क्या इसका मतलब यह है कि मुझे कर्ण के तम्बू में जाकर उससे क्षमा मांगनी चाहिए?'

"यह आदेश मुझे कुरु वंश के सिंहासन से मिला है, जिसे मैंने स्थापित किया और जिसकी रक्षा की! एक राज्य का शासक किसी को भी कुछ भी करने का आदेश दे सकता है। आप शिक्षकों, बड़ों और यहाँ तक कि जिन्होंने आपकी जान बचाई है, उन्हें भी सत्ता के नाम पर आदेश दे सकते हैं! हाँ, अब मुझे याद आ रहा है कि यह सर्दी का मौसम है। सूरज नहीं है। आसमान बादलों से घिरा है। खैर, शासक जीवन रक्षकों, वंश रक्षकों और राज्यों के रक्षकों को आदेश दे सकता है। मेरे इस बूढ़े शरीर की मुरझाई, झुर्रीदार त्वचा कब तक इस ठंड को सहन कर पाएगी? यह ऐसी ठंड है जो त्वचा को और भी मुरझा देती है। सेना के बीच में, मुझे कभी ऐसा महसूस नहीं होता था, जैसा अब काले बादलों के बीच महसूस हो रहा है, काले बादल गिद्धों के रूप में धरती पर उतर रहे हैं। सर्दी की बारिश अभी तक नहीं आई है। शायद यह युद्ध के समाप्त होने का इंतजार कर रही है, ताकि बाद में यह बरसकर उसके विनाश और खंडहरों को धो डाले! बारिश से धरती भीगने और साफ होने के बाद, हवाएँ अपना खेल खेलेंगी।"

छुरी जैसी ठंड के घावों से भी बदतर है वो दुर्गंध, जो जान ले लेती है। क्या दुनिया में गिद्धों की संख्या मनुष्यों की संख्या से अधिक है?... पीछे से भीष्म ने गिद्धों के पंखों की फड़फड़ाहट सुनी। वे अपनी सीट पर घूम गए। उन्होंने देखा कि गिद्ध पास आ रहे हैं, लेकिन अभी तक पूरी तरह से तृप्त और संतुष्ट होने के कारण हमला करने को तैयार नहीं थे। कुत्ता भी थोड़ा पास आ गया। वह लेट गया और उन्हें घूरने लगा। भीष्म ने उसकी प्रशंसा करने के लिए मुंह खोला, "शाबाश!" उसने अपनी पूंछ हिलाई, लेकिन अपनी जगह से नहीं उठा। भीष्म सोचने लगे, "यह जानवर क्या कर रहा है?" उन्हें पूरा विश्वास था कि जब तक उनकी जान नहीं निकल जाती, वे उन पर हमला नहीं करेंगे। उन्होंने सोचा, "मैं वही हूं जिसने आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत लिया था और फिर नदी के दूसरे किनारे पर एक कुटिया

में रहने चला गया था ताकि वेदों का अध्ययन कर सकूं। और अब मैं इस गिद्ध को वहीं बैठे पंख फड़फड़ाते हुए देख रहा हूं। ऐसा नहीं लगता कि यह मेरी ओर बढ़ रहा है।" फिर मैं राज्य को बचाने के लिए एक बार फिर वापस लौट आया। मेरे सौतेले भाई एक बूढ़े, बीमार आदमी के कमज़ोर वीर्य से पैदा हुए थे, और ऐसे भाइयों के लिए मैंने सुंदर, कोमल और शक्तिशाली लड़कियाँ जीतीं। हाँ, मुझे पता है। अम्बे, मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया। हाँ, अब मुझे एहसास हो रहा है कि मुझे तुम्हारी इस ज़िद को मान लेना चाहिए था कि मैं तुम्हारे साथ हुए अन्याय को तुमसे शादी करके ही ठीक कर सकता हूँ। शायद अगर मैंने ऐसा किया होता, तो कुरुओं की कहानी इस दुखद मोड़ पर नहीं पहुँचती। मैं एक नकारात्मक शक्ति बना रहा, महज़ एक रक्षक और संरक्षक, दंड देने का अधिकार रखने वाला पिता नहीं। एक बार रक्षक सफलतापूर्वक अपना बचाव कर लेता है, तो सिंहासन अपने रक्षक और रक्षक को नष्ट कर सकता है! उसका मुँह अपने आप खुल गया। क्या मैं हंस रहा हूँ?" अपने इस कृत्य पर संदेह से घिरे होने के बावजूद, कुत्ता अपनी पूंछ हिलाता रहा। कड़ाके की ठंड से बूढ़े योद्धा के मुरझाए शरीर की हड्डियाँ तक जम रही थीं। ठंड पास की झील से आ रही थी। उसने सोचा, "काश इस रक्त में नदी के बहते पानी की तरह अनंत दूरी तक निरंतर बहने की शक्ति होती... पर नहीं, यह तो झील के पानी की तरह सीमित स्थान में सिमटा हुआ था..." उसने दर्द कम करने के लिए अपने शरीर को फैलाना और फैलाना शुरू किया। तभी उसे एक रथ के आने की आवाज सुनाई दी। उसने बाईं ओर मुड़कर देखा। यह एक राजसी रथ था, जिसे सजे-धजे सफेद घोड़े खींच रहे थे। स्वयं दुर्योधन उससे मिलने आया था। राजसी रथ के पीछे तीन नहीं, बल्कि चार रथ थे जिनमें अंगरक्षक सवार थे, और महाराजा रथ से उतर गए। उन्होंने भीष्म को प्रणाम किया और उनके पास बैठ गए। रथ कुछ दूरी पर खड़े थे।

—•✳•—

अध्याय 64

दुर्योधन, "दादाजी, मैंने सुना है कि आपने बाणों की सेज बनाकर उस पर लेटने का फैसला किया है। इस पूरे आर्यावर्त में क्षत्रिय आचार संहिता का ज्ञान आपको कौन है? लेकिन कृपया सीधे हस्तिनावती जाइए। महल में..." भीष्म कुछ नहीं बोले। वे चुपचाप बैठे गिद्धों को घूरते रहे। दुर्योधन ने भी उसी दिशा में देखा। वह उठे, दोनों हाथ ऊपर उठाए, ताली बजाई और पक्षियों को डराने के लिए चिल्लाए। लेकिन उन्होंने उनकी कोशिशों पर ध्यान नहीं दिया। फिर उन्होंने वहीं पड़ा धनुष उठाया और बाण चलाने की कोशिश की।

दादाजी ने मुंह खोला और कहा, "उन पर गोली मत चलाओ।"

दुर्योधन ने पूछा, "क्यों नहीं?"

भीष्म ने कहा, "अगर तुम उन्हें मार डालोगे, तो दो, चार या दस, न जाने कितने गिद्ध आकाश में मंडराते हुए हम पर टूट पड़ेंगे। जब वे झुंड में आते हैं तो धरती पर ऐसी कोई शक्ति नहीं है जो उन्हें रोक सके।"

दुर्योधन ने कहा, "इसीलिए मैंने आपको महल जाने का सुझाव दिया था।"

भीष्म ने कहा, "मैंने जिस हस्तिनावती का निर्माण किया था, वह अब नहीं टिकेगी। चाहे तुम जीतो या वे जीतें, उसका भाग्य तय हो चुका है।"

दुर्योधन ने कहा, "हाँ, तुमने इसे बनाया, मैंने इसे विकसित किया। हम सब इसे बर्बाद होने से बचाने के लिए बहुत मेहनत कर रहे हैं।"

भीष्म ने कहा, "अगर ऐसा है तो यही हमारा आखिरी मौका होगा। अगर मैं मर गया तो पांडवों से बात करने, उन्हें सलाह देने वाला कोई नहीं बचेगा। शायद किसी और दिन, किसी और समय, कोई ऐसा व्यक्ति आ जाए जो यह सुनिश्चित कर सके कि आपकी मूंछें धरती को न छूएं और पांडवों को भी न्याय मिले। मेरा शरीर अब शक्तिहीन हो गया है क्योंकि यह भोजन और पानी के बिना कमजोर होता जा रहा है।"

दुर्योधन, "मुझे आपसे ऐसी ही बात की उम्मीद थी। यहाँ आने से पहले मेरे मन में एक और बात आई है। अगर मैं उसका ज़िक्र करूँ तो आप नाराज़ तो नहीं होंगे ना?"

भीष्म, “मैं दुर्योधन नहीं हूँ जो आसानी से क्रोधित हो जाऊँ।”

दुर्योधन, "तुमने हमारा सर्वोच्च सेनापति बनने की सहमति इस सोच के साथ दी थी कि अगर तुम उस पक्ष का इस तरह नेतृत्व करोगे कि उसकी सेना का एक बड़ा हिस्सा नष्ट हो जाए, तो मैं शांति और समझौता करने के लिए विवश हो जाऊंगा। तुमने पिछले दस दिनों में मेरी सेना को इस हद तक नष्ट करने की अपनी योजना को अंजाम दिया। क्या यह सच नहीं है?"

भीष्म ने उसे तीक्ष्ण दृष्टि से देखा। उन्होंने अपने पोते के चेहरे में आकाश में मंडराते गिद्धों की आंखें देखीं। हालांकि, दुर्योधन ने अपनी आंखें नहीं झपकाईं।

भीष्म ने कहा, "तुम बड़े बुद्धिमान हो। मुझे अपना सर्वोच्च सेनापति बनाने में तुमने बड़ी चतुराई दिखाई। तुमने यह खबर फैलाई कि मैं तुम्हारी सेनाओं का नेतृत्व करने वाला हूँ और उनकी सेनाओं से अनेक समर्थक जुटाने में सफल रहे। फिर तुमने यह भी अनुमान लगाया कि मेरे नेतृत्व में पांडव धर्मनिष्ठा से पूरी तरह भ्रमित हो जाएँगे और शायद हमसे युद्ध करने से इनकार कर दें। तुम यह भी जानते थे कि उनकी सेना हमारी सेना से अपेक्षाकृत छोटी थी। तुमने सोचा कि इन सभी परिस्थितियों से तुम्हें उन्हें आसानी से और करारी हार देने में मदद मिलेगी। इसीलिए तुमने मेरे चरणों में गिरकर मुझसे सर्वोच्च सेनापति बनने की विनती की। क्या मैं सही हूँ?"

दुर्योधन ने बूढ़े योद्धा से अपनी निगाहें हटाकर झील को निहारना शुरू कर दिया। उसके गले में शब्द अटक गए। उसे डर था कि अगर वह चुप रहा तो उसके दादाजी इसे अपने आरोपों की स्वीकृति मान लेंगे, इसलिए उसने कहा, "आज शिखंडी ने आप पर बहुत बड़ा उपकार किया है।"

भीष्म ने मानो अनसुने ही कहा, "मैं तुम्हें अब तक के युद्ध का पूरा ब्यौरा देता हूँ। युद्ध में अपनी हार, असफलताओं और पराजय का दोष मुझ पर मत डालो। मैं तुम्हें स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि कोई भी, जी हाँ, कोई भी, इस युद्ध को जीवन-मरण का मामला समझकर नहीं लड़ रहा है, जीवन के लिए जीवन से नहीं लड़ रहा है। बेशक, तुम अकेले हो जो इस तरह से युद्ध लड़ रहे हो। लेकिन तुम एक योद्धा से कहीं बेहतर युद्ध प्रबंधक हो। उनकी तरफ देखो। भीम को ही ले लो। उसे मृत्यु का कोई ज्ञान नहीं है, और इसीलिए वह जीवन से नहीं डरता। वह इस गहरे और अटल विश्वास से प्रेरित है कि अगर वे अभी नहीं जीते तो उनका जीवन नहीं बचेगा। यही बात बाकी चारों पर भी लागू होती है। यहाँ तक कि धर्मराज, जो अपने भाइयों

के समान योद्धा नहीं हैं, भी अपने सैनिकों को प्रेरित करने के लिए पर्याप्त वीरता से लड़ने में सक्षम हैं। जहाँ तक अर्जुन की बात है, यह सर्वविदित है कि वह एक अत्यंत कुशल योद्धा हैं और उन्हें किसी चीज से डर नहीं लगता। हार का अपमान। हालाँकि नकुल और सहदेव ज़्यादा कुछ नहीं कहते, वे अपने वर्तमान जीवन से तंग आ चुके हैं। धृष्टद्युम्न कुरु वंश के प्रति पुरानी दुश्मनी पाले हुए है। वह अपने पिता को द्रोण द्वारा दिए गए अपमान को नहीं भूला है। साथ ही, अपनी बहन के अपमान का बदला लेने की तीव्र इच्छा भी उसके मन में है। ये शब्द पांडवों के पुत्रों, घटोत्कच और अन्य पर भी लागू होते हैं। फिर द्वारका से आया यह युयुधन। उसका नाम क्या है? मुझे लगता है सत्यकी। कहा जाता है कि वह बलराम को शत्रु पक्ष में, यानी हमारे पक्ष में आने का सबक सिखाने के लिए बहुत उत्सुक है। अब, मुझे आप को छोड़कर एक भी ऐसा व्यक्ति दिखाइए, जिसके मन में इतनी तीव्र शत्रुता और प्रतिशोध की भावना हो।

दुर्योधन की निगाहें दूर बैठे गिद्धों पर टिकी रहीं। फिर उनकी नज़र थोड़ी सी अंतर्मुखी हुई। उन्होंने संक्षिप्त उत्तर दिया, "इसीलिए तो मैंने द्रोण को तुम्हारे स्थान पर सर्वोच्च सेनापति बनाया है।"

भीष्म ने कहा, "अरे! क्या आपने द्रोण को अपना नया सेनापति बना दिया? उन्हें पंचालों से द्वेष था। लेकिन उन्होंने द्रुपद को बंदी बनाकर और उनके आधे राज्य पर विजय प्राप्त करके पहले ही इसका बदला ले लिया था। द्रुपद और धृष्टद्युम्न का द्वेष द्रोण के प्रति द्वेष से कहीं अधिक है। लेकिन अगर है भी, तो वह पांडवों के प्रति नहीं बल्कि पंचालों के प्रति है। आखिर पांडव भी द्रोण के शिष्य थे। आपने उन्हें भोजन देकर अपने ऋणी बना लिया है। बताइए, इन परिस्थितियों में आपके पास और क्या विकल्प था? यदि आपने अपने मित्र कर्ण को चुना होता, तो द्रोण निश्चित रूप से युद्ध से हट जाते। न केवल द्रोण, बल्कि अश्वत्थामा और कई अन्य क्षत्रिय शासक भी। एक सूत के नेतृत्व में कौन युद्ध करना चाहेगा? इसलिए, मान लीजिए कि आपको द्रोण को ही चुनना पड़ा।"

दुर्योधन ने कहा, "तुम गर्म कपड़े पहन लो और अच्छा भोजन कर लो। मैं तुम्हारे लिए एक झोपड़ी बनवा दूंगा। भूख से मरने का अपना इरादा छोड़ दो ताकि तुम युद्ध में कर्ण का प्रदर्शन देख सको।"

भीष्म ने कहा, "तुम्हारा कर्ण मूर्ख है। मैंने उसे आधा रथी कहा था, और शायद मैंने उसके साथ थोड़ा अन्याय किया। वह रूठकर बैठा रहा, भीष्म के नेतृत्व में

लड़ने से इनकार कर दिया, अपने स्वामी को होने वाले नुकसान की परवाह किए बिना। सच में, अगर उसके मन में पांडवों के प्रति सचमुच क्रोध और प्रतिशोध की भावना होती, तो क्या वह दस दिन तक अपने तम्बू में दुबक कर बैठा रहता? युद्ध के दौरान कोई ऐसा कैसे कर सकता है? वह तो बस युद्ध से बचने का बहाना ढूंढ रहा था।"

दुर्योधन ने कहा, "शुरू से ही तुम दोनों की आपस में नहीं बनती थी। तुमने उसे उकसाने और क्रोधित करने का कोई मौका नहीं छोड़ा। अभी भी तुम वही कर रहे हो। क्या उसे आत्मसम्मान नहीं होना चाहिए?"

"अपने स्वामी की पराजय से भी अधिक महत्वपूर्ण?" यह कहते हुए भीष्म कुछ देर के लिए रुक गए। दुर्योधन ने उन्हें हांफते हुए पाया। संभलने के बाद भीष्म बोले, "तुमसे बहस करने से मुझे क्या लाभ होगा? मैं बोलते-बोलते मरना नहीं चाहता। शायद मैं एक दिन तक जीवित रहूँ। आज रात तो मैं अपने ऊपर कंबल भी नहीं ओढ़ूँगा। यदि ठंड और बढ़ गई, तो संभव है कि आज रात ही मेरा अंत हो जाए। मुझे अपने अंतिम शब्द कहने दो। यदि मरने से पहले तुम उन्हें अपने भाई के रूप में स्वीकार करने को तैयार हो, तो मैं शांतिपूर्ण समाधान निकालने के लिए पहल करने को तैयार हूँ। मेरे जाने के बाद, मैं तुम्हें चेतावनी देता हूँ कि चाहे तुम शांति के लिए कितनी भी जोर से प्रार्थना करो, तुम्हें शांति कभी नहीं मिलेगी!" फिर उन्होंने दुर्योधन के रथों को ध्यान से देखा। हाँ, उन्होंने अपने आदमी को वहाँ खड़ा देखा। उन्होंने उसे बुलाने के लिए उंगलियों से इशारा किया। उनका सारथी, जो अपने बाण लाने गया था, पास आया। भीष्म ने उससे पूछा, "क्या तुम उन्हें ले आए हो?"

सारथी, "हाँ।"

भीष्म ने कहा, "तो फिर मेरे लिए बाणों की शय्या तैयार करो।"

दो सैनिक बाणों को अपनी भुजाओं में दबाए हुए लाए और उन्हें ढेर कर दिया। सारथी ने उन्हें बिस्तर की तरह सजा दिया। भीष्म उठे और बाणों के बिस्तर पर बैठ गए। उनकी बूढ़ी हड्डियाँ बिस्तर की असहनीय सतह पर दर्द करने लगीं। फिर उत्तर दिशा की ओर सिर करके, वृद्ध योद्धा दर्द के इस बिस्तर पर पीठ के बल लेट गए, चेहरा आकाश की ओर। उनकी आँखें ऊपर असीम आकाश की ओर थीं।

दुर्योधन पास आकर खड़ा हो गया। भीष्म ने इसे देख लिया। लेकिन उन्होंने उसकी ओर दृष्टि नहीं डाली। उन्होंने "दादाजी" कहकर पुकारा। कोई उत्तर नहीं

मिला। उन्होंने फिर कहा, "इस तरह मरने का क्या अर्थ है? कृपया मेरे इस एक प्रश्न का उत्तर दीजिए।"

भीष्म, "यदि जीने का कोई अर्थ नहीं है, तो मृत्यु को निरर्थक नहीं कहा जा सकता। काश मुझे उपवास करके मृत्यु को प्राप्त होने से बेहतर कोई मार्ग ज्ञात होता। बाणों की इस शय्या को जलाकर मृत्यु को प्राप्त होना संभव है। उस झील में गिरकर भी मृत्यु को प्राप्त होना संभव है। ये सब स्वयं पर अत्याचार करने के तरीके हैं। आप जैसे व्यक्ति के लिए इस प्रकार मरना संभव नहीं है, जो हर पल जीवन के एक किनारे से मृत्यु के दूसरे किनारे की ओर बहता जा रहा है। कृपया मुझसे बातचीत में उलझकर मुझे और अधिक परेशान न करें। अंत में प्राण त्यागने से पहले मैं कुछ चिंतन करना चाहता हूँ।" फिर उस वृद्ध योद्धा ने अपनी आँखें बंद कर लीं।

कुछ देर बाद भीष्म को दुर्योधन के कदमों की आहट सुनाई दी। फिर उन्हें रथों के दूर जाते हुए और आकाश के सन्नाटे में विलीन होते हुए सुनाई दिए। उन्होंने अपनी आँखें खोलीं और उनकी दृष्टि आकाश के नीले-काले विस्तार में विलीन हो गई। वे काले बादलों से ऊब चुके थे। उनका आदर्श आकाश सफेद, स्वच्छ और निर्मल होना चाहिए था। या फिर चमकीला नीला होना चाहिए था। उन्होंने अपनी आँखें बंद कर लीं। अचानक उन्हें अपराधबोध हुआ कि पिछले दस दिनों में इतने सारे सैनिकों की मृत्यु का कारण वे ही बने थे। इस विचार मात्र से ही उन्हें पसीना आ गया। कुछ क्षणों के लिए ऐसा लगा जैसे उनके शरीर में रक्त संचार रुक गया हो। इतने सारे लोगों को इसलिए मार डाला गया ताकि कुरु वंश, जिसे वे अपना मानते थे, बचाया जा सके। उनके मन में एक गहरी खामोशी छा गई। जब उन्हें होश आया, तो सबसे पहले उन्हें शुका याद आया। उन्हें इस बात का गहरा दुख हुआ कि उन्होंने उसे एक बार भी नहीं देखा था। उन्होंने सोचा कि उनके मन में शुका के लिए इतना लगाव क्यों पैदा हो गया था, लेकिन जल्द ही उन्हें एहसास हुआ कि शुका, रिश्ते के लिहाज से, उनके लिए पुत्र समान था। उसने फिर से अपनी आँखें खोलीं। वही नीरस आकाश, वही काले बादल। अब उसे आकाश में चार-पाँच गिद्ध चक्कर लगाते दिखाई दे रहे थे, मानो समय आने पर उस पर हमला करने की तैयारी कर रहे हों। वह भली-भांति जानता था कि अगर एक भी गिद्ध उस पर झपट्टा मारकर अपनी चोंच से उसे भेद दे, तो उसका अंत हो जाएगा। एक पल के लिए वह डर से काँप उठा। उसने अपने दाहिनी ओर से उनके पंखों के

फड़फड़ाने की आवाज़ सुनी। उसने देखने के लिए अपना सिर घुमाया। उसने देखा कि दो गिद्ध उसकी ओर फुदकते हुए आ रहे हैं। उनके पीछे कुत्ता भी था। उसे ऐसा लग रहा था मानो पिछले दस दिनों में युद्ध में हुए नरसंहार से आकर्षित लाखों गिद्धों का भार इन दो गिद्धों के रूप में उसके सिर को कुचल रहा हो। तभी अचानक उसे लगा कि कोई तीर चला रहा है। फिर उसने अपने से दूर जाते पंखों की आवाज़ सुनी। वह उस दिशा में मुड़ा। उसने एक सैनिक को पक्षियों पर तीर चलाते देखा। उसने उंगलियों से इशारा करके सैनिक को अपने पास बुलाया। उसने उससे पूछा, "तुम कौन हो?"

उसने उत्तर दिया, "मैं एक सिपाही हूँ, महाराज। महाराजा ने मुझे आपको गिद्धों, कुत्तों और सियार के हमलों से बचाने का कार्य सौंपा है। उन्होंने कहा है कि रात में मेरी सहायता के लिए वे एक और सिपाही भेजेंगे। उन्होंने मुझे आदेश दिया है कि यदि आपकी मृत्यु हो जाए तो मैं उन्हें तुरंत सूचित करूँ। वे आपके पार्थिव शरीर का विधिपूर्वक अंतिम संस्कार करना चाहते हैं, न कि उसे गिद्धों का भोजन बनने देना चाहते हैं।"

भीष्म एक क्षण के लिए चुप रहे। आकाश में ऊँचे उड़ते गिद्ध बाणों की पहुँच से बाहर थे। उन्होंने कहा, "मुझे किसी की निगरानी और सुरक्षा की ज़रूरत नहीं है। आप तुरंत यहाँ से चले जाइए।"

सिपाही ने कहा, "मैं शाही आदेश के विरुद्ध नहीं जा सकता।"

भीष्म ने कहा, "देखो। मैं शांति से, बिना किसी बाधा के मरना चाहता हूँ। कृपया जाओ।"

सिपाही ने कहा, "दादाजी, यह राजघराने का आदेश है। अगर मैं आपको अकेला छोड़कर चला गया, तो महाराजा मुझे दंडित करेंगे।"

वह चुप हो गया। उसकी आँखें आकाश को निहार रही थीं। उसे बस अपने शब्द सुनाई दिए, "अगर तुम मुझे अपने पास नहीं चाहते, तो मैं दूर ही रहूँगा," और उसे अपने कदमों की आहट भी सुनाई दी जो दूर जा रहे थे। आकाश अब सफेद, साफ और निर्मल था। बादल नीले और काले थे, जो काले घेरों में एक-दूसरे में विलीन होते गिद्धों से घिरे हुए थे। उसकी जांघों से नीचे का शरीर सुन्न हो गया था। वह धीरे से बैठ गया। फिर वह झील की ओर मुँह करके खड़ा हो गया। पानी की ठंडी सतह से ठंडी हवा चल रही थी। सबसे पहले उसने अपने दाहिने हाथ से अपना सिर का कवच उठाया और फेंक दिया। कवच चार-पाँच फीट दूर लुढ़कने के बाद, उसने

अपना कवच उतार दिया। फिर उसने अपनी कमरबंद ढीली की। फिर उसने योद्धा शैली में पहनी हुई धोती उतारकर कुछ फीट दूर फेंक दी। अब वह केवल अंतर्वस्त्र में था, और उसका शरीर ठंड से काँपने लगा। कुछ दूरी पर खड़ा सिपाही इस दृश्य को पूरी तरह से असमंजस और आश्चर्य से देख रहा था। सिपाही ने सोचा कि गिद्धों से भरे उस इलाके में अकेले खड़े इस बूढ़े आदमी की उम्र किसी को नहीं पता होगी। उसकी दाढ़ी सफेद थी, सिर गंजा था, बाल सफेद थे, दांत नहीं थे और मुंह गुफा जैसा था। सिपाही ने सुना था कि वह पूरे कुरु वंश का दादा था। सिपाही ने मन ही मन पूछा, "वह यहाँ नंगे बदन क्यों खड़ा है? क्या वह गिद्धों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए ऐसा कर रहा है? उसका शरीर पीले और लाल रंग का मिश्रण था, झुर्रीदार त्वचा से ढका हुआ था। उसके मुरझाए शरीर से कहीं-कहीं सफेद पुराने बाल निकले हुए थे।" सिपाही ने अपनी आँखें मलकर उस बूढ़े योद्धा को देखा। उसे समझ नहीं आ रहा था कि गिद्ध ने बूढ़े आदमी का रूप धारण किया है या बूढ़े ने गिद्ध का रूप धारण किया है! उसने बेहतर देखने के लिए अपनी आँखें मलीं।

वह बूढ़े आदमी और गिद्ध में फर्क नहीं कर पा रहा था। गिद्धों की गर्दन लंबी थी, उन पर लाल मांस के टुकड़े चिपके हुए थे, और वे बूढ़े आदमी की ओर बढ़ रहे थे। सिपाही असमंजस में था कि उन्हें तीरों से भगाए या नहीं। गिद्ध लगातार करीब आते जा रहे थे। आसमान में उड़ रहे गिद्ध नीचे झपटने लगे। एक-एक करके, एक इधर, एक इधर, नियमित रूप से नीचे आते रहे। वे अभी तक अपने शिकार पर हमला करने के लिए बेचैन नहीं लग रहे थे। वे बूढ़े आदमी को ऐसे घेर रहे थे मानो वह झुंड में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया कोई दूसरा गिद्ध हो। सिपाही सचमुच डर गया। उसने सोचा कि वह एक बार में एक गिद्ध पर एक तीर चला सकता है। ऐसा भी हो सकता है कि तीर उनके मांस को भेद न पाए, पंखों से टकराकर मुड़ जाए। वह डर से कांप उठा जब उसने सोचा कि कहीं उसके तीरों से क्रोधित पक्षी उस पर पागलों की तरह हमला न कर दें। जैसे ही वह अपना धनुष जमीन पर रखने की कोशिश कर रहा था, उसने देखा कि बूढ़े योद्धा ने अपने शरीर पर आखिरी कपड़ा भी उतार दिया। गिद्ध कुछ कदम और आगे उसकी ओर बढ़ गए। सिपाही को लगा कि बूढ़ा आदमी होश में नहीं है। अब उसे केवल उसकी नंगी पीठ ही दिखाई दे रही थी। जब उसने बूढ़े आदमी का चेहरा देखा, तो उसे यकीन हो गया कि वह पागल हो गया है। उसने अपने सिर के पास से गिद्धों की

आवाज़ सुनी। जैसे ही एक गिद्ध का पंख उसके पास से गुजरा, सिपाही को लगा मानो उसकी जान निकल रही हो। वह जल्दी से वहाँ से चला गया और झील के पास पहुँचा, जहाँ से उसने पीछे मुड़कर मृत्यु का दृश्य देखा। उसने देखा कि गिद्ध उस दिशा से आ रहे थे जहाँ एक-दो दिन पहले युद्ध हुआ था। उन्होंने पूरे मैदान पर कब्जा कर लिया था, लेकिन शांति से बैठ रहे थे। मरते हुए बूढ़े आदमी के चारों ओर गिद्धों की गर्दनें, जिनका मांस लाल और कच्चा दिख रहा था, झुंड में मंडरा रही थीं, मानो उसे भेदने के लिए तैयार हों। गिद्धों के झुंड के बीच में, बूढ़ा भीष्म नंगे खड़े थे, उनके शरीर पर एक भी कपड़ा नहीं था, उनकी दोनों आँखें बंद थीं, मानो वे कोई कठोर तपस्या कर रहे हों। उसने अपने दोनों हाथ आकाश की ओर उठाए, मानो किसी से उसे आकाश में उठाने की उम्मीद कर रहा हो। क्या वह चिल्ला रहा था? शायद। सैनिक उस विचित्र दृश्य के भय को सहन नहीं कर पा रहा था। वह पीछे मुड़े बिना झील के किनारे-किनारे दूर तक दौड़ता चला गया।

—•✳•—

अध्याय 65

जब दुर्योधन अपने रथ पर लौट रहा था, तो उसे ऐसा लगा मानो युद्ध की पूरी संरचना ही बिखर रही हो। युद्ध शुरू होने से पहले, उसने अपनी सेना के शिविर का चक्कर लगाया था, एक ऊँचे पेड़ पर चढ़कर पूरे दृश्य का समग्र अवलोकन किया था और स्थिति का स्पष्ट आकलन किया था। अब वह आकलन अराजकता में तब्दील हो गया था। उसने पहले कभी कल्पना भी नहीं की थी कि उसे इस तरह की समस्या का सामना करना पड़ेगा। उसे थोड़ी तसल्ली थी: क्या शत्रुओं को भी ऐसी ही समस्या का सामना नहीं करना पड़ रहा होगा? उसने स्वयं से पूछा, "क्या दादाजी को इतनी विशाल सेना को एक प्रभावी युद्ध शक्ति में संगठित करना नहीं

आता था?" शायद। लेकिन वह जानता था कि इस कार्य में भीष्म के अलावा और भी लोग शामिल थे। उदाहरण के लिए, इसमें द्रोणाचार्य, स्वयं वह, अश्वत्थामा, दुस्साना, जयद्रथ और अन्य लोगों के सुझाव और परामर्श भी शामिल थे। इससे उसके मन में यह चिंताजनक प्रश्न उठा, "तो क्या हम सब समान रूप से अज्ञानी और अक्षम थे?" शायद। दूसरे दिन से ही असली लड़ाई, लाशों का ढेर, दुर्गंध और गिद्धों का हमला शुरू हुआ। या तीसरे दिन? उसने सोचा कि अगले दिन युद्ध का आयोजन उस दिन के स्थान से काफी दूर किसी जगह पर किया जाना चाहिए। रसद और सामान की आवाजाही के लिहाज से, दुश्मनों को अपने शिविर के करीब का स्थान चुनने से फायदा होगा। दुर्योधन ने सोचा, "हम अपनी ओर से पूरी कोशिश कर रहे हैं कि युद्ध उनके शिविर से जितना हो सके दूर हो। उनकी रणनीति यही थी कि हम जलस्रोत से दूर रहें। युद्ध का मोर्चा बिखर गया है और उसका ध्यान भटक गया है। हमें फिर से संगठित होना होगा और अपनी व्यवस्था को पुनर्गठित करना होगा, लेकिन कैसे?" रथ एक छोटी सी पहाड़ी पर चढ़ रहा था। दुर्योधन को आश्चर्य हुआ कि आगे की यात्रा के दौरान उसने इस ऊँचाई पर ध्यान नहीं दिया था। उसे एहसास हुआ कि पानी का प्राकृतिक स्रोत हमेशा निचले स्तर पर ही होता है। उसकी नाक को मृत शरीर और सड़ते हुए मांस की दुर्गंध असहनीय लगी। जब उसने पीछे मुड़कर देखा, तो उसे दूर पानी चमकता हुआ दिखाई दिया। अब शिविर तक आधा रास्ता तय हो चुका होगा, उसने सोचा। इस बिंदु के दोनों ओर की चढ़ाई वे पार कर चुके थे। आगे थोड़ी दूर तक ढलान थी। सामने का मैदान युद्धक्षेत्र था। उसने घोड़ों की तेज़ साँसें सुनीं। उसने आदेश दिया, "थोड़ी देर रुक जाओ। घोड़ों को थोड़ा आराम करने दो।" ज़ाहिर है, उसे भी आराम की ज़रूरत थी। उसने भी गहरी साँस ली और आसपास के दृश्य का जायज़ा लिया। दाईं ओर खड़े विशाल बरगद के पेड़ को देखकर वह दंग रह गया। उसे दुर्गंध पहले से भी ज़्यादा तेज़ लगी क्योंकि वह अभी-अभी ताज़ी हवा वाली जगह से आया था, और यह अंतर इतना स्पष्ट था कि इसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता था। जब वह गहरी साँस ले रहा था, तभी एक घोड़े ने गोबर का गोला गिरा दिया। मानो उससे प्रेरित होकर, एक और घोड़े ने गोबर गिरा दिया। फिर एक के बाद एक, दूसरे रथों के घोड़े भी गोबर गिराने लगे। जानवरों ने इस तरह सामूहिक उन्माद में गोबर गिराकर अनुकरणीय एकजुटता दिखाई! अचानक उसके मन में एक विचार आया। वह तुरंत रथ से नीचे उतरा और सारथी से बोला, “जमीन

से और इतनी नज़दीक से युद्ध की स्थिति का स्पष्ट अंदाजा लगाना संभव नहीं है। मैं बरगद के पेड़ की उस ऊँची शाखा पर चढ़ूँगा और एक ऊँची जगह से पूरे युद्धक्षेत्र का जायजा लूँगा। तुम यहीं रहो।”

सारथी ने कहा, "महाराजा, ध्यान से देख लीजिए। याद रखिए, पेड़ पर गिद्ध बैठे हैं। सावधान रहिए। वे अपनी चोंच से आपका मांस नोच सकते हैं।"

दुर्योधन ने कहा, "मैं अपनी कमर पर तलवार रखता हूँ।"

सारथी ने कहा, "हम चारों आपके साथ चढ़ाई करेंगे।"

ऊँची डाल पर चढ़ने में कुछ समय लगा। साँस लेना भी मुश्किल हो रहा था। जब वह पहली डाल पर बैठा और आराम करने के लिए रुका, तो दुर्योधन को अपने तिरपन वर्षों का भार महसूस हुआ। उसने बीच वाली डाल पर बैठे सारथी को पुकार कर कहा, "तुममें से कोई भी मेरे पीछे न आए। तुम्हारा महाराज गिद्धों से डरने वाला नहीं है।"

सारथी ने कहा, "वे तो दुष्ट गिद्ध हैं, महाराजा।"

महाराजा ने कहा, "क्या मैं इसे नहीं जानता? तुम नीचे उतरो।" थोड़ी देर आराम करने के बाद, वह बीच वाली शाखा पर चढ़ गए। उनकी कमर में तलवार लटकी हुई थी और उन्होंने अपनी चाल चलने के लिए संतुलन बना लिया था। जैसे-जैसे वह ऊपर चढ़ते गए, उन्हें ठंडी हवाएँ महसूस हुईं। सबसे ऊपरी शाखाओं पर बैठे गिद्धों को उनकी मौजूदगी से बेचैनी महसूस हुई और वे घबराहट में अपने पंख फड़फड़ाने लगे। उन्हें डर था कि लाल, खून से सने गले और लंबी, कठोर चोंच वाले गिद्ध उन पर हमला कर सकते हैं, लेकिन उन्होंने यह भी सोचा कि कैसे वह एक हाथ से शाखा को पकड़े हुए तलवार से उनके गले काट सकते हैं और उनके सिर नीचे ज़मीन पर गिरकर नीचे मौजूद सैनिकों का मांस बन जाएँगे! जैसे-जैसे वह और ऊपर चढ़ते गए, उन्होंने रथों को छोटा होते देखा। उन्हें खुशी हुई कि इतने वर्षों बाद भी उनके बचपन की वृक्ष चढ़ने की कला अभी भी उनके पास थी। इस विचार ने उन्हें अचानक भीम की याद दिला दी। यह वर्षों पहले की बात है। वह पेड़ इतना ऊँचा नहीं था जितना यह है। वे बंदर-वृक्ष का खेल खेल रहे थे। दुर्योधन को याद आया, "उस लालची ने मेरा कितना मज़ाक उड़ाया! अपनी शक्ति के घमंड में चूर होकर उसने पेड़ को इतनी ज़ोर से हिलाया कि मैं अपमानित होकर गिर पड़ा। फिर वह भाग गया।" उसने रथ के पास बैठे सैनिकों को देखा, जो पैर लटकाए बैठे थे, मानो गोबर के छोटे-छोटे ढेर हों! वे इतने छोटे थे कि उन्हें

पहचानना और गिनना भी मुश्किल था। उन्होंने मन ही मन पूछा: "क्या हस्तिनावती के पास वाला बरगद का पेड़ इस पेड़ से बड़ा है या छोटा? वह अर्जुन तो बड़ा घमंडी है। पेड़ पर बैठे पक्षी की आँखों पर सटीक निशाना लगाने की अपनी क्षमता पर अकड़ रहा है। जब उसने यह कर दिखाया, तो वह इतराते हुए घूम रहा था कि वह बेजोड़ धनुर्धर है, दुनिया का सर्वश्रेष्ठ! और हमारे गुरु द्रोणाचार्य ने तो उसके इस अहंकार को और बढ़ावा दिया। बेशक, सच्चाई तो यह है कि वह गुरु के चरणों में देखते ही गिर पड़ा, और गुरु उसकी चापलूसी से खुश होकर उस पर अपनी कृपा बरसा रहे थे। मुझे आश्चर्य होता है कि क्या सभी गुरु ऐसे ही होते हैं, जो अपने शिष्यों में चापलूसी को बढ़ावा देते हैं।" फिर उनकी नज़र युद्धक्षेत्र की ओर गई। बीच-बीच में फैले पेड़ों के कारण दृश्य स्पष्ट नहीं दिख रहा था। फिर भी कुछ खास जगहों की पहचान करना मुमकिन था— उसने खुद से कहा, "हाँ, वह झाड़ियों जैसा पेड़ों का झुंड ही होगा, जहाँ हमने सबसे पहले अपना शिविर लगाया था। और वहाँ, दूर, एक ऐसे ही टीले के पार, हमारे दुश्मन का शिविर है। ऐसा लगता है कि उन्होंने अपनी जगह नहीं बदली है। अब तक ज़्यादातर लड़ाई हमारे शिविर के आसपास ही हुई है। हमें बस लाशों की बदबू और गिद्धों का सामना करना पड़ रहा है। वे अपनी दिशा से हमारी तरफ आ रहे हैं। हाँ, वह भयानक बदबू सीधे हमारी नाक में घुस रही है। क्योंकि हवा हमारी दिशा में बह रही है, इसलिए उन्हें मरते, मरे और सड़ते हुए मांस की बदबू से राहत मिल रही है। उन्हें नदी के पानी तक भी आसानी से पहुँच है जहाँ वे रात में नहाकर तरोताज़ा महसूस कर सकते हैं। हमें किसी तरह यह सुनिश्चित करना होगा कि युद्ध सीधे उनके शिविर तक पहुँचे और उन्हें भी रसद और सामान पहुँचाने की समस्या का सामना करना पड़े। अब तक कहानी यह रही है: हम युद्ध की रणनीति बनाते हैं और उन्हें चुनौती देते हैं, और वे हम पर हमला करके नुकसान पहुँचाते हैं। इसे पलटना होगा..."

तभी अचानक उनके मन में एक विचार आया। उन्होंने दूर आसमान में अनगिनत गिद्धों को बिना पंख फड़फड़ाए काले बादलों के चारों ओर चक्कर लगाते, उनमें विलीन होते और बिजली की तरह उनसे बाहर निकलते देखा। उन्होंने नए सर्वोच्च सेनापति को एक निश्चित और समयबद्ध लक्ष्य सौंपने का निश्चय किया, न कि केवल पद का आनंद लेने का। वे नए नेता से कहना चाहते थे कि उन्हें एक निश्चित कार्य पूरा करना चाहिए, "द्रोणाचार्य, आपको कोई असाधारण उपलब्धि हासिल करने की आवश्यकता नहीं है। बस धर्मराज को जीवित बंदी बनाकर हमारे पास ले आइए।

लगता है जुए की लत अभी तक नहीं छूटी है। उन्हें यहीं युद्ध के मैदान में हमारे साथ जुए का खेल खेलने के लिए मनाइए। हारने पर दांव पर आठ साल का वनवास होगा।" दुर्योधन ने अपने इस शानदार विचार पर स्वयं को बधाई दी और उंगलियों को दबाकर ध्वनि उत्पन्न करते हुए आत्मसंतुष्टि व्यक्त की। इससे विचलित होकर, संदेह और चिंता से उनकी ओर देख रहे गिद्ध अपने पंख फड़फड़ाने लगे। लगभग आठ-दस गिद्ध एक घेरा बनाकर एक साथ आने लगे। उसने सोचा, "हाँ, इसी तरह हमारे सैनिकों ने उस लालची भीम को घेर लिया था, और अगर अर्जुन ने बीच में आकर उसे न छुड़ाया होता तो वह बंदी बना लिया जाता। उन्हें युद्ध के सदियों पुराने नियमों का कोई सम्मान नहीं है। हाँ, अभी, इसी क्षण, मैं युद्ध का केंद्र देख सकता हूँ। कर्ण मैदान में आ चुका है। द्रोण वहाँ खड़े हैं। यह एक बराबरी का मुकाबला प्रतीत होता है, दोनों तरफ की सेनाएँ आकार और बल में बराबर हैं। कर्ण के आने से हमारे सैनिकों में एक नया साहस और जोश आ गया है।" उसने पाया कि शाखा को पकड़े हुए उसका बायाँ हाथ दुख रहा है, इसलिए उसने उसे हटाकर दाहिने हाथ से शाखा पकड़ ली। ऐसा करते समय, उसकी पीठ युद्ध के मोर्चे की ओर हो गई। उसे यह देखने के लिए अपना चेहरा वापस घुमाना पड़ा कि क्या हो रहा है। इसलिए उसने युद्ध का दृश्य देखने के लिए अपनी स्थिति को फिर से समायोजित किया। ऐसा करते समय, वह शाखाओं के बीच की जगह में दूर स्थित झील को स्पष्ट रूप से देख सका। वह काफी बड़ी लग रही थी। इतने दिनों तक इतने लोगों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए इतना पानी निकाले जाने के बावजूद, वह अभी भी भरा हुआ लग रहा था। उसकी आँखें उस जगह को ढूँढ़ने लगीं जहाँ उसके दादाजी बाणों की शय्या पर लेटे हुए थे। गिद्ध आकाश में मंडरा रहे थे। उन्होंने उसकी दृष्टि को अवरुद्ध कर दिया, खोज में बाधा डाली। वे हर जगह छाए हुए थे, हर जगह पर कब्जा जमाए हुए थे। उसने कल्पना में अपने रास्ते का पुनर्निर्माण किया और उस जगह का पता लगाया जहाँ उसके दादाजी लेटे हुए थे। वह उदास विचारों से भर गया, "उन्होंने आज सुबह ज़रूर खाना खाया होगा। रात में ठंड जम रही है। उनके पास न कंबल है, न चादर, न तम्बू, जिससे वे अपने शरीर को ढक सकें और प्रकृति से खुद को बचा सकें। उन्होंने कहा था कि वे बस एक दिन ही जीवित रह पाएँगे।"

वह इन सब बातों से तंग आ चुका है। ऐसा लगता है कि वह भूल गया है कि सिंहासन पर बैठे मुझ पर भी कुछ दायित्व और कर्तव्य हैं। मुझे अब भी वो तीखी

और स्पष्ट आवाज़ सुनाई देती है जिसमें उसने हमारी तबाही का ऐलान किया था, 'मेरी मृत्यु के बाद, चाहे तुम आसमान तक चीख-पुकार मचाओ, तुम्हें उनसे सुलह कराने में कोई मदद नहीं करेगा।' वो थका हुआ था, लेकिन उसकी आवाज़ में ज़रा भी थकान नहीं थी। फिर उसने अपना सिर उठाकर आसमान की ओर देखा। वही आसमान था, काले बादलों से भरा हुआ। एक पल के लिए उसे लगा जैसे उसका सहारा छूट गया हो, डाल पर से उसकी पकड़ छूट गई हो, और उसकी सारी नसें तन गई हों। उसे पता था कि अगर वो गिर जाता, तो उसका शरीर चकनाचूर होकर पहचान से परे हो जाता। उसने घोड़ों को देखा, जो अब जुए से मुक्त होकर घास चर रहे थे। सैनिक उनके पास लेटे हुए थे, बैठे नहीं थे। उसने एक बार फिर कुशलता से अपनी पकड़ को दाएं हाथ से बाएं हाथ में बदलकर अपनी स्थिति बदल ली, जैसा कि पहले हुआ था। उसे अपने सामने युद्ध का मोर्चा दिखने लगा। उसने सोचा कि उसने काफी देख लिया है, लेकिन उसके चारों ओर गिद्ध मंडरा रहे थे, उसे घूर रहे थे, और अंधेरा आसमान था, और इन सबके बीच में वो था। डाल को थामे अकेला खड़ा था! उसे नीचे उतरने का मन नहीं कर रहा था। उसने सोचा, "शायद दादाजी ने सच कहा था। उनकी तरफ के हर काबिल व्यक्ति के पास मरने तक लड़ने की प्रबल प्रेरणा है - क्रोध और प्रतिशोध की भावना। हमारी तरफ तो मैं अकेला ही हूँ। क्या कर्ण दस दिन तक सक्रिय युद्ध से दूर रहकर मूर्ख था? या उसके पास पर्याप्त द्वेष और प्रतिशोध की भावना नहीं है? अगर युद्ध इसी तरह चलता रहा, तो मेरे सभी सैनिक मारे जाएँगे, मेरे सहयोगी मुझे छोड़कर भाग जाएँगे या मारे जाएँगे, मैं अकेला और असहाय रह जाऊँगा। शायद अब मुझे दादाजी के नेतृत्व में शांति समझौता करने में जल्दी करनी चाहिए। लेकिन मान लीजिए कि वे इस आधार पर शांति प्रस्ताव ठुकरा देते हैं कि उन्होंने हमें सौदेबाजी की कोई क्षमता खोकर एक कमजोर पक्ष बना दिया है।" वे हम पर हंस सकते हैं और कह सकते हैं, 'घमंडी कमीने, इन्हें इसका खामियाजा भुगतने दो!' मान लीजिए वे मान जाते हैं, और मैं अपनी सेना भंग कर देता हूँ और मेरे सहयोगी अपने-अपने देशों में लौट जाते हैं, तो इसकी क्या गारंटी है कि वे बाद में खांडवप्रस्थ या इंद्रप्रस्थ के लाभ से हमारे राज्य पर आक्रमण नहीं करेंगे? जुए की विपत्ति के बाद अब मुझे पता चला है कि भीम धर्मराज की सलाह नहीं मानते, बल्कि धर्मराज ही भीम की सलाह मानते हैं। दादाजी स्नेह में अंधे हो गए हैं। उन्हें आम राजनीति की पेचीदगियों का कोई अंदाजा नहीं है। अब तक दुर्योधन अपनी

स्थिति के अभ्यस्त हो रहा था, मानो यह स्वाभाविक हो। सौभाग्य से, वह अपने लटकते पैरों को ठीक नीचे एक छोटी सी शाखा पर आसानी से टिका सकता था।

दूर से उसे जलते हुए तीरों की हलचल दिखाई दी। वहीं पर सारा युद्ध चल रहा था। शायद ये तीर कर्ण के हों, उसने सोचा। अचानक उसे एहसास हुआ कि पूरे युद्ध का संचालन करने की ज़िम्मेदारी उसी की है। दुर्योधन आत्मचिंतन में डूब गया, "उसे सलाह दी गई थी, 'पोते, चलो युद्ध न करें। मेरे शिष्य, महाराजा दुर्योधन, आप मुझे अपनी दादी की दासी का पुत्र समझते हैं। फिर भी, कृपया मेरी सलाह मानें। युद्ध न हो।' खैर, यह विदुर थे। लेकिन ये लोग राज्य चलाने के बारे में क्या समझते हैं? क्या उन्होंने कभी राज्य चलाने का अनुभव किया है? जब दादाजी सत्ता में थे, महल में कोई भी उनकी सत्ता को चुनौती देने वाला नहीं था। धर्मराज के राज्याभिषेक के बाद, दुस्साना ने विलाप किया, 'बड़े भाई, भविष्य में हमारी हालत सूत से भी बदतर होगी।' "जब वह शक्तिहीनता के भाग्य के अभ्यस्त हो रहे थे, तो उनकी महत्वाकांक्षा तब और बढ़ गई जब उन्होंने सोचा कि वरणवत में पांडवों का अंत हो गया है!" और मेरे प्यारे भाई ने क्या कहा? उन्होंने कहा, 'सबसे बड़े पुत्र को ही हमेशा सिंहासन का उत्तराधिकारी क्यों बनाया जाना चाहिए? इस विशाल क्षेत्र को क्यों क्या कुरुओं पर केवल एक ही राजा का शासन हो सकता है? वैसे भी, पांचाल का अहिच्छैर भाग हमारे पास है। क्यों न मुझे उस क्षेत्र का शासक बनाया जाए?' उसने मुझे ऐसा करने के लिए खूब समझाया। उसके उदाहरण से प्रेरित होकर, दुस्साह भी अपने सिर पर ताज पहनने का सपना देखने लगा! सत्ता और क्षेत्र की लालसा की कोई सीमा नहीं होती!' "लेकिन दुर्योधन इस मामले में भाग्यशाली था। ईश्वर का धन्यवाद, पांडव अग्नि में नष्ट नहीं हुए। वे द्रुपद के दामाद बनकर घर लौटे और हमारे क्षेत्र के एक दूरदराज कोने में अपना छोटा सा राज्य बना लिया। हाँ, एक बाहरी शत्रु का होना आवश्यक है। यदि वास्तव में कोई शत्रु नहीं है, तो शत्रु होने का भ्रम पैदा करना पड़ता है। अन्यथा राज्य के भीतर राजनीतिक एकता कैसे प्राप्त और बनाए रखी जा सकती है? सत्ता और पद की सुरक्षा का आनंद कैसे लिया जा सकता है? हाँ, हमें आगे बढ़ने के लिए एक शत्रु की आवश्यकता है! ओह! वे फिर से जलते हुए बाण चला रहे हैं। क्या वे कर्ण के हैं? वे किस दिशा से किस दिशा में तेजी से जा रहे हैं? युद्ध में कोई भी एक जगह स्थिर नहीं रह सकता। जैसे-जैसे योद्धा अपनी स्थिति बदलते हैं, उनके हथियारों की दिशा भी बदल जाती है। या क्या वे अर्जुन के धनुष से निकलते हैं? लेकिन भीम भी

ऐसे बाण चलाने में सक्षम है..." उसने थूका और गले में फंसा थोड़ा सा कफ बाहर निकाला। उसका मन एक बार फिर स्मृति की ओर मुड़ा, लेकिन स्पष्ट रूप से नहीं। फिर वह पुनः केंद्रित हुआ, अतीत की तस्वीर और अधिक स्पष्ट रूप से उभर आई, "भीम, अर्जुन और मूर्ख धर्मराज, यदि तुम अपने काम से काम रखते, जंगल साफ करते, जमीन जोतते और एक नगर बनाते, तो मैं भी अपने काम से काम रखता, तुम्हें अकेला छोड़ देता। तुम पर खुलेआम आरोप लगाकर कि तुम मेरी भूमि हड़पने की कोशिश कर रहे हो, मैं राज्य खोने के डर से अपने भाइयों की वफादारी बरकरार रख सकता था। मन ही मन मैं तुम दोनों को अपने सबसे अच्छे दोस्तों के रूप में धन्यवाद देता! लेकिन नहीं, ऐसा नहीं होना था।" तुम्हें अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने और इतने अहंकार से अपनी शान दिखाने की क्या ज़रूरत थी? तुम्हारी उपलब्धियों का ब्यौरा—राजसूय, जरासंध का वध, और न जाने क्या-क्या—दुस्साना को परेशान कर रहा था। वह मेरे पास आया और मेरे कान में फुसफुसाया, 'बड़े भाई, अगर हम चुपचाप बैठकर शत्रु को बलवान होते हुए देखते रहेंगे, तो क्या यह हमारी नींव को ही ध्वस्त करने जैसा नहीं होगा?' बोलते समय वह बहुत व्यथित था। सिंहासन के प्रति उसकी प्रतिबद्धता और भी प्रबल हो गई। जब मेरे छोटे भाइयों ने चारों पांडव भाइयों की अपने बड़े भाई धर्मराज के प्रति पूर्ण निष्ठा देखी, तो वे भी मेरे प्रति अधिक आज्ञाकारी हो गए। हमें उनकी ज़रूरतों और महत्वाकांक्षाओं को समझना चाहिए, और उन्हें कुछ हद तक पूरा भी करना चाहिए। अन्यथा वे हमारे विरुद्ध महत्वाकांक्षाएँ विकसित कर लेंगे। दुस्साना के मन में अब भी अपना राज्य और सिंहासन स्थापित करने की आशा बाकी है। उसने बड़ी चतुराई से मेरे सामने अपना पक्ष रखा, और कहा, 'बड़े भाई, वे वैसे भी तेरह वर्षों से राज्य छोड़कर गए हैं। यदि इंद्रप्रस्थ की देखभाल नहीं की गई, तो वहाँ हमारी सीमाओं की रक्षा करना मुश्किल हो जाएगा। इसलिए, मुझे वहाँ जाकर उसकी देखभाल करने दीजिए।' और मैंने कितनी चतुराई से उसका उत्तर दिया, 'प्रिय छोटे भाई, वे इसे इंद्रप्रस्थ जैसे बड़े नाम से पुकारकर इतरा रहे थे। यदि हम इसे फिर से खांडवप्रस्थ में बदल दें, तो हम उन्हें करारा झटका देंगे। तब उन्हें विनम्रता का पाठ पढ़ाया जाएगा। आप हमसे अलग होने और उस जगह की सफाई करने जैसे नीच काम करने का कष्ट क्यों सहें?' मैंने उसे अपने सीने से लगा लिया और भाईचारे के प्रेम से उसे कसकर गले लगा लिया! वह कितना असहज हो गया और चुप हो गया! क्या दुस्साना कभी राजनीति की कला और कौशल में इस

दुर्योधन को हरा सकता है? मैंने अपने भाइयों से कहा, 'प्रिय छोटे भाइयों, तेरह वर्षों के अंत में युद्ध निश्चित रूप से शुरू होगा।'

उनके सहयोगी, पंचाल, पहले से ही इसकी तैयारी कर रहे हैं। और उन्हें यादव वंश के कृष्ण का समर्थन प्राप्त है। हम सबको अपनी शक्ति बढ़ानी और मजबूत करनी होगी। हम अपनी सेना को तेरह भागों में बाँटेंगे। अब से आपमें से प्रत्येक एक इकाई का नेतृत्व करे और हमारी शक्ति का निर्माण करे।' मैंने कितनी चतुराई से बाकी लोगों को रथों और घोड़ों की देखभाल जैसे नियमित कार्यों में लगा दिया! बेशक, दुस्साना एक मुश्किल मामला था। मैं जानता था कि अगर उसे राज्य के शासन के राजनीतिक क्षेत्र से दूर रखा गया, तो वह इसे अपनी प्रतिष्ठा और गौरव पर चोट समझेगा। मुझे इस नाजुक स्थिति को संभालने के लिए कितना संघर्ष करना पड़ा - उसे अपने दायरे में रखना और साथ ही यह भी सुनिश्चित करना कि वह इससे बाहर रहे! खैर, बार-बार प्रयास और निरंतर अनुभव से, मैंने उसे इस भ्रम में संतुष्ट रखने की कला में महारत हासिल कर ली कि वह मेरे साथ राजनीतिक सत्ता साझा कर रहा है। और यह मेरा काम था!

हल्की-हल्की हवा चलने लगी। ठंडक थी। दुर्योधन पेड़ की डाल पर जड़वत बैठा युद्धक्षेत्र का जायजा ले रहा था, नीचे उतरने का उसे बिलकुल भी ख्याल नहीं था। लेकिन थोड़ी देर में हवा और तेज हो गई। जिस डाल पर वह बैठा था, वह न सिर्फ हिलने लगी, बल्कि पत्ते बारिश की तरह गिरने लगे, जमीन पर गिरते ही शोर मचा रहे थे। ज्यादातर सूखे, मुरझाए पुराने पत्ते थे। उसे एहसास हुआ कि तूफान आ गया है। नीचे धूल जमा हो रही थी। युद्धक्षेत्र की दिशा से, तेज गति से घूमती धूल अपने साथ तरह-तरह का कचरा ला रही थी। पेड़ से सैकड़ों पुराने, मुरझाए पत्ते जमीन पर गिरने लगे। एक गिद्ध जो उसकी तरफ देख रहा था, तेजी से उड़ गया। बाकी भी उसके पीछे उड़ गए। क्या वे डालियों के टूटने से डर गए थे? वह भी अचानक डर गया। उसने सोचा, "अब तक तो हमने दादाजी को नाममात्र का ही सर्वोच्च सेनापति बनाया था। असल में हम फैसले तो उन्हीं के नाम पर ले रहे थे। अब हमारी सेना आधी रह गई है। अगर उनकी मृत्यु हो गई तो शांति असंभव हो जाएगी। अभी भी समय है। क्यों न नीचे उतरकर दादाजी से बातचीत का नेतृत्व करने का अनुरोध करके शांति वार्ता शुरू की जाए?" उसे ऐसा लगा जैसे उसके भीतर से कोई भारी बोझ उतर गया हो। उसे महसूस हुआ कि अब उसका शरीर उसे बोझ की तरह दबा नहीं रहा है। जिस डाल पर वह बैठा था, वह टूटी नहीं, इस

बात ने उसे साहस और आशा का संचार दिया। वह बीच के स्तर पर एक बड़ी डाल पर उतर गया और फिर उसे लगा कि उसे कुछ और समय तक पेड़ पर ही बैठना चाहिए। उसने सोचा, "अगर हम अभी भी शांति स्थापित कर लें, तो भीम मेरी जांघ तोड़ने, दुस्साना का पेट चीरने और उसका खून पीने की अपनी शपथ नहीं छोड़ेगा।"

लेकिन यह सोचकर दुर्योधन को थोड़ी तसल्ली मिली कि बड़ों की मदद से उसे काबू में करना नामुमकिन नहीं है। बड़े धर्म की लगाम से उतप्पर पांडवों को नियंत्रित कर सकते थे। यह क्षणिक तसल्ली थी। इससे उसे तूफान के बाद शांति का आभास हुआ। अगले ही पल, उसे भीतर से एक तीव्र शून्यता का अहसास हुआ। उसने खुद से पूछा, "आधी सेना खोकर शांति से घर लौटने का क्या फायदा?" इससे पहले कि यह प्रश्न उसके मन में पूरी तरह से आकार ले पाता, उसका विचार एक अलग ही राह पर चल पड़ा। "सरकार के दृष्टिकोण से बाहरी शत्रु पैदा करना अपरिहार्य था। लेकिन जिस शत्रु की पहले कल्पना की गई थी, वही अंततः वास्तविकता बन गया। अब वे मेरे असली शत्रु बन गए हैं। वे अब मेरे प्रति सच्ची और शुद्ध घृणा रखते हैं। विडंबना यह है कि मैंने और मेरे भाइयों ने भाईचारे की एकता इसी शत्रुता की नींव पर हासिल की है। अब अगर मैं शांति और समझौते से इसे तोड़ दूं, तो बेचारे कर्ण को बहुत निराशा होगी। उसे युद्ध करने और शत्रुओं का नाश करने का अवसर न मिलने से बहुत हताशा होगी।" भीतर की शून्यता और खालीपन की भावना धीरे-धीरे कम होने लगी। उन्हें बेहतर महसूस हुआ। उन्होंने स्वयं से पूछा, "क्या उन पाँचों भाइयों में भी भाईचारे और एकता की वही भावना होती, यदि वे मुझसे भयभीत न होते? ऐसा लगता है कि कुंती ने मेरे भय का इस्तेमाल उन्हें एक पत्नी से विवाह के लिए राजी करने के लिए किया। उन्होंने सोचा कि इससे उनके पुत्रों में एकता बढ़ेगी। ऐसा लगता है कि वनवास के लिए प्रस्थान करने से ठीक पहले, उन्होंने उन्हें सलाह दी थी कि वे धर्मराज के नेतृत्व में अपनी एकता बनाए रखें, भले ही वे गलतियाँ करें, और आंतरिक कलह के कारण विभाजित न हों, क्योंकि तब वे शत्रु का सामना करने में असमर्थ होंगे।" इन विचारों से उनकी मानसिक शांति बहाल हो गई। तभी, उनका सारथी उन्हें नीचे से पुकार रहा था। अन्य सारथी भी कुछ चिल्ला रहे थे। जमीन से उठती धूल के गुबार के कारण उन्हें रथ, सारथी और घोड़े धुंधले दिखाई दे रहे थे। फिर वे नीचे उतरने लगे। धीरे-धीरे वे पेड़ से उतरे, उतरते समय उनकी चिंता कम होती गई। ज़मीन पर पैर

रखने से पहले, उसे डर लगा और उसने सबसे नीचे वाली शाखा से कूदने की कोशिश की। दरअसल, वह कुछ देर तक सबसे निचली शाखा पर बैठा रहा, यह सोचता रहा कि उतरने के आखिरी हिस्से को कैसे पार करे। खैर, वह जानता था कि विशाल पेड़ों का यही स्वभाव होता है - उन पर चढ़ना आसान होता है, लेकिन उतरना खतरनाक! तभी सारथी पेड़ के पास आया और चिल्लाते हुए बोला, "तुम इस तरह नीचे नहीं उतर सकते - मैं दो रथों की लगाम की रस्सियाँ तुम्हारी ओर फेंकता हूँ। इसे वहाँ शाखा से बाँध दो, और फिर रस्सी पकड़कर नीचे उतर जाओ।"

जब तक सारथी ने अपना कथन पूरा किया, उसका मुंह धूल से भर चुका था। दुर्योधन की आंखें भी धूल से भर गई थीं और उसके लिए पलकें खोलना असंभव हो गया था।

दुर्योधन ने पलटकर कहा, "अच्छा, जब मैं जमीन पर पहुँच जाऊँगा, तो रस्सी कौन खोलेगा?"

सारथी ने कहा, "जी साहब। आप सही कह रहे हैं। हमें रथों के लिए रस्सियों की जरूरत है।"

दुर्योधन ने कहा, "परिणाम चाहे जो भी हो, मैं छलांग लगाऊंगा।"

सारथी ने कहा, "महाराजा, कृपया ऐसा मत कीजिए। नहीं, नहीं। आपके हाथ-पैर टूट जाएंगे।" ये शब्द चिल्लाते हुए उसके मुंह में और धूल भर गई।

—•⁕•—

अध्याय 66

अर्जुन अपने रथ से चिल्लाया, "धृष्टद्युम्न, तुमने वही किया है जो तुम्हारे घृणित चरित्र के अनुरूप है। क्या तुम्हें शर्म नहीं आती?" धृष्टद्युम्न ने अभी-अभी द्रोण का

सिर काटकर दुर्योधन की सेना के बीच फेंककर एक भयानक कृत्य पूरा किया था। अर्जुन के इस आरोप से वह स्तब्ध रह गया। अर्जुन ने आगे कहा, "तुम्हें मुझे इस तरह देखने की ज़रूरत नहीं है। मैं जानता था कि तुम पांचाल निकम्मे हो, लेकिन मैंने यह कल्पना भी नहीं की थी कि तुम इतनी नीच हरकत करोगे, इतनी बर्बरता करोगे। तुम्हारा यह कृत्य, आर्य धर्म का घोर उल्लंघन है, जो दस यज्ञ करने से भी नहीं धुलेगा।" लेकिन धृष्टद्युम्न के मन में अर्जुन के शब्दों से गहरा भ्रम पैदा हो गया, क्योंकि अर्जुन का सारथी, उसके आसपास के घुड़सवार और यहाँ तक कि महान योद्धा सत्यकी भी "वाह! वाह!" चिल्ला रहे थे। पूरी पांडव सेना "विजय!" चिल्ला रही थी। उनकी विजय की गर्जना से ऊँचे उड़ते गिद्ध भी भयभीत हो गए। दुर्योधन की पूरी सेना अपने सर्वोच्च सेनापति की मृत्यु पर एक साथ विलाप कर रही थी। वे इतने भयभीत हो गए कि इधर-उधर भागने लगे। धृष्टद्युम्न यह समझ नहीं पा रहा था कि अपनी ओर इतनी खुशी और शत्रु की ओर इतनी निराशा के बीच अर्जुन ऐसे भाव कैसे व्यक्त कर सकता है! वह भी स्वभाव से आसानी से क्रोधित हो जाता था, लेकिन उसने अपने वश में रखा क्योंकि आखिरकार उसने अपनी बहन का विवाह अर्जुन को सौंपा था।

लेकिन अर्जुन ने यहीं रुककर अपनी बात जारी रखी, “तुम्हें तो बस अपने पिता के अपमान का बदला लेने में ही रुचि थी। तुम्हारे जैसे असभ्य और अर्ध-सभ्य व्यक्ति भला पूज्य द्रोणाचार्य जैसे सर्वमान्य गुरु का महत्व कैसे समझ सकते हैं? यदि तुम्हें इस महान गुरु के चरणों को छूने का एक भी अवसर मिल जाता, तो तुम्हारा जीवन सार्थक हो जाता। तुम्हारा वंश पवित्र और शुद्ध हो जाता। तुममें इतनी हिम्मत कैसे हुई कि तुमने ऐसे महान पुरुष का सिर काटकर कुत्तों और गीदड़ों को फेंक दिया?” अपने क्रोध से अभिभूत होकर अर्जुन अवाक रह गए और अपने बिखरे बालों से ढके गालों को दबाने लगे। धृष्टद्युम्न की ओर मुड़कर, जो अब किसी दुष्ट ग्रह के प्रभाव से लकवाग्रस्त हो गया था, अर्जुन ने तुरंत एक बाण निकाला और चिल्लाकर कहा, “मैं तुम्हें मृत्यु के देवता यमराज के नगर में भेज दूँगा। नहीं, मैं तुम्हारा सिर काटकर शवों के सागर में फेंक दूँगा।” उनकी आँखें रक्त की तरह लाल हो गई थीं।

युयुधन चिल्लाया, "अर्जुन, तुम ऐसा व्यवहार क्यों कर रहे हो?" जब उसने देखा कि अर्जुन उसकी बात अनसुनी करते हुए आगे बढ़ने को तैयार है, तो युयुधन और भी ज़ोर से चिल्लाया, "चूंकि तुम उसके बहनोई हो, इसलिए धृष्टद्युम्न ने कोई

प्रतिक्रिया नहीं दी या नाराज़गी नहीं जताई। जिस प्रकार मैं सुभद्रा के पति के रूप में तुम्हारा सम्मान करता हूँ, उसी प्रकार मैं तुमसे विनती कर रहा हूँ और तुम्हें मेरी बात सुननी चाहिए।" फिर उसे एहसास हुआ कि इस शोरगुल भरे वातावरण में इस तरह चिल्लाने से उसकी आवाज़ बैठ जाएगी और उसकी साँसें तेज़ हो जाएँगी। वह एक हाथ में बाण लिए अपने रथ से कूद गया और अर्जुन के रथ की ओर दौड़ पड़ा। दौड़ना मुश्किल था क्योंकि कमर से लटकी तलवार उसके रास्ते में आ रही थी। अर्जुन के रथ के चारों ओर मौजूद घुड़सवार, जो उसके अंगरक्षकों का काम कर रहे थे, ने युयुधन के लिए रास्ता साफ़ कर दिया। नीचे खड़े युयुधन ने कहा, "हम सब द्रोण का काम पूरा करने के लिए बहुत मेहनत कर रहे थे। तुम्हारे बड़े भाई धर्मराज बार-बार पूछते थे, 'सत्यकी, क्या तुमने द्रोण का काम पूरा कर लिया?' फिर वे धृष्टद्युम्न से विनती करते, 'तुम द्रोण का काम पूरा करो। यह काम तुम्हारे लिए तय है। तुम्हें इसे करना ही होगा। इस परिस्थिति में तुम्हारा मिर्गी के रोगी की तरह व्यवहार करना खेदजनक है।'..." अर्जुन ने बीच में दखल देते हुए कहा, "युयुधन, तुम्हें इन सब बातों का क्या ज्ञान है? चुप रहो।"

युयुधन ने अर्जुन को फटकार लगाने में जरा भी संकोच नहीं किया, मानो अपने लहजे को थोड़ा नरम करते हुए बोला, "अर्जुन, तुम निर्लज्ज क्षत्रिय हो। तुममें कुत्ते के बराबर भी कृतज्ञता नहीं है। बताओ, तुम्हारा जो कर्ज है उसे चुकाने के लिए हम यहाँ अपने प्राणों का बलिदान देने और अपनी ही यादव सेना से लड़ने आए हैं? तुम्हें मुझसे चुप रहने को कहने की हिम्मत कैसे हुई? अगर धृष्टद्युम्न तुम्हारा साथ देने के लिए न होता, तो क्या तुम युद्ध छेड़ने का साहस करते? अगर वह तुम्हें सेना, रथ, घोड़े, हाथी, तलवारें, धनुष, बाण, भोजन न देता और लगातार युद्ध न करता, और अपने बड़े भाई को न भेजता, तो क्या तुम भीष्म को हरा पाते? आज रात ही धृष्टद्युम्न के बूढ़े पिता ने, हमारी इस सलाह को अनसुना करते हुए कि वे युद्ध में लड़ने के लिए बहुत बूढ़े हो चुके हैं, युद्ध में ही प्राण त्याग दिए। और धृष्टद्युम्न तो आग की तरह लड़ रहा है, बिना किसी अहंकार के कि वह सेनापति है, हमारी सलाह और परामर्श को कभी अनसुना नहीं करता। अब अगर वह किसी कुत्ते की भी इतनी सेवा करता, तो वह भी अपनी असलियत दिखा देता। कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए उनके पैर चाटे... "यह जाने बिना कि वह अर्जुन के बहुत करीब है, उसने ज़ोर से चिल्लाया। पूरी तरह से थका हुआ युयुधन चुप हो गया। तब तक धृष्टद्युम्न ने अपना संतुलन वापस पा लिया था। हाथ में तलवार लिए वह अपने रथ

से कूदा और युयुधन के पास आया। उसने कहा, "सत्यकी, अगर यह एक आदमी मर गया, तो मेरी बहन विधवा नहीं होगी। उसके चार पति बचे रहेंगे। रुको, मैं इसे खत्म कर दूंगा। तुम, अर्जुन, अपने रथ से नीचे उतरो और अपनी तलवार निकालो। देखो, मेरी तलवार से अभी भी द्रोण का खून टपक रहा है, और मैं तुम्हारे खून को उसके खून में मिला दूंगा।" तभी भीम पीछे से दौड़ा और धृष्टद्युम्न का सामना किया। उसे रोकते हुए भीम ने कहा, 'मैंने अपने कुछ आदमियों को चिल्लाते हुए सुना, 'सिर गिर गया है, सिर!' मैंने पता लगाया कि यह सिर किसका है। तब मेरे सारथी ने खबर दी कि यह द्रोण का सिर था, और इसे हमारे सेनापति ने काट डाला था।' मैं तुम्हें तुम्हारे ध्वज से पहचानकर तुम्हें बधाई देने दौड़कर यहाँ आया हूँ। तुम सचमुच अपने पिता के सच्चे पुत्र हो, उन्हीं के पुत्र हो। ससुर जी को अब और किसी अंतिम संस्कार की आवश्यकता नहीं है!" फिर भीम ने अपने बहनोई को प्रेम से गले लगा लिया। भीम के माथे, गालों और गर्दन के घावों से रिसता खून धृष्टद्युम्न के मुकुट पर लग गया। इसी बीच, अर्जुन अपने रथ से कूदकर अपनी तलवार निकाल ली। उनके पीछे कृष्ण भी रथ से कूद गए। वे अर्जुन और धृष्टद्युम्न के बीच खड़े हो गए, जो अब भीम की बाहों में थे। तब कृष्ण बोले, "युयुधन, पिछले चौदह दिनों से हममें से किसी को भी एक पल भी नींद नहीं आई है। पिछले दो दिनों से हममें से कोई भी अपनी आँखें बंद नहीं कर पा रहा है। हम सब मानसिक रूप से विक्षिप्त हो गए हैं। अर्जुन, अब तुम सीधे अपने तम्बू में जाओ और कुछ देर आराम करो। फिर तुम लौट सकते हो।" क्या आप अक्सर यह दावा नहीं करते थे कि आप बिना सोए कितने भी समय तक रह सकते हैं, अपने अंगों, नसों और दिमाग पर से नियंत्रण खोए बिना? खैर, आपको भी नींद की ज़रूरत है। बेशक, यह सोने का समय नहीं है। हमें इस स्थिति का लाभ उठाना होगा जब उनका सर्वोच्च कमांडर मर चुका है और वे सभी समुद्र में हैं, ताकि हम अपनी बढ़त को और मजबूत कर सकें और उन्हें और अधिक नुकसान पहुंचा सकें। यह समय युद्ध से भाग रहे सैनिकों को यथासंभव कम करने का बिल्कुल सही मौका है।

भीम के आलिंगन से खुद को छुड़ाते हुए धृष्टद्युम्न ने पूछा, "अब क्या हुआ है, कृष्ण?"

कृष्ण ने कहा, "वास्तव में कुछ नहीं हुआ है। बस अर्जुन गुरु प्रेम के बुखार से पीड़ित हो गया था! अब वह शांत हो गया है। धृष्टद्युम्न, तुम आगे बढ़ो और दाईं

ओर जल्दी जाओ। मैं और अर्जुन सीधे शत्रु के अस्त-व्यस्त शिविर के बीचोंबीच जाकर उनका नाश करेंगे। भीम, तुम्हारी स्थिति क्या थी?"

भीमा ने कहा, "अभी कुछ देर पहले ही मैंने धृतराष्ट्र की सात संतानों का वध किया है। मैं यहाँ बस अपने बहनोई से गले मिलने आया था। अब मैं पीछे से शत्रु पर आक्रमण करने जा रहा हूँ। क्या यह ठीक है?"

कृष्ण ने कहा, "पीछे से हमला मत करो। अन्यथा तुम उन हाथियों का रास्ता रोक दोगे जो अपने-अपने क्षेत्रों में वापस भागने की कोशिश कर रहे हैं। बेवजह मारने का कोई फायदा नहीं है। बचे हुए हाथियों को खत्म कर देना ही बेहतर है।"

बिना कुछ कहे भीम वहाँ से चले गए। कृष्ण युयुधन के पास गए, उनके कंधे पर हाथ रखा और बोले, "तुम सीधे तम्बू में जाओ। अपने पहरेदारों को निर्देश दे दो कि वे तुम्हें न जगाएँ, और फिर सो जाओ। जागने के बाद मोर्चे पर लौटकर अपने सेनापति धृष्टद्युम्न के निर्देशों के अनुसार युद्ध करो।"

युयुधन को यह समझने में ज़्यादा समय नहीं लगा कि उन सबको नींद की सख्त ज़रूरत थी। बिना कुछ कहे, वह अपने रथ पर लौट गया और बैठ गया। कुछ दूरी पर उसने नकुल का रथ देखा। अपने सैनिकों को वहीं रुके रहने और लड़ते रहने का निर्देश देते हुए, उसने अपने सारथी को नकुल के रथ के पास जाने का आदेश दिया। नकुल के सैनिकों को भारी नुकसान हुआ था और वे तितर-बितर हो रहे थे। फिर भी नकुल निराश नहीं लग रहा था। युयुधन ने सुझाव दिया कि नकुल अपने सैनिकों का उपयोग कर सकता है, और फिर अपने तंबू की ओर चल पड़ा। युद्ध के दौरान पहली बार उसे जम्हाई आई। सारथी समझ गया कि उसके स्वामी को नींद की सख्त ज़रूरत है। उसे यह देखकर खुशी भी हुई। घोड़े भी नई ऊर्जा से दौड़ते हुए प्रतीत हुए। युयुधन ने एक पल के लिए पीछे मुड़कर दृश्य का जायजा लिया। उसने सोचा कि सूर्य का प्रकाश पीला पड़ गया है। उसने सोचा कि क्या सूर्य किसी बीमारी से ग्रसित हो गया है या कृत्रिम मशाल की रोशनी से क्षीण होकर बेजान हो गया है। हालाँकि वह पूरी तरह से आँखें खोलकर देख रहा था, फिर भी उसे स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं दे रहा था। उसने सारथी से पूछा, "सारा युद्धक्षेत्र पीला क्यों है?"

सारथी ने कहा, "नींद की कमी के कारण।" फिर उसने रथ रोक दिया।

युयुधन को समझ नहीं आ रहा था कि रथ क्यों रुका हुआ है। उस चिकनी, समतल और कठोर सतह पर रथ बिना किसी कठिनाई के किसी भी दिशा में जा

सकता था। बस इधर-उधर बिखरे कुछ शवों के कारण थोड़ा सा रास्ता बनाना पड़ा, वरना रथ आसानी से आगे बढ़ सकता था। यह युद्धक्षेत्र का उनका हिस्सा था, इसलिए घोड़ों और हाथियों में हताहतों की संख्या अपेक्षाकृत कम थी। लगभग कोई भी रथ टूटा हुआ नहीं था। तभी उन्हें याद आया कि युद्धक्षेत्र के इस हिस्से में बहुत कम लड़ाई हुई थी। सारथी ने रथ रोक दिया और रथ में खड़े-खड़े चारों ओर नज़र दौड़ाई। युयुधन ने भी चारों ओर देखा। सर्दियों की सुहावनी गर्मी थी, पीली धूप चमक रही थी। धूप अपने आप में पीली थी, और यह केवल उनकी नींद की कमी के कारण नहीं थी, और ऊपर का आकाश फीका था। दाईं ओर गिद्धों का एक घना झुंड दिखाई दे रहा था, और बाईं ओर इधर-उधर कुछ पक्षी बिखरे हुए थे। दूर पाँच-छह रथ दिखाई दे रहे थे। उन्होंने सारथी से पूछा, "क्या देख रहे हो?"

सारथी ने कहा, "मैं शिविर की दिशा निर्धारित नहीं कर पा रहा हूँ। कल हम भोर से पहले, धुंधले प्रकाश में निकले थे, और मुझे याद नहीं आ रहा कि हमने कौन सी दिशा ली, कितने मोड़ लिए, और सारी दिशाएँ आपस में मिल जाती हैं। वहाँ जो रथ आप देख रहे हैं, क्या वे हमारे हैं? या शत्रुओं के? मैं उनके पास जाकर पता लगाना चाहता हूँ कि वे हमारे हैं या उनके। लेकिन..." फिर वह कुछ देर सोचने के लिए रुका, और फिर बोला, "महाराजा, हाँ, यही सही दिशा लग रही है। क्या हमारे दाहिनी ओर गिद्ध नहीं हैं? वह कल रात के युद्ध का स्थान हो सकता है। लेकिन गिद्धों को ताज़ा, अभी तक न सड़े हुए शव पसंद नहीं होते। इसलिए..." उसने कुछ देर सोचा और फिर बोला, "महाराजा, अपने धनुष और बाण तैयार कर लीजिए। चलिए उन रथों के पास चलते हैं। अगर वे हमारे हैं तो कोई समस्या नहीं है। अगर वे हमारे शत्रु भी हैं, तो भी इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि वे पहले हम पर हमला करेंगे। क्या वे मूर्ख हैं कि बिना किसी वास्तविक युद्ध के हमला करके खुद पर हमला करवाएँगे?" फिर भी, तैयार रहना ही सबसे अच्छा है। अपने धनुष को सही स्थिति में तैयार कर लें। लेकिन इसे स्पष्ट रूप से न दिखाएं और उन्हें ऐसा न लगने दें।

लगभग दो घंटे तक चक्कर लगाने के बाद, वे रथ सहित नाव से नदी पार कर गए। अपने शिविर के प्रवेश द्वार पर पहुँचते ही पहरेदारों ने उन्हें पहचान लिया और द्वार खोल दिए। गोलाकार तम्बुओं के बीच में, महिलाएं धूप सेंकने के लिए इधर-उधर घूम रही थीं या बैठी थीं। उनमें सुभद्रा, द्रौपदी और अभिमन्यु की गर्भवती

पत्नी उत्तरा शामिल थीं। इसके अलावा, कई दासियां भी थीं जिन्हें युयुधन पहचान नहीं सका।

सुभद्रा उठी और बोली, "बड़े भाई, क्या खबर है?"

युयुधना ने कहा, "द्रोण लगभग ढाई घंटे पहले गिर पड़े। अभी भयंकर युद्ध चल रहा है।"

सुभद्रा, "तुम मोर्चे को छोड़कर यहाँ क्यों आ गए?"

युयुधना ने कहा, "मुझे थोड़ी नींद की जरूरत थी, अच्छी नींद की। नींद न आने के कारण मेरा सिर घूम रहा है।"

द्रौपदी उठ खड़ी हुई और बोली, "द्रोण को किसने मारा?" उसकी आँखों में आँसू तो नहीं थे, लेकिन उसके चेहरे से स्पष्ट था कि वह दुखी थी। युयुधन ने अनुमान लगाया कि वह पिछली रात के युद्ध में अपने पिता की मृत्यु का शोक मना रही थी। युयुधन बोला, "जी हाँ, तुम्हारे भाई धृष्टद्युम्न ने सेनापति रहते हुए अपनी तलवार से द्रोण का सिर काट दिया और उसे आकाश में ऐसे उछाल दिया जैसे वह कोई गेंद हो!" उसके चेहरे से शोक के काले बादल एक पल के लिए छंट गए और फिर बिजली की तरह गायब हो गए।

युयुधन अपनी कुटिया में दाखिल हुआ। उसके पीछे आए सेवक ने उसे दलिया का एक प्याला दिया। जब वह जल्दी-जल्दी दलिया पी रहा था, तभी द्रौपदी अंदर आई। उसने उससे पूछा, "क्या तुमने देखा कि मेरे बच्चे कहाँ हैं?"

युयुधना ने कहा, "वे अपने रथों से लड़ रहे हैं, लेकिन धृष्टद्युम्न की टुकड़ी के साथ। वे कभी भी अपने मामा की टुकड़ी से अलग नहीं होते।"

द्रौपदी, "जब आप गए थे, क्या आपने उन पाँचों को देखा था?" युयुधन, "मुझे ठीक से याद नहीं है। फिर भी मुझे पूरा यकीन है कि वे सुरक्षित और स्वस्थ हैं। वरना मुझे इसके बारे में पता चल जाता।"

द्रौपदी ने पूछा, "क्या उन्हें भी नींद की जरूरत नहीं होती?"

युयुधन को कोई जवाब नहीं सूझा। कृष्ण के बताने पर ही उसे नींद की ज़रूरत का एहसास हुआ। उसने सोचा, "शायद किसी ने उन्हें सोने के लिए नहीं कहा। या शायद उन्होंने अपने राज्य, अपने युद्ध और अपने माता-पिता के मान-सम्मान की रक्षा के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के कारण सोने से इनकार कर दिया होगा।" फिर उसने प्याले से पानी पीना शुरू कर दिया। द्रौपदी चुपचाप उसे छोड़कर चली गई।

युयुधन को पहले हल्की नींद आई, लेकिन जल्द ही वह गहरी नींद में सो गया। उसे ठीक से याद नहीं था कि वह कब गहरी नींद में चला गया। रात में किसी समय अचानक शोरगुल से उसकी नींद खुल गई। शोरगुल का कारण समझने से पहले ही उसने अपनी कुटिया का दरवाजा खुलते हुए सुना। एक घबराई हुई आवाज सुनाई दी, "युयुधन, जल्दी करो। भाइयों के बीच बहुत बड़ा झगड़ा हो गया है। जल्दी आओ और झगड़ा सुलझाओ और सुलह कराओ।" कुछ देर बाद उसने आवाज पहचान ली, वह द्रौपदी की आवाज थी।

जब वह बाहर निकला, तो उसने देखा कि अर्जुन ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहा था। उसकी कुटिया के सामने वाली कुटिया में धर्मराज थे। जब वह द्रौपदी के साथ उस कुटिया में दाखिल हुआ, तो उसने देखा कि धर्मराज घास के बिस्तर पर लेटे हुए हैं। एक दीपक जल रहा था। पास ही अर्जुन तलवार हाथ में लिए खड़ा था और धर्मराज को मार डालने की कसम खा रहा था। धर्मराज के शरीर पर युद्ध में लगी कुछ मामूली चोटें थीं। युयुधन को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। वह सोच रहा था कि यह सपना है या हकीकत। धैर्य और चतुराई की मूर्ति माने जाने वाले कृष्ण, अर्जुन के पास खड़े थे, जो अपने बड़े भाई पर चिल्ला रहा था, "क्या तुम जीवन भर में उतने बाण चला सकते हो जितने मैं आधे घंटे में चला सकता हूँ? तुम एक कायर हो जो एक-दो मामूली चोटें लगने के बाद युद्ध के मैदान से भाग गए और यहाँ लेटे हुए हो। और मुझे कायर कहते हो? मुँह खोलो और चिल्लाकर बताओ कि तुमने अब तक युद्ध में कितने लोगों को मारा है।" अर्जुन की आवाज़ और भावनात्मक आवेश हर शब्द के साथ बढ़ता जा रहा था। उन्होंने आगे कहा, "अब मुझे लगता है कि वनवास के दौरान भीम तुम्हारे बारे में जो कहते थे, वह सच और न्यायसंगत था। हम तुम्हें अपने बड़े भाई मानकर आदर करते थे और तुम्हारी आज्ञा मानते थे। हमने तुम्हें गृहस्थी का मुखिया बनाया था। तुम अहंकारी और घमंडी हो गए हो। तुम हमारी राय या भावनाओं की परवाह किए बिना हम पर हुकूमत करते थे। जुए की लत के कारण ही हम इस दुर्दशा में हैं। मैंने ही मछली पकड़ने का यंत्र तोड़कर द्रौपदी को जीता था। अब तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई कि तुम उसी द्रौपदी के सामने मुझे कायर कहकर अपमानित करो? कर्ण के बारे में तुम्हारा क्या ख्याल है? उसका एक तीर लगते ही तुम यहाँ आकर अपने पलंग पर लेट गए। क्या तुम्हें लगता है कि तुम मेरी मदद के बिना उसे मार सकते हो?"

युयुधन को अचानक याद आया कि द्रौपदी उसे भाइयों के बीच सुलह कराने के लिए वहाँ लाई थी। लेकिन उसने पाया कि उसे झगड़े की पृष्ठभूमि और बारीकियों का कोई ज्ञान नहीं था। वह हस्तक्षेप करना चाहता था क्योंकि इससे उसे झगड़े की बारीकियों का पता चल सकता था और स्थिति को कुछ हद तक शांत करने में भी मदद मिल सकती थी। इसलिए उसने अर्जुन से कहा, "अर्जुन, तुम इतने क्रोधित क्यों हो? कृपया मुझे इस क्रोध का कारण बताओ।" उसे तुरंत कल का वह दृश्य याद आ गया जिसे उसने प्रत्यक्ष रूप से देखा था, जिसमें अर्जुन ने धृष्टद्युम्न पर तीखी मौखिक टिप्पणी की थी।

अर्जुन को कल की घटना बिल्कुल भी याद नहीं आ रही थी। लेकिन वह युयुधन की ओर मुड़ा और उसे उत्तर दिया, "युयुधन, मुझे बताओ कि वास्तव में क्या हुआ था। अगर मैं एक भी झूठ बोलूँ, तो कृष्ण, जिन्होंने सब कुछ स्वयं देखा है, मेरी गवाही दें। अगर तुम्हें लगता है कि मैं गलत हूँ, तो कहने में संकोच न करो। यह मूर्ख जो वहाँ लेटा है, आज रात कर्ण से लड़ने गया था। क्या उसमें उसके बाणों को सहने और उनका जवाब देने की क्षमता है? दो बाण उसे लगे, और केवल एक घाव हुआ जिससे खून बह रहा था। खैर, वह मोर्चे से भागकर वापस अपने तम्बू में लेट गया। बाद में मेरी मुलाकात भीम से हुई। मैं ज्यादातर समय इस धर्मराज के बारे में चिंतित रहता हूँ। तुम जानते हो कि पूज्य द्रोण ने धर्मराज को बंदी बनाने की शपथ ली थी। कोई कैसे यकीन कर सकता है कि कर्ण ने भी ऐसी ही शपथ नहीं ली है? मुझे चिंता थी कि कर्ण ने शपथ ली होगी लेकिन हमसे छिपा ली होगी। मेरी चिंता यह थी कि मान लो वह इसमें सफल हो गया! मुझे इस बात की चिंता थी कि इसका हम पर क्या प्रभाव पड़ेगा। क्या इसी चिंता ने मुझे हमेशा उसके पास रहने के लिए प्रेरित नहीं किया? युद्ध में, क्या हम क्या वाकई किसी भी समय हमारी स्थिति का निर्धारण होता है या फिर बदलती हुई परिस्थितियाँ ही इसे निर्धारित करती हैं? मैंने चिंता से भीम से उसके बारे में पूछा। भीम ने मुझे बताया कि उसके चेहरे पर कुछ खून दिख रहा था और वह अपने तम्बू में चला गया था। उसके घायल होने और तम्बू में चले जाने की खबर का क्या अर्थ निकाला जाए? क्या यह किसी गंभीर घाव या घावों का संकेत नहीं है? कौन सा क्षत्रिय अपने प्राणों की रक्षा के लिए युद्ध से पीछे हटता है जब तक कि शरीर पर जानलेवा घाव न हो? आप समझ सकते हैं कि मैं उसके बारे में इतना चिंतित क्यों था। नकुल को अपनी सेना की कमान सौंपकर मैं कृष्ण के साथ यहाँ आया। काफी अंधेरा था, और यहाँ पहुँचते समय हम दो-तीन

बार रास्ता भटक गए। अब हम क्या देखते हैं? उसे देखिए। क्या आप इसे गंभीर घाव कह सकते हैं? हाँ, कृपया इसे ध्यान से देखिए। उसने धर्मराज के घाव की ओर इशारा करते हुए अपनी तलवार की नोक से उसे छुआ। युयुधन ने कहा, "कुछ लोग तो अपने खून की एक बूँद देखकर भी चौंक जाते हैं। आप इसके बारे में इतने परेशान क्यों हैं?" प्रश्न पूछते समय, उन्होंने पिछले दिन धृष्टद्युम्न के प्रति अर्जुन के क्रोध प्रदर्शन को याद किया।

अर्जुन ने उत्तर दिया, "क्या मैं सिर्फ इसी कारण क्रोधित होऊंगा? वैसे भी, कौन कहता है कि मैं क्रोधित हूँ? मैं तुम्हें सच बताता हूँ। मैं और कृष्ण, बहुत डरे हुए, नदी पार करके यहाँ आ गए। तुम्हारे शिविर के कुत्ते हम पर भौंक रहे थे। उन्होंने रात में हम पर हमला करने की कोशिश की। हमारे चेहरों पर बाणों से कितने घाव हुए हैं? क्या तुमने अपने चेहरे पर कितने घाव देखे हैं? जब हम यहाँ पहुँचे, तो यह महाराजा द्रौपदी की देखभाल में पल रहे थे। हमारे आते ही उन्होंने एक ही साँस में पूछा, 'कौन आया है? अर्जुन? क्या कर्ण मारा गया है? क्या उसका सिर काट दिया गया है?' जैसे ही मैंने कहा, 'अभी नहीं,' उन्होंने बिना किसी और स्पष्टीकरण का इंतजार किए मुझ पर क्रोध बरसाना शुरू कर दिया: 'अब आगे मत बोलो। अपना मुँह बंद करो। तुम कर्ण से डरकर मोर्चे से भाग गए हो। तुम्हें खुद पर शर्म आनी चाहिए। तुम्हारा अहंकार रूपी गंडीव लज्जित हो गया है। तुमने हमारे पिता पांडु के क्षत्रिय स्वरूप को कलंकित किया है।' अब से कभी भी अपना घिनौना चेहरा मुझे मत दिखाना। यही मेरा आदेश है।' क्या वह मुझ पर इस तरह चिल्लाने, लापरवाही से मुझे कुत्ते की तरह गाली देने में सही है? अब बताओ, क्या मुझे पहले इस मूर्ख का सिर नहीं काट देना चाहिए? भीम सही कह रहा है। हमने उसे, अपने बड़े भाई के रूप में, अपना अधिकार जमाने देकर बहुत बड़ी गलती की है। जैसा कि भीम ने सही कहा, अगर हमने धर्मराज की सलाह को अनसुना करते हुए जयद्रथ को पहले ही मार डाला होता, तो वह युवा अभिमन्यु को मारने के लिए जीवित नहीं होता। उस समय, मैंने इस निकम्मे व्यक्ति के उपदेशों पर ध्यान दिया और भीम को जयद्रथ को मारने से रोका। द्रौपदी, मैं सच कह रही हूँ या नहीं? उसने समर्थन की उम्मीद में उसकी ओर रुख किया।

अब तक द्रौपदी को पूरा विश्वास हो गया था कि अर्जुन धर्मराज के विरुद्ध तलवार नहीं चलाएंगे, क्योंकि ऐसा प्रतीत हो रहा था कि बातें कर्मों की जगह ले रही हैं। कुछ देर पहले युयुधन भी इसी निष्कर्ष पर पहुँच गया था। कृष्ण यह सब शांत भाव

से देख रहे थे, मानो कुछ भी असामान्य या चिंताजनक न हो रहा हो। पलंग पर लेटे धर्मराज अचानक उठे और पलंग पर बैठ गए। अगले ही क्षण वे नाटकीय ढंग से दोनों हाथों से अपनी छाती पीटने लगे। फिर वे ऊँची आवाज़ में और आत्म-प्रशंसा से बोलने लगे।

"अर्जुन! मैं आपकी क्षमा के योग्य नहीं हूँ। मैं साक्षात दुष्ट हूँ, एक नीच पापी। मैं ही वह परम पापी हूँ जिसने आप सबको इस विकट परिस्थिति में डाला है। यदि मैं आपकी तलवार से मारा जाऊँ, तो मुझे मेरे कर्मों का दंड मिल जाएगा और अगले जन्म में शायद मैं और अधिक ज्ञानी हो जाऊँ। मुझे मार डालिए, मुझे दंड देकर सबक सिखाइए।" फिर हिचकी लेते हुए, अर्जुन के सामने लेटते हुए, अपने पैर पकड़ते हुए, वह बुदबुदाने लगा, "प्रिय छोटे भाई, मुझे नहीं पता था कि तुमने मेरी सुरक्षा के बारे में इतनी चिंता की है। अगर तुम्हें यकीन नहीं है, तो द्रौपदी से पूछ लो। मैं कल रात कर्ण के डर से नींद में बड़बड़ा रहा था। मैं मानसिक रूप से व्याकुल था, डर रहा था कि कर्ण मुझे पकड़कर दुर्योधन के हवाले कर देगा। खैर, युद्ध की शुरुआत में हमने जिन नियमों और सिद्धांतों का पालन करने का वादा किया था, अब उनका कोई अस्तित्व नहीं है। हर किसी ने हर नियम का उल्लंघन किया है। अगर कर्ण नदी पार करके यहाँ तक पहुँचने के लिए लंबा रास्ता लेता, तो मुझे यकीन नहीं था कि यहाँ हमारे पहरेदार मेरी रक्षा कर पाते। डर और चिंता के दबाव में ही मैंने अपना आपा खो दिया। तुम स्वयं इंद्र के समान हो, तो तुम किसी से कैसे डर सकते हो? जब तुम्हारे सर्वोच्च शस्त्र गांडीव की आवाज से पूरी पृथ्वी कांप उठती है..."

इस मौके पर कृष्ण ने हस्तक्षेप करते हुए पहली बार कहा, "मान लो कर्ण तुम्हें पकड़कर दुर्योधन के हवाले कर दे, तो दुर्योधन तुम्हारा क्या बिगाड़ सकता है? तुम्हें इतना डर क्यों लग रहा है? क्या तुम्हें लगता है कि वह तुम्हें शारीरिक यातना देगा?"

धर्मराज ने कहा, "कल के बुरे सपने में मैंने कल्पना की कि जब मुझे दुर्योधन के हवाले किया गया, तो उसने मुझे ताना मारते हुए और मेरा उपहास उड़ाते हुए जुए के खेल के लिए आमंत्रित किया, और कहा कि अगर मैं सच्चा मर्द हूँ, तो मुझे खेलना चाहिए। खैर, अगर उसने मुझे जुए के खेल में चुनौती दी, तो मैं क्या करूँ?"

कृष्ण, "तुम्हें खेलने से मना करना होगा।"

धर्मराज ने पूछा, "क्या मैं, राजसूय विधि का सफलतापूर्वक पालन करने वाला एक क्षत्रिय होकर, जुए के खेल के निमंत्रण को अस्वीकार कर सकता हूँ? क्या ऐसा करना धर्म के अनुरूप होगा?" ये प्रश्न पूछते समय, आँसुओं से लाल हो चुकी उनकी आँखें और पुतलियाँ असहायता का चित्र प्रस्तुत कर रही थीं।

कृष्ण ने अर्जुन की ओर मुड़कर पूछा, "इस बारे में तुम्हारा क्या कहना है?" अपने बड़े भाई को इतनी व्यथित अवस्था में देखकर अर्जुन व्याकुल हो गया और एक बच्चे की तरह रोने लगा।

कृष्ण ने तुरंत हस्तक्षेप करते हुए कहा, "क्या? अब क्या हुआ? अब तुम क्या कह रहे हो?" अर्जुन ने उत्तर दिया, "कृष्ण, मैंने अपने बड़े भाई, जो पिता के समान हैं, के साथ इतना अपमानजनक व्यवहार किया है, इसलिए मुझे इस पृथ्वी पर जीने का कोई अधिकार नहीं है। हाँ, ऐसे अपराध के लिए मृत्यु ही एकमात्र उचित दंड है। देखिए।" उसने अपने हाथ में पकड़ी तलवार को अपने गले की ओर उठाया, मानो उसे काटने ही वाला हो। उसके दाहिनी ओर खड़े सत्यकी ने अर्जुन को आत्म-विनाश करने से रोकने के लिए तुरंत कार्रवाई की। उसने उसके हाथ से तलवार छीन ली। अर्जुन, अभी भी जोर-जोर से रोते हुए बोला, "मुझे अपने पिता को देखने की कोई याद नहीं है। मैंने हमेशा अपने बड़े भाई को ही अपना पिता माना है। जब मेरे इस व्यवहार के कारण इतना आदरणीय व्यक्ति मेरे पैर छूता है, तो मैं इससे उत्पन्न पाप से कैसे मुक्त हो सकता हूँ? और यदि शत्रुओं को पता चल जाए कि हम भाई बँट गए हैं, तो क्या वे हमारा उपहास नहीं करेंगे और हम पर हँसेंगे नहीं? युयुधन, कृपया मुझे तलवार वापस दे दीजिए। मैं इस अयोग्य और पापी जीवन का अंत कर दूँगा।" उसकी आँखों से आंसू बहने लगे।

सत्यकी पूरी तरह से असमंजस और व्याकुल हो गया। उसे आश्चर्य हुआ कि कोई पुरुष बच्चे या स्त्री की तरह कैसे रो सकता है। उसने द्रौपदी की ओर देखा। उसके वस्त्रों के हिलने-डुलने और पीड़ा से झुके हुए चेहरे को देखकर सत्यकी समझ गया कि वह दर्द से कराह रही होगी और उसकी साँसें तेज़ चल रही होंगी। कुछ देर तक कोई नहीं बोला। उस सन्नाटे में दूर युद्धक्षेत्र से हल्की-हल्की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। क्या ये हाथियों की चिंघाड़ थी या पुरुषों की खुशी और पीड़ा से चीखें? सन्नाटे के बीच-बीच में पक्षियों की चहचहाहट सुनाई दे रही थी।

तब कृष्ण ने मौन भंग करते हुए कहा, "युद्ध शुरू हुए पंद्रह दिन हो गए हैं। हममें से किसी ने भी एक पल भी नींद नहीं ली है। खासकर पिछले तीन दिनों से तो हमने

आँखें भी नहीं बंद की हैं। ऐसे शारीरिक और मानसिक दबाव में कोई अपना मानसिक संतुलन कैसे बनाए रख सकता है? अर्जुन, सत्यकी को थोड़ी नींद आ गई है और उसकी थकान कुछ हद तक दूर हो गई है। कम से कम, उसने अपना विवेक और मानसिक संतुलन तो वापस पा लिया है। इसलिए मैं सत्यकी का रथ चलाऊँगा और वह तुम्हारी सेना का नेतृत्व करेगा। तुम आधे दिन आराम करो, अर्जुन।"

अर्जुन ने पूछा, "कृष्ण, तुमने क्या कहा?"

कृष्ण ने कहा, "नींद की कमी के कारण तुम्हारा मन विचलित और दिशाहीन हो गया है। आधे दिन अच्छी नींद लो और फिर तरोताजा होकर काम पर लौट आओ।"

अर्जुन ने कहा, "आप यह कैसे भूल सकते हैं कि इस अर्जुन ने नींद पर विजय प्राप्त कर ली है? मैं कम से कम पंद्रह दिनों तक बिना पलक झपकाए जाग सकता हूँ। अब मेरी प्रतिज्ञा सुनो। मैं कर्ण को मारने तक शिविर में वापस नहीं लौटूँगा और अपने बड़े भाई को अपना चेहरा नहीं दिखाऊँगा। बड़े भाई, मैं आपके पवित्र चरणों की शपथ लेता हूँ।" फिर वह झुककर धर्मराज के चरणों को कसकर पकड़ लिया। बड़े भाई ने अपने छोटे भाई का सिर अपनी छाती से लगा लिया और उसे कसकर थाम लिया।

कृष्ण ने हमेशा की तरह, दूसरों की अनसुनी बातों को भांपते हुए कहा, "भगवान का शुक्र है कि तुमने अपने प्रस्तावित कार्य के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की है।" युयुधन तुरंत कृष्ण के शब्दों का महत्व समझ गया। दोनों भाई, जो एक-दूसरे को गर्मजोशी से गले लगाए हुए थे, इस बात को समझ ही नहीं पाए। द्रौपदी वहीं खड़ी यह सब देख रही थी।

कृष्ण ने अर्जुन को अपने बाएं हाथ से खींचते हुए कहा, "चलो अब चलते हैं। शत्रुओं को चैन से बैठने का समय न दें।" फिर युयुधन की ओर मुड़कर उन्होंने कहा, "यदि तुम्हारा विश्राम हो गया है, तो सुबह की रस्में पूरी करके युद्धक्षेत्र में आओ। हमारे शिविर में सभी को नींद की जरूरत है। मुझे पता चला है कि धृष्टद्युम्न ने एक योजना बनाई है जिससे हमारे सैनिक बारी-बारी से थोड़ी नींद ले सकेंगे।"

युयुधान जब अपने सिर समेत पूरे शरीर को कंबल से ढककर शौच करने निकला, तो उसने मैदानों में सर्दियों का सूरज नए दिन की हल्की रोशनी में फूटता

हुआ देखा। पक्षियों की आवाज़ बहुत कम थी। उसने उस युद्धक्षेत्र की ओर देखा जहाँ पिछले पंद्रह दिनों से लड़ाई चल रही थी। उसे आकाश में गिद्ध दिखाई नहीं दे रहे थे, शायद इसलिए कि रोशनी कम थी या इसलिए कि वे पिछले पंद्रह दिनों में भरपूर मात्रा में मिले मृत शरीरों को खाकर तृप्त हो गए थे। उसे यह बात खटक रही थी कि नदी के इस किनारे पर लाशों की दुर्गंध दूसरे किनारे की तुलना में अपेक्षाकृत कम थी। अचानक उसे घर का समुद्र याद आ गया, जिसे वह हर दिन मैदानों में शौच करने जाते समय देखता था। उसे घर के समुद्र की गर्जना करती हरी लहरों की याद सता रही थी, मानो न जाने कितने युगों से! उसने मन ही मन कहा, "यह शापित युद्ध जल्द ही समाप्त हो जाए और मैं अपने समुद्र और रेत पर लौट सकूँ।" फिर उसे एहसास हुआ कि उसे यह भी जोड़ना चाहिए, "यानी, अगर मैं इस खूनी युद्ध में बच पाया तो।" उन्होंने सोचा कि महत्वपूर्ण मुद्दा यह नहीं था कि वे जीवित रहें या मरें, बल्कि यह था कि युद्ध समाप्त हो। जितनी जल्दी हो, उतना अच्छा। वे कृष्ण से सहमत थे कि युद्ध को निरंतर जारी रखना चाहिए, भले ही इसके लिए विश्राम न करना पड़े, ताकि इसे जल्दी समाप्त किया जा सके। उन्होंने भीम के बिना विश्राम किए अंत तक लड़ने के दृष्टिकोण का भी समर्थन किया। भीम युद्ध के औपचारिक और सौंदर्यपरक पहलुओं की परवाह नहीं करते थे, जिनमें धनुर्विद्या का प्रदर्शन, वीरतापूर्ण कारनामे जो पौराणिक कथाओं को आमंत्रित करते हैं, कौशल, अपनी उपलब्धियों को सुनने की इच्छा, गर्जनापूर्ण प्रतिज्ञाएँ और प्रतिज्ञाएँ जैसी चीजों को बहुत महत्व दिया जाता था। भीम का दृष्टिकोण बिल्कुल सरल था - दौड़ो, मारो, तोड़ो और समाप्त करो, जितनी जल्दी हो उतना अच्छा! युयुधन ने धर्मराज और अर्जुन के बीच हुई हालिया घटना पर विचार किया। उन्हें उपप्लव्य में कृष्ण के साथ देखे गए पांडवों और अब भयंकर युद्ध में लगे पांडवों के बीच एक स्पष्ट अंतर दिखाई दिया। उनका मानना था कि युद्ध के दबाव में पांडवों के व्यक्तित्व में भी गुणात्मक परिवर्तन आ गया था। जुड़वां भाई नकुल और सहदेव कम बोलने वाले थे, लेकिन वे स्थिर और दृढ़ थे। वे कभी कायर नहीं थे। वे मोर्चे से तभी पीछे हटते थे जब वे अपने जीवन को जोखिम में नहीं डालना चाहते थे। लेकिन थोड़ी देर आराम करने के बाद वे तुरंत युद्ध में वापस कूद पड़ते थे। वे भले ही धीमे हों, लेकिन वे भरोसेमंद और दृढ़ थे। युयुधन ने सोचा, "अर्जुन बेशक एक महान योद्धा था। लेकिन मुझे कभी शक नहीं था कि वह इतना भावुक हो सकता है। और धर्मराज अब पहले की तुलना में अधिक दृढ़ इच्छाशक्ति वाला प्रतीत होता है। और

वह जुए के प्रति अपनी कमजोरी से भलीभांति परिचित था। अर्जुन के विपरीत, वह अपने लोगों से अत्यधिक लगाव नहीं रखता। धर्मराज ने ही धृष्टद्युम्न को अगले दिन भीष्म को मारने का सुझाव दिया था। उन्होंने ही दृढ़ता से कहा था कि युद्ध में उनकी सफलता के लिए द्रोण को मारना अत्यंत आवश्यक है। अब वह कर्ण को मारने की प्रतीक्षा कर रहा है। निस्संदेह, उसमें अन्य भाइयों जैसी शारीरिक शक्ति और युद्ध कौशल की कमी है... चलो देखते हैं कि भीष्म के युद्ध से हटने के बाद से क्या हुआ है। जब हमारे जासूसों ने यह खबर लाई कि द्रोण ने दुर्योधन को आश्वासन दिया है कि उसका पहला लक्ष्य धर्मराज को बंदी बनाना है, तो धर्मराज कितना घबरा गया था! उसने अर्जुन को निर्देश दिया, 'अर्जुन, तुम्हें हमेशा मेरे पास रहना चाहिए। मुझे आश्चर्य है कि द्रोण मुझे पकड़ने के लिए क्या रणनीति अपनाएगा।' "उन्हें अपना बंदी बना लिया!" उन्होंने अर्जुन और धर्मराज को अलग करने की कितनी कोशिश की! उन्होंने एक विशेष टुकड़ी भेजी जिसने अर्जुन को धर्मराज से अलग कर दिया। अर्जुन के लिए अपने बड़े भाई के जीवन की रक्षा करना उतना महत्वपूर्ण नहीं था जितना कि अपनी वीरता और कौशल का प्रदर्शन करने का एक और अवसर प्राप्त करना। इस बीच, हमारी तरफ से किसी के पास भी धर्मराज को पकड़ने के लिए द्रोण द्वारा बनाई गई रणनीतिक गोलाकार संरचना का सामना करने का कौशल नहीं था। लेकिन बेचारा अभिमन्यु, युवा वीर, उसमें घुस गया और मारा गया। और अर्जुन ने व्यावहारिक कठिनाइयों की परवाह किए बिना, केवल वीरता दिखाते हुए, अभिमन्यु की मृत्यु के लिए जिम्मेदार जयद्रथ को अगले दिन सूर्यास्त से पहले मारने की प्रतिज्ञा की। खैर, इतने वर्षों में मैं वास्तव में अर्जुन के स्वभाव और चरित्र को कभी नहीं समझ पाया था।" तभी युयुधन ने आकाश में गिद्धों को मंडराते देखा। उसने सोचा कि क्या वे सर्दी की रात की ठंड से बचने के लिए कहीं गर्म जगह पर आराम कर रहे थे या उन्होंने पूरी रात लाशों पर दावत की और सुबह अपने पंख फड़फड़ाने के लिए निकले। उसने मोर्चे पर जल्दी जाने का फैसला किया। उसने सुबह के स्नान और रस्में जल्दी से पूरी कीं और पाया कि ठंडा पानी उसकी त्वचा को जला रहा है। पिछले दिन की लड़ाई के घावों, चोटों और तनाव के कारण उसका पूरा शरीर दर्द कर रहा था। लड़ते समय उसे इन सब बातों पर ध्यान देने का समय ही नहीं मिला था। उसे युद्ध के इस पूरे माहौल पर दुख हो रहा था। फिर उसने गीले कपड़े धूप में सूखने के लिए टांगे, पैनकेक का गरमा गरम भोजन किया, नदी पार की और अपने रथ पर सवार हो गया। उसके

सारथी ने पूछा, "मैंने पैनकेक और पानी से भरा एक तांबे का बर्तन दो दिन के लिए पर्याप्त मात्रा में रखा है। क्या आपको लगता है कि हमारे पास तीरों का भंडार पर्याप्त होगा?"

—•✳•—

अध्याय 67

संजय ने धृतराष्ट्र को अपनी रिपोर्ट की शुरुआत इस प्रारंभिक कथन से की, "महाराज, भीष्म के दस दिनों के सर्वोच्च नेतृत्व के दौरान, शत्रु पक्ष का कोई भी नेता नहीं मरा। केवल साधारण सैनिक ही मारे गए जिनके सिर सामूहिक भोज में भेड़-बकरियों के सिरों की तरह लुढ़क गए। लेकिन द्रोण ने अपने साढ़े चार दिनों के नेतृत्व में कुछ शत्रु सेनापतियों के सिर लुढ़का दिए हैं, और सैनिकों में भी काफी संख्या में हताहत किए हैं..."

अचानक हस्तक्षेप करते हुए महाराजा ने पूछा, "वे कौन से नेता हैं जिनके सिर कलम कर दिए गए हैं? पहले मुझे उनके नाम बताइए।"

अचानक अपनी कथावाचन की लय से विचलित होकर, संजय ने नामों को याद करने के लिए कुछ क्षण लिए और कहा, "मैं तुम्हें बताता हूँ। रुको। अर्जुन का पुत्र अभिमन्यु, भीम का पुत्र घटोत्कच, आचार्य द्रोण, सिंधु शासक जयद्रथ और कई सहयोगी राजा..." जयद्रथ का नाम सुनते ही गांधारी चीख पड़ी, "क्या तुम्हारा मतलब मेरी बेटी दुश्शाले के पति से है?"

संजय ने शांत स्वर में उत्तर दिया, "जी हां, महारानी।" वह अपने कथन में आ रही इन रुकावटों से थोड़ा परेशान था। महारानी ने पूछा, "उसे किसने मारा?" उसने शांत भाव से उत्तर दिया, "अर्जुन ने जयद्रथ को मारा और इस प्रकार उसने अपनी पूर्व प्रतिज्ञा पूरी की।"

गांधारी ने कहा, "जिसने मेरी बेटी को विधवा बनाया है, उसकी पत्नी का क्या होगा...?" उनका दुःख शाप में बदल गया। धृतराष्ट्स का हृदय भी पिघल गया। रात के सन्नाटे में शेल्फ पर दीपक जल रहा था। विदुर एक खंभे से टेक लगाकर बैठे थे।

धृतराष्ट्र ने कहा, "विदुरा, तुम उसे सांत्वना क्यों नहीं देते?"

विदुरा कहते हैं, "जी भर कोसने के बाद मन फिर से सामान्य हो जाता है। उस बालक अभिमन्यु की पत्नियाँ और घटोत्कच की पत्नियाँ भी विधवा हो गई हैं। अब तक मारे गए अनगिनत सैनिकों और सहयोगी शासकों की पत्नियाँ भी विधवा हो गई हैं। अनेक देशों में फैली, गृहस्थी के काम करने वाली और खेतों में काम करने वाली इन असंख्य पत्नियों का एक ही युद्ध में विधवा हो जाना चिंता का विषय है। आइए हम यह प्रश्न करें कि यह विपत्ति क्यों आई है।"

विदुर की बात सुनकर गांधारी ने शाप देना बंद कर दिया। उसका लाल चेहरा और भी लाल हो गया था, और संजय और विदुर दोनों ने दीपक की रोशनी में इसे देखा। विदुर ने आदेश दिया, "संजया, आगे क्या हुआ, बताओ।"

संजय ने आगे कहा, "जब द्रोणाचार्य को सर्वोच्च सेनापति बनाया गया, तो उनका चेहरा कृतज्ञता और संतोष से चमक उठा। उन्होंने दुर्योधन से पूछा, 'महाराज, आपकी उदारता के बदले मैं आपको अपना आभार कैसे प्रकट करूँ?' दुर्योधन ने कहा, 'कुछ खास नहीं। बस धर्मराज को बंदी बनाकर मुझे सौंप दीजिए। मैं वादा करता हूँ कि मैं उन्हें नहीं मारूँगा। उसके बाद मैं उचित शांति स्थापित करने का निर्णय लूँगा।' महाराजा के इस विचार का सभी ने स्वागत किया। क्या युद्ध के बाद महाराजा का यही इरादा नहीं था कि वे धर्मराज को उनके हिस्से का क्षेत्र सौंप दें? तब द्रोणाचार्य ने हमारी तरफ के सभी सेनापतियों से कहा, 'हमारा उद्देश्य धर्मराज को बंदी बनाना है। इसे प्राप्त करने के लिए मैं सेना गठन की एक रणनीति तैयार करूँगा। आप सभी को इसका रहस्य अच्छी तरह समझ लेना चाहिए और फिर युद्ध करना चाहिए।' फिर उन्होंने उन्हें अपनी रणनीति का विस्तृत विवरण दिया। सेनापतियों ने संबंधित विवरण अपने अधीन के लोगों को बता दिए। इस रणनीति में चक्रव्यूह या वृत्त के भीतर वृत्त गठन नामक एक संरचना शामिल थी। रणनीति। उन्हें इसमें एक समस्या मिली। दरअसल, द्रोण ने अर्जुन को अपने सारे गुर और रणनीतियाँ सिखा दी थीं। इसलिए यह लगभग निश्चित था कि अर्जुन शुरू से ही बिना फँसे इस पर आक्रमण करने में सफल हो जाएगा। लेकिन यह भी संभव था कि चतुर कृष्ण, जो उनके सारथी थे, हमारी रणनीति का रहस्य जान लें और हमारी

रणनीति को ही हमारे विरुद्ध इस्तेमाल कर दें! इसलिए हमारे लिए समस्या यह थी कि अर्जुन और कृष्ण को कुछ समय के लिए युद्ध के मैदान से दूर रखा जाए। इसे कैसे किया जाए? आप त्रिगर्त के राजा सुशर्मा और उनके छोटे भाइयों सत्येशु, सत्यकर्म, सत्यदेव और सत्यरत को जानते हैं। ये हमारे महाराजा के बहुत करीबी मित्र हैं। अगले दिन सुबह युद्ध शुरू होने वाला था, जब पाँचों में सबसे बड़े सुशर्मा ने अर्जुन को चुनौती देने का निश्चय किया, उनकी सबसे बड़ी कमजोरी, अहंकार का चतुराई से फायदा उठाते हुए। उन्होंने अर्जुन से कहा, 'यदि तुममें साहस है, तो आओ और मुझसे आमने-सामने की लड़ाई लड़ो।' यही योजना थी। अर्जुन स्वाभाविक रूप से इस चुनौती को स्वीकार कर लेते। यह सम्मान का मामला था, और इस तरह उन्हें और कृष्ण को युद्ध स्थल से हटा दिया जाएगा। इस रणनीति का मुकाबला करने के लिए दुश्मन पक्ष में कोई और नहीं बचेगा। उन्होंने सोचा कि इसके बाद यह बिल्कुल निश्चित हो जाएगा कि धर्मराज को घेरकर बंदी बना लिया जाएगा। उन्होंने इसी के अनुरूप कार्य किया।

धृतराष्ट्र ने उत्साहपूर्वक कहा, "वाह! वाह! क्या उन्होंने इसे अंजाम दिया? दुर्योधन से कहो कि वह कैदी धर्मराज को मेरे सामने पेश करे।"

संजय ने कहा, "मुझे यह बताते हुए खेद है कि उसे बंदी नहीं बनाया जा सका। अप्रत्याशित घटनाओं के कारण योजना विफल हो गई। त्रिग्रत के राजा की चुनौती सुनते ही अर्जुन अपनी सेना के साथ उसके पीछे चल पड़ा। वह घटनास्थल से काफी दूर चला गया था।"

चुनौती का उत्तर देने के लिए वह एक दूर स्थान पर गया, टूटे रथों, बिखरे तीरों और सड़ते मांस की दुर्गंध से परे, चारों टीलों के पार। इसी बीच, किसी तरह पांडवों को हमारी नई रणनीति का पता चल गया। धर्मराज पीछे हट गए और अपने सैनिकों को शत्रु सेना की अज्ञात संरचना में प्रवेश न करने का आदेश दिया। साथ ही, उसमें प्रवेश न करना क्षत्रिय योद्धाओं के समक्ष अपमान का कारण बनता। वे सर्वत्र उपहास का पात्र बन जाते। नकुल, सहदेव, युयुधन, धृष्टद्युम्न और अन्य पांडव सेनापति असहाय महसूस कर रहे थे, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें। लेकिन भीम, हमेशा की तरह शांत, बोले, "हमारे शत्रुओं ने जिस तरह से संरचना बनाई है, उस तरह से आप उसमें प्रवेश क्यों करें? हमें उसमें प्रवेश करने की चिंता नहीं करनी चाहिए। आइए, हम आक्रमण करें और उन्हें नष्ट कर दें।" एक तरफ से उन्होंने हमारे सैनिकों पर हमला करना शुरू कर दिया और उन्हें

नुकसान पहुँचाना शुरू कर दिया। बाकी लोग निष्क्रिय खड़े रहे, निर्णय लेने में असमर्थ। फिर अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु आगे आए और बोले, "मैं वृत्त के भीतर वृत्त बनाने की रणनीति जानता हूँ। उपप्लव्य में मेरे पिता ने मुझे रेत पर उंगलियों से आकृतियाँ बनाकर इसके बारे में विस्तार से बताया था। मुझे इसमें प्रवेश करने दीजिए। फिर आप सब मेरे पीछे आ जाइए।" हालाँकि वह मुश्किल से एक लड़के से थोड़ा ही बड़ा था, फिर भी वह बहुत बहादुर और उत्साही था। जिस तरह से वह बाणों को घुमावदार गति से चला सकता था, उससे पता चलता था कि अर्जुन के सिवा कोई भी इतनी कुशलता से तीर नहीं चला सकता था। उसका निशाना उतना ही सटीक था जितना उसके पिता का। एक-दो क्षण के लिए धर्मराज अभिमन्यु को भेजने में हिचकिचाए, लेकिन यह सम्मान का मामला था। उन्होंने उसे आगे रखने और खुद पीछे चलने का फैसला किया। ऐसा लगता है कि वृत्त के भीतर वृत्त बनाने की रणनीति का मुख्य उद्देश्य शत्रु को रास्ता भटकाकर फंसाना है, उसे एक ऐसे फंसे हुए जानवर की तरह बनाना है जो शिकारी के जाल से बच न सके। अभिमन्यु ने वृत्त में घुसने की कोशिश की, और हमारे सैनिकों ने जानबूझकर उसे अंदर जाने दिया। बेचारा वह भंवर में फंस गया। सेना के बाहरी भाग में, धर्मराज को दोनों ओर से युयुधन और धृष्टद्युम्न के नेतृत्व में दो टुकड़ियों द्वारा सुरक्षित किया गया था, जिनके पीछे नकुल और सहदेव उनका समर्थन कर रहे थे। खैर, यही हुआ। वे धर्मराज को नहीं पकड़ सके। लेकिन दोपहर तक, वे अभिमन्यु को कुचलकर समाप्त करने में सफल रहे। लेकिन उस युवा लड़के के वीरतापूर्ण कारनामों का गुणगान अवश्य करना चाहिए। उसने कैसे हम पर पलटवार किया और हमारे सैनिकों को नष्ट कर दिया। मुझे बताया गया है कि उसने उपप्लव्य में रहते हुए ही अपनी उम्र के युवाओं की एक छोटी सी टुकड़ी संगठित कर ली थी। वे सभी युवा थे, उनमें से अधिकांश बीस वर्ष से कम आयु के थे, और कोई भी बीस वर्ष से अधिक आयु का नहीं था। उसमें किसी भी खतरनाक स्थिति में कूदने का उत्साह था। उसमें युवावस्था की बेपरवाही थी, कार्रवाई करने से पहले कोई संकोच नहीं। उन्हें परिणामों की कोई चिंता नहीं थी। उनका आदर्श वाक्य था: बस कूद पड़ो और कार्रवाई करो। उन्हें मान-सम्मान, प्रसिद्धि और कौशल और वीरता के दिखावे की परवाह नहीं थी। वे केवल कर्म और कार्य के पीछे पड़े थे। अभिमन्यु के नेतृत्व में ये सभी युवक सेना की टुकड़ी की ओर दौड़े। जैसे ही अभिमन्यु ने जयद्रथ को टुकड़ी के प्रवेश द्वार पर देखा, उन्होंने कहा, 'क्या तुम वही दुष्ट हो जिसने मेरी माता का

अपमान किया था?' फिर उन्होंने एक बाण चलाया। सभी युवकों ने एक ही लक्ष्य पर बाण चलाए। जयद्रथ को संभलने में कुछ क्षण लगे। लेकिन ये युवक आगे बढ़ते रहे। उन्होंने इक्ष्वाकु वंश के एक राजा को मार गिराया... मुझे अब उसका नाम याद नहीं है। मद्रास राजा शल्य, जो किसी भी जोश या उत्साह से नहीं लड़ रहे थे, बाण से घायल हो गए और तुरंत अपने रथ में गिर पड़े। फिर आगे बढ़ते हुए, उन्होंने द्रोण के रथ दल पर भयंकर आक्रमण किया। उन्होंने भारी क्षति पहुंचाई, रथ चकनाचूर हो गए और घोड़े तितर-बितर हो गए। जब उन्हें पता चला कि यह अर्जुन का पुत्र है, तो द्रोणाचार्य ने कुछ क्षण तक लड़के को घूर कर देखा और चिल्लाए, 'शाबाश!' फिर उन्होंने दुर्योधन को अभिमन्यु को मार गिराने का आदेश दिया... दुस्साना ऐसा करने में असमर्थ रहा। कर्ण भी उस युवक के कौशल और साहस का मुकाबला नहीं कर सका, और यह अविश्वसनीय था। किसी तरह, लड़ने के बजाय, कर्ण उस लड़के को निहारने में खो गया। उसकी सटीकता डगमगा गई, और ऐसा लग रहा था कि वह उस लड़के के रूप-रंग से मोहित हो गया था। लेकिन उन युवकों को कोई परवाह नहीं थी। वे तोड़-फोड़, चीर-फाड़, गोलीबारी और प्रहार करते हुए आगे बढ़ते रहे। नज़र आने वाली हर चीज़ को! उनकी विचित्र चीखें हवा में गूंज रही थीं। हमारे कितने ही सैनिक उनके हाथों मारे गए। मद्रास के राजा शल्य के पुत्रों में से एक की मृत्यु हो गई। अनगिनत राजकुमार मारे गए। वृंदारक नाम का एक राजा भी मारा गया। अन्य मारे गए लोगों में अश्वकेतु, शत्रुंजय, चंद्रकेतु, मेघवेग, सुवर्चा, सूर्यभास और अन्य शामिल थे जिनके नाम मुझे याद नहीं हैं। हे भगवान, मैं सबसे महत्वपूर्ण बात भूल गया था। हाँ, दुर्योधन का पुत्र लक्षण भी मारा गया। फिर और कौन?

Dhritarashtra screamed madly, "You mean my grand-son Lakshana?"

संजय, जिसे वह युद्ध की घटनाओं का वर्णन सुना रहा था, उससे पूरी तरह अनभिज्ञ होकर, सहज स्वर में बोला, "हाँ, यह सही है। फिर जब इस युवा ब्रिगेड का हमला बहुत भारी साबित हुआ, तो शकुनी ने एक उपाय सुझाया, एक रास्ता निकाला..."

धृतराष्ट्र चिल्लाए, "संजय, बस करो, बस करो। मैं तुम्हारी रिपोर्ट और नहीं सुनना चाहता।"

संजय ने अचानक अपना वर्णन रोक दिया। धृतराष्ट्र चुप हो गए। गांधारी मन ही मन विलाप करती हुई मौन खड़ी रही। कमरा मृत्यु के सन्नाटे में डूब गया। महल में भयानक सन्नाटा पसरा हुआ था। हस्तिनावती का पूरा इलाका एक भयावह सन्नाटे की चपेट में था। छोटा सा दीपक धीमी आंच पर जल रहा था। दासी दरवाजे की ओर पीठ करके ऊंघ रही थी। कुछ देर रुककर संजय ने कहा, "मैं यहीं अपना वर्णन समाप्त करता हूँ। मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मैं सदियों से सोया ही नहीं हूँ। इसलिए अब मैं घर चलता हूँ। मैं सोने की कोशिश करूँगा, लेकिन खबर जुटाने के लिए भागने की हड़बड़ी में मुझे नींद आ पाएगी या नहीं, यह कहना मुश्किल है। एक दिन का भी अंतराल हुआ तो अधिकांश बातें मेरी याददाश्त से मिट जाएँगी।"

तब धृतराष्ट्र ने कहा, "हमें यह बताइए कि अभिमन्यु की हत्या कैसे हुई, और फिर आप आज की अपनी रिपोर्ट समाप्त कर सकते हैं।"

संजय ने कहा, "शकुनी का सुझाव था कि हम सब एक साथ उस बालक पर टूट पड़ें और उसे मार डालें। उसके अनुसार, अभिमन्यु के खतरे को रोकने का यही एकमात्र तरीका था। द्रोणाचार्य सहमत नहीं हुए। तब दुर्योधन ने कहा, 'ठीक है आचार्य, आप अकेले ही जाकर उससे लड़ सकते हैं। मैं अपने सैनिकों की और हानि नहीं होने दूंगा। इसके अलावा, जब तक मैं अपने पुत्र के हत्यारे को मरते हुए नहीं देख लेता, तब तक मुझे चैन नहीं आएगा।' तब महाराजा और शकुनी का सुझाव द्रोणाचार्य ने स्वीकार कर लिया। तदनुसार, हमारे शीर्ष योद्धाओं जैसे द्रोणाचार्य, कर्ण, कोशल के राजा बृहदबल, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और द्वारका के यादव सेनापति कृतवर्मा ने अपनी सेना के साथ अभिमन्यु और उसकी सेना को घेर लिया। इसी अभियान में कोशल के राजा बृहदबल शहीद हो गए। तब तक हम अभिमन्यु की सेना के कई सदस्यों को मार चुके थे। जो बचे थे वे बहुत थक चुके थे। अपनी जवानी के जोश में उन्होंने अपनी सारी ऊर्जा और हथियार खर्च कर दिए थे। उनके बाण भी खत्म हो चुके थे। अभिमन्यु के रथ में एक भी बाण नहीं बचा था। उन्हें मजबूर होकर अपनी तलवार उठानी पड़ी और उसे लेकर वे युद्ध के मैदान में कूद पड़े। छह सेनापतियों और उनके सैनिकों ने अब अपने बाण एक ही लक्ष्य पर साधे - अभिमन्यु पर, जो निश्चित मृत्यु के सामने भी अपनी तलवार चला रहे थे, मानो मृत्यु से उन्हें कोई लेना-देना ही न हो। क्या आप इस घटना के बारे में कुछ खास जानते हैं? उन्होंने अपने पिता अर्जुन का कवच पहना हुआ था। यह एक विशेष कवच था, जो गर्दन, बगल और पीठ पर सख्त था। लेकिन कोई भी बाण इन

हिस्सों को भेद नहीं सकता था। इसके अंदर धातु की पन्नी लगी हुई थी, और जब बाण इस पर लगते थे, तो एक धातु की ध्वनि उत्पन्न होती थी। अंततः, उन्होंने अभिमन्यु के चेहरे, जांघों और घुटनों पर बाणों की वर्षा करके उन्हें मार डाला। उनकी मृत्यु अत्यधिक रक्तस्राव के कारण हुई। बाकी युवकों में से अधिकांश मारे गए। अपने नेता के गिरने के बाद शेष तितर-बितर हो गए। लेकिन वे एक घेरे के भीतर घेरा बनाकर फंस गए थे, और आगे बढ़ने में असमर्थ थे। भागने की कोशिश में, तीरों की लगातार बौछार के बीच एक-एक करके वे खून बहने से मर गए। शायद उनमें से कुछ आत्मसमर्पण करना चाहते, लेकिन उनके पास ऐसा करने का कोई मौका नहीं था। इस्तेमाल किए गए तीरों की संख्या अविश्वसनीय थी। अगर उन्हें इकट्ठा किया जाता, तो वे उस दिन जमीन पर बिखरे सभी शवों को जलाने के लिए पर्याप्त ईंधन प्रदान कर सकते थे।

धृतराष्ट्र ने गहरी साँस ली। गांधारी ने अपने कसे हुए होंठ खोले। संजय की आवाज़ धीरे-धीरे मंद होती जा रही थी। फिर सन्नाटा छा गया। वहाँ मौजूद सभी लोगों को मानो हवा में संजय द्वारा वर्णित घटनाओं के सजीव चित्र दिखाई दे रहे थे। सभी मूक चित्र। कुछ समय बाद, विदुर ने पूछा, "शुरुआत में आपने हमें बताया था कि भीम सेना के एक तरफ दौड़ा। उसके साथ क्या हुआ? क्या उसकी इस हरकत से सेना अस्त-व्यस्त हो गई?"

संजय ने कहा, "दुर्भाग्यवश मैं युद्धक्षेत्र के उस हिस्से के बारे में जानकारी जुटा नहीं सका। अब मुझे स्पष्ट रूप से समझ आ रहा है कि भीम क्या कर रहा था। उसका इरादा धृतराष्ट्र के पुत्रों को ढूँढ़कर उन्हें मार डालना था। ऐसा लगता है कि हमारे सैनिकों को इसकी जानकारी थी। जैसे ही उन्होंने भीम और उसकी सेना को आते देखा, वे तुरंत तितर-बितर हो गए। फिर भीम ने आक्रमण किया और महाराजा के पुत्रों को मार डाला। अब तक उसने इकत्तीस पुत्रों को मार गिराया है। उनमें से तेरह वृत्ताकार संरचना में थे। फिर शत्रुंजय, शत्रुसह, चित्रबाण, चित्रायुध आदि सहित आठ व्यक्तियों का एक समूह था। और दुर्जय, दुर्मुख, दुर्मर्शन, दुस्साह और दुर्मदा सहित पाँच व्यक्तियों का एक और समूह था। फिर..."

गांधारी फिर चीखी, "हे भगवान! ये पाँचों मेरे अपने पुत्र हैं!" संजय और विदुर उसकी ओर मुड़े। चीखते-चीखते वह धड़ाम से सोफे पर गिर पड़ी। धृतराष्ट्र ने "मेरे पुत्रों..." कहने के लिए मुँह खोला, लेकिन अपनी पत्नी को गले लगाने के लिए झुके। उनका गला भर आया।

—•✳•—

अध्याय 68

जैसे ही उन्होंने पूछा, "मेरे पुत्र?" अर्जुन का गला भर आया। जब वे अपनी कुटिया में दाखिल हुए और सुभद्रा को ज़मीन पर लोटते और ज़ोर-ज़ोर से रोते देखा, तो उन्हें कोई संदेह नहीं रहा कि यह उनका पुत्र ही है। वे उसके पास गिर पड़े और उसे गले लगा लिया। आँसुओं से उसका चेहरा मिट्टी जैसा हो गया था, और वह अपने पति की जांघों से लिपटी हुई थी। दरवाज़ा खुला रह जाने के कारण मोटा दीपक हिलने लगा। द्रौपदी, कृष्ण और धर्मराज के आने से दीपक की लौ स्थिर हो गई, क्योंकि उन्होंने दरवाज़े से आती हवा को रोक दिया था। वे शोकग्रस्त दंपति के चारों ओर खड़े हो गए। वह उनके कंधों पर और वह उनकी जांघों पर अपने आँसू बहा रहे थे। उनके शरीर के काँपने के कारण धर्मराज स्तब्ध रह गए। द्रौपदी की आँखें आँसुओं से भरी हुई थीं। कृष्ण चुपचाप खड़े थे, उनका चेहरा उदासी से भरा हुआ था।

सुभद्रा रोते हुए आरोप लगा रही थी, "तुम्हारा प्रिय पुत्र बलिदान हो गया। लगता है तुम्हारे बड़े भाई ने उसे युद्ध में जाने की अनुमति दी थी। तुम्हारे वहाँ होने के बावजूद उसे मरना पड़ा। तुम्हारे बड़े भाई पर धिक्कार है। तुम्हारी धनुर्विद्या पर धिक्कार है। तुम्हारे बाणों की शक्ति पर धिक्कार है। भीम की बलिष्ठ भुजाओं पर धिक्कार है। पूरे पांडव वंश पर धिक्कार है।" वह टूटे हुए घड़े की तरह आँसू बहा रही थी। अर्जुन को समझ नहीं आ रहा था कि इस स्थिति पर क्या प्रतिक्रिया दे, सिवाय उसे और कसकर गले लगाने के।

कुछ समय बाद उनका रोना बंद हो गया और उन्होंने द्रौपदी को सांत्वना दी। फिर वे अगली कुटिया में गए, जहाँ दीपक की मंद रोशनी में अभिमन्यु की युवती उत्तरे द्रौपदी की गोद में लेटी हुई थीं और द्रौपदी कोमल भाव से उनके माथे पर

हाथ फेर रही थीं। द्रौपदी पीठ के बल लेटी थीं, उनका गर्भ उनके मृत पति के गर्भ से फूला हुआ था। उनका दुःख इतना गहरा था कि उसे व्यक्त करने का कोई रास्ता नहीं मिल रहा था, और न ही उसका कोई बाहरी प्रदर्शन था, सब कुछ उनके भीतर एक सोए हुए ज्वालामुखी की तरह जमा हो रहा था। जैसे ही उन्होंने अपने ससुर अर्जुन को कुटिया में प्रवेश करते देखा, उन्होंने लज्जावश अपने पैर पीछे खींच लिए। फिर वे किसी तरह उठकर बैठ गईं, उनका सिर नीचे झुका हुआ था। थोड़ी देर बाद खड़े होकर अर्जुन ने कहा, "द्रौपदी, तुम्हारे समान सांत्वना देने की शक्ति किसी के पास नहीं है।" द्रौपदी चुप रहीं। चूंकि उन्होंने अंदर आने के लिए दरवाजा खोला था, इसलिए दीपक टिमटिमाने लगा। फिर अर्जुन चले गए।

धर्मराज की विशाल कुटिया में सारी जानकारी मिलने के बाद अर्जुन ने पूछा, "उसकी हत्या के लिए प्रत्यक्ष रूप से कौन जिम्मेदार था?" धर्मराज ने कहा, "जयद्रथ। अगर उसने हमें सेना में प्रवेश करने से न रोका होता, तो अभिमन्यु आज जीवित होता। वह अत्यंत वीरता से लड़ रहा था, लेकिन वह अकेला था। अगर हम अंदर चले जाते, तो उसका अंत इस प्रकार नहीं होता।"

अर्जुन ने कहा, "बड़े पापी! कसाई! क्या जिसने हमसे अपना प्राणदान लिया, उसने मेरे पुत्र की हत्या की?" उसने यह प्रश्न ऐसे चिल्लाकर पूछा मानो वह आकाश को सुनाना चाहता हो।

धर्मराज ने आगे कुछ नहीं कहा। लेकिन भीम ने तुरंत कहा, "ऐसा क्या नियम है कि उन्होंने कोई मोर्चा बना लिया है तो हमें उसमें घुसकर अपनी तकनीकी कुशलता और निपुणता का प्रदर्शन करना चाहिए? हमने तो क्षत्रिय स्वभाव ही दिखाया— औपचारिक, न कि योजनाबद्ध, न कि व्यावहारिक। ये सब द्रोणाचार्य जैसे पेशेवरों द्वारा अपनी अहमियत और रुतबे को बढ़ाने के लिए विकसित की गई व्यर्थ की चालें और दिखावटी तकनीकें हैं। मैं दोहराता हूँ, युद्ध कौशल या नियमों का प्रदर्शन नहीं है। यह तो बस नग्न हत्या है, एकमात्र नियम है, मारो या मरो। हमें नियमों की परवाह किए बिना उन पर टूट पड़ना चाहिए था। इसमें तकनीक कहाँ है?"

अर्जुन चुपचाप भीम के चेहरे को निहारते रहे। धर्मराज भीम की आँखों में सीधे देखने से बच रहे थे। कृष्ण अपनी आदत के अनुसार चुपचाप और सोच-विचार करते हुए स्थिति को समझने की कोशिश कर रहे थे। नकुल, सहदेव, धृष्टद्युम्न

और सत्यकी को युद्ध रणनीति और आचरण के बारे में अपने विचारों पर पुनर्विचार करने के लिए मजबूर होना पड़ा। कानाफूसी होने लगी।

भीम ने फिर कहा, "दूसरी बात, मैं चाहता हूँ कि आपको याद रहे कि जब हमने जयद्रथ को पकड़ा था, तो मैंने आपसे विनती की थी कि मुझे उसे वहीं मार डालने की अनुमति दें। मुझे अच्छे आचरण, धैर्य, सहनशीलता और अपने करीबी रिश्तेदार के रूप में उसके प्रति आदर का पाठ पढ़ाया गया था। हमें सलाह दी गई थी कि हम अपने चचेरे भाई को विधवा न बनाएँ। धर्म के महान विद्वान हमारे बड़े भाई की वजह से ही हमें आज यह दृश्य देखना पड़ा। अर्जुन, तुम धर्मराज की बुद्धिमत्ता में बहुत विश्वास रखते हो, और फिर तुमने भी मुझे चुप कराने के लिए उनका साथ दिया। तब से वह हमसे द्वेष पाले हुए है और अपनी सेना को हमारे द्वारा किए गए अपमान का बदला लेने के लिए प्रशिक्षित कर रहा है। मान लो कि तुमने तब मेरी बात मान ली होती?"

अर्जुन अपना सिर झुकाए चुपचाप मन ही मन सोच रहे थे। धर्मराज ने अपनी निगाहें जमीन से नहीं हटाईं, वे लगातार देख रहे थे। भीम ने आगे कहा, "कल के युद्ध में अगर हम जयद्रथ को फंसाकर मार नहीं डालते, तो हम अपने पुत्र की हत्या का बदला नहीं ले पाएंगे। चार दिन बाद हत्यारे को मारना वास्तविक बदला नहीं माना जा सकता। यह तो युद्ध में हुई एक सामान्य क्षति ही मानी जाएगी। बदला तो लेना ही होगा। बताइए अर्जुन, क्या मैं मारूं या आप मारें? आपने ही तो मुझे तब उसे मारने से रोका था। और अभिमन्यु का जन्म भी आपने ही करवाया था।"

उस ताने से उत्तेजित होकर अर्जुन ने भीम को घृणा भरी निगाहों से देखा। भीम के चेहरे पर तिरस्कार का भाव था, उसकी आँखों में विजय की चमक थी। अर्जुन अचानक उठ खड़ा हुआ। उसने अपने दाहिने हाथ की उंगलियों को हथेली पर मोड़कर आकाश की ओर उठाया और मानो आकाश को अपनी बात मनवाने के लिए चिल्लाया, "मैं कल शाम से पहले उस दुष्ट जयद्रथ को न मार डालूँ तो मैं स्वयं को पांडु पुत्र नहीं मानूँगा। यदि मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी न कर पाऊँ तो मैं पांडव नहीं रहूँगा। मैं युद्ध के मैदान में ही अग्नि में प्रवेश करके प्राण त्याग दूँगा।"

अब तक किसी को भी यह अंदाज़ा नहीं था कि अर्जुन के फेफड़ों में इतनी शक्ति है कि वह इतनी ऊँची आवाज़ निकाल सके। इतनी ऊँची आवाज़ में चिल्लाने के बाद, वह एक खंभे की तरह स्थिर खड़ा रहा, उसका दाहिना हाथ हवा में रुका हुआ सा लग रहा था। ऐसा लग रहा था मानो झोपड़ी की छत गिरने वाली हो और

वह उसे थामे हुए हो। चिल्लाने के बाद जो सन्नाटा छाया, वह इतना घुटन भरा था कि साँस लेना मुश्किल हो रहा था। कुछ क्षण बाद कृष्ण ने मौन भंग करते हुए कहा, "अर्जुन, तुम्हारे मुँह से निकले ये शब्द नासमझी भरे हैं। कल हम जयद्रथ को मारने का हर हाल में प्रयास करेंगे। लेकिन, कृपया इस मामले में कोई औपचारिक प्रतिज्ञा न लें। एक बार प्रतिज्ञा ले ली तो वह पूर्ण और अटल हो जाती है। अन्यथा, अन्य लोगों की नज़रों में हमारी प्रतिष्ठा धूमिल हो जाएगी। यदि हम प्रतिज्ञा लेकर उसे पूरा न करें तो हमारा अंतरात्मा हमें चैन से नहीं बैठने देगा। तुम्हें इतनी ऊँची-ऊँची बातें करने की क्या आवश्यकता थी? तुमने इतनी ज़ोर से चिल्लाया कि हमारे शिविर के हर कोने तक और नदी के उस पार तक भी तुम्हारी आवाज़ पहुँच गई। क्या तुम हमारे शत्रुओं को मूर्ख समझते हो? हो सकता है उन्होंने हमारे शिविर में अपने जासूस तैनात कर रखे हों। या हमारे कुछ सैनिकों का उनके जासूसों से संपर्क हो। यदि उन्हें इसका पता चल गया, तो वे इसे पूरे युद्धक्षेत्र में फैला देंगे। वे कल के युद्ध से जयद्रथ को हटाकर उसे विशेष सुरक्षा भी प्रदान कर सकते हैं। शाम होते ही वे तुमसे पूछेंगे: 'तुम्हारी प्रतिज्ञा का क्या हुआ? हम तुम्हारे लिए आग का गड्ढा तैयार करेंगे, कृपया उसमें गिर जाओ।'" अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो। फिर तुम क्या करोगे?'

कृष्ण के प्रश्न से उत्पन्न सन्नाटा और भी भयावह सिद्ध हुआ। सर्वोच्च सेनापति धृष्टद्युम्न अपना सिर खुजलाने लगे, यह सोचकर कि वे कल के युद्ध का सामना कैसे करेंगे। धर्मराज प्रतिज्ञा पूरी न करने के परिणामों से भयभीत थे। कुटिया में एक प्रकार का निर्मम भय छा गया। अर्जुन उसी मुद्रा में स्थिर खड़े रहे, मानो जम गए हों, उनका हाथ अभी भी हवा में उठा हुआ था। युयुधन ने कुछ कहने के लिए अपना मुंह खोलने का प्रयास किया, लेकिन केवल एक अक्षर ही बोल पाए, बाकी का शब्द उनके मुंह में ही समा गया।

धृष्टद्युम्न ने पूछा, "सत्यकी, तुम क्या कहने वाली थी?"

Yuyudhana, "Nothing."

धृष्टद्युम्न ने कहा, "आप बहुत कम बोलने वाले व्यक्ति हैं। लेकिन अब हमें अपने सभी विचारों को एक साथ लाना होगा, और हर किसी को अपने मन की बात बतानी होगी। ऐसा इसलिए है क्योंकि अर्जुन की प्रतिज्ञा हम सबकी सामूहिक जिम्मेदारी है।"

युयुधना ने कहा, "खैर, मुझे जो कहना था उसका व्रत से कोई लेना-देना नहीं है।"

धृष्टद्युम्न ने कहा, "कोई बात नहीं। बताओ तुम्हारे मन में क्या है।" नकुल, सहदेव, द्रुपद, विराट समेत सभी युयुधन से अपने मन की बात बताने का आग्रह करने लगे, मानो इससे उन्हें दमनकारी चुप्पी से मुक्ति मिल जाएगी।

युयुधन ने उत्तर दिया, "कोई और विचार मुझे परेशान कर रहा था। उपप्लव्य जाकर और इस क्षेत्र के अन्य क्षत्रियों से मिलने के बाद ही मुझे इसका एहसास हुआ। इन क्षेत्रों के क्षत्रिय जरासंध के भय से मथुरा से भागने के कारण यादवों को नीचा समझते थे। जहाँ तक कृष्ण की बात है, जिनकी सलाह ही मुख्य रूप से उनके भागने का कारण थी, वे उन्हें अपशब्द कहते हैं, उनका उपहास करते हैं, उन्हें कायर, गैर-क्षत्रिय, एक ग्वाला कहते हैं जो जंगली जानवरों की उपस्थिति को भांपकर अपने पशुओं को भगा ले जाता है, जंगली जानवरों का सामना करने से डरता है। जब मैं बीस-पच्चीस वर्ष का युवक था, तब मुझे भी उनकी सलाह की सत्यता पर संदेह था। यदि त्रिगर्त की चुनौती को अर्जुन ने धर्मराज की सुरक्षा सुनिश्चित करने के बाद ही स्वीकार किया होता, तो आज हमें यह हार न मिलती! अभिमन्यु को अपने प्राणों का बलिदान न देना पड़ता। कृष्ण, आपने अर्जुन को उनकी चुनौती को अनदेखा करने की सलाह क्यों नहीं दी?"

कृष्ण ने बार-बार कहा कि उन्होंने वास्तव में ठीक वैसा ही किया था। धर्मराज ने आगे कहा, "लेकिन अर्जुन की क्षत्रिय धर्म की भावना..." उन्होंने अपना कथन पूरा नहीं किया।

युयुधन ने आगे कुछ नहीं कहा। एक बार फिर वातावरण में सन्नाटा छा गया। लेकिन यह पहले की तुलना में कम कष्टदायक सन्नाटा था। कुछ देर बाद, सर्वोच्च सेनापति धृष्टद्युम्न ने कहा, "अब हमें क्षत्रिय धर्म के नाम पर कही जाने वाली कई बातों का त्याग करना होगा। भीम ने जो कहा है वह सही है। हमें शत्रु की सेना में घुसपैठ करने में अपनी ऊर्जा क्यों बर्बाद करनी चाहिए? हमें केवल अपनी सुविधा और स्वार्थ का ध्यान रखना चाहिए। हमें परिस्थितियों को अपने लाभ में बदलना चाहिए, न कि शत्रु की रणनीतिक संरचनाओं का शिकार बनना चाहिए। हमें युद्ध को कौशल का खेल या मनोरंजन नहीं समझना चाहिए। यह लूट और स्वार्थ के लिए लड़ा जाने वाला युद्ध है।"

नकुल और सहदेव ने पूर्ण सहमति में सिर हिलाया। द्रुपद और विराट ने भी सहमति में सिर हिलाया। अर्जुन अब भी अपना उठा हुआ हाथ नीचे नहीं कर पा रहे थे।

कृष्ण ने कहा, "चलो अब हम अपना भोजन समाप्त करके जल्दी सो जाएं ताकि जितना हो सके उतनी नींद ले सकें। कल हमारा बहुत भयंकर युद्ध होने वाला है।"

धृष्टद्युम्न, "यह जानते हुए भी हम सो कैसे सकते हैं?"

कृष्ण ने कहा, "तुम्हें सोने के लिए खुद को विवश करना होगा। अन्यथा तुम पूरी तंदुरुस्ती से युद्ध नहीं लड़ पाओगे। भीम को देखो। वह बैठे-बैठे ही ऊंघ रहा है। भीम, क्या तुमने भोजन कर लिया है?"

भीम ने ये शब्द नहीं सुने। नकुल ने उसकी ओर से उत्तर दिया कि उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया था। अंत में, अपना उठा हुआ हाथ नीचे करते हुए अर्जुन ने कहा, "मैं जितने दिन चाहूँ, बिना सोए रह सकता हूँ।"

धर्मराज ने सुझाव दिया, "चावल से बना हो तो कोई बात नहीं। हम सबको सोमा पीने की ज़रूरत है। इससे हमें नींद आने में मदद मिलेगी।" सहदेव ने उनकी बात समझकर बाहर चले गए।

नकुला ने कहा, "अच्छा, भीमा की झोपड़ी में ताड़ी से भरा एक घड़ा रखा है। यह उन शिकारियों ने दिया है जो प्रतिदिन शिकार करके उसके लिए ताजा मांस लाते हैं।" नकुला द्वारा भीमा के इस गुप्त भंडार का खुलासा करते ही सब लोग निश्चिंत हो गए और वातावरण में व्याप्त तनाव काफी हद तक कम हो गया।

—•✳•—

गांधारी का गला भर आया और उसने पूछा, "संजय, क्या इस युद्ध को रोकना संभव नहीं है?"

संजय ने कहा, "नहीं। इस समय तो इसकी कोई संभावना ही नहीं है। अब तक और युद्ध शुरू होने से पहले, यह एक राजनीतिक मुद्दा था। अब अर्जुन का पुत्र मर गया है। भीम का पुत्र भी मर गया है। यहाँ दुर्योधन का पुत्र भी मर गया है। क्या आपको नहीं लगता कि अपने बच्चे की मृत्यु पर उत्पन्न क्रोध, माता-पिता की मृत्यु पर उत्पन्न क्रोध से कहीं अधिक होता है? इसके अलावा, उनकी तरफ, उनके सर्वोच्च सेनापति धृष्टद्युम्न ने अपने पिता को खो दिया है। इसलिए, यदि पांडव शांति के लिए सहमत भी हो जाते हैं, तो उनके सर्वोच्च सेनापति शायद सहमत न हों। और उनकी सेना की सबसे बड़ी इकाई उन्हीं की है। बेशक, पांडव अब किसी भी शांतिपूर्ण समझौते के लिए सहमत नहीं होंगे। जहाँ तक हमारे महाराजा दुर्योधन की बात है, तो अपने पुत्र की मृत्यु के बाद से वे साँप की तरह फुफकार रहे हैं।"

गांधारी ने बेबसी से पूछा, "अब हम इन लोगों की जान बचाने के लिए क्या कर सकते हैं?"

संजय ने कहा, "ठीक है, मेरे द्वारा संकलित और प्रस्तुत की गई युद्ध की रिपोर्ट को सुनिए।"

गांधारी के पास जवाब में कहने के लिए कुछ नहीं था। संजय भी चुप रहे। बूढ़े धृतराष्ट्र भी मौन थे। विदुर एक खंभे से जकड़े हुए गतिहीन थे। तेल की कमी के कारण दीपक मंद होता जा रहा था। धृतराष्ट्र ने कहा, "मुझे इसकी गंध आ रही है। क्या दीपक जल रहा है? दासी, कृपया ध्यान दो।"

वह सो गई थी। जब उसने दूसरी बार उसे पुकारा, तो वह दौड़कर उनके पास आई और बोली, "जी महाराज, दीपक बुझने वाला है। लेकिन पूरे महल में कहीं भी तेल की एक बूंद भी नहीं है। खैर, कल मैं पड़ोसियों से थोड़ा तेल ले आऊंगी।"

महाराजा ने क्रोधित होकर पूछा, "महल में तेल नहीं है, यह कहने का आपका क्या मतलब है?"

नौकरानी ने कहा, "आज शाम वे हमारा सारा तेल ले जाने आए, ये कहते हुए कि युद्ध के लिए इसकी ज़रूरत है। आज मैं एक पुराने बर्तन को रगड़कर थोड़ा सा तेल निकाल पाई। वही तेल मैंने आज बाती में डाला।"

महाराजा ने पूछा, "तो फिर आज रात के बारे में क्या ख्याल है?"

नींद से वंचित दासी अपना क्रोध नहीं रोक पाई और उसने कहा, "महाराज, जब आंखें देख ही न सकें तो दीपक जलाने का क्या फायदा? अगर वह जले ही नहीं तो क्या फर्क पड़ता है? मैं यहीं आपके साथ रहूंगी। मुझे पूरा महल पता है। अंधेरे में भी मैं आपको शौच के लिए ले जा सकती हूं।"

धृतराष्ट्र का चेहरा शर्म और क्रोध से लाल हो रहा था। इसी बीच, विदुर ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "देखो, दासी, मेरे घर जाओ और एक मग तेल ले आओ। तुरंत जाओ। अगर तुम्हें अकेले जाने से डर लगता है, तो मैं तुम्हारे साथ चलूँगा। या अगर बाहर कोई पुरुष संतरी हो, तो उससे कहो कि जाकर तेल ले आए।"

धृतराष्ट्र शर्मिंदा होकर बोले, "विदुरा, क्या तुम यह सुझाव दे रहे हो कि महल को तुम्हारे घर से उधार लेना चाहिए? या यह दान होगा? नहीं, नहीं। लेकिन मैं इस अंधकारमय रात को सहन नहीं कर सकता। कृपया जाओ और ले आओ, लेकिन ऋण के रूप में।"

उन्होंने नौकरानी के कदमों की आहट सुनी जो बाहरी आंगन में गायब हो गई। उस अंधे बूढ़े आदमी का पूरा ध्यान धीरे-धीरे बुझते हुए तेलहीन दीपक पर टिका था। यह बुझना दृष्टि से नहीं, बल्कि गंध से हो रहा था। शुरू से ही, बाती में जल रहे तेल की गंध उस पर विपरीत प्रभाव डालती थी—कभी जब दीपक जल रहा होता था, तो उसे आनंद मिलता था, और जब वह मंद पड़ने लगता था, तो उसे निराशा होती थी। एक तरह से, वह उस गंध का कैदी बन गया था। इससे बचने के लिए उसने कहा, "आपने कहा था कि मेरे दामाद जयद्रथ को मारने के अर्जुन के व्रत की जानकारी हमें पहले से थी। लेकिन आपने मृतकों में जयद्रथ का नाम भी शामिल कर लिया। क्या हमने उसकी सुरक्षा के लिए पहले से कोई सावधानी नहीं बरती? आप जानते हैं कि दुर्योधन अपनी बहन से बहुत प्रेम करता है।"

संजय ने कहा, "बिल्कुल, वह है। और वे एक-दूसरे के बहुत करीब भी थे। यहाँ तक कि पहले जब महाराजा जयद्रथ द्रौपदी का अपहरण कर रहे थे..." गांधारी ने बीच में दखल देते हुए पूछा, "कब? क्या हुआ था?"

संजय ने कहा, "उस घटना को अभी दो साल भी नहीं बीते हैं। पांडवों के गुप्त वनवास पर जाने से लगभग दो महीने पहले की बात है। वे अभी भी जंगल में ही थे। जब आसपास कोई पुरुष नहीं था और द्रौपदी अकेली थी, तब जयद्रथ वहाँ गया। इस अवसर का लाभ उठाकर उसने द्रौपदी का अपहरण कर लिया। लेकिन पांडवों ने उसे रोक लिया और जयद्रथ को बंदी बना लिया। भीम उसे मार डालने ही वाला

था। लेकिन रिश्तेदारी के कारण दामाद होने की वजह से उन्होंने उसे जीवित छोड़ दिया, लेकिन तीन जगहों से उसके बाल मुंडवाकर उसका अपमान किया! पांडवों के प्रति उसके क्रोध के कारण...” गांधारी ने आश्चर्य से पूछा, “यह कैसे संभव है? उस समय उनकी उम्र क्या थी? वह लगभग पैंतीस या छत्तीस वर्ष का रहा होगा। वह लगभग पचास वर्ष की रही होगी।”

संजय ने कहा, "मुझे यह सब कैसे पता चलेगा? नहीं, मुझे पूरी जानकारी नहीं थी। मेरे एजेंटों ने मुझे बस कुछ अधूरी-सी जानकारी दी थी। और मुझे बस इतना ही पता है।"

गांधारी चुप हो गईं। संजय भी अपनी लय से विचलित होकर चुप हो गए। लेकिन धृतराष्ट्र ने पूछा, "संजया, मेरी दृष्टि बाधित है। मैंने उन्हें नहीं देखा है। क्या द्रौपदी इतनी सुंदर हैं? या उनकी सुंदरता का रहस्य क्या है?"

संजय ने कहा, "महाराजा, मैंने भी उसे नहीं देखा है। मेरा अनुभव यह है कि जो स्त्रियाँ एक से अधिक पुरुषों से संबंध रखती हैं, वे आम तौर पर पुरुषों को जल्दी आकर्षित कर लेती हैं। और उसके पाँच पति थे..." विदुर ने बीच में कहा, "संजया, तुम्हारा काम युद्ध की रिपोर्ट देना है। तुमसे फालतू की बातें करने की अपेक्षा नहीं की जाती।"

संजय ने कहा, "यह मामला मेरी युद्ध रिपोर्टिंग के दौरान सामने आया, चाचा जी। वह भी इसलिए क्योंकि महाराजा ने विशेष रूप से इसे उठाया था। मुझे ऐसी बातों में कोई दिलचस्पी नहीं है।"

धृतराष्ट्र ने अचानक पूछा, "संजय, क्या हमारे लोगों ने सावधानी नहीं बरती थी? उन्होंने गलत पासा कैसे फेंक दिया?"

संजय लिखते हैं, "महाराजा दुर्योधन ने सर्वोच्च सेनापति द्रोण को आदेश दिया कि जयद्रथ को हर हाल में बचाना है। उन्हें इसमें दो लाभ दिखाई दिए। पहला, उनके बहनोई का मृत्यु से बचना। दूसरा, अर्जुन का अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार अग्नि में वध होना। स्वाभाविक रूप से, यदि ये दोनों हो जाते, तो महाराजा के अनुसार युद्ध में विजय हमारी तरफ से आसान हो जाती। ऐसा प्रतीत होता है कि अर्जुन यह डींगें हांक रहा था कि वह अपने गुरु की सभी चालें और रणनीतियां जानता है और वह अपने गुरु को आसानी से हरा देगा। इसलिए, महाराजा ने पूज्य द्रोण से पूछा, 'क्या कोई ऐसी सामरिक संरचना नहीं है जो आपने अर्जुन को न सिखाई हो?' तब द्रोण ने उत्तर दिया, 'क्या ऐसा है? ठीक है। बस आज मैं जो सामरिक संरचना तैयार

करने जा रहा हूं, उसे देखो। इसे भेदना और जयद्रथ तक पहुंचना स्वयं देवताओं के राजा इंद्र के लिए भी असंभव होगा।' उन्होंने चक्रशाक्तव्यूह या रथ-पहिया संरचना का निर्माण किया, जो उनका अपना मौलिक विचार था। जयद्रथ को पहले उसकी अपनी सेना ने घेर लिया।" फिर पुरुषों को इस वृत्त के चारों ओर कमल की पंखुड़ियों के आकार में व्यवस्थित किया गया। इस संरचना के चारों ओर एक बाहरी घेरा बनाया गया था जिसमें हाथी, घोड़े, रथ और पूरी सेना को एक दूसरे से जुड़े हुए वृत्तों में व्यवस्थित किया गया था। इसका उद्देश्य शाम से पहले, किसी भी दिशा से, जयद्रथ पर किसी भी प्रकार के आक्रमण को रोकना था। क्या पांडवों ने जयद्रथ को बचाने के लिए ऐसी किसी कार्रवाई की आशंका नहीं की होगी? उन्होंने अपनी पूरी सेना को जयद्रथ तक पहुँचने के कार्य में लगा दिया था। वे चिंतित थे कि जयद्रथ शाम से पहले भाग न जाए। इसके लिए उन्होंने एक घेरा भी बनाया था। लेकिन उन्होंने इस बात का भी ध्यान रखा कि हमारी तरफ के लोग इस स्थिति का फायदा उठाकर धर्मराज को न पकड़ लें। तदनुसार, उन्होंने धर्मराज और अन्य नेताओं को अच्छी सुरक्षा प्रदान की। वह दिन युद्ध का सबसे भयंकर दिन प्रतीत हो रहा था, और वह क्षण उस दिन का सबसे भयंकर क्षण था। वे अर्जुन के पुत्र की मृत्यु से क्रोधित थे। दुर्योधन भी अपने पुत्र की मृत्यु का बदला लेने के आवेश में था। वह उन्हें कुचल देना चाहता था। पांडव शत्रु सेना का प्रतिरोध करने और उसे पराजित करने के दृढ़ संकल्प से भरे हुए थे। उस दिन चकनाचूर हुए रथों की संख्या का अनुमान लगाना असंभव था। रथों में जुते और घुड़सवार सेना द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले अनगिनत घोड़े मृत्यु की पीड़ा में तड़प रहे थे, उनके पैर टूटे या कुचले हुए थे। युद्ध में घायल हुए घोड़ों को वापस नहीं ले जाया जा सकता था, इसलिए उन्हें वहीं रहना पड़ा। उनका एकमात्र उपयोग उनका मांस निकालना था। जैसे-जैसे मृत पशुओं का ढेर लगता गया और उनका खून नदियों की तरह बहने लगा, बाकी घोड़े इधर-उधर भागने लगे। युद्ध की उस अफरा-तफरी और शोर में भी गिरे हुए सैनिकों की चीखें कानों तक पहुँच रही थीं। अर्जुन के आक्रमण का सामना करने में असमर्थ महाराजा दुस्साना अपने सैनिकों के साथ पीछे हट गए।

द्रोणाचार्य ने अपना स्थान ग्रहण किया, लेकिन अर्जुन ने उन पर बाणों की वर्षा नहीं की। उन्होंने अपने सैनिकों को केवल शत्रु सैनिकों पर आक्रमण करने का आदेश दिया। द्रोणाचार्य, जो बहुत थके हुए थे और उनके सफेद वस्त्र धूल से सने हुए थे, किसी तरह एक-दो बाण चला पाए। भला उन जैसे वृद्ध व्यक्ति में इतनी

शक्ति कैसे हो सकती है कि वे पूरी ताकत से हथियार चला सकें? बल और गति की कमी के कारण, उनके बाण लक्ष्य तक पहुँचने से पहले ही उसे हल्के से छूकर निकल गए! कुछ देर बाद उन्होंने बाण चलाना पूरी तरह बंद कर दिया। अर्जुन के सारथी कृष्ण ने रथ को दूसरी दिशा में मोड़ दिया, क्योंकि उन्हें द्रोणाचार्य से लड़ना उचित नहीं लगा। फिर अर्जुन के सैनिकों ने यादव सेनापति कृतवर्मा के सैनिकों पर आक्रमण किया। शायद कृष्ण को रथ चलाते देख कृतवर्मा ने अपने सैनिकों को एक तरफ हटा दिया ताकि कृष्ण आगे बढ़ सकें। इसके बाद अर्जुन ने कंबोज के राजा सुदक्षणा का वध कर दिया। उनकी पूरी सेना का सफाया हो गया, क्योंकि अर्जुन के सैनिकों ने उन्हें घेर लिया और उन पर लगातार बाणों की वर्षा की। अर्जुन का सामना कलिंग के राजा श्रुतयु और उनके छोटे भाइयों अच्युतयु, नियतयु और दीर्घयु की सेना से हुआ। भीषण युद्ध में चारों भाई मारे गए। उनके सेनापतियों के नेता मारे जाने से हमारी तरफ पूरी तरह से अफरा-तफरी मच गई। इसी बीच, धृष्टद्युम्न ने द्रोण पर आक्रमण कर दिया। वह द्रोण को मारने और पुराने हिसाब को चुकाने के अवसर की प्रतीक्षा कर रहा था। पांडवों के पाँचों पुत्रों और उनके सैनिकों के समर्थन से वह अत्यंत क्रोधित होकर द्रोण पर टूट पड़ा। इस भीषण युद्ध में द्रोण के सैनिकों ने वीरतापूर्वक उन्हें बचाने का प्रयास किया। द्रोण ने अपने सैनिकों को दो भागों में बाँट दिया था। इससे धृष्टद्युम्न को घुसपैठ करने का मौका तो मिल गया, लेकिन द्रोण के सैनिकों ने उसे और उसकी सेना को घेर लिया। यदि सत्यकी उसकी सहायता के लिए न आता, तो पांडवों के सर्वोच्च सेनापति का अंत अचानक और दुखद हो जाता। युद्ध के एक अन्य क्षेत्र में, अनुप देश के राजा विंदा और अनुविंदा अर्जुन द्वारा मारे गए। अर्जुन और उनके सैनिकों की तीव्र प्रगति देखकर महाराजा दुर्योधन स्वयं अर्जुन के सामने आ गए। महाराजा को देखते ही अर्जुन चिल्लाए, या यूँ कहें कि चीखे, "अरे, आखिरकार आ ही गए, नपुंसक?" बेशक, महाराजा दुर्योधन का मुकाबला कर सकते थे। दुर्योधन ने भी जवाब में चिल्लाकर कहा, "यदि तुम सच्चे पांडु वंश के हो, तो आओ और मुझसे भिड़ो।" इसके बाद कोई और बात नहीं हुई। जैसे-जैसे जोश बढ़ता गया, युद्ध और भी तीव्र हो गया। पिछली छोटी-मोटी सफलताओं के कारण अर्जुन के सैनिकों का मनोबल बहुत ऊँचा था। उन्हें अपने नेता की धनुर्विद्या पर पूरा भरोसा था। उनका मानना था कि पूरे युद्ध में कोई भी योद्धा धनुष-बाण चलाने में उनकी बराबरी नहीं कर सकता। न केवल निशाना लगाने में, न केवल गति में, बल्कि उनके बाणों की शक्ति में भी,

जिनकी ऊर्जावान गति पहले ही प्रहार में लक्ष्य को मार गिरा सकती थी। उनके बाण विशेष रूप से परिष्कृत और कठोर धातु से बने थे। महाराजा दुर्योधन को एक तरफ हटना पड़ा और अर्जुन और उनके सैनिकों को आगे जाने देना पड़ा। मैदान के दूसरे कोने में, पांडवों के पाँचों पुत्रों ने बाहलिका के राजा भूरी के छोटे भाई शाला को मार डाला। वहाँ भीम के पुत्र घटोत्कच ने राक्षस सरदार अलंबुष को मार डाला...

धृतराष्ट्र ने पूछा, "यह अलम्बुष कौन है?"

संजय ने कहा, "मुझे कोई जानकारी नहीं है।"

विदुर ने जानकारी दी, "अलम्भुष राक्षस बका का छोटा भाई है। बका की हत्या भीम ने तब की थी जब वे एकाचक्र नगर में गुप्त वनवास पर थे। बका के पिता किर्मीरा थे। अपने बड़े बेटे बका की हत्या का बदला लेने के लिए किर्मीरा ने वन में पांडवों पर हमला कर दिया। भीम ने उसे भी मार डाला। अपने पिता और बड़े भाई की हत्या का बदला लेने के लिए अलम्भुष दुर्योधन के दल में शामिल हो गया। उसका मुख्य निशाना भीम था। क्या मैं सही हूँ?"

संजय ने आगे कहा, "जब अलंबुषा अपने पिता भीम को मारने के लिए दौड़ा, तो घटोत्कच ने उस पर हमला कर उसे मार डाला। दूसरी ओर, धृष्टद्युम्न की रक्षा के लिए आए सत्यकी ने कुछ देर तक वहाँ युद्ध किया और फिर अपनी सेना के साथ अर्जुन की घटती हुई संख्या को मजबूत करने के लिए चला गया। अर्जुन के माथे, हथेलियों और जांघों पर खून लगा हुआ था। उनके सारथी कृष्ण को भी कुछ चोटें आई थीं। इसी समय कृतवर्मा अपने आदमियों के साथ सत्यकी को रोकने के लिए आ गया।"

Dhritarashtra, "Who is this Kritavarma?"

संजय ने कहा, "क्या मैंने पहले ज़िक्र नहीं किया था? वह यादव सेना का प्रमुख था। क्या वह यादव सेना के साथ हमारे पक्ष में नहीं आया था? कृष्ण ने उसे गुप्त रूप से बुलवाया था और उससे मुलाकात की थी। कृष्ण ने उससे कहा था, 'तुम सेना तो ले आए हो, पर यदि तुम इसकी कमान संभालोगे, तो मैं, जो पांडवों के साथ हूँ, और तुम, युद्ध में एक-दूसरे के विपरीत हो जाओगे। तब लोग क्या कहेंगे? क्या तुम्हें अपने आप पर शर्म नहीं आती?' मुझे यकीन नहीं है कि उसे अपने आप पर शर्म आई थी या उसने अपने फैसले पर पुनर्विचार किया था। बलराम ने यादव सेना की कमान कृतवर्मा को सौंप दी थी और तीर्थयात्रा पर चले गए थे। अब,

स्वाभाविक रूप से, सत्यकी को द्वारका सेना से लड़ना मुश्किल लगा क्योंकि वह उसके सेनापतियों में से एक था। सैनिक धनुष खींचने और दोनों ओर बाण चलाने में हिचकिचा रहे थे। परिणामस्वरूप, सत्यकी ने कृतवर्मा पर एक बाण चलाया, लेकिन उसने अपने सैनिकों को कृतवर्मा की टुकड़ी पर हमला न करने का निर्देश दिया। दोनों सेनाओं के अधीन सैनिकों के बीच कोई लड़ाई नहीं हुई।" सत्यकी के सैनिकों ने उसके आदेशों का पालन किया, कृतवर्मा के सैनिकों ने नहीं। अपमानित महसूस करते हुए, कृतवर्मा पीछे हट गया। इसी बीच, सत्यकी ने मगध क्षेत्र के जलसंध को मार डाला, जो उसकी ओर बढ़ रहा था। फिर सत्यकी आगे बढ़ा, और रास्ते में द्रोण ने उसे रोकने का प्रयास किया। लेकिन ऐसा करने में असमर्थ, वह एक तरफ हट गया। सत्यकी के हट जाने के बाद, द्रोण का आत्मसम्मान आहत हुआ प्रतीत हुआ। फिर उसने अपनी सेना को उत्साहित किया और बड़ी तेज़ी से आगे बढ़ा। उन्होंने शिशुपाल के पुत्र धृष्टकेतु को मार डाला, जो पांडव शिविर में शामिल हो गया था। फिर उन्होंने केकय देश के राजा बृहत्क्षत्र को यमलोक भेज दिया। उन्होंने जरासंध के पुत्र सहदेव को भी मार डाला। उन्होंने धृष्टद्युम्न के पुत्र क्षत्रधर्म को भी मार डाला, जो अभी-अभी उनके रास्ते में आया था। ये द्रोण के नेतृत्व में सेना की उपलब्धियाँ थीं। इस युद्ध की स्थिति और घटनाक्रम का आकलन कैसे किया जा सकता है? अर्जुन का दुर्योधन का पुत्र मर गया, पांडवों के सर्वोच्च सेनापति धृष्टद्युम्न का पुत्र मर गया। इसके बाद युद्ध कैसे रोका जा सकता था? धृष्टद्युम्न अपने पुत्र की मृत्यु देखने के लिए वहाँ नहीं थे। पास में ही युद्ध कर रहे भीम ने यह सब देखा। तुरंत ही वे आंधी की तरह उस दिशा में दौड़े, टूटे हुए रथ का एक पहिया पकड़ा और उसे द्रोण के रथ पर फेंक दिया। जैसे ही वह पहिया लगा, द्रोण का सारथी तुरंत मर गया। रथ भी चूर-चूर हो गया। हालाँकि, द्रोण बच गए। अपने गुरु को बचाने के लिए, आपके ग्यारह पुत्र भीम की ओर दौड़े। आपके पुत्र, लेकिन देवी गांधारी के पुत्रों में से कोई नहीं। भीम ने एक-एक करके उन ग्यारहों को पकड़ा, उनके सिर कुचले और उनके गले मरोड़ दिए जैसे कि वह पेड़ से फल तोड़ रहे हों, और उनके सिर हमारी ओर फेंक दिए। वहाँ बहुत शोर, भय और सदमे की चीखें, पूर्ण अराजकता थी। पांडव सेना का मनोबल बढ़ गया, और वे पहले से भी अधिक उत्साह के साथ हमारी ओर दौड़ने लगे। फिर भीम और कर्ण का आमना-सामना हुआ। भयंकर युद्ध के बाद, कर्ण को भीम और उसके साथियों को रास्ता देने के लिए पीछे हटना पड़ा। इसके बाद ही भीम ने देवी गांधारी के

पाँचों पुत्रों को, जिनमें दुकाया और दुर्मुख भी शामिल थे, एक-एक करके मार डाला। इसी समय चंद्रवंशी सोमदत्त के पुत्र भूरिश्रवा ने सत्यकी पर आक्रमण किया। सत्यकी बहुत थका हुआ था। भूरिश्रवा ने अपने भाई शाला की मृत्यु का बदला लेने के लिए सत्यकी का सिर काटने हेतु तलवार उठाई। सौभाग्य से सत्यकी के लिए, कृष्ण ने यह देख लिया और अर्जुन को इसकी सूचना दी। उन्होंने अर्जुन को भूरिश्रवा की दाहिनी भुजा पर बाण चलाने की सलाह दी। अर्जुन का बाण तुरंत उसकी भुजा पर लगा, और उसकी तीव्र गति के कारण भूरिश्रवा वहीं गिर पड़ा। उसने अर्जुन पर चिल्लाते हुए कहा, "मैं तुमसे नहीं लड़ रहा था।" "तुमने मुझ पर बाण कैसे चलाया?" भूरिश्रवा ने अपना मुख अर्जुन की ओर किया। इसी बीच, सत्यकी ने स्थिति का लाभ उठाते हुए भूरिश्रवा की तलवार, जो उसके स्वामी के गिरने पर जमीन पर गिर गई थी, उठा ली और बिना किसी संकोच के भूरिश्रवा का सिर काट डाला। फिर उसने सिर को हमारी ओर फेंक दिया। तब तक शाम होने लगी थी। खून और कच्चे मांस से लथपथ युद्धक्षेत्र डूबते सूरज की लालिमा से और भी भयंकर हो गया था, जिससे एक भयावह दृश्य बन गया था। अर्जुन अभी तक जयद्रथ के पास नहीं पहुँच पाए थे। आखिर, क्या हमारी मुख्य रणनीति यह नहीं थी कि उन्हें शाम से पहले जयद्रथ को मारने का व्रत पूरा करने से रोका जाए? हमारी रणनीति के तहत, हमारे योद्धा और सैनिक एक-एक करके उठे, लड़ने के लिए नहीं बल्कि अर्जुन की गति को रोकने और विलंबित करने के लिए। अब उनके लिए जयद्रथ को मारना असंभव हो गया था। तभी अर्जुन ने अपने सैनिकों से कहा, 'अब शाम हो गई है। चलो आज के लिए रुकते हैं।' हमारे सैनिकों ने ये शब्द सुने। भला कौन सा सैनिक युद्ध के अंत से प्रसन्न नहीं होगा? युद्ध? हमारी तरफ के कई सेनापतियों ने ऐसा ही आदेश दिया। खैर, युद्ध समाप्त हो गया। अब बस अर्जुन को उसकी प्रतिज्ञा का ताना मारना बाकी था। दुर्योधन खुद जयद्रथ को रथ पर लेकर आया। दूर से उसने अर्जुन को पुकार कर कहा, 'अर्जुन, देखो, जयद्रथ यहीं है। क्या हम तुम्हारा अग्निकुंड तैयार करें? या तुम खुद करना चाहोगे?' क्या तुम अर्जुन के हाथ की गति जानते हो? उसका निशाना भी अचूक था। पलक झपकते ही उसके धातु के बाण की नोक बिजली की गति से जयद्रथ की गर्दन पर जा लगी और उसे तीन इंच तक भेद दिया। इसके बाद उसने ऐसे ही लगभग दस बाण चलाए। ये बाण इसलिए चलाए गए थे ताकि कोई भी जयद्रथ के घाव की देखभाल न कर सके और उसकी जान न बचा सके। दर्द से चीखते हुए जयद्रथ गिर पड़ा। तभी अर्जुन के

सारथी कृष्ण ने दुर्योधन को पुकार कर कहा, 'दुर्योधन, देखो, सूरज अभी डूबा नहीं है!' क्या इससे यह पता नहीं चलता कि पूरी रणनीति जयद्रथ को मारने में पांडवों का हाथ कृष्ण का था...?"

धृतराष्ट्र चिल्लाया, "धोखाधड़ी, धिक्कार है इस धोखे पर!"

संजय ने कहा, "जिसे तुम छल कहते हो, वे उसे रणनीति कहते हैं। उन्होंने जयद्रथ को मारकर ही संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने अपने सैनिकों को हमारे सैनिकों पर हमला करने का आदेश दिया। हमारी तरफ, हमारे सैनिक अपने धनुष रखे हुए आराम कर रहे थे। कुछ सैनिक वहाँ बैठकर पैर फैला रहे थे। दुश्मन के बाणों के अचानक हमले से हमारे कुछ सैनिक मारे गए और सभी घबरा गए। कुछ इतने घबरा गए कि उन्हें यह भी एहसास नहीं हुआ कि उनके पास धनुष और बाण हैं, और वे इधर-उधर भागने लगे। पांडवों की तरफ से सेनापति अपने सैनिकों के साथ हमारे सैनिकों पर टूट पड़े। परिणामस्वरूप, हमारी सेना की संरचना बिखर गई। हमारी हार से हमारा मनोबल पूरी तरह टूट गया, और उनकी जीत ने उनके आत्मविश्वास और उत्साह को और बढ़ा दिया। हमारी सेना के बिखरने और हमारे सैनिकों के भाग जाने के कारण, युद्ध का स्थान लगभग छह मील दूर स्थानांतरित हो गया। सुबह के युद्ध का स्थान अब खाली हो गया था। मैं स्वयं उस स्थान को देखने गया। हाँ, मैं वहाँ पहुँचने में सफल रहा। लेकिन हर चीज़ के पूर्ण विनाश के उस भयावह दृश्य को देखकर मैं कितना भयभीत हो गया था!" नहीं, मैं मृत्यु की पीड़ा में तड़पते और रोते हुए मानव शरीरों से नहीं डरा था। नहीं, न ही ज़मीन पर पड़े घोड़ों से, जिनके पैर और जीभ मृत्यु से खिंचे हुए थे। नहीं, मुझे वास्तव में डरा रहे थे वे कुत्ते, सियार और भेड़िये जो वहाँ कच्चे मांस और खून पर दावत करने के लिए जमा हुए थे! मैं सचमुच अपनी जान से डर गया था, इस विचार से भयभीत था कि ये भूखे और लालची जानवर मुझ जैसे जीवित प्राणी और ज़मीन पर बिखरे हुए शवों में अंतर नहीं कर पाएंगे! और, ध्यान रहे, वे जंगली कुत्ते थे। जब मृत्यु का स्वरूप पूरे क्षेत्र में छा जाएगा, तो क्या ये जानवर मुझे वहाँ जीवन के एकमात्र प्रतीक के रूप में अलग पहचान देंगे? फिर भी, मैं कुछ देर वहाँ रुका रहा, दृश्य का जायजा लेता रहा। मैंने क्या देखा? बहता और जमा हुआ खून, भिनभिनाती मक्खियाँ, योद्धाओं के गिरे हुए उपकरण, गर्दन से उखड़े हुए हार, कानों से फटे हुए झुमके, क्षत-विक्षत धड़ों से लटकते सिर, और मृतकों और खोए हुए लोगों के सिर से लुढ़के हुए तरह-तरह के मुकुट। कहीं-कहीं एक मुकुट। एक या दो।

कीमती पत्थरों के आभूषण, चमकदार बाजूबंद, चमकते सोने के सिक्के, गिरे हुए रथों के झंडे, रंगीन कपड़े की पट्टियाँ जो कभी रथों को सजाती थीं, चकनाचूर रथों से उधेड़ी गई बहुरंगी सीटें, रस्सियाँ जो कभी लगाम थीं, टूटे हुए रथ के पहिये, जुए के रूप में इस्तेमाल की जाने वाली रस्सियाँ, त्रिशूल, कटार, तलवारें, भाले, बरछी और तरह-तरह के हथियार, छोड़े गए रथ जो अभी भी तीरों के भंडार से भरे हुए हैं, हाथियों के गले में घंटियाँ, पानी रखने के लिए मग और अन्य बर्तन।

एक आदमी की याददाश्त उस भयानक दृश्य को कितना समेट सकती है? एक बात तो तय थी। वहाँ सब कुछ टूटा-फूटा, तबाह, क्षतिग्रस्त, मरणासन्न, मृत और सड़ रहा था। और जंगली जानवरों के झुंड बेहिसाब मांस और खून पर दावत उड़ा रहे थे। मुझे लगा जैसे वे भी मरे हुए मांस से लड़ रहे हों। और गिद्ध युद्ध की लूट के लिए आपस में होड़ कर रहे थे। मुझे लगा अगर किसी को युद्ध से फायदा हुआ है, तो वो ये शिकारी जानवर ही थे! कुछ मिनटों बाद, डर मुझ पर हावी हो गया और मैं सचमुच उस मैदान से भाग गया...

धृतराष्ट्र ने बीच में ही कहा, "संजय, एक पल रुक जाओ। तुम्हारी रिपोर्ट से मेरा सिर चकरा रहा है।"

संजय कुछ देर चुप रहे। यह वैसी ही खामोशी थी जैसी ओलों की बारिश के बाद छा जाती है। युद्ध की हिंसा और युद्ध की यादों से भरी खामोशी। कुछ देर बाद धृतराष्ट्र ने पूछा, "क्या दीपक जल रहा है?"

विदुरा ने कहा, "हां। यह जल रहा है, मेरे घर के तेल से।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "यहाँ बिल्कुल भी गंध नहीं है।"

विदुर ने कहा, "महाराज, आपके महल में इस्तेमाल होने वाला तेल चंदन के तेल में मिला हुआ है। हमारा तेल साधारण तेल है। भले ही हमारे तेल से सुगंध न निकले, लेकिन यह उतनी ही तेज जलता है।"

धृतराष्ट्र की सांसें धीमी होने लगीं। उन्हें ऐसा महसूस हुआ मानो मृत्यु ने सब कुछ घेर लिया हो। उन्होंने आगे कुछ नहीं कहा।

संजय ने कहा, "चलो, कम से कम मुझे घर जाने दो। मैं कल सुबह वापस आ जाऊंगा। लगातार इतनी देर तक बोलने से मेरे गले में दर्द हो रहा है।"

धृतराष्ट्र ने एक बार फिर आह भरते हुए कहा, "नहीं, नहीं। मेरा हृदय कहता है कि आगे और भी दुखद समाचार आने वाले हैं। फिर भी, मेरी जिज्ञासा इतनी प्रबल है कि सब कुछ सुने बिना मुझे चैन नहीं मिलेगा। इन सब के बाद, मुझे लगता है कि

आज रात मुझे नींद नहीं आएगी। कृपया हमें थोड़ी देर का विराम दें, फिर हम आगे बढ़ेंगे।" धृतराष्ट्र को सांस लेने में कठिनाई हो रही थी।

—•✳•—

अध्याय 70

दुर्योधन ने पूछा, "क्या तुम डर के मारे भाग गए?" शिविर में एक मशाल जल रही थी, जिससे हल्की सी गंध आ रही थी, मानो वह सड़ते हुए शवों की दुर्गंध को ढकने वाली एक परत हो। सेनापति द्रोण और कर्ण पास ही खड़े थे। मशाल के धुएँ के बीच से वे देख पा रहे थे कि महाराजा दुर्योधन उन्हें ध्यान से देख रहे हैं। उन्होंने कहा, "मैं मैदान में जो कुछ हो रहा है, उस पर, तुममें से प्रत्येक क्या कर रहा है, कितनी बहादुरी से लड़ रहे हो, और कब भाग रहे हो, सब कुछ ध्यान से देख रहा हूँ। मैं अपने अवलोकन के पूरक के रूप में अन्य रिपोर्ट भी प्राप्त करता हूँ।"

द्रोण ने अपना सिर झुका लिया। दुर्योधन ने कहा, "आचार्य, धर्मराज को बंदी नहीं बनाया गया था।"

द्रोण ने झट से कहा, "लेकिन जयद्रथ की मृत्यु मेरी किसी गलती के कारण नहीं हुई थी, मैं आपको आश्वस्त कर सकता हूं।"

दुर्योधन, "मैं यह कैसे सोच सकता था कि शत्रु धोखा देंगे? क्या यही कहना चाहते हो? रहने दो। लेकिन तुम्हारी उपलब्धियाँ क्या हैं? तुमने अर्जुन को क्यों नहीं मारा? क्या तुमने उसे कर्ण के हाथों मरने के लिए छोड़ दिया?"

द्रोण ने कोई उत्तर नहीं दिया। दुर्योधन ने आगे कहा, "आपसे बड़े होने के नाते आदरपूर्वक मैंने अब तक आपसे अत्यंत विनम्रता से विनती की है। मैंने आदरणीय भीष्म के साथ भी ऐसा ही किया और दस दिनों में ही हज़ारों सैनिकों, घोड़ों और हाथियों से भरी सात टुकड़ियाँ खो दीं। मुझे तो यह भी नहीं पता कि आज एक दिन

में आपके हाथों कितना नुकसान हुआ है। कम से कम दो टुकड़ियाँ तो ज़रूर। युद्धशास्त्र उस सर्वोच्च सेनापति के बारे में क्या कहता है जो इतने बड़े नुकसान को सहने में सक्षम है?" इस समय तक उसकी आवाज़ का स्वर और तीव्रता बढ़ चुकी थी।

द्रोण ने संयमित स्वर में उत्तर दिया, "महाराजा, यह एक भयंकर युद्ध है। शत्रुओं को भी भारी नुकसान हुआ है।"

दुर्योधन लगभग चीखते हुए बोला, "लेकिन उनकी तरफ से कोई भी महत्वपूर्ण नेता नहीं मारा गया है।"

द्रोण ने कहा, "नेताओं की मृत्यु संयोग की बात है, भाग्य की बात है। उनकी कुछ सैन्य टुकड़ियाँ पराजित हुई हैं।"

दुर्योधन, "देखो यहाँ। हस्तिनावती में तुम्हारे आगमन को चालीस वर्ष से कुछ अधिक ही समय हुआ है। इन सभी वर्षों में तुमने राजा के समान जीवन व्यतीत किया है। क्या राजा के प्रति कोई ऋण नहीं होता, जैसे पिता, देवताओं और ऋषियों के प्रति होता है?" दूर से युद्धक्षेत्र की चीखें उनकी ओर आ रही थीं। उस ओर से हवा चलने पर बाणों की सरसराहट सुनाई दे रही थी। ये ध्वनियाँ प्रलय की घोषणा कर रही थीं। कुटिया के बाहर अँधेरा छाया हुआ था। अंदर, रंग-बिरंगी छत, रंगीन कपड़े से ढकी दीवारें और खंभों पर लिपटा सफेद कपड़ा, सब धुएँ के कारण धूसर हो गए थे। दुर्योधन लगातार बोलता रहा, “हमारे पास कुशल योद्धाओं की कोई कमी नहीं है। अब तक हमारी हार रणनीति की विफलता और उचित नेतृत्व की कमी के कारण हुई है। मुझे लगता है कि हमें यह स्वीकार करना होगा कि हमारा नेतृत्व बहुत ही कमजोर रहा है। आप धनुर्विद्या के एक महान और सर्वमान्य शिक्षक हैं। कम से कम आपको हार की स्थिति में अपनी प्रतिष्ठा और मान-सम्मान को होने वाले नुकसान का कुछ डर तो होना चाहिए?” उसकी आवाज अब उन्माद से भर उठी। वह इतनी जोर से चिल्ला रहा था कि मानो उसकी जीभ फट जाएगी। उसने द्रोणाचार्य को खुलेआम धमकी देते हुए कहा, “क्या आप भीष्म की तरह सेवानिवृत्त होना पसंद करेंगे या कुछ सार्थक उपलब्धि हासिल करना? कृपया अच्छी तरह सोचिए और अभी बताइए।”

एक बार फिर, द्रोण ने अपना सिर नीचे झुका लिया। युद्धक्षेत्र से आती हवा युद्ध की आवाज़ें वापस ला रही थी। मशाल की लौ बुझने ही वाली थी, लेकिन किसी तरह बुझी नहीं। द्वार पर तैनात संतरी ने मशाल को और तेज़ जलाने के लिए दो

चम्मच तेल डाला। अब दुर्योधन की आवाज़ इतनी धीमी हो गई थी मानो वह खुद से फुसफुसा रहा हो। उसने कहा, "युद्ध विद्या के विशेषज्ञ और महान गुरु होने के नाते, आपको यह ज्ञात होना चाहिए कि युद्ध के दौरान सर्वोच्च सेनापतियों को बदलना बुद्धिमानी नहीं है। ठीक है। यही तो आपने हमें सिखाया था। बेशक, अगर सेनापति पद पर रहते हुए मर जाए, तो बात अलग है। उन्हें देखिए। वही सर्वोच्च सेनापति पद पर बना रहता है।"

द्रोण ने कहा, "महाराज, यह मत सोचिए कि मुझे मरने से डर लगता है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आज रात या कल सुबह होने से पहले मैं उस सर्वोच्च सेनापति या उसके पिता को मार डालूँगा।"

दुर्योधन ने कहा, "इसका मतलब है कि तुम पांचालों के प्रति अपनी पुरानी दुश्मनी का बदला लेने जा रहे हो। लेकिन तुम अपने महाराजा के लिए विशेष रूप से क्या करने वाले हो?"

द्रोणाचार्य ने कहा, "मुझसे तुलना में धृष्टद्युम्न अपेक्षाकृत छोटा है। जहाँ तक पांडवों की बात है, तुम उनके बराबर उम्र के हो। मेरा यह शरीर अपनी क्षमता से अधिक भार सहन नहीं कर सकता।"

दुर्योधन चुप रहा। यह स्पष्ट नहीं था कि उसके पास कहने को कुछ नहीं था या वह अपने मन की बात कहना नहीं चाहता था। भीतर ही भीतर वह हताश महसूस कर रहा था। उसे चुपचाप बैठना मुश्किल लग रहा था। उसने कहा, "हमारे शत्रुओं ने भीष्म के साथ हुए समझौते में स्वीकार किए गए सभी नियमों और कायदों को तहस-नहस कर दिया है। आज रात तक जारी इस युद्ध को देखकर ऐसा लगता है कि वे दिन-रात का भेद नहीं समझते और बिना सोए-भोजे, बिना किसी को आराम करने का मौका दिए, लगातार लड़ रहे हैं। अब आप दोनों युद्ध में शामिल हो जाइए। मैं भी आपके साथ चलूंगा।"

महाराजा को आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए द्रोण कुटिया से बाहर आए। बाहर घना अंधेरा था। कुटियाओं के पास जगह-जगह जल रही मशालों ने अंधेरे के एहसास को और भी बढ़ा दिया था। कर्ण अंदर ही रहे। द्रोणाचार्य बाहर उनका इंतज़ार कर रहे थे। थोड़ी देर बाद कर्ण बाहर आए। दोनों कुछ दूरी पर खड़े अपने रथों की ओर चल पड़े। रथों के पास पहुँचकर द्रोण ने कर्ण से कहा, "जब महाराजा दुर्योधन ने हम पर आरोप लगाए और हमें चेतावनी दी, तब तुम भी वहीं थे।

इसलिए, उनके ये सारे आरोप और फटकार तुम पर भी समान रूप से लागू होते हैं।"

कर्ण ने कुछ नहीं कहा। सारथी द्वारा पकड़ी गई मशाल की रोशनी में द्रोण ने देखा कि कर्ण का चेहरा गंभीर और विचारशील था।

—•⁕•—

अध्याय 71

संजय के वृत्तांत के इस मोड़ पर, धृतराष्ट्र ने पूछा, "संजया, जैसे-जैसे तुम आगे बढ़ते हो, तुम और अधिक निर्भीक और कठोर होते जा रहे हो। ऐसा क्यों है?"

संजय, "आप ऐसा क्यों कहते हैं, महाराज?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "तुम्हारे शब्दों का मुझ पर और इस महिला पर जो भी प्रभाव पड़े, तुम हमें निर्मम ढंग से खबरें देते रहते हो।"

संजय ने कहा, "मैं तो सिर्फ एक रिपोर्टर हूँ। मैं अपनी रिपोर्ट में उस सुखदता को कैसे व्यक्त कर सकता हूँ जो उस वास्तविकता में मौजूद ही नहीं है जिसकी मैं रिपोर्ट कर रहा हूँ?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मैं सोच रहा था कि क्या मेरे बेटे की हार के कारण आपका व्यवहार उदासीन हो गया था।"

संजय, "कृपया ऐसा मत सोचो। अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें रिपोर्ट करना बंद कर दूंगा।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "नहीं, मेरा मतलब वो नहीं है। मैं चाहता हूँ कि आप रिपोर्ट करें। अगर मुझ जैसे लोग, जो घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप से नहीं देख सकते, आप जैसे पेशेवरों द्वारा रिपोर्ट नहीं दी जातीं, तो हम कैसे जान पाएंगे कि इस विशाल संसार में क्या हो रहा है?"

संजय ने कहा, "तो क्या मैं अपनी रिपोर्ट जारी रखूँ? मुझे देखने दीजिए। मैं क्या कह रहा था?"

धृतराष्ट्र को कुछ याद नहीं आ रहा था। विदुर उनकी सहायता के लिए आए और बोले, "दुर्योधन की मूर्खता के कारण ही इतनी बड़ी विपत्ति आई है।"

संजय, "अंधकारमय रात्रि में हुए युद्ध में दोनों सेनाएँ बराबर की नहीं हो सकती थीं। पाँचों पांडव बारह वर्षों के वनवास के अनुभव से अभी-अभी लौटे थे। उन्होंने बिना मशाल के अंधकारमय वन में घूमने की क्षमता प्राप्त कर ली थी। ध्यान रहे, धृष्टद्युम्न के अधिकांश सैनिक मूलतः वनवासियों में से थे। भीम का पुत्र घटोत्कच और उसकी सेना, वास्तव में राक्षस थे। वे अधिकांश कार्य रात्रि के अंधकार में करते हैं। और वे दिन में सोते हैं! इसलिए, वे रात में हम पर प्रभावी ढंग से हमला कर सकते थे और सटीक निशाने से हम पर तीर चला सकते थे। हमारे किसी भी सेनापति के पास यह क्षमता और अनुभव नहीं है। हमारे अधिकांश सैनिक शहरों और कस्बों से हैं। वे वह नहीं कर सकते जो घटोत्कच और उसके वनवासियों ने किया - जानवरों की आवाजें और ध्वनियाँ निकालकर खुद को उत्साहित करना और दुश्मन को डराना, भूतों की तरह चीखना, और सामान्यतः इस तरह चिल्लाना जिससे सुनने वालों के दिलों में भय उत्पन्न हो जाए। वे निशानेबाज नहीं हैं।" सामने से। रात में, वे टूटे हुए रथों के टुकड़े-टुकड़े उठाकर हमारे सैनिकों पर फेंकते हैं। सोचिए इससे हमारे शिविर में कितनी अफरा-तफरी और गड़बड़ी मच जाएगी। उनमें से कुछ तो रात में मरे हुए जानवरों और इंसानों का मांस खाने आए जंगली जानवरों को भी उठाकर हमारे बीच फेंक देते हैं। सोचिए इससे हमारे शिविर में कितनी अराजकता फैल जाएगी! अंधेरे में, हमारे सैनिक पूरी तरह से घबराकर एक-दूसरे पर टूट पड़े और अपने ही साथियों को घायल कर दिया। अंधेरे में कुछ भी समझ पाना मुश्किल था, और इसके अलावा हमारे सैनिकों को यह भी लग रहा था कि दुश्मन इतना मजबूत है कि वह हमारी सीमा में काफी अंदर तक घुस चुका है। क्या उन्हें इस अंधेरे में लड़ना जारी रखना चाहिए या नहीं? यह एक भयानक विकल्प है। अगर हम नहीं लड़ते, तो वे हमें नष्ट कर देंगे और हमारे शिविर को जला देंगे, हमारे रथों में आग लगा देंगे और घोड़ों को ले जाएंगे, और हमारे शस्त्रागारों में आग लगा देंगे। या वे अब असुरक्षित हस्तिनावती की ओर कूच कर उस पर कब्जा कर सकते हैं। संभावनाओं की इस विस्तृत श्रृंखला को देखते हुए, हम दुश्मन के सटीक इरादे के बारे में कैसे निश्चित हो सकते हैं? इसलिए, हमारा

सबसे पहली प्राथमिकता अंधेरे को दूर करना थी। तदनुसार, महाराजा दुर्योधन ने हजारों मशालें तेल से अच्छी तरह भरवाकर तैयार करवाईं और यह सुनिश्चित किया कि युद्धक्षेत्र पूरी तरह से रोशन हो जाए! मशालें वास्तव में आधी रात को पहुंचीं। मशालें लिए सैनिकों को इस प्रकार तैनात किया गया कि वे लगभग पूरे युद्धक्षेत्र को रोशन कर सकें...

धृतराष्ट्र, "शाबाश! बहुत बढ़िया!"

बीच में हुई रुकावट की परवाह न करते हुए, थोड़ी ऊंची आवाज में संजय ने बोलना जारी रखा, "मशालों की तेज रोशनी में उनके सैनिक हमारे सैनिकों को आसानी से देख पा रहे थे। नतीजा यह हुआ कि हमने अपने सैनिकों को उनके लिए एक बेहतरीन निशाना बना दिया! स्वाभाविक रूप से उन्होंने हमारे सैनिकों पर सटीक निशाने लगाए और बड़ी संख्या में उन्हें मार डाला। इससे भी बुरी बात यह थी कि उनके सैनिक हमारे सैनिकों को आसानी से या स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं दे रहे थे। ऐसा इसलिए था क्योंकि हमारी मशालों की रोशनी इतनी दूर तक नहीं पहुंच पा रही थी कि दुश्मनों को पूरी तरह से ढक सके। स्वाभाविक रूप से, अधिकांश हत्याएं उन्होंने ही कीं, और लगभग सभी हताहत हमारे सैनिक थे। हालांकि, हमारे सैनिक इस भ्रम में थे कि वे दुश्मन सेना को नष्ट कर रहे हैं! वास्तव में, हमारी ओर से चलाए गए अधिकांश तीरों का कोई स्पष्ट निशाना नहीं था। हमारी ओर से कई सैनिक मारे गए। कई गंभीर रूप से घायल हुए और उनका बहुत खून बह गया। दुर्योधन महाराज ने यह भी आदेश दिया था कि वहां सैनिकों को तेल के बर्तन ले जाने और समय-समय पर मशालों में तेल भरने के लिए रखा जाए। जैसे ही दुश्मन के तीरों ने बर्तनों को चकनाचूर कर दिया और तेल छलक गया, मशालें तेज लपटों में घिर गईं और लोगों की जान ले ली। कई लोगों में से। इस प्रकार हमारी ओर से कई सैनिक जिंदा जला दिए गए। जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, वे हमारे सैनिकों को स्पष्ट रूप से पहचान सकते थे। इस प्रकार भीम दुर्योधन को पहचान कर उसकी ओर दौड़े और उस पर टूट पड़े। इसी तरह नकुल ने शकुनी पर, शिखंडी ने वृद्ध कृपाचार्य पर, घटोत्कच ने अश्वत्थामा पर, द्रुपद ने कर्ण के पुत्र सुषेना पर, विराट ने उपपांडवों में से एक शल्य पर, शतनीक ने आपके पुत्रों में से एक चित्रसेन पर और स्वयं धृष्टद्युम्न ने द्रोण पर हमला किया। इस प्रकार उन्होंने इन सेनापतियों के नेतृत्व में हमारी सेना पर आक्रमण किया और उन्हें नष्ट कर दिया। तभी द्रोण को वास्तविक स्थिति का ज्ञान हुआ। वे अग्रिम पंक्ति से थोड़ा पीछे हट गए और पूछा,

'किस मूर्ख ने इन मशालों के उपयोग का आदेश दिया?' जब उन्हें पता चला कि यह स्वयं महाराजा ने किया है, तो उन्होंने कहा, 'महाराजा को बुलाओ। लेकिन पहले, तुरंत सभी मशालें बुझा दो।' हमारे पूरे क्षेत्र में शिविर में, 'इन्हें बुझा दो' की आवाज़ गूंज रही थी। फिर एक-एक करके मशालें बुझा दी गईं। लेकिन इससे एक और समस्या खड़ी हो गई। मशालें अचानक बुझने से दुश्मन की आंखें क्षण भर के लिए अंधी हो गईं। इससे दुश्मनों को हमारे सैनिकों पर हमला करने और उन्हें कुचलने का बेहतरीन मौका मिल गया। वहीं युद्ध के मैदान में, द्रोण ने दुर्योधन को बुलाया। दुर्योधन, जो भीम और उसके सैनिकों का सामना कर रहा था, उसने अपनी क्षुद्र सेना की कमान दुस्साना को सौंप दी और द्रोण के पास दौड़ा। द्रोण महाराजा को फटकारने लगे, 'तुम बिना स्थिति को समझे मूर्खतापूर्ण काम क्यों करते हो? क्या तुम सोचते हो कि सेनापति का काम तकिए पर आराम से बैठकर आदेश देना जितना आसान है? तुमने मुझसे सलाह लिए बिना जलती हुई मशालों का इस्तेमाल करने का आदेश क्यों दिया? याद रखो, युद्ध के मैदान में तुम्हारी राजसी सत्ता का कोई स्थान नहीं है, और इसका दायरा केवल हस्तिनावती में है, जब तुम अपने सिंहासन पर आराम से बैठे हो! यहाँ मैं ही संप्रभु हूँ, और मेरी स्पष्ट सहमति के बिना कुछ भी, मेरा मतलब है कुछ भी नहीं किया जाना चाहिए!' दरअसल, द्रोणाचार्य ने महाराजा को जमकर फटकारा। मेरे मुखबिर ने बताया कि उसे इस बात का बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि वह बूढ़ा इतनी ऊंची आवाज में बोल सकता है! सोचिए, हमारी सेना के बीचोंबीच, वह बूढ़ा दुर्योधन पर लगातार गालियों की बौछार कर रहा था!

ऐसा प्रतीत होता है कि दुर्योधन का अंगरक्षक, हमारी ओर से इधर-उधर भाग रहे सैनिकों के बीच से रास्ता बनाते हुए कर्ण तक पहुँचा और उसे सारी जानकारी दी कि महाराजा सिर झुकाए अपने गुरु की गालियाँ सुन रहे हैं। कर्ण ने अपनी सेना की कमान अपने एक वरिष्ठ अधिकारी को सौंप दी और यह देखने के लिए तुरंत मौके पर पहुँचा कि क्या हो रहा है। वहाँ उसने क्या देखा? महाराजा, जिनका रत्नजड़ित मुकुट मशाल की रोशनी में चमक रहा था, वहाँ अवाक खड़े थे! द्रोण एक पागल बूढ़े आदमी की तरह बड़बड़ा रहे थे। कुछ सैनिक उनके चारों ओर इकट्ठा होकर यह सब देख रहे थे। महाराजा कर्ण को जानकारी जुटाने में कुछ मिनट लगे। फिर वे द्रोण पर बरस पड़े। उन्होंने कहा, 'हाँ, गलती हुई है। लेकिन याद रखिए, यह गलती महाराजा ने की है। यदि सिंहासन से कोई गलती होती है,

तो उसके अधीन रहने वालों को अधिक से अधिक विनम्रता से उसका विरोध करना चाहिए। वे उसकी आलोचना नहीं कर सकते। निश्चित रूप से उन्हें उस तरह की अपशब्द भाषा का प्रयोग करने का कोई अधिकार नहीं है जो आपने आज की है।' हमारे सर्वोच्च सेनापति बनने से तुम्हारा अहंकार बढ़ गया है। पहले शिष्टाचार और विनम्रता का व्यवहार सीखो।' क्रोधित होकर द्रोण ने उत्तर दिया, 'अरे, तुम मुझसे ईर्ष्या कर रहे हो क्योंकि मैंने यह पद ग्रहण किया है। आखिर तुम एक सूत हो।' कर्ण ने उत्तर दिया, 'हे बूढ़े, मुझमें न तो तुम्हारी चापलूसी है और न ही तुम्हारी अति महत्वाकांक्षा। यदि तुम अपनी ज़ुबान पर लगाम नहीं लगाओगे और राजा से आदरपूर्वक बात नहीं करोगे, तो मैं तुम्हारी ज़ुबान काट दूंगा!' वास्तव में, माना जाता है कि कर्ण द्रोण पर हमला करने के लिए आगे बढ़ गया था। क्या आचार्य चुपचाप सह लेंगे? लेकिन सौभाग्य से, शांति बनी रही। महाराजा ने स्वयं दोनों के बीच सुलह कराकर स्थिति को संभाला। उन्होंने दोनों को सलाह दी कि यह आंतरिक कलह और मतभेदों का समय नहीं है और हमारी शक्ति एकता में है, और हमें इसे कभी नहीं खोना चाहिए। उन्होंने द्रोण को आश्वासन दिया कि भविष्य में वे उनसे परामर्श किए बिना और उनकी स्वीकृति प्राप्त किए बिना कुछ भी नहीं करेंगे। द्रोण के जाने के बाद, महाराजा ने आँसुओं से भरी आँखों से कर्ण को गले लगाया...

कुछ समय बाद गांधारी ने कर्ण की प्रशंसा करते हुए कहा, "कर्ण, मैंने चौदह नहीं, पंद्रह पुत्रों को जन्म दिया है!"

संजय ने कहा, "जी हां, महाराजा, उस रात का युद्ध महाराजा कर्ण ने जीता था। मैं आपको ही बताने वाला था।" गांधारी ने थोड़ी निराशा दूर करते हुए और उत्साह बढ़ाते हुए कहा, "जी हां, बताइए, बताइए। कर्ण के वीरतापूर्ण कारनामों को सुनने से मुझे उतना ही आनंद मिलता है जितना दुर्योधन के!

संजय ने आगे कहा, "द्रोण ने अपने पुत्र से शिकायत की होगी कि कर्ण ने उसे अपशब्द कहे हैं। अश्वत्थामा युद्धक्षेत्र छोड़कर कर्ण को मारने के लिए दौड़ा। महाराजा दुर्योधन को उसे शांत करने का कार्य सौंपा गया। खैर, स्थिति का जायजा लेने पर उन्होंने पाया कि उस रात हुई अधिकांश तबाही भीम के पुत्र घटोत्कच ने मचाई थी। इसलिए, यह निर्णय लिया गया कि उसे मार डाला जाए, क्योंकि वही हमारी हानि का मुख्य कारण था। इसके अलावा, हमारे सैनिक उससे बहुत भयभीत थे, और केवल उसकी मृत्यु ही हमारे सैनिकों का आत्मविश्वास बहाल कर

सकती थी। अंततः, वह एक राक्षस था और उसके सैनिक भी राक्षस थे। और यह रात का समय था, उनका सक्रिय समय। उन्होंने अविश्वसनीय बल से जो कुछ भी उनके हाथ लगा, उसे हमारी सेना पर फेंक दिया। वे हमारे सैनिकों पर सिर ऐसे फेंक रहे थे मानो वे गेंदें हों। और उनकी भयानक चीखें, चिल्लाहट और चीखें! और उस शोर ने आतंक को हज़ार गुना बढ़ा दिया! और तो और, हमारे सैनिकों का मानना था कि राक्षसों के पास विशेष, जादुई शक्तियाँ होती हैं। न केवल आम सैनिकों में, क्षत्रिय राजकुमारों और शासकों में भी डर फैल गया। इससे उनका भय और बढ़ गया। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे कई सैनिक रात का फायदा उठाकर युद्ध से भागकर अपने कस्बों और गांवों की ओर लौट गए। कुछ शासक भी अपने जन्मस्थान के लिए रवाना हो गए। महाराजा दुर्योधन को यह बात पूरी तरह समझ आ गई थी कि यदि घटोत्कच का नाश नहीं किया गया, तो अगली सुबह तक उनकी पूरी सेना गायब हो जाएगी। कर्ण ने उन्हें घटोत्कच को मारने का आश्वासन दिया और सूत सैनिकों की एक टुकड़ी के साथ राक्षस सरदार की ओर चल पड़ा। इसी समय, महाराजा दुर्योधन ने कुछ और किया। बकासुर का एक वंशज था, जिसका नाम अलयुध था, जिसे भीम ने मारा था। वह उन राक्षसों में से एक था जो भीम से बदला लेने के लिए हमारी तरफ आ गए थे। उन्होंने स्वेच्छा से ऐसा किया था। वह अभी तक मारा नहीं गया था। लेकिन वह उस प्रकार का नहीं था जो आसानी से अनुशासन स्वीकार कर ले और सेनापति के आदेशों का बिना किसी प्रश्न के पालन करे। वह और उसके साथी कहीं सो रहे थे। महाराजा ने उन्हें ढूंढा और उन्हें आदेश दिया। घटोत्कच और उसकी सेना का खात्मा करने के लिए। अलयुध के पास अपनी कोई बड़ी सेना नहीं थी। लेकिन उन्होंने अपने प्राणों की परवाह न करते हुए इस कमी को पूरा कर लिया। राक्षस ऐसे ही स्वभाव के होते हैं। जैसे कोई बाघ अपनी जान की परवाह किए बिना हमला करता है और अंत तक लड़ता है। उनकी स्वाभाविक हिंसा को प्रतिशोध की आग ने और भड़का दिया था। वे घटोत्कच की माता हिदिम्बे को पूरे राक्षस समुदाय की घोर विश्वासघाती मानते थे। उन्होंने इसे उसके पुत्र को मारकर उसका बदला लेने का अच्छा मौका समझा। अलयुध क्रोध से घटोत्कच और उसके आदमियों पर टूट पड़ा। वे भी राक्षस थे और उन्होंने भी बराबर की ताकत से उनका सामना किया, उनकी भयानक चीखों का जवाब अपनी चीखों से दिया, उनके जादू का जवाब अपने जादुई कौशल से दिया। हमारे सैनिकों को शायद इस बात का एहसास नहीं था।

हमारे सैनिक डर गए कि कहीं भूत-प्रेत उन पर हमला करने न आ जाएं और घबराकर इधर-उधर भागने लगे। अंधेरा था, और जादुई शक्तियों के प्रदर्शन के लिए रात से बेहतर और क्या हो सकता है? ऐसा लगता है कि भीम कहीं आस-पास ही युद्ध कर रहे थे। वे भी अपने पुत्र की तरह दहाड़ रहे थे और उनके ही अंदाज़ में बेखौफ होकर लड़ रहे थे। जैसे ही अलयुध ने देखा कि यही भीम हैं जिन्होंने उनके रिश्तेदार बका को मारा है, वे अपने दल के साथ भीम पर टूट पड़े। भीम के सैनिक डर गए। वे विशेष रूप से हमलावरों की जादुई शक्तियों से डरे हुए थे। अंधेरा छाया हुआ था। भीम के सैनिक, जिन्होंने अपने आर्य शत्रुओं से लड़ने में कुशलता दिखाई थी, राक्षसों के हमले से इतने भयभीत हो गए कि वे इधर-उधर भागने लगे। तभी अलयुध आंधी की गति से दौड़ते हुए उन्हें पकड़ लिया। भीम कल सुबह से बिना आराम किए लगातार लड़ रहे थे और अब तक पूरे युद्ध में भी उन्होंने पूरी ऊर्जा के साथ लड़ाई की थी। इसके विपरीत, अलयुध इन दिनों उत्तम मांस खाकर और चैन की नींद सोकर समय बिता रहे थे। इसलिए घटोत्कच भीम की तुलना में अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति में था। एक ही प्रहार में उसने भीम को चक्कर आने से गिरा दिया। यहाँ तक कि घटोत्कच भी शत्रु पक्ष के राक्षसों के इस हमले से चकित रह गया। वह उनकी गतिविधियों पर नज़र रख रहा था। तभी उसने देखा कि अलयुध अपने गिरे हुए पिता की छाती पर बैठा है। एक पल में ही उसे समझ आ गया कि ज़रा सी भी देरी हुई तो अलयुध उसके पिता की छाती चीर कर उसका खून पी जाएगा। वह उस दिशा में दौड़ा, अलयुध पर झपटा और उसका गला पकड़ लिया। बेचारे भीम को दो भारी-भरकम राक्षसों का बोझ उठाना पड़ा! थोड़ी देर में अलयुध एक तरफ लुढ़क गया। भीम को राहत मिली। फिर दोनों राक्षस कुछ दूर चले गए, एक-दूसरे पर हमला करते हुए, एक-दूसरे को जकड़ते हुए। भीम उठा लेकिन अलयुध पर झपटे जाने की ताकत उसमें नहीं थी। वह हांफते हुए बैठ गया। कर्ण जो उस रास्ते से गुजर रहा था, उसने मैदान के उस हिस्से में हो रही घटना को देखा। वह घटोत्कच की ओर दौड़ा, उसे अचानक घेर लिया और अपनी तलवार से उसकी गर्दन पर वार करके पीछे हट गया। घटोत्कच के हाथों से गला घोंटकर अलयुध की मृत्यु हो गई। कर्ण की तलवार से हुए घाव से खून बहने लगा। घटोत्कच दर्द से चीखा, अलयुध के मृत शरीर पर गिरा और स्वयं भी मर गया...

धृतराष्ट्र तुरंत उत्साहित होकर चिल्लाए, "शाबाश! शाबाश कर्ण! क्या अर्जुन ने हमें धोखा नहीं दिया था जब उसने भूरिश्रवा के दाहिने हाथ पर बाण मारकर उसे

मार डाला था, जबकि वह किसी और से लड़ रहा था?"

संजय ने कहा, "मैंने यह नहीं कहा कि महाराजा कर्ण धोखा दे रहे थे। मैं तो बस घटी घटनाओं का ब्योरा दे रहा हूँ। दुर्योधन, दुस्साना, कृपाचार्य, अश्वत्थमाचार्य, द्रोणाचार्य, शकुनी और अन्य लोगों ने कर्ण द्वारा घटोत्कच के वध की खुशखबरी जोर-जोर से सुनाई। सब लोग उल्लास से जयजयकार करने लगे। कर्ण की कृपा से हमारे सैनिकों का भय दूर हुआ और वे अधिक आत्मविश्वासी हो गए..."

—•✳•—

अध्याय 72

भीम ने घटोत्कच को पुकार कर बताया कि कर्ण तलवार लेकर उसकी ओर आ रहा है। लेकिन घटोत्कच को सुनाई नहीं दिया। उसने अलयुध के अंतिम सांस लेने से पहले कर्ण को रोकने की कोशिश की, पर वह सफल नहीं हो सका। कमजोरी और थकावट के कारण उसकी आंखें धुंधली हो गई थीं। उसे लगा जैसे घटोत्कच की आवाज सुनाई दी, वैसी चीख जैसी सांस रुकते समय निकलती है। भीम ने कहा, "धिक्कार है मेरी आंखों के इस धुंधलेपन और चक्कर पर।" उसे लगा जैसे उसके अंग पीड़ा से तड़प रहे हों, लेकिन उसकी आंखें अभी भी ठीक से देख नहीं पा रही थीं। तभी अचानक सब कुछ साफ हो गया। अब उसे सब कुछ दिखाई देने लगा। वह अपनी पूरी ताकत से उछल पड़ा और अपने पुत्र की ओर दौड़ा। उसने उसके शरीर को छुआ। गले पर लगे गहरे घाव से खून झरने की तरह बह रहा था। उसने खून रोकने की बहुत कोशिश की, पर व्यर्थ। अचानक घटोत्कच की चीख बंद हो गई। उसके अंग अकड़ गए। भीम वहीं स्थिर और चुपचाप खड़ा रहा, मानो जड़वत हो गया हो! कहीं से एक तीर आया और उसकी दाहिनी भुजा को छूकर निकल गया। एक और तीर उनके बाईं ओर से तेज़ी से निकल गया! लगभग सहज

ही, भीम ने अपने दाहिने हाथ से तीर निकाल लिया। फिर झुककर, अपने पैरों को ठीक से रखकर, उन्होंने अपने बेटे के शरीर को उठाया और अपनी पीठ पर लाद लिया। उन्होंने मृत शरीर का हाथ अपनी छाती पर लटका दिया। फिर उठे। उनके मृत बेटे का चेहरा उनके सिर के पिछले हिस्से को छू रहा था। भीम वापस अपनी जगह पर आ गए। उन्होंने किसी को चिल्लाते हुए सुना, "कायर, कायर। नपुंसक। डरपोक।" कोई ये शब्द कह रहा था, जबकि वह अपने बेटे के शरीर को लेकर तेज़ी से दौड़ रहे थे। उन्होंने सोचा कि कौन हो सकता है। क्या यह कर्ण था? नहीं, वह आवाज़ पहचान नहीं पाए। भीम ने अपनी गति बढ़ा दी। उनके रास्ते में पुरुषों के शव, घोड़े, टूटे रथ और हर तरह का मलबा पड़ा था, जिससे उनका चलना मुश्किल हो रहा था।

उसने शव को अपनी पीठ पर लाद लिया, उसकी स्थिति में जरा भी बदलाव नहीं किया। उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। नहीं, यह पसीना नहीं था। यह मृत शरीर की गर्दन से बहता हुआ खून था, जो उसकी पीठ और छाती पर बह रहा था और धीरे-धीरे सूख रहा था। छाती उसकी पीठ से सटी हुई थी, और वह सोच रहा था, "मेरे बेटे की छाती कितनी मजबूत और ठोस थी। यह मेरी पीठ पर पत्थर की तरह सख्त है। उसकी भुजाएँ धातु की तरह मजबूत हैं।" वह सचमुच दौड़ने लगा। पीछे से उन पर एक रोशनी पड़ी। कोई मशाल लिए उनका पीछा कर रहा था। मशालधारी भीमा के पास से गुजरा, मानो किसी को रास्ता दिखा रहा हो। भीमा ने देखने के लिए अपना सिर उठाया। उसकी खोपड़ी के पीछे मृत शरीर का चेहरा झुका हुआ था। भीमा ने मशाल लिए दौड़ रहे व्यक्ति को नीला के रूप में पहचान लिया। इतनी दूर दौड़ने के बावजूद भीमा थका हुआ महसूस नहीं कर रहा था। उसकी साँसें तेज नहीं चल रही थीं। न तो चक्कर आ रहे थे और न ही आँखें धुंधली हो रही थीं। न पसीना, न केवल खून। घटोत्कच का खून उसके अपने घावों के खून के साथ मिल गया था। वह टीले पर चढ़े और नीचे मैदान में उतर आए। उनके कंधों, छाती, पेट, कमर और जांघों पर खून बह रहा था। शव बहते खून के साथ नीचे की ओर फिसल रहा था। फिर उन्होंने शव को ऊपर उठाया ताकि वह अधिक सुरक्षित रूप से टिका रहे। फिर वे और झुके और टीले से नीचे उतर आए। तभी नीला ने कहा, "महाराज, हमें बांस के पुल से छोटी नदी पार करनी है। इस पुल को न केवल मेरा बल्कि आप दोनों का भार भी सहना होगा। इसलिए कृपया दौड़ें नहीं। धीरे-धीरे चलें।" प्रवेश द्वार पर भीम ने कहा, "मैं महाराजा भीमसेना हूँ। यह मेरी

सेविका नीला है। हमें अंदर आने दीजिए।" अपनी कुटिया के सामने भीम एक बैठे हुए हाथी की तरह बैठ गए और धीरे से अपने पुत्र के शव को चटाई पर पीठ के बल लिटा दिया। उन्होंने अपना चेहरा मृत पुत्र की छाती पर रखा और पाया कि वह बहुत गर्म थी। फिर उन्होंने अपने दोनों हाथ फैलाए, बायां हाथ घटोत्कच की पीठ के नीचे रखा और दाहिने हाथ से उसकी कमर को दबाया। वह अपने मृत पुत्र की छाती पर अपना चेहरा पटकने लगा और निर्भीक होकर विलाप करते हुए बोला, "मेरे पुत्र, मेरे पुत्र, घटोत्कच।" उसने अपनी पीठ पर द्रौपदी की बाहों को महसूस किया और उसकी आवाज़ सुनी, "भीम, क्या हमारा घटोत्कच मर गया?" जैसे ही उसने अपना चेहरा मृत पुरुष की छाती से लगाया, उसने पाया कि हृदय स्थिर, शांत और ठंडा था। जमी हुई खामोशी मानो अपनी ही आवाज़ में कुछ कह रही थी। भीम स्वयं बेहोश हो गया और उसने दूर से आती हुई आवाज़ें सुनीं, "भीम, तुम जाग गए हो। इधर देखो। अपने बड़े भाई को देखो। मैं कृष्ण हूँ।" दूर से कोई मशाल लेकर दौड़ता हुआ आया।

धर्मराज ने कहा, "हमें पता चला कि ऐसा हुआ है। हमने शत्रुओं से समझौता किया था कि चंद्रोदय तक कोई युद्ध नहीं होगा ताकि दोनों पक्षों के सैनिकों को आराम मिल सके। मैंने सत्यकी को कमान सौंपी, घोड़े पर सवार हुआ और जल्दी से यहाँ आ गया। अर्जुन, तुम भीम को उस तरफ से थामे रखना।"

वहाँ सन्नाटा छाया हुआ था, चक्कर नहीं आ रहा था। उन्हें बताया गया, "महाराजा, चिता तैयार है।" भीम ने एक बार फिर शव को अपनी पीठ पर बांधा और खड़े हो गए। उन्होंने किसी की मदद नहीं ली, बल्कि सीधे चिता की ओर बढ़े और शव को उस पर रख दिया। फिर भीम वहाँ एक निर्जीव स्तंभ की तरह खड़े रहे। एक तरफ द्रौपदी और अर्जुन थे, और दूसरी तरफ कृष्ण और धर्मराज। सेवक जलती हुई लकड़ियों को कुरेद रहे थे। भीम के पुत्र का लाल शरीर स्याही की तरह काला हो गया और फिर राख बन गया। फिर लपटों ने धीरे-धीरे उस नश्वर शरीर को भस्म कर दिया। भीम अचानक बाईं ओर मुड़े और अर्जुन से पूछा, "अर्जुन, तुम कहते थे कि कर्ण तुम्हारे लिए आरक्षित है। क्या यह सच है या मुझे अभी जाकर उसे मार डालना चाहिए?"

अर्जुन ने कहा, "जी हां, वह मेरे लिए चुना गया है। वही मेरा निशाना है। मैं माता कुंती की कसम खाकर कहता हूं। उसे हाथ मत लगाना। मैं उसका सिर काटकर

तुम्हारे बाएं पैर पर फेंक दूंगा। हमें जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। क्या मैं सही कह रहा हूं, कृष्ण?"

अंततः, शरीर में आग लग गई और वह जलती हुई चिता का हिस्सा बन गया। पैर, हाथ और सिर का आकार अभी पूरी तरह नष्ट नहीं हुआ था। भीम ने नीला को आदेश दिया, "नीला, तुम यहीं रुको जब तक कि पूरा शरीर राख न हो जाए, फिर राख को इकट्ठा करो और बहती नदी में बहा दो। ध्यान रखना कि एक भी हड्डी न बचे जिसे कुत्ते और सियार खा सकें।" भीम अचानक पीछे मुड़ा और तेज़ी से चलने लगा। कृष्ण उसके पीछे दौड़े और पूछा, "भीम, तुम कहाँ जा रहे हो?"

भीमा ने कहा, "लड़ाई के मैदान में वापस चलते हैं। मुझे अलयुध के राक्षस साथियों का खात्मा करना है। घटोत्कच के सैनिक अब नेतृत्वहीन हैं।"

कृष्ण ने कहा, "यह हमारा काम है। क्या तुम्हें पता है तुम्हारा चेहरा कैसा दिख रहा है? कृपया कम से कम आधे दिन के लिए सो जाओ। उसके बाद तुम उनसे निपट सकती हो। द्रौपदी, कृपया भीम का हाथ पकड़ो और उसे कुटिया में वापस ले जाओ और उसे सुला दो। अभी उसके भीतर केवल क्रोध है। लेकिन तुम केवल क्रोध से युद्ध नहीं लड़ सकती।"

द्रौपदी ने उसका हाथ पकड़ा और उसे घसीटते हुए उसकी कुटिया की ओर ले गई। एक विशालकाय बछड़े की तरह भीम उसके पीछे-पीछे चला। उसने दीपक जलाया, गद्दा बिछाया और सबसे पहले पलंग किया। उसने भीम से कहा, "तुम्हारे सिर, शरीर और हाथों पर खून जम गया है। क्या तुम स्नान नहीं करोगे?"

भीमा, "नहीं।"

द्रौपदी ने कहा, "रसोई में दिन भर आग जलती रहती है। तुम्हें शायद गर्म पानी भी मिल जाए।"

बैठते हुए उसने पूछा, "क्या नहाने से खून की गंध दूर हो सकती है?"

द्रौपदी उसके पास बैठ गई। वह उकड़ू बैठी, उसके पैर मुड़े हुए थे। उसने उसके कंधों को पकड़कर कहा, "आओ, यहीं सो जाओ।" फिर उसने उसका सिर अपनी गोद में रख लिया। भीम का सिर उसकी गोद से छूते ही वह सो गया। उसे लगा जैसे अंधेरा छा गया हो। उसने दो बार आह भरी। फिर वह दाईं ओर मुड़ा, उसका सिर अभी भी उसकी गोद में था। उसे दाहिनी भुजा में दर्द महसूस हुआ जहाँ बाण लगा था। फिर उसने पीठ के बल लेटने की कोशिश की। एक मिनट बाद वह बाईं ओर मुड़ा। अगले ही पल वह बच्चे की तरह जोर-जोर से रोने लगा। द्रौपदी

नीचे झुकी और उसका सिर अपने सीने से लगा लिया। उसने कहा, "भीम, कौन जाने इस युद्ध में और कौन-कौन अपनी जान गंवाएगा? रोओ मत। क्या अभिमन्यु कल नहीं मरा था?" उसके सांत्वना भरे शब्द बड़ी मुश्किल से उसके गले से निकले।

सिसकते हुए भीम ने कहा, "नहीं, उसकी मृत्यु के कारण नहीं। जब कर्ण तलवार लहराते हुए आया, तो मैं उसे देख सका। लेकिन मुझमें उठने की ताकत नहीं थी। मैं लकवाग्रस्त हो गया था और एक मरे हुए व्यक्ति की तरह बेबस था। मुझे अपनी आँखों के सामने अपने ही बेटे की हत्या होते हुए असहाय और निष्क्रिय रूप से देखना पड़ा! मैं उसे रोक ही नहीं सका। भीम एक खोखला शरीर है, जिसकी सारी शक्ति समाप्त हो चुकी है। एक हिजड़ा।"

फिर वह और भी ज़ोर से रोने लगा। उसने अपना सिर और नीचे झुकाया और दोनों हाथों से उसका सिर अपने स्तनों के बीच दबा लिया। उसके गर्म आँसुओं से उसका वस्त्र भीग गया और आँसू उसकी जांघों तक पहुँच गए। वह उसे सांत्वना देने के लिए जो कर चुकी थी, उससे आगे कुछ नहीं सूझ रहा था। उसके चेहरे का खून थोड़ा-थोड़ा उसके गालों, हाथों और छाती पर लग गया। थोड़ी देर बाद भीमा का रोना बंद हो गया। फिर उसने खुलकर और आसानी से साँस लेना शुरू किया। कुछ ही पलों में वह गहरी नींद में सो गया, हल्की-हल्की खर्राटे ले रहा था।

—•⁕•—

अध्याय 73

नए सारथी ने पूछा, "आचार्य जी, मुझे किस दिशा में जाना चाहिए?"

उनकी ओर से कोई जवाब नहीं आया।

सारथी ने कहा, "आचार्य, जब तक आप मुझे रास्ता नहीं बताएंगे, मुझे कैसे पता चलेगा कि मुझे कहाँ जाना है?"

आचार्य, "उह।"

सारथी ने उस घुरघुराहट को अपने प्रश्न का वास्तविक उत्तर नहीं समझा। इसलिए उसने रथ को वहीं रोक दिया। यह युद्धक्षेत्र से बहुत दूर था। उस स्थान से भी बहुत दूर जहाँ से युद्ध की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। अँधेरा था, इतना अँधेरा कि कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। सेनापति की ओर से कोई स्पष्ट आदेश नहीं था। सारथी को जम्हाई आने लगी। उसे इतनी नींद आ रही थी कि वह एक पल की नींद के लिए अपनी जान तक देने को तैयार था! उसकी आँखें अपने आप बंद हो रही थीं। एकमात्र राहत की बात यह थी कि उसके घुटने पर बंधा कोड़ा नीचे नहीं गिरा।

ढक्कन खुलने के बाद उबलते बर्तन की तरह द्रोण शांत हो गए। उन्होंने सोचा, "दुर्योधन को क्या लगता है कि सर्वोच्च सेनापति का काम क्या है, जो तकिए के सहारे आराम से बैठा है और अपने बूढ़े गुरु को आगे धकेल रहा है? खैर, मैं तो खुश हूँ कि मैं उसे नीचे ज़मीन पर सिर झुकाए खड़ा कर सका, जबकि मैं रथ में बैठा रहा!" उन्होंने चारों ओर नज़र घुमाई। उन्हें दूर कुछ दिखाई दिया, लेकिन वे निश्चित नहीं थे कि वह सिर्फ़ एक पेड़ था या रथ। बेशक, अब अंधेरा हो चुका था, लेकिन दिन के उजाले में भी उनकी दृष्टि कमज़ोर हो गई थी। वे दूर की चीज़ें नहीं देख पा रहे थे, और वे सटीक निशाना कैसे लगा सकते थे? उन्हें लगा कि बूढ़े लोगों को युद्ध में शामिल नहीं होना चाहिए। उन्हें जम्हाई आने लगी। उन्हें नींद की सख्त ज़रूरत थी। काश वे अपनी कुटिया में जाकर अपने बिस्तर पर लेट पाते! लेकिन वे सर्वोच्च सेनापति थे, और वे ऐसा कैसे कर सकते थे? उन्होंने रथ में ही अपने पैर फैलाए। तभी उन्हें भीष्म की याद आई। ऐसा प्रतीत हुआ कि दुर्योधन, एक मोटे तकिये पर आराम करते हुए, भीष्म को सर्वोच्च सेनापति पद से हटाने का आदेश दे चुका था। द्रोण ने सोचा, "मुझे हटाने की हिम्मत तो करो। मुझे यकीन है कि वह अश्वत्थामा को खोने की मूर्खता नहीं करेगा।" फिर उन्होंने आसन पर पीठ टिकाई और आराम से आँखें बंद कर लीं। तीनों दिशाओं से आ रही आवाज़ें और चीखें धीरे-धीरे कम होने लगीं। उन्होंने सोचा कि अंततः वे गायब हो जाएँगी। उन्होंने बेहतर नींद के लिए अपनी स्थिति में बदलाव किया। उन्हें वह सब याद आया, और उन्हें उस ठंडी, चुभती हुई ठंड की याद आई। जब वे पूरी तरह से तरोताज़ा महसूस कर रहे थे, तभी उन्होंने महाराजा के दूत की आवाज़ सुनी, "सेनापति आचार्य,

महाराजा ने एक राक्षस अलयुध को दूसरे राक्षस घटोत्कच के विरुद्ध युद्ध में उतारने का विचार किया है। उन्होंने मुझे इसके लिए आपकी स्वीकृति लेने भेजा है।"

उसने कहा, "हाँ।" फिर वह धीरे-धीरे जागा। उसे ठंड लग रही थी और हाथ-पैर अकड़े हुए थे। उसे कंबल ओढ़ने की इच्छा हुई। सारथी अपनी सीट पर खर्राटे ले रहा था। द्रोण संतुष्ट हुए, "कम से कम वह कार्य करने से पहले मेरी सहमति तो लेता है। उसने मेरी शर्त मान ली है।" दाईं ओर से कोई आवाज़ नहीं आ रही थी। सामने से बस थोड़ी सी आवाज़ आ रही थी। बाईं ओर से आ रही आवाज़ों से उन्हें पता चला कि लड़ाई और आगे बढ़ गई है। उन्होंने सोचा, "इस अंधेरे में यह कैसी सैन्य संरचना, कैसी रणनीति है!" उन्होंने सोचा कि अगर वह सुबह तक इस ठंड में बाहर रहे तो उन्हें गले में खराश, सर्दी और बदन दर्द हो जाएगा। उन्होंने चिल्लाकर कहा, "सारथी, तपना, क्या तुमने मुझे सुना? किसी को भेजकर मेरे लिए कंबल मंगवाओ। तब तक किसी टूटे हुए रथ में आग जला लो। यह ठंड मेरी सहनशक्ति से परे है।"

टूटे हुए रथ की लकड़ी से बढ़िया आग निकली। अच्छी लकड़ी से बना वह रथ टूटा पड़ा था। द्रोण ने सोचा कि आखिरकार उसका कोई उपयोग तो हो ही गया। तभी कंबल आया, और वह बहुत ठंडा था। उन्होंने सारथी को आदेश दिया कि वह कंबल को जलती हुई आग के सामने गर्म करे और फिर उसे अपने शरीर पर ओढ़ ले। कंबल ओढ़ने के बाद उन्हें बहुत आराम मिला। उन्होंने सारथी से एक कपड़ा गर्म करने को कहा और फिर उसे अपने घुटनों पर लगाने को कहा। फिर उन्होंने कहा, "अगर तुम्हारे पास थोड़ा सा तेल हो, तो उसे घुटनों पर मल लो। इससे दर्द गायब हो जाएगा। कहते हो कि तुम्हारे पास तेल नहीं है? कोई बात नहीं। अगर लगातार आग के पास बैठे रहोगे, तो तुम्हारा सिर घूम जाएगा और पेट में गड़बड़ हो जाएगी।"

द्रोण ने आगे कहा, "कंबल गर्म है। रथ सही चीज है। सभी तीरों को एक कोने में धकेल कर ढेर लगा दो। मेरे लेटने और सोने के लिए जगह बना दो।"

Charioteer, "Commander Acharya, Maharaja Duryodhana has sent the message for you that Maharaja Karna has killed Ghatotkacha."

द्रोणा ने कहा, "मैं खुश हूं। उन्हें मेरा संदेश भेज देना कि इस उपलब्धि का श्रेय वे संयुक्त रूप से साझा करें।"

द्रोणाचार्य ने सोचा कि घटोत्कच की मृत्यु के कारण शोरगुल कम हो गया है। उन्होंने मन ही मन कहा, "शायद मेरा यह अनुमान गलत था कि युद्ध स्थल दूर चला गया है। मुझे चैन से नींद नहीं आ रही है। शायद मुझे फर्श पर बिछाने के लिए एक और कंबल मांग लेना चाहिए था। खाली बैठे रहने का क्या फायदा?" उन्हें कहीं से युद्ध की आवाजें सुनाई दीं। तेज हवा में आवाज का स्रोत पता लगाना मुश्किल था। द्रोणाचार्य ने सारथी से कहा, "तपना, मुझे युद्ध स्थल पर ले चलो।" युवा होने के कारण तपना चीजों को देख सकता था, भले ही पूरी तरह से नहीं। द्रोणाचार्य ने पूछा, "घोड़े अपने अगले पैर ऊपर करके क्यों खड़े हैं, मानो डरे हुए हों?" तपना ने उत्तर दिया, "गुरुजी, रास्ते में एक शव पड़ा है।" द्रोणाचार्य ने कहा, "तो शवों को रास्ते से हटाकर आगे बढ़ो।" तपना ने कहा, "जी हाँ, मैं यही कर रहा हूँ। फिर भी, कभी-कभी..." द्रोणाचार्य को गंध आई और उन्हें अनुष्ठानिक अग्नि याद आ गई। उन्होंने पूछा, "शीतकालीन वर्षा अभी तक क्यों नहीं आई?"

तपना ने कहा, "मुझे ज्योतिष का ज्ञान कैसे होगा? आपको मुझे बताना चाहिए।"

द्रोण ने सोचा, "घटोत्कच की मृत्यु से युद्ध समाप्त नहीं हुआ है। यह जानना मुश्किल है कि पांडव योद्धा ठीक कहाँ पर तैनात हैं और कहाँ से बाण चलाएँगे। मुझे नहीं पता कि हमारे सैनिक उन पर हमला क्यों नहीं कर रहे हैं। मानो वे सोचते हों कि उनका काम बस इंतज़ार करना है।" उन्होंने अपने सारथी से कहा, "तपना, हमारे लोगों को बता दो कि मैं यहाँ आया हूँ और इस स्थान पर मौजूद हूँ।" स्थिति का जायजा लेते हुए उन्होंने सोचा, "हमारी सेना कमज़ोर पड़ गई लगती है। शायद उनमें से अधिकतर अंधेरा होने के कारण घर चले गए। अंधेरे में लड़ना अपने आप में एक अलग तरह की क्रूरता है। नहीं, यह तो एक अनिश्चित भविष्य के साथ जुआ खेलने जैसा है। हम इसमें क्यों उलझे? नहीं, यह हमारी मर्ज़ी नहीं थी। हमने स्वेच्छा से इसमें भाग नहीं लिया। वे हमें इसमें फँसाने में सफल रहे। कहीं न कहीं अभी भी लड़ाई चल रही है। यहाँ तो बस ठंड है। मुझे किसी के चिल्लाने की आवाज़ सुनाई दे रही है, 'हमें भी आराम चाहिए।' यह किसकी आवाज़ है?" "हमारी तरफ से कोई है क्या?" उन्होंने अपने सारथी से पूछा, "तपना, रथ को थोड़ा और आगे ले चलो। किसी सेनापति से उस चिल्लाहट के बारे में पता करो।" उनकी मुलाकात अश्वत्थामा से हुई, जिन्होंने बताया, "अर्जुन आराम की मांग करते हुए चिल्ला रहा है। दोनों तरफ के सैनिक थक चुके हैं। वह सुझाव दे रहा है कि दोनों तरफ के सैनिक भोर से पहले चंद्रोदय तक आराम कर सकते हैं और सो सकते हैं। वह पूछ रहा है कि

क्या आप इसके लिए सहमत हैं। हमारे सैनिक भी कह रहे हैं कि उन्हें आराम चाहिए। वे जहां भी हैं, ऊंघ रहे हैं - घोड़ों पर, हाथियों पर, रथों में, या बस खड़े-खड़े! वे कल रात से ही युद्ध में हैं, जब हमने रथ-पहिया संरचना बनाई थी।"

इस पूरे समय में उन्हें शौच तक करने की अनुमति नहीं दी गई है।" द्रोण ने कहा, "क्या अर्जुन कोई और चाल चल रहा है? मेरी कसम खाकर उससे पूछो कि क्या वह अपने अनुरोध में सच्चा और ईमानदार है।" उन्होंने पता लगाने के लिए एक दूत भेजा। अश्वत्थामा घोड़े पर सवार होकर संदेश लेकर आया। द्रोण ने सोचा, "यद्यपि वह छप्पन वर्ष का है, उसकी आँखें बाज़ की तरह तेज़ हैं, और वह कितनी तेज़ी से घोड़े की सवारी कर सकता है। काश उसने विवाह कर लिया होता..." अपने पुत्र के अविवाहित रहने के विचार मात्र से ही उनके भीतर एक खालीपन और सन्नाटा छा गया। उन्होंने लाख कोशिश की, लेकिन उन्हें कुछ भी स्पष्ट दिखाई नहीं दिया। फिर उन्हें आवाज़ें सुनाई दीं, "सर्वोच्च सेनापति को शुभकामनाएँ! हमारे आचार्य का भला हो।" यह आवाज़ अनगिनत स्वरों से बार-बार आ रही थी। द्रोण के भीतर पूर्ण सन्नाटा छा गया। अश्वत्थामा ने बताया, "पिताजी, यह कोई चाल नहीं है। युद्ध अब रुक जाएगा और चंद्रोदय के बाद पुनः आरंभ होगा।" अर्जुन ने आपके पूजनीय चरणों, अपने गुरु के चरणों की शपथ लेकर यह घोषणा की है। मैंने उसकी आवाज पहचान ली है।" द्रोण ने कहा, "तुम रथ में बैठो और विश्राम करो। मैं तम्बू में वापस जाता हूँ जहाँ मुझे बेहतर विश्राम मिलेगा, मेरा शरीर अपनी सहनशक्ति की सीमा तक पहुँच चुका है।"

झोपड़ी के अंदर नीम के तेल की रोशनी में द्रोण ने अपने पैरों को देखा। जी हाँ, उनका शरीर दुबला-पतला था, हड्डियों का ढाँचा और मांस न के बराबर। उम्र के साथ त्वचा पर झुर्रियाँ पड़ गई थीं, जैसे साँप की बाहरी त्वचा पर। झुर्रियाँ लहरों की तरह दिख रही थीं। हड्डियाँ बूढ़ी हो गई थीं, इसीलिए जोड़ों में बहुत दर्द हो रहा था। चटाई पर घास बिछी थी और उस पर हिरण की खाल बिछी थी। उन्होंने अपने शिष्य एकलव्य को लंबी आयु का आशीर्वाद दिया, क्योंकि उसने अपने गुरु को हिरण की खाल भेंट की थी, क्योंकि उस पर बैठना और लेटना आरामदायक था। एकलव्य उस पर लेट गया और अपने अंगों को फैलाया। उसे आराम मिला और वह इस बात से प्रसन्न हुआ कि युद्ध में सेनाओं की संख्या कम होने का एक सकारात्मक पहलू भी था। परिणामस्वरूप, मानव मल-मूत्र की दुर्गंध भी कम हो गई थी। या शायद शिविर को दूसरी जगह स्थानांतरित कर दिया गया था? उसने

सोचा, "घोड़ों के सरपट दौड़ने की लयबद्ध ध्वनि कितनी सुखद है!" दुर्योधन की छुपकर आती आवाज सुनकर द्रोण ने पूछा, "क्या हमारे सर्वोच्च सेनापति आचार्य अभी सो रहे हैं?" द्रोण को आश्चर्य हुआ कि महाराजा इस समय यहाँ क्यों आए हैं। दुर्योधन ने कुटिया का दरवाजा खोला और अंदर प्रवेश किया। उस धुंधली रोशनी में भी, उनके कीमती पत्थरों से जड़ा मुकुट, हार, सीने का कवच और बाजूबंद चमक रहे थे। द्रोण ने लेटने का फैसला किया और अपने पैर फैला लिए।

उसने मन ही मन कहा, "महान राजा अपने समस्त अलंकरणों के साथ मेरे सामने खड़े होकर मुझसे बात करें!" दुर्योधन ने कहा, "हमने एक रणनीति बनाई है। मैं स्वयं आपको समझाने आया हूँ ताकि कल सुबह जब आप युद्धक्षेत्र में पहुँचें तो आपको चिल्लाने की आवश्यकता न पड़े।" द्रोण ने कहा, "जल्दी बताओ नई रणनीति क्या है?" उसने ज़ोर से जम्हाई ली। दुर्योधन ने समझाया, "हमारे शत्रु अपने रथों में सो रहे हैं। लाशों से ढकी ज़मीन पर धूल और कीचड़ है। घोड़े भी गोबर करने के बाद लेटे हुए हैं। हम इस अवसर का लाभ उठाकर उन पर हमला करने और उन्हें भारी तबाही मचाने की योजना बना रहे हैं, इससे पहले कि वे समझ पाएँ कि क्या हो रहा है और अपने हथियार उठा लें!" क्योंकि दुर्योधन ने प्रवेश करते समय दरवाजा खोल दिया था, लेकिन बंद नहीं किया था, इसलिए बाहर से हवा अंदर आ रही थी, जिससे रोशनी टिमटिमा रही थी। द्रोण ने कहा, "महाराज, क्या आप कृपया दरवाजा बंद कर देंगे?" उन्होंने अपने पैर फैलाए। दुर्योधन ने विनती की, "आप बस अपनी सहमति में सिर हिला दीजिए।" द्रोण ने उत्तर दिया, "स्पष्ट रूप से नहीं। मैंने अर्जुन के चरणों में शपथ लेकर अस्थायी युद्धविराम स्वीकार किया है, कि वह इसका पालन करेगा!" दुर्योधन ने पूछा, "क्या उन्होंने हमारे जयद्रथ को मारते समय झूठ नहीं बोला था?" द्रोण ने उत्तर दिया, "शायद उन्हें किसी प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए ऐसा करने के लिए विवश होना पड़ा हो।" अब जब दरवाजा बंद हो चुका था, कुटिया में दीपक स्थिर लौ से जल रहा था। द्रोण ने अपनी आँखें बंद कर लीं। वे पलकों के पीछे धुंधली, लालिमा लिए हुए रोशनी देख सकते थे और उसके आगे फैले घोर अंधकार को महसूस कर सकते थे। दुर्योधन ने आग्रह किया, "आचार्य, कृपया औपचारिक रूप से अपनी सहमति दें।" द्रोण ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "ठीक है, यदि आपको लगता है कि आपको सर्वोच्च सेनापति के आदेश को रद्द करने और अपने द्वारा किए गए समझौते का उल्लंघन करने का अधिकार है, तो आप ऐसा करने के लिए स्वतंत्र हैं।" फिर द्रोण दूसरी ओर मुड़े

और अपना चेहरा एक कंबल से ढक लिया। उन्हें दुर्योधन का फूला हुआ चेहरा, चपटी नाक और दुष्ट दृष्टि याद आई। फिर वे अचानक दूसरी ओर मुड़ गए। घोड़ों के तेज़ी से भाग जाने की आवाज़ सुनकर उसने अपना चेहरा खोला। आधे टूटे दरवाजे से ठंडी हवा झोपड़ी में घुस आई। लौ तेज़ी से टिमटिमा रही थी। द्रोण ने पुकारा, "हव्यका, हव्यका।" हव्यका का कोई अता-पता नहीं था। दीपक बुझ गया। जले हुए नीम के तेल की तीखी गंध झोपड़ी में फैल गई। फिर भी हव्यका का कोई अता-पता नहीं था।

जब द्रोणाचार्य सुबह उठे, तो उन्हें पूरे शरीर में खुजली महसूस हुई। या शायद इसी खुजली ने उन्हें जगाया। उन्होंने ज़ोर-ज़ोर से खुजली की। उन्हें लगा कि उनकी बूढ़ी और कमज़ोर त्वचा में इतनी खुजली सहने की शक्ति नहीं है।

फिर उन्हें याद आया कि जब से उन्होंने सर्वोच्च सेनापति का पद संभाला था, तब से उन्होंने स्नान नहीं किया था। उन्होंने पुकारा, "हव्यका, क्या स्नान के लिए गर्म पानी है?" फिर भी, उनका कोई अता-पता नहीं था। वे अंदर गए और देखा। वे वहाँ नहीं थे। तुरंत उन्हें समझ आया कि हव्यका पिछले ही दिन बिना किसी को बताए चले गए होंगे। नहीं, पूरी तरह से बिना बताए नहीं। द्रोण को याद आया कि उन्होंने पहले कुछ दिनों के लिए छुट्टी की अनुमति मांगी थी। फिर भी द्रोण को लगा कि हव्यका को उस स्थिति में अपने स्वामी को नहीं छोड़ना चाहिए था। उन्हें थोड़ा गुस्सा आया कि हव्यका ने इतना कृतघ्न होकर इतना क्रोध किया। उन्होंने अपने सारथी तपन को जगाया, जो कुटिया के पिछले हिस्से में विश्राम कर रहा था। उन्होंने तपन से उनके लिए पानी गर्म करने को कहा। तपन ने उत्तर दिया कि बर्तन में पानी नहीं है। द्रोण ने कहा, "कहीं से पानी ले आओ। मैंने आज स्नान करने का निश्चय किया है।" तपन घोड़े पर सवार होकर पानी की तलाश में चले गए। उन्हें थोड़ा पानी मिला और जब तक पानी गर्म हुआ, तब तक सुबह हो चुकी थी। फिर उन्होंने तपना से अपनी पीठ की मालिश करने को कहा और बोला, "इतनी तेज़ी से नहीं।" स्नान के बाद उन्होंने साफ कपड़े पहने ताकि खुजली न हो। फिर उन्होंने तपना को अग्नि अनुष्ठान की व्यवस्था करने का आदेश दिया। तपना ने बताया कि घी नहीं है। द्रोण ने पूछा, "तुम्हारा क्या मतलब है?" तपना ने उत्तर दिया, "उन्होंने घी दिया ही नहीं!" द्रोण ने क्रोधित स्वर में कहा, "मुझे आज ही अनुष्ठान करना है। घी अब सिर्फ महाराजा के रसोईघर में ही मिलेगा। जल्दी जाओ और ले आओ।"

जब वे अग्नि देवता को घी अर्पित करके अग्नि अनुष्ठान कर रहे थे, तो अग्नि से एक बहुत ही मनमोहक सुगंध उठी। वे अनुष्ठान के मंत्रों का जाप कर रहे थे, लेकिन कमजोर स्मृति के कारण कुछ शब्द भूल रहे थे। तभी कुछ अधूरी यादें उनके मन में कौंध गईं। उन्हें इस बात से कुछ असंतोष और घृणा महसूस हुई कि उन्हें महाराजा के रसोईघर के बचे हुए घी से अनुष्ठान करना पड़ रहा था। हालांकि, द्रोणदेव इस बात से प्रसन्न थे कि दुर्योधन अब हर बात पर उनसे सलाह ले रहा था। उन्होंने सोचा, "बेचारे भीष्म। वे अपना अधिकार जताने से डरते थे। लेकिन यह द्रोणदेव तो आसानी से डरने वाले नहीं हैं।" अनुष्ठान के बाद तपन उनके लिए दलिया लेकर आया। दूध की आपूर्ति नौ-दस दिन पहले ही बंद हो गई थी। द्रोणदेव को आश्चर्य हुआ कि क्या महाराजा के रसोईघर में भी दूध की आपूर्ति बंद हो गई थी। अनाज का भंडार खत्म हो चुका था। केवल एकलव्य द्वारा भेंट किया गया शहद ही प्रचुर मात्रा में बचा था। वह भी तब जब अश्वत्थामा ने अनगिनत मुट्ठी शहद पी लिया था! शहद मिला दलिया पीने के बाद द्रोण झोपड़ी से बाहर निकले। सुबह की धूप बहुत सुहावनी थी। इतनी आरामदायक कि उन्हें धूप में सोने का मन कर रहा था। उनकी झोपड़ी बाकी झोपड़ियों से अलग थी। दरअसल, आम सैनिकों का, घोड़ों और हाथियों की तरह, कोई निश्चित ठिकाना नहीं होता था। यहाँ उनकी झोपड़ी के आसपास द्रोण को शिविर के बाकी हिस्सों की तरह मल-मूत्र की दुर्गंध नहीं थी। अचानक उन्हें एहसास हुआ कि सूर्योदय के लगभग दो घंटे बीत चुके हैं। उन्होंने मन ही मन सोचा, "युद्धक्षेत्र में क्या हो रहा है? कोई भी मुझसे कुछ भी करने की अनुमति लेने नहीं आया। युद्ध से जुड़ी कोई खबर मुझ तक नहीं पहुँची। मुझसे सलाह लेना! क्या यही उनका मुझसे सलाह लेने का तरीका है! उन्होंने मुझे नज़रअंदाज़ कर दिया है। अरे हाँ! अब मुझे समझ आया। उन्होंने मुझे बिना बताए ही मेरे पद से हटा दिया है। नहीं, शायद मैंने जानबूझकर युद्ध से दूरी बना ली है, मानो अपने पद से हट गया हूँ!" उन्होंने धीरे-धीरे साँस ली। सौभाग्य से, जानवरों के गोबर की दुर्गंध नहीं थी। गर्मी सुखद थी। अब उन्हें पूरा यकीन हो गया था कि दुर्योधन अब उनसे मिलने नहीं आएगा। न ही वह कोई दूत भेजेगा। उन्हें भीतरी खालीपन का गहरा एहसास होने लगा। वे बेचैन थे। उन्होंने कुटिया में झाँका। फिर वे सुबह की धूप की ताज़ी गर्मी में तेज़ी से इधर-उधर टहलने लगे। लेकिन खालीपन का एहसास हर जगह उनका पीछा कर रहा था। उन्हें दूर से युद्ध की आवाज़ सुनाई दी। या यह उनका भ्रम था? उन्होंने मन ही मन कहा, "खैर, मैंने अलग रहना

चुना। मैंने खुद ही पद को अपने नियंत्रण से बाहर जाने दिया। आख़िरकार, एक सर्वोच्च सेनापति जो अपनी सेना के युद्ध के दौरान सोता रहता है, वह पद पर बने रहने की उम्मीद कैसे कर सकता है?"

द्रोण ने जल्दी से अपनी कुटिया में प्रवेश किया। उन्होंने तपना को आदेश दिया, "आओ और मेरी कवच बांध दो।"

तपना ने कहा, "खैर, तुमने युद्ध के पहले दिन ही कहा था कि तुम इसे पहनना नहीं चाहते क्योंकि यह तुम्हारे लिए बहुत भारी है।"

द्रोण ने कुछ चिढ़कर कहा, "अब मैं तुम्हें आदेश देता हूँ कि तुम ऐसा करो। पूरी दुनिया द्रोण की योद्धा के रूप में वीरता देखे।"

उसने सीने पर कवच बांध लिया। द्रोण ने अपने दुबले-पतले और चपटे शरीर को देखा। कवच पहनने के बाद उसका सीना किसी योद्धा के सीने की तरह आगे की ओर उभरा हुआ दिखाई दिया। उन्होंने तपना को आदेश दिया, "जल्दी चलने की तैयारी करो।" तपना ने रथ तैयार किया और उसमें घोड़े जोत दिए। फिर उसने खुद से तैयार किया हुआ दलिया पीकर उसमें पानी का एक बर्तन रख दिया। द्रोण ने कहा, "इसमें कुछ और तीर रख दो।"

रथ की तेज गति भी मानो संसार को यह संदेश दे रही थी, "अब तुम द्रोण की वीरता और युद्ध कौशल देखोगे, न कि केवल उनकी रणनीति बनाने की कुशलता।" अचानक उन्हें हव्यक की याद आ गई। उन्हें याद आया कि हव्यक ने उनके प्रति अपनी वफादारी जताने के लिए क्या कहा था। उन्होंने पूछा, "उसने क्या कहा था? उसने कहा था कि वह उसकी सेवा कर रहा है और उसका चावल खा रहा है, दुर्योधन का नहीं। खैर, उसने दो दिन पहले कहा था, 'यह सच है कि मैं आपकी सेवा में हूँ। अब भी अगर आप घर लौटते हैं, तो मैं आपके पीछे आऊँगा और आपकी सेवा करूँगा। लेकिन घर से इतनी दूर अजनबियों के हाथों कष्ट सहने और मारे जाने का क्या अर्थ है?' मैं उसे जीवनदायिनी कहना चाहता था, पर कह नहीं सका। क्या इसका मतलब यह है कि वह सही या बुद्धिमान है?" द्रोण ने इस प्रश्न का उत्तर खोजने की कोशिश नहीं की। उनका मन युद्ध की आवाज़ों में डूबा हुआ था। वे जानते थे कि युद्ध भयंकर और निरंतर चल रहा था। अश्वत्थामा सत्यकी पर और दुस्साना नकुल पर टूट पड़ा था। वे भयंकर संघर्ष में लगे हुए थे। कहीं न कहीं उन्हें भीम और उनके सैनिकों के प्रभाव दिखाई दिए। द्रोण ने मन ही मन पूछा, "मुझे कहाँ जाना चाहिए? मेरे सैनिक कहाँ हैं? हाँ, मुझे दुर्योधन आस-पास ही

दिखाई दे रहा है।" उन्होंने तपन को आदेश दिया कि वह रथ को महाराजा के रथ के पास ले जाए।

द्रोण ने पूछा, "महाराज, युद्ध की वर्तमान स्थिति क्या है?" दुर्योधन ने कोई उत्तर नहीं दिया।

द्रोणा ने कहा, "मुझे युद्ध की मौजूदा स्थिति पर एक संक्षिप्त रिपोर्ट चाहिए।"

दुर्योधन ने कहा, "मेरा सुझाव है कि आप वापस जाकर आराम करें।"

द्रोणा ने कहा, "मैंने अपना विश्राम पूरा कर लिया है। आज मैं पूरी वीरता के साथ लड़ना चाहता हूँ।"

दुर्योधन ने कहा, "तब तुम अपना प्रतिद्वंदी चुन सकते हो।"

द्रोण ने सोचा, "वह मेरा अपमान कर रहा है। मैं वीरतापूर्वक लड़ूंगा और साबित करूंगा कि मुझे कमतर नहीं आंका जा सकता।"

द्रोणा ने पूछा, "मेरी सेना कहाँ है?"

दुर्योधन, "तुम्हारी सेना? तुम्हारे पास अपनी सेना कब से थी?"

द्रोण शर्मिंदा थे। उनके पास अपनी कोई सेना नहीं थी, फिर भी वे सेनापति कैसे बन गए? उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे उनकी कोई जगह ही न हो। अपने रथ में बैठे दुर्योधन युद्धक्षेत्र का चारों ओर से जायज़ा ले रहे थे, मानो वे सर्वोच्च सेनापति हों। द्रोण को अंदर ही अंदर यह महसूस हो रहा था कि वे वहाँ बेमेल हैं। उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे कोई चीज़ उन्हें जकड़ रही हो। उन्होंने दुर्योधन से कहा, "महाराज, मुझे कम से कम एक छोटी सेना ही दे दीजिए। मुझे अपने वीर कर्मों से दुनिया को चकित करना है।" लेकिन महाराज ने अपना चेहरा दूसरी ओर फेर लिया। द्रोण सोचने लगे: "क्या वे धीरे से मुस्कुरा रहे हैं? क्या यह व्यंग्यात्मक मुस्कान है? या उन्होंने मुझसे अपनी तिरस्कार भरी हंसी छिपाने के लिए अपना चेहरा फेर लिया है?"

अंततः उन्हें कुछ सैनिकों का एक छोटा दल दिया गया, और उनका नेतृत्व करते हुए, द्रोण युद्धक्षेत्र के बाहरी घेरे में चक्कर लगा रहे थे। वे सोच रहे थे, "मुझे किस पर आक्रमण करना चाहिए? भीम पर? नहीं। अर्जुन पर? मैं नहीं कर सकता क्योंकि वह मुझसे नहीं लड़ेगा। मैं इन थके-हारे सैनिकों को मार सकता हूँ। नकुल पर? सहदेव पर? नहीं, यह द्रोण इतने छोटे सैनिकों से कैसे लड़ सकता है? हाँ, अगर मुझे लड़ना ही है, तो मुझे अर्जुन से लड़ना होगा। मुझे दूर कहीं धर्मराज दिखाई दे रहे हैं। उनके पास ही अर्जुन का रथ है, जिसमें सफेद घोड़े हैं। उन्हें अब

भी डर है कि मैं उनके बड़े भाई को पकड़ लूँगा। यह मेरे लिए गर्व की बात है! मैं सोचता हूँ कि मेरे सभी शिष्यों में शायद वही गुरु के प्रति भक्ति से सबसे अधिक प्रेरित हैं। वह कौन है जो इस ओर आ रहा है? सफेद दाढ़ी, दमकता मुकुट, थका हुआ प्राचीन चेहरा।" उन्होंने अपने सारथी से पूछा, "तपना, वह कौन सा राजा है? वह हमारी तरफ से किसके साथ युद्ध कर रहा है?"

तपना ने कहा, "ये पांचालों के महाराजा द्रुपद हैं। ये हमारी तरफ से शकुनी से लड़ रहे हैं।"

द्रोण ने कहा, "बस यही काफी है। तपना, मेरे रथ और सैनिकों को उस पर टूट पड़ो। आखिरकार मुझे मेरा शिकार मिल गया है। सैनिकों से कहो कि वे जोर-जोर से चिल्लाएं और जोश के साथ काम करें।"

द्रोणाचार्य की द्रुपद के प्रति शत्रुता और भी तीव्र हो गई, मानो उबल रही हो। उनका उत्साह चरम पर था। उनका शरीर सचमुच गर्म हो गया था। उन्होंने शकुनी को संदेश भेजा कि द्रुपद को अपना लक्ष्य न बनाएँ। फिर उन्होंने अपने सैनिकों से कहा, "मेरे सैनिकों, जल्दी करो। चलो एक महान कार्य करने चलते हैं!" द्रुपद के पास पहुँचकर उन्होंने चुनौती दी, "हे पांचाल, जान लो कि तुम द्रोणाचार्य का सामना कर रहे हो। क्या तुम्हें इसका एहसास है?..." द्रुपद तब तक चिल्लाते रहे जब तक उनका गला सूख नहीं गया और उनकी नसें फटने वाली थीं। युद्ध शुरू हुआ और सैनिक जोश से भर गए। द्रोणाचार्य ने अपना धनुष उठाया और पूरी ताकत से तीर चलाने के लिए कमान खींची। तीर लक्ष्य से भटक गया। द्रोणाचार्य ने स्वयं से पूछा, "मेरा तीर किसे लगा?" उन्हें बताया गया कि वह पास खड़े विराट को लगा और द्रुपद वास्तव में थोड़ा दाईं ओर थे। एक बार फिर, द्रोणाचार्य ने निशाना साधा और तीर चलाया। शत्रु सेना लहरों की तरह बिखर गई। तीर ने द्रुपदाचार्य के रथ को चकनाचूर कर दिया। द्रोण ने तपन से कहा, "हे भगवान! मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि मेरे कंधों में इतनी शक्ति है! तपन, बाण आगे बढ़ाओ। द्रुपद का कार्य पूरा होने तक मुझे चैन नहीं मिलेगा। मेरी साँसें तेज़ होती जा रही हैं..."

तपना ने घोषणा की, "आचार्य, द्रुपद गिर गया है। आपके बाण से।"

द्रोण ने पूछा, "मेरे तीर से? क्या आपको यकीन है, किसी और के तीर से नहीं?"

तपना ने कहा, "ऐसा लगता है कि वे इस नियम का पालन कर रहे हैं कि बराबरी वालों को आपस में लड़ना चाहिए। किसी और ने द्रुपद पर तीर चलाने का प्रयास नहीं किया।"

द्रोण ने मन ही मन सोचा, "हाँ। रथ लहर की तरह हिल रहा है, इसलिए द्रुपद के मुकुट पर दृष्टि केंद्रित करना कठिन है। द्रुपद, क्या अब तुम्हें द्रोण की युद्धकला में निपुणता दिखाई दे रही है? तुमने मुझे बहुत पहले अपमानित किया था।" द्रोण इतने उत्तेजित थे कि उनका शरीर अंदर से गर्म होने लगा। उनकी साँसें तेज़ होती गईं। अंदर की गर्मी असहनीय हो गई। उनके पूरे शरीर से पसीना बहने लगा। उन्होंने कहा, "तपना, यह कवच भारी होता जा रहा है और ऐसा लग रहा है जैसे यह मेरी छाती को दबा रहा हो। इसे उतार दो।" तपना ने उत्तर दिया, "आचार्य, जब तक हम पीछे नहीं हट जाते, इसे यहीं रहने दो। पुत्र, आपको सुरक्षा की आवश्यकता है, कहीं गलती से कोई तीर आपको न लग जाए।" अंदर की गर्मी अब फूट रही थी। वे द्रुपद के सिर पर स्तंभ की तरह विराजमान मुकुट को देख नहीं पा रहे थे। वे मन ही मन दोहरा रहे थे, "उन्होंने मुझे अपमानित किया था।" अचानक उन्हें चक्कर आने लगा, उनकी आँखें चकरा गईं। उसके अंतर्मन की गहराई से एक आवाज़ कह रही थी, "देखो, तुमने उस अपमान का बदला लिया जब उसे तुम्हारी चारपाई के पैर से बांध दिया गया था और उसे तुम्हें अपना आधा राज्य देने के लिए मजबूर किया गया था।" असंतोष की भावना उसे सता रही थी, और वह मन ही मन सोच रहा था, "मुझे भीष्म से इसी तरह लड़ना चाहिए था। दुर्योधन ने मुझे धोखा दिया।" उसने तपन से कहा, "तपना, मेरे रथ और सैनिकों को दुर्योधन पर दौड़ाओ। मैं उससे लड़ूंगा!" गर्मी बढ़ गई। सीने पर कवच पहने हुए बैठना उसके लिए असंभव हो गया। वह किसी नदी के ठंडे किनारे पर स्थित आश्रम में जीवन बिताने के लिए तरस रहा था, कोई भी नदी हो। उसने तपन पर चिल्लाते हुए कहा, "क्या तुमने मेरी बात नहीं सुनी? तुमने मेरी आज्ञा का पालन क्यों नहीं किया?"

तपना ने उत्तर दिया, "आचार्य, क्या यह उचित है कि प्रजा अपने शासक के विरुद्ध हथियार उठा ले?"

द्रोण मन ही मन सोचने लगे, "तपना कभी समझ नहीं पाएगा।" कोई नहीं समझ सकता। मेरा अश्वत्थामा तो कभी समझ ही नहीं पाएगा। मेरा क्रोध भड़क रहा है और भयंकर रूप से भड़क रहा है। मुझे रोने का मन कर रहा है। सामने वाले सैनिक तितर-बितर हो रहे हैं क्योंकि उनका सेनापति मर गया है। हमने यह लड़ाई जीत ली है। हमने एक सेनापति को मार गिराया है और दूसरा, विराट भी घायल लग रहा है। अगर वह भी मर गया, तो हम उनके दो सेनापतियों को मार गिराएंगे। हाँ, किसी चीज़ ने मुझे मारा है, ठीक मेरी दाहिनी बांह पर। वह चुभ गई है।"

द्रोण ने पूछा, "तपना, वह बाण किसने चलाया?"

तपना ने कहा, "कोई साधारण सैनिक होगा। अवश्य ही द्रुपद की बिखरी हुई सेना का हिस्सा होगा।"

द्रोण ने कहा, "यह धर्म के विरुद्ध है। युद्ध का धर्म यह है कि युद्ध में केवल समान दर्जे के योद्धा ही एक-दूसरे से लड़ें। क्या किसी साधारण सैनिक ने मुझ पर तीर चलाया?"

तीर निकालने के बाद, घाव से खून बहने लगा। यह पतला और पानी जैसा खून था। इस सूखे शरीर में इससे बेहतर खून और क्या बह सकता है? उसने खुद से पूछा। उसे एक कंपन महसूस हुआ, मानो वह उसे भर रहा हो। उसने सोचा, "क्या वह विषयुक्त नोक वाला तीर था?" उसके भीतर से घोर पीड़ा की चीख फूट पड़ी। उसे मृत्यु का आभास हो गया। उसने सोचा, "एक साधारण सैनिक के तीर से द्रोण की मृत्यु! मुझे पूज्य भीष्म याद आ रहे हैं। मेरा स्वयं संन्यास लेना और दुर्योधन द्वारा मुझे संन्यास दिलाना। मैं रोना चाहता हूँ, लेकिन चीख मेरे गले में ही अटक गई है। आखिर हव्यक कितना बुद्धिमान था?" उसने अपने सामने एक जबरदस्त हलचल देखी। तपन ने बताया, "आचार्य, द्रुपद के पुत्र, धृष्टद्युम्न अपने सैनिकों के साथ इस ओर आ रहे हैं।"

द्रोण ने अपने सैनिकों को अफरा-तफरी में इधर-उधर भागते देखा। धृष्टद्युम्न को बताया गया कि आचार्य को बाण लगा है और घाव से बहुत खून बह रहा है। लगभग आधे घंटे में उनका खून बह जाएगा और उनकी मृत्यु हो जाएगी। द्रोण को लगा कि उनका रथ तूफानी समुद्र में जहाज की तरह डगमगा रहा है। घोड़े हिनहिना रहे थे। उन्हें धृष्टद्युम्न धुंधला दिखाई दे रहा था, और वह शारीरिक बनावट और कद-काठी में द्रुपद के समान लग रहा था। द्रोण को धुंध में से जैसे अस्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था, धृष्टद्युम्न के दाहिने हाथ में तलवार थी। द्रोण ने अपना सिर का वस्त्र उतारकर अपने सिर के थोड़े से बालों को उंगलियों के बीच पकड़ लिया। उनकी सांसें धीमी होती जा रही थीं।

उसकी आँखों में भयानक अंधापन छा गया। उसने दूसरी दुनिया से आती एक आवाज़ सुनी, जो निर्मम स्वर में बोली, "मैं जानता हूँ कि अब तुम अपनी मर्ज़ी से मरोगे। लेकिन मैंने कसम खाई है कि मैं तुम्हारा सिर काटकर तुम्हारे आदमियों पर फेंक दूँगा। तुमने न सिर्फ मेरे पिता का अपमान किया, बल्कि अब उन्हें मार भी डाला है।" द्रोण की आँखों ने आखिरी चीज़ जो देखी, वह उठी हुई तलवार थी...

—•✳•—

अध्याय 74

जब वह घर पहुँचा तो भोर हो चुकी थी। फिर वह सो गया। पूरा शहर शांत था, हालाँकि सूरज इतना ऊपर चढ़ चुका था कि चार आदमियों की लंबाई जितनी छाया बन रही थी और घर के बगल वाले पेड़ की शाखाओं के ऊपर तक पहुँच गया था, संजय नहीं जागा। उसके जागने का इंतज़ार करते-करते थककर उसकी पत्नी ने आखिरकार उसे खुद जगाया। उसने पूरी कोशिश की कि जब उसका मन मोर्चे पर होने वाले संभावित घटनाक्रमों की कल्पना में डूबा हुआ है, तो वह उसी दिन युद्ध के मैदान में वापस न जाए। दोपहर में उसने गर्म खाना खाया और फिर सो गया। केवल रात में ही उसे अपनी पत्नी से थोड़ी देर बात करने का समय मिला।

वह सुबह बहुत जल्दी उठा, दिन भर का भोजन पैक किया और अपने घोड़े पर तेज़ी से निकल पड़ा। सड़क पर ज़्यादा भीड़ नहीं थी और राशन, सामान और लोगों को ले जाने वाले वाहन भी बहुत कम थे। उसे तुरंत समझ आ गया कि हस्तिनावती में अब मोर्चे पर ले जाने के लिए कुछ भी नहीं बचा है। जैसा कि उम्मीद थी, वह सूर्योदय के लगभग चार घंटे बाद नदी पर पहुँचा। वह अपने घोड़े से उतरा, उसे पानी पिलाया और फिर उसे नदी के किनारे घास चरने के लिए छोड़ दिया। उसने अपने हाथ-पैर धोए और पैक किए हुए भोजन में से खाने के लिए बैठ गया। जब तक उसने खाना खत्म किया, उसने विपरीत दिशा से एक रथ आते देखा। उसने सोचा कि रथ घोड़ों को पानी पिलाने के लिए रुका है। रथ के ऊपर उसने एक व्यक्ति को हाथ-पैर बंधे हुए देखा, मानो वह चोरी करते हुए पकड़ा गया चोर हो। उसे नहीं पता था कि रथ कौन चला रहा है। बंधे हुए व्यक्ति के पास उसने वज्रधारा को पहचाना। वह उसे अच्छी तरह जानता था, क्योंकि वह भी सूत समुदाय से था।

संजय ने पूछा, "वज्रधारा, तुम इस तरफ क्यों जा रहे हो? तुम्हारे बगल में कौन है?"

वज्रधारा ने कहा, "वह चोर है। वह राजा के खजाने को लूट रहा था।"

वज्रधर की नज़र भोजन पर पड़ी। उन्होंने कहा, "ओह! संजय, आपने कितनी रोटी पैक की हैं! शायद आपने उन पर घी लगाया होगा। मुझे दो दीजिए। बस दो, कृपया। आपकी पत्नी आठ पुत्रों को जन्म दे!" वे रथ से कूदकर संजय के सामने बैठ गए। सारथी ने घोड़ों को खोल दिया और उन्हें पानी पिलाने ले गया। संजय ने वज्रधर को दो रोटी दीं। उन्होंने सोचा कि सारथी को कम से कम एक तो देनी ही चाहिए। लेकिन इससे समस्या खड़ी हो जाती क्योंकि शायद सबके लिए पर्याप्त रोटी न होती। फिर उन्हें याद आया कि उन्होंने अपने लिए सूचना एकत्र करने वाले एजेंटों के लिए अतिरिक्त रोटी पैक की थीं। इसीलिए पैकेट इतना बड़ा था। आधी रोटी खाने के बाद वज्रधर की जीभ साफ हो गई। दूसरी आधी रोटी चबाते हुए उन्होंने पूछा, "क्या आप मोर्चे पर जा रहे हैं? आप वहाँ क्या करने वाले हैं? लगता है हमारे महाराजा को हार का सामना करना पड़ रहा है।"

संजय, "क्या आपको महाराजा कर्ण की सर्वोच्च सेनापति पद के संबंध में हुई घटना के बारे में कोई जानकारी है?"

वज्रधारा ने कहा, "ऐसा लगता है जैसे कल भीम ने धृतराष्ट्र के इक्कीस पुत्रों का वध कर दिया। वे सभी हमारे समुदाय के थे। यह सच है कि खाली पेट ताड़ी नहीं पीनी चाहिए। कहा जाता है कि अर्जुन ने महाराजा कर्ण के पुत्र सुषेण का वध किया था। भगवान का शुक्र है, आपका केक खाने के बाद मैं एकदम तंदुरुस्त महसूस कर रहा हूँ। मेरा शरीर और पेट अब ठीक हैं। लगता है, इसके फलस्वरूप महाराजा कर्ण ने अर्जुन को मारने की प्रतिज्ञा कर ली है। राजा शल्य उनके सारथी हैं।" फिर हंसते हुए उन्होंने आगे कहा, "क्या आपने महाराजा कर्ण का साहस देखा? सोचिए, एक मुकुटधारी राजा, एक सच्चा क्षत्रिय राजा, हमारे महाराजा कर्ण का रथ चलाने वाला सूत बन गया है।"

संजय जिज्ञासा से व्याकुल था। उसे अपने हमउम्र और मित्र सुषेना की मृत्यु का गहरा दुःख था। संजय को लगा कि अब तक अर्जुन का अंत हो चुका होगा। तभी वज्रधर ने पूछा, "क्या आप जानते हैं कि हमारी सेना क्यों हार रही है?"

संजय ने कहा, "हमारे सेनापतियों में एकता का अभाव है। द्रोण और भीष्म..."

वज्रधारा ने बीच में ही टोकते हुए कहा, "क्या आप वेदों को जानते हैं?"

संजय ने कहा, "हाँ, कुछ पाठ पढ़े हैं। मैंने तुम्हारी जितनी पढ़ाई नहीं की है।"

वज्रधारा ने कहा, "मैं तुम्हें बताता हूँ। देखो, देवताओं के राजा इंद्र के जन्म लेते ही, माता का दूध पीने से पहले ही उन्हें मादक सोम रस चखाया गया। बड़े होकर वे एक ही बार में तीस मग सोम पी सकते थे। इसीलिए वे इतने महान कार्य कर सके। वेद कहता है, 'हे इंद्र, वह सोम जिसे पीकर तुम वृत्र और अन्यों का वध कर सकते हो, वह मादक और पुण्यमय सोम यहाँ है। इसे ग्रहण करो और आनंदित हो।' अब बताओ, संजय, क्या परमानंद के बिना कोई वीरतापूर्ण कार्य संभव है? और क्या सोम के बिना परमानंद संभव है?"

संजय, "तुम क्या कहना चाह रहे हो?"

वज्रधारा ने कहा, "अच्छा, मैं यही तो कह रहा हूँ। हमारी तरफ से तो उन्होंने पहले दो दिन ही शराब दी। उसके बाद उन्होंने देना बंद कर दिया। उनका तर्क था कि इतने सारे लोगों को शराब देना नामुमकिन है। क्या शराब के बिना डर फैलाकर युद्ध लड़ा जा सकता है? मुझे बताइए कि हमारे जवानों ने पहले दिन जैसी वीरता क्यों नहीं दिखाई?"

संजय के पास तुरंत कोई जवाब नहीं था। उसने बस इतना पूछा, "तुम मोर्चे से क्यों हट रहे हो?"

वज्रधारा ने कहा, "ठीक इसी कारण से। सोम के बिना युद्ध करने वाला कोई भी मूर्ख निश्चित रूप से हारेगा। न केवल युद्ध हारेगा, बल्कि अपना जीवन भी खो देगा। मैं अपना जीवन अनावश्यक रूप से क्यों बलिदान करूं? मैं इंद्र और सोम के श्राप का शिकार क्यों बनूं? इसलिए, मैं चला गया।"

संजय, "तुम्हें अभी यह पेय कैसे मिला?"

वज्रधारा ने कहा, "रास्ते में। ठीक से नहीं। लेकिन सड़क के किनारे, किसी ने एक ताड़ के पेड़ से एक मग बाँध रखा था, लेकिन पेड़ों के झुंड के पीछे, ताकि वह आसानी से दिखाई न दे। सूरज अभी उगा नहीं था। संयोग से मेरी नज़र उस पर पड़ी। मैंने रथ रोक दिया और उसके पास गया। फिर पेड़ पर चढ़ गया। मैंने उसे रथ में रख दिया है, पत्तों से ढक दिया है ताकि रथ के हिलने से वह टूट न जाए। मैं तुम्हें एक मग देता हूँ। मुझे एक और रोटी दो। अगर तुम मना करोगे, तो मैं पीकर जोश से भर जाऊँगा और तुमसे रोटी छीन लूँगा। क्या सोम शक्ति और साहस नहीं देता?" वह हँसा नहीं, बल्कि गंभीर लग रहा था।

संजय को भी प्यास लगी। तभी सारथी घोड़ों के साथ नदी से लौटा। संजय ने उससे परिचय किया। उसका नाम प्रवीर था और वह वृकाप्रस्थ का निवासी था। वह रथ से घड़ा लेकर आया। घड़ा गर्दन तक भरा हुआ था। एक घड़ा पीने के बाद संजय को हल्कापन महसूस हुआ। उसने रथ की ओर देखा और पूछा, "यह कौन है?" वज्रधर ने उत्तर दिया, "मैंने पहले ही कहा है कि यह एक चोर है जो राजा की संपत्ति चुराने की कोशिश कर रहा था। यह रथ और घोड़े भी उसकी चोरी की वस्तुएँ थीं। मैं इसे बंदी बना रहा हूँ। हम इसे महाराजा धृतराष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत करेंगे और फिर इसे दंडित करवाएँगे। मुझे इसे पकड़ने का इनाम मिलेगा।"

संजय ने पूछा, "वह क्या चुरा रहा था?"

वज्रधारा ने कहा, "मेरे साथ चलो। मैं तुम्हें दिखाऊंगा।"

संजय उसके साथ गया और रथ में देखा। कैदी लगभग तीस वर्ष का था और उसके हाथ-पैर बंधे हुए थे। रथ के अंदर बाणों की नोकों और रथों के पहियों के धातु के टुकड़ों का ढेर लगा था। इसके अलावा कुछ नहीं था।

वज्रधारा ने न्याय के पहलू को समझाते हुए कहा, "उसने यह सब आगे से चुराया। यह रथ और घोड़े भी आगे से ही लिए गए थे। क्या आपको नहीं लगता कि राजा की संपत्ति चुराने के लिए उसका दाहिना हाथ काट देना चाहिए?"

संजय ने कहा, "पहले इसे रिहा करो। फिर मैं अपना जवाब दूंगा।" फिर उसने खुद उस आदमी के बंधन खोल दिए। उसने उसे ठीक से बैठने में मदद की। उसने उससे पूछा, "साले, हमें सच बताओ। तुम कौन हो? तुमने चोरी क्यों की?"

वह आदमी फूट-फूटकर रोने लगा। ज़ोर-ज़ोर से रोते हुए उसने कहा, "मैं सच कह रहा हूँ। मैं अपने बच्चे की कसम खाता हूँ। अगर तुम मेरा दाहिना हाथ काट दोगे, तो मैं अपना काम कैसे जारी रखूँगा?"

संजय, "आपका पेशा क्या है?"

कैदी ने कहा, "मैं एक धातुकर्मी हूँ।"

संजय, "तुमने ये सब क्यों चुराया?"

कैदी, "नहीं। मैंने इन्हें चुराने की कोशिश नहीं की। मैं तो बस युद्ध का नजारा देखने गया था। अनगिनत सड़ते हुए मृत सैनिकों के शवों के बीच तीर गिरे पड़े थे, जिनकी धातु की नोकें बेकार पड़ी थीं। मैंने उनमें से जितने हो सके उतने इकट्ठा कर लिए। ये पट्टियाँ रथों की हैं। टूटे हुए रथों की। यह रथ भी क्षतिग्रस्त हो गया था। मैंने इसकी मरम्मत की और इसे चालू किया। फिर मैंने इसे इन टुकड़ों से भर

दिया। ये घोड़े भी युद्ध के लिए बेकार हो गए थे, क्योंकि वे लंगड़ा रहे थे। मैंने उन्हें भी ले लिया।"

संजय, "तुम इन टुकड़ों का क्या करोगे?"

धातुकर्मी ने कहा, "महाराजा जी, धातु की खुदाई और निष्कर्षण करना कितना कठिन है! मैं इन्हें पिघलाकर दरवाजों के बोल्ट, जंजीरें और हल के पुर्जे बनाऊंगा। फिर इन्हें गांवों में बेचकर अपना गुजारा करूंगा।"

संजय ने एक मिनट तक उसे घूरकर देखा और कहा, "वज्रधर, उसे जाने दो।"

वज्रधारा, "क्या आप उस चोर का पक्ष ले रहे हैं जिसने राजा की संपत्ति चुराई है?"

संजय ने कहा, "यदि तुम उसे महाराजा के सामने ले जाओगे, तो वह तुम्हें युद्ध से भागने के लिए दंडित करेगा।"

वज्रधारा का चेहरा उतर गया। संजय ने धातुकर्मी को एक केक दिया और फिर उसे ताड़ी का एक मग दिया।

—•⁕•—

अध्याय 75

पेट में असहनीय दर्द हो रहा था। उसे हल्का सा आभास हो रहा था कि उल्टी करने से उसे आराम मिलेगा। दो बार वह उल्टी करने के लिए बाहर गया, लेकिन कुछ भी पेट में अटक गया। द्वार पर पहरा दे रहे संतरी चैत्य ने चिंता से पूछा, "क्या बात है महाराजा?" जवाब न देने की इच्छा से वह अंदर चला गया और सो गया। उसे कंबल गर्म लगा। कुटिया मोर्चे से इतनी दूर थी कि उसकी आवाज़ें उसे परेशान नहीं कर रही थीं। वहाँ सन्नाटा और अंधेरा था। कुटिया के अंदर एक मोटी बाती वाला दीपक जल रहा था। महाराजा ने स्वयं उसे तीन मग पेय दिया था ताकि वह अच्छी

नींद सो सके और कल के युद्ध के लिए तैयार हो सके। महाराजा ने स्वयं एक बूंद भी नहीं पी और कहा, "कल का युद्ध तुम्हारा है। तुम इसे ले लो क्योंकि तुम्हें इसकी आवश्यकता है। आज रात चैन से सो जाओ। आज रात के युद्ध का मैं ध्यान रखूँगा।"

कर्ण ने सोचा, "महाराजा मुझसे कितनी गहरी मित्रता रखते हैं! लेकिन मुझे इतना तेज दर्द हो रहा है कि उल्टी आ रही है। लगता है ये शुद्ध ताड़ी है, सीधे पेड़ से तोड़ी गई है। इसमें किण्वन के अलावा कोई और गंध या स्वाद नहीं है।" हालांकि उसके शरीर पर गर्म कंबल था, फिर भी उसे नींद नहीं आ रही थी। जब से शत्रुओं ने जयद्रथ को मारकर रात भर युद्ध जारी रखा था, तब से उसे आंखें बंद करने के बाद भी नींद नहीं आ रही थी। वह पहले बाईं ओर, फिर दाईं ओर करवट बदलता। वह बेचैन था। जब भी वह करवट बदलता, कुटिया के अंदर बैठा कुत्ता उठ खड़ा होता, पूंछ हिलाता और रोता। उसने सोचा कि आज जानवर कुछ ज्यादा ही प्यार दिखा रहा है क्योंकि पिछले पांच दिनों से उसे उसकी कमी महसूस हो रही थी। वह अपना हाथ बढ़ाकर उसे सहलाता। फिर वह पास आकर उसके कंबल पर सो जाता। वह आसानी से सो जाता। लेकिन उसे नींद नहीं आ रही थी। उसके दिमाग में अजीब सा एहसास था कि वह कहीं तैर रहा है! उसके पेट में दर्द और बढ़ गया। उसने मन ही मन कहा, "कल की लड़ाई दिलचस्प होगी। पता नहीं यह अब तक की तरह असमानों के बीच की लड़ाई होगी या नहीं? वह मेरी असली पहचान नहीं जानता। यह भीतरी भावनाओं का संघर्ष है - एक तरफ क्रोध की अपार शक्ति, दूसरी तरफ रक्त संबंध के प्रति गहरे स्नेह से उपजी बेबसी! खैर, जब मैं इस आंतरिक संघर्ष के बारे में सोचता हूँ, तो मेरा क्रोध बढ़ जाता है। रिश्तेदारी और रक्त संबंध सब झूठ है, महज़ भ्रम है। मुझे नाजायज जन्म देना, फिर मुझे त्याग देना, और अब युद्ध रणनीति के तहत रिश्ते को फिर से ज़िंदा करना - अब मैं क्या करूँ? क्या मुझे जन्म देने का यह जैविक दावा उस व्यक्ति के दावे से बड़ा है जिसे मैंने जन्म दिया और पाला-पोसा, और जिसने अपनी माँ की मृत्यु के बाद मुझे माँ की तरह पाला-पोसा, मेरे प्यारे बेटे? उसने मेरे बेटे सुषेना को जानबूझकर, सीधे उस पर निशाना साधकर मार डाला। उसका मकसद मुझे वहीं चोट पहुँचाना था जहाँ सबसे ज़्यादा दर्द होता है! और मुझे उकसाना भी। जैसे कोई लड़का अजगर को उंगली से छेड़कर उकसाता है।" छड़ी! खैर, मैं कल दिखाऊंगा कि मैं क्या कर सकता हूँ। अचानक मेरा दिल पत्थर का हो गया है। ऐसा लगता है कि उसने

चिल्लाते हुए उसे मार डाला, “हे कर्ण के पुत्र, क्या तुम्हारे पिता ने तुम्हें मुझसे लड़ने के लिए भेजा है, क्योंकि वे खुद मुझसे भिड़ने से डरते हैं? कहा जाता है कि तुम्हारे पिता ने मेरे पुत्र अभिमन्यु को मार डाला था। उन्होंने घटोत्कच का सिर काट दिया और भाग गए। अब मैं तुम्हारा अंत करूँगा।” फिर उसके धनुष से निकला बाण सीधे सुशेषना की गर्दन में जा लगा...।”

कर्ण उस घटना को याद करके टूट गया और रोने लगा। उसने मन ही मन कहा, "पर मैं नहीं रोऊँगा। मैं स्त्री नहीं हूँ। सुषेण, तुम अनाथ नहीं हो। मैं उस तरह का पिता नहीं हूँ जो तुम्हारी आत्मा को भूखा भटकने दूँ और तुम्हारी मृत्यु का बदला न लूँ। क्या अर्जुन ने अभिमन्यु की मृत्यु का बदला लेने के लिए जयद्रथ को नहीं मारा था? नहीं, निश्चिंत रहो, तुम अनाथ नहीं हो। मैं स्वयं को तुम्हारा पिता तब तक नहीं मानूँगा जब तक कल मैं पूरी सेना से युद्ध न करूँ, उसका सिर न काट दूँ और उसका सिर उनकी सेना के बीच आसमान में न उछाल दूँ। निश्चिंत रहो, मेरे बच्चे।" जब उसने यह निर्णय स्वयं को सुनाया, तो उसका मन शांत और स्थिर हो गया। शारीरिक पीड़ा भी कम हो गई और नसें भी तनावमुक्त हो गईं। अब उसे नींद आने लगी। कर्ण ने दाईं ओर करवट लेकर सोने की कोशिश की। वह सोने ही वाला था कि उसने बाहर कुछ फुसफुसाहट सुनी। उसने सुना, "चित्रसेना और सुशर्मा? धीरे बोलो। महाराजा सो रहे हैं। चलो वहाँ जाकर बात करते हैं।" कर्ण को कदमों की आहट सुनाई दी। जहाँ वह लेटा हुआ था, वहीं से चीखते हुए बोला, "मेरे पुत्रों चित्रसेना और सुशर्मा को क्या हो गया?"

जवाब देने वाला कोई नहीं था।

कर्ण ने कहा, "चैत्य, क्या तुमने सुना नहीं? अंदर आओ और मुझे बताओ।" चिल्लाते-चिल्लाते उसका गला सूख गया। चैत्य अंदर आया और उसने दरवाजा बंद कर दिया ताकि हवा से दीपक न बुझ जाए।

चैत्य ने कहा, "महाराज, मैंने आपको इस विनाशकारी समाचार को सुनने से रोकने की पूरी कोशिश की, फिर भी उस मूर्ख दूत ने..."

कर्ण ने पूछा, "उन्हें किसने मारा?"

चैत्य ने कहा, "हे अर्जुन, तुम्हारा शत्रु है। यह स्पष्ट है कि वह जानबूझकर तुम्हारे पुत्रों को मारने के लिए चुन रहा है।"

कर्ण वहीं लेटा रहा। जो नसें थोड़ी देर पहले शांत थीं, अब एकदम लाल हो गईं। कर्ण कुछ नहीं बोला। उसे ऐसा तीव्र दर्द हो रहा था मानो उसकी आंतें मरोड़ दी

गई हों। फिर भी वह शांति और नियंत्रण की अवस्था में पहुँच रहा था। उसे एहसास हो गया था कि युद्ध का अर्थ मृत्यु है। उसने मन ही मन पूछा, "क्या महाराजा दुर्योधन और दुस्साना ने अपने पुत्रों को नहीं खोया? खैर, मैंने अभिमन्यु को नहीं मारा, हालांकि अर्जुन यही मानता है। मैं दोषी नहीं हूँ, लेकिन मैं उसे यह कैसे मनवाऊँ? मान लीजिए कि मैं उसे यह विश्वास दिला दूँ कि मैंने उसके पुत्र की हत्या नहीं की है। क्या इससे वह मेरे पुत्रों को मारने से रुक जाएगा? या वह मुझे चुनौती दे रहा है, कह रहा है, 'तुम सर्वोच्च सेनापति बन गए हो और मैं देखता हूँ कि तुम क्या कर सकते हो जब मैं तुम्हारे पुत्रों को एक-एक करके मार डालता हूँ।' ऐसा ही लगता है। अर्जुन, कल सुबह होते ही मैं तुम पर आक्रमण करूँगा। मैं तुमसे आमने-सामने की लड़ाई लड़ूँगा। हालांकि मैंने बाकी चारों को कुंती के पुत्र माना है, तुमने मेरे पुत्रों को एक-एक करके मृत्युलोक भेजकर उस स्नेह के बंधन को तोड़ दिया है। हाँ, मुझे तुम्हें एकल युद्ध के लिए चुनौती देनी ही होगी..."

वह बेचैनी और नींद न आने के कारण बिस्तर पर करवटें बदल रहा था। उसका मन कह रहा था कि यह रात उसके लिए लंबी और नींदहीन होने वाली है। चूंकि रात में भी युद्ध जारी था, इसलिए उसे उठकर अपने पुत्रों चित्रसेना और सुशर्मा के शरीरों से निकले खून के जमने से पहले ही उन्हें समाप्त करने का लालच हो रहा था। वह अचानक उठ बैठा। वह सोचने लगा कि क्या अब अपने सैनिकों को जगाना संभव है, क्योंकि वे अगले दिन शत्रु से होने वाले मुकाबले की तैयारी में आराम कर रहे थे। अगर उसने कोशिश भी की, तो क्या वे उसकी बात मानेंगे? अगर वे उठ भी गए, तो क्या वे सचमुच लड़ेंगे? यह महसूस करते हुए कि उस रात केवल कर्ण को ही नींद नहीं आई थी, उसने सोने की बहुत कोशिश की। उसका सारथी शल्य भी अच्छी नींद लेने चला गया था। उसने उसी घड़े से पानी पिया था जो कुटिया में रखा था। क्या वह उठकर उसकी बात मानेगा? तुरंत कार्रवाई करने का उसका उत्साह कम हो गया। पेट का दर्द फिर से शुरू हो गया। पित्त के अंदर फंसे होने और बाहर न निकल पाने का वही दर्द। हालांकि वह जानता था कि वह इसे उल्टी करके बाहर नहीं निकाल पाएगा, फिर भी वह झोपड़ी से बाहर निकला और दोबारा कोशिश करने के लिए बैठ गया। रात सन्नाटे में डूबी हुई थी। दूर सामने स्थित महाराजा का तम्बू भी शांत और अंधेरा था। उसे महाराजा की कही बात याद आई कि उनके पास तेल की कमी है। कर्ण अपने पुत्रों की मृत्यु की स्मृति से विमुख नहीं हो पा रहा था। उसने मन ही मन कहा, "उसने सुषेना को दिन दहाड़े मार

डाला। लेकिन उसने बाकी दोनों को रात के अंधेरे में, इसी रात मार डाला। लेकिन उसने अंधेरे में उन्हें चित्रसेन और सुशर्मा के रूप में कैसे पहचाना? क्या यह संभव नहीं था कि वे किसी गलत निशाने वाले तीर से मारे गए हों और दूत ने इसका श्रेय सेनापति को दे दिया हो? मैं ठीक से सोच नहीं पा रहा हूँ। सब कुछ बहुत उलझन भरा है।" उसे दर्द में थोड़ी कमी महसूस हुई। फिर भी जब उसने पेट से पित्त निकालने की कोशिश की, तो वह बाहर नहीं निकला। लेकिन अगर वह सोने चला गया, तो वह जानता था कि दर्द फिर से लौट आएगा। लेकिन उसके पास क्या विकल्प था? उसने सोने की कोशिश की। उसने फिर से अपनी आँखें बंद कर लीं। तेल का दीपक स्थिर जल रहा था। उसने सोचा, "शायद चैत्य ने इसमें तेल भर दिया होगा। काश मैं पलंग को संतुलित कर पाता।" लेकिन उसे पता नहीं था कि कैसे। "अर्जुन, तुम्हारी माता ने मेरी चट्टान जैसी दृढ़ता और संकल्प को पिघला दिया है। लेकिन उन्होंने तुम्हारी दृढ़ता और इच्छाओं को और मजबूत बनाने में मदद की है। अगर तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं है, तो अपने सारथी कृष्ण से पूछ लो?" वह सोच रहा था कि क्या उसे युद्ध शुरू करने से पहले ये शब्द बोलने चाहिए। एक पल के लिए उसने सोचा कि यही करना सही होगा। अगले ही पल उसे लगा कि वह पूरी तरह से टूट गया है। उसे एहसास हुआ कि पूरी कौरव सेना और स्वयं दुर्योधन की उपस्थिति में ये शब्द बोलना असंभव है। इस प्रकार यह विचार अधूरा ही रह गया। उसने चैत्य को वहीं खड़े देखा।

चैत्य ने कहा, "महाराजा, आपने हमारे सूत समुदाय की प्रतिष्ठा और सम्मान को समग्र रूप से बढ़ाया है। ऐसा पहले किसी ने नहीं किया था।"

कर्ण ने कुछ नहीं कहा, बल्कि अपने बिस्तर पर करवट बदल ली।

चैत्य ने आगे कहा, "क्षत्रियों के रथ चलाना हमारे समुदाय का सौभाग्य रहा है। ऐसा लगता है जैसे कोई ताजपोशी वाला राजा, कोई अधिवासी हो।"

सिंहासन के स्वामी, सच्चे क्षत्रिय शल्य, आपके सारथी होंगे, जो सूत के रथ को चलाएंगे! केवल एक रत्न के कारण, हमारे समुदाय की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई है।

कर्ण को गर्व महसूस हुआ। साथ ही क्षत्रियों के प्रति तिरस्कार भी। उसे याद आया कि उन्होंने उसके सेनापति बनने का विरोध किया था, यह कहते हुए कि अगर कोई सूत सेनापति बन गया तो वे अपने नगर लौट जाएंगे और युद्ध नहीं करेंगे! अगर दुर्योधन ने चतुराई और कुशलता से स्थिति को न संभाला होता, तो शायद वे चले जाते। कितनी ज़ोर से और

अहंकार से भरे बूढ़े शल्य ने चिल्लाकर कहा, “क्या अब मुझे सूत का सूत बनना पड़ेगा?” दुर्योधन ने बूढ़े शल्य के अहंकार और सामाजिक गौरव को यह कहकर शांत किया, “मामा, युद्ध में सूत ही निर्णायक भूमिका निभाता है। आप इस महत्वपूर्ण भूमिका को कमतर क्यों आंक रहे हैं?”

चैत्य ने कहा, "महाराज, कृपया सोने की कोशिश करें। कल आपका दिन बहुत व्यस्त रहेगा। आपको अपने तीनों पुत्रों की मृत्यु का बदला लेना है।"

चैत्य दरवाजा बंद करके चले गए। कर्ण को कुटिया की गर्माहट महसूस हुई। उनके मृत पुत्र और उनके जीवन की तस्वीर उनकी आँखों के सामने आ गई। उन्होंने याद किया, "बचपन में सुषेना कितना गोल-मटोल, सुविकसित और आकर्षक था! मैं और उसकी माँ बारी-बारी से उसे गोद में उठाते, कभी नीचे नहीं रखते और खूब प्यार करते। जब वह शरारती लड़का बन गया, तो एक बार मैंने उसे किसी शरारत के लिए पीटा था। और जब पिता अभी जवान ही हो, तो वह अपने पहले पुत्र को इतनी कोमलता से कैसे संभाल सकता है? मैंने उसे उतना दुलार नहीं किया जितना अपने अगले पुत्रों, चित्रसेन और सुशर्मा को किया। फिर भी वह अपने पिता से कितना गहरा लगाव रखता था! अर्जुन, कल मैं तुमसे आमने-सामने की लड़ाई लड़ूंगा। मैं तुम्हारे सूत कृष्ण की सलाह पर तुम्हारी माँ द्वारा तुम्हारे लिए किए गए सुरक्षा घेरे को तोड़ दूंगा।" उन्होंने ये शब्द लगभग दस बार दोहराए। ऐसा लगा जैसे इससे उन्हें मानसिक शांति मिल गई हो। आखिरकार, उन्हें सचमुच नींद आ गई।

उन्हें एक सपना आया। उनके तीनों पुत्र, सुषेना, चित्रसेना और सुशर्मा, सूर्य के क्षेत्र में प्रवेश कर चुके थे। वह प्रकाश और ऊष्मा से भरा एक संसार था, जो सूर्य की सुखद किरणों से जगमगा रहा था। नीचे एक चौड़ी नदी बह रही थी। नदी पर एक गोल नाव तैर रही थी। सूर्य की किरणों के संसार का एक हिस्सा एक प्यारे बच्चे में परिवर्तित हो गया था, जो आकाश से नाव में उतर रहा था। उन्हें लगा कि नदी के उफनते पानी का बल उन्हें ऊपर की ओर धकेल रहा है। तभी अचानक उनकी नींद खुल गई। उनके होंठ थूक से सने हुए थे, जिसका स्वाद कड़वा था। उन्होंने अचानक आँखें खोलीं। प्रकाश बुझ चुका था। क्या यह हवा के कारण था या तेल खत्म होने के कारण? उन्हें पता नहीं था। पेट दर्द फिर से शुरू हो गया। अब यह स्पष्ट हो गया था कि नींद लाने के लिए उन्होंने जो शराब पी थी, उसी ने उनकी नींद खराब कर दी थी। बेशक, उन्हें यह आभास भी था कि किसी भी हालत में उस

रात उन्हें नींद नहीं आएगी। चैत्य ने बचपन में सुषेना को प्यार से सहलाया था। कर्ण को याद आया कि उन्होंने अपने अन्य दो पुत्रों के साथ भी बचपन में खेला था। वह पेशाब करने बाहर गया। चैत्य गर्म कंबल के नीचे जाग रहा था। इसका मतलब था कि झोपड़ी में तेल का भंडार नहीं था। उसने सोने की कोशिश की और कुत्ते को थोड़ा किनारे कर दिया ताकि उसे सोने के लिए बेहतर जगह मिल सके। दर्द कम नहीं हुआ। सिर्फ पेट में ही नहीं, अब यह सीने, दिमाग और खोपड़ी तक फैल गया था। नींद नामुमकिन थी। अचानक उसके दिमाग में एक विचार आया। उसने सोचा, "मान लो मैं चैत्य को जगाऊँ, उसे अपने जन्म का पूरा रहस्य बता दूँ, और उससे पूरी गोपनीयता की शपथ ले लूँ! उसे बता दूँ कि मेरा जन्म कैसे हुआ। वह नहीं जो लोग सोचते हैं। कुंती ने स्वयं मुझे यह रहस्य बताया था। यहाँ जो नहीं हो रहा है वह असमानों के बीच का युद्ध है। अर्जुन को सच्चाई नहीं पता, पर मुझे पता है। कुंती उसे यह रहस्य बताने में हिचकिचा रही है। किसी कारण से। अन्यथा वह उसे बता देती। इसलिए मैं उसे नहीं बताना चाहता। वह जानबूझकर मेरे पुत्रों को मार रहा है। शायद मुझे उकसाने के लिए, या शायद इसलिए कि मैंने राजमहल में द्रौपदी का अपमान किया था, या शायद इसलिए कि मैं दुर्योधन का दाहिना हाथ हूँ। चैत्य, मुझसे शपथ लो कि तुम यह रहस्य किसी को नहीं बताओगे। मान लो मैं ऐसा कर दूँ?" उसने सोचा कि इस तरह रहस्य का पूरी तरह से खुलासा करने से उसे मन की शांति मिल जाएगी! उसने फिर सोचा, "कल के युद्ध में या तो वह मरेगा या मैं। इस असमान युद्ध में क्या वह मरेगा? चैत्य कल शाम तक किसी को भी यह रहस्य न बताए। उसके बाद..." अचानक उसके हृदय में सिहरन दौड़ गई। उसने सोचना जारी रखा, "मान लो मैं मर जाऊं। अगर मेरी मृत्यु के बाद दुर्योधन सोचे कि मैंने इसी कारण अपनी हार और मृत्यु को स्वीकार किया! मुझे अपने दिल की धड़कन बहुत तेज़ सुनाई दे रही है।" उसने सोचा कि उसे यह बात चैत्य को नहीं बतानी चाहिए। फिर वह दूसरी तरफ मुड़ा और सो गया। कुटिया में हल्की हवा चली। लेकिन झोपड़ी की छप्पर की दीवारों की दरारों से ठंडी हवा अंदर आ रही थी। उसने सोचा, 'बाहर कितनी ठंड है!' तभी उसे चैत्य की याद आई। वह सोचने लगा, 'वह बाहर बैठकर झोपड़ी की रखवाली क्यों कर रहा है?' उसका मन हुआ कि उसे अंदर जाकर सोने के लिए कह दे। लेकिन नियम यह था कि जब सर्वोच्च सेनापति सो रहा हो, तो उसकी रक्षा की जानी चाहिए। उसे याद आया कि आगे लगभग बीस-तीस सैनिक उसकी सुरक्षा के लिए पहरा दे रहे थे। कर्ण को याद आया कि

चैत्य ने एक सूत के सारथी के रूप में एक क्षत्रिय को रखकर सूत समुदाय का दर्जा बढ़ाने के लिए उसकी प्रशंसा की थी। वह सोचने लगा, 'मान लो मैं चैत्य से कह दूं कि मैं असल में सूत नहीं हूं।' वह क्या करेगा?" कर्ण ने अनुमान लगाया कि वह अपना सिर नीचे झुका लेगा। वह करवट बदलकर दूसरी तरफ मुड़ा। वह भोर के न आने पर कोस रहा था! तभी उसका दर्द लौट आया। उसने आशा की कि अगर वह उल्टी कर ले, तो शायद उसे कुछ आराम मिले। लेकिन वह ऐसा कर ही नहीं सका। उसने चैत्य की सरसराहट सुनी जब वह दरवाजे से टेक लगाकर खड़ा हुआ। दर्द की तरह यादें लौट आईं। "मेरे माता-पिता दोनों ने कभी भी मेरे जन्म का रहस्य नहीं बताया। शायद इसलिए कि उन्होंने कुंती को वचन दिया था। वे दोनों मर गए, और रहस्य उनके साथ ही दफन हो गया। शायद मुझे भी जीवन भर इसे न बताकर उनका अनुसरण करना चाहिए।" उसने कुत्ते के उठने की आवाज सुनी। उसने अपने लटकते कानों से अपने दोनों गालों को पीटा और अपना सिर हिलाया। उसने पूछा, "यह अपने सिर से क्या झाड़ रहा है?" वह जानता था कि झाड़ने के लिए कुछ भी नहीं था और ऐसा करना उसका स्वभाव ही था। जो कुछ भी वह नहीं चाहता था, उसे झाड़ने के बाद, कुत्ता उसके पास आया और लेट गया, उसका सिर गर्म कंबल पर टिका हुआ था।

—•✳•—

अध्याय 76

संजय ने वर्णन किया, "...जब उसने तुम्हारे दस पुत्रों के सिर काटकर हमारी सेना पर फेंक दिए, और मैं अब तक काटे गए सिरों की गिनती नहीं कर सकता, तब भीम अपने आदमियों के साथ दुस्साना पर टूट पड़ा। दरअसल, हमारी सेना पर सिर गिरने से क्रोधित दुस्साना, जिसकी मर्दानगी को ठेस पहुंची थी, अपने

आदमियों के साथ पहले भीम पर टूट पड़ा। उसने भीम पर चिल्लाते हुए कहा, 'हे जानवर, क्या तुझे शर्म नहीं आती मेरे उन भाइयों को मारने पर जिनका कोई साथी नहीं था और फिर भी तू श्रेष्ठता का दावा कर रहा है!' भीम उसकी ओर मुड़ा और चिल्लाया, 'मुझे याद है कि जब हम जंगल जा रहे थे, तब तूने हमें पशु कहकर कैसे नाच किया था।' तब भीम अपने आदमियों के साथ भयंकर युद्ध करने लगा। मुझे लगता है दुस्साना ने अपनी रणनीति में गलती की। हमारे आदमी भीम और उसके आदमियों को अपने बीच सिर गिरने की घटना से जोड़ने लगे थे। वे उनसे बहुत डरते थे। दुस्साना के आदमी भी अपवाद नहीं थे। वे भी भीम और उसके आदमियों को देखते ही बहुत डर जाते थे। दुस्साना के आदमियों ने उन्हें देखा, वे सब दिशाओं में भाग गए, बेचारे दुस्साना को अकेला छोड़ दिया। वह फँस गया था। वह भीम के आदमियों से घिरा हुआ था। तभी भीम स्वयं दुस्साना की ओर दौड़ा, जो असहाय और अपनी ही टुकड़ी से अलग-थलग महसूस कर रहा था। भीम उसके पास पहुँचा और अपनी तलवार से दुस्साना के दाहिने हाथ पर वार किया। दुस्साना की तलवार नीचे गिर गई। भीम दुस्साना को कमर से पकड़ने के लिए झुका, उसे उठाकर बीस बार ज़मीन पर पटका, मानो नदी के किनारे कोई धोबी कपड़े को पत्थर की पटिया पर पीट रहा हो। भीम का इरादा था कि दुस्साना दम घुटकर मर जाए। भीम के आदमी हट गए ताकि उनके सेनापति को दुस्साना के शरीर के साथ खेलने के लिए जगह मिल सके! वे अपने नेता का प्रदर्शन देखने वाले दर्शकों की तरह व्यवहार कर रहे थे! फिर भीम ने दुस्साना को नीचे उतारा और उसे पीठ के बल लिटाया। फिर वह चिल्लाया, 'हे साथी, मैंने तुम्हें फाड़ने की कसम खाई थी।' 'तुम्हारी छाती चीरकर तुम्हारा खून पीकर बदला लूँगा। अब मैं इसे पूरा कर रहा हूँ।' फिर उसने अपना दाहिना मुक्का उठाया और बवंडर की ताकत से बाएं सीने के बीचोंबीच प्रहार किया। दर्शक हड्डियों के टूटने की आवाज सुन सकते थे। जब तक भीम ने सीने की ढाल और अंतर्वस्त्र हटाकर दूसरा प्रहार किया, दुस्साना मर चुका था, उसकी सारी हरकतें थम गई थीं। खून फव्वारे की तरह बहने लगा, लाल खून झरने की तरह ऊपर उठ रहा था। भीम के सैनिक आसपास देख रहे थे। दूर से कर्ण ने यह दृश्य देखा। कहीं और व्यस्त दुर्योधन ने भी इसे देखा।

पूरी सेना ने, न केवल हमारी, बल्कि सभी ने यह देखा। मैं रथ के शीर्ष पर चढ़कर यह दृश्य देख रहा था। दुस्शासन के सीने से बहते खून को दोनों हाथों से इकट्ठा करते हुए भीम ने उसे तीन बार पिया और शायद गर्म खून के नमकीन स्वाद

के कारण उनका चेहरा अप्रसन्न लग रहा था। उनकी मूंछें, गाल, ठोड़ी और होंठ सभी लाल खून से सने हुए थे, जिससे भीम का चेहरा अकल्पनीय भय से भर गया था! सन्नाटा छा गया और दहशत फैल गई जब वह चीखे, उनका चेहरा खून से लाल हो गया था, 'आओ और उसे बचाओ, अगर तुम कर सकते हो, हे दुर्योधन! आओ और उसे मुझसे ले जाओ, कर्ण, अगर तुम्हारी हिम्मत है! आओ और उसे यहाँ से ले जाओ, शकुनि, अश्वत्थामा, कृतवर्मा, तुम सब आओ, अगर तुममें साहस है!' भीम ने दुस्शासन का सिर काटकर आकाश में नहीं उछाला ताकि वह हमारी सेना पर गिरे। शायद यह एकमात्र सिर था जिसे उन्होंने हम पर नहीं उछाला। फिर उसने तुरंत अपनी तलवार उठाई और अपने सैनिकों को इशारा किया। वे सब उसके पास दौड़े और एक टुकड़ी बना ली। वह सीधे दुर्योधन और उसके आदमियों पर हमला करने के लिए आगे बढ़ा। ऐसा लग रहा था कि वे अर्जुन को कर्ण पर हमला करने के लिए भेजना चाहते थे। दुर्योधन के वे आदमी, जिन्होंने भीम को दुस्शासन का खून पीते देखा था, डर से कांप रहे थे और भीम के खून से लथपथ चेहरे को देखकर भयभीत हो गए। वे लड़ ही नहीं पा रहे थे। वे बस चिल्ला रहे थे, 'हे भगवान, राक्षस आ गया है।' चीखते-चिल्लाते वे इधर-उधर भागने लगे, एक-दूसरे पर गिरते-पड़ते, ठोकर खाते हुए। अब उन्हें यकीन हो गया था कि भीम एक राक्षस है जिसने मनुष्य का खून पिया है। भीम के इस कृत्य और दृश्य ने उनके दिलों में जो भय पैदा किया था, वह उसके पुत्र, राक्षस घटोत्कच से दस गुना अधिक था। यहां तक कि दुर्योधन भी पूरी तरह से असहाय होकर भाग गया। मैं जो रथ के ऊपर था, मुझे अपनी जान बचाने के लिए जल्दी से नीचे कूदकर भागना पड़ा। वरना मैं यहां आपको घटनाएँ सुनाने के लिए मौजूद नहीं होती..." संजय ने नज़रें फेर लीं।

दीपक की मंद रोशनी में संजय ने अभी तक गांधारी की ओर नहीं देखा था। अपने प्रवचन के बीच में ही वह सो गई थीं। उन्हें लगा कि शायद वह बेहोश हो गई हैं, इसलिए वह उनके पास गए और उनका हाथ हिलाकर उन्हें समझाया। फिर उन्होंने उनसे पूछा, "हे महारानी, क्या आप होश में हैं?" विदुर खंभे की शरण छोड़कर उनके पास गए। धृतराष्ट्र वहाँ बिल्कुल स्थिर बैठे रहे, मानो किसी गहरे बंधे हुए बंधन में जकड़े हों। गांधारी ने तुरंत कुछ नहीं कहा। उन्होंने अपने हाथ-पैर थोड़े हिलाए। इससे बाकी लोगों को थोड़ी राहत मिली। थोड़ी देर बाद, वह भयंकर भय से चीख उठीं, "हे दुष्ट और पापी, तूने मेरे दुर्योधन की जांघ तोड़ दी!"

संजय ने कहा, "आप इस तरह क्यों चिल्ला रही हैं, देवी? मुझे नहीं पता कर्ण की मृत्यु के बाद क्या हुआ। जब मैं वहां से निकला था, मुझे पूरा यकीन है कि महाराजा दुर्योधन जीवित और स्वस्थ थे।"

वह चुप रही। जब संजय ने उसे कंधों से हिलाया, तो उसने बुदबुदाते हुए कहा, "क्या भीम को केवल यही प्रतिज्ञा पूरी करनी थी?"

—•⁕•—

अध्याय 77

कुंती भारी स्वर में बोलीं, "तुम पहचान नहीं पाए? इस धरती पर किसके इतने लंबे हाथ हैं? या इतना चौड़ा, भरा-पूरा चेहरा?" नीचे बहती नदी की ध्वनि घर की ऊपरी मंजिल के कमरे में गूंज रही थी। दीपक की रोशनी में विदुर उनकी शृंखला को निहार रहे थे। उन्हें आश्चर्य हुआ कि पहले उन्हें यह क्यों नहीं दिखा कि कर्ण का चेहरा कुंती की हूबहू छवि था। उन्हें और भी आश्चर्य हुआ कि न केवल उन्हें, बल्कि किसी और को भी यह समानता क्यों नहीं दिखी। लेकिन फिर, उन्होंने दोबारा सोचा, और महसूस किया कि जो संभव नहीं हो सकता, वह कभी वास्तविकता भी नहीं बन सकता। तब कुंती बोलीं, "माँ होते हुए भी, मैं कभी उनके जन्म संस्कार करने की स्थिति में नहीं थी। अब कम से कम मुझे उनके अंत संस्कार करने दीजिए..." वह बीच में ही रुक गईं क्योंकि अपार दुःख ने उन्हें घेर लिया। वह रोने लगीं। लेकिन उन्होंने खुद को बहने नहीं दिया और गरिमा के साथ संयमित रहीं।

विदुर पूरी रात सो नहीं सके। जब बाकी लोग, जो कुछ भी नहीं जानते थे, घर में गहरी नींद में सो रहे थे, तब कुंती और विदुर दोनों चुपचाप अपने कमरे में बैठे रहे। नीचे बहती नदी की धीमी आवाज़ गूंज रही थी। केवल दीपक, जिसमें विदुर समय-समय पर तेल डालते रहते थे, उनके साथ जल रहा था।

सुबह वे विदुर के रथ में सवार होकर निकले। उन्होंने संजय को सारथी बनाया क्योंकि वह उस सटीक स्थान को जानता था जहाँ कर्ण की मृत्यु हुई थी। शीत ऋतु का सूर्य निकलने से पहले ही वे नगर से लगभग एक घंटे की दूरी पर थे। कुंती के रहस्योद्घाटन से सबसे अधिक आश्चर्यचकित विदुर और संजय थे। युद्ध के प्रारंभ से लेकर उनकी मृत्यु तक, दोनों ने कर्ण के कार्यों और व्यवहार की अपने-अपने तरीके से व्याख्या की थी। अब वे अपने नए ज्ञान के प्रकाश में चीजों की पुनर्व्याख्या कर रहे थे। विदुर इस प्रश्न से व्याकुल थे, "क्या वास्तव में भीष्म द्वारा अपमानित किए जाने के कारण ही कर्ण दस दिनों तक युद्ध से विमुख रहा, बिना अपने धनुष को छुए?" जहाँ तक संजय की बात है, उन्हें समझ में आ गया था कि युद्ध के अंतिम चरण में महाराजा कर्ण का निशाना क्यों अचूक रहा। कुंती के पाँच पुत्रों द्वारा कुंती के एक अन्य पुत्र के वचन के बल पर छेड़े गए युद्ध के रहस्य के सामने वे दोनों अवाक रह गए! पूरे रास्ते में उन्हें लाशें, टूटे हुए रथ और युद्ध के मैदान से भागे हुए घायल सैनिक कराहते हुए दिखाई दिए।

विदुरा ने पूछा, "कुंती, तुमने इतने लंबे समय तक इस रहस्य को अपने दिल में कैसे छिपाए रखा?"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। खराब सड़क पर रथ के पहिए बुरी तरह से हिचकोले खा रहे थे। कुंती को पेट में बेचैनी महसूस हुई। उसने कहा, "तेरहवें साल हो गए जब मैं इंद्रप्रस्थ छोड़कर रथ पर सवार होकर आपके घर आई थी।" फिर वह एक तरफ मुड़ी और उल्टी कर दी। संजय ने लगाम खींची और रथ रोक दिया। उसने विदुर द्वारा दिए गए प्याले में पानी से अपना मुँह धोया। फिर उसने संजय से आगे बढ़ने को कहा। विदुर ने उसे धीरे-धीरे रथ चलाने को कहा।

लेकिन कुंती अधीर थीं। उन्होंने संजय से कहा, "कृपा करके रथ जल्दी चलाइए। मुझे डर है कि गिद्ध और कौवे उसके चेहरे को नोंचेंगे।" रथ ने अपनी पहले वाली गति पकड़ ली और पहले की तरह डगमगाने लगा। वह मन ही मन बोलीं, "हाँ, उसने जो कहा वह सच है। जिसने उनकी देखभाल की, उनकी गंदगी साफ की, उन्हें स्तनपान कराया, प्यार से उन्हें पीटा, उनके लिए उससे वरदान माँगा। लेकिन उसने उन्हें कभी सच नहीं बताया। वह कभी उसकी माँ नहीं बनी, लेकिन अंत में वह उसका पुत्र बन गया।" विदुर ने कुंती के उलझे हुए शब्दों का सार समझ लिया। फिर भी, वे संजय के लिए एक पहेली बने रहे। कुछ दूर जाने के बाद, कुंती ने

पूछा, "संजय, क्या आपने कहा था कि युद्ध के अंतिम चरण में, उसमें अर्जुन जैसी सटीक निशानेबाजी की कमी थी, और उसके बाण अनियमित रूप से गिरे?"

विदुर ने संजय के लिए कहा, "हाँ।"

संजय ने कहा, "हाँ। मैं हैरान था। मुझे आश्चर्य हुआ कि इतने प्रसिद्ध योद्धा के हाथ धनुष-बाण चलाने में ऐसे क्यों लड़खड़ा रहे थे मानो कोई देहाती उन्हें पहली बार चला रहा हो। स्थिति और भी खराब तब हुई जब उनके सारथी शल्य ने युद्ध शुरू होने से पहले उनका अपमान किया। आप जानते हैं, युद्ध के मैदान में जाने वाले अपने सैनिकों का मनोबल और साहस बढ़ाने के लिए शब्दों का प्रयोग करते हैं। महाराजा कर्ण ने भी इसी तरह शब्दों का प्रयोग किया। बाणों से लदे उनके रथ के चारों ओर उनके सैनिक खड़े थे, जो पिछली रात आराम और भोजन करने के बाद युद्ध के लिए तैयार थे। उनकी सेना का अधिकांश भाग हमारे सूत बस्ती के सैनिकों से बना था। उन्होंने कहा, 'अर्जुन, वह पिल्ला कहाँ है? जो भी मुझे उसके छिपने का पता बताएगा, मैं उसे अपने सारे आभूषण उपहार में दे दूंगा! अगर उसे यह इनाम अपर्याप्त लगे, तो मैं उसे पूरा गाँव या शहर उपहार में दे दूंगा। अगर वह संतुष्ट न हो, तो मैं सौ दुधारू गायें और दे दूंगा। अगर फिर भी संतुष्ट न हो, तो सोलह साल की चौदह सुंदर युवतियाँ दे दूंगा।'"

हे सैनिकों, कम से कम मुझे वह दिशा तो बता दो जहाँ मैं उसे पा सकूँ... क्या यह नियम नहीं है कि जब रथ पर सवार योद्धा युद्ध के नारे लगाता है, तो सारथी को उसका ज़ोर से 'जी' या 'बहादुरी' कहकर अभिवादन करना चाहिए? लेकिन बंदर शल्य ने मनोबल गिराने वाले शब्द कहे, 'कर्ण, व्यर्थ की बातों से घमंड मत करो, जैसे कोई कुत्ता बाघ की मांद का पता लगाने के लिए भौंकता है। पूरे क्षत्रिय जगत में अद्वितीय माने जाने वाले अर्जुन के धनुर्धर कौशल और सूत वंश में जन्मे और रथ चलाने के योग्य व्यक्ति के कौशल में क्या तुलना है? चिंता मत करो। बाघ अंततः कुत्ते का पीछा करके उसे मार डालेगा।' स्वाभाविक रूप से, कर्ण का चेहरा उतर गया, उसका उत्साह ठंडा पड़ गया। सूत समुदाय के इस प्रकार अपमानित होने से सेना में सूत पुरुष उग्र हो गए। उनमें से दो ने शल्य पर हमला करने तक की कोशिश की और उसका हाथ मरोड़ दिया! स्वयं महाराजा कर्ण ने ही उन्हें शांत किया और रथ से उतरने के लिए राजी किया।

कुंती ने पूछा, "क्या यह वही शल्य नहीं है जो हमारी माद्री का बड़ा भाई है?"

विदुरा ने स्पष्ट किया, "हाँ। वही व्यक्ति है। मूर्ख जिसने अपनी बहन के बेटों को दुर्योधन के जाल में फँसने के लिए त्याग दिया।"

संजय ने आगे कहा, "उसे महाराजा कर्ण का सारथी बनाना ही पहली गलती थी। युद्ध के दौरान भी उसने अच्छा सहयोग नहीं दिया। उदाहरण के लिए, वह बाण जल्दी नहीं पहुँचाता था। वह रथ को इस तरह नहीं चलाता था कि शत्रु के जाल से बचा जा सके। वह योद्धा को उन स्थानों के बारे में नहीं बताता था जहाँ आक्रमण सबसे तीव्र होता था, न ही उसे वहाँ तीर चलाने की सलाह देता था। उनके मतभेद तब चरम पर पहुँच गए जब वह रथ से उतरकर हमेशा के लिए चला गया। इस प्रकार वह बिना सारथी के रह गया, और आप जानते ही हैं कि अर्जुन का सारथी कृष्ण कितना अड़ियल है। खैर, उन्होंने अर्जुन को कर्ण की इस दुर्दशा का फायदा उठाकर तीर चलाने की सलाह दी। और उसे एक बाण दिया। उन्होंने अर्जुन को एक के बाद एक कई बाण चलाने को कहा। उन्होंने उसे निशाना भी दिखाया।"

कुंती ने दूसरों से ज़्यादा खुद से कहा, "हाँ। यह कृष्ण ही थे जिन्होंने गोलीबारी का इंतज़ाम किया था।"

रास्ते में वे एक नदी के किनारे रुककर भोजन करने लगे। कुंती ने भोजन करने से इनकार कर दिया और कहा कि जब तक उनके पुत्र का अंतिम संस्कार नहीं हो जाता, तब तक वे कुछ नहीं खा सकतीं। विदुर ने भी कुछ नहीं खाया। केवल संजय ने रोटी और शहद खाया और पानी पिया। रथ ने अपनी यात्रा फिर से शुरू कर दी। जब दोपहर हो गई और सूर्य पश्चिम की ओर ढल रहा था, तब उन्हें युद्धक्षेत्र की दुर्गंध आई। संजय ने समझाया, "हवा उस तरफ से बह रही है। वह अभी बहुत दूर है। शायद दो घंटे और लगेंगे।"

परसों कर्ण और अर्जुन के युद्ध स्थल का ही नहीं, बल्कि आसपास के पूरे क्षेत्र में किसी भी जीवित प्राणी का कोई निशान नहीं था। युद्ध स्थल प्रतिदिन बदलता रहता था, और संजय के लिए यह कल्पना करना भी असंभव था कि उस दिन युद्ध कहाँ हो रहा था। फिर भी वह कल के युद्ध स्थल का पता लगाने में सफल रहा। शव अभी तक ज़्यादा सड़े नहीं थे। लेकिन कुत्तों और सियारों की सेना पहले ही उस क्षेत्र में फैल चुकी थी। गिद्ध न केवल आकाश में छाए हुए थे, बल्कि ज़मीन पर भी बैठे हुए अन्य जानवरों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध का आनंद लेते प्रतीत हो रहे थे। लेकिन संजय को सबसे ज़्यादा आश्चर्य इस बात से हुआ कि कई कुत्ते ज़मीन पर मृत पड़े थे। कुछ गिद्ध भी ज़मीन पर मृत पड़े थे। कुछ मरने की अवस्था में थे। संजय ने

सोचा, "क्या मनुष्य का मांस विषैला हो गया है? या वे अधिक खाने से मर गए हैं?" विदुर ने भी यही सवाल पूछा। उन्होंने रथ को थोड़ा पीछे खड़ा कर दिया था। वे चलने लगे, संजय आगे, कुंती बीच में और विदुर पीछे। कुंती की नज़रें लाशों के ढेर पर घूम रही थीं, मानो वह किसी एक लाश को ढूंढ रही हो। संजय को अचानक जानवरों और पक्षियों की मौत का कारण सूझा। उन्होंने कहा, "चलते समय सावधान रहना। हर जगह तीरों की विषैली नोकें बिखरी पड़ी हैं। अगर वे हमें चुभ गईं, तो हम भी इन जानवरों और पक्षियों की तरह मर जाएंगे।" इसलिए कृपया इन पर पैर न रखें।" उन्होंने पीछे मुड़कर देखा तो कुंती नंगे पैर थीं। विदुर ने जूते पहने हुए थे। उन्होंने कुंती को वहीं रुकने को कहा। फिर वे चार कदम दाहिनी ओर गए और एक शव के जूते उठाए। उन्हें कुंती के सामने रखते हुए उन्होंने कहा, "महारानी, अपने पैर एक के बाद एक रखें ताकि मैं उन्हें ठीक से बांध सकूँ।" कुंती हिली नहीं। विदुर ने उन्हें ज़बरदस्ती कहा, "कुंती, कृपया अपने पैर फैलाएँ।" उन्होंने कहा, "शायद यही अच्छा होगा कि मैं इसी तरह मर जाऊँ। मैं शव के जूते पहनकर जीना नहीं चाहती।" तब संजय ने कहा, "ठीक है। जैसी तुम्हारी इच्छा। लेकिन मेरे निर्देशों का पालन करते हुए सावधानी से चलें।" फिर संजय आगे-आगे चलने लगे।

चार कदम चलने के बाद संजय अचानक रुक गए और विदुर से बोले, "मैं कल रात आपको एक बात बताना भूल गया था। आपको याद होगा कि इंद्रप्रस्थ के निर्माण के दौरान अर्जुन ने कई नागों को मारा था। जो नाग आपके बाणों से बच गए थे, उन्होंने बाद में अन्य नागों से संपर्क किया और नागों की एक सेना एकत्र की। उन्होंने स्वेच्छा से दुर्योधन का साथ दिया। कल महाराजा दुर्योधन ने महाराजा कर्ण के साथ इसी सेना को भेजा था। वे अपने बाणों की नोकों पर विष लगाते हैं। यह कोई जड़ी-बूटी का विष नहीं है, बल्कि नागों के मुख से निकाला गया विष है। वे पहले विष इकट्ठा करते हैं और फिर बाणों को उसमें डुबोते हैं। कल पांडव पक्ष के अनगिनत सैनिक इन बाणों से घायल होकर मारे गए। अर्जुन को भी ये बाण लगने चाहिए थे। उन्होंने अर्जुन को इसलिए नहीं मारा क्योंकि उन्हें लगा कि वह महाराजा कर्ण के लिए आरक्षित हैं। इसलिए, उन्होंने केवल उनके सैनिकों पर ही बाण चलाए। दुष्ट शल्य के अयोग्य नेतृत्व के कारण कर्ण अपने सैनिकों से अलग हो गए। विष लगे बाणों से घायल हुए सैनिकों के शवों को देखिए।"

जैसे अचानक जागृत होकर कुंती ने पूछा, "क्या ऐसा बाण अर्जुन को संयोगवश ही नहीं लगा था?"

संजय ने उसकी चिंता समझ ली। उन्होंने कहा, "अगर वह उसे लग जाता, तो वह तुरंत विष से मर जाता और गिर पड़ता। लेकिन कर्ण की मृत्यु के बाद, अर्जुन ने अपने दोनों हाथ उठाकर कहा, 'क्या वह कुत्ता मर गया जिसने हमारी पत्नी को अपमानित करने की सलाह दी थी?' विष से ग्रस्त व्यक्ति में इस तरह चिल्लाने की शक्ति कैसे हो सकती है?"

उसी समय दो कुत्ते भौंकते हुए उन पर झपटे। इस घटना से संजय को एहसास हुआ कि वे अब कितने खतरनाक स्थान पर आ गए हैं। उन्होंने चारों ओर नज़र दौड़ाई। उन्हें कोई ऐसी वस्तु नहीं मिली जिसका इस्तेमाल लाठी के रूप में किया जा सके। उन्होंने तुरंत अपनी तलवार निकाली और कुंती पर हमला कर रहे कुत्ते पर फेंक दी। तलवार कुत्ते की पीठ पर इतनी ज़ोर से लगी कि वह दो टुकड़ों में बंट गई और खून बहने लगा। कुत्ता ज़मीन पर गिर पड़ा, भौंकने के लिए खुला उसका मुँह खुला ही रह गया। दूसरा कुत्ता डरकर भाग गया।

वे आगे बढ़ते गए। मक्खियों की भिनभिनाहट से उनके कान भेद रहे थे। डरे हुए कुत्ते को भागते देख आठ और कुत्ते भी उनसे दूर भाग गए। लाल, बिना पंखों वाले, काले रंग के और बड़े आकार के गिद्ध उनकी हरकतों को देखते हुए उनकी दिशा में मंडरा रहे थे। कुंती के पेट में हलचल मच गई। उल्टी आने की आशंका से वह बैठ गई। लेकिन वह पित्त की उल्टी नहीं कर सकी। ठीक उसके सामने एक बदबूदार शव पड़ा था। उसका चेहरा उसके पास होने के कारण उसे मतली महसूस हुई, लेकिन उल्टी नहीं हुई। विदुर ने झुककर उसका दाहिना हाथ पकड़ लिया। संजय ने उस जगह का जायजा लिया। उसे यकीन था कि यही वह मैदान है जहाँ कल का युद्ध हुआ था। लेकिन मुश्किल यह पता लगाने में थी कि अर्जुन कहाँ खड़ा था, कर्ण कहाँ खड़ा था, कर्ण के सैनिक किस दिशा में गए, नागों ने किस दिशा से हमला किया। हाँ, उसने सोचा, हम नागों के शवों को देख सकते हैं। उन्होंने पंखों से सजे मुकुट पहने हुए थे, और अगर उन्हें देखा जा सकता है, तो अर्जुन वहीं होना चाहिए। लेकिन उसे याद आया कि कर्ण का रथ चकनाचूर हो गया था और रथ से वंचित उसके घोड़े भाग गए थे। उन्हें बाणों से घायल किया गया था। लेकिन उसने देखा कि दुष्ट गिद्धों के कारण सही जगह का पता लगाना मुश्किल हो रहा था। वे आकाश में इस तरह छा गए थे कि आकाश और पृथ्वी आपस में जुड़

गए थे। सभी दिशाएँ पूरी तरह से भ्रमित हो गई थीं। उसने मन ही मन कहा, "धिक्कार है, इस गिद्धों से भरे आकाश में मुझे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है।" उसे याद आया कि महाराजा कर्ण के ध्वज पर तीन बार तीर चलाए गए थे ताकि उन्हें उकसाया जा सके। संजय को इसका कोई सबूत नहीं मिला। उसे याद आया कि जब कर्ण रथ से उतरे थे तब बाण उन्हें लगा था। तब विदुर ने कहा, "संजय, कुंती यहाँ ज़्यादा देर तक खड़ी नहीं रह पाएंगी। हमें जल्दी से वह जगह दिखाओ। या चलो हम उन्हें रथ पर वापस ले चलते हैं, वे वहीं रह सकती हैं। हम दोनों शव की तलाश कर उसे रथ तक ले जा सकते हैं। तुम जानते हो कि मैं इतना बलवान नहीं हूँ कि उसे उठा सकूँ। अगर तुम शरीर का मुख्य भाग उठा लो, तो मैं तुम्हारे पैरों या हाथों को कंधे पर उठाकर तुम्हारी मदद कर सकता हूँ।" उन्हें चलना मुश्किल लग रहा था। सूरज डूबने ही वाला था। इसलिए, वह पश्चिम दिशा थी। लेकिन संजय ने पिछले दिन की घटनाओं को देखते हुए दिशाओं पर ध्यान नहीं दिया था। उसने कहा, "मामा, अब मुझे लगता है कि अगर हम दोनों वापस आकर खूब खोजबीन भी करें, तो भी महाराजा कर्ण का शव मिलना मुश्किल होगा। इन हज़ारों शवों के बीच, जो आधे सड़े हुए हैं, जिनके अंग कुत्तों, सियार और गिद्धों ने खाकर विकृत कर दिए हैं, हम उन्हें कैसे ढूँढ़ पाएँगे? और गिद्ध तो विशेष रूप से आँखें नोच लेते हैं..."

कुंती ने हताशा से फुसफुसाते हुए कहा, "उसके हाथ लंबे थे और चेहरा बहुत चौड़ा था।"

संजय, "क्या मुझे यह पता नहीं है? फिर भी..."

कुंती अचानक खड़ी हो गई। फिर उसने चारों ओर देखा। उसने पूछा, "याद करने की कोशिश करो और अनुमान लगाओ कि कर्ण का रथ किस तरफ खड़ा था।"

संजय ने कहा, "देखते हैं। मैं याद करने की कोशिश कर रहा हूँ, सोचने की कोशिश कर रहा हूँ। लेकिन मुझे सफलता नहीं मिल रही है।"

फिर वे तेज़ी से चलने लगे। शवों को रौंदते और पार करते हुए, उन्होंने उनके चेहरे और अंगों का निरीक्षण किया। जिस तरह से वह चल रही थी, उसे देखकर विदुर को डर लग रहा था कि कहीं वह गिर न जाए, या तो ठोकर खाकर या फिर उस दुर्गंधयुक्त वातावरण में ताजी हवा की कमी के कारण चक्कर आने से। संजय अपने पैरों से दूरियाँ नाप रहा था। एक दिशा में मध्य बिंदु पर पहुँचने के बाद, वह

रुकी और चारों ओर नज़र घुमाई। फिर वह टूटे हुए रथों की तलाश में आगे बढ़ गई। उसने विदुर के शब्द नहीं सुने, "कुंती, कम से कम अपने पैरों में कुछ तो पहन लो..." वह किसी भी टूटे हुए रथ के पास उस शव को नहीं ढूंढ पाई जिसकी वह पहचान करने की कोशिश कर रही थी। पराजित और थकी हुई वह एक खंभे की तरह खड़ी थी, जैसे जीवित से भी अधिक मृत। सूर्य क्षितिज के नीचे जा चुका था और अंधेरा धीरे-धीरे फैल रहा था। उस अंधेरे में, सभी शवों का रंग एक जैसा था। और उनके चेहरे भी एक जैसे दिख रहे थे। अचानक वह फूट-फूट कर रोने लगी, जैसे कोई बच्चा रोता है। विदुर को याद आया कि पिछली आधी रात को जब उसने यह खबर सुनी थी, तब से लेकर अब तक वह नहीं रोई थी। उसने उसका दाहिना हाथ कसकर पकड़ लिया। संजय ने कुंती का बायां हाथ पकड़ लिया। कुंती इतनी ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी कि उसकी छाती तेज़ी से ऊपर-नीचे होने लगी। थोड़ी देर बाद वह बैठ गई। संजय ने कहा, "चाचा जी, अंधेरा हो रहा है। हो सकता है हमें अपना रथ न मिले।" दोनों ने कुंती का एक-एक हाथ पकड़कर उसे धीरे-धीरे रथ की ओर ले गए। वह आज्ञाकारी और सहज भाव से चलती रही।

लगभग एक घंटे तक रथ चलने के बाद, उन्हें दुर्गंध काफी कम महसूस हुई। तब संजय ने एक बरगद के पेड़ के पास रथ रोक दिया। उन्होंने कहा, "मैं अब तक केवल मार्ग का अनुमान लगाकर ही यहाँ तक आया हूँ। मैं यह नहीं बता पा रहा हूँ कि हस्तिनावती किस दिशा में है। हम भोर होने के बाद अपनी यात्रा फिर से शुरू कर सकते हैं। अंधेरे में हम किसी खाई में गिर सकते हैं या घोड़ों के पैर टूट सकते हैं।"

विदुरा ने ध्यान से उसकी बात सुनी। लेकिन उसने कुछ नहीं कहा।

विदुर के दबाव के बाद कुंती ने शहद मिला हुआ मक्का खाया, लेकिन विदुर ने केवल मक्का ही खाया। संजय रोटी चबाते हुए एक विचार के वश में हो गए। जल्द ही वह विचार साकार हो गया। जब सबने पानी पी लिया, तो उन्होंने कहा, "ध्यान से सुनो। क्या तुम्हें लोगों का शोर सुनाई नहीं दे रहा?"

विदुरा ने ध्यान से सुना, लेकिन उसे कुछ भी सुनाई नहीं दिया।

संजय ने कहा, "चाचा जी, आप बूढ़े हो गए हैं। आपकी सुनने की शक्ति कमजोर हो गई है। लेकिन मैं सुन सकता हूँ। मैं घोड़े पर सवार होकर आज युद्ध में क्या हुआ है, यह पता लगाऊंगा। अगर संयोगवश मेरी मुलाकात मेरे सूचना एजेंटों से हो गई, तो मैं सारी जानकारी जुटा लूंगा।"

विदुर की जिज्ञासा जागृत हुई। कुंती चुप रहीं। संजय ने उनसे पूछा, "महारानी, क्या आप डरी हुई हैं?" अंधेरे में उन्होंने देखा कि उनके सफेद बाल "नहीं" में सिर हिला रहे हैं। तब तक घोड़े कुछ घास चर चुके थे। एक घोड़े को छोड़कर संजय दूसरे घोड़े पर सवार होकर चले गए। कुछ ही क्षणों में वे ओझल हो गए, और उन्हें पता भी नहीं चला कि वे किस दिशा में चले गए।

उसके जाने के बाद अंधेरा और भी घना हो गया। चारों ओर खाली मैदान था। किसी दिशा से दुर्गंध आ रही थी। धूल और अंधेरे ने तारों को छिपा दिया था। बरगद के पेड़ पर गिद्ध मंडरा रहे थे। कम से कम उन्हें ऐसा ही महसूस हुआ। पंखों की कभी-कभार फड़फड़ाहट से उनकी उपस्थिति की पुष्टि हो रही थी।

विदुरा, "कुंती, क्या तुम डरी हुई हो?"

कुंती, "मुझे क्यों होना चाहिए?"

विदुरा ने कहा, "अंधेरा हो गया है। आस-पास लाशें पड़ी हैं, और ऊपर पेड़ पर गिद्ध बैठे हैं।"

उसने कोई जवाब नहीं दिया, लेकिन थोड़ी देर रुकने के बाद उसने गहरी जम्हाई ली।

विदुर ने कहा, "कल रात भर तुम्हें नींद नहीं आई। हम सारा दिन सफर करते रहे हैं। तुम थक गई होगी। कृपया रथ में थोड़ी देर सो जाओ। मैं जागता रहूंगा।" उसने सुझाव मान लिया और कंबल ओढ़कर सो गई। उसे जल्दी ही नींद आ गई। विदुर भी बैठे-बैठे ऊंघने लगा। उस अधूरी नींद में वह लहरों के एक समूह के खिलाफ तैर रहा था, जिनका महत्व उसे समझ नहीं आ रहा था।

कुंती अचानक जाग उठी और बैठ गई। विदुर ने दोनों हाथों से अपना सिर हिलाया। कुंती ने कहा, "देखो, मान लो कि हम उस युद्धक्षेत्र में सभी मृतकों का सामूहिक दाह संस्कार करते हैं, तो क्या हम यह सुनिश्चित नहीं कर रहे होंगे कि उसे भी मृत्यु संस्कार का लाभ मिले?"

विदुर को यह एक असंभव प्रस्ताव लगा। हज़ारों शवों को उठाकर एक ढेर में इकट्ठा करने वाले सेवक कहाँ थे? इतने सारे शवों को जलाने के लिए आवश्यक लकड़ी कहाँ से मिलेगी? जब दोनों पक्ष दिन-रात लगातार युद्ध में उलझे हुए थे, सैनिक मर रहे थे और सैनिकों की कमी हो रही थी, तब शवों को जलाने में किसे रुचि होगी? जब वह स्वयं से ऐसे प्रश्न पूछ रहे थे, कुंती सो गईं। परन्तु विदुर मन ही मन इस विषय पर विचार करते रहे, "दोनों पक्षों के मृतकों का अंतिम संस्कार

करना विजेताओं का दायित्व है, चाहे विजेता कोई भी हो। परन्तु यह एक अव्यावहारिक नियम है। केवल इस युद्ध स्थल की ही बात नहीं है। ऐसे सैकड़ों स्थल हो सकते हैं। उनमें से अधिकतर के केवल कंकाल ही बचे हों...” उन्हें नींद आने लगी और वे सो गए। वे रथ में कुंती के चरणों के पास लेट गए और अपने आप को एक कंबल से ढक लिया।

कुंती ने कहा, "अब मुझे उतनी चिंता नहीं है जितनी कर्ण के समय थी। इसलिए नहीं कि मेरे दूसरे पुत्र उसके हाथों मारे जाएँगे। नहीं। बल्कि इसलिए कि मेरे अपने पुत्र मेरे ही एक पुत्र से लड़ेंगे। अब युद्ध में मेरी रुचि समाप्त हो गई है!"

विदुर ने पूछा, "क्या आपका मतलब यह है कि दुर्योधन जीते या धर्म, आपको इससे कोई फर्क नहीं पड़ता?"

"नहीं, दुर्योधन अब नहीं जीत सकता। मेरा मतलब था..." वह बीच में ही रुक गई।

कुंती ने इससे ज्यादा कुछ नहीं कहा।

विदुरा उसे लगातार घूरता रहा। फिर उसने कहा, "डरो मत। हालांकि मैं योद्धा नहीं हूँ, लेकिन जरूरत पड़ने पर मैं गिद्धों, कुत्तों और सियार को भगा सकता हूँ। अंधेरे का डर पूरी तरह से काल्पनिक और मानसिक है। काश हम अपने साथ मशालें लाना भूल गए होते।"

कुंती ने कहा, "हिडिम्बा के जंगल में एक वर्ष बिताने के बाद, मेरे मन से रात का भय मिट गया था। कल से मुझे ऐसा लग रहा है कि मृत्यु का भय भी समाप्त हो गया है।"

विदुर चुप रहे। चारों ओर सन्नाटा पसरा हुआ था, बस डालियों से टकराती हवा की आवाज़ सुनाई दे रही थी। वे दोनों रथ के अंदर ऐसे बैठे थे मानो ज़मीन से बंधे दो रस्सियाँ हों। नीचे, जुते हुए घोड़ों में से एक लेटा हुआ था। उसने अपने पैर फैला रखे थे। विदुर ने सोचा कि अगर वे बातें करते रहे तो अँधेरे का एहसास कम हो जाएगा। लेकिन उन्हें तुरंत बात करने के लिए कुछ नहीं मिला। काफी देर की चुप्पी के बाद कुंती बोलीं, "आपने मुझे घटोत्कच के वीर कर्मों और उसके रक्तपात के बारे में बताया। मुझे लगता है कि मैं पापी हूँ।"

विदुरा, "आप ऐसा क्यों सोचते हैं?"

कुंती ने कहा, “भीम अपने राक्षस बालक से बहुत आसक्त थे। मुझे डर था कि अगर यह आसक्ति बढ़ती रही, तो वे राक्षस भूमि से ही आसक्त हो जाएँगे। मुझे डर

था कि इससे हमारा आर्यों के सच्चे जीवन-मार्ग पर लौटना बाधित हो जाएगा। इसीलिए मैं भीम को उनकी राक्षस पत्नी और पुत्र से अलग करने और उन्हें अपने साथ ले जाने पर अड़ी रही। बालक इतना विशाल था कि अगर कोई उसे गोद में लेता, तो वह इतना भारी था कि साँस फूल जाती थी। हमने उसका पालन-पोषण नहीं किया, उसकी रक्षा नहीं की। हम बस उसे इस संसार में लाए और त्याग दिया। अब उस बालक ने अपने पिता को वही जीवन लौटा दिया है जो उन्होंने उसे दिया था, और अपने पिता के बोए हुए रक्त की एक बूँद के बदले में ढेरों रक्त बहाया है। इस अभागी कुंती ने उस बालक को एक पुरुष बनते हुए कभी नहीं देखा।" उनका गला भर आया। लेकिन उन्होंने रोने से खुद को रोका, मानो वे रात की शांति भंग नहीं करना चाहती थीं। विदुर ने खुलकर साँस ली। वृक्ष में अब कोई आवाज़ नहीं थी। सब कुछ स्थिर और शांत था, हालांकि दुर्गंध अभी भी बनी हुई थी। कुंती स्वयं बिल्कुल चुप थीं। काफी देर बाद, जब चुप्पी भारी लगने लगी, तो उन्होंने साफ आवाज में कहा, "कर्ण के साथ भी ऐसा ही हुआ। जन्म के तुरंत बाद, मैंने उसे दान कर दिया। मैं डरी नहीं थी। उन्होंने मुझे डराया और ऐसा करने के लिए मजबूर किया। शायद नौ महीने तक मेरे गर्भ में पलते हुए उसका भाग्य यही लिखा था कि उसे मुझसे थोड़ा खून लेना पड़े! उसने कभी प्रार्थना करके कुछ नहीं पाया। अब उसने घड़ा भर खून बहाया और मुझे वह जीवन लौटा दिया जो मैंने उसे दिया था। विदुर, मुझे शर्म आती है कि मैंने उससे आत्म-बलिदान करने को कहा। यह याद करके मेरा शरीर कांप उठता है।" उनकी आवाज अब इतनी हल्की हो गई थी कि हवा में तैर रही थी, और ऐसा लग रहा था जैसे वह विदुर से ज्यादा खुद से बात कर रही हों। फिर सन्नाटा छा गया। विदुर उनके सामने बैठे उनके सफेद बालों को निहार रहे थे। कुछ देर रुककर उन्होंने कहा, "सबसे अजीब बात यह है कि मेरे पोते घटोत्कच को मेरे ही पुत्र कर्ण ने उसका सिर काटकर मार डाला।" अपने मन की बात स्पष्ट रूप से व्यक्त करने के लिए सही शब्दों को चुनने में काफी मशक्कत के बाद उन्होंने कहा, "मुझे कुछ भी ठीक से समझ नहीं आ रहा है। मेरे पुत्र निस्संदेह युद्ध जीतेंगे। मेरी देवताओं से यही प्रार्थना है कि वे जीतें। फिर भी, मैं स्वयं को पूरी तरह से पराजित मानती हूँ। मैं उनकी विजय में भागीदार नहीं हो सकती।"

सूर्योदय के कुछ समय बाद भी संजय का कोई अता-पता नहीं था। वे स्वयं नहीं जा सकते थे क्योंकि उनके साथ केवल एक ही घोड़ा था। वह घोड़ा भी प्यासा प्रतीत हो रहा था। विदुर को समझ नहीं आ रहा था कि पानी की तलाश में वे किस दिशा

में जाएँ। उन्होंने घड़े में रखे थोड़े से पानी से अपना चेहरा धोया। कुंती आकाश में मंडराते गिद्धों को देखती रही। विदुर की नज़र किसी एक चीज़ पर नहीं टिकी थी, बल्कि वे इधर-उधर भटक रहे थे। कुछ देर बाद संजय लौट आया। घोड़ा धीरे-धीरे चल रहा था। उसके चेहरे पर बाणों या चोटों के निशान थे। उसके हाथों में इतना दर्द था कि वे आसानी से हिल नहीं पा रहे थे। उसके पैर इतने लंगड़ा रहे थे कि चलना मुश्किल था। धूल से सने चेहरे पर रोने के कारण उसकी आँखें लाल हो गई थीं। वह पास आकर ज़मीन पर बैठ गया और बोला, "लगता है कर्ण की मृत्यु के बाद दुर्योधन ने शल्य को सर्वोच्च सेनापति बना दिया। कल के युद्ध में धर्मराज ने शल्य को मार डाला। सहदेव ने शकुनी का वध कर दिया। पांडवों ने बचे हुए सैनिकों और घोड़ों को आसानी से नष्ट कर दिया। दुर्योधन भाग गया है और अभी तक उसका पता नहीं चला है। शायद वह मर गया हो और उसका शव शवों के ढेर में खो गया हो। या शायद वह अपनी जान बचाने के लिए कहीं छिप गया हो। कोई निश्चित रूप से नहीं जानता। पांडव हर दिशा में, हर जगह उसकी तलाश कर रहे हैं। पांडवों के पास भी अब शायद कुछ सौ सैनिक, लगभग चालीस घोड़े और पंद्रह रथ ही बचे हों। पांडवों के लिए यह एक भारी कीमत पर मिली जीत है।"

विदुर ने पूछा, "इसका मतलब है कि युद्ध समाप्त हो गया है। तुम पूरी रात कहाँ थे? तुम्हारे चेहरे और शरीर पर ये घाव कैसे हैं?" संजय ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने अपना सिर नीचे झुका लिया और ज़मीन को घूरने लगा। विदुर ने पूछा, "क्या तुमने दुर्योधन के लिए युद्ध किया? अगर किया भी है, तो मुझे गुस्सा नहीं आएगा। आखिर तुमने उसका चावल खाया है। और उसके पिता ने तुम्हें इनामों से नवाज़ा है। सच बताओ।"

संजय अपना सिर झुकाए बैठा रहा। सच्चाई उसे भीतर से झकझोर रही थी। विदुर ने उससे आग्रह किया, "सच बोलो, संजय। यह महारानी तुम्हारी गांधारी जैसी नहीं है।" यह आश्वासन मिलने पर कि कोई विरोध नहीं होगा, संजय भावुक होकर बोला, "मुझे मेरे गुनाहों की सज़ा मिल चुकी है। बस इतना ही।"

विदुरा, "क्या हुआ?"

संजय, "तुम्हें याद होगा कि मैं कल रात यहाँ से चला गया था। मेरा एक उद्देश्य युद्ध के बारे में जानकारी जुटाना था। मैं पांडवों को यह संदेश देने के लिए इतना उत्सुक था कि कर्ण उनका बड़ा भाई था। यह इच्छा इतनी प्रबल थी कि मैं सचमुच तुम दोनों को छोड़कर यहाँ से भाग गया, सिर्फ यही करने के लिए।"

कुंती का चेहरा पीला पड़ गया और उसने पूछा, "क्या तुमने उन्हें बताया?"

संजय ने कहा, "मैं कैसे कर सकता था? मैं उनसे कैसे और कहाँ मिल सकता था? मैं उनके शिविर में गया। पहरेदारों ने मुझे रोककर पूछा कि मैं कौन हूँ। मैंने उन्हें बताया कि मैं धर्मराज से मिलना चाहता हूँ। वे मुझसे बार-बार पूछते रहे कि मैं कौन हूँ। लेकिन मैंने उन्हें बताया कि मुझे एक महत्वपूर्ण सूचना देनी है। उन्होंने पहले यह जानने पर जोर दिया कि मेरे पास क्या सूचना है। मैंने तर्क दिया कि यह इतनी महत्वपूर्ण है कि इसे किसी सेनापति से नीचे के व्यक्ति को नहीं दिया जा सकता। तब वे चिल्लाए कि मैं दुश्मन का जासूस हूँ और मेरी गिरफ्तारी का आदेश दिया। फिर उन्होंने मुझे रस्सियों से बाँध दिया। इतना ही नहीं। देखो, उन्होंने मुझे बाँस के डंडे से बेरहमी से पीटा। फिर वे चाहते थे कि मैं सच बोलूँ। मार सहन न कर पाने के कारण मैंने उन्हें सच बता दिया कि महाराजा कर्ण महारानी कुंती के पहले पुत्र थे, जो उनके विवाह से पहले पैदा हुए थे, और मुझे यह रहस्य पता चल गया था। तब उन्हें मेरी बात पर संदेह हुआ और उन्होंने मेरा मजाक उड़ाते हुए कहा कि मैं कविता लिख रहा हूँ। वे मुझ पर चिल्लाए, "हमारी महारानी कुंती के बारे में तुम क्या सोचते हो?" 'तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई उसका अपमान करने की?' फिर उन्होंने मुझ पर दोबारा वार करने शुरू कर दिए। खैर, शुक्र है कि उन्होंने मुझे मारा नहीं। मैं अस्पष्ट रूप से कुछ बुदबुदाने लगा। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि मैं पागल हूँ, और फिर, पूरी रात मुझे रस्सियों से बांधे रखने के बाद, भोर होते ही मुझे छोड़ दिया। फिर लंगड़ाते हुए मैं अपने घोड़े तक पहुँचा... "संजय की लाल आँखों से फिर से आँसू बहने लगे।

संजय के शांत होने के बाद, विदुर ने पूछा, "इतने वर्षों तक कुंती ने उस रहस्य को अपने हृदय में छिपाए रखा। कर्ण स्वयं उस रहस्य को छिपाए हुए ही मर गया। आपको केवल उस स्थान का पता लगाने के लिए हमारे साथ आने को कहा गया था। अन्यथा मैं अपने पुत्र को रथ चलाने के लिए कहता। आपने अपनी सीमा से बाहर जाकर ऐसा क्यों किया?"

संजय ने कहा, "हाँ, यहाँ वापस आते समय मैं इस बारे में सोच रहा था। शायद यह समाचार रिपोर्टर और सूचना संग्राहक के रूप में मेरे पेशेवर करियर का ही एक परिणाम है। यह परिणामों की परवाह किए बिना समाचार प्राप्त करने का घिनौना प्रयास है। शायद मुझमें पांडवों को सबसे पहले समाचार देने और उसका श्रेय खुद लेने की आम रिपोर्टर वाली महत्वाकांक्षा का ही असर था।"

संजय फिर से सिर झुकाकर बैठ गया। कुछ देर बाद उसने कहा, "मैंने अब इस रिपोर्टिंग का काम छोड़ने का निश्चय कर लिया है। वैसे भी धृतराष्ट्र को जल्द ही खबर मिल जाएगी कि पांडव वीर दुर्योधन को उसी तरह घेर रहे हैं जैसे शिकारी किसी छिपी हुई लोमड़ी को घेर लेते हैं। मुझे यह खबर देने की कोई आवश्यकता नहीं है।" फिर अपने अपराध का प्रायश्चित कर लेने का अहसास करते हुए उसने अपना सिर उठाया और विदुर की ओर देखा।

लेकिन विदुर ने मानो उसे फिर से उलझाने के इरादे से कहा, "संजय, बालक, लगता है कल की भीषण पिटाई ने तुम्हारी अंतरात्मा को जगा दिया है। इस अवसर का लाभ उठाकर, स्थिति के एक अन्य पहलू पर विचार करो। तुम्हें याद होगा कि जिस पहले दिन तुमने धृतराष्ट्र के संवाददाता के रूप में काम शुरू किया था, मैंने तुम्हें केवल सच बोलने की सलाह दी थी, मीठी-मीठी खबरें न देने की। अब जब तुम्हें यकीन है कि धृतराष्ट्र के पुत्रों की हार निश्चित है, तो तुम जानबूझकर अपनी रिपोर्ट में कड़वाहट का पुट डाल रहे हो। अभी कुछ देर पहले ही तुमने दुर्योधन की तुलना छुपी हुई लोमड़ी से की थी। धृतराष्ट्र का जिक्र करते समय तुमने महाराजा की उपाधि का प्रयोग भी नहीं किया। एक सच्चा संवाददाता अपनी रिपोर्टिंग की लय में इस तरह के तीखे बदलाव नहीं दिखाता। क्या तुम सहमत नहीं हो?"

संजय को फिर से शर्मिंदगी महसूस होने लगी। इसके साथ ही, वह क्रोध और असमंजस में पड़ गया। वह इस बात से परेशान था कि विदुर ने कुंती को अपने घर में शरण दी थी, और अब जब उनके पुत्र सिंहासन पर बैठने वाले थे, तब वह धृतराष्ट्र को उचित सम्मान देने की मांग कर रहा था। क्या करें, यह न जानते हुए उसने अपना सिर झुका लिया।

विदुर ने लगाम पकड़ी और रथ चलाना शुरू किया। संजय अपने हाथों को स्वतंत्र रूप से हिला नहीं पा रहे थे, इसलिए उन्हें कुंती के पास बैठकर ही संतोष करना पड़ा और विदुर को मार्ग बताना पड़ा। प्यासे घोड़े रथ को टेढ़े-मेढ़े तरीके से ले जा रहे थे। घोड़ों को नियंत्रित करने के प्रयास में विदुर की सांसें फूलने लगीं। एक घंटे की यात्रा के बाद, संजय को याद आया कि बाईं ओर एक नदी है। तब वे रुके, घोड़ों को पानी पिलाया और अपने लिए एक बर्तन में पीने का पानी भर लिया। संजय भुट्टे को चबाने लगे। कुंती ने भुट्टे को पानी में भिगोया और फिर उसमें शहद मिलाया। उन्होंने थोड़ा सा विदुर को दिया और थोड़ा सा स्वयं खाया। इसके आगे का मार्ग इतना स्पष्ट था कि किसी मार्गदर्शन की आवश्यकता नहीं थी। पहले के

वाहनों के पहियों द्वारा बने निशानों के कारण मार्ग स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था। घोड़े तेजी से और उत्साह से दौड़ रहे थे क्योंकि यह घर वापसी की यात्रा थी! संजय जहां बैठे थे वहीं ऊंघने लगे थे। कुंती ने थोड़ा हिलकर उन्हें आराम से लेट जाने को कहा। जब उसने ज़ोर दिया, तो उसने बिना किसी झिझक के ऐसा किया। लेकिन रथ के हिलने से उसकी पीठ में दर्द होने लगा, इसलिए वह तुरंत उठ बैठा।

लगभग एक घंटे बाद, जब सूरज सिर के ठीक ऊपर था, तो उन्हें हस्तिनावती की ओर जाते हुए एक बड़ा समूह दिखाई दिया। यह समूह केवल महिलाओं का था। उन्होंने अपने पैरों तक पूरे कपड़े पहने हुए थे और अपने सिर को भी कपड़े से ढका हुआ था। विदुर ने अनुमान लगाया कि वे क्षत्रिय महिलाएं होंगी, क्योंकि दासियों ने अपने घुटनों और बाहों को नहीं ढका था। कुछ बूढ़ी दासियां छोटे बच्चों को गोद में लिए हुए थीं। विदुर ने उनकी संख्या सौ से अधिक गिनी। लेकिन फिर उन्होंने गिनती बंद कर दी क्योंकि उन्होंने पेड़ के पीछे से तीन-चार के समूहों में कुछ और महिलाओं को निकलते देखा। घोड़ों की आवाज सुनकर वे वापस लौट आए। जी हां, विदुर सिर ढके लंबी महिला को दुर्योधन की पत्नी भानुमति के रूप में पहचान पाए। उनके पीछे दुस्साना की विधवा शोक में डूबी हुई थी... विदुर को पहचानकर वे रुक गए। विदुर ने पहले योद्धाओं के वेश में, धनुष-बाण लिए और कमर से तलवार लटकती हुई एक व्यक्ति को नहीं देखा था। कुछ देर बाद उन्होंने उसे युयुत्सु के रूप में पहचाना। वह इस बात से हैरान था क्योंकि युयुत्सु युद्ध में पांडवों की तरफ था।

युयुत्सु ने उदास होकर पूछा, "चाचा जी, आप कहाँ चले गए थे?"

विदुरा, "तुम यहाँ कैसे आए?"

युयुत्सु ने कहा, "कल शल्य की मृत्यु के बाद दुर्योधन की पूरी सेना नष्ट हो गई। हमें खबर मिली कि कल उन्हें मोर्चे पर लड़ने के लिए पहरेदारों को भी बुलाना पड़ा। मुझे इन महिलाओं की मदद करने की तीव्र इच्छा हुई क्योंकि मुझे डर था कि हमारे सैनिक या अन्य देशों से आए उनके समर्थकों की सेना के सैनिक शिविर में घुसकर हमारे राजपरिवार की महिलाओं को पकड़ सकते हैं और उन पर अपना क्रोध या शारीरिक वासनाओं को पूरा कर सकते हैं। मैं धर्मराज के पास दौड़ा और उन्हें सारी बात बताई। धर्मराज ने कहा, 'युयुत्सु, मैंने इस बारे में कभी सोचा ही नहीं था। वैसे भी तुम इन महिलाओं को जानते हो, और मैं तुम्हें इन सभी को हस्तिनावती तक सुरक्षित पहुँचाने का दायित्व सौंपता हूँ...' और इसीलिए मैं यहाँ हूँ, इन

महिलाओं को जल्दी से राजधानी वापस ले जा रहा हूँ। लेकिन शिविर में कोई रथ उपलब्ध नहीं थे। न घोड़े। ऐसा लगता है कि उन्होंने पिछले दो दिनों से शिविर में खाना नहीं पकाया था। सारा राशन खत्म हो गया था। यहाँ तक कि रसोइये भी भाग गए थे। इसलिए कल शाम, जब मौसम ठंडा था, हम रवाना हुए।" उन्होंने रात एक पेड़ के नीचे बिताई। जब वे सो रहे थे, मैं अपने धनुष और बाण लेकर पहरा देता रहा।

विदुर रथ से उतरकर दुर्योधन की पत्नी के सामने खड़े हो गए। उन्होंने अपना झुका हुआ सिर नहीं उठाया, मानो अपनी दयनीय स्थिति को प्रकट करने से हिचकिचा रही हों। विदुर ने बाकी लोगों को पहचानने की कोशिश की - वहाँ दुर्योधन की बहन दुस्साले थी, उसके पीछे दुर्योधन की बहू थी, और इस कोने में दुस्साना की बहू थी। वे सबके सामने चुप रहे, कुछ भी कहने में असमर्थ।

सोने के मुकुट और अन्य आभूषणों से सजी रानी जैसी भानुमति ने पूछा, "विदुरा, तुम्हें युद्ध में किसी भी पक्ष का साथ नहीं देना चाहिए था। तुम इस रास्ते पर कैसे हो? क्या तुम शत्रु के साथ थे?"

विदुरा ने कहा, "नहीं। मैं तो बस युद्धक्षेत्र देखने गया था।"

भानुमती ने पूछा, "रथ पर बैठी यह महिला कौन है? मुझे बताया गया है कि आपकी पत्नी इतनी बीमार हैं कि बिस्तर से उठ भी नहीं सकतीं और रथ में यात्रा भी नहीं कर सकतीं। वह विधवा प्रतीत होती हैं।"

विदुर, "क्या आपका मतलब उस महिला से है?" विदुर कुंती की पहचान उजागर करने से हिचकिचा रहे थे। लेकिन वे जानते थे कि अंततः उन्हें बताना ही पड़ेगा क्योंकि महारानी इस बारे में पूछ लेंगी।

विदुरा ने कहा, "वह पिछले साढ़े तेरह वर्षों से मेरे घर में हमारे साथ रह रही है। आपको उससे मिलने का कोई अवसर नहीं मिला था।"

भानुमती स्तब्ध रह गई। उसे राजसूय अनुष्ठान के दौरान कुंती को देखने की याद आ गई। उसे याद आया कि तब वह एक रानी माँ जैसी लग रही थी। लेकिन अब वह एक तपस्वी की तरह दिख रही थी, जिसने खुरदरी साड़ी पहनी हुई थी। भानुमती ने अपना सिर नीचे झुका लिया।

कुंती ने कहा, “रथ में छह-सात और लोग बैठ सकते हैं। जो बहुत थके हुए हैं, वे बैठ जाएं।”

उनमें से किसी ने भी अपना सिर नहीं उठाया। वे चुप रहे। कुंती ने फिर से निमंत्रण दोहराया, "आओ, भानुमती। आओ, दुस्साले। तुम्हारा नाम क्या है, जो उसके पास खड़ी हो? कृपया आओ।"

दुस्साले ने अपनी आत्मसम्मान की रक्षा करते हुए कहा, "नहीं। हम पैदल ही अपने नगर पहुँचेंगे।" विदुर को पूरा विश्वास था कि वे उनके साथ नहीं आएंगे। उन्हें लगा कि वे जितना अधिक समय बिताएंगे, स्थिति उतनी ही शर्मनाक होती जाएगी। केवल इतना कहकर, "हम नगर में बाद में मिलेंगे," उन्होंने रथ को आगे बढ़ा दिया।

—•✳•—

अध्याय 78

"महाराजा कर्ण की मृत्यु हो गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि जब सारथी रहित रथ के पहिए फंस गए, तो कर्ण उन्हें ठीक करने के लिए नीचे उतरा: इस अवसर का लाभ उठाते हुए अर्जुन ने बाण चलाकर उसे मार डाला। इसके बाद हमारी सेना पूरी तरह से अस्त-व्यस्त हो गई।"

जब सेवक ने खबर दी तो शल्य लगभग बेहोश हो गया। उसे बहुत बुरा लगा क्योंकि कर्ण का रथ छोड़कर मैदान छोड़े हुए उसे लगभग डेढ़ घंटा हो चुका था। उसने सोचा, "वह तो मर ही गया। उस घमंडी सूत ने मेरे सामने बेशर्मी से कहा कि मद्रा देश की स्त्रियाँ चरित्रहीन होती हैं।" उसके मरने से उसे कुछ तसल्ली मिली। फिर भी उसका अंतरात्मा उसे कचोटने लगा। उसने सोचा, "निःसंदेह, यह ठीक नहीं है कि एक सारथी युद्ध के बीच में रथ छोड़ दे। हाँ, मैं दोषी हूँ। लेकिन क्या दुर्योधन भी दोषी नहीं है जिसने एक पूर्ण मुकुटधारी क्षत्रिय को सूत का सारथी बनाया? और दुर्योधन ने कितनी चतुराई और मीठी बातों से मुझे इसके लिए राजी

किया! वह शब्दों और तर्कों का जाल बुनकर कैसे यकीन दिलाता है कि कौआ सफेद होता है! उसने रास्ते में सबसे पहले मेरा अभिवादन किया। तब से उसने इस दर्रे तक पहुँचने के लिए सारी योजनाएँ बनाईं।" कुटिया में चूल्हे की गर्माहट में बैठा शल्य दुर्योधन द्वारा किए गए अपने दुर्व्यवहार पर गहरा पश्चाताप कर रहा था। सर्दी अभी शुरू ही हुई थी। युद्ध में व्यस्त रहते हुए उसे ठंड की परवाह ही नहीं थी। लेकिन जैसे ही वह कुटिया में लौटता और सूरज डूब जाता, ठंड चुभने लगती। शल्य को लगा कि कुटिया के अंदर की ठंड का मतलब है कि सूरज डूब चुका है। वह मन ही मन दोहराता रहा कि कर्ण के रथ को छोड़कर उसने पाप किया है। फिर वह आग के सामने अपने पैर सेंकने लगा। वह मन ही मन सोच रहा था, "यह घिनौना युद्ध, पता नहीं कब खत्म होगा। मुझे घर पर आराम से रहना चाहिए था। मैंने सुझाव भी दिया था, लेकिन मेरे बेटे रुक्मा ने मेरी बात नहीं मानी। ये लड़के, वज्र और अजय भी ऐसे ही हैं। शायद मृत्यु उन्हें भीतर से उकसा रही थी। उसी ने उन्हें इस युद्ध में शामिल होने के लिए उकसाया जिसका उनके अपने राज्य से कोई संबंध नहीं था। क्या यह कुरुभूमि हमारी मद्रा से भी अधिक ठंडी है? यह एक भयानक भूमि है। यहाँ कोई आनंद नहीं है, केवल नीरसता और ऊब है।" उसके पैर रथ के नीचे बहुत गर्म हो गए, और उसने जल्दी से उन्हें हटा लिया। "हाँ, मैंने बहुत बड़ी गलती की। और केवल कर्ण ही उस हत्यारे अर्जुन को मार सकता था जिसने मेरे दोनों पुत्रों का वध किया था। काश मैंने उसे गाली न दी होती और रथ में उसकी मदद की होती... उसे प्रोत्साहित करते हुए कहा होता, "शाबाश! महान योद्धा, ये बाण लो और चलाओ," तो कर्ण अर्जुन से बदला ले लेता। लेकिन मेरे पुत्रों के हत्यारे का खून बहाने और क्षत्रिय बदला लेने की शक्ति मुझमें कहाँ से आई? क्या उसे नहीं पता था कि वे शल्य वंश से थे? अगर अर्जुन ने अनजाने में भी उन्हें मारा, तो क्या मुझे अपने पिता का कर्तव्य नहीं निभाना चाहिए? खैर, मैं मूर्ख था। और यह आग भी कोई खास काम की नहीं है। जल्दी ही थकान हो जाती है।"

फिर वह आग से दूर हटकर झोपड़ी की छप्पर वाली दीवार के पास बैठ गया। "ठीक है, चलो घर जाकर अपने बेटे रुक्मा को डांटता हूँ, 'अरे मूर्ख, तेरी राजनीति लानत हो। तूने हमें किसी के लिए लड़ने भेजा, मेरे दो बेटों और इतने सारे सैनिकों की बलि दिलवाई।' उसे अपनी पीठ में खुजली महसूस हुई। "कितने दिन हो गए जब मैंने स्नान किया था?" उसने अपने बाएं हाथ से अपनी पीठ खुजलाई। त्वचा तक पहुँचने के लिए उसे अपनी उंगली कवच के अंदर डालनी पड़ी। "हमारी

हिरण्यवती इसमें माहिर है। कितनी कुशलता से वह खुजलाती थी! वह पूछती, 'दादाजी, क्या यहाँ है?' फिर मैं उसे बताता, 'नहीं, थोड़ा ऊपर, थोड़ा और, बेटा, थोड़ा दाईं ओर।' वह कितनी कुशलता से जगह ढूंढ लेती थी! वह अपने नाखूनों से कैसे खुजलाती थी! बिना किसी तीखेपन के! फिर वह अपनी उंगलियों को उस जगह पर धीरे से फेरती थी। उसकी उंगलियों में जादू था!" उसने मन ही मन कहा, "उसे देखे हुए चार महीने हो गए हैं। अब वह कैसी दिखती होगी! उसने कितने और मासिक धर्म चक्र बर्बाद किए होंगे।" "अच्छा, जैसे ही मैं लौटूं, सबसे पहले मुझे उस मूर्ख रुक्मा को कोड़े मारने चाहिए। कम से कम चार जोरदार कोड़े। उसकी पत्नी भी किसी काम की नहीं है। वह तो बस उसके इशारों पर नाचती है..." तभी एक सेवक आया और बोला, "महाराज, शत्रु पक्ष ने कर्ण को अपमानित करने और उसके रथ को छोड़ने के आपके कार्य पर 'वाह!' कहकर तालियां बजाईं!" शल्य ने सोचा, "वे तालियां क्यों नहीं बजाएंगे? शायद अर्जुन को पता नहीं था कि वे मेरे पुत्र हैं। आर्यावर्त के सबसे बड़े धनुर्धर को मारने का यश पाने की आशा में वे ही उस पर टूट पड़े और सबसे पहले उस पर तीर चलाया।" किसी के युद्ध को लेकर वे इतने उत्साहित क्यों हैं...?" उसने अपने दाँतविहीन जबड़ों से जम्हाई ली। उसने देखा कि चारों ओर अँधेरा छा गया था। नौकर से दीपक जलाने के लिए कहने का कोई फायदा नहीं था क्योंकि पिछले चार दिनों से शिविर में अलग-अलग झोपड़ियों के लिए तेल की आपूर्ति नहीं हुई थी। उसने खुद से पूछा, "यह युद्ध इतने लंबे समय से किस देश में चल रहा है?" फिर उसने अपने नौकर को बुलाया और कहा, "नीपा, आग बुझ सकती है। लकड़ी के दो टुकड़े डाल दो। नहीं तो मच्छर और दूसरे कीड़े आ जाएँगे।" टूटे हुए रथ के पहियों से लकड़ी ले आओ।" उसने एक बार फिर जम्हाई ली और बार-बार आने वाली जम्हाइयों को कोसने लगा। उसे याद आया कि कल रात उसे बिल्कुल नींद नहीं आई थी। तभी रथ के आने की आवाज़ सुनकर उसे फिर जम्हाई आई। उसने नारा सुना, "महाराजा दुर्योधन की जय हो!" वहाँ वह खड़ा था, कीमती पत्थरों से जड़ा कुरु मुकुट, जगमगाता हार, बाजूबंद और कलाईबंद पहने हुए। उसने भी कई दिनों से स्नान नहीं किया था और उसके पसीने से बदबू आ रही थी। वह शल्य के सामने चटाई पर बैठ गया। कुटिया में जलती आग की लालिमा उसकी पलकों में झलक रही थी। आग की रोशनी उसकी आँखों में चुभ रही थी, इसलिए उससे बचने के लिए उसने अपनी नज़रें नीचे कर लीं।

दुर्योधन, “मामा, मैं यहाँ दोषारोपण करने नहीं आया हूँ। आप जानते हैं कि कर्ण मेरा कितना करीबी मित्र था। अब मुझे लगता है कि हम इस कठोर सत्य से बच नहीं सकते कि कर्ण की मृत्यु, अर्जुन के जीवित रहने और आज हमारी पराजय के लिए आपको ही जिम्मेदार होना पड़ेगा।”

वृद्ध शल्य पूरी तरह से व्याकुल थे। उन पर डाली गई इतनी भारी ज़िम्मेदारी के बोझ तले वे टूट चुके थे। उनके कानों में सन्नाटा पसरा हुआ था। बाहर घोड़ों की हिनहिनाहट, उनके खुरों की आवाज़ और सारथियों की आवाज़ का उन पर शारीरिक प्रभाव पड़ रहा था, भले ही उन्हें इसका सचेत अनुभव न हो। कुछ देर बाद, वे आवाज़ें भी बंद हो गईं। सन्नाटे का सन्नाटा दुर्योधन के शब्दों से टूटा। उन्होंने कहा, "मैं जानता हूँ कि अब युद्ध की विपत्तियों के लिए किसी को दोष देने का कोई लाभ नहीं है। आपने अर्जुन को मारकर अपने पुत्रों की मृत्यु का बदला लेने की प्रतिज्ञा की है। आज के युद्ध में नाग सेना की आधी सेना बच गई है। हमारे पास अपनी सेना है। यदि आप कल हमारे सर्वोच्च सेनापति बनने के लिए सहमत हो जाते हैं और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने में सफल होते हैं, तो आपके पुत्र स्वर्ग जाएंगे।" दुर्योधन के पहले के आरोप से शल्य का मन जो क्षीण हो गया था, अब पुनर्जीवित हो उठा। उनकी आँखें सीधी और केंद्रित हो गईं। दुर्योधन ने आगे कहा, "तुम कर्ण को सूत कहकर उसका उपहास कर सकते हो। जैसा कि तुम जानते हो, मैंने यह सर्वोच्च पद पहले दादा भीष्म और द्रोणाचार्य को सौंपा था। अब मैं तुम्हें हमारा सर्वोच्च सेनापति नियुक्त करता हूँ।"

शल्य ने गर्दन उठाकर दुर्योधन की ओर देखा। वह उसके मन या भावों को समझ नहीं पा रहा था। उसे केवल अग्नि की रोशनी में उसके मुकुट की चमक दिखाई दे रही थी। परन्तु शल्य को अपने भीतर कुछ निश्चित अहसास हुआ। उसकी गर्दन की नसें तन गईं और गला भर आया। वह इसे समझ नहीं पा रहा था। दुर्योधन ने आगे कहा, “कल की युद्ध रणनीति और अन्य परिचालन संबंधी विवरण हम बाद में तय करेंगे। मैं अभी सीधे जाकर अपने सैनिकों और नागों का मनोबल और जोश बढ़ाऊंगा, जो इस समय दुर्बल हैं, और फिर कृपाचार्य, अश्वत्थामा, कृतवर्मा और अन्य सेनापतियों को घोषणा करूंगा कि आप अब हमारे सर्वोच्च सेनापति हैं। यदि आप चाहें, तो अब विश्राम कर सकते हैं। मैं सर्वोच्च सेनापति की औपचारिक तलवार और एक पुरोहित के साथ यहां आऊंगा ताकि आपको औपचारिक रूप से सर्वोच्च सेनापति बनाया जा सके। क्या यह ठीक है?” शल्य उस क्षण अपने भावों

को नहीं समझ पा रहा था, और बिना गर्दन हिलाए चुपचाप बैठा रहा, "हाँ" कहे बिना। शल्य की प्रतिक्रिया को भांपते हुए दुर्योधन व्यंग्यात्मक मुस्कान के साथ चला गया। शल्य ने रथ के विदा होने की आवाज सुनकर सेवक अंदर आया और बोला, "महाराज, यह हमारे मद्रा देश के लिए बहुत बड़ा सम्मान है। कृपया इसे अस्वीकार न करें।" शल्य भी उसकी बात समझ गए। वे मन ही मन प्रसन्न हुए, "हमने महान कुरु राज्य के सर्वोच्च सेनापति का पद जीत लिया है। यह पद स्वयं पूज्य भीष्म जैसे प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा संभाला गया था।" खुशी से उनके मुंह में पानी आ गया!

राजसी रसोई से सेवक लौटकर आया और बोला, "महाराज, खाना पकाने का सारा सामान खत्म हो गया है। लगता है चूल्हा आज दोपहर से जलाया ही नहीं गया है। टूटे-फूटे रथों की वजह से सिर्फ़ लकड़ियाँ ही बहुतायत में उपलब्ध हैं। रसोइए ने मुँह बनाते हुए मुझे यही बताया।" शल्य को भूख लगी थी, पर उसे तृप्त करने का कोई उपाय नहीं था। सेवक ने अपना गद्दा बिछाया।

दो दिन पहले ही शल्य ने अपने पुत्रों को खोया था, इसलिए मृत्यु के कारण अपवित्रता से ग्रस्त होकर वे दैनिक अग्नि अनुष्ठान नहीं कर सके। साथ ही, अनुष्ठान के लिए घी भी नहीं था। पलंग पर लेटे शल्य को तीव्र भूख लगी। उन्हें वह दिन याद आया जब वे अपनी सेना के साथ सबसे पहले हस्तिनावती में प्रवेश किया था और दुर्योधन ने रास्ते में भी उनका भव्य स्वागत किया था। यह जानकर कि केवल दावत की याद से उनका पेट नहीं भरेगा, वे एक करवट बदल कर सोने की कोशिश करने लगे। उनके मन में यह निराशाजनक विचार था कि जब तक यह युद्ध समाप्त नहीं हो जाता, किसी को कुछ खाने को नहीं मिलेगा! बेशक, युद्ध में मारे गए घोड़ों के टुकड़े काटकर खाए जा सकते थे। लेकिन शल्य जानते थे कि वे इतने बूढ़े हो चुके हैं कि कच्चा मांस पचा नहीं पाएंगे। इससे पेट खराब हो सकता है या इससे भी बुरा, अगर उन्हें विषैले तीरों से मारा गया हो, तो उनका मांस विषैला होगा। अब बहुत कम घोड़े बचे थे। हालांकि उन्हें जम्हाई आ रही थी, लेकिन उनकी नींद उड़ गई थी। या फिर भीष्म की तरह बिना भोजन-पानी के ही मृत्यु हो जाएगी। जब उसने सोचा कि वह पूज्य भीष्म के स्थान पर आसीन हो रहा है, तो उसके दांतविहीन मुंह पर एक मुस्कान खिल उठी। लेकिन उसे याद आया कि उम्र के बावजूद भीष्म के दांत मजबूत थे। वह इन विचारों में इतना मग्न हो गया था कि अपनी भूख भूल गया था। कुछ मिनटों के लिए वह सभी विचारों से मुक्त हो गया था, उसका मन खाली था और वह आधी नींद में था। उसके बाद वह अचानक उठा

और एक समस्या और एक विरोधाभास से जूझने लगा, या यूं कहें कि एक ही मुद्दे ने प्रश्न और विरोधाभास दोनों का रूप ले लिया था। उन्होंने अपने मन में प्रश्न किया, “प्राचीन आर्य धर्म के ज्ञाता भीष्म ने पांडवों का विरोध करके दुर्योधन का पक्ष क्यों लिया? उन्होंने यह क्यों कहा कि धर्म इस पक्ष में है? महासेनापति का पद ग्रहण करके दुर्योधन का साथ देते हुए उन्होंने दस दिनों में कौन से महान क्षत्रिय कार्य किए? उन्होंने केवल दुर्योधन की सेना को आधा कर दिया। फिर वे अचानक एकांतवास में चले गए, भोजन-पानी के बिना रहे, कड़ाके की ठंड में अपने शरीर को खुला छोड़ दिया और प्राण त्याग दिए। विभिन्न लोग उनके इस कार्य के पीछे अलग-अलग कारण बताते हैं। कुछ कहते हैं कि उनका मन पांडवों के साथ था जबकि उनका प्रेम दुर्योधन के प्रति था। वहीं कुछ अन्य लोग उनके इस कार्य को भोजन कराने वाले के प्रति कर्तव्य और धर्म के प्रति कर्तव्य के बीच संघर्ष के रूप में देखते हैं। या हो सकता है कि वे भीष्म की तुलना में बड़े पैमाने के युद्ध की प्रकृति को बेहतर समझते हों?” शल्य के मन में एक बात स्पष्ट थी। राजधानी से युद्ध के लिए निकलते समय भीष्म के प्रति उनके मन में जो उच्च विचार थे, वे अब नहीं रहे थे। उसने सोचा, "दूर स्थित पर्वत हमेशा ही आकर्षक और रोमांटिक होता है।" अब जब उसने भीष्म के स्थान पर होने के बारे में सोचा, तो उसे वह उत्साह नहीं रहा। जब उसने दूसरी ओर देखा, तो उसे रथों, घोड़ों और मनुष्यों की अस्पष्ट आवाज़ें सुनाई दीं, जो दूर से आ रही थीं। इन आवाज़ों से संकेत मिला कि रात अभी ज़्यादा नहीं गुज़री थी। उसने सोचा कि अभी पूरी तरह से रात भी नहीं हुई है, और तभी पेट की भूख ने उसे फिर से सचेत कर दिया।

उस समय शल्य को ऐसा लगा मानो कोई किसी की तलाश में वहाँ आया हो। उसने एक आवाज़ सुनी, "मद्रा राजा शल्य का तम्बू कहाँ है?" आवाज़ जानी-पहचानी सी लगी। जी हाँ, उसने उसे अपने देशवासी होमादत्ता की आवाज़ के रूप में पहचान लिया। नीपा ने भी आवाज़ पहचान ली।

नीपा अंदर आई, आग को फूँका और उसमें कुछ और लकड़ियाँ डाल दीं। लालिमा भरी रोशनी में, पुजारी होमादत्ता का चेहरा उदास लग रहा था। वह थका हुआ लग रहा था, शायद लंबी यात्रा के कारण, और उसकी दाढ़ी, बाल और कपड़े धूल से सने हुए थे। साल्या उठकर बोली, "होमादत्ता, क्या राजधानी और राज्य में सब लोग सुरक्षित हैं?"

पहले पुजारी ने साल्या को आशीर्वाद दिया और फिर उसके पास बैठकर कहा, "अच्छा, मैं तुम्हें इसके बारे में बताने आया हूँ। रास्ते में मुझे बहुत कष्ट हुआ। घोड़ों के खुर घायल हो गए और मेरी पीठ पर भी चोट लगी। कोई बात नहीं। मुझे तुम्हारी झोपड़ी ढूंढने में बहुत परेशानी हुई। हजारों गिद्ध मेरे सिर के ऊपर मंडरा रहे थे, और चारों ओर अनगिनत कुत्ते, सियार और भेड़िये थे, और भयानक दुर्गंध थी..."

साल्या, "ठीक है। लेकिन घर से क्या खबर है?"

पुजारी ने कहा, "आप अपनी सेना के साथ यहाँ आए हुए काफी समय हो गया है। तीन महीने या चार? और त्रिगर्त भी लगभग इतने ही समय से यहाँ हैं। ऐसा लगता है कि हमारे उत्तर में स्थित नाग ऐसे अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे। लगभग दस दिन पहले, उन्होंने त्रिगर्त और उसके पश्चिम में स्थित राज्यों पर आक्रमण किया। उन्होंने अब उन पर विजय प्राप्त कर ली है, और इसी बीच त्रिगर्त के शासक सुशर्णमा युद्ध में यहीं शहीद हो गए।"

साल्या बेहद चिंतित होकर बोली, "हमारे राज्य का क्या होगा?"

होमदाता ने कहा, "यह अभी भी हमारे अधिकार में है, और महाराजा रुक्मरथ इसे सुरक्षित रखने के लिए हर संभव उपाय कर रहे हैं। आप जानते हैं कि हमारी लगभग तीन-चौथाई सेना इस युद्ध में लगी हुई थी। आपके और दोनों राजकुमारों के साथ सेना यहाँ आई थी। उन्होंने मुझे आपको यह सूचित करने के लिए कहा है कि आपको सेना के साथ यथाशीघ्र वापस लौटना होगा।"

साल्या ने पूछा, "अब वापस लाने के लिए क्या बचा है?"

होमादत्ता ने कहा, "बेशक, हमारी सेना और दोनों राजकुमार, वज्र और अजय।"

साल्या, "तुमने खुद ही कुछ देर पहले अपने सिर के ऊपर मंडराते हजारों गिद्धों और आसपास मौजूद कुत्तों, सियार और भेड़ियों के बारे में बात की थी।"

पुजारी चुप रहे। शल्य भी चुपचाप बैठे रहे, मन ही मन घर की स्थिति की कल्पना करते हुए। उन्होंने सोचा कि अगर सेना के एक चौथाई हिस्से को समझदारी से पीछे न छोड़ा गया होता, तो मद्रा राज्य नागों के हाथों नष्ट हो जाता। उन्होंने सोचा कि नागों को हमारे यहाँ होने की पूरी जानकारी ज़रूर मिल गई होगी। उन्हें अर्जुन द्वारा नागों पर किए गए विनाश की याद आई, जब उन्होंने नागों को उनके वन-शत्रुओं से बाहर निकालकर जंगली जानवरों की तरह मार गिराया था। उन्होंने सोचा, "हमारे यहाँ भी उत्तर दिशा में घना जंगल है।" तभी अनायास ही

उनके मुँह से निकला, "क्या शहर में बाकी लोग ठीक हैं? दो दिन पहले ही अजय और वज्र की मृत्यु हुई है। यह खबर अभी तक मद्रा नहीं पहुँची है।"

होमादत्ता ने कहा, "महाराजा जी, बाकी सब ठीक-ठाक हैं। लेकिन एक ऐसी घटना घटी है जिसने हमारे मद्रा राज्य और उसके पूरे क्षत्रिय समुदाय को कलंकित कर दिया है। इसके फलस्वरूप, रुक्मरथराज ने भोजन-पानी त्याग दिया है और वे व्याकुल हैं। क्यों न मैं सीधे-सीधे सच बता दूं? नागों ने हमारी राजकुमारी हिरण्यवती का अपहरण कर लिया है।"

बूढ़े साल्या का चेहरा सदमे से सिकुड़ गया, और उसने कहा, "क्या इसका मतलब यह है कि उन्होंने हमारे महल और शहर पर कब्जा कर लिया है?"

होमादत्ता ने कहा, "नहीं। वे कभी हमारे राज्य के पास नहीं आए।"

साल्या ने कहा, "तो क्या यह लड़की कहीं अकेले बाहर गई थी? महिलाएं बिना सुरक्षा और अंगरक्षकों के बाहर क्यों जाएं...?"

होमादत्ता ने कहा, "नहीं, ऐसा कुछ नहीं हुआ। अब मैं आपको सच बताता हूँ। आप जानते हैं कि सुंदर नागा पुरुष, पत्तों से बने रंग-बिरंगे मुकुट पहने, सिर और बाजू पर मालाएँ ओढ़े और शरीर पर चटख रंग लगाए, कभी-कभी हमारी राजधानी में नृत्य करने और हमारे लोगों का मनोरंजन करने आते थे, और बदले में हमारे स्वादिष्ट व्यंजन लेकर जाते थे। एक नागा युवक लगभग हर दिन महल में आता था। वह महल के पिछवाड़े में पहुँचता, बाँस बजाता, नृत्य करता और सबको प्रसन्न करता था। वह हर दिन उसे बड़ी-बड़ी और उत्सुक आँखों से देखती थी। एक दिन वह गायब हो गई। सुबह तक वह कहीं नहीं मिली। कितनी खोजबीन हो सकती है? हमने पूरे दिन जंगल में, नदी किनारे और आस-पास के गाँवों में उसकी तलाश की। उसका कोई सुराग नहीं मिला।"

साल्या ने पूछा, "लेकिन आपको कैसे पता चला कि उसका अपहरण नागों ने किया था?" उसकी जिज्ञासा अब गुस्से में बदल गई थी।

होमादत्ता लिखते हैं, "उसके जाने के दूसरे दिन, एक नागी महिला भविष्यवक्ता का वेश धारण करके महल में आई। महल के ठीक सामने खड़ी होकर उसने घोषणा की, 'आपकी राजकुमारी नागी युवक के साथ भाग गई है, उससे शादी कर ली है और जंगल में सुखपूर्वक जीवन व्यतीत कर रही है...'।"

शल्य ने पूछा, "क्या तुमने उसे गिरफ्तार नहीं किया?" बूढ़े व्यक्ति के भीतर बढ़ता क्रोध अब इस इच्छा में तब्दील हो रहा था कि वह अर्जुन को ले जाकर उनके

जंगलों को जलाने का आदेश दे और आग से भागते हुए लोगों पर तीर चलाए। उसकी कल्पना में, भयंकर लपटें सभी हरी-भरी चीजों को जला रही थीं और आर्य सैनिक धनुष-बाण लिए चारों ओर घात लगाए बैठे थे, ताकि जो लोग जल न जाएं उन्हें तीर से मार दिया जाए।

होमादत्ता ने कहा, "मैंने राजा रुक्मरथ को सलाह दी, नागों ने जानबूझकर हमें उकसाने के लिए इस स्त्री को भेजा है। अगर हम उसे गिरफ्तार कर लेते हैं, तो उन्हें हम पर आक्रमण करने का बहाना मिल जाएगा। वे पहले ही आसपास के इलाकों पर आक्रमण कर चुके हैं।" राजा मेरी बात से सहमत हो गए। मैं खुद उस स्त्री के पास गया और कहा, "तुम्हारी भविष्यवाणी तो बस दिखावा और बहाना है। मुझे ले चलो और मुझे वह जोड़ा दिखाओ जो सुखी जीवन जी रहा है। मैं तुम्हें एक गाड़ी भर गेहूं का आटा, घी से भरे दो चमड़े के थैले और एक सोने का हार भेंट करूंगा।" उसने कहा कि वह अगले दिन मुझे अपना विचार बताएगी और चली गई। अगले दिन वह हिम्मत करके मेरे घर आई। उसने कहा, "अगर तुम आज रात मेरे साथ चलोगे, तो मैं तुम्हें वहाँ ले जाकर दिखाऊंगी। लेकिन तुम्हें अकेले आना होगा।" मैं थोड़ा डर गया था क्योंकि मुझे अकेला पाकर वे मुझे मार सकते थे। मैंने महाराजा से सलाह ली। उन्होंने मुझे उसके साथ जाने के लिए मना लिया। खैर, उस रात मैं उस स्त्री के साथ चला गया। चारों ओर घना अंधेरा था। शहर की सीमा से बाहर निकलते ही उसने कपड़े की एक सफेद पट्टी ली और उसे मेरी आँखों पर कसकर बांध दिया ताकि मैं मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। फिर वह मुझे गोल-गोल घुमाती रही और कई जटिल चालें चलीं ताकि मुझे दिशा और स्थान का कोई अंदाजा न रहे। आधी रात तक, मुझे लगा, हम एक जंगल में थे। वहाँ से मुझे पुरुषों की आवाजें सुनाई देने लगीं और मुझे लगा कि अब चार आदमी हमारे साथ हैं। हम भोर तक चलते रहे। दिन निकलने के बाद, मैं सो गया। उन्होंने मुझे खाना खिलाया और सोने के लिए चटाई दी। सच कहूँ तो, मुझे यह स्वीकार करना होगा कि उन्होंने मेरी बहुत अच्छी देखभाल की। लेकिन उन्होंने मेरी आँखों पर बंधी पट्टी कभी नहीं खोली। मुझे डर था कि अगर मैंने इसे खुद खोल दिया तो वे मुझे मार डालेंगे। इस प्रकार, तीन रातों की अनजान जंगलों, अनजान दिशाओं और अनजान दूरी की यात्रा के बाद, उन्होंने मेरी आँखों से पट्टी हटा दी। मेरे सामने बाँस की झोपड़ियों का एक समूह दिखाई दिया। सब कुछ बाँस का बना था—बाँस के बर्तन, बाँस के चबूतरे और बाँस की चटाइयाँ! यह एक साफ-सुथरी जगह थी। यह वही नाग युवक

था जो महल के पीछे दरवाजे के पास बाँस बजाता और नाचता था। उसके साथ हमारी हिरण्यवती थी। वह एक सामान्य नाग स्त्री में बदल गई थी, बस एक उसके शरीर पर चमकीले रंगों से रंगा हुआ कपड़ा लिपटा हुआ था और पूरे शरीर पर रंग-बिरंगी मालाएँ थीं। वह बहुत सुंदर लग रही थी। वह मेरी ओर आई और आदरपूर्वक झुक गई। उसने मुझसे आशीर्वाद देने का अनुरोध किया। उसने आपसे भी ऐसा ही करने का आग्रह किया। अपने हमेशा के विनोदी अंदाज में उसने मुझसे कहा, "पुजारी जी, कृपया आर्य विवाह में प्रयुक्त कुछ रस्मों के शब्द बोलिए।" उसके चेहरे पर मुझे कोई उदासी नहीं दिखी। वह उतनी ही आनंदित थी जितनी कि उसके शरीर पर सजे रंग-बिरंगे फूल।

साल्या, "बस बहुत हो गया। वो बेशर्मी से उस आदमी के साथ भाग गई। अब हमें पूरे जंगल में आग लगा देनी चाहिए, उसे भी। क्या तुम्हें पता है वो जंगल कहाँ है जहाँ वो रहते हैं?" बूढ़ा आदमी गुस्से से बड़बड़ा रहा था।

होमादत्ता ने कहा, "वापसी की यात्रा में भी, जब तक हम अपने शहर नहीं पहुँच गए, मेरी आँखों पर पट्टी बाँधी गई थी। पूरी यात्रा रातों में ही गुज़री। महाराजा, आँखों पर पट्टी बाँधने से दिशा और स्थान का ज्ञान पूरी तरह से समाप्त हो जाता है। पहले की तरह, मुझे चलने की अनुमति देने से पहले एक ही स्थान पर तीस चक्कर लगाने के लिए कहा गया। शहर पहुँचने के बाद, मेरी आँखों से पट्टी हटाने से पहले मुझे फिर से लगभग तीस चक्कर लगाने के लिए कहा गया। फिर वह बुढ़िया चली गई।"

साल्या, "क्या तुमने उस बदकिस्मत लड़की से कोई निजी बातचीत की?"

होमादत्ता ने बताया, "मैं उनसे कभी अकेले नहीं मिल पाया। उनके पति हमेशा उनके साथ रहते थे। वहाँ चार औरतें भी थीं। कुल मिलाकर, मैंने वहाँ सिर्फ़ एक घंटा बिताया। उस समय में शहद का पकवान खाना और भोजन करना भी शामिल था। लेकिन जाने से पहले उन्होंने मेरे कानों में फुसफुसाते हुए कहा, 'मैं देखूँगी कि मेरे पति के लोग मेरी जन्मभूमि पर आक्रमण न करें। कृपया उन्हें घर पर बता देना कि उन्हें उकसाएँ नहीं...'।"

शल्य का मन अर्जुन की छवि से भर गया था। उसने सोचा, "क्या अद्भुत धनुर्विद्या है! क्या ज़बरदस्त गति है! क्या अचूक निशाना है! आज के युद्ध में भी, जंगल से आए बर्बर नाग, जो कर्ण का समर्थन करने के लिए बांस के बिगुल बजाते हुए आए थे, अर्जुन के बाणों की वर्षा से चकनाचूर और भयभीत हो गए! और अर्जुन

के सैनिक कितने उत्साहित और उच्च मनोबल वाले थे। उनके बाण कितनी तेज़ी से चल रहे थे। वे भी नागों की तरह विषयुक्त बाणों का प्रयोग कर रहे थे।" तभी उस बूढ़े को अपने असली शत्रु का एहसास हुआ। उसने मन ही मन कहा, "नाग हम पर विजय प्राप्त करने का प्रयास अवश्य करेंगे। अर्जुन समस्त नाग समुदाय का शत्रु है। नाग दुर्योधन के पक्ष में हैं, और हमारे शत्रु दुर्योधन के साथ हैं। मैं कितना मूर्ख था! घोर मूर्ख! मुझे अभी पांडव शिविर की ओर चलना चाहिए।" होमदत्त ने यह कहकर उसके विचारों को बाधित किया, "मुझे बहुत भूख लगी है।"

साल्या ने मानो ये शब्द सुने ही नहीं। उसने होमादत्ता से विनम्रतापूर्वक पूछा, "जब तुम घर से निकले थे, तो क्या तुमने अपने लिए कुछ खाने का सामान नहीं लिया था? शायद कुछ अनाज या कुछ और?"

होमादत्ता ने उत्तर दिया, "मैंने राशन से भरा एक थैला लिया था। रास्ते में उसका एक चौथाई भी खर्च नहीं हुआ। जब मैं मोर्चे से लगभग दो दिन की दूरी पर था, तो मुझे सैनिक मिले। वे मोर्चे से भागकर अपने देश लौट रहे थे। उनमें से लगभग चार ने मुझे रोका और मुझसे विनती की, 'कृपा करके अपने थैले में जो कुछ है, वह हमें दे दीजिए। ऐसा करने से आपको धर्म का लाभ मिलेगा।' इससे पहले कि मैं कुछ कह पाता, वे मुझ पर टूट पड़े और मेरा थैला छीन लिया। मैं चिल्लाया और चीखा, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। तभी बारह सैनिकों का एक और समूह, मेरी आवाज सुनकर, उन चारों पर हमला करने के लिए दौड़ा। मैं खुश हुआ क्योंकि मुझे लगा कि वे मेरा थैला मुझे लौटा देंगे। लेकिन उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया। उन्होंने उन चारों से थैला छीना और तेजी से भाग गए। इससे पहले कि पहले चार सैनिक मेरे चिल्लाने पर मुझ पर हमला करते, मैं अपने घोड़े को तेजी से दौड़ाकर वहां से निकल गया। मैंने पिछले दो दिनों से कुछ नहीं खाया है।"

नौकर अंदर आया और आग में दो और छोटी लकड़ियाँ डाल दीं। शल्य इस सवाल से जूझ रहा था, "मेरा असली दुश्मन कौन है? मुझे किससे बदला लेना चाहिए?" पुजारी ने आगे कहा, "महाराजा, रास्ते में पूछताछ करने पर मुझे इस युद्ध की वर्तमान स्थिति का पता चला। लेकिन मुझे हमारे दोनों राजकुमारों की मृत्यु के बारे में जानकारी नहीं थी। अब आप यहाँ रहकर क्या करेंगे? चलिए, अपने नगर चलते हैं। राजधानी में आपकी उपस्थिति ही हमें आत्मविश्वास और आशा प्रदान करेगी। रुक्मरथ आपको राजधानी में छोड़कर गाँवों में जाकर सेना के लिए नए सैनिकों की भर्ती कर उन्हें प्रशिक्षित कर सकता है। इससे राज्य की सुरक्षा मजबूत

होगी। बाद में हम पड़ोसी राज्यों को नागों के चंगुल से मुक्त कराने में मदद कर सकते हैं। हम और अधिक सुरक्षित हो जाएँगे।"

बूढ़े राजा ने अब अपने लिए कार्य योजना बना ली थी। अचानक अपने नगर, पुत्र, बहुओं, पोते-पोतियों और प्रजा को देखने की तीव्र इच्छा उन पर हावी हो गई। उन्हें एहसास हुआ कि अर्जुन चाहे कितना भी महान योद्धा क्यों न हो, अंततः अब वह उनका शत्रु ही था। उन्होंने मन ही मन कहा, "उसने मेरे दो पुत्रों को मार डाला। लेकिन दुर्योधन नागों पर निर्भर है। मेरे पास दोनों पक्षों में से किसी एक को चुनने का कोई विकल्प नहीं है। धिक्कार है इस कुरु भूमि और इसके बंधनों पर।" फिर उसने होमदत्त से कहा, "यह रात बीत जाए, यह ठंडी और अंधेरी रात। तुम्हारा घोड़ा आराम कर चुका होगा। सुबह मैं एक रथ और दो घोड़े का इंतजाम कर लूंगा। जैसे ही सूरज निकलेगा, हम तीनों, तुम, मैं और नीपा, यहाँ से निकल जाएंगे, आखिरकार इस बुरी जगह से मुक्त हो जाएंगे!" तभी उसकी पीठ में खुजली होने लगी। जैसे ही उसने अपने बाएं हाथ से खुजली करने की कोशिश की, उसे हिरण्यवती याद आ गई और उसने मन ही मन उसे कोसते हुए कहा, "अहंकारी कुतिया!" ठीक उसी समय उसने रथों के आने की आवाज सुनी। शल्य ने सोचा, "क्या यह दुर्योधन है? नीपा ने यही बताया था, दुर्योधन के आने की?" शल्य ने सोचा कि वह अपने साथ सर्वोच्च सेनापति की औपचारिक तलवार लाया होगा। उसने मन ही मन कहा, "भीष्म कितने महान सेनापति थे? और उन्होंने इस युद्ध में कितने वीरतापूर्ण कार्य किए?" जब उसके मन में कुछ विचार चल ही रहे थे, तभी उसने सबसे पहले दुर्योधन को प्रवेश करते देखा, उसके पीछे अश्वत्थामा और कृपाचार्य थे। शल्य गिड़गिड़ाते हुए बोले, "देखो दुर्योधन, मद्रा से हमारे पुरोहित एक अत्यावश्यक संदेश लाए हैं। ऐसा लगता है कि नागों ने हमारे राज्य के आसपास के इलाकों पर कब्जा कर लिया है। बेचारा रुक्मरथ बड़ी मुश्किल से फंसा हुआ है, मानो सुई की नोक पर खड़ा हो! भगवान जाने किस क्षण वे हमारे क्षेत्र पर हमला करेंगे और उसे हड़प लेंगे। नागों की पूरी जाति को जिंदा जला देना चाहिए। इस काम के लिए अर्जुन से बेहतर कोई नहीं। अब मैं उनके शिविर में जाकर अर्जुन को मनाऊंगा कि वह हमारे साथ मद्रा चलें और नागों को जलाने में मदद करें..." वे अचानक रुक गए क्योंकि अपने नए उत्साह में वे भ्रमित हो गए।

दुर्योधन ने कहा, "मामा, क्या आपको लगता है कि एक क्षत्रिय के लिए उस व्यक्ति से मदद मांगना उचित है जिसने कुछ दिन पहले ही उसके बेटों की हत्या

की हो?"

साल्या को ऐसा लगा जैसे किसी ने उसकी राह रोक दी हो और उसे गिरा दिया हो। साल्या ने शांत स्वर में कहा, "ठीक है। हम उसकी मदद नहीं लेंगे। हम घर चलेंगे। मैं पहले ही दो बेटों और इतनी बड़ी सेना का बलिदान दे चुका हूँ।"

दुर्योधन ने कहा, "मैं तुम्हारा दुःख समझ सकता हूँ। चलो, कल ही तुम्हारे पुत्रों के वध का अंत कर देते हैं। उसके बाद हम पूरी सेना के साथ तुम्हारे पड़ोसी राज्यों को नागों के चंगुल से मुक्त कराने में सहायता करेंगे। अंत में, हम जंगलों को घेर लेंगे और नागों को जिंदा जला देंगे।"

साल्या ने कहा, "लेकिन अब तुम्हारी सेना नागों के सिवा कुछ भी नहीं है।"

दुर्योधन ने कहा, "वे यहाँ केवल एक ही उद्देश्य से आए हैं - अपने कट्टर शत्रु अर्जुन को मारना। अर्जुन को मारने के बाद, हम उन्हें घेर लेंगे और उनका खात्मा कर देंगे... बाद में हम आपके नगर भी आ सकते हैं। कृपया खड़े हो जाइए और सर्वोच्च सेनापति के पद का प्रतीक तलवार विधिपूर्वक ग्रहण कीजिए।"

शल्य नहीं उठे। उन्हें उठाने की कोशिश करते हुए दुर्योधन ने उनका दाहिना हाथ पकड़कर उन्हें उठाया। कृपाचार्य बोले, "मद्रा के राजा, यद्यपि आपको औपचारिक रूप से सर्वोच्च सेनापति के रूप में स्थापित किया जाएगा, युद्ध की रणनीति और संचालन महाराजा दुर्योधन के हाथों में रहेगा। पांडवों को देखिए। सर्वोच्च सेनापति का पद सबसे पहले संभालने वाला व्यक्ति आज भी जीवित है। हम तो बहुत कम भाग्यशाली रहे। यदि हमारे महाराज स्वयं सर्वोच्च सेनापति बन जाते हैं, तो इससे यह गलत धारणा बनेगी कि हमारे पास इस उच्च पद को संभालने के योग्य कोई नहीं है। कृपया कम से कम नाम के लिए ही यह पद ग्रहण कर लें। महाराजा के अलावा, जो कि ताजपोशी वाले राजा हैं, हमारी तरफ से कोई जीवित नहीं बचा है। हस्तिनावती के आतिथ्य का इतना आनंद लेने के बाद, एक अच्छे आर्य बनकर हम पर यह छोटी सी कृपा कीजिए।"

शल्य को ऐसा लगा जैसे किसी ने उसे छुरा घोंप दिया हो। उसके मन में अपनी पोती हिरण्यवती, नागों, अर्जुन, अर्जुन द्वारा मारे गए अपने दो पुत्रों और आसमान छूती ज्वालाओं से घिरे जंगल की यादें और छवियां उमड़ पड़ीं। अचानक ही उसे भीष्म पर क्रोध आ गया। तुरंत ही उसे इस क्रोध की निरर्थकता का अहसास हुआ। उसने पुरोहित से कहा, "होमादत्त, तुम भी कल आराम करो। हम तीनों परसों सुबह घर के लिए निकलेंगे।"

—•✳•—

अध्याय 79

एक सेविका यह खबर लेकर आई कि कृपाचार्य हस्तिनावती लौट आए हैं। धृतराष्ट्र ने उसे आदेश दिया, "जाओ। जल्दी करो। उन्हें ले आओ। भागो। संजय का कोई पता नहीं चल रहा है।" गांधारी पलंग पर लेटी हुई थी। थोड़ी देर बाद सेविका लौटी। उसने सूचना दी, "वे आ गए हैं।" धृतराष्ट्र ने कहा, "आओ, आओ, आचार्य। आप सीधे महल क्यों नहीं आए? आप कहाँ गए थे?"

नौकर ने स्पष्ट किया, "वह अभी-अभी आंगन पार कर रहा है। वह थका हुआ है और उसमें तेज चलने की ताकत नहीं है।"

वह पहुंचा और राजा को प्रणाम करते हुए बोला, "महाराजा अमर रहें!" यह कहते ही वह बैठ गया।

धृतराष्ट्र ने कहा, "आचार्य, आप मोर्चे से आए होंगे। मैं युद्ध की खबर जानने के लिए बेताब हूँ। कृपया मुझे वह सब कुछ बताइए जो आप जानते हैं।"

आचार्य काफी थके हुए थे। अपनी तेज़ साँसों को काबू में रखते हुए उन्होंने कहा, "मेरे पास एक बहुत महत्वपूर्ण खबर है, लेकिन उसे सुनाने की मुझमें ताकत नहीं है। मैंने पिछले तीन दिनों से कुछ नहीं खाया है। हमारे युद्ध शिविर में पिछले चार दिनों से रसोई का चूल्हा नहीं जला है।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मेरी बहुओं ने मुझे इसके बारे में बताया है। आचार्य, क्या इस महल के संरक्षण में आपको कभी भूखा रहना पड़ा था? अब हम पर कितनी भयानक विपत्ति आ पड़ी है।" उनकी आवाज भारी हो गई। उन्होंने आगे कहा, "कल से महल में किसी को कुछ खाने को नहीं मिला है। हस्तिनावती की पूरी छानबीन कर लो, एक दाना भी नहीं मिलेगा। मैंने कुछ नौकरानियों को पास के गांवों में भेजा था। ये गांव वाले कितने नीच हैं! उन्होंने कहा, 'आप राजा के प्रतिनिधि

हैं, कृपया अंदर आइए, खुद देख लीजिए कि हमारे पास कुछ है या नहीं।' फिर उन्होंने उन्हें गांव दिखाया। फिर उन्होंने कहा, 'हमारे पास जो कुछ भी था, राजा के आदमियों ने लूट लिया है। हम रोज़ भूखे मर रहे हैं। कृपया हमें राज भंडार से कुछ दीजिए, ताकि हमारे बच्चे जीवित रह सकें।' अब मुझे बताइए, आचार्य, क्या आपको लगता है कि जो लोग भूखे होने का दावा कर रहे हैं, वे उनकी तरह मजबूत, तंदुरुस्त और स्वस्थ होंगे? सच्चाई यह है कि उन्होंने अपना अनाज जंगल में छिपा रखा है, गड्ढा खोदकर उसे पत्तों और कांटों से ढक दिया है ताकि कोई भी उनके अनाज तक न पहुंच सके। हमारे लोगों से ज्यादा धोखेबाज कोई नहीं है—असली गद्दार। मुझे लगता है कि हमारी पूरी आबादी गद्दारों से बनी है। हमारे पूर्वजों ने जिस कुरु भूमि पर शासन किया है, उसके सभी लोग गद्दार हैं। इतनी लगन और समर्पण से निर्मित इमारतें गद्दार हैं। क्या आपको ऐसा नहीं लगता, आचार्य?

आचार्य चुप रहे। महाराजा ने कहा, "आज हमारे सामने सबसे बड़ी समस्या यह है कि हम अपनी जनता के दिलों में देशभक्ति के बीज कैसे बोएं। क्या आप ऐसा नहीं सोचते?"

आचार्य ने व्यंग्य या कटाक्ष का भाव रखे बिना उत्तर दिया, "महाराजा, मेरी समस्या इस समय मुट्ठी भर चावल जुटाना है ताकि मेरा भूखा पेट भर सके। देशभक्ति के कारण ही मैंने अठारह कठिन दिन युद्ध में बिताए। आज सुबह जब मैं मोर्चे से लौटा, तो मैंने अपने अनाज के भंडार की जाँच की। मोर्चे पर जाने से पहले मैंने कुछ भुट्टा और जावे का अनाज छोड़ा था। चूहों ने मिट्टी के बर्तनों को तोड़ डाला है जिनमें ये रखे थे। मेरे एक महीने की अनुपस्थिति में उन्होंने दीवारों में छेद कर दिए हैं। अगर एक बार भी बारिश हुई, तो मुझे यकीन है कि पूरा घर गिर जाएगा। इस उम्र में मेरा क्या होगा?"

पास खड़ी नौकरानी ने आचार्य को अपने पीछे आने का इशारा किया और चुपचाप चली गई। आचार्य भी चुपचाप उसके पीछे चल दिए। नौकरानी ने उनके कान में फुसफुसाते हुए कहा, "कृपा करके महाराजा को कुछ खबर दीजिए। मैं भी उसे सुनने के लिए उत्सुक हूँ। उसके बाद मैं आपको घर ले जाऊंगी और पकी हुई जड़ें खिलाऊंगी। मेरी बहू ने उन्हें जंगल से बड़ी खोजबीन के बाद लाया है। लेकिन इसे गुप्त रखना।"

आचार्य के चेहरे पर कृतज्ञता झलक रही थी। उन्होंने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा, "आपका वंश फले-फूले और समृद्ध हो।" फिर आचार्य कमरे में लौट आए।

धृतराष्ट्र ने पूछा, "आप कहाँ गए थे?"

आचार्य ने झूठ बोला, "मैं पेशाब करने गया था।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मुझे युद्ध की खबर दो।" फिर उन्होंने सेवक को आचार्य को एक मग पानी देने का आदेश दिया और कहा, "कम से कम पानी पीने के बाद उन्हें मोर्चे पर हो रहे घटनाक्रमों का वर्णन करने दो।"

आचार्य, "क्या मुझे शुरुआत से शुरू करना चाहिए?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "नहीं, नहीं। मुझे कर्ण और दुस्साना की मृत्यु के बारे में पता है। फिर मैंने सुना कि शकुनी और शल्य की भी मृत्यु हो गई। उसके बाद क्या हुआ?"

आचार्य ने कहा, "शकुनी और शल्य की मृत्यु के बाद कोई युद्ध नहीं हुआ। लड़ने के लिए क्या बचा था? कोई सेना, रथ, घोड़े, हाथी या कुछ और?"

धृतराष्ट्र, "क्या दुर्योधन को शत्रुओं ने पकड़ लिया था?"

आचार्य ने कहा, "मैं उन्हें बताऊंगा कि उनके साथ क्या हुआ।"

धृतराष्ट्र ने पूछा, "उन्होंने उसे मारा तो नहीं, या मारा क्या?"

आचार्य, "नहीं।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "तो कृपया हमें विस्तार से बताइए। देवी गांधारी, आचार्य कहते हैं कि उन्होंने दुर्योधन को नहीं मारा। वह बच गया है। उनकी बात सुनिए। हमारा वंश पूरी तरह से समाप्त नहीं हुआ है।"

गांधारी उठ बैठीं। नौकर आचार्य के लिए मुट्ठी भर गुड़ और एक मग पानी लाया। इन सब बातों को ग्रहण करने के बाद आचार्य को इतनी शक्ति प्राप्त हुई कि वे युद्ध के अंतिम चरण की घटनाओं का वर्णन कर सकें: "महाराजा दुर्योधन शत्रुओं की दृष्टि से बचकर कहीं छिप गए थे। बेचारे, वे और क्या कर सकते थे? शकुनी और शल्य की मृत्यु के बाद, शत्रुओं ने हमें घेर लिया और हमारी पूरी सेना का सफाया कर दिया। हमारा एक भी सिपाही जीवित नहीं बचा। एक भी घोड़ा जीवित नहीं था। उन्होंने हमारे शिविर में आग लगा दी। हमारे शिविर में बचे हुए कुछ तीर भी जलकर राख हो गए। केवल महाराजा के कुछ निजी सेवक ही बच पाए, जिन्होंने युद्ध में भाग नहीं लिया था, और कुछ वृद्ध व्यक्ति, शायद चार-पाँच। शत्रु किसी दिशा से युद्धक्षेत्र की छानबीन करने लगे। उनकी ओर से पाँचों पांडव भाई, उनके पाँच पुत्र, कृष्ण, धृष्टद्युम्न, सत्यकी और लगभग सौ सिपाही, बीस-तीस रथ, साठ-सत्तर घोड़े बच गए। खोज दल में सभी जीवित योद्धा, सिपाही और जानवर शामिल थे। वे दुर्योधन की खोज कर रहे थे, यह देखने के लिए कि क्या वह मर गया

है। खोजबीन के बाद हमें यकीन हो गया कि वह भाग गया होगा। मैं पहले ही बता चुका हूँ कि उन्होंने हमारे शिविर में आग लगा दी। वहाँ से वे पूरब की ओर भागे। मैंने पानी तक नहीं पिया था। कई दिनों से नहाए बिना मेरे शरीर में खुजली हो रही थी। इसलिए मैंने सोचा कि भले ही ठंड थी, मुझे पास की झील में डुबकी लगा लेनी चाहिए। मुझे स्नान की बहुत तीव्र इच्छा थी। इसलिए मैं झील की ओर जा रहा था। मैं झील के पास पहुँचने ही वाला था कि पांडव दल वहाँ आ गया। एक समूह के रूप में नहीं, बल्कि शिकारियों के दल की तरह जो शिकार पर टूट पड़ते हैं। कुछ सैनिकों ने मुझे महाराजा दुर्योधन समझ लिया। वे मेरी ओर दौड़े और मुझे पकड़ लिया। उसी समय धर्मराज घोड़े पर सवार होकर वहाँ पहुँच गए। उन्होंने मुझे पहचान लिया और मुझसे पूछा, 'आचार्य, आप यहाँ अकेले क्या कर रहे हैं?' मैंने बिना किसी संकोच के अपने जीवन की भीख माँगी। मैंने कहा, 'आपकी जय हो, धर्मराज! आपने राजसूय संस्कार किया है। मैं आपके शत्रु से इसलिए मिला क्योंकि मुझे उस व्यक्ति का ऋण चुकाना था जिसका चावल मैंने जीवन भर खाया है। अब जब आपने मुझे अकेले पकड़ लिया है, तो मैं आपसे विनती करता हूँ कि मुझे न मारें। मुझे।' धर्मराज ने उत्तर दिया, 'आचार्य, आप युद्ध कर सकते थे। मुझे यकीन है कि आप हमारे एक भी सैनिक को नहीं मार सकते थे! न ही किसी घोड़े को भ्रमित और दिशाहीन कर सकते थे। इसके अलावा, आप धनुर्विद्या में हमारे पहले गुरु थे। कृपया मुझे सच-सच बताइए कि दुर्योधन अब कहाँ छिपा है?' मैंने उन्हें उत्तर दिया, 'मैं पवित्र वेदों की कसम खाकर कहता हूँ कि मुझे वास्तव में नहीं पता।' उसी समय भीम और कृष्ण भी वहाँ आ गए। अर्जुन भी उनके साथ शामिल हो गया। अर्जुन ने मेरे पैर छुए और मुझे प्रणाम किया। उसके बाद, वे सभी झील के चारों ओर अर्धवृत्त में खड़े हो गए। बारी-बारी से उन्होंने दुर्योधन को अपशब्द कहे, चिल्लाते हुए, 'अरे डरपोक कुत्ते, झील में क्यों दुबके और छिपे हो? अगर हिम्मत है तो बाहर आ जाओ।' आम सैनिकों ने भी महाराजा के विरुद्ध अत्यंत अभद्र और अपशब्दों का प्रयोग किया। तब तक मुझे यह पता ही नहीं था कि हमारी भाषा में इतने अपशब्द हैं! मुझे यह जानकर बहुत आश्चर्य हुआ कि महाराजा दुर्योधन वास्तव में झील में छिपा हुआ था। झील के बीच में एक छोटा सा पेड़ों से ढकी एक छोटी पहाड़ी। वह पेड़ों के बीच दुबका हुआ था। गालियों की बौछार सहन न कर पाने के कारण वह अपने छिपने की जगह से बाहर आ गया। हाथ में गदा लिए वह पानी में चलकर खुद को सबके सामने दिखाने के लिए आगे बढ़ा।

उसका मुकुट जगमगा रहा था, उसके सुनहरे बाजूबंद चमक रहे थे और उसकी छाती की कवच भीगी हुई थी। ठंडे पानी में चलने से वह ठंड से कांप रहा था।

धर्मराज ने उससे पूछा, 'हे नपुंसक, क्षत्रिय होते हुए भी चोर की तरह कैसे छिपे?' दुर्योधन ने उत्तर दिया, 'मैं चोर की तरह नहीं छिपा था। मैं अंतिम आक्रमण के लिए तैयार होने के लिए विश्राम कर रहा था। मैं अब युद्ध के लिए तैयार हूँ। लेकिन मैं अकेला हूँ। तुम तो बहुत सारे हो। और तुम्हारे पास इतने सारे सैनिक, घोड़े और रथ हैं। इतने सारे आदमियों और साजो-सामान के साथ यहाँ आकर सिर्फ एक व्यक्ति से लड़ने में तुम्हें शर्म नहीं आती?' धर्मराज ने एक क्षण सोचा और फिर कहा, 'ठीक है। मैं तुम पर उदारता दिखाऊँगा, जिसके तुम योग्य नहीं हो। हममें से किसी एक को एकतरफा युद्ध के लिए चुन लो। यदि तुम अपने चुने हुए प्रतिद्वंद्वी को हरा देते हो, तो मैं अपनी हार स्वीकार कर लूँगा और तुम्हें विजेता घोषित कर दूँगा।' तब महाराजा ने उत्तर दिया, 'क्या ऐसा है? क्या तुम अपना वचन निभाओगे?' तब कृष्ण ने तुरंत हस्तक्षेप करते हुए धर्मराज को फटकारा, 'धर्मराज, क्या तुमने अभी तक अपनी जुआ खेलने की मानसिकता नहीं छोड़ी है? शत्रु ने लंबे समय तक अच्छा विश्राम किया है। यदि वह...' तुम्हें युद्ध के लिए चुनौती दे रहा है, क्या तुम्हें लगता है कि तुम उसके बराबर हो? उसे यह आश्वासन देकर क्या कहना चाहते हो कि इस एक मुकाबले में जीत को युद्ध में समग्र जीत मान लिया जाएगा? क्या तुम्हारा इरादा अपनी मेहनत से हासिल की गई जीत के फल को त्यागकर, अपना राज्य उसे सौंपकर फिर से वनवास में जाने का है, जहाँ तुम्हें भूखा-प्यासा रहना पड़ेगा? क्या तुम होश में हो?' धर्मराज उलझन में और मूर्ख लग रहे थे। भीम, जो तब तक जमीन पर बैठे अपने पैर फैलाए हुए थे, अचानक खड़े हो गए और बोले, 'कृष्ण, मेरी बात ध्यान से सुनो। हम उसे सिंहासन पर बिठाने के लिए केवल इसलिए तैयार हैं क्योंकि वह हमारे बड़े भाई के विरुद्ध है। बस इतना ही। प्रशासन या राजकोष के प्रबंधन में उसकी कोई भूमिका नहीं होगी। केवल इसलिए कि हमने उसे बड़े भाई का सम्मान दिया, उसने जुआ खेला और हमें इस दुर्दशा में डाल दिया। हम अपने हितों को जानबूझकर नुकसान पहुँचाने को अब और बर्दाश्त नहीं करेंगे।' मैं घोषणा करता हूँ कि हम उस समझौते से बंधे नहीं हैं जो उसने अभी-अभी शत्रु के साथ किया है।' यह सुनकर महाराजा दुर्योधन का चेहरा पीला पड़ गया। कृष्ण बोले, 'यहाँ मौजूद हर व्यक्ति अगर एक-एक पत्थर भी फेंके तो तुम सब पागल कुत्ते की तरह मारे जाओगे। लेकिन हम योद्धा हैं। हमसे अकेले लड़ो,

एक-एक करके। भीम ने तुम्हारी जांघ तोड़ने की कसम खाई है, वह अभी भी कायम है। क्या तुम उससे लड़ना चाहोगे? वैसे भी, उसके हाथ में भी गदा है।' दुर्योधन ने उत्तर दिया, 'कृष्ण/मैं क्षत्रिय हूँ। यह दुष्ट मेरे भाइयों को मारने के कारण घमंड से इतरा रहा है। अब मुझे उसे मारने का मौका मिला है। भीम से कहो कि वह मुझसे अकेले लड़े।' वह भीम से सीधे बात नहीं करना चाहता था क्योंकि उसे लगता था कि ऐसा करना उसकी गरिमा के विरुद्ध होगा।

धृतराष्ट्र ने कहा, "बिल्कुल सही। आखिरकार मेरा पुत्र कुरु वंश की गरिमा का साक्षात अवतार है।"

आचार्य ने आगे बताया, "भीम ने अपना गदा निकाला। एक ही छलांग में वह महाराजा दुर्योधन के सामने खड़ा हो गया। फिर उसने महाराजा के चेहरे पर सीधे घूरना शुरू कर दिया, मानो वह केवल अपनी दृष्टि से ही महाराजा को अपने वश में कर लेना चाहता हो। एक-दो पल के लिए नहीं, बल्कि कुछ मिनटों तक। सभी लोग सांस रोककर उस भीषण युद्ध के शुरू होने का इंतजार कर रहे थे। अचानक भीम ने अपना गदा जमीन पर फेंक दिया। फिर उसने कहा, 'वह तो मर चुका है। उसका मृत्यु-पीला चेहरा देखो। कृष्ण, वह सचमुच कुछ दिन पहले ही इस दुनिया से चला गया। उसकी आँखें मृत्यु के अंधकार से भरी हैं। खैर, वह किनारे तक पहुँच गया है। अपने सभी पुत्रों और पोतों को खोकर उसे अपनी ही अंतिम संस्कार प्रक्रिया पूरी करनी होगी। मुझ जैसा व्यक्ति ऐसे व्यक्ति से कैसे लड़ सकता है? चलो हम सब यहाँ से चलते हैं। युद्ध कल ही समाप्त हो गया था।' वह तुरंत तेजी से चला गया। कृष्ण चिल्लाए, 'भीम, तुम्हारी प्रतिज्ञा का क्या हुआ?' भीम और तेज चलते हुए बोला, 'अब उसका कोई अर्थ नहीं है!' किसी को भी उसकी बात समझ नहीं आई। पूरा समूह स्तब्ध खड़ा रह गया। इतने सारे पत्थर के खंभे। कुछ देर रुकने के बाद, कृष्ण वहां से चले गए और भीम के पीछे चले गए। धर्मराज कृष्ण के पीछे-पीछे गए। बाकी लोग एक कतार में चल रहे थे।

धृतराष्ट्र ने कहा, "हे देवी, गांधारी, क्या तुमने सुना? भीम दुष्ट तो है, पर वीर नहीं। उसमें तुम्हारे पुत्र के विरुद्ध खड़े होकर उससे लड़ने का साहस नहीं है। दुर्योधन, तुमने गलती की। तुम्हें उसे युद्ध के लिए उकसाकर मार डालना चाहिए था। कम से कम अपने इतने सारे भाइयों के अनाथ हुए सिरों के प्रति सम्मान के रूप में तो ऐसा ही करना चाहिए था। खैर, हमने युद्ध जीत लिया, है ना आचार्य?"

आचार्य ने नौकरानी को अपने पेट की ओर इशारा किया और संकेत दिए। नौकरानी उठकर जाने लगी और उंगलियों से इशारा करके उन्हें अपने पीछे आने को कहा।

धृतराष्ट्र ने कहा, "आचार्य, आप कहाँ जा रहे हैं? क्या आपकी रिपोर्टिंग पूरी हो गई है?"

धृतराष्ट्र ने दहलीज के उस पार से आचार्य के शब्द सुने, "मुझे शौच की बहुत जरूरत है। मैं नदी किनारे जा रहा हूँ। लौटने के बाद रिपोर्ट पूरी करूँगा।"

—•✳•—

अध्याय 80

कुछ देर बाद, घने अंधेरे में, दुर्योधन झील में उतरा। कमर तक गहरे पानी में, वह नीचे झुका और अपनी ही काली छवि को देखा। उसने महसूस किया कि न केवल उसका चेहरा, नाक और मुकुट, बल्कि उसकी आँखों की चमक भी काली पड़ गई थी, मानो रात उस पर छा रही हो। उसने चारों ओर नज़र घुमाई। हर जगह अंधेरा देखकर वह हैरान था कि झील का पानी उसकी आकृति को कैसे प्रतिबिंबित कर रहा है। इस विडंबना ने उसे आश्चर्यचकित कर दिया। उसकी प्यास इतनी तीव्र थी कि वह पूरी झील का पानी पी जाना चाहता था। वह नीचे झुका और एक हथेली भर पानी उठाया। उसने पानी को अपने होठों तक पहुँचाया, लेकिन उसे यह बेचैनी सता रही थी कि कहीं यह उसकी अपनी दिवंगत आत्मा को अर्पित किया गया जल तो नहीं है! उसने मृतकों की गिनती शुरू की। उसके दादा मर चुके थे, भाई दुस्साना मर चुका था, और उसके अन्य भाई, उसके पुत्र, बहनोई जयद्रथ, द्रोणाचार्य, कर्ण और उसके पुत्र भी मर चुके थे। उसने खुद से पूछा, “उनकी आत्माओं को अंतिम संस्कार का जल कौन अर्पित करेगा? मेरे सिवा कोई नहीं।”

इसलिए उसने सोचा कि उसे उन सभी का अंतिम संस्कार करना होगा। उसने फैसला किया, “आज रात नहीं, अभी नहीं।” लेकिन एक ऐसी समस्या थी जिसका हल उसकी समझ से परे था, “मेरी आत्मा को अंतिम संस्कार का जल कौन अर्पित करेगा?” एक और समस्या थी। उसे उस अवसर पर आवश्यक धार्मिक शब्द नहीं पता थे। बिना उसकी जानकारी या प्रयास के, उसके होठों के इतने करीब का पानी उसकी उंगलियों से फिसल गया। उसने अपने पैर पानी से बाहर निकाले और किनारे तक पहुँचने के लिए पानी में चलने लगा। बहुत अंधेरा था। और ज़मीन इतनी कीचड़ भरी थी कि उसके पैर आसानी से उसमें फंस सकते थे। लगभग तीस कदम चलने के बाद, उसे लगा कि वह किसी चीज़ से टकराकर गिर गया है। उसे याद आया। वह उसे उठाने के लिए झुका। खैर, वह उसकी अपनी लाठी थी। झुकते ही उसने उसे देखा। वह एक और लाठी थी। उसने उसे भी अपने हाथ में उठा लिया। वह उसकी अपनी लाठी से भारी थी। लेकिन उसमें से एक भयानक बदबू आ रही थी, घिनौनी बदबू। उसने उस पर हाथ फेरा और फिर सूंघा। वह जमे हुए खून से सना हुआ था, न केवल इंसानी खून बल्कि घोड़ों और हाथियों का खून भी। दुर्गंध उसी खून की थी। वह धातु का बना था, और उसका हैंडल लंबा था। उसने अपने बाएं कंधे पर अपना गदा लटका रखा था, दूसरे गदा को मजबूती से पकड़ा, उसे चार बार ज़ोर से घुमाया, उसका भारीपन महसूस किया, और याद आया कि उसने दो दिनों से कुछ नहीं खाया था। उसे नहीं पता था कि अब कहाँ जाना है। न ही क्या करना है। उसने मन ही मन कहा, "कम से कम शाम तक तो मैं कहीं था और कुछ कर रहा था - झील में दुबका हुआ था!" अब उसे छिपने की कोई ज़रूरत नहीं थी। लेकिन इससे उसे यह पता नहीं चला कि कहाँ जाना है। वह दुविधा में था - उसे छिपने की ज़रूरत नहीं थी लेकिन उसके पास जाने के लिए कोई जगह नहीं थी। उसे खुद से घृणा होने लगी, क्योंकि उसके भीतर एक पूर्ण खालीपन का एहसास छा गया था। वह कुछ देर तक वहीं खड़ा रहा। फिर दोनों गदाओं को पकड़े हुए वह दाईं ओर मुड़ा। अंधेरे के बावजूद वह चीजों की धुंधली रूपरेखा देख सका। वहाँ से थोड़ी दूरी पर, धीरे-धीरे रुकते हुए, उसने राख को छुआ। उसने सोचा, "हाँ, यही जगह है। यहीं तीरों का बिस्तर बनाया गया था। उसने मुझे, काम के प्रभारी व्यक्ति को बताया था कि रसोई से ईंधन की लकड़ियों से भरी एक गाड़ी, अच्छी सूखी लकड़ियाँ, दादाजी के अंतिम संस्कार में इस्तेमाल की गई थीं। वह झूठ क्यों बोलेगा? बिल्कुल वही जगह। कितना समय हो गया? सब कुछ

आपस में मिल गया है। हाँ, मुझे उसके शब्द याद हैं, 'यदि मरने से पहले तुम उन्हें अपने भाई मान लो, तो मैं उनसे शांति समझौता करने को तैयार हूँ। उसके बाद, चाहे तुम आसमान की ओर हाथ फैलाकर चीखो...' खैर, आठ दिन पहले की बात होगी। आठ दिनों में आत्मा किस लोक में पहुँचेगी? नहीं, ऐसा लगता है कि यह मृत्यु स्थान पर तब तक रहती है जब तक कि विधिवत जल अर्पित नहीं किया जाता। हाँ, यह मृत्यु स्थान के ऊपर आकाश में रहती है।" फिर उसने अपना चेहरा आकाश की ओर उठाया। उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। घोर अंधेरा था। चाहे आँखें कितनी भी ध्यान से देखें, उस अंधेरे में कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। न गिद्ध, न कुत्ता, कहीं नज़र नहीं आ रहा था। वह सोचने लगा कि मृत्यु के बाद गिद्ध कितने दिनों तक मांस खाते हैं? उसे नहीं पता था कि यह प्रश्न जिज्ञासा, भय या किसी और कारण से था। मृत्युस्थल पर न रुकने का निश्चय करके वह तेज़ी से आगे बढ़ गया। उस घने अंधेरे में भी उसने रथों के पहियों से बने रास्ते पर दो पतले निशान देखे। उसे याद आया कि उसने उस दिन भीष्म से मिलने जाते समय यही रास्ता लिया था और इसी से वापस लौटा था। उसे कुछ खुशी हुई कि आखिरकार उसे कोई रास्ता मिल गया। फिर भी, उसे नहीं पता था कि यह रास्ता उसे कहाँ ले जाएगा। उसने सोचा कि स्थिर रहने से बेहतर है चलना। फिर वह दो गदाएँ लिए धीरे-धीरे गदाओं के बीच कदम रखते हुए चलने लगा। जैसे-जैसे वह आगे बढ़ा, अचानक उसे लगा कि गहरे अंधेरे का एक हिस्सा जम गया है और आकाश की ओर उठकर उसका रास्ता रोक रहा है। वह भयभीत हो गया और उसका दिल काँप उठा। उसने गदा को उठाया, मानो तोड़ने के लिए। तुरंत ही उसे एहसास हुआ कि उसने बदबूदार गदा उठा ली है, न कि अपनी। फिर उसने उसे बाएँ हाथ में ले लिया। उसने अपना गदा दाहिने हाथ में ले लिया। लेकिन तभी उसके मन में एक और विचार आया। उसे लगा कि इस अवसर पर अपने गदा के बजाय खून से सना हुआ गदा, जिसने इतना खून पिया था, इस्तेमाल करना अधिक उचित होगा। उसने सोचा कि भारी, खून से सना हुआ गदा प्रतिद्वंद्वी में दहशत पैदा कर देगा। इस प्रकार उसने गदाओं की स्थिति बदल दी, बदबूदार गदा अब वापस उसके दाहिने, प्रहार करने वाले हाथ में आ गया। उसे अचानक शर्म महसूस हुई। और उसने एक बार फिर गदाओं की स्थिति बदल दी। तब तक उसे एहसास हो चुका था कि उसके रास्ते में एक विशाल बरगद का पेड़ खड़ा है। उसे याद आया कि कैसे उसने पहले इसी पेड़ पर बैठकर पूरे युद्धक्षेत्र का जायजा लिया था। फिर

उसने गदा को अपने कंधे पर टिका लिया। उसने अपनी गर्दन उठाई और ऊपर देखा। उसे कोई गिद्ध नहीं दिखाई दिया। या शायद इसलिए कि देखने के लिए बहुत अंधेरा था? उसे याद आया कि उस दिन काले बादल खुद गिद्ध बन गए थे या शायद रात का अंधेरा ही गिद्धों में बदल गया था। उसे पेड़ पर चढ़कर देखने का मन हुआ। लेकिन तुरंत ही उसे याद आया कि पेड़ पर चढ़ना मुश्किल था। नीचे उतरो। उसे यह भी एहसास हुआ कि अगर वह सबसे ऊँची शाखा तक भी चढ़ जाए, तो भी अंधेरा उसे कुछ भी देखने से रोकता रहेगा। तभी उसे पेड़ में कुछ आवाज़ सुनाई दी। आवाज़ से लगा कि कोई नीचे उतर रहा है, अंधेरे की ऊँचाई से नीचे। डर से काँपते हुए उसके दिल में अचानक एक सिहरन दौड़ गई। फिर ऐसा लगा जैसे वह फैल रही हो और उसके शरीर पर गिरने लगी हो। तब उसे एहसास हुआ कि यह हवा है जो पत्तों को हिलाकर गिरा रही है। यह सिर्फ हवा नहीं थी, बल्कि एक तूफान था, एक बवंडर था। पेड़ ने अपने लगभग सारे पत्ते गिरा दिए, जिससे वह पत्तों में डूब गया। उसे डर सता रहा था कि कहीं पेड़ ही उस पर न गिर जाए। नहीं, उसे यकीन था कि पेड़ वहीं मजबूती से खड़ा है, अपनी जड़ों को जमाए हुए। जैसे ही पत्ते सरसराहट की आवाज़ करते हुए गिरे, वह तेज़ी से आगे बढ़ा। वह इतनी तेज़ी से भागा मानो अनगिनत पत्ते बरसा रहे उस विशाल अंधेरे पेड़ से जान बचाकर भाग रहा हो। उसने सरसराहट की आवाज़ और पेड़ को बहुत पीछे छोड़ दिया, जो अंधेरे में गायब हो गया। अब उसे पत्तों के बिना सिर्फ तूफान का एहसास हो रहा था। यह सोचकर उसका मन हल्का हो गया कि वह अब गिरते हुए पत्तों के नीचे नहीं है। लेकिन दुर्गंध उसकी नाक में घुसने लगी। वह सोचने लगा कि इस जगह पर युद्ध का कौन सा दिन लड़ा गया था। वह वहाँ से भाग जाना चाहता था, लेकिन जब उसे एहसास हुआ कि वह कहीं भी जाए, दुर्गंध उसका पीछा नहीं छोड़ेगी, तो उसने यह विचार छोड़ दिया। अगर वह वापस जाता, तो वह फिर से उसी पेड़ के नीचे पहुँच जाता, और अगर वह आगे बढ़ता, तो दुर्गंध और भी तेज हो जाती। फिर भी उसने दुर्गंधयुक्त रास्ते पर चलने का फैसला किया। थोड़ी दूरी पर आगे उसने दो बड़ी-बड़ी लाल आँखें देखीं, जो ज़ोर से 'महाराजा, महाराजा' बोल रही थीं। अपने बाएँ हाथ में दोनों गदाएँ पकड़े हुए, उसने अपने दाहिने हाथ से अपना सिर छुआ। उसने मन ही मन कहा, "हाँ।" मेरा मुकुट सुरक्षित है।” लेकिन अचानक उसे तीव्र भय सताने लगा। वह सोचने लगा, “कौन पुकार रहा है?” उसने ध्यान से सुना। दूर, उसे दो बड़ी-बड़ी आँखें दिखाई दीं, जो एक-दूसरे से काफी दूर

थीं। उसने पूछा, “क्या यह कोई भूत हो सकता है?” फिर उसने चारों ओर देखा। दाहिने कोने में उसे एक बड़ी आँख हिलती हुई दिखाई दी। उसे कोई आवाज़ नहीं सुनाई दी। कोई चीख-पुकार नहीं। बाईं ओर पहाड़ी की तरह फैला हुआ अंधेरा ही अंधेरा था। दुर्योधन ने सोचा, “मुझे यहाँ से निकलकर कहीं और जाना होगा। यह तो लाशों की भूमि है। अगर मैं वापस गया तो वहाँ वह विशाल काला वृक्ष है जिससे पत्ते बरस रहे हैं।” अगर मैं स्थिर खड़ा रहूँ, तो दूर से आती ये दो आँखें मुझे घूरती रहती हैं, और उनके बीच से एक प्रेत जैसी आवाज़ आती है, 'महाराजा, महाराजा।' मैं जीवन-मरण के बंधन में फँस गया हूँ।" उसका शरीर काँप उठा। दोनों गदाएँ नीचे गिर गईं। अचानक उसे लगा कि वह स्वयं ही अपना भूत है। किसी चीज़ को खोने के भयानक दुःख ने उसे ज़ोर-ज़ोर से रुला दिया। तभी उसने दो गदाओं के आपस में टकराने की तेज़ आवाज़ सुनी। दोनों गदाएँ धातु की थीं। तुरंत वह नीचे झुका और अपनी गदा को पहचान कर उठा लिया। वह अपनी गदा से दूसरी गदा पर बार-बार प्रहार करने लगा, जो खून से सनी, खून से लथपथ और दुर्गंधयुक्त थी। उसके प्रहार से उत्पन्न हुई गदा की आवाज़ ने उसका कुछ साहस लौटा दिया और उसका भय दूर कर दिया। वह और ज़ोर से प्रहार करने लगा और चिल्लाने लगा, "मैं मरा नहीं हूँ। मैं तुम्हें मारे बिना नहीं मरूँगा।" तभी उसे विपरीत दिशा से एक भूत के आने का आभास हुआ। उसने उस पर चिल्लाते हुए कहा, "हे मृत आत्मा, तुम क्यों आए हो? तुम मुझे डरा नहीं सकते। मैं अभी मरा नहीं हूँ।"

"तुम इन क्लबों को क्यों तोड़ रहे हो?"

"पहले मुझे बताओ कि तुम कौन हो।"

"तुम्हारे ही पेशे का," इतनी धीमी आवाज़ में बोल रहा था कि पहचानना लगभग असंभव था।

"एक योद्धा?"

"क्या तुम भी योद्धा हो?"

मुझे तुम्हारे भूतिया जवाब नहीं चाहिए। मुझे स्पष्ट रूप से बताओ कि तुम्हारा पेशा क्या है। क्या आत्माओं के अलग-अलग पेशे होते हैं?

"सर, मैं एक धातुकर्मी हूँ। मैं युद्धक्षेत्र में बिखरे हुए धातु के टुकड़ों को इकट्ठा कर रहा हूँ।"

मुझे मृत्यु से भय नहीं है। मैं नहीं मरूंगा।

"लेकिन तुमने मुझे बताया नहीं कि तुम कौन हो। खैर, जैसी तुम्हारी मर्जी।" फिर वह आकृति दूर चली गई।

दुर्योधन ने खून से लथपथ, बदबूदार गदा को अपनी गदा से बेरहमी से पीटना जारी रखा। दूर दिख रही दोनों आँखें अंधेरे में विलीन हो गईं। ठंड गायब हो गई और शरीर अचानक गर्म हो गया। गदा की आवाज बंद हो गई।

काफी समय बाद, धातु का कारीगर उस जगह पर लौटा। उसने धातु से बनी दो भारी लाठियाँ देखीं, एक के ऊपर एक रखी हुई। उसने दोनों को एक साथ उठाने की कोशिश की, लेकिन उठा नहीं सका। पहले उसने ऊपर वाली लाठी उठाई और उसे अपने कंधे पर टिकाया, फिर उस अंधेरे में अपने रास्ते पर पूरी तरह आश्वस्त होकर आसानी से आगे बढ़ गया। काफी दूर चलने के बाद, वह अपनी गाड़ी के पास पहुँचा। उसने लाठी को गाड़ी में रख दिया। वह दूसरी लाठी उठाने के लिए लाशों के बीच से होते हुए वापस गया। उसने पाया कि दूसरी लाठी उसकी ताकत से कहीं ज़्यादा भारी थी। रास्ते में, उसे कम से कम चार बार साँस लेने के लिए लाठी नीचे रखनी पड़ी। जब उसने लाठी को गाड़ी में रखा, तो उसे ऐसा लगा जैसे उसे कोई बड़ा खजाना मिल गया हो। उसे डर था कि कहीं बहुत देर न हो जाए, इसलिए वह बैलों को हांकते हुए अपनी गाड़ी को तेज़ी से चलाकर निकल गया।

कुछ समय बाद, उजाला होने लगा। थोड़ी देर बाद सुबह हो गई। सड़क सुनसान थी और कोई वाहन नहीं चल रहा था। वह गाड़ी चला रहा था, जागते रहने की पूरी कोशिश कर रहा था। फिर रास्ते में वह एक पेड़ के पास रुका और पत्ते व घास इकट्ठा करने के लिए नीचे उतरा। फिर उसने शवों के बीच से इकट्ठा किए गए धातु के टुकड़ों को पत्तों और शाखाओं से ढक दिया। जब उसने अपनी यात्रा फिर से शुरू की, तो उसने आकाश में बड़े-बड़े गिद्धों को उड़ते देखा। जब वह उनकी उड़ान की दिशा जानने के लिए उत्सुकता से उन्हें देख रहा था, तो उसने एक विशाल गिद्ध को अपनी चोंच में एक ऐसी वस्तु लिए हुए देखा जो दिन के उजाले में चमक रही थी। उसने उसे ध्यान से देखा और पाया कि वह एक मुकुट था। वह नीची उड़ान भर रहा था। जल्द ही वह ऊपर की ओर उड़ने लगा और काफी ऊंचाई पर पहुँचकर गोल-गोल घूमने लगा। धातु का काम करने वाला आगे बढ़ गया।

—•✳•—

अध्याय 81

धृतराष्ट्र ने कहा, "आचार्य, आपकी आवाज साफ हो गई है। क्या आपने कुछ खाया है?"

आचार्य ने कहा, "महाराजा, मुझे यह कहाँ से मिलेगा? मैंने तो बस गंगा का जल पिया है। बस इतना ही।"

धृतराष्ट्र ने पूछा, "आगे क्या हुआ, बताओ? तुमने कहा था कि भीम मेरे पुत्र से युद्ध करने और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने से बहुत डर गया था, और वे सब डरपोक भीम के पीछे चले गए। आगे क्या हुआ?"

आचार्य ने कहा, "जब वे भीम के पीछे गए थे, तब मैं भी उनके साथ था..."

धृतराष्ट्र ने पूछा, "तुमने अपनी निष्ठा क्यों बदल ली?"

आचार्य ने कहा, "नहीं, नहीं। मैं तो बस यह जानना चाहता था कि वे कहाँ जा रहे हैं और क्या कर रहे हैं। वे सब बहुत थके हुए थे। उनकी आँखों में नींद झलक रही थी। वे सब सीधे अपने तम्बुओं और झोपड़ियों में चले गए। रास्ते में मैं समूह से अलग हो गया और आगे चलने में असमर्थ होने के कारण आराम करने के लिए बैठ गया। काफी देर बाद, मैंने यादवों के अश्वत्थामा और कृतवर्मा को अपनी ओर आते देखा। शाम हो चुकी थी। मैंने उन्हें सबसे पहले देखा और उनके नाम पुकारे। वे मेरी ओर आए और मुझसे पूछा, 'महाराजा कहाँ हैं?' मैंने उन्हें जो कुछ पता था, वह बताया। बेचारे अश्वत्थामा, अपने दुख को रोक न पाने के कारण, चिल्लाए, 'नहीं। जब हम सब यहाँ हैं तो महाराजा कैसे मर सकते हैं? युद्ध कैसे समाप्त हो सकता है? चलो, महाराजा के पास चलते हैं और अपनी आगे की रणनीति बनाते हैं।' फिर हम तीनों झील पर वापस गए। हमने हर जगह खोजा लेकिन महाराजा का कोई निशान नहीं मिला। हम अपने शिविर में वापस आए और झोपड़ियों को ढकने

वाले तिनकों से तीन मशालें बनाईं। फिर हमने उन्हें जलाया और खोजबीन शुरू की।" हम उन इलाकों में गए जहाँ युद्ध हुआ था। हमने पुकारा, 'महाराजा, महाराजा।' मैं और कृतवर्मा एक दिशा में गए, और अश्वत्थामा दूसरी दिशा में। हम उन्हें नहीं ढूंढ पाए।

धृतराष्ट्र, "क्या अंत में तुम्हें वह नहीं मिला?"

आचार्य ने कहा, "नहीं। हमने ऐसा नहीं किया।"

धृतराष्ट्र ने पूछा, "तो फिर वह कहाँ गया? क्या वह मित्र शासकों से सेनाएँ लेने गया था? नागों से? राक्षसों से? पिशाचों से? गंधर्वों से? या किन्नरों से?"

आचार्य ने कहा, "मुझे बिल्कुल नहीं पता।"

धृतराष्ट्र, "हाँ, मुझे पता है। वह ऐसे मिशन पर गए हैं। अंततः विजय धर्म की ही होगी। ठीक है। आगे क्या हुआ?"

आचार्य ने कहा, "हम जो तीन मशालें लेकर आए थे, वे बुझ गईं। आप जानते हैं, जब अंधेरे में कोई मशाल अचानक बुझ जाती है, तो अंधेरा और भी गहरा लगने लगता है। मैंने पहले कभी इतना घना अंधेरा नहीं देखा था। मैंने कहा, 'कृतवर्मा, चलो यहीं बैठते हैं। मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा।' तभी अश्वत्थामा हमारे साथ आ गए। मैं उन्हें केवल उनकी आवाज से पहचान पाया। वे दृढ़ और स्पष्ट कदमों से आए। आते ही उन्होंने हमसे कहा, 'हम बाद में अपने महाराजा की खोज फिर से शुरू कर सकते हैं। मेरे मन में एक नया विचार आया है। आपने कहा था कि वे दावा करते हैं कि युद्ध समाप्त हो गया है। इसलिए वे सब अब आराम कर रहे होंगे। शायद पांचों पांडव एक ही जगह सो रहे होंगे। चलो रात में चुपके से जाकर उनके सिर काट देते हैं। धृष्टयुम्न का सिर भी, और वह मेरे लिए बहुत महत्वपूर्ण है। वही कसाई था जिसने मेरे पिता की हत्या की थी।' किसी तरह मुझे यह विचार पसंद नहीं आया..."

धृतराष्ट्र ने पूछा, "इसमें क्या खराबी थी?"

आचार्य ने कहा, “अचानक हमला करके सोते हुए लोगों को मारना उचित नहीं है। यह क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध है।” मैंने अश्वत्थामा से कहा। उन्होंने यह कहकर उत्तर दिया कि वे क्षत्रिय नहीं हैं। तब कृतवर्मा ने तर्क दिया, “आप ब्राह्मण हैं। क्या सोते हुए लोगों को मारना ब्राह्मण धर्म है?” अश्वत्थामा ने उत्तर दिया, “मुझे व्यर्थ की बहस में कोई रुचि नहीं है। महत्वपूर्ण बात युद्ध जीतना है। बिना किसी बहस के मेरे साथ आ जाओ।” उन्होंने हमें बांहों से पकड़कर घसीटा। चारों ओर घना अंधेरा

था। केवल अश्वत्थामा ही इतने अंधेरे में आत्मविश्वास से चल सकते थे। मेरा दिल तेजी से धड़क रहा था। कृतवर्मा पीछे-पीछे चल रहे थे। हम पांडवों के तंबू तक पैदल ही गए। सब सो रहे थे। और कितनी जोर से खर्राटे आ रहे थे! राजाओं के तंबू नदी के दूसरे किनारे पर थे। हमने एक नाव के सहारे नदी पार की। फिर अश्वत्थामा पांडवों के शिविर में गए। लगभग आधे घंटे तक हमें कोई आवाज नहीं सुनाई दी। कुछ समय बाद, शोरगुल, चीख-पुकार मच गई। अश्वत्थामा अपनी तलवार लिए हमारी ओर दौड़े। हाथ से खून टपक रहा था, कुछ खून मुझ पर भी गिर गया। तुरंत ही हमने नाव को खींचना शुरू कर दिया। किनारे पर ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ें आ रही थीं, 'उसे पकड़ो! उसके पीछे भागो!' इस शोर-शराबे के बावजूद, जिस किनारे पर हम पहुँचे, वहाँ सो रहे सैनिक नहीं जागे। हम आसानी से छोटी नदी पार करके सुरक्षित यहाँ पहुँच गए। दौड़ने से मेरी साँस फूलने लगी थी। आख़िर इस उम्र में कोई कितना दौड़ सकता है?

धृतराष्ट्र ने उत्साहपूर्वक पूछा, "क्या उसने छह लोगों को मार डाला?"

आचार्य ने कहा, "बस रुकिए, मैं उसी पर आ रहा हूँ। कुछ दूर दौड़ने के बाद अश्वत्थामा हमें छोड़कर कहीं भाग गया। न तो मुझे और न ही कृतवर्मा को पता था कि वह कहाँ गया। लेकिन हम दोनों दौड़ने लगे। वह अचानक रुका, गहरी साँस ली और मुझसे बोला, 'आचार्य, मैं द्वारका से एक विशाल सेना लेकर आया था। मेरे सभी सैनिक मारे गए, मैं अकेला बचा हूँ। अब अश्वत्थामा ने पांडवों को मार डाला है। वे अपने साथ कृष्ण और सत्यकी को छोड़ गए हैं, दोनों द्वारका से। उनके पास एक छोटी सी सेना बची है। इस अँधेरे में वे हमें पकड़ नहीं पाएँगे। लेकिन सुबह होते ही सबसे पहले वे हमें ढूँढ़ेंगे। क्या उन्हें नहीं पता कि दुर्योधन की तरफ से हम तीनों ही बचे हैं? मैं फिर से दौड़ना शुरू करूँगा। मैं किसी तरह द्वारका पहुँचने की कोशिश करूँगा और बलराम की शरण लूँगा।' फिर वह भाग गया। मुझे नहीं पता किस दिशा में। चारों तरफ़ घना अँधेरा था। और मेरी आँखें, आख़िरकार, एक बूढ़े आदमी की कमज़ोर आँखें थीं। क्या मेरी उम्र में दौड़ना मुमकिन था? मैं वहीं बैठ गया। मुझे वहीं सो जाने का मन कर रहा था।" मैंने ऐसा नहीं किया, क्योंकि मुझे डर था कि उस कड़ाके की ठंड में बाहर निकलना मेरे लिए निश्चित मृत्यु होगी। याद है, अश्वत्थामा ने उन्हें सोते हुए ही मार डाला था। मेरे भतीजे की इस गिरी हुई हालत को देखकर मुझे घृणा हुई थी...

धृतराष्ट्र ने आचार्य से कहा, "आचार्य जी, क्या आपको हमारे शत्रुओं को मारने में आनंद नहीं मिलता?" वे आचार्य से बहुत क्रोधित थे।

आचार्य, "जी हाँ। मैं तुम्हें बताता हूँ। हत्या करने का एक तरीका होना चाहिए और कुछ नियम होने चाहिए जिनका पालन किया जाना चाहिए। मैं वहाँ थोड़ी देर बैठा पांडव शिविर को देख रहा था। कुछ समय बाद मैंने पांडव शिविर के दूसरे किनारे पर मशालों की हलचल देखी। शायद दस मशालें थीं। वे अलग-अलग दिशाओं में हमारी खोज में निकल गईं। एक मशाल लिए खोजी मेरी ओर आया। मैं खड़ा हो गया। जो मेरी ओर आ रहा था वह भीम था! मेरा हृदय भय से काँप उठा। लेकिन मुझे भीम से डरने का कोई कारण नहीं था। क्योंकि वह मेरा शत्रु नहीं था। आखिर, क्या वह आरंभ में मेरा शिष्य नहीं था? लेकिन मेरे भय का कारण यह था कि यदि अश्वत्थामा ने कुछ समय पहले पाँचों पांडवों का गला काट दिया था, तो अब मैं यहाँ भीम को जीवित कैसे देख रहा हूँ! मैंने सोचा कि यह उसका भूत होगा। सौभाग्य से इससे पहले कि मैं भय से मर जाता, वह मुझे पहचान गया। उसने मुझसे पूछा, 'आचार्य, हमारे पाँचों पुत्रों और धृष्टद्युम्न को किसने मारा? मुझे सच बताओ। मैं जानता हूँ कि तुम कभी इतना नीचे नहीं गिरोगे।' 'लो!' मैं स्तब्ध रह गया, 'पांच पुत्र? लेकिन क्या तुम सुरक्षित हो?' उसने कहा, 'मैं इतना मूर्ख था कि दुर्योधन को नहीं मारा। यह उसी का काम होगा। वह कहाँ गया है?' मैंने उसे बताया, 'मुझे नहीं पता दुर्योधन कहाँ गया है। तुम्हारे शिविर में आकर हत्या करने वाला अश्वत्थामा था। मैंने और कृतवर्मा दोनों ने इसका विरोध किया और उससे यह काम छोड़ने का आग्रह किया। इस अंधेरे में मेरी आँखें देख नहीं पा रही हैं। कुछ ही देर पहले वह यहाँ था, लेकिन कहीं भाग गया। कृतवर्मा यह कहकर भाग गया कि वह द्वारका जाएगा।' तब भीम ने सभी मशालधारियों को पुकारा, 'यह अश्वत्थामा है। इसे पकड़ो। यही हत्यारा है।' खैर, यह मेरी कहानी है। मुझे नहीं पता कि बाद में क्या हुआ। मैं वहाँ भोर तक रुका रहा और उसके बाद यहाँ आया। रास्ते में कुछ शिकारियों ने मुझे थोड़ा सा खरगोश का मांस दिया, जिससे मुझे राजधानी तक चलने की शक्ति मिली।'

Dhritarashtra did not say a word.

Gandhari was lying, silent.

—•✳•—

अध्याय 82

उन्होंने शिविर में बनी संरचनाओं के बांस के टुकड़ों को उखाड़कर अलग कर दिया। फिर उन्हें शिविर के ऊपरी हिस्से में बने टीले पर ढेर कर दिया गया। इसके बाद उन्होंने छह शवों को एक के बाद एक रख दिया। शवों का दृश्य भयावह था, आधे कटे गले और जमे हुए खून से लटकते सिर। दोपहर होने ही वाली थी। शवों से कुछ ही गज की दूरी पर उन्होंने अश्वत्थामा को पकड़ लिया और बांध दिया। अश्वत्थामा को इसमें कोई संदेह नहीं था कि अभी-अभी बनाई गई चिता न केवल उन छह शवों के लिए थी, बल्कि उसके लिए भी थी। उसने इस भाग्य से बचने की पूरी कोशिश की थी, गिड़गिड़ाया था, रोया था, बड़बड़ाया था और चीख-चीख कर कहा था कि वह उनके गुरु का पुत्र है। अब वह जिंदा जलाए जाने के अपरिहार्य अंत को स्वीकार करने के लिए संघर्ष कर रहा था।

द्रौपदी ने अपने हाथ फैलाकर उन्हें एक ही बार में थाम लिया और वहीं लेट गई। पाँचों पांडव चारों ओर बैठे थे। सुबह से ही शव एक ही स्थिति में थे। द्रौपदी भी अपने बच्चों को उसी तरह थामे लेटी हुई थी। वे पाँचों भी उसी मुद्रा में सिर पर हाथ रखे बैठे थे। उनके पीछे सुभद्रा भी बैठी थीं। युयुधन खड़े थे। इधर-उधर कुछ सैनिक भी दिखाई दे रहे थे। चारों ओर मृतकों का सन्नाटा छाया हुआ था। नीचे बहती नदी भी भयावह रूप से शांत थी। इस भयानक सन्नाटे को तोड़ने के लिए किसी की सख्त जरूरत थी। खड़े कृष्ण ने सन्नाटा तोड़ते हुए सुभद्रा से कहा, "सुभद्रा, द्रौपदी को उठाओ और बिठाओ। उन्हें नीचे ले जाओ। जो कुछ हुआ है उसे सहने के अलावा क्या कोई और रास्ता है? शवों को सड़ने नहीं देना चाहिए। पहले से ही बहे और सूख चुके खून की दुर्गंध आ रही है।"

सुभद्रा द्रौपदी के पास गईं, उनके कंधों को थामकर उन्हें सांत्वना देते हुए बोलीं, "बड़ी बहन, क्या मेरे अभिमन्यु की मृत्यु नहीं हुई? क्या मुझे यह सब सहन नहीं करना पड़ा? आप मुझसे अधिक परिपक्व हैं। कृपया इधर आइए।"

द्रौपदी अपने पुत्रों को गले लगाए लेटी रहीं। कृष्ण उनके पास गए, उनके कंधों को पकड़कर उन्हें एक ऊँची जगह पर बिठाया। वे उनके सामने बैठ गए। उन्होंने सोचा कि उनकी आँखों के आँसू सूख चुके हैं। करुणा से काँपती आवाज़ में कृष्ण ने कहा, "तुम आधी रात से ही इन्हें गले लगाए लेटी हो। भाई-भाई का प्यार और माँ का प्यार, मैं समझता हूँ। लेकिन यह युद्ध है, और तुम इसे कई दिनों से देख रही हो। जब मृत्यु हमारे द्वार पर दस्तक देती है, तो क्या हमें उसका स्वागत नहीं करना चाहिए? तुम्हारे सिवा कौन सी स्त्री इस भयानक सत्य को बेहतर समझ सकती है?"

द्रौपदी चुप रहीं। लेकिन उनकी आँसुओं से भीगी आँखों से पता चल रहा था कि उन्होंने मानवीय गरिमा के साथ मृत्यु के सत्य को स्वीकार कर लिया था। राख से तर आकाश में सन्नाटा छाया हुआ था। आकाश में चार-पाँच गिद्ध मंडरा रहे थे, जो नए शवों को देख रहे थे। उन्होंने अपना सिर उठाकर उन्हें देखा। गिद्ध नीचे आकर दावत उड़ाने के लिए बेचैन लग रहे थे, लेकिन नीचे मौजूद भीड़ ने उन्हें डरा दिया। वे बस इधर-उधर मंडरा रहे थे। कुछ देर तक उन्हें घूरने के बाद द्रौपदी बोलीं, "हाँ, मैंने मृत्यु का स्वागत किया है।"

कृष्ण ने द्रौपदी का चेहरा देखा। शोक से स्तब्ध पाँचों द्रौपदी भी उसे देख रही थीं। सुभद्रा उसके पास बैठी उसके कंधे थामे हुए थी। अचानक द्रौपदी फूट-फूटकर रोने लगी। अंधेरे में उनके मारे जाने की खबर मिलने पर रोने के बाद यह दूसरी बार था जब वह ज़ोर-ज़ोर से रो रही थी। तब से लेकर अब तक वह चुप रही थी, आँसुओं को दबाए हुए थी। अब उसकी आँखें फिर से आँसुओं से भर उठी थीं। उसके पास जाकर और उसके कंधे थामकर कृष्ण ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "यदि तुमने अपरिहार्य को स्वीकार कर लिया है, तो रोओ मत।"

द्रौपदी ने कुछ कड़वाहट से कहा, "कृष्ण, लगता है आपको भी समझ नहीं आ रहा कि मेरे भीतर क्या चल रहा है। जब अभिमन्यु की मृत्यु हुई, तो अर्जुन ने सुभद्रा को गले लगाया और ज़ोर-ज़ोर से रोए, जिससे वह उनके आँसुओं से भीग गई। क्या आपने नहीं देखा? जब घटोत्कच की मृत्यु हुई, तो भीम ने शव को उठाया और उस पर लगे खून के धब्बे अपने आँसुओं से धो दिए। आपने देखा या नहीं? अब मैं अपने इन पाँचों बच्चों के लिए अकेली रो रही हूँ। वहाँ बैठे पाँचों पिताओं ने अपने शरीर

पर गिरकर रोने-धोने की ज़हमत भी नहीं उठाई। और उनमें से किसी ने भी मेरे दुख को वैसे नहीं सहा जैसे अर्जुन ने सुभद्रा को सहा। वे सब मेरे मृत पुत्रों से बराबर दूरी पर बैठे हैं, मानो वे महज़ तमाशा देख रहे हों!"

सन्नाटा गहराता चला गया। कृष्ण ने पाँचों पर नज़र डाली। वे सब अपराधबोध से व्याकुल चेहरों के साथ बैठे थे। भीम अचानक द्रौपदी की ओर दौड़ा और उसे कसकर गले लगा लिया तथा फूट-फूटकर रोने लगा। फिर अर्जुन उसके पास आया। उसके पीछे धर्मराज, नकुल और सहदेव भी आ गए। द्रौपदी ने अचानक खुद को उनसे छुड़ाया और खड़ी हो गई। वे पाँचों जमीन पर बैठे उसे देखते रहे, मूक और असहाय। उसने स्पष्ट और दृढ़ स्वर में कहा, "दुष्ट अश्वत्थामा ने मुझे मेरे पुत्रों से बिछड़ने का दुःख दिया। परन्तु उसने मुझे एक महान सत्य भी दिखाया। कृष्ण, उसे खोल दो। उसे जाने दो और कहीं भी रहने दो। सत्यकी, कृपया शवों को एक-एक करके चिता पर रखो। फिर उन्हें लकड़ियों से ढक दो। चिता जलाने का अधिकार मेरा है। यह कार्य तुम्हें अपने मृत सेनापति के लिए करना है। अन्यथा, क्योंकि वह मेरा बड़ा भाई है, और उसने मेरे पुत्रों का पालन-पोषण अपने पुत्रों के साथ किया था, इसलिए मैं यह कार्य करूंगी। और वह उनके साथ सोते हुए ही मर गया।"

युयुधन उस दृश्य को ध्यान से देख रहा था। द्रौपदी के घने बाल बिखरे हुए थे। उसका सीना गर्व से फूला हुआ था। उसके कंधे झुके हुए थे। उसकी आँखें तिरस्कार से भरी थीं और उसकी निगाहें सीधी थीं। युयुधन ने कल्पना की कि जुए में हार के बाद जब दुस्साना उसे साड़ी से पकड़कर दरबार में घसीटकर लाया था, तब वह शायद ऐसी ही दिख रही होगी—गरिमा, तिरस्कार, गर्व और शक्ति का साक्षात रूप। ज़मीन पर बैठे पाँचों पतियों के चेहरे मृत्यु के मुखौटे जैसे लग रहे थे। भीम, जिसने कल शाम दुर्योधन पर अपनी विजय का ऐलान किया था, अब वहाँ दुबका हुआ, थका हुआ और लगभग मृत समान बैठा था।

—•✳•—

अध्याय 83

कृष्ण ने कहा, "महाराज, अब कठोर शब्दों का कोई लाभ नहीं है। यदि आपने उनके प्रति पिता तुल्य व्यवहार किया होता, तो यह युद्ध न होता। शांति वार्ता के लिए यहाँ आते समय मैंने आपको यही बात कही थी। अभी भी समय है। उनके प्रति पिता तुल्य भाव और भावनाएँ विकसित कीजिए। उनके मन से क्रोध और प्रतिशोध की भावना को पूरी तरह से दूर करना मेरा कर्तव्य होगा। आख़िरकार, युद्ध की कड़वाहट को जीतना विजेता के लिए आसान होता है।"

धृतराष्ट्र पत्थर की शिला की तरह चुपचाप बैठे थे। सुबह की किरणें खिड़की से कमरे में भर रही थीं। कृष्ण ने वही शब्द दोहराए, लेकिन और भी ज़ोर से। अंधे बूढ़े राजा ने समझौतावादी लहजे में कहा, "ठीक है, चलो शांति की बात करते हैं और समझौता कर लेते हैं। वे अपने खांडवप्रस्थ जा सकते हैं।"

कृष्ण, "हस्तिनावती में कौन शासन करेगा?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मेरा पुत्र आएगा। वह नई सेनाएँ लेकर आएगा। मैं उसे शांति वार्ता करने और आपके वचन का सम्मान करने के लिए मना लूँगा।"

कृष्ण ने कहा, "महाराज, आपकी माया की क्षमता अविश्वसनीय लगती है। दुर्योधन मर चुका है। भीम ने सबसे पहले उसकी मृत्यु देखी। उसके बाद मैंने उसकी पहचान की। क्योंकि मैंने प्रत्यक्ष रूप से उसके मृत शरीर की पहचान की है, इसलिए मैं आपको बता रहा हूँ कि वह मर चुका है।"

Dhritarashtra did not weep. Gandhari said, `T knew that ` Kripacharya told us a lie."

गांधारी का हाथ पकड़कर कृष्ण ने कहा, "कृपचार्य ने जो कहा वह कुछ हद तक सही है। बाद के घटनाक्रमों की आपने अपनी हठधर्मिता से अपनी इच्छाओं के अनुरूप व्याख्या की। चलिए इसे अभी छोड़ देते हैं। क्या मैं उन्हें अभी ले आऊं? अब कोई भी उन्हें हस्तिनावती में प्रवेश करने से नहीं रोक सकता। मैं फिर से दोहराता हूं, पृथ्वी पर कोई भी शक्ति उनके आगमन को रोक नहीं सकती। यदि आप घृणा और शत्रुता में लिप्त रहना चाहते हैं, तो आप कैसे जी सकते हैं?"

कुछ देर रुकने के बाद गांधारी ने कहा, "कृष्ण, जाओ और उन्हें ले आओ। मैं एक-एक करके उनके सिर सहलाऊंगी और उनसे अतीत को भूल जाने की विनती करूंगी।"

कृष्ण पांडव बंधुओं को लाने गए। धर्मराज ने बिना देर किए सुलह के लिए सहमति दे दी। अर्जुन भी मान गए। नकुल और सहदेव इससे प्रसन्न नहीं थे, लेकिन उन्होंने अपनी बात पर अड़े नहीं रहे। केवल भीम ने कृष्ण के साथ जाने से इनकार कर दिया। भीम ने अपने मामा पर जमकर प्रहार करते हुए कहा, "जो कुछ भी हुआ है, वह उस अंधे बूढ़े की वजह से हुआ है। युद्ध से पहले भी मैंने कभी उन्हें प्रणाम नहीं किया था। विजय के बाद क्यों करूं? क्या उम्र में बड़ा होना अपने आप सम्मान का हकदार बना देता है?" वह कृष्ण पर बहुत क्रोधित थे। अंत में जब कुंती ने उनसे ऐसा करने का आग्रह किया, तो वह उनके साथ चले गए। कुंती कृष्ण की सलाह पर गईं। द्रौपदी चुपचाप उनके पीछे-पीछे चलीं। विदुर भी उनके साथ गए। धृतराष्ट्र के समक्ष उनके आगमन का क्रम इस प्रकार था: पहले कृष्ण, फिर पांचों भाई, एक के बाद एक, सत्यकी, कुंती, द्रौपदी और अंत में विदुर। नौकरानी ने हाथ के इशारे से विदुर को पुकारा और उनके कान में फुसफुसाते हुए कहा, "चाचा जी, कृपया किसी को मत बताना कि मैंने आपको यह बात बताई है। एक ऐसी बात है जिसके बारे में आपको जानना चाहिए।"

विदुरा ने कहा, "मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि मेरी ज़बान कभी भी वह बात ज़ाहिर करने के लिए ललचाती नहीं जो मेरे कानों तक पहुँचती है! मुझे बताइए।"

सेवक ने कहा, "आप जानते हैं कि महाराजा कृष्ण कुछ देर पहले हमारे वृद्ध महाराजा से मिलने आए थे। उनके जाने के तुरंत बाद, हमारे महाराजा ने एक कटार मंगवाई। उन्होंने उसे अपने कंबल में छिपा लिया है। अपने बच्चों की मृत्यु से क्रोधित होकर वे कुंती के बच्चों को नुकसान पहुँचाने का प्रयास कर सकते हैं।"

विदुर चुपचाप वापस चले गए। फिर उन्होंने कृष्ण को पास आने का इशारा किया और उनके कानों में वह जानकारी फुसफुसाई जो उन्हें दासी से मिली थी। कृष्ण धृतराष्ट्र के दाहिनी ओर पलंग पर बैठ गए। बाईं ओर गांधारी आँखों पर पट्टी बांधे बैठी थीं।

कृष्ण ने कहा, "महाराज, आपके पाँचों पुत्र आ गए हैं। धर्मराज, आइए और अपने पिता के चरणों को स्पर्श कीजिए।"

धर्मराज ने श्रद्धापूर्वक वृद्ध पुरुष के चरणों को छुआ। फिर धृतराष्ट्र ने उनका चेहरा अपने हाथों में लिया और धर्मराज के सिर पर हाथ फेरते हुए उन्हें दीर्घायु का आशीर्वाद दिया। इसके बाद धर्मराज चले गए। तब कृष्ण ने पुकारा, "भीम, आओ।" लेकिन भीम ने तुरंत कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। कृष्ण स्वयं उठे और भीम का हाथ पकड़कर उन्हें अपने पास लाए। कृष्ण ने समझाया, "महाराज, भीम इसलिए संकोच कर रहे हैं क्योंकि उन्हें यकीन नहीं है कि आप उन्हें क्षमा करेंगे या नहीं। कृपया उन्हें क्षमा कर दें और उन्हें गले लगा लें।" फिर वे भीम को वृद्ध पुरुष के चरणों के पास लाए और उन्हें प्रणाम करने को कहा। धृतराष्ट्र का बायां हाथ भीम की पीठ पर फिरा। लेकिन धृतराष्ट्र का दाहिना हाथ, जो कंबल के अंदर चला गया था, बाहर निकलने ही वाला था। कृष्ण ने इस क्षण को भांपते हुए हस्तक्षेप किया। उन्होंने वृद्ध पुरुष की कलाई कसकर पकड़ ली। तब भीम कुछ कदम पीछे हटकर चिल्लाए, "कृष्ण, मैं इस वृद्ध सर्प के स्वभाव को आपसे बेहतर जानता हूँ। इसीलिए मैंने आपके साथ आने से इनकार कर दिया था।"

जल्द ही वहाँ मौजूद सभी लोग समझ गए कि क्या हुआ है। धर्मराज, अर्जुन, नकुल और सहदेव क्रोध से कांपने लगे। धृतराष्ट्र ने गरजते हुए कहा, "कृष्ण, मैं जानता था कि तुम धूर्त हो। मुझे उस व्यक्ति से बदला लेने का अधिकार है जिसने मेरे सौ पुत्रों को मारकर उनका खून पिया है। मेरे मार्ग में आने के लिए तुम पर मेरा श्राप हो। क्या तुम्हें अपने बच्चों को खोने का दर्द पता है? सौ, मेरे सभी सौ पुत्र। मेरे रक्त से जन्मे सौ पुत्र। लगता है कि इस अकेले व्यक्ति ने ही उन सभी को मार डाला। अगर अब दुर्योधन जीवित नहीं है और मर गया है, तो उसे भी इसी व्यक्ति ने मारा होगा। उसके अहंकार को कुचलकर उसे मार डाला होगा। मेरा हाथ छोड़ दो।" वह उठ खड़ा हुआ और आगे बढ़ा। तब तक कृष्ण ने कटार छीनकर विदुर को सौंप दी थी। कृष्ण ने धृतराष्ट्र से शांत स्वर में कहा, "महाराज, आपके पास भीम को देखने के लिए आंखें नहीं हैं। मेरी बात सुनिए। मैं आपको उसका वर्णन करता हूँ। उसका माथा, गाल, ठोड़ी, छाती, कंधे, जांघें, भुजाएँ, टांगें, और वास्तव में, पूरा शरीर घावों से भरा हुआ है, और उनसे निकला खून जम गया है, जिससे उसका शरीर छूने में खुरदरा हो गया है। उसका शरीर कठोर और मोटी चमड़ी वाला है, जिसने बाणों और अन्य हथियारों से हर तरह की चोटें सहन की हैं। आपके दुबले-पतले, बूढ़े हाथ से उस पर कोई खरोंच नहीं आती। आपके हमले का कोई असर नहीं होता। शायद थोड़ा और खून बह जाता। बस इतना ही। लेकिन जैसे ही

आपका हाथ उसकी त्वचा को छूता, वह आपको उठाकर जमीन पर पटक देता। यही उसका स्वभाव है। मैंने उसे नहीं बचाया है। मैंने आपको उससे बचाया है।"

धृतराष्ट्र पलंग पर गिर पड़े। और फूट-फूटकर रोने लगे। जन्म से अंधी उनकी बदसूरत आँखों से आँसू बहने लगे। जब उन्होंने खुद को थोड़ा संभाला, तो बोले, "कृष्ण, भीम से कहो कि मुझे मार डाले। मैं, जिसने सौ पुत्र खो दिए हैं..." कृष्ण ने बीच में हस्तक्षेप करते हुए कहा, "गांधारी, तुमने भी सौ पुत्र खो दिए हैं, क्या तुम पांडवों को क्षमा करोगी? युद्ध उनकी मर्जी से नहीं हुआ था। मुझे सच-सच बताओ कि क्या तुम क्षमा करोगी..." फिर वे पलंग के दूसरी ओर गए, उनका हाथ पकड़ा, उनके पास बैठे और बोले, "देखो, मैं तुम्हारे सबसे बड़े पुत्र दुर्योधन से दो साल छोटा हूँ। तुम्हें मुझे क्षमा कर देना चाहिए।"

गांधारी रोई नहीं। वह चुपचाप और गरिमामयी मुद्रा में बैठी रही। उसने संयमित स्वर में कहा, "सौ पुत्रों की संख्या महाराजा की देन है। यह उनका श्रेय है। लेकिन गांधारी नाम की इस दासी के केवल चौदह पुत्र ही हुए। दामाद का भी निधन हो गया है। मेरा दुःख इतना कम है, महाराजा के दुःख जितना बड़ा नहीं।"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मेरे श्राप में भले ही कोई शक्ति न हो, लेकिन इस देवी की एक आह ही कुंती के इन पुत्रों को बाढ़ में बहा ले जाएगी।"

कृष्ण ने कहा, "देवी गांधारी, मैं आपसे एक अंतरंग, निजी मुद्दे पर चर्चा करने के लिए तरस रहा हूँ। यदि आप मुझे सच बताने को तैयार हों, तो मैं इस पर बात शुरू करूँगा। जीवन में कम से कम एक बार ऐसा अवसर आता है जब सच के सिवा कुछ नहीं बोलना होता, पूरा सच बोलना होता है और उसका सामना करना होता है। वह समय होगा जब न तो छिपाना चलेगा और न ही कोई दिखावा। मुझे लगता है कि अब आपके लिए वह समय आ गया है। क्या आप मुझे सच बताएंगी?"

गांधारी ने कहा, "जी हां। आप पूछ सकते हैं।"

कृष्ण ने कहा, "यदि आप चाहें तो हम दोनों, आप और मैं, दूसरे कमरे में जाकर चर्चा कर सकते हैं।"

गांधारी ने कहा, "पहले मुझे बताओ कि तुम क्या जानना चाहते हो।"

कृष्ण ने कहा, "महाराजा जन्म से अंधे थे। आपने इस संसार से अपनी आँखें हमेशा के लिए क्यों बंद कर लीं?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "वह पति-पत्नी की पूजा में विश्वास रखती हैं। उन्होंने स्वयं उस दृश्य को देखने से इनकार कर दिया जो उनके पति को देखने से वंचित रखा गया

था।"

कृष्ण ने कहा, "महाराज, उसे जवाब देने दीजिए। उसकी अंतरात्मा को बोलने दीजिए।"

गांधारी ने कहा, "सच बोलने से क्या लाभ होता है?"

कृष्ण ने कहा, "तुम भ्रमों का त्याग करो। इससे तुम्हें शांति मिलेगी। इसलिए मैं तुमसे सच बोलने का आग्रह करता हूँ। क्या हम दोनों अगले कमरे में चलें? या हम उनसे बाहर जाने और हमें अकेला छोड़ने का अनुरोध करें?"

गांधारी चुप रही। चटाई पर बैठे सभी लोग बिल्कुल शांत और स्थिर थे।

कृष्णा, "शादी तय होने के बाद तुमने अपनी आंखों पर पट्टी कैसे बांध ली?"

गांधारी ने कहा, "हे कृष्ण, इसे भूल जाइए। पुराने घावों, पुराने दुःखों को फिर से मत कुरेदिए।"

कृष्ण ने कहा, "फिर भी, माँ, हमें बताइए। स्वयं को संभालकर हमें बताइए।"

गांधारी, "ठीक है, अगर आप ज़िद कर रही हैं तो। विवाह तय हो चुका था। मैंने घर से भाग जाने का सोचा था। अगर मैं भाग भी जाती, तो मुझे यकीन था कि भीष्म और उनके सैनिक हमारे शहर को ज़मींदोज़ कर देते, यह आरोप लगाते हुए कि मेरे पिता ने जानबूझकर मुझे छिपाया था। कृष्ण, मुझे पता है कि आपने कई देशों की यात्रा की है। क्या आपने कभी हमारे गांधार देश का दौरा किया है?"

कृष्णा ने कहा, "हां, मैं वहां गया हूं। वहां साल भर खूबसूरत पहाड़ियाँ और हरे-भरे पेड़ रहते हैं।"

गांधारी, "नीला आकाश, कोई न कोई वृक्ष या लता खिलती हुई - हर मौसम में फूल। मीठा पानी। स्वर्ग जैसा स्वाद देने वाले जंगली रसीले बेर। ठंडी जलवायु जहाँ सपने में भी पसीना नहीं आता! क्या इससे भी सुंदर कोई और भूमि है?"

कृष्णा, "नहीं।"

गांधारी ने कहा, "हम तो गरीब लोग हैं। हमारे यहाँ जैसी समतल ज़मीन नहीं है। इसलिए हम वहाँ बैलगाड़ियाँ भर अनाज नहीं उगा सकते। हमारे पास सोना और दूसरी धातुएँ भी कम हैं। पहाड़ी देश में ये सब चीज़ें कैसे मिल सकती हैं? और जहाँ धन-दौलत नहीं, वहाँ बड़ी सेना कैसे हो सकती है? भीष्म ने अपने सैनिकों की एक बड़ी टुकड़ी भेजी। उनके साथ बैलगाड़ियाँ भर अनाज, बर्तन, गहने और आभूषण भी थे। उनके साथ यह संदेश भी था, 'ये मित्रता के प्रतीक हैं। लेकिन अगर तुम मेरे अंधे बेटे को दुल्हन देने से इनकार करते हो, तो ये रही सेना, जो मेरी शत्रुता का

प्रतीक है। और तुम्हारे डर और हमारे आतंक का प्रतीक है।' मेरे पिता डर गए। वे लालची भी हो गए। बेशक, अगर लालच न होता, तो सेना का डर भी न होता। आखिर, अगर पहाड़ी लोग अपने दुर्गम इलाके से छिपकर लड़ते हैं, तो वे मैदानी लोगों के खिलाफ़ ज़बरदस्त प्रतिरोध कर सकते हैं, भले ही उनकी संख्या कम हो। कुरु सेना हमारे पहाड़ी हमले को कब तक सह पाती? और वह भी तुमसे इतनी दूर?"

कृष्ण ने कहा, "बिल्कुल नहीं, ज्यादा समय नहीं लगेगा।"

गांधारी कहती हैं, "पिताजी अपने लालच में बह गए। उन्हीं के सामने मैंने आवेग में आकर अपने ऊपर के वस्त्र से एक पट्टी फाड़ ली और कहा, 'यदि आप मुझे उस अंधे से विवाह कराने पर अड़े हैं, तो मैं कभी उसकी ओर देखूंगी नहीं।' फिर मैंने उस पट्टी से अपनी आँखें कसकर ढक लीं। मेरे इस कृत्य से भी पिताजी का हृदय नहीं पिघला। शायद उन्होंने सोचा होगा कि मैं अपने भाग्य को स्वीकार कर लूंगी, तीन-चार दिन बाद अपनी ज़िद छोड़ दूंगी और पट्टी हटा दूंगी! खैर, उन्होंने मुझे एक पालकी में बिठाया और एक अंधे व्यक्ति की दुल्हन बनाकर इस कुरु देश भेज दिया। मुझे उसमें तब तक ले जाया गया जब तक हम अपनी सीमा तक नहीं पहुँच गए। उसके बाद मुझे एक रथ में बिठाकर हस्तिनावती ले जाया गया। तब तक मैंने कभी रथ नहीं देखा था। लेकिन बाद में, हालांकि मैं कई रथों में बैठी, फिर भी मैंने कभी रथ नहीं देखा। कृष्ण, क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि मैं कितनी प्यारी लड़की थी? मैं पहाड़ियों के स्वच्छ जल में अपना प्रतिबिंब देखती थी, जिसकी स्पष्टता कभी धूमिल नहीं होती थी, और आनंदित हो जाती थी। मेरी सहेलियाँ बुनाई करती थीं..." मेरे चारों ओर स्वप्न-कथाएँ चल रही थीं। खैर, यहीं मेरी सुंदरता, मेरे रूप और आकार की कहानी समाप्त हो गई। अपना वतन छोड़ने के बाद मैंने कभी खुद को नहीं देखा। और मुझे ऐसा पति नसीब नहीं हुआ जो मेरी सुंदरता और तेज को निहार सके। मुझे ऐसा पति मिला जिसे सुंदरता का ज्ञान ही नहीं था। और फिर आगे क्या हुआ? भीष्म इस बात से बेचैन थे कि मैं गर्भवती नहीं हुई थी। मुझे कुछ पता नहीं था। मेरे इस पति को कुछ भी नहीं पता था। बाद में मुझे लगता है कि एक दासी ने उन्हें यौन संबंध के बारे में सब कुछ सिखाया। फिर हम साथ सोए, और मैं एक के बाद एक बच्चे को जन्म देने लगी। और वह भी महल की दासियों के साथ सोए, और वे भी पुत्रों को जन्म देने लगीं। कहते हैं कि वे सौ थे। मुझे नहीं

पता। सूअर के बच्चों को कौन गिन सकता है? मैंने तो केवल चौदह पुत्र और एक पुत्री को जन्म दिया।

कृष्ण ने पूछा, "यहाँ स्थापित होने के बाद आपने आवरण क्यों नहीं हटाया?"

गांधारी, "कृष्ण, मैं जो कहने जा रही हूँ वही सच्चा सत्य है। मैं तुम्हें सीधे-सीधे बता दूँगी। एक बार जब मैं यहाँ आई, तो भीष्म और अन्य लोगों ने मुझे देवी का दर्जा दिया। उन्होंने मेरी प्रशंसा की, मुझे पुकारा, 'पति-भक्ति में समर्पित महान भक्त! इसने अपने पति के साथ अंधापन बाँटने के लिए अपनी दृष्टि का त्याग कर दिया है। यह अपने पति की पूजा करती है। जिस स्थान पर इसके चरण पड़ते हैं वह पवित्र है। जिस भूमि पर यह निवास करती है वह धन और समृद्धि से भर जाएगी, इत्यादि...' उन्होंने मेरी कितनी प्रशंसा की और मेरे चारों ओर एक किंवदंती रच दी! शुरुआत में, ऐसी प्रशंसा मुझे क्रोधित करती थी। मेरा मानना है कि देर-सवेर व्यक्ति को ऐसी प्रशंसा का स्वाद अच्छा लगने लगता है। मुझे इसकी आदत हो गई, मुझे इसमें आनंद आने लगा, और समय बीतने के साथ, मैं इसे खोना नहीं चाहती थी। मैं उस किंवदंती में विश्वास करती थी कि जिस भूमि पर मैं निवास करती हूँ वह समृद्ध है, कि विजय मेरी पक्ष में है। सचमुच विजय! इस युद्ध में, मेरे पुत्र, पोते, मेरे दामाद, सभी मारे गए। पूरी सेना नष्ट हो गई।" इस महल में भुखमरी फैली है। कृष्ण, क्या आप सच जानते हैं? मेरी विधवा बहुएँ, जो मोर्चे से लौटी हैं, चार दिनों से भूखी हैं। अगर मेरा निवास स्थान समृद्ध है, तो यह भुखमरी कैसे हुई? मैं स्वयं अपने द्वारा स्वेच्छा से किए गए इस अंधेपन के पीछे का असली कारण भूल गई, मैं उस पवित्र कथा में डूब गई जो महल के लोगों ने और हस्तिनावती नगर में मुझे बना दी थी। हाँ, इस युद्ध ने कथा के पर्दे को हटा दिया है और नग्न सत्य की क्रूरता को उजागर कर दिया है। ठीक उसी समय और जब मैं सही मनोदशा में थी, आपने मेरे हृदय की गहराई को छुआ। यह आश्चर्यजनक है, है ना, कि अब तक मेरे किसी भी बच्चे ने मुझसे नहीं पूछा, 'माँ, आप इस तरह अंधी क्यों हो गई हैं? कृपया कम से कम हमें देखने के लिए अपनी आँखें खोल लें, कृपया।' जिस तरह आपने स्नेह से मेरा हाथ पकड़कर मुझसे पूछा। मेरी बेटी ने भी नहीं। वे केवल भक्ति से मेरे पैर छूते थे, यह सोचकर कि मेरी पवित्रता मेरे अंधेपन पर आधारित है!

गांधारी ने बोलना बंद कर दिया। कमरे में सन्नाटा छा गया। धृतराष्ट्र दीवार से टेक लगाकर, पैर फैलाकर बैठे रहे।

कुछ देर रुकने के बाद कृष्ण ने पूछा, "माँ, इसका मतलब है कि आपने अपने गांधार के अलावा कोई दूसरा देश नहीं देखा। आपने अपने गांधार के निवासियों के अलावा किसी और जाति को नहीं देखा। जब आपके गर्भ से बच्चा निकला, तो क्या आपको उसे देखने की कोई इच्छा नहीं हुई?"

गांधारी, "बच्चों से मिलने वाला सच्चा आनंद स्पर्श में है, दृष्टि में नहीं। ऐसा नहीं है कि मैं देखना नहीं चाहती थी, लेकिन पति-पूजा की महान साधिका की कथा ने मुझे सम्मोहित कर दिया था! नश्वर देवी होने का भ्रम! कृष्ण, क्या सत्य कभी भ्रम की शक्ति प्राप्त कर सकता है? मुझे पति को न देखने की चिंता नहीं है। लेकिन मुझे इस बात का अफसोस है कि मैं अपने बच्चों को नहीं देख पाई। उनके जन्म के बाद, मैं उन्हें अपने सीने से लगाती और अपना दूध पिलाती थी। देखो, मेरे स्तन जो मेरे बचपन में, जब मैंने अपनी आँखों पर पट्टी नहीं बाँधी थी, आम की तरह गोल, भरे हुए और कसे हुए थे। अब अपने बच्चों को लगातार उनका दूध पिलाने के बाद, वे ढीले पड़ गए हैं। बच्चों के साथ मेरा बस इतना ही संपर्क था। जब वे बड़े हो गए, तो उनका अपनी अंधी माँ से क्या लेना-देना था? मैं उन्हें कौन सी कहानियाँ सुना सकती थी? मेरे गांधार के पर्वतीय झरनों, पर्वतीय धाराओं और पहाड़ियों की स्मृति के अलावा? क्या मैं उन्हें हस्तिनावती और उसके आसपास की नदी और खेतों और वहाँ रहने वाले लोगों के बारे में बता सकती थी? क्या? नौकरानियाँ उनकी माताएँ बन गईं, ठीक वैसे ही जैसे वे मेरे पति की पत्नियाँ बनीं। बेटों के बड़े होने पर वे पत्नियाँ ले आए। उन्हें नौकरानियाँ और राज्य भी मिला। उन्हें सत्ता मिली। वे राज्य के सभी मामलों में तल्लीन हो गए। इन सब में, यह अंधी माँ अकेली रह गई, एकांत के अंधकार में सिमटी हुई। पति ने उसे तभी देखना और उससे बात करना शुरू किया जब वह अपनी जवानी पार कर चुकी थी। युद्ध शुरू होने और उसकी चिंताएँ बढ़ने के बाद ही वह लगातार मेरे साथ रहने लगा। मेरे बच्चों से मुझे बस इतना ही मिला कि वे मुझे पवित्र समझकर सम्मानपूर्वक मेरे पैर छूते थे। बहुओं और नौकरानियों से भी मुझे वैसा ही सम्मान मिला। वही नौकरानियाँ जो मेरे पति को यौन क्रीड़ाओं में लिप्त करती थीं, अब मुझे देवी मानकर श्रद्धापूर्वक मेरे पैर छूने में संकोच नहीं करती थीं। चलो छोड़ो। मैंने उन्हें जन्म दिया, पाला-पोसा, अपना दूध पिलाया। वे बड़े हुए। मुझे विश्वास था कि उनके शब्द न्याय का प्रतीक हैं। उनके अलावा मेरे पास और कौन सा रास्ता था? मैं खुद को बाहरी दुनिया से कैसे जोड़ूँ? खैर, वे बड़े हुए, युद्ध लड़े और अब मर गए। मैंने उनके जीवित रहते उनका रूप-

रंग कभी नहीं देखा। लगता है उन्हें मेरी शारीरिक सुंदरता और आकर्षण विरासत में मिला था। नौकरानियाँ यही कहती थीं। बेशक, उन्होंने मुझे खुश करने के लिए झूठ बोला होगा। कृष्ण, मुझे सच बताओ। क्या मेरे पुत्र, दुर्योधन, दुस्साना, दुर्मार्शना, दुर्मुख और बाकी सब, सुंदर थे? क्या मेरी पुत्री सुंदर थी?" गांधारी सवालों की बौछार करती रहीं। उन्होंने जवाबों के लिए रुकने की ज़हमत नहीं उठाई। उन्होंने अंत में कहा, "माँ के लिए अपने बच्चों की आँखों के सामने मरना बेहतर है। लेकिन मेरे सभी पुत्र मुझसे पहले मर गए। कितना छोटा इतिहास है! उन्हें जन्म देना, उन्हें अपने स्तनों का दूध पिलाना और फिर उनकी मृत्यु का समाचार सुनना! नहीं, मैंने उन्हें कभी नहीं देखा, एक बार भी नहीं।"

फिर गांधारी चुप हो गईं। उनके अंतर्मन की पीड़ा ने फर्श पर बैठे लोगों के मन को भी व्याकुल कर दिया, जो स्वयं मृत्यु के समान सन्नाटे में जकड़े हुए थे। खिड़की से कमरे में प्रवेश करती सूर्य की किरणों में धूल के कण चुपचाप चक्कर लगा रहे थे। तभी उनका ध्यान धृतराष्ट्र की ओर गया, जो जोर-जोर से रो रहे थे। कृष्ण ने पूछा, "महाराज, क्यों?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मेरे सभी पुत्र चले गए। राज्य भी चला गया। और अब तो वह भी मुझे छोड़कर जा रही है।"

गांधारी ने दृढ़ता से कहा, "किसने सहारा देने वाला हाथ हटा लिया? आपने मेरा हाथ कब थामा था? महाराज, इतने वर्षों तक आपके साथ रहते हुए, क्या मैं यह नहीं जानती कि मुझे सहारा देने और मेरी देखभाल करने वाला आपके सिवा कोई नहीं है? यदि आप जंगल में भी भाग जाएं, तो मैं आपका पीछा करूंगी। जी हां, मैं आपके कंबल का किनारा पकड़कर आपका पीछा करूंगी!"

धृतराष्ट्र शांत हो गए।

कृष्ण ने पूछा, "माँ, आप जन्म से अंधी नहीं थीं। अगर आप केवल अपनी आँखों को कपड़े की पट्टी से ढक लें, तो आपकी दृष्टि नहीं चली जाती। कम से कम अब इसे हटाकर आस-पास क्यों नहीं देखतीं?"

गांधारी, "इतने वर्षों के अंधेपन के बाद?"

कृष्णा, "तो क्या हुआ?"

गांधारी ने कहा, "इतने वर्षों के अंधेपन के बाद, कृष्ण, देखने के लिए क्या बचा है?"

कृष्ण ने कहा, "ठीक है, तुम मुझे अपने सामने खड़ा देख सकते हो, महाराजा तुम्हारे बगल में हैं, लोग तुम्हारे सामने बैठे हैं, हस्तिनावती भी, अगर चाहो तो युद्धक्षेत्र भी। युद्धक्षेत्र को देखकर, अगर तुम सीधे उन्हें सूचना दोगे, तो तुम्हारी आँखों के माध्यम से उनका अंधापन दूर हो सकता है।"

गांधारी ने कहा, "वह इसके लिए दासियों की सहायता लेता है।"

कृष्ण ने कहा, "अब तक वह दासियों और अपने पुत्रों की दृष्टि से ही संसार को देखते रहे हैं। तुम भी अपने बच्चों की दृष्टि से ही संसार को देखती रही हो। अब अंत में तुम्हें स्वयं संसार को देखना चाहिए। और अपने द्वारा ही महाराज को संसार का दर्शन कराओ।" फिर कृष्ण ने उसकी आँखों पर बंधी पट्टी हटाने का प्रयास किया।

जैसे ही कृष्ण की उंगलियाँ पट्टी को छूईं, गांधारी ने पट्टी हटाने के उनके प्रयास का ज़ोरदार विरोध किया और ऊँची आवाज़ में पुकारने लगीं। ऐसा लग रहा था मानो वह अपनी आत्म-पहचान की रक्षा के लिए गिड़गिड़ा रही हों। लेकिन कृष्ण ने पट्टी खोल दी और कपड़ा हटा दिया। पर उनकी आँखें बंद थीं। कृष्ण ने उनसे विनती की, "माँ, अपनी आँखें खोलिए। मैं आपसे विनती कर रहा हूँ। आप अंधी नहीं हैं। अपने उन दिनों को याद कीजिए जब आप अपनी आँखों पर पट्टी नहीं बाँधती थीं। वैसे ही आँखें खोलिए जैसे आप नींद से जागने के बाद खोलती थीं।" फिर उन्होंने धीरे से अपनी उंगलियाँ उनकी पलकों पर रखीं। उन्होंने धीरे-धीरे उनकी आँखें खोलीं। छवियाँ आपस में टकराकर एक दृश्य अव्यवस्था पैदा कर गईं। प्रकाश का सामना न कर पाने के कारण उन्होंने तुरंत अपनी पलकें बंद कर लीं।

गांधारी ने कहा, "कृष्ण, मुझे देखने में कठिनाई हो रही है। मेरा बैंड मुझे वापस दे दो।"

कृष्ण ने कहा, "तुम उस बीमार व्यक्ति की तरह हो जिसे ठीक होने के तुरंत बाद चलने में कठिनाई होती है। इसलिए, अब और आँखों पर पट्टी मत बाँधो।" फिर कृष्ण उठे और खिड़की का दरवाजा बंद कर दिया। तेज धूप मंद होकर हल्की रोशनी में बदल गई। गांधारी ने अपनी आँखें फिर से खोलीं। कुछ देर तक पलकें झपकाईं, अंधेरे की जानी-पहचानी ठंडक की जगह तेज रोशनी की गर्मी का सामना करते हुए उसे दर्द का एक तेज झटका लगा। भीतरी पीड़ा थी। अपने शहर में पहली बार आँखों पर पट्टी बाँधते समय जो घृणा, क्रोध और लाचारी उसके मन में

उठी थी, अब पलकें खोलते ही लौट आई। उसका मुँह स्तब्ध रह गया और होंठ काँपने लगे। अब वह देखने के लिए अपनी आँखें खोलने की उतनी ही कोशिश कर रही थी जितनी पहले न देखने के लिए अपनी आँखें बंद करने की। धीरे-धीरे उसकी आँखों में चीजें दिखने लगीं। अवाक होकर वह कमरे में चारों ओर देखने लगी। उसने सामने का दरवाजा, उसके पार का आँगन, वह शेल्फ जहाँ दीपक रखा था, फिर बैठे हुए लोगों का समूह और अपने बगल में बैठे उस व्यक्ति को देखा, जिसके हाथ अभी भी उसके कानों के पास थे। उसने मन ही मन सोचा, "ये कृष्ण ही होंगे?" कई बार पलकें झपकाकर उसने अपनी दृष्टि को ठीक किया। फिर अपनी अवाकता पर आश्चर्यचकित होकर उसने अंत में कृष्ण से पूछा, "कृष्ण, ये लोग कौन हैं?"

कृष्ण ने कहा, "एक-एक करके यहाँ आओ और उन्हें प्रणाम करो। सबसे पहले तुम, धर्मराज।"

जैसे ही वह उठा, उसने उसके पैरों को कसकर पकड़ लिया और उसका चेहरा उसकी आँखों के करीब आ गया। उसने उसका कद-काठी देखा। जब भीम को बुलाया गया, तो उसने भी वही किया। वह उसे अवाक होकर देखती रही। फिर अर्जुन आया, और उसके बाद नकुल और सहदेव। तब कृष्ण ने कहा, "कुंती, तुम भी आओ।"

Gandhari, "What? Is Kunti also here?"

कुंती आगे आईं और उनके कंधे पकड़कर बोलीं, "मैं कुंती हूँ। तुम्हारी छोटी बहन।" गांधारी ने उनके चेहरे को देखा। फिर कुंती ने कहा, "बच्ची, द्रौपदी, आओ और उन्हें प्रणाम करो। गांधारी, ये द्रौपदी हैं।"

गांधारी ने स्नेहपूर्वक अपना हाथ अपने सिर पर फेरा। उसने अपनी उंगलियों से अपने बालों को संवारा। गांधारी की आँखों में आँसू भर आए।

कृष्ण ने कहा, "माँ, आज धूप में बाहर मत निकलो। खिड़कियाँ पूरी तरह से मत खोलो। कुछ समय धुंधले और अंधेरे में बिताने की कोशिश करो। आँखों को देखने की कला का अभ्यास करने दो।"

गांधारी ने दाईं ओर देखा। उसका पति दीवार से टिककर सोफे पर पैर फैलाए बैठा था। सफेद दाढ़ी, गंजा सिर, दांत सही-सलामत। आंखें सूजी हुई थीं। हथेलियों की सफेद नसें उभरी हुई थीं। उसकी निगाहें उस पर टिक गईं। फिर उसने अपने

हाथ उठाए और अपने चेहरे पर बार-बार पड़ती झुर्रियों को महसूस करने के लिए उन्हें अपने चेहरे पर फेरा।

तब धृतराष्ट्र ने पूछा, "गांधारी, क्या अब तुम अपनी आँखों से देख सकती हो?"

गांधारी ने कहा, "जी हां। इस कृष्ण ने बंधन हटा दिया। मैं उन सभी को देख सकती हूं। मैं आपको भी देख सकती हूं।"

धृतराष्ट्र अपना क्रोध और कुंठा नियंत्रित न कर पाने के कारण क्रोधित होकर बोले, "कृष्ण, तुम बड़े पापी हो। मैं तुम्हारी चाल समझ गया हूँ। मेरे बच्चों का विनाश करने के बाद तुम मुझे मेरी पत्नी से अलग करना चाहते हो। गांधारी, देवी के समान पद और गौरव प्राप्त कर चुकी तुम जैसी स्त्री का यह व्यवहार शोभा नहीं देता। इस धूर्त के जाल में मत फँसो जो तुम्हारा गौरव छीनकर तुम्हें सड़क पर चलने वाली एक साधारण स्त्री बना देना चाहता है।"

फिर क्रोध पीड़ा में तब्दील हो गया और वह रोने लगा, उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे।

—•⁕•—

अध्याय 84

उस पूरे दिन गांधारी चुप रहीं। हमेशा की तरह धृतराष्ट्र सोफे पर बैठे थे। कभी दीवार से टेक लगाकर, कभी लेटकर। वह भी थोड़ी देर बैठी रहीं। फिर उठीं और महल के चारों ओर घूमकर उसके कई कमरों का दौरा किया। उन्होंने खंभों, दीवारों, खिड़कियों और फर्श को गौर से देखा। उन्हें लगा कि यह उनके गांधार महल से कहीं अधिक विशाल है, हालांकि उन्हें अपने घर के महल की यादें कुछ धुंधली सी लग रही थीं। तभी हाथ में एक बर्तन लिए एक आदमी आया। वह बूढ़ा,

सांवला, सिर पर बिखरे सफेद बालों वाला और सफेद वस्त्र पहने हुए था। गांधारी उसे पहचान नहीं पाईं।

उसने कहा, "क्या तुम मुझे पहचान नहीं रहे? तुमने मुझे सुबह देखा था।"

गांधारी ने कहा, "ओह, जी हाँ! आप विदुर हैं। मेरी याददाश्त कमजोर है।"

उसने अपने पति को चावल की दलिया से भरे दो मग दिए और खुद भी थोड़ी सी खाई। उसने नौकरानी का इंतज़ार नहीं किया। दोनों को बहुत भूख लगी थी। उसे पति का जल्दी-जल्दी खाना पसंद नहीं आया, लेकिन उसने कुछ नहीं कहा। उसने मग उठाकर दरवाजे के पास रख दिए। फिर वह सोफे पर लेट गई। उसे थकान महसूस हो रही थी। उसे ऐसा लग रहा था जैसे सब कुछ खोने के बाद उसने कुछ पा लिया हो! हालांकि नींद उसे अपनी ओर खींच रही थी, उसने उसे रोकने की कोशिश की और आँखें खोलकर ऊपर की कड़ियों, दीपक वाली अलमारी और दरवाजे को देखने लगी। बार-बार इन चीजों को देखते-देखते वह सो गई, उसे पता ही नहीं चला कि कब वह जागने लगी और कब उसे सपने का एहसास हुआ। वह गहरी नींद सोई। जब वह उठी, तो उसने अपने बगल में धृतराष्ट्र के हल्के खर्राटे सुने। उसे आश्चर्य हुआ कि क्या खर्राटों ने उसे जगाया। वह जाग तो गई थी, लेकिन आँखें बंद थीं। बंद आँखों के साथ, वह अँधेरे की जानी-पहचानी दुनिया में थी। बहुत समय बाद उसे याद आया कि वह अब उस शाश्वत अंधकार की दुनिया को छोड़ चुकी है।

फिर उसने अपनी आँखें खोलीं। उसने कमरा देखा। वह जानती थी कि अगर वह इससे आगे जाए, तो देखने के लिए एक पूरी दुनिया इंतज़ार कर रही है। उसने खिड़कियाँ खोलीं। शाम होने से रोशनी कम हो गई थी या शायद उसकी आँखें अब रोशनी की आदी हो गई थीं, इसलिए उसकी आँखों को तेज़ रोशनी से कोई तकलीफ़ नहीं हुई। उसने खिड़की के बाहर एक इमारत का शिखर देखा। उसने खुद से पूछा, "क्या यह राजमहल नहीं है?" वह कुछ देर खिड़की के पास खड़ी रही, बस बाहर देखती रही, किसी खास चीज़ पर ध्यान नहीं दे रही थी। वह बाहर के आँगन में गई और दीवार के साथ बिछी चटाई पर बैठ गई। वह अकेली बैठी थी। आँगन बहुत बड़ा था। और इसकी विशालता के कारण उसे और भी अकेलापन महसूस हुआ। अचानक उसके मन में एक विचार आया, "अब हम अलग हो गए हैं, मैं और धृतराष्ट्र। अब तक मैंने उन्हें देखा तक नहीं था। मैं महज़ एक पत्नी थी जिसने उन्हें बच्चे दिए, उनके बच्चे। अब वे सभी पुत्र मर चुके हैं। मैंने

अपनी आँखों से देखना शुरू कर दिया है। हमारे बीच हमारी एक जैसी अंधता के अलावा और क्या बंधन था?" उसे ऐसा लगा जैसे उसके बूढ़े शरीर को नए पंख लग गए हों। फिर उसे कुंती याद आई। क्या कद-काठी थी! क्या ही चौड़ा शरीर था! आज भी वह किसी रानी जैसी दिखती थी। शायद इसीलिए उसने इतने शक्तिशाली और वीर पुत्रों को जन्म दिया! लेकिन तभी उसे अचानक याद आया कि उसने अपने पुत्रों को देखने के लिए कभी आँखें नहीं खोली थीं। उसने खुद से पूछा, "वे कैसे दिखते थे?" उसे केवल उनकी आवाज़ें याद थीं। उनका कद, उनका शरीर, उनका रूप, उनका रंग? नहीं, अब वह इन सब से हमेशा के लिए वंचित रह गई थी। अब उसकी आँखों के सामने केवल धर्म, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव की छवि थी। उसे याद आया कि वर्षों पहले पांडु और कुंती को अनाज देने वाले ने क्या कहा था। कितने वर्ष पहले? कम से कम पचास वर्ष। उसके अनुसार पांडु ने कहा था, "इस धर्मराज का जन्म क्षत्रियों के लिए स्वाभाविक जन्म नहीं है। हमें एक ऐसे पुत्र की आवश्यकता है जिसमें क्षत्रिय योद्धा के गुण और सद्गुण हों। मैं एक ऐसा बीज लाऊँगा जिससे ऐसा पुत्र उत्पन्न हो सके। आपको उस बीज से नियोग करना होगा, और तब आप मुझे एक ऐसा पुत्र देंगे जिस पर हम गर्व कर सकें।" गांधारी ने याद करते हुए कहा, "ऐसा लगता है कि पांडु ने ऐसे ही किसी व्यक्ति की खोज की और अंत में हिमालय के उस पार देवलोक में एक देव जाति के सेनापति को पाया, जिसका नाम मरुत्त था।" भीम की छवि गांधारी की आँखों के सामने आ गई। उन्हें लगा जैसे वह उसे फिर से देखना चाहती हों। क्या कद-काठी! क्या चौड़े कंधे! क्या चौड़ा सीना! क्या लंबी और मजबूत भुजाएँ! पूरे युद्ध में क्या वीरता का प्रदर्शन! और अर्जुन, पचास वर्ष की आयु में भी कितने सुंदर! दुस्साना की उम्र के लगभग। पचास वर्ष की आयु में भी, क्या आकर्षक रूप!

गांधारी सोच रही थी कि देवों के राजा को कुंती ने स्वयं नियोग के लिए चुना था या पांडु ने। गांधारी को समझ नहीं आ रहा था कि भीम जैसा प्रतिभाशाली पुत्र होने के बावजूद कुंती ने नियोग क्यों चुना। गांधारी को याद आया कि उसने अपनी दासियों के सामने तीसरी बार नियोग करने के लिए कुंती की नैतिकता पर सवाल उठाए थे। यह याद करके गांधारी को शर्म आ रही थी। नकुल और सहदेव कितने आकर्षक थे! वे तीस वर्ष से कम आयु के लग रहे थे। उनकी लंबाई मध्यम थी, न ज़्यादा लंबी, न ज़्यादा छोटी! गांधारी पाँचों पांडवों को बुलवाकर उन्हें फिर से देखना चाहती थी। अब उसे नियोग प्रणाली की अहमियत समझ आने लगी, जो एक

स्त्री को मनचाहे पुरुष को चुनकर आमंत्रित करने और संतान उत्पन्न करने की सुविधा देती थी। पति से पूछने की भी ज़रूरत नहीं थी। उसने सोचा, "कितना अच्छा होता अगर एक स्त्री पहले अपने मनचाहे बच्चे के रूप, आकार, कद और बनावट का चुनाव कर पाती, फिर उपयुक्त पुरुष की तलाश करती, उससे वीर्य मांगती और फिर अपनी इच्छा के बच्चे को जन्म देती!" उसने मन ही मन कहा, "अपनी इच्छा के बावजूद, मुझे अपनी आँखों पर पट्टी बांधकर अंधा होना पड़ा, एक अंधे पति का बेकार वीर्य ग्रहण करना पड़ा, घटिया संतान को जन्म देना पड़ा और कष्ट भोगना पड़ा। कुंती, तुम अधिक भाग्यशाली और आध्यात्मिक रूप से अधिक गुणी हो। अगर मुझे भी तुम्हारे जैसे अवसर मिलते, तो मैं भी तुम्हारी तरह वीर और बुद्धिमान पुत्रों को जन्म देती। और युद्ध में यह अंतिम हार टाली जा सकती थी।" उसने धृतराष्ट्र को "नौकायन" कहते हुए सुना। दासी वहाँ नहीं थी। शायद वह भूख से मर रही थी इसलिए काम पर नहीं आई, या शायद उसने सोचा कि इस भव्य महल में उसकी मजदूरी देने वाला कोई बचा ही नहीं है! जब उन्हें कोई तत्काल जवाब नहीं मिला, तो धृतराष्ट्र क्रोधित हो गए और चीखने लगे, उनकी आवाज महल के हर कोने में गूंज उठी, "दासी, तुम कहाँ हो?" गांधारी स्वयं उठीं और उनसे पूछा, "तुम्हें क्या चाहिए?"

Dhritarashtra, "Where is the servant-maid?"

गांधारी ने कहा, "वह काम पर नहीं आई है।"

Dhritarashtra, "Is the lamp burning?"

गांधारी ने कहा, "अभी शाम नहीं हुई है।"

धृतराष्ट्र चीखते हुए बोला, "तुम झूठ बोल रहे हो। तुम मुझे अंधेरे में अकेला छोड़ रहे हो।"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। वह बस चुपचाप वहीं खड़ी रही।

धृतराष्ट्र, "क्या तुम अब भी बिना बैंड के हो?"

गांधारी ने कहा, "मैंने इसे सुबह ही फेंक दिया था।"

धृतराष्ट्र, "क्या तुम्हारी आंखें देख सकती हैं?"

Gandhari, "Yes."

वह चुप रहा और बस आह भरी। उसने देखा कि उसकी धंसी हुई आँखें नम हो गईं। उसने उससे पूछा, "तुम क्यों रो रहे हो? किस बात पर रो रहे हो?"

उन्होंने उत्तर दिया, "क्योंकि मेरे सभी पुत्र मर चुके हैं, और तुम मुझसे बहुत दूर, दृश्य के दूसरे संसार में चले गए हो।"

फिर वह दीवार की ओर मुड़ा और कंबल ओढ़ लिया। लेकिन वह वहीं खड़ी रही। वह उससे कुछ कहना चाहती थी, कुछ भी, जिससे उसे यकीन हो जाए कि वह उसे छोड़कर नहीं जा रही है। लेकिन उसे ऐसे शब्द नहीं सूझे। थोड़ी देर बाद उसने पुकारा, "नौकरानी।"

गांधारी ने कहा, "यहाँ कोई नौकरानी नहीं है। तुम्हें क्या चाहिए?"

धृतराष्ट्र ने कहा, "मैं अपना मूत्राशय खाली करना चाहता हूँ।"

गांधारी ने कहा, "आओ। मैं तुम्हें ले चलूँगी।"

उसने अपना हाथ उसके हाथ से छुड़ाते हुए कहा, "नहीं, नहीं।" उसने समझाया, "इसके लिए सिर्फ़ नौकरानी ही ठीक है। मुझे शर्म आ रही है, जैसा कि अब तुम देख सकती हो।" इसके बाद उसने अपना हाथ कंबल में डाल लिया। फिर उसने खुद को कंबल से ढक लिया। वह वहीं खड़ी इंतज़ार करती रही। वह दूसरी तरफ़ नहीं मुड़ा। ज़रा भी नहीं हिला। उसे याद आया कि पेशाब रोकने में उसे कितनी मुश्किल होती थी। वह बाहर आँगन में गई और वहाँ से खुले आँगन में प्रवेश किया। फिर उसने बरामदा पार किया और फिर बाहरी आँगन में गई, यह सोचते हुए कि यह एक बहुत बड़ा महल है। उसने प्राचीरों के सामने वाले बड़े दरवाज़े से प्रवेश किया। उसने प्राचीरों के पार के मैदान को ध्यान से देखा। शाम हो चुकी थी। उसने दरबार के पास किसी को देखा, जो नौकरानी जैसी लग रही थी। उसने उस आकृति को आने का इशारा किया। वह आई। हाँ, वह एक नौकरानी ही थी। उसने अपनी जांघों के नीचे तक कपड़ा नहीं ओढ़ा था, न ही अपना सिर और बाहें ढकी थीं। गांधारी जानती थी कि यह निचली जाति की महिलाओं का पहनावा है।

गांधारी ने पूछा, "क्या तुम महल के नौकर हो?"

महिला ने कहा, "जी हां, महोदया।"

गांधारी ने कहा, "महाराजा तुम्हें बुला रहे हैं। जाओ और देखो कि उन्हें क्या चाहिए।"

गांधारी वहाँ खड़ी होकर पीले वैभव में डूबते सूरज को देख रही थी। लेकिन दरबार भवन की ऊँची इमारत के कारण उसे पूरा नज़ारा नहीं दिख रहा था। उसने सोचा, "काश, वह इमारत बीच में न होती, तो कितना अच्छा होता।" उसे अपने पैतृक गांधार के दिन याद आ गए, जहाँ वह एक पहाड़ी की चोटी से सूर्योदय और

सूर्यास्त देखा करती थी। उसने सोचा, "शादी के बाद औरतें आमतौर पर साल-दो साल में एक बार अपने मायके जाती हैं। लेकिन मैं कभी अपने घर, अपनी जन्मभूमि वापस नहीं गई। अपनी आँखों पर पट्टी बाँधे वहाँ मैं क्या देख पाती? और तो और, मैंने अपने लालची और कायर पिता को फिर कभी न देखने का निश्चय कर लिया था। अगर मैं अब भी वापस जाऊँ, तो वह मेरा गांधार नहीं होगा, मेरे जन्म और बचपन का गांधार नहीं। सारे रिश्ते टूट चुके हैं।" उसकी आँखों में आँसू भर आए। आँसुओं से भरी आँखों से जो कुछ भी उसे दिखाई दे रहा था, वह मानो उसके आँसुओं में भीगा हुआ था।

नौकरानी लौट आई।

गांधारी ने उससे कहा, "देखो। कृपया विदुर के घर जाओ। वहाँ पांडवों के साथ कृष्ण नाम का एक व्यक्ति है। क्या तुम उसे बता दोगी कि मैं उससे मिलना चाहती हूँ?"

नौकर चला गया, मैदान पार किया और फिर बाईं ओर मुड़ गया। तब गांधारी समझ गई कि विदुर का घर उस दिशा में है। ऐसा लगा कि वह मुख्य नगर छोड़कर नदी के किनारे रहने चला गया है। नदी को देखने की तीव्र इच्छा उसके मन में उठी। यह एक बड़ी नदी होगी, न कि उसके पर्वतीय गांधार की छोटी-छोटी नदियों जैसी। तभी उसने दूर क्षितिज में सूर्य को पूरी तरह डूबते देखा। हल्का अंधेरा छा गया था और पूरी तरह अंधेरा होने में थोड़ा समय था। उसने सोचा कि अगर रोशनी नहीं है, तो रात अंधेपन के समान है। उसे हवा ठंडी लगी। वह घर के अंदर चली गई।

कुछ समय बाद कृष्ण आ गए।

कृष्ण ने पूछा, "माँ, आपकी आँखें कैसी हैं?"

गांधारी ने कहा, "मैं सूर्यास्त के समय बाहर थी। इससे मेरी आंखों में हल्का दर्द हुआ।"

कृष्णा ने कहा, "ठीक है, दो दिनों में तुम इससे उबर जाओगे।"

गांधारी ने कहा, "कृष्ण, मैं एक तीव्र इच्छा से ग्रस्त हूँ। हमारी ओर से अब कोई पुरुष नहीं बचा जो मेरी इस इच्छा को पूरा करने में मेरी मदद कर सके। कुंती के पुत्रों से पूछने में मुझे शर्म आ रही है। मुझे लगा कि आप ही सबसे उपयुक्त व्यक्ति हैं। इसीलिए मैंने आपको बुलवाया था।"

कृष्ण ने कहा, "मुझे बताओ कि तुम मुझसे क्या करवाना चाहते हो।"

गांधारी ने कहा, "यदि संभव हो तो मैं कम से कम अपने पुत्रों के शव देखना चाहती हूँ।"

कृष्ण चुप रहे और अपना सिर झुकाए बैठे रहे। उसने कांपती हुई आवाज में पूछा, "क्यों, कृष्ण?"

कृष्ण कहते हैं, "उन स्थानों की पहचान करना संभव है जहाँ लोगों की मृत्यु हुई है। और यहाँ युद्धक्षेत्र में गिद्ध, कुत्ते, भेड़िये और सियार राजाओं और आम सैनिकों के बीच बिना किसी भेद के सभी शवों को चट कर जाते हैं। वे पहचान के सारे निशान मिटा देते हैं। वैसे भी, शव सड़कर एक जैसे हो जाते हैं और उनमें कोई अंतर नहीं रह जाता।"

गांधारी ने कहा, "मैं जानती हूँ। फिर भी मुझे कोशिश करने की तीव्र इच्छा हो रही है। साथ ही, अपनी आँखों से युद्धक्षेत्र को देखने की भी।"

कृष्ण ने उससे वादा किया कि वह अगले दिन सूर्योदय से पहले अपने रथ के साथ आ जाएगा।

—•⁕•—

अध्याय 85

जब गांधारी कड़ाके की ठंड में रथ पर चढ़ रही थी, तभी उसने देखा कि एक और महिला पहले से ही रथ में बैठी हुई है।

गांधारी, "तुम कौन हो?"

कृष्ण ने कहा, "स्मृति और दृष्टि में तालमेल बिठाने में समय लगता है। क्या तुम नहीं देख रहे, यह कुंती है?" फिर कृष्ण ने अपनी आँखों से घोड़ों को आगे बढ़ने का इशारा किया।

रथ हस्तिनावती से निकलकर खेतों से घिरी सड़क पर आगे बढ़ा। गांधारी को चारों ओर का नजारा वीरान और सुनसान लगा। उसका मन भी तनाव में था। उसे कुंती से कुछ शत्रुता महसूस हुई, क्योंकि उसने सोचा, "मैं अपने पुत्रों के शवों की खोज में हूँ। वह जाहिर तौर पर अपने पुत्रों द्वारा मारे गए लोगों के शव देखने जा रही है। और वह भी मेरे साथ!" अचानक गांधारी बोली, "कृष्ण, मैंने अपना मन बदल लिया है। मैं वहाँ नहीं जाना चाहती। चलो वापस चलते हैं।"

लेकिन कृष्ण ने कहा, "खैर, हम चल पड़े हैं। मैं यात्रा के लिए आवश्यक सभी सामान—भोजन और पानी—ले आया हूँ। तुम और कुंती देवरानी-जेठानी हो। बहनें भी हो। मैं उसे तुम्हारे साथ के लिए लाया हूँ। उसने सारी पुरानी दुश्मनी त्याग दी है। मुझे यकीन है, तुमने भी ऐसा ही किया होगा। क्या तुमने किया है?"

गांधारी ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने सोचा कि कृष्ण का दिमाग बहुत तेज है। वे सीधे दूसरे व्यक्ति के अंतर्मन में उतर जाते हैं और वहाँ चल रही बातों का पता लगा लेते हैं।

कुंती ने कहा, "गांधारी, मुझे नहीं पता कि तुम कर्ण के बारे में जानती हो या नहीं। वह तुम्हारी पूजा माँ की तरह करता था।"

गांधारी ने कुंती के चेहरे पर सीधे देखते हुए पूछा, "विदुर ने मुझे बताया था कि वह आपको युद्धक्षेत्र में ले गए थे। कर्ण का चेहरा, लंबी भुजाएँ और ऊँचे कंधे आप जैसे ही थे। विदुर ने ही मुझे उनके बारे में बताया था। मुझे याद है कि उनकी हथेलियाँ, जो मेरे चरणों को छूती थीं, बड़ी और शक्तिशाली थीं। मुझे बस इतना ही प्रत्यक्ष रूप से पता है, बाकी सब मैंने उनके बारे में सुनी-सुनाई बातों से जाना है।"

कुंती ने गांधारी का हाथ थाम लिया। उनकी आँखों में आँसू भर आए। गांधारी की आँखों से भी आँसू बहने लगे। रथ तेज़ी से आगे बढ़ रहा था। कृष्ण चुपचाप एकांत में बैठे रहे। लगभग तीन-चार घंटे बाद उन्होंने एक नदी के किनारे रथ रोका। उन्होंने घोड़ों को पानी पिलाया। फिर कुंती ने अपने साथ लाए हुए पके हुए चावल गांधारी को दे दिए। उन्होंने कृष्ण को एक पैनकेक दिया और स्वयं भी थोड़े चावल खा लिए।

भोजन करने के बाद जब यात्रा फिर से शुरू हुई, तो गांधारी ने कहा, "कुंती, ऐसा लगता है कि जब धृतराष्ट्र का विवाह हुआ, तो तुम इस बात से चिंतित थीं कि यदि तुम्हें पहला पुत्र नहीं हुआ, तो राज्य तुम्हारे हाथ से निकल जाएगा। पांडु भी चिंतित थे और उन्होंने तुम्हें नियोग करने के लिए कहा था। क्या यह सच है? मुझे

और धृतराष्ट्र को इसकी खबर मिली थी। मैं जानती हूँ कि तुम मुझसे ईर्ष्या करती थीं। लेकिन मैं भी तुमसे ईर्ष्या करती थी क्योंकि तुमने पहले पुत्र को जन्म दिया था। वह ईर्ष्या बढ़ती ही गई। विदुर ने मुझे बताया कि अब जब तुम्हारे पुत्र विजयी हो गए हैं, तो तुमने उनकी विजय से विमुख रहना चुना है।"

दोपहर तक वे युद्धक्षेत्र पहुँच गए। अब आकाश में उड़ते और ज़मीन पर बैठे गिद्धों की संख्या कम हो गई थी। कुत्तों और सियारों की संख्या भी घट गई थी। कई जगहों पर शव इस हद तक सड़ चुके थे कि केवल हड्डियाँ ही बची थीं। दुर्गंध काफी कम हो गई थी, लेकिन कुछ जगहों पर दुर्गंध अभी भी बहुत तेज़ थी। कृष्ण उन्हें चारों ओर घुमाते हुए विभिन्न स्थानों पर हुए मुख्य युद्धों के बारे में विस्तार से बताते रहे। जब वे एक विशेष क्षेत्र में पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि सैकड़ों लोग पूरे मैदान की तलाशी ले रहे थे। वे शवों को लुढ़का रहे थे और रथों को एक तरफ धकेल रहे थे। गांधारी ने पूछा, "कृष्ण, ये लोग क्या कर रहे हैं?"

कृष्ण ने कहा, "यहीं पर सबसे बड़ा युद्ध हुआ था। जिस दिन द्रोण की मृत्यु हुई, या शायद जिस दिन जयद्रथ की मृत्यु हुई, उसी दिन कई अन्य प्रमुख व्यक्ति भी मारे गए। ये लोग आभूषण, वस्त्र, धातु के टुकड़े और घोड़ों और रथों के सजावटी हिस्सों की तलाश कर रहे हैं।"

गांधारी, "वे कौन हैं?"

कृष्ण ने कहा, "आसपास के गांवों के कुछ लोग। वे अवश्य ही आपके कुरु राज्य की प्रजा होंगे। वे व्यवस्थित रूप से एक-एक करके युद्ध के मैदानों की खोज कर रहे हैं।"

गांधारी उन्हें ध्यान से देखती रही। दोपहर की तेज गर्मी में उसकी आँखों में हल्का दर्द हो रहा था। फिर भी, उसे सब कुछ साफ दिखाई दे रहा था। उसने देखा कि वे लाशों को लात मार रहे थे, उन्हें लुढ़का रहे थे और उनके कपड़े और गहने उतार रहे थे, मृतकों के प्रति कोई सम्मान नहीं दिखा रहे थे। उनमें से कुछ कान काटकर बालियाँ निकालने में व्यस्त थे। एक व्यक्ति ने एक लाश के सिर से मुकुट उतार लिया था और उसकी जाँच कर रहा था। दूसरा एक मरे हुए घोड़े के गले से गहने निकालने में लगा हुआ था।

गांधारी ने पूछा, "कृष्ण, जब हम महल में मृतकों का शोक मनाते हैं, तो हमारी प्रजा मृतकों से वस्तुएँ छीनने में व्यस्त दिखाई देती है, मानो उनका हमारे शोक से कोई संबंध ही न हो। क्या यह सब ठीक है?"

कृष्ण ने कहा, "उन्होंने युद्ध में अपने सगे-संबंधियों को भी खो दिया है।"

रथ के चलने पर गांधारी की निगाहें उस दृश्य से हट नहीं रही थीं। फिर उन्होंने गहरी आह भरते हुए कहा, "कृष्ण, आप सही कह रहे हैं। यहाँ किसी भी मृत व्यक्ति की पहचान नहीं हो सकती। मुझे नहीं लगता कि मुझे मेरे पुत्र मिलेंगे। चलिए वापस चलते हैं।"

कृष्ण ने रथ को वापस मोड़ दिया।

वापसी यात्रा में गांधारी थक गई थीं। कुंती भी थक गई थीं। किसी ने कुछ नहीं कहा। चलते रथ में दोनों स्त्रियाँ एक-दूसरे के बगल में लेट गईं। कृष्ण रथ चलाने में मग्न थे। घोड़े भी थक गए थे। कृष्ण को लगा कि गांधारी डर के मारे कई बार जाग गईं। इसलिए उन्होंने ध्यान से उन्हें देखना शुरू किया। वास्तव में, उन्होंने पाया कि वह डर से कांप रही थीं। शायद उन्हें बुरे सपने आ रहे थे, उन्होंने सोचा। रास्ते में, उन्होंने एक नदी के पास रथ रोका और घोड़ों को पानी पिलाया। जब वे घोड़ों को खोल रहे थे, तब वह जाग गईं। घोड़ों के पानी पीने के बाद, यात्रा फिर से शुरू हुई। उन्हें भी नींद आने लगी। कुछ दूर जाने के बाद, उनकी नींद उड़ी और उन्होंने पानी पीने के लिए थोड़ी देर के लिए रथ रोका। जब वे पानी का घड़ा उठाने के लिए मुड़े, तो गांधारी को बैठे देखकर आश्चर्यचकित रह गए। उनकी दोनों आँखें खुली थीं और पलकें फड़फड़ा रही थीं। लेकिन उनके चेहरे के भाव से ऐसा लग रहा था मानो वह अंधी हों, देख न पा रही हों। कृष्ण उन्हें देखते रहे। उसने अपने हाथ ऊपर उठाए, अपनी आँखों को धीरे से दबाया और देखने के लिए अपनी पलकें खोलीं।

कृष्णा ने पूछा, "अरे, क्या हुआ?"

गांधारी ने कहा, "मैं अचानक जाग गई। मैं उठकर बैठ गई और अपनी आँखें खोलीं। मुझे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। अब मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं सचमुच अंधी हो गई हूँ।"

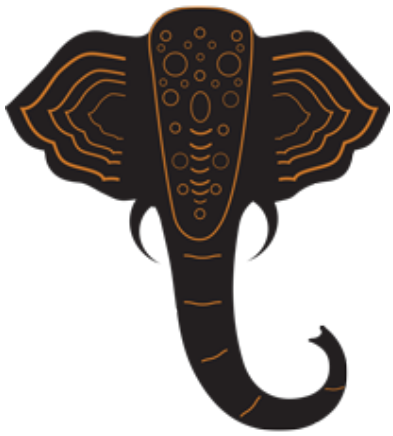
कुंती सोती रही। कृष्ण चुपचाप बैठे रहे। घोड़े अपने आप सरपट दौड़ रहे थे। कुछ देर रुकने के बाद गांधारी बोलीं, "मेरा मन कहता है कि मेरी दृष्टि निश्चित रूप से वापस नहीं आएगी। मैं धृतराष्ट्र की तरह ही अंधी रहूंगी। इससे मुझे एक प्रकार की मानसिक शांति मिलती है।"

कृष्ण के पास कहने के लिए कोई शब्द नहीं थे। वह बस उसे घूरते रहे। उन्हें लगा जैसे वह यंत्रवत अपने गले में एक ऐसा सिर ढो रही हो जिस पर मृत्यु का

मुखौटा लगा हो—उसके गाल, नाक, मुंह, ठोड़ी किसी भी जीवित प्राणी की भावना को व्यक्त करने में असमर्थ थे।

—•✳•—

भाग चौदह



अध्याय
86

आसमान में काले बादल छाए हुए थे। ऐसा लग रहा था मानो वे आसमान को ऊंचे पेड़ों के स्तर तक खींच रहे हों। हर कोई आसमान की ओर सिर उठाए देख रहा था, मानो उन्हें यकीन हो कि उस दिन उन पर शीत ऋतु की बारिश बरसेगी। विदुर के घर के एक कोने में, अभिमन्यु की विधवा उत्तरे आधी रात से प्रसव पीड़ा से तड़प रही थी। अभी सुबह ही हुई थी। कुंती अकेली थी। विदुर ने दो कुशल दाइयों को बुलवाया। धर्मराज, जिनका अभी तक औपचारिक रूप से सिंहासनारोहण नहीं हुआ था, आगंतुकों का स्वागत करने के लिए राजमहल में एक आसन पर बैठे थे। आए हुए तीन लोगों में से, जो सबसे आगे था, उसने महाराजा को आशीर्वाद दिया और फिर बैठ गया। उसने कहा, "मेरा नाम पुलहा है। मैं कृष्ण द्वैपायन के आश्रम का प्रबंधक हूं। वे दोनों तत्वज्ञानी हैं, सत्य की खोज में लीन हैं।" धर्मराज तुरंत खड़े हो गए और अतिथि के स्वागत में दही, घी, पानी, शहद और चीनी से बना पारंपरिक दलिया बनाने का आदेश दिया। उन्होंने उनका अभिवादन करते हुए पूछा, "वेदों के परम गुरु, हमारे दादा, महान ऋषि द्वैपायन कैसे हैं?" बाहर हल्की बारिश हो रही थी, जिसमें भीगी हुई दासियाँ दौड़कर कमरे में आईं। बाहर गाँव वाले आसमान को देखने के लिए निकल रहे थे, जिसने घने काले बादलों से उन्हें बहुत कुछ देने का वादा किया था, लेकिन हल्की बारिश से उन्हें निराश कर दिया। बादलों से घिरे, बारिश रहित आसमान ने उमस भरा मौसम बना दिया था, और लोग अपने कंबल फेंककर खुले में आ गए और चिल्लाने लगे, "बारिश, बारिश, हमें बारिश चाहिए!" नीला ने पूछा, "महाराज, जब मैं इस रास्ते से गुजर रही थी, तो मैंने पत्थरों की एक कतार देखी। क्या वह कतार इस तरफ राक्षसों की भूमि से सीमा बनाती है?" ये शब्द भीम के कानों तक तो पहुँचे, लेकिन उनके अंतर्मन पर कोई खास असर नहीं हुआ। भीम को पूरा यकीन था कि यहीं से उन्होंने नदी पार की थी। तीस साल पहले की बात थी, और उसकी याददाश्त काफी धुंधली थी। आखिर उस खतरनाक स्थिति में उसके पास इतनी सूझबूझ कहाँ थी कि वह किसी जगह की पहचान करने के लिए आस-पास के निशानों को देख और याद कर सके? भीमा को याद आया, "मैं छह महीने पहले ही उस रास्ते से गया था।" इस याद से उसे शर्मिंदगी महसूस हुई। "उसने मेरे माँगने से पहले ही मुझे अपना बेटा दे दिया था। उसने कहा था कि उसके दूसरे बेटे भी मेरे ही हैं क्योंकि उसने दोबारा शादी नहीं की थी।"

अब मैं कैसे वापस जाकर उसके सामने सिर उठाकर खड़ा हो सकता हूँ, कामकतनकती के सामने? अगर वह मुझसे पूछे कि मैंने उसके पति के साथ क्या किया? तो इससे न केवल शर्मिंदगी होगी, बल्कि भीतर एक भयानक पीड़ा भी होगी। आंतरिक व्यथा ने इतना मानसिक भ्रम पैदा कर दिया था कि वह निश्चित रूप से रास्ता नहीं देख पा रहा था। वह सोच रहा था कि क्या उन्हें सीधे दक्षिण की ओर जाना चाहिए या शायद थोड़ा पूर्व की ओर मुड़ना चाहिए। उसी समय घोड़ा रुक गया, हिलने से इनकार कर दिया। नीला का घोड़ा भी रुक गया। क्या घोड़ों को बाघ या सूअर की उपस्थिति का आभास हुआ? भीम ने कहा, "नीला, मेरा धनुष तैयार करो। घोड़ों ने अपने पैर बिल्कुल नहीं उठाए।" तब नीला ने इशारा करते हुए कहा, "महाराजा, वहाँ देखिए, जंगल। घोड़े आग की गंध से रुक गए। देखिए, बाईं ओर लपटें, दाईं ओर लपटें, पूरा जंगल। हवा यहाँ से जंगल की ओर बह रही है।" नीला की बात सुनकर भीम का हृदय बैठ गया। उसने कहा, "शीत ऋतु में जंगल में आग कैसे लग सकती है?" किसी ने जानबूझकर जंगल में आग लगाई होगी। शायद जंगली जानवरों को डराने के लिए या मधुमक्खियों को धुएं से भगाने के लिए। फिर आग फैल गई होगी... भीम उस दृश्य को टकटकी लगाकर देखता रहा। आग से उठता धुआं मात्र ही नहीं था, बल्कि आकाश में छाए काले बादल धुएं के आभास को और भी बढ़ा रहे थे। भीम को लगा कि बादल शीत ऋतु की बारिश की संभावना का संकेत दे रहे हैं। वह इस सवाल से चिंतित था: "कर्ण ने घटोत्कच को क्यों मारा, जो वास्तव में किसी और से लड़ रहा था, जबकि वह अच्छी तरह जानता था कि वह उसके छोटे भाई का पुत्र था? क्या उसने मुझे पास ही जमीन पर गिरा हुआ नहीं देखा?" या उसने मुझ पर हमला इसलिए नहीं किया क्योंकि मैं उसका छोटा भाई था?” आसमान में उठता धुआँ उसे अपने बेटे घटोत्कच के शव की याद दिला रहा था, जो जलती हुई लकड़ियों पर पड़ा था और उसके शरीर से पिघली हुई चर्बी टपक रही थी। वह सोच रहा था कि क्या उसकी मृत्यु की खबर सालकटंकति तक पहुँच चुकी है या उसे पहली बार उसे यह दुखद खबर सुनाने का भयानक काम करना है। लगभग यंत्रवत ही वह घोड़े से उतर गया। उसने नीला से कहा, “तुम यहीं रुको, दोनों घोड़ों को थामे रहो। धनुष-बाण तैयार रखो और चौकस रहो। मैं जाकर देखता हूँ कि वहाँ क्या हो रहा है।” नीला के जवाब का इंतज़ार किए बिना ही वह चल पड़ा, क्योंकि धुआँ आसमान में बहुत ऊँचा उठ रहा था। लेकिन आसमान काले बादलों से भरा हुआ था। कुछ किसान, जिन्हें खेती में कोई

दिलचस्पी नहीं थी, बारिश के प्रति उदासीन थे। लेकिन जंगली जड़ों और बेरों को भी उगने के लिए बारिश की ज़रूरत होती है। कुछ लोग, बारिश की ज़रूरत का यह स्पष्टीकरण सुनकर, बारिश के लिए चिल्लाने लगे।

धर्मराज ने पुलहा से कहा, "दुर्योधन ने बहुत से कुकर्म किए हैं। मेरे शासनकाल में ऋषियों के आश्रमों को सर्वोच्च सम्मान और पूर्ण सहायता दी जाएगी। भविष्य में आपको आश्रम और उसके समुदाय के भरण-पोषण के लिए कृषि करने की आवश्यकता नहीं होगी। आपको पशुपालन भी नहीं करना पड़ेगा। हम राजकोष के भंडार से आपको आवश्यक अनाज, वस्त्र और अन्य वस्तुएँ उपलब्ध कराएँगे।" पुलहा प्रसन्न हुआ। तब धर्मराज ने आगे कहा, "परन्तु अभी हमारा खजाना खाली है। राजकोष में महल के उपयोग के लिए भी कोई भंडार नहीं है। स्थिति सुधरते ही मैं स्वयं भोजन सामग्री लेकर आश्रम आऊँगा और स्वयं महान ऋषि से वैदिक ज्ञान प्राप्त करूँगा।" दो नास्तिकों में से एक, वृष ने बीच में हस्तक्षेप करते हुए कहा, "महाराजा की उदारता बहुत महान है। लेकिन आश्रम को राजघराने के संसाधनों से भोजन-पानी की आपूर्ति की आवश्यकता नहीं है। हमें पहले की तरह अपनी ज़मीन चाहिए, ताकि हम अपनी ज़रूरतों के लिए फसल उगा सकें, गौशालाएँ और गायें रख सकें। सबसे बढ़कर, यह स्पष्ट आश्वासन चाहिए कि राजा आश्रम की भूमि में अपना अधिकार नहीं बढ़ाएगा। राजा को हमें आश्वस्त करना चाहिए कि किसी भी परिस्थिति में वह हमारी शांति और स्वतंत्रता का उल्लंघन नहीं करेगा।" धर्मराज इस मांग का अर्थ नहीं समझ पाए और उन्होंने पूछा, "आपका क्या मतलब है?" वृष ने समझाया, "इसका अर्थ है कि आश्रम किसी भी रूप में राजघराने के नियंत्रण में नहीं होना चाहिए। आश्रम को राजा को उनकी गलतियों के बारे में बताने और उन्हें सही आचरण के बारे में सलाह देने की स्थिति में होना चाहिए। आश्रमों को वह स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए जो राज्य के किसी भी हिस्से को नहीं दी गई है।" शहरों के लोग बारिश के आने का बेसब्री से इंतज़ार कर रहे थे क्योंकि इसका पानी सड़कों को साफ़ कर देगा और उन पर फैली सारी गंदगी और कूड़ा-करकट बहा ले जाएगा। पहले कुछ बूँदें गिरीं, फिर जल्दी ही बारिश तेज़ हो गई। देखते ही देखते मूसलाधार बारिश शुरू हो गई। सर्दियों के मौसम में यह असामान्य रूप से तेज़ बारिश थी। ओले ज़मीन पर कंकड़ों की तरह गिरे। भीम ने इसका स्वागत किया। उन्हें लगा कि इससे जंगल की आग ज़रूर बुझ जाएगी। उन्होंने बारिश से कहा, "तुम सही समय पर आई हो। वरना यह हरी-भरी हरियाली जल जाती। देखो,

आग इस तेज़ बारिश से कैसे लड़ रही है!" वह एक पेड़ की छाँव में बैठकर बारिश और आग को आपस में लड़ते देख रहे थे। भीम की चिंता धीरे-धीरे कम होने लगी। बिना दाँतों वाले बूढ़े लोगों ने कहा, "लोगों के बढ़ते पापों ने बारिश को समय पर आने से रोक दिया है। कम से कम आज बारिश हो रही है, हमारे पूर्वजों के पुण्य कर्मों के फलस्वरूप।" जंगल में कहीं और, हिरण्यवती अपनी बाँस की झोपड़ी से बाहर भागी और जब वह उल्टी रोक नहीं पाई तो उसे उल्टी करने की कोशिश की। उसके नाग पति, जो उसके पीछे-पीछे आया था, ने धीरे-धीरे उसकी पीठ की मालिश करना शुरू कर दिया। उसे पहले गुस्सा आया, फिर हंसी आने लगी, और हंसी की इच्छा ने उसके गुस्से को और बढ़ा दिया। उसने इतनी ज़ोर से उल्टी की कि पास की झोपड़ियों में रहने वाली औरतें परेशान हो गईं। वे सब बाहर आईं और हिरण्यवती के चारों ओर नाचने लगीं। दूसरी जगह पर दाइयों ने कुंती से कहा, "आधे दिन, एक-दो दिन की पीड़ा के बाद प्रसव होगा। क्या ऐसा ही नहीं है?"

गर्मी पैदा करने के लिए उन्होंने आग जलाई। घास के बिस्तर पर उन्होंने एक कंबल बिछाया। ऊँचे पेड़ों की शाखाओं में जमी पानी की बूँदें बारिश जैसी आवाज़ करती हुई गिरीं। भीगी हुई मिट्टी से मिट्टी की खुशबू आ रही थी। धर्मराज ने पूछा, "तुम क्या सोचते हो? क्या धरती पर एक ही शासक होना चाहिए या दो?" दूसरे नास्तिक, अनारण्य ने तुरंत उत्तर दिया, "ब्राह्मणों के लिए, एकमात्र शासक भगवान बुद्ध हैं। ये लोग कहते हैं कि धरती के शासक का उन पर कोई अधिकार नहीं है। लेकिन हमें देवताओं या पवित्र ग्रंथों या शास्त्रों में कोई विश्वास नहीं है। हमारा एकमात्र तर्क यह है कि सत्य की खोज करने वालों को अपनी दैनिक जीविका के लिए राजसी ऋण लेने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।" बाहर बिजली चमकी। बारिश की कामना और आशा करते हुए, धर्मराज ने खिड़की से बाहर देखा। पुलहा ने बारिश के लिए प्रार्थना करते हुए पवित्र मंत्र का पाठ किया। दोनों नास्तिक, वृष और अनारण्य, हँस पड़े। इससे पुलहा क्रोधित हो गया। अचानक, समुद्र की लहरें रेतीले किनारे से टकरा उठीं। आकाश में काले बादल घने हो गए। गंगा के किनारे बैठे अर्जुन पानी में अपनी परछाई को निहार रहे थे। हालांकि उनके घाव भर चुके थे और बारिश की बूंदों से पानी में परछाई हिल रही थी, फिर भी अर्जुन को पुराने घावों के निशान दिखाई दे रहे थे। नदी किनारे उगे जोन्दु पौधों के समूह की सरसराहट टीले पर बने घर की ऊपरी मंजिल पर बैठी कुंती के कानों में गूंज रही

थी। अर्जुन को याद आया कि आंगन के ऊपर वाले कमरे की दीवार पर टिकाए गए उनके लंबे धातु के धनुष की चमक फीकी पड़ चुकी थी।

यह सोचकर कि धनुष को बारिश में धोने से उसकी चमक वापस आ जाएगी, वह उसे लाने के लिए सीढ़ियाँ चढ़ गया और फिर उसे बाहर सीढ़ी पर बारिश में रख दिया। पुलहा ने धर्मराज से कहा, "महाराज, इन दोनों ने किसानों को राजा द्वारा अनाज की लूट का विरोध करने के लिए संगठित करने में हमारी बहुत मदद की। इन्होंने सैनिकों पर आक्रमण करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे हम अपने अनाज का कुछ हिस्सा राजा के आदमियों द्वारा जब्त होने से बचा सके। अन्यथा, ये हमारे अनुरूप नहीं हैं। इनमें भक्ति और समर्पण की कमी है।" धर्मराज ने शांत चेहरे लेकिन क्रोधित स्वर में पूछा, "क्या वे धर्म के प्रति मेरे समर्पण में विश्वास नहीं करते?" वृषा ने उनसे सीधे पूछा, "आप क्रोधित हैं, महाराज। क्या आपको लगता है कि अविश्वासी होने का आरोप लगना अपमानजनक है?" बाहर गरज हुई। एक पल के लिए नाग के समान बिजली ने आकाश को रोशन कर दिया। नदी के किनारे दो गाड़ियाँ चटाई से ढकी खड़ी थीं, हालाँकि बारिश हो रही थी। एक गाड़ी में बहू प्रसव पीड़ा से तड़प रही थी, सास उसके पास बैठी उसकी कमर को धीरे-धीरे सहला रही थी। दूसरी गाड़ी में दादाजी अपने पोते-पोतियों के साथ दुबके बैठे थे। बूढ़ी औरत ने अपने पति को पुकारा, "वह लोहार की दुकान पर काम कर रहे होंगे। जाओ और उन्हें बुला लाओ।" बूढ़ा आदमी हल्की बारिश में दौड़ पड़ा। कृष्ण समुद्र को निहार रहे थे और लहरें पहाड़ों की तरह ऊंची उठ रही थीं। धर्मराज ने आदेश दिया, "पहरेदार, जल्दी करो और चाचा विदुर को यहाँ ले आओ। अगर बारिश तेज हो जाए, तो उनसे कहना कि वे कंबल ओढ़कर आएं।"

सुभद्रा ने बगल के कमरे में प्रसव पीड़ा से तड़पती अपनी बहू की चीखें सुनकर अपने पुत्र अभिमन्यु के बचपन का रूप याद कर लिया। "हमारे जंगल में आग लग गई है, यह सर्दी के मौसम में चारों ओर फैल रही है," चिल्लाते हुए, पुरुष बाण लिए और महिलाएं पीठ पर बच्चे लिए उत्तर की ओर जा रही थीं, यह कहते हुए, "उत्तर ही सबसे अच्छा है, क्योंकि वहां आग नहीं लगती।" महिलाएं भी बाण लिए हुए थीं। अर्जुन ने उनसे पूछा, "हिरण्यवती, क्या तुमने तीरंदाजी नहीं सीखी?" उन्होंने उत्तर दिया, "हमारे जंगल में कभी आग नहीं लगी।" चारों ओर धुएं की गंध थी। सूखे पत्ते चलते पैरों के नीचे चटक रहे थे। कुछ बूँदें अभी भी गिर रही थीं। तेजी से गिरती बारिश की बूँदें नदी के पानी की सतह को चीर रही थीं। दाईं ओर दूर द्रौपदी खड़ी

थीं। अर्जुन ने उन्हें पुकारा, "द्रौपदी, तुम बारिश में इस तरह क्यों खड़ी हो? यह सर्दी की बारिश है। कृपया घर जाओ।" उनकी प्रतिक्रिया यह थी कि उन्होंने पीछे मुड़कर भी नहीं देखा। वह ऊपर बादलों की तरह गहरे रंग की नदी को लगातार घूरती रही। उसके चेहरे पर उदासीनता के भाव थे।

अर्जुन बड़ी मुश्किल से सीढ़ियाँ चढ़कर आँगन में बैठ गए। उनकी साँस फूल रही थी। कृष्ण के मन में विपरीत दिशा से लहरें उठ रही थीं। विदुर हाथी घास से बुने कंबल को ओढ़कर महल के लिए निकल पड़े। अर्जुन का धातु का धनुष भीग गया। धनुष को भीगते देख अर्जुन ने सामने वाले आँगन में बैठी सुभद्रा को नहीं देखा। अर्जुन ने आह भरी। कुंती नवजात शिशु की पहली रोने की आवाज़ सुनने के लिए उत्सुक थीं। बारिश अब मूसलाधार हो गई, उसकी आवाज़ चारों ओर गूंज रही थी। मूसलाधार बारिश में धातु का कारीगर दौड़ता हुआ आया। फिर उसने गाड़ी के आवरण में एक छोटी सी दरार से झाँका। उसकी माँ ने उससे कहा, "अंदर का दृश्य मत देखो। प्रसव पीड़ा है। कहीं जाओ और एक मग भर गर्म ताड़ी ले आओ।" वह फिर से अपने नए काम के लिए दौड़ पड़ा। नीला ने भीम से कहा, "महाराज, यह ऐसी बारिश नहीं है जो जल्द ही रुक जाएगी। मैंने सर्दियों में इससे पहले कभी इतनी तेज़, गर्जना करती बारिश नहीं देखी। हम यहाँ फँस गए हैं और अब यहाँ से निकल नहीं सकते।" दोनों घोड़े ठंड से काँप रहे थे। बारिश की बूँदें गेंदों जितनी बड़ी हो गई थीं। साथ ही ओले भी पड़ रहे थे। अचानक भीम के भीतर से कुछ उमड़ पड़ा। उसने नीला से कहा, "नीला, मुझे ठंड वगैरह से कोई फर्क नहीं पड़ता। कंबल ओढ़कर मैं बारिश में दौड़ सकता हूँ। अब मुझे दिशा का बेहतर ज्ञान है। तुम यहीं रहो।" फिर उसने अपना सिर, कंधे और पीठ काले कंबल से ढक लिया और अपने चमड़े के जूतों के फीते बाँध लिए। वह पानी में चलते हुए चला गया।

कृष्ण अकेले ही लहरों को निहारते रहे। कृतवर्मा ने कृष्ण से कहा, “क्या तुम्हारे अर्जुन ने छल से भूरिश्रवा का वध नहीं किया था? हे कृष्ण, क्या तुमने शत्रुओं का साथ देकर हमारी यादव सेना के विनाश में सहायता नहीं की थी?” कृष्ण ने उसे रोकने का प्रयास किया, लेकिन युयुधन कृतवर्मा पर टूट पड़ा। कृतवर्मा ने कहा, “कृष्ण, क्या अभिमन्यु ने, मेरी पुत्री वत्सला का विवाह न करने के प्रतिशोध में, उसके पति लक्षणा का वध करके उसे विधवा नहीं बना दिया था? इसलिए, अभिमन्यु को मारना हमारा अधिकार था, क्योंकि उसने उस घर को हानि पहुँचाई

जिसने उसे भोजन दिया।” कृष्ण बलराम के चेहरे को निहारते रहे। बलराम कृष्ण पर चिल्लाए, “तुम मेरे चेहरे को क्यों निहार रहे हो, हे छल करने वाले?” विदेश से मंगाई गई शराब के नशे से बलराम का चेहरा लाल हो गया था। द्रौपदी धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़ीं। उनके बिखरे बालों से पानी टपक रहा था। टपकते पानी से भीगे चेहरे पर अकेलापन स्पष्ट झलक रहा था। अर्जुन नदी को निहार रहे थे। काले बादलों से गिरती सफेद बारिश ने नदी के काले पानी को चीर दिया। सूत बस्ती की औरतें, जो बारिश लाने वाले बादलों को देखने के लिए बाहर आई थीं, अचानक पेट में दर्द से बीमार हो गईं और वहीं बैठकर उल्टी कर दी। एक बूढ़ी औरत चिल्लाई, "तुम्हारे गर्भ में एक साथ सौ बच्चे होंगे! मैं तुम्हारी उल्टी करने की ताकत से समझ सकती हूँ!" द्रौपदी बारिश में खड़ी रही, उसके बालों से पानी टपक रहा था। भीम ने कहा, "हाँ, यही वह शिला है जहाँ मैंने हिडिम्बा को मारा था, और जहाँ सालकटंकति ने मुझे पहली बार देखा था।" हाँ, भीम ने इसे पहचान लिया था। यहाँ भी, आसपास के पेड़ जल गए थे, उनके काले ठूंठ अभी भी खड़े थे। बारिश का पानी सोखने, उसे अवशोषित करने और बढ़ने के लिए जड़ों की ताकत न होने के कारण, भीम ने अचानक अपने शरीर और अंगों को देखा। उसके पूरे शरीर पर युद्ध में लगे घावों के गहरे निशान थे। ये निशान उसके चेहरे, गर्दन, छाती, जांघों, कंधों पर थे। यह दृश्य किसी को भी डरा देने वाला था। उसे लगा कि अगर वह अपना हाथ बढ़ाकर अपने पोते को गोद में उठा ले, तो दादा का झुलसा हुआ चेहरा देखकर वह डर के मारे चीख उठेगा। उसने सोचा, "अब से मैं इस इलाके की हर बारीकी जानता हूँ— ऊँच-नीच और अलग-अलग आकार, आकृति और रंग के पत्थर। मैंने यह सब सालकटंकती के साथ घूमते हुए, उसका हाथ थामे हुए सीखा है। अब उसके बाल बर्फ जैसे सफेद हो गए होंगे, शायद उसके बच्चों की मृत्यु के कारण या फिर मुझे उसके सामने खड़े होकर उसे यह दुखद खबर देनी होगी।" फिर भीमा फिसलन भरी ज़मीन को देखते हुए आगे बढ़ गया। जंगल में बारिश की कोई आवाज़ नहीं थी। हर जगह ऊँचे पेड़ों के जले हुए काले ठूंठ थे, जिन पर बारिश की बूँदें धीरे-धीरे गिर रही थीं। काली राख ज़मीन पर बह रही थी। बारिश से भीगी मिट्टी पर पानी जमा हो गया था। ऐसा लग रहा था जैसे किसी दाह संस्कार के बाद शव पर पानी डाला गया हो। अर्जुन में उसे घर के अंदर जाने के लिए कहने का साहस नहीं था, इसलिए उसने बस अपनी आँखें बंद कर लीं। घर के अंदर से

उत्तरे की दर्द भरी चीख बारिश की बूँदों के बीच से सुनाई दी। "बारिश आ गई है। और बारिश होने दो, और आग बुझने दो।"

इदन्न वाचः पर्जन्याय स्वर्दजे

ह्वडु अस्त्वन्तरम् तज्जुजोसत्

हिरण्यवती ने अपनी आर्य भाषा में, वर्षा की बूंदों की सरसराहट को चीरते हुए, बादलों तक पहुँचती हुई, एक ऐसी आवाज़ में उद्घोष किया, "यह क्या है? भागने के बजाय तुम चीखने लगी हो।" उसने उत्तर दिया, "यह वह मंत्र है जिसका उच्चारण करने से भारी वर्षा होती है। आकाश अपना जल बरसाएगा और जंगल की आग बुझ जाएगी।" सब कुछ नष्ट हो गया। भारी वर्षा से गड़गड़ाहट की आवाज़ हुई। पेड़ों और पौधों पर गिरते हुए, इसने सरसराहट की आवाज़ पैदा की। इसने धुएँ की गंध को दबा दिया और पेड़ों पर लगी आग को जमीन के नीचे धकेल दिया। "तुम वही कायर हो जिसने द्रौपदी के सोते हुए बच्चों की हत्या में सहायता की, जो बाद में डरकर भाग गए", यह कहते हुए युयुधन ने कृतवर्मा पर हमला कर दिया। बलराम के समर्थकों ने युयुधन पर आक्रमण किया। रुक्मिणी के पुत्र प्रद्युम्न ने युयुधन को बचाने के लिए मदिरा के प्यालों को हथियार के रूप में इस्तेमाल किया, जबकि अन्य ने गदा, मूसल, तलवार, हथौड़ा और हंसिया का प्रयोग किया। अन्य यादव पुरुष समुद्र से आ रही उस शराब को पी रहे थे जो किनारे से टकरा रही थी। खून तेजी से बह रहा था और बूंदों की बौछार बन रहा था। नवजात शिशु के लिए संघर्ष कर रहे शरीर से चीख निकल रही थी। कुंती दौड़ते हुए बोली, "द्रौपदी, कम से कम तुम आकर देख लो कि क्या हो रहा है। बेचारी लड़की दर्द सहन न कर पाने के कारण पसीने से भीगी हुई है। अभी तक प्रसव का कोई आभास नहीं है। अनुभवी दासियाँ भी असहाय बैठी हैं।"

अर्जुन ने पीछे मुड़कर देखा। बारिश तेज़ हो गई थी। पेड़ जलकर राख हो गए थे। भीम ने कहा, "सलाकटनकती, मैं आ गया हूँ, मैं जो तुम्हारे साथ एक साल घोंसले में रहा था। जब मैं छह महीने पहले यहाँ आया था, तब यहाँ पेड़ थे जिन पर बेटे-बेटियाँ घोंसला बनाते थे। चारों ओर केवल जंगल ही जंगल था, पर जंगल की आग नहीं थी। ओह! सलाकटनकती, सलाकटनकती, क्या तुम मुझे सुन रही हो? मैं भीम हूँ, मैं आ गया हूँ।" शायद उम्र के कारण उसकी सुनने की शक्ति कमज़ोर हो गई थी या बारिश ने उसके शब्दों को निगल लिया था। वह चिल्लाया,

"कामकटनकती, कामकटनकती!" कोई भी जीवित नहीं बचा था। भीम का दिल ज़ोर से धड़कने लगा जब उसे एहसास हुआ कि कोई भी जीवित नहीं बचा है। बारिश लगातार बरस रही थी। क्योंकि यह एक ऊँचाई वाला स्थान था, बारिश का पानी ज़मीन पर जमा नहीं हो रहा था। यह बस नीचे की ओर बह रहा था। भीम ने आकाश की ओर देखने के लिए अपना सिर उठाया। पुराने ऊँचे पेड़ों की शाखाएँ जलने से काली पड़ गई थीं और उन पर पहले बने बाँस के घरों का कोई निशान नहीं था। हताशा में भी उम्मीद बनाए रखते हुए, उन्होंने एक बार फिर "सलाकटंकति, सलाकटंकति" का नारा लगाया, ताकि बारिश लाने वाले बादलों के पार आकाश में उनकी आवाज़ गूंज सके। बारिश की बूँदें उनके उठे हुए चेहरे, आँखों, नाक और मुँह पर गिरीं और फिर सिर तक बह गईं। कंबल ओढ़े विदुर सावधानी से चल रहे थे। सड़क पानी से लबालब भरी थी और उस पर पैर आसानी से फिसल सकते थे। सारी गंदगी और कचरा बह गया था, पानी की गंध आ रही थी। उनके कंबल से पानी रिस रहा था। अर्जुन नदी को निहारते रहे। अब तक गहरा और साफ पानी, गंदगी और मैल के बहाव से लाल हो गया था। उन्होंने सोचा कि क्या शहर की सारी गंदगी बारिश के साथ वहीं जमा हो गई है। कान फाड़ देने वाली मूसलाधार बारिश में, उन्होंने सोचा कि क्या शहर खुद पानी में बह जाएगा! ऐसे विचारों के साथ, उन्होंने घर की ऊपरी मंजिल की ओर देखा! तभी उन्हें याद आया कि यह अपेक्षाकृत नया बना हुआ घर था। "गीले मत हो। अपनी झोपड़ियों में वापस जाओ।" "बच्चों को ताड़ की डालियों से ढक दो।" "हिरण्यवती, अपनी विधि प्रार्थना और ज़ोर से बोलो ताकि वर्षा के देवता सुन लें!" ठंड और बारिश में इधर-उधर भागने का मतलब था पसीना आना, साँस फूलना और उल्टी आना। अपने शरीर के भीतर के दर्द को सहन न कर पाने और चीखने की भी शक्ति न होने पर, उत्तरा प्रसव पीड़ा की तड़प में लेट गई और चिल्लाई, "नहीं, नहीं," जब दासियाँ उसके शरीर पर तेल मल रही थीं।

पानी का स्तर बढ़ गया। अचानक अर्जुन हर चीज़ की अत्यधिक मात्रा देखकर व्याकुल हो गया—इतने सारे कदम, इतनी गंदगी और मैल, बांस के अंकुर, मृत पुरुष, पुरुष नहीं बल्कि महिला शव। वह यह सोचकर खड़ा हो गया कि कौन सी विधवा नदी में कूद गई है। वह पानी में कूदा और तैरने लगा, लेकिन उसे वह मृत मिली। शायद वह पूरी तरह से मरी नहीं थी, लेकिन निश्चित रूप से उसमें जीने की शक्ति नहीं बची थी। उसे एक बार फिर सांस लेने में कठिनाई होने लगी और

उसका शरीर थक गया। “चाचा, आपको गाँव के मुखियाओं को इस बात पर विश्वास दिलाने की कोशिश करनी चाहिए। मैं सुबह से उन्हें बता रहा हूँ कि मैं उनके गाँवों को कभी नहीं लूटूँगा। मैं आपसे केवल इतना ही चाहता हूँ कि आप प्रत्येक गाँव से एक गाड़ी भर अनाज लाएँ। सौभाग्य से, आज बारिश शुरू हो गई है। सभी लोग हल चलाएँ और बीज बोएँ। मैंने उन्हें आश्वासन दिया है कि मैं उनकी उपज के छठे हिस्से से अधिक राजकर नहीं लूँगा। कृपया जाइए और उन्हें मनाइए।” महल के बाहर, मटमैला, लाल पानी सारी गंदगी और मैल को बहा ले गया। वहाँ उसने एक आकृति को बारिश से बचने के लिए दौड़ते हुए देखा, जो अपने दाहिने हाथ से माथे को ढककर बारिश को रोक रही थी। भीम ने उसे ऐसे प्रणाम किया मानो वह उसका कोई पुराना परिचित हो। भीम उसे पहचान नहीं पाया और उसे घूरता रहा। नए आए व्यक्ति ने उससे कहा, "महाराज, क्या आप मुझे पहचान नहीं पा रहे हैं? मैं घटोत्कच के साथ युद्ध में गया था। शायद आप मुझे पहचान नहीं पा रहे हैं।"

भीम जब अबोध से देखता रहा, तो उसने समझाया, "जब मेरे राजा की मृत्यु हो गई और हमारे सभी सैनिक मारे गए, तो मैं वहाँ अकेला क्या कर सकता था? मैं वहाँ से चला गया, रात भर सफ़र करके यहाँ लौटा। और जब मैं वापस आया तो मैंने क्या देखा? उन्होंने हमारे पूरे जंगल को जलाकर राख कर दिया था और उसे जले हुए पेड़ों का कब्रिस्तान बना दिया था। सारी हरियाली काली हो गई थी।" भीम ने बीच में दखल देते हुए पूछा, "इसके लिए कौन ज़िम्मेदार था? कौन?" उन्होंने उत्तर दिया, "मुझे नहीं पता। मैं हमारे जंगल से सटे पांचाला के गांवों में कुछ लोगों को व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ। जब वे यहाँ अपने मवेशियों को चराने आए, तो मैंने उनसे पूछताछ की। उन्होंने बताया कि यह कुरु पक्ष के लोगों का काम है। खांडव क्षेत्र के लोगों का। हमारा यह जंगल बहुत उपजाऊ मिट्टी पर स्थित है। वे इसे जलाना, काटना और खेती योग्य भूमि में बदलना चाहते थे। मुझे इसके बारे में पता है। लेकिन जब तक हमारे राजा घटोत्कच जीवित थे, तब तक हमारी सीमा पार करने की हिम्मत किसने की? हम सब आपकी ओर से युद्ध में गए थे। हमारे सभी पुरुष। हमारी रानी सालकटंकति ने हमारे सभी युवकों को मोर्चे पर भेजा था, उन्हें आश्वासन दिया था कि महिलाएं जंगल की रक्षा करेंगी। खैर, इस अवसर का लाभ उठाते हुए, आपके आर्यों ने दो तरफ से हमला किया और जंगल में आग लगा दी। सर्दी का मौसम होने के बावजूद, टहनियाँ सूखी थीं। उनके पास आग जलाने

के लिए पर्याप्त सामग्री थी। खैर, जंगल तीन दिन और तीन रात तक जलता रहा।" भीम ने फिर हस्तक्षेप किया और पूछा, "यहाँ के लोग कहाँ गए?" औरतें, बच्चे और कमर पर लटके शिशु?" अथाह काले बादलों ने सभी युद्धक्षेत्रों पर मूसलाधार बारिश बरसाई, उन्हें जलमग्न कर दिया। पानी नदी में बह गया। हड्डियाँ चारों ओर बिखर गईं, लेकिन पानी के बहाव ने उन्हें एक जगह धकेल कर वहीं जमा कर दिया। हाथ में ताड़ी का मग लिए धातुकर्मी बारिश में नाच रहा था। ढकी हुई गाड़ी के अंदर, बहू चीखी, "मैं इसे सहन नहीं कर सकती," जबकि सास ने उससे कहा, "तुम्हें तीन बच्चों को जन्म देने का अनुभव है। 'मैं नहीं कर सकती' का क्या मतलब है? थोड़ा सा पी लो, साँस रोककर, ऐसे।" फिर बूढ़ी औरत अपने पति से चिल्लाई, "तुम, उस दूसरी गाड़ी में चूल्हा जलाओ और थोड़ा पानी उबाल लो।" कुछ देर से शांत हुई बारिश अब तेज हो गई, जमीन पर ज़ोर से बरसने लगी। उसने भीम से कहा, "मुझे लगा कि वे सब भाग गए हैं। मैंने जंगल में अकेले ही उन्हें हर जगह ढूंढा।" मुझे बाघों, चीतों, जंगली सूअरों और हाथियों के जले हुए शवों के साथ-साथ कई जले हुए मानव शव भी मिले। मानव अवशेषों को पशु अवशेषों से अलग करना मुश्किल था। महाराजा, मुझे मेरी पत्नी और छोटे बच्चे भी नहीं मिले, यहाँ तक कि वे भी मर चुके थे!

वह इतनी ज़ोर से रोने लगा कि बारिश की गर्जना भी खल रही थी। भीम ने ऊँचे स्वर में कहा, "शायद तुम्हें सच नहीं पता। हो सकता है कि सब न मरे हों। हो सकता है कि उनमें से कुछ, कम से कम कुछ, किसी दूसरे जंगल में भाग गए हों।" उसने ऐसे शब्द बोलकर खुद को हिम्मत और उम्मीद देने की कोशिश की। सच्चाई से मुँह मोड़ने से इनकार करते हुए उस व्यक्ति ने पूछा, "जब चारों ओर से आग की लपटें उन्हें घेर रही थीं, तो वे कैसे भाग सकते थे, महाराजा?" वह फिर से रोने लगा। भीम ने गरजती हुई आवाज़ में बेबसी से चिल्लाया, "सलाकटंकति, सलाकटंकति," जब तक कि उसके शब्द ने आकाश के सन्नाटे को चीर नहीं दिया और उसके गले की नसें तन गईं। दर्द थमने पर उत्तरे ने राहत की साँस ली। दासी ने कुंती को बुलाया और उसके कानों में फुसफुसाया। कुंती की आँखें आँसुओं से भर गईं। वह द्रौपदी की ओर चली और घोर निराशा में गिर पड़ी। उसने खबर दी, "मृत शिशु को आखिरकार बाहर निकाल लिया गया।" फिर वह चीख पड़ी। लेकिन बारिश की आवाज़ में उसकी चीख दब गई। उसने कहा, "महाराजा, मैं यहाँ इंतज़ार कर रहा हूँ ताकि अगर हमारे लोग कभी इस तरफ आएँ तो उनसे मिल

सकूँ। जंगल इतना जल चुका है कि शिकार के लिए एक भी हिरण नहीं बचा है। मैं जड़ों और बेर खाकर गुज़ारा करूँगा। राख झील के पानी में घुल जाएगी। बारिश शुरू हो गई है। बाद में वे जुताई शुरू करेंगे। मैं उनके आने का इंतज़ार करूँगा, फिर उन्हें एक-एक करके मार डालूँगा और उन सभी किसानों का मांस और खून खा जाऊँगा।"

वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी और बोली, "बच्ची द्रौपदी, तुम्हारे पाँचों बच्चों के मारे जाने के बाद, यह मरा हुआ बेटा, यह शिशु, हमारे वंश को आगे बढ़ाने की एकमात्र आशा था।" अर्जुन ने ऊपरी प्रांगण से सीढ़ियों की ओर देखा। अब उसे वह लंबा धातु का धनुष दिखाई नहीं दे रहा था। मटमैला, लाल पानी बह रहा था, अपने साथ सारा कचरा बहाकर ला रहा था। वह जल्दी से सीढ़ियों से नीचे उतर गया। बाण जैसी बरसती बारिश की बूंदों को सहन न कर पाने के कारण, वह प्रांगण की सुरक्षा में लौट आया। "हे कन्या, हमें भी अपनी वर्षा की प्रार्थना सिखाओ। वह प्रार्थना जिससे वर्षा होती है।" द्रौपदी ने कुंती को सांत्वना देते हुए उसके कंधे पकड़ते हुए कहा, "उत्तरे का नियोग करवाते हैं।" कुंती ने विरोध में ज़ोर से सिर हिलाया, "नहीं, नहीं। अब और नहीं।" समुद्र की लहरें ऊँची होती जा रही थीं। ज्वार की लहरें द्वारका के नए शहर के अस्तित्व को ही खतरे में डालती प्रतीत हो रही थीं। भीम ने भावुक होकर पूछा, "बाल बरबर्क अब एक वर्ष का हो गया होगा? क्या वह जीवित है या आग में जल गया?" उसकी आँखों में आँसू भर आए और गला भर आया। कुंती ने पूछा, "बाल, क्या तुम्हें अभी भी मासिक धर्म होता है?"

"हाँ, क्यों?"

अब आपको गर्भधारण के लिए तैयार रहना होगा। अन्यथा यह वंश हमेशा के लिए समाप्त हो जाएगा।

द्रौपदी ने सिर हिलाया। उसकी आँखों में तिरस्कार झलक रहा था। फिर कुंती सुभद्रा के पास गई। “मैंने कहा, इतने सारे शव जलकर काले हो गए, इतने सारे मानव शरीर, इतने सारे बच्चे। कोई उनके स्वामियों की पहचान कैसे कर सकता है?” बारिश की बूँदें ढकी हुई गाड़ी की छत पर पड़ रही थीं, जिससे गाड़ी की आवाज़ दूसरी गाड़ी तक नहीं पहुँच रही थी। बुढ़िया बेबस होकर चिल्लाई, “मुझे गर्म पानी दो। क्या तुमने बच्चे के रोने की आवाज़ नहीं सुनी?” बूढ़े ने नंगे हाथों से चूल्हे से उबलते पानी का मग उठाया और अपनी पत्नी को दे दिया। फिर भीगते हुए उसने ढक्कन से झाँका। फिर वह खुशी से उछल पड़ा। कुंती फिर द्रौपदी के पास

लौटी और उसका सिर सहलाते हुए बोली, “सुभद्रा गर्भ धारण नहीं कर सकती। अर्जुन की जवानी ढल चुकी है। तुम ही हमारी एकमात्र आशा हो।” “देखो, मैं बारिश में भीग रहा हूँ। मुझे कम से कम आधा मग ताड़ी तो दे दो,” बूढ़े ने गिड़गिड़ाया।

मूसलाधार बारिश में, स्त्रियों के झुंड राजमहल में घुस आए। धर्मराज ने पूछा, "ये कौन हैं?" एक बूढ़ी औरत ने चिल्लाकर जवाब दिया, "ये गाँव की स्त्रियाँ हैं जिन्हें सैनिकों का मनोरंजन करने के लिए मोर्चे पर घसीटकर लाया गया था। युद्ध के दौरान ये गर्भवती हो गईं। इनके पति इन्हें घर वापस लेने से इनकार कर रहे हैं। अब ये क्या करें?" धर्मराज उन्हें अवाक देखते रहे। वे इतनी अधिक थीं कि हॉल खचाखच भरा हुआ था। तभी एक स्त्री चिल्लाई, "महाराज, आपके वंश की ओर से लड़े गए युद्ध में, हमारे शरीर पर अत्याचार के कारण हम गर्भवती हो गईं। हम जिन बच्चों को जन्म देने वाली हैं, उनके पिता किसे कहें?" बाकी स्त्रियाँ भी उसके साथ चिल्लाने लगीं। द्रौपदी ने कहा, "अगर यह वंश समाप्त हो जाए तो क्या फर्क पड़ता है?" कुंती क्रोधित हो उठीं और अधिकार जताते हुए बोलीं, "नहीं, तुम ऐसा नहीं कह सकतीं। तुम्हें गर्भ धारण करना ही होगा। तुम, जो इस वंश में बहू बनकर आई हो, ऐसी बुरी बातें कैसे कह सकती हो?" क्रोध से उनकी आँखें लाल हो गईं।

द्रौपदी भी पीछे नहीं हटीं, उनका क्रोध और गहरा हो गया और उनकी आँखें और भी लाल हो उठीं। उन्होंने कुंती से एक तीखा सवाल पूछा, "माँ, तुम जो इस वंश में बहू बनकर आई हो, ऐसी बातें कैसे कर सकती हो?" समुद्र में लहरें उठ खड़ी हुईं। शहर में घुस आईं। कृष्ण, जो पूरी तरह पराजित हो चुके थे, बस इतना ही कह सके, "यह शहर मैंने बनाया है!" एक पल के लिए उन्हें शहर में भरी विधवाएँ याद आ गईं। धातु का काम करने वाले का बेटा, अपने तीन बच्चों को गाड़ी के नीचे धूप सेंकते हुए, मूसलाधार बारिश में नाच रहा था। पिता ने बेटे को बार-बार पीटते हुए डाँटा, "तुम बच्चों को सर्दियों की बारिश में भीग रहे हो, मूर्ख!"

सड़क पर पानी घुटनों तक, फिर जांघों तक चढ़ गया। पूरी तरह पराजित और अपने दरबार में उमड़ी महिलाओं की भीड़ का जवाब देने में असमर्थ, धर्मराज असहाय होकर बारिश को देखते रहे।



पुस्तक के अंतपृष्ठ पर चित्रित चित्र में तीन ज्योतिषी राजा सुद्धोदन को भगवान बुद्ध की माता रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं। उनके नीचे एक लेखक बैठा है जो व्याख्या लिख रहा है। यह संभवतः भारत में लेखन कला का सबसे प्राचीन उपलब्ध चित्रमय प्रमाण है।

से: नागार्जुनकोंडा, दूसरी शताब्दी ई.स. सौजन्य: राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली।

PARVA, A MODERN CLASSIC, IS A NOVEL BASED ON MAHABHARATA

The novel narrates the story of the Hindu epic Mahabharata mostly using monologue as a literary technique.

Several principal characters found in the original Mahabharata reminisce almost their entire lives. Both the setting and the context for the reminiscence is the onset of the Kurukshetra War.

Parva is acknowledged to be S.L.Bhyrappa's greatest work.Non-Kannadigas who have read it in it's Hindi and Marathi translations consider it one of the masterpieces of modern Indian literature. It is a transformation of an ancient legend into a modern novel. In this process,it has gained rational credibility and a human perspective.
The main incident, the Bharata war, symbolic of the birthpangs of a new world-order, depicts a heroic but vain effort to arrest the disintegration and continue the prevailing order.
It is viewed from the stand points of the partisan participants and judged with reference to the objective understanding of Krishna.

Narration, dialogue, monologue and comment all are employed for it's presentation. Shot through with irony,pity and understanding objectivity, the novel ends with the true tragic vision of faith in life and hope for mankind.

Parva has been translated into the following major Indian languages; Bengali, Hindi, Marathi, Tamil and Telugu apart from English.

S.L.Bhyrappa is one of the foremost Indian novelists writing in "Kannada" one of the Indian languages.
Author of more than twenty five novels. Four volumes of literary criticism and an autobiography. Dr.Bhyrappa is a major voice in the Indian Literary scene. Vamsa Vriksha, Daatu, Saakshi are some of his important novels.
Recipient of Karnataka Sahitya Akademi Award (twice),Sahitya Akademi Award and Pumpa Award from Govt of Karnataka. Dr.Bhyrappa represented India on several literary asssignments in various and parts of the world.

K.Raghavendra Rao (1928-2020), the translator of this novel was a Professor of Political Science. Has published a number of books in English and Kannada.
Spring Fire (Bendre's poems in English), *Modern Indo-Anglian Poems* (edited with P.Lal), *Modern Kannada Poetry* (edited with C.S. Kanavi), *The Peacock Smile*, a critical study of Bendre, deserve special mention.
He has published a number of books in English and Kannada.



ISBN 9789390310074